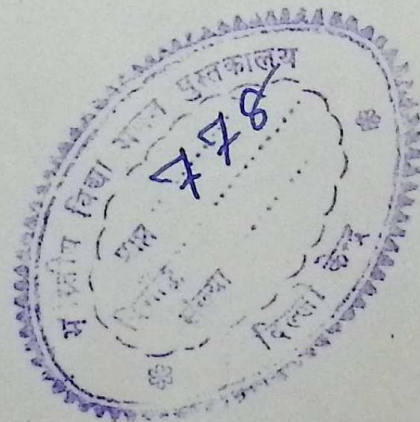


THE HARIVAMŚA PURĀNAM
श्रीहरिवंशपुराणम्

778

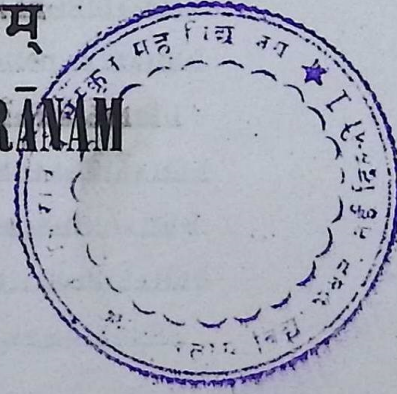
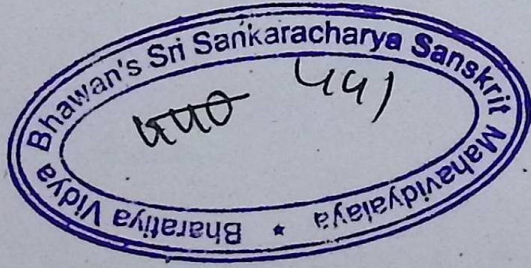
भारतीय विद्या
नई दिल्ली
श्रीधर्मवीरजी
.....
.....
.....

सचिव
.....





श्रीहरिवंशपुराणम्
THE HARIVAMŚAPURĀṆAM



महापुराणम्

- | | |
|----------------------------|-----------------------------|
| १. ब्रह्ममहापुराणम् | ११. लिङ्गमहापुराणम् |
| २. पद्ममहापुराणम् | १२. वाराहमहापुराणम् |
| ३. विष्णुमहापुराणम् | १३. स्कन्दमहापुराणम् |
| ४. शिवमहापुराणम् | १४. वामनमहापुराणम् |
| ५. भागवतमहापुराणम् | १५. कूर्ममहापुराणम् |
| ६. नारदीयमहापुराणम् | १६. मत्स्यमहापुराणम् |
| ७. मार्कण्डेयमहापुराणम् | १७. गरुडमहापुराणम् |
| ८. अग्निमहापुराणम् | १८. ब्रह्माण्डमहापुराणम् |
| ९. भविष्यमहापुराणम् | १९. वायुमहापुराणम् |
| १०. ब्रह्मवैवर्तमहापुराणम् | २०. विष्णुधर्मोत्तर पुराणम् |
| वासुकी पुराण :: | देवीभागवत |
| हरिवंश पुराण :: | भृङ्गोशपुराण |
| एकाग्रपुराण | |

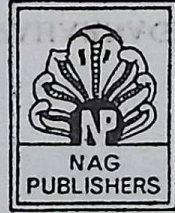
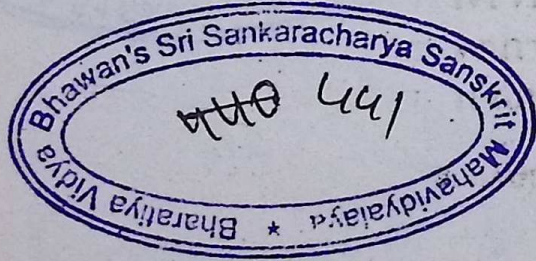
श्रीमराज श्रीकृष्णदासेन सम्पादितस्य मुम्बई श्री वैकटेश्वरस्टीम मुद्रणालयेन प्रकाशितस्य पुनमुद्रण

श्रीहरिवंशपुराणम्

THE HARIVAMŚAPURĀNAM

दिल्ली विश्वविद्यालयस्य हिन्दूमहाविद्यालयस्य डा० राजेन्द्रनाथशर्मा
भूमिका पाठशोधनाभ्यां परिष्कृतम्
नागेशरण सिंह सम्पादित श्लोकानुक्रमण्या सहितं

PART II



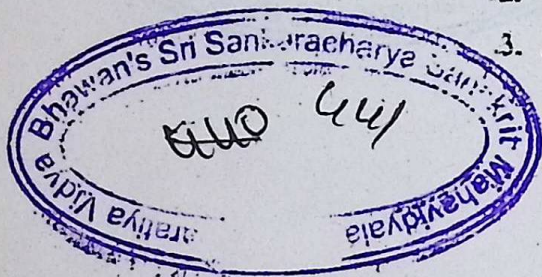
NAG PUBLISHERS

11 A/U.A (POST OFFICE BUILDING) JAWAHARNAGAR, DELHI-7.

(This publication has been brought out with the financial assistance from the Government of India, Ministry of Education and Culture).

© NAG PUBLISHERS

1. 11A/U.A. (Post Office Bldg.) JAWAHARNAGAR, DELHI-7
2. 8A/U.A. 3, JAWAHARNAGAR, DELHI-110007
3. JALALPURMAFI (Chunar, Mirzapur), U.P.



INTRODUCTION, TEXT AND REVERSE INDEX 1985
PRICE Rs. 100.00 (for 2 Volumes)

(PRINTED IN INDIA)

Published by Nag Sharan Singh for Nag Publishers, Jawahar Nagar, Delhi-7
Text printed at Gian Offset Printers, 308/2, Shahzada Bagh, Dayabasti Delhi-35
and reverse Index and Introduction at Amar Printing Press, 8/25 Vijay Nagar, Delhi-9.

॥ अथ हरिवंशे भाषाटीकायुतं तृतीयं भविष्यपर्व प्रारभ्यते ॥

श्रीगणेशाय नमः ।

शौनकजी बोले, हे लोमहर्षण

सुत ! जन्मेजयके कितने पुत्र हैं और उनमें महात्मा पाण्डवोंका वंश किसमें प्रतिष्ठित रहा ॥ १ ॥ यह मेरे सुननेकी इच्छा है इस वार्ताके सुननेका मुझे परम कुतूहल है आपके सुखसे मैं सब सुनकर जाननेकी इच्छा करता हूं ॥ २ ॥ सौति बोले, काश्या नाम स्त्रीमें परीक्षितके पुत्र जन्मेजयके दो पुत्र हुए. राजा चन्द्रापीड और मोक्षमार्गका जाननेवाला सूर्यापीड हुआ ॥ ३ ॥ चंद्रापीडके उत्तम धनुषधारी सौ पुत्र हुए उनका कुल जानमेजय नामसे

श्रीगोपालकृष्णाय नमः ॥ शौनक उवाच ॥ जनमेजयस्य के पुत्राः पञ्चान्ते लोमहर्षणे ॥ कस्मिन्प्रतिष्ठितो वंशः पाण्डवानां महात्म-
नाम् ॥ १ ॥ एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं परं कुतूहलं हि मे ॥ त्वत्तः कथयतः सर्वं वेदग्रहं तत्परिस्फुटम् ॥ २ ॥ सौतिरुवाच ॥ पारिक्षि-
तस्य काश्यायां द्वौ पुत्रौ संबभूवतुः ॥ चन्द्रापीडश्च नृपतिः सूर्यापीडश्च मोक्षवित् ॥ ३ ॥ चन्द्रापीडस्य पुत्राणां शतमुत्तमधन्वि-
नाम् ॥ जानमेजय इत्येवं क्षात्रं भुवि परिश्रुतम् ॥ ४ ॥ तेषां श्रेष्ठस्तु राजासीत्पुरे वाराणसाह्वये ॥ सत्यकर्णो महाबाहुर्ग्र्या विपु-
लदक्षिणः ॥ ५ ॥ सत्यकर्णस्य दायदः श्वेतकर्णः प्रतापवान् ॥ अपुत्रः स तु धर्मात्मा प्रविवेश तपोवनम् ॥ ६ ॥ तस्माद्वनगता
द्रुमं यादवी प्रत्यपद्यत ॥ सुचारोर्दुहिता सुभ्रूमांनिनी भ्रातृमालिनी ॥ ७ ॥ स तु जन्मानि गर्भस्य श्वेतकर्णः प्रजेश्वरः ॥ अन्यगच्छ
द्रुतं पूर्वैर्महाप्रस्थानमच्युतम् ॥ ८ ॥ सा दृष्ट्वा संप्रयान्तं तं मानिनी पृष्ठतोऽन्वियात् ॥ पथि सा सुषुवे सुभूर्वने राजीवलोचनम् ॥ ९ ॥
कुमारं तं परित्यज्य भर्तारं चान्वगच्छत ॥ पतिव्रता महाभागा द्रौपदीव पुरा पतीन् ॥ १० ॥

पृथ्वीमें विख्यात हुआ ॥ ४ ॥ उनमें श्रेष्ठ राजा वाराणसीपुरीमें हुआ. महाबाहु सत्यकर्ण बड़ी दक्षिणाके यज्ञ करनेवाला हुआ ॥ ५ ॥ सत्यकर्णका पुत्र महाप्रतापी श्वेतकर्ण हुआ वह धर्मात्मा अपुत्र होनेसे तपोवनमें प्रविष्ट हुआ ॥ ६ ॥ उस वन जानेवालेके गर्भको यादवीने धारण किया यह सुचारकी पुत्री सुन्दरभूयुक्त भ्राताकी हितकारिणी मानिनी थी ॥ ७ ॥ वह उस गर्भके जन्मसे पहलेही श्वेतकर्ण राजा पूर्वपुरुषोंकी रीतिके अनुसार महाप्रस्थान करता हुआ ॥ ८ ॥ उसको जाता हुआ देख मानिनीजी पीछे पीछे चली मार्गमें उसके कमललोचन कुमारका जन्म हुआ ॥ ९ ॥ उस कुमारको छोड़

कर वह भर्ताके पीछे पीछे चली, वह महाभाग पतिव्रता इस प्रकारसे चली, जैसे द्रौपदी अपने पतिपोंके पीछे गई थी ॥ १० ॥ वह राजकुमार गिरिकुंजमें रोने लगा उसके छाया करनेके निमित्त चारों ओरसे मेघ प्रगट हुए ॥ ११ ॥ श्रविष्ठाके दो पुत्र हुए थे, एक पिप्पलाद और कौशिक इन दोनोंने वनमें देव कृपा कर उस बालकको ग्रहण किया और जलसे प्रक्षालित किया जिस समय उस बालकके दोनों पार्श्वभाग रुधिरलिप्त शिलापर पड़े गये ॥ १२ ॥ तौ उसकी पशली श्याम हो गई अर्थात् छागकी समान श्यामवर्ण हो गई और वृद्धिको उसी प्रकार प्राप्त हुई ॥ १३ ॥ इस कारण उन

स तु राजकुमारोऽसौ गिरिकुञ्जे रुरोद ह ॥ छायार्थं तस्य मेघास्तु प्रादुरासन्समन्ततः ॥ ११ ॥ श्रविष्ठायाश्च पुत्रौ द्वौ पिप्पलादश्च कौशिकः ॥ दृष्ट्वा कृपान्वितौ गृह्य तं प्रक्षालयतां जलैः ॥ निघृष्टौ तस्य तौ पार्श्वौ शिलायां रुधिरल्लुप्तौ ॥ १२ ॥ अजश्यामौ तु पार्श्वौ तावुभावपि समाहितौ ॥ तथैवं तु समारूढौ अजपाश्वस्ततौऽभवत् ॥ १३ ॥ ततोऽजपार्श्व इति तौ चक्राते तस्य नाम ह ॥ स तु वेमकशालायां द्विजाभ्यामभिवर्धितः ॥ १४ ॥ वेमकस्य तु भार्या तमुद्रहन्पुत्रकारणात् ॥ वेमक्याः स तु पुत्रोऽभूद्ब्राह्मणो साचिवौ च तौ ॥ १५ ॥ तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च युगपत्तुल्यजीविनः ॥ स एष पौरवो वंशः पाण्डवानां प्रतिष्ठितः ॥ १६ ॥ श्लोकोऽपि चात्र गीतोऽयं नाहुषेण ययातिना ॥ जरासंक्रमणे पूर्वं भृशं प्रीतिन धीमता ॥ १७ ॥ आचन्द्रार्कग्रहा भूमिर्भवेदपि न संशयः ॥ अपौरवा न तु मही भविष्यति कदाचन ॥ १८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

दोनोंने उसका नाम आजपार्श्व रखवा उन दोनों ब्राह्मणोंने वेमक नाम ऋषिके आश्रममें उसकी रक्षा कर उसे बड़ाया ॥ १४ ॥ वेमककी भार्याने उसको अपने पुत्रवत् पालन किया वह वेमकीका पुत्र और वे दोनों ब्राह्मण उसके मंत्री हुए ॥ १५ ॥ उसके पुत्र पौत्र एक साथ जीवनवाले हुए इस प्रकार यह पौरव वंश पाण्डवोंका प्रतिष्ठित है ॥ १६ ॥ इसमें ययाति नहुष पुत्रने श्लोक गाये हैं जो कि जराके देनेसे परम प्रसन्न हुए थे ॥ १७ ॥ कि जबतक चन्द्रमा सूर्य ग्रह स्थित रहेंगे तबतक यह भूमि पुरुवंशियोंके अधिकारमें रहेगी कभी पौरववंशहीन न होगी ॥ १८ ॥ इति श्रीमहाभारते

खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पंडितज्वालाप्रसादमिश्रकृतभाषायां प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ शौनकजी बोले, जिस प्रकार व्यासशिष्य वैशंपायनने प्रथम हरिवंशके पर्व कहे हैं, वैसेही आपने हरिवंश और सब पर्व कहे हैं ॥ १ ॥ आपका इतिहाससंयुक्त कथन अमृतकी समान सुखदाई होकर हमारे सब पाप नष्ट करता है ॥ २ ॥ सुखश्रवण कथा होनेसे हमारे मनकी प्रसन्नता होती है, हे सूत ! जन्मेजय राजा इस उत्तम आख्यानको सुनकर सर्पसत्रके उपरान्त क्या करते हुए ॥ ३ ॥ सौति बोले, जन्मेजय उस आख्यानको श्रवण कर, सर्पसत्रके उपरान्त जो करते हुए सो सुनो ॥ ४ ॥ जब सर्पसत्र समाप्त हो

शौनक उवाच ॥ उक्तोऽयं हरिवंशस्ते पर्वाणि निखिलानि च ॥ यथा पुरोक्तानि तथा व्यासशिष्येण धीमता ॥ १ ॥ तत्कथ्यमानममितमितिहाससमन्वितम् ॥ प्रीणात्यस्मानमृतवत्सर्वपापविनाशनम् ॥ २ ॥ सुखश्राव्यतया धीर मनो ह्लादयतीव नः ॥ जनमेजयस्तु नृपतिः श्रुत्वा चाख्यानमुत्तमम् ॥ सौते किमकरोत्पश्चात्सर्पसत्रादनन्तरम् ॥ ३ ॥ सौतिरुवाच ॥ जनमेजयस्तु स नृपः श्रुत्वा चाख्यानमुत्तमम् ॥ यदारभत्तदाख्यास्ये सर्पसत्रादनन्तरम् ॥ ४ ॥ तस्मिन्सत्रे समाप्तेऽथ राजा पारीक्षितस्तदा ॥ यष्टुं स वाजिमेधेन संभारानुपचक्रमे ॥ ५ ॥ ऋत्विक्पुरोहिताचार्यानाह्वयेदमुवाच ह ॥ यक्ष्येऽहं वाजिमेधेन ह्यमुत्सृज्यतामिति ॥ ६ ॥ ततोऽस्य विज्ञाय चिकीर्षितं तदा कृष्णो महात्मा सहसाजगाम ॥ पारीक्षितं द्रष्टुमदानसत्त्वं द्वैपायनः सर्वपरावरज्ञः ॥ ७ ॥ पाराक्षितस्तु नृपतिर्दृष्ट्वा तमृषिमागतम् ॥ अर्घ्यपाद्यासनं दत्त्वा पूजयामास शास्त्रतः ॥ ८ ॥ तौ चोपविष्टावभितः सदस्यास्तस्य शौनक ॥ कथा बहुविधाश्चित्राश्चक्राते वेदसंहिताः ॥ ९ ॥ ततः कथान्ते नृपतिर्नोदयामास तं मुनिम् ॥ पितामहं पाण्डवानामात्मनः प्रापितामहम् ॥ १० ॥

चुका तब राजाने अश्वमेध यज्ञ करनेकी इच्छा की ॥ ५ ॥ ऋत्विक् पुरोहित आचार्यको बुलाकर राजाने कहा, मैं अश्वमेध यज्ञ करूंगा, घोड़ा छोड़ना उचित है ॥ ६ ॥ तब इनकी यह चेष्टा देखकर सब परावरके जाननेवाले महात्मा व्यासजी जन्मेजयके देखनेको आये ॥ ७ ॥ जन्मेजय राजाने उनको आया देखकर अर्घ्य पाद्य आसन दे शास्त्रद्वारा पूजन किया ॥ ८ ॥ उनके सभामें स्थित होनेसे हे शौनक ! वेदसम्बन्धी बहुतसी कथा कहने लगे ॥ ९ ॥ कथाके अन्तमें नृपतिने उन मुनिको प्रेरणा की जो कि पाण्डवोंके पितामह और अपने प्रपितामह थे ॥ १० ॥

आपका निर्मित बहुतसे श्रुतिके विस्तारसे युक्त महाभारत सुनकर वह समय निमेषमात्रकी समान बीता ॥ ११ ॥ विभूतिका विस्तार करनेवाला सबको यशयुक्त करनेवाला है. हे ब्रह्मन् ! वह आपका निर्मित शंखमें क्षीरकी समान रक्खा है ॥ १२ ॥ स्वर्गसुख और अमृतसे तृप्ति होती है परन्तु इस भारती कथाके श्रवण करनेसे मेरी तृप्ति नहीं होती ॥ १३ ॥ आपको सर्वज्ञ जानकर मैं पूछता हूं. मेरे मतमें कुरुवंशके नाशका कारण राजसूय यज्ञ है ॥ १४ ॥ दुःसह राजाओंका ध्वंस इस राजसूयके कारणही कल्पित हुआ है ॥ १५ ॥ हमने सुना है कि; पूर्वकाल सोमने राजसूय यज्ञ किया था उसीके अन्तमें

महाभारतमाख्यानं बह्वर्थं श्रुतिविस्तरम् ॥ निमेषमात्रमपि मे सुखश्राव्यतया गतम् ॥ ११ ॥ विभूतिविस्तारकरं सर्वेषां वै यशस्करम् ॥ त्वया सुविहितं ब्रह्मन् शङ्खे क्षीरमिवाहितम् ॥ १२ ॥ अमृतेन तु तृप्तिः स्याद्यथा स्वर्गसुखेन च ॥ तथा तृप्तिं न गच्छामि श्रुत्वेमां भारतीकथाम् ॥ १३ ॥ अनुमान्य तु सर्वज्ञं पृच्छामि भगवन्नहम् ॥ हेतुः कुरूणां नाशस्य राजसूयो मतो मम ॥ १४ ॥ दुःसहानां यथा ध्वंसो राजन्यानामुपप्लवे ॥ राजसूयं तथा मन्ये युद्धार्थमुपकल्पितम् ॥ १५ ॥ राजसूयस्तु सोमेन श्रूयते पूर्वमाहृतः ॥ तस्यान्ते सुमहद्युद्धमभवत्तारकामयम् ॥ १६ ॥ आहृतो वरुणेनाथ तस्यान्ते सुमहाक्रतोः ॥ देवासुरं महायुद्धं सर्वभूतक्षयावहम् ॥ १७ ॥ हरिश्चन्द्रश्च राजर्षिः क्रतुमेनमुपाहरत् ॥ तत्राप्याडीवकं नाम युद्धं क्षत्रियनाशनम् ॥ १८ ॥ ततोऽनन्तरमार्गेण पाण्डवेनातिदुस्तरः ॥ महाभारत आरम्भः संभृतोऽग्निरिव क्रतुः ॥ १९ ॥ तदस्य मूलं युद्धस्य लोकक्षयकरस्य तु ॥ राजसूयो महायज्ञः किमर्थं न निवारितः ॥ २० ॥

तारकामय महासंग्राम हुआ था ॥ १६ ॥ उसके अन्तमें वरुणने महायज्ञ किया था तब सर्वभूतक्षयकारी महान् देवासुरसंग्राम हुआ था ॥ १७ ॥ राजर्षि हरिश्चन्द्रेने यह यज्ञ किया था उस समय आडीवक नाम महाभयंकर क्षत्रियनाशी युद्ध हुआ था. (आडी जलचर पक्षिविशेषरूप वसिष्ठ और वक्ररूप विश्वामित्र थे. ऋषिरूपसे लज्जाके कारण युद्ध न कर सके. इस कारण इस रूपसे वर्णन किया. इन दोनोंके पक्षपाती राजाओंमें संग्राम हुआ) ॥ १८ ॥ इसके उपरान्त पाण्डवोंने इस दुस्तर यज्ञका प्रारंभ किया. इसमें अग्निकी समान महाभारतका प्रारंभ हुआ ॥ १९ ॥ सो इस लोकक्षयकारी युद्धका मूल

राजसूय महायज्ञ किस कारण निवारण न किया ॥ २० ॥ राजसूय यज्ञ सर्वांगसहित होना कठिन है. यज्ञांगके मिथ्या प्रणीत होनेमें प्रजाओंका अवश्य नाश होता है ॥ २१ ॥ आपभी सब पूर्वजोंके पितामह हैं. आप अतीत अनागतके स्वामी हमारे आदिकर्ता हो ॥ २२ ॥ आपसे नेता होने-परभी वे बुद्धिमान् नीतिसे किस प्रकार चलायमान हुए. अनाथ अथवा कुशिक्षकही पुरुष अपराध करते हैं ॥ २३ ॥ व्यासजी बोले, तुम्हारे पूर्वपितामह कालानुसारही विपरीतकर्ता हुए थे न उन्होंने मुझसे भविष्य पूछा और बिना पूछे मैं कहता नहीं हूं ॥ २४ ॥ भविष्यके निवृत्त करनेकी मुझे

राजसूयो ह्यसंहार्यो यज्ञाङ्गैश्च दुरत्ययेः ॥ मिथ्या प्रणीते यज्ञाङ्गे प्रजानां संक्षयो ध्रुवः ॥ २१ ॥ भवानपि च सर्वेषां पूर्वेषां नः पितामहः ॥ अतीतानागतज्ञश्च नाथश्चादिकरश्च नः ॥ २२ ॥ ते कथं भवता नेत्रा बुद्धिमन्तश्च्युता नयात् ॥ अनाथा ह्यपराद्धचन्ते कुनेतारश्च मानवाः ॥ २३ ॥ व्यास उवाच ॥ कालेन विपरीतास्ते तव पूर्वपितामहाः ॥ न मां भविष्यं पृच्छन्ति न चापृष्टोऽब्रवीम्यहम् ॥ २४ ॥ सामर्थ्यं च न पश्यामि भविष्यस्य निवर्तने ॥ परिहर्तुं न शक्या हि कालेन विहिता गतिः ॥ २५ ॥ त्वया त्विदमहं पृष्टो वक्ष्याम्यागन्तु भावि यत् ॥ अतश्च बलवान्कालः श्रुत्वापि न कारिष्यसि ॥ २६ ॥ न संरम्भात्त चारम्भात्त वै स्थास्यसि पौरुषे ॥ लेखा हि काललिखिताः सर्वथा दुरतिक्रमाः ॥ २७ ॥ अश्वमेधः क्रतुः श्रेष्ठः क्षत्रियाणां परिश्रुतः ॥ तेन भावेन ते यज्ञं वासवो धर्षयिष्यति ॥ २८ ॥ यदि तच्छक्यते राजन्परिहर्तुं कथंचन ॥ देवं पुरुषकारेण मा यजेथाश्च तं क्रतुम् ॥ २९ ॥

सामर्थ्य नहीं है. कालकी विधान की हुई गतिको कोई नष्ट नहीं कर सकता है ॥ २५ ॥ अब तुमने मुझसे पूछा है इस कारण मैं भावि अर्थको कहना हूं. इससे काल बलवान् है सुनकरभी कोई नहीं मेट सकता ॥ २६ ॥ ऋष आरंभ उत्साह पुरुषार्थभी कोई कालकी गतिको मेट नहीं सकता. कालकी गति दुरतिक्रम है ॥ २७ ॥ क्षत्रियोंके निमित्त अश्वमेध सर्वश्रेष्ठ यज्ञ कहा है. इसी भावसे तुम्हारे यज्ञको इन्द्र धर्षित करेगा ॥ २८ ॥ हे राजन् ! जो तुम उसे किसी प्रकार परिहरण करनेको समर्थ हो जो देवको पुरुषकारसे मेटनेकी इच्छा करो तो इस यज्ञको मत यर्जन करो ॥ २९ ॥

इन्द्र ना तुम्हारे उपाध्यायगणोंका इसमें अपराध नहीं है न तुम यजमानका अपराध है. कालही दुरतिक्रम है ॥ ३० ॥ उस परमेष्ठी कालकीही यह संस्था की हुई है यह प्रजासर्ग युगक्षयमें यथेष्ट गतिको प्राप्त होगा ॥ ३१ ॥ ब्राह्मणभी इसी प्रकार यज्ञके फलके बेचनेवाले होंगे. यह त्रिलोकी चराचर कालकेही आधीन जानो ॥ ३२ ॥ अश्वमेधकी निवृत्तिमें क्या निमित्त होगा उसे सुनकर मैं इसको परिहार करूंगा. यदि आप कहना उचित समझो तो इसे कहिये ॥ ३३ ॥ व्यासजी बोले; हे प्रभो ! इसमें ब्रह्मकोपही निमित्त होगा. सो इसके परिहारका यत्न करो तुम्हारा कल्याण

न चापराधः शक्रस्य नोपाध्यायगणस्य ते ॥ तव वा यजमानस्य कालोऽत्र दुरतिक्रमः ॥ ३० ॥ तस्य संस्थाकृतमिदं कालस्य परमेष्ठिनः ॥ यथादृष्टं प्रजासर्गं गमिष्यति युगक्षये ॥ ३१ ॥ तथा यज्ञफलानां च विक्रेतारो द्विजातयः ॥ तत्प्रणयेयं निबोधस्व त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥ ३२ ॥ जनमेजय उवाच ॥ निवृत्तावश्वमेधस्य किं निमित्तं भविष्यति ॥ श्रुत्वा परिहरिष्यामि भगवन्पदि मन्यसे ॥ ३३ ॥ व्यास उवाच ॥ निमित्तं भविता तत्र ब्रह्मलोपकृतं प्रभो ॥ यतेथाः परिहर्तुं त्वमित्येतद्भद्रमस्तु ते ॥ ३४ ॥ त्वया वृत्तं क्रतुं चैव वाजिमेधं परंतप ॥ क्षत्रिया नाहरिष्यन्ति यावद्भूमिर्धारिष्यति ॥ ३५ ॥ जनमेजय उवाच ॥ निवृत्तावश्वमेधस्य ब्रह्मशापाग्नि तेजसा ॥ अहं निमित्तमिति मे भयं तीव्रं तु जायते ॥ ३६ ॥ कथं ह्यकीर्त्या युज्येत सुकृती मद्विधो जनः ॥ लोकानुत्सहते गन्तुं खं सपाश इव द्विजः ॥ ३७ ॥ यथा ह्यनागतमिदं दृष्टमत्र प्रणाशनम् ॥ यद्यस्ति पुनरावृत्तिर्यज्ञस्याश्वासयस्व माम् ॥ ३८ ॥

हो ॥ ३४ ॥ हे परंतप ! यह तुम्हारा प्रवृत्त किया अश्वमेध पृथ्वीके सम्पूर्ण क्षत्रियोंका हर्ता होगा. अर्थात् तुम्हारे शिवाय फिर और कोई पृथ्वी-पर आगे अश्वमेध यज्ञ न करेगा ॥ ३५ ॥ जन्मेजय बोले; अश्वमेधकी निवृत्तिमें ब्राह्मण शापरूप अग्निके तेजमें मैं निमित्त हूं. इसका मुझको महा-भय उपजता है ॥ ३६ ॥ मुझसरीखा सुकृती मनुष्य किस प्रकार अकीर्ति कर कार्यमें प्रवृत्त हो उत्तम लोकमें जा सकता है. जिस प्रकार पाशवंधा पक्षी आकाशमें नहीं उड सकता ॥ ३७ ॥ और जो इसमें अनागत दीखता है अर्थात् जिस प्रकार इसमें नष्टता देखी है. फिर इस यज्ञका प्रारंभ

किस प्रकार किया जायगा इस वार्तासे मुझको आश्वासन दीजिये ॥ ३८ ॥ व्यासजी बोले, उसंहार किया यह अश्वमेध देवता और ब्राह्मणोंमें ज्ञानरूपसे स्थित होगा, जिस प्रकार तेजसे व्याहत तेज अग्निमें स्थित होता है ॥ ३९ ॥ पृथ्वीके खोदनेसे कोई उद्भिज्ज कश्यपगोत्र सेनापति होगा, वह कलियुगमें फिर अश्वमेधको पूरा करेगा ॥ ४० ॥ उस युगमें उसके कुलमें उपजा पुरुष राजसूय यज्ञ करेगा, हे राजेन्द्र ! वह प्रलयकाल श्वेत-ग्रहेके उत्पातकी समान हरणकर्ता होगा ॥ ४१ ॥ और वह बलके अनुसार किया करनेवाले मनुष्योंको फल देगा और ऋषियोंके छिपाये हुए युगा-

व्यास उवाच ॥ उपात्तयज्ञो देवेषु ब्राह्मणेषूपपत्स्यते ॥ तेजसा व्याहतं तेजस्तेजस्येवावतिष्ठते ॥ ३९ ॥ औद्भिर्जो भविता कश्चित्सेनानीः काश्यपो द्विजः ॥ अश्वमेधं कलियुगे पुनः प्रत्याहरिष्यति ॥ ४० ॥ तद्युगे तत्कुलीनश्च राजसूयमपि क्रतुम् ॥ आहरिष्यति राजेन्द्र श्वेतग्रहमिवान्तकः ॥ ४१ ॥ यथाबलं मनुष्याणां कर्तृणां दास्यते फलम् ॥ युगान्तद्वारमृषिभिः संवृतं विचरिष्यति ॥ ४२ ॥ तदाप्रभृति हास्यन्ति नृपां प्राणाः पुराकृतीः ॥ न निवर्तिष्यते लोके वृत्तान्तावर्तनेष्विह ॥ ४३ ॥ तदा सूक्ष्मो महोदको दुस्तरो दानमूलवान् ॥ चातुराश्रम्यशिथिलो धर्मः प्रविचलिष्यति ॥ ४४ ॥ तदा ह्यल्पेन तपसा सिद्धिं प्राप्स्यन्ति मानवाः ॥ धन्या धर्मं चरिष्यन्ति युगान्ते जनमेजय ॥ ४५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ जनमेजय उवाच ॥ आसन्नं विप्रकृष्टं वा यदि कालं न विद्महे ॥ तस्माद्वापरसंविद्धं युगान्तं स्पृह्याम्यहम् ॥ १ ॥

न्तद्वारमें विचरण करेगा ॥ ४२ ॥ उस समयसे लेकर मनुष्योंकी इन्द्रिय पुराकृत शिष्टाचारोंके पूर्ववृत्तान्तोंको त्यागन करे देगी, परन्तु वार्ताओंक आवर्त संसार निवृत्त नहीं होगा ॥ ४३ ॥ तब सूक्ष्म अतितेजवान् दुस्तर दानमूलवाला चारों आश्रमोंका धर्म शिथिल हो जायगा कुत्रचित् प्रकाशित होगा ॥ ४४ ॥ उस समय मनुष्य थोड़ेही तपसे सिद्धिको प्राप्त होंगे, हे जन्मेजय ! युगान्तमें जो धर्माचरण करेंगे वे बड़े धन्य होंगे ॥ ४५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ जन्मेजय बोले, यदि हम आसन्न और विप्रकृष्ट कालको नहीं

जानते हैं आगेका समय महाअधर्मयुक्त होगा तो हम द्वापर सम्बद्ध कलिके सुननेकी इच्छा करते हैं ॥ १ ॥ इस धर्म तृष्णासे हम उस कालको प्राप्त हुए हैं इस कारण अल्पकर्म करके सुखपूर्वक परम धर्मको प्राप्त होवेंगे ॥ २ ॥ शौनक बोले; त्रास और उद्वेग करनेवाला युगांत प्राप्त हुआ है. हे धर्मज्ञ ! प्रणष्ट हुए धर्मको निमित्तद्वारा आप हमसे कहिये ॥ ३ ॥ सौति बोले; इस प्रकार भविष्यकी गति तत्त्वसे चिन्तन करते हुए युगान्तके धर्मोंको भगवान् कहने लगे ॥ ४ ॥ व्यासजी बोले प्रजाकी रक्षा करनेसे रहित बलिभाग ग्रहण करनेवाले अरि रक्षामें निपुण राजा युगान्तमें उत्पन्न

प्राप्ता वयं तु तत्कालमनया धर्मतृष्णया ॥ आदद्यात्परमं धर्मं सुखमल्पेन कर्मणा ॥ २ ॥ शौनक उवाच ॥ त्रासमुद्वेगकरणं युगान्तं समुपस्थितम् ॥ प्रणष्टधर्मं धर्मज्ञ निमित्तैर्वक्तुमर्हसि ॥ ३ ॥ सौतिरुवाच ॥ पृष्ट एवं भविष्यस्य गतिं तत्त्वेन चिन्तयन् ॥ युगान्ते सर्वभूतानां भगवानब्रवीत्तदा ॥ ४ ॥ व्यास उवाच ॥ अरक्षितारो हर्तारो बलिभागस्य पार्थिवाः ॥ युगान्ते प्रभविष्यन्ति स्वरक्षणपरायणाः ॥ ५ ॥ अक्षत्रियाश्च राजानो विप्राः शूद्रोपजीविनः ॥ शूद्राश्च ब्राह्मणाचारा भविष्यन्ति युगक्षये ॥ ६ ॥ काण्डे स्पृष्टाः श्रोत्रियाश्च निष्क्रियाणि हवींष्यथ ॥ एकपत्तयामशिष्यन्ति युगान्ते जनमेजय ॥ ७ ॥ शिल्पवन्तोऽनृतपरा नरा मद्यामिषप्रियाः ॥ मित्रभार्या भजिष्यन्ति युगान्ते जनमेजय ॥ ८ ॥ राजवृत्तिस्थिताश्चौरा राजानश्चैरशीलिनः ॥ भृत्याश्चानिर्दिष्टभुजो भविष्यन्ति युगक्षये ॥ ९ ॥ धनानि श्लाघनीयानि सतां वृत्तमपूजितम् ॥ अकुत्सना च पतिते भविष्यति युगक्षये ॥ १० ॥

होंगे ॥ ५ ॥ राजा क्षत्रियवंशहीन और ब्राह्मण शूद्रोपजीवी होंगे और शूद्र कलियुगमें ब्राह्मणोंके आचारशाले होंगे ॥ ६ ॥ श्रोत्रिय ब्राह्मण बाणधारी होंगे. हवि पंचयज्ञहीन होंगे. हे जन्मेजय ! कलियुगमें सब एक पंक्तिमें बैठकर भोजन करेंगे ॥ ७ ॥ कारीगरोंसे युक्त असत्यभाषी मद्य आमिष प्रिय मनुष्य मित्रकी भार्यासे भोग करनेवाले मनुष्य कलियुगमें होंगे ॥ ८ ॥ चोर राजवृत्तिमें स्थित और राजा चोरोंसे हित करनेवाले होंगे. तथा युगक्षयमें भृत्य स्वामीका द्रव्य चुरानेवाले होंगे ॥ ९ ॥ धनकी श्लाघा होगी सत्पुरुषोंके आचरण कोई न करेगा तथा कोई

पतित होगा तथापि युगक्षयमें उसकी निन्दा न होगी ॥ १० ॥ धर्माधर्मके स्वरूपबोधसे रहित संन्यासी मुक्तकेश विधवा परस्पर मिलकर प्रजा उत्पन्न करेगी तथा दूसरे प्राणी सोलह वर्षसे पहलेही सन्तान उत्पन्न करेंगे ॥ ११ ॥ सब प्राणी अन्न बेचेंगे ब्राह्मण वेदके बेचनेवाले होंगे तथा स्त्री भग बेचनेवाली कलियुगमें होंगी ॥ १२ ॥ सबही ब्रह्मज्ञानी और सबही वाजसनेयि शाखावाले होंगे कारण कि और शाखाओंका लोप हो जायगा और कलियुगमें शूद्र 'भो भगवन्' आदि शब्दोंके उच्चारण करनेवाले होंगे ॥ १३ ॥ ब्राह्मण तप और यज्ञके बेचनेवाले होंगे, युगक्षयमें विपरीत ऋतु

प्रणष्टचेतना मर्त्या मुक्तकेशा विचूलिनः ॥ ऊनपोडशवर्षाश्च प्रजास्यन्ति नराः सदा ॥ ११ ॥ अट्टशूला जनपदाः शिवशूलाश्चतुष्पथाः ॥ प्रमदाः केशशूलाश्च भविष्यन्ति युगक्षये ॥ १२ ॥ सर्वे ब्रह्म वदिष्यन्ति सर्वे वाजसनेयिनः ॥ शूद्रा भोषादिनश्चैव भविष्यन्ति युगक्षये ॥ १३ ॥ तपोयज्ञफलानां च विक्रेतारो द्विजातयः ॥ ऋतवश्च भविष्यन्ति विपरीता युगक्षये ॥ १४ ॥ शुक्रदन्ता जिताक्षाश्च मुण्डाः काषायवाससः ॥ शूद्रा धर्मं चरिष्यन्ति शाक्यबुद्धोपजीविनः ॥ १५ ॥ श्वापदप्रचुरत्वं च गवां चैव परिक्षयः ॥ स्वादूनां विनिवृत्तिश्च विद्यादन्तगते युगे ॥ १६ ॥ अन्त्या मध्ये निवत्स्यन्ति मध्याश्चान्तनिवासिनः ॥ यथानिम्नं प्रजाः सर्वा गमिष्यन्ति युगक्षये ॥ १७ ॥ तथा द्विहायना दम्यास्तथा पल्वलकर्षकाः ॥ चित्रवर्षा च पर्जन्यो युगे क्षीणे भविष्यति ॥ १८ ॥ सर्वे चौरकुले जाताश्चौरयानाः परस्परम् ॥ स्वल्पेनाढ्या भविष्यन्ति यत्किञ्चित्प्राप्य दुर्गताः ॥ १९ ॥

होंगी ॥ १४ ॥ श्वेत दांत सूक्ष्मदृष्टिवाले सुंडी काषाय वस्त्र पहरे शाक्यमतकी उपजीविका करनेवाले शूद्र धर्मको करेंगे ॥ १५ ॥ हिंस्र जीव अधिक होंगे गौओंका क्षय होगा और युगान्तमें स्वादुरसोंकी हीनता होगी ॥ १६ ॥ अन्त्यजाति म्लेच्छादि मध्य कुरु पांचालादि देशोंमें निवास करेगी और मध्यनिवासी अंत्यमें जा वसेंगे युगक्षयमें प्रजा अधोमार्गकोही प्राप्त होती जायगी ॥ १७ ॥ किसान दो वर्षके बछड़ोंको नाथ ढालेंगे तथा वधिया करेंगे तथा युगक्षयमें मेघ कहीं वर्षेंगे नहीं वर्षेंगे ॥ १८ ॥ चोरोंके कुलमें जन्मते हुए सब चोरीही परस्पर करेंगे, थोड़ाही कुछ प्राप्त करनेसे दारिद्र्य अपनेको धनाढ्य

६५

समझेगे ॥ १९ ॥ युगान्तमें मनुष्य धर्म नहीं करेंगे, पृथ्वी ऊपर अधिक और चोरोसे मार्ग आवृत होंगे ॥ २० ॥ कलियुगमें सब वाणिज्य करेंगे पिताके दिये हुए द्रव्यका पुत्र विभाग करेंगे और लाभसे झूठे विरोध कर उसक हरणमें प्रवृत्त होंगे ॥ २१ ॥ सुकुमारता रूपलावण्यताके क्षय होनेसे स्त्रीजन कलियुगमें केशमात्रसे अलंकृत होगी ॥ २२ ॥ निर्विहारभूत गृहस्थको कलिमें स्त्रीके सिवाय कोई वस्तु प्रिय न होगी ॥ २३ ॥ स्त्री कुशाल और वृथारूपसे युक्त होगी पुरुष थोड़े और स्त्रा बहुत होंगी ॥ २४ ॥ लोक परस्पर बहुत मांगनेवाले होंगे वर्णान्तरोंसे विना विचार दान ले लेंगे ॥ २५ ॥

न ते धर्मं करिष्यन्ति मानवा निर्गते युगे ॥ ऊषाकबहुला भूमिः पन्थानस्तस्करावृताः ॥ २० ॥ सर्वे वाणिज्यकाश्चैव भविष्यन्ति कलौ युगे ॥ पितृदत्तानि देयानि विभजन्ते सुतास्तदा ॥ हरणाय प्रपत्स्यन्ते लोभानृतविरोधिताः ॥ २१ ॥ सौकुमार्ये तथा रूपे रत्ने चोपक्षयं गते ॥ भविष्यन्ति युगान्ते च नार्यः केशैरलंकृताः ॥ २२ ॥ निर्विहारस्य भूतस्य गृहस्थस्य भविष्यति ॥ युगान्ते समनुप्राप्ते नान्या भार्यासमा गतिः ॥ २३ ॥ कुशीलनार्यभूयिष्ठं वृथारूपसमन्वितम् ॥ पुरुषालपं बहुस्त्रीकं तद्युगान्तस्य लक्षणम् ॥ २४ ॥ बहुयाचनको लोको न दास्यति परस्परम् ॥ अविचार्य ग्रहीष्यन्ति दानं वर्णान्तरात्तथा ॥ २५ ॥ राजचौर-
ग्रिदण्डातों जनः क्षयमुपेक्ष्यति ॥ सस्यनिष्पत्तिरफला तरुणा वृद्धशीलिनः ॥ ईहया सुखिनो लोका भविष्यन्ति युगक्षये ॥ २६ ॥ वर्षासु वाताः परुषा नीचाः शर्करवर्षिणः ॥ संदिग्धः परलोकश्च भविष्यति युगक्षये ॥ २७ ॥ आत्मानश्च दुराचारा ब्रह्मदूषणतत्पराः ॥ आत्मानं बहु मन्यन्ते मन्युरेवाभ्ययाद्विजान् ॥ २८ ॥

राजा चोर अग्नि और दंडसे पीडित होकर प्रजा व्याकुल हो जायगी. शस्य सम्पत्ति निष्फल और तरुण वृद्धोंकी समान कार्य करेंगे. युगक्षयमें प्रजा मन-
सेही अपनेको सुखी मानेगी ॥ २६ ॥ वर्षामें तीक्ष्ण पवन चलेगी. नीच और शर्करावर्षी होंगे. युगक्षयमें परलोककाभी संदेह होगा ॥ २७ ॥
स्वयं दुराचारी स्वयं ब्रह्मदूषण तत्पर अपनेको बहुत माननेवाले ब्राह्मण महाक्रोधी होंगे ॥ २८ ॥

म.व.
प.३म. ३

५५

राजाभी धनधान्योपजीवी वैश्याचारसे जीनेवाले होंगे. युगके अन्तमें इस प्रकार ब्राह्मण होंगे ॥ २९ ॥ विनाही कारण परस्पर शपथ करने लगेंगे. ऋण लेने देनेमें बड़ी अविनय होगी ॥ ३० ॥ प्रसन्नता फलरहित और क्रोध सफल होगा. दूधकी स्थितिके निमित्त बकरीयोंको दूधके निमित्त पालेंगे ॥ ३१ ॥ अशास्त्रीय विद्वान् कहावेंगे. ऐसा उनका स्वभावही होगा और वे पण्डितमानी नीतिको अप्रमाण कहेंगे ॥ ३२ ॥ युगक्षयमें शास्त्रोक्तके अप्रवक्ता होंगे. वृद्धोंकी सेवा किये विना सब अपनेको सर्वशास्त्रका ज्ञाता कहेंगे ॥ ३३ ॥ युगान्तमें कोई कवितारहित नहीं होगा ;

वैश्याचाराश्च राजन्या धनधान्योपजीविनः ॥ युगापक्रमणे सर्वे भविष्यन्ति द्विजातयः ॥ २९ ॥ अप्रवृत्ताः प्रपत्स्यन्ते समयाः शपथास्तथा ॥ ऋणं सविनयभ्रशं युगे क्षीणे भविष्यति ॥ ३० ॥ भविष्यत्यफलो हर्षः क्रोधश्च सफलो नृणाम् ॥ अजाश्च शोपरो- त्स्यन्ते पयसोऽर्थे युगक्षये ॥ ३१ ॥ अज्ञास्त्रविदुषां पुंतामेवमेव स्वभावतः ॥ अप्रमाणं वदिष्यन्ति नीतिं पण्डितमानिनः ॥ ३२ ॥ शास्त्रोक्तस्याप्रवक्तारो भविष्यन्ति युगक्षये ॥ सर्वे सर्वे हि जानन्ति वृद्धाननुपसेव्य वै ॥ ३३ ॥ न कश्चिदकविर्नाम युगान्ते समुप- स्थिते ॥ नक्षत्राणि नियोक्ष्यन्ति विकर्मस्था द्विजातयः ॥ चौरप्रायाश्च राजानो युगान्ते पर्युपस्थिते ॥ ३४ ॥ कुण्डा वृषा नैकृतिकाः सुरापा ब्रह्मवादिनः ॥ अश्वमेधेन यक्ष्यन्ति युगान्ते जनमेजय ॥ ३५ ॥ अयाज्यान्याजयिष्यन्ति तथाभक्ष्यस्य भक्षिणः ॥ ब्राह्मणा धनतृष्णार्ता युगान्ते समुपस्थिते ॥ ३६ ॥ भोशब्दमभिधास्यन्ति न च कश्चित्पठिष्यति ॥ एकशङ्खास्तथा नार्यो गवेधुर्कै- पिनद्धकाः ॥ ३७ ॥ नक्षत्राणि वियोगीनि विपरीता दिशस्तथा ॥ संध्यारागोऽथ दिग्दाहो भविष्यत्यवरे युगे ॥ ३८ ॥

विकर्ममें स्थित ब्राह्मण नक्षत्र गिनकर आजीविका करेंगे और युगान्तमें राजा प्रायता करके चोर हो जायेंगे ॥ ३४ ॥ जीवितगति होनेसे जारसे उत्पन्न पुत्र कुंड वृष नैकृत सुरापी ब्रह्मवाद करता होंगे. हे जनमेजय ! यह अनधिकारी युगान्तमें अश्वमेध करेंगे ॥ ३५ ॥ अयाजोंको यज्ञ करोंगे और अभक्ष्यका भक्षण करेंगे युगान्तमें ब्राह्मण तृष्णासे आर्त हो जायेंगे ॥ ३६ ॥ कोई विद्या नहीं पढ़ेंगे. परन्तु परस्पर भोशब्द उच्चारण करेंगे. गवे- धुक तथा चोंटली धारण करनेवाली स्त्री होंगी ॥ ३७ ॥ नक्षत्रोंके वर्ण बदल जायेंगे. शास्त्ररहित गति होगी संध्या समय लाली और दिग्दाह युग-

क्षयमें होगा ॥ ३८ ॥ पिताओंको पुत्र और बहुएं सासोंको कार्यमें नियुक्त करेंगी नीच जातिकी स्त्रियोंसे सब वर्ण भोग करेंगे ॥ ३९ ॥ शिष्य गुरुओंको बाणीरूपी बाणसे जर्जरित करेंगे और प्रमत्त हो पुरुष स्त्रियोंके मुखोंमें भोग करेंगे ॥ ४० ॥ बलि वैश्वदेव किये विनाही मनुष्य भोजन करेंगे भिक्षाबलिको विना दिये स्वयं पुरुष भोजन करेंगे ॥ ४१ ॥ सोते हुए पुरुषोंको त्याग स्त्री भोगार्थ अन्यपुरुषोंके पास जायगी और पुरुष सोई स्त्रियोंको त्याग परस्त्रियोंके निकट जायगे ॥ ४२ ॥ सब मनुष्य व्याधित और शूलयुक्त होंगे तथा परस्पर बुराई करनेवाले होंगे, युगके क्षीण होनेमें कोई कृति

पितृपुत्रा नियोक्ष्यन्ति वध्वः श्वश्रूश्च कर्मसु ॥ वियोनिषु चरिष्यन्ति प्रमदासु नरास्तदा ॥ ३९ ॥ वाक्शरैस्तर्जयिष्यन्ति गुरुन् शिष्यास्तथैव च ॥ मुखेषु च प्रयोक्ष्यन्ति प्रमत्ताश्च नरास्तदा ॥ ४० ॥ अकृताग्राणि भोक्ष्यन्ति नराश्चैवाग्निहोत्रिणः ॥ भिक्षां बलिमदत्त्वा च भोक्ष्यन्ति पुरुषाः स्वयम् ॥ ४१ ॥ पतीन्सुप्तान्वश्रयित्वा गमिष्यन्ति स्त्रियोऽन्यतः ॥ पुरुषाश्च प्रसुप्तासु भार्यासु च परस्त्रियम् ॥ ४२ ॥ नाव्याधितो नाप्यरुजो जनः सर्वोऽभ्यसूयकः ॥ न कृतिप्रतिकर्ता च काले क्षीणे भविष्यति ॥ ४३ ॥ इति श्रीम० भवि० तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ जनमेजय उवाच ॥ एवं विलुलिते लोके मनुष्याः केन पालिताः ॥ निवत्स्यन्ति किमाचाराः किमाहारविहारिणः ॥ १ ॥ किंक्रमांणः किमीहन्तः किंप्रमाणः किमायुषः ॥ कां च काष्ठां समासाद्य प्रपत्स्यन्ति कृतं युगम् ॥ २ ॥ व्यास उवाच ॥ अत ऊर्ध्वं च्युते धर्मे गुणहीनाः प्रजास्ततः ॥ शीलव्यसनमासाद्य प्राप्स्यन्ते हासमायुषः ॥ ३ ॥ आयुर्हान्या बललानिर्बललान्या विवर्णता ॥ वैवर्ण्याद्व्याधिसंपीडा निर्वैदो व्याधिपीडनात् ॥ ४ ॥

और प्रतिकर्ता नहीं होगा ॥ ४३ ॥ इति श्रीमन्महाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ ६४ ॥ जन्मेजय बोले, जब इस प्रकार लोक लुलित होंगे तब मनुष्य किसके द्वारा पालित होंगे तब किस आचार और आहार विहारसे युक्त होंगे ॥ १ ॥ क्या कर्मवाले किस चेष्टावाले, किस प्रमाण और किस अवस्थाके मनुष्य होंगे, किस दशाको प्राप्त होकर वे सब युगको प्राप्त होंगे ॥ २ ॥ व्यासजी बोले धर्महीन होनेसे सब प्रजा गुणहीन हो जायगी, शीलके व्यसनको प्राप्त होकर आयुके हासको प्राप्त होंगे ॥ ३ ॥ आयुकी हीनता होनेसे बलकी हानि और

बलहानि होनेसे विवर्णता, विवर्णतासे व्याधिपीडा और व्याधिपीडासे निर्वद होता है ॥ ४ ॥ निर्वदसे आत्मसंबोध, संबोधसे धर्मशीलता होती है. इस प्रकार पराकाष्ठाको प्राप्त हो प्राणी सत्ययुगको प्राप्त होंगे ॥ ५ ॥ कितने पुरुष किसी उद्देशसे धर्मशील होंगे कोई मध्यस्थताको प्राप्त होंगे. कोई हेतुवादमें आश्चर्यकरने वाले ईर्ष्याशील होंगे ॥ ६ ॥ प्रत्यक्ष और अनुमानको निश्चय करनेवाले प्रत्यक्ष प्रमाणही मानकर पंडिताईका अभिमान करेंगे ॥ ७ ॥ कोई मनुष्य वेदोक्त वाक्यको अप्रमाण करेंगे स्त्रियोंका जीवन योनिसेही होगा ॥ ८ ॥ कोई धर्मलोप नास्तिक होंगे मूढ और पंडितमानी मनुष्य कलिमें होंगे ॥ ९ ॥ प्राणियोंकी

निर्वेदादात्मसंबोधः संबोधाद्धर्मशीलता ॥ एवं गत्वा परां काष्ठां प्रपत्स्यन्ति कृतं युगम् ॥ ५ ॥ उद्देशतो धर्मशीलः केचिन्मध्यस्थतां गताः ॥ विमर्षशीलाः केचित्तु हेतुवादकुतूहलाः ॥ ६ ॥ प्रत्यक्षमनुमानं च प्रमाणं चेति निश्चिताः ॥ प्रमाणैकं करिष्यन्ति नोति पण्डितमानिनः ॥ ७ ॥ अप्रमाणं करिष्यन्ति वेदोक्तमपरे जनाः ॥ तदा मुखभगाश्चैव भविष्यन्ति स्त्रियोऽपराः ॥ ८ ॥ नास्तिक्यपरमाश्चापि केचिद्धर्मविलोपकाः ॥ भविष्यन्ति नरा मूढा मन्दाः पण्डितमानिनः ॥ ९ ॥ तदात्वमात्रे श्रद्धेयाः शास्त्रज्ञानबहिष्कृताः ॥ दाम्भिकास्ते भविष्यन्ति वादशीलकुतूहलाः ॥ १० ॥ तदा विचलिते धर्मे जनाः शेषपुरस्कृताः ॥ शुभान्येवाचरिष्यन्ति दानसत्यसमन्विताः ॥ ११ ॥ सर्वभक्षो ह्यसंशुप्तो निर्गुणो निरपत्रपः ॥ भविष्यति तदा लोकस्तत्कषायस्य लक्षणम् ॥ १२ ॥ विप्राणां शाश्वती वृत्तिर्यदा वर्णावरा जनाः ॥ प्रतिपत्स्यन्ति वृत्त्यर्थं तत्कषायस्य लक्षणम् ॥ १३ ॥ कषायोपप्लवे लोके ज्ञानविद्याप्रणशने ॥ सिद्धिं स्वल्पेन कालेन यास्यन्ति निरुपस्कृताः ॥ १४ ॥

श्रद्धाके बल प्रत्यक्षमें होगी. शास्त्रज्ञानसे रहित होंगे वे वादशील कुतूहलके परवश होकर दाम्भिक हो जायेंगे ॥ १० ॥ इस प्रकार धर्मके चलायमान होनेसे शेष मनुष्य दान सत्यसे युक्त हो शुभ कार्योंको करेंगे ॥ ११ ॥ सब पदार्थोंके खानेवाले निर्गुणी निर्लज्ज लोक हो जायेंगे यही कषायका लक्षण है ॥ १२ ॥ जब ब्राह्मणकी सदा रहनेवाली वृत्तिको शूद्र करने लेंगे यही कषायका लक्षण जानना ॥ १३ ॥ ज्ञानविद्याका नाश होनाही कलिका लक्षण है. परन्तु इस

कालमें थोड़ेही परिश्रमसे मनुष्य सिद्ध हो जाता है ॥ १४ ॥ महायुद्ध, महानाद, महावर्षा, महाभय युगके क्षीण होनेपर होगा यही कलिका लक्षण है ॥ १५ ॥ ब्राह्मणके रूपमें राक्षस और चुगलीकी बात सुननेवाले राजा होंगे यही पुरुष युगान्तमें पृथ्वीको भोंगेंगे ॥ १६ ॥ स्वाध्याय वषट्कारसे हीन अनीतियुक्त अभिमानी ब्राह्मण क्रव्यादरूपसे सर्वभक्षी और वृथा व्रत करनेवाले होंगे ॥ १७ ॥ मर्ख, स्वार्थी, लोभी, क्षुद्र, क्षुद्राशय, भोजनाच्छादनके व्यवहारमें तत्पर, सनातन धर्मसे पतित ॥ १८ ॥ पराई स्त्री और पराये रनोंको हरनेवाले, कामी, दुरात्मा, छली, साहसी ॥ १९ ॥ जब सब महायुद्धं महानादं महावर्षं महाभयम् ॥ भविष्यति युगे क्षीणे तत्कषायस्य लक्षणम् ॥ १५ ॥ विप्ररूपाणि रक्षांसि राजानः कर्णवेदिनः ॥ पृथिवीमुपभोक्ष्यन्ति युगान्ते समुपस्थिते ॥ १६ ॥ निःस्वाध्यायवषट्कारा अनेयाश्चाभिमानिनः ॥ विप्राः क्रव्यादरूपेण सर्वभक्षा वृथाव्रताः ॥ १७ ॥ मूर्खाः स्वाथपरा लुब्धाः क्षुद्राः क्षुद्रपरिच्छदाः ॥ व्यवहारोपवृत्ताश्च च्युता धमाच्च शाश्वतात् ॥ १८ ॥ हतारः पररत्नानां परदारापहारकाः ॥ कामात्मानो दुरात्मानः सापधाः प्रियसाहसाः ॥ १९ ॥ तेषु प्रभवमानेषु तुल्यशीलेषु सर्वतः ॥ अभाविनो भविष्यन्ति मुनयो बहुरूपिणः ॥ २० ॥ उत्पन्ना ये कृतयुगे प्रधानपुरुषाश्रयाः ॥ कथायोगेन तान्सर्वान्पूजयिष्यन्ति मानवाः ॥ २१ ॥ शस्यचौरा भविष्यन्ति तथा चैलापहारिणः ॥ भक्ष्यभोज्यापहाराश्च करण्डानां च हारिणः ॥ २२ ॥ चौराश्चौरस्य हतारो हन्ता हर्तुं भविष्यति ॥ चौरैश्चौरक्षये चापि कृते क्षेमं भविष्यति ॥ २३ ॥ निःसारे क्षुभिते लोके निष्क्रिये व्यन्तरस्थिते ॥ नराः श्रयिष्यन्ति वनं करभारप्रपीडिताः ॥ २४ ॥

ओरसे इस प्रकारके मनुष्योंका प्रादुर्भाव हो जायगा तब मुनिरूपधारी बहुतसे मनुष्य होंगे ॥ २० ॥ जो सतयुगमें प्रधान पुरुषके आश्रयवाले उत्पन्न हुए हैं, कथाके योगसे मनुष्य उन सबका पूजन करेंगे ॥ २१ ॥ खेती और बैल, वस्त्र, चोरी करनेवालेभी मनुष्य होंगे, भक्ष्य, भोज्य, स्नान, सामग्री तथा वंशपात्रके हरनेवाले होंगे ॥ २२ ॥ चोरोंकी चोरी करनेवाले, मारनेवालोंके मारनेवाले मनुष्य कलियुगमें होंगे चोरोंसे चोरोंका क्षय होनेपर क्षेम होगी ॥ २३ ॥ जब निःसार निष्क्रिय और क्षुभित संसार हो जायगा तब करभारसे पीडित हो मनुष्य वनको चले जायेंगे ॥ २४ ॥

पुत्र सब कर्मोंमें पिताको आज्ञा देंगे बहू सासुओंको युगान्तमें आज्ञा देंगी ॥ २५ ॥ शिष्य गुरुओंको वाणीरूपी बाणसे जर्जरित करेंगे. यज्ञके न होनेसे राक्षस, श्वापद ॥ २६ ॥ कीट, मूषक, सर्प मनुष्योंको धर्षित करेंगे. क्षेम सुभिक्ष आरोग्य बंधुओंमें ममता यह सब आशयसे होंगे ॥ २७ ॥ आपही पालना और आपही चोरी करनेवाले युगसंभारके धारण करनेवाले देशदेशमें मंडल बांधकर विचरण करेंगे ॥ २८ ॥ अपन देशोंसे भ्रष्ट हुए बंधुओंके सहित निस्सार हुए कालक्षयमें सब मनुष्य इस गतिको हो जायेंगे ॥ २९ ॥ तब शुभासे व्याकुल हुए मनुष्य पुत्रोंको कंधोंपर चढ़ाये भयसे कौशिकी नदिके पार होंगे

पितृनाज्ञापयिष्यन्ति पुत्राः कर्मणि सर्वशः ॥ स्नुषा इवश्रूस्तथा चैव युगांते प्रत्युपस्थिते ॥ २५ ॥ वाक्शैरर्दयिष्यन्ति गुरुन् शिष्याः समन्ततः ॥ यज्ञकर्मण्युपरते रक्षांसि श्वापदानि च ॥ २६ ॥ कीटमूषकसर्पाश्च धर्षयिष्यन्ति मानवान् ॥ क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं सामर्थ्यं वापि बन्धुषु ॥ उद्देशतो नरश्रेष्ठ भविष्यन्ति युगक्षये ॥ २७ ॥ स्वयंपालाः स्वयं चोरा युगसंभारसंभृताः ॥ मण्डलेः प्रचलिष्यन्ति देशे देशे पृथक् पृथक् ॥ २८ ॥ स्वदेशेभ्यः परिभ्रष्टा नःसाराः सह बन्धुभिः ॥ नराः सर्वे भविष्यन्ति तदा कालपरिक्षयात् ॥ २९ ॥ तदा स्कन्धे समाधाय कुमारान् विद्रुता भयात् ॥ कौशिकीं प्रतरिष्यन्ति नराः क्षुद्रयपीडिताः ॥ ३० ॥ अङ्गान् वङ्गान्कलिङ्गान्श्च काश्मीरानथ मेकलान् ॥ ऋषिकान्तगिरिद्रोणीः संश्रयिष्यन्ति मानवाः ॥ ३१ ॥ कूत्सं वा हिमवत्पार्श्वं कूलं च लवणाम्भसः ॥ अरण्येषु च वत्स्यन्ति नरा म्लेच्छगणैः सह ॥ ३२ ॥ नैव शून्या न चाशून्या भविष्यति वसुंधरा ॥ गोप्ताश्चाप्यगोप्ताः प्रभविष्यन्ति शास्त्रिणः ॥ ३३ ॥ मृगैर्मत्स्यैर्विहंगैश्च श्वापदैः सर्पकीटकैः ॥ मधुशाकफलेर्मूलैर्धर्तयिष्यन्ति मानवाः ॥ ३४ ॥

॥ ३० ॥ अंग वंग कलिङ्ग काश्मीर मेकल ऋषिकान्त और गिरिद्रोणीको प्राप्त होंगे ॥ ३१ ॥ वा सम्पूर्ण हिमालयके पार्श्वमें वा लवणसागरके तटपर वनोंमें मनुष्य म्लेच्छगणोंके साथ निवास करेंगे ॥ ३२ ॥ न तो शून्य न अशून्य इस प्रकारकी पृथ्वी होगी. शस्त्रधारी रक्षक और अरक्षक दोनों प्रकारके होंगे ॥ ३३ ॥ मृग, मत्स्य, विहंग, श्वापद, कीट, मधु, शाक, फल, मूल इनसे मनुष्य अपनी आजीविका करेंगे ॥ ३४ ॥

चीर अनेक प्रकारके पर्ण, वल्कल, अजिन यह सब मुनिजनोंकी समान धारण करेंगे ॥ ३५ ॥ दर्शशीलादिमें हलके द्वारा बीज बोनेकी चेष्टा करेंगे और बकरी, भेड़, ऊँट, गधे इनको यत्नसे पालेंगे ॥ ३६ ॥ तटपर आई हुई नदियोंके स्रोत बंद हो जायेंगे. पक्कान्नका व्यवहार तथा वृशोंके मूलफलका परस्पर व्यवहार होगा ॥ ३७ ॥ जो सन्तान उत्पन्न होगी वह शुद्धिरहित और कुलके लक्षणोंसे हीन और बहुत सन्तति होगी ॥ ३८ ॥ जब इस प्रकार कालकारित मनुष्य हो जायेंगे तब प्रजामें धर्म हीनसे हीन दशाको प्राप्त होगा ॥ ३९ ॥ उस समय मनुष्योंकी आयु तीस वर्षकी

चीरं पर्णं च बहुलं वल्कलान्याजिनानि च ॥ स्वयंकृतानि वत्स्यन्ति यथा मुनिजनस्तथा ॥ ३५ ॥ बीजानामाकृतिं निमेष्वीहन्तः काष्ठशंकुभिः ॥ अजैडकं खरोष्ट्रं च पालयिष्यन्ति यत्नतः ॥ ३६ ॥ नदीं स्रोतांसि रोत्स्यन्ति तोयार्थं कूलमाश्रिताः ॥ पक्कान्नव्यवहारेण विपणन्तः परस्परम् ॥ ३७ ॥ तनूरुहैर्यथा जातैः समूलान्तरसंवृतेः ॥ बह्वपत्याः प्रजाहीनाः कुललक्षणवर्जिताः ॥ ३८ ॥ एवं भविष्यन्ति तदा मनुष्याः कालकारिताः ॥ हीनाद्धीनं तदा धर्मं प्रजाः समनुवत्स्यन्ति ॥ ३९ ॥ आयुस्तत्र च मर्त्यानां परं त्रिंशद्भविष्यति ॥ दुर्बला विषयग्लाना रजसा समविप्लुताः ॥ ४० ॥ भविष्यति तदा तेषां रोगैरिन्द्रियसंक्षयः ॥ आयुः प्रक्षयसं-रोधाद्विषादः प्रभविष्यति ॥ ४१ ॥ शुश्रूषवो भविष्यन्ति साधूनां दर्शने रताः ॥ सत्यं च प्रतिपत्स्यन्ति व्यवहारोपसंक्षयात् ॥ ४२ ॥ भविष्यन्ति च कामानामलाभाद्धर्मशीलिनः ॥ करिष्यन्ति च संकोचं स्वपक्षक्षयपीडिताः ॥ ४३ ॥ एवं शुश्रूषवो दाने सत्ये प्राणा-भिरक्षणे ॥ चतुष्पादः प्रवृत्तश्च धर्मः श्रेयोऽभिपत्स्यते ॥ ४४ ॥

बहुत होगी. दुर्बल विषयोंसे ग्लानियुक्त रजोगुणसे व्याप्त होंगे ॥ ४० ॥ रोगोंसे उनकी इन्द्रियोंका क्षय होगा और आयुक्षयके संरोधसे परम विषा-दको प्राप्त होंगे ॥ ४१ ॥ उस समय साधुओंके दर्शन और दहलकी इच्छा होगी व्यवहारकी निवृत्ति होनेसे सत्य वचनको बोलने लगेंगे ॥ ४२ ॥ कामके न होनेसे धर्मशील हो जायेंगे, भयसे पीडित हो दुराचारताके कारण संकोच करेंगे ॥ ४३ ॥ दान सत्य और प्राणोंकी रक्षामें इस प्रकार

सुश्रूषा करनेवाले जब होंगे तब चतुष्पाद धर्म उनको मंगलकारी होगा ॥ ४४ ॥ उनको जब अन्वय व्यतिरेकसे धर्मधर्म फलोंके मध्यमें प्रवृत्तता होगी धर्मके शिवाय और कोई वस्तु साधु नहीं तब वह धर्मही कहेंगे ॥ ४५ ॥ जैसे क्रमसे हानि प्राप्त हुई है इसी प्रकार क्रमसे वृद्धि होगी सबके धर्म ग्रहण करनेमें सतयुग प्रवृत्त होगा ॥ ४६ ॥ सतयुगमें साधु वृत्त होनेसे कलिकी हानि होती है, वह एकही काल हीन वर्णके चन्द्रमाके समान होता है ॥ ४७ ॥ अर्थात् जैसे वही चन्द्रमा अंधकारसे आवरण होनेके कारण सब नहीं दीखता इसी प्रकार कलि है और अंधकारसे हीन पूर्णचन्द्रमाकी समान सतयुग है ॥ ४८ ॥ परब्रह्म अर्थवाद है, यह वेदार्थ कहा गया है, इसको विना जाने इस प्रकार होता है जैसे मृत्तिकामें मिला

तेषां लब्धानुमानानां गुणेषु परिवर्तताम् ॥ स्वादु किं न्विति विज्ञाय धर्म एवं वदिष्यति ॥ ४५ ॥ यथा हानिः क्रमात्प्राप्ता तथा वृद्धिः क्रमाद्गता ॥ प्रगृहीते यतो धर्मे प्रपत्स्यन्ति कृतं युगम् ॥ ४६ ॥ साधु वृत्तं कृतयुगे कषाये हानिरुच्यते ॥ एक एव तु कालः स हीनवर्णो तथा शशी ॥ ४७ ॥ छत्रो हि तमसा सोमो यथा कलियुगे तथा ॥ पूर्णश्च तमसा हीनो यथा कृतयुगे तथा ॥ ४८ ॥ अर्थवादः परं ब्रह्म वेदार्थ इति तं विदुः ॥ अनिर्णेतमविज्ञातं दयाद्यमिव धार्यते ॥ ४९ ॥ इष्टवादस्तपो नाम तपो हि स्थावरं कृतम् ॥ गुणैः कर्माभिनिर्वृत्तिर्गुणास्तथ्येन कर्मणा ॥ ५० ॥ आशस्ति पुरुषं दृष्ट्वा देशकालानुवर्तिनी ॥ युगे युगे यथाकालमृषिभिः समुदाहृता ॥ ५१ ॥ इह धर्मार्थकामानां देवतानां प्रतिक्रिया ॥ आशिषश्च शुभाः पुण्यास्तथेवायुयुगे युगे ॥ ५२ ॥

हुआ सुवर्ण किसीके घर स्थित हो वह उसे विना जाने दरिद्र मानता है उसके जाननेसे अपनेको धनवान् मानता है, इसी प्रकार ब्रह्मके जाननेसे सबें श्रव्य सम्पन्न होता है ॥ ४९ ॥ इष्टवादही तप है, जिसमें स्वर्गादिका अभीष्ट कथन किया है, जो तप स्थावर अनादि अव्यभिचारी फलवान् शास्त्रमें कहा है वह देहादिद्वारा कर्मोंसे सिद्ध होता है, कर्म सत्यादि गुण देहादि कर्मोंसे मुक्ति नहीं होती इस कारण शरीरको ब्रह्माश्रय करे ॥ ५० ॥ एक कर्मसे फलप्राप्ति होती है, यह देशकालको देखकर मुनिजनोंने आशीर्वाणी कही है, वह पुण्यरूप युगयुगमें वर्तती है ॥ ५१ ॥ धर्म अर्थ काम और

देवताओंकी प्रतिक्रिया और पुण्यरूप आशीर्वाद युगयुगमें वर्तते हैं ॥ ५२ ॥ जैसे युगोंका चिरकालसे प्रवृत्त होना विधिके स्वभावसे चिरकालसे चला आता है इसी नियमसे यह लोक क्षय और उदयमें वर्तता हुआ क्षणकालकोभी स्थित नहीं होता है ॥ ५३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ सूतजी बोले, इस प्रकार राजा जन्मेजयको आश्वासन करते हुए ऋषिके अतीत अनागत वाक्योंको समाने सुना ॥ १ ॥ महर्षिके वाणीरूपी रससे अमृतके प्रवाह चन्द्रमाकी कान्तिकी समान उनके श्रोत्र तृप्त हो गये ॥ २ ॥ धर्म अर्थ यथा युगानां परिवर्तनानि चिरं प्रवृत्तानि विधिस्वभावात् ॥ क्षणं न संतिष्ठति जीवलोकः क्षयोदयाभ्यां परिवर्तमानः ॥ ५३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ सूत उवाच ॥ इत्येवमाश्वासयतो राजानं जनमेजयम् ॥ अतीतांनागतं वाक्यमृषेः परिषदा श्रुतम् ॥ १ ॥ अमृतस्येव संवाहः प्रभा चन्द्रमसो यथा ॥ अतर्पयत तच्छ्रोत्रं महर्षेर्वाङ्मयो रसः ॥ २ ॥ धर्मकामार्थसंयुक्तं करुणं वीरहर्षणम् ॥ रमणीयं तदाख्यानं कृत्स्नं परिषदा श्रुतम् ॥ ३ ॥ केचिदश्रूणि मुमुक्षुः श्रुत्वा दध्युस्तथापरे ॥ इतिहासं तमृषिणा पाणाविव निदर्शितम् ॥ ४ ॥ सदस्यान्सोऽभ्यनुज्ञाय कृत्वा चापि प्रदक्षिणम् ॥ पुनर्द्रक्ष्याम इत्युक्त्वा जगाम भगवानृषिः ॥ ५ ॥ अनुजग्मुस्तदा सर्वे प्रयान्तमृषिसत्तमम् ॥ लोके प्रवदतां श्रेष्ठं ये विशिष्टास्तपोधनाः ॥ ६ ॥ याते भगवति व्यासे तदा ब्रह्मर्षिभिः सह ॥ ऋत्विजः पार्थिवाश्चैव प्रतिजग्मुर्यथागतम् ॥ ७ ॥ पन्नगानां सुचोराणां कृतानां वैरयातनाम् ॥ जगाम रोषमुत्सृज्य राजा विषामिवारेणः ॥ ८ ॥

कामसे संयुक्त करुणा वीर रसके हर्षतासे युक्त यह रमणीय आख्यान सब समाने सुना ॥ ३ ॥ सुनकर कोई आंसू त्यागने लगे कोई ध्यान करने लगे ऋषिने उस इतिहासको हाथमें रखकर दिखा दिया ॥ ४ ॥ सभाकी आज्ञाको प्राप्त हो प्रदक्षिणा कर मैं फिर आऊंगा ऐसा कह ऋषिराज चले गये ॥ ५ ॥ तब उन ऋषिके पीछे पीछे जो कि बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ थे सब तपोधनभी गये, जो श्रेष्ठ थे ॥ ६ ॥ ब्रह्मर्षियोंके साथ भगवान् वेदव्यासजीके जानेमें ऋत्विक् और राजाभी सब अपने २ स्थानोंको गये ॥ ७ ॥ और राजा जन्मेजयभी घोर सर्पोंकी वैरयातनाको पूर्ण

कर सर्पविषकी समान क्रोध त्यागन कर निवृत्त हुए ॥ ८ ॥ होत्र अग्निकी समान दीप्तिमान् शिरशाले तक्षकको बचाकर वह महासुनि
आस्तीक अपने आश्रमको गये ॥ ९ ॥ राजा अपने सुजनोंके सहित हस्तिनापुर गये और तबसे प्रसन्नताके सहित प्रजा पालन करने लगे ॥ १० ॥
कुछ समयके उपरान्त राजा जन्मेजयने बड़ी दक्षिणावाले यज्ञका अनुष्ठान किया ॥ ११ ॥ तब सुन्दररूप काशीके राजाकी पुत्री वपुष्टमा जन्मेजयकी
सी मृतक हुए अश्वके समीपमें स्थित हुई ॥ १२ ॥ उस समय उस सब प्रकार अनिन्दित अंगवालीकी इन्द्रने इच्छा की, मृतक घोड़ेमें प्रवेश हो उसके

होत्राग्निदीप्तशिरसं परित्राय च तक्षकम् ॥ आस्तीकोऽथाश्रमपदं जगाम स महामुनिः ॥ ९ ॥ राजापि हस्तिनपुरं जगाम स्वजना-
वृतः ॥ अन्वशासच्च मुदितस्तदा प्रमुदिताः प्रजाः ॥ १० ॥ कस्य चित्त्वथ कालस्य स राजा जनमेजयः ॥ दीक्षितो वाजिमेधेन
विधिवद्भूरिदक्षिणः ॥ ११ ॥ संज्ञतमश्वं तत्रास्य देवी काश्या वपुष्टमा ॥ संविदेशोपगम्याथ विधिवदेन कर्मणा ॥ १२ ॥ तां तु
सर्वानवद्यार्द्धां चक्रमे वासवस्तदा ॥ संज्ञतमश्वमाविश्य तया मिश्रीबभूव सः ॥ १३ ॥ तस्मिन्विकारे जनिते विदित्वा तत्त्वतश्चै तत् ॥
असंज्ञतोऽयमश्वस्ते ध्वंसेत्यध्वर्युमब्रवीत् ॥ १४ ॥ अध्वर्युर्ज्ञानसंपन्नस्तदिन्द्रस्य विचेष्टितम् ॥ कथयामास राजर्षेः शशाप सं
पुरंदरम् ॥ १५ ॥ जनमेजय उवाच ॥ यद्यस्ति मे यज्ञफलं तपो वा रक्षतः प्रजाः ॥ फलेनानेन सर्वेण ब्रवीमि श्रूयतामिदम् ॥ १६ ॥
अद्यप्रभृति देवेन्द्रमजितेन्द्रियमस्थिरम् ॥ क्षत्रिया वाजिमेधेन न यक्ष्यन्तीति शौनक ॥ १७ ॥ ऋत्विजश्चाब्रवीत्क्रुद्धः स राजा
जनमेजयः ॥ दौर्बल्यं भवतामेतद्ययं धर्षितः क्रतुः ॥ १८ ॥

साथ मैथुनमें प्रविष्ट हुआ ॥ १३ ॥ यह विकार उत्पन्न होनेसे उसको तत्त्वज्ञे जानकर राजाने अध्वर्युसे कहा, यह घोड़ा मृतक नहीं हुआ है इस
कारण ध्वंस करनेके योग्य है ॥ १४ ॥ ज्ञानसम्पन्न अध्वर्युने यह राजाकी चेष्टा जानकर राजासे कहा और इन्द्रको शाप दिया ॥ १५ ॥ जन्मेजय
बोले, जो कुछ मुझे यज्ञफल प्राप्त है तथा जो मैंने प्रजारक्षा की है इस सबके फलसे जो मैं कहता हूं सो सब कोई सुनो ॥ १६ ॥ आजसे इस आजि-
तेन्द्रिय चंचलस्वभाव इन्द्रको कोई अश्वमेधसे पूजन नहीं करेंगे ॥ १७ ॥ हे शौनक । इस प्रकार क्रोधित हो जन्मेजयने ऋषियोंसे कहा कि यह

मेरे यज्ञमें विघ्न तुम्हारी दुर्बलतासे हुआ है ॥ १८ ॥ तुम हमारे राज्यमें मत बसो कुटुम्बसहित चड़े जाओ यह कहनेपर क्रोधित हो ब्राह्मणोंने राजाको त्यागन कर दिया ॥ १९ ॥ तब तामसी जन्मेजय क्रोधकर पत्नीशालामें प्राप्त हुई स्त्रियोंसे बोले ॥ २० ॥ इस असती वपुष्टमारानीको हमारे घरसे निकाल दो जिसने धूरि भरे दोनों चरण मेरे मस्तकपर प्राप्त किये थे ॥ २१ ॥ मेरी शूरता या और मान सब नष्ट कर दिया. मलीन हुई मालाकी समान मैं इसके देखनेकी इच्छा नहीं करता ॥ २२ ॥ जो पुरुष दूसरेकी मर्दन की हुई भार्याको फिर रख लेता है न वह स्वादु भोजन विषये मे न वस्तुव्यं गच्छध्वं सह बान्धवैः ॥ इत्युक्तास्तत्यजुर्विप्रास्तं नृपं जातमन्यवः ॥ १९ ॥ अमर्षादन्वशासच्च पत्नीशालागताः स्त्रियः ॥ राजा परमधर्मज्ञस्तामसो जनमेजयः ॥ २० ॥ असती वपुष्टमामेतां निर्यातयत मे गृहात् ॥ यया मे चरणौ मूर्ध्नि पातितौ रेणुगुण्ठितौ ॥ २१ ॥ शौण्डीर्यं मे मया भग्नं यशो मानश्च दूषितः ॥ न चैनां द्रष्टुमिच्छामि परिक्लिष्टामिव स्रजम् ॥ २२ ॥ न स्वादु सोऽश्नाति नरः सुखं स्वपिति वा रहः ॥ अन्वास्ते यः प्रियां भार्यां परेण मृदितामिह ॥ २३ ॥ पुनर्नैवोपभुञ्जन्ति श्वावलीढं हविर्यथा ॥ एवमुच्चैः प्रभाषन्तं क्रुद्धं पारीक्षितं नृपम् ॥ गन्धर्वराजः प्रोवाच विश्वावसुरिदं वचः ॥ २४ ॥ विश्वावसुरुवाच ॥ त्रियज्ञशतयज्वानं वासवस्त्वां न मृष्यते ॥ अप्सरास्तेन पत्नी ते विहितेयं वपुष्टमा ॥ २५ ॥ रम्भानामाप्सरा देवी काशिराजसुता मता ॥ सेवा योषिद्ररा राजन् रत्नभूतानुभूयताम् ॥ २६ ॥ यज्ञे विवरमासाद्य विघ्नमिन्द्रेण ते कृतम् ॥ यज्ञा ह्यसि कुरुश्रेष्ठ समृद्ध्या वासवोपमः ॥ २७ ॥

कर सकता है न एकान्तमें सुखसे सो सकता है ॥ २३ ॥ जैसे कुत्तेकी छुई हुई हवि फिर नहीं खाई जाती है. ऐसे दूसरेकी भोगी स्त्री कामकी नहीं. इस प्रकार क्रोधसे पुरुष बात कहते हुए जन्मेजयको विश्वावसु गन्धर्वराज इस प्रकारसे कहने लगा ॥ २४ ॥ विश्वावसु बोले, हे राजन् ! तीनसौ यज्ञोंके करनेवाले तुमको इन्द्र सहन नहीं कर सकता है इस कारण उसने वपुष्टमारूपसे अप्सराको तुम्हारी पत्नी बना दिया ॥ २५ ॥ यह रम्भा नाम अप्सरा काशिराजकी पुत्री हुई है. हे राजन् ! यह रत्नभूत स्त्रियोंमें श्रेष्ठ भोगनेके योग्य है ॥ २६ ॥ यज्ञमें छिद्र देखकर इन्द्रने प्रवेश किया. हे कुरु-

श्रेष्ठ ! तू यज्ञका करनेवाला ऋद्धिमें इन्द्रके समान है ॥ २७ ॥ हे राजन् ! तुम्हारे यज्ञफलसे तिरस्कार होनेके कारण इन्द्र तुमसे डरता है. हे प्रभो ! इस कारण इन्द्रने तुम्हारा यज्ञ आवर्तित किया ॥ २८ ॥ यह यज्ञमें विघ्न करनेवाले इन्द्रने मायाही प्रवृत्त करो है. घोडेको मृतक देख यज्ञमें विघ्न करनेको प्रवृत्त हुआ ॥ २९ ॥ जिसे वपुष्टमा मानते हो. इन्द्रने उस रंभासेही रति की है और तीन सौ यज्ञ करानेवाले तुम्हारे गुरु शापित करा दिये हैं ॥ ३० ॥ तुम और ब्राह्मण बलसे इन्द्रकी समानतासे भय हुए हैं, तुमसे और दुर्धर्ष तीन सौ यज्ञके करानेवालोंसे ॥ ३१ ॥ इन्द्र सदा डरता

धिभेत्यभिभवाच्छक्रस्तव क्रतुफलैर्नृप ॥ तस्मादावर्तितश्चैव क्रतुरिन्द्रेण ते विभो ॥ २८ ॥ मायैषा वासवेनेह प्रयुक्ता विघ्नमिच्छता ॥ क्रतोर्विवरमासाद्य संज्ञप्तं दृश्य वाजिनम् ॥ २९ ॥ रतमिन्द्रेण रम्भायां मन्यसे यां वपुष्टमाम् ॥ अथ ते गुरवः शप्तास्त्रियज्ञशतयाजिनः ॥ ३० ॥ भ्रंशितस्त्वं च विप्राश्च बलादिन्द्रसमादिह ॥ त्वत्तश्चैव सुदुर्धर्षास्त्रियज्ञशतयाजिनः ॥ ३१ ॥ विभोति हि सदा त्वत्तो ब्राह्मणेभ्योऽपि वासवः ॥ एकेन वै तदुभयं तीर्णं शक्रेण मायया ॥ ३२ ॥ स एष स महातेजा विजिगीषुः पुरंदरः ॥ कथमन्यैरनाचीर्णं नमुर्दारानतिक्रमेत् ॥ ३३ ॥ विश्वावसुरुवाच ॥ यथैव हि परा बुद्धिः परो धर्मः परो दमः ॥ यथैव परमैश्वर्यं कीर्तितं हरिवाहने ॥ तथैव त्वयि दुर्धर्षे त्रियज्ञशतयाजिनि ॥ ३४ ॥ मा वासवं मा च गुरुमात्मानं मा वपुष्टमाम् ॥ गच्छ दोषेण कालो हि सर्वथा दुरतिक्रमः ॥ ३५ ॥ ऐश्वर्येणाश्वमाविश्य देवेन्द्रेणासि रोषितः ॥ आनुकूल्येन देवस्य वर्तितव्यं सुखार्थिना ॥ ३६ ॥

है. एकही मायासे इन्द्रने वे दोनों कार्य पूर्ण किये ॥ ३२ ॥ नहीं तो यह महातेजस्वी जयशील राजा इन्द्र दूसरे साधारणोंके न करने योग्य कर्म पौत्रकी भार्याको कैसे भोग कर सकता है ॥ ३३ ॥ विश्वावसुने कहा जिस प्रकार परम बुद्धि परम धर्म परम दम परमैश्वर्य और परमकीर्ति इन्द्रमें विद्यमान है इसी प्रकार तीन सौ यज्ञ करनेवाले तुममें यह सब वस्तु विद्यमान हैं ॥ ३४ ॥ इन्द्र गुरु अपनेको और वपुष्टमाकी दोष मत दो कालकी गति किसीसे नहीं जानी जाती ॥ ३५ ॥ अपने ऐश्वर्यमें प्राप्त होकर इन्द्रने तुमको क्रोधित किया है सुखार्थीको दैवके अनुकूल वर्तना

चाहिये ॥ ३६ ॥ जिस प्रकार नदीके प्रवाहमें प्रतिकूलतासे तरना बड़ा कठिन है इसी प्रकार कालकी गति है, इस पापरहित स्त्रीरत्नको आनंदसे भोगो ॥ ३७ ॥ अपापा स्त्रीके त्यागसे वे शाप देती हैं फिर जिसमें अदुष्ट और विशेष कर दिव्य स्त्री त्यागके योग्य नहीं है ॥ ३८ ॥ सूर्यकी प्रभा अग्निकी शिखा, होताकी वेदी और आहुति स्त्री है स्त्रीकी इच्छाके बिना बलत्कारसे भोगी स्त्री दूषित नहीं होती ॥ ३९ ॥ विद्वानोंको स्त्रीका ग्रहण सत्कार और पूजन सदा करना चाहिये, शीलवती स्त्रीयोंको नमस्कार और लक्ष्मी समान पूजन करना चाहिये ॥ ४० ॥ इति श्रीमन्महाभारते खिलेषु

दुस्तरं प्रतिकूलं हि प्रतिस्रोत इवाम्भसः ॥ स्त्रीरत्नमुपभुङ्क्ष्वेमामपापां विगतज्वरः ॥ ३७ ॥ अशापास्त्यज्यमाना वै त्यजेयुरपि योषितः ॥ अदुष्टास्तु स्त्रियो राजन् दिव्यास्तु सविशेषतः ॥ ३८ ॥ भानोः प्रभा शिखा वहेर्वेदी होत्रे तथाहुतिः ॥ परामृष्टाप्य-संसक्ता नोपदुष्यन्ति योषितः ॥ ३९ ॥ ग्राह्यालालयितव्याश्च पूज्याश्च सततं बुधैः ॥ शीलवत्यो नमस्कार्याः पूज्याः श्रिय इव स्त्रियः ॥ ४० ॥ इति श्रीमन्महाभारते खिलेषु हरिवंश भविष्यपर्वणि पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ सौतिरुवाच ॥ एवं स विश्वावसुना-नुनीतः प्रसादमागम्य वपुष्टमायाः ॥ चकार मिथ्या व्यतिशङ्कितात्मा शान्तिं परां मानवधर्मदृष्टाम् ॥ १ ॥ श्रममभिविनिवर्त-मानसं सः समभिलषज्जनमेजयो यशः स्वम् ॥ विषयमनुशशास धर्मबुद्धिर्मुदितमना रमयन्वपुष्टमां ताम् ॥ २ ॥ नहि विरमति विप्रपूजनान्न च विनिवर्तति यज्ञदानशीलात् ॥ न विषयपरिरक्षणाच्च्युतोऽभून्न च परिगर्हति तां वपुष्टमां च ॥ ३ ॥ विधिविहि-तमशक्यमन्यथा हि यद्वपिराचिन्त्यतया पुराब्रवीत्सः ॥ इति स नृपतिरात्मवांस्तदासौ तदनु विचिन्त्य बभूव वीतमन्युः ॥ ४ ॥

हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ सौति बोले, इस प्रकार जब उस राजाको विश्वावसुने समझाया तब वह वपुष्टमाके प्रति शान्त हुआ और मानवधर्मसे उसने मिथ्या शंकाको त्याग शान्ति ग्रहण किं ॥ १ ॥ मनसे श्रम दूर कर वह जन्मेजय अपने यशकी अभिलाषा करता हुआ धर्मबुद्धिसे देशकी पालना करता हुआ प्रसन्न हो वपुष्टमाके साथ रमने लगा ॥ २ ॥ ब्राह्मणोंकी पूजा और यज्ञ दान शीलसे कभी विरागको प्राप्त न होता देशरक्षासे कभी आलस्ययुक्त न हुआ और न कभी वपुष्टमाकी निन्दा की ॥ ३ ॥ जो प्रारम्भमें है उसे कोई अन्यथा नहीं कर सका जो कि

अचिन्त्यतासे ऋषिने उससे कहा था. इस प्रकार वह ज्ञानी राजा ऋषिकी कहीं वाणीको स्मरण कर क्रोधरहित हुआ ॥ ४ ॥ यहां महात्मा ऋषिका महाकाव्य पाठ करनेसे मनुष्य पूज्यतम हो जाता है वह दीर्घ आयुको प्राप्त हो केशवसे सर्वज्ञताके फलको प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ यह इन्द्रके पाप दूर करनेवाले इतिहासको जो मनुष्य बढे हैं उनके सब पाप दूर हो जाते हैं और संपूर्ण कामनाओंको प्राप्त हो अरोगी शरीर होनेसे बहुत काल तक प्रसन्न रहता है ॥ ६ ॥ जैसे पुष्पके उपरान्त फल और उसके उपरान्त बीज और बीजसे फिर वृक्ष होते हैं इसी प्रकार महर्षियोंकी प्रगट की वाणी

इदं महाकाव्यमृषेर्महात्मनः पठन्नृणां पूज्यतमो भवेन्नरः ॥ प्रकृष्टमायुः समवाप्य दुर्लभं लभेच्च सर्वज्ञफलं च केशवम् ॥ ५ ॥
 शतक्रतोः कल्मषविप्रमोक्षणं पठन्निदं मुच्यति कल्मषान्नरः ॥ तथैव कामान्विविधान्समस्तुते ह्यज्ञात कामश्च चिराय नन्दति ॥ ६ ॥
 यथा हि पुष्पप्रभवं फलं दुर्लभं फलप्रजायन्ति पुनश्च पादपाः ॥ तथा महर्षिप्रभवा इमा गिरः प्रवर्द्धयन्ते तमृषिं प्रवर्द्धिताः ॥ ७ ॥
 पुत्रानपुत्रो लभते सुवर्चसश्च्युतः पुनर्विन्दति चात्मनः स्थितिम् ॥ व्याधिं न चाप्नोति चिरं स बन्धनं क्रियां च पुण्यां लभते
 गुणान्वितः ॥ ८ ॥ पतिमभिलभते च सत्सु कन्या श्रवणमुपेत्य शुभा मुनेस्तु वाचः ॥ जनयति च सुतांगुणैरुपेतान्स्वजनहिते
 द्विषतां प्रमर्दनं च ॥ ९ ॥ विजयति वसुधां च राजवृत्तिर्धनमतुलं लभते द्विषजयं च ॥ विपुलमापि धनं लभेच्च वैश्यः सुगतिमि-
 याच्छ्रवणाच्च शूद्रजातिः ॥ १० ॥

दूसरोंको वृद्धित करती हैं ॥ ७ ॥ पुत्र पौत्र कान्तिकी प्राप्ति तथा आत्माकी स्थितिभी प्राप्त होती है तथा वह पुरुष व्याधि और बन्धनको प्राप्त नहीं होता और गुणयुक्त हो पवित्र क्रियाको प्राप्त होता है ॥ ८ ॥ कन्या श्रेष्ठपतिको प्राप्त होती है. जो यह मुनिकी सुवाणी कर्णगोचर करता है, वह गुणयुक्त श्रेष्ठ सन्तानोंको प्राप्त होकर सुजनोंका हित और शत्रुओंका नाश करता है ॥ ९ ॥ राजवृत्तिमान् पृथ्वीजय करता है तथा धन धर्म अधिक प्राप्त करता है अतुल धन और शत्रुओंसे जय होता है. वैश्य बहुत धन प्राप्त करता और इसके सुननेसे शूद्रजाति सुगतिको प्राप्त होती

हे ॥ १० ॥ इस महात्माओंके चरित्रसे पूर्ण पुराणके सुननेसे नैष्ठिकी बुद्धि प्राप्त होती है वह सब दुःख छोड़ संगरहित हो वीतराग हो पृथ्वीमें विचरता है ॥ ११ ॥ यह आख्यान आपसे वर्णन किया है, ब्राह्मणमंडलमें यह स्मरण करनेके योग्य है, जो स्थिरता धीरतासे इसे स्मरण करता है वह सुखपूर्वक इस लोकमें विचरता है ॥ १२ ॥ इस प्रकार यह महात्माओंके चरित ऋषिनिर्मित अद्भुत वीरताके कर्मसे युक्त हैं यह समाप्त और विस्तारसे वर्णन किये अब क्या सुननेकी इच्छा है ॥ १३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां भविष्यान्तर्ग्रन्थार्थप्रकाशो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ जन्मेजय बोले, जिनकी नाभिमें जगत्का प्रपंचरूप कमल है उनका सृष्टि आदिके रचनेका प्रभाव कहो, जो महद्भूत अनन्तपार

पुराणमेतच्चरितं महात्मनामधीत्य बुद्धिं लभते च नैष्ठिकीम् ॥ विहाय दुःखानि विमुक्तसङ्गः स वीतरागो विचरेद्भुवः ॥ ११ ॥

इत्येतदाख्यानमुदाहृतं वै प्रतिस्मरन्तो द्विजमण्डलेषु ॥ स्थैर्येण धैर्येण पुनः स्मरन्तः सुखं भवन्तोऽनुचरन्तु लोकम् ॥ १२ ॥

इति चरितमिदं महात्मनामृषिकृतमद्भुतवीर्यकर्मणाम् ॥ कथितमिदं हि समासविस्तारैः किमपरमिच्छसि किं ब्रवीमि ते ॥ १३ ॥

इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भविष्यान्तर्ग्रन्थार्थप्रकाशो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ जनमेजय उवाच ॥ प्रभावं पद्मनाभस्य

स्वपतः सागराम्भसि ॥ पुष्करे वै यथोद्भूता देवाः सर्षिगणाः पुरा ॥ १ ॥ एतदाख्याहि निखिलं योगं योगविदांपते ॥ शृण्वतस्तस्य

मे कीर्तिं न तृप्तिरभिजायते ॥ २ ॥ कियन्तं चैव कालं वै शयिता पुरुषोत्तमः ॥ किमर्थं शयते कालं तस्य कालस्य संभवः ॥ ३ ॥

एक रसरूप सागरमें शयन करते हैं, जब कि सब चराचर नष्ट हो गया था उस समय केवल शुद्ध ब्रह्म वर्तमान थे, निर्वचन होनेसेही सोना कहा है अर्थात् कैवल्यस माधिमेंलौयमान मायायुक्तका प्रभाव कहिये और ब्रह्माण्डमें देवता और ऋषि किस प्रकारके उत्पन्न हुए हैं पुष्कररूपी अम्बरमें अर्थात् खम्बररूपी अमृत जो उस महान्दमें वर्तमान है उसमें देवऋषि इन्द्रिय प्राण सूत्रात्मा किस प्रकार उत्पन्न हुए हैं ॥ १ ॥ हे सब योग और योगज्ञाताओंके पति ! यह आप मुझसे कहिये, उनकी कीर्ति सुनकर मेरी तृप्ति नहीं होती है ॥ २ ॥ कितने कालतक वह पुरुषोत्तम शयन करते हैं किस निमित्त वह शयन करता है जिससे कालकी उत्पत्ति होती है ॥ ३ ॥

वह सुराधिप कितने समयमें जागते हैं और वह भगवान् उठकर जगत्को किस प्रकार रचते हैं ॥ ४ ॥ हे तात ! हे मुने ! पूर्वकालमें कौन प्रजापति हुए हैं और सनातन भगवान् ने किस प्रकार विचित्र जगत्की रचना की ॥ ५ ॥ जब स्थावर जंगमके नष्ट होनेसे एकार्णव हो गया, जब देवता असुर गण उरग राक्षस नष्ट हो गये ॥ ६ ॥ अनल अनिल आकाश महीतलके नष्ट होनेमें महाभूतके विपर्यय होनेसे पंच महाभूतोंके गह्वरीभूत होनेमें ॥ ७ ॥ हे मुने ! वह प्रभु महाभूतपति महातेजस्वी महाविस्तारवाले सुरगुरु किस प्रकारकी विधि धारण कर स्थित होते हैं ॥ ८ ॥ हे ब्रह्मन् ! यह वार्ता आप

कियता चेत् कालेन प्रबुद्धयति सुराधिपः ॥ कथमुत्थाय भगवान्सृजन्निखिलं जगत् ॥ ४ ॥ के प्रजापतयस्तात आसन्पूर्वं महामुने ॥ कथं निर्मितवांश्चैव चित्रं लोकं सनातनः ॥ ५ ॥ एवमेकार्णवे लोके नष्टे स्थावरजंगमे ॥ नष्टे देवासुरगणे प्रणष्टोरगराक्षसे ॥ ६ ॥ नष्टानलानिले लोके नष्टाकाशमहीतले ॥ केवलं गह्वरीभूते महाभूतविपर्यये ॥ ७ ॥ प्रभुर्महाभूतपतिर्महातेजा महातातिः ॥ आस्ते सुरगुरुश्रेष्ठो विधिमाधाय कां मुने ॥ ८ ॥ तन्मे त्वमुपपन्नाय ब्रह्मन्नेतदसंशयम् ॥ वक्तुमर्हसि धर्मिष्ठ यशो नारायणात्मकम् ॥ ९ ॥ प्रादुर्भावं पुरस्कृत्य भूतं भव्यं महात्मनः ॥ श्राद्धानामुपविष्टानां भगवन्वक्तुमर्हसि ॥ १० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ नारायणयशो-
ज्ञाने या भवेद्भवतः स्पृहा ॥ त्वदंशानघपूतस्य कार्यं कुरुकुलर्षभ ॥ ११ ॥ शृणुष्वदिपुराणेभ्यो देवताभ्यो यथाश्रुति ॥ ब्राह्मणानां च वदतां श्रुतोऽस्माभिर्महात्मनाम् ॥ १२ ॥ तथा च तपसा दृष्टो बृहस्पतिसमद्युतिः ॥ पाराशर्यस्ततः श्रीमान्गुरुर्द्रैपायनोऽब्रवीत् ॥ १३ ॥

हमसे वर्णन कीजिये, हे धर्मिष्ठ ! नारायणात्मक यश आप हमसे वर्णन कीजिये ॥ ९ ॥ उन महात्मा भूत भाविष्य वर्तमानात्मक प्रादुर्भाव हम श्राद्धावालोंके निमित्त आप वर्णन कीजिये ॥ १० ॥ वैशम्पायन बोले; जो तुम्हारी इच्छा नारायणके यशके जाननेमें है सो आपके पवित्र वंशके योग्यही है, वही तुम पवित्र कार्य करते हो ॥ ११ ॥ जिस प्रकार आदिपुराणोंमें देवताओंके मुखसे कहते हुए तथा महात्मा ब्राह्मणोंके मुखसे मैंने सुना है सो कहता हूं सुनो ॥ १२ ॥ तथा तपसे जो मैंने देखा है और बृहस्पतिकी समान कांतिवाले पराशरसे उत्पन्न श्रीमान् हमारे गुरु व्यासजीने जो कहा है ॥ १३ ॥

वह बुद्धि और सुननेके अनुसार मैं तुमसे कहता हूँ. क्योंकि मंत्रद्रष्टा ऋषिके सम्पूर्ण अर्थ जाननेको मैं समर्थ नहीं हूँ ॥ १४ ॥ शुद्ध सच्चिदानंद परमात्माको जो नारायण कहे जाते हैं कौन जान सकता है. जिसको तत्त्वसे विश्वात्मा ब्रह्माभी नहीं जान सकते ॥ १५ ॥ जो मैंने विश्वदेवता और सब ऋषियोंका रहस्य सुना है वोह उन तत्त्ववादियोंका संवाद ॥ १६ ॥ जो अध्यात्मवादियोंके विचारसे योग्य, कर्मियोंका कारणरूप जो सब देवोंमें सद्रूपसे स्थित है, महाभाग्य ज्ञानरूप जिसके आनंदसे सब प्राणी जीते हैं ॥ १७ ॥ जो भूतोंमें व्याप्त जो ब्रह्मर्षियोंका परम उपासनीय, जो सत्यस्वरूप, जिसको

तत्तेऽहं संप्रवक्ष्यामि यथा प्रज्ञं यथाश्रुतम् ॥ न विज्ञातुं मया शक्यमृषिमात्रेण भारत ॥ १४ ॥ कः समुत्सहते ज्ञातुं परं नारायणात्मकम् ॥ विश्वात्मनो यं ब्रह्मापि न वेदयाति तत्त्वतः ॥ १५ ॥ श्रुतं म विश्वदेवानां यद्रहस्यं महर्षिणाम् ॥ तादिदं सर्वदेवानां तत्त्वतस्तत्त्ववादिनाम् ॥ १६ ॥ तदध्यात्मविदां चिन्त्यं कारणं चैव कर्मिणाम् ॥ अधिदैवं च यदैवं तद्देवामिति संज्ञितम् ॥ १७ ॥ यद्धृतमाधिभूतं च पत्परं च महर्षिणाम् ॥ यत्सत्यं देवदृष्टं च यत्तद्देवविदो विदुः ॥ १८ ॥ यः कर्ता कारको बुद्धिर्मनः क्षेत्रज्ञ एव च ॥ प्रधानं पुरुषः शास्ता एकस्तदाभिज्ञान्यते ॥ १९ ॥ कालः कालं स्वपयति द्रष्टा स्वाधीन एव च ॥ प्राणः पञ्चविधश्चैव ध्रुवमक्षय एव च ॥ २० ॥ उच्यते विविधैर्भावैस्तस्यैवानघ तत्परेः ॥ स एव भगवान्सर्वं करोति विकरोति च ॥ २१ ॥ योऽस्मान्कारयते कर्म तेनास्म व्याकुलीकृताः ॥ यजामहे तमेवेशं तमेवेच्छाम निर्वृताः ॥ २२ ॥

देवताही देखते हैं, जिसको वेदवादी तत्त्वरूप कहते हैं ॥ १८ ॥ जो कर्ता कारक बुद्धिमान् और क्षेत्रज्ञरूप है, प्रधान पुरुष शास्ता वह एकही शब्दोंसे उच्चारण किया जाता है ॥ १९ ॥ वही कालरूप कालको शयन करनेवाला द्रष्टा स्वाधीन पांच विध प्राण ध्रुव अक्षय ॥ २० ॥ आदि अनेक भावोंसे उच्चारण किया जाता है. हे पापरहित ! वही अनेक भावोंसे कहा जाता है वही भगवान् सब सृष्टि और संहार करता है ॥ २१ ॥ जो हमसे अनेक कर्म कराता है जिससे हम व्याकुल हो रहे हैं उसी देवका हम यजन करते हैं. उससेही शान्तिकी इच्छा करते हैं ॥ २२ ॥

जो वक्ता और वक्तव्य है वह मैं सब तुमसे कहता हूं। इसको जो तुम सुनते हो तथा कल्याण वस्तु तथा और जो कुछ कहा जाता है ॥ २३ ॥
जो कथा और गद्गर श्रुति वर्तमान है विश्व विश्वपति देवता यह सब नारायणात्मक है ॥ २४ ॥ जो सत्य असत्य आदि भक्षर भूत भविष्य वर्तमान चराचर
अव्यय त्रिलोकीमें है वह सब यह पुरुषभेदही है ॥ २५ ॥ इति श्रीमन्महाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पुष्करप्रादुर्भावे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥
वैशम्पायन बोले, हे जम्भेजय ! चार सहस्र दिव्य वर्षोंका सतयुग होता है और आठ सौ वर्षकी उसकी संध्या होती है ॥ १ ॥ उस समय धर्म चार

यो वक्ता यश्च वक्तव्यो यश्चाहं तद्वर्णीमि वः ॥ इदं शृणुत यच्छ्रेयो यच्चान्यत्पारिजल्पथ ॥ २३ ॥ याः कथाश्चैव वर्तन्ते श्रुतयो वाथ
गद्गराः ॥ विश्वं विश्वपतिर्देवाः सर्वं नारायणात्मकम् ॥ २४ ॥ यत्सत्यं यदनृतमादिमक्षरं वै यद्भूतं भवति मिथश्च यद्भविष्यम् ॥
यत्किञ्चिच्चरमचराव्ययं त्रिलोके तत्सर्वं पुरुषवरः प्रभुर्वरिष्ठः ॥ २५ ॥ इति श्रीमन्महाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पुष्कर-
प्रादुर्भावे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ चत्वार्याहुः सहस्राणि वर्षाणां तु कृतं युगम् ॥ तस्य तावच्छती संध्या द्विगुणा
जनमेजय ॥ १ ॥ तत्र धर्मश्चतुष्पादो ह्यधर्मः पादविग्रहः ॥ स्वधर्मनिरताः सन्तो यजन्ते चैव मानवाः ॥ २ ॥ स्थिता धर्मपरा विप्रा
राजवृत्तो स्थिता नृपाः ॥ कृष्यामभिरता वैश्याः शूद्राः शुश्रूषवस्तथा ॥ ३ ॥ सदा सत्यं तपश्चैव धर्मश्चैव विवर्धते ॥ सद्गिराचरितं
यच्च क्रियते रुचायते च यत् ॥ ४ ॥ एतत्कृतयुगे वृत्तं सर्वेषामेव भारत ॥ प्राणिनां धर्मबुद्धीनामपि चेन्नीचियोनिनाम् ॥ ५ ॥
त्रीणि वर्षसहस्राणि त्रेतायुगमिहोच्यते ॥ तस्य तावच्छती संध्या द्विगुणा परिकीर्तिता ॥ ६ ॥

चरणसे युक्त और अधर्म एकपाद होता है। मनुष्य अपने धर्ममें तत्पर हो यजन करते हैं ॥ २ ॥ ब्राह्मण धर्म और राजा राजवृत्तिमें स्थित रहते हैं।
वैश्य खेती और शूद्र शुश्रूषामें रत रहते हैं ॥ ३ ॥ सदा सत्य तप और धर्म बढ़ता है जो सत्पुरुषोंका धर्म है वही किया जाता और आस्थान किया
जाता है ॥ ४ ॥ हे भारत ! सतयुगमें यह सबका कृत्य होता है धर्मबुद्धि प्राणी तथा नीचयोनिवालेभी धर्म करते हैं ॥ ५ ॥ त्रेतायुग देवताओंके

तीन सहस्र वर्षोंका होता है और ६०० वर्षकी उसकी संध्या होती है ॥ ६ ॥ धर्मके तीन और अधर्मके दो चरण होते हैं. संतमें सत्य और सतगुण यह दोनों संपूर्णरूपसे वर्तते हैं ॥ ७ ॥ परन्तु त्रेतामें इनमें कुछ विकार होता है कारण कि चारों वर्णोंमें धर्मकी फलभोगकी इच्छासे चंचलता होती है इससे बर्दुलता धर्ममें आती है ॥ ८ ॥ यह देवनिर्मित त्रेतायुगकी विधि है. अब द्वापरकी चेष्टाको सुनो ॥ ९ ॥ हे कुरुश्रेष्ठ ! दो सहस्र वर्षका द्वापर युग होता है और ४०० वर्षकी उसकी संध्या होती है ॥ १० ॥ उसमें ब्राह्मण अर्थमें तत्पर ज्ञानी और रजोगुणी होते हैं तथा शठताको धारण

द्राभ्यामधर्मः पादाभ्यां त्रिभिर्धर्मो व्यवस्थितः ॥ तत्र सत्यं च सत्त्वं च कृते सर्वं प्रवर्तते ॥ ७ ॥ त्रेतायां विकृतिं यान्ति वर्णा लोल्येन संयुताः ॥ चातुर्वर्ण्यस्य वैकृत्याद्यान्ति दौर्बल्यमाश्रिताः ॥ ८ ॥ एष त्रेतायुगविधिर्विहितो देवनिर्मितः ॥ द्वापरस्यापि या चेष्टा तामपि श्रोतुमर्हसि ॥ ९ ॥ द्वापरं द्वे सहस्रं तु वर्षाणां कुरुसत्तम ॥ तस्य तावच्छती संध्या द्विगुणा परिकीर्तिता ॥ १० ॥ तत्राप्यर्थपरा विप्रा ज्ञानिनो रजसावृताः ॥ शठा नैष्कृतिकाः क्षुद्रा जायन्ते कुरुपुङ्गव ॥ ११ ॥ द्वाभ्यां धर्मः स्थितः पद्म्यामधर्म- स्त्रिभिरुत्थितः ॥ विपर्ययं शनैर्यान्ति कृते ये धर्मसेतवः ॥ १२ ॥ ब्राह्मण्यभावा नश्यन्ति तथास्तिक्यं विशीर्यते ॥ व्रतोपवा- सास्त्यज्यन्ते द्वापरे युगपर्यये ॥ १३ ॥ तथा वर्षसहस्रं तु वर्षाणां द्वे शते तथा ॥ संध्यया सह संख्यातं क्रूरं कलियुगं स्मृतम् ॥ १४ ॥ तत्राधर्मश्चतुष्पादः स्याद्धर्मः पादविग्रहः ॥ कामनिष्ठास्तमश्छन्नाः जायन्ते तत्र मानवाः ॥ १५ ॥

करनेवाले तुच्छ जीव उत्पन्न होते हैं ॥ ११ ॥ धर्मके दो चरण और अधर्मके तीन चरण स्थित होते हैं. सतयुगकी धर्ममर्यादा शनैः २ विपरीत हो जाती है ॥ १२ ॥ ब्राह्मण्य भाव नष्ट होकर आस्तिकता जहां तहां छिन्न होने लगती है द्वापरयुगमें व्रत और उपवास त्याग दिये जाते हैं ॥ १३ ॥ इसके उपरान्त दिव्य एक सहस्र वर्षका कलि और दो सौ वर्षकी उसकी संध्या होती है ॥ १४ ॥ यह क्रूर युग है. इसमें अधर्मके चार चरण और धर्म एक चरणमें स्थित रहता है. इसमें मनुष्य कामनिष्ठावाले अंधकारसे छन्न उत्पन्न होते हैं ॥ १५ ॥

न कोई ब्रती न साधु न सत्य वचन कहनेवाला होता है. कोई मनुष्य आस्तिक और ब्रह्मवक्ता नहीं होता ॥ १६ ॥ अहंकारयुक्त बांधवोंके स्नेहरहित होते हैं ब्राह्मण शूद्राचारवाले और शूद्र श्रेष्ठ आचार करनेवाले होते हैं ॥ १७ ॥ आश्रम और वर्णधर्मोंके दूषण करनेवाले वर्णसंकरकर्ता कलियुगी पुरुष अगम्या स्त्रियोंमें रमण करनेवाले होंगे ॥ १८ ॥ इस कारण द्वादश सहस्र वर्षोंका एक युग होता है और ऐसे इकहत्तर युगोंका एक मन्वन्तर होता है ॥ १९ ॥ हे जन्मेजय ! जैसे यहां वस्तुका प्रादुर्भाव और क्षय देखा जाता है वैसेही अन्य लोकमेंभी

नैवोपवासकृत्कश्चिन्न च साधुर्न सत्यवाक् ॥ आस्तिको ब्रह्मवक्ता वा नरो भवति वै तदा ॥ १६ ॥ अहंकारगृहीताश्च प्रक्षणिस्नेहबान्धवाः ॥ विप्राः शूद्रसमाचाराः शूद्रास्त्वाचारलक्षणाः ॥ १७ ॥ दूषकास्त्वाश्रमाणां च वर्णानां चैव संकराः ॥ अगम्येष्वभिरस्यन्ते वर्तन्त्येवं कलौ युगे ॥ १८ ॥ एवं द्वादशसाहस्रं तदेकं युगमुच्यते ॥ तदेकसप्ततिगुणं मन्वन्तरमिहोच्यते ॥ १९ ॥ त्रय्यां चैव न सन्देहो युगान्ते जनमेजय ॥ दिव्यं द्वादशसाहस्रं युगं तु कवयो विदुः ॥ एतत्सहस्रपर्यन्तं तदहो ब्राह्ममुच्यते ॥ २० ॥ ततोऽहनि गते तस्मिन्सर्वेषामेव देहिनाम् ॥ शरीरनिर्वृतिं दृष्ट्वा लोकः संहारबुद्धिमान् ॥ २१ ॥ देवतानां च सर्वेषां ब्राह्मणानां महीपते ॥ दैत्यानां मानवानां च यक्षगन्धर्वराक्षसाम् ॥ २२ ॥ देवर्षीणां ब्रह्मर्षीणां तथा राजर्षिणामपि ॥ किन्नराणामप्सरसां भुजङ्गानां तथैव च ॥ २३ ॥ पर्वतानां नदीनां च पशूनां चैव भारत ॥ तिर्यग्योनिगतानां च सत्त्वानां मृगपक्षिणाम् ॥ २४ ॥ महाभूतपतिदेवः पञ्चभूतानि भूतकृत् ॥ जगत्संहारणार्थाय कुरुते वैशसं महत् ॥ २५ ॥

क्षय देखा जाता है इसमें संदेह नहीं दिव्य बारह सहस्र वर्षका एक युग होता है. ऐसे सहस्र युगोंका एक ब्रह्माका दिन होता है ॥ २० ॥ उस दिनके समाप्त होनेमें संपूर्ण प्राणधारियोंकी निर्वृत्ति होती है तब लोकके शरीरकी निर्वृत्ति देखकर लोकसंहारकी इच्छासे बुद्धिमान् ॥ २१ ॥ सब देवता और ब्राह्मण तथा दैत्य मनुष्य यक्ष गन्धर्व राक्षस ॥ २२ ॥ देवर्षि ब्रह्मर्षि राजर्षि किन्नर अप्सरा भुजंग ॥ २३ ॥ पर्वत नदी पशु तिर्यक्योनिमें प्राप्त हुए जीव मृगपक्षियोंको हे भारत ॥ २४ ॥ महाभूतपति देव पंच भूत और महाभूतके करनेवाले जगत् संहारके निमित्त महाबीभत्स व्यवहा

रको करते हैं ॥ २५ ॥ वही सूर्यरूप होकर नेत्रोंको ग्रहण करते हैं वायुरूपसे सब प्राणियोंको संहार करते हैं अग्नि होकर सब लोकोंको जलाते हैं मेघरूप होकर फिर वर्षा करते हैं ॥ २६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पुष्करप्रादुर्भावे प्रश्नोत्तरं नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ वैशम्पायन बोले, योगी नारायण शुद्ध चिन्मात्र हो अग्निकी समान होते हुए महत् अहंकार पंच तन्मात्रा शरीरसे प्रदीप्त होकर तीक्ष्ण ज्वालारूप किरणोंसे उस रूपादिरूपसागरको जलाते हुए ॥ १ ॥ सब नदी कृषादिके सहित सागरोंका पान करके अपनी रश्मियोंसे सम्पूर्ण पर्वतोंकाभी जलपान करके ॥ २ ॥

भूत्वा सूर्यश्चक्षुषी चाददानो भूत्वा वायुः संहरन् प्राणिजातम् ॥ भूत्वा वह्निर्दहते सर्वलोकान्मेघोभूत्वा भूय एवाभ्यवर्षत् ॥ २६ ॥ इति श्रीम० ह० भवि० पुष्करप्रादुर्भावे प्रश्नोत्तरं नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ भूत्वा नारायणो योगी सप्तमूर्तिर्विभावसुः ॥ गभस्तिभिः प्रदीप्ताभिः संशोषयति सागरान् ॥ १ ॥ पीत्वार्णवांश्च सर्वान्स नदीकूपांश्च सर्वशः ॥ पर्वतानां च सलिलं सर्वं पीत्वा च रश्मिभिः ॥ २ ॥ भित्त्वा सहस्रशश्चैव महीं नीत्वा रसातलम् ॥ रसातलजलं कृत्स्नं पिबते रसशुद्धमम् ॥ ३ ॥ अप्सु सृजन्कृदेमन्यद्ददाति प्राणिनां ध्रुवम् ॥ तत्सर्वमरविन्दाक्ष आदत्ते पुरुषोत्तमः ॥ ४ ॥ वायुश्च बलवान्भूत्वा स विधूयाखिलं जगत् ॥ प्राणोदयं सुराणां च वायुना कुरुते हरिः ॥ ततो देवगणानां च सर्वेषामेष देहिनाम् ॥ ५ ॥ ये चेन्द्रियगणाः सर्वे ये चान्ये च यतोद्भवाः ॥ पूयं घ्राणं शरीरं च पृथिवीमाश्रिता गुणाः ॥ ६ ॥ जिह्वा रसश्च क्लेदश्च संश्रिताः सलिलं गुणाः ॥ रूपं चक्षुर्विपाकश्च ज्योतिरेवाश्रिता गुणाः ॥ ७ ॥

सहस्रशः पृथ्वीके खण्डकर रसातलमें पहुँचाकर सब रससहित पातालका जलपान कर ॥ ३ ॥ जलके क्लेद तथा अन्य वस्तु जो प्राणियोंके निमित्त रची थी वह सब वस्तु कमलनयन पुरुषोत्तम धारण करते हैं ॥ ४ ॥ वह वायु जलवान् होकर सब जगत्को कंपित करके वायुद्वारा देवताओंके प्राणोदयको करते हैं; तब देवगण और सम्पूर्ण देहधारियोंके ॥ ५ ॥ जो इन्द्रियगण हैं और जो विषय उनसे उद्भव हैं गंध घ्राणादि जो कार्यभूत गुण पृथ्वीमें आश्रित हैं ॥ ६ ॥ जिह्वा रस क्लेद जो जलमें स्थित है और रूप चक्षु विपाक जो गुण ज्योतिमें स्थित है ॥ ७ ॥ स्पर्श प्राण चेष्टा यह गुण

पवनमें स्थित हैं। परमेश्वरी वरेण्य यह सब इन्द्रियोंके पति नारायणमें स्थित हैं ॥ ८ ॥ तब उनको प्राप्त होकर भगवान् अन्तर्यामिरूपसे सूक्ष्म क्रियाओंसे वायुसे आकृष्यमाण हुए परस्पर एकीभावको प्राप्त होते हैं अर्थात् उत्तमोंकी गतिके कहकर यह मध्यमयोगियोंकी वायुनिरोध गति कहते हैं। वह बलवान् योगी मूलाधारादि सब चक्रोंके भेदनमें समर्थ होकर सम्पूर्ण जगत् पादादि जानुपर्यन्त भूस्थान आदिसे तन्त्रोक्त दिशाकी भावना कर शरीरमात्रको विधु वन नीचे नीचे लय करनेके प्रकारसे निरस्तन कर सहस्र भ्रमध्य वायुद्वारा योगी गमन करता है ॥ ९ ॥ देवगणोंके संहर्षसे उत्पन्न हुई अग्नि सौ प्रकारसे प्रज्वलित होती हुई सब लोकोंको जलाती प्रवृत्त होती है ॥ १० ॥ पर्वतसहित वृक्ष गुल्म लता वल्ली तृण दिव्य विमान अनेक पुर ॥ ११ ॥ पुण्य

स्पर्शः प्राणश्च चेष्टा च पवनं संश्रिता गुणः ॥ परमेश्वरिनं वरेण्यं च हृषीकेशं समाश्रिताः ॥ ८ ॥ ततो भगवता तत्र राक्षसाभिः परिवारिताः ॥ वायुनाकृष्यमाणाश्च रूपान्योऽन्यसमाश्रयात् ॥ ९ ॥ तेषां संघर्षजोद्भूतः पावकः शतधा ज्वलन् ॥ अदहन्निखिलौल्लोकानुग्रः संवर्तकोऽनलः ॥ १० ॥ सपर्वतांस्तरुण्युल्माल्लतावल्लीस्तृणानि च ॥ विमानानि च दिव्यानि पुराणि विविधानि च ॥ ११ ॥ आश्रमाश्च तथा पुण्यान् दिव्यान्यायतनानि च ॥ यानि चाश्रयणीयानि तानि सर्वाणि सोऽदहत् ॥ १२ ॥ भस्मीभूतांस्ततः सर्वाल्लोकौल्लोकगुरुर्हरिः ॥ भूयो निर्वापयामास जलयुक्तेन कर्मणा ॥ १३ ॥ सहस्रदृष्ट महातेजा भूत्वा कृष्णो महाघनः ॥ दिव्यतोयेन हविषा तर्पयामास मेदिनीम् ॥ १४ ॥ ततः क्षीरनिकाशेन स्वादुना परमाम्भसा ॥ शिवेन पुण्येन मही निर्वाणमगमत्परम् ॥ १५ ॥

आश्रम दिव्यस्थान तथा अन्य स्थान (दहरादि) सबको भस्म करती है ॥ १२ ॥ जब सब लोक भस्मीभूत हो जाते हैं तब लोकगुरु नारायण फिर जलसे उस अग्निको बुझाते हैं (योगी समाधिको प्राप्त हो जलयुक्त अविद्यासंस्कारसे जागृत हो देहपातपर्यन्त संसारमें स्थिति करता है) ॥ १३ ॥ महातेजस्वी वही कृष्ण घनरूप सहस्रदृष्टि होकर दिव्य जलकी हविसे पृथ्वीको तृप्त करते हैं। (योगी विषयभेदमें सहस्र दृष्टिवाला होकर परंज्योतिरूपका संहर्ता होकर चन्द्रमंडलसे निकले जलसे शरीरको प्राप्त होता है अर्थात् पहले शरीरमें चेतना आती है) ॥ १४ ॥ तब क्षीरकी समान स्वादिष्ट उत्तम जलसे जो कि शिव और निर्माणरूप हैं पृथ्वी उससे परम तृप्त होती है, योगीका शरीर स्वच्छ निर्मल होनेसे परम शान्तिको प्राप्त होता है जरामृत्युरहित होता है ॥ १५ ॥

तब पर्वत आदिसहित यह पृथ्वी चारों ओर जलसे व्याप्त हो सब प्राणिरहित जलरूप हो जाती है (योगीकी दृष्टिमें वायुपदार्थ भी ब्रह्मरूप दीखते हैं) ॥ १६ ॥ सम्पूर्ण महाभूत उस महापराक्रमी परमात्मामें प्रविष्ट हो जाते हैं जब सूर्य पवन नष्ट होकर आकाश सूक्ष्मजनरहित हो जाता है (योगीको सूक्ष्म शुद्धवस्तुही दृष्टिगोचर होती है पवन आदित्य आदि बाह्य पदार्थ दृष्ट नहीं आते) ॥ १७ ॥ सबको शोर और पान करके एक सनातन देव निवास करते हैं यह बुद्धिमान् उस पुराणरूपमें स्थित होते हैं (सब वाणीसे परे योगी ब्रह्ममें स्थित होता है) ॥ १८ ॥ वह योगी योगको प्राप्त हो

ते नगा जलसंछन्नाः पयसः सर्वतोधराः ॥ एकार्णवजला भूत्वा सर्वसत्त्वविवर्जिताः ॥ १६ ॥ महाभूतान्यपि च तं प्रविष्टान्यमितोज-
सम् ॥ नष्टार्कपवनाकाशे सूक्ष्मे जनविवर्जिते ॥ १७ ॥ संशोषयित्वा पीत्वा च वसत्येकः सनातनः ॥ पौराणां रूपमास्थाय किम-
प्यामितबुद्धिमान् ॥ १८ ॥ एकार्णवजले ह्यासीद्योगी योगमुपागतः ॥ अयुतानां सहस्राणि गतान्येकार्णवेऽभसि ॥ न चैनं कश्चि-
दव्यक्तं व्यक्तं वेदितुमर्हति ॥ १९ ॥ जनमेजय उवाच ॥ एकार्णवविधिः कोऽयं यश्चैव परिकीर्तितः ॥ क एष पुरुषो नाम किंयोगः
कश्च योगवान् ॥ २० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतावन्तमसौ कालमकार्णवविधिं प्रति ॥ करिष्यतीमं भगवानिति कश्चिन्न बुध्यते
॥ २१ ॥ न वै माता न च द्रष्टा न ज्ञाता नैव पार्श्वगः ॥ ततोऽवज्ञायते कश्चिद्दत्ते तं देवमीश्वरम् ॥ २२ ॥

ए कार्णव जलमें स्थित होते हैं उस एकार्णव जलमें दश सहस्रों वर्ष स्थित होकर कोई व्यक्त अव्यक्त इनको जाननेको योग्य नहीं है (इसी प्रकार योगीको समाधिमें कोई कुछ नहीं जान सकता) ॥ १९ ॥ जन्मेजय बोले, जो आपने एकार्णवविधि कही है यह क्या है यह पुरुष क्या है किस रूपका योग है और कौन योगवान् है अर्थात् उसका सम्बन्धी कौन है ॥ २० ॥ वैशम्पायन बोले, जो भगवान् इतने समयतक एकार्णवविधि करते हैं वह उस समय कोई नहीं जान सकता ॥ २१ ॥ न कोई उसका प्रमाता न दृष्ट न पार्श्वमें चलनेवाला है, उस देव ईश्वरके सिवाय कुछभी विदित नहीं होता है ॥ २२ ॥

कौन योगवान् है इसपर कहते हैं. आकाश पृथ्वी पवनको प्रकाश करते प्रजापति भुवनचर सुरेश्वर पितामह श्रुतिके स्थान महासुनिको शासन करते प्रभुने शयनकी इच्छा की. (इस प्रकार गुणयुक्त नारायणको योगी जीवरूप मनन करके अपने स्वरूपमें लय करता है) ॥ २३ ॥ इति श्रीमन्महाभा-
ते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पुष्करप्रादुर्भावे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ वैशंपायन बोले, इस प्रकार वह महायशस्वी एकार्णवभूतमें जलकार
उपसंहार कर शयन करते हैं अर्थात् वह हरि नारायण प्रभु शुद्ध चिन्मात्ररूपसे स्थित रहते हैं ॥ १ ॥ महार्णवकी समान महारजोगुणके मध्यमें रज

नभः क्षितिं पवनमथ प्रकाशयन्प्रजापतिं भुवनचरं सुरेश्वरम् ॥ पितामहं श्रुतिनिलयं महासुनिं शशास भूः शयनमरोचयत्प्रभुः ॥ २३ ॥
इति श्रीमन्महाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पुष्करप्रादुर्भावे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ एवमेकार्णवीभूते
शेते लोके महाश्रुतिः ॥ प्रच्छाद्य सलिलं सर्वं हरिनारायणः प्रभुः ॥ १ ॥ महतो रजसो मध्ये महार्णवसमस्य वै ॥ विरजस्को
महाबाहुरक्षरं ब्रह्म यं विदुः ॥ २ ॥ आत्मरूपप्रकाशेन तपसा संवृतः प्रभुः ॥ त्रिकमास्थाय कालं तु ततः सुष्वाप सोऽव्ययः ॥ ३ ॥
पुरुषो यज्ञ इत्येवं यत्परं परिकीर्तितम् ॥ यच्चान्यत्पुरुषारख्यं स्यात्सर्वं तत्पुरुषोत्तमः ॥ ४ ॥ ये च यज्ञपरा विप्रा ऋत्विजा इति
संज्ञिताः ॥ आत्मदेहात्पुराभूता यज्ञेभ्यः श्रूयता तदा ॥ ५ ॥ ब्रह्माणं परमं वक्रादुद्गातारं च सामगम् ॥ होतारमथ चाध्वर्युं
बाहुभ्यामसृजत्प्रभुः ॥ ६ ॥ ब्राह्मणो ब्राह्मणत्वाच्च संप्रस्तारं च सर्वशः ॥ तन्मित्रं वरुणं सृष्ट्वा प्रतिष्ठातारमेव च ॥ ७ ॥

रहित महाबाहु जिसको अक्षर ब्रह्म कहते हैं ॥ २ ॥ आत्माके प्रकाशसे तपसे संवृत हो वह प्रभु भूत भविष्य वर्तमानरूप तीन कालमें स्थित हो वह
अविनाशी शयन कर गये ॥ ३ ॥ वह यज्ञपुरुष जो कि परम कहा जाता है और जो कुछभी पुरुष है वह सब पुरुषोत्तमरूप है ॥ ४ ॥ जो विप्र
परब्रह्ममें निष्ठावाले हैं रागादिशून्य ऋत्विक् है तथा तप आदिक वे अनादिसिद्ध उस पुरुषकी देहसे उत्पन्न हुए हैं उनको मुझसे सुनो ॥ ५ ॥ ब्रह्मा
उद्गाता और सामगा तथा होताको प्रभुने मुखसे उत्पन्न किया और अध्वर्युको भुजासे उत्पन्न किया ॥ ६ ॥ ब्राह्मण अर्थात् ब्रह्मवेत्ताको प्रस्तार तथा

मित्रावरुणको ब्रह्मत्वसे और प्रतिष्ठाता ॥ ७ ॥ तथा प्रतिहर्ता और पोता अच्छावाक मन और नेष्टा ॥ ८ ॥ हाथसे आग्नीध्र सुब्रह्मण्य यज्ञियको तथा ग्रावणको उत्पन्न किया. उन्नेता यज्ञियको भुजाओंसे उत्पन्न किया अर्थात् ब्रह्मा उद्गाता होता अध्वर्यु ब्राह्मणाच्छंसी प्रस्तोता मैत्रावरुण प्रतिप्रस्थाता प्रतिहर्ता पोता अच्छावाक नेष्टा आग्नीध्र सुब्रह्मण्य ग्रावस्तोता उन्नेता यह सोलह ऋत्विज हैं. यह यथाक्रमसे प्रणव तदर्थभावन सत्योक्ति प्राण जप धीतेक्ष्य पूर्वस्मृति आचार अपानजप भाविदुःख चिन्ता ईशपूजा दान योगोत्साह सात्त्विकी श्रद्धा वेदान्तश्रवण इन्द्रियशौर्य योगांगोंकी ऊर्जता चिन्तन करते हैं ॥ ९ ॥ इस प्रकारसे भगवान् ने सम्पूर्ण यज्ञके वक्ता ऋत्विजसंज्ञक सोलह ब्राह्मणोंको अपने अंगोंसे उत्पन्न किया है ॥ १० ॥ यह यज्ञसम्मित पुरुष उदरात्प्रतिहर्तारं पोतारं चैव भारत ॥ अच्छावाकमनोरूभ्यां नेष्टारं चैव भारत ॥ ८ ॥ पाणिभ्यामथ चाग्नीध्रं सुब्रह्मण्यं च यज्ञियम् ॥ ग्रावाणमथ बाहुभ्यामुन्नेतारं च यज्ञियम् ॥ ९ ॥ एवमेवैष भगवान् षोडशैतान् जगत्पतिः ॥ प्रवक्तृन्सर्वयज्ञानामृत्विजोऽसृजदुत्तमान् ॥ १० ॥ तद्देवै वेदमयः पुरुषो यज्ञसंमितः ॥ वेदाश्च तन्मयाः सर्वे साङ्गोपनिषदक्रियाः ॥ ११ ॥ स्वपित्येकार्णवे चैव यदाश्चर्यमभूत्तदा ॥ श्रूयते तद्यथावृत्तं मार्कण्डेयो यदन्वभूत् ॥ १२ ॥ जीर्णो भगवतस्तस्य कुशावेव महामुनिः ॥ बहुवर्षसहस्रायुस्तस्यैव वरतेजसा ॥ १३ ॥ इति तीर्थप्रसङ्गेन पृथिवीतीर्थगोचरः ॥ आश्रमानपि पुण्याश्च तीर्थान्यायतनानि च ॥ १४ ॥ देशान्राष्ट्राणि चित्राणि पुराणि विविधानि च ॥ जपहोमरतः क्षान्तस्तपो घोरं समाश्रितः ॥ १५ ॥ मार्कण्डेयस्ततस्तस्य शनैर्वाक्राद्भिनिःसृतः ॥ निष्क्रामन्तं न चात्मानं जानात देवमायया ॥ १६ ॥

वेदमय है अंग उपनिषत्की क्रियासहित तन्मय वेद हैं ॥ ११ ॥ जिस समय वह एकार्णवमें शयन कर गये तब बड़ा आश्चर्य हुआ. उस समयका वृत्तान्त मार्कण्डेयने अनुभव किया है ऐसा सुना है ॥ १२ ॥ उन भगवान्की कुक्षिमें सर्व उपाधिरहित मुनि जीर्ण हो विचरे उनके वरदानसे उनकी बहुत सहस्र वर्षकी आयु हो गई ॥ १३ ॥ एक समय तीर्थप्रसंगसे पृथ्वीके तीर्थोंमें विचरते हुए पवित्र आश्रम और पवित्र तीर्थ ॥ १४ ॥ देश राज्य विविध पुर देखते हुए जप होममें प्रीति करनेवाले शान्त हो घोर तप करते ॥ १५ ॥ शनैः शनैः मार्कण्डेयजी भगवान्के मुखसे निकले, निकल

कर देवमायासे उन्होंने अपनेको न जाना ॥ १६ ॥ उनके मुखसे निकलकर एकार्णव सागरमें मग्न हो गये तब मार्कण्डेयने देखा कि चारों ओर अंधकार व्याप्त हो रहा है ॥ १७ ॥ जब उनको बड़ा भय और अपने जीवनमें संदेह उत्पन्न हुआ, तब देवके दर्शनसे प्रसन्न होकर बड़े विस्मयको प्राप्त हुए ॥ १८ ॥ तब शंकित हो मध्यस्थमें स्थित हुए मार्कण्डेयजी विचारने लगे, यह सुझाव मोह है या कोई स्वप्न प्रवृत्त हुआ है ॥ १९ ॥ इसमें ठीकही मेरा ज्ञाव अन्य प्रकारका हो गया है, इस प्रकारका अयुक्त असत्य किसी प्रकारसे सत्य हो नहीं सकता ॥ २० ॥ चन्द्रसूर्यके नष्ट होने पर्वत भूतलके छन्न निष्क्रान्तस्तस्य वदनादेकार्णवमथो गतः ॥ सर्वतस्तमसाच्छन्नं मार्कण्डेयो निरीक्षते ॥ १७ ॥ तस्योत्पन्नं भयं तीव्रं संशयश्चात्मज-
विते ॥ देवदर्शनसंल्लघो विस्मयं चागमत्परम् ॥ १८ ॥ संचिन्तयति मध्यस्थो मार्कण्डेयोऽतिशङ्कितः ॥ किंस्विद्भवेदियं चिन्ता मोहः
स्वप्नोऽनुभूयते ॥ १९ ॥ व्यक्तमन्यतमो भावो ह्येतेषां भविता मम ॥ नहीदृशमसंक्लिष्टमयुक्तं सत्यमर्हति ॥ २० ॥ नष्टचन्द्रार्क-
पवने छन्नपर्वतभूतले ॥ कतमः स्यादयं लोक इति चिन्ताव्यवस्थितः ॥ २१ ॥ अपश्यच्चापि पुरुषं शयानं पर्वतोपमम् ॥ तोया-
ढ्यमिव जीमूतं मध्ये मग्नं महार्णवे ॥ २२ ॥ तपन्तमिव तेजोभिर्भास्वन्तमिव वंचसा ॥ जाग्रन्तमिव गाम्भीर्याच्छसन्तमिव पन्नगम्
॥ २३ ॥ स देवं प्रष्टुमायाति को भवानिति विस्मयात् ॥ तथैव च शनैर्भूया मुनः कुक्षिं प्रवेशितः ॥ २४ ॥ स प्रविष्टः पुनः
कुक्षौ मार्कण्डेयः सुनिश्चितः ॥ तथैव चरते भूयो विजानन्स्वप्नदर्शनम् ॥ २५ ॥ स तथैव यथापूर्वं पृथिवीमटते पुनः ॥ पुण्यती-
र्थानि पूतानि निरीक्षद्विव भूतले ॥ २६ ॥

होनेमें यह लोक किस प्रकार हो सकता है, इस चिन्तासे व्याकुल हुए ॥ २१ ॥ तब उन्होंने पर्वतकी समान एक पुरुषको शयन करते देखा, जिस प्रकार महासागरमें नील मेघ स्थित हो ॥ २२ ॥ तेजकी सम्पत्तिसे प्रकाशमान हो रहे थे कान्ति फैल रही थी गंभीरतासे जागते हुए सर्पकी समान स्वाश लेते ॥ २३ ॥ देवको पूछनेको चले, आप कौन हो तब यह मुनि शनैः २ उनकी कुक्षिमें प्रविष्ट हुए ॥ २४ ॥ कुक्षिमें प्रविष्ट हो मार्कण्डेयजी स्वप्नदर्शनकी समान उसमें विचरने लगे ॥ २५ ॥ आर वहां पूर्वकालकी समान पृथ्वीमें विचरने लगे और स्वर्ग तथा पृथ्वीमें पवित्र

तीर्थ देखने लगे ॥ २६ ॥ बड़ी बड़ी दक्षिणाओंके यज्ञोंसे यजन करते हुए देवकी कुक्षिमें उन्होंने सेकड़ों ब्राह्मणोंको देखा ॥ २७ ॥ वे ब्राह्मणादि वर्ण सम्पूर्ण सद्बृत्तिमें स्थित थे, चारों आश्रम यथोक्त धर्मका अनुष्ठान करनेवाले थे ॥ २८ ॥ सो सहस्र वर्षतक महामुनि मार्कण्डेयजी पृथ्वीमें विचरते हुए उस कुक्षिको सर्वथा न देख सके ॥ २९ ॥ फिर किसी समय वह उनके मुखसे निकले तब न्यग्रोधकी शाखामें सोते हुए एक बालकको देखा ॥ ३० ॥ एकार्णव जल जो कि नीहारसे व्याप्त था अव्यक्त और सब प्राणियोंके बिना लोक भयानक हो रहा था ॥ ३१ ॥ तब यह फिर

ऋतुभिर्यजमानांश्च समाप्तवरदक्षिणैः ॥ पश्यते देवकुक्षिस्थान्यज्ञियाञ्छतशो द्विजान् ॥ २७ ॥ सद्बृत्तमाश्रिताः सर्वे वर्णा ब्राह्मण-
पूर्वकाः ॥ चत्वारश्चाश्रमाः सम्यग्यथोद्दिष्टपदानुगाः ॥ २८ ॥ वर्षाणां शतसाहस्रं मार्कण्डेयो महामुनिः ॥ विचरन् पृथिवीं कृत्स्नां
न च कुक्ष्यन्तमैक्षत ॥ २९ ॥ ततः कदाचिदथ नै पुनर्वक्राद्विनिस्सृतः ॥ सुप्तं न्यग्रोधशाखायां बालमेकं निरीक्षते ॥ ३० ॥ यथा
चेकार्णवजले नीहारेण वृत्तान्तरे ॥ अव्यक्तभीषणे लोके सर्वभूतविवर्जिते ॥ ३१ ॥ स भूयो विस्मयाविष्टः कौतूहलसमन्वितः ॥
बालमादित्यसंकाशं न शक्नोत्युपसर्पितुम् ॥ ३२ ॥ सोऽचिन्तयदथैकान्ते स्थित्वा सलिलसन्निधौ ॥ पूर्वदृष्टमिदं नेति शङ्कितो
देवमायया ॥ ३३ ॥ अगाधे सलिलस्तब्धे मार्कण्डेयः पृथग्मुनिः ॥ न शान्तिं लभते तत्र श्रमात्संत्रस्ताविक्रवः ॥ ३४ ॥ तथैव
भगवान्हंसो गतो योगेन बालताम् ॥ बभाषे मेघतुल्येन स्वरेण पुरुषोत्तमः ॥ ३५ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मा भैर्वत्स न भेतव्य-
मिहैवायाहि चान्तिकम् ॥ मार्कण्डेय मुने धीर बालस्त्वं श्रमपीडितः ॥ ३६ ॥

विस्मयको प्राप्त हो कौतूहलयुक्त होकर बालसूर्यकी समान प्रकाशमान उनके निकट जानेको समर्थ न हुए ॥ ३२ ॥ तब वह एकान्तमें जलके निकट विचारने लगे मैंने यह पूर्व देखा है या नहीं इस प्रकार देवमायासे शङ्कित हुए ॥ ३३ ॥ अगाध और स्तब्धजलमें पैरते हुए महामुनि मार्कण्डेयजी श्रमसे व्याकुल हो शान्तिको किसी प्रकार प्राप्त न हुए ॥ ३४ ॥ इसी प्रकार भगवान् हंस योगमार्गसे बालअवस्थाको प्राप्त हुए, मेघकी समान गंभीर स्वरसे पुरुषोत्तमने कहा ॥ ३५ ॥ श्रीभगवान् बोले, हे वत्स ! तुम मत डरो और हमारे समीपमें आओ. हे मार्कण्डेय मुनि ! तुम बालक हो.

हे धीर ! इस समय श्रमसे पीडित हो ॥ ३६ ॥ मार्कण्डेय बोले, मेरे तपको तिरस्कार करता हुआ मुझे नाम लेकर कौन बुलाता है. बहुत वर्षोंकी आयुको धर्षणा करता हुआ मेरी वय न्यून करता है ॥ ३७ ॥ यह आचार देवताओंमें भी नहीं है मुझको विश्वेश ब्रह्माभी दीर्घायु कह कर बोलते हैं ॥ ३८ ॥ आज कौन मेरे घोरतपको तिरस्कार कर मुझे मार्कण्डेय कहकर मृत्युके देखनेकी इच्छा करता है ॥ ३९ ॥ वैशंपायन बोले, जो मार्कण्डेय मुनिने जब क्रोधसे इस प्रकार कहा तब इनसे भगवान् ने फिर कहा ॥ ४० ॥ श्रीभगवान् बोले, हे वत्स ! मैं तुम्हारा पिता हृषीकेश गुरु हूँ

मार्कण्डेय उवाच ॥ को मां नाम्ना कीर्तयते तपः परिभवन्मम ॥ बहुवर्षसन्नायुर्द्धर्षयंश्चैव मे वयः ॥ ३७ ॥ न ह्येषु समुदाचारो देवेष्वपि समाहितः ॥ मां ब्रह्मापि स विश्वेशो दीर्घायुरिति भाषते ॥ ३८ ॥ कस्तपोघोरशिरसो ममाद्य त्यक्तजीवितः ॥ मार्कण्डेयोति मां प्रोक्त्वा मृत्युमीक्षितुमिच्छति ॥ ३९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमाभाषते क्रोधान्मार्कण्डेयो महामुनिः ॥ अथैनं भगवान् भूयो बभाषे तत्परायणम् ॥ ४० ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अहं ते जनकां वत्स हृषीकेशः पिता गुरुः ॥ आयुःप्रदाता पौराणः किमर्थं नोपसर्पसे ॥ ४१ ॥ मां पुत्रकामः प्रथमं पिता ते ह्यङ्गिरा मुनिः ॥ पूर्वमाराधयामास तपस्तीव्रमुपाश्रितः ॥ ४२ ॥ ततस्त्वां घोरशिरसं दहनोपमतेजसम् ॥ दत्तवानहमात्मेष्टं महर्षिममितायुषम् ॥ ४३ ॥ तत्र नोत्सहते चान्यो यो न भृत्यो ममात्मकः ॥ द्रष्टुमेकार्णवगतं क्रीडन्तं योगधर्मिणम् ॥ ४४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः प्रसन्नवदनो विस्मयोत्फुल्ललोचनः ॥ मूर्ध्नि बद्धा-
अलिपुटो मार्कण्डेयो महातपाः ॥ ४५ ॥

वह आयुके देनेवाले मेरे निकट तुम क्यों नहीं आते ॥ ४१ ॥ प्रथम तुम्हारे पिता अंगिराऋषिने पुत्रकी इच्छासे बड़े तीव्र तपको कर मेरी आराधना की थी ॥ ४२ ॥ तब अग्निकी समान घोर शिरवाले बड़े तेजस्वी तुमको मैंने प्रदान किया और दीर्घ आयु प्रदान की ॥ ४३ ॥ जो मेरा भक्त नहीं है वह इस एकार्णव सागरके बीचमें क्रीडा करते हुए मुझे देखनेको समर्थ नहीं है. कारण कि योगधर्मके सिवाय इसे कोई नहीं जान सकता ॥ ४४ ॥ वैशंपायन बोले, तब प्रसन्न वदन विस्मयसे उत्फुल्ल नेत्र हो शिरपर अंजली बांधे महातपस्वी मार्कण्डेयजी ॥ ४५ ॥

नाम गोत्र सुनकर दीर्घायु लोकपूजित मार्कण्डेयजीने शिरसे प्रभुको नमस्कार किया ॥ ४६ ॥ मार्कण्डेयजी बोले, हे पापरहित ! आपसे मैं इस मायाके जाननेकी इच्छा करता हूँ जो आप बालकरूप एकार्णवमें शयन करते हो ॥ ४७ ॥ हे भगवान् ! आप किस संज्ञासे लोकमें जाने जाते हो आपको मैं महाभूत जानता हूँ इसमें भूत स्थित नहीं हो सकता ॥ ४८ ॥ श्रीभगवान् बोले, मैं नारायण सब देहधारियोंका उत्पत्तिकारण हूँ सब प्राणियोंका उत्पन्न करनेवाला सबका संहार करता हूँ ॥ ४९ ॥ मैं इन्द्रपदमें इन्द्र ऋतुओंका वर्षरूप हूँ मैंही युगमें

नामगोत्रे ततः श्रुत्वा दीर्घायुलोकपूजितः ॥ अथाकरोन्नमस्कारं प्रणतः शिरसा प्रभुम् ॥ ४६ ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ इच्छेऽहं तत्त्वता मायामिमां ज्ञातुं तवानघ ॥ यदेकार्णवमध्यस्थः शेषे त्वं बालरूपवान् ॥ ४७ ॥ किसंज्ञः कश्च भगवाँल्लोके विज्ञायसेऽनघ ॥ तर्कये त्वां महाभूतं न भूतमिह तिष्ठति ॥ ४८ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अहं नारायणो ब्रह्मा संभवः सर्वदेहिनाम् ॥ सर्वभूतोद्भवकरः सर्वभूतविनाशनः ॥ ४९ ॥ अहमेन्द्रे पदे शक्र ऋतूनामपि वत्सरः ॥ अहं युगे युगाक्षश्च युगस्यावर्त्त एव च ॥ ५० ॥ अहं सर्वाणि सत्त्वानि देवतान्यखिलानि च ॥ भुजगानामहं शेषस्ताक्षर्योऽहं सर्वपक्षिणाम् ॥ ५१ ॥ अहं सहस्रशीर्षाद्यैर्यः पदैरभिसंवृतः ॥ आदित्यो यज्ञपुरुषो देवो यज्ञमयो मखः ॥ अहमग्निर्हव्यवाहो यादसां पतिरव्ययः ॥ ५२ ॥ यत्पृथिव्यां द्विजेन्द्राणां तपसा भावितात्मनाम् ॥ बहुजन्मनिरुद्धात्मा ब्राह्मणो यतिरुच्यते ॥ ५३ ॥ ज्ञानवान् दृष्टविश्वात्मा योगिनां योगावित्तमः ॥ कृतान्तः सर्वभूतानां विश्वेषां कालसंज्ञितः ॥ ५४ ॥ अहं कर्म क्रिया जीवः सर्वेषां धर्मदर्शनः ॥ निष्क्रियः सर्वभूतेषु स्वात्मज्योतिः सनातनः ॥ ५५ ॥

युगाक्ष और युगका आवर्तक हूँ ॥ ५० ॥ मैंही सम्पूर्ण जीव और सब देवतारूप हूँ सर्पोंमें शेष और पक्षियोंमें गरुड हूँ ॥ ५१ ॥ मैं सहस्रशीर्षा आदि पदोंसे युक्त होकर आदित्य यज्ञपुरुष देव यज्ञमय मखस्वरूप अग्नि हव्यवाह जलपति अविनाशी हूँ ॥ ५२ ॥ जो पृथ्वीमें तपसे भावितात्मावाले तथा बहुत जन्मपर्यन्त जप तप करनेवाले ब्राह्मणोंमें जो यति हैं सो मैं हूँ ॥ ५३ ॥ ज्ञानवान् विश्वात्माका द्रष्टा योग जाननेवालोंमें श्रेष्ठ सब प्राणियोंका अन्त करनेवाले सब जगत्का कालस्वरूप ॥ ५४ ॥ कर्म क्रिया जीव और सबका धर्म देखनेवाला मैं हूँ सब प्राणियोंमें क्रियारहित आत्मज्योति

सनातन में हूं ॥ ५५ ॥ प्रधानपुरुष देव आदि अक्षय अविनाशी में हूं, मैंही धर्मतरूप सब आश्रमवासियोंका हूं ॥ ५६ ॥ मैंही हयशिर नामक देव महा
क्षीरसागरमें स्थित हुआ ऋत सत्य परम प्रजापतिरूप में एकही हूं ॥ ५७ ॥ मैंही सांख्ययोग और परंपदरूप हूं, मैंही यजनके योग्य शिवस्वरूप
विद्याधिप कहा जाता हूं ॥ ५८ ॥ मैं ज्योति वायु भूमि आकाश जल समुद्र नक्षत्र दशों दिशा वर्ष सोम पर्जन्य सूर्यरूप हूं ॥ ५९ ॥ मैंही क्षीरसागर
समुद्र वडवासुख हूं, मैंही संवर्त अग्नि होकर जल पान कर जाता हूं तथा रवि हूं ॥ ६० ॥ मैंही पुराणपुरुष परम परायण हूं, मैंही भविष्यमें होनहा-

प्रधानं पुरुषो देवोऽहमाद्यस्त्वक्षयोऽव्ययः ॥ अहं धर्मस्तपश्चाहं सर्वाश्रमनिवासिनाम् ॥ ५६ ॥ अहं हयशिरो देवः क्षीरोदे यो
महार्णवे ॥ ऋतं सत्यं च परममहमेकः प्रजापतिः ॥ ५७ ॥ अहं सांख्यमहं योगमहं तत्परम् पदम् ॥ अहमिज्यो भवश्चाहमहं
विद्याधिपः स्मृतः ॥ ५८ ॥ अहं ज्योतिरहं वायुरहं भूमिरहं नभः ॥ अहमापः समुद्राश्च नक्षत्राणि दिशो दश ॥ अहं वर्षमहं सोमः
पर्जन्योऽहमहं रविः ॥ ५९ ॥ क्षीरोदः सागरश्चाहं समुद्रो वडवासुखः ॥ वह्निः संवर्तको भूत्वा पिबंस्तोयमहं रविः ॥ ६० ॥ अहं पुराणं
रमं तथैवेह परायणम् ॥ भविष्यं चैव सर्वत्र भविष्ये सर्वसंभवः ॥ ६१ ॥ यत्किंचित्पश्यसे चैव यच्छृणोषि च किंचन ॥ यच्चानुभवसे
लोके तत्सर्वं मामकं स्मृतम् ॥ ६२ ॥ विश्वं सृष्टं मया पूर्वं सृजेयं चाद्य पश्य माम् ॥ युगे युगे च स्मक्ष्यामि मार्कण्डेयाऽखिलं
जगत् ॥ ६३ ॥ तदेतदखिलं सर्वं मार्कण्डेयावधारय ॥ शुश्रूषुर्मम धर्मेप्सुः कुक्षौ चर सुखी भव ॥ ६४ ॥ मम ब्रह्मा शरीरस्थो
देवाश्च ऋषिभिः सह ॥ व्यक्तमव्यक्तयोगं मामवगच्छापराजितम् ॥ ६५ ॥

रूप हूं ॥ ६१ ॥ जो कुछ देखा और सुना जाता है और जो कुछ लोकमें अनुभव किया जाता है वह सब सुझे जानो ॥ ६२ ॥ पहले मैंने जैसा
विश्व रचा था देखो वैसाही अब रचूंगा सुझे देखो, हे मार्कण्डेय ! युगयुगमें मैं जगत्की रचना करता हूं ॥ ६३ ॥ हे मार्कण्डेय ! यह सब वार्ता तुम
विचार करो धर्मके सुननेकी इच्छासे मेरी कुक्षिमें सुखपूर्वक विचरो ॥ ६४ ॥ ब्रह्मा मेरे शरीरमें स्थित है, देवता ऋषियोंके सहित स्थित हैं, व्यक्त
अव्यक्तसे योगद्वारा सुझे जानकर सुखी हो और अपराजित जानो ॥ ६५ ॥

यैही अक्षर मंत्र त्र्यक्षररूप हूं त्रिपद परम और त्रिवर्गके अर्थका निदर्शनरूप हूं ॥ ६६ ॥ वैशंपायन बोले, इस प्रकार महामुनि व्यासने वेदान्त और पुराणोंमें वर्णन किया है जो मार्कण्डेयजीके प्रति कहा गया है. तब महामुनि यह वचन सुन प्रसन्न हुए, उस समय महामुनिको ॥ ६७ ॥ विश्वरूप-धारी प्रभुने अपने जठरमें प्रवेश कराया तब मुनिश्रेष्ठ भगवान्की कुक्षिमें प्रवेश कर गये और अविनाशी हंसकी गाथा श्रवण करनेको सुखसे रमण करने लगे ॥ ६८ ॥ नाशरहित अनेक प्रकारके शरीर धारण करनेवाले चन्द्रसूर्यसे रहित महावर्णवर्ण शनैः शनैः विचरण करते हंसनामक भगवान् प्रलयके अन्तमें

अहमेवाक्षरो मन्त्ररूपक्षरश्चैव सर्वशः ॥ त्रिपदश्चैव परमस्त्रिवर्गार्थनिदर्शनः ॥ ६६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमेतत्पुराणेषु वेदान्ते च महामुनिः ॥ वक्रं व्याहृतवानाशु मार्कण्डेयं महामुनिम् ॥ ६७ ॥ प्रवेशयामास ततो जठरं विश्वरूपधृक् ॥ ततो भगवतः कुक्षिं प्रविष्टो मुनिसत्तमः ॥ राम सुखमासाद्य शुश्रूषुर्हंसमव्ययम् ॥ ६८ ॥ तदक्षरं विविधमथाश्रितो वपुर्महार्णवे व्यपगतचन्द्रभास्करे ॥ शनैश्चरन्प्रभुरपि हंससंज्ञितोऽसृजजगद्विसृजति कालपर्यये ॥ ६९ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भवि० दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ आपवः स विभुर्भूत्वा कारयामास वै तपः ॥ छादयित्वात्मनो देहमात्मना कुम्भसंभवः ॥ १ ॥ ततो महात्माऽतिबलो मतिं लोकस्य सर्जने ॥ महतां पञ्चभूतानां विश्वभूतो व्यचिन्तयत् ॥ २ ॥ तस्य चिन्तयतस्तत्र तपसा भावितात्मनः ॥ निराकाशे तोयमये सूक्ष्मे जगति गह्वरे ॥ ३ ॥ ईषत्संक्षोभयामास सोऽर्णवं सलिले स्थितः ॥ सोऽनन्तरोर्मिणा सूक्ष्ममथच्छिद्रमभूत्तदा ॥ ४ ॥

जगत्की रचना करते हैं ॥ ६९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ वैशंपायन बोले, वह हंसरूप विभु जलरूप वशिष्ठ होकर अर्थात् अपने कुंभसे उत्पन्न हुए अपने शरीरको समष्टि अभिमानवाले अपने आत्मासे आच्छादन कर तप करने लगे ॥ १ ॥ तब उन महाबली महात्माने लोकके निर्माण करनेकी इच्छा की. महान् और पंच महाभूतकी चिन्ता करने लगा ॥ २ ॥ उन भावितात्मावालेके उस समय चिन्ता करनेपर आकाशरहित जलमय सूक्ष्म जगत्के होनेमें ॥ ३ ॥ जलमें स्थित हो उन्होंने सागरको यत्किंचित् शुभित किया. तब संकल्परूपी

लहरोंसे आकाश नामक सूक्ष्म छिद्र हुआ ॥ ४ ॥ तब वह ईश्वर अन्य संकल्पसे आकाशमें शब्दरूपसे गतिवाला होकर पवनरूप इवसे उत्पन्न हो आकाशको प्राप्त होकर अप्राप्त हुएकी समान क्षोभसे रहित हो वायुरूपसे बढे ॥ ५ ॥ उन बलवान्के बढनेसे सागर क्षुभित हुआ तब एक दूसरेके वेगसे आहत हो ऊर्धी उसको मथन करने लगी ॥ ६ ॥ महार्णवके क्षुभित और जलके मथित होनेसे कान्तिमान् वैश्वानराग्नि प्रभु प्रगट हुआ ॥ ७ ॥ तब अग्निने बहुतसे जलको सुखा डाला, तब सागरमें सूखनेसे छिद्र हुआ उस समय आकाश निकला ॥ ८ ॥ आत्माके तेजसे उत्पन्न हुए अमृतके

तत्र शब्दगतिर्भूत्वा मारुतद्रवसंभवः ॥ स लब्ध्वान्तरमक्षोभ्यो व्यवर्द्धत समीरणः ॥ ५ ॥ विवर्द्धता बलवता तेन संक्षोभितोऽर्णवः ॥ अन्योन्यवेगाभिहता ममन्थुश्चोर्मयो भृशम् ॥ ६ ॥ महार्णवस्य क्षुब्धस्य तस्मिन्नग्निमसि मथ्यति ॥ कृष्णवर्त्मा समभवत्प्रभुर्वैश्वानरोर्चिमान् ॥ ७ ॥ तत्र संक्षोषयामास पावकः सलिलं बहु ॥ क्षयाज्जलनिधेर्दृष्टमभवान्निःसृतं नभः ॥ ८ ॥ आत्मतेजोद्भवाः पुण्या आपोऽमृतरसोपमाः ॥ आकाशं छिद्रसंभूतं वायुराकाशसंभवः ॥ ९ ॥ आज्यसंघर्षणोद्भूतं पावकं चाज्यसंभवम् ॥ दृष्ट्वा प्रीतियुतो देवो महाभूतादिभावनः ॥ १० ॥ दृष्ट्वा भूतानि भगवँल्लोकसृष्ट्यर्थतत्त्ववित् ॥ ब्रह्मणो जन्मसहितं बहुरूपो विचिन्वाति ॥ ११ ॥ चतुर्युगादिसंख्यान्ते सहस्रयुगपर्यये ॥ यत्पृथिव्य द्विजेन्द्राणां तपसा भावितात्मनाम् ॥ १२ ॥ बहुजन्मानिरुद्धात्मा ब्राह्मणो यतिरुत्तमः ॥ ज्ञानवान् दृष्टविज्ञात्मा योगिनां योगवित्तमः ॥ १३ ॥

रसकी समान जल हुए और आकाशसे वायु प्रादुर्भूत हुआ ॥ ९ ॥ जलसे अग्नि अग्निसे जल प्रगट हुआ है, यह देखकर देव बहुत प्रसन्न हुए, इस प्रकार भूतभावन देव प्रसन्न होकर ॥ १० ॥ भूतोंको देख तत्त्वज्ञाता भगवान् लोककी सृष्टिके निमित्त ब्रह्माके जन्मको विचारने लगे ॥ ११ ॥ चार युगोंकी संस्थासे सहस्र वर्ष पर्यन्त जो पृथ्वीमें गप करके प्रवृत्त आत्मावाले ॥ १२ ॥ बहुत जन्मोंमें निरुद्ध आत्मावाले पूर्वोक्त ब्राह्मणोंके मध्यमें उत्तम ज्ञानवान् विश्वात्मा योगियोंमें योग जाननेवालोंमें श्रेष्ठ ॥ १३ ॥

उस योगवान् जानने योग्य सम्पूर्ण ऐश्वर्य और विक्रमसे युक्त पुरुषको जो पूर्वसृष्टिमें सब प्रकारके योग्य था उसे विश्व और ब्रह्मा बनानेके निमित्त ईश्वरने नियुक्त किया ॥ १४ ॥ तब उस महाजलमें ब्रह्माके नियोगके अनन्तर नारायण अपने निर्विशेषरूपको प्राप्त होकर शयन क्रीडा करते प्रसन्न रहते हैं और यह ब्रह्मा कर्मानुसार सृष्टि रचते हैं ॥ १५ ॥ नारायणने अपनी नाभिसे एक कमल उत्पन्न किया जो रजरहित सहस्रदल सुवर्णकी समान प्रकाशमान था ॥ १६ ॥ अधिकी जलती हुई शिखाकी समान उज्ज्वल प्रभावाला सुगंधियुक्त शरदकालके उज्ज्वलसूर्यकी समान प्रकाशमान वह उदार कान्तिमान् कमल विराजमान

तं योगवन्तं विज्ञेयं संपूर्णैश्वर्यविक्रमम् ॥ देवो ब्रह्मणि विश्वे च नियोजयति योगवित् ॥ १४ ॥ ततस्तस्मिन्महातोये हविषो हरि-
रच्युतः ॥ स्वपन् क्रीडंश्च विविधं मोदते चैव पावकिः ॥ १५ ॥ पद्मं नाभ्युद्भवं चैकं समुत्पादितवांस्तदा ॥ सहस्रपत्रं विरजो
भास्कराभं हिरण्मयम् ॥ १६ ॥ हुताशनं ज्वलितशिखोज्ज्वलत्प्रभं सुगन्धिनं शरदमलार्कतेजसम् ॥ विराजते कमलमुदारवर्चसं
महात्मनस्तनुरुहचारुदर्शनम् ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ वैशम्पायन
उवाच ॥ अथ योगविदां श्रेष्ठं सर्वभूतमनामयम् ॥ स्रष्टारं सर्वभूतानां ब्रह्माणं सर्वतोमुखम् ॥ १ ॥ तस्मिन् हिरण्मये पद्मे बहुयो-
जनविस्तृते ॥ सर्वतेजोगुणमये पार्थिवैर्लक्षणैर्युते ॥ २ ॥ तच्च पद्मं पुराणज्ञाः पृथिवीरुहमुत्तमम् ॥ नारायणाङ्गसंभूतं प्रवदन्ति
महर्षयः ॥ ३ ॥ या तु पद्मासना देवी पृथिवी तां प्रचक्षते ॥ ये गर्भसाराङ्कुरतस्तान्दिव्यान्पर्वतान्विदुः ॥ ४ ॥

होने लगा. कारण कि उन महात्माके शरीरसे प्रकाशित हुआ था और सुन्दर दर्शनीय था ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि
भाषायां एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ वैशम्पायन बोले, तब योगवालोंमें श्रेष्ठ सर्व प्राणियोंके मनोमय सब भूतोंके स्रष्टा सब ओरसे मुखवाले ब्रह्माजी ॥ १ ॥
उस बहुत योजनोंके विस्तारवाले सुवर्णमय कमलमें, जो सब तेजोंके गुणमय और सब लक्षणसे लक्षित था ॥ २ ॥ ऋषि और पुराणके जाननेवाले
उस कमलको पृथ्वीरुह और नारायणके अंगसे उत्पन्न कहते हैं ॥ ३ ॥ और उस कमलकी आसना पृथ्वी देवी कही जाती है और उस कमलके अंकु

रोंको दिव्य पर्वत कहते हैं ॥ ४ ॥ हिमालय मेरु नील निषध कैलास मुञ्जवान् गन्धमादन ॥ ५ ॥ पवित्र त्रिशिखर कान्त मंदर उदय कंदर विन्ध्य
अस्ताचल पर्वत ॥ ६ ॥ यह देवगण और महात्मा सिद्धोंके आश्रम हैं, इन पर्वतोंमें इन पुण्यात्माओंके पवित्र आश्रम हैं ॥ ७ ॥ इनका इतर देश
जम्बुद्वीप कहलाता है, यह जम्बुद्वीप कर्मभूमि है, यहीं यज्ञ होते हैं ॥ ८ ॥ जो स्वर्गके गर्भसे अमृतके रसकी समान जल निर्गम होता है वही दिव्य
तीर्थरूपसे युक्त देवनादी कहाती है ॥ ९ ॥ जो यह कमलके चारों ओर केशर है वही पृथ्वीमें असंख्यात धातु हैं ॥ १० ॥ हे राजन् ! जो कमलके

हिमन्वतं च मेरुं च नीलं निषधमेव च ॥ कैलासं मुञ्जवन्तं च तथाद्रिं गन्धमादनम् ॥ ५ ॥ पुण्यं त्रिशिखरं चैव कान्तं मन्दरमेव
च ॥ उदयं कन्दरं चैव विन्ध्यमस्तं च पर्वतम् ॥ ६ ॥ एते देवगणानां च सिद्धानां च महात्मनाम् ॥ आश्रमाः पुण्यशीलानां सर्व-
कामयुताद्वयः ॥ ७ ॥ एतेषामितरो देशो जम्बुद्वीप इति स्मृतः ॥ जम्बुद्वीपस्य संख्यानं याज्ञिया यत्र चक्रिरे ॥ ८ ॥ गर्भाद्यत्सवते
तोयं देवामृतसोपमम् ॥ दिव्यतीर्थशतापाङ्गचस्ता दिव्याः सारतः स्मृताः ॥ ९ ॥ यान्येतानि तु पद्मस्य केशराणि समन्ततः ॥
असंख्याताः पृथिव्यां तु विश्वे ते धातुपर्वताः ॥ १० ॥ यानि पद्मस्य पत्राणि भूरीण्यूर्ध्वं नराधिप ॥ ते दुर्गमाः शैलचिता म्लेच्छदेशा
विकल्पिताः ॥ ११ ॥ यान्यघः पद्मपत्राणि वासार्थं तानि भागशः ॥ दैत्यानामुरगाणां च पातालं तन्महात्मनाम् ॥ १२ ॥ तेषाम-
धोगतं यत्तदुदकेत्यभिसंज्ञितम् ॥ महापातककर्माणो मज्जन्ते यत्र मानवाः ॥ १३ ॥ पद्मस्यान्ते कुशं यत्तदेकार्णवजलं महत् ॥
प्रोक्तास्ते दिक्षु संघाताश्चत्वारो जलसागराः ॥ १४ ॥ ऋषेर्नारायणस्यायं महापुष्करसंभवः ॥ प्रादुर्भासं ज्ययं तस्मान्नाम्ना पुष्करसंभवः १५

ऊपरके पत्र हैं, वेही दुर्गम पर्वत म्लेच्छ देशोंमें आवृत्त हैं ॥ ११ ॥ और जो कमलपत्र नीचेकी ओर है वह दैत्य उरग और महात्मा लोगोंके रहनेका
स्थान पाताल है ॥ १२ ॥ उस कमलका नीचेका भाग जलरूप है, जहां महापाप करनेवाले मनुष्य डूबते हैं ॥ १३ ॥ पद्मके अन्तमें जो कुश है
वह एकार्णव जल है और उसकी चारों दिशाओंमें जलके चार सागर हैं ॥ १४ ॥ यह नारायण ऋषिके महापुष्करका संभव है, उससे उत्पन्न होनेसे

पुष्कर नाम कहाता है ॥ १५ ॥ इस कारणसे उसके जाननेवाले पुरातन ऋषियोंद्वारा तथा यज्ञ और वेदार्थ जाननेवालोंके द्वारा यज्ञमें उनका नाम पञ्चचिती कथन किया गया है ॥ १६ ॥ इस प्रकारसे भगवान् ने कमलमें विश्वकी परम विधि पर्वत नदी और देवता आदि बनाये हैं ॥ १७ ॥ इस प्रकार महाप्रज्ञावयुक्त भगवान् महात्मा प्रज्ञा करनेवाले स्वयंभू जगत्की उत्पत्तिके समय जगन्मय कमलका अपने सामर्थ्यसे महार्णवमें प्रगट किया ॥ १८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पुष्करप्रादुर्भावे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ वैशम्पायन बोले, जिस समय

एतस्मात्कारणात्तज्ज्ञैः पुराणैः परमर्षिभिः ॥ यज्ञियैर्वेददृष्टार्थैर्यज्ञे पञ्चचिती कृतः ॥ १६ ॥ एवं भगवता पद्मे विश्वस्य परमो विधिः ॥ पर्वतानां नदीनां च देवतानां च निर्मितः ॥ १७ ॥ विभुस्तथैवाप्रतिमप्रभावः प्रभाकरो वै भगवान्महात्मा ॥ स्वयं स्वयंभूः शयनेऽसृजत्तदा जगन्मयं पद्मनिधिं महार्णवे ॥ १८ ॥ इति श्रीम० खि० ह० भ० पुष्करप्रादुर्भावे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ चतुर्युगादिसंभूतौ सहस्रयुगपर्यये ॥ विघ्नस्तमसि संभूतौ मधुर्नाम महासुरः ॥ १ ॥ तस्यैव च सहायोऽन्यो भूतो रजसि केटभः ॥ तौ रजस्तमसाविष्टौ संभूतौ कामरूपिणौ ॥ २ ॥ एकार्णवजलं सर्वं क्षोभयन्तौ महासुरौ ॥ कृष्णरक्ताम्बरधरौ श्वेतदीप्तोऽग्रदंष्ट्रिणौ ॥ ३ ॥ उभौ मदकटोदयो केयूरवलयोज्ज्वलौ ॥ महाविकृतताम्राक्षौ पीनोरस्कौ महाभुजौ ॥ ४ ॥ महच्छिरःसंहननौ जङ्गमाविव पर्वतौ ॥ नीलमेघाभ्रसंकाशावादित्यप्रतिमानौ ॥ ५ ॥

सहस्र चतुर्युगी बीत गई उस समय तमकी प्रबलतासे लयहारी मधु दैत्य प्रगट हुआ ॥ १ ॥ और उसके सहायरूप रजोगुणसे विशेष नामक विघ्नरूप केटभ उत्पन्न हुआ. यह रजतमयुक्त संसारमें कामरूपी प्रगट हुए ॥ २ ॥ उन महाभसुरोंने सम्पूर्ण एकार्णवसागरको क्षोभित कर दिया वह कृष्ण और रक्त अम्बर धारण किये श्वेत दीप्त और अग्रदंष्ट्रावाले ॥ ३ ॥ दोनोंही मदके कटसे उदय केयूर वलय (कंकन) पहरे महाविकराल ताम्र नेत्र किये पुष्ट हृदय महाभुजावाले ॥ ४ ॥ महान् शिर और पीनस्कंधयुक्त जंगमपर्वतकी समान नीले मेघकी समान कान्तिमान् आदित्यकी

समान वर्णवाले ॥ ५ ॥ बिजली और बादलकी समान ताम्रवर्ण हाथोंसे भयंकर चरणोंके संचारवेगसे सागरको उत्क्षिप्त करते हुए ॥ ६ ॥ शयन करते हुए नारायणको कंपित करते हुए वे दोनों उस कमलमें विचरने लगे ॥ ७ ॥ उन योगिजनोंमें श्रेष्ठ दीप्तिमान् नारायणकी आज्ञासे प्रजा रचनेको स्थित तथा देवता मनुष्य और मनसे ऋषियोंको उत्पन्न करते हुए ॥ ८ ॥ देवताओंमें श्रेष्ठ ब्रह्माजीसे वे कहने लगे, कारण कि वे दोनों महाअभिमानी क्रोधसे लाल नेत्र किये थे ॥ ९ ॥ वे कहने लगे तुम सफेद पगड़ी बांधे चार भुजावाले कौन हो ? तुम मोहसे हमको नहीं गिनते किस प्रकारसे स्थित हो और

विद्युदम्भोदताम्राभ्यां कराभ्यामतिभीषणौ ॥ पादसंचारवेगाभ्यामुत्क्षिपन्ताविवार्णवम् ॥ ६ ॥ कम्पयन्ताविव हरिं शयानमारिसूदनम् ॥ तौ तत्र विहरन्तौ स्म पुष्करे विश्वतोमुखम् ॥ ७ ॥ पश्यतां दीप्तवपुषं योगिनां श्रेष्ठमुत्तमम् ॥ नारायणसमाज्ञतं सृजन्तमखिलाः प्रजाः ॥ देवतानि च विश्वानि मानसांश्च सुतानृषीन् ॥ ८ ॥ ततस्तावूचतुस्तत्र ब्रह्माणमसुरोत्तमौ ॥ दत्तौ युयुत्सुकौ क्रुद्धौ रोषसं रक्तलोचनौ ॥ ९ ॥ कस्त्वं पुरुषमध्यस्थः सितोष्णीषश्चतुर्मुखः ॥ आवागमन्यन्मोहादासे त्वं विगतज्वरः ॥ १० ॥ एह्यावयोर्बाहुयुद्धं प्रयच्छ कमलोद्भव ॥ आवाभ्यामतिवीराभ्यां न शक्यं स्थातुमाहवे ॥ ११ ॥ कस्त्वं कश्चोद्भवस्तुभ्यं केन वासीह चोदितः ॥ कः स्रष्टा कश्च वै गोप्ता केन नाम्नाभिधीयते ॥ १२ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ यः क इत्युच्यते लोके ह्यविज्ञातः सहस्रशः ॥ तत्संभवं योगवन्तं किं मां नाभ्यवगच्छथः ॥ १३ ॥ मधुकैटभावूचतुः ॥ नावयोः परमं लोके किञ्चिदस्ति महामते ॥ आवां छादयता विश्वं तमसा रजसा तथा ॥ १४ ॥ रजस्तमोमयावावां यतीनां दुःखलक्षणौ ॥ छलकौ धर्मशीलानां दुस्तरो सर्वदेहिनाम् ॥ १५ ॥

मय नहीं मानते ॥ १० ॥ हे कमलोद्भव ! आओ हमारे साथ बाहुयुद्ध करो हम वीरोंके साथ आप संग्राममें स्थित नहीं हो सकते ॥ ११ ॥ कौन हो तुम किनसे उत्पन्न हो किससे प्रेरित हुए हो कौन तुम्हारा निर्माता और कौन रक्षक है किस नामसे तुम पुकारे जाते हो ॥ १२ ॥ ब्रह्माजी बोले, जो लोकमें ब्रह्मनामसे विख्यात और सहस्रों प्रकारसेभी जाननेको अयोग्य योगरूप परमात्मासे उत्पन्न हुआ हमको जानो ॥ १३ ॥ मधुकैटभ बोले, हे महामते ! लोकमें हमसे परे कोई वस्तु नहीं है हमने तम और रजसे सारा जगत् आच्छादित कर रक्खा है ॥ १४ ॥ हम रज और तमरूप हैं सतरूपी यतियोंको

दुःखरूप हैं हम धर्मशीलोंको छलरूप और सर्व प्राणियोंको दुस्तर हैं ॥ १५ ॥ हम दोनों उच्छिन्नोसे सारा लोक युगयुगमें मोहिन हो जाता है और अर्थ काम तथा सर्व सामग्रियोंसहित यज्ञरूपभी हम दोनों हैं ॥ १६ ॥ जहां सुख आनंद लक्ष्मी और सब प्रकारकी निवृत्ति हो इनमें जो जो वांछित हो वह हमसे चिन्तन करना उचित है अर्थात् यह सब वस्तु हमारे आधीन है ॥ १७ ॥ ब्रह्माजी बोले, जो योगवालोंमें श्रेष्ठ है और जो मैंने अर्चित किया है वह सब प्रकारसे पुष्ट कर गुणवाला मैं सतोगुणमें स्थित हुआ हूं ॥ १८ ॥ योगयुक्तोंको जो पराशर और सत्त्वरूप है, जो रज तमका निर्माता जिससे जीवका संभव है ॥ १९ ॥ जिससे सात्त्विक तथा इतर प्राणी उत्पन्न होते हैं वही वशी युद्धमें तुमको शान्त करेगा ॥ २० ॥ वैशंपायन बोले,

आवाभ्यां मुह्यते लोक उच्छिन्नाभ्यां युगे युगे ॥ आवाभ्यांश्च कामश्च यज्ञाः सर्वपरिग्रहाः ॥ १६ ॥ सुखं यत्र मुदो यत्र यत्र श्रीः सन्निवृत्तयः ॥ एषां यत्कांक्षितं चैव तत्तदावां विचिन्तय ॥ १७ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ यत्तद्योगवतां श्रेष्ठं यच्च सर्वं मयार्चितम् ॥ तत्समाधाय गुणवान्त्सत्त्वजोऽस्मि प्रतिष्ठितः ॥ १८ ॥ यत्परं योगयुक्तानामक्षरं सत्त्वमेव च ॥ रजस्तमसश्चैव यत्स्रष्टा जीवसंभवः ॥ १९ ॥ यतो भूतानि जायन्ते सात्त्विकानीतराणि च ॥ स एव युक्तः समरे वशी वां शमयिष्याति ॥ २० ॥ वैशंपायन उवाच ॥ ततः शयानं श्रीमन्तं बहुयोजनविस्तृतम् ॥ पद्मनाभं हृषीकेशं प्रणम्यावाचताबुधो ॥ २१ ॥ जानीवस्त्वां विश्वमोनिमेकं पुरुषसत्तमम् ॥ तवोपासनहेत्वर्थमिदं नो विद्धि कारणम् ॥ २२ ॥ अमोघदर्शनं सत्यं यत्तस्त्वां विदुरीश्वरम् ॥ तत्तस्त्वामभितो देव कांक्षावः प्रातिवीक्षितुम् ॥ २३ ॥ तदिच्छावो वरं दत्तं त्वया ह्यावामरिंदम ॥ अमोघं दर्शनं देव नमस्तेस्त्वजितं जय ॥ २४ ॥

तब शयन करते हुए श्रीमान् बहुत योजनके विस्तारवाले पद्मनाभ हृषीकेशको वे दोनों प्रणाम कर ॥ २१ ॥ बोले हम आपको विश्वयोनि एक सनातन पुरुष जानते हैं आपकी उपासनाके निमित्तही हमारा कारण है ॥ २२ ॥ आप अमोघदर्शन सत्त्वरूप हो हम तुमको ईश्वररूप जानते हैं हे देव ! इसी कारण हम आपके देखनेकी इच्छा करते हैं ॥ २३ ॥ हे शत्रुनाशक ! आपके दिये वरकी हम इच्छा करते हैं, हे अजित ! आपका अमोघ दर्शन है आपको नमस्कार है ॥ २४ ॥

श्रीभगवान् बोले, हे असुरश्रेष्ठ ! तुम किस वरकी इच्छा करते हो सो कहो यदि जीनेकी इच्छा है तो मेरी दी हुई आयुसे तुम जियो ॥ २५ ॥
जो तुम्हारा यह यत्न है तो तुम महाबली हो इस कारण हमारे वध होजाओ यह वचन नारायणने उनसे कहे तब वे दोनों महात्मा बड़े हुए क्षतसे
वर्जित ॥ २६ ॥ मधुकैटभ कहने लगे, हे विभो ! जिस स्थानमें किसीकी मृत्यु नहीं हुई हो वहां हमारी मृत्यु हो, हे सुराधिप ! हम दोनों तुम्हारे पुत्र
होनेकी इच्छा करते हैं ॥ २७ ॥ श्रीभगवान् बोले, निश्चयही कल्पके प्रारंभमें तुम मेरे पुत्र होंगे इसमें सन्देह नहीं यह मैं सत्य कहता हूं ॥ २८ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ कानिच्छतो द्रुतं ब्रूत वरानसुरसत्तमौ ॥ दत्तायुषो मया भूयस्त्वहो जीवितुमिच्छथः ॥ २५ ॥ तस्माद्यदेष वां
यत्नस्तत्प्राकृ (मु) त महाबलो ॥ वध्यौ भवन्तौ तु स्यातां तावित्येवाब्रवीद्वरिः ॥ उभावपि महात्मानावूर्जितौ क्षतवर्जितौ ॥ २६ ॥
मधुकैटभावूचतुः ॥ यास्मिन्न कश्चिन्मृतवास्तस्मिन्देशे विभो वधम् ॥ इच्छावः पुत्रतां यातुं तव चैव सुराधिप ॥ २७ ॥ श्रीभगवा-
नुवाच ॥ बाढं सुतौ मे प्रवरौ भविष्ये कल्पसंभवे ॥ भविष्यथो न संदेहः सत्यमेतद्वशीमे वाम् ॥ २८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ वरं
प्रदायाथ महासुराभ्यां सनातनो विश्वरोत्तमो विभुः ॥ रजस्तमोभ्यां भवभावनोपमौ ममन्थ तावूरुतले सुरारिहा ॥ २९ ॥
इति श्रीमहा० हरिवंशे भ० मधुकैटभवरप्रदानं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ स्थित्वा तस्मिंस्तु कमले ब्रह्मा
ब्रह्मविदां वरः ॥ ऊर्ध्वबाहुर्महाबाहुस्तपो घोरं समाश्रितः ॥ १ ॥ ज्वलन्निव च तेजस्वी भाभिः स्वाभिस्तमोनुदः ॥ बभासे सर्व-
धर्मस्थः सहस्रांशुरिवांशुमान् ॥ २ ॥

वैशंपायन बोले, तब वह सनातन प्रभु उन असुरोंको वरप्रदान कर रजतमसे उत्पन्न हुए दोनों दैत्योंको ऊहलमें स्थितकर मथने लगे ॥ ३९ ॥ इति
श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां मधुकैटभवरप्रदानं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ वैशम्पायन बोले, यह सब कथा वेदान्तपर
है. ब्रह्मविदां वर ब्रह्माजी उस कमलमें स्थित होकर ऊर्ध्वबाहु महाबाहु घोरतपमें स्थित हुए ॥ १ ॥ वह तेजस्वी अपनी कान्तिसे अन्धकारको दूर

करते हुए सूर्यकी समान कान्तिमान् धर्ममें स्थित हो शोभित हुए ॥ २ ॥ तब वह शम्भु नारायण अभितारी दूसरे रूपमें स्थित हो वह सनातन अचिन्त्यात्मा आत्मासे आत्माको दो भागकर ॥ ३ ॥ योगाचार्य महातेजस्वी आनकर प्राप्त हुए वह बुद्धिमान् सांख्याचार्य ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ कपिलजी थे ॥ ४ ॥ यह और वेदज्ञाता ब्रह्माजी ब्रह्मर्षियोंसे स्तुतिको प्राप्त हुए. यह दोनों महात्मा बड़े ऊर्जित और क्षेत्रमें तत्पर थे ॥ ५ ॥ वे दोनों प्राप्त होकर महातेजस्वी ब्रह्माजीसे बोले, यह परअवरके विशेष जाननेवाले परमऋषियोंसे पूजित ॥ ६ ॥ बहु वाक्यरूप होनेसे दृढाद विश्वात्मा जग-
अथान्यद्रूपमास्थाय शंभुनारायणोऽव्ययः ॥ द्विधा कृत्वात्मनात्मानमाचिन्त्यात्मा सनातनः ॥ ३ ॥ आजगाम महातेजा योगाचार्यो
महायज्ञाः ॥ सांख्याचार्यश्च मतिमान्कपिलो ब्राह्मणो वरः ॥ ४ ॥ देवर्षिभिः स्तुतावेतौ ब्रह्मब्रह्मवेदां वरौ ॥ उभावापि महात्मा-
नावूर्जितौ क्षेत्रतत्परौ ॥ ५ ॥ तौ प्राप्तावुचतुस्तत्र ब्रह्माणममितौजसम् ॥ परावरविशेषज्ञौ पूजितौ परमर्षिभिः ॥ ६ ॥ बहुत्वादृढ-
पादश्च विश्वात्मा जगतः स्थितिः ॥ ग्रामणीः सर्वलोकानां ब्रह्मा लोकगुरुरारः ॥ ७ ॥ तयोस्तद्रचनं श्रुत्वा तिस्रो व्याहृतयो जपन् ॥
त्रीनिमान्कृतवाँल्लोकान्यथाह ब्राह्मणी श्रुतिः ॥ ८ ॥ यत्र भूसंज्ञकं चैव समुत्पादितवान्प्रभुः ॥ ततोऽग्रे तद्रतस्त्रहो ब्रह्मा मानस-
मव्ययम् ॥ ९ ॥ सोत्पन्नस्त्वग्रे ब्रह्माणमुवाच मानसः सुतः ॥ करोमि किं ते साहाय्यं ब्रवीतु भगवानिति ॥ १० ॥ ब्रह्मोवाच ॥ य
एष कपिलो नाम ब्रह्मा नारायणस्तथा ॥ वदते वरदस्त्वां तु तत्कुरुष्व महामते ॥ ११ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ब्रह्मणोक्तस्तदा
भूयः संशयं समुपस्थितः ॥ शुश्रूषुरस्मि युवयोः किं कुर्मीति कृताञ्जलिः ॥ १२ ॥

तके स्थितिरूप सब लोकोंको वशमें रखनेवाले सब लोकके गुरु ब्रह्मा ॥ ७ ॥ उन दोनोंके वचन सुन तीनों व्याहृती जपते हुए उन्होंने यह तीन लोक उत्पन्न किये ऐसा ब्राह्मणकी श्रुतिमें लिखा है ॥ ८ ॥ तब प्रभुने भूसंज्ञक पुत्रको उत्पन्न किया तब वह मृष्टिके स्नेहवाले ब्रह्माके मनसे ॥ ९ ॥ उत्पन्न हो आगे खड़े होकर ब्रह्मासे कहने लगे. हे भगवन् ! मैं आपकी क्या सहायता करूं सो आप कहिये ॥ १० ॥ ब्रह्माजी बोले, वह जो कपिल और नारायण हैं, हे महामते ! यह वरदाता जो कुछ तुमसे कहे सो तू कर ॥ ११ ॥ वैशम्पायन बोले, ब्रह्माके यह वचन सुन वह परम सन्नेहको

प्राप्त हुआ और हाथ जोड़ बोला, जो आप कहें वह आपकी आज्ञा सुननेकी इच्छा करता हूं ॥ १२ ॥ वे दोन कपिलनारायण बोले, जो सत्य अक्षर परिणामरहित अमर अठारह प्रकारसे कहा जाता है अर्थात् सांख्यमतमें पांच कर्मेन्द्रिय पांच ज्ञानेन्द्रिय प्राणपंचक वियदादि पांच काम कर्मे अविद्यादिसे अतिरिक्त हैं उस पुरुष अधिकेश्वरस त सब प्रपंचसे पृथक् परम वस्तु सब विशेषशून्य एकरसका तुम ध्यान करो ॥ १३ ॥ वैशंपायन बोले, यह वचन सुन वह उत्तरदिशाको गया और वहां जाकर ज्ञानदृष्टिसे ब्रह्मत्वको प्राप्त हुआ ॥ १४ ॥ तब ब्रह्माने भुव (सूत्रात्मा) नाम दूसरे पुरुषको निर्माण किया. वह महामना ब्रह्मा उसको मनसेही कल्पित कर चुके ॥ १५ ॥ तब उसने पितामहसे कहा, मैं क्या करूं तब ब्रह्मा-परमेश्वरावूचतुः ॥ यत्सत्यमक्षरं ब्रह्म दृष्टादशविधं स्मृतम् ॥ यत्सत्यममृतं चैव परं तत्समनुस्मर ॥ १३ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ एतद्वचो निशम्याथ स ययौ दिशमुत्तराम् ॥ गत्वा च तत्र ब्रह्मत्वमगमज्ज्ञानचक्षुषा ॥ १४ ॥ ततो ब्रह्मा भुवं नाम द्वितीयमसृजत्प्रभुः ॥ तं कल्पयित्वा मनसा मनसैव महामनाः ॥ १५ ॥ ततः सोऽप्यब्रवीद्वाक्यं किं कुर्वेति पितामहम् ॥ पितामहसमाज्ञप्तो ब्रह्माणं समुपस्थितः ॥ १६ ॥ ब्रह्मभ्यां सहितः सोऽथ भूयो भागवतीं गतः ॥ प्राप्तश्च परमं स्थानं स तयोः पार्श्वमागतः ॥ १७ ॥ तस्मिन्नापि गते पुत्रं तृतीयमसृजत्प्रभुः ॥ मोक्षोपायेऽतिकुशलं भूर्भुवं नाम तं विभुः ॥ १८ ॥ आससाद् स तद्धर्मं तयोरेवागमद्वातिम् ॥ एवं पुत्रास्त्रयोऽप्येते उक्ताः शंभोर्महात्मनः ॥ १९ ॥ तान् गृहीत्वा सुतांस्तस्य प्रययौ स्वां गतिं तथा ॥ नारायणोऽथ भगवान्कपिलश्च यतीश्वरः ॥ २० ॥ यं कालं तौ गतौ मुक्तौ ब्रह्मा तत्कालमेव तु ॥ तेपे घोरतरं भूयः स तपः संशितव्रतः ॥ २१ ॥

जीने कपिलनारायणकी आज्ञा माननेको कहा तब वह पितामहके पितर सांख्ययोगाचार्योंको प्राप्त हो ॥ १६ ॥ उनके निकट हो उनके सहित भागवती गतिको प्राप्त हुआ और उनके निकट प्राप्त होनेसे परमस्थानको प्राप्त हुआ ॥ १७ ॥ उसके जानेसे ब्रह्माजीने तीसरा पुत्र उत्पन्न किया. वह भूर्भुव नाम (ईश्वर सत्त्वोपाधिमान्) मोक्षके उपायमें कुशल हुआ ॥ १८ ॥ यह पुत्रभी उन दोनोंके धर्म और गतिको प्राप्त हुआ अर्थात् “ पुरुषा-न्नापरं किंचित्सा काष्ठा सा परा गतिः ” इस प्रकार महात्मा शंभुके यह तीन पुत्र परमगतिको प्राप्त हुए ॥ १९ ॥ यतीश्वर कपिल और भगवान् नारायण उन तीनों पुत्रोंको लेकर अपनी गतिको गये ॥ २० ॥ जितने कालमें वह लीन हुए उतने समयतक ब्रह्माजी घोर तप करते रहे. जब वह

शंसित व्रत घोर तप करते रहे ॥ २१ ॥ तब इकले तप करनेके कारण उनका मन नहीं लगा तब उन्होंने अपने आधे शरीरसे सुन्दर भार्याको उत्पन्न किया ॥ २२ ॥ तप तेज कान्ति और नियमसे उन्होंने लोकके उत्पन्न करनेमें अपने समान भार्याको उत्पन्न किया ॥ २३ ॥ वह तपोमय ब्रह्मा उसके संग रमते रहे तब उससे सब प्रजापति सागर और नदियोंको उत्पन्न किया ॥ २४ ॥ तब वेदमाता त्रिपदा गायत्रीको उत्पन्न किया, उस गायत्रीसे चारों वेदोंको उत्पन्न किया ॥ २५ ॥ पितामहने अपने वास्ते लोककर्ता पुत्रोंको बनाया, जो प्रजापति विश्वके देवता हैं जिनसे सब जगत् उत्पन्न हुआ

न राम ततो ब्रह्मा प्रभुरेकस्तपश्चरन् ॥ शरीराद्धमथो भार्या समुत्पादितवाञ्छुभाम् ॥ २२ ॥ तपसा तेजसा चैव वर्चसा नियमेन च ॥ सदृशीमात्मनो भार्या समर्था लोकसर्जने ॥ २३ ॥ तथा सह ततस्तत्र रेमे ब्रह्मा तपोमयः ॥ सृजत्प्रजापतन्तिसर्वान्त्सागरान् सारितस्तथा ॥ २४ ॥ ततोऽसृजद्वै त्रिपदां गायत्रीं वेदमातरम् ॥ अकरोच्चैव चतुरो वेदान् गायत्रिसंभवान् ॥ २५ ॥ आत्मायै चामृजत्पुत्राँल्लोककर्तृन्पितामहः ॥ विश्वे प्रजानां पतयो येभ्यो लोका विनिःसृताः ॥ २६ ॥ विश्वेशं प्रथमं नाम महातपसमात्मजम् ॥ सर्वाश्रमतमं पुण्यं नाम्ना धर्मः स सृष्टवान् ॥ २७ ॥ दक्षं मरीचिमत्रिं च पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् ॥ वसिष्ठं गौतमं चैव भृगुमाङ्गिरसं मनुम् ॥ २८ ॥ अथर्वभूता इत्येते ख्याता ब्रह्ममहर्षयः ॥ त्रयोदशसुतानां तु ये वंशा वै महर्षिणाम् ॥ २९ ॥ अदितिर्दितिर्दनुः काला ह्यनायुः सिंहिका मुनिः ॥ प्रबोधा सुरसा क्रोधा विनता कद्रुरेव च ॥ ३० ॥ दक्षस्यैता दुहितरः कन्या द्वादश भारत ॥ नक्षत्राणि च भद्रं ते सप्तविंशतिरूर्जिताः ॥ ३१ ॥

हे ॥ २६ ॥ ब्रह्माजीने विश्वेश नामवाला महातपस्वी सब आश्रमोंमें तत्पर प्रथम पुत्रकी रचना की, तथा पवित्ररूप धर्म नाम दूसरे पुत्रको रचा ॥ २७ ॥ दक्ष मरीचि अत्रि पुलस्त्य पुलह क्रतु वसिष्ठ गौतम भृगु अंगिरा मनु ॥ २८ ॥ अथर्व भूत यह ब्रह्ममहर्षि विख्यात हैं, यह तेरह पुत्र महर्षियोंके वंशकर्ता हुए हैं ॥ २९ ॥ अदिति दिति दनु काला अनायु सिंहिका मुनि प्रबोधा सुरसा क्रोधा विनता कद्रु ॥ ३० ॥ यह बारह दक्षकी कन्या हुईं, तुम्हारा

मंगल हो यह सत्ताईस नक्षत्र जो आकाशमें शोभित हैं यहभी दक्षकी कन्या हुई ॥ ३१ ॥ मरीचि ऋषिके तपसे कश्यपजी पुत्र हुए. उनके निमित्त दक्षने पूर्वोंक वारह कन्या प्रदान कीं ॥ ३२ ॥ और नक्षत्ररूप कन्याओंको दक्षने चन्द्रमाके निमित्त प्रदान किया. हे जन्मेजय ! यह रोहिणी आदि पवित्र कन्या थीं ॥ ३३ ॥ लक्ष्मी कीर्ति साध्या विश्वा कामा देवी मरुत्वती यह पहिले ब्रह्माजीने निर्मित की थीं ॥ ३४ ॥ हे भारत ! यह पांच श्रेष्ठ कन्या धर्म देखनेवाले ब्रह्माजीने सुरश्रेष्ठ धर्मराजके निमित्त प्रदान कीं ॥ ३५ ॥ और जो अपने आधे शरीरसे कामरूपिणी पत्नी निर्माण की थी, वह सुरभी

मरीचेः कश्यपः पुत्रस्तपसा निर्मितः प्रभुः ॥ तस्मै कन्या द्वादशेमा दक्षस्ता अन्वमन्यत ॥ ३२ ॥ नक्षत्राख्यानि सोमाय वसवे दत्तवानृषिः ॥ रोहिण्यादीनि सर्वाणि पुण्यानि जनमेजय ॥ ३३ ॥ लक्ष्मीः कीर्तिस्तथा साध्या विश्वा कामानुगा शुभा ॥ देवी मरुत्वती चैव ब्रह्मणा निर्मिता पुरा ॥ ३४ ॥ एताः पञ्च वरिष्ठा वै सुरश्रेष्ठाय भारत ॥ दत्ता धर्माय भद्रं ते ब्रह्मणा दृष्टधर्मणा ॥ ३५ ॥ या रूपार्द्धमयी पत्नी ब्रह्मणः कामरूपिणी ॥ सुरभिः सा तु गोभूत्वा ब्रह्माणं समुपस्थिता ॥ ३६ ॥ ततस्तामगमद्ब्रह्मा मैथुने लोकपूजितः ॥ लोकसर्जनहेतुज्ञो गवामर्थाय भारत ॥ ३७ ॥ जज्ञे चेकादश सुतान्विपुलान्धर्मसंहितान् ॥ रक्तसंध्याभ्रसदृशान् दहनोपमतेजसः ॥ ३८ ॥ ते रुदन्तो द्रवन्तश्च भगवन्तं पितामहम् ॥ रोदनाद्वावणाच्चैव ततो रुद्रा इति स्मृताः ॥ ३९ ॥ निर्ऋतिश्चैव सर्पश्च तृतीयो ह्यज एकपात् ॥ मृगव्याधः पिनाकी च दहनोऽथेश्वरश्च वै ॥ ४० ॥ अहिर्बुध्न्यश्च भगवान्कपाली चापराजितः ॥ सेनानीश्च महातेजा रुद्रा एकादश स्मृताः ॥ ४१ ॥

गोरूप होकर ब्रह्माके निकट उपस्थित हुई ॥ ३६ ॥ हे भारत ! तब लोकपूजित ब्रह्मा उस सृष्टिके हेतुको विचार उससे मैथुनधर्ममें प्रवृत्त हुए ॥ ३७ ॥ उससे धर्मयुक्त ग्यारह पुत्र उत्पन्न हुए जो लाल संध्याकी सदृश अग्निकी समान तेजस्वी थे ॥ ३८ ॥ वे रोते और द्रवते हुए भगवान् पितामहके निकट आये रोदन और धावमान होनेसे रुद्र कहलाये ॥ ३९ ॥ निर्ऋति सर्प तीसरा अज एकपाद मृगव्याध पिनाकी दहन ईश्वर ॥ ४० ॥ अहिर्बुध्न्य भग-

५.
२६

वान् कपाली अपराजित महातेजवाले सेनानी यह ग्यारह रुद्र कहलाते हैं ॥ ४१ ॥ उसी सुरभीसे गोवृष उत्पन्न हुए. आकृष्ट माष सिकता अक्षत प्रश्रय ॥ ४२ ॥ अज एकवंश उत्तम अमृत प्रवरादि औषधी यह सब उसीसे उत्पन्न हुई हैं ॥ ४३ ॥ धर्मसे लक्ष्मी काम और साध्यानाम देवता उत्पन्न हुए. च्यवन प्रभव ईशान सुरभी ॥ ४४ ॥ अरुंधती अरुणी विश्वावसु बल ध्रुव महिष तनुज विज्ञान ॥ ४५ ॥ मत्सर विभूति यह सब सुरभीकी सन्तान है. सुपर्वत विष नाग इन लोकपूजित देवतोंको साध्याने उत्पन्न किया ॥ ४६ ॥ देवीने वासवसे अनुगत हो इनको उत्पन्न किया.

तस्यामेव सुरभ्यां तु जज्ञे गोवृषभस्तथा ॥ आकृष्टाश्च तथा माषाः सिकताः प्रश्रयोऽक्षताः ॥ ४२ ॥ अजाश्चैकवंशाश्च तथैवा-
मृतमुत्तमम् ॥ औषध्यः प्रवरा याश्च सुरभ्यां ताः समुत्थिताः ॥ ४३ ॥ धर्माल्लक्ष्म्युद्भवः कामः साध्या साध्यान् व्यजायत ॥ च्यवनं
प्रभवं चैवमीशानं सुरभीं तथा ॥ ४४ ॥ अरुन्धत्यारुणी चैव विश्वावसुबलध्रुवौ ॥ महिषं च तनूजं च विज्ञातमनसावपि ॥ ४५ ॥
मत्सरं च विभूतिं च सर्वाः सुरभिसूनवः ॥ सुपर्वतं विषं नागं साध्या लोकनमस्कृता ॥ ४६ ॥ वासवानुगता देवी जनयामास वै
सुतान् ॥ धरं वै प्रथमं देवं द्वितीयं ध्रुवमव्ययम् ॥ ४७ ॥ विश्वावसुं तृतीयं च चतुर्थं सोममीश्वरम् ॥ पञ्चमं पर्वतं चैव योगेन्द्रं
तदनन्तरम् ॥ ४८ ॥ सप्तमं च ततो वायुमष्टमं निर्ऋतिं वसुम् ॥ धर्मस्यापत्यमित्येवं सुरभ्यां समजायत ॥ ४९ ॥ विश्वेदेवास्तु
विश्वायां धर्माजाता इति श्रुतिः ॥ दक्षयज्ञे महाबाहुर्वसुश्च सुत एव च ॥ सुधर्मा च महाबाहुः शङ्खपाच्च महाबलः ॥ ५० ॥ उक्तश्चैव
महाबाहुर्वपुष्मांश्च तथैव च ॥ चाक्षुषस्य मनोरेते तथानन्तमहीरणौ ॥ ५१ ॥ विश्वावसुसुपर्वाणौ विष्टरश्च महायशाः ॥ रुरुश्च
ऋषिपुत्रो वै भास्करप्रतिमद्युतिः ॥ ५२ ॥

धर प्रथम देव दूसरे अविनाशी ध्रुव ॥ ४७ ॥ तीसरे विश्वावसु चौथे ईश्वर सोम पांचवें पर्वत छठे योगेन्द्र ॥ ४८ ॥ सातवें वायु
आठवें निर्ऋति वसु यह सुरभीमें धर्मके सन्तान हुए ॥ ४९ ॥ विश्वेदेवा धर्मसे विश्वामें उत्पन्न हुए. दक्ष यज्ञ महाबाहु वसु सुत महाबाहु सुधर्मा
महाबली शंखपात् ॥ ५० ॥ महावपुष्मान् अनन्त महीरण यह चाक्षुष मन्वन्तरके अन्तमें ॥ ५१ ॥ विश्वावसु सुपर्वा यशस्वी विष्टर ऋषिपुत्र

भा.टी.

प.३.अ. १४

॥ २६ ॥

सूर्यकी समान कान्तिमान् हुए ॥ ५२ ॥ देवमाताने यह सब जगत्पति विश्वेदेवा निर्माण किये हैं. मरुत्वतीके मरुतसे देवता उत्पन्न हुए ॥ ५३ ॥ अग्नि चक्षु हवि ज्योति सावित्र मित्र अमर शरवृष्टि संक्षय महाभुजावाले ॥ ५४ ॥ विरज शुक्र विश्वावसु विभावसु अश्मन्त चित्ररश्मि निष्कुपित नृप ॥ ५५ ॥ नहुष आहुति चारित्र बहुपन्नग बृहन्त बृहद्रूप परतापन नाम पुत्र हुए. यह मरुतदेवता कहाये मरुत्वतीमें पहले धर्मसे दो पुत्र हुए ॥ ५६ ॥ अदितिमें कश्यपसे आदित्य हुए. इन्द्र विष्णु भग त्वष्टा वरुण अंशु अर्यमा रवि ॥ ५७ ॥ पूषा मित्र वरदायक मनु पर्जन्य यह बारह आदित्य देव-

विश्वेदेवान् देवमाता विश्वेशान् जनयत्सुतान् ॥ मरुत्वती मरुत्वन्तो देवानजनयच्छुभान् ॥ ५३ ॥ अग्निश्चक्षुर्हविज्योतिः सावित्रो मित्र एव च ॥ अमरं शरवृष्टिं च संक्षयं च महाभुजम् ॥ ५४ ॥ विरजं चैव शुक्रं च विश्वावसुविभावसू ॥ अश्मन्तं चित्ररश्मि च तथा निष्कुपितं नृपम् ॥ ५५ ॥ नहुषं चाहुतिं चैव चारित्रं बहुपन्नगम् ॥ बृहन्तं च बृहद्रूपं तथैव परतापनम् ॥ मरुत्वत्यां पुरा धर्माज्ज्ञे पुत्रद्वयं शुभम् ॥ ५६ ॥ अदित्यां जज्ञिरे राजन्नादित्याः कश्यपादथ ॥ इन्द्रो विष्णुर्भगस्त्वष्टा वरुणोऽशोऽर्यमा रविः ॥ ५७ ॥ पूषा मित्रश्च वरदो मनुः पर्जन्य एव च ॥ इत्येते द्वादशादित्या वरिष्ठास्त्रिदिवोकसः ॥ ५८ ॥ आदित्यस्य सरस्वत्यां जज्ञे पुत्रद्वयं शुभम् ॥ रूपश्रेष्ठं बलश्रेष्ठं त्रिदिवे रूपिणां वरम् ॥ ५९ ॥ दनुस्तु दानवान् जज्ञे दितिर्दित्यान् व्यजायत ॥ काला-नुकालकेयांश्च ह्यसुरान् राक्षसांस्तथा ॥ ६० ॥ अनायुषायास्तनया व्याधयश्चाधयस्तथा ॥ सिंहिका ग्रहमाता च गन्धर्वजननी मुनिः ॥ ६१ ॥ प्रबोधाप्सरसां माता सुरसायां सरीसृपाः ॥ क्रोधायाः सर्वभूतानि पिशाचाश्चैव भारत ॥ ६२ ॥ तथा यक्षगणाश्चैव गुह्यकाश्च विशां पते ॥ चतुष्पदानि सर्वाणि ऋते गावस्तु सौरभाः ॥ ६३ ॥

ताओंमें श्रेष्ठ हैं ॥ ५८ ॥ आदित्यके सरस्वतीमें दो पुत्र हुए. रूपश्रेष्ठ बलश्रेष्ठ स्वर्गवासियोंमें रूपवान् हुए ॥ ५९ ॥ दनुके दानव दितिके दैत्य हुए. कालामें कालकेय संज्ञक असुर और राक्षस हुए ॥ ६० ॥ अनायुषकी सन्तान आधि व्याधि हुई. सिंहिकामें राहु और मुनिमें गन्धर्व हुए ॥ ६१ ॥ प्रबोधाके अप्सरा सुरसाके सरीसृप हुए क्रोधाके सम्पूर्ण भूत और पिशाच हुए ॥ ६२ ॥ तथा यक्षगण और गुह्यक सब चौपाये गौको छोडकर सब

कोधाके हुए ॥ ६३ ॥ अरुण और गरुड विनतामें उपजे कद्रूके महीधर सर्प नाग ॥ ६४ ॥ इस प्रकार संसारमें लोक परस्पर वृद्धिको प्राप्त हुए हैं, हे राजन् ! इस प्रकार इस पुष्कर प्रादुर्भावमें उत्पत्ति हुई है ॥ ६५ ॥ यह पुष्कर उत्पत्ति पुराणोंमें जो व्यासजीसे सुनी है वह परमर्षियोंका कृत्य सब तुमसे वर्णन किया ॥ ६६ ॥ जो इस श्रेष्ठ पुराणको सदा अप्रमत्त होकर पढ़ता है वह सब कामनाको प्राप्त कर शोकरहित हो परलोकमें स्वर्गफलोंको भोगता है ॥ ६७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ जन्मेजय बोले, हे ब्रह्मन् ! हमने अपने

अरुणो गरुडश्चैव विनतायां व्यजायत ॥ महीधरान्सर्पनागान् देवी कद्रूर्व्यजायत ॥ ६४ ॥ एवं विवृद्धिमगमन्विश्वे लोकाः परस्परम् ॥ तदा पौष्करके राजन्प्रादुर्भावे महात्मनः ॥ ६५ ॥ पुराणं पौष्करे चैव मया द्वैपायनाच्छ्रुतम् ॥ काथितं तेन पूर्वेण यत्कृतं परम-
र्षिभिः ॥ ६६ ॥ यश्चेदमग्र्यं प्रथमं पुराणं सदाप्रमत्तः पठते महात्मा ॥ अवाप्य कामानिह वीतशोकः परत्र स स्वर्गफलानि
भुङ्क्ते ॥ ६७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ जनमेजय उवाच ॥ श्रुतं नः परमं ब्रह्मन्
स्ववंशचरितं महत् ॥ दिव्यमन्योन्यसंभूतं मानितं बहुभिर्गुणैः ॥ १ ॥ छन्दोभिर्वृत्तसञ्जातैः समासैश्च सविस्तरैः ॥ लघुभिर्मधुरा-
भाषैर्ग्रथितं पदविग्रहैः ॥ २ ॥ त्रिवर्गेणाभिसंपन्नं धर्मेणार्थेन भोगिनाम् ॥ कामेन बहुरूपेण शरीरान्तर्गतेन च ॥ ३ ॥ ब्राह्मणानां
प्रभावैश्च योधानां च पराक्रमैः ॥ वैरनिर्यातनैश्चैव प्रतिज्ञानां च पारगैः ॥ ४ ॥ रिपुस्तवसुसंपन्नैर्नानुबन्धः प्रचोदितः ॥ वंशयो-
निर्विनाशाय नृपेण द्विजविग्रहात् ॥ ५ ॥

वंशका अद्भुत चरित्र सुना जो बड़ा दिव्य और बहुत गुणोंसे पूजित है ॥ १ ॥ वृत्तोंवाले छन्द विस्तारयुक्त समास लघुरूप मधुर वाणियोंसे ग्रथित पदोंके विग्रहसे युक्त ॥ २ ॥ धर्म अर्थ कामसे सम्पन्न शरीरके अन्तर विचरनेवाली इच्छासे सम्पन्न ॥ ३ ॥ ब्राह्मणोंके प्रभाव योधाओंके पराक्रम वैरनिर्यातनकी प्रतिज्ञाके पारगाभी ॥ ४ ॥ रिपुकी स्तुतिसे संपन्न अनुबन्धसे रहित ब्राह्मणके विग्रहसे दोनों वंशोंके विनाशके निमित्त चरित्र सुना ॥ ५ ॥

उस महासंग्राममें राजा हत हुए थे. उनके राज्योंमें उनके पुत्र प्रतिष्ठित हुए. भगवान् की आज्ञा माननेवाले राजा .युविष्ठिर सिंहासनपर विराजे ॥ ६ ॥
तीनों वर्णोंकी संप्रदायका धर्म सुना हे द्विजश्रेष्ठ ! स्वर्गका हेतु शूरोका धर्म सुना ॥ ७ ॥ सो प्राणियोंके अनुग्रहकेही निमित्त .कहा. उद्वेगके निमित्त
नहीं. चारों वर्णोंका धर्म पृथक् पृथक् अनेक प्रकारसे कहा ॥ ८ ॥ गर्भवासमें पडनेवाले प्राणियोंको प्रबोधका वर्णन किया. क्षीणपुण्य होनेपर
देवसंचारभी कहा ॥ ९ ॥ दानका संयोगभी बहुत प्रकारसे कहा यह आपने मधुर वचनसे मुझसे कहा है ॥ १० ॥ वह भारतका अध्ययन करनेको मैं

ये च तस्मिन्महारोद्रे संग्रामे निहता नृपाः ॥ तेषां सर्वाणि राष्ट्राणि पुत्राः सर्वे प्रपेदिरे ॥ कौरवः प्रथितो राजा भगवच्छासना-
नुगः ॥ ६ ॥ धर्मश्च बहुधा प्रोक्तस्त्रयाणां वर्णसंपदाम् ॥ शूराणामपि विख्यातः स्वर्गहेतुर्द्विजवर्षभ ॥ ७ ॥ अनुग्रहार्थं भूतानां
नोत्सेकाय कथंचन ॥ चतुर्णां वर्णसंज्ञानां पृथक् पृथगनेकधा ॥ ८ ॥ गर्भवासे पतन्तश्च भूतानां संप्रबोधितः ॥ पृच्छतां देवसंचारे
क्षीणे पुण्ये च कर्मणि ॥ ९ ॥ दाने यश्चापि संयोगः स चापि बहुधा कृतः ॥ द्वाभ्यां संयोगविहितो मधुवाग्वचनं तयोः ॥ १० ॥
न तच्छक्यं मयाख्यातुं भारताध्ययनं महत् ॥ एकाहेन महान् ब्रह्मत्रपि दिव्येन चक्षुषा ॥ ११ ॥ ब्रह्मणोऽहस्तु विस्तारं संक्षेपं च
सुसंग्रहम् ॥ श्रोतुमिच्छामि भगवन्महत्कौतूहलं हि मे ॥ १२ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥
वैशम्पायन उवाच ॥ शृणुष्वैकमना राजन् पञ्चेन्द्रियसमाहितः ॥ कथां कथयतो राजन्निर्विकारेण चेतसा ॥ १ ॥ ब्रह्मसम्बन्धसं-
बद्धमबद्धं कर्मभिर्नृप ॥ पुरस्ताद्ब्रह्म संपन्नं ब्रह्मणो यददक्षिणम् ॥ २ ॥

समर्थ नहीं हूं हे ब्रह्मन् ! कोई दिव्य चक्षुसेभी एक दिनमें नहीं देख सकता ॥ ११ ॥ इस कारण ब्रह्माके दिनका विस्तार (ब्रह्मयज्ञ) का वर्णन संक्षेपसे मैं
सुना चाहता हूं. हे भगवन् ! इसका मुझे परम कौतूहल है सो आप कहिये ॥ १२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां
पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ वैशम्पायन बोले, हे राजन् ! पांचों इन्द्रियोंको सावधान कर एक मनसे सुनो. हे राजन् ! निर्विकार चित्तसे कथा
सुनो ॥ १ ॥ यह कथा ब्रह्मसंबन्धसे संबन्धित कर्मसंबन्धसे रहित है. ब्रह्म जाननेवालोंको पहिलेही सिद्ध है, इसको सुनो ॥ २ ॥

जो अव्यक्त कारण नित्य सत् असत् आत्मक है. जो निष्कल पुरुष है उससे अहंकारयुक्त आत्मा ब्रह्म हो हुआ है ॥ ३ ॥ वह सर्व भूतपति दिव्य विभु दिव्यशरीरसे प्रादुर्भूत हुआ है. अचिन्त्य अविनाशी युगोंकी उत्पत्ति करनेवाले अव्यय ॥ ४ ॥ न हुआ न उत्पन्न सम्पूर्ण प्राणि-योंमें समानताको प्राप्त हुआ. अव्यक्तसे परे जिसको नारायणके ज्ञाता तद्रूप कहते हैं ॥ ५ ॥ सब ओर हाथ चरणसे युक्त सब ओर नेत्र और शिरसे युक्त सब ओर कर्णवाला लोकमें सबको घेरे स्थित हो रहा है ॥ ६ ॥ सत् असत्का कारण व्यक्त अव्यक्त रूपमें स्थित जो चलता

अव्यक्तं कारणं यत्तन्नित्यं सदसदात्मकम् ॥ निष्कलः पुरुषस्तस्मात्संबभूवात्मयोनिजः ॥ ३ ॥ दिव्यो दिव्येन वपुषा सर्व-भूतपतिर्विभुः ॥ अचिन्त्यश्चाव्ययश्चैव युगानां प्रभवोऽव्ययः ॥ ४ ॥ अभूतश्चाप्यजातश्च सर्वत्र समतां गतः ॥ अव्यक्तात्परमं यत्तन्नारायणविदो विदुः ॥ ५ ॥ सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ॥ सर्वतः श्रुतिमैल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥ ६ ॥ असत्तश्च सत्तश्चैव विज्ञेयं तत्र कारणम् ॥ अव्यक्तो व्यक्तरूपस्थश्चरन्नपि न दृश्यते ॥ ७ ॥ विकारपुरुषोऽव्यक्तो ह्यरूपी रूपमाश्रितः ॥ चरत्यचिन्त्यः सर्वेषु गूढोऽग्निरिव दारुणु ॥ ८ ॥ भूतभवोद्भवो नाथः परमेश्वरो प्रजापतिः ॥ प्रभुः सर्वस्य लोकस्य नाम चास्योति तत्त्वतः ॥ ९ ॥ अपदात्तु पदो जातस्तस्मान्नारायणोऽभवत् ॥ अव्यक्तो व्यक्तिमापन्नो ब्रह्मयोगेन कामतः ॥ १० ॥ ब्रह्मभावे च तं विद्धि सशब्दं लब्धवान्प्रभुः ॥ प्रभुः सर्वस्य लोकस्य स्थावरस्येतरस्य च ॥ ११ ॥

हुआभी नहीं दीखता है ॥ ७ ॥ विकार पुरुष व्यक्त और रूपसे रहित रूपमें आश्रित है. वह अचिन्त्य सबमें विचरणे करता हुआ काठमें अग्निकी समान स्थित हो रहा है ॥ ८ ॥ भूत भविष्य वर्तमानका उत्पन्न करनेवाला परमेश्वरी प्रजापति सब लोकका पति अहंनामवाला तत्त्व-युक्त ॥ ९ ॥ उस अपदसे अहंकार हुआ. उससे नारायण हुआ इस प्रकार वह ब्रह्म व्यक्त और अव्यक्तको प्राप्त होकर स्थावर जंगमका स्वामी ब्रह्मरूप हुआ ॥ १० ॥ उसको ब्रह्मभावसे जानो. उस ब्रह्मने शब्दका ग्रहण किया. वही स्थावर जंगम सब जगत्का पिता है ॥ ११ ॥

हे भारत ! वह अहंकारसे युक्त हो मैं प्रजा रचूंगा. ऐसा कहने लगे वही सब प्रजाओंके उत्पत्तिस्थान है. जिनकी यह प्रजा तन्तुरूप है ॥ १२ ॥ स्वभावसेही सब जगत् उत्पन्न होता है और स्वभावसेही पूर्वजन्मके वासना उपरान्त वैसा हुआ है. अहंकार स्वभावसे यह सब जगत् है ॥ १३ ॥ सर्वव्यापी निरालम्ब अग्राह्य अज ध्रुव ब्रह्ममय ज्योति ब्रह्मशब्दसे कही जाती है ॥ १४ ॥ अव्यक्तही व्यक्तिको प्राप्त हुआ है. वह व्यक्तता पांच तत्त्वोंके लक्षणसे हुई है. अनेक प्रकारके चिन्तनसे अनेक वस्तुओंको धारण करता हुआ ॥ १५ ॥ ब्रह्मसे प्रेरित हुआ ब्रह्ममूर्तिको प्राप्त होकर जल निर्मित

अहं त्विति स होवाच प्रजाः स्रक्ष्यामि भारत ॥ प्रभवः सर्वभूतानां यस्य तन्तुरिमाः प्रजाः ॥ १२ ॥ स्वभावाज्जायते सर्वं स्वभावाच्च तथाभवत् ॥ अहंकारः स्वभावाच्च तथा सर्वमिदं जगत् ॥ १३ ॥ सर्वव्यापी निरालम्बो ह्यग्राह्योऽथ जयो ध्रुवः ॥ एवं ब्रह्ममयो ज्योतिर्ब्रह्मशब्देन शब्दितः ॥ १४ ॥ अव्यक्तो व्यक्तिमापन्नः पञ्चभिः ऋतुलक्षणैः ॥ धारयन् ब्रह्मणो व्यक्तं विविधं चिन्तितं त्वरन् ॥ १५ ॥ अथ मूर्तिं समाधाय स्वभावाद्ब्रह्मचोदितः ॥ ससर्ज सलिलं ब्रह्मा येन सर्वमिदं ततम् ॥ १६ ॥ वायुं पूर्वमथो दृष्ट्वा यो धातुर्धातृसत्तमः ॥ धारणाद्धातृशब्दं च लभते लोकसंज्ञितम् ॥ १७ ॥ तदेतद्वायुसंभूतं कृत्स्नं जगद्भूतपुरा ॥ एतद्देवैरति-क्रान्तं पूर्वमेव सरस्वति ॥ १८ ॥ पृथक्त्वं गमितं तोयं पृथिवीशब्दमिच्छता ॥ घनत्वाच्च द्रवत्वाच्च निखिलेनोपलभ्यते ॥ १९ ॥ फलत्वात्सीदमाना च सलिले सलिलोद्भवः ॥ व्याजहार शुभां वार्षां समन्तात्पूरयन्निव ॥ २० ॥

करते हुए. जिससे यह सब जगत् हुआ है ॥ १६ ॥ जलकी सृष्टिसे पहिले वायुको देख मरीचि आदिने सतलोकमें संकेतित धातृशब्दको धारण किया ॥ १७ ॥ वायुके स्थूल अंश अग्नि आदिसे उत्पन्न हुआ. यह जगत् पार्थिवताको प्राप्त हो तेजसे देव शमादिसे आक्रान्त हुआ समुद्रमें स्थित था ॥ १८ ॥ तब पृथ्वीकी इच्छावाले परमेश्वरने जलसे पृथ्वी अलग की वह घनी और द्रवरूप होनेसे पृथक्तासे युक्त हुई ॥ १९ ॥ कार्यरूप होनेसे जलमें सीदमान होता हुआ जलसे उद्धार होनेकी इच्छासे और चारों ओर वाणीको पूर्ण करता हुआ भूदेवता वाणीको बोला ॥ २० ॥

मैं यहां दुःखी हुआ. बाहर आनेकी इच्छा करता हूं मुझे उद्धार करो इस गंभीर जलमें स्थित हो रहा हूं ॥ २१ ॥ जब मूर्तिधारी देवी सब प्राणियोंकी उत्पन्न करनेवाली यथायोग्य स्थानकी इच्छावाली स्थिरकी इच्छासे पुकारने लगी ॥ २२ ॥ तब उसकी उस सुभाषित वाणीको सुनकर वाराह रूप धारण कर नारायण सागरमें कूदे ॥ २३ ॥ वह पृथ्वीको जलसे निकालकर इस महाकर्मको करके इसे स्थापित कर फिर लीन हो गये दिखाई न दिये ॥ २४ ॥ जो ब्रह्ममय ज्योति आकाशसंज्ञावाली है उसमें सब भूतोंके पितामह ब्रह्मा उत्पन्न हुए ॥ २५ ॥ अबभी सब योगके ज्ञाता विधातासे यह मनके द्वारा

उद्ध्वोऽहं स्थातुमिच्छामि संसीदाम्युद्धरस्व माम् ॥ गम्भीरे तोयविवरे मूर्तिविक्षोभितान्तरम् ॥ २१ ॥ ततो मूर्तिधरा देवी सर्वभूत-
प्ररोहिणी ॥ यथायोगेन संभूता सर्वत्र विषयैषिणी ॥ २२ ॥ श्रुत्वा च गदितं तस्या गिरं तां च सुभाषिताम् ॥ वाराहरूपमास्थाय
निपपात महार्णवे ॥ २३ ॥ उद्धृत्य सोऽवनिं तोयात्कृत्वा कर्म सुदुष्करम् ॥ समाधौ प्रलयं गत्वा प्रलीनो न च दृश्यते ॥ २४ ॥
यत्तद्ब्रह्ममयं ज्योतिराकाशमिति संज्ञितम् ॥ तत्र ब्रह्मा समुद्भूतः सर्वभूतपितामहः ॥ २५ ॥ अद्यापि मनसा धात्रा धार्यते सर्वयो-
गिना ॥ ज्ञानयोगेन सूक्ष्मेण प्रजानां हितकाम्यया ॥ २६ ॥ भित्त्वा तु पृथिवीमध्यमुपयाति समुद्रवम् ॥ तपनस्तूर्ध्वमातिष्ठन्
रश्मिभिः स हसन्निव ॥ २७ ॥ तस्य मण्डलमध्यात्तु निःसृतं सोममण्डलम् ॥ स सनातनजो ब्रह्मा सौम्यं सोमत्वमन्वगात् ॥ २८ ॥
सोममण्डलपर्यन्तात्पवनः समजायत ॥ तदक्षरमयं ज्योतिस्तेजोभिरभिवर्द्धयन् ॥ २९ ॥ स तु योगमयाज्ञानात्स्वभावाद्ब्रह्मसंभवात् ॥
सृजते पुरुषं दिव्यं ब्रह्मयोनिं सनातनम् ॥ ३० ॥

कच्छ मच्छादि रूपसे धारण की जाती है अर्थात् सूक्ष्म ज्ञानयोगसे प्रजाके हितकी कामनासे ॥ २६ ॥ पृथ्वीके मध्यभागको भेदन कर उत्पन्न होने-
वाला सूर्य अपनी किरणोंसे जलको खचता हुआ प्रगट हुआ ॥ २७ ॥ उस सूर्यमण्डलके मध्यसे सोममण्डल निकला वह सनातन चन्द्रमा ब्रह्म
होनेसे ब्राह्मणोंका राजा है ॥ २८ ॥ सोममण्डलसे अक्षरात्मक ज्योतिस्तेजसे पृथ्वीको बढ़ाता हुआ पवन उत्पन्न हुआ ॥ २९ ॥ वह सूर्यमण्डल

अधिदैविक अर्थोंका स्रष्टा सोमाख्य ईश्वरसे वेदको प्राप्त हो योगमय ज्ञानसे सनातन ब्रह्मयानि और दिव्य पुरुषको रचता है ॥ ३० ॥ द्रवरूप जल और
 घनरूप पृथ्वी है, छिद्र आकाश और ज्योति चक्षु है ॥ ३१ ॥ वायुसे स्पंदता और उसके संघातसे अग्नि होती है और ईश्वरसे पुरुष होकर ॥ ३२ ॥
 सनातनरूप भूतात्मा पंचमहाभूतमय होके वसता है और यह सनातनरूप ब्रह्मा बुद्धिरूप गुहाके विषय ज्ञानरूपसे जाना जाता है ॥ ३३ ॥ जो अग्नि देहधारी-
 योंमें वसती है वह सूर्यकाही रूप है वह शरीरमें स्थित हुआ नित्य धातुओंमें रहता है ॥ ३४ ॥ वह स्वभावसेही क्षयको प्राप्त होकर स्वभावसेही बढ़ता
 द्रवं यत्सालिलं तस्य घनं यत्पृथिवी भवत् ॥ छिद्रं यच्च तदाकाशं ज्योतिर्यच्चक्षुरेव तत् ॥ ३१ ॥ वायुना स्पन्दते चैनं संघाताज्ज्यो-
 तिसंभवः ॥ पुरुषात्पुरुषो भावः पञ्चभूतमयो महान् ॥ ३२ ॥ भूतात्मा वै समे तस्मिस्तस्मिन्देहः सनातनः ॥ गुहायां निहितं ज्ञानं
 योगाद्यज्ञः सनातनः ॥ ३३ ॥ तपनस्यैव तद्रूपं योऽग्निर्वसति देहिनाम् ॥ शरीरे नित्यशो युक्ते धातुभिः सह संगतः ॥ ३४ ॥
 स्वभावात्क्षयमायाति स्वभावाद्भयमेति च ॥ स्वभावाद्भिन्दते शान्तिं स्वभावाच्च न विन्दति ॥ ३५ ॥ इन्द्रियैरतिमूढात्मा मोहितो
 ब्रह्मणः पदे ॥ संभवं निधनं चैव कर्मभिः प्रतिपद्यते ॥ ३६ ॥ यावत्तद्ब्रह्मविषयं नोपयातीह तत्त्वतः ॥ तावत्संसारमाप्नोति संभवांश्च
 पुनः पुनः ॥ ३७ ॥ इन्द्रियैर्व्यतिरिक्तो वै यदा भवति योगवित् ॥ तदा ब्रह्मत्वमापन्नः प्रलयाग्रे प्रतिष्ठति ॥ ३८ ॥ प्रतिषिद्धममुं
 लोकं ब्रह्मवान् स भवत्युत न ॥ च रागव्ययायात न च सज्जातिर्काहिंचित् ॥ ३९ ॥ आगतिं त्वं गतिं चैव निधनं संभवं तथा ॥ भूतेभ्यो
 वेत्ति सर्वज्ञः परां सिद्धिमुपागतः ॥ ४० ॥

है, स्वभावसेही शान्तिको प्राप्त होता आर स्वभावसेही शान्ता नहीं होता ॥ ३५ ॥ इन्द्रियोंसे मूढात्मा हो ब्रह्मपदमें मोहित हुआ उत्पत्ति और मरणको
 जीव प्राप्त होता है ॥ ३६ ॥ जबतक तत्त्वसे जीव ब्रह्मविषयको प्राप्त नहीं होता तबतक संसारको प्राप्त हो बारंवार जन्ममरणको प्राप्त होता है ॥ ३७ ॥
 जब यह योगज्ञाता इन्द्रियोंसे व्यतिरिक्त होता है तब यह ब्रह्मत्वको प्राप्त हो इन्द्रियादिकोंमें स्वरूपानंदकी प्रतिष्ठाको प्राप्त होता है ॥ ३८ ॥ ब्रह्मज्ञानी
 इस निषिद्ध लोक आर रागव्ययको कभी प्राप्त नहीं होता ॥ ३९ ॥ आना जाला उत्पत्ति नाश यह दूसरे प्राणियोंको देखकर सर्वज्ञ जानकर परम

सिद्धिको प्राप्त होता है ॥ ४० ॥ विषयगोचर होनेमें आत्माकी गतिको देखकर कर्मसे निवृत्त हो ब्रह्मके पदमें प्रतिष्ठित होता है ॥ ४१ ॥ कामादिके लोभसे भिन्न हुई पूर्व यातना मनके द्वारा चित्तकी ग्रंथिको रोकती है और इस प्रकारसे भेदन करती है, जैसे सागर वायुसे भिन्न होता है ॥ ४२ ॥ वासनाको रोकनेसे कामादिसे मलोन हुई बुद्धि शुद्ध होती है वेदमें कहे ज्ञानसे यह जीव देहबन्धनसे मुक्त हो जाना है ॥ ४३ ॥ तेजमूर्ति योगी विद्यासे लोक रचने और संहार करनेकी सामर्थ्य रखता है और इस लोकको रच सकता है ॥ ४४ ॥ तिर्यग्योनोनिमें प्राप्त हुए जीवोंको कर्म और नियमोंसे ब्रह्मयुक्त चित्त होनेके आत्मनो गतयश्चैव तथा विषयगोचरे ॥ पुरस्तात्कर्मनिवृत्तेः पदे ब्रह्मा प्रतिष्ठितः ॥ ४१ ॥ चित्रग्रन्थांश्च मनसा रुन्ध्यात्पूर्वांश्च यातनाः ॥ भिद्यमानाः प्रलोभेन वायुभिन्नमिवाणवम् ॥ ४२ ॥ पच्यते हृदयं नोलं परेभ्यो ज्ञानचक्षुषा ॥ ब्रह्मप्रोक्तमिवात्मा वे विमुक्तो देहबन्धनात् ॥ ४३ ॥ सृजेदपि परं लोकं संहरेदपि विद्यया ॥ तेजोमूर्तिरिवाविद्धमिह लोकं च संसृजेत् ॥ ४४ ॥ तिर्यग्योनो गतांश्चैव कर्मभिर्नियमोपमैः ॥ तान्यपि प्रतिमुच्येत ब्रह्मयुक्तेन चेतसा ॥ ४५ ॥ अक्षरं च क्षरं चैव योगकर्माभिविद्यते ॥ न क्षरं विद्यते तत्र यद्ब्रह्म कर्मभिर्ध्रुवम् ॥ ४६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ पृथिव्यां यत्कृतं छिद्रं तपनेन विवर्द्धता ॥ तस्मिन्नयस्तोऽथ मैनाकः स्वभावविहितोऽचलः ॥ १ ॥ पर्वभिः पर्वतत्वं च लभते नाम संज्ञितम् ॥ अचलादचलत्वं च स्वभावान्मेरुरेव सः ॥ २ ॥ तस्य पृष्ठे सुविस्तीर्णे नगस्य सुमहर्द्धिमान् ॥ तमिंस्तु पुरुषो व्यक्तो वसति ज्योतिसंभवः ॥ ३ ॥

कारण उनको कर्मबन्धनसे छुटा सकता है ॥ ४५ ॥ मोक्ष और भोग दोनों वस्तु योगकर्मसे जानी जाती है. जो कर्मसे ब्रह्मगति मिलती है फिर उसका नाश नहीं होता ॥ ४६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ वैशम्पायन बोले, सूर्यदेवने जो छिद्र पृथ्वीमें किया था वहां स्वभावसे निर्मित मैनाक पर्वत स्थित है ॥ १ ॥ पर्व होनेसे इनको पर्वत कहते हैं. अचल होनेसे अचल और स्वभावसेही मेरु है ॥ २ ॥ उस विस्तृत पर्वतकी ऊपर महाकर्द्धिमान् वह ज्योतिर्मय दीप्त शरीरवाला पुरुष उस परमात्माद्वारा स्वभावसेही स्थित किया गया है ॥ ३ ॥

और उसके शिरपर जो ब्रह्ममय तेज स्थित है उसका ज्योतिर्मय दिव्य पुरुष कहा गया है ॥ ४ ॥ वह मुखसे निकला हुआ तेजसे प्रकाशित चार मुख चार द्विजोत्तमोंके सहित प्रगट हुआ ॥ ५ ॥ उसके मुखसे वेद प्रगट हुआ है, वा तिस देवका मुख वेदसे प्रगट हुआ है इस कारण उस वेदके धारण करनेसे ब्रह्मा ब्राह्मण है, इस प्रकार यह महाभूत फिर पूज्यताको प्राप्त हो गये ॥ ६ ॥ जिन्होंने जलसे पृथ्वी देवीका उद्धार किया है वह ब्रह्माके स्थान (मुक्ति) मेरुपृष्ठको प्राप्त होकर अलोक होकर लोकताको प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥ जिसकी पदसंधिमें ब्रह्मलोक मेरुशृंग स्थित है (यह ज्ञानपरत्व है पर्वत कल्पनामात्र है)

विहितश्च स्वभावेन तेनैव परमात्मना ॥ यत्तद्ब्रह्ममयं तेजो निहितं शिरसोऽन्तरे ॥ तस्य ज्योतिर्मयं रूपं दीप्तं पुरुषविग्रहम् ॥ ४ ॥
वदनादभिनिष्क्रान्तं ज्वलन्तमिव तेजसा ॥ चतुर्भिर्वदनैर्युक्तं चतुर्भिश्च द्विजोत्तमैः ॥ ५ ॥ वक्त्रं ब्रह्मसमुद्भूतं ब्रह्मा ब्राह्मणपुङ्गवः ॥
तदेव तन्महाभूतं पुनर्भावत्वमागतम् ॥ ६ ॥ उद्धृता पृथिवी देवी पुरस्तात्सलिलाशयात् ॥ ब्रह्मत्वं ब्रह्मणः स्थानादलोको लोकतां
गतः ॥ ७ ॥ पदसंधौ ब्रह्मलोकं शृङ्गं मेरुस्तदाभवत् ॥ उच्छ्रितं योजनशतं सहस्रशतमेव च ॥ ८ ॥ एवमेव च विस्तारं चतुर्भिः
गुणितं गुणैः ॥ अथवा नैव संख्यातुं शक्यं भूतेन केनचित् ॥ समाः सहस्रं बहुभिरपि दिव्येन तेजसा ॥ ९ ॥ चतुर्भिः पार्श्वविस्तारैः
शिलाभिरभिसंवृतैः ॥ नगस्य यस्य राजेन्द्र विस्तारैः शतयोजनैः ॥ १० ॥ कोटिकोटिशतगुणैर्गुणितब्रह्मणादिभिः ॥ योगयुक्तैः सदा
सिद्धैर्नित्यं ब्रह्मपरायणैः ॥ ११ ॥ मरुद्भिः सह देवेन्द्रै रूद्रेर्वसुभिरेव च ॥ आदित्यैर्विश्वसहितै ररक्ष वसुधाधिपान् ॥ १२ ॥ ररक्ष
पृथिवीं चैव भगवान्विष्णुना सह ॥ विवस्वद्रुणाभ्यां च संघातं गमितां नृप ॥ १३ ॥

यह सौ सहस्र सौ योजन ऊंचा है ॥ ८ ॥ और इस प्रमाणसेभी चौगुना प्रमाण मिला जाता है अथवा कोई मनुष्य इसकी संख्या नहीं कर सकता, बहुत सहस्रों वर्षतक दिव्य तेजसे कोई नहीं जानता ॥ ९ ॥ जिस पर्वतमें सौ सौ योजनवाली धर्म ज्ञान वैराग्य ऐश्वर्यरूप चार शिला हैं ॥ १० ॥ उसमें करोड़ों २ सौ ब्रह्मवादी योगयुक्त नित्य ब्रह्मपरायण निवास करते हैं ॥ ११ ॥ मरुत देवेन्द्र वसुओंके साथ आदित्य विश्वदेवा सहित पृथ्वीके राजोंकी रक्षा की जाती है ॥ १२ ॥ यह सब भगवान् विष्णुके सहित पृथ्वीकी रक्षा करते हैं, सूर्य और वरुणके साथ मिले हुए अर्थात् जल अग्निसे

संघटित लिंगशरीरसे ब्रह्म निर्विशेषरूपको प्राप्त होता है ॥ १३ ॥ हे भारत ! उस ब्राह्मणशरीरसे ब्रह्मको प्राप्त होकर जो ब्रह्ममें तेज सब ओरसे समताको प्राप्त हो रहा है ॥ १४ ॥ वेदपारगामी ब्राह्मण जिसको ब्रह्म कहते हैं जो सत्यव्रतपरायण अनेक नियमोंसे प्राप्त होता है ॥ १५ ॥ इस प्रकार यह तीनों लोक ब्रह्माके दिनमें स्थित रहते हैं, उस दिनमें अव्यक्त प्रतिष्ठित ब्रह्मरूप प्रगट हो जीवरूप प्राणमें प्रतिष्ठित होता है ॥ १६ ॥ ईश्वरके प्रभावेसे निश्वासित वेदके द्वारा प्रेरित किया जो नित्यकर्म है वह नियतकर्म शुद्धभावसे करनेसे ॥ १७ ॥ सदैव हित करनेवाला है यह वार्ता वेदपारगामी ब्राह्मणोंने कही है जो कर्मसे प्राप्त होता है वह ब्रह्मका पाद लेशमात्र कहा गया है ॥ १८ ॥ और बहुरूप अर्थात् इन्द्र मित्र वरुणरूप होनेसे ब्रह्मभूत सत्य-

तेन ब्राह्मेण वपुषा ब्रह्मप्राप्तेन भारत ॥ यत्ताद्विष्णुमयं तेजः सर्वत्र समतां गतम् ॥ १४ ॥ यत्तद्ब्रह्मेति वै प्रोक्तं ब्राह्मणैर्वेदपारगैः ॥ नियमैर्बहुभिः प्राप्तैः सत्यव्रतपरायणैः ॥ १५ ॥ एवमेते त्रयो लोका ब्राह्मेऽहनि समाहिताः ॥ अहनि ब्रह्म चाव्यक्तं व्यक्तं प्राणे प्रतिष्ठितम् ॥ १६ ॥ ब्रह्मणो नियतं कर्म प्रभावेन प्रचोदितम् ॥ प्रवर्तमानं भावेन शश्वदच्छलवादिनाम् ॥ १७ ॥ एताद्वितमिति प्रोक्तं ब्राह्मणैर्वेदपारगैः ॥ यदेकं ब्रह्मणः पादं दिष्टत्वं गमितं पदम् ॥ १८ ॥ बहुत्वाद्विप्रभावानां विश्वशब्दः प्रयुज्यते ॥ ब्राह्मणैर्ब्रह्मभूतात्मा सत्यव्रतपरायणैः ॥ १९ ॥ विश्वरूपं मनोरूपं बुद्धिरूपं च मानयन् ॥ एवं द्रुद्रं स भगवान् प्रथमं मिथुनं सृजत् ॥ २० ॥ स एव भगवान्विश्वो देव्या सह सनातनः ॥ विधाय त्रिपुत्रान् भोगान् ब्रह्माचरति सानुगः ॥ २१ ॥ स एष भगवान् ब्रह्मा नित्यं ब्रह्मविदां वरः ॥ निर्वणमयगन्तूणामकिंचनपथेषिणाम् ॥ २२ ॥ सोमात्सोमः समुत्पन्नो धारासलिलविग्रहात् ॥ यथाभिषिक्तो भूतानामाधिपत्ये महेश्वरः ॥ २३ ॥

व्रतपरायण ब्राह्मणोंद्वारा विश्वरूप कहा जाता है ॥ १९ ॥ विश्वरूप मनरूप बुद्धिरूप मानते हुए भगवान्ने प्रथम मिथुनको उत्पन्न किया है ॥ २० ॥ वह भगवान् विश्व सनातन देवीके साथ अनेक भोगोंको करता हुआ अनुचरों सहित विचरता है ॥ २१ ॥ यह भगवान् ब्रह्मा नित्य वेदके ज्ञाता निर्वाणमयको प्राप्त होनेवाले और अकिंचन मार्गकी इच्छावाले हैं ॥ २२ ॥ उमारूप विद्याके सहित ज्ञानशक्तिरूप परमेश्वरसे औषधीपति चन्द्रमा उत्पन्न हुआ है, वह जलरूप धारा स्वर्गसे प्रादुर्भूत हुई है, जिससे महेश्वर भूतोंके आधिपत्यमें अभिषिक्त हुए हैं ॥ २३ ॥

भूतेशको अभिषेक कर स्वाभाविक कर्म करके नाद करती है, इस कारण इसको नदी कहते हैं ॥ २४ ॥ वह मार्गके रोकनेवाले पर्वतोंका तिरस्कार कर सहस्र प्रकारसे युक्त हो स्वर्गसे (गां) पृथ्वीमें प्राप्त होनेके कारण गंगा कहलाई, और गोदावरी आदि रूपसे समुद्र संगममें सात प्रकारकी हुई है ॥ २५ ॥ हे राजेन्द्र ! इस प्रकारसे यह सहस्र प्रकारोंसे वारंवार लोकको बढ़ाती है इस लोक परलोकको संभावित करती है ॥ २६ ॥ इसीसे सब प्राणी और महा-भूत (जराबुजादि जीव) बढ़ते हैं, इसीसे सब बुद्धिमानोंकी क्रियाका आरंभ होता है अर्थात् मनुष्यादि होकर उससे सब क्रिया बढ़ती है ॥ २७ ॥ उस देवके चार मुखोंसे निकली हुई अक्षरमयी सिद्धि वेदरूप उपदेशपनेको प्राप्त हुई है ॥ २८ ॥ उसका ज्ञानमय पुण्यरूप चतुष्पाद सनातन है, यह

अभिषिच्य भूतेशं कृत्वा कर्म स्वभावतः ॥ नदाति स्म तदा नादं तेन सा ह्युच्यते नदी ॥ २४ ॥ सा ब्रह्मलोकं संभाव्य अभिभूय सहस्रधा ॥ गां गता गगनाद्देवी सप्तधा प्रससार च ॥ २५ ॥ सहस्रधा च राजेन्द्र बहुधा च पुनः पुनः ॥ इमं लोकममुं चैव भाषयन् क्षरसंभवम् ॥ २६ ॥ ततो भूतानि रोहन्ति महाभूतफलानि च ॥ ततः सर्वे क्रियारम्भाः प्रवर्तन्ते मनीषिणाम् ॥ २७ ॥ चतुर्भिर्वदने-स्तस्य मुखपद्माद्रिनिःसृता ॥ तदाक्षरमयी सिद्धिर्दिशत्वं समुपागता ॥ २८ ॥ तस्य ज्ञानमयं पुण्यं चतुष्पादं सनातनम् ॥ पतित्वे-नाभवद्देवो ब्रह्मा चात्र पितामहः ॥ २९ ॥ पादा धर्मस्य चत्वारो येरिदं धार्यते जगत् ॥ ब्रह्मचर्येण व्यक्तेन गृहस्थेन च पावने ॥ ३० ॥ गुरुभावेन वाक्येन गुह्यगामिनगामिना ॥ इत्येते धर्मपादाः स्युः स्वर्गदेतोः प्रचोदिताः ॥ ३१ ॥ न्यायाद्धर्मेण गुह्येन सोमो वर्धते मण्डले ॥ ब्रह्मणो ब्रह्मचरणाद्रेदा वतन्ति शाश्वताः ॥ ३२ ॥

पितामह ब्रह्मा देवताओंके अधिपति हुए ॥ २९ ॥ धर्मके चार चरण हैं जिनसे यह जगत् धारण किया जाता है ब्रह्मचर्य व्यक्तता और पवित्र गृहस्थ-धर्मसे स्थित है अर्थात् वह ईश्वर यज्ञरूप चार चरणवाला है ब्रह्मा उद्गाता होता अथर्वयु यह चारों चरण हैं अर्थात् धर्मका एक पाद ब्रह्मचर्य आश्रम है गृहस्थाश्रम दूसरा पाद है ॥ ३० ॥ वानप्रस्थ तीसरा और संन्यास चौथा पाद है, यह धर्मके चार चरण धर्मके कारण हैं और स्वर्गके हेतु कहे हैं ॥ ३१ ॥ न्याय और गुप्त धर्मके ब्रह्माण्डमें चन्द्रसे अधिष्ठित मन बढ़ता है और देवके द्वारा प्रमाणित योगसे शाश्वत वेद प्रवृत्त होते हैं ॥ ३२ ॥

पूर्वोक्त योगोंके जाननेवालोंसे पितर तृप्त होते हैं और ऋषिभी धर्मसे उस पर्वतके शिखरपर स्थित हैं ॥ ३३ ॥ उस मेरुपर्वतकी उत्तम शिखरको देखकर चरणोंसे वृषणको पीडित कर अर्थात् सिद्धासनसे स्थित हो विचार करते हैं ॥ ३४ ॥ ग्रीवाको निग्रह कर पृष्ठभागको निवारण कर हैंसते हुए नाभिदेशमें हाथोंको रखकरके (अंजलि बांधकर वाममुद्रा कर वामके ऊपर दक्षिण हाथ कर) सम्पूर्ण अंगोंको निग्रह करता हुआ ॥ ३५ ॥ मस्तकमें ब्रह्मको प्राप्त कर ब्रह्माने अधिकारी मनसे योगसे योगेश्वर विष्णुको मृज ॥ ३६ ॥ इन्द्रियोंसे रहित बिंबसे बिंबकी समान विष्णुको उद्धृत करनेसे

गृहस्थानभिवाक्येन तृप्यन्ति पितरस्तथा ॥ ऋषयोऽपि च धर्मेण नगस्य शिरसि स्थिताः ॥ ३३ ॥ नगस्य तस्य संपश्य मेरोः शिखरमुत्तमम् ॥ पद्भ्यां संपीडय वृषणावृषिभिस्तौर्विचार्यते ॥ ३४ ॥ ग्रीवां निगृह्य पृष्ठं च विनाम्य प्रहसन्निव ॥ नाभिदेशे करौ न्यस्य सर्वशोऽङ्गानि संक्षिपन् ॥ ३५ ॥ मूर्ध्नि ब्रह्म समुक्षित्य मनसापि पितामहः ॥ असृजन्मनसा विष्णुं योगाद्योगेश्वरस्य च ॥ ३६ ॥ व्यतिरिक्तेन्द्रियो विष्णुर्बिम्बाद्विम्बामिवोद्धृतः ॥ तेजोमूर्तिधरो देवो नभसीन्दुरिवोदितः ॥ ३७ ॥ रराज ब्रह्मयोगेन सहस्रांशुरिवापरः विराजन्नभसो मध्ये प्रभाभिरतुलं प्रभुः ॥ ३८ ॥ नोपलभ्यति मूढानां प्रत्यक्षं ब्रह्म शाश्वतम् ॥ ललाटमध्ये तिष्ठन्तं द्विधाभूतं क्रियां प्रति ॥ ३९ ॥ ज्योतिश्चक्षुषि संबद्धं बिम्बं भास्करसोमयोः ॥ बुद्ध्या पूर्वं तु पश्यन्ति अध्यात्मविषये रताः ॥ ४० ॥ ब्रह्मणा वेदविद्वांसः सत्यव्रतपरायणाः ॥ नेतरे जातु पश्यन्ति अध्यात्मं नावबुध्यते ॥ ४१ ॥ हिंसायोगैरयोगात्मा सर्वप्राणचरेर्नृप ॥ भूतयो भुवि भूतेशो मोहप्राप्तेन चेतसा ॥ ४२ ॥

तेजकी मूर्ति धारण करनेवाला आकाशमें उदित चन्द्रमाकी समान प्रकट होता है ॥ ३७ ॥ वह दूसरे सूर्यकी समान ब्रह्मयोगसे शोभित हुए, वह प्रभु अपनी अतुलप्रभासे आकाशके मध्यमें शोभित हुए ॥ ३८ ॥ मूढोंको वह शाश्वत ब्रह्म प्रत्यक्ष नहीं होता है, वह क्रिया नियम्य और नियामक रूपसे ललाटेके मध्यमें स्थित हैं ॥ ३९ ॥ नेत्रोंको प्रकाशित करनेवाली ज्योति सूर्य और चन्द्रमाका बिम्ब है, अध्यात्मज्ञानी इसको बुद्धिपूर्वक देखते हैं ॥ ४० ॥ जो वेदके ज्ञाता ब्राह्मण सत्यव्रतमें परायण हैं उन्हींको यह अध्यात्म ज्ञान विदित होता है, दूसरे इसको नहीं जानते ॥ ४१ ॥ जो योगी पृथ्वीमें प्राणि-

गोंकी निग्रह अनुग्रह करते हैं जिनका आत्मा हिंसायोगसे अयोग हो रहा है तथा ऐश्वर्यसे उपजे हुए मोहमें प्राप्त हुए चित्तसे अयोगात्मा ॥ ४२ ॥
 कुत्सित कर्म और प्राणियोंके वधकी इच्छा करनेवाला अपने भोगोंके अर्थ ईश्वरको नहीं जानता ॥ ४३ ॥ हे ब्रह्मन् ! सावधान मनवाला मोक्षप्राप्तिके
 कारण चन्द्रमण्डलके स्थानसे बड़ी चन्द्रसम्बन्धी ज्योतिमें ॥ ४४ ॥ हृदयमें प्रवेश कर सगुण ब्रह्मके हृदयके भीतर गर्भसे उपजनेवाले अकार उकार
 मकार और अर्द्धमात्रासे चार प्रकारवाला होकर ॥ ४५ ॥ ब्रह्मतेजयुक्त होकर शाश्वत ध्रुव अविनाशी इन्द्रियगुणोंसे अयुक्त तेजगुणोंसे
 युक्त ॥ ४६ ॥ चन्द्रकिरणकी समान उज्ज्वल प्रकाशमान वर्णकी संज्ञावाले देवने नेत्रोंसे यजुके साथ ऋग्वेदको उत्पन्न किया ॥ ४७ ॥

कर्मभिः कुत्सितैरेन्यैः सर्वप्राणिवधैषिणाम् ॥ नराणां योगमाधाय स्वेषु मात्रेषु भारत ॥ ४३ ॥ समाहितमना ब्रह्मन् मोक्षप्राप्तेन
 हेतुना ॥ चन्द्रमण्डलसंस्थानाज्ज्योतिश्चान्द्रं महत्तदा ॥ ४४ ॥ प्रविश्य हृदयं क्षिप्रं गायत्र्या नयनान्तरे ॥ गर्भस्य संभवो यश्च
 चतुर्धा पुरुषात्मकः ॥ ४५ ॥ ब्रह्मतेजोमयो युक्तः शाश्वतोऽथ ध्रुवोऽव्ययः ॥ न चेन्द्रियगुणैर्युक्तो युक्तस्तेजोगुणेन च ॥ ४६ ॥
 चन्द्रांशुविमलप्रख्यो भ्राजिष्णुर्वर्णसंस्थितः ॥ नेत्राभ्यां जनयद्देवो ऋग्वेदं यजुषा सह ॥ ४७ ॥ सामवेदं च जिह्वाग्रादथर्वणं च
 मूर्द्धतः ॥ जातमात्रस्तु ते वेदाः क्षेत्रं विन्दन्ति तत्त्वतः ॥ ४८ ॥ तेन वेदत्वमापन्ना यस्माद्विन्दन्ति तत्पदम् ॥ ते सृजन्ति तदा
 वेदा ब्रह्म पूव सनातनम् ॥ ४९ ॥ पुरुषं दिव्यरूपाभं स्वैः स्वैर्भावैर्मनोभवेः ॥ अथर्वणस्तु यो योगः शीर्षं यज्ञस्य तत्स्मृतम् ॥ ५० ॥

यह विश्व और तेजसरूप है, जिह्वाके अग्रभागसे सामवेद प्राज्ञरूप उत्पन्न हुआ शब्दमात्र गम्यत्व होनेसे जिह्वाग्रसे उत्पत्ति कही, मूर्धासे अथर्व हुआ अर्थात्
 इनसे सबसे विलक्षणरूप होनेसे जो मन नेत्रादि इन्द्रियोंके अगोचर है उस सब शुद्धके मूर्धासे हुआ, उत्पन्न होतेही यह वेद अपने क्षेत्रको प्रकाश कर
 उपाधिको ग्रहण करते हैं ॥ ४८ ॥ इसीसे यह वेदत्वको प्राप्त हुए हैं, कारण कि इनसे तत्पद जाना जाता है, यही वेद सनातन ब्रह्मको जो तुर्यातीत
 है प्रकाश करते हैं ॥ ४९ ॥ इस प्रकार दिव्यकान्तिवाले पुरुषको अपने २ मनोभवस्वरूप भावोंसे प्रगट करते हैं, अथर्वणको तुर्य धारणायोगका शिर

कहा है ॥ ५० ॥ ग्रीवा और बाहुओंका अन्तर ऋणाग है. हृदय और पार्श्वभाग साम कहाता है ॥ ५१ ॥ वास्ति शिर कटि जंघा ऋ चरण यह यज्ञकल्पित यजुर्भाग कहलाता है यह पुरुष दिव्यरूप कान्तिमान् चौथे अक्षरसे प्रादुर्भूत है ॥ ५२ ॥ यही वेदमय यज्ञ सब प्राणियोंको सुख देनेवाला है. वह हिंसारहित सनातन यज्ञ दोनों लोकोंका मंगल करनेवाला है अर्थात् सजीव निर्जीव नामसे दो प्रकारका योग है. पहला चार प्रकारका है. वितर्क विचार आनंद स्मृतिरूप जब बाह्यप्रतिमादिमें विचि नियमन किया जाता है वह वितर्क ऋशब्दसे कहा जाता है और जब स्वप्नकी समान अन्तरबुद्धिसे मनोमात्र प्रतिमादिमें कल्पना की जाती है वह विचार यजुशब्दसे कहा जाता है जब इसको छोड़कर तुर्यमें जानेकी इच्छासे मध्यमें लय होता है वह प्रकृति लीन सामशब्दसे कहा जाता है यह लयरूप होनेसे अयोग है और तुर्यपदको प्राप्त होनेपर जब सम्पूर्ण ऐश्वर्य सर्वज्ञादिका वर्णन किया जाता है

ग्रीवा बाह्वन्तरं चैव ऋभागः स भवेत्ततः ॥ हृदयं चैव पार्श्वं च सामभागस्तु निर्मितः ॥ ५१ ॥ वास्ति शीर्षं कटीदेशं जङ्घोरुचरणैः सह ॥ एवमेष यजुर्भागः संचातो यज्ञकल्पितः ॥ पुरुषो दिव्यरूपाभः संभूतां ह्यमरात् पयात् ॥ ५२ ॥ स हि वेदमयो यज्ञः सर्वभूतसुखावहः ॥ उभयोर्लोकयोस्तात हिंसावर्ज्यः सनातनः ॥ ५३ ॥ योगारम्भं कर्मसाध्यं ब्रह्मचर्यं सनातनम् ॥ प्रभवः सर्वभूतानां यो विन्दति स वेदवित् ॥ ५४ ॥ स सिद्धः प्रोच्यते लोके सिद्धिरेव न संशयः ॥ निर्मुक्तैः सर्वकर्मभ्यो मुनिभिर्वेदपारगैः ॥ ५५ ॥ वैष्णवे यज्ञमित्येवं ब्रुवते वेदपारगाः ॥ ब्राह्मणा नियमश्रान्ता वेदोपनिषदे पदे ॥ ५६ ॥ जन्मेजय उवाच ॥ चेतस्तत्पलम्भं हि मनो-ग्राह्यस्य कामतः ॥ कारणं श्रोतुमिच्छामि यथा त्वं मन्यसं मुने ॥ ५७ ॥

वह आनंद कहलाता है और जब अंधकारको छोड़कर मैं हूं इस प्रकारका जो आनंद है वह स्मित है. यह दोनों अथर्वशब्दसे कहे जाते हैं. (विस्तार इसका भागवतमें वेदस्तुतिपर देखो) ॥ ५३ ॥ यह योगारंभ सनातन कर्म ब्रह्मचर्यसे सिद्ध होता है यही सम्पूर्ण भूतोंका उत्पत्तिरूप है जो इसे जानता है वही वेदवित् है ॥ ५४ ॥ वही लोकमें सिद्ध कहाता है उसेही सिद्धि है इसमें सन्देह नहीं. वेदके जाननेवाले मुनियों करके वह सब कर्मोंसे निर्मुक्त कहा गया है ॥ ५५ ॥ इस प्रकार वेदपारगामियोंने यही वैष्णवयज्ञ कहा है. यह वार्ता वेदके जाननेवाले वेद उपनिषद्में श्रान्त जन ब्राह्मण कहते हैं ॥ ५६ ॥ जन्मेजय बोले, मनके ग्रहण करनेसे योग चित्तकी कामनासे उपलब्ध होता है. हे मुनिश्रेष्ठ ! सो मैं इसके कारणके सुननेकी इच्छा करता हूं जैसा आप

मानते हैं ॥ ५७ ॥ वैशंपायन बोले, हे भारत ! इसका कारण कुछ बाह्य नहीं है, हे राजन् ! इसका कारण शरीरके अन्तर्गत मन है ॥ ५८ ॥
 जिससे शंसित ब्रतवाले ब्राह्मण वेद्य कहते हैं, उस अवेद्य और वेद्यको कर्मोंसे नहीं जान सकते ॥ ५९ ॥ हे राजन् ! सदा ब्रह्मके सेवन करनेवाले विनीत
 ब्राह्मणद्वारा जो सिद्धिके निमित्त सदा तत्त्वको जानता है ॥ ६० ॥ सदा पवित्र होकर नियत ब्रह्मकर्मसे युक्त हो हाथ जोड़कर ब्राह्मण गुरुके निकट उपास्थित
 हो ॥ ६१ ॥ तत्त्वका जाननेवाला प्रजात और संध्यासमय मोक्षके कर्मोंको करे विनीत और ब्रह्मभावसे सावधान रहे ॥ ६२ ॥ मनसे उत्तम वैष्णव पदको
 वैशंपायन उवाच ॥ न ह्यस्य कारणं किञ्चिद्बाह्यं भवति भारत ॥ अन्तर्गतं कारणं तु शारीरं मानसं नृप ॥ ५८ ॥ येन वेद्यं
 विदुर्मर्त्या ब्राह्मणाः शंसितव्रताः ॥ अवेद्यमपि वेद्यं च शक्यं वेत्तुं न कर्मणा ॥ ५९ ॥ ब्राह्मणेन विनीतेन सदा ब्रह्मनिषेविणा ॥
 सदा विदिततत्त्वेन सिद्धिदेतोर्मदीपते ॥ ६० ॥ सदा चैव शुचिर्भूता नियतो ब्रह्मकर्मणा ॥ उपतिष्ठेत सगुरुं बद्धाञ्जलिपुटो
 द्विजः ॥ ६१ ॥ सायं प्रातश्च तत्त्वज्ञो मोक्षकर्माणि कारयेत् ॥ विनीतो ब्रह्मभावेन समाहितमातिर्मुनिः ॥ ६२ ॥ संप्रपद्येत मनसा वैष्णवं
 पदमुत्तमम् ॥ ध्यायन्नेव प्रसीदेत समाहितमातिर्द्विजः ॥ ६३ ॥ गच्छते परमं ब्रह्म निर्विकारेण चेतसा ॥ अपुनर्भवभावज्ञो निर्ममो
 भावबन्धनात् ॥ ६४ ॥ तदेवाक्षरमित्याहुर्न तद्ब्रह्म सनातनम् ॥ तर्हि तत्कर्मयोगेन विद्यायोगेन दर्शितम् ॥ ६५ ॥ ब्राह्मणानां विनी-
 तानां वैष्णवे पदसंचये ॥ सर्वद्रव्यातिरिक्तानां कामयोगाविगर्हिणाम् ॥ ६६ ॥ अपुनर्भाविनां लोकाः कर्मयोगप्रतिष्ठिताः ॥ अनादानेन
 मनसा राजन्कर्मणि कर्मणि ॥ ६७ ॥ आदानाद्ध्यते जन्तुर्निरादानात्प्रमुच्यते ॥ ब्राह्मणेभ्यः क्रियावाप्तिर्जन्तोः पूर्वाजनाधिप ॥ ६८ ॥
 प्राप्त हो, इस प्रकार सावधान मतिवाला ब्राह्मण ध्यान करता हुआ प्रसन्न हो ॥ ६३ ॥ निर्धकार चित्तसे परब्रह्म को प्राप्त होकर फिर न लौटनेके भावका
 जाननेवाला निर्मम होकर भावबंधनसे पृथक् हुआ रहे ॥ ६४ ॥ जो सनातन ब्रह्म है उसीको अक्षर कहते हैं, वह कर्म और विद्यायोगसे दीखता है ॥ ६५ ॥
 विनीत ब्राह्मणोंको वैष्णवपदके संचयके निमित्त सब द्रव्योंसे अतिरिक्तोंको जो कामयोगकी निन्दा करते हैं ॥ ६६ ॥ जो फिर संसारमें न आनेकी
 इच्छासे कर्मयोगमें प्रतिष्ठित हैं, हे राजन् ! वे कर्मोंमें फलके नहीं चाहनेवाले मुक्त होते हैं ॥ ६७ ॥ प्राणी कर्मफलको ग्रहण करनेसे बंधता है त्यागनेसे

छूट जाता है. हे राजन् ! पूर्वजन्मके संस्कारसे ब्राह्मणोंके अर्थ क्रियाओंका प्राप्ति होती है ॥ ६८ ॥ इंद्रिय बंधनसे मुक्त हुआ परम पदको प्राप्त होकर फिर मनुष्य शरीरमें नहीं आता ॥ ६९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रिषायां सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ जन्मेजय बोले, उपसर्ग योग और ध्यान करनेके योग पदों, इनके प्रतापसे मनुष्य देहको फिर प्राप्त नहीं हो सका है ॥ १ ॥ वेशम्पायन बोले, जो तुम ब्रह्मादिक योगियोंकी अनेक प्रकारसे उत्पत्ति देखते हो उसे बुद्धिसे सुनो. जो मनसे ब्रह्मादिकी अनेक प्रकार प्राप्ति होती है ॥ २ ॥ शब्दादि पांच सिद्धियोंके गुण

मुक्तश्चेन्द्रियबन्धेन प्राप्तश्च परमं पदम् ॥ न भूयः पुनरायाति मानुषं देहविग्रहम् ॥ ६९ ॥ इति श्रीमहाभारते खि० हरि० भविष्य-
पर्वणि सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ जनमेजय उवाच ॥ उपसर्गं च योगं च ध्यातव्यं चैव यत्पदम् ॥ न भूयः पुनरायाति मानुषं
देहविग्रहम् ॥ १ ॥ वेशम्पायन उवाच ॥ शृणु विस्तरतः सर्वं यथा पृच्छेसि मेधया ॥ उपपन्नेन मनसा ब्रह्मादीनामनेकधा ॥ २ ॥
पञ्च सिद्धिगुणास्त्यक्त्वा पश्यतो ब्रह्मणा नृप ॥ योगयुक्तेन मनसा पञ्चेन्द्रियनिवासिनः ॥ ३ ॥ ब्रह्मणाश्चिन्तयानस्य ब्रह्मयज्ञं सना-
तनम् ॥ बहुरूपमनैश्वर्यात्प्रवर्तति निरोधनम् ॥ ४ ॥ पञ्चेन्द्रियस्य ग्रामस्य नवद्वारस्य भारत ॥ कामक्रोधस्य लोभस्य सन्नि-
रुद्धस्य मेधया ॥ ५ ॥ तेजसा मूर्ध्नि चाधाय धूमो दोधूयते महान् ॥ नीललोहितवर्णाभैः पीतैः श्वेतैश्च धातुभिः ॥ ६ ॥

त्यागन कर ब्रह्मको देखते हुए योगयुक्त मनसे पंचेन्द्रियनिवासी ब्रह्मको चिन्तन करनेसे ॥ ३ ॥ सनातन ब्रह्मयज्ञकी प्राप्ति होती है बहुरूप अनै-
श्वर्य वैराग्य बलके अभावसे ब्रह्मयज्ञ निरोधको प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ हे भारत ! नौ द्वारयुक्त पंच इंद्रियसमूह काम क्रोध लोभकी मेधासे रुका
हुआ ग्रामरूप शरीरका योग अनैश्वर्यसे रुक जाता है ॥ ५ ॥ भृकुटि नासिकाके मध्यमें धारण किये तेजसे नेत्रोंके प्राणिधान किये चित्तको संयुक्त
कर स्थित हुए योगीके धुआंरूप जल ओसकी समान बहुतसा निकलता है. नील लोहित वर्णकी समान कान्तिवाले पीत श्वेत धातुओंद्वारा ॥ ६ ॥

मंजीठके रंगकी समान कबूतरके रंगकी समान शुद्ध वैदूर्य और पद्मदलकी कान्तिकी समान ॥ ७ ॥ स्फटिकमणिके वर्ण नागेशकी सदृश इन्द्रगोपवर्णकी समान चन्द्रकिरण और जलकी समान ॥ ८ ॥ इन्द्रधनुषकी समान बहुत वर्णके धूमसमागमको प्राप्त होनेवाले एकसाथ मेघसम्पत्तिको प्राप्त होनेवाले ॥ ९ ॥ पक्षोंवाले पर्वतोंकी समान आकाशको रोकनेवाले धूमवर्ण मेघ जलके धारण करनेवाले जलसमूहको उगलते हुए पृथ्वीतलमें प्रवेश करते हैं ॥ १० ॥ शिरमें परमयोगसे युक्त सैकड़ों ज्वालाओंसे युक्त महान् अग्नि मनसे उपजी कंपित होती है ॥ ११ ॥ उसकी सहस्रों सैकड़ों ज्वाला-

माञ्जिष्ठरागवर्णाभैः कपोतसदृशैस्तथा ॥ शुद्धवैदूर्यवर्णाभैः पद्मवर्णदलप्रभैः ॥ ७ ॥ स्फटिकैर्मणिवर्णाभैर्नागेन्द्रसदृशैस्तथा ॥ इन्द्रगोपकवर्णाभैश्चन्द्रांशुसलिलप्रभैः ॥ ८ ॥ बहुवर्णैः सुधूमौघैरिन्द्रायुधसमप्रभैः ॥ संपतद्भिश्च युगपन्मेघैरिव समागमे ॥ ९ ॥ निरुच्यन्त इवाकाशे पक्षवद्भिरिवाद्भिभिः ॥ ते धूमवर्णाः संघाता घनाः सलिलधारिणः ॥ निर्वैमुश्चैव तोयौघान्विविशुर्वसुधातले ॥ १० ॥ मूर्ध्नि चैव महानग्निर्मानसो धूयते प्रभुः ॥ युक्तः परमयोगेन शतशोऽर्चिभिरावृतः ॥ ११ ॥ तस्यार्चैर्विस्फुलिङ्गानां सहस्राणि शतानि च ॥ विसृष्टः सर्वगात्रेभ्यो ज्वलन्निव युगाग्रयः ॥ १२ ॥ यावन्त्यो वर्षधारास्तु तावन्त्योऽर्च्योऽनलस्य च ॥ समेयुर्वा- रिधाराभिर्विपुले वसुधातले ॥ १३ ॥ वर्णाभ्यां युज्यमानस्य वायुर्दोधूयते महान् ॥ दिव्यसिद्धगुणोद्भूतः सूक्ष्मप्राणविवर्द्धनः ॥ १४ ॥ वेगवान्भीमनिर्घोषो बलवान्प्राणगोचरः ॥ तैरेव चाग्निसंघातैर्धातुभिः सह संगतः ॥ १५ ॥ सहस्रशोऽथ शतशो मूर्तिं कृत्वा पृथग्विधाम् ॥ अग्निर्वायुर्जलं भूमिर्धर्मतवो ब्रह्मचोदिताः ॥ १६ ॥

ओंके विस्फुलिंग प्रलयाग्निकी समान जलते हुए सब शरीरसे निकलते हैं ॥ १२ ॥ जितनी जलकी धारा हैं उतनीही अग्निकी चिनगारी हैं वे विपुल पृथ्वीतलमें जलधारासे मिलते हैं ॥ १३ ॥ श्वेत लोहित वर्णवाले दिव्य सिद्धगुणोंसे युक्त सूक्ष्म प्राणका बढ़ानेवाला ॥ १४ ॥ वेगवान् मयंकर शब्द-वाला बलवान् प्राणगोचर उन्हीं अग्निके संघात और धातुओंसे मिला हुआ ॥ १५ ॥ सैकड़ों सहस्रों मूर्ति पृथ्वीमें पृथक् करके अग्नि वायु जल

भूमि धातु ब्रह्मसे प्रीति हुए ॥ १६ ॥ समवायभावको प्राप्त हो बीजभूत ब्रह्मयोगसे संघातको प्राप्त हो धातुके कारणभावको प्राप्त हुए ॥ १७ ॥ जो ब्रह्म चक्षुके मध्यमें सूक्ष्म विराट्पुरुष है वह सूक्ष्म विराट्से बहुतसे पुरुषोंको रचता है ॥ १८ ॥ यह भगवान् विष्णु सनातन व्यक्त और अव्यक्त है यही सब विद्याओंके आधार और प्रलयमें प्रलयान्त करनेवाले हैं ॥ १९ ॥ उनको शिरमें धातुओंसे नद्ध ब्रह्मसे प्रेरित जन प्रवेश करते हैं वे अन्तर पुरुष सब सुखदुःखके ज्ञाता जीवमें प्रवेश करते हैं ॥ २० ॥ तब वे ब्रह्मसम्मित मूर्ति चेष्टा करने लगती हैं धरणी देवीको भेदन कर दशों दिशाओंमें

समवायत्वमापन्ना बीजभूता महीपते ॥ संघातं ब्रह्मवेगेन धातवो गमिता नृप ॥ १७ ॥ यद्ब्रह्म चक्षुषोर्मध्ये स सूक्ष्मः पुरुषो विराट् ॥ तयोरन्यान्बहून्सूक्ष्मान्तसृजे पुरुषोत्तमः ॥ १८ ॥ स एव भगवान्विष्णुर्न्यक्ताव्यक्तः सनातनः ॥ आधारः सर्वविद्यानां प्रलये प्रलयान्तकृत् ॥ १९ ॥ तं मूर्ध्नि धातुभिर्नद्धं विशन्ति ब्रह्मचोदिताः ॥ तेऽन्तरा पुरुषाः सर्वे ज्ञातारः सुखदुःखयोः ॥ २० ॥ अथ चेष्टितुमारब्धा मूर्तयो ब्रह्मसंमिताः ॥ भित्त्वा च धरणीं देवीं प्रापद्यन्त दिशो दश ॥ २१ ॥ इत्येते पार्थिवाः सर्वे ऋषयो ब्रह्मनिर्मिताः ॥ तत्रैव प्रलयं याता भूमित्वमुपयान्ति च ॥ २२ ॥ कर्मक्षयाद्विमुच्यन्ते धातुभिः कर्मबंधनैः ॥ कर्मक्षयाद्विमुक्तत्वादिन्द्रियाणां च बन्धनात् ॥ २३ ॥ तामेव प्रकृतिं यान्ति अज्ञतां कर्मगोचरैः ॥ क्षराद्भूमक्षयं चैव अग्निगर्भास्तपोमयाः ॥ २४ ॥ येन तन्तुरिवाच्छन्नो भावाभावः प्रवर्तते ॥ धूमाद्भ्रास्तु संभूता अभ्रात्तोय सुनिर्मलम् ॥ २५ ॥

प्राप्त होती हैं ॥ २१ ॥ यह सब पृथुभूतसे उत्पन्न होनेसे पार्थिवरूप सब ब्रह्मनिर्मित ऋषि फिर प्रलयको प्राप्त हुए भूमितलमें प्रविष्ट हो जाते हैं ॥ २२ ॥ कर्म क्षय होनेसे छूट जाते हैं कर्मबंधनवाली धातुओंसे छूट जाते हैं कर्मक्षयसे इन्द्रियोंके बंधनसे छूट ॥ २३ ॥ अज्ञानतासे कर्मगोचर होनेके कारण उसी प्रकृतिको प्राप्त हो संसारमें आते हैं अग्निहोत्रादि कर्म करनेवाले मनुष्य तपोमय रुच्छ चान्द्रायणादि कर्म करनेवाले होते हैं ॥ २४ ॥ जिससे तंतुकी समान अवच्छिन्न भाव अभाव प्रवृत्त होता है धूमसे मेघ और मेघसे निर्मल जल होता है ॥ २५ ॥

जलसे पृथ्वी होती है. पृथ्वीमें फल फलसे रस रससे शरीरधारियोंके प्राण होते हैं ॥ २६ ॥ यज्ञोंमें जो सनावन ब्रह्म है तन्मय ब्रह्म चैतन्य रूप रस है. जो बहुतसे करणोंसे प्रधान ब्रह्म कहा है वह तपसे श्रान्त तपव्रतमें परायण ब्राह्मणोंने प्रधानभूत कहा है ॥ २७ ॥ हे भारत ! वह अपने भावसे अव्यक्तसे व्यक्तताको प्राप्त हुआ सब भूतोंके अन्तरमें बिद्याके सहित विचरण करता है ॥ २८ ॥ कर्मकर्ताके विषयमें अनेक प्रकारसे स्थित तपसे दग्धपाप-
वालोंकी चक्षुसे नहीं दीखता ॥ २९ ॥ ब्रह्मवादी ज्ञानियोंको चक्षुसे दीखता है. वह दोनों भृकुटिके मध्यसे मेघयुक्त सूर्यकी समान निकलता है ॥ ३० ॥

जगती जलात्तु संभूता जगत्येव च यत्फलम् ॥ फलाद्रसस्तु संजज्ञे रसात्प्राणस्तु देहिनाम् ॥ २६ ॥ रसश्च तन्मयो जज्ञे यत्तद्ब्रह्म
सनातनम् ॥ प्रधानं ब्रह्म चोद्दिष्टं बहुभिः कारणान्तरेः ॥ ब्राह्मणैस्तपसि श्रान्तैः सत्यव्रतपरायणैः ॥ २७ ॥ अव्यक्ताव्यक्तिमापन्नं
स्वेन भावेन भारत ॥ अन्तस्थं सर्वभूतेषु चरन्तं विद्यया सह ॥ २८ ॥ कर्म कर्तेति राजेन्द्र विषयस्तमनेकधा ॥ नोपलभ्येत चक्षुर्भ्यां
तपसा दग्धकिल्बिषैः ॥ २९ ॥ उपलभ्येत चक्षुर्भ्यां ज्ञानिभिर्ब्रह्मवादिभिः ॥ निःसृतस्तु भ्रुवोर्मध्यान्मेघमुक्त इवांशुमान् ॥ ३० ॥
चरद्भिः पक्षिवल्लोके निर्द्वन्द्वैर्निष्परिग्रहैः ॥ योगधर्मेण कौरव्य ध्रुवमासाद्यते फलम् ॥ ३१ ॥ प्रादुर्भावं क्षयं चैव भूतस्य निधनं तथा ॥
विधत्ते शतशो ब्रह्मा संक्षये च भवेत्तदा ॥ ३२ ॥ कर्मणः कर्मयोगज्ञो भूतेभ्यो नात्र संशयः ॥ अविनाशाय लोकस्य धर्मस्याप्याय-
नेन च ॥ ३३ ॥ युगं द्वादशसाहस्रं सहस्रयुगसंहितम् ॥ एतद्ब्रह्मयुगं नाम युगानां प्रथमं युगम् ॥ ३४ ॥ सहस्रयुगयोरन्ते संहारः
प्रलयान्तकृत् ॥ सूक्ष्मं भवति लोकानां निर्विकारमचेतनम् ॥ ३५ ॥

वह लोकमें पक्षकी समान निर्द्वन्द्व विचरता है. हे कौरव्य ! योगधर्मसे अवश्य फल मिलता है ॥ ३१ ॥ भूतोंका प्रादुर्भाव क्षय और निधन ब्रह्माजी
सैकड़ों बार करते हैं. प्रलयके उपरान्त सृष्टि होती है ॥ ३२ ॥ कर्मसे कर्मयोगोंका जाननेवाला भूतोंके कर्मोंका जाननेवाला लोकके अविनाश और
धर्मकी पुष्टिके अर्थ ॥ ३३ ॥ बारह सहस्र युग सहस्रयुगके सहित अर्थात् तेरह सहस्र युगका ब्रह्माका युग प्रथम जानना चाहिये ॥ ३४ ॥ सहस्र
युगके अन्तमें प्रलयान्त करनेवाला संहार उपरिष्ठत होता है. उस समय लोक निर्विकार अचेतन और सूक्ष्मरूप होता है ॥ ३५ ॥

जब इस प्रकार सब सनातन जगत् प्रलयको प्राप्त होता है तब अपने कारणगुणोंसे सूक्ष्म ब्रह्म स्थित होता है ॥ ३६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायाम् अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ जन्मेजय बोले, हे महामुने ! विस्तारसे मैं प्राग्वंश श्रवण करनेकी इच्छा करता हूँ. हे ब्रह्मन् ! जो सगुणब्रह्मको जाननेवाले आद्ययुगोंके विस्तारसे युक्त हैं ॥ १ ॥ वैशंपायन बोले, जो आप बुद्धिपूर्वक सुननेकी इच्छा करते हैं वह मुझसे सुनिये. देवके ऊपर विश्वास करनेवाले युक्तमनसे सुनिये ॥ २ ॥ योगात्मा ब्रह्मसंभव भगवान् ऋद्धिको प्राप्त होकर प्राणियोंकी बहुतायत करते हुए ॥ ३ ॥ ब्रह्मासनके ऊपर बैठे

तथा प्रलयमापन्नं जगत्सर्वं सनातनम् ॥ ब्रह्म संपद्यते सूक्ष्मं निमित्तं कारणैर्गुणैः ॥ ३६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ जनमेजय उवाच ॥ प्राग्वंशं श्रोतुमिच्छामि विस्तरेण महामुने ॥ आद्ययोर्युगयोर्ब्रह्मन् ब्रह्मप्राप्तस्य सर्वशः ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ शृणु विस्तरशः सर्वं यन्मां पृच्छसि मेधया ॥ उपपन्नेन मनसा देवप्रत्ययसाधिना ॥ २ ॥ ऋद्धिं प्राप्तस्तु भगवान्योगात्मा ब्रह्मसंभवः ॥ भूतानां बहुलत्वं च चक्राश्वेश्वरः प्रभुः ॥ ३ ॥ स्थितो ब्रह्मासने ब्रह्मा विक्षिप्तः सहसा प्रभुः ॥ अचलेनैव भावेन स्थाणुभूतेन भारत ॥ ४ ॥ रक्तश्च मोक्षविषये सच ज्ञानमये पदे ॥ यस्मात्पदसहस्राणि प्रभवन्ति भवन्ति च ॥ ५ ॥ ब्रह्मयज्ञं तु यजते योगाद्वेदात्मकं सदा ॥ ब्रह्मणो विपुलं ज्ञानमैश्वर्यं च प्रवर्तते ॥ ६ ॥ ततः प्रथममैश्वर्यं युञ्जानेन प्रवर्तितम् ॥ ब्रह्मणा ब्रह्मभूतेन भूतानां हितामिच्छता ॥ ७ ॥ तदा त्वाकाशमैश्वर्यं युञ्जानस्य प्रवर्तते ॥ ब्रह्मणो ब्रह्मभूतस्य निर्विकारेण कर्मणा ॥ ८ ॥

हुए ब्रह्मा प्रभु सहसा विक्षिप्त हुए. हे भारत ! उस समय उनका स्थाणुकी समान अचलभाव हो रहा था ॥ ४ ॥ वह ज्ञानरूप मोक्षपदमें स्थित हुए थे कि जिससे सैकड़ों पद निकल कर प्रविष्ट हो जाते हैं ॥ ५ ॥ सब कालमें वेदात्मक ब्रह्मयज्ञको करते हैं उससे ब्रह्माका महाज्ञान और ऐश्वर्य बढ़ता है ॥ ६ ॥ तब ब्रह्मभूत और प्राणियोंके हितकी इच्छा करनेवाले ब्रह्माने प्रथम ऐश्वर्य प्रगट किया ॥ ७ ॥ निर्विकार कर्मसे ऐश्वर्यरूप आकाश

प्रवृत्त किया ॥ ८ ॥ तब निर्मल ब्रह्मा अविनाशी अन्तर्निष्ठ प्राप्त हुआ जो सब प्राणी और ब्रह्मादियों का संहाररूप है, जहां देहधारी योगके ध्रुव ऐश्वर्यरूप प्राप्त होते हैं ॥ ९ ॥ आकाशमें ऐश्वर्यसे सम्पन्न संयुगमें ब्रह्मादी और उससे प्रवर्तमान ऐश्वर्य वायुभावको करता है और बहुतसे विकारोंमें पड़े हुए महाबलोंसे संवृत ॥ १० ॥ और इन विकारोंसे चारों ओर ढके और निरुद्ध हुए ध्रुव ऐश्वर्यको प्राप्त हो ब्राह्मण सिद्ध हो जाते हैं ॥ ११ ॥ तब वह शरीरादिसे निकलकर आकाशमें धावमान होता है, निरालम्ब अनालम्ब्य मनसे ॥ १२ ॥ ऐश्वर्यभूत

तदान्तर्निष्ठं संप्राप्तं निर्मलं ब्रह्म चाव्ययम् ॥ संहारः सर्वभूतानां नराणां ब्रह्मादिनाम् ॥ ध्रुवमैश्वर्ययोगानां प्रतिपद्यन्ति देहिनः ॥ ९ ॥ आकाशमैश्वर्यभूतेन संयुगे ब्रह्मादिना ॥ प्रवर्तमानमैश्वर्यं वायुभूतं करोति च ॥ विकारैर्बहुभिः प्राप्तेः संपत्ताद्भिर्महाबलैः ॥ १० ॥ एतैर्विकारैः संवृत्तैर्निरुद्धैश्च समन्ततः ॥ ध्रुवमैश्वर्यमापन्नः सिद्धो भवति ब्राह्मणः ॥ ११ ॥ शरीरादभिनिष्क्रम्य आकाशेन प्रधावति ॥ निरालम्बो निरालम्बानालम्ब्य मनसा ततः ॥ १२ ॥ ऐश्वर्यभूतो भूतात्मा चरन्दिवि न दृश्यते ॥ चक्षुर्भिर्बहुभिलोकैः पुरंदरसमे-
रपि ॥ १३ ॥ ओंकारं ये त्वधीयन्ते मनसा ब्रह्मपूजिताः ॥ विभक्ताः सर्वकर्मभ्यस्ते यं पश्यन्ति साधवः ॥ १४ ॥ एतादृि परमं ब्रह्म ब्राह्मणानां मनीषिणाम् ॥ अन्तश्चरति भूतानां त्रिद्वि चेतनया सह ॥ १५ ॥ एष शब्दो महानादः पुराणो ब्रह्मसंभवः ॥ वायु-
भूतोऽक्षरं प्राप्तो वदन्त्येवं द्विजातयः ॥ १६ ॥ अह्मी रूपसंपन्नो धातुभिः सह संगतः ॥ अन्तश्चरति भूतेषु कामकारकरो वशी ॥ १७ ॥ एतत्पूर्वमनुध्याय मनसा पूरयन्निव ॥ वेदात्मकं तदा यज्ञं चिन्तयन्तो मनीषिणः ॥ १८ ॥

भूतात्मा चरता हुआ स्वर्गमें नहीं दीखता है, चाहे पुरन्दरकी समान चक्षुभी क्यों न हों ॥ १३ ॥ जो ब्राह्मणश्रेष्ठ मनसे ओंकारका ध्यान करते हैं वे महात्मा सब कर्मोंसे रहित होकर उनको देखते हैं ॥ १४ ॥ ब्राह्मण मनीषियोंका यही परब्रह्म है, यह चेतनके सहित भूतोंके अन्तरमें फिरता है सो जानो ॥ १५ ॥ यह शब्दरूपी महानाद पुरातन और ब्रह्मसंभव है यह वायुभूत अक्षरको प्राप्त है, इस प्रकार द्विजाति कहते हैं ॥ १६ ॥ स्वरहित रूपसे सम्पन्न धातुओंसे संगत हुआ काम कर सब कुछ करनेवाला वशी प्राणियोंके अन्तःकरणमें चरता है ॥ १७ ॥ यह प्रथम ध्यान कर मनसे पूर्ण

करता हुआ बुद्धिमान् वेदान्तयज्ञको चिन्ता करता हुआ ॥ १८ ॥ पवित्र ब्राह्मण चतुर उसके यशको प्राप्त होता हुआ ब्रह्मशोकमें उत्तम वैष्णवपदकी इच्छा करता हुआ ॥ १९ ॥ उस पदप्राप्तिके निमित्त विगतज्वर होकर सब किया करता है. हे राजन् ! यह जन्म देनेवाले संसारकी इच्छा नहीं करते ॥ २० ॥ विश्व तैजस प्राज्ञ इन तीनोंको समर्पण करनेवाले माल्य उपहार आदिसे सत्यपराक्रमवाले परात्मा विष्णुको यजन करते हैं ॥ २१ ॥ वे वेदप्रमाण युक्त यजन और विक्रम करके तथा ब्रह्माजी वेदोक्त वचनोंसे वैष्णवतेजको प्राप्त हो ॥ २२ ॥ ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मण तथा ब्रह्मयज्ञ करनेवाले

ब्राह्मणाः शुचयो दान्ता यशोयुञ्जस्तद्व्या ॥ ब्रह्मलोकं काङ्क्षमाणा वैष्णवं पदमुत्तमम् ॥ १९ ॥ पदहेतोः क्रिया सर्वाः कुर्वन्ति विगतज्वराः ॥ न ह्येते प्रसवादाने भवमिच्छन्ति भारत ॥ २० ॥ त्रिभिर्माल्योपहारैश्च प्रतिभावैश्च वै द्विजाः ॥ यजन्ति परमात्मानं विष्णुं सत्त्वपराक्रमम् ॥ २१ ॥ यजनं विक्रमं चैव ब्रह्मपूर्वा प्रचक्रिरे ॥ ब्रह्मापि वैष्णवं तेजो वेदोक्तैर्वचनैर्नृप ॥ २२ ॥ ब्राह्मणैर्ब्रह्मविद्भिश्च ब्रह्मज्ञैर्ब्रह्मवादिभिः ॥ शुचिभिः कर्मनिर्मुक्तैः ॥ सत्यव्रतपरायणैः ॥ २३ ॥ धातुभिर्मोक्षकाले च महात्मा संप्रदृश्यते ॥ तदेव परमं ब्रह्म वैष्णवं परमाद्भुतम् ॥ २४ ॥ रसात्मकं तदैश्वर्यं विकारान्ते प्रदृश्यते ॥ घोररूपा विकारास्ते व्यथयन्ति महात्मनः ॥ २५ ॥ संच्छाद्यातीव तोयेन क्षुभ्यमाणो विचेतनः ॥ ऊर्मिभिश्छाद्यते चैव शीतोष्णाभिर्विकारतः ॥ २६ ॥ महार्णवगतश्चैव दह्यते न च सज्जते ॥ मग्नश्चैव महानद्याः सलिले नैव सीदति ॥ २७ ॥ सीदमानश्च सलिले स शीते पात्यते बलात् ॥ आसनाच्छादनाच्चैव मुच्यमानो विचेतनः ॥ २८ ॥

ब्रह्मवादियोंद्वारा जो पवित्र कर्मसे निर्मुक्त और सत्यव्रतमें परायण हैं ॥ २३ ॥ तेजबलयुक्त ब्रह्मको मोक्षकालमें कोईही महात्मा देखते हैं. वही परम अद्भुत वैष्णवोंका परम स्थान है ॥ २४ ॥ वह रसात्मक ऐश्वर्य प्रकारान्तरमें दीखता है वे घोररूप विकार महात्माको दुःखित करते हैं ॥ २५ ॥ अत्यन्त जलसे आच्छादित और तरंगोंसे क्षुभित विचेतन जीव शीत उष्ण तरंगोंसे क्षुभित किया जाता है ॥ २६ ॥ और महासमुद्रमें गत जीव दग्ध होता है और दग्ध हुई महानदीके जलसे दुःखित होता है ॥ २७ ॥ वह जलमें दुःखी हुआ बलसे शीतमें डाला जाता है तब वह आसन

आच्छादनसे छूटा हुआ विचेतन हो ॥ २८ ॥ मेघमें प्राप्त हुआ जलसे सींचा जाता है और शुक्लवर्णवाले स्रोतोंसे शिरकी ओर वारंवार सींचा जाता हुआ ॥ २९ ॥ ऊर्ध्व ज्योति शुक्ल पीतसे बाधित होता है, गंभीर जलसे पूर्ण बिजलियोंसे प्रकाशित ॥ ३० ॥ इन विकारोंसे संवृत और अनेक प्रकारसे निरुद्ध ध्रुव ऐश्वर्यको प्राप्त होकर ब्राह्मण सिद्ध होता है ॥ ३१ ॥ वह रसात्मक ऐश्वर्य जिह्वाग्रसे निकला हुआ सहस्रधारायुक्त हो मेघत्वको प्राप्त हुआ ॥ ३२ ॥ सब प्राणियोंके हेतुभूत प्राप्तयोग करके धातुओंके अर्थ योगसे सिद्ध ईश्वर अनेक प्रकारके रसोंको सृजता है ॥ ३३ ॥ तेजरूप

इवमे प्रपद्यमानश्च तोयेन परिषिच्यते ॥ शुक्लवर्णेन बहुना स्रोतसा मूर्ध्नि सर्वशः ॥ २९ ॥ ऊर्ध्वं ज्योतिरवेक्षंश्च शुक्लैः पीतैश्च वाच्यते ॥ वारिपूर्णैः सुगम्भीरैर्विद्युद्भिरेव भासितैः ॥ ३० ॥ एतैर्विकारैः संवृत्तैर्निरुद्धैश्चैव सर्वशः ॥ ध्रुवमैश्वर्यमासाद्य सिद्धो भवति ब्राह्मणः ॥ ३१ ॥ रसात्मकं तदैश्वर्यं जिह्वाग्रादभिनिःसृतम् ॥ सहस्रधारं विततं मेघत्वं समुपागतम् ॥ ३२ ॥ रसांश्च विविधान्योगान्तसंसिद्धः सृजते प्रभुः ॥ धात्वर्थं सर्वभूतानां योगप्राप्तेन हेतुना ॥ ३३ ॥ तेजसो रूपमैश्वर्यं विकारैः सह वर्द्धते ॥ आत्मनो विघ्नजननं स्वस्थो ब्राह्मणकारणे ॥ ३४ ॥ उग्ररूपैर्विरूपैश्च हन्यते दण्डपाणिभिः ॥ घोररूपैः सुगम्भीरैः पिङ्गाक्षैर्नरविग्रहैः ॥ ३५ ॥ नेत्रं समुद्धरन् भीमं जीह्वाग्रं चास्य विन्दति ॥ नदन्ति युगपन्नादं जृम्भमाणाः पुनः पुनः ॥ ३६ ॥ पुनरेव तदा भूत्वा बहुरूपास्तदाभवन् ॥ नृत्यमानाः प्रगायन्ति तर्पयन्तो विशेषतः ॥ ३७ ॥ स्त्रीभूताश्च ततः सर्वे युञ्जानाश्चावलम्बरे ॥ कण्ठेषु बहुरूपत्वाद्विघ्नैश्चैव प्रलोभयन् ॥ ३८ ॥

ऐश्वर्य और आत्माके विघ्न करनेवाले विकारोंके सहित बढ़ता है और कारणमें स्वस्वरूप है ॥ ३४ ॥ उग्ररूप विरूप दण्डधारी घोररूप अतिगंभीर पिंगल नेत्रोंवाले पुरुषोंसे ताडित हुआ ॥ ३५ ॥ भयानक नेत्रोंको निकालता हुआ जिह्वाग्रको छेदन करता है और वारंवार जंभाई लेता हुआ एक साथ शब्द करता है ॥ ३६ ॥ फिर अनेकरूप होता है तब अनेकरूपसे नाचते गाते विशेषकर तृप्त करते हैं ॥ ३७ ॥ और वे सब स्त्रीरूप हुए बहुत रूपोंसे विघ्नोंसे लोभ देनेवाले कंठमें लटकते हैं ॥ ३८ ॥

और मधुर वचनोंसे डरे हुए पुरुषोंकी समान नहीं बोलते हैं और एककालमें सब अपना शिर चरणोंमें रखते हैं ॥ ३९ ॥ योगके प्रसादकी आकांक्षा करनेवाले योगके भीतर बहुत प्रकारको कहनेवाले बहुत प्रकार नाचते हुए फिरते हैं ॥ ४० ॥ इन विकारोंसे सब प्रकारके निरुद्ध और आच्छादित हुआ निश्चल ऐश्वर्यको प्राप्त हुआ ब्राह्मण सिद्ध होता है ॥ ४१ ॥ वहां वे जलकी बूंदें सूर्यकी किरणोंकी समान तेजस्व ऐश्वर्यको प्राप्त होती हैं ॥ ४२ ॥ वही जल मेघरूप हो आकाशमें प्राप्त होकर लोकमें चन्द्रसूर्यकी गतिको प्राप्त हो जाता है ॥ ४३ ॥ जो चन्द्रसूर्यात्मक सवन ज्योति है यही वह ध्रुव

मधुरैराभिधानैश्च व्याहरन्ति न भीतिवत् ॥ पतन्ति युगपत्सर्वे पादयोर्मूर्धाभिर्युताः ॥ ३९ ॥ प्रसादं काङ्क्षमाणाश्च योगस्यान्तरविघ्नतः ॥ बहुप्रकारं कथयन्त्यन्ति च तरन्ति च ॥ ४० ॥ एतैर्विकारैः संवृत्तेर्निरुद्धैश्चैव सर्वशः ॥ ध्रुवमैश्वर्यमासाद्य सिद्धो भवति ब्राह्मणः ॥ ४१ ॥ तदचिष इवाग्नेया आदित्यस्यैव रश्मयः ॥ तेजोरूपकमैश्वर्यं जनितास्तेजविन्दवः ॥ ४२ ॥ ज्योतींषि चैव संवृता आकाशे गुणसंवृताः ॥ चरन्ति लोके सततं सूर्याचन्द्रमसोर्भतिम् ॥ ४३ ॥ चन्द्रसूर्यात्मकं दिव्यं ज्योतिः सवनमुत्तमम् ॥ एतद्विभ्राजते लोके कालचक्रं ध्रुवं वरम् ॥ ४४ ॥ अर्धमासाश्च मासाश्च ऋतुसंवत्सराण्यथ ॥ क्षणा लवा मुहूर्ताश्च कलाः काष्ठास्तथैव च ॥ ४५ ॥ अहोरात्रप्रमाणं च निमिषोन्मेषणं तथा ॥ ताराणां गतयश्चैव ग्रहाणां च विशेषतः ॥ ४६ ॥ अथ पार्थिवमैश्वर्यं विकाराग्रहसंभवम् ॥ योगयुक्तास्त्वाभिग्रस्ता यान्त्यन्ते ह्यचलासनात् ॥ ४७ ॥ अलोभाच्छिद्यते सद्यो वेपमानो नु कीर्त्यते ॥ सीदते वसुधामध्ये विद्यमानः पुनः पुनः ॥ ४८ ॥

कालचक्र संसारमें प्रकाशित होता है ॥ ४४ ॥ आधे महीने, महीने, ऋतु, संवत्सर, क्षण, लव, मुहूर्त, कला, काष्ठा ॥ ४५ ॥ अहोरात्रका प्रमाण निमेष, उन्मेष और विशेषकरके तारे और ग्रहोंकी गति ॥ ४६ ॥ विकारोंके ऐश्वर्यसे उत्पन्न हुआ कालचक्र है। पार्थिव ऐश्वर्यको अभिग्रस्त हुए योगी अतुलरूप आसनसे गिराते हैं ॥ ४७ ॥ अलोभसे ऐश्वर्य छेदित करते हैं और विघ्नसेभी योगी कांपता है और पृथ्वीमें बारंवार भिद्यमान हुआ दुःखी

होता है ॥ ४८ ॥ भूतोंको अनेकरूप और अन्य लोकवासियोंके विषयोंसे शीघ्र युक्त होता है और संक्षेपसे रुक जाता है ॥ ४९ ॥ फिर सब प्रकारसे पार्थिव ऐश्वर्यको सेवन करता हुआ मूर्तिवाली धातुओंसे मारा जाता है ॥ ५० ॥ शक्ति तोमर निखिंश और अनेक प्रकारकी गदाओंसे तथा असि और अनेक प्रकारकी क्षुरधाराओंसे पातित किया जाता है ॥ ५१ ॥ और सुतीक्ष्ण भ्रमभेदी बाणाग्रसे भेदन किया जाता है, इस प्रकारके विकारोंसे निवृत्त और सब प्रकारसे निरुद्ध हुआ ॥ ५२ ॥ ऐश्वर्यको प्राप्त हुआ ब्राह्मण सिद्ध होता है तब फिर विकारसे पार्थिव ऐश्वर्यसे रहित है ॥ ५३ ॥ योगी समा-

भूतानां बहुरूपेश्च अन्यैश्च तलवासिभिः ॥ विषयैर्युज्यते क्षिप्रं संक्षेपात्समवरुद्धयते ॥ ४९ ॥ ततः पार्थिवमैश्वर्यं सेवमानश्च सर्वतः ॥ मूर्तिमाद्भिश्च बहुधा धातुभिः स च हन्यते ॥ ५० ॥ शक्तितोमरनिखिंशैर्गदाभिश्चाप्यनेकधा ॥ असिभिः पात्यते चैव क्षुरधारेः सहस्रशः ॥ ५१ ॥ भिद्यते चैव बाणाग्रैः सुतीक्ष्णैर्मर्मभेदिभिः ॥ एभिर्विकारैर्निवृत्तैर्निरुद्धैश्चैव सर्वशः ॥ ५२ ॥ ध्रुवमैश्वर्यमापन्नः सिद्धो भवति ब्राह्मणः ॥ ततः पार्थिवमैश्वर्यं निर्मुक्तस्य विकारतः ॥ ५३ ॥ प्रादुर्भवाति संजाते समाधौ प्रलयं गते ॥ दिव्यं गन्ध समाग्राय दिव्यार्थास्ताञ्छुणोति च ॥ ५४ ॥ दिव्यरूपेश्च पुरुषोऽिच्छयते न च भिद्यते ॥ गच्छन्तसुकृतिनां चान्तः प्रधानात्मा क्षरन्निव ॥ ५५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततोऽन्यां धारणां गत्वा मनसा स पितामहः ॥ ब्रह्मकर्मसमारम्भं निर्मुक्तेनान्तरात्मना ॥ १ ॥ सर्वाङ्गधारणां कृत्वा मनसा प्रहसन्निव ॥ ब्रह्मयोगेन च ब्रह्मा सृजते मनसा प्रजाः ॥ २ ॥

विके नाशमें प्रगट होकर दिव्यगंधको सुंघता हुआ दिव्य पदार्थोंका श्रवण करता है ॥ ५४ ॥ दिव्य पुरुषोंसे छेदित होकरभी भेदको प्राप्त नहीं होता है और सुकृतियोंके अन्तःकरणमें प्रविष्ट होता अर्थात् सबके अन्तःकरणमें प्रविष्ट हो जाता है ॥ ५५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्य-पर्वणि भाषायाम् एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ वैशम्पायन बोले, फिर मनसे ब्रह्माजी दूसरी धारणाको प्राप्त हुए (अर्थात् योगी निर्मुक्त अन्तरात्मासे ब्रह्मकर्म समारंभको प्राप्त हो सर्वज्ञ हो जाता है) ॥ १ ॥ सर्वाङ्गकी धारणा करते हुए ब्रह्मयोगसे ब्रह्मा मानसी प्रजा उत्पन्न करते हैं ॥ २ ॥

चक्षुसे वह रूपसंपन्न प्रभु प्रजा रचते हैं. नासिकाके अग्रभागसे गन्धर्व चित्र विचित्र वस्त्रवालोंको रचते हैं ॥ ३ ॥ और तुम्बरु आदि सैकड़ों गन्धर्व नाचने बजानेमें कुशल सामगानमें चतुरोंको रचते हैं ॥ ४ ॥ उन योगके जाननेवाले स्वयंभू भगवान् प्रभुने सुन्दर नेत्र और सुन्दर केशोंवाली सुन्दर मुखवाली ॥ ५ ॥ शतपत्रके कमलसे विराजमान सुन्दर सुन्दर वाणीसे सेवनीय ब्राह्मीमूर्तिके आश्रय लक्ष्मीको ॥ ६ ॥ सब प्रकारसे समाधान चित्तसे निर्माण किया. इस प्रकार सब प्राणियोंके धारण करनेवाले भूतात्माने भावयोगसे रचना करके ॥ ७ ॥ नेत्रोंसे रूपसम्पन्न अप्सराओंको बनाया और नासिकाके

चक्षुषा रूपसंपन्ना ह्यप्सराः सृजते प्रभुः ॥ नासिकाग्राच्च गन्धर्वान्सुचित्राम्बरवाससः ॥ ३ ॥ तुम्बरुप्रमुखान्सर्वाञ्छतशोऽथ सहस्रशः ॥ नृत्यवादित्रकुशलान्कुशलान्सामगीतिषु ॥ ४ ॥ ब्रह्मयोगेन योगज्ञः स्वयंभूर्भगवान्प्रभुः ॥ चारुनेत्रां सुकेशान्तां सुभ्रुं चारुनिभाननाम् ॥ ५ ॥ पद्मेन शतपत्रेण चारुणा सुविराजिताम् ॥ स्वक्षां शुचिगिरं सेव्यां ब्राह्मीं मूर्तिमतीं श्रियम् ॥ ६ ॥ ससृजे मनसा ब्रह्मा सम्यक् प्रोक्तेन चेतसा ॥ भावयोगेन भूतात्मा सर्वप्राणभृतां नृप ॥ ७ ॥ चक्षुषो रूपसंपन्नाः सृजत्सोऽप्सरसः प्रभुः ॥ नासिकाग्राच्च गन्धर्वान्सुवासः सुप्रवादितान् ॥ ८ ॥ गानप्रभाषं संचक्रे गन्धर्वाणामशेषतः ॥ अन्येषां चैव विप्राणां गानं ब्रह्म प्रभाषितम् ॥ ९ ॥ पद्भ्यां सृजति भूतानि गतिमन्ति ध्रुवाणि च ॥ नरकिन्नरयक्षांश्च पिशाचोरगराक्षसान् ॥ १० ॥ गजान्सिंहांश्च व्याघ्रांश्च मृगांश्चैव सहस्रशः ॥ तृणजातींश्च बहुधा भावहेतोश्चतुष्पदान् ॥ ११ ॥ ये तु हस्तान्निखादन्ति कर्मप्राप्तेन हेतुना ॥ हस्तेभ्यः कर्म ससृजे मन्तव्यं मनसा तथा ॥ १२ ॥

अग्रभागसे सुवास श्रेष्ठ बजानेवाले गन्धर्वोंको निर्मित किया ॥ ८ ॥ सम्पूर्ण गन्धर्वोंके निमित्त गानविद्याका अधिकार दिया और ब्राह्मणोंके निमित्त सामवेदका गान विधान किया ॥ ९ ॥ चरणोंसे गतिवाले जीव उत्पन्न किये. नर किन्नर यक्ष पिशाच उरग राक्षस ॥ १० ॥ गज सिंह व्याघ्र सहस्रों मृग बहुतसी तृणजाति चौपाये तिनकोंसे जीनेवाले रचे ॥ ११ ॥ जो प्राणी हाथमें लेकर भोजन करते हैं तिनको कर्महेतुसे ब्रह्माने अपने हाथोंसे रचा है और मनसे उनकी रचना की है ॥ १२ ॥

और प्राणियोंके सुखको इच्छासे प्राणादि अनेक प्रकारके पवन कार्योंकी सृष्टि हुई ॥ १३ ॥ हृदयसे गौ और बाहोंसे पाक्षियोंको निर्माण किया औरभी विशेष जीव उन उन विशेष नटवत्त वेषोंद्वारा उत्पन्न किये हैं ॥ १४ ॥ और ज्वालित तेजस्वी अंगिरा ऋषि ब्रह्मवंश करनेवाले दिव्य छः इन्द्रियोंसे युक्तको शरीरसे उत्पन्न किया ॥ १५ ॥ और योगेश्वर प्रभुने योगद्वारा मौंके अन्तरसे ब्रह्मवंशके करनेवाले परम धर्मात्मा भृगुको उत्पन्न किया ॥ १६ ॥ ललाटेके मध्यसे प्रिय शरीर नारदजीको उत्पन्न किया. महायोगी पितामहने शिरसे सनत्कुमारको उत्पन्न किया ॥ १७ ॥ जो कि

वायुना स विसर्गं च भूतानां सुखमिच्छता ॥ उपतस्थे तद्दानंदं पञ्चेन्द्रियसमाधिना ॥ १३ ॥ हृदयादसृजद्बाधो बाहुभ्यां पाक्षिणस्तथा ॥ अन्यानि चैव सत्त्वानि तैस्तैर्वेषैः पृथग्विधैः ॥ १४ ॥ ऋषिं त्वङ्गिरसं चैव मुनिं ज्वालिततेजसम् ॥ ब्रह्मवंशकरं दिव्यं व्यतिषिक्तषण्डिन्द्रियम् ॥ १५ ॥ भ्रुवोन्तरादजनयद्योगाद्योगेश्वरः प्रभुः ॥ ब्रह्मवंशकरं दिव्यं भृगुं परमधार्मिकम् ॥ १६ ॥ ललाटमध्यादसृजन्नारदं प्रियविग्रहम् ॥ सनत्कुमारं मूर्ध्नि महायोगी पितामहः ॥ १७ ॥ अभिषिक्तं तु सोमं च यौवराज्ये पितामहः ॥ ब्राह्मणानां च राजानं शाश्वतं रजनीश्वरम् ॥ १८ ॥ तपसा महता युक्तो ग्रहेः सह निशाकरः ॥ च चार नभसो मध्ये प्रभाभिर्भासयन् जगत् ॥ १९ ॥ स गात्रैर्भगवान्योगान्मनसा सिद्धिमागतः ॥ ससृजे सर्वभूतानि स्थावराणि चराणि च ॥ २० ॥ तत्र स्थानानि भूतानां योगांश्चैव पृथग्विधान् ॥ निधत्ते शतशो ब्रह्मा सर्वभूतपितामहः ॥ २१ ॥ एष ब्रह्ममयो यज्ञो योगः सांख्यश्च तत्त्वतः ॥ विज्ञानं च स्वभावं च क्षेत्रं क्षेत्रज्ञमेव च ॥ २२ ॥

पितामहने सोमको यौवराज्यमें अभिषिक्त किया यह रजनीचर ब्राह्मणोंके राज्यमें अभिषिक्त हुए हैं ॥ १८ ॥ चन्द्रमा ग्रहोंके साथ बडे तपसे युक्त हो प्रभासे जगत्को प्रकाशित करता हुआ आकाशमें विचरने लगा ॥ १९ ॥ तब अपने शरीरसे भगवान् योगसे सिद्धिको प्राप्त हो स्थावर जंगम सब प्राणियोंको निर्मित करने लगे ॥ २० ॥ वहांके स्थान और प्राणी और अनेक प्रकारके योग सब भूतोंके पितामहने निर्मित किये ॥ २१ ॥ यही ब्रह्ममय

यज्ञ योग सांख्य हे विज्ञान स्वभाव क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ है ॥ २२ ॥ एकपदे पृथक्पदे उत्पत्ति और निधनकाल, कालक्षय आत्मानुभवविज्ञान जानना चाहिये ॥ २३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ जन्मेजय बोले, हे भगवन् ! ब्रह्मप्राप्तिका कारण प्रथम सतयुग जिसमें सब धर्मका अन्तर्भाव है सुना. हे ब्रह्मन् ! अब क्षत्रियोंका योगधर्म सुननेकी इच्छा करता हूं ॥ १ ॥ संक्षेप विस्तारके सहित बहुत नियमोंसे युक्त उपाय जाननेवालोंसे कथित और यज्ञोंसे शोभित कहो ॥ २ ॥ वैशम्पायन बोले, यह वार्ता यज्ञकर्मोंसे अर्चित में

एकत्वं च पृथक्त्वं च संभवो निधनं तथा ॥ कालः कालक्षयश्चैव ज्ञेयो विज्ञानमेव च ॥ २३ ॥ इति श्रीमन्महाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ जनमेजय उवाच ॥ श्रुतं ब्रह्मयुगं ब्रह्मयुगानां प्रथमं युगम् ॥ क्षत्रस्यापि युगं ब्रह्मश्रोतुमिच्छाम्यहं प्रभो ॥ १ ॥ संक्षेपं सविस्तारं नियमैर्बहुभिश्चितम् ॥ उपायज्ञैश्च कथितं क्रतुभिश्चैव शोभितम् ॥ २ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतत्ते कथयिष्यामि यज्ञकर्मभिरर्चितम् ॥ दानधर्मैश्च विविधैः प्रजाभिरुपशोभितम् ॥ ३ ॥ तेऽङ्गुष्ठमात्रा मुनय अर्दिताः सूर्यराशिभिः ॥ मोक्षप्राप्तेन विधिना निराबाधेन कर्मणा ॥ ४ ॥ प्रवृत्ते चाप्रवृत्ते च नित्यं ब्रह्मपरायणाः ॥ परायणस्य संगम्य ब्रह्मणस्तु महीपते ॥ ५ ॥ श्रीवृताः पावनाश्चैव ब्राह्मणाश्च महीपते ॥ चरितं ब्रह्मचर्याश्च ब्रह्मज्ञानावबोधिनाः ॥ ६ ॥ पूर्णे युगसहस्रान्ते प्रभावे प्रलयं गताः ॥ ब्राह्मणा वित्तसंपन्ना ज्ञानसिद्धाः समाहिताः ॥ ७ ॥

तुमसे कहूंगा जो अनेक प्रकारके दान धर्म और प्रजाओंसे शोभित है ॥ ३ ॥ वे ब्रह्मवृत्तियोंसे सम्पन्न ज्ञानसिद्ध सावधान चित्त होते हैं और सूर्यकी किरणोंसे अर्दित हुए अंगुष्ठमात्र मुनि मोक्षप्राप्तिके विधानसे प्रलयको प्राप्त होकर ॥ ४ ॥ यज्ञादि और शमादिमें प्रवृत्त ब्रह्मपरायण एकवेदमें परायण वेदोक्त कर्ममें तत्पर ॥ ५ ॥ वित्तसे सम्पन्न श्रीसंज्ञक साम और यजुर्वेदोंकी ऋचाओंसे सम्पन्न ब्रह्मचर्य और ब्रह्मज्ञानमें बोधित ॥ ६ ॥ पूर्ण सहस्रयुगके अन्तमें वित्तसे सम्पन्न और ज्ञानसिद्ध सावधान ब्राह्मण पूर्वकल्पमें लयको प्राप्त हुएही आगेके कल्पमें ब्राह्मण होते हैं ॥ ७ ॥

तिनमेंसे व्यतिरिक्त इन्द्रियवाले योगात्मा विष्णु ब्रह्मासे उत्पन्न हो दक्षप्रजापतिके रूपसे अनेक प्रजाकी सृष्टि करते हैं ॥ ८ ॥ अक्षरसे सौम्य ब्राह्मण और सत्त्वरजोगुण ब्रह्मसे क्षत्रिय रजोगुणके विकारसे वैश्य और तमसे शूद्र हुए हैं ॥ ९ ॥ और सत् रज तम इन तीनों गुणोंसे विष्णुने ब्राह्मण क्षत्रियादि वर्णोंको उत्पन्न किया ॥ १० ॥ वर्णत्वको प्राप्त हो प्रजा लोकमें चार प्रकारसे विभक्त हुई. ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र ॥ ११ ॥ एकलिंगवाले पृथक् धर्मवाले दो चरणवाले परम अद्भुत कर्मफलके भोगनेको सम्पन्न और सब कर्मोंकी गति जाननेवाले हैं ॥ १२ ॥ इनमें तीन वर्णोंकी

व्यतिरिक्तेन्द्रियो विष्णुर्योगात्मा ब्रह्मसंभवः ॥ दक्षः प्रजापतिर्भूत्वा सृजते विपुलाः प्रजाः ॥ ८ ॥ अक्षराद्ब्राह्मणाः सौम्याः क्षरात्क्षत्रियवान्धवाः ॥ वैश्या विकारतश्चैव शूद्रा धूमविकारतः ॥ ९ ॥ श्वेतलोहितकैवर्णेः पीतेर्नीलैश्च ब्राह्मणाः ॥ अभिनिर्वर्तिता वर्णाश्चिन्तयानेन विष्णुना ॥ १० ॥ ततो वर्णत्वमापन्नाः प्रजा लोके चतुर्विधाः ॥ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्चैव महीपते ॥ ११ ॥ एकलिङ्गाः पृथग्धर्मा द्विपदाः परमाद्भुताः ॥ यातनायाभिसंपन्ना गतिज्ञाः सर्वकर्मसु ॥ १२ ॥ त्रयाणां वर्णजातानां वेदप्रोक्ताः क्रियाः स्मृताः ॥ तेन ब्राह्मणयोगेन वैष्णवेन महीपते ॥ १३ ॥ प्रज्ञया तेजसा योगात्तस्मात्प्राचेतसः प्रभुः ॥ विष्णुरेव महायोगी कर्मणामन्तरं गतः ॥ १४ ॥ ततो निर्माणसंभृताः शूद्राः कर्मविवर्जिताः ॥ तस्मान्नाहन्ति संस्कारं न ह्यत्र ब्रह्म विद्यते ॥ १५ ॥ यथाग्नौ धूमसंघातो ह्यरण्या मध्यमानया ॥ प्रादुर्भूतो विसर्पन्वै नोपयुञ्जति कर्मणि ॥ १६ ॥ एवं शूद्रा विसर्पन्तो भुवि कात्स्न्येन जन्मना ॥ नासंस्कृतेन धर्मेण वेदप्रोक्तेन कर्मणा ॥ १७ ॥

किया वेदके अधीन है. हे राजन् ! उस वैष्णव ब्राह्मण योगसे ॥ १३ ॥ तेज और ऐश्वर्यसे युक्त तथा योगसे युक्त दक्षजी विष्णुरूप महायोगी कर्मके अधिकारमें युक्त होकर सृष्टि करते हैं ॥ १४ ॥ निर्माणसे अर्थात् शिल्प और त्रिवर्णकी सेवासे सम्पन्न कर्मवर्जित शूद्र हुए हैं इस कारण शूद्र संस्कारके योग्य नहीं है कारण कि उसमें वेदकी प्रतिष्ठा नहीं है ॥ १५ ॥ जैसे अरणीके मथनेसे धूमका संघात अग्निमें होता है. वह फैलता हुआ किसी कर्ममें नहीं प्राप्त होता है ॥ १६ ॥ इसी प्रकार शूद्र जन्मसे पृथ्वीमें विचरते हुए वेदोक्त संस्कारके योग्य नहीं है ॥ १७ ॥

तब फिर ब्रह्मयोनिवाले दूसरे पक्षके पुत्र हुए, वे बड़े बली महाउत्साही महाबली महापराक्रमी हुए ॥ १८ ॥ तब यज्ञकर्मा महात्मा दक्षजीने उनसे कहा; हे पुत्रो ! मैं पृथ्वीका अन्त जाननेकी इच्छा करता हूँ अथवा मैं तुम्हारे शरीरकी उत्पन्न करनेवाली धात्री (जननी) के सिद्धान्त सुननेकी इच्छा करता हूँ. जैसा मैं बली हूँ इस प्रकारकाही तुमको होना चाहिये ॥ १९ ॥ तुम्हारी धात्रीके सिद्धान्तको सुन तुम्हारे बलाबलको जानकर प्रजाको विपुल बल प्रदान करूंगा और विपुल मायाके सारको जाननेवाले उन दक्षके पुत्रोंको ॥ २० ॥ उस देवीने नेत्रोंसे अपना रूप न दिखाया यद्यपि उन्होंने सार जाननेकी बड़ी

ततोऽन्ये दक्षपुत्राश्च संभूता ब्रह्मयोनयः ॥ बलवन्तो महोत्साहा महावीर्या महौजसः ॥ १८ ॥ पित्रा प्रोक्ता महात्मानो दक्षिणा यज्ञकर्मणा ॥ अन्तमिच्छाम्यहं श्रोतुं धात्र्याः पुत्रा बलो ह्यहम् ॥ १९ ॥ ततो विधास्ये तत्त्वज्ञः प्रजानां विपुलं बलम् ॥ विपुलत्वाद्धि क्षेत्राणं ममापि विपुलाः प्रजाः ॥ २० ॥ न तेषां दर्शयद्देवी चक्षुषा रूपमात्मनः ॥ प्रजापतिसुतानां वै विपुलासारमिच्छताम् ॥ २१ ॥ आत्मनो भावनेर्वृत्ते भावे कृतयुगे तदा ॥ जनित्री सर्वभूतानामण्डजानुद्भिजांस्तथा ॥ २२ ॥ संवेद जननी धात्री चेति मात्रा प्रचोदिता ॥ अणुतां तनुतां चैव जन्तूनां कर्मभोगिनाम् ॥ २३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ जनमेजय उवाच ॥ साध्वहं श्रोतुमिच्छामि त्रेतायां ब्राह्मणोत्तम ॥ यज्ज्ञात्वा सर्वविद्यानां परं पश्येयमव्ययम् ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ दक्षस्तु पुनरालम्ब्य स्त्रीभावं पुरुषोत्तमः ॥ योगाद्योगेश्वरात्मानं विषण्णो गिरिमूर्द्धनि ॥ २ ॥

इच्छा की थी ॥ २१ ॥ तब तिन दक्षप्रजापतिके पुत्रोंको शुद्धसत्त्वमय भावसे चेतन द्वारा प्रेरित हुई माया अंज और उद्भिजोंको उत्पन्न करनेवाली ॥ २२ ॥ कर्मके भोगनेवाले प्राणियोंको सूक्ष्म विस्तृतभावसे चेतनकी प्रेरित हुई माया प्राप्त करती हुई ॥ २३ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायाम् एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ जनमेजय बोले, इस समय त्रेतामें होनेवाले केवल प्रवृत्त्यात्मक यज्ञादित्य धर्मके सुननेकी इच्छा करता हूँ जिसके जाननेसे सब विद्याओंका प्रतिपाद्य अविनाशी जाना जाता है ॥ १ ॥ वैशम्पायन बोले, पुरुषोत्तम योगी दक्ष अपने आत्मासे फिर स्त्रीको प्राप्त करके पर्वतशिख-

रमें दुःखी हुए ॥ २ ॥ सुन्दर जानु पीन जंघा सुन्दर भों कमलकी समान मुखवाली रक्तान्तनेत्र सब प्राणियोंको मनोहर उत्पन्न किया ॥ ३ ॥ उसमें दक्ष प्रजापतिने कन्याओंको उत्पन्न किया, वे कमलकी समान मुखवाली कन्या आधे देहके योगसे उत्पन्न कीं ॥ ४ ॥ फिर दक्ष स्त्रीभावको त्याग पुरुषरूपसे सब भूतोंको दर्शनीय होता हुआ ॥ ५ ॥ हे राजन् ! दक्षजीने उन कन्याओंको ब्रह्मविवाहसे वेदविधिसे प्रदान किया ॥ ६ ॥ दश धर्मको तेरह कश्यपको और सताईस चन्द्रमाको प्रदान कीं ॥ ७ ॥ इस प्रकार दक्षजी उन कन्याओंको प्रदान कर ब्रह्मक्षेत्र (प्रयाग) को प्राप्त हो ब्रह्मासे

सुजानुः पीनजघना सुभ्रूः पद्मनिभानना ॥ रक्तान्तनयना कान्ता सर्वभूतमनोरमा ॥ ३ ॥ दक्षः प्राचेतसस्तस्यां कन्यायां जनयत्प्रभुः ॥ देहार्थयोगविधिना कन्याः पद्मनिभाननाः ॥ ४ ॥ दक्षः पुरुषरूपेण स्त्रीरूपमपहाय वै ॥ दर्शने सर्वभूतानां कान्तः कान्ततरोऽभवत् ॥ ५ ॥ ताः कन्या प्रददौ दक्षः स्वयं प्राचेतसः प्रभुः ॥ ब्रह्मदेयेन विधिना ब्रह्मप्राप्तेन भारत ॥ ६ ॥ प्रददौ दश धर्माय कश्यपाय त्रयोदश ॥ सप्तविंशतिः सोमाय पत्नीहेतोः समाहितः ॥ ७ ॥ दक्षो दत्त्वाथ ताः कन्या ब्रह्मक्षेत्रं प्रपद्य च ॥ ब्रह्मणाध्युषितं पुण्यं समाहितमना मुनिः ॥ ८ ॥ तप्यमानो मृगैः साद्धिं चचार वसुधां नृप ॥ तृणमूलफलैर्वृद्धो वृद्धश्च तपसासकृत् ॥ ९ ॥ मृगास्तु तस्य मोदन्ति फलं मोदन्ति ब्राह्मणाः ॥ दीक्षिताः पुण्यकर्माणस्तपसा दग्धकिल्बिषाः ॥ १० ॥ संग्रामकाले कालज्ञः शरीरादिपतिर्मुनिः ॥ कर्मयज्ञकृतां तत्र सिद्धिं पश्यति लक्षणम् ॥ ११ ॥

सेवित पवित्रदेशमें सावधान मनसे ॥ ८ ॥ मुनिरूपसे मृगोंके साथ तप करते पृथ्वीमें विचरने लगे, तृणमूलफलोंसे वृद्ध हुए तपसे बढ़ने लगे, यह त्रेताका स्त्रीसंग्रहरूप धर्म है ॥ ९ ॥ उनके तपसे मृग प्रसन्न होते हैं और अहिंसाद्वारा तपके फलको प्राप्त हो ब्राह्मण प्रसन्न होते हैं, वे पुण्यात्मा दीक्षित पवित्र-कर्मा तपसे पाप दूर करनेवाले ॥ १० ॥ संग्रामकालमें कालके जाननेवाले योगसे चित्तके जीतनेवाले शरीरादिके पति मुनि कर्मयज्ञकी प्राप्त हुई सिद्धिको देखने लगे ॥ ११ ॥

दानमानमं प्रवीण उद्योगरहित आभिषमक्षणसे पृथक् स्त्रीसहित पुत्रवाले मृगोंके साथ जराको प्राप्त होते हैं अर्थात् इस देहको ब्रह्मक्षेत्र संज्ञक करते हैं ॥ १२ ॥ और वेदमंत्रोंसे सिद्ध ब्राह्मण प्रथम पद ओंकारमें स्थित ब्रह्मासे युक्त होनेसे वे ब्रह्मक्षेत्र कहाये जाते हैं ॥ १३ ॥ कर्मोंसे मुक्त क्रोधरहित जितेन्द्रिय यतियोंके साथ पृथ्वीमें विचरते हुए, अकिंचन मार्गकी इच्छा करनेवाले ब्राह्मणोंने शरीरमें अध्यात्म प्रयागवर्णन किया है ॥ १४ ॥ और जो मानसी ब्रह्मचारिणी प्रजा पहले ईश्वरमें लय हुई थी वही यह स्वभावसे दुरतिक्रम प्रगटताको प्राप्त हुई ॥ १५ ॥ अर्थात् स्वभावसे अतिक्रमण न दानमानप्रवीराश्च निरुद्धेन निरामियाः ॥ मृगैः सह जरां यान्ति सपत्नीकाः सुपुत्रिणः ॥ १२ ॥ ब्राह्मणाः स्तोत्रसंसिद्धा जनित्रे प्रथमे पदे ॥ ब्रह्मणाध्युषितत्वाच्च ब्रह्मक्षेत्रमिहोच्यते ॥ १३ ॥ यतिभिः कर्मभिर्मुक्तैर्जितक्रोधैर्जितेन्द्रियैः ॥ चरद्भिर्वसुधां विप्रैरकिंचनपथैषिभिः ॥ १४ ॥ या प्रजा पूर्वमारूढा मानसी ब्रह्मचारिणी ॥ सैवैषा व्यक्तिमापन्ना स्वभावदुरतिक्रमा ॥ १५ ॥ अव्यक्ता व्यक्तामापन्ना स्वभावादुरतिक्रमा ॥ व्यक्ताव्यक्तगतिश्चैषा कालधर्मान्महीपते ॥ १६ ॥ स्थावरा जङ्गमाश्चैव स्थूलसूक्ष्माश्च भारत ॥ कालयोगेन कालज्ञा भवन्ति न भवन्ति च ॥ १७ ॥ एताश्चैताः प्रजाः सर्वा दक्षकन्यासु जज्ञिरे ॥ कश्यपेनाव्ययेनेह संयुक्ताः कालधर्मणा ॥ १८ ॥ आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवा मरुद्गणाः ॥ नागाश्चानेकशिरसः साध्या वै पन्नगास्तथा ॥ १९ ॥ गन्धर्वाः किन्नरा यक्षा सुपर्णाश्च तथाऽपरे ॥ गरुत्मान्सह यक्षैश्च किन्नराश्च सुवाससः ॥ २० ॥ गावः पशुगणैः सार्द्धं नराश्च वसुधाधिप ॥ चराचराश्च वसुधा धत्तारिश्च धराधराः ॥ २१ ॥

होकरभी व्यक्त अव्यक्त भावको प्राप्त हो कालधर्म (समाधि काल भेद लक्षणवाले) से व्यक्त अव्यक्तरूपवाली होती है ॥ १६ ॥ हे भारत ! स्थावर जंगम स्थूल सूक्ष्म यह सब काल योगसे होते और नहीं होते हैं ॥ १७ ॥ यह सब प्रजा दक्षकन्यामें उत्पन्न हुई है, अविनाशी कश्यपने इसको काल धर्मसे संयुक्त किया है ॥ १८ ॥ आदित्य वसु रुद्र विश्वेदेवा मरुद्गण अनेक शिरके नाग और साध्य पन्नग ॥ १९ ॥ गन्धर्व यक्ष किन्नर सुपर्ण मरुद और यक्षोंके सुन्दर वस्त्रवाले किन्नर ॥ २० ॥ हे राजन् ! गौ पशुगण मनुष्य चराचरके सहित पृथ्वीको धारण करनेवाले पर्वत आदि ॥ २१ ॥

गज सिंह व्याघ्र घोड़े पक्षी गेंडे सींगोंवाले वृष मृग ॥ २२ ॥ चार दांतके हाथी कमलकी समान कांतिवाले वर्णसे श्रेष्ठ सब लक्षणसे सम्पन्न कामरूपी प्राणी हुए ॥ २३ ॥ उनके रूप शील पराक्रम शरीरसे सनातन धर्म क्षेत्र (भारतवर्ष) में फिर मुनि उत्पन्न हुए ॥ २४ ॥ आत्मामें निष्ठावाले मनमें कल्पित लोकके ज्ञाता धर्मात्मा वेदगोचर ऋषि होते हैं जिनमें उत्पन्न हुए सब देवता स्वर्गलोकमें स्थित हैं ॥ २५ ॥ और जो दूसरे तपसे सिद्ध गृहस्थ हैं वे ब्रह्मचर्यको प्राप्त हो गुरुकी परिचर्या करते हैं ॥ २६ ॥ हे राजन् ! जो सिद्धिके निमित्त योगकी गतिको प्राप्त हुए हैं वे अधिक क्लेशसे प्राप्त हुई कर्मजन्य

गजाः सिंहाश्च व्याघ्राश्च हयाः पक्षधरास्तथा ॥ खड्गा विषाणिनश्चैव वृषभाश्च मृगास्तथा ॥ २२ ॥ चतुर्विषाणा नागेन्द्रा पद्माभा वर्णतः शुभाः ॥ सर्वलक्षणसंपन्नाः प्राणिनः कामरूपिणः ॥ २३ ॥ तेषां रूपैस्तथा गात्रैस्तेः शिल्पैस्तेः पराक्रमैः ॥ मुनयः पुनरुद्भूता धर्मक्षेत्रे सनातने ॥ २४ ॥ क्षेत्रज्ञा मानसे लोके धर्मिणो वेदगोचराः ॥ यत्रोद्भूताः सुराः सर्वे दिवि लोके प्रतिष्ठिताः ॥ २५ ॥ ये चान्ये तपसा सिद्धा गृहस्था मनुजाधिप ॥ ब्रह्मचर्येण संसिद्धाः परिचर्यां गता गुरोः ॥ २६ ॥ ये च योगगतिं प्राप्ताः सिद्धिहेतोर्महीपते ॥ क्लेशाधिकैः कर्मजन्यैर्वृत्तिं लप्स्यन्ति वै द्विजाः ॥ २७ ॥ शिलोच्छवृत्तयः ख्याताः सपत्नीका दृढव्रताः ॥ सर्वे त्वेते दिविचरा भवन्ति चरितव्रताः ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि द्वाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ पितामहं पुरस्कृत्य मेरुपृष्ठे समाहिताः ॥ जटाजिनधरा विप्रस्त्यक्तक्रोधा जितेन्द्रियाः ॥ १ ॥ पर्वतान्तरसंसिद्धे बहुपादपसंवृते ॥ धातुसंराजिताशिले समे निस्तृणकण्टके ॥ २ ॥

गतिको प्राप्त होते हैं ॥ २७ ॥ जो सपत्नीक दृढव्रत होकर शिलोच्छवृत्ति करते हैं वे व्रतधारी सब स्वर्गमें गमन करते हैं ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषयां द्वाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २२ ॥ वैशम्पायन बोले, जटा और अजिन वस्त्रके धारण करनेवाले क्रोधवर्जित जितेन्द्रिय ब्राह्मण ब्रह्माजीको आगे कर मेरुपृष्ठपर सावधान अर्थात् भूधराणके मध्यमें समाधिको प्राप्त हुए कार्यके पिता कारणको आगे करके ॥ १ ॥ पर्वतान्तर (वंश कपाल आस्थि) से सिद्ध बहुत वृक्षों (योगसाधनके धर्म) से संयुक्त धातुओंसे रंजित शिलासमान कांटे और तृणोंसे रहित अर्थात् वातपित्तादि

धातु और मनशिलादिरूप नाडियोंसे युक्त अस्थिवाले जरारोगादि कंटकरहित ॥ २ ॥ तीन वेदोंके पंचस्वरसे विराजित अर्थात् इडा पिंगला सुषुम्नारूप जीवोपाधिभूत प्राणमार्गके सम्बन्धी पांच प्राणोंकी वृत्तिभेदसे युक्त स्थानमें नित्य मंत्रयज्ञमें परायण (ओंकार जपनिरत) नित्यव्रत (वायुजप) हित (आनंदरूप आत्मामें निरत) ॥ ३ ॥ वे सब ब्राह्मणश्रेष्ठ एकही अग्निको आधान कर सावधान चित्तसे मंत्रद्वारा तीन प्रकारसे भेदित करते हुए ॥ ४ ॥ तीन प्रकार ज्वलित होती हुई प्राणाग्निको रेचक पूरक कुंभक रूप नाडीमार्गोंसे विशेष करते हुए अर्थात् पूरकादि अभ्याससे आत्मतत्त्वको प्राप्त हुए वेद-पारगामी मुनियोंसे तत्त्वको प्राप्त हुए तत्त्व जानते हैं ॥ ५ ॥ एकही वह प्राणाग्नि प्राणायाम अभ्यासवालेको हविद्वारा वृद्धिको प्राप्त करती है, अर्थात् योगयुक्त आहारसे प्राण बलिष्ठ होता है और कार्यसिद्धिके निमित्त होममंत्रके जाननेवाले नृप स्वधाकारसे मंत्रको करता हुआ जरारोगरहित होता है त्रयाणां ब्रह्मवेदानां पञ्चस्वरविराजिते ॥ मन्त्रयज्ञपरा नित्यं नित्यं व्रतहिते रताः ॥ ३ ॥ एक एवाग्निमाधाय सर्वे ब्राह्मणपुङ्गवाः ॥ विभिदुर्मन्त्रविषयेः सुसमाहितमानसाः ॥ ४ ॥ त्रिधा प्रणीतो ज्वलनो मुनिभिर्वेदपारगैः ॥ अतस्ते तत्त्वमापन्ना यदेकास्त्रिविधः कृतः ॥ ५ ॥ एक एव महानग्निर्हविषा संप्रवर्तते ॥ स्वधाकारेण मन्त्रज्ञ मन्त्राणां कार्यसिद्धये ॥ ६ ॥ स्वयं च दक्षसंप्राप्तो भगवान् भूतसत्कृतः ॥ ब्रह्मा ब्राह्मणनिर्माता सर्वभूतापितामहः ॥ ७ ॥ दण्डी चर्मा शरी खड्गी शिखी पद्मनिभाननः ॥ अभवन्न्यस्तसंतापो जितक्रोधो जितेन्द्रियः ॥ ८ ॥ यजते पुष्करे ब्रह्मा मेधया सह संगतः ॥ इन्द्रप्रोक्तानि सामानि गीयन्ते ब्रह्मवादिभिः ॥ ९ ॥ (इसका विशेष वर्णन हठयोगके ग्रंथोंमें देखो) ॥ ६ ॥ इस रूपसे प्राणियोंसे सत्कृत सूत्रात्मा सब ऐश्वर्योंसे सम्पन्न प्राप्त होता है अर्थात् ध्यानसे प्रथम उकारार्थभूत सूत्रात्माका साक्षात्कार होता है. इस प्रकारका दक्ष ब्रह्मा ब्राह्मणोंका निर्माण करनेवाला पितामह होता है ॥ ७ ॥ पूरकसमयमें नासिकानलिमें दंडाकार पूर्ण होनेसे ढंडी कुंभक अवस्थामें चर्मधारी रेचकअवस्थामें शरयुक्त खड्गकी समान तीक्ष्ण धारावाला संसारवृक्ष छेदनमें समर्थ शिखी प्राणाग्निरूप कमलकी समान मुख प्रसन्नभाव होनेसे संतापरहित स्वभावसे क्रोधजित और जितेन्द्रिय होता है ॥ ८ ॥ दशरूप ब्रह्मा आत्मतीर्थमें शास्त्राचार्यसे प्राप्त हुई बुद्धियें तान्निष्ठ होकर यजन करता है. जहां ब्रह्मवादियोंद्वारा इन्द्रके कहे साम (अहमन्नमहमन्न) इत्यादि गाये जाते हैं ॥ ९ ॥

धृत क्षीर यव व्रीहि यह सब परमहवि हैं. यह ब्रह्मपदके प्राप्त होने योग्य वेदप्रोक्त यज्ञका विधान है ॥ १० ॥ अग्निसम्बन्धी अरणीको मथन कर जो शमीके गर्भसे प्रकट होती है अर्थात् परमेश्वरकी तिरोधान स्थानभूत अविद्याको नाश करके देहमें प्रगट हुए. कारण ब्रह्म अन्तर्यामी अग्निरूपको प्रवृत्त करे अर्थात् देहके अभिमानरहित होनेसे ब्रह्मरूप होता है. ब्रह्माने प्रथम उस सूत्रात्मामें अग्नि प्रवृत्त की ॥ ११ ॥ जिस प्रकार यज्ञकर्ममें अग्नि विधान किया जाता है उसी प्रकार अल्प द्रव्यसे अनेक प्रकारके द्रव्योंको ॥ १२ ॥ और फलोंको योगके जाननेवाले ब्रह्मवादी मुनि हवि कल्पित कर यज्ञमें डालते हैं अर्थात् मानसिक यज्ञमें कल्पना की हुई मानसी सामग्री डालकर मनके अनुसार फलभागी होते हैं ॥ १३ ॥ उस यज्ञमें छः महीने पर्यन्त बृहस्पतिजी चारों

धृतं क्षीरं यवा व्रीहिः सर्वं परमकं हविः ॥ वेदप्रोक्तं मखे न्यस्तं कल्पितं ब्रह्मणः पदे ॥ १० ॥ निर्मथ्यारणिमाग्नेर्यौ शमीगर्भसमुत्थिताम् ॥ स ब्रह्मा प्रथमं तस्मिन्नग्निमन्यं प्रवर्त्तयत् ॥ ११ ॥ नह्यल्पं विहितं द्रव्यं यथाग्निर्यज्ञकर्मणि ॥ प्रवर्त्तयेद्विभागेर्वा हुतद्रव्यमयं बलम् ॥ १२ ॥ फलानि तेः प्रयुक्तानि हवींषि विततेऽध्वरे ॥ प्रयुञ्जते प्रयोगज्ञा मुनयो ब्रह्मवादिनः ॥ १३ ॥ षण्मासांश्चतुशो वेदान्तसंबभाषे बृहस्पतिः ॥ ब्रह्मणो वितते यज्ञे परया ब्रह्मसम्पदा ॥ १४ ॥ शिक्षाक्षरसमेताया मधुरायाः समन्ततः ॥ सानुस्वारितरामायाः सरस्वत्या प्रभाषते ॥ १५ ॥ तेन ब्राह्मणशब्देन ब्रह्मप्रोक्तेन भारत ॥ विभाति स मखो व्यक्तं ब्रह्मलोक इवापरः ॥ १६ ॥ मखो ब्रह्ममुखोत्तीर्णो ब्रह्मशब्देरनामयैः ॥ प्रयोगैः संप्रयुक्तस्य जल्पान्निव विवर्द्धते ॥ १७ ॥ समिद्धिः सोमकलशैः पात्रैश्चैव बहिः खलैः ॥ यवैर्व्रीहिभिराज्यैश्च पूर्णैश्च जलभाजनैः ॥ १८ ॥

वेदोंको पढ़ते हैं, और उस ब्रह्मयज्ञमें अत्यन्त ब्रह्मसम्पदासे युक्त होते हैं अर्थात् छः महीनेके निरन्तर अभ्याससे सिद्धि होती है ॥ १४ ॥ तब अभ्यास किये उस वेदको शिक्षा अक्षरके सहित वहां सरस्वती कथन करती है जिससे उपनिषद्सहित और कर्म उपासनासहित वेद उनके शिष्योंको प्राप्त होता है ॥ १५ ॥ हे भारत ! उस ब्रह्मके कहे वेदशब्दसे वह आध्यात्मिक ब्रह्मलोककी समान प्रकाशित होता है ॥ १६ ॥ वह यज्ञ ब्रह्माके मुखसे निर्गत अनामय ब्रह्मशब्दोंसे और संदेहरहित प्रयोगोंसे कहे हुएकी समान बढ़ता है ॥ १७ ॥ समिधा सोमके कलशे पात्र यव व्रीहि धृत और दूसरे पूर्ण जल-

पात्र ॥ १८ ॥ कर्मके प्राप्त होने योग्य पशु और ब्रह्ममें अर्पणके योग्य कर्म दूधवाली गौ और कोमल वंश और सुवर्णसे युक्त ॥ १९ ॥ हे भारत ! वेदशब्दसे बड़ा हुआ, दक्षिणासे बड़ा हुआ तपसे परिवर्द्धित ब्रह्मज्ञानमें वेदविद्यासे संगत हुआ ॥ २० ॥ मनसे कल्पना की हुई समिधादिसे क्रियामूर्ति यज्ञात्मा ब्रह्मा कल्पनाके विना स्वभावसे उत्पन्न हुई घृतादि सामग्रीसे मरुद्गणोंके साथ हवन करता है ॥ २१ ॥ हे राजन् ! तेजमूर्ति धारण करनेवाले चिन्मयरूप द्रव्य देवताओंद्वारा यागरूपसे प्राप्त ब्रह्मयज्ञ सब प्राणियोंके कर्मको स्पर्श न करता हुआ वेदमें कहीं विधिसे सबसे अधिक होता है ॥ २२ ॥ शमीके गर्भसे उठी अग्निदात्री अरणीको मथकर अग्निष्टोम यज्ञसे वह प्रभु यजन करता है ॥ २३ ॥ उस यज्ञमें सभाके ब्राह्मण मधुरवाणीसे बोलते हैं

कर्मप्राप्तेश्च पशुभिः कर्मभिश्चापरान्वितैः ॥ गोभिः पयास्विनीभिश्च परिवंशैश्च कोमलैः ॥ १९ ॥ ब्रह्मवृद्धो वयोवृद्धस्तपोवृद्धश्च भारत ॥ ब्रह्मज्ञानमयो देवो विद्यया सह संगतः ॥ २० ॥ मानसैश्च क्रियामूर्तिर्ये च भूताः स्वयं नृप ॥ ब्रह्मा जुहोति तांस्तस्मान्मरुद्भिः सहितस्तदा ॥ २१ ॥ तेजोमूर्तिर्धरैरूपैर्न च तत्कर्मणारूपृशत् ॥ वेदप्रोक्तेन विधिना सर्वप्राणभृतां वर ॥ २२ ॥ निर्मथ्यारणिमाग्नेयीं शमीगर्भसमुत्थिताम् ॥ क्रतुना यजते पूर्णमग्निष्टोमेन स प्रभुः ॥ २३ ॥ सदस्यैस्तत्सदो व्यक्तं शुशुभे यज्ञकर्मणि ॥ जल्पन्ति मधुरा वाचः सानुसाराः क्रियास्तथा ॥ २४ ॥ कर्माभिश्च तपोयुक्तैर्वेदवेदाङ्गपारगैः ॥ सूर्येन्दुसदृशौ राजन्विरराज महाक्रतुः ॥ २५ ॥ ब्रह्मघोषेण महता ब्रह्मावास इवापरः ॥ वसुधामिव संप्राप्तैः सर्वैरेव दिवौकसैः ॥ २६ ॥ वेदवेदाङ्गविद्भिश्च विनीतैर्ब्रह्मवादिभिः ॥ गतागतेस्तपः श्रान्तेः स्वर्गलोके महीयते ॥ २७ ॥

और अष्टवर्ग आदिके सहित व्यक्त हुआ यज्ञ शोभाको प्राप्त होता है ॥ २४ ॥ तपयुक्त कर्म करनेवाले वेदवेदाङ्गके पारगामी सूर्य चन्द्रमाके समान सुनिजनोंसे वह महायज्ञ शोभित हुआ ॥ २५ ॥ बड़े भारी वेदके शब्दसे दूसरे ब्रह्मलोककी समान सब स्वर्गके देवताओं सहित पृथ्वीमें प्राप्त हुएकी समान ॥ २६ ॥ वेदवेदाङ्गके जाननेवाले विनीत ब्रह्मवादी महात्माओंके जो तपसे पूर्ण हो गये हैं आनेजानेसे स्वर्गलोकमें पूजित होता है और मनुष्य लोकमें अत्यंत पूजित होता है ॥ २७ ॥

प्रकाशमान तीन ब्राह्मण और तीन यज्ञकी अग्नियोंकरके वह यज्ञ ब्रह्माके ब्रह्मलोककी समाज प्रकाशित होता है ॥ २८ ॥ उसमें ब्रह्मवादी ब्राह्मण इन्द्रके कहे सामगान करते हैं और यज्ञके वचनप्रयोग किये जाते हैं जिससे यज्ञका विस्तार होता है ॥ २९ ॥ तपसे शान्त ब्रह्मपरायण सत्यव्रत क्रियामें सावधान सुनने मात्रसे मनके संकल्पसे आते हैं ॥ ३० ॥ हे राजन् ! यज्ञमें मूर्तिभेदसे होता और ब्रह्मा बृहस्पति हुए सब धर्मवेत्ताओंमें श्रेष्ठ पुरातन ब्रह्मसे उत्पन्न होनेवाला यजमान ॥ ३१ ॥ यज्ञान्तमें विष्णुकी पूजा कर अर्थात् सब कर्म विष्णुको समर्पण कर यज्ञकी महिमासे अदितिके गर्भमें उत्पन्न होता

ज्वलद्भिरिव विप्रैस्तैस्त्रिभिरेवाध्वरेऽग्निभिः ॥ ब्रह्मलोक इवाभाति ब्रह्मणः स महाक्रतुः ॥ २८ ॥ इन्द्रप्रोक्तानि सामानि गायन्ति ब्रह्मवादिनः ॥ वचनानि प्रयुक्तानि यजूंषि विततेऽध्वरे ॥ २९ ॥ तपःशान्ता ब्रह्मपराः सत्यव्रतसमाहिताः ॥ आययुर्मुनयः सर्वे मनोभिः श्रोत्रवादिभिः ॥ ३० ॥ होता चैवाभवद्राजन् ब्रह्मत्वे च बृहस्पतिः ॥ सर्वधर्मविदां श्रेष्ठः पुराणो ब्रह्मसंभवः ॥ ३१ ॥ यजमानश्च यज्ञान्ते विष्णोः पूजां प्रयुज्य च ॥ अदित्याः पश्चिमे गर्भे तपसा संवृत्ते नृप ॥ ३२ ॥ पदं विष्णुरजो ब्रह्मा निर्द्वन्द्वं निष्परिग्रहम् ॥ यतः पदसहस्राणि भविष्यन्त्युद्भवन्ति च ॥ ३३ ॥ अवन्ध्यं चाप्रमेयं च व्यतिरिक्तं च कर्मभिः ॥ आत्मापि यस्य मुनयो भवन्ति निष्परिग्रहाः ॥ ३४ ॥ परिग्रहाश्च विषया दोषप्राप्ता महीपते ॥ दोषाश्च युगपत्सर्वे छादयन्ति मनो बलात् ॥ ३५ ॥ इन्द्रियग्रामविषये चरन्तो निष्परिग्रहाः ॥ परिग्रहं शुभं धर्ममविद्यालक्षणं विदुः ॥ ३६ ॥

है ॥ ३२ ॥ इस प्रकार कर्मरुल देवताभाव सुख दुःस्वरूपको कथन कर मोक्षपदरूप विष्णुपदका वर्णन करते हैं कि अजन्मा अर्थात् कर्मप्राप्त ब्रह्मा ब्रह्मवित् निर्द्वन्द्व और निष्परिग्रह जिससे सहस्रों इन्द्रादि पद हुए और होते हैं उस विष्णुके परम पदको प्राप्त होता है ॥ ३३ ॥ वह बंधरहित और अप्रमेय कर्मोंसे व्यतिरिक्त है, जिस विष्णुके परम पद और आत्माको मुनिजन एक कहते हैं ॥ ३४ ॥ हे राजन् ! रूपादि सब विषयरागादि दोषोंसे कल्पित हुए एक कालमें बलसे मनको आच्छादित करते हैं ॥ ३५ ॥ इन्द्रियोंके समूहके, रूपरसादि विषयोंमें निष्परिग्रह विचरते हुए मुनिजन परिग्रहवाले सुन्दर

धर्मको अपने विद्यालक्षणसे जानते हैं ॥ ३६ ॥ हे राजन् ! विद्यालक्षणके संयोगसे मन आच्छादित नहीं होता है जो मुनि शब्दकरके ब्रह्मवादीयोंने ग्रहण किया है ॥ ३७ ॥ हे कुरुश्रेष्ठ ! उस ब्रह्मविद्याके व्रतमें स्नान किये नियममें तत्पर सत्पुरुषोंके स्थान दिव्यलोक हैं वही लोकोंके लोक ह ॥ ३८ ॥ हे भारत ! जहांके हवि सेवन करनेवाले देवता क्षयको प्राप्त नहीं होते हैं और यजमानभी अपने भोगोंसे कर्मसे प्राप्त स्थानमें अपनी पत्नियोंके सहित दुःस्वरहित हो निवास करता है ॥ ३९ ॥ यज्ञके अवसानमें प्रभुने ब्राह्मणोंको शैल (दिव्य देह पित्र्य गान्धर्व प्राजापत्य वा ब्राह्म) स्थान दिया यह सब प्राणियोंपर दया करके निर्मल अन्तःकरण करके द्विजोंको दिया ॥ ४० ॥ उस दिव्य वेहस्त्री शैलको जो सर्वगात्रात्मक क्षेत्र है विद्यालक्षणसंयोगान्न मनश्छाद्यते नृप ॥ यदि चेन्मुनिशब्देन गृह्यते ब्रह्मवादिभिः ॥ ३७ ॥ वेदविद्याव्रतस्नातैर्नियतैः कुरुसत्तम ॥ दिवि लोकाः सतां स्थानं लोकानां लोक उच्यते ॥ ३८ ॥ यत्र देवा हव्यपुष्टा न क्षयं यान्ति भारत ॥ यजमानश्च भोगैः स्वैः कर्मप्राप्तोदिते पदे ॥ मोदते सह पत्नीभिर्विज्वरो वसुधाधिप ॥ ३९ ॥ यज्ञावसाने शैलेन्द्रं द्विजेभ्यः प्रददौ प्रभुः ॥ दयया सर्वभूतानां निर्मलेनान्तरात्मना ॥ ४० ॥ तं शैलं सर्वगात्राणि परस्परविशेषिणः ॥ न शोकुः प्रविभागार्थं भेत्तुं सर्वोद्यमेरपि ॥ ४१ ॥ ततस्ते ब्राह्मणगणा निषेदुर्वसुधातले ॥ श्रमेणाभिहताः सर्वे विवर्णवदना नृप ॥ ४२ ॥ सुपाश्र्वौ गिरिमुख्यस्तु वाग्भिर्मधुरभाषिता ॥ अब्रवीत्प्रणतः सर्वाञ्छिरसा तान् द्विजोत्तमान् ॥ ४३ ॥ नहि शक्यो बलाद्भेत्तुं युष्माभिरसुसङ्गिभिः ॥ अपि वर्षशतैर्दिव्यैः परस्परविरोधिभिः ॥ ४४ ॥ एकीभूता यदा सर्वे भविष्यथ समाहिताः ॥ अविरोधेन युगपाद्विभजिष्यथ निर्वृताः ॥ ४५ ॥

परस्पर भेददृष्टिसे परस्पर संघटित हुए ब्राह्मण क्षत्रियत्वादिके अभिमानसे सर्वोद्यम अर्थात् कर्मविद्यासे आत्मासे पृथक् निश्चय करनेको समर्थ न हुए ॥ ४१ ॥ तब वे सब ब्राह्मण श्रमसे व्याप्त विवर्णवदन हो पृथ्वीमें बैठे ॥ ४२ ॥ तब उस पर्वतके पार्श्वभागमें पाप छेदन करनेवालोंमें मुख्य वायु प्रणत हुए उन सब ब्राह्मणोंसे कहने लगा ॥ ४३ ॥ हे ब्राह्मणो ! यह देहाभिमानका पर्वत बल वा हठसे परस्पर विरोधके कारण देह इन्द्रियादिमें मन लगानेसे दिव्य सौ वर्षोंमेंभी भेदन नहीं कर सकते ॥ ४४ ॥ जब तुम समाधिमें सावधानतासे एकीभूत हो जाओगे और कोई विरोध न होगा ।

तब तुम इसको एकसाथ तोड़ सकोगे ॥ ४५ ॥ स्वाभाविक सामर्थ्यको राम और द्वेष नष्ट कर देते हैं और रागदोषसे रहित होनेसे ब्रह्मनिष्ठा बढ़ती है ॥ ४६ ॥ जब मैं स्वर्गको भेदन करनेवाले यहां वहांके भोगसे रहित शिलाओंसे फेंके हुए और सातुओंके गिरनेसे धातुओंके फैलनेसे अर्थात् गुहामें शयन करनेवाला मैं गुरु देहकी आरंभ करनेवाली धातु और उनके कार्य वाक् प्राण मनको विशीर्ण करूंगा (“ अन्नमयं हि सौम्य मनः आपां-मयः प्राणस्तेजोमयी वागिति श्रुतेः ”) और शिखररूप इन्द्रियोंको तापित करूंगा ॥ ४७ ॥ समीप स्थित स्त्री आदि जिन्होंने चित्तमें सर्पकी समान प्रवेश किया है तथा नाग (श्वेतसांपकी तुल्य शास्त्रादि व्यसन व्याल कृष्णसर्पकी तुल्य कामादि व्यसनों) से विशीर्ण और प्रेरित हुएको जब गुरु नाशकर बलं हि रागद्वेषाभ्यां वर्द्धते ब्रह्मसत्तमाः ॥ विमुक्तं रागद्वेषाभ्यां ब्रह्म वर्द्धति शाश्वतम् ॥ ४६ ॥ यदाहं भेदयिष्यामि स्वर्गंभिन्नेः शिलाशतैः ॥ धातुभिश्च विसर्पद्भिः शिखरैश्चानुपातिभिः ॥ ४७ ॥ विशीर्णैः पार्श्वविकरैर्नागैश्च गलितैर्भुवि ॥ बहुभिर्व्यालरूपैश्च चोद्यमानो गुहाशयैः ॥ ४८ ॥ प्रतिगृह्य च तद्वाक्यं शैलेन्द्रस्य सुभाषितम् ॥ तूष्णीं बभूवुस्ते सर्वे तदा ब्राह्मणसत्तमाः ॥ ४९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रयोविंशतितमोऽध्यायः ॥ २३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ बलिहोमाश्च वर्द्धन्ते अहन्यहनि भारत ॥ द्विजानां तपसाढ्यानां गृहधर्मेषु तिष्ठताम् ॥ १ ॥ देवताचार्याश्च पूज्यन्ते तदाप्रभृति भारत ॥ तेषां ब्रह्माविदां राजन् पृथिव्यां ब्रह्मवादिभिः ॥ २ ॥ तत्रैव ब्रह्मसदनं समं निस्तृणकण्टके ॥ प्राज्येन्धनतृणे देशे पुण्ये पर्वतरोधसि ॥ ३ ॥ देता है तब यह कार्यसाधनमें समर्थ होता है ॥ ४८ ॥ इस प्रकार शैलेन्द्रके कहे उस वचनको स्वीकार करके वे सब ब्रह्मश्रेष्ठ मौन हुए अर्थात् वैराग्य न होनेसे आत्माको देहसे पृथक् करनेके व्यापारसे निवृत्त हुए ॥ ४९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे अ० भा० त्रयोविंशतितमोऽध्यायः ॥ २३ ॥ वैशम्पायन बोले, हे राजन् ! उस समयसे प्रतिदिन तपसे युक्त गृहधर्ममें वर्तनेवाले शैलभेदमें असमर्थ कर्मवाले ब्राह्मणोंका ऋत्विजोंके साथ पृथ्वीमें बलि-होमादि कर्म बढ़ने लगा ॥ १ ॥ हे भारत ! तबसे देवताओंकी पूजा उन ब्रह्मवादियों द्वारा पृथ्वीमें बढ़ती है ॥ २ ॥ उसी पृथ्वीरूप ब्रह्मसदनमें “ अविमुक्तं वै कुरुक्षेत्रं देवानां देवयजनं सर्वेषां भूतानां ब्रह्मसदनम् ” इति श्रुतेः । जो समान और तृणकण्टकसे रहित है (भू और घ्राणसन्धिके मध्यमें)

विन्ध्यके समीप घृत ईषन तृणसे युक्त ॥ ३ ॥ ऋग्वानकी गतागतिरूप क्रियाको देखकर निवास करते हैं तपके अर्थी महाभाग ब्रह्मचर्य व्रतमें स्थित ॥ ४ ॥ गृहस्थ धर्ममें निरत दानसे शुद्ध यतिभि वहां निवासकी इच्छा करते हैं ॥ ५ ॥ वनके मूलफलसे और कर्मफलसे रत ब्राह्मणश्रेष्ठ अग्निहोत्र व्रतमें पारगामी जितक्रोध सावधान चित्त ॥ ६ ॥ दैवयुक्त कर्मसे युक्त ब्राह्मणश्रेष्ठ चीरवल्कलधारी नियत जितेन्द्रिय ॥ ७ ॥ दारुणव्रतमें स्थित हुए ब्रह्मचर्यमें स्थित हो इस क्रमसे सर्वथा वे महात्मा ॥ ८ ॥ क्रमसे पवित्र वेदके पवित्र संस्कारको प्राप्त हो जो कि पुरातन ब्रह्मचारियोंने आचरण किये वासं यत्र प्रकुर्वन्ति दृष्ट्वा भगवतः क्रियाम् ॥ तपोऽर्थिनो महाभाग ब्रह्मचर्यव्रते स्थिताः ॥ ४ ॥ गृहस्थधर्मनिरता दानप्राप्तेन चेतसा ॥ यतयश्चापि कांक्षन्ति धर्मेणैह विकांक्षिणः ॥ ५ ॥ वन्यैः कर्मफलैश्चैव रता ब्राह्मणपुङ्गवाः ॥ अग्निहोत्रव्रतस्नाता जितक्रोधाः समाहिताः ॥ ६ ॥ दैवयुक्तेन वा युक्ताः कर्मणा ब्रह्मसत्तमाः ॥ चीरवल्कलसंवीता नियता नियतेन्द्रियाः ॥ ७ ॥ चरन्तो ब्रह्मचर्यं च व्रतमास्थाय दारुणम् ॥ अनेन विधिना राजन् क्रमप्राप्तेन सर्वशः ॥ ८ ॥ क्रमाद्ये वेदसंस्कारं पुण्यं प्राप्ताः सनातनम् ॥ पूर्वैराचरितं राजन्मुनिभिर्ब्रह्मवादिभिः ॥ ९ ॥ नावेदविद्वान्नागच्छेन्नापि रौद्रं व्रतं चरेत् ॥ नच त्यागेन गच्छेत् गृहधर्मं नच त्यजेत् ॥ १० ॥ नैवं गच्छेत् दुःस्थानमप्राप्तो वेदसंचयम् ॥ ऋचश्च संचयः पूर्वः सामगानां च भारत ॥ ११ ॥ ये चापि पुत्रिणो न स्युः श्रुत्वापि प्राप्नुयुः फलम् ॥ ब्राह्मणास्तपसा श्रान्ता गुरोश्च परिचर्यया ॥ १२ ॥ यस्य नैव श्रुतं ब्रह्मन्न गृहीतं विशांपते ॥ कामं तं धार्मिको राजा शूद्रकर्माणि कारयेत् ॥ १३ ॥

हैं उनके स्थानको प्राप्त होते हैं ॥ ९ ॥ वेदका न जाननेवाला गृहस्थ धर्मको नहीं प्राप्त होता अर्थात् सम्पूर्ण वेदको विना जाने गृहस्थ धर्म न करे त्यागके विना संन्यास न करे. विना पुत्र उत्पन्न किये गृहस्थधर्मका त्याग न करे ॥ १० ॥ वेदसंचयके प्राप्त हुए विना संन्यासी न हो. हे भारत ! साम गानेवालोंको पहले ऋच और यजुका संचय करना चाहिये ॥ ११ ॥ और जो पुत्रवाले न हों वे वेदान्तको सुनकर उसके फलको प्राप्त होते हैं. ब्राह्मणजन तपसे श्रान्त हुए गुरुकी परिचर्यासे फलको पाते हैं ॥ १२ ॥ हे राजन् ! जिसने वेदको न सुना न ग्रहण किया उस ब्राह्मणसे राजा शूद्रोंके

कर्म करावे ॥ १३ ॥ जो ब्राह्मण होकर वेदका आदर न करे ऐसा तो होही नहीं सका. जो वेदका अनादर करे वह ब्राह्मणही नहीं है. कारण कि ब्रह्म-
चारी और गृहस्थ दोनोंहीका अध्ययनकालमें मन वेदमें लगता है ॥ १४ ॥ इस कारण भूतिसे सम्पन्न अपनी विभूतिकी इच्छा करनेवाला ब्राह्मण
वेदपूर्वक सब इन्द्रियोंके आरंभोंको सम्यक् प्रकारसे आचरण करे ॥ १५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां चतुर्विंशतित-
मोऽध्यायः ॥ २४ ॥ वैशम्पायन बोले, वे नारद आदि गन्धर्व और ऋषि वैदिक कर्म श्रेयस्कर हैं और उसके करनेमें राजदण्ड है इस प्रकार जानकर
वेदप्रधान अपराधरहित नागराजकी प्रकृतिवाले चन्द्रमा और आदित्य (काल) को आगे करके ब्रह्मसे उत्पत्तिवाले देवता और ऋषियोंको वसु हवि

अथवा नैव विद्येत यद्ब्रह्म नाद्रियेद्विजः ॥ द्वाभ्यां तु श्रोत्रविषये मनः पूर्वं समाहितम् ॥ १४ ॥ एवं सर्वेन्द्रियारम्भान्वेदपूर्वान्तसमा-
चरेत् ॥ ब्राह्मणो भूतसंपन्नो य इच्छेद्भूतिमात्मनः ॥ १५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि चतुर्विंशतितमोऽ-
ध्यायः ॥ २४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ते तु गोब्राह्मणा नागाश्चन्द्रादित्यपुरस्कृताः ॥ ब्राह्मणान्पूजयन् देवान्वसुभिर्ब्रह्मसंभवेः ॥ १ ॥
नारदप्रमुखाश्चैव गन्धर्वा ऋषयो नृप ॥ कुर्वन्ति सततं यज्ञे क्रमप्राप्तं पितामहम् ॥ २ ॥ वचोभिर्मधुराभावेः पञ्चेन्द्रियनिवासिभिः ॥
सर्वभूतप्रियकरैः सर्वभूतहितैषिभिः ॥ ३ ॥ स्तूयमानश्च यज्ञान्ते पञ्चेन्द्रियसमाहितैः ॥ प्रोवाच भगवान्ब्रह्मा दिष्ट्या दिष्ट्येति
भारत ॥ ४ ॥ ततः कश्यपमाभाष्य प्रोवाच भगवान्प्रभुः ॥ भवानपि सुतैः सार्द्धं यक्ष्यते वसुधातले ॥ ५ ॥ क्रतुभिः परमप्राप्तैः
संपूर्णवरदक्षिणैः ॥ यक्षाः सुराश्च ते सर्वे यथा प्रतिगुणैः प्रभो ॥ ६ ॥

दक्षिणादिके सहित पूजन करने लगे ॥ १ ॥ हे राजन् ! वह नारद गन्धर्वादि ऋषि ब्रह्माकी पूजाके क्रमसे ब्रह्माको पूजन करते हुए ॥ २ ॥ पञ्चेन्द्रि-
यमें निवास करनेवाले मधुरवचनों और सब भूतोंके प्रिय करनेवाले सब प्राणियोंके हितकारी ॥ ३ ॥ वचनोंसे स्तुतिको प्राप्त हो यज्ञान्तमें पञ्चेन्द्रियसे
सावधान उस यज्ञको देखकर ब्रह्माजी बोले, तुम धन्य हो भाग्यसेही तुम्हारी यज्ञमें इस प्रकार प्रवृत्ति है ॥ ४ ॥ तब कश्यपसे संभाषण कर भगवान्
प्रभुने कहा आपसी पृथ्वीतलमें पुत्रोंके सहित पूजित होंगे ॥ ५ ॥ हे प्रभो ! सम्पूर्ण श्रेष्ठदक्षिणावाले यज्ञोंसे यक्ष असुर अपने २ सात्त्विक

राजसी तामसी गुणोंसे ॥ ६ ॥ पहले हम यजन करेंगे पहले हम यजन करें, इस प्रकार बलसे दर्पित परस्पर विवाद करने लगे ॥ ७ ॥ देवता और दैत्य परस्पर जयकी इच्छा करनेवाले अपनी विपुल भुजाओंके आश्रयसे युद्धके निमित्त स्थित हुए ॥ ८ ॥ तपसे पापरहित हुए ऋषियोंसे तथा दूसरे वेदवेदांगके पारगामी ऋषियोंके निवारण करनेपर भी वे ॥ ९ ॥ गोकुलमें वृषकी समान युद्ध करने लगे. वे देवता प्राण नामक सूत्रात्माके आश्रित हो कामादि असुरोंके जीतनेको सूत्रात्माके जीतनेको इच्छा करने लगे ॥ १० ॥ तब वे सब प्राणियोंके देखते २ मृत्युके विषयको प्राप्त हुए तब वे महा

वयं यक्षामहे पूर्वं पूर्वं यक्षामहे वयम् ॥ एवमन्योन्यसरंभाद्विद्यन्ते बलदर्पिताः ॥ ७ ॥ दैतेयाश्चाप्यदैतेयाः परस्परजयैषिणः ॥ युद्धायैव प्रतिष्ठन्ति प्रगृह्य विपुलौ भुजौ ॥ ८ ॥ निवार्यमाणा ऋषिभिस्तपसा दग्धकिल्बिषैः ॥ अन्यैश्च विविधैर्विप्रेर्वेदवेदाङ्गपारगैः ॥ ९ ॥ निवार्यमाणा युद्धयन्ते वृषभा इव गोकुले ॥ प्रयुद्धा युद्धसंक्रान्ताः सर्वे प्राणजयैषिणः ॥ १० ॥ पश्यतां सर्वभूतानां मृत्योर्विषयमागताः ॥ ततः शब्देन महता परं कृत्वा महाबलाः ॥ ११ ॥ रुन्धन्ति बाहुभिः क्रुद्धाः सपक्षा इव पक्षिणः ॥ चचाल वसुधा चैव पादाक्रान्ता च रोचिभिः ॥ १२ ॥ नौर्यथा पुरुषाक्रान्ता निषीदति महाजटे ॥ पर्वताश्च विशीर्यन्ते नर्दमाना गजा इव ॥ १३ ॥ बुधुभुश्च महानद्यस्ताडिता मातारिश्चना ॥ ततः समभवद्युद्धं मधोर्विष्णोश्च भारत ॥ १४ ॥ युगान्तकरणं घोरं सर्वप्राणिभयंकरम् ॥ प्रममाथ बलं विष्णुः समग्रं बलपौरुषम् ॥ १५ ॥

बलवाले अत्यन्त शब्द करके ॥ ११ ॥ पंखवाले पर्वतकी समान बाहुसे एक दूसरेको रोकने लगे (अर्थात् वैराग्यसे कामादिको निवारण करने लगे) उसमेंभी विघ्न हुआ उन विषयवास्तवाओंकी ज्वालासे योगभूमि चलायमान हो गई ॥ १२ ॥ जैसे पुरुषोंसे आक्रान्त होकर नौका महाजलमें दुःखी होती है इसी प्रकार आसनबंधादिक पर्वतकी तुल्य शब्द करते हुए हाथोंकी समान विशीर्ण होते हैं ॥ १३ ॥ पवनसे ताडित होकर महानदी (नाडी) चलायमान हो गई. हे भारत ! उस समय मधु और सत्त्वगुणरूप विष्णुका युद्ध होने लगा ॥ १४ ॥ वह घोर युद्ध युगान्तकी समान सब प्राणियोंको

भयंकर हुआ तब विष्णुने दैत्यका समग्र बल और पौरुष नष्ट कर दिया ॥ १५ ॥ जैसे अग्निके बलको जल शान्त कर देना है इसी प्रकार भगवान्‌से वह दैत्य शान्त हो गया ॥ १६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भा० पञ्चविंशतितमोऽध्यायः ॥ २५ ॥ वैशम्पायन बोले, वह भीम पराक्रमी मोहरूपी दैत्य (वासनामय) पार्श्वसे महेन्द्ररूपी आत्माको पर्वतान्तररूपी देहमें बांधता हुआ ॥ १ ॥ और उसको हर्षरूपी प्रह्लादके वचनसे उसके अनुसारी द्वेषरूप लयके लक्षणवाले योगीका पूर्णसत्त्वके न जाननेसे उत्पन्न हुआ माह इन्द्ररूप अपनी बुद्धिके क्षय होनेसे भविष्य द्वैतके अदर्शनरूप

वह्नेरिव बलं दीप्तं शमयत्यम्बुना यथा ॥ तथा प्रशामितं तेन भगवत्यपकारिणा ॥ १६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भवि० पञ्चविंशतितमोऽध्यायः ॥ २५ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ बलवान्तस् तु दैतेयो मधुर्भीमपराक्रमः ॥ बबन्ध पार्श्वेर्निशितैर्महेन्द्रं पर्वतान्तरे ॥ १ ॥ तं वे प्रह्लादवचनाल्लक्षणज्ञश्च भारत ॥ ऐश्वर्यमेन्द्रमाकांक्षन् भविष्यं बुद्धिसंक्षयात् ॥ २ ॥ बद्धेन्द्रं सहसा मध्ये पार्श्वेर्ममैविवर्जितैः ॥ आयसेर्बहुभिश्चित्रैर्बलवाद्भिर्विदारणैः ॥ ३ ॥ विष्णुमेवाग्रणी रुद्रमाह्वयद्युद्धकोविदः ॥ मध्ये गणानां सर्वेषां कालस्य वशमागतः ॥ ४ ॥ द्वैधीभूताः काश्यपेया मधोर्वशमुपागताः ॥ युद्धार्थमभ्यधावन्त प्रगृह्य विपुला गदाः ॥ ५ ॥ गन्धर्वाः किन्नराश्चैव वाद्ये गीते च कोविदाः ॥ प्रनृत्यन्ति प्रगायन्ति प्रहसन्ति च सर्वशः ॥ ६ ॥ तन्त्रीभिः सुप्रयुक्ताभिर्मधुराभिः स्वभावतः ॥ मनो मधोर्विधुन्वन्ति युध्यमानस्य रागिणः ॥ ७ ॥

ऐश्वर्यको इच्छा करता हुआ सुष्ठुमिरूप निर्विकल्पावस्थामें गिराता हुआ ॥ २ ॥ मर्मभेद करनेवाले पार्श्वसे भिन्न लोहकी समान दृढपार्श्वसे इन्द्रको बांधकर ॥ ३ ॥ अग्रणी होकर विष्णु और रुद्रको कालके वशीभूत हो सब गणोंके मध्यमें बुलाने लगा ॥ ४ ॥ तब वह कश्यपकी सन्तान द्वैधीभूत होकर मधुके वशमें हो गई और बड़ी २ गदा ग्रहण कर मधुके सन्मुख धावमान हुई अर्थात् गन्धर्वादि रजप्रधान मधुका मोह नष्ट करने लगे ॥ ५ ॥ गन्धर्व और किन्नर बाजे और गानेमें पंडित सब प्रकार नाचने गाने और हँसने लगे ॥ ६ ॥ और स्वभावसे मनोहर वीणा बजाते हुए युद्ध करते हुए

रागी मधुका मन विदीर्ण करने लगे ॥ ७ ॥ मधु दैत्य (तम) के विकारके निमित्त ब्रह्माके नियोगसे सत्यवादी गन्धर्व इन विकारोंको करते हैं ॥ ८ ॥ उस मधुदैत्यका मन उस गन्धर्वविद्वार्धे आसक्त हो गया. दानव और असुर प्रत्यक्ष नाद करने लगे ॥ ९ ॥ इस प्रकार मधुका मन सब ओरसे विषयोंमें लगाकर योगरूपी नेत्रोंसे देखते हुए विष्णुजी सबका यत्न करते काष्ठमें स्थित आग्निकी समान अन्तर्ध्यान हो गये ॥ १० ॥ मंत्ररूप ऋषि परमात्मारूप विष्णुको अन्तर्हित देखकर व्याकुल हो गये और स्वयंभी पितामह आत्माको आगे करके अन्तर्ध्यान हो गये ॥ ११ ॥ अब विष्णु और दैत्यके मिससे

मधोर्बलार्थं मधुनो नियोगात्पद्मयोनि (गि) नः ॥ एतान्विकारान्कुर्वन्ति गन्धर्वाः सत्यवादिनः ॥ ८ ॥ तत्र शक्तो हि गान्धर्वे तस्मिच्छन्दे मधुर्मनः ॥ दानवाश्चासुराश्चैव प्रत्यक्षं यान्ति प्राणदन् ॥ ९ ॥ मधोश्च मन आक्षिप्य पश्यन्योगेन चक्षुषा ॥ मन्दरं प्रयते विष्णुर्गूढोऽग्निरिव दारुषु ॥ १० ॥ ऋषयो दीप्तमनसं किञ्चिद्व्यथितमानसाः ॥ पितामहं पुरस्कृत्य क्षणेनान्तरधीयत ॥ ११ ॥ विष्णुं सोऽभ्यहनत्कुद्धो मधुर्मधुनिभेक्षणः ॥ भुजेन शङ्खदेशान्ते न चकम्पे पदात्पदम् ॥ १२ ॥ विष्णुश्चाभ्यहनदैत्यं कराग्रेण स्तनान्तरे ॥ स पपात महीं तूर्णं जानुभ्यां रुधिरं वमन् ॥ १३ ॥ न चैनं पतितं हन्ति विष्णुर्बुद्धविशारदः ॥ बाहुयुद्धे हि समयं मत्वाचिन्त्यपराक्रमः ॥ १४ ॥ इन्द्रध्वज इवोत्तिष्ठन् जानुभ्यां स महीतलात् ॥ मधू रोषपरीतात्मा निर्देहन्निव चक्षुषा ॥ १५ ॥ परुषाभिस्ततो वाग्भिरन्योन्यमभिगर्जतुः ॥ समीयतुर्बाहुयुद्धे परस्परवधेविणौ ॥ १६ ॥

विवेक और मोहका युद्ध वर्णन करते हैं. मधुकी समान नेत्रवाले मधुने क्रोधकर विष्णुको ताड़ित किया. वह उसकी मुष्टि शंखदेशमें लगनेसेभी विष्णुजी एकपदभी कंपित न हुए ॥ १२ ॥ विष्णुने दैत्यकी छातीमें घूंसेका प्रहार किया तब वह जानुसे रुधिर वहाता पृथ्वीमें गिरा ॥ १३ ॥ युद्धविशारद विष्णुने उस पतित हुएको न मारा. कारण कि वह अचिन्त्यपराक्रमी बाहुयुद्धके समयको जानते थे ॥ १४ ॥ फिर वह पृथ्वीतलसे इन्द्रध्वजकी समान जानुओंके बलसे उठा और क्रोधसे नेत्रोंद्वारा दग्ध करता हुआ ॥ १५ ॥ फिर दोनों कठोर वचन कहकर गर्जने लगे और परस्पर वधकी

इच्छासे बाहुयुद्ध करने लगे ॥ १६ ॥ दोनों बाहुयुद्धमें बली दोनों तपसे शान्त दोनों सत्य पराक्रमी ॥ १७ ॥ दृढप्रहारवाले दोनों वीर परस्पर एक दूसरेको खेंचने लगे और दो पंखवाले पर्वतकी समान युद्ध करने लगे ॥ १८ ॥ एक दूसरेको पृथ्वीमें पकड़कर तिरस्कार करने लगे और दो हाथियोंकी समान हाथके नखोंसे प्रहार करने लगे ॥ १९ ॥ तब शरीरमें व्रण हो जानेसे बहुत रुधिर निकला जैसे ग्रीष्मान्तमें कांचन धातुएं पर्वतसे निकलती हैं ॥ २० ॥ तब शरीरसे निकलते हुए रुधिरसे भीजे हुए दोनों पैरोंके अग्रभागसे पृथ्वीको विदीर्ण करने लगे ॥ २१ ॥ इस प्रकार वे दोनों

उभो तो बाहुबलिनावुभो युद्धविशारदौ ॥ उभो च तपसा शान्तावुभो सत्यपराक्रमौ ॥ १७ ॥ दृढप्रहारिणौ वीरावन्योन्यं विचकर्षतुः ॥ शैलेन्द्राविव युद्धयन्तौ पक्षेः पाषाणसंनिभेः ॥ १८ ॥ विकर्षन्तौ वमन्तौ च अन्योन्यं वसुधातले ॥ गजाविव विषाणायैर्नखाग्रैश्च विचेरतुः ॥ १९ ॥ ततो व्रणमुखैश्चैव सुस्राव रुधिरं बहु ॥ ग्रीष्मान्ते धातुसंसृष्टं शैलेभ्य इव काञ्चनम् ॥ २० ॥ संसिक्तौ रुधिरौ चैश्च स्रवद्भिः समरञ्जितौ ॥ अथोद्यतेः पदाग्रैश्च तौ व्यदारयतां महीम् ॥ २१ ॥ अभिहत्य तु तौ वीरौ परस्परमनेकधा ॥ पतद्ग्राविव युध्येतां पक्षाभ्यां मांसगृद्दिनौ ॥ २२ ॥ शुश्रुवुश्चान्तरिक्षेऽथ सर्वभूतानि पुष्करे ॥ सिद्धानां वदनोन्मुक्ताः परया वर्णसम्पदा ॥ २३ ॥ स्तुतयो विष्णुसंयुक्ताः सत्याः सत्यपराक्रमे ॥ शरीरं धातुसंयुक्तं संयुक्तं चेतनेन च ॥ २४ ॥ तद्ब्रह्म इन्द्रियैर्युक्तं तेजोभूतं सनातनम् ॥ ध्रुवं तिष्ठन्ति भूतास्ते सूक्ष्मे प्रलयतां गते ॥ २५ ॥

वीर परस्पर अनेक प्रकारसे प्रहार करके मांसके निमित्त दो पक्षीकी समान युद्ध करने लगे ॥ २२ ॥ तब आकाशमें सब प्राणी सिद्धोंके मुखसे निकली सत्यपराक्रमयुक्त विष्णुकी स्तुति सुनने लगे ॥ २३ ॥ जब सत्यपराक्रम विष्णुकी स्तुति की गई (देहादि अनात्मामें आत्माभिमानका जो मोह है उसके नाश करनेको आत्मासेही आत्माको विवेक स्थलपर आरुढ़ करे) जो शरीर धातुसंयुक्त और चेतनके साथ संयुक्त है ॥ २४ ॥ वह सनातन तेज युक्त ब्रह्म सनातन है. उस सूक्ष्म और लयको प्राप्त हुएमें सब भूत अवश्य स्थित होते हैं. अर्थात् माया नष्ट होनेसे ब्रह्मरूपसे स्थित होते हैं ॥ २५ ॥

फिर सब भूतोंका त्रिलोकीमें कामनाका देनेवाला सूक्ष्मरूप और अनेकरूप सब भूतोंसे उत्पन्न होता है ॥ २६ ॥ और वह सबका नियन्ता सुरूप और अनेकरूप होकर लोकोंमें विचरता है, अनेक कारणान्तरसे मानसी रूपमें स्थित होता है ॥ २७ ॥ वह योगात्मा मानसीरूप शेष कूर्मादि धारण कर अनेक दुष्ट निग्रहरूप कारणसे शेषनागरूपसे पृथ्वीको धारण करके द्युलोकको धारण करे चार वेद और पांच तत्त्वको सूक्ष्मरूपसे धारण करता हुआ विचरता है ॥ २८ ॥ ब्रह्मरूपसे ब्राह्मणोंमें युद्धरूपसे क्षत्रियोंमें प्रदानकर्मसे वैश्योंमें और सेवाकर्मसे शूद्रोंमें वसता है ॥ २९ ॥ क्षीरदानसे गौओंमें

पुनश्चोद्भवते सूक्ष्मं बहुरूपमनेकधा ॥ प्रबोध्य भावं भूतानां त्रिषु लोकेषु कामदः ॥ २६ ॥ सुरूपो बहुरूपांस्तल्लोकान्संचरते वशी ॥ मानसीं तनुमास्थाय बहुभिः कारणान्तरैः ॥ २७ ॥ योगात्मा धारयन्नुर्वीं नागात्मानं दिवंधरः ॥ ब्रह्मभूतं परं चैव सूक्ष्मेणात्मानमाश्रयः ॥ २८ ॥ ब्राह्मेण विप्रान्वसति युद्धेनैव च क्षत्रियाञ्च ॥ प्रदानकर्मणा वैश्याञ्छूद्रान्परिचरेण च ॥ २९ ॥ गावः क्षीरप्रदानेन अश्वान्यज्ञेषु प्रोक्षणैः ॥ पितरश्चोष्मणा वेदहविर्भागेन देवताः ॥ ३० ॥ चतुर्भिर्व्यतिरिक्ताङ्गैस्त्रिभिरन्यैश्च धातुभिः ॥ सप्तभिः पितृभिर्नित्यैर्स्त्रील्लोकान्परिरक्षति ॥ ३१ ॥ चन्द्रसूर्यात्मकं नित्यं तद्रूपनिहतात्मकम् ॥ प्रकाशं चाप्रकाशं च निगूढं स्वेन तेजसा ॥ ३२ ॥ त्रयस्तु पितरो नित्यं वर्द्धयन्ति दिवाकरम् ॥ चतुर्भिः पितृभिश्चैव चन्द्रो वर्धति मण्डले ॥ ३३ ॥ त्रयः पितृगणा नित्यं पिण्डान्पश्चाददन्ति ते ॥ चत्वारोऽन्ये पितृगणाः सिद्धाः पञ्चक आददे ॥ ३४ ॥

यज्ञोंसे प्रोक्षणकर्मद्वारा अश्वोंमें भोजनके गरम प्रदान करनेसे पितरोंमें हविर्भागसे देवताओंमें ॥ ३० ॥ दर्श पौर्णमास पिण्डपितृयज्ञ इन चारमें और मन वाक् प्राण इन तीनमें इस प्रकार सात अन्नसे पितरोंके साथ तीन लोककी रक्षा करता है ॥ ३१ ॥ यह सप्तक चन्द्रसूर्यात्मक है, इसमें अर्चिरादि मार्ग प्रकाशरूप और धूम्रादि मार्ग अप्रकाशरूप हैं यह अपने तेजसे निगूढ कर रक्खा है ॥ ३२ ॥ मन वाक् प्राण यह तीनों पितर नित्य दिवाकर अर्थात् अर्चिरादि मार्गको बढ़ाते हैं और दर्शादि चार पितरोंसे चन्द्रमण्डल (धूममार्ग) बढ़ाया जाता है ॥ ३३ ॥ पूर्वोक्त तीन पितर नियमसे

नित्य फलभोगके अन्तमें स्थूल सूक्ष्म कारण देहोंको संहार करते हैं अर्थात् मन वाक् और प्राण उपासनाको प्राप्त हो मुक्ति प्रदान करते हैं और दूसरे दर्शादिक पितरोंके गण शरीरके आकारसे परिणामको प्राप्त हो पंच विषयादिक होते हैं अर्थात् दर्शादिका फल देहान्तर प्राप्तिके निमित्त है ॥ ३४ ॥ हे विभो ! तुमही तिन पांचों धर्मोंके रूप हो जैसे सुवर्णके कुंडलादि होते हैं, उस प्रकार सनातन दिव्य शाश्वत ब्रह्मसे सबका संभव है ॥ ३५ ॥ इस कारण आप उस तेजको ग्रहण करते हो, सब प्रकार अग्नि वायुरूप हो उसी कर्मसे तुम आदित्यरूप हो ॥ ३६ ॥ जो अपनी रश्मियोंसे जगत्को भस्म करते हुए भक्षण करते हो, युगान्तकालके प्राप्त होनेसे परम सिद्धिको प्राप्त हुआ ॥ ३७ ॥ पक्ष संधि पूर्णिमा और अमा-
 त्वमेव पञ्च तान्धर्मास्त्वमेवापञ्च तान्विभो ॥ सनातनमयो दिव्यः शाश्वतो ब्रह्मसंभवः ॥ ३५ ॥ तस्मात्तत्तेज आदत्ते अग्निर्वायुश्च सर्वशः ॥ अतस्त्वं कर्मणा तेन आदित्यः समपद्यत ॥ ३६ ॥ यदश्नासि जगत्सर्वं रश्मिभिः प्रदहन्निव ॥ युगान्तकाले संप्राप्ते परां सिद्धिमुपागतः ॥ ३७ ॥ पक्षसंधावमावास्यां लोकं चरसि मानुषम् ॥ ऋषिभिः सह गूढात्मा सूर्येन्दुवसुसंभवैः ॥ ३८ ॥ सफलं कर्म कुर्वाणं यजतां पुष्टिवर्धनम् ॥ हेतूनामविकाराय मा भूत्कर्मविपर्ययः ॥ ३९ ॥ वनस्पत्योषधीश्चैव युगपत्प्रातिपद्यसे ॥ बालभावाय वसुधां पक्षे पक्षे जनिस्तव ॥ ४० ॥ भूतानां भुवि भूतेश भाव्यर्थं वसुधातले ॥ वसु यद्भुवि किञ्चिच्च सर्वं तत्त्वमयं विभो ॥ ४१ ॥ त्वमेव विविधं धर्मं शाश्वतं वसुधातले ॥ देवयज्ञं मन्त्रवाक्यमात्मयज्ञं समानुषम् ॥ ४२ ॥ द्विविधः स्वर्गमार्गश्च सूर्यश्चन्द्रश्च निर्मलः ॥ चन्द्रमाः पितृयानश्च देवयानश्च भास्करः ॥ ४३ ॥

वसमें सूर्य चन्द्रमा वसुके संग गूढात्मा होकर मनुष्यलोकमें विचरते हो ॥ ३८ ॥ फलसहित कर्मको करते हुए पुष्टिवर्धन यजन करते हुए हेतुओंके अविकारके निमित्त कर्मका विपर्यय न हो ॥ ३९ ॥ वनस्पति और औषधियोंमें दर्शादिको पृथ्वीको चन्द्ररूपसे प्राप्त होते हो, बालभाव होनेसे प्रत्येक पक्षमें उत्पन्न होते हो ॥ ४० ॥ हे भूतेश ! भूत भविष्य वर्तमान अर्थोंमें जो कुछ भूतोंका द्रव्य है वह सब तत्त्वरूप है ॥ ४१ ॥ हे भगवन् ! पृथ्वी-
 तलमें आप विविध शाश्वत धर्म करते हो, आप देवयज्ञ में वाक्य आत्मयज्ञ मानुषरूप हो ॥ ४२ ॥ सूर्यचन्द्रमाके भेदसे स्वर्गका दो प्रकारका मार्ग है चन्द्रमा पि पान मार्ग और सूर्य देवयान मार्ग है ॥ ४३ ॥

तुमही पृथ्वी रूप होकर प्राणिरूपसे मर्यादाके सहित विश्वमें विचरते हो. इन्द्रियादिके गुणोंको संक्षेप करके देहमात्ररूपसे दूसरे लोकमें गोचर होता है ॥ ४४ ॥ एकही आप पुराणपुरुष विराटरूप हो अक्षय अप्रमेय कर्मकर्ता वशी ॥ ४५ ॥ और तेजरूप होकर चक्षुओंके गोचर होते हो और आकाशचारी वायुभी तुम हो सात महत् अहंकार पंच तन्मात्राओंसे नित्य आच्छादित होकर स्थित होता है ॥ ४६ ॥ साधन निर्माण संहार प्रलय अर्थात् समाधिसाधनकालमें जीवरूपसे निर्वाणमें शुद्धरूपसे संहाररूप दिन प्रलयमें रुद्ररूपसे पालनमें विष्णुरूपसे दिशा वर्णाश्रम मर्यादा चक्षुइ-

त्वमेव वसुधायुक्तो विश्वं चरासि सीमया ॥ एकीकृत्य गणान्सर्वान्संक्षिप्यामुत्र संभवः ॥ ४४ ॥ एकस्त्वमसि संभूतः पुराणपुरुषो विराट् ॥ अक्षयश्चाप्रमेयश्च कर्मकारकरो वशी ॥ ४५ ॥ मूर्तस्तेजसि संभूतो वायुः पयोति खेचरः ॥ सप्तभी रूपसंस्थानेर्नित्यमावृत्य तिष्ठति ॥ ४६ ॥ साधने चापि निर्माणे संहारे प्रलये तथा ॥ धाता धारणकाले च दिशश्चक्षुषि धारिणी ॥ ४७ ॥ सेव्यमानो मुनिगणेर्नित्यं विगतकिल्बिषैः ॥ कर्मभिः सत्यमापन्नैः समरागेर्जितेन्द्रियैः ॥ ४८ ॥ स्तूयमानैश्च विबुधैः सिद्धैर्मुनिवरैस्तथा ॥ सस्मार विपुलं देहं हरिर्हयशिरो महान् ॥ ४९ ॥ कृत्वा वेदमयं रूपं सर्वदेवमयं वपुः ॥ शिरोमध्ये महादेवो ब्रह्मा तु हृदये स्थितः ॥ ५० ॥ आदित्या रश्मयो बालाश्चक्षुषी शशिभास्करो ॥ जंघे तु वसवः साध्याः सर्वसंधिषु देवताः ॥ ५१ ॥ जिह्वा वैश्वानरो देवः सत्या देवी सरस्वती ॥ मरुतो वरुणश्चैव जानुदेशे व्यवस्थिताः ॥ ५२ ॥

न्द्रियमें चिद्रूपसे वर्तमान तुमही हो ॥ ४७ ॥ नित्य पापरहित कर्मोंद्वारा सत्यताको प्राप्त हुए शत्रुमित्रमें समान दृष्टि रखनेवाले जितेन्द्रिय मुनिजनोंसे सेवित ॥ ४८ ॥ देवता सिद्ध और मुनिजनोंसे स्तूयमान होकर (मधुसे बद्ध हुए महेन्द्र नामक जीवने स्तुतिव्याजसे सिद्ध हो सद्गुरुसे बोधित होकर हरिने) अपने सर्वात्मक देह हयशिरको स्मरण किया ॥ ४९ ॥ वह सर्वदेवमय अपना वेदमय रूप करते हुए शिरके मध्यमें महादेव और हृदयमें ब्रह्मा स्थित हुए ॥ ५० ॥ सूर्यकी किरण बालचन्द्र सूर्य नेत्र हुए वसु साध्य जंघाओंमें और सम्पूर्ण संधियोंमें देवता हुए ॥ ५१ ॥ जिह्वामें अग्नि देवता सत्या

देवी वाणीरूप; मरुत और वरुण जानुदेशमें स्थित हुए ॥ ५२ ॥ इस प्रकार देवताओंको महाअद्भुत रूप करके क्रोधसे लाल नेत्र कर मोहरूपी असुरको पीडित किया ॥ ५३ ॥ उस समय मधुके मेदरूपी जलसे पूर्ण पृथ्वी दीखने लगी, जैसे घनकुचासे युक्त प्रमदा शुक्लवर्ण धारण किये शोभित होती है, त्वचा रुधिर मांस मज्जा अस्थि मेद शुक्र धातुओंसे रचित शरीर मोहमें मेदमात्र पयन्त अवशिष्ट रहा अर्थात् अज्ञानलेशसे पूर्ण हुई पृथ्वी दीखने लगी ॥ ५४ ॥ हे राजन् ! तबसे यह पृथ्वी स्निग्धरूप हो मेदिनी नामसे विख्यात हुई और सहस्रों दैत्योंद्वारा यह नाम प्रतिष्ठित किया गया है, यदि अज्ञान न हो तो ज्ञानके होतेही शरीरपात होजाता है ॥ ५५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां षड्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २६ ॥

एवं कृत्वा तथा रूपं सुराणामद्भुतं महत् ॥ असुरं पीडयामास क्रोधाद्रक्तान्तलोचनः ॥ ५३ ॥ मधोर्मेदोऽम्बुपूर्णा च पृथिवी समदृश्यत ॥ प्रमदेव घना चैव शुक्लांशुकानिवासिनी ॥ ५४ ॥ मेदिनीत्येव शब्दश्च लब्धः पृथ्व्याः नरोत्तम ॥ नामासुरसहस्रेण धरण्यां संप्रतिष्ठितम् ॥ ५५ ॥ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि षड्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ मधोर्निपतनं दृष्ट्वा सर्वभूतानि पुष्करे ॥ प्रदृष्टानि प्रगापन्ति प्रनृत्यान्ति च सर्वशः ॥ १ ॥ सुपाश्वो गिरिमुख्यस्तु काञ्चनेः शिखरोत्तमेः ॥ बहुधातुविचित्रैश्च खं लिखन्निव चाबभौ ॥ २ ॥ गिरयश्चाभिः शोभन्ते धातुभिः समरञ्जिताः ॥ प्रांशुभिः शिखराग्रैश्च सविद्युत इवाम्बुदाः ॥ ३ ॥ पक्षपातोद्धतो रेणुश्रृणैः साञ्जनवालुकैः ॥ छादयन्पर्वताग्राणि महामेघ इवाबभौ ॥ ४ ॥

वैशंपायन बोले; परम व्योमाख्य कारणब्रह्ममें अज्ञान मोहरूप दैत्यका पतन देखकर सम्पूर्ण प्राणी प्रसन्न हो न चने और गाने लगे अर्थात् अब उपदेश लगकर कारणब्रह्ममें प्रवेश हो सकेगा ॥ १ ॥ वह पूर्वोक्त सुन्दर पार्श्ववाला गिरिमुख्य अर्थात् दिव्यदेहभी बहुतसी धातुसे विचित्र आकाशको लिखता हुआ प्रकाशित हुआ ॥ २ ॥ उसके निकट धातुओंसे रंजित दूसरे पर्वत शोभित होने लगे, उनके ऊंचे शिखर बिजलीयुक्त बादलकी समान शोभित हुए ॥ ३ ॥ पक्षपवनसे उठी हुई धूरि और चूर्ण और रेतके संग पर्वतके अग्रभागको आच्छादन करती हुई महामेघकी समान शोभित हुई ॥ ४ ॥

मेघोंसे छुए हुए शिखर पक्षसे विक्षिप्त वृक्ष कांचनके उद्भेदसे अधिकतर पर्वत आकाशमें स्थित हुए (आकाश हृदयाकाश) ॥ ५ ॥ पक्षवाले शिखरयुक्त सुवर्णकी धातुओंसे रंजित पवनसे समुद्भूत हुए विहंगमोंको त्रासित करते हैं ॥ ६ ॥ वे सम्पूर्ण सुवर्णके पर्वत रूफटिक मणियोंसे युक्त सूर्यकान्त चंद्रकांत मणियोंसे निर्मल ॥ ७ ॥ महापर्वत हिमवान् श्वेतधातुओंसे अर्चित सुवर्णकी समान प्रकाशित पर्वतोंके अग्रभाग और सूर्यकी किरणके समान प्रकाशित ॥ ८ ॥ पक्षान्तरसे निकले हुए प्रकाशमान मणियोंसे प्रकाशित ताम्रपुष्प युक्त शिखरोंद्वारा अपने तेजसे

मेघसंश्लिष्टशिखराः पक्षविक्षिप्तपादपाः ॥ काञ्चनोद्भेदबहुलाः खेतिष्ठन्तीव पर्वताः ॥ ५ ॥ पक्षवन्तः सशिखरा हेमधातुभिरञ्जिताः ॥ पवनेन समुद्भूतास्त्रासयन्ति विहङ्गमान् ॥ ६ ॥ काञ्चनाः पर्वताः सर्वे रूफटिकैर्मणिभिश्चिताः ॥ सूर्यकांतैश्च बहुभिश्चन्द्रकान्तैश्च निर्मलाः ॥ ७ ॥ हिमवांश्च महाशैलः श्वेतैर्धातुभिराचितः ॥ कांचनेः शिखराग्रैश्च सूर्यपादप्रकाशितः ॥ ८ ॥ मणिभिश्च प्रकाशद्भिः पक्षान्तराविनिःसृतेः ॥ ताम्रपुष्पैश्च शिखरैर्दीप्यमानैः स्वतेजसा ॥ ९ ॥ मन्दरश्चोग्रशिखरः रूफटिकैर्मणिभिश्चितः ॥ वज्रगर्भो निरालम्बः स्वर्गोपम इवावभौ ॥ १० ॥ सहस्रशृङ्गः कैलासः शिलाधातुविभूषितः ॥ तोरणैश्चैव निविडैः प्रांशुभिश्चैव पादपैः ॥ ११ ॥ प्रवादयद्भिर्गन्धर्वैः किन्नरैश्च प्रगायिभिः ॥ देवकन्याङ्गरागैश्च प्रक्रीडाद्विरिवावभौ ॥ १२ ॥ मधुरैर्वाद्यगीतैश्च नृत्यैश्चाभिनयोद्भूतैः ॥ शृङ्गारैः साङ्गहारैश्च कैलासो मदनापते ॥ १३ ॥ आदित्याभासिभिः शृङ्गैर्भिन्नाञ्जनचयोपमैः ॥ विन्ध्यो नीलाम्बुदश्यामो विभिन्न इव तोयदः ॥ १४ ॥

प्रकाशमान ॥ ९ ॥ मन्दर उग्र शिखरवाला रूफटिकमणियोंसे शोभित वज्रगर्भ निरालम्ब स्वर्गकी समान शोभित हुआ ॥ १० ॥ सहस्रशृंग कैलास शिलाधातुओंसे भूषित बड़ी बड़ी घनी तोरणोंसे युक्त ऊंचे वृक्षोंसे व्याप्त ॥ ११ ॥ गन्धर्वोंसे गाया हुआ किन्नरोंके शब्दोंसे परिपूर्ण देवकन्याओंके अंगरागोंसे क्रीडा करते हुएकी समान शोभित हुआ ॥ १२ ॥ मधुर बाजे और गीतोंसे अभिनय करते हुएकी शृंगार और अंगहारद्वारा कैलास कामरूप हो रहा है ॥ १३ ॥ सूर्यकी समान प्रकाशमान भिन्नाञ्जनचयके समूहोंसे नीलमेघकी समान श्याम भिन्नमेघकी समान विन्ध्याचल

दीखने लगा. (मेरुपृष्ठरूप भूमध्यमेंसे प्रकाश हो निकलता है) ॥ १४ ॥ महाबलिष्ठ मेरुपृष्ठमें सब प्राणियोंकी धातुके निमित्त मेघजालकी समान उत्तम जलको उगलने लगे ॥ १५ ॥ चित्रविचित्र शिला और बहुरूपवाली धातुएं अपने गुहाद्वारसे स्फटिकमाणिकी समान निर्मल जल वहाने लगीं ॥ १६ ॥ ग्रीष्मान्तमें वायुसे संयुक्त हुए बिजलीसहित घनकी समान पुष्पोंसे चित्रविचित्र हुए वृक्ष शोभित होने लगे ॥ १७ ॥ कनकअलंकारसे भूषित हाथी पक्षियोंकी कान्तिसे लीन हुए लता और वृक्षोंमें आश्रय लेने लगे ॥ १८ ॥ लम्बायमान वायुसे चलायमान फूलोंवाले वृक्ष वैशाखमासकी समान ॥ १९ ॥

धात्वर्थं सर्वभूतानां मेरुपृष्ठे महाबले ॥ निर्वैमुर्विमलं तोयं मेघजालैरिवोत्तमैः ॥ १५ ॥ शिलाभिर्बहुचित्राभिर्धातुभिर्बहुरूपाभिः ॥ प्रस्रवद्भिर्गुहाद्वारैः सलिलं स्फटिकप्रभम् ॥ १६ ॥ ग्रीष्मान्ते वायुसंमूढा घना इव सविद्युतः ॥ चित्रैः पुष्पैस्तरुगणाः शोभन्त इव भूषिताः ॥ १७ ॥ नागाः कनकसंभूतैर्विचित्रैरिव भूषिताः ॥ विहंगमाभिर्लीनाश्च लतास्तरुसमाश्रिताः ॥ १८ ॥ विलम्बन्त्यः सपुष्पाश्च नृत्यन्ते वायुघट्टिताः ॥ पवनेन समुद्रता महता माधवेऽहनि ॥ १९ ॥ मुमुक्षुः पुष्पसंघातं तोयं वेलेव वर्षति ॥ बलवद्भिश्च विपुलैः शाखास्कन्धावरोहिभिः ॥ २० ॥ पादपैर्वर्णबहुलैर्ध्रियते च वसुन्धरा ॥ मधुप्रिया मधुकरा मधुमत्ता विहङ्गमाः ॥ घोषयन्तीव गायन्तः कामस्यागमसंभवम् ॥ २१ ॥ विष्णुर्मधोर्निहन्ता च चकार मधुवाहिनीम् ॥ नदीं प्रस्रवनिर्भेदां सुतीर्थी बहुलोदकाम् ॥ २२ ॥ अङ्गारवर्णसिकतां मधुतीर्थी मनोरमाम् ॥ विमलैरम्बुभिः पूर्णां पुष्पसंचयवाहिनीम् ॥ २३ ॥ विवेश पुष्करं सा तु ब्रह्मणो वाक्यचोदिता ॥ ऋषिभिश्चानुचरितां ब्रह्मतन्त्रनिषेविभिः ॥ २४ ॥

फूलोंको त्यागने लगे. जैसे वेलामें जलवर्षा होती है और बड़े बलवाले शाखा और स्कंधमें आरोहण करनेवाले ॥ २० ॥ बहुत सारे वृक्षोंसे पृथ्वी धारित होने लगी. मधुके प्रिय मधुकर मधुमत्त विहंगम गाते हुए मानो कामका आगमन सूचन करते हैं ॥ २१ ॥ मधुहंता विष्णुने बहुत जलयुक्त मधुवाहिनी निर्भेद सुतीर्थ नदी निर्माण की ॥ २२ ॥ जो अंगारवर्णवाली रेतसे युक्त सुतीर्थ और मनोरमा उज्ज्वल जलसे पूर्ण पुष्पसमूहकी वहानेवाली थी ॥ २३ ॥ इस प्रकार वह स्वमकल्या मधुमती भ्राम “ नेह नानास्ति किंचन ” इस श्रुतिसे प्रबोधित योगीके हृदयाकाशमें लीन हो गई जो ऋषिरूप

योगियोंद्वारा अनुसरण की गई थी ॥ २४ ॥ इस प्रकार योगके उपसर्ग लीन होनेपर ब्रह्मविद्यासंज्ञक 'अहं ब्रह्मास्मि' वाक्यवाली अन्तःकरणकी वृत्ति उदय होती है। धात्री (मूलप्रकृति) कपिल (त्रिगुणात्मकत्व मिश्ररूपसे) गौ (आत्मतत्त्व विद्यावृत्ति होकर) पयः क्षरते (ब्रह्मको प्रकाश करती है) मधुर (आनंदमात्र होनेसे) यज्ञे (योगके अधिक विस्तार होनेपर) ब्रह्मवाक्य (अहं ब्रह्मास्मि) से प्रेरित हुई प्रगट होती है ॥ २५ ॥ फिर वह पृथ्वी कूटस्थ वस्तुको धारण करनेमें समर्थ होकरभी अपने उपादान जलके प्रति प्राप्त होकर गतवती होती हुई उस समय योगी ब्रह्मा निर्विकल्प समाधिसे आत्माको भजता है ॥ २६ ॥ और वेदवाणीसे समुद्भूत ज्ञानमात्र अज्ञानका विरोधी ब्रह्म सर्वदा आकाशमें स्थित है अर्थात् आकाशभी उसके

धात्री कपिलरूपेण गोभूत्वा क्षरते पयः ॥ मधुरं वितते यज्ञे ब्रह्मणो वाक्यचोदिता ॥ २५ ॥ शिरश्च पृथिवी भूतं संधातुं प्राप्तवान्महीम् ॥ शुद्धं च भजते लोकं शाश्वतं परमाद्भुतम् ॥ २६ ॥ सरस्वत्याः समुद्भूतं ब्रह्मक्षेत्रे तमोनुदम् ॥ मरुतीर्थमतिक्रम्य पुष्करेषु विसर्पाते ॥ २७ ॥ सुचारुरूपा धर्मज्ञा अजरूपेण छादयन् ॥ रूपं कनकवर्णाभं तपोयुक्तेन तेजसा ॥ २८ ॥ अजगन्धकृतोन्मुक्तः संभूतः पर्वतो महान् ॥ गुरुद्वारगुणप्राणः शाश्वतः सिद्धसेवितः ॥ २९ ॥ वेदिकाभिः सुचित्राभिः काञ्चनाभिर्विराजितः ॥ पुष्कराणि परीतानि त्वष्टा विपुलदक्षिणः ॥ ३० ॥

आश्रितही है ॥ २७ ॥ सुन्दररूप धर्मके जाननेवाली अजा (अहंकारादि रूपसे माया) कनकवर्ण ब्रह्मको आच्छादन करनेवाली है वह आच्छादन तपोयुक्त चित्तसे होता है, यह अध्यास अदृष्टवशसे होता है ॥ २८ ॥ वह नदी सन्मान लेशसे मुक्त अर्थात् अहंकारादिकोंसे जाग्रत अवस्थामें सत्की समान भूतमान महापर्वत (गुरुद्वार) शाश्वतरूप सिद्धजनोंसे शोभित सुवर्णके समान रूपको साक्षात् करती है ॥ २९ ॥ जो कहो कि सुषुप्तिआदिमें मनके संयोगाभावसे संसारी अहमर्थसे प्रकाशित होता है उस समयभी इसको अनात्मत्व नहीं होता उसपर कहते हैं कि वह पर्वत जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तीन क्रीडाके स्थानवाली वेदिकाओंसे विराजित है, जो चित्रविचित्ररूप है, और अहंकारादि उत्थानकारण मूल अज्ञान

विचित्र जगत्के निर्माण करनेवाले ईश्वरसे व्याप्त है. हे राजन् ! चित्तप्रकाश चित्स्वभावको नहीं भजता है ॥ ३० ॥ जिस प्रकार उस महामेरु पर्वत (शरीर) का रूप पांच धातु (महाभूतशरीरके कारण) से व्याप्त है वह अहंकाररूपसे अद्भुत दर्शन होकर अनिर्वचनीय चेतनासे सम्पन्न होता है ॥ ३१ ॥ फिर शास्त्रदृष्टिसे ब्रह्मरूप हो “अहं मनुरभवम्” इति श्रुतेः । तत्त्वको कथन करता है, मैंही इस धर्मचारी देहको मनके संकल्पमात्रसे कलंगा सो केवल देहमात्रही नहीं किन्तु सम्पूर्ण लोकमात्रको कर सकता हूं. तथा पृथ्वी शरीरसम्बन्धिनी चेतनाको बहुत प्रकारसे कर सकता हूं. यह सब मनकेही संकल्पसे हो सकता है यह सब आत्मा है यह इसका तात्पर्य है ॥ ३२ ॥ सर्वज्ञता कहते हैं धातुलक्षणवाली पांच इन्द्रियोंसे तीनों

महामेरोर्यथा रूपं पञ्चभिर्धातुभिर्वृतः ॥ चेतनायाभिसंपन्नो रूपेणाद्भुतदर्शनः ॥ ३१ ॥ करिष्याम्यहमप्येतन्मनसा धर्मचारिणम् ॥ रूपं बहुविधं लोके पार्थिवीं चेतनां तथा ॥ ३२ ॥ त्रींश्च लोकान्प्रपद्येयं पञ्चभिर्धातुलक्षणेः ॥ षष्ठेन च सप्तर्जेयं मनसा धर्मचारिणीम् ॥ ३३ ॥ सङ्गेषु भावमोहाभ्यां पश्यन्ति च समृद्धयः ॥ विमुक्ताः सर्वसङ्गेभ्यो धारयन्ति परिग्रहान् ॥ ३४ ॥ न च विन्देत मां कश्चिन्मनसा कामरूपिणम् ॥ पञ्चधातुनिबद्धश्च नानाभाषितचोदनाः ॥ ३५ ॥ ये च विष्णुमधीयन्ते बहुधा कामविग्रहेः ॥ ते मां पश्येयुरव्यक्तं तपसा दग्धकिल्बिषाः ॥ ३६ ॥

लोकोंको जानता हूं (आत्मज्ञान कहते हैं) और छठे मनसे धर्मचारिणी आत्माकी संहार असंग चिदाकार वृत्तिभी बना सकता हूं ॥ ३३ ॥ दीयमान विद्याके अधिकारियोंको कहते हैं. जो सम्यक् ऐश्वर्यमान् पुरुष है अर्थात् संकल्पमात्र भ्रमत्वसे सिद्धिको देखते हैं इसी कारण सम्पूर्ण संगोंसे विरक्त हुए बुद्धि इन्द्रिय मन प्राणोंको विषयोंसे रोकते हैं वे अधिकारी हैं ॥ ३४ ॥ कामरूपवाले मुझको मन करके कोईभी नहीं जान सकता कारण कि वे पंचेन्द्रियोंसे अनेक प्रकार बंध रहे हैं और “अपामसोममृता भवेम” आदि नानार्थवाद फलमें पड़े हैं ॥ ३५ ॥ जो रामरुष्णादि अनेक रूप धारण करनेवाले विष्णुको प्रणवादि उच्चारण कर देखते हैं अर्थात् प्रथम स्थूल पूजासे अन्तर दृढ़ हो जाय इस कारण बाह्यसामग्रीका वर्णन किया

जब सब जगत् लीन हो जाय तब योगीको अव्यक्तरूपका भान हो जाता है ॥ ३६ ॥ जो धर्ममार्गमें स्थित हो मेरे विषे प्राप्त होंगे वे स्वर्गजित् होकर क्लमरहित हो मुझको देख सकते हैं ॥ ३७ ॥ और जो मेरूपृष्ठमें प्रांशुरूप पर्वत है अर्थात् भूमध्यमें समष्टि अहंकार है इसपर स्थित हो अविद्याके संग युद्धमें इन्द्रियरूप प्राणत्यागसे निर्मल हो ॥ ३८ ॥ अप्सराओंके साथ समागमको प्राप्त हो मनकी समान वेगवान् होकर विचरें. इस प्रकार नन्दन और काम्यक वनको प्राप्त हो ॥ ३९ ॥ इस विद्याको प्राप्त हुए मेरे भक्त अनेक प्रकारके बहुतसे व्रत करके शरीरको त्याग करेंगे ॥ ४० ॥ सिद्धिको प्राप्त हो वे मनुष्य इच्छानुसार कामनाओंको प्राप्त होते हैं उस लोक और इस लोकमें यथासुखसे जा सकते हैं ॥ ४१ ॥ जब तपसे उक्त ये च मामभिरोहेयुर्नरा धर्मपथे स्थिताः ॥ तेऽपि स्वर्गजितः सन्तः पश्येयुर्मां गतकृमाः ॥ ३७ ॥ यश्चैव पर्वतः प्रांशुर्मेरूपृष्ठे व्यवस्थितः ॥ एतमारुह्य युध्येयुः प्राणत्यागेषु निर्मलाः ॥ ३८ ॥ अप्सरोभिः समागम्य विचरेयुर्मनोजवाः ॥ नन्दनं वनमारुह्य काम्यकं च महद्रनम् ॥ ३९ ॥ इमां विद्यां समास्थाय मद्भक्ताः पुष्करेष्विह ॥ शरीरं क्षपयिष्यान्ति व्रतैर्बहुविधैः कृतेः ॥ ४० ॥ सिद्धिं प्राप्य क्रमेयुस्ते कामैर्बहुविधैर्नराः ॥ इमं लोकममुं चैव संपतेयुर्यथासुखम् ॥ ४१ ॥ गौरी सिद्धेति व्याख्याता त्रिषु लोकेषु विद्यया ॥ प्रभावं तपसा वृत्तं दर्शयन्ति समाहिताः ॥ ४२ ॥ षण्णां ज्ञानाभिसंधीनामभिज्ञानात्ससंग्रहाः ॥ भवेयुस्ते निरारम्भा धातुनिर्मुक्तबन्धनाः ॥ ४३ ॥ सहस्रगुणमप्यत्र दत्त्वा दानफलादिव ॥ अवमानेन विप्राणां मनःशुद्धेन कर्मणा ॥ ४४ ॥ सर्वत्रैवाप्रमेयेण अत्यन्तं फलमाप्नुयुः ॥ अमुष्मिल्लोके धर्मज्ञा सह सर्वकुलोद्भवैः ॥ ४५ ॥

प्रकारका प्रभाव हो जाता है तब विद्या अर्थात् शास्त्राचार्यके उपदेशज्ञानसे गौरी परब्रह्मविदको त्रिलोकीमें सिद्ध हुई दीखती है ॥ ४२ ॥ वे योगी जन ज्ञानवृत्तिमें रहनेसे धातुनिर्मुक्त होते हैं अर्थात् उनका बंध छूट जाता है और वे ज्ञान होनेसे निरालम्ब हैं ॥ ४३ ॥ जैसे कोई अपराधी सहस्रगुण राजाको कर देकर दानफलासे राजाकी प्रीतिसे मुक्त होता है इस प्रकार शुद्धमन ब्राह्मणोंके सन्मानसे और शुद्ध कामरहित मनसे बंधनसे मुक्त हो जाते हैं ॥ ४४ ॥ सब जगह असंकुचित मनसे अत्यन्त दुःखका परिहार परमेश्वरकी प्रीति ब्रह्मलोकमें पूर्वजोंके सहित उनको प्राप्त होती है जो धर्मज्ञ

॥ ४५ ॥ जिन यजमानोंका ब्राह्मणकुलके साथ यज्ञमें सान्निध्य होता है वे यजमानादिनी वारंवार यज्ञमें अभिषेकको प्राप्त हो पूर्वोक्त फलको प्राप्त होते हैं ॥ ४६ ॥ जैसे दानयज्ञसे सम्पत्ति मानते हो, तथा ब्रह्मविद्याकी सम्पत्ति तपोधनके आगे स्थित मानते हो तो ऐसा न मानिये, कारण कि भूतोंपर अनुग्रह करनेके निमित्त धर्मचारिणी अर्थात् बाह्य दान यज्ञ दानादिसे बाह्य सम्पत्ति साध्य हैं वह परिमित सम्पत्ति है और मानसी होनेसे अनन्त है ॥ ४७ ॥ यदि ऐसा है तो दानादिक करनेसे क्या लाभ है. यह गौरिरूप आत्मा सत्यस्वरूप और अबाधित है. यह सत्यरूप होगी इसमें सन्देह नहीं. चित्तशुद्धि आदिसे जो इस प्रकार धर्माचरण करता है वह अफलताको प्राप्त नहीं हो सका ॥ ४८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां

येषामिह च सान्निध्यं यज्ञे ब्राह्मणसंकुले ॥ ते भूयो यजमानाद्या अभिषिच्य पुनः पुनः ॥ ४६ ॥ तथा तां मन्यसे गौरीं मनसा धर्मचारिणीम् ॥ अनुग्रहाय भूतानां तन्ममाग्रे तपोधने ॥ ४७ ॥ सत्य एष परोविद्ये भविता नात्र संशयः ॥ नाफलो विद्यते धर्मश्चरितो धर्मचारिणा ॥ ४८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि सप्तविंशतितमोऽध्यायः ॥ २७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ दिशं जिगमिषुर्दिव्यामुत्तरां सत्यसाधनः ॥ तथा स धातुनिचये पुण्ये पर्वतरोधसि ॥ १ ॥ विष्णुः परमधर्मात्मा एकपादेन तिष्ठति ॥ दश वर्षसहस्राणि पुष्करे पुष्करेक्षणः ॥ २ ॥ आत्मन्यात्मानमाधाय तपसा ब्रह्मसंभवः ॥ घटते कर्मणोग्रेण लोकमुत्थानकारणात् ॥ ३ ॥ भासुरो भस्मनाच्छाद्य गात्राणि स्वयमात्मनः ॥ अष्टौ वर्षसहस्राणि सहस्रं च तपोधनः ॥ ४ ॥ तेजसा तेन ज्योतीषि विभाव्य ब्राह्मणर्षभः ॥ तिष्ठते नभसो मध्ये योगात्मा भावयन् जगत् ॥ ५ ॥

सप्तविंशतितमोऽध्यायः ॥ २७ ॥ वैशम्पायन बोले, मोक्ष अवस्थाको प्राप्त होनेवाले उत्तरदिशारूप मोक्षमें जानेकी इच्छासे उस धातुसमूहवाले पर्वत (नासामूल भूसंधि) में ॥ १ ॥ परम धर्मात्मा विष्णु हृदयरूपी आकाशमें विश्व तैजस प्राज्ञ तुरीय चार चरणोंमेंसे तुरीयपादसे स्थित होता है. अर्थात् निर्विकल्प समाधिसे स्थित होता है. वह पुष्करलोचन दश सहस्र वर्ष स्थित हो ॥ २ ॥ शुद्धआत्मामें मायोपाधिक शरीरको लीन कर उग्रकर्मसे मुक्तिके निमित्त चेष्टा करता है ॥ ३ ॥ भस्मसे अंगोंको आच्छादन कर नौ सहस्र वर्षतक वह तपोधन ॥ ४ ॥ ब्राह्मणश्रेष्ठ अपने तेजसे प्रसिद्ध तारकादि ज्योति-

योंको व्याप्त करके सब जगत्को भावना करते हुए योगात्मा आकाशके मध्यमें स्थित होते हैं ॥ ५ ॥ सोम अर्थात् चन्द्रमाके विषयका अधिकार करके मनसे मनको धारण करके वह धर्मात्मा ब्राह्मी सिद्धिको प्राप्त होकर ॥ ६ ॥ दिवि भुविके मध्यमें सब ओरसे केव प्रकाश कर्म बहुरूप सम्पदासे करता हुआ ॥ ७ ॥ वह माहेश्वर गूढात्मा वृष (धर्म) रूपसे स्थित होता है, वह धर्म अहिंसागर्भ जगदित्य निष्काम सकाम दक्षिण चरण है और हिंसागर्भ यज्ञादित्य सकाम निष्काम उत्तर चरण है. उभय निष्काम जगदित्य चरणको आगे करके ॥ ८ ॥ नौ सहस्र वर्षतक महायोगी महादेव ब्रह्मसंभव नियमसे युक्त होता है ॥ ९ ॥ अब योगज धर्मसे विश्वको चोतन करते हुए वृषरूप शंकरसे मेघकी उत्पत्ति कहते हैं. पश्चात् शिवके अन्तर सोमो विषयमाक्षिप्य मनसा धारयन्मनः ॥ युक्तः परमधर्मात्मा ब्राह्मी सिद्धिमुपागतः ॥ ६ ॥ संप्रदृश्यत सर्वत्र दिवि भुव्यन्तरे तथा ॥ ज्योतिष्णु कम कुर्वाणो बहुरूपः स सम्पदा ॥ ७ ॥ महेश्वरोऽतिगूढात्मा वृषरूपेण तिष्ठति ॥ उद्धृत्य दक्षिणं पादं वायुभक्षः समाहितः ॥ ८ ॥ अष्टौ वर्षसहस्राणि सहस्रशतमेव च ॥ महायोगी महादेवो नियमाद्ब्रह्मसंभवः ॥ ९ ॥ अथ वायुर्घनीभूतो अन्ते चरति गोपतेः ॥ फेनीभूतं समुद्रोरैः पवनं निर्गिरन्मुखात् ॥ १० ॥ स निष्क्रान्तस्ततो वक्रात्प्राणेन परमात्मवान् ॥ निर्यासभूतो पतितो नैवाद्रौ नैव पार्थिवः ॥ ११ ॥ स फेनो वारिणाविश्य चचार वसुधातले ॥ नैवाद्रौ नैव शुष्काङ्गो वायुसंघातमागतः ॥ १२ ॥ तत्कालफेनमुत्क्षिप्य पवनः सह वारिणा ॥ निरालम्बे निरालम्बस्त्वभ्राणि समपद्यत ॥ १३ ॥ ते क्षिपन्ति पयो भूमा वात्मानं स्वेन घटिताः ॥ नीलमेघारुणप्रख्या नैवाद्रौ नैव पार्थिवाः ॥ १४ ॥

घनीभूत अर्थात् निपीडित रुईकी तरह घनीभूत हुआ वायु होता है तब फेनीभूत वायुको मुखसे बाहर निकालते हैं ॥ १० ॥ वह प्राणद्वारा मुखसे निकलकर वायुसे वृक्षके मदरूप होकर गिरा न वोह गीला था और न पाषाणादिकोंकी समान शुष्क था ॥ ११ ॥ वह शिवके मुखसे निकला फेन चर्मकोशाकार जलको ग्रहण कर न गीला न सूखा आकाशमें विचरता वायुके संघातको प्राप्त हो गया ॥ १२ ॥ तब उसी समय वायु जलके सहित फेनको उठाके आश्रयरहित आकाशमें प्राप्त करता है, जिससे मेघ होते हैं ॥ १३ ॥ वे परस्पर स्वयं विघटित होनेसे घनत्व और नीलवर्णको प्राप्त हुए

सूर्यद्वारा घनीभूत हो पृथ्वीपर जल वरसाते हैं ॥ १४ ॥ फिर सर्वत्र जानेवाला वायु ब्राह्मणेश्वर्यको प्राप्त होकर एक सहस्र वर्षतक तप करना हुआ ॥ १५ ॥ और अग्निभी बहुतसी जटाओंको धारण कर तथा चीर वल्कल वस्त्र पहरे अनाहार उस पुष्करमें तप करने लगा अर्थात् वायुसे अग्नि हुआ ॥ १६ ॥ और उनको तप करते चार सहस्र वर्ष बीच गये तब तपके तेजसे महान् अग्नि प्रवृत्त हुआ ॥ १७ ॥ वह स्वर्गवासी अन्धकारहारी प्रकाश करके स्वर्गमें दिव्य ब्राह्मणरूप धारण कर तप करता रहा ॥ १८ ॥ स्वर्ग प्रकाश करनेवाली अग्निका जो तम है वह मनुष्योंके लोकमें स्थित है अर्थात् धूममार्ग मनुष्योंका है उस तेजका संहार (समूह) रूप सूर्य है ॥ १९ ॥ वह सब भूत और मनुष्योंके तेजको आक्षिप्त करके वर्तता है

ब्राह्मीं मूर्तिं समाधाय वायुः सर्वत्रगो वशी ॥ समाः सहस्रं संपूर्णं चचार विपुलं तपः ॥ १५ ॥ वह्निर्बहुजटी भूत्वा चीरवल्कलवास-
भूत ॥ तपस्तप्यदनाहारो मौनमास्थाय पौष्करे ॥ १६ ॥ वर्षाणां च सहस्राणि त्रीणि चैकं च यत्नतः ॥ तस्याग्नेस्तेजःसंभूतो
महानाग्निः प्रवर्तते ॥ १७ ॥ स्वर्गप्रकाशं कृत्वा च स्वर्गवासी तमोनुदः ॥ दिवि भूतप्रकाशाख्यस्तपसा ब्रह्मसंभवः ॥ १८ ॥ तत्तमो
भुवि राजेन्द्र मानुषेषु प्रातिष्ठितम् ॥ भास्करस्तेजसंहारस्ततो भवति सत्तमः ॥ १९ ॥ मर्त्यानां सर्वभूतानां तेज आक्षिप्य वर्तते ॥
नतु योगबले राजन् ब्राह्मणस्य विशेषतः ॥ २० ॥ तत्तमो नाशयेद्वात्रो नाप्यहो भविताऽद्वयम् ॥ पुष्पमित्रो महातेजा यक्षः सर्वत्रगो
वशी ॥ तपश्चरति धर्मात्मा पुष्करेषु समाहितः ॥ २१ ॥ महेन्द्रशिखराद्वारा यावन्त्यो यान्ति मेदिनीम् ॥ तावत्स्वरूपमास्थाय
तिष्ठते निखिलाः समाः ॥ २२ ॥

परन्तु योगबलसे ब्राह्मणोंका तेज नहीं हरण करता है ॥ २० ॥ वह उक्त गुणके सूर्य उस अंधकारको रात्रिमें नाश करता हुआ अर्थात् रात्रिमेंभी आस्रधन करनेवालेकी धूमगति नाशते हुए अपनी गति प्रदान करते हैं और दिनमें मृत्युको प्राप्त होनेपरभी अयोगीको अर्चिरादि मार्गकी प्राप्ति नहीं होती, अद्वैतवादी पुरुषकोही दिनरात किसी समय मरे तोभी श्रेष्ठगति प्राप्त होती है और स्वस्थ कुबेर महातेजस्वी धर्मात्मा आकाशमें स्थित हो तप करता है ॥ २१ ॥ महेन्द्र शिखरसे जितनी धारा पृथ्वीमें आती हैं उतनेही स्वरूपमें स्थित हो बहुत समयतक तप करता है ॥ २२ ॥

और पृथ्वीमें जानुके बलसे स्थित हुआ आकाशमें सहस्र वर्षपर्यन्त बिना पलक लगाये ज्योति देसता हुआ जगत्को देसता है ॥ २३ ॥
और जब सूर्य मध्यमें प्राप्त हुए तब सूर्यकी किरणोंसे उनके अनेक नेत्र प्रकाशित हुए ॥ २४ ॥ वे नेत्रोंकी कांति सूर्यमंडलसे सहस्रों ऐसे प्रकाशित हुई जैसे
विद्वानोंके तेजसंयोगसे अग्नि प्रकाशित होती है ॥ २५ ॥ वह कुबेर विस्फुलिंगयुक्त नेत्र अन्तर्भागसे आदित्यके प्रति वर्तता है और देहारंभ कर्म क्षय
होनेके पीछे, अथवा युगान्तके समय ॥ २६ ॥ बहुत तापयुक्त फिर होकर वसुधातलमें स्थित हो सूर्यकी किरणोंके आश्रय सहस्र वर्षतक तप करते

जानुभ्यां पतितो भूमौ ज्योतिर्नभासि पश्यति ॥ समासहस्रं निखिलं नेत्रैरनिमिषैर्जगत् ॥ २३ ॥ नेत्राणि बहुधा तस्य नेत्रान्तेराभिनि-
सृतः ॥ मध्यं दिनकरे प्राप्ते रश्मिवान्त्स परिग्रहे ॥ २४ ॥ ते रश्मयः प्रभानेत्रैः शतशोऽथ सहस्रशः ॥ राज तेजः संयोगाद्भिद्भिद्विरिव
पावकः ॥ २५ ॥ स विस्फुलिङ्गनेत्रान्तेरादित्यमनुवर्तते ॥ कर्मणोऽन्ते युगान्ते वा जगतो बहुरूपिणः ॥ २६ ॥ बहुतापः पुनर्भूत्वा
विषण्णो वसुधा तले ॥ स यो रश्मिषु संपूर्णस्तपस्तेपे सुदारुणम् ॥ २७ ॥ निगृहीतेन्द्रियो भूत्वा अप्सरोभिर्ललाम ह ॥ मेरोः
शिखरमासाद्य कामं कामेन निर्वमन् ॥ २८ ॥ तपः कामः स यक्षस्तु कुबेरो नरवाहनः ॥ विष्णुरेव तपोऽध्यक्षस्तेजसोऽन्ते
विजृम्भाति ॥ २९ ॥ नहि कश्चित् पुमानस्ति य एवं तप आचरेत् ॥ त्रिषु लोकेषु राजेन्द्र ऋते विष्णुं सनातनम् ॥ ३० ॥ वासुकिर्ब-
हुशीर्षस्तु नागेन्द्रो मौनमास्थितः ॥ तप आचरते सम्यक् निधाय मनसा मनः ॥ ३१ ॥

रहे ॥ २७ ॥ निगृहीत इन्द्रिय हो अप्सराओंके साथ रमते रहे. मेरुपर्वतको प्राप्त हो कामको कामके द्वारा भोगते हुए ॥ २८ ॥ तपकी इच्छासे वह
नरवाहन कुबेर तपमें विष्णुरूपही है यह जानना उचित है ॥ २९ ॥ कोईभी पुरुष नहीं है जो ऐसा तप करे. हे राजेन्द्र ! त्रिलोकीमें सनातन विष्णुके सिवाय
कोईभी ऐसा नहीं है ॥ ३० ॥ वासुकी बहुत शिरवाले नागेन्द्र मौनको प्राप्त हो तप करने लगे. मनसे मनको रोक जली प्रकार तप करने लगे ॥ ३१ ॥

शेष सत्यधृति नाग बलवान् ब्रह्मसंभव धर्मात्मा वृक्षपर आरोहण कर नीचेको सुख कर लटकते हैं अर्थात् धूमपान करते हैं ॥ ३२ ॥
 और विषको त्याग अपनी जिह्वासे शरीरको चाटते हुए पूर्ण सहस्र वर्षतक वह महात्मा निराधार रहे ॥ ३३ ॥ उस समय बहुतसा कालकूट विष
 प्राप्त हुआ उसने लोकोंको शास कर लिया कहीं कोई सुखको प्राप्त न हुआ ॥ ३४ ॥ यह तीक्ष्ण विष सब सर्पोंमें अनुगत है और स्थावर जंगम सब भूतोंमें
 अनुगत है ॥ ३५ ॥ हे भारत ! परस्पर प्राणग्राही क्रोधरूपसे तामसी तपपरिणामको प्राप्त होता है और बढ़ा हुआ यह तीक्ष्णतासे अंगोंको नाश कर देता
 है ॥ ३६ ॥ तब महाभाग्यवान् ब्रह्मार्जिने प्राणियोंके हितकी कामनासे ब्रह्माक्षरयुक्त अहिंसावाले मंत्रकी रचना की ॥ ३७ ॥ गरुत्मान् सालिल मही
 और मेरे जीवनभूत इन्द्रकी रक्षा करे, अथवा ब्रह्मरूपी प्रणव अहिंसकरूप अक्षर हैं, यह अमृतका बीज है विस्तारित दीर्घ पक्ष और स्वरयुक्त वं
 शेषः सत्यधृतिर्नागो बलवान् ब्रह्मसंभवः ॥ वृक्षमारुह्य धर्मात्मा अवाकशीर्षोऽवलम्बते ॥ ३२ ॥ जिह्वाभिल्लिलिहानाभिर्मात्रजं
 विषमुत्सृजन् ॥ समाः सहस्रं सम्पूर्णं निराहारस्तपोधनः ॥ ३३ ॥ कालकूटं विषं ताद्धि सुमहत्समपद्यत ॥ येन लोको ह्यभिग्रस्तो न
 सुखं विन्दते नृप ॥ ३४ ॥ सर्वत्रानुगतं तीक्ष्णं भुजङ्गेषु महीपते ॥ जङ्गमं स्थावरं चैव सर्वत्रानुगतं विषम् ॥ ३५ ॥ परस्परविबुद्धेन
 हिंसायुक्तेन भारत ॥ नाशयत्यात्मनोऽङ्गानि तेन तीक्ष्णेन भारत ॥ ३६ ॥ अथ ब्रह्मा महाभागो भूतानां हितकाम्यया ॥ मन्त्रं
 विसृजते राजन् ब्रह्माक्षरमहिंसकम् ॥ ३७ ॥ गरुत्मान्विततैः पक्षैर्नखाग्रैः सालिलं महीम् ॥ समासहस्रं संपूर्णं चूलाग्रेणावलम्बिना ॥ ३८ ॥
 बीज तथा नखाग्ररूपी पंचांग प्रयोगसे युक्त अथवा ॐ वां गरुत्मान् हृदयाय नमः अंगुष्ठयोः । ॐ वीं गरुत्मान् शिरसे स्वाहा तर्ज्जन्योः । ॐ वूं गरुत्मान्
 शिखायै वषट् मध्यमयोः । ॐ वैं गरुत्मान् कंवचाय हुम् अनामिकयोः । ॐ वौं गरुत्मान् नेत्रत्रयाय वौषट् कनिष्ठयोः । ॐ वः गरुत्मान् अस्त्राय फट्
 करतलकरपृष्ठयोः । इसी प्रकार हृदयादि मूलमंत्र कहे हैं, जल वं बीजरूपी पृथ्वीको सहस्र वर्ष अर्थात् हकार सहस्र हकार सकार रेफोंके कूटवर्ण और
 पिछला स्वर मूलाशिखा उसके आगे वषट्कारके अवलम्बनसे स्थित है, वषट् पंचाक्षर है इसका ब्रह्मा ऋषिः गायत्री छंदः गरुत्मान् देवता वं बीजम् हः
 शक्तिः लं कीककं विषनाशने विनियोगः 'पर्णभारैः' यह ध्यानका श्लोक है, वह वर्णके भारसे सब पृथ्वीमें व्याप्त होकर स्थित हो रहे हैं और बाहर
 भीतर सूर्य वागादि ज्योतिद्वारा नखाग्रसे अवलम्बन किये व्याप्त है इन विचित्र पर्णोंसे पृथ्वी शोभाको प्राप्त होती है ॥ ३८ ॥

जिसमें ब्रह्म विचार किया जाता है उस वसुधा रूप शरीरके गर्भमें विस्तीर्ण सब ओरसे फैले हुए पक्षरूपी इन्द्रियोंके कार्य समूहसे योगियोंकी दृष्टिसे शोभित होते हैं, जिसके यह इन्द्रियरूपी पर्ण प्रवृत्त हैं उसका शरीर बहुत प्रकारके विचित्र विषयोंसे शोभित होता है; जो शरीरके अन्तरमें सर्वात्मरूपसे विराजमान होता है जिससे शरीर शोभित होता है ॥ ३९ ॥ मंत्रजापका फल कहते हैं हे भारत ! जिस मंत्रके आवर्तन करनेसे सब प्राणी जीते हैं हे मनुष्येन्द्र ! इस लोकमें भी और देवलोकमें भी आवर्तन होता है जिस मंत्रसे निर्विषा पृथ्वी अर्थात् शरीरतलमें फैलनेवाली इन्द्रियादिसे नक्षत्रयुक्त स्वर्गकी समान शोभा होती है ॥ ४० ॥ पुष्करके जलमें अर्थात् मायाशबलके आश्रयभूत निर्विशेष चैतन्यमें संसाररूपी नदीमें जाग्रत स्वप्न नायक दोनों किनारोंमें चलनेवाला मत्स्यरूप जीव शिर

पर्णभारैश्च विकचैर्विस्तर्णैर्वसुधातले ॥ रराज वसुधा चैव पर्णेर्बहुविचित्रितैः ॥ ३९ ॥ येन वृत्तेन जीवेयुः सर्वभूतानि भारत ॥ इह लोके मनुष्येन्द्र देवलोकै च भारत ॥ द्यौरिवाचितनक्षत्रा महीतलविसर्पिभिः ॥ ४० ॥ हिमवान् हिमसंपाते भवत्येकं चरो वशी ॥ पुष्कराम्भासि धर्मात्मा मत्स्यो लिखितमूर्द्धजः ॥ ४१ ॥ अथ सुतलमाक्रम्य पृथिवी प्रांशुदेहिनी ॥ तपश्चरति धर्मात्मा बाहुमुद्यस्य दक्षिणम् ॥ ४२ ॥ साग्रं वर्षसहस्रं च शतमेकं च सुव्रत ॥ तपश्चरति संयोगाद्वायुभक्षो समाहितः ॥ ४३ ॥ समाधियोगात्सङ्गाद्वा ब्रह्मयोगस्य भारत ॥ येनेयं पृथिवी राजन् धार्यते ब्रह्मयोनिना ॥ ४४ ॥ अनाद्यन्तेन नित्येन सर्वत्र विषयेषिणा ॥ योऽसौ विष्णुरगाधात्मा परमात्मा निराकृतिः ॥ ४५ ॥ दिने निषण्णो भवति रात्रौ भवति वै स्थिरः ॥ सत्यसन्धः स धर्मात्मा कामकारकरो भवेत् ॥ ४६ ॥

निकाले हुए निर्विशेष चैतन्यमात्रको प्राप्त होता है ॥ ४१ ॥ पीछे सुतलको प्राप्त हो प्रांशुदेहवाली पृथ्वीसे संगति करके दाहिने बाहुको उठाये (दानादिक करता हुआ) धर्मात्मा तप करता है ॥ ४२ ॥ वह सर्वाचीन योगद्वारा ग्यारह सौ वर्षतक वायुके भक्षण करते महात्मा अगाधात्मा महात्मा विष्णु तप करते हैं ॥ ४३ ॥ हे भारत ! वह ब्रह्मके समाधियोगसे और ब्रह्मयोगसे तप करते हैं जिस ओंकारके कारण यह पृथ्वी धारण की जाती है ॥ ४४ ॥ विषयाभिलाषी जीवरूपसे वह आदि अन्तरहित नित्य परमात्मा निराकार विष्णु पृथ्वी धारण करता है ॥ ४५ ॥ दिनमें विद्याहीमें स्थित रात्रिमें अवि-

वामें स्थित सत्यमें स्थित धर्मात्मारूप विष्णु भगवान् लीलासेही सृष्टि प्रवृत्त करते हैं ॥ ४६ ॥ इन विष्णु भगवान् का पृथ्वीमें भक्तोंके निमित्त उठाया हुआ जो हाथ है सो उद्धार कहनेसे पृथ्वीकी समान है और विद्यामें सूर्य अर्थात् प्रकाश विवेकवाला है ॥ ४७ ॥ वह धर्मरूप चन्द्र मनके विषयोंसे मनके बंधको नाश करता है और ग्रहादिक अर्थात् चक्षुरादि इन्द्रियोंकी गतिको शांत करता है ॥ ४८ ॥ वही धर्म अविद्यारूप रात्रिको शिथिल करता है. पृथ्वीविषे दक्षिण हस्त और चित्तकी शुद्धिका करनेवाला है ॥ ४९ ॥ यही अविद्या रात्रिरूपा छाया तत्त्वज्ञानसे रहित हो पृथ्वीके लिंगको प्राप्त हो वृत्तिकी एकाग्रतासे चन्द्ररूप हुई अन्तमें चन्द्रमाकी तादात्म्यताको प्राप्त होती है. वह आकाशमें स्थित होती है अद्भुत है और मिथ्या होनेसे

तस्य यः सोद्यतः पाणिः पृथिव्यां पृथिवीसमः ॥ रात्रौ स तपनो भवति मण्डलं विपुलं नभः ॥ ४७ ॥ स चन्द्रविषयं राजञ्छमयामास रुन्धति ॥ ग्रहाणां गतयश्चैव ताराणां च विशेषतः ॥ ४८ ॥ तां छायामाक्षिपन्त्सोमात्स्रवद्भिर्मण्डलेन वै ॥ पृथिव्यां दक्षिणो हस्तो महायोगी महामनाः ॥ ४९ ॥ सेवा छाया शशीभृता शशिमण्डलमाविशत् अलिङ्गा पृथिवीलिङ्गादद्भुतादक्षया दिवि ॥ ५० ॥ अङ्गाङ्गान्युपगृह्यैव तपश्चरति निश्चयात् ॥ प्रोक्ष्य पादौ तु सतलो पृथिवी तपासि स्थिता ॥ ५१ ॥ सूर्यार्चिभिः पीयमानादाक्षिप्यत महीतले ॥ महीमिवाम्बुवसनां युगान्ते विष्णुतेजसा ॥ ५२ ॥ रराज सूर्यरश्मिभिर्योतिषिक्ता महानदी ॥ स्फाटिकेष शुभा सेवा काञ्चनेर्धातुभिर्वृता ॥ ५३ ॥ आदित्येन समादत्ता रश्मितेजोभिसंभवेः ॥ मण्डलान्तर्गता देवी चक्षुषा नोपलभ्यते ॥ ५४ ॥

अपचयशून्य है. हृदकी किरणोंकी समान मिथ्या होती है ॥ ५० ॥ पृथ्वी चन्द्ररूप किस प्रकार होती है सो कहते हैं सब अंगोंको एकत्र कर तीर्थ स्नान कर फिर यह पृथ्वी तपमें स्थित हुई ॥ ५१ ॥ इस प्रकार जलसे घनीभावरूप हुई पृथ्वी सूर्यके किरणोंद्वारा धारण होनेसे गंगारूप हुई है. वह पृथ्वी सूर्यकी किरणोंसे पीयमान होनेसे सूर्यसे मिलती हुई युगान्तमें विष्णुके तेजसे यह पृथ्वी जलरूप वस्त्रवाली होती है ॥ ५२ ॥ सूर्यकी किरणोंसे मिलनेसे वह महानदी शोभित हुई यह स्फटिकमणिकी समान मणिधातुओंसे युक्त हो महानदीरूपसे स्थित हुई ॥ ५३ ॥ रवितेजसे संभव हुई महानदी

मण्डलके अन्तर्गत होकर नेत्रोंके समक्ष नहीं होती है ॥ ५४ ॥ फिर सूर्यकी किरणोंसे उतरकर जलरूप आत्मा पृथ्वी वेगसे वहन करने लगी तब अनेक जलवाली होनेसे यह आकाशगंगा कहाती है ॥ ५५ ॥ शीत छायावाले वृक्ष सुगंधित लता विविध प्रकारके दिव्यगंधिवाले पवनोसे शोभित है ॥ ५६ ॥ सुवर्णके मुकुटवाली मणियोंकी मेखलावाली पद्मरेणुके समान सित और पीत वर्ण चक्रवाकरूपी कर्णफूलवाली ॥ ५७ ॥ नीलगर्भ सुन्दर केशोंवाली फूलोंके संचयसे व्याप्त वह भूषित प्रमदाकी समान चलती हुई शोभित हुई ॥ ५८ ॥ यह लोक धारण करनेमें रत पृथ्वी सुन्दर तप करती हुई प्रथम चन्द्ररूपसे निष्पन्न हुई पीछे गंगापनको प्राप्त हो पुष्कररूप परमात्मा द्वारा एकीभावको प्राप्त हो सर्वके पावन करनेरूप तपके फलको प्राप्त होती रश्मिभिः पुनरुत्तीर्णा ततो योगेन धावति ॥ आकाशगङ्गा संवृत्ता विपुलैरम्बुविग्रहेः ॥ ५५ ॥ शीतच्छायेश्च तरुभिर्लताभिश्च सुगन्धिभिः ॥ पद्मखण्डैश्च विविधैः शुशुभे दिव्यगन्धिभिः ॥ ५६ ॥ काञ्चनापीडजचना स्फाटिकान्तरमेखला ॥ पद्मरेणुसिता पीता चक्रवाकावतांसिका ॥ ५७ ॥ नीलगर्भसुकेशान्ता पुष्पसंचयसंकुला ॥ शोभते विप्रसर्पन्ती प्रमदेव विभूषिता ॥ ५८ ॥ सैषा गङ्गा फलं लेभे पुष्करेण समाहिता ॥ सुतपा चन्द्रविहिता लोकानां धारणे रता ॥ ५९ ॥ सरस्वती स्वरेव्यक्तैरधीते ब्रह्मवादिनी ॥ पृष्ठात्प्रयाता शैलेन्द्रे मन्दरे मन्दगामिनी ॥ ६० ॥ ऋद्धमयाश्चतुरो वेदान्पादैश्चतुर्भिर्भावृतान् ॥ यजुर्भिः सामभिश्चैव ग्रथिताभिक्षया सदा ॥ ६१ ॥ ऊषिभिर्ज्वलनप्रख्यैस्तपसा दग्धकिल्बिषैः ॥ सुपार्श्वस्य गिरेः पादे परिदायैः सुपारणेः ॥ ६२ ॥ निःस्वनं सर्वभूतानि नियमैश्च न शृण्वते ॥ मन्दराग्रे विसर्पन्तं जगत्कृच्छ्रमतीन्द्रियम् ॥ ६३ ॥

हुई ॥ ५९ ॥ फिर वह पृथ्वी गंगारूप होकर सरस्वतीरूप हो अकार उकार मकारको कहती है और व्यक्तस्वरोंसे वेदोंको कहती है और मन्दरारूप अर्थात् नासा और भुकुटीस्थानमें स्थित होती है ॥ ६० ॥ चार पादोंसे आवृत ऋद्धमय चार वेदोंको शिक्षा करके कहती है अर्थात् ऋक् यजु साम वेदको और अथर्वको शिक्षा कर कहती है ॥ ६१ ॥ तपसे दग्धपाप हुए अग्निकी समान तेजस्वी स्थूलशरीररूपी पर्वतके एक देश अर्थात् भूनासामें ऋषियोंसे परोक्षार होता है ॥ ६२ ॥ सम्पूर्ण प्राणी इस ब्रह्मारूप नादको नियमसेभी नहीं सुन सकते हैं

वह मन्दररूपी स्थूल प्रपंचके अग्रभागमें अधिक प्रथम अतिस्थूल होनेसे सम्पूर्ण जगत् व्याप्त कर रक्खा है परन्तु सूक्ष्मरूप होनेसे दुर्ग्राह्य है ॥ ६३ ॥
 सब प्राणी चुप हुए विरामनियमको प्राप्त हो जाते हैं तब वह सरस्वती नियमसे कुछ नहीं कहती " यतो वाचो निर्वर्तन्ते " ॥ ६४ ॥ सुषुप्ति समा-
 धिमें सब प्राणियोंके तूष्णीभूत हो जानेमें फिर कोई बलसे कुछ कहनेको समर्थ नहीं है ॥ ६५ ॥ वह सरस्वती मनभे योगका विभाग करके सब
 भूतोंमें अनुग्रहके वास्ते महास्वन अर्थात् ब्रह्मका ज्ञान करा देती है ॥ ६६ ॥ फिर सरस्वतीके साथ युक्त हो देहधारी शिक्षा ग्रहण करते हैं उसीमें
 फिर वे शिक्षासे आत्माका गायन करते हैं ॥ ६७ ॥ आदित्य वसु रुद्र मरुत अश्विनीकुमारोंके साथ जाटिल चीर वस्त्र पहरे मुंज मेखला धारण
 विरामनियमसे प्राप्ते तूष्णीभूता बभूव ह ॥ न वाचमीरयेद्देवी नियमात्सत्यवादिनी ॥ ६४ ॥ अथ भूतानि सर्वाणि तूष्णीं भूतानि
 सर्वशः ॥ न शेकुरभिधानार्थं व्याहृतं वदनेर्बलात् ॥ ६५ ॥ विभज्य योगं मनसा सर्वभूतेष्वनुग्रहम् ॥ सरस्वती तीरयुता व्याजहार
 महास्वनम् ॥ ६६ ॥ सरस्वत्या समायुक्तां शिक्षां गृह्णन्ति देहिनः ॥ तस्मिन्नेवाथ ते सर्वे गानं गायन्ति शिक्षया ॥ ६७ ॥
 आदित्या वसवो रुद्रा मरुतश्चाश्विभिः सह ॥ जाटिला चीरवस्त्रा मुञ्जमेखलधारिणः ॥ ६८ ॥ गन्धर्वाः किन्नराश्चैव सनागाः सह-
 चाम्भसः ॥ तपश्चरन्ति सहिताः पुष्करेषु मनीषिणः ॥ ६९ ॥ अपि कीटपतङ्गैश्च सह सर्वैः सरीसृपैः ॥ शोषयन्ति शरीराणि तप-
 सोऽग्रेण यत्नतः ॥ ७० ॥ विष्णुर्विष्णुत्वमाप्नो देहान्तरविसृष्टवान् ॥ संरक्षति महायोगी सर्वास्तान्सहचारिणः ॥ ७१ ॥ पुष्करे
 रमते विष्णुर्विष्णुरेव द्विधा कृतः ॥ दीप्यमानः स्वतेजोभिर्विभूम इव पावकः ॥ ७२ ॥

किये ॥ ६८ ॥ गन्धर्व किन्नर नाग वरुण यह सब महात्मा पुष्करमें तप करते हैं कीट पतंग और सब सरीसृप जीवोंके सहित बड़े तप यत्नसे शरीरको
 सुखाते हैं ॥ ६९ ॥ इस प्रकार शरीररूप पृथ्वीको योगबलसे जलादिभावमें परिणय करके शब्दादिके आकारसे सब लोकके हितके निमित्त होती है
 इसी प्रकार शरीराभिमानीको वाच्यवाचकके अभेद होनेसे जीवसे अन्य कोई ईश्वर नहीं है इसपर कहते हैं ॥ ७० ॥ परमात्मा विष्णु व्यापकपनको
 प्राप्त होकरभी देहान्तर चतुर्भुजरूप हो व्यापकरूपसे पालन करनेको अशक्त होकर चतुर्भुजविग्रह यज्ञादिभोक्ता प्राणियोंके नियन्ता होकर उन आदि-
 त्यादिकी रक्षा करते हैं ॥ ७१ ॥ सर्वकार्यात्मक जगत्में विष्णुही नारायणरूपसे रमण करता है और धूमराहिन अग्निकी समान अपने तेजोंसे व्याप्त

होता है ॥ ७२ ॥ वह अग्नि मनसे उत्पन्न हुआ पृथ्वीको तापित करता हुआ अर्थात् मनकल्पित गार्हपत्यादिरूप होकर पृथ्वी अभिमानी देहकी इच्छा करता है फिर अग्निहोत्रादिसे तिस कर्मरूप होकर गति सकर्मरूप होकर गति देता है ॥ ७३ ॥ और देहआत्मवादी विष्णुकी सामर्थ्यसे मोहादि दग्ध हो जाते हैं और अग्निरूप विष्णु दीप्त रहते हैं ॥ ७४ ॥ और विष्णुरूपमें विषयासक्त हो जाते हैं वे विष्णुलिंग ब्रह्मादिके उल्लंघनमें समर्थ नहीं हैं जिस प्रकार कोई सूर्यको उल्लंघन नहीं कर सकता ॥ ७५ ॥ सो विष्णु अपने बड़े प्रकाशकरके द्रव्य देवतादिको अनेक प्रकारसे स्थित हुआ ऋत्वि-

सोऽग्निर्मनःसमुद्धृतः पृथिवीं तापयन्निव ॥ प्रधावति समं तेन मण्डलं दशयोजनम् ॥ ७३ ॥ विरराजाचिंभिर्दीप्तैः पृष्ठतश्चावल-
म्बिभिः ॥ विशीर्णं पार्थिविभवेर्मयूखैरिव दीपितः ॥ ७४ ॥ तस्याग्नेर्विस्फुलिङ्गानां न शेकुलं द्रुने रताः ॥ विप्रप्रकीर्णस्य वसुधामर्या-
दामिव भास्करम् ॥ ७५ ॥ सोऽग्निर्दीप्य विभज्यांश्शुन्विधूम इव पावकः ॥ ऋत्विग्भिर्ज्वलनप्रत्येर्विक्रीयत इवाध्वरे ॥ ७६ ॥
सोऽग्निर्धूमागतस्तत्र तिष्ठते विपुलं तदा ॥ यावद्विष्णुः क्रमप्राप्तो नियमस्य समापनात् ॥ ७७ ॥ रक्षां कृत्वा स्थितं क्त्वा द्विष्णु-
र्विष्णुपराक्रमः ॥ भूत्वा शतशरीरो वै नागो बालाहकोऽभवत् ॥ ७८ ॥ तमग्निमात्मसंसृष्टं लोलिहानं महामातिम् ॥ प्रातिप्रवृत्तं
तेजोभिर्भूतानां हितकाम्यया ॥ ७९ ॥ वारिणा सुखशीतेन प्राणिनां प्राणवर्द्धनः ॥ न्यपिश्चदहनं तत्र नागो बालाहकस्तदा ॥ ८० ॥
ततः सिद्धगणैर्जुष्टः पुष्करे तप्यते तपः ॥ संहृत्य मनसात्मानं महायोगी महाबलः ॥ ८१ ॥

जोंद्वारा अनेक प्रकारसे किया जाता है ॥ ७६ ॥ वह अग्नि उस यज्ञमें द्रव्यदेवतादिके रूपसे प्रकाशमान हो निर्धूमअग्निकी समान स्थित होता है और फलरूपसे विष्णु अनन्त पृथ्वीको आक्रमण करता है ॥ ७७ ॥ रक्षा करके स्थित हुए विष्णुको कोई नहीं जानता वह विष्णुही शतशरीर होकर मेघमें स्थित होते हैं अर्थात् यज्ञफलभी विष्णुरूप है ॥ ७८ ॥ और विष्णुही जठराग्निरूप होकर भूतोंके हितके निमित्त वर्षा करता है ॥ ७९ ॥ और उस पुष्करमें उपजी हुई अपनी रची उग्र अग्निको आप प्राणियोंका प्राणरूप मेघ होकर शान्त करता है ॥ ८० ॥ फिर सिद्धगणोंके सहित महा-

योगी महाबली विष्णु मनसे आत्माको ग्रहण करतप करते हैं ॥ ८१ ॥ चरण अंगोंको संकुचित कर मनको शिरमें धारण कर अचलस्थानको प्राप्त हो विष्णुजीने मौन धारण किया ॥ ८२ ॥ जिसमें कोई उपाधि और विकल्प नहीं है यही धर्मोंका धर्म है यही दोनों लोकमें सब प्राणियोंका हित करता है ॥ ८३ ॥ तब हत हुए दैत्य अपने २ शस्त्रोंको ग्रहण कर मायासे प्राप्त अनेक नगरोंसे आच्छादित हुए अर्थात् इसमेंभी योगसर्ग उपस्थित होते हैं जो कामादि दैत्य योगारंभसे पहले जीते गये वे समाधिकालमें शरीरोंसे आच्छादित हुए अथ उठाने लगे ॥ ८४ ॥ उस ज्ञान और प्रकाशित रूप तेजमान् विष्णुको पर्वतादिरूप दिग्भवनितादिके शरीरोंसे बुझाने लगे वे दैत्य महाबली बड़े शरीरवाले थे ॥ ८५ ॥

पादमात्राणि संहृत्य मनो मूर्ध्नि विधारयन् ॥ अचलं स्थानमासाद्य तूष्णींभूतो बभूव ह ॥ ८२ ॥ एष धर्मो हि धर्माणां नोपधम्य विकल्पितः ॥ हितः सर्वेषु भूतेषु इह चामुत्र चोभयोः ॥ ८३ ॥ अथ दैत्या हतास्तत्र समागम्योद्यतायुधाः ॥ मायाप्राप्तबहुवर्धेर्नगरेरविसंवृताः ॥ ८४ ॥ अग्निं दैत्याः पर्वताग्रैरभिघ्नन्ति परंतप ॥ ज्वलन्तं ज्वलनप्रख्या महाकाया महाबलाः ॥ ८५ ॥ मेधीभूताश्च मायाभिर्वर्षन्ति बलदर्पिताः ॥ तस्मिन्नेवाभिसंघाते ससंघातं महाबलम् ॥ ८६ ॥ ते शैलास्त्वार्षिषा दग्धाः शतशोऽथ सहस्रशः ॥ युगान्ते प्रभुरादित्यः प्रजा इव दिधक्षति ॥ ८७ ॥ न शेकुरग्निं दैत्यास्ते मायाभिर्मुखमुद्यतम् ॥ आदित्य इव दीप्यन्ते नभः सूर्योदये यथा ॥ ८८ ॥ विहितैरुद्यमैः सर्वदैत्या भग्नपराक्रमाः ॥ गन्धमादनमासाद्य निषण्णा नगमूर्ध्नि ॥ ८९ ॥ स चाग्निर्वैष्णवैर्लोकैर्विद्युद्भिः सह संगताः ॥ अन्तरिक्षचरान्दैत्यान्निर्देहन्विचरन्दिवि ॥ ९० ॥

वे मेधीभूत हुए बलदर्पित हो माया कर जल वर्षाने लगे और मिलकर महाबल करने लगे ॥ ८६ ॥ वे सैकड़ों वनितादिक पर्वत इस तेजकी कान्तिसे दग्ध हो गये, जैसे युगान्तमें आदित्य प्रजा भस्म करनेको उद्यत होता है इस प्रकार वह अग्नि दीप्त हुई ॥ ८७ ॥ मायासे वे दैत्य मुख उठानेको उनके सन्मुख समर्थ न हुए और सूर्यके उदयमें आकाशकी समान वह प्रदीप्त हुआ ॥ ८८ ॥ अनेक उद्यम करनेपरभी दैत्योंका पराक्रम न चल सका तब वे गन्धमादन पर्वतके शिरोभागमें स्थित हुए ॥ ८९ ॥ और वह अग्नि उस लोकमें वैष्णवतेजयुक्त विद्वानोंसे संगतिको प्राप्त हो अन्तरिक्षमें रहनेवाले

कामादि दैत्योंको दग्ध करता हुआ स्वर्गमें विचरने लगा ॥ ९० ॥ इस प्रकार योगी उपद्रवोंको जीत यज्ञादिफलरूप धर्मको वृष्टि आदिके द्वारा प्राप्त होता है तब वह विष्णुही ब्रह्मसे वृष्टिरूप हो मेघसंघातको प्राप्त हो पृथ्वीमें वर्षा करते हैं ॥ ९१ ॥ वृष्टिकी अधिष्ठात्री देवता ब्राह्मणोंके सुखादिद्वारा कहे मंत्रोंसे प्रेरित हुआ ब्राह्मणसंतति भूतलोकको जलसे पुण्डित करता है ॥ ९२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायाम् अष्टाविंशति-तमोऽध्यायः ॥ २८ ॥ जनमेजय बोले: तब वे देवता अचलभावको प्राप्त हो परस्पर क्या करने लगे, जो बात तपसे प्राप्त न हो सके वह लोकमें नागो बलाहकश्चैव मेघसंघातमागतः ॥ मुमोच सलिलं भूमौ पर्जन्य इव वृष्टिमान् ॥ ९१ ॥ मन्त्रैः संचोदितो नागो द्विजेभ्यो वदनोद्गतैः ॥ मुमोच तोयसंघातं मानयन्विप्रजं जनम् ॥ ९२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि अष्टाविंशति-तमोऽध्यायः ॥ २८ ॥ जनमेजय उवाच ॥ संयुज्य तपसा देवाः किमकुर्वन्स्ततः परम् ॥ नहि तद्विद्यते लोके तपसा यन्न लभ्यते ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ अथ दीक्षां समास्थाय सर्वे विष्णुमया गणाः ॥ पुष्करादग्निमुद्धृत्य प्रणयि च यथाविधि ॥ २ ॥ जुहुवुर्मन्त्र-विधिना ब्राह्मणा मन्त्रचोदिताः ॥ हविषा मन्त्रपूतेन यथा वै विधिरेव च ॥ ३ ॥ स चाग्निर्विधिवत्तत्र वर्धते ब्रह्मतेजसा ॥ तेजोभिर्बहुलभूतः प्रभुः पुरुषविग्रहः ॥ ४ ॥ ब्रह्मदण्डो इति ख्यातो वपुषा निर्दहन्निव ॥ दिव्यरूपप्रहरणो ह्यसिचर्मधनुर्धरः ॥ ५ ॥ सगदो लाङ्गली चक्री शरी चर्मो परश्वधी ॥ शूली वज्री खड्गपाणिः शक्तिमान्वरकार्पुकः ॥ ६ ॥ विष्णुश्चक्ररः खड्गी मुसली लाङ्गलायुधः ॥ नरो लाङ्गलमालम्ब्य मुसल च महाबलः ॥ ७ ॥

नहीं है ॥ १ ॥ वैशम्पायन बोले, सम्पूर्ण विष्णुमय गण दीक्षाको प्राप्त हो पुष्करसे यथाविधि अग्निका उद्धार कर ॥ २ ॥ ब्रह्माकी प्रेरणा की हुई मन्त्रविधिसे हवन करने लगे, वह हवि मन्त्रसे पवित्र हुई विधिपूर्वक दी जाती थी ॥ ३ ॥ वह अग्नि विधिपूर्वक ब्रह्मकान्तिसे युक्त हो बहुत तेजोंके मिलनेसे पुष्कराकार हो गई ॥ ४ ॥ वह ब्रह्मदण्ड नामसे विख्यात शरीरको मर्म करते हुएकी समान दिव्यरूप प्रहारवाला धनुषधारी ॥ ५ ॥ गदा लांगल चक्र शर चर्म परशा शूल वज्र लिये खड्ग हाथमें धारे शक्तिमान् सुन्दर धनुष लिये ॥ ६ ॥ विष्णु चक्रधारी मुसल और लांगल हाथमें लिये

नरलांगलको अवलम्बन किये मुसल लिये वह महाबली ॥ ७ ॥ तपके योगसे इन्द्रक वज्रसेभी अधिकें कान्तिमान् वज्र लिये; महादेव शूल और पिनाकको मनसे धारण करते हुए ॥ ८ ॥ मृत्यु दण्डको, वरुण पाशको, और काल शक्तिको ग्रहण करता हुआ, त्वष्टाने फरशा, कुबेरने फरशा ग्रहण किया ॥ ९ ॥ औरभी सैकड़ों निर्विकारताको प्राप्त होते हुए विश्वकर्मा और त्वष्टा अनेक शस्त्रोंको बनाते हुए ॥ १० ॥ इन्द्र अग्नि और सूर्य तथा रुद्रके निमित्त रथप्रदान किया ॥ ११ ॥ वेदरीतिसे त्वष्टाने रथोंकी सेना निर्माण की और विश्वकर्माने बहुतसे विमान बनाये ॥ १२ ॥ सत्यपराक्रमी विष्णुने अव्यय पुष्कर नाम शरीरके अंशसे सेनाको निर्माण किया ॥ १३ ॥ सूर्य और नक्षत्रोंकी स्थितिके अर्थ विष्णुने बाणसे आकाशकी रचना की जिसके पूजन कर संग्राममें

वज्रामिन्द्रस्तपोयोगाच्छतपर्वाणमाक्षिपत् ॥ रुद्रः झूळं पिनाकं च मनसाधारयद्भुवि ॥ ८ ॥ मृत्युर्दण्डं पाशमापः कालः शक्तिमगृह्णत ॥ जग्राह परशुं त्वष्टा कुबेरश्च परश्वधम् ॥ ९ ॥ निर्विकारेः समायुक्ताः शतशोऽथ सहस्रशः ॥ विश्वकर्मा च त्वष्टा च चक्राते ह्यायुधं बहु ॥ १० ॥ इन्द्रायाग्निरथं प्रादात्सूर्याय च प्रतापिने ॥ परमात्मा ददौ कृष्णो रुद्राय च महात्मने ॥ ११ ॥ छन्दोभिरेव त्वष्टा च स चक्राण्य वाहिनीम् ॥ विश्वकर्मा विमानानि चकार बहुभिः क्रमेः ॥ १२ ॥ शरीरांशं समुत्पत्य विष्णुः सत्यपराक्रमः ॥ पुष्करात्पर्वाणि वनात्पृतनार्थं प्रवर्तयन् ॥ १३ ॥ द्यां चैव सर्वैरक्षणां वाचा वै समकल्पयत् ॥ यया स पूज्यः संग्रामे शत्रून्निर्विभिदे रणे ॥ १४ ॥ स तं दण्डं समुचितं निर्विकारं समाहितम् ॥ ब्रह्मा जग्राह विधिना अन्तर्धानगतः प्रभुः ॥ १५ ॥ स्वैः प्रभावेश्च विधिना सोऽस्त्रग्रामं चतुर्विधम् ॥ ऐन्द्रमाग्नेयवायव्ये रौद्रं रौद्रेण वर्चसा ॥ १६ ॥ एभिर्विकारेः संयुक्ता दितेः पुत्रा महाबलाः ॥ तमसा शिक्षया चैव स्वास्त्रैः प्रहरणैरपि ॥ १७ ॥ बलेन चतुरङ्गेण वीर्येण सुसमाहिताः ॥ अप्रधृष्या रणे सर्वे समपद्यन्त वै तदा ॥ १८ ॥ शत्रुभेद किये जाते हैं ॥ १४ ॥ वह ब्रह्मरूपी विष्णु अन्तरमें असुरोंके ऊपर प्रहार किये इन्द्रके दण्डको अन्तर्धान होकर ग्रहण करता हुआ ॥ १५ ॥ वह अपने प्रभाव और विधिसे चार प्रकारके अस्त्रग्रामको ऐन्द्रास्त्र आग्नेयास्त्र वायव्यास्त्र रौद्रास्त्र ॥ १६ ॥ इन विकारोंसे संयुक्त हो वे महाबली दितिके पुत्र तप शिक्षा और अपने अस्त्रोंके प्रहारसे ॥ १७ ॥ चतुरंग बल और वीर्यसे सावधान हुए युद्धसे न भागनेवाले सब विचरने लगे ॥ १८ ॥

वह दितिपुत्र गुह्य सूत्रात्मकस्वरूप छोड़कर भोग्यवस्तुयुक्त रथमें स्थित हुए मन्दररूप स्थूल कार्यके एकदेशमें विचरने लगे ॥ १९ ॥ तमके कार्य असुररूपको संहार करके वह महायोगरूप विष्णु पृथ्वीतलमें विचरने लगे ॥ २० ॥ तब फिरभी वे देवता ब्राह्मण आदिके साथ जो चर्म चीर धारण करनेवाले थे फिर महातप करने लगे अर्थात् सुमुक्षु सात्त्विक धर्मका वारंवार आदर करते हैं ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्य-पर्वणि भाषायां एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥ जन्मेजय बोले, (इस प्रकार तामसजनकी वारंवार संसारप्राप्ति सुनकर दयापूर्वक उनकी गति जाननेकी

ते विहाय गुह्यामध्ये सभाण्डोपस्करे रथे ॥ मन्दरस्य गिरेः पादे विचेरुर्वसुधातले ॥ १९ ॥ चतुरङ्गं बलं सर्वं संहृत्य तमसः प्रभुः ॥ विष्णुरेव महायोगश्चचार वसुधातले ॥ २० ॥ भूयोऽन्यत्तप आसेदुश्चरन्तो ब्राह्मणेः सह ॥ तैश्च सर्वैः सुरगणैर्धर्मचीरनिवासिभिः ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकोनत्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ २९ ॥ जनमेजय उवाच ॥ ब्रह्मन् खिले वर्तमाने निर्मेर्योदे महाग्रहे ॥ अविनाशे च भूतानां कथमासन्प्रजास्तदा ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ अभ्यषिञ्चत्पृथुं कैयं पुरा राज्ये प्रजा-पतिः ॥ राज्याय ऋषिभिः सार्धं प्रजाधर्मपरायणः ॥ २ ॥ एष नः परमो राजा सानुरागादजायत ॥ त्रेतायां संप्रवृत्तायामन्यो-न्यमनुजलिपरे ॥ ३ ॥ एष नो वृत्तिदाता च विप्राणां च प्रवर्तिता ॥ निर्माता सर्वभूतानां सत्यप्राप्तेन कर्मणा ॥ ४ ॥ एतस्मिन्नतरं देवा गन्धमादनसानुषु ॥ बहुभिर्नियमैः श्रान्ता निषण्णा गिरिसानुषु ॥ ५ ॥

इच्छासे जन्मेजय बोले) जब शंकुतुल्य महाअज्ञान हृदयमें वर्तमान होता है इस अविनाशी कार्यमें कैसे दुःखकी परंपरा हुई कैसे प्रजा हुई ॥ १ ॥ वैशम्पायन बोले, पहले प्रजापतिने वैन्धराजाको राज्यमें अभिषेक किया था, वह प्रजाधर्ममें परायण हो ऋषियोंके साथ राज्य करने लगे ॥ २ ॥ यह हमारे परम राजा अनुरागसे हुए हैं इस प्रकार त्रेताकी प्रवृत्तिमें सब कहने लगे ॥ ३ ॥ वृत्तिके देनेवाले ब्राह्मणोंके प्रवृत्त करनेवाले सत्यद्वारा सब भूतोंके निर्माण करनेवाले हैं ऐसा प्रजा कहने लगी ॥ ४ ॥ इसी समय देवता गंधमादन पर्वतके सानुओंमें बहुतसे शान्त होकर बैठ गये (अपने धर्ममें

स्थित प्रजा होनेसे जो परमात्माके भक्त हैं वेही मुक्ति पाते हैं यह कथा रूपसे वर्णन करते हैं) ॥ ५ ॥ तब देवता और मनुष्य चारों ओरसे गंधिको प्राप्त हो वसन्तसमय प्राप्त होनेपर उस गंधसे दर्पित हुए बोले ॥ ६ ॥ कि यह पवनके द्वारा लाई हुई सुगंधि है या कुछ और है यह मनकी ग्रहण करनेवाली उत्तम पार्थिव गंध है ॥ ७ ॥ वे दैत्य उस गंधसे किंचित् विस्मयको प्राप्त हो प्रसन्नमन हो परम सुखी हुए ॥ ८ ॥ उस गंधसे दर्पित हो सब कहने लगे कि पुष्पमात्रकीही क्या यह गन्ध है ॥ ९ ॥ विविध प्रकारके कर्म बुद्धि अनुमानसे जानना चाहिये, बुद्धिके प्रमाणसे शुभाशुभका ज्ञान होता है ॥ १० ॥ जिस कारणसे कि योगफल श्रेष्ठ है यह अनुमानसे निश्चय किया है, इस कारणसे पयस्वी अमृत ज्ञानसाधनमें समुद्रतुल्य देहके मध्यमें औषधी

अथ गन्धं समासाद्य समन्ताद्देवमानवाः ॥ माधवे समयं प्राप्ते तेन गन्धेन दर्पिताः ॥ ६ ॥ पुष्पमात्रस्य यद्दीर्घं मारुतेन विसर्पितम् ॥ मनोग्राहि सुखं सर्वं पार्थिवं गन्धमुत्तमम् ॥ ७ ॥ ते दैत्यास्तेन गन्धेन किंचिद्विस्मयमागताः ॥ प्रसन्नमनसो भूत्वा परं सौख्यमुपागताः ॥ ८ ॥ ऊचुश्च सहिताः सर्वे तेन गन्धेन दर्पिताः ॥ पुष्पमात्रस्य यद्दीर्घं किं तस्य फलतो भवेत् ॥ ९ ॥ अनुमानेन विज्ञेया विविधाः कर्मबुद्ध्यः ॥ शुभाश्चैवाशुभाश्चैव बुद्धिप्राणेन देहिनाम् ॥ १० ॥ तस्माद्वयं पयोमध्ये औषध्यो निर्मथामहे ॥ मन्दरेण विशालेन बलिना कामरूपिणा ॥ ११ ॥ समुद्रमभिसंरम्भान्मथनीमः सोमजं जलम् ॥ पीत्वा च सहिताः सर्वे प्रस्थिता कामरूपिणः ॥ १२ ॥ विष्णुरेवाग्रणीस्तेषां भविष्याति महाबलः ॥ दिवं च वसुधां चैव भोक्ष्याम सह शत्रुभिः ॥ १३ ॥ समूलपत्रशाखाश्च सपुष्पाः फलशालिनः ॥ सर्वे ग्रहांश्च गृहीमः सुधां च वसुधातले ॥ १४ ॥

संभव देहको डालकर विवेकद्वारा साधन करें ॥ ११ ॥ इस समुद्रको इस अमृतके निमित्त हम मथन करेंगे और उसे पानकर सब कामरूपही विचरेंगे, यह कह सब अविद्यानाशके निमित्त प्रस्थित हुए ॥ १२ ॥ इस कार्यमें महाबली विष्णुही हमारे अग्रणी होंगे उससे हम सत्यसंकल्प होंगे तब हम स्वर्ग और पृथ्वीको कामादि शत्रुओंको भोंगेंगे ॥ १३ ॥ मूल पत्र शाखा पुष्प फलके खानेवाले हम वसुधातलमें सब ग्रहोंमें ग्रहण करेंगे अर्थात् मूल पित्रादि पत्र भार्यादिक शाखा भ्रातादि पुष्पादि अपत्यादिकोंके सहित सब एकात्मग्रह मोक्षको भोंगेंगे, (बल होकर बलको प्राप्त होता है फिर उसके

प्राण उत्क्रमण नहीं होते) ॥ १४ ॥ गन्धमादनके सानुभागमें हुए गिरिवृक्षादि उखाड़कर मंदरके कंठमें वचन कहने लगे अर्थात् गुरु शिष्य संकेत-
पूर्वक देहके प्रलापन कर ब्रह्माण्डके अन्तर्गत उसमें निमग्न वासनाके उद्धार करनेको ॥ १५ ॥ पृथ्वीको कंपायमान करते हुए उखाड़नेको धावमान हुए
और इस निश्चयसे वे महावीर्यवाले बड़ी बलिष्ठ भुजाओंसे ॥ १६ ॥ वे दनुवंशमें उत्पन्न हुए उसे उखाड़नेको समर्थ न हुए और गंगोंको तानकर स्थित
हुए अर्थात् मंदररूप देहके उन्मूलन करनेको बड़ी भुजा प्राणायामादि द्वारा धावमान होते हुए समस्त मेदिनीरूप ब्रह्माण्डको कम्पित करने लगे ॥ १७ ॥
फिर आत्मासे आत्माको समाधान कर तपसे पापरहित होकर कामरूपी शिरोद्वारा ब्रह्माको प्राप्त होते हैं ॥ १८ ॥ सर्व जाननेवाले ब्रह्माजी उनके मनो-
उद्धृत्य गिरिपादेभ्यो गन्धमादनसानुजान् ॥ प्रभाष्य वचनं दैत्या मन्दरस्य प्रकम्पने ॥ १५ ॥ समुद्धर्तुं प्रधावन्तः कम्पयन्ति स्म
मेदिनीम् ॥ निश्चयेन महावीर्या बाहुभिः परिणाहिभिः ॥ १६ ॥ न शकुस्ते समुद्धर्तुं शैलेन्द्रं दनुवंशजाः ॥ निपेतुर्जानुभिर्धृष्टा
विपुले पर्वतान्तरे ॥ १७ ॥ समाधायात्मनात्मानं तपसा दग्धकिल्बिषाः ॥ पितामहं प्रपद्यन्ते शिरोभिः कामरूपिभिः ॥ १८ ॥
तेषां मनोऽभिलषितं ब्रह्मा सर्वत्रगो वशी ॥ ज्ञात्वा बहुविधैर्वाक्यैर्व्याजहार सरस्वतीम् ॥ १९ ॥ अशरीरां शरीरस्थः परया
वर्णसम्पदा ॥ सर्वलोकपतिर्ब्रह्मा लोकानां हितकाम्यया ॥ २० ॥ आदित्यैर्वसुभिश्चैव रुद्रैश्च समरुद्रणैः ॥ देवैर्यक्षैः सगन्धर्वैः किन्नरैश्च
प्रगायिभिः ॥ २१ ॥ समेत्य सहितैः सर्वैः शक्य उद्धारितुं गिरिः ॥ अमृतार्थं महातेजा धातुभिः समराजितः ॥ २२ ॥ सुरासुरगणाः
सर्वे समुत्पाट्य महागिरिम् ॥ हस्तारूढाः प्रपश्यन्ति वीरुधो हिमवद्रसम् ॥ २३ ॥

मिलापको जानकर बहुत प्रकारके वाक्योंसे सरस्वतीको बुलाते हुए ॥ १९ ॥ वह शरीररहित प्रणवरूप सरस्वती शरीरमें स्थित अन्तर्यामी वैखरी
आदि परम वाणीसे बहुतसे वाक्यों (ओमित्येकाक्षरमिदं सर्वमित्यादौ कात्त्यप्रतिपादकवाक्यों) से उपदेश देते हुए यह ब्रह्माने लोकोंको हितकी काम-
नासे किया ॥ २० ॥ आदित्य वसु रुद्र मरुद्गण देवता यक्ष गन्धर्व किन्नर इन गानेवालोंके साथ ॥ २१ ॥ इकट्ठे अर्थात् मनके एकीभावको प्राप्त होकर
अमृतके निमित्त शरीररूपी पर्वतके उठानेमें समर्थ न हुए वह वातादि धातुओंसे रंजित महातेजयुक्त था ॥ २२ ॥ तब सब सुर असुरगण उस

महापर्वतको उखाड़कर बेलोंके रसोंसे युक्त हाथमें आरूढ देखने लगे (अर्थात् हृदयाकाशमें वासना संततिरूपसे देहांग शून्य देखने लगे) ॥ २३ ॥
यह वचन सुनकर उनके समीपमें बड़े बली दैत्य मन और वाणियोंसे ॥ २४ ॥ क्रोडा करते हुए बहुत प्रकारसे उस समुद्रमें पुष्कर अर्थात् मथनदण्डके
समीपमें स्थित हुए तब देवदानवोंके सहित ॥ २५ ॥ सब सुर असुरगण परस्पर मिलकर पुष्करको मंदर और वासुकीको नेती बनाय ॥ २६ ॥
उसमें औषधी डालकर सहस्र वर्षपर्यन्त मथते रहे अर्थात् सनालकमलके सदृश मंथन दण्ड हैं. पुष्कररूप देह है मन समुद्र वासना औषधी उस देहमें
डाल वासुकीरूप सर्पाकार कुंडलीको नेत्रयोगमार्गद्वारा आनयन करके अर्थात् मूलबंधसे कुंडलीको जगाकर १००० वर्षतक मथनेसे अमृत

एतच्छ्रुत्वा च वचनं सर्वेषामन्तिके तदा ॥ दैतेया बाहुबलिनो मनोभिर्वाग्भिरेव च ॥ २४ ॥ विक्रीडभूता बहुधा बभूवुर्लवणाम्भसः ॥
यत्र पुष्करविन्यस्तः सहितैर्देवदानवैः ॥ २५ ॥ सुरासुरगणाः सर्वे सहिता लवणाम्भसः ॥ मन्दरं पुष्करं कृत्वा नेत्रं वासुकिमेव
च ॥ २६ ॥ समाः सहस्रं मथितं जलमौषधिभिः सह ॥ क्षीरभूतं समायोगादमृतं समपद्यत ॥ २७ ॥ तज्जहुरसुराः पूर्वमाक्रान्ता
लोभमन्युना ॥ धन्वन्तरिस्तथा मद्यं श्रीदेवी कौस्तुभो माणिः ॥ २८ ॥ शशाङ्को विमलश्चापि समुत्तस्थुः समन्ततः ॥ उच्चैःश्रवा ह्यो
रम्यः पीयूषं तदनन्तरम् ॥ २९ ॥

क्षीरकी समान निकला (मन शुद्ध सत्व निर्मल हो गया) ॥ २७ ॥ लोभ और क्रोधसे आक्रान्त हो सम्पूर्ण असुरोंने प्रथम उसे ग्रहण कर लिया
अर्थात् योगके विघ्न प्राप्त हुए छहों विप्रोंको जीतकर योगी सिद्ध होता है. धन्वन्तरि मद्य लक्ष्मी देवी कौस्तुभ माणि ॥ २८ ॥ उज्ज्वल चन्द्र या उच्चैः-
श्रवा घोड़ा यह निकला. उसके उपरान्त अमृत निकला धन्वन्तरि आदिसे तात्पर्य सिद्धिसे है धन्वन्तरिशब्दसे लघुता आरोग्यता अलोलुपता वर्णप्रसाद
स्वरसौष्ठवता विदित होती है. मद्यशब्दसे मधुमद्यादि योगीके चित्तकी उन्माद करनेवाली भूमि योगशान्तिमें प्रसिद्ध है श्रीसे ऋगादिरूप वेदविद्या कौस्तुभसे
देहकी कान्ति चन्द्रमासे गुणोंद्वारा आह्लादकता उच्चैःश्रवासे दूर दर्शन दूर श्रवण पारिजातादिसे सुगन्धिता इनके उपरान्त निर्विशेष कैवल्यरूप प्रवृत्त

होता है इनमें मद्य असुरोंको और शेष सब देवतोंको प्राप्त हुआ ॥ २९ ॥ अब राहुकी कथाके मुखसे कपटी विद्यार्थियोंका नाश कथन करते हैं। जब दैत्योंने अमृत लिया तब विष्णु वंचित कर देवतोंको अमृत देने लगे तब राहु देवतोंकी पंक्तिमें छलसे देवता बन जा बैठा तब उसको देखकर देवता-ओंने कह दिया यह दैत्य है तब उसको अमृत न मिला इस प्रकार दैत्य और दानव कोई अमृत नहीं पा सके ॥ ३० ॥ तब नारायणने चक्रसे उसका शिर छेदन कर डाला, इस प्रकार पितृगण और सनातन मुनियोंसे नहीं छोड़ा हुआ ॥ ३१ ॥ वह अमृत इन्द्रके हाथ लगा और ब्रह्मवाक्यसे प्रेरणा की हुई पृथ्वी इन्द्रके हाथ आई अर्थात् ब्रह्मवाक्य 'तत्त्वमसि' आदि पृथ्वी शिष्यपनको प्राप्त हुई ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि

पश्चाद्देवास्तदा दातुमुद्यता राहुमब्रुवन् ॥ न तु केचित्पिबन्ति स्म दैत्या नैव च दानवाः ॥ ३० ॥ चिच्छेदाथ हरिः संख्ये राहोश्चक्रेण कं तदा ॥ अनिर्मुक्तं पितृगणैर्मुनिभिश्च सनातनैः ॥ ३१ ॥ तदिन्द्रहस्तादमृतं जहार पृथिवी स्वयम् ॥ जगामाङ्गता देवी ब्रह्मवाक्य-प्रचोदिता ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥ जनमेजय उवाच ॥ निहते दैत्यसं-घाते विष्णोश्चातिपराक्रमे ॥ दैतेया दानवेयाश्च किमिच्छन्ति पराक्रमात् ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ दानवा राज्यमिच्छन्ति परा-क्रम्य महाबलाः ॥ तप इच्छन्ति सहिता देवाः सत्यपराक्रमाः ॥ २ ॥ जनमेजय उवाच ॥ कथं कालस्य महतो हिरण्यकशिपुस्तदा ॥ यजते ब्रह्मणः क्षेत्रे प्राप्तैश्वर्यः स कामदः ॥ ३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ यजेद्बहुसुवर्णेन राजसूयेन पार्थिवः ॥ ऋतुना दानवश्रेष्ठो वसु-धार्या महाफलः ॥ ४ ॥ गङ्गायमुनयोर्मध्ये यदभूद्विपुलं तपः ॥ समेयुस्तत्र सहिता यजमाने महासुरे ॥ ५ ॥

भाषायां त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥ जन्मेजय बोले, विष्णुने जब महापराक्रमी दैत्योंका वध किया तब दैत्य और दानव पराक्रमसे क्या करने लगे अर्थात् मोक्षसे निरस्त हो क्या करने लगे ॥ १ ॥ वैशम्पायन बोले, दानव तो पराक्रमसे राज्यकी इच्छा करते हैं और सत्यपराक्रमी देवता तपकी इच्छा करते हैं ॥ २ ॥ जन्मेजय बोले, ऐश्वर्यसे संयुक्त कामनाके देनेवाले हिरण्यकशिपु बलि राजा ब्रह्मक्षेत्र (भूनासिकारूप गङ्गायमुनाके) मध्यमें ऐश्वर्य और कामनावाला यज्ञ करने लगे ॥ ३ ॥ वैशम्पायन बोले, कि वह राजा बहुत सुवर्णकी दक्षिणावाले यज्ञको विधिसे करता हुआ वह दानवश्रेष्ठ पृथ्वीमें यजन करने लगा ॥ ४ ॥ गङ्गायमुनाके बीचमें जो बड़ा तप किया गया था वहां उस महाअसुर यजमानके यज्ञमें ॥ ५ ॥

वेदके ज्ञाता ब्राह्मण महाव्रतपरायण तथा हे भारत ! औरभी अनेक सिद्ध योगधर्मसे प्राप्त आये ॥ ६ ॥ और न्यायधर्मसे शोभित वालखिल्यादि ऋषि औरभी धर्मपरायण अनेक ब्राह्मण ॥ ७ ॥ महाभागी ऋषि ब्राह्मणोंसे पूजित सहस्रों अनेक प्रकारोंके ऐश्वर्योंसहित इधर उधरसे आये ॥ ८ ॥ पुत्रसाहेन शुक्राचार्य राजाको यजन कराता था ॥ हिरण्यकशिपु (बलि) के मध्यमें गणाक प्रभुने ॥ ९ ॥ इस प्रकारके वचन वामनजीसे कहे कि मैं तुमको वर देता हूं मांगो (इस कथामें यह वार्ता दिखाई है कि मैं जिसके ऊपर कृपा करता हू उसका प्रथम धन हरण करता हूं) ॥ १० ॥ वामनरूपसे विष्णुजीने ब्राह्मणा वेदविद्वांसो महाव्रतपरायणाः ॥ यतयश्चापरे सिद्धा योगधर्मेण भारत ॥ ६ ॥ मुनयो वालखिल्याश्च धन्या धर्मेण शोभिताः ॥ वहवो हि द्विजा मुख्या नित्या धर्मपरायणाः ॥ ७ ॥ ऋषयश्च महाभागा विप्रैः पूज्याः सहस्रशः ॥ विपुलैश्च विभवैर्हि यमाणैस्ततस्ततः ॥ ८ ॥ शुक्रस्तु सह पुत्रेण दैत्यं याजयते प्रभुः ॥ हिरण्यकशिपुं मध्ये गणानां प्रभवः प्रभुः ॥ ९ ॥ हिरण्यकशिपुश्चैव व्याजहार सरस्वतीम् ॥ कामाद्वरं ददातीति तद्वै संप्रतिपद्यताम् ॥ १० ॥ विष्णुर्वामनरूपेण भिक्षां तां प्रतिगृह्णाति ॥ हिरण्यकशिपोर्हस्ताद्वै पदे पदमेव च ॥ ११ ॥ ततः क्रमितुमारेभे विष्णुः सत्यपराक्रमः ॥ त्रिलोकान्मुनिभिः क्रान्तौर्दिव्यं वपुरधारयन् ॥ १२ ॥ हृतराज्याश्च दैतेयाः पातालविवरं ययुः ॥ ससैन्यगणसंबद्धाः सप्रासाः सासितोमराः ॥ १३ ॥ सयन्त्रलगुडाश्चैव सपताकारध्वजाः ॥ सचर्मवर्मकोशाश्च सायुधाः सपरश्वधाः ॥ १४ ॥ तथेन्द्रविष्णुसहिताः सद्यस्तेऽभ्युत्थिता गणाः ॥ अभ्यविश्वत्प्रमुदिता लोकानामधिपे सुराः ॥ १५ ॥ स तान्स्वधामृतेनाशु पितृत्वे समतर्पयत् ॥ ब्रह्मा तदमृतं दिव्यं महेन्द्राय प्रयच्छति ॥ अक्षयश्चाव्ययश्चैव संवृतस्तेन कर्मणा ॥ १६ ॥ उससे भिक्षा मांगी और बलिसोंने पग पृथ्वी मांगी ॥ ११ ॥ तब सत्यपराक्रमी विष्णु पृथ्वी नापने लगे, मुनियोंसे प्रार्थित हो उन्होंने त्रिलोकीको अतिक्रमण कर लिया ॥ १२ ॥ और राज्यसे भट्ट हो दैत्य पातालको गये, वह सेनासहित सम्बद्ध होकर प्रास असितोमर ॥ १३ ॥ यंत्र लगुड पताका ध्वज रथ ढाल वर्म कोश आयुध परशे लिये ॥ १४ ॥ इन्द्र विष्णुके साथ शीघ्रतासे वे देवता उठे और लोकोंके आधिपत्यमें बलिको अभिषेक करते हुए ॥ १५ ॥ बलि सूर्य इन्द्रने पितरोंको सुधासे तृप्त किया और ब्रह्माने उस अमृतको महेन्द्रके निमित्त दिया वह उस कर्मसे अक्षय और अव्यय

हो गये ॥ १६ ॥ तब शत्रुओंके रुधे खड़े करनेवाला शंख बजाया गया वह जनितृके प्रथम पदमें शंख बजाया गया ॥ १७ ॥ उस शंखके शब्दको सुन सावधान हुए तीनों लोक इन्द्रस्वामीको प्राप्त हो परम सुख मानते हुए अर्थात् चिन्मयरूप हो परम सुख मानते हुए ॥ १८ ॥ अत्यन्त विषयोंके दूर करनेवाले शस्त्रोंसे जो अग्नि अर्थात् ब्रह्मसे उत्पन्न हुए थे, अग्निकी समान प्रज्वलित हुए मन्दरके अग्रभाग देहाग्रमें स्थित हुए ॥ १९ ॥ इति श्रीमहा-भारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायाम् एकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥ वैशंपायन बोले, तब इस महोदय राज्यके वृत्तान्त स्थित होनेमें देवता और

ततः शंखमुपाध्मासीद्विषतां लोमहर्षणम् ॥ पितामहकरोद्भूतं जनितृप्रथमे पदे ॥ १७ ॥ तं श्रुत्वा शंखशब्दं तु त्रयो लोका समा-
हिताः ॥ निवृत्तिं परमां प्राप्ता इन्द्रं नाथमवाप्य च ॥ १८ ॥ सर्वैः प्रहरणैश्चैव संयुक्ता वह्निसंभवेः ॥ मन्दराग्रेषु विहितैर्ज्वलद्भिरिव
पावकैः ॥ १९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततो महति
वृत्तान्ते स्थिते राज्ये महोदये ॥ देवतानां मनुष्याणां सहवासोऽभवत्तदा ॥ १ ॥ एकतः समधीयन्ति सहिताः प्ररुदन्ति च ॥ स्वयं
च भागं गृह्णन्ति यज्ञकर्मणि भारत ॥ २ ॥ प्राचेतसं ततो दक्षं दीक्षित्वा वै बृहस्पतिः ॥ वाजिमेधाय भगवानृषिभिः परिवारितः ॥ ३ ॥
तस्मिन्मातामहे यज्ञं दक्षस्याविदितात्मनः ॥ शामित्रमकरोद्बुद्धो भागार्थं सह नन्दिना ॥ ४ ॥ रुद्रस्यैव हि तद्रूपं द्विधाभूतं तदीप्सया ॥
जातः परमधर्मात्मा नन्दी पुरुषविग्रहः ॥ ५ ॥

मनुष्योंका एकत्र संवास होने लगा अर्थात् ब्रह्मज्ञानी होनेसे परस्पर उनमें कुछ भेद न रहा ॥ १ ॥ एकही स्थानमें सबका पठन और शब्द होने लगा, हे भारत ! यज्ञकर्ममें स्वयं भाग ग्रहण करने लगे ॥ २ ॥ तब बृहस्पतिजी प्राचेतस दक्षको दीक्षित करके अभ्यमेध यज्ञ करनेको ऋषियोंसे परिवारित हुए ॥ ३ ॥ उस अविदित आत्मावाले दक्षरूप मातामहके यज्ञ प्रवृत्त होनेमें (अर्थात् दक्षकन्याओंसे जगत्की प्रवृत्ति होनेसे मातामहरूप कहा) शिवने उस यज्ञमें दक्षकोही पशुरूपसे कल्पित किया ॥ ४ ॥ उसकी इच्छासे वह रुद्रकाही रूप हो गया, वह परम धर्मात्मा पुरुषरूप नन्दी हो नये ॥ ५ ॥

हे राजेन्द्र ! उस योगसे वह जो सनातन ब्रह्म है उन रुद्रने वह वेदवाक्यसे प्रकाशित किया है ॥ ६ ॥ स्वरूप अल्प विरूपाक्ष और घटकी समान उदरवाले ऊर्ध्वनेत्र महाकायावाले विकट और वामन ॥ ७ ॥ तीन शिखावाले जटावाले तीन नेत्र शंकुकर्ण चीरचर्म और कूटमुद्गर हाथमें लिये ॥ ८ ॥ घंटा धारण किये मुंज मेखला धारण किये हाथमें कटक और कुंडल धारण किये ॥ ९ ॥ डिमडिम भेरी मृदङ्ग वेणु इससे परिवृत हुए देव उस यज्ञको विघ्न करने लगे ॥ १० ॥ शंख मुरज तालफल हाथमें उग्र आयुध धारण किये देव अन्तर्कर्का समान बली पिनाकधारी ॥ ११ ॥ कान्तियोंकरके वह यज्ञवाले शोभाको प्राप्त हुए कालाग्रिकी

तेन योगेन राजेन्द्र यत्तद्ब्रह्म सनातनम् ॥ विहितं सत्यवचनेस्तेनैव परमात्मना ॥ ६ ॥ स्वरूपेश्चाप्यरूपैश्च विरूपाक्षैघंटोदरैः ॥ ऊर्ध्वनेत्रैर्महाकायैर्विकटैर्वामनैस्तथा ॥ ७ ॥ शिखिभिर्जटिभिश्चैव त्र्यक्षैश्च शंकुकर्णभिः ॥ चीरिभिश्चर्मिभिश्चैव कूटमुद्गरपाणिभिः ॥ ८ ॥ सघण्टाधारिभिश्चैव मुञ्जमेखलधारिभिः ॥ सहस्तकटकैश्चैव स्वर्णकुण्डलधारिभिः ॥ ९ ॥ साडिण्डमैः सभेरीकैः समृदङ्गैः सवेणुभिः ॥ एतैः परिवृतो देवो मखं तं समुपारुजत् ॥ १० ॥ सशङ्खमुरजैश्चापि सतालफलपाणिभिः ॥ उग्रायुधधरो देवः सपिनाक इवान्तकः ॥ ११ ॥ विरराजार्चिभिर्दीप्तैर्मखे मखवतां वरः ॥ कालाग्रिरिव दीप्तार्चिर्गद्गधुमिवोद्यतः ॥ १२ ॥ नन्दी पिनाकपाणिश्च जघ्नतुर्मखमुत्तमम् ॥ युगान्त इव कालाग्रिः क्षिप्रं दग्धुमिवोद्यतः ॥ १३ ॥ यूपमुत्क्षिप्य धावन्ति निशाचरगणास्तथा ॥ त्रासयन्मुनिसङ्घांश्च चीरचर्मनिवासिनः ॥ १४ ॥ हवींष्यन्ये पिबन्त्येव जिह्वाभिस्ताम्रलोचनाः ॥ भक्षयन्ति पशून्ये रसनान्तावलम्बिभिः ॥ १५ ॥

समान वह दीप्तार्चिवाले जगत्के नष्ट करनेको मानो उद्यत हुए ॥ १२ ॥ नन्दी और शिव उस यज्ञको नष्ट करने लगे और कालाग्रि जैसे युगान्तमें प्रज्वलित होती है इस प्रकार यज्ञको नष्ट करने लगे ॥ १३ ॥ निशाचरगण यूप लेकर धावमान होते हैं और चीर चर्मनिवासी मुनिजनोंको त्रास देते हैं ॥ १४ ॥ दूसरे हवि पान करते हुए जिह्वा चाटते हुए ताम्रलोचन दूसरे जिह्वा निकाले अनेक प्रकारके पशुओंको भक्षण करते हुए ॥ १५ ॥

दूसरे स्तम्भोंको नष्ट करते कोई पशुओंपर प्रहार करते कोई जल अधिक ऊपर छिड़कने लगे ॥ १६ ॥ कोई यज्ञके सोमको हरण करते हुए जो कि ताम्र और जपाकुसुमकी समान वर्णके थे और कमलदलके प्रमाणवाले हाथोंसे कुशाओंको काटने लगे ॥ १७ ॥ कोई यूपके अग्रभागोंको तोड़ते हुए कलशोंको भग्न करने लगे और कोई शांभाके निमित्त लगाये सुवर्णके वृक्षोंको नष्ट करने लगे ॥ १८ ॥ वे बाणोंसे भेदकर सुवर्णके पात्रोंको तोड़ने और अरणीको मथने लगे ॥ १९ ॥ कोई प्राग्वंशको तोड़ने लगे और सावधानीसे तोड़ फोड़ करने लगे पुरोडाश खाने और नखाग्रसे चीर फाड़

मुमुचुश्चापरे यूपान्पशवः प्रहरन्ति च ॥ वह्निमध्ये प्रासिञ्चन्ति वारिभिः प्रशमाय च ॥ १६ ॥ सोममध्ये जहुः केचिन्नेत्रैस्ताम्रजपोपमैः ॥ दर्भान्केचिद्विलुम्पन्ति हस्तेः पद्मदलप्रभैः ॥ १७ ॥ बभञ्जिरे च यूपान्कलशांश्चापि चिक्षिपुः ॥ चिच्छिदुः काञ्चनान्वृक्षाञ्छोभार्थमुपकल्पितान् ॥ १८ ॥ विभिदुश्चैव बाणैस्ते मुमुचुश्च हिरण्मयान् ॥ लुलुपुश्चैव पात्राणि ममन्थुश्चारणीमपि ॥ १९ ॥ अरुजंश्चैव प्राग्वंशं लुलुपुश्च समाहिताः ॥ चखादिरे पुरोडाशान्नखाग्रैश्चाववर्तिरे ॥ २० ॥ एवं दिवा च रात्रौ च भिद्यमानो महामखः ॥ चुक्रोश च महानादान् भिद्यमान इवार्णवः ॥ २१ ॥ धनुः सशरमादाय पूर्वदत्तं स्वयंभुवा ॥ कृतं कीचकवेणुभ्यां समरे सुमहारथः ॥ २२ ॥ प्रतिगृह्य महादेवः स शरः समयोजयत् ॥ धनुर्विगृह्य जानुभ्यां जघान स महाक्रतुम् ॥ २३ ॥ स विद्धस्तेन बाणेन खं समुत्पतितः क्रतुः ॥ मृगो भूत्वा नर्दमानो ब्रह्माणमुपधावति ॥ २४ ॥ शरेणाभिहतस्त्राणं न लेभे प्रशमं भुवि ॥ शरणार्थी ह्ययं प्राप्तः शरेणान्तर्गतेन च ॥ २५ ॥

करने लगे ॥ २० ॥ इस प्रकार दिनरात भिद्यमान होता हुआ महायज्ञ भिद्यमान सागरकी समान बड़ा शब्द करने लगा ॥ २१ ॥ तब पूर्वकालमें ब्रह्माजीके दिये धनुष और बाणको ग्रहण कर जो कीचकजातिके वांसोंसे बना हुआ था उसे ले समरमें महारथी महादेवजीने ॥ २२ ॥ उसे ग्रहण कर जानुपर स्थित हो उस बाणसे यज्ञको प्रहार किया ॥ २३ ॥ उस बाणसे युद्ध हो यज्ञ आकाशमार्गमें उत्पतित हुआ और मृगरूप धारण कर आकाशमार्गसे ब्रह्माके निकट गया ॥ २४ ॥ बाणके भयसे कहीं पृथ्वीमें उसको शान्तिकी प्राप्ति न हुई तब शरसे दुःखी हुआ शरणमें गया ॥ २५ ॥

तब ब्रह्माने उस मृगसे प्रार्थनापूर्वक सुन्दर वचन कहे और गम्भीरतायुक्त उत्तम स्वरसे बोले, इस रूपसे आकाशमें तू महामृगरूपसे स्थित होगा ॥ २६ ॥ और पर्व लगे हुए बाणसे जीता जानेके कारण रुद्रके साथ नित्य नक्षत्रोंके शिरोभागमें स्थित हो ॥ २७ ॥ अक्षय अविनाशी सोमके साथ वह मृगशिर नाम नक्षत्रसे गमन करता है ॥ २८ ॥ वह ज्योतियोंकी ज्योति ध्रुवकाभी महाध्रुव है और बाण लगनेसे जो दिव्य रुधिर निकला है ॥ २९ ॥ और आकाशमें फिरनेके कारण पृथ्वीमें गिरा है यह अनेक वर्णवाला मण्डल क्षेत्र भूतोंका निमित्तभूत वर्षाकालमें वृष्टिका देनेवाला इन्द्रधनुष नामसे विख्यात होगा ॥ ३० ॥ इसके दर्शनसे प्राणियोंका सुख दुःख प्रवृत्त होता है, इन्द्रियश्रवणसे आकाशमें यह प्रवृत्त होता है, हे राजन् ! मनुष्योंके नेत्र आकाशमें

तमुवाच मृगं ब्रह्मा शुभं सानुनयं वचः ॥ स्वरेणोत्तमवीर्येण गम्भीरेण सुभाषिणा ॥ एवंपो नभसि त्वं भविष्यसि महामृगः ॥ २६ ॥ विजितश्च त्रिपर्वेण शरेणानतपर्वणा ॥ तिष्ठन्नक्षत्राशिरसि सह रुद्रेण नित्यशः ॥ २७ ॥ सोमेन सह संयुक्तो ह्यक्षयेनाव्ययेन च ॥ दिवि संचारभूतो वै ताराभिः सह संगतः ॥ २८ ॥ ज्योतिर्भूतो ज्योतिषां त्वं ध्रुवश्चैव महाध्रुवः ॥ यच्चैतद्रुधिरं दिव्यं क्षतजादभिनिः-
सृतम् ॥ २९ ॥ नभस्युत्पतितं चैव प्रवेगेन प्रधावतः ॥ क्षतजं बहुवर्णं च क्षेत्रं मण्डलसंज्ञितम् ॥ निमित्तभूतं भूतानां वर्षे वर्षप्रदं
तथा ॥ ३० ॥ सुखं दुःखं च भूतानां दर्शने संप्रवर्तते ॥ इन्द्रियश्रवणाच्चैव नभसीन्द्रायुधोऽभवत् ॥ ३१ ॥ चक्षुषी मानुषे
राजन्विस्मयात्समवेक्षत ॥ अद्भुतं बहुचित्रं च मनसा संप्रकल्पितम् ॥ ३२ ॥ न तु रात्रौ प्रदृश्येत खे सन्नह्नाणि संज्ञितम् ॥ दिनस्यैव
सदा त्वये महत्कार्यं प्रदृश्यते ॥ ३३ ॥ भूमावैव समुत्तिष्ठेदाकाशे तु विलीयते ॥ शतशश्च समं सर्वे प्रधावन्ति प्रचेतसः ॥ ३४ ॥

इसके देखनेको विस्मयके साथ प्रवृत्त होते हैं, यह बड़ा अद्भुत और विचित्र मनसे कल्पना किया गया है ॥ ३१ ॥ यह सब स्वप्न वृत्तान्तकी समान रात्रिमें अविद्यासे कथन किया है, देहके आत्माभिमानरूपमें यह नहीं दीखता है ॥ ३२ ॥ ब्रह्मसंज्ञक आकाशमें रात्रिके समय यह नहीं दीखता अर्थात् अविद्याकी निवृत्तिमें शुद्ध ब्रह्मके उपलब्धिभूत हृदयाकाशमें यह लक्षित होता नहीं ब्रह्मरूप होनेसे दूसरी वस्तुका अवकाश कहाँ ? दिनकेही अग्रभागमें यह महाकार्य प्रवृत्त होता है ॥ ३३ ॥ यह अविद्यारूपी रात्रि शरीरमें उत्थित हो आकाशमें लय हो जाती है, (सर्वात्मक ब्रह्म देहात्म-

बुद्धिरूपाविद्या नाशमान होतेही अभिलाषके प्रति धावमान होती है) इसी प्रकार दक्षप्रजापतिके प्रिय सैकड़ों जहां तहां धावमान होने लगे ॥ ३४ ॥
 फिरभी रुद्रके बड़े अनुचर धनुषधारी गण तथा नंदिके साथ रुद्र स्थित हुए. जैसे युगान्तकालके समय अग्नि प्रज्वलित होती है ॥ ३५ ॥
 एक हाथमें शार्ङ्गधनुष और एक हाथमें सुदर्शन चक्र लेकर स्थित हुए ॥ ३६ ॥ दूसरे हाथमें गदा घंटा और खड्ग धारण किये इस प्रकार आयुध लेकर रुद्रके सन्मुख स्थित हुए ॥ ३७ ॥ फिर शृङ्गके अग्रभागकी समान बड़ा धनुष ग्रहण कर अनुपमेय शंख और तीक्ष्ण पर्ववाले बाण ॥ ३८ ॥

भयाद्रुद्रस्य महतो धन्विनो बाणपाणयः ॥ नन्दी रुद्रगणैः सार्द्धं पिनाकी समतिष्ठत ॥ युगान्तकाले ज्वलितो ब्रह्मदण्ड इषोद्यतः ॥ ३५ ॥
 विष्णुः संग्रामसंभूतं प्रगृह्य विपुलं धनुः ॥ प्रातिष्ठत महाबाहुः पाणिना चक्रमादधत् ॥ ३६ ॥ गदां सघण्टामन्येन खड्गमन्येन पाणिना ॥ प्रगृह्य सोऽग्रतोऽतिष्ठद्रुद्राद्योद्यतपाणये ॥ ३७ ॥ ततः शृङ्गाग्रसंभूतं प्रगृह्य विपुलं धनुः ॥ शृङ्गं चाभितिमं लोके शरांश्चानतपर्वणः ॥ ३८ ॥ विष्णुरग्रस्थितो भाति सबलः संहताञ्जलिः ॥ बद्धगोधाङ्गुलित्राणः सचन्द्र इव तोयदः ॥ ३९ ॥ आदित्या वसवश्चैव दिव्ये प्रहरणैः सह ॥ विष्णुमेवाभितः सर्वे तिष्ठन्ति ज्वलनप्रभाः ॥ ४० ॥ मरुतश्चैव विश्वे च रुद्रमेवाभिपेदिरे ॥ गन्धर्वाः किन्नराश्चैव नागा यक्षाः सपन्नगाः ॥ ४१ ॥ ऋषयो न्यस्तदण्डाश्च उभयोः पक्षयोर्हिताः ॥ जपन्ति शान्तये नित्यं लोकानां हितकाम्यया ॥ ४२ ॥ रुद्रः शरेणाभ्यहनत् विष्णुमेवाग्रणीं रणे ॥ हृदि सर्वाङ्गसंधीषु तीक्ष्णाग्रेण सुयन्त्रिणा ॥ ४३ ॥

ग्रहण कर शबल संहत अंजलिवाले विष्णु अर्थात् धर्माधिष्ठातृदेवता विष्णु और ज्ञानाधिष्ठात्री देवता शिव गोधा अंगुलीत्राण बांधे मेघसहित चन्द्रमाकी समान शोभित हुए ॥ ३९ ॥ इनके परस्पर विरोधमें आदित्य वसु विष्णु पक्षके हो ज्ञानका द्वेष करते हैं और यह सब महाकान्तिमान् विष्णुके निकट स्थित होते हैं ॥ ४० ॥ मरुत् और विश्वेदेवा रुद्रकी ओर हुए गन्धर्व किन्नर नाग यक्ष पन्नग ॥ ४१ ॥ और दण्डत्यागी ऋषि समान दृष्टि होनेसे दोनों पक्षके आश्रित हुए लोगोंकी हित चाहनेके निमित्त शान्तिपाठ करने लगे ॥ ४२ ॥ रुद्रने युद्धमें बाणके प्रहारसे विष्णुको युद्धमें ताड़न

किया और तीक्ष्ण शरोंसे शरीरकी सब संधियोंमें प्रहार किया ॥ ४३ ॥ ब्रह्मसंभव सर्वात्मा विष्णु कंपित न हुए और छः इन्द्रियोंसे व्याप्त हो रोषको प्राप्त न हुए ॥ ४४ ॥ तब विष्णुजीने बाण धारण कर धनुषके ऊपर चढ़ाया और ब्रह्मदण्डीकी समान उस बाणको शिवके जनुदेश (हँसली) में प्रहार किया ॥ ४५ ॥ तब उस बाणसे विद्ध होकर महादेव कंपित न हुए जिस प्रकार वज्रसे मंदरपर्वतकी संधि कोई चलायमान नहीं कर सकता है ॥ ४६ ॥ तब विष्णुने क्रुद्धकर सनातन रुद्रको कंठदेशमें ग्रहण किया जिससे वह नीलकण्ठ कहलाये, इसका तात्पर्य यह है कि यद्यपि अपनी उत्पत्तिमें ज्ञानको धर्मापेक्षा है, उत्पन्न ज्ञान धर्मको मूलसे उच्छेद करता है तो भी महात्माकोही धर्माधिकार होनेसे ज्ञानके कंठमें शिशुकी समान लग्न है ॥ ४७ ॥

न चकम्पे तदा विष्णुः सर्वात्मा ब्रह्मसंभवः ॥ न च रोषमना नित्यं वृत्तः सर्वैः षडिन्द्रियैः ॥ ४४ ॥ विष्णुश्च धनुरानम्य शरेण समयोजयत् ॥ जनुदेशे मुमोचाशु ब्रह्मदण्डमिवोद्यतम् ॥ ४५ ॥ स विद्धस्तेन बाणेन महादेवो न कम्पते ॥ वज्रेण च महासंधिर्मन्दरस्य न चालयते ॥ ४६ ॥ ततः प्रसभमाप्लुत्य रुद्रं विष्णुः सनातनम् ॥ कण्ठे जग्राह भगवान्नीलकण्ठस्ततोऽभवत् ॥ ४७ ॥ अनादिनिधनो देवः क्षमतां हि भवान्मम ॥ सर्वभूतागमाचार्यमचलत्वाच्च कर्मणाम् ॥ ४८ ॥ कर्मणा चैव कर्ता च विकर्ता चैव भारत ॥ अशेषत्वाच्च भूतानां सर्वभूतेषु चोत्तमः ॥ ४९ ॥ स्वयमेव हि यत्कर्म विधत्ते कर्मयोनिषु ॥ तयोः शुभतमो राजन्स्वयमेव तथाकरोत् ॥ ५० ॥ अन्तरिक्षाच्छुभा वाचः श्रयन्ते परमाद्भुताः ॥ सिद्धानां वदनोन्मुक्ताः सनातन नमोऽस्तु ते ॥ ५१ ॥ नन्दी पिनाकमुग्रम्य बलवान् रुद्रसंभवः ॥ मूर्धन्यभिजघानाजौ विष्णुं क्रोधेन मूर्च्छितः ॥ ५२ ॥

कथाके प्रसंगसे विज्ञानकी स्तुति करते हैं, आदि अन्तरहित सर्व भूत और शास्त्रके आचार्य और महादेव भूत कर्मके अचल रखनेवाले ॥ ४८ ॥ कर्मके कर्ता और विकर्ता भूतोंके अशेष सबसे उत्तम ॥ ४९ ॥ हमको क्षमा करो, आप कर्मयोनियोंमें स्वयं कर्मका विधान करते हो और हे राजन् ! जो उनमें शुभतम है वैसाही आप करते हो ॥ ५० ॥ अन्तरिक्षसे सुन्दर वाणी सुनी जाती है, जो सिद्धोंके मुखसे निकली हुई थी, हे सनातन देव ! आपको नमस्कार है ॥ ५१ ॥ रुद्रसंभव बलवान् नन्दी पिनाकको उठाकर क्रोधसे मूर्च्छित हुए विष्णुके मस्तकमें प्रहार करते हुए ॥ ५२ ॥

तव सुरोत्तम विष्णु (योगाख्य धर्म) नंदी (क्षुद्रज्ञान) को देखकर हास्य करते हुए और सर्वभूतपति हरिने उसको स्तंभित कर दिया ॥ ५३ ॥ विष्णु ब्रह्मकी समान हो तेजसे प्रज्वलित होते हुए क्षयासे युक्त हो स्थाणुकी समान अचल स्थित हुए अर्थात् सांख्य और योगको जो एक देखता है वही देखता है ॥ ५४ ॥ वह अचिन्त्य अप्रमेय अजेय शत्रुसूदन युगान्ताग्निकी समान होकर वह शान्तात्मा अविनाशी हरिने ॥ ५५ ॥ प्रसन्न हो हरिने रुद्रके निमित्त भागकी कल्पना की, कारण कि विष्णु नित्य धर्ममें तत्पर कामना त्याग किये हैं ॥ ५६ ॥ हे राजेन्द्र! विष्णुने उस यज्ञको फिर साधन किया, अर्थात् अनात्मज्ञ दक्षका यज्ञ श्रद्धारूपी विष्णुसे फिर सन्निधानको प्राप्त हो योगसे आत्मदर्शन और ज्ञानसे आत्मबोध इन दोनोंका विभाग किये हे महीपते ! ततः प्रहसितो विष्णुर्नन्दीं दृष्ट्वा सुरोत्तमः ॥ स्तम्भयामास भगवान्सर्वभूतपतिर्हरिः ॥ ५३ ॥ विष्णुर्ब्रह्मसमो भूत्वा तेजसा प्रज्वलन्निव ॥ क्षमया च समायुक्तः स्थितः स्थाणुरिवाचलः ॥ ५४ ॥ अचिन्त्यश्चाप्रमेयश्च ह्यजेयश्चाप्यरिंदमः ॥ युगान्ताग्निसमो भूत्वा शान्तात्मा हरिरव्ययः ॥ ५५ ॥ प्रसन्नः कल्पयामास भागं रुद्राय धर्मिते ॥ विष्णुर्धर्मपरो नित्यं त्यक्तकामः सुरोत्तमः ॥ ५६ ॥ विष्णुना चैव राजेन्द्र स यज्ञः संधितः पुनः ॥ यथापक्षं च ते सर्वे गणास्त्वासन्महीपते ॥ तस्मिन् युद्धे महाघोरे विष्णुरुद्रस्य चैव ह ॥ ५७ ॥ यथापक्षं भवयुद्धं दक्षयज्ञविनाशने ॥ विनाशश्चैव यज्ञस्य तदा लोके प्रतिष्ठितः ॥ ५८ ॥ सर्वभूतेषु राजेन्द्र हितो यज्ञः सनातनः ॥ दक्षो यज्ञफलं चैव प्राप्तवान्स प्रजापतिः ॥ ५९ ॥ इमां चोदाहृतां दिव्यां कथामिति स बुद्धिमान् ॥ श्रावयेद्यस्तु विप्रेभ्यः शुचिः प्रयतमानसः ॥ ६० ॥ अधीत्य सर्वमध्यात्मं देवलोके महीपते ॥ एष पौष्करको नाम प्रादुर्भावो महात्मनः ॥ ६१ ॥ वे सब गण यथा पक्षमें स्थित हुए उस विष्णु और रुद्रके महाघोर युद्धमें ॥ ५७ ॥ दक्षयज्ञविनाशी यथापक्ष दोनोंका युद्ध हुआ अर्थात् श्रवण आसनकी सहायवाले सांख्य और परस्पर योगके विरोध होनेमें यज्ञविनाश और ज्ञानकीही उत्कर्षता हुई, उस समय लोकमें यज्ञविनाशही प्रतिष्ठित हुआ ॥ ५८ ॥ यद्यपि ज्ञान श्रेष्ठ है तथापि उपकारी होनेसे यज्ञ श्रेष्ठ है, नहीं तो द्वारलोप हो जानेसे ज्ञानभी सिद्ध नहीं होता ॥ ५९ ॥ हे राजेन्द्र ! सर्वभूतोंमें सनातन यज्ञ हितकारी है उस प्रजापति दक्षने यज्ञफलकी प्राप्ति की ॥ ६० ॥ इस दिव्य कथाको कहकर जो बुद्धिमान् पवित्र होकर ब्राह्मणोंके प्रति सुनावे

यह कथा तो एक प्रपञ्चरूप है परन्तु यह सब अध्यात्मरूप है इसके पाठ करनेसे आत्मस्वरूप देवलोकमें प्रतिष्ठा होती है यह उन महात्माका पुष्करप्रादु-
र्भाव है ॥ ६१ ॥ यह पुराणोंमें मैंने कृष्णद्वैपायनके मुखसे श्रवण किया है, परमर्षियोंने इसको यथायोग्य संस्कृत किया है ॥ ६२ ॥ जो इस श्रेष्ठ
परमपुराणको सदा अप्रमत्त होकर श्रवण करता है वह सब कामनाको प्राप्त हो शोकरहित होकर दूसरे लोकोंमें स्वर्गफलको भोगता है ॥ ६३ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥ जन्मेजय बोले, हे द्विजरज ! हमने पुराणोंमें अमित तेजवाले

पुराणे पोष्करे चैव मया द्वैपायनेरितः ॥ यथावदनुपूर्वेण संस्कृतः परमर्षिभिः ॥ ६२ ॥ यश्चैनमग्र्यं पुरुषं पुराणं सदाप्रमत्तः
शृणुयाद्यथोक्तम् ॥ अवाप्य कामानिह वीतशोकः परत्र च स्वर्गफलानि भुङ्क्ते ॥ ६३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्य-
पर्वणि द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥ जनमेजय उवाच ॥ प्रादुर्भावः पुराणेषु विष्णोरमिततेजसः ॥ सतां कथयतां विप्र वाराह इति नः
श्रुतः ॥ १ ॥ न जानतेऽस्य चरितं न विधिं नैव विस्तरम् ॥ न कर्म गुणवद्भावं न हेतुं न मनीषितम् ॥ २ ॥ किमात्मको वराहोऽसौ-
का मूर्तिः कास्य देवता ॥ किमाचारः किंप्रभावः किं वा तेन पुरा कृतम् ॥ ३ ॥ एतन्मे संशयत्वेन वाराहं श्रुतिविस्तरम् ॥ यज्ञार्थं
च समेतानां द्विजातीनां ब्रह्मन्मनाम् ॥ ४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतत्ते कथयिष्यामि पुराणं ब्रह्मसंमितम् ॥ नानाश्रुतिसमायुक्तं
कृष्णद्वैपायनेरितम् ॥ महावराहचरितं कृष्णस्याद्भुतकर्मणः ॥ ५ ॥

विष्णुका वाराह अवतार सत्पुरुषोंसे सुना है ॥ १ ॥ उसके चरित्र और विधि विस्तारसे नहीं जानता हूं न उनके कर्म गुण भाव और हेतुको जानता
हूं ॥ २ ॥ वह वराह किस आत्मक है यज्ञमय है वा योगमय है क्या मूर्ति है शरीर भौतिक है वा मायिक है इसके अधिष्ठात्री देवता हरि
वाराह हैं क्या आचार आर प्रभाव है अथवा पूर्वमें क्या कृत्य किया था ॥ ३ ॥ हे भगवन् ! यह मुझे सन्देह है वराहचरित्र विस्तारपूर्वक कहिये
यज्ञार्थको इकट्ठे हुए ब्राह्मणोंका चरित्र मुझसे वर्णन कीजिये ॥ ४ ॥ वैशम्पायन बोले, यह ब्रह्मसंमित पुराण मैं तुमसे वर्णन करता हूं, जो अनेक

प्रकारकी श्रुतियोंसे युक्त व्यासजीने वर्णन किया है वह महावराहका चरित्र अद्भुत कर्मा श्रीकृष्णकाही है ॥ ५ ॥ हे राजन् ! जिस प्रकार नारायणने वाराहरूप धारण कर दंष्ट्रासे पृथ्वीका उद्धार किया ॥ ६ ॥ वह चरित उदारवेदकी श्रुतियोंसे अलंकृत है. हे जन्मेजय ! इस चरित्रको पवित्र होकर मुनो ॥ ७ ॥ यह पुराण पुण्यरूप वेदोंसे सम्मत है अनेक श्रुतियोंसे युक्त है नास्तिकोंके निमित्त देना न चाहिये ॥ ८ ॥ इस संपूर्ण पुराणमें सांख्य और योग सब विधिपूर्वक कहा है. इस रीतिसे सांख्य और योगका अन्तर्भाव है वह विद्वानोंको कोई एक ग्रहण करना चाहिये, जो केवल कथामात्रो-

यथा नारायणो राजन्वाराहं वपुरास्थितः ॥ दंष्ट्राया गां समुद्रस्थामुज्जहारारिसूदनः ॥ ६ ॥ छान्दसीभिरुदाराभिः श्रुतिभिः समलंकृतः ॥ शुचिः प्रयत्नवान् भूत्वा निबोध जनमेजय ॥ ७ ॥ इदं पुराणं परमं पुण्यं वेदैश्च संमितम् ॥ नानाश्रुतिसमायुक्तं नास्तिकाय न कीर्तयेत् ॥ ८ ॥ पुराणमेतदखिलं सांख्यं योगं तथैव च ॥ कात्स्न्येन विधिना प्रोक्तं योऽस्यार्थं ज्ञास्यते पुमान् ॥ ९ ॥ विश्वेदेवास्तथा साध्या रुद्रादित्यास्तथाश्विनो ॥ प्रजानां पतयश्चैव सप्त चैव महर्षयः ॥ १० ॥ मनःसंकल्पजाश्चैव पूर्वजाश्च महर्षयः ॥ वसवोऽप्सरसश्चैव गन्धर्वा यक्षराक्षसाः ॥ ११ ॥ दैत्याः पिशाचा नागाश्च भूतानि विविधानि च ॥ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा म्लेच्छादयो भुवि ॥ १२ ॥ चतुष्पदानि सर्वाणि तिर्यग्योनिगतानि च ॥ जङ्गमानि च सत्त्वानि यच्चान्यज्जीवसंज्ञितम् ॥ १३ ॥ पूर्णं युगसहस्रान्ते ब्रह्मेऽहनि तथागते ॥ निर्वाणे सर्वभूतानां सर्वोत्पातसमुद्भवे ॥ १४ ॥ हिरण्यरेतास्त्रिंशत्स्ततो भूत्वा वृषाकपिः ॥ शिखाभिर्विविधाँल्लोकान्तसंशोषयति देहिनः ॥ १५ ॥

पृथ्वी है वे अर्थानभिज्ञ हैं ॥ ९ ॥ विश्वेदेवा साध्य रुद्र आदित्य अश्विनो कुमार प्रजापति सप्त महर्षि ॥ १० ॥ मनके संकल्पसे उत्पन्न और भी पूर्वज महर्षि वसु अप्सरा गन्धर्व यक्ष राक्षस ॥ ११ ॥ दैत्य पिशाच नाग अनेक प्रकारके भूत ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र म्लेच्छादि ॥ १२ ॥ संपूर्ण चतुष्पद तिर्यग्योनिके जीव सब जंगम जीव और जो जीवसंज्ञक हैं ॥ १३ ॥ सहस्रयुग पूर्ण होनेपर ब्रह्मादिनकी पूर्तिमें सब भूतोंके निर्वाण होनेमें और सब उत्पातोंके प्रादुर्भूत होनेमें ॥ १४ ॥ तब साक्षात् महादेवरूप अपनी शिखाओंसे लोकोंको कंपायमान करता हुआ शोषित करता है ॥ १५ ॥

तब उनकी तेजोराशिसे दग्ध होते हुए विवर्णवदन दग्ध अंग बिगड़े हुए वर्णवाले कान्तिवाले मुखोंसे युक्त ॥ १६ ॥ सांग उपनिषद् सहित वेद इतिहा-
सादिके सहित सम्पूर्ण विद्याके आश्रय सत्यधर्ममें परायण ॥ १७ ॥ ब्रह्माको आगे किये ईश्वरकी इच्छासे हुए सम्पूर्ण तैत्तिरीय करोड देवता ॥ १८ ॥
उस दिनके प्रातः होनेमें उस हंस, महाअक्षरवाले ब्रह्म नारायणमें प्रवेश कर जाते हैं ॥ १९ ॥ फिर उन प्रवेश करनेवालोंके प्रवेश करनेपर फिर उत्पत्ति
होती है, जैसे सूर्यका उदय और अस्त हुआ करता है ॥ २० ॥ सहस्रयुगके पूर्ण हो जानेमें कल्पका निशेष हो जाता है उसमें कोई जीव अपने कृत्यको

दह्यमानास्ततस्तस्य तेजोराशिभिरग्रतः ॥ विवर्णवर्णा दग्धाङ्गा इतार्चिष्माद्भिराननेः ॥ १६ ॥ साङ्गोपनिषदा वेदा इतिहासपुरोगमाः ॥
सर्वविद्याश्रयाश्चैव सत्यधर्मपरायणाः ॥ १७ ॥ ब्रह्माणमग्रतः कृत्वा छन्दतो विश्वतोमुखम् ॥ सर्वे देवगणाश्चैव त्रयास्त्रिंशच्च कोटयः ॥ १८ ॥
तस्मिन्नहनि संप्राप्ते तं हंसं महदक्षरम् ॥ प्रविशन्ति महायोगं हरिं नारायणं प्रभुम् ॥ १९ ॥ तेषां भूयः प्रविष्टानां निधनोत्पत्तिरु-
च्यते ॥ यथा सूर्यस्य सततमुदयास्तमयाविह ॥ २० ॥ पूर्णे युगसहस्रान्ते कल्पो निःशेष उच्यते ॥ तस्मिन् जीवकृतं सर्वं निः-
शेषमवातिष्ठते ॥ २१ ॥ संहृत्य लोकान्तस्वान्तस्य सदेवासुरपन्नगान् ॥ कृत्वात्मगर्भे भगवानास्त एको जगद्गुरुः ॥ २२ ॥ यः स्रष्टा सर्व-
भूतानां कल्पान्तेषु पुनः पुनः ॥ अव्यक्तः शाश्वतो देवस्तस्य सर्वमिदं जगत् ॥ २३ ॥ नष्टार्ककिरणे लोके चन्द्रशिमिविवर्जिते ॥
त्यक्तभूताग्निपवने क्षीणयज्ञवषट्क्रिये ॥ २४ ॥ अपक्षिगणसंघाते सर्वप्राण्यचरे पथि ॥ अमर्यादाकुले रौद्रे सर्वतस्तमसा वृते ॥ २५ ॥
अदृश्ये सर्वलोकेऽस्मिन्नभावे सर्वकर्मणाम् ॥ प्रशान्ते सर्वसंपाते नष्टे वैरपरिग्रहे ॥ २६ ॥

प्राप्त नहीं होता है ॥ २१ ॥ देव असुर पन्नगोंके सहित सम्पूर्ण लोकोंका संहार करके अपने गर्भमें सबको करके वह जगद्गुरु स्थित होते हैं ॥ २२ ॥ जो
कल्पान्तमें बारंवार सब भूतोंकी रचना करते हैं वह अव्यक्त शाश्वत देव हैं उन्हींके यह सब जगत् वशमें है ॥ २३ ॥ जब लोक चन्द्र सूर्यकी किर-
णोंसे रहित हो जाता है भूत अग्नि पवन यज्ञ और वषट्कारके हीन होनेमें ॥ २४ ॥ पक्षी और प्राणिसमूह रहित होनेपर सब मर्यादाहीन होकर रौद्र
और अंधकारसे आच्छादन होनेमें ॥ २५ ॥ सब लोकोंके अदृश्य और सब कर्मोंके अभाव होनेमें सब संतापके शान्त और वैर परिग्रहके नष्ट होनेमें ॥ २६ ॥

नारायणात्मक लोकके अपने स्वभावको प्राप्त होनेमें हृषीकेश परमेशी शयन करनेकी इच्छा करते हैं ॥ २७ ॥ पीतवसन लालनेत्र कृष्णमेघकी समान कान्तिमान् सहस्र शिखायुक्त जटाभारको धारण किये ॥ २८ ॥ श्रीवत्सके पवित्र जलसे युक्त लाल चंदनसे भूषित हृदयवाले बिजलीसे युक्त मेघकी समान प्रकाशमान ॥ २९ ॥ सहस्र कमलोंकी मालासे शोभित अपनी पत्नी लक्ष्मीके देहको आश्रय कर स्थित होनेवाले ॥ ३० ॥ वह धर्मात्मा लोकके पितामह शयन कर जाते हैं. इस प्रकार वह विक्रान्त योगनिद्राको प्राप्त हो ॥ ३१ ॥ सहस्र वर्षके पूर्ण होनेमें स्वयंही विभु होकर

गते स्वभावसंस्थानं लोके नारायणात्मके ॥ परमेशी हृषीकेशः शयनायोपचक्रमे ॥ २७ ॥ पीतवासा लोहिताक्षः कृष्णो जीमूतसन्निभः ॥ शिखासहस्रविकचं जटाभारं समुद्रहन् ॥ २८ ॥ श्रीवत्सकलिलं पुण्यं रक्तचन्दनभूषितम् ॥ वक्षो विभ्रन्महाबाहुः सविद्युदिव तोयदः ॥ २९ ॥ पुण्डरीकसहस्रस्य मालास्य शुशुभे तदा ॥ पत्नी चैव स्वयं लक्ष्मीर्देहमावृत्य तिष्ठति ॥ ३० ॥ ततः स्वपिति धर्मात्मा सर्वलोकापितामहः ॥ किमप्यमितविक्रान्तो निद्रायोगमुपागतः ॥ ३१ ॥ ततो वर्षसहस्रे तु पूर्णे स पुरुषोत्तमः ॥ स्वयमेव विभुर्भूत्वा बुध्यते विबुधाधिपः ॥ ३२ ॥ ततश्चिन्तयते भूयः सृष्टिं लोकस्य लोककृत् ॥ पितृदेवासुरनरान्पारमेष्ठ्येन कर्मणा ॥ ३३ ॥ ततश्चिन्तयतः कार्यं देवेषु समितिंजयः ॥ संभवं सर्वलोकस्य विदधाति स वाक्पतिः ॥ ३४ ॥ कर्ता चैव विकर्ता च संहर्ता च प्रजापतिः ॥ धाता विधाता च तथा संयमो नियमो यमः ॥ ३५ ॥ नारायणपरा देवा नारायणपराः क्रियाः ॥ नारायणपरो यज्ञो नारायणपरा श्रुतिः ॥ ३६ ॥

जागृत होते हैं ॥ ३२ ॥ तब वह लोककर्ता स्वयं सृष्टि करनेकी इच्छा करते हैं. पितृ देवता असुर मनुष्योंको परमेशी क्रमसे बनानेकी इच्छा करते हैं ॥ ३३ ॥ तब वह नियामक देवताओंके कार्यकी चिन्ता करते हैं वह वाणीपति त्रिलोकीके संभवका विधान करते हैं ॥ ३४ ॥ वही प्रजापति कर्ता विकर्ता और संहर्ता है. धाता विधाता संयम नियमरूप वही है ॥ ३५ ॥ सब देवता और सब क्रिया नारायणसे प्रवृत्त हैं सब यज्ञ और श्रुति नाराय-

गणपर है ॥ ३६ ॥ मोक्ष नारायणपर और परम गति नारायणसे है धर्म और क्रतु नारायणपर हैं ॥ ३७ ॥ यज्ञ तप सत्य परंपद नारायणपर है नारायणसे अधिक कोई देवता न है न होगा ॥ ३८ ॥ वही स्वयंभू ब्रह्मा और भुवनका अधिपति कहाता है वहां वायु और वही सनातन यज्ञ है ॥ ३९ ॥ वही सत् असत् यज्ञ और प्रजाका करनेवाला है, जो देवताओंको जानना चाहिये वही यह सबसे श्रेष्ठ है ॥ ४० ॥ इन भगवान्को प्रजापति सात ऋषि देवताओंके सहित जाननेको समर्थ नहीं हैं ॥ ४१ ॥ कोई इनके अन्तको प्राप्त नहीं हो सकता इससे यह अनन्त कहलाते हैं जो

नारायणपरो मोक्षो नारायणपरा गतिः ॥ नारायणपरो धर्मो नारायणपरः क्रतुः ॥ ३७ ॥ नारायणपरं ज्ञानं नारायणपरं तपः ॥ नारायणपरं सत्यं नारायणपरं पदम् ॥ नारायणपरो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ ३८ ॥ स्वयंभूरीति विज्ञेयः स ब्रह्मा भुवनाधिपः ॥ स वायुरीति विज्ञेय एष यज्ञः सनातनः ॥ ३९ ॥ सदसच्च स विज्ञेयः स यज्ञः स प्रजाकरः ॥ यद्वेदितव्यं त्रिदशैस्तदेष परि-
विन्दति ॥ ४० ॥ यच्च वेद्यं भगवतो देवा अपि न तद्विदुः ॥ प्रजानां पतयः सप्त ऋषयश्च सहामरेः ॥ ४१ ॥ नास्यान्तमाधिगच्छन्ति ततोऽनन्त इति श्रुतिः ॥ यदस्य परमं रूपं तत्र पश्यन्ति देवताः ॥ ४२ ॥ प्रादुर्भाविषु तं भूतं यत्तदर्चन्ति देवताः ॥ यन्न दर्शितवान्देवः कस्तदन्वेष्टुमर्हति ॥ ४३ ॥ ग्रामणीः सर्वभूतानामग्निमारुतयोर्गतिः ॥ तेजसस्तपसश्चैव निधानममृतस्य च ॥ ४४ ॥ चतुराश्रमवर्णेषु चातुर्होत्रफलाशनः ॥ चतुःसागरपर्यन्तश्चतुर्युगविवर्तकः ॥ ४५ ॥ तदेष संहृत्य जगत्कृत्वा गर्भस्थमात्मनः ॥ सुमोचाण्डं महायोगी धृतं वर्षसहस्रिकम् ॥ ४६ ॥

इसका परमरूप है उसे देवता देखते हैं ॥ ४२ ॥ जो इनका प्रादुर्भावरूप है उसकी देवता अर्चना करते हैं और जो रूप इन देवने नहीं दिखाया उसे कौन देख सकता है ॥ ४३ ॥ यह सब भूतोंका नेता अग्नि और पवनकी गति तेज और तप तथा अमृतके स्थान ॥ ४४ ॥ चार आश्रम और चारों वर्णोंमें चातुर्होत्रके फलभागी हो चार सागर पर्यन्त चारों युगोंके प्रवृत्त करनेवाले ॥ ४५ ॥ इस संसारको संसार कर अपने गर्भमें स्थित कर वह महायोगी सहस्रवर्षपर्यन्त धारण किये इस अण्डेको फिर त्यागन करते हैं ॥ ४६ ॥

सुर असुर ब्राह्मण अप्सराओंके गण महौषधी पर्वत यक्ष गुह्यक प्रजापति श्रुतिधर यक्ष राक्षस आदियोंके कुलको उन्होंने निर्माण किया इस प्रकार प्रभुने सब अपनी आत्मासेही रचा ॥ ४७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥ वैशंपायन बोले, पूर्वमें यह ब्रह्माण्ड सुवर्णरूप था प्रजापतिका मूर्तिरूप था यह वैदिकी श्रुति है ॥ १ ॥ तब सहस्रवर्षके अतन्तर प्रभुने इसके ऊर्ध्वमुखका विभेद किया और लोकोंके उत्पन्न करनेके निमित्त नीचेके मुखका भेद किया ॥ २ ॥ फिर जगत्के उत्पत्तिकारण प्रभुने जगत्को आठ प्रकारसे विभक्त किया इस

सुरासुरद्रिजभुजगाप्सरोगणैर्महौषधाक्षितिधरयक्षगुह्यकैः ॥ प्रजापतिः श्रुतिधररक्षसां कुलं तदासृजजगदिदमात्मना प्रभुः ॥ ४७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ जगदण्डमिदं पूर्वमासीत्सर्वं हिरण्यमयम् ॥ प्रजापतेर्मूर्तिमयमित्येवं वैदिकी श्रुतिः ॥ १ ॥ ततो वर्षसहस्रान्ते विभेदोर्ध्वमुखं विभुः ॥ लोकसंजननार्थाय विभेदाधोमुखं पुनः ॥ २ ॥ भूयोऽष्टधा विभेदाण्डं प्रभुर्वै लोकयोनिकृत् ॥ चकार जगत्श्चात्र विभागं सर्वभागवित् ॥ ३ ॥ यच्छिद्रमूर्ध्वमाकाशं परा सुकृतिनां गतिः ॥ विहितं विश्वयोगेन यदधस्तद्रसातलम् ॥ ४ ॥ यदण्डमकरोत्पूर्वं देवलोकसिसृक्षया ॥ समन्तादष्टधा यानि च्छिद्राणि कृतवांस्तु सः ॥ ५ ॥ विदिशस्ता दिशाः सर्वा मनसेवाकरोद्विधा ॥ नानारागविरागाणि यान्यण्डशकलानि वै ॥ ६ ॥ बहुवर्णधराश्चित्रा बभूवुस्ते बलाहकाः ॥ यदण्डमध्ये स्कन्धे तद्रतमासीत्समाहितम् ॥ ७ ॥ जातरूपं तदभवत्तत्सर्वं पृथिवीतले ॥ तस्य क्लेदारणवौधेन प्राच्छाद्यत समन्ततः ॥ ८ ॥

सब जगत्का विभाग उस जाननेवालेने किया अर्थात् वाक् पाणि पाद नाम तीन छिद्र श्रोत्र त्वक् चक्षु जिह्वा घ्राण नामक तीन छिद्र, उपस्थमें अपानका अन्तर्भाव है ॥ ३ ॥ जो ऊपरका आकाशात्मक छिद्र है वह पुण्यात्माओंकी गति है जो योगसे विधान किया है जो नीचेका है वही रसातलका द्वार है ॥ ४ ॥ जो अण्ड प्रथम देवलोकके रचनेकी इच्छासे बनाया उसके चारों ओर उसने आठ छिद्र किये हैं ॥ ५ ॥ फिर सम्पूर्ण दिशा विदिशा मनसेही दो प्रकार की और स्थूल सूक्ष्मके भेदसे विषयोंके ग्रहण करनेवाली इन्द्रियोंकी रचना की और अनेक प्रकारके राग विराग जो अण्डके खण्ड थे ॥ ६ ॥ वे अनेक वर्णके चित्रविचित्र भेद हुए और जो अण्डके मध्यमें द्रवरूप निकला है ॥ ७ ॥ वह सब पृथ्वीमें सुवर्णनामसे विख्यात है और उसकेही

क्लेदसे यह चारों ओर पूर्ण स्वरूप ॥ ८ ॥ पृथ्वी युगान्तमें सागरसे पूर्ण हुईसी विदित होती है ॥ ९ ॥ जो देवलोक रचनेकी इच्छासे प्रथम अण्ड
 निर्माण किया उसमें जहां जहां जल भरा वही सुवर्णका पर्वत हुआ ॥ १० ॥ उस जलसे दिशा विदिशा सब भर गई अन्तरिक्ष स्वर्ग तथा और जो
 कुछ है ॥ ११ ॥ वह जल जहां टपका वहीं वहीं पर्वत हो गया, तब सम्पूर्ण पर्वतोंसे पृथ्वी विषम हो गई ॥ १२ ॥ उन बहुत योजनके विस्तारवाले
 पर्वतजालोंके सहित महापर्वतोंसे पीडित हो व्यथित हुई ॥ १३ ॥ जो पृथ्वीतलमें नारायणात्मक महाजल है, जो हिरण्यमय उज्ज्वल तेज और रूप-

पृथिवी निखिला राजन्युगान्ते सागरेरिव ॥ ९ ॥ यच्चाण्डमकरोत्पूर्वं देवलोकचिकीर्षया ॥ तत्र तत्सालिलं स्कन्नं सोऽभवत्काञ्चनो
 गिरिः ॥ १० ॥ तेनाम्भसा प्लुताः सर्वा दिशश्चोपादिशस्तथा ॥ अन्तरिक्षं च नाकं च यच्चान्यत्किंचिदन्तरम् ॥ ११ ॥ यत्र यत्र
 जलं स्कन्नं तत्र तत्र स्थितो गिरिः ॥ शैलैः समस्तैर्गहना विषमा मेदिनी भवत् ॥ १२ ॥ तैः सपर्वतजालैर्विबुधयोजनविस्तृतैः ॥
 पीडिता गुरुभिर्देवी पृथिवी व्यथिताभवत् ॥ १३ ॥ महीतले भूरिजलं दिव्यं नारायणात्मकम् ॥ हिरण्यमयं समुद्दिष्टं तेजो
 विमलरूपितम् ॥ १४ ॥ अशक्ता वै धारयितुमधः सा प्रविवेश ह ॥ पीडयमाना भगवतस्तेजसा तेन सा क्षितिः ॥ १५ ॥ पृथिवीं
 विशर्त्ता दृष्ट्वा तामधो मधुसूदनः ॥ उद्धारार्थं मनश्चक्रे लोकानां हितकाम्यया ॥ १६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मत्तेज एव बलवत्समा-
 साद्य तपस्विनी ॥ रसातलं विशेद्देवी पङ्के गौरिव दुर्बला ॥ १७ ॥ धरण्युवाच ॥ त्रिविक्रमायामितविक्रमाय महानृसिंहाय चतुर्धु-
 जाय ॥ श्रीशार्ङ्गचक्रासिगदाधराय नमोऽस्तु तस्मै पुरुषोत्तमाय ॥ १८ ॥

वाच है ॥ १४ ॥ उन जलोंको पृथ्वी धारण करनेमें समर्थ न हुई इससे पातालमें प्रवेश कर गई इस प्रकार भगवान् के तेजसे पीडित हुई महापृथ्वी
 प्रवेश करने लगी ॥ १५ ॥ तब मधुसूदन पृथ्वीको प्रवेश करता देख लोकोंके हितकी कामनासे उसके उद्धारकी इच्छा करने लगे ॥ १६ ॥ श्रीभग-
 वान् बोले हे तपस्विनी ! हमारे बलिष्ठ तेजके आश्रय होकर कीचमें दुर्बल गौकी समान तू रसातलमें प्रवेश कराती है ॥ १७ ॥ धरणी बोली, त्रिविक्रम

अमितविक्रम महानृसिंह चतुर्भुज श्रीशार्ङ्ग चक्र गदा पद्मधारी पुरुषोत्तम देवको नमस्कार है ॥ १८ ॥ आपहीसे यह जगत् धारण और संहार किया जाता है. तुम भूतोंको धारण कर भ्रमण पोषण करते हो ॥ १९ ॥ जो कुछ तेज और बलसे आपके द्वारा धारण किया जाता है सो आपके प्रसादसे धारण किया जाता है. मैं आपके प्रसादसे धारण करती हूं ॥ २० ॥ तुम्हारी धारण की हुई वस्तुको मैं धारण करती हूं अधृतको धारण नहीं करती हूं वह वस्तु संसारमें नहीं है जिसको तुम धारण नहीं करते हो ॥ २१ ॥ हे वीरपुरुष नारायण ! आपही युगयुगमें जगत्के हितको कामनासे मेरा भार उतारते

त्वयात्मना धार्यते वै त्वया संहियते जगत् ॥ त्वं धारयसि भूतानि भुवनं त्वं विभर्षि च ॥ १९ ॥ यत्त्वया धार्यते किंचित्तेजसा च बलेन च ॥ ततस्तव प्रसादेन मया पश्चात्तु धार्यते ॥ २० ॥ त्वया धृतं धारयामि नाधृतं धारयाम्यहम् ॥ नहि ताद्विद्यते रूपं यत्त्वया न तु धार्यते ॥ २१ ॥ त्वमेव पुरुषो वीर नारायण युगे युगे ॥ मम भारावतरणं जगतो हितकाम्यया ॥ २२ ॥ तवैव तेजसा क्रान्तां रसातलतलं गताम् ॥ त्रायस्व मां सुरश्रेष्ठ त्वामेव शरणं गताम् ॥ २३ ॥ दानवैः पीडयमानाहं राक्षसैश्च दुरात्माभिः ॥ त्वामेव शरणं नित्यमुपयामि सनातनम् ॥ २४ ॥ तावन्मेऽस्ति भयं भूयो यवन्न त्वां ककुब्जिनम् ॥ शरणं यामि मनसा शतशोऽप्युपलक्षये ॥ २५ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मा भैर्धरणि कल्याणि शान्तिं व्रज समाहिता ॥ एष त्वासुचितं स्थानमानयामि मनीषितम् ॥ २६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततो महात्मा मनसा दिव्यं रूपमचिन्तयत् ॥ किंतु रूपमहं कृत्वा उद्धरामि वसुंधराम् ॥ २७ ॥

हो ॥ २२ ॥ तुम्हारेही तेजसे आक्रान्त हो मैं पातालमें प्रवेश करती हूं. हे सुरश्रेष्ठ ! मेरी रक्षा करो. मैं आपकी शरणमें प्राप्त हुई हूं ॥ २३ ॥ मैं दानव और दुरात्मा राक्षसोंसे पीडित हुई नित्य आपहीकी शरणको प्राप्त होती हूं ॥ २४ ॥ तबहीतक मुझको भय है जबतक मैं उन्नत कंधर तुम्हारी शरणमें जाकर प्राप्त नहीं होती हूं ॥ २५ ॥ श्रीभगवान् बोले, हे कल्याणि धरणि ! तुम भय मत करो, सावधान होकर शान्तिको प्राप्त हो यह मैं तुमको उचित स्थानमें प्राप्त करता हूं ॥ २६ ॥ वैशंपायन बोले, तब महात्माने मनसे उस दिव्यरूपकी चिन्ता की कि रूप धारण कर

में पृथ्वीका उद्धार करूं ॥ २७ ॥ जिससे जलमें निमग्न हुई पृथ्वीका मैं उद्धार कर सकूं; यह विचार देव उस कार्यमें मति कर ॥ २८ ॥ जलकी-
 डाकी रुचिवाले वाराहरूपका स्मरण करते हुए तब भूमिभृत् भूमिके उद्धारमें युक्त हुए ॥ २९ ॥ सब प्राणियोंको अभृष्यरूप वाङ्मय ब्रह्म (वेद)
 सम्मत दश योजनके विस्तार और सौ योजनके ऊंचे ॥ ३० ॥ नीलमेघकी समान मेघके गर्जनेकी समान शब्दवाले महापर्वतकी समान संहनन श्वेतव-
 र्णकी दीप्तिमान् उग्र डाढ़ें ॥ ३१ ॥ बिजली और अग्निकी समान प्रकाश सूर्यकी समान तेज पीन गोल चौड़े स्कंध दृप्तशार्दूलकी समान गमन करने-
 जले निमग्न धरणीं येनाहं वै समुद्धरे ॥ इत्येवं चिन्तयित्वा तु देवस्तत्करणे मतिम् ॥ २८ ॥ जलकीडारुचिस्तस्माद्वाराहं रूपम-
 स्मरत् ॥ हरिरुद्धरणे युक्तस्तदाभूदस्य भूमिभृत् ॥ २९ ॥ अधृष्यं सर्वभूतानां वाङ्मयं ब्रह्मसंमितम् ॥ दशयोजनविस्तारमुच्छ्रितं
 शतयोजनम् ॥ ३० ॥ नीलमेघप्रतीकाशं मेघस्तनितनिःस्वनम् ॥ महागिरेः संहननं श्वेतदीप्तोयद्रंष्ट्रिणम् ॥ ३१ ॥ विद्युदग्निप्रती-
 काशमादित्यसमतेजसम् ॥ पीनवृत्तायतस्कन्धं दृप्तशार्दूलगामिनम् ॥ ३२ ॥ पीनोन्नतकटीदेशं वृषलक्षणपूजितम् ॥ रूपमास्थाय
 विपुलं वाराहममितं हरिः ॥ ३३ ॥ पृथिव्युद्धरणार्थाय प्रविवेश रसातलम् ॥ वेदपादो यूषदंष्ट्रः क्रतुदन्तश्चितीमुखः ॥ ३४ ॥
 अग्निजिह्वो दर्भरोमा ब्रह्मशीर्षो महातपाः ॥ अहोरात्रेक्षणधरो वेदाङ्गश्रुतिभूषणः ॥ ३५ ॥ आज्यनासः सुवस्तुण्डः सामघोषस्वरो
 महान् ॥ सत्यधर्ममयः श्रीमान् क्रमविक्रमसत्कृतः ॥ ३६ ॥ क्रियासत्रमहाघोणः पशुजातुर्मखाकृतिः ॥ उद्गात्रान्त्रो महालिङ्गो
 बीजौषधिमहाफलः ॥ ३७ ॥

वाले ॥ ३२ ॥ पीन और ऊंचा कटिदेश वृषलक्षणसे पूजित इस प्रकार हरि महावराहका रूप धारण कर ॥ ३३ ॥ पृथ्वीके उद्धारके निमित्त रसा-
 तलमें प्रविष्ट हुए. (इनकी अधिष्ठात्री देवता यज्ञ है इसको कहते हैं) वेद चरण हैं दंष्ट्रा यूप हैं दांत क्रतु और मुख चिती है ॥ ३४ ॥ जिह्वा अग्नि
 रूप दर्भ ब्रह्म शिर महातप अहोरात्र रूपी ईक्षणके देखनेवाले वेदांग श्रुति भूषण ॥ ३५ ॥ घृतरूप नासिका सुवरूप तुण्ड सामरूप महास्वर सत्य धर्ममय
 श्रीमान् क्रमविक्रमसे सत्कृत ॥ ३६ ॥ यज्ञकी क्रियारूप महानासिका पशु जातु मुखकी आकृति उद्गात्रान्त्ररूप महालिङ्ग बीज औषधरूप महा-

फल ॥ ३७ ॥ वायुरूप अन्तरात्मा मंत्रका स्पर्श करता विक्रम है सोमरूपी रुधिर वेदरूपी स्कंध हविरूप गंध हव्यकव्यरूप वेगवान् ॥ ३८ ॥ प्राग्वंश
काया कान्तिमान् अनेक दीक्षाओंसे अर्चित दक्षिण हृदययोगी महासत्रमय महान् ॥ ३९ ॥ उपाकर्म्मरूपी ओष्ठ रुचक प्रवर्ग्यरूपी यज्ञ अंगके भूषणवाले
नानाछन्दयुक्त गति ओर गुह्यरूपी उपनिषद्के आसनवाले ॥ ४० ॥ छायारूप पत्नीकी सहायतासे युक्त मणिशृङ्गकी समान उच्छ्रित वह यज्ञवराह गुरु
जलमें प्रविष्ट हुए ॥ ४१ ॥ वह प्रजापति जलोंसे आच्छादित हुई पृथ्वीका उद्धार करने लगे, जो कि रसातलमें पातालतलमें मग्न हो रही थी ॥ ४२ ॥

वाय्वन्तरात्मा भन्त्रस्पृक् विक्रमः सोमशोणितः ॥ वेदीस्कन्धो हविर्गन्धो हव्यकव्यातिवेगवान् ॥ ३८ ॥ प्राग्वंशकायो द्युतिः सान्नादी-
क्षाभिरर्चितः ॥ दक्षिणाहृदयो योगी महासत्रमयो महान् ॥ ३९ ॥ उपाकर्म्मोष्ठरुचकः प्रवर्ग्यावर्तभूषणः ॥ नानाछन्दोगतिपथो
गुह्योपनिषदासनः ॥ ४० ॥ छायापत्नीसहायो वै मणिशृङ्ग इवोच्छ्रितः ॥ भूत्वा यज्ञवराहोऽसौ युगपत्प्राविशद्गुरुः ॥ ४१ ॥ अद्भिः
संछादितामुर्वीं स तामाच्छेत्प्रजापतिः ॥ रसातलतले मग्नां पातालान्तरसंश्रयाम् ॥ ४२ ॥ प्रभुलोकहितार्थाय दंष्ट्राग्रेणोज्जहार गाम् ॥
ततः वस्थानमानीय पृथिवीं पृथिवीधरः ॥ ४३ ॥ मुमोच पूर्वं सहसा धारयित्वा धराधरः ॥ ततो जगाम निर्वाणं मेदिनी तस्य
धारणात् ॥ ४४ ॥ चकार च नमस्कारं तस्मै देवाय शंभवे ॥ एवं यज्ञवराहेण भूत्वा भूतहितार्थिना ॥ ४५ ॥ उद्धृता पृथिवी देवी
लोकानां हितकाम्यया ॥ अथोद्धृत्य क्षितिं देवो जगतः स्थापनेच्छया ॥ ४६ ॥ पृथिवीप्रविभागाय मनश्चक्रेऽम्बुजेक्षणः ॥ रसातल-
गतामेवं विचिन्त्य स सुरोत्तमः ॥ ४७ ॥

लोकहितके निमित्त प्रभुने उसे दंष्ट्रापर धारण किया तब पृथ्वीधरने उस पृथ्वीको अपने स्थानमें लाकर ॥ ४३ ॥ उसको रखकर एक साथ छोड़ दिया
तब उनके धारण करनेसे पृथ्वी निर्माणताको प्राप्त हुई ॥ ४४ ॥ उस देव शंभुके निमित्त नमस्कार किया गया, इस प्रकार प्राणियोंके हितकारी यज्ञ-
वराहेने ॥ ४५ ॥ लोकके हितकी कामनासे पृथ्वीदेवीका उद्धार किया है, इस प्रकार जगती देवीको उद्धार कर जगत्के स्थापनकी इच्छासे ॥ ४६ ॥
पृथिवीके विभागके निमित्त कमललोचनने इच्छा की, इस प्रकार वह देवश्रेष्ठ रसातलमें गई पृथ्वीके निमित्त विचार करके ॥ ४७ ॥

वह विभु वराहरूपधारी वृषाकपि एकही दंष्ट्रापर उन अतुलविक्रमवान् अच्युतने लोकहितके निमित्त पृथ्वीका उद्धार किया ॥ ४८ ॥ इति श्रीमहा-
भारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥ तब उस सागरके ऊपर यह पृथ्वी नावकी समान स्थित हुई देहके विस्तार
होनेसे यह पृथ्वी फिर जलमें न डूबी ॥ १ ॥ तब प्रभुने पृथ्वीके विभागकी इच्छा की सब पर्वत और नदियोंकी श्रेष्ठता ॥ २ ॥ विलेखन प्रमाणगति
प्रसव और नदियोंके माहात्म्य और विशेषताकी प्रभुने चिन्ता की ॥ ३ ॥ चतुर्दल पद्माकर भरत केतुमाल भद्राश्व कुरव आदि देशोंकी समुद्रपर्यन्त

ततो विभुः प्रवरवराहरूपधृक् वृषाकपिः प्रसभमथैकदंष्ट्रया ॥ समुद्ररद्वरणिमतुल्याविक्रमो महायशा लोकहितार्थमच्युतः ॥ ४८ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥ तस्योपरि जलौघस्य महती नौरिव स्थिता ॥ वितत-
त्वात्तु देहस्य न ययौ संप्लवं मही ॥ १ ॥ ततः स चिन्तयामास प्राविभागं क्षितैर्विभुः ॥ समुच्छ्रयं च सर्वेषां पर्वतानां नदीषु च ॥ २ ॥
विलेखनं प्रमाणं च गतिं प्रस्रवमेव च ॥ माहात्म्यं च विशेषं च नदीनामन्वचिन्तयत् ॥ ३ ॥ चतुरन्तां धरां कृत्वा तथा चैव महार्ण-
वम् ॥ मध्ये पृथिव्यः सोवर्णमकरोन्मेरुपर्वतम् ॥ ४ ॥ प्राचीं दिशमथो गत्वा चकारोदयपर्वतम् ॥ शतयोजनविस्तारं सहस्रं च
समुच्छ्रयम् ॥ ५ ॥ जातरूपमयैः शृङ्गेस्तरुणादित्यसन्निभैः ॥ आत्मतेजोगुणमयैर्वेदिकाभोगकल्पितम् ॥ ६ ॥ विविधांश्च महास्क-
न्धान्काञ्चनान्पुष्करक्षेणः ॥ नित्यपुष्पफलान्वृक्षान्कृतवांस्तत्र पर्वते ॥ ७ ॥ शतयोजनविस्तारं ततस्त्रिगुणमायतम् ॥ चकार स
महादेवः पुनः सोमनसं गिरिम् ॥ ८ ॥ नानारत्नसहस्राणां कृत्वा तत्र सुसंचयम् ॥ वेदिकां बहुवर्णां च संध्याभ्राभामकल्पयत् ॥ ९ ॥
कल्पना की पृथ्वीके मध्यमें सुवर्णका पर्वत मेरु स्थित किया ॥ ४ ॥ फिर पूर्वदिशामें जाकर उदयपर्वतकी कल्पना की जिसका सौ योजनका विस्तार
और सहस्र योजनकी ऊंचाई है ॥ ५ ॥ प्रातःकालकी सूर्यकी समान सुवर्ण शृंगोंसे युक्त आत्मतेज गुणमय वेदिका भोगसे कल्पित ॥ ६ ॥ उसमें
अनेक प्रकारके सुवर्ण स्कन्धवाले नित्य पुष्पफलसे युक्त वृक्ष कल्पित किये जो उस पर्वतमें हैं ॥ ७ ॥ सौ योजनका विस्तार त्रिगुना ऊंचा इस प्रका-
रका उस महादेवने सोमनस पर्वत बनाया ॥ ८ ॥ उसमें अनेक प्रकारके सहस्रों रत्नोंका संचय किया और संध्याकालके मेघकी समान उसमें बहुत

वर्णकी वेदिका निर्माण की ॥ ९ ॥ सहस्रशृंग नामक गिरि नानारन और मणिशिलासे युक्त वृक्षोंसे घना साठ योजनके विस्तारमें किया ॥ १० ॥
 उसमें सब प्राणियोंसे नमस्कृत अत्यन्त सुन्दर आसनमें प्रजापति विश्वकर्माने अपना स्थान कल्पित किया ॥ ११ ॥ फिर हिमसमूहसे युक्त हिमालय
 महापर्वतको जो कि महादुर्ग गहन कन्दरान्तरसे मंडित ॥ १२ ॥ शीत उत्पत्तिका स्थान अनेक नदी और द्विजगणोंसे युक्त पुलिन और वसुधारासे युक्त
 बनाया ऐसी श्रुति है ॥ १३ ॥ यह नदी अमृतके समान सैकड़ों मुखोंसे संयुक्त हुई शोभित होने लगी और अनेक मुक्ताशंसोंसे विभूषित हो शोभित
 सहस्रशृङ्गं च गिरिं नानामणिशिलातलम् ॥ कृतवान्वृक्षगहनं षष्टियोजनमुच्छ्रितम् ॥ १० ॥ आसनं तत्र परमं सर्वभूतनमस्कृतम् ॥
 कृतवानात्मनः स्थानं विश्वकर्मा प्रजापतिः ॥ ११ ॥ शिशिरं च महाशैलं तुषारचयसान्निभम् ॥ चकारं दुर्गगहनं कन्दरान्तरम-
 ण्डितम् ॥ १२ ॥ शिशिरप्रभवां चैव नदीं द्विजगणायुताम् ॥ चकार पुलिनोपेतां वसुधारामिति श्रुतिः ॥ १३ ॥ सा नदी निखिलां
 प्राचीं पुण्यां मुखशतैश्चिताम् ॥ शोभयत्यमृतप्रख्यैर्मुक्ताशङ्खविभूषितैः ॥ १४ ॥ नित्यपुष्पफलोपेतैश्छादयाद्भिः सुसंवृतैः ॥
 भूषिताभ्याधिकं कान्तैः सा नदी तीरजैर्द्रुमैः ॥ १५ ॥ कृत्वा प्राचीविभागं च दक्षिणायामथो दिशि ॥ चकार पर्वतं दिव्यं सर्व-
 काञ्चनराजतम् ॥ १६ ॥ एकतः सूर्यसंकाशमेकतः शशिसन्निभम् ॥ स विभ्रच्छुभेतीव द्वौ वर्णौ पर्वतोत्तमः ॥ १७ ॥ तेजसा
 युगपद्व्याप्तं सूर्याचन्द्रमसाविव ॥ वपुष्मन्तमथो तत्र भानुमन्तं महागिरिम् ॥ १८ ॥ सर्वकामफलैर्वृक्षैर्वृतं रम्यैर्मनोरमैः ॥ चकार कुञ्जरं
 चैव कुञ्जरप्रतिमाकृतिम् ॥ १९ ॥

होती है ॥ १४ ॥ जिसको नित्य पुष्प और फलवाले वृक्ष आच्छादन करते हैं, इस प्रकार वह नदी किनारेके वृक्षोंसे भूषित है ॥ १५ ॥ इस प्रकार
 पूर्वदिशाका विभाग कर दक्षिण दिशाका विभाग कर उसमें सम्पूर्ण कांचन और चांदीके पर्वत निर्माण किये ॥ १६ ॥ एक चन्द्रमा और एक सूर्यकी
 समान वर्णोंसे दोनों पर्वत अत्यन्त शोभित हुए ॥ १७ ॥ और सूर्यचन्द्रमाके समान तेजसे एकसाथ व्याप्त हो गये, यह वपुष्मन्त और भानुमन्त
 पर्वत ॥ १८ ॥ सब कामनाओंके देनेवाले मनोरम वृक्षोंसे युक्त हैं इसको बनाकर कुंजरके आकार कुंजरपर्वतको बनाया ॥ १९ ॥ जिसकी बहुत

योजनके विस्तारमें सुवर्णकी गुहा थीं और ऋषभकी समान ऋषभपर्वतको बनाया ॥ २० ॥ जो सुवर्णके वृक्षोंसे शोभित पुष्पहाससे युक्त था. फिर सौ योजन ऊंचा महेन्द्र पर्वत बनाया ॥ २१ ॥ जिसके सुवर्णके शृंग और फूलोंवाले वृक्ष महाशोभित थे. मेदिनीमें यह अचल पर्वत शोभित हुए ॥ २२ ॥ नाना रत्नोंसे युक्त सूर्यचन्द्रमाकी समान कान्तिमान् चन्द्रमाकी समान मलय पर्वतको चित्रविचित्र किया ॥ २३ ॥ फिर शिलाजालसे युक्त मैनाक महापर्वतको निर्माण किया. इस प्रकार दक्षिणादिशामें अचल पर्वत स्थापित किया ॥ २४ ॥

सर्वतः काञ्चनगुहं बहुयोजनाविस्तृतम् ॥ ऋषभप्रतिमं चैव ऋषभं नाम पर्वतम् ॥ २० ॥ हेमकाञ्चनवृक्षाढ्यं पुष्पहासं स सृष्टवान् ॥ महेन्द्रमथ शैलेन्द्रं शतयोजनमुच्छ्रितम् ॥ २१ ॥ जातरूपमयैः शृङ्गैः सपुष्पितमहाद्रुमम् ॥ मेदिन्यां कृतवान्देवः प्रतिक्षोभमिवाचलम् ॥ २२ ॥ नानारत्नसमाकीर्णं सूर्येन्दुसदृशप्रभम् ॥ चकार मलयं चाद्रिं चित्रपुष्पितपादपम् ॥ २३ ॥ मैनाकं च महाशैलं शिलाजालसमावृतम् ॥ दक्षिणस्यां दिशि शुभं चकाराचलमायतम् ॥ २४ ॥ सहस्रशिरसं विन्ध्यं नानाद्रुमलताकुलम् ॥ नदीं च विपुलावतीं पुलिनश्रोणिभूषिताम् ॥ २५ ॥ क्षीरसंकाशसलिलां पयोधारामिति श्रुतिः ॥ सुरम्यां तोयकलितां विहितां दक्षिणां दिशम् ॥ २६ ॥ दिव्यां तीर्थशतोपेतां प्रावयन्तीं शुभाम्भसा ॥ दिशं याम्यां प्रतिष्ठाप्य प्रतीचीं दिशमागमत ॥ २७ ॥ अकरोत्तत्र शैलेन्द्रं शतयोजनमुच्छ्रितम् ॥ शोभितं शिखरैश्चित्रैः सुप्रवृद्धैर्हिरण्मयैः ॥ २८ ॥ काञ्चनीभिः शिलाभिश्च गुहाभिश्च विभूषितम् ॥ समाकुलं सूर्यनिभैः शालैस्तालैश्च भास्वरैः ॥ २९ ॥

फिर सहस्रशिरवाले विन्ध्याचलको जो विविध वृक्षोंसे युक्त है बनाया. उसमें महाआवर्तयुक्त श्रोणीभूषित नदी निर्माण की ॥ २५ ॥ उसकी नदियोंका जल दुग्धकी समान निर्मल है यह श्रुति है. दक्षिण दिशाका जल बहुतही मनोहर किया ॥ २६ ॥ वे नदियें अपने जलसे दिव्य अनेक तीर्थोंको प्रापित करती हैं. इस प्रकार दक्षिण दिशा कर फिर पश्चिममें आये ॥ २७ ॥ वहां सौ योजनके विस्तारवाले चित्रशिखरोंसे शोभित बड़े सुवर्णराशियोंसे युक्त ॥ २८ ॥ सुवर्णकी शिला और गुहाओंसे भूषित सूर्यकी समान प्रकाशित शाल और तालोंसे व्याप्त ॥ २९ ॥

सुवर्णकी बनी मनोहर वेदियोंसे सम्पन्न वहां साठ सहस्र पर्वतोंको सन्निवेशित किया है ॥ ३० ॥ वे सुवर्णकी समान कान्तिमान् प्रभासे दीप्त हो रहे हैं. सहस्र जलधारासे युक्त वह मेरुकी समान पर्वत है ॥ ३१ ॥ अनेक पुण्यतीर्थके समूहसे युक्त भगवान् ने उस सन्निवेशित किया है. उसका साठ योजनका विस्तार और इतनाही ऊंचाव है ॥ ३२ ॥ उसका नाम अपने आत्मतुल्य वाराह रक्खा और भी दिव्य वैडूर्यके पर्वतकी रचना की ॥ ३३ ॥ जहां सुवर्ण और चांदीके दिव्य शिखर हैं. वहांही चक्रके सदृश चक्रवन्त महाबल युक्त ॥ ३४ ॥ सहस्रकूट पर्वतको भगवान् ने निर्मित किया शंखकी समान श्वेत राजतपर्वतको बनाया ॥ ३५ ॥

शुशुभे जातरूपश्च श्रीमद्भिश्चित्रवेदिकैः ॥ षष्टिं गिरिसहस्राणि तत्रासौ संन्यवेशयत् ॥ ३० ॥ मेरुप्रतिमरूपाणि वपुषा प्रभया सह ॥ सहस्रजलधारं च पर्वतं मेरुसन्निभम् ॥ ३१ ॥ पुण्यतीर्थगुणोपेतं भगवान्संन्यवेशयत् ॥ षष्टियोजनविस्तारं तावदेव समुच्छिन्नम् ॥ ३२ ॥ आत्मरूपोपमं तत्र वाराहं नाम नामतः ॥ निवेशयामास गिरिं दिव्यं वैडूर्यपर्वतम् ॥ ३३ ॥ राजताः काञ्चनाश्चैव यत्र दिव्याः शिलोच्चयाः ॥ तत्रैवं चक्रसदृशं चक्रवन्तं महाबलम् ॥ ३४ ॥ सहस्रकूटं विपुलं भगवान्संन्यवेशयत् ॥ शङ्खप्रतिमरूपं च राजतं पर्वतोत्तमम् ॥ ३५ ॥ सितद्रुमसमाकीर्णं शंखं नाम न्यवेशयत् ॥ सुवर्णं रत्नसंभूतं पारिजातं महाद्रुमम् ॥ ३६ ॥ महतः पर्वतस्याग्रे पुष्पहासं न्यवेशयत् ॥ शुभामतिरसां चैव घृतधारामिति श्रुतिः ॥ ३७ ॥ वराहः सरितं पुण्यां प्रतीच्यामकरोत्प्रभुः ॥ प्रतीच्यां संविधिं कृत्वा पर्वतान्काञ्चनोज्ज्वलान् ॥ ३८ ॥ गुणोत्तरानुत्तरस्यां संन्यवेशयदग्रतः ॥ ततः सौम्यगिरिं सौम्यमन्तारिक्षप्रमाणतः ॥ ३९ ॥ रुक्मधातुप्रतिच्छन्नमकरोद्भास्करोपमम् ॥ स तु देशो विसूर्योऽपि तस्य भासा प्रकाशते ॥ ४० ॥

वह श्वेतवृक्षोंसे युक्त है इस कारण उसका नाम शंखही रक्खा. उसमें सुवर्णरत्नसे युक्त पारिजात महावृक्ष है ॥ ३६ ॥ उस पर्वतके आगे बड़ा पुष्प-समूह स्थित रहता है वहां शुभ और रसीली घृतधारा बहती है यह श्रुति है ॥ ३७ ॥ पश्चिम दिशामें प्रभुने पवित्र वाराहनदी निर्माण की है. इस प्रकार प्रतीचीमें प्रभुने कांचनके उज्ज्वल पर्वत निर्माण किये ॥ ३८ ॥ फिर गुणोंमें श्रेष्ठ उत्तर दिशाका विभाग किया इसके उपरान्त सौम्यपर्वतको निर्माण किया ॥ ३९ ॥ वह सुवर्णकी धातुओंसे प्रतिच्छन्न सूर्यकी समान प्रकाशित है उसकी प्रभासे वह देशभी प्रकाशित होता है. जहां सूर्यका

प्रकाश नहीं होता ॥ ४० ॥ उसकी अधिक लक्ष्मी तपाये हुए सूर्यकी समान शोभित थीं. वह सूक्ष्म लक्षणसे तपते हुए सूर्यकी समान प्रकाशित होता है ॥ ४१ ॥ सहस्र शिखर और अनेक प्रकारके तीर्थोंसे युक्त अनेक रत्नोंसे सम्पन्न उस पर्वतको निर्माण किया ॥ ४२ ॥ वह मनोहरगुणोंसे युक्त उत्तम मन्दराचल बड़े पुष्पगन्धयुक्त गन्धमादन पर्वतको ॥ ४३ ॥ बनाया उसके सुवर्णके शृंगपर जम्बू जाम्बूनदनिर्मित अनंत और अद्भुत दर्शनवाली किया ॥ ४४ ॥ शिखर पर्वत और उत्तम शृंगसे युक्त पुष्करपर्वत बनाया शुभ पाण्डुवर्ण मेघकी समान कैलासकी ॥ ४५ ॥ तथा दिव्यधातुसे युक्त तस्य लक्ष्म्याधिकं भाति तपसा रविणा यथा ॥ सूक्ष्मलक्षणविज्ञेयस्तपतीव दिवाकरः ॥ ४१ ॥ सहस्राशिखरं चैव नानातीर्थसमाकुलम् ॥ चकार रत्नसंकीर्णं भूयोऽस्तं नाम पर्वतम् ॥ ४२ ॥ मनोहरगुणोपेतं मन्दरं चाचलोत्तमम् ॥ उद्दामपुष्पगन्धं च पर्वतं गन्धमादनम् ॥ ४३ ॥ चकार तस्य शृङ्गेषु सुवर्णरत्नसंभवम् ॥ जम्बूं जाम्बूनदमयीमनन्ताद्भुतदर्शनम् ॥ ४४ ॥ गिरिं च शिखरं चैव तथा पुष्करपर्वतम् ॥ शुभ्रं पाण्डुरमेघाभं कैलासं च नगोत्तमम् ॥ ४५ ॥ हिमवन्तं च शैलेन्द्रं दिव्यधातुविभूषितम् ॥ निवेशयामास हरिवरार्हो तनुमास्थितः ॥ ४६ ॥ नदीं सर्वगुणोपेतामुत्तरस्यां दिशि प्रभुः ॥ मधुधारां स कृतवान् दिव्यामृषिशताकुलाम् ॥ ४७ ॥ सर्वे चैव क्षितिधराः सपक्षाः कामरूपिणः ॥ तदा कृता भगवता विचित्राः परमेष्ठिना ॥ ४८ ॥ स कृत्वा प्रविभागं तु पृथिव्या लोकभावनः ॥ देवासुराणामुत्पत्तौ कृतवान्बुद्धिमक्षयाम् ॥ ४९ ॥ सर्वासु दिक्षु क्षतजोपमाक्षश्चकार शैलान्विविधाभिधानान् ॥ हिताय लोकस्य स लोकनाथः पुण्याश्च नद्यः सलिलोपगूढाः ॥ ५० ॥ इति श्री० खि० ह० भवि० पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

पर्वतश्रेष्ठ हिमालयकी रचना हरिने वाराहशरीरका आश्रय कर की ॥ ४५ ॥ सम्पूर्ण गुणोंसे युक्त प्रभुने उत्तरदिशामें नदियें स्थापन कीं जिनके जल महामिष्ट हैं और सैकड़ों ऋषि जिनके किनारेपर वास करते हैं ॥ ४७ ॥ सब पर्वत कामरूपधारी और पंखोंसे युक्त थे. वह परमेष्ठी विधाताने सब कुछ किया ॥ ४८ ॥ इस प्रकार लोकभावनने पृथ्वीका विभाग कर देवता असुरोंकी सृष्टि अक्षयबुद्धियुक्त की ॥ ४९ ॥ इस प्रकार सम्पूर्ण दिशाओंमें पर्वतोंको करके उन लोकनाथने पवित्र नदियें निर्माण कीं ॥ ५० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

वैशंपायन बोले, तब वह देव जगत् रचना करनेके निमित्त विचार करने लगे तब विचार करते हुए उनके मुखसे पुरुष निकला ॥ १ ॥ तब वह पुरुष देवके सामने स्थित हो बोला; हे देव ! मैं क्या कहूं उससे देवदेव हैंसते हुए बोले ॥ २ ॥ तुम अपनेको विभाग करो यह कह प्रभु अन्तर्धान हो गये; जिस समय वह देव अन्तर्धान हो गये ॥ ३ ॥ उनके अन्तर्हित होनेसे प्रभुकी गति नहीं जानी जाती है तब भगवान् की कही वाणीको वह प्रभु विचार कर ॥ ४ ॥ वह हिरण्यगर्भ भगवान् जो वेदमें विख्यात हैं यही प्रथम सबके अधिपति प्रजापति हुए हैं ॥ ५ ॥ उसी समयसे उनको यज्ञभाग

वैशंपायन उवाच ॥ जगत्स्रष्टुमना देवश्चिन्तयामास पूर्वजः ॥ तस्य चिन्तयतो वक्रान्निःसृतः पुरुषः किल ॥ १ ॥ ततः स पुरुषो देवं किं करोमीत्युपस्थितः ॥ प्रत्युवाच स्मितं कृत्वा देवदेवो जगत्पतिः ॥ २ ॥ विभजात्मानमित्युक्त्वा गतोऽन्तर्धान-
मीश्वरः अन्तर्हितस्य देवस्य सशरीरस्य भारत ॥ ३ ॥ प्रशान्तरूपेव दीपस्य गतिस्तस्य न विद्यते ॥ ततस्तेनेरितां वाणीं सोऽ-
न्विचिन्तयत प्रभुः ॥ ४ ॥ हिरण्यगर्भो भगवान्य एष च्छन्दसि श्रुतः ॥ एष प्रजापतिः पूर्वमभवद्भुवनाधिपः ॥ ५ ॥ तदाप्रभृति तस्याद्यो
यज्ञभागो विधीयते ॥ प्रजापतिरुवाच ॥ विभजात्मानमित्युक्तस्तेनास्मि सुमहात्मना ॥ ६ ॥ कथमात्मा विभज्यः स्यात्संशयो ह्यत्र मे
महान् ॥ इति चिन्तयतस्तस्य ओमित्येवोत्थितः स्वरः ॥ ७ ॥ स भूमावन्तरिक्षे च नाके च कृतवांस्ततः ॥ तं चैवाभ्यसतस्तस्य
मनःसारमयः पुनः ॥ ८ ॥ हृदयादेवदेवस्य वषट्कारः समुत्थितः ॥ भूम्यन्तरिक्षनाकानां भूर्भुवः सुवरात्मिकाः ॥ ९ ॥ महास्मृतिमयाः
पुण्या महाव्याहृतयोऽभवन् ॥ छन्दसां प्रवरा देवी चतुर्विंशाक्षराभवत् ॥ तत्पदं संस्मरन् दिव्यं सावित्रीमिकरोत्प्रभुः ॥ १० ॥

विधान किया जाता है. प्रजापति बोले; जब कि उन महात्माके कहनेसे आत्माका विभाग करनेकी इच्छा की ॥ ६ ॥ तब मुझको संदेह हुआ कि आत्माका विभाग किस प्रकार हो सकता है यह विचार करतेमें ओं यह स्वर प्रगट हुआ ॥ ७ ॥ वह पृथ्वी अन्तरिक्ष और स्वर्गमें व्याप्त हो गया. उस सारमय शब्दको अभ्यास करते हुए ॥ ८ ॥ देवदेवके हृदयसे वषट्कार प्रादुर्भूत हुआ वह भूमि अन्तरिक्ष और स्वर्गमें भूर्भुवः स्वरः इन तीन रूप-
वाला हुआ ॥ ९ ॥ वह महास्मृतिमय पुण्यरूप महाव्याहृतियें हुई. उसीसे छंदोंमें श्रेष्ठ चौबीस अक्षरात्मक देवी प्रगट हुई. उस दिव्य पदको स्मरण

करते हुए प्रभुने सावित्री की ॥ १० ॥ फिर प्रभुने ऋग् यजु साम अथर्व इन चार वेदोंको ब्रह्मयुक्त कर्मसे प्रगट किया ॥ ११ ॥ फिर उन्हीके मनसे सनक सनातन और सनन्दन ॥ १२ ॥ सनत्कुमार विभु और सनातनको उत्पन्न किया. यह छः पूर्वमहर्षि मनसेही उत्पन्न किये हैं ॥ १३ ॥ ब्रह्मा और कपिलपर्यन्त यह छः योगी हैं. यह योगतंत्रोंमें यति विख्यात हैं. जिनको द्विजाति स्तुति करते हैं ॥ १४ ॥ फिर मरीचि अत्रि पुलस्त्य पुलह क्रतु भृगु अंगिरा प्रजापति मनु ॥ १५ ॥ सब भूतोंके पितर देवता असुर राक्षस और महर्षि इन आठोंको शंभुने निर्माण किया ॥ १६ ॥ यह सह-

ऋक्सामाथर्वयजुषश्चतुरो भगवान्प्रभुः ॥ चकार निखिलाच्चेदान्ब्रह्मयुक्तेन कर्मणा ॥ ११ ॥ ततस्तस्यैव मनसः सनः सनक एव च ॥ सनातनश्च भगवान्वरदश्च सनन्दनः ॥ १२ ॥ सनत्कुमारश्च विभुस्तत्र जज्ञे सनातनः ॥ मानसाश्चैव पूर्वाद्या इत्येते षण्महर्षयः ॥ १३ ॥ ब्रह्माणं कपिलं चैव षडेतांश्चैव योगिनः ॥ यतयो योगतन्त्रेषु यान्स्तुवन्ति द्विजातयः ॥ १४ ॥ ततो मरीचिमत्रिं च पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् ॥ भृगुमङ्गिरसं चैव मनुं चैवं प्रजापतिम् ॥ १५ ॥ पितृंश्च सर्वभूतानां देवतासुररक्षसाम् ॥ महर्षीन्सृजच्छंभुरष्टावेतांश्च मानसान् ॥ १६ ॥ एते युगसहस्रान्ते याश्चैषामभवत्प्रजाः ॥ कल्पे निःशेषभुक्ते तु ततो गच्छन्ति निर्वृतिम् ॥ १७ ॥ भूयो वर्षसहस्रान्ते उत्पत्तिस्तु विधीयते ॥ एतेषामेव देवानां प्रजाकर्तृषु वै तदा ॥ १८ ॥ किं तु कर्मविशेषेण देवतानां युगे युगे ॥ नामजन्मविशेषाश्च तथैव युगपर्यये ॥ १९ ॥ अङ्गुष्ठादक्षिणादक्ष उत्पन्नो भगवाननृषिः ॥ तस्यैव तु पुनर्भार्या वामाङ्गुष्ठादजायत ॥ २० ॥ तस्य तत्राभवत्कन्या विश्रुता लोकमातरः ॥ याभिर्व्यासास्त्रयो लोकाः प्रजाभिर्मनुजाधिप ॥ २१ ॥

संयुगके अन्तमें प्रजा पालन कर जब कल्प पूर्ण हो जाता है तब स्वयं निवृत्तिको प्राप्त हो जाते हैं ॥ १७ ॥ फिर सहस्र वर्षके उपरान्त इनकी उत्पत्ति होती है इन देवताओंकी जो प्रजाके करनेवाले हैं ॥ १८ ॥ उत्पत्ति कर्मविशेषसे युगयुगमें हुआ करती है केवल नामजन्ममें विशेषता होती है ॥ १९ ॥ यही युगसमाप्तिमें होता है. उनके दक्षिण अंगुष्ठसे दक्ष और भगवानृषि उत्पन्न हुए और वाम अंगुष्ठसे उनकी भार्या हुई ॥ २० ॥ उसकी कन्या विख्यात और लोककी मातायें हुई. हे राजन् ! जिनकी प्रजासे त्रिलोकी व्याप्त हो रही है ॥ २१ ॥

अदिति दिति काला अनायु सिंहिका मुनि प्राधा क्रोधा सुरभी विनिता सुरसा ॥ २२ ॥ दनु और कद्रु यह प्रजावृद्धिके अर्थ दक्षने कश्यपजीको प्रदान कीं ॥ २३ ॥ अरुन्धती वसु यामी लम्बा भानु मरुत्वती संकल्पा मुहूर्ता साध्या विश्वा ॥ २४ ॥ यह दश कन्या प्रजापति दक्षने मनुको दीं तब यह सम्पूर्ण शरीरसे उत्तम कमललोचनी ॥ २५ ॥ पूर्णचन्द्रमाकी समान मुखवाली दिव्यगंधसे युक्त मनोरम कीर्ति लक्ष्मी धृति पुष्टि बुद्धि मेधा क्षमा ॥ २६ ॥ मति लज्जा वसु यह दक्षने धर्मके वास्ते दीं और आत्रिकुमार चन्द्रमा ॥ २७ ॥ सहस्रांशु अंधकारनाशकको उस दक्षने अपनी कन्या प्रदान कीं ॥ २८ ॥

अदितिं च दितिं कालामनायुं सिंहिकां मुनिम् ॥ प्राधां क्रोधां च सुराभिं विनितां सुरसां तथा ॥ २२ ॥ दनुं कद्रुं च दुहितृः प्रददौ कश्यपाय तु ॥ प्रजां संचिन्त्य मनसा गतिज्ञेनान्तरात्मना ॥ २३ ॥ अरुन्धतीं वसुं यामीं लम्बां भानुं मरुत्वतीम् ॥ संकल्पां च मुहूर्तां च साध्यां विश्वां च भारत ॥ २४ ॥ मनवे ब्रह्मपुत्राय कन्या दक्षो ददौ दश ॥ ततः सर्वानवद्याङ्ग्यः कन्याः कमललोचनाः ॥ २५ ॥ पूर्णचन्द्रानना दिव्या गन्धवत्यो मनोरमाः ॥ कीर्तिं लक्ष्मीं धृतिं पुष्टिं बुद्धिं मेधां क्षमां तथा ॥ २६ ॥ मतिं लज्जां वसुं चैव दक्षो धर्माय वै ददौ ॥ आत्रेयस्तु ततो भूतस्तस्य तोयात्मकः शशी ॥ २७ ॥ पुत्रो ग्रहाणामधिपः सहस्रांशुस्तमिस्रहा ॥ तस्मै नक्षत्रयोगिन्यः सप्तविंशतिरुत्तमाः ॥ २८ ॥ रोहिणीप्रमुखाः कन्या दक्षः प्राचेतसो ददौ ॥ एतासां पुत्रपौत्रं च प्रौच्यमानं मया शृणु ॥ २९ ॥ कश्यपस्य मनोश्चैव धर्मस्य शशिनस्तथा ॥ अर्यमा वरुणो मित्रः पूषा धाता पुरंदरः ॥ ३० ॥ त्वष्टा भगोऽशुः सविता पर्जन्यश्चेति विश्रुताः ॥ अदित्यां जज्ञिरे देवाः कश्यपाल्लोकभावनाः ॥ ३१ ॥ दित्याः पुत्रद्वयं जज्ञे कश्यपादिति नः श्रुतम् ॥ हिरण्यकाशिपुश्चैव हिरण्याक्षश्च वीर्यवान् ॥ द्वावप्यमितविक्रान्तौ तपसा कश्यपोपमौ ॥ ३२ ॥

यह रोहिणी आदि सत्ताईस कन्या उनको प्राप्त हुईं. इनके पुत्रपौत्रोंका विस्तार मुझसे सुनो ॥ २९ ॥ कश्यप मनु धर्म और चन्द्रमाकी सन्तान मुझसे सुनो. अर्यमा वरुण मित्र पूषा धाता पुरन्दर ॥ ३० ॥ त्वष्टा भग अंशु सविता पर्जन्य यह विख्यात सूर्य कश्यपसे अदितिमें उत्पन्न हुए ॥ ३१ ॥ और दितिमें कश्यपसे दो पुत्र हुए ऐसा हमने सुना है. हिरण्यकाशिपु और हिरण्याक्ष यह दोनों बड़े बली तपसे कश्यपकी समान थे ॥ ३२ ॥

हिरण्यकशिपुके महाबली पांच पुत्र हुए. प्रहाद संहार अनुहाद ॥ ३३ ॥ हद और पांचवां अनुहद उनमें प्रहाद पूर्वज और अनुहद छोटा था ॥ ३४ ॥ प्रहादके महाबली तीन पुत्र हुए विरोचन जंभ और सुजंभ ॥ ३५ ॥ विरोचनका पुत्र बलि और बलिके चाग और बाणका शत्रुनाशी इन्द्रदमन हुआ ॥ ३६ ॥ दनुके पुत्र इस वंशमें विख्यात बहुत हुए उसमें पहला विप्रचित्ति उनका राजा हुआ ॥ ३७ ॥ क्रोधाके गण हुआ और उसके पुत्र पौत्र अनन्त हुए. क्रोधाके क्रोधवशा क्रूरकर्मा सन्तान हुई ॥ ३८ ॥ सिंहिकाके चन्द्रसूर्यका दुःख देनेवाला राहु हुआ. वह चन्द्रमा और सूर्यका घास करता

हिरण्यकशिपोः पुत्राः पञ्चैव सुमहाबलाः ॥ प्रहादश्चैव संहारस्तथानुहाद एव च ॥ ३३ ॥ हदश्चैव तु विक्रान्तः पञ्चमोऽनुहदस्तथा ॥ प्रहादः पूर्वजस्तेषामनुहादस्तथा परः ॥ ३४ ॥ प्रहादस्य त्रयः पुत्रा विक्रान्ताः सुमहाबलाः ॥ विरोचनश्च जम्भश्च सुजम्भश्चेति विश्रुताः ॥ ३५ ॥ बलिर्विरोचनसुतो बाण एको बलेः सुतः ॥ बाणस्य चेन्द्रदमनः पुत्रः परपुंरजयः ॥ ३६ ॥ दनोः पुत्रास्तु बहवो वंशे ख्याता महासुराः ॥ विप्रचित्तिः प्रथमजस्तेषां राजा बभूव ह ॥ ३७ ॥ गणः प्रजज्ञे क्रोधायाः पुत्रपौत्रमनन्तकम् ॥ रौद्राः क्रोधवशा नाम क्रूरकर्माण एव च ॥ ३८ ॥ सिंहिका सुषुवे राहुं ग्रहचन्द्रार्कमर्दनम् ॥ ग्रस्तारं चैव चन्द्रस्य सूर्यस्य च विनाशनम् ॥ ३९ ॥ कालायाः कालकल्पस्तु गणः परमदारुणः ॥ अभवद्दत्तिसूर्याक्षो नीलमेघसमप्रभः ॥ ४० ॥ सहस्रशीर्षा शेषश्च वासुकिस्तक्षकस्तथा ॥ बहूनां कद्रुपुत्राणामेते प्राधान्यमागताः ॥ ४१ ॥ धर्मात्मानो वेदविदः सदा प्राणिहिते रताः ॥ लोकतन्त्रधराश्चैव वरदाः कामरूपिणः ॥ ४२ ॥ ताक्ष्यश्चारिष्टनेमिश्च गरुडश्च महाबलः ॥ अरुणिश्चारुणिश्चैव विनतायाः सुताः स्मृताः ॥ इमाश्चाप्तरसः पुण्या विविधाः पुण्यलक्षणाः ॥ ४३ ॥

हे ॥ ३९ ॥ कालको कालकी समान परम दारुण गण हुआ. यह सूर्याक्ष नीलमेघकी समान महाकान्तिमान् हुआ ॥ ४० ॥ सहस्र शिरवाले शेष वासुकि और तक्षक यह बहुतसे कद्रुपुत्रोंमें प्रधानताको प्राप्त हुए ॥ ४१ ॥ धर्मात्मा वेदके जाननेवाले सदा प्राणी हितमें निरत लोकतन्त्रधारी वरदाता कामरूपी ॥ ४२ ॥ ताक्ष्य अरिष्टनेमि महाबली गरुड अरुणि भारुणि यह विनताके पुत्र हुए, यह पवित्र अप्सरा अनेक पुण्यहोषिणी हैं ॥ ४३ ॥

यह आठ महाभागा देवर्षिपूजित प्राधाके उत्पन्न हुईं. निन्दारहित अनूरा अहगप्रिया अनुगा सुभगा भासी यह स्त्री प्राधाके उत्पन्न हुईं ॥ ४४ ॥ अलम्बुषा मिश्रकेशी पुण्डरीका तिलोत्तमा सुरूपा लक्षणा क्षेमा मनोरमा रंता ॥ ४५ ॥ असिता सुबाहु सुवृत्ता सुमुखी सुप्रिया सुगन्धा सुरसा प्रमाथिनी ॥ ४६ ॥ काश्या शारद्वती यह अप्सरा मुनिकी सन्तान कहलाई, विश्वावसु भरण्य यह विख्यात गन्धर्व ॥ ४७ ॥ मेनका सहजन्मा पर्णिका पुञ्जिकस्थला घृतस्थला ताची विश्वाची उर्वशी ॥ ४८ ॥ अनुम्लोचा प्रम्लोचा यह दश विख्यात अप्सरा हैं. मनोवती वैदिकी अप्सरा ॥ ४९ ॥ यह

सुबुवेऽष्टौ महाभागा प्राधा देवर्षिपूजिता ॥ अनवद्यामनूकां च अनूनामरुणप्रियाम् ॥ अनुगां सुभगां भासीं स्त्रियः प्राधा व्यजा-
यत ॥ ४४ ॥ अलम्बुषा मिश्रकेशी पुण्डरीका तिलोत्तमा ॥ सुरूपा लक्षणा क्षेमा तथा रम्भा मनोरमा ॥ ४५ ॥ असिता च सुबाहुश्च
सुवृत्ता सुमुखी तथा ॥ सुप्रिया च सुगन्धा च सुरसा च प्रमाथिनी ॥ ४६ ॥ काश्या शारद्वती चैव मौनेयाप्सरसः स्मृताः ॥
विश्वावसुर्भरण्यश्च गन्धर्वाश्चैव विश्रुताः ॥ ४७ ॥ मेनका सहजन्मा च पर्णिका पुञ्जिकस्थला ॥ घृतस्थला घृताची च विश्वाची
चोर्वशी तथा ॥ ४८ ॥ अनुम्लोचेत्यभिरुपाता प्रम्लोचेति च ता दश ॥ मनोवती चापि तथा वैदिक्योऽप्सरसस्तथा ॥ ४९ ॥
प्रजापतेस्तु संकल्पात्संभूता भुवनप्रियाः ॥ अमृतं ब्राह्मणा गावो रुद्राश्चेति चतुष्टयम् ॥ ५० ॥ सुरभ्यपत्न्यमित्येतत्पुराणे निश्चयो
महान् ॥ एतद्वै कश्यपापत्यं मनोर्वंशं निबोध मे ॥ ५१ ॥ संक्षेपेणैव तत्सर्वं कीर्तयिष्यामि तेऽनघ ॥ विश्वेदेवास्तु विश्वायाः साध्या
साध्यान्वजायत् ॥ ५२ ॥ मरुत्वत्यां मरुत्वन्तो वसोस्तु वसवः स्मृताः ॥ भानोस्तु भानवस्तात सुहृताश्च सुहूर्तजाः ॥ ५३ ॥

भुवनप्रिय अप्सरा प्रजापतिके संकल्पसे उत्पन्न हुई हैं. अमृत ब्राह्मण गौ रुद्र यह चारों ॥ ५० ॥ सुरभीसे उत्पन्न हुई हैं. यह कश्यपका वंश है अब
मनुवंश सुनो ॥ ५१ ॥ हे पापरहित ! तुम्हारे आगे संक्षेपसे कीर्तन करता हूं. विश्वाके विश्वेदेवा साध्याके साध्य ॥ ५२ ॥ मरुत्वतीके मरुत वसुके
वसु भानुके भानु सुहृताके सुहूर्त उत्पन्न हुए ॥ ५३ ॥

लम्बाके घोष जामीके नागवीथी मरुत्वतीके पृथ्वीविषयक सब पदार्थ हुए ॥ ५४ ॥ हे राजन् ! संकल्पाके संकल्प हुए और धर्मसे लक्ष्मीमें जगत्प्रिय कामदेव हुआ ॥ ५५ ॥ यश हर्ष यह दो पुत्र कामसे रतिमें हुए सोमका पुत्र रोहिणीमें महाकान्तिमान् वर्चा हुआ ॥ ५६ ॥ जिससे उदय होकर चन्द्रमा महातेजस्वी प्रतीत होता है और पुरूरवासे उर्वशीका संयोग हुआ है ॥ ५७ ॥ उस प्रकार स्त्रीजनोंके परस्पर सहस्रों पुत्र उत्पन्न हुए हैं, इतनाही जगत्का मूल है जिसमें तीनों लोक प्रतिष्ठित हैं ॥ ५८ ॥ भगवान् प्रजापतिने गुणोंसे मनुष्योंको देख सबको योगद्वारा आधिपत्यमें

लम्बा घोषं विजज्ञेऽथ नागवीथी च जामिजा ॥ पृथिव्यां विषमं सर्वं मरुत्वत्यामजायत ॥ ५४ ॥ संकल्पायास्तु कौरव्य जज्ञे संकल्प एव च ॥ धर्मस्य पुत्रो लक्ष्म्यास्तु कामो जज्ञे जगत्प्रभुः ॥ ५५ ॥ यशो हर्षश्च कामस्य रत्यां पुत्रद्वयं स्मृतम् ॥ सोमस्य पुत्रो रोहिण्यां जज्ञे वर्चा महाप्रभः ॥ ५६ ॥ उदयन्नेव भगवान्वर्चस्वी येन जायते ॥ पुरूरवाश्च भगवानुर्वशी येन युज्यते ॥ ५७ ॥ एवं पुत्रसहस्राणि स्त्रीणां चैव परस्परम् ॥ एतावत्तु जगन्मूलं यत्र लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥ ५८ ॥ प्रजापतिस्तु भगवान् गुणतः प्रेक्ष्य देहिनः ॥ आधिपत्येषु युक्तेषु नियोजयति योगवित् ॥ ५९ ॥ दिशो दश क्षितिमृषयोऽर्णवान्नगान्द्रुमौषधीरुग्गत्तुरासुरान् ॥ प्रजापतिर्भुवनसृजो नभोभुवः क्रियामखानथ कृतवान् गिरिंश्च सः ॥ ६० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ त्रयाणामपि लोकानामादित्यानां च भारत ॥ चकार शक्रं राजानमादित्यसमते-जसम् ॥ १ ॥ स वज्री कवची विष्णुरदित्यामभिजज्ञिवान् ॥ स्मृतेः सहायो द्युतिमान्यथा सोऽध्वर्युभिः स्तुतः ॥ २ ॥

नियुक्त किया है ॥ ५९ ॥ दश दिशा पृथ्वी ऋषि समुद्र वृक्ष औषधी सर्प नदी देवता दैत्य लोकोंके रचनेवाले प्रजापति आकाश पाताल क्रिया यज्ञ पर्वत यह सब भगवान्ने किये हैं ॥ ६० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥ वैशम्पायन बोले, हे राजन् ! तीनों लोक और सब देवताओंके आधिपत्यमें सूर्यकी समान तेजस्वी इन्द्रको अधिष्ठित किया ॥ १ ॥ वज्रकवच धारण किये विष्णुरूपे अदितिमें जन्में वह कान्तिमान् स्मृतिकी सहायताको प्राप्त हो अध्वर्युजनोंसे स्तुतिको प्राप्त हुए ॥ २ ॥

उत्पन्न होतेही भगवान् इन्द्र कुशा धारण किये ब्राह्मणोंसे धारण किये गये उसी दिनसे देवेशका नाम कौशिक हुआ ॥ ३ ॥ सहस्राक्ष इन्द्रको देवराजत्वमें अभिषेक कर ब्रह्मा क्रमसे सब राज्य विभाग करने लगे ॥ ४ ॥ यज्ञ तम ग्रह नक्षत्र औषधी ब्राह्मणोंका राजा चन्द्रमाको किया ॥ ५ ॥ दक्षको प्रजापतियोंका वरुणको जलोंका पितरोंका सर्वनिधन अग्निको जिसको काल वैश्वानर प्रभु कहते हैं ॥ ६ ॥ गंध और सब भूत शरीरधारियोंका शब्द आकार और बलका अधिपति वायुको किया ॥ ७ ॥ सब भूत पिशाच मृत्यु गौ उत्पात ग्रहरोग व्याधी ॥ ८ ॥ और सम्पूर्ण व्रतोंका अधिपति महादेवको किया. यक्ष राक्षस गुह्यक

जातमात्रोऽथ भगवान्स कुशैर्ब्राह्मणैर्धृतः ॥ तदाप्रभृति देवेशः कौशिकत्वमुपागतः ॥ ३ ॥ अभिषिञ्चाधिराज्ये तु सहस्राक्षं पुरंदरम् ॥ ब्रह्मा क्रमेण राज्यानि व्यादेष्टुमुपचक्रमे ॥ ४ ॥ यज्ञानां तपसां चैव ग्रहनक्षत्रयोस्तथा ॥ द्विजानामौषधीनां तु सोमं राज्येऽभ्यषेचयत् ॥ ५ ॥ दक्षं प्रजापतीनां तु अम्भसां वरुणं पतिम् ॥ पितॄणां सर्वनिधनं कालं वैश्वानरं प्रभुम् ॥ ६ ॥ गन्धानां चैव सर्वेषां भूतानां च शरीरिणाम् ॥ शब्दाकाशबलानां च वायुरीशस्तदा कृतः ॥ ७ ॥ सर्वभूतपिशाचानां मृत्यूनां च गवां तथा ॥ उत्पातग्रहरोगाणां व्याधीनां तु तथैव च ॥ ८ ॥ व्रतानां चैव सर्वेषां महादेवः कृतः प्रभुः ॥ यक्षाणां राक्षसानां च गुह्यकानां धनस्य च ॥ ९ ॥ रत्नानां चैव सर्वेषां कृतो वैश्रवणः प्रभुः ॥ सर्वेषां दंष्ट्रिणां शेषो नागानामथ वासुकिः ॥ १० ॥ सरिसृपाणां सर्वेषां प्रभुर्वै तक्षकः कृतः ॥ सागराणां नदीनां च मेघानां वर्षणस्य च ॥ आदित्यानामवरजः पर्जन्योऽधिपतिः कृतः ॥ ११ ॥ गन्धर्वाणामधिपतिस्तथा चित्ररथः कृतः ॥ सर्वाप्सरोगणानां च कामदेवः प्रभुः कृतः ॥ १२ ॥

धन ॥ ९ ॥ और सम्पूर्ण रत्नोंका पति कुशेरको किया. सब दंष्ट्रावालोंका अधिपति शेष, नागोंका वासुकी ॥ १० ॥ सब सरिसृप रिंगनेवाले जीवोंका पति तक्षक सागर नदी मेघ वर्षाका पति, आदित्योंका छोटा पर्जन्य किया ॥ ११ ॥ गन्धर्वोंका अधिपति चित्ररथ सम्पूर्ण अप्सराओंका अधिपति कामदेव किया ॥ १२ ॥

सब चतुष्पद और वाहनोंका स्वामी महेश्वर ध्वज श्रीमान् गोवृष किया ॥ १३ ॥ दैत्योंका अधिपति महातेजस्वी हिरण्यक्ष किया. हिरण्यकशिपुको युवराज्यमें अभिषिक्त किया ॥ १४ ॥ कालकेयवोंका अधिपति काल किया. अनायुषाके पुत्रोंका अधिपति वृत्रको किया ॥ १५ ॥ सिंहिकापुत्र महाअसुर राहु सम्पूर्ण उत्पात और अशुभोंका राजा किया गया ॥ १६ ॥ सम्पूर्ण ऋतु मुहूर्त पक्ष महीना युग तिथि पर्व ॥ १७ ॥ कला काष्ठा मुहूर्त गति अयन योग गणितका राजा संवत्सरको किया ॥ १८ ॥ पक्षी और चक्षुका स्वामी महाबल भोगियोंका अधिपति गरुड ॥ १९ ॥ जपापुष्पकी समान कान्तिमान् गरुडके भाई

चतुष्पदानां सर्वेषां वाहनानां च सर्वशः ॥ महेश्वरध्वजः श्रीमान् गोवृषोऽधिपतिः कृतः ॥ १३ ॥ दैत्यानां च महातेजा हिरण्याक्षः प्रभुः कृतः ॥ हिरण्यकशिपुश्चैव यौवराज्येऽभिषेचितः ॥ १४ ॥ गणानां कालकेयानां महाकालः प्रभुः कृतः ॥ अनायुषायाः पुत्राणां वृत्रो राजा तदा कृतः ॥ १५ ॥ सिंहिकातनयो यस्तु राहुर्नाम महासुरः ॥ उत्पातानामनेकानामशुभानां प्रभुः कृतः ॥ १६ ॥ ऋतूनामथ सर्वेषां युगानां चैव भारत ॥ पक्षाणां चैव मासानां तथैव तिथिपर्वणाम् ॥ १७ ॥ कलाकाष्ठा मुहूर्तानां गतेरयनयोस्ततः ॥ कृतः संवत्सरो राजा योगस्य गणितस्य च ॥ १८ ॥ पक्षिणां चैव सर्वेषां चक्षुषां च महाबलः ॥ सुपर्णो भोगिनां चैव गरुडोऽधिपतिः कृतः ॥ १९ ॥ अरुणो गरुडभ्राता जपापुष्पचयप्रभुः ॥ योगानां चैव सर्वेषां साध्यानामधिपः कृतः ॥ २० ॥ पुत्रोऽस्य विरथो नाम कश्यपस्य प्रजापतेः ॥ राजा प्राच्यां दिशि तथा वासवेनाधिपः कृतः ॥ २१ ॥ आदित्यस्य विभोः पुत्रो धर्मराजो महायशः ॥ दक्षिणस्यां दिशि यमो महेन्द्रेणैव सत्कृतः ॥ २२ ॥ कश्यपस्योरसः पुत्रः सलिलान्तर्गतः सदा ॥ अम्बुराज इति ख्यातः प्रतीच्यां दिशि पार्थिवः ॥ २३ ॥ पुलस्त्यपुत्रो द्युतिमान्महेन्द्रप्रतिमः प्रभुः ॥ एकाक्षः पिङ्गलो नाम सौम्यायां दिशि पार्थिवः ॥ २४ ॥

अरुण सब योग और साध्योंके अधिपति किये गये ॥ २० ॥ कश्यप प्रजापतिका पुत्र विरथ उसको इन्द्रने पूर्व दिशाका अधिपति किया ॥ २१ ॥ आदित्यका पुत्र महायशस्वी विभु यम दक्षिण दिशाका अधिपति इन्द्रने किया ॥ २२ ॥ कश्यपका औरस पुत्र जलमें प्राप्त हुआ. अम्बुराज नाम पश्चिम दिशाका अधिपति किया गया ॥ २३ ॥ पुलस्त्यका पुत्र द्युतिमान् महेन्द्रकी समान कान्तिमान् एकाक्ष पिङ्गल नाम कुचेर उत्तर दिशाके

अधिपति किये ॥ २४ ॥ लोक उत्पन्नकर्ता स्वयम्भूने इस प्रकार राज्योंका विभाग कर दिव्यलोक पृथक् पृथक् देवताओंको दिये ॥ २५ ॥ किसीको सूर्यकी समान किसीको अग्निकी समान किसीको बिजलीकी समान किसीको चन्द्रकी समान निर्मल किया ॥ २६ ॥ अनेक वर्णोंवाले यथाकाम गमन करनेवाले सैकड़ों जन उनमें रहते हैं. यह पुण्यात्माओंके लोक पापियोंको दुर्लभ हैं ॥ २७ ॥ यह ग्रह और तारणोंके समान प्रकाशित होते हैं. यह पुण्यकर्म करनेवाले महात्माओंके लोक हैं ॥ २८ ॥ जो पवित्र यज्ञ बड़ी दक्षिणाओंसे समाप्त करते हैं जो अपनी धियोंमें निरत शान्त क्षान्त सीधे

एवं विभज्य राज्यानि स्वयंभूलोकभावनः ॥ लोकांश्च त्रिदिवे दिव्यानददत्त पृथक् पृथक् ॥ २५ ॥ कस्यचित्सूर्यसंकाशान्कस्य-
चिद्ब्रह्मिन्निभान् ॥ कस्यचित्सुष्ठुविद्योतान्कस्यचिच्चन्द्रनिर्मलान् ॥ २६ ॥ नानावर्णान्कामगमानेकशतशो जनान् ॥ स तान्सुकृ-
तिनां लोकान्पापदुष्कृतिदुर्लभान् ॥ २७ ॥ येषां भासो विभान्त्यग्रे सौम्यास्तारागणा इव ॥ एते सुकृतिनां लोका ये जाताः पुण्यक-
र्मिणः ॥ २८ ॥ ये यजन्ति मखैः पुण्यैः समाप्तवरदक्षिणैः ॥ स्वदारनिरताः क्षान्ता ऋजवः सत्यवादिनः ॥ २९ ॥ दीनानुग्रहकतारो
ब्रह्मण्या लोभवर्जिताः ॥ संत्यक्तरजसः सन्तो यान्ति तत्र तपोमलाः ॥ ३० ॥ एवं नियुज्य तनयान्स्वयं लोकपितामहः ॥ पुष्करं
ब्रह्मसदनमारुरोह प्रजापतिः ॥ ३१ ॥ सर्वे स्वयंभुदत्तेषु पालनेषु दिवौकसः ॥ रेमिरे स्वेषु लोकेषु महेन्द्रेणाभिपालिताः ॥ ३२ ॥
स्वयंभुवा शक्रपुरःसरा सुराः कृता यथार्हं प्रतिपालनेषु ते ॥ यशो दिवं च प्रतिपेदिरे शुभं मुदं च जगुर्मखभागभोजिनः ॥ ३३ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

सत्यवादी हैं ॥ २९ ॥ दीनोंपर अनुग्रह करनेवाले ब्रह्मण्य लोभरहित रजोगुण त्यागे हुए हैं वह तपसे निर्मल होकर वहां जाते हैं ॥ ३० ॥ इस प्रकार लोकपितामह ब्रह्मा अपने पुत्रोंको नियुक्त कर अपने पुष्कर नाम ब्रह्मस्थानमें प्राप्त हुए ॥ ३१ ॥ वे देवता ब्रह्माके दिये स्थानोंमें महेन्द्रसे पालित हो रमण करने लगे ॥ ३२ ॥ ब्रह्माने इन्द्रको आदि ले सम्पूर्ण देवताओंको जगत्की पालनामें तत्पर किया इससे उनको परम यशकी प्राप्ति हुई और यज्ञ-
भाग पानेवाले आनंदसे निज निज स्थानको गये ॥ ३३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

वैशंपायन बोले, एक समय पृथ्वीको धारण करनेवाले वे पर्वत परमेश्वरकी मायासे पृथ्वीको त्यागकर उड गये ॥ १ ॥ एक समय हिरण्याक्षसे पालित असुरोंके स्थानको प्राप्त हो वे पर्वत प्रतीची दिशामें प्राप्त हो गजकी समान हड्डिमें स्नान करते हुए ॥ २ ॥ और उन पर्वतोंने असुरोंसे स्वर्गका ऐश्वर्य वर्णन किया यह सुनकर असुरोंने स्वर्गमें जानेका उद्योग किया ॥ ३ ॥ वे महाकर बुद्धि कर पृथ्वीहरणमें रत हुए और उन भयंकर पराक्रमवालोंने सम्पूर्ण आयुध ग्रहण किये ॥ ४ ॥ चक्र अशनि खड्ग भुशुण्डी धनुष प्रास पाश शक्ति सुसल गदा ॥ ५ ॥ ग्रहण कर कवच धारण कर सज्जीभूत हुए कोई

वैशम्पायन उवाच ॥ कदाचित्तु सपक्षास्ते पर्वता धरणीधराः ॥ प्रस्थिता धरणीं त्यक्त्वा नूनं तस्यैव मायया ॥ १ ॥ तदासुराणां निलयं हिरण्याक्षेण पालितम् ॥ दिशं प्रतीचीमागम्य हृदेऽमजन्यथा गजाः ॥ २ ॥ तत्रासुरेभ्यः शंसन्त आधिपत्यं सुराश्रयम् ॥ तच्छ्रुत्वाथासुराः सर्वे चक्रुर्द्योगमुत्तमम् ॥ ३ ॥ क्रूरां च बुद्धिमतुलां पृथिवीहरणे रताः ॥ आयुधानि च सर्वाणि जगृहुर्भीमविक्रमाः ॥ ४ ॥ चक्राशनीस्तथा खड्गान्भुशुण्डीश्च धनुषि च ॥ प्रासान्पाशांश्च शक्तीश्च सुसलानि गदास्तथा ॥ ५ ॥ केचित्कवचिनः सज्जा मत्तनागास्तथा परे ॥ केचिदश्वरथान्युक्ता अपरेऽश्वान्महासुराः ॥ ६ ॥ केचिदुष्टास्तथा खड्गान्महिषान् गर्दभानपि ॥ स्वबाहुबलमास्थाय केचिच्चापि पदातयः ॥ ७ ॥ परिवार्य हिरण्याक्षं तलबद्धाः कलापिनः ॥ इतश्चेतश्च निश्चेरुर्हृष्टाः सर्वे युयुत्सवः ॥ ८ ॥ ततो देवगणाः पश्चात्पुनरुपुरोगमाः ॥ दैत्यानां विदितोद्योगाश्चक्रुर्द्योगमुत्तमम् ॥ ९ ॥ महता चतुरङ्गेण बलेन सुसमाहिताः ॥ बद्धगोघाङ्गुलित्राणास्तूणवन्तः समार्गणाः ॥ १० ॥ उग्रायुधधरा देवाः स्वेष्वनीकेष्ववस्थिताः ॥ ऐरावतगतं शक्रमन्वगच्छन्त पृष्ठतः ॥ ११ ॥

हाथीपर चढे कोई छोटे रथोंपर स्थित हुए कोई अश्वोंपर स्थित हुए ॥ ६ ॥ कोई ऊंट खड्ग महिष गर्दभोंपर स्थित हुए कोई अपने बाहुबलके आश्रय हो पैदल स्थित हुए ॥ ७ ॥ सब कोई हिरण्याक्षको घेर युद्धकी इच्छासे शिरके जुडे बांधे हुए इधर उधर विचरने लगे ॥ ८ ॥ तब देवगण इन्द्रको आगे कर दैत्योंकी इच्छा जान स्वयं उद्योग करने लगे ॥ ९ ॥ बड़ी भारी चतुरंग सेनाके बलसे युक्त हो गोघा अंगुलीत्राण बांधे तूणवन्त बाण लिये ॥ १० ॥ उग्रायुध धारण करनेवाले देवता अपनी सेनाओंमें स्थित हुए. ऐरावतपर चढे इन्द्रके पीछे पीछे देवता चलने लगे ॥ ११ ॥

तब तूर्य और भेरीके महाशब्दोंसे हिरण्याक्ष देवराज इन्द्रके ऊपर झपटा ॥ १२ ॥ तीक्ष्ण परशे निखिंश गदा तोमर शक्ति मुसल और पाट्टियोंके प्रहारसे इन्द्रको आच्छादन कर दिया ॥ १३ ॥ तब अस्त्रबलसे बड़ी वेगवान् आर्चिष्मान् दारुण घोररूप बाणवर्षा होने लगी ॥ १४ ॥ और श्रेष्ठ बली दैत्य शितधारवाले परशे लिये परिघ लोहनिर्मित खड्ग और क्षेपणीय सुदूर ॥ १५ ॥ अनेक प्रकारके तेजयुक्त गण्डशैल पर्वतकी समान पत्थर और मारनेवाली बड़ी बड़ी शतघ्नी ॥ १६ ॥ युगाकर अस्त्र यंत्रके द्वारा छोड़े जानेवाले अस्त्र अर्थात् पाषाण वर्षा करनेवाले आग्नेयादि अस्त्रोंसे दैत्य

ततस्तूर्यनिनादेन भेरीणां च महास्वनेः ॥ अभ्यद्रवद्विरण्याक्षो देवराजं पुरंदरम् ॥ १२ ॥ तीक्ष्णैः परशुनिखिंशैर्गदातोमरशक्तिभिः ॥ मुशलेः पाट्टिशैश्च च्छादयामास वासवम् ॥ १३ ॥ ततोऽस्त्रबलवेगेन सार्चिष्मत्यः सुदारुणाः ॥ घोररूपा महावेगा निपेतुर्बाण-
वृष्टयः ॥ १४ ॥ शिष्टाश्च दैत्या बलिनः सितधारैः परश्वधैः ॥ परिघैरायसैः खड्गैः क्षेपणीयैश्च सुदूरेः ॥ १५ ॥ गण्डशैलैश्च विविधै रश्मिभि-
श्चाद्रिसन्निभैः ॥ घातनीभिश्च गुर्वीभिः शतघ्नीभिस्तथैव च ॥ १६ ॥ युगैर्यन्त्रैश्च निर्मुक्तैरगलैश्च विदारणैः ॥ सर्वान्देगणान्दैत्याः सन्नि-
जघ्नुः सवासवान् ॥ १७ ॥ धूम्रकेशं हरिश्मश्रुं नानाप्रहरणायुधम् ॥ रक्तसंघ्याभ्रसंकाशं किरीटोत्तमधारिणम् ॥ १८ ॥ नीलपीता-
म्बरधरं शितदंष्ट्रोर्ध्वधारिणम् ॥ आजानुबाहुं हर्यक्षं वैदूर्याभरणोज्ज्वलम् ॥ १९ ॥ समुद्यतायुधं दृष्ट्वा सर्वे देवगणास्तदा ॥ ते हिरण्या-
क्षमसुरं दैत्यानामग्रतः स्थितम् ॥ २० ॥ युगान्तसमये भीमं स्थितं मृत्युमिवाग्रतः ॥ प्रविव्यथुः सुराः सर्वे तदा शक्रपुरोगमाः ॥ २१ ॥

सम्पूर्ण देवगणोंसे इन्द्रके सहित ताडन करने लगे ॥ १७ ॥ धूम्रकेश हरिश्मश्रु अनेक आयुध प्रहार करनेवाले रक्तसंघ्याके अभकी समान उत्तम किरीट धारे ॥ १८ ॥ नील पीताम्बरधारी श्वेतदंष्ट्रा ऊर्ध्व किंघे जानुपर्यन्त लम्बायमान भुजा प्रकाशित वैदूर्यमणिके भूषण पहरे ॥ १९ ॥ आयुध उठाकर आगे स्थित हुए हिरण्याक्षको सब देवता देखकर ॥ २० ॥ युगान्तकालमें मृत्युकी समान स्थित जानते हुए और इन्द्रादिक सम्पूर्ण देवता व्यथित हुए ॥ २१ ॥

चलते पर्वतकी समान हिरण्याक्षको आता देखकर देवताओंने उद्दिग्धमन हो शरासन ग्रहण किये ॥ २२ ॥ और इन्द्रको आगे कर संग्राममें स्थित हुए वह सुवर्ण कवच पहरे उज्ज्वल सेना शोभित हुई ॥ २३ ॥ जिस प्रकार नक्षत्रोंसे शरद्वृत्तकी रात्रि शोभित होती है वे परस्पर सेनामें मारते हुए प्रहार करने लगे ॥ २४ ॥ बाहुयुद्धमें भुजा तोड़ने लगे, गदापातसे भग्न अंग और बाणोंसे व्यथित हृदय हो गये ॥ २५ ॥ कोई पृथक् हो गिर पड़े कोई एक दूसरेको मारने लगे कोई रथोंको तोड़ने लगे कोई रथोंसे चर्ण हो गये ॥ २६ ॥ कोई ऐसी रोकमें प्राप्त हुए कि उनका रथ चला-

दृष्ट्वायान्तं हिरण्याक्षं महाद्रिमिव जङ्गमम् ॥ देवाः संविग्धमनसः प्रगृहीतशरासनाः ॥ २२ ॥ सहस्राक्षं पुरस्कृत्य तस्थुः संग्राममूर्धनि ॥ सा च दैत्यचमू रेजे हिरण्यकवचोज्ज्वला ॥ २३ ॥ प्रवृद्धनक्षत्रगणा शारदा द्यौरिवामला ॥ तेऽन्योन्यमपि संपेतुः पातयन्तः परस्परम् ॥ २४ ॥ बभञ्जुर्बाहुभिर्बाहून्द्दमन्ये युयुत्सवः ॥ गदानिपातेर्भग्नान्ना बाणैश्च व्यथितोरसः ॥ २५ ॥ विनिपेतुः पृथक्चेत्तथान्येऽपि विजग्निरे ॥ बभञ्जिरे रथान्कोचित्केचित्समादिता रथैः ॥ २६ ॥ संबाधमन्ये संप्राप्ता न शोकुश्चालितं रथात् ॥ दानवेन्द्रबलं तत्र देवानां च महद्बलम् ॥ २७ ॥ अन्योन्यबाणवर्षेण युद्धदुर्दिनमाबभौ ॥ हिरण्याक्षस्तु बलवान् क्रुद्धः स दितिनन्दनः ॥ २८ ॥ व्यवर्द्धत महातेजाः समुद्र इव पर्वाणि ॥ तस्य क्रुद्धस्य सहसा मुखान्निश्चेरुरर्चिषः ॥ २९ ॥ शस्त्रजालैर्बहुविधैर्धनुर्भिः परिघैरपि ॥ सर्वमाकाशमावृत्ते पर्वतैरुत्थितैरिव ॥ ३० ॥ बहूभिः शस्त्रनिस्त्रिंशैश्छिन्नभिन्नाशिरोरसः ॥ न शोकुश्चालितुं देवा हिरण्याक्षादिता युधि ॥ ३१ ॥ सर्वे वित्रासिता देवा हिरण्याक्षेण संयुगे ॥ न शोकुर्यत्नवन्तोऽपि यत्नं कर्तुं विचेतसः ॥ ३२ ॥

यमान न हो सका उस समय दानवेन्द्र और देवताओंकी बड़ी सेनाके ॥ २७ ॥ परस्पर बाण वर्षानेसे वह दिन युद्धके कारण दुर्दिन हो गया, बलवान् हिरण्याक्ष बड़ा क्रोध कर ॥ २८ ॥ महातेजस्वी पर्वके समुद्रकी समान बढ़ने लगा, क्रोध करनेपर उसके मुखसे अग्निकी चिनगारी निकलने लगी ॥ २९ ॥ अनेक प्रकारके शस्त्रजाल धनुष परिधोंसे उठे हुए पर्वतोंकी समान सब आकाश भर गया ॥ ३० ॥ बहुतसे शस्त्रअक्षोंसे हृदय शिर छिन्नभिन्न हो गये हिरण्याक्षसे अर्दित हो देवता चलनेको समर्थ न हुए ॥ ३१ ॥ हिरण्याक्षने युद्धमें सब देवता भगा दिये वे यत्न करकेभी विचेतन हो कुछ न कर सके ॥ ३२ ॥

उसने सबसे इन्द्रको युद्धमें स्तंभित कर दिया. ऐरावतपर स्थित हुआ इन्द्र चलनेको समर्थ न हुआ ॥ ३३ ॥ वह दानव इस प्रकार सब देवताओंको पराजित कर देवेशको स्तंभित कर सब जगत् अपने वशीभूत मानने लगा ॥ ३४ ॥ वोह मेघकी समान गंभीर शब्द करता मत्तमातंगकी समान शरीर धारे महाकान्तिमान् धनुष कंपित करता हुआ देवताओंको दीखने लगा ॥ ३५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भाविष्यपर्वणि भाषायां अष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥ वैशंपायन बोले; इन्द्रके निष्प्रयत्न और देवताओंके धर्षित होनेपर चक्रगदाधारी नारायणने हिरण्याक्षके मारनेका विचार किया ॥ १ ॥

तेन शक्रः सहस्राक्षः स्तम्भितोऽस्त्रेण धीमता ॥ ऐरावतगतः संख्ये नाशकच्चलितुं भयात् ॥ ३३ ॥ सर्वाश्च देवानखिलान्त्स पराजित्य दानवः ॥ स्तम्भयित्वा च देवेशमात्मस्थं मन्यते जगत् ॥ ३४ ॥ सतोयमेघप्रतिमोग्रानिःस्वनं प्रभिन्नमातङ्गविलासविग्रहम् ॥ धनुर्विधुन्वन्तमुदारवर्चसं तदा सुरेन्द्रं ददृशुः सुराः स्थिताः ॥ ३५ ॥ इति श्रीम० खि० ह० भ० वा० अष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ निष्प्रयत्ने सुरपतौ धर्षितेषु सुरेषु च ॥ हिरण्याक्षवधे बुद्धिं चक्रे चक्रगदाधरः ॥ १ ॥ वाराहः पर्वतो नाम यः पूर्वं समुदाहृतः ॥ स एष भूत्वा भगवानाजगामासुरान्तकृत ॥ २ ॥ ततश्चन्द्रप्रतीकाशमगृह्णन्च्छुमुत्तमम् ॥ सहस्रारं च तच्चक्रं चक्रपर्वतसन्निभम् ॥ ३ ॥ महादेवो महाबुद्धिर्महायोगी महेश्वरः ॥ पठ्यते योऽमरैः सर्वैर्गुह्यैर्नामभिरव्ययः ॥ ४ ॥ सदसच्चात्मानि श्रेष्ठः सद्भिर्यः सेव्यते सदा ॥ इज्यते यः पुराणैश्च त्रिलोके लोकभावनः ॥ ५ ॥ यो वैकुण्ठः सुरेन्द्राणामनन्तो भोगिनामपि ॥ विष्णुर्यो योगविदुषां यो यज्ञो यज्ञकर्मणाम् ॥ ६ ॥

जो वाराह नामका पर्वत प्रथम कहाहै वही रूप धारण कर जगवान् असुरनाशक आये ॥ २ ॥ तब चंद्रकी समान कान्तिमान् श्वेत शंख और चक्र पर्वतकी समान सहस्रधारवाले सुदर्शनचक्रको धारण किये ॥ ३ ॥ महादेवी महाबुद्धि महायोगी महेश्वर जिसको देवता दिव्य नामसे स्तुति करते हैं ॥ ४ ॥ सत् असद्रूप श्रेष्ठ आत्मा जिनकी सत्पुरुष सदा सेवा करते हैं. जो पुराणोंमें स्तुतिको प्राप्त होताहै सब लोकोंका एकभावनहै ॥ ५ ॥ सुरेन्द्रोंमें वैकुण्ठरूप भोगियोंमें

अनन्तरूप योगियोंमें विष्णु यज्ञकर्मोंमें यज्ञस्वरूप है ॥ ६ ॥ जिसके प्रसादसे यज्ञ कर देवता स्वर्गमें स्थित हुए हैं और महर्षियोंद्वारा दी हुई घृतकी आहुति पान करते हैं. अग्नि ब्राह्मण मुख आदिमें आहुति देनेसे तीन प्रकारकी आहुति कही है ॥ ७ ॥ जो देवता दैत्योंकी परा गति और सुरोंकी परम गति है जो पवित्रोंका पवित्र स्वयंभू अव्यय विभु है ॥ ८ ॥ जिसके चक्रसे दानव युगयुगमें पीसे जाते हैं. जिनके पराक्रमको देख कुल अकुलताको प्राप्त हो जाते हैं वे आये ॥ ९ ॥ तब उन्होंने दैत्योंको भय देनेवाला पुरातन उत्तम शंख मुखपर धरकर बजाया. जिससे दैत्योंका जीवन नष्ट होता

मखे यस्य प्रसादेन भुवनस्था दिवौकसः ॥ आज्यं महर्षिभिर्दत्तमश्नुवन्ति त्रिधा हुतम् ॥ ७ ॥ यो गतिर्देवदैत्यानां यः सुराणां परा गतिः ॥ यः पवित्रं पवित्राणां स्वयंभूरव्ययो विभुः ॥ ८ ॥ यस्य चक्रप्रविष्टानि दानवानां युगे युगे ॥ कुलान्याकुलतां यान्ति यानि दृष्टानि वीर्यतः ॥ ९ ॥ ततो दैत्यद्रवकरं पौराणं शंखमुत्तमम् ॥ धमन्वक्त्रेण बलवानाक्षिपद्दैत्यजीवितम् ॥ १० ॥ श्रुत्वा शङ्ख-स्वनं घोरमसुराणां भयावहम् ॥ क्षुभिता दानवाः सर्वे दिशो दश व्यलोकयन् ॥ ११ ॥ ततः संरक्तनयनो हिरण्याक्षो महासुरः ॥ कोऽयमित्यब्रवीद्रोषान्नारायणमुदेक्षत ॥ १२ ॥ वाराहरूपिणं देवं संस्थितं पुरुषोत्तमम् ॥ शंखचक्रोद्यतकरं देवानामार्तिनाशनम् ॥ १३ ॥ रराज शंखचक्राभ्यां ताभ्यामसुरसूदनः ॥ सूर्याचन्द्रमसोर्मध्ये यथा नीलपयोधरः ॥ १४ ॥ ततोऽसुरगणाः सर्वे हिर-ण्याक्षपुरोगमाः ॥ उद्यतायुधनिस्त्रिंशा दत्ता देवमुपाद्रवन् ॥ १५ ॥ पीडयमानोऽतिबलिभिर्दैत्यैः सर्वायुधोद्यतैः ॥ न चचाल हरि-युद्धेकम्पमान इवाचलः ॥ १६ ॥

है ॥ १० ॥ असुरोंके भय देनेवाले शंखका घोर शब्द सुनकर क्षुब्ध हो दानव दशों दिशाको अवलोकन करने लगे ॥ ११ ॥ तब महाअसुर हिर-ण्याक्ष लाल नेत्र कर यह कौन है ऐसा कह क्रोधसे नारायणको देखने लगा ॥ १२ ॥ उन पुरुषोत्तमको वाराहरूपमें देख कि वे देवताओंके दुःखना-शक हाथमें शंख लिये हैं ॥ १३ ॥ वह शत्रुसूदन शंखचक्रसे शोभित होते थे. जैसे सूर्यचन्द्रमाके बीचमें नीलमेघ हो ॥ १४ ॥ तब सब असुर हिरण्याक्षको आगे कर आयुध उठाये दत्त हो देवके ऊपर झपटे ॥ १५ ॥ वह बली दैत्योंके सम्पूर्ण आयुधोंसे पीडित होकरभी अचलकी समान

नारायण युद्धमें चलायमान न हुए ॥ १६ ॥ तब दानवने प्रज्वलित शक्तिको प्रभुके हृदयमें महातेज और बलयुक्त निपातन किया ॥ १७ ॥ उस शक्तिके प्रभावसे ब्रह्माभी विस्मित हो गये उस महाशक्तिको निकट आई देल महाबली ॥ १८ ॥ प्रभुने हुंकारसेही झिडककर पृथ्वीमें गिरा दिया. उस शक्तिके नष्ट होनेपर ब्रह्माने धन्य धन्य कहा ॥ १९ ॥ जो सबके प्रभु हैं उन वराहको उसने ताड़ित किया तब भगवान् ने सूर्यकी समान चक्र ग्रहण किया ॥ २० ॥ और उत्तमकर्मा दानवेन्द्रके शिरपर मारा तब उसका शिर कट पृथ्वीमें गिरा. जैसे वज्रसे हत हुआ सुवर्णमय मेरुशृंग गिरता ततः प्रज्वलितां शक्तिं वाराहोरासि दानवः ॥ हिरण्याक्षो महातेजाः पातयामास वीर्यवान् ॥ १७ ॥ तस्या शक्त्या प्रभावेण ब्रह्मा विस्मयमागतः ॥ समीपमागतां दृष्ट्वा महाशक्तिं महाबलः ॥ १८ ॥ हुंकारेणैव निर्भर्त्स्य पातयामास भूतले ॥ तस्यां प्रतिहतायां तु ब्रह्मा साध्विति चाब्रवीत् ॥ १९ ॥ यः प्रभुः सर्वभूतानां वराहस्तेन ताडितः ॥ ततो भगवता चक्रमाविध्यादित्यसन्निभम् ॥ २० ॥ पातितं दानवेन्द्रस्य शिरस्युत्तकर्मणा ॥ ततः स्थितस्यैव शिरस्तस्य भूमौ पपात ह ॥ हिरण्मयं वज्रहतं मेरुशृङ्गमिवोत्तमम् ॥ २१ ॥ हिरण्याक्षे हते दैत्ये शेषा ये तत्र दानवाः ॥ सर्वे तस्य भयत्रस्ता जग्मुराशु दिशो दश ॥ २२ ॥ स सर्वलोकाप्रतिचक्रचक्रो महाहवेष्वप्रतिमोग्रचक्रः ॥ बभौ वराहो युधि चक्रपाणिः कालो युगान्तेष्विव दण्डपाणिः ॥ २३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ विद्राव्य तु रणे सर्वानसुरान्पुरुषोत्तमः ॥ मुमोच तत्र बद्धांस्तान्पुरंदरमुखान्त्सुरान् ॥ १ ॥ ततः प्रकृतिमापन्नाः सर्वे देवगणास्तथा ॥ पुरंदरं पुरस्कृत्य नारायणमुपस्थिताः ॥ २ ॥ हो ॥ २१ ॥ हिरण्याक्ष दैत्यके मरनेपर शेष रहे दानव उनके भयसे दशों दिशामें भाग गये ॥ २२ ॥ जिस प्रकार कालका सब लोकोंमें अप्रतिहत आज्ञाचक्र चलता है. इस प्रकार महायुद्धमें उपमाराहित चक्र धारण किये भगवान् वाराहजी शोभित हुए. जैसे दण्डपाणि काल शोभित होता है ॥ २३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥ वैशम्पायन बोले, इस प्रकार पुरुषोत्तम युद्धमें सब असुरोंको भगाकर इन्द्रादि देवताओंको बंधनसे छुड़ाते हुए ॥ १ ॥ तब सम्पूर्ण देवता अपनी प्रकृतिको प्राप्त हुए इन्द्रको आगे कर नारायणके सन्मुख

स्थित हुए ॥ २ ॥ देवता बोले, हे भगवन् ! आपके प्रसाद और आपके बाहुबलसे हम कालके मुखसे निकल जीवित हुए हैं ॥ ३ ॥ हे भगवन् ! आपकी आज्ञासे हम देवता क्या करें. हे सनातन ! आपके चरणकी सेवा करनेकी इच्छा करते हैं ॥ ४ ॥ वैशम्पायन बोले, कमललोचन उनके यह वचन सुन शत्रुहन्ता देवताओंसे प्रसन्न हो वचन कहने लगे ॥ ५ ॥ श्रीभगवान् बोले, तुम जिसके निमित्त मैंने जिस लोककी कल्याणा की है उसको यन्पूर्वक पालन कर वेदाज्ञा मानते रहो ॥ ६ ॥ और यज्ञभागको प्राप्त हो अपने ऐश्वर्यको भोगो और मेरी निर्देश की हुई आज्ञाको पालन करो ॥ ७ ॥

देवा ऊचुः ॥ त्वत्प्रसादेन भगवन् तव बाहुबलेन च ॥ जीवामोऽद्य महाबाहो निष्क्रान्ताश्चान्तकाननात् ॥ ३ ॥ त्वच्छासनाद्धि भगवन् किं कुर्वन्त्यदितेः सुताः ॥ इच्छामः पादशुश्रूषां तव कर्तुं सनातन ॥ ४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तच्छ्रुत्वा वचनं तेषां पुण्डरीकनिभेक्षणः ॥ उवाच वचनं देवान्मुदा युक्तो हतद्विषः ॥ ५ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ यो यस्य भवतो लोको मयैव विहितः पुरा ॥ पाल्यतां स तु यत्नेन वियोगश्च क्वचित् क्वचित् ॥ ६ ॥ ऐश्वर्यं प्रतिपन्नाः स्थ क्रतुभागपुरस्कृतम् ॥ मयैव पूर्वं निर्दिष्टो नियोगः प्रतिपाल्यताम् ॥ ७ ॥ शक्रं चोवाच भगवान्वचनं दुन्दुभिस्वनः ॥ इदं यथावत्कर्तव्यं सत्सु चासत्सु च त्वया ॥ ८ ॥ गच्छन्तु तपसा स्वर्गं मुनयः शंसितव्रताः ॥ तव लोकं सुरश्रेष्ठ सर्वकामदुघं सदा ॥ यायजूकाश्च ये केचिद्ब्राह्मणाः क्षत्रिया विशः ॥ तेषां कामदुघा लोकाः स्वर्गमादिमनोहराः ॥ यज्ञैरिष्ट्वा यायजूकाः फलं ते प्राप्नुवन्तु च ॥ ९ ॥ भावः सद्धर्मशीलानामभावः पापकर्मणाम् ॥ सन्तः स्वर्गजितः सन्तु सर्वाश्रमनिवासिनः ॥ १० ॥

फिर भगवान् मेघवत् गंभीरस्वरसे इन्द्रसे बोले, हे इन्द्र ! तुम यथायोग्य कर्तव्यकर्मको करो ॥ ८ ॥ व्रत करनेवाले मुनि तपसे स्वर्गको प्राप्त हो. हे सुरश्रेष्ठ ! तुमको सब कामना देनेवाले लोक प्राप्त होंगे जो कोई ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य यज्ञ करनेवाले हैं उनके निमित्त स्वर्गादि कामना देनेवाले मनोहर लोक हैं यज्ञको प्राप्त होकर फल प्राप्त होंगे ॥ ९ ॥ जहां धर्मशीलोंका भाव और पापियोंका अभाव है वे सर्व आश्रमके निवासी सन्त स्वर्गको प्राप्त

होते हैं ॥ १० ॥ सत्यशूर युद्धशूर दानशूर जो मनुष्य हैं तथा जो किसीकी निन्दा नहीं करते वह मनुष्य स्वर्गको प्राप्त होते हैं ॥ ११ ॥ जो पुरुष अश्रद्धावाले कामी अर्थमें तत्पर और शठ हैं अब्रह्मण्य तथा नास्तिक हैं वे मनुष्य नरकको प्राप्त हों ॥ १२ ॥ हे देवेश ! यह तुम हमारे कहे वचन मानो. तब मेरे स्थित होते हुए कोई शत्रु तुमको बाधा नहीं दे सकेगा ॥ १३ ॥ ऐसा कह शंखचक्रधारी नारायण अन्तर्धान हो गये और सम्पूर्ण देवताओंको बड़ा विस्मय हुआ ॥ १४ ॥ देवता इस अद्भुत वाराहचरित्रको देख वाराहको नमस्कार कर स्वर्गको गये ॥ १५ ॥ तब सत्यशूरा रणे शूरा दानशूराश्च ये नराः ॥ ते नराः स्वर्गमश्नन्तु सदा ये चानसूयवः ॥ ११ ॥ अभ्रह्मण्यः पुरुषाः कामिनोऽर्थपराः शठाः ॥ अब्रह्मण्या नास्तिकाश्च नरकं यान्तु मानवाः ॥ १२ ॥ एतावत्क्रियतां वाक्यं मयोक्तं त्रिदशेश्वराः ॥ ततो मायि स्थिते सर्वान्वाधिष्यन्ते न चारयः ॥ १३ ॥ इत्युक्त्वान्तर्हितो देवः शङ्खचक्रगदाधरः ॥ देवतानां च सर्वेषामभवद्विस्मयो महान् ॥ १४ ॥ एतदत्यद्भुतं दृष्ट्वा वाराहचरितं सुराः ॥ नमस्कृत्वा वराहाय नाकपृष्ठमितो गताः ॥ १५ ॥ ततः स्वान्याधिपत्यानि प्रतिपन्नानि देवतैः ॥ सर्वलोकाधिपत्ये च प्रतिष्ठां वासवो गतः ॥ १६ ॥ विमुक्ता दानवगणैः प्रकृतिं धरणी गता ॥ स्थैर्यहेतोर्धरण्यास्तु ज्ञात्वा चागस्कृतान् गिरिन् ॥ १७ ॥ स्वेषु स्थानेषु संस्थाप्य पर्वतानां पुरंदरः ॥ चिच्छेद् भगवान्पक्षान्वज्रेण शतपर्वणा ॥ १८ ॥ सर्वेषामेव पक्षा वै छिन्नाः शक्रेण धीमता ॥ एकः सपक्षो मैनाकः सुरैस्तत्समयः कृतः ॥ १९ ॥ एष नारायणस्यायं प्रादुर्भावो महात्मनः ॥ वाराह इति विप्रेन्द्रैः पुराणे परिकीर्तितः ॥ २० ॥

देवता अपने २ अधिकारको प्राप्त हुए और इन्द्र सब लोकके अधिपतित्वको प्राप्त हुए ॥ १६ ॥ और दानवगणोंसे मुक्त हो पृथ्वी अपने स्वभावको प्राप्त हुई. पृथ्वीके स्थिति करनेके निमित्त उन अपराध करनेवाले पर्वतोंको ॥ १७ ॥ इन्द्रने उन उन स्थानोंमें स्थित कर दिया और उस अपराधसे तीक्ष्ण धारावाले वज्रसे उनके पंख छेदन कर डाले ॥ १८ ॥ इस प्रकार बुद्धिमान् इन्द्रने सबके पंख छेदन कर डाले. एक पंखवाला मैनाक रहा जिसके रक्षणार्थ देवताओंकी प्रतिज्ञा थी ॥ १९ ॥ यह महात्मा नारायणका प्रादुर्भाव है. विप्रेन्द्रोंने पुराणोंमें इसको वाराहचरित्र कहा है ॥ २० ॥

यह व्यासजीको अभिमत अनेक श्रुतियोंसे सम्मत है, यह अशुचि कृतघ्न और नृशंससे न कहना ॥ २१ ॥ क्षुद्र नीच गुरुद्वेषकारी अशिष्य और कृतघ्नको न देना ॥ २२ ॥ आयु यश पृथ्वी जयकी कामनावाले पुरुषोंको यह देवताओंकी जय श्रवण करनी चाहिये ॥ २३ ॥ यह पुराण वेदसे सम्बद्ध कल्याणरूप स्वस्तिदायक है सब जीवोंका शोधक और तत्काल विजयका देनेवाला है ॥ २४ ॥ हे कौरव्य ! यह तत्त्वसे समस्त तुमको कहा है, हे नृपश्रेष्ठ ! इस प्रकार वाराहप्रादुर्भावकी कथा है ॥ २५ ॥ जो पवित्र यज्ञोंसे देवता पितरोंका यजन करते हैं जो आत्माका आत्मासे

कृष्णद्वैपायनमतं नानाश्रुतिसमाहितम् ॥ नाशुचेर्न कृतघ्नाय न नृशंसाय कीर्तयेत् ॥ २१ ॥ न क्षुद्राय न नीचाय न गुरुद्वेषकारिणे ॥ नाशिष्याय तथा राजन्न कृतघ्नाय चैव हि ॥ २२ ॥ आयुष्कामैर्यशःकामैर्महीकामैश्च मानवैः ॥ जयेषिभिश्च श्रोतव्यो देवानामेष वै जयः ॥ २३ ॥ पुराणवेदसंबद्धः शिवः स्वस्त्ययनो महान् ॥ पावनः सर्वसत्त्वानां तत्कालविजयप्रदः ॥ २४ ॥ एष कौरव्य तत्त्वेन कथितस्त्वनुपूर्वशः ॥ वाराहस्य नृपश्रेष्ठ प्रादुर्भावो महात्मनः ॥ २५ ॥ ये यजन्ति मखैः पुण्यैर्देवतानि पितृनपि ॥ आत्मानमात्मना नित्यं विष्णुमेव यजन्ति ते ॥ २६ ॥ लोकायनाय त्रिदशायनाय ब्रह्मायनायात्मभवायनाय ॥ नारायणायात्महितायनाय महावराहाय नमस्कुरुष्व ॥ २७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वाराहप्रादुर्भावे चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ वाराह एष कथितो नारसिंहमतः शृणु ॥ यत्र भूत्वा मृगेन्द्रेण हिरण्यकशिपुर्हतः ॥ १ ॥

पुरा कृतयुगे राजन्हिरण्यकशिपुः प्रभुः ॥ दैत्यानामादिपुरुषश्चकार सुमहत्तपः ॥ २ ॥ यजन करते हैं वे नित्य विष्णुका यजन करते हैं ॥ २६ ॥ लोकके स्थान देवताओंके स्थान ब्रह्म और आत्माके स्थान नारायण आत्माके हितकारी महावाराहजीको प्रणाम करो ॥ २७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वाराहप्रादुर्भावे चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४० ॥ वैशम्पायन बोले, यह वाराहचरित्र कहा अब नृसिंहचरित्र सुनो, जिसमें मृगेन्द्ररूपसे भगवान् ने हिरण्यकशिको मारा ॥ १ ॥ हे राजन् ! सत्ययुगमें बली हिरण्यकशिपु दैत्योंके आदिपुरुषने बड़ा तप किया ॥ २ ॥

ग्यारह सहस्र पांच सौ वर्षतक मौन हो वह जलमें स्थिति करता हुआ ॥ ३ ॥ शम दम और ब्रह्मचर्यसे तप और नियमसे ब्रह्माजी उसपर प्रसन्न हो गये ॥ ४ ॥ तब स्वयंभू भगवान् स्वयं उस स्थानमें हंसयुक्त प्रकाशमान विमानपर चढ़कर आये ॥ ५ ॥ आदित्य वसु साध्य रुद्र मरुत विश्वेदेवा यक्ष राक्षस किन्नर उनके साथ थे ॥ ६ ॥ दिशा विदिशा नदी सागर नक्षत्र मुहूर्त आकाशचारी महाग्रह ॥ ७ ॥ देवर्षि ब्रह्मर्षि सिद्ध सप्तर्षि पुण्यात्मा राजर्षि गन्धर्व अप्सराओंके साथ ॥ ८ ॥ चराचरके गुरु देवताओंसे युक्त श्रीमान् ब्रह्मज्ञानियोंमें भेष्ट ब्रह्माजी यह वचन उससे बोले ॥ ९ ॥ ब्रह्माजी बोले, हे सुव्रत !

दश वर्षसहस्राणि शतानि दश पञ्च च ॥ जलवासी समभवत्स्थानमौनव्रतस्थितः ॥ ३ ॥ ततः शमदमाभ्यां च ब्रह्मचर्येण चैव हि ॥ ब्रह्मा प्रीतोऽभवत्तस्य तपसा नियमेन च ॥ ४ ॥ ततः स्वयंभूर्भगवान्स्वयमागम्य तत्र ह ॥ विमानेनार्कवर्णेन हंसयुक्तेन भास्वता ॥ ५ ॥ आदित्यैर्वसुभिः साध्यैर्मरुद्भिर्देवतैः सह ॥ रुद्रैर्विश्वसहायैश्च यक्षराक्षसकिन्नरैः ॥ ६ ॥ दिग्भिश्चाथ विदिग्भिश्च नदीभिः सागरैस्तथा ॥ नक्षत्रैश्च मुहूर्तैश्च खचरैश्च महाग्रहैः ॥ ७ ॥ देवैर्ब्रह्मर्षिभिः सार्द्धं सिद्धैः सप्तर्षिभिस्तथा ॥ राजर्षिभिः पुण्यकृद्भिर्गन्धर्वैरप्सरोगणैः ॥ ८ ॥ चराचरगुरुः श्रीमान्वृतो देवगणैः सह ॥ ब्रह्मा ब्रह्मविदां श्रेष्ठो दैत्यं वचनमब्रवीत् ॥ ९ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ प्रीतोऽस्मि तव भक्तस्य तपसानेन सुव्रत ॥ वरं वरय भद्रं ते यथेष्टं काममाप्नुहि ॥ १० ॥ ततो हिरण्यकशिपुः प्रीतात्मा दानवोत्तमः ॥ कृताञ्जालपुटः श्रीमान्वचनं चेदमब्रवीत् ॥ ११ ॥ हिरण्यकशिपुरुवाच ॥ न देवासुरगन्धर्वा न यक्षोरगराक्षसाः ॥ न मानुषाः पिशाचाश्च निहन्तुर्मां कथंचन ॥ १२ ॥ ऋषयो नैव मां क्रुद्धाः सर्वलोकपितामह ॥ शपेयुस्तपसा युक्ता वर एष वृतो मया ॥ १३ ॥ न शस्त्रेण न चास्त्रेण गिरिणा पादपेन च ॥ न शुष्केण न चाद्रिेण स्यान्न चान्येन म वधः ॥ १४ ॥

तुझ भक्तके इस तपसे मैं प्रसन्न हूँ. तुम्हारा जो यथेष्ट हो सो वर मांगो ॥ १० ॥ तब दानवोत्तम हिरण्यकशिपु प्रसन्न हुआ और हाथ जोड़कर वचन कहने लगा ॥ ११ ॥ हिरण्यकश्यप बोला, देव असुर गन्धर्व यक्ष राक्षस मनुष्य पिशाच इनसे किसी प्रकार मेरी मृत्यु न हो ॥ १२ ॥ और महातपसे युक्त ऋषियोंका शापभी मुझको न लगे यही वर मेरे लिये चाहिये ॥ १३ ॥ शस्त्र अस्त्र गिरि वृक्ष शुष्क गीली किसी वस्तुसे मेरा वध न हो ॥ १४ ॥

स्वर्ग पाताल आकाश पृथ्वीके अभ्यन्तर रातदिनमें मेरा वध न हो ॥ १५ ॥ जो एकही हाथके प्रहारसे भृत्य बल वाहन सहित नष्ट करनेको समर्थ हो उससे मेरी मृत्यु हो ॥ १६ ॥ मैं सोम सूर्य वायु अग्नि जल अन्तरिक्ष नक्षत्र दशों दिशा क्रोध काम वरुण इन्द्र और यमके समान हो जाऊं ॥ १७ ॥ धनाध्यक्ष कुबेर यक्ष किंपुरुषोंका अधिपति हो जाऊं और युद्धके समय दिव्य अस्त्र मूर्तिमान् होकर मेरे निकट उपस्थित हों हे ब्रह्माजी ! यह वर मुझको दीजिये ॥ १८ ॥ ब्रह्माजी बोले, हे तात ! यह दिव्य वर मैंने तुमको दिये तुम अच्छी प्रकार सब कामनाओंको प्राप्त होगे, इसमें सन्देह नहीं है ॥ १९ ॥

न स्वर्गेऽप्यथ पाताले नाकाशे नावनिस्थले ॥ न चाभ्यन्तररात्र्यहोर्न चाप्यन्येन मे वधः ॥ १५ ॥ पाणिप्रहारेणैकेन सभृत्यबलवा-
हनम् ॥ यो मां नाशयितुं शक्तः स मे मृत्युर्भविष्यति ॥ १६ ॥ भवेयमहमेवार्कः सोमो वायुर्दुताशनः ॥ सलिलं चान्तरिक्षं च
नक्षत्राणि दिशो दश ॥ अहं क्रोधश्च कामश्च वरुणो वासवो यमः ॥ १७ ॥ धनदश्च धनाध्यक्षो यक्षकिंपुरुषाधिपः ॥ मूर्तिमन्ति च
दिव्यानि ममास्त्राणि महाहवे ॥ उपतिष्ठन्तु देवेश सर्वलोकपितामह ॥ १८ ॥ पितामह उवाच ॥ एते दिव्या वरास्तात मया दत्तास्त-
वाद्भुताः ॥ सर्वान्कामानल्पभावात्प्राप्स्यसि त्वं न संशयः ॥ १९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमुक्त्वा स भगवान् जगामाकाशमेव
च ॥ वैराज्यं ब्रह्मसदनं ब्रह्मर्षिगणसेवितम् ॥ २० ॥ ततो देवाश्च नागाश्च गन्धर्वा मुनिभिः सह ॥ वरप्रदानं श्रुत्वेव पितामह-
मुपस्थिताः ॥ २१ ॥ देवा ऊचुः ॥ वरेणानेन भगवन्वाधिष्यति स नोऽसुरः ॥ तत्प्रसीदस्व भगवन्वधोऽप्यस्य विचिन्त्यताम् ॥ २२ ॥
वैशम्पायन उवाच ॥ भगवान्सर्वभूतानामादिकर्ता स्वयं प्रभुः ॥ स्रष्टा च हव्यकथ्यानामव्यक्तप्रकृतिध्रुवः ॥ २३ ॥

वैशम्पायन बोले, यह कह ब्रह्माजी उस विराटरूप ब्रह्मसदन अपने स्थानको चले गये जो ब्रह्मर्षियोंसे सेवित है ॥ २० ॥ तब देवता और नाग गन्धर्व तथा मुनियोंके साथ इस वरका वृत्तान्त सुन ब्रह्माजीके पास आये ॥ २१ ॥ देवता बोले, हे भगवन् ! वह असुर हम सबको वरके कारण वध करेगा इस कारण हे भगवन् ! प्रसन्न हो आप इसके वधका उपाय विचारो ॥ २२ ॥ वैशम्पायन बोले, भगवान् सर्वभूतोंके आदिकर्ता स्वयं प्रभु हैं, वह हव्य

कव्योंके स्रष्टा अव्यक्त प्रकृति ध्रुवरूप हैं ॥ २३ ॥ वह प्रजापति सब लोकके हितकारी वचन सुनकर उन देवताओंको मनोहर वचनोंसे आश्वासन करने लगे ॥ २४ ॥ हे देवताओ ! वह तपके फलको अवश्य प्राप्त होगा. तपके अन्तमें भगवान् विष्णु उसका वध करेंगे ॥ २५ ॥ सर्व देवता कमलनाभ ब्रह्माजीका वचन सुन प्रसन्न हो अपने दिव्य स्थानोंको गये ॥ २६ ॥ वैशम्पायन बोले, वह दैत्य वरको प्राप्त हो सब प्रजाको बाधा देने लगा वह हिरण्यकशिपु दैत्य वरदानसे मोहित हो गया ॥ २७ ॥ सब मुनि और शंसितब्रवाले ब्राह्मणोंके आश्रम तथा सत्यधर्मरत

सर्वलोकहितं वाक्यं श्रुत्वा देवः प्रजापतिः ॥ आश्वासयामास सुरान्त्स शीतैवचनम्बुभिः ॥ २४ ॥ अवश्यं त्रिदशास्तेन प्राप्तं यं तपसः फलम् ॥ तपसोऽन्ते स भगवान्वधं विष्णुः करिष्यति ॥ २५ ॥ एतच्छ्रुत्वा सुराः सर्वे वाक्यं पङ्कजजन्मनः ॥ स्वानि स्थानानि दिव्यानि प्रतिजग्मुर्मुदान्विताः ॥ २६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ लब्धमात्रे वरे तस्मिन्त्सर्वाः सोऽबाधत प्रजाः ॥ हिरण्यकशिपुर्दैत्यो वरदानने दर्पितः ॥ २७ ॥ आश्रमेषु मुनीन्सर्वान् ब्राह्मणान्त्संशितव्रतान् ॥ सत्यधर्मरतान्दान्तान्धर्षयामास वीर्यवान् ॥ २८ ॥ देवांस्त्रिभुवनस्थांश्च पराजित्य महासुरः ॥ त्रैलोक्यं वशमानीय स्वर्गे वसति दानवः ॥ २९ ॥ यदा वरमदोन्मत्तश्चोदितः कालधर्मणा यज्ञियानकरोद्दैत्यान्देवतानप्ययाज्ञियान् ॥ ३० ॥ तदादित्याश्च साध्याश्च विश्वे च वसवस्तथा ॥ रुद्रा देवगणा यक्षा देवद्विजमहर्षयः ॥ ३१ ॥ शरण्यं शरणं विष्णुमुपतस्थुर्महाबलम् ॥ देवं देवमयं यज्ञं ब्रह्मदेवं सनातनम् ॥ ३२ ॥ भूतं भव्यं भविष्यं च प्रजालोकनमस्कृतम् ॥ देवां ऊचुः ॥ नारायण महाभाग देव त्वां शरणं गताः ॥ ३३ ॥

दान्त चतुरोंको धर्षित करने लगा ॥ २८ ॥ इस प्रकार वह असुर त्रिलोकीके देवताओंको जीत त्रिलोकीको वशमें कर स्वर्गमें रहने लगा ॥ २९ ॥ महाबली जब विष्णुकी वरदानसे मदोन्मत्त हो कालधर्मसे प्रेरित हुआ तब दैत्योंको यज्ञभागभोगी और देवताओंको यज्ञभागरहित करता हुआ ॥ ३० ॥ तब आदित्य साध्य विश्वदेवा वसु रुद्र देवगण यज्ञ देव द्विज महर्षि ॥ ३१ ॥ शरणागतवत्सल शरणमें उपस्थित हुए जो देवदेव यज्ञमय ब्रह्मदेव सनातन हैं ॥ ३२ ॥ भूत भव्य भविष्यरूप प्रजा लोकसे नमस्कृत है उनके निकट जाय देवता बोले

हे नारायण महाभाग देव ! हम आपकी शरण हैं ॥ ३३ ॥ तुमही हमारे परमधाता गुरु और ब्रह्मादिकोंके देव हो ॥ ३४ ॥ तुमही कमललोचन शत्रु-
ओंको भय देते हो हे प्रभु ! आप दैत्योंके नाशक और हमारे मंगलकर्ता हो ॥ ३५ ॥ हे प्रभो ! दैत्येन्द्र हिरण्यकशिपुको मारकर हमारी रक्षा करो
विष्णु बोले, हे देवताओ ! भय त्यागो मैं तुमको अन्नय देता हूँ ॥ ३६ ॥ हे देवताओ ! तुम बहुत शीघ्र अपने स्थानको प्राप्त होगे, मैं उस परदार्षित
दैत्यको गणसहित ॥ ३७ ॥ जो देवताओंसे अवध्य है वध कर डालूंगा, वैशंपायन बोले, यह कह भगवान् ने देवताओंको विदा कर ॥ ३८ ॥ हिरण्यक-

त्वं हि नः परमो धाता त्वं हि नः परमो गुरुः ॥ त्वं हि नः परमो देवो ब्रह्मादीनां सुरोत्तम ॥ ३४ ॥ त्वं पद्मामलपत्राक्ष शत्रुपक्षभ-
यावह ॥ क्षयाय दितिवंशस्याक्षयाय भव नः प्रभो ॥ ३५ ॥ त्रायस्व जहि दैत्येन्द्रं हिरण्यकशिपुं प्रभो ॥ विष्णुरुवाच ॥ भयं
त्यजध्वममरा अभयं वो ददाम्यहम् ॥ ३६ ॥ तथैव त्रिदिवं देवाः प्रतिपत्स्यथ मा चिरम् ॥ एष तं सगणं दैत्यं वरदानेन दार्षि-
तम् ॥ ३७ ॥ अवध्यममरेन्द्राणां दानवेन्द्रं निहन्यहम् ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमुक्त्वा स भगवान्विसृज्य त्रिदिवोकसः ॥ ३८ ॥
वधं संकल्पयित्वा तु हिरण्यकशिपाः प्रभुः ॥ ३९ ॥ सोऽचिरेणैव कालेन हिमवत्पार्श्वमागतः ॥ किंतु रूपं समास्थाय निहन्येनं
महासुरम् ॥ ४० ॥ यात्सिद्धिकरमाशु स्याद्रथाय विबुधाद्विषः ॥ अनुत्पन्नं ततश्चक्रे सोऽत्यन्तं रूपमास्थितः ॥ ४१ ॥ नारासिं-
हमनाधृष्यं दैत्यदानवरक्षसाम् ॥ सहायं तु महाबाहुर्जग्राहोकारमेव च ॥ ४२ ॥ अथोकारसहायोऽसौ भगवान्विष्णुरव्ययः ॥
हिरण्यकशिपोः स्थानं जगाम प्रभुरीश्वरः ॥ ४३ ॥

शिपुके वधका संकल्प कर ॥ ३९ ॥ थोड़ेही समयमें हिमालयके समीप आये और विचार किया कैसे रूपको धारण कर इस दैत्यको मारूं ॥ ४० ॥
जो उसके वधमें शीघ्र सिद्धिका देनेवाला हो तब वह अपूर्वरूपको धारण करते हुए ॥ ४१ ॥ जो देवदानवोंसे अधृष्य नारसिंह नामसे विख्यात है और
सहायके निमित्त महाबाहुने सर्वात्मा ओंकारको लिया ॥ ४२ ॥ प्रभु अविनाशी विष्णु ओंकारकी सहाय ले हिरण्यकशिपुके स्थानको गये ॥ ४३ ॥

सूर्यकी समान तेज चन्द्रमाकी समान कान्ति आधा मनुष्य और आधा सिंहका शरीर कर ॥ ४४ ॥ नारसिंहशरीर हाथसे हाथ स्पर्श किये बड़ी दिव्य मनोहर विस्तारवाली ॥ ४५ ॥ सब कामसे युक्त हिरण्यकशिपुकी सभाको देखते हुए जो सौ योजनके विस्तार और एक सौ पचास योजन चौड़ी थी ॥ ४६ ॥ आकाशमें फिरनेवाली यथेष्ट गमन करनेवाली पांच योजन ऊंची जरा शोक क्लमसे रहित कंपरहित मनोहर शुभ ॥ ४७ ॥ सुंदर आसनवाली मनोहर तेजसे प्रकाशमान अन्तरजलसे युक्त विश्वकर्माकी दनाई दिव्य रत्नमय वृक्ष पुष्पफलोंसे युक्त ॥ ४८ ॥ नील पीत सित श्याम सित लाल अवतान तेजसा भास्कराकारः कान्त्या चन्द्र इवापरः ॥ नरस्य कृत्वाद्धतनुं सिंहस्याद्धतनुं विभुः ॥ ४४ ॥ नारसिंहेन वपुषा पाणिं संस्पृश्य पाणिना ॥ ततोऽपश्यत विस्तीर्णां दिव्यां रम्यां मनोरमाम् ॥ ४५ ॥ सर्वकामयुतां शुभ्रां हिरण्यकशिपोः सभाम् ॥ विस्तीर्णां योजनशत शतमध्याद्धमुच्छ्रिताम् ॥ ४६ ॥ विहायसीं कामगमां पञ्चयोजनमुच्छ्रिताम् ॥ जराशोकक्लमत्यक्तां निष्प्रकम्पां शिवां शुभाम् ॥ ४७ ॥ शुभासनवतीं रम्यां ज्वलन्तीमिव तेजसा ॥ अन्तःसलिलसंयुक्तां विहितां विश्वकर्मणा ॥ दिव्यरत्नमयेवृक्षैः फलपुष्पप्रदेयताम् ॥ ४८ ॥ नीलपीतासितश्यामैः सितैर्लोहितकैरपि ॥ अवतानैस्तथा गुल्मेर्मञ्जरीशतधारिभिः ॥ ४९ ॥ सिताभ्रघनसंकाशा पुवन्तीवाप्सु दृश्यते ॥ धन्यासनवती रम्या ज्वलन्ती इव तेजसा ॥ ५० ॥ प्रभावती भास्वरा च दिव्यगन्धमनोरमा ॥ नासुखा न च दुःखा सा न शीता न च घर्मदा ॥ ५१ ॥ न क्षुत्पिपासे न ग्लानिं प्राप्य तां प्राप्नुवन्ति हि ॥ नानारूपैर्विरचिता विचित्रैरतिभास्वरेः ॥ ५२ ॥ स्तम्भैर्मणिमयेर्दिव्यैः शाश्वती चाक्षता च सा ॥ अतिचन्द्रं च सूर्यं च पावकं च स्वयंप्रभा ॥ ५३ ॥ (झालर) गुल्म (गुच्छे) शतधाराकी मंजरीसे युक्त ॥ ४९ ॥ श्वेतमेघकी समान जलमें पैरती हुईसी दीखती है. वह श्रेष्ठ आसनवती तेजसे प्रज्वलित दीखती थी ॥ ५० ॥ वह प्रभावती प्रकाशमान दिव्य गंधसे मनोरम सुस्वरूप दुःखरहित न शीत न गरमीसे युक्त ॥ ५१ ॥ उसमें रहनेवाले क्षुधा पिपासा ग्लानिको प्राप्त नहीं होते हैं. वह अनेक प्रकारके चित्र विचित्र कान्तिमान् रूपोंसे प्राप्त थी ॥ ५२ ॥ उसमें दिव्य मणिमय स्तंभ लगे थे. सब प्रकारसे स्वच्छ थी कहींसे दूरी फूरी न थी. चन्द्रसूर्यके तेजको अतिक्रमण करनेवाली स्वयं कान्तिमान् अग्निसे अधिक तेजयुक्त ॥ ५३ ॥

और स्वर्गमें स्थित हुई सूर्यकी भर्त्सना करती हुई प्रकाशित है. सम्पूर्ण काम जो दिव्य और जो मानुष है ॥ ५४ ॥ वे बड़े बड़े रससे युक्त और अक्षय भक्ष्य भोज्य पवित्र गन्धवाली माला और नित्य पुष्पफलवाले वृक्ष हैं ॥ ५५ ॥ उष्ण और शीतल जल शीत और उष्ण पदार्थ हैं पुष्पित अग्रभागवाले महाशाखायुक्त प्रवाल अंकुर धारण किये ॥ ५६ ॥ लता और वितानों युक्त नदी और सरोवरोंमेंसे बड़ी मनोहरता प्रभुने देखी ॥ ५७ ॥ अनेक प्रकारके द्रुम और मृगेन्द्र देखे गये. गंध ले पुष्प और रसवाले फल ॥ ५८ ॥ शीतल जलवाले जहां तहां सरोवर और उस सभामें प्रभुने अनेक

दीप्यते नाकपृष्ठस्था भर्त्सयन्तीव भास्करम् ॥ सर्वे च कामाः प्रचुरा ये दिव्या ये च मानुषाः ॥ ५४ ॥ रसवन्तः प्रभूताश्च भक्ष्यभोज्यं तथाक्षयम् ॥ पुण्यगन्धाः स्रजस्तत्र नित्यपुष्पफलद्रुमाः ॥ ५५ ॥ उष्णे शीतानि तोयानि शीति चोष्णानि सन्ति वै ॥ पुष्पिताग्रान्महाशालान्प्रवालाङ्कुरधारिणः ॥ ५६ ॥ लतावितानसंछन्नान्सरित्सु च सरःसु च ॥ मनोहराश्च विविधान् ददर्श स तदा प्रभुः ॥ ५७ ॥ द्रुमान्बहुविधास्तत्र मृगेन्द्रो दृष्टो द्रुतम् ॥ गन्धवन्ति च पुष्पाणि रसवन्ति फलानि च ॥ ५८ ॥ तानि शीतानि तोयानि तत्र तत्र सरांसि च ॥ अपश्यत्सर्वतर्थाणि सभायां शतशो विभुः ॥ ५९ ॥ नलिनैः पुण्डरीकैश्च शतपत्रैः सुगन्धिभिः ॥ रक्तैः कुवलयैर्नीलैः कुमुदैः संयुतानि च ॥ ६० ॥ सकान्तैर्धातैराग्रेश्च राजहंसैः सुरप्रियैः ॥ कादम्बैश्चक्रवाकैश्च सारसैः कुररैरपि ॥ ६१ ॥ विमलरुफटिकाभानि पाण्डुराष्टदलानि च ॥ कलहंसोपनीतानि सारिकाभिरुतानि च ॥ ६२ ॥

तीर्थ देखे ॥ ५९ ॥ नलिन पुण्डरीक शतपत्र सुगंधिवाले पदार्थ रक्त कुवलय नील वणक कुवलय कुमुदोंसे संयुक्त ॥ ६० ॥ कान्तिमान् हंस देवप्रिय राजहंस कादम्ब चक्रवाक सारस कुरर ॥ ६१ ॥ विमल रुफटिक मणिकी समान पाण्डुवर्णके अष्टदल कमल मनोहर शब्द करनेवाले तोते और सारका हंसादिके शब्दोंसे ग्यात ॥ ६२ ॥

गंधवाली सुन्दर पुष्पमंजरीधारिणी वृक्षोंके अग्रभागमें अनेक प्रकारकी पुष्प धारण करनेवाली लता ॥ ६३ ॥ केतक अशोक सरल पुन्नाग तिलक अर्जुन आम नीप नागपुष्प कदम्ब बकुल धव ॥ ६४ ॥ प्रियंगु पाटलीवृक्ष शाल्मकी हरिद्रक शाल ताल प्रियाल मनोहर चंपक ॥ ६५ ॥ तथा औरभी पुष्पोंवाले वृक्ष उस समामें शोभित थे. विद्रुमके कृत्रिम वृक्ष दावाग्रिकी समान कान्तिवाले ॥ ६६ ॥ स्कंधवाले सुन्दर शाखासे बहुत तालकी बराबर

गन्धवत्यः शुभास्तत्र पुष्पमञ्जरिधारिणीः ॥ दृष्टवान्पादपात्रेषु नानापुष्पधरा लताः ॥ ६३ ॥ केतकाशोकसरलाः पुन्नागतिलकार्जुनाः ॥ चूता नीपा नागपुष्पाः कदम्बबकुला धवाः ॥ ६४ ॥ प्रियङ्गुपाटलीवृक्षाः शाल्मल्यः सहारिद्रकाः ॥ शालास्तालाः प्रियालाश्च चम्पकाश्च मनोरमाः ॥ ६५ ॥ तथा चान्ये व्यराजन्त सभायां पुष्पिता द्रुमाः ॥ वैद्रुमाश्च द्रुमानीका दावाग्रिज्वलितप्रभाः ॥ ६६ ॥ स्कन्धवन्तः सुशाखाश्च बहुतालसमुच्छ्रयाः ॥ अञ्जनाशोकवर्णाभा भान्ति वंजुलका द्रुमाः ॥ ६७ ॥ वरणा वत्सनाभाश्च पनसाश्चन्दनैः सह ॥ नीलाः सुमनसश्चैव पीताम्लाश्चत्थतिन्दुकाः ॥ ६८ ॥ प्राचीनामलका लोध्रा मल्लिका भद्रदारवः ॥ आम्रातकास्तथा जम्बूलकुचाः शैलवालुकाः ॥ ६९ ॥ सर्जार्जुनाः कन्दुरवाः पतङ्गाः कुटजास्तथा ॥ रक्ताः कुरवकाश्चैव नीपाश्चाग्रहभिः सह ॥ ७० ॥ कदम्बाश्चैव भव्याश्च दाडिमीबीजपूरकाः ॥ कालीयका दुकूलश्च द्विज्वस्तैलपर्णिकाः ॥ ७१ ॥ खर्जूरानालिकेराश्च पूगवृक्षा हरितकी ॥ मधूकाः सप्तपर्णाश्च बिल्वाः पारावतास्तथा ॥ ७२ ॥

ऊंचे अंजन और अशोककी समान वर्णवाले वंजुल वृक्ष शोभित होते हैं ॥ ६७ ॥ वरण वत्सनाम पनस चंदन नील सुमन पीत इमली अश्वत्थ तिन्दुक ॥ ६८ ॥ प्राचीन आमलक लोध्र मल्लिका भद्रदारु आम्रातक जम्बू लकुच शैलवालु ॥ ६९ ॥ सर्ज अर्जुन कंदुवर पतंग कुटज रककुरवक नीप अगर ॥ ७० ॥ कदम्ब भव्य दाडिम बीजपूरक कालीयक दुकूल हिंदु तैलपर्णिक ॥ ७१ ॥ खजर नारिकेल सुपारीके वृक्ष हरै मधूक सप्तपर्ण बेल पारावत ॥ ७२ ॥

पनस तमाल अनेक गुल्मलताओंसे युक्त और अनेक प्रकारकी लता पत्र पुष्प फलवाली ॥ ७३ ॥ इससे आदि लेकर औरभी बहुतसे वनके वृक्ष अनेक प्रकारके पुष्प फलोंसे युक्त विराजित होते थे ॥ ७४ ॥ चकोर शतपत्र मतवाली कोकिलाओंसे युक्त सारिका फूले फले महावृक्ष झुक रहे हैं ॥ ७५ ॥ रक्त पीत लाल वर्णके पक्षी पेड़ोंपर बैठे हैं और प्रसन्न मन हो परस्पर एक दूसरेको देख रहे हैं ॥ ७६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां एकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥ वैशम्पायन बाले, उस सभामें वह दैत्येन्द्र हिरण्यकश्यप चार सौ हाथके लम्बे चौड़े

पनसाश्च तमालाश्च नानागुल्मलतावृताः ॥ लताश्च विविधाकाराः पत्रपुष्पफलोपगाः ॥ ७३ ॥ एते चान्ये च बहवस्तत्र काननजा द्रुमाः ॥ नानापुष्पफलोपेता व्यराजन्त समन्ततः ॥ ७४ ॥ चकोराः शतपत्राश्च मत्तकोकिलसारिकाः ॥ पुष्पितान्फलितान्ग्रांश्च संपतन्ति महाद्रुमान् ॥ ७५ ॥ रक्तपीतारुणास्तत्र पादपात्रगता द्विजाः ॥ परस्परमवेक्षन्त प्रहृष्टा जीवजीवकाः ॥ ७६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तस्यां सभायां दैत्येन्द्रो हिरण्यकशिपुः प्रभुः ॥ आसीन आसने दिव्ये नृत्वमात्रे प्रमाणतः ॥ १ ॥ दिवाकरनिभे रम्ये दिव्यास्तरणसंभृते ॥ रराज सुचिरं राजन् ज्वलत्काञ्चनकुण्डलः ॥ २ ॥ तस्य दैत्यपतेर्मन्दं विरजस्कं समन्ततः ॥ दिव्यगन्धवदस्तत्र मारुतः सुमुखो ववो ॥ ३ ॥ तत्र देवाः सगन्धर्वा गणैरप्सरसां वृताः ॥ दिव्यतालेन दिव्यानि जगुर्गीतानि गायनाः ॥ ४ ॥ विश्वाची सहजन्या च प्रम्लोचेत्य- भिविश्रुता ॥ दिव्या च सौरभेया च समोची पुञ्जिकस्थला ॥ ५ ॥ मिश्रकेशी च रम्भा च चित्रसेना शुचिस्मिता ॥ चारुनेत्रा घृताची च मेनका चोर्वशी तथा ॥ ६ ॥

सिंहासनमें स्थित था ॥ १ ॥ सूर्यकी समान कान्तिमान् दिव्य बिछौने उसपर बिछ रहे थे. उसपर प्रकाशमान कानोंमें कुंडल पहरे ॥ २ ॥ उस दैत्यपतिके मंदमंद रजरहित दिव्य गंधवाली पवन सन्मुख बहने लगी ॥ ३ ॥ वहां देवता गंधर्व अप्सराओंके गणोंसे युक्त दिव्य तालस्वरसे अनेक प्रकारके गीत गाने लगे ॥ ४ ॥ विश्वाची सहजनी प्रम्लोचा दिव्या सौरभेया समोची पुञ्जिकस्थला ॥ ५ ॥ मिश्रकेशी रंभा चित्रसेना शुचिस्मिता

चारुनेत्रा घृताची मेनका उर्वशी ॥ ६ ॥ इससे आदि ले औरभी सहस्रों अप्सरा नृत्यगीतमें चतुर राजा हिरण्यकश्यपके समीप स्थित होती हैं ॥ ७ ॥ और वहां हिरण्यकश्यप विचित्र वस्त्र भूषण धारण किये सहस्र स्त्रियोंसे परिवृत ज्वलितकुंडल स्थित हुए ॥ ८ ॥ वहां बैठे हुए महाबाहु प्रभु हिरण्यकश्यपको बड़े बड़े बली दानव उपासना करते थे ॥ ९ ॥ बालि वैरोचन नरक पृथ्वीजय प्रह्लाद विप्रचित्ति महाबली गविष्ठ ॥ १० ॥ अहंता क्रोधहंता सुमना सुमति स्वर घटोदर महापार्श्व क्रथन पिठर ॥ ११ ॥ विश्वरूप रूप विरूप महाद्युति रावण घाली मेघवास महारव ॥ १२ ॥ कटाभ विकटाभ संह्लाद इन्द्रतापन दैत्यदा-

एताः सहस्रशश्चान्या नृत्यगीतविशारदाः ॥ उपतिष्ठन्ति राजानं हिरण्यकशिपुं तदा ॥ ७ ॥ हिरण्यकशिपुस्तत्र विचित्राभरणाम्बरः ॥ स्त्रीसहस्रैः परिवृतस्तस्थौ ज्वलितकुण्डलः ॥ ८ ॥ तत्रासीनं महाबाहुं हिरण्यकशिपुं प्रभुम् ॥ उपासन्ति दितेः पुत्राः सर्वे लब्धवराः पुरा ॥ ९ ॥ बालिवैरोचनस्तत्र नरकः पृथिवीजयः ॥ प्रह्लादो विप्रचित्तिश्च गविष्ठश्च महासुरः ॥ १० ॥ अहंता क्रोधहंता च सुमनाः सुमतिः स्वरः ॥ घटोदरो महापार्श्वः क्रथनः पिठरस्तथा ॥ ११ ॥ विश्वरूपश्च रूपश्च विरूपश्च महाद्युतिः ॥ दशग्रीवश्च घाली च मेघवासा महारवः ॥ १२ ॥ कटाभो विकटाभश्च संह्लादश्चेन्द्रतापनः ॥ दैत्यदानवसंघाश्च सर्वे ज्वलितकुण्डलाः ॥ १३ ॥ स्रग्विणो वाग्मिनः सर्वे सर्वे सुचरितव्रताः ॥ सर्वे लब्धवराः शूराः सर्वे विगतमृत्यवः ॥ १४ ॥ एते चान्ये च बहवो हिरण्यकशिपुं प्रभुम् ॥ उपासन्ते महात्मानं सर्वे दिव्य पीरच्छदाः ॥ १५ ॥ विमानैर्विविधैर्यैर्भ्राजमानैरिवाचिभिः ॥ स्रग्विणो भूषणधरा यान्ति चायान्ति हेलया ॥ १६ ॥ विचित्राभरणोपेता विचित्रवसनास्तथा ॥ विचित्रशस्त्रकवचा विचित्रध्वजवाहनाः ॥ १७ ॥

नवोंके समूह सम्पूर्ण ज्वलित कुंडल पहरे ॥ १३ ॥ सब मालाधारी बड़े बोलनेवाले सबही सचरित्र सबही वर पाये और सबही मृत्युके भयसे रहित ॥ १४ ॥ इनके सिवाय औरभी बहुतसे प्रभु हिरण्यकश्यप महात्माको दिव्य वस्त्र पहरे उपासना करते थे ॥ १५ ॥ अनेक विमान कान्तिमान् विराजमान थे. वे माला भूषणधारी आते और जाते थे ॥ १६ ॥ विचित्र आभरण और विचित्र वस्त्र पहरे विचित्र शस्त्र कवच और विचित्र ध्वज और

वाहनवाले ॥ १७ ॥ महेन्द्रधनुषकी समान विचित्र अंगद धारण किये भूषित अंग दानव वैत्य नित्य हिरण्यकश्यपकी उपासना करते थे ॥ १८ ॥ उस
 दिव्य सभामें पर्वतकी समान असुर सुवर्णके मुकुट पहरे सूर्यकी समान कान्तिमान् ॥ १९ ॥ सुवर्णमणियोंकी बनी विचित्र वेदिकामें जहां सहस्रों रत्न
 जटित थे, हाथीदान्तके झरोखे लगे हुए उस सभाको मृगेन्द्रने देखा ॥ २० ॥ कि सोनेके विमल हारसे भूषित अंग सूर्यकी किरणोंकी समान प्रकाशित
 सहस्रों असुरोंसे निषेवित मृगराजने सभामें हिरण्यकश्यपको देखा ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां नारसिंहे द्विचत्वारिंशोऽ-
 महेन्द्रचापसंकाशैर्विचित्रैरङ्गदैवैरैः ॥ भूषिताङ्गा दितेः पुत्रास्तमुपासन्ति नित्यशः ॥ १८ ॥ तस्यां सभायां दिव्यायामसुराः पर्वतो-
 पमाः ॥ हिरण्यमुकुटाः सर्वे दिवाकरसमप्रभाः ॥ १९ ॥ कनकमणिविचित्रवेदिकायामुपाहितरत्नसहस्रवीथिकायाम् ॥ स ददर्श
 मृगाधिपः सभायां सुरुचिरदन्तगवाक्षसंवृतायाम् ॥ २० ॥ कनकविमलहारभूषिताङ्गं दितितनयं स मृगाधिपो ददर्श ॥ दिवसकर-
 करप्रभं ज्वलन्तमसुरसहस्रगणैर्निषेव्यमाणम् ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि नारसिंहे द्विचत्वारिंशोऽ-
 ध्यायः ॥ ४२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततो दृष्ट्वा महाबाहुं कालचक्रमिवागतम् ॥ नारसिंहवपुच्छन्नं भस्मच्छन्नमिवानलम् ॥ १ ॥
 विकुञ्चितसटं तस्य नारसिंहस्य भारत ॥ रूपोदार्यं बभौ तत्र सहस्रशशिसन्निभम् ॥ २ ॥ अहो रूपमिदं चित्रं शंखकुन्देन्दुस-
 न्निभम् ॥ अब्रुवन् दानवाः सर्वे हिरण्यकशिपुश्च सः ॥ ३ ॥ एवं हि ब्रुवतां तेषां निर्द्दधानां महात्मनाम् ॥ नारसिंहेन चक्षुर्भ्यां
 चोदिताः कालधर्मणौ ॥ ४ ॥ हिरण्यकशिपोः पुत्रः प्रह्लादो नाम वीर्यवान् ॥ दिव्येन चक्षुषा सिंहमपश्यद्देवमागतम् ॥ ५ ॥
 रिशोऽध्यायः ॥ ४२ ॥ वैशम्पायन बोले, तब उन कालचक्रकी समान आते हुए महाभुजावाले राखसे ढके अग्निकी समान नृसिंहशरीरधारीको
 देखा ॥ १ ॥ हे राजन् ! उनकी केसरके बाल टेढ़े थे और सहस्र चन्द्रमाकी समान उनके रूपकी उदारता थी ॥ २ ॥ आगे यह कुन्द और इन्दुकी
 समान बड़ा विचित्ररूप है ऐसे वे सब दानव हिरण्यकश्यपसे कहने लगे ॥ ३ ॥ इस प्रकार कहते हुए उन महात्माओंको कालधर्मसे प्रेरित कर नृसिं-
 हजी अपनी दृष्टिसे भस्म करने लगे ॥ ४ ॥ हिरण्यकश्यपका वीर्यवान् प्रह्लाद पुत्र दिव्य दृष्टिसे देखकर नृसिंहजीको देव मानता हुआ ॥ ५ ॥

उनका सुवर्णपर्वतके समान अपूर्व शरीर देख सब दानव और हिरण्यकश्यपभी विस्मित हो गया ॥ ६ ॥ प्रह्लाद बोले, हे राजराज महाबाहो ! हे दैत्योंमें प्रथम ! इस प्रकारका नारसिंह शरीर न हमने देखा न सुना ॥ ७ ॥ क्या यह दिव्यरूप अव्यक्तसे प्रगट है हमारे मनमें यह बात आती है कि यह घोर दैत्योंके नाशक है ॥ ८ ॥ देवता इनके शरीरमें स्थित हैं सागर नदी हिमालय पारियात्र तथा और जो दूसरे पर्वत हैं ॥ ९ ॥ नक्षत्रोंके सहित चन्द्रमा आदित्य अश्विनीकुमार कुबेर वरुण यम शचीपति इन्द्र ॥ १० ॥ मरुत देव गन्धर्व तपोधन मुनि नाग यक्ष पिशाच भीमपराक्रमी राक्षस ॥ ११ ॥

तं दृष्ट्वा रुक्मशैलाभमपूर्वां तनुमास्थितम् ॥ विस्मिता दानवाः सर्वे हिरण्यकशिपुश्च सः ॥ ६ ॥ प्रह्लाद उवाच ॥ महाराज महाबाहो दैत्यानामादिसंभव ॥ न श्रुतं नैव दृष्टं च नारसिंहमिदं वपुः ॥ ७ ॥ अव्यक्तप्रभवं दिव्यं किमिदं रूपमद्भुतम् ॥ दैत्यान्तकरणं घोरं शंसतीव मनांसि नः ॥ ८ ॥ अस्य देवाः शरीरैः सागराः सारितस्तथा ॥ हिमवान्पारियात्रश्च ये चान्ये कुलपर्वताः ॥ ९ ॥ चन्द्रमाः सह नक्षत्रैरादित्याश्चाश्विनौ तथा ॥ धनदो वरुणश्चैव यमः शक्रः शचीपतिः ॥ १० ॥ महतो देवगन्धर्वा मुनयश्च तपोधनाः ॥ नागा यक्षाः पिशाचाश्च राक्षसा भीमविक्रमाः ॥ ११ ॥ ब्रह्मदेवः पशुपतिर्लज्जितस्तथा विभान्ति वै ॥ स्थावराणि च भूतानि जङ्गमानि तथैव च ॥ १२ ॥ भवांश्च सहितोऽस्माभिः सर्वैर्दैत्यगणैर्बुधैः ॥ विमानशतसंकीर्णा तथाभ्यन्तरजा सभा ॥ १३ ॥ सर्वं त्रिभुवनं राजन् लोकधर्मश्च शाश्वतः ॥ दृश्यते नारसिंहेऽस्मिन्यथेन्दौ विमलं जगत् ॥ १४ ॥ प्रजापतिश्चात्र मनुर्महात्मा ग्रहाश्च योगाश्च मही नभश्च ॥ उत्पातकालश्च धृतिः स्मृतिश्च रजश्च सत्त्वं च तपो दमश्च ॥ १५ ॥ सनत्कुमारश्च महानुभावो विश्वे च देवाप्सरसश्च सर्वाः ॥ क्रोधश्च कामश्च तथैव हर्षो दर्पश्च मोहः पितरश्च सर्वे ॥ १६ ॥

ब्रह्मदेव पशुपति इनके ललाटमें लक्षित होते हैं तथा स्थावर जंगम प्राणी ॥ १२ ॥ आपभी सब दैत्यगणोंके सहित सैकड़ों विमानोंसे संयुक्त यह सभा ॥ १३ ॥ हे राजन् ! सम्पूर्ण त्रिलोकी लोकके शाश्वत धर्म इन नारसिंहमें दीखते हैं चन्द्रमामें जगत्की छाया दीखती है ॥ १४ ॥ इनमें प्रजापति महात्मा मनु ग्रह योग पृथ्वी आकाश उत्पात काल धृति स्मृति रज सत्य तप दम ॥ १५ ॥ महानुभाव सनत्कुमार विश्वेदेवा अप्सरा क्रोध

काम हर्ष दर्प मोह पितर इनमें दीखते हैं ॥ १६ ॥ यह वचन प्रह्लादने हिरण्यकशिपुसे कहे और वह दैत्यपुत्र कुछ कालनक नीचेको मुक्त किये ध्यान करतारहा ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां नारसिंहे त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४३ ॥ वैशंपायन बोले, हिरण्यकशिपु इस प्रकार प्रह्लादके वचन सुन वह गणाधिप सब दानवोंसे कहने लगा ॥ १ ॥ इस अपूर्वशरीरधारी मृगेन्द्रको शीघ्र पकड़ लो और जो कोई सन्देह हो तो इस वनमें फिरनेवालेको मार डालो ॥ २ ॥ यह सुन वह सब दानव उस भीमपराक्रमी मृगेन्द्रके ऊपर बड़े वेगसे अस्त्रोंका प्रहार

इत्येवमुक्त्वा स च दैत्यराजं हिरण्यनामानमाविस्मयेन ॥ दध्यौ च दैत्येश्वरपुत्र उग्रं महामातिः किञ्चिदधोमुखः प्राक् ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि नारसिंहे त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ प्रह्लादस्य च तच्छ्रुत्वा हिरण्यकशिपुर्वचः ॥ उवाच दानवान्तर्त्वान्तसगणांश्च गणाधिपः ॥ १ ॥ मृगेन्द्रो गृह्यतां शीघ्रमपूर्वां तनुमास्थितः ॥ यदि वा संशयः कश्चिद्रध्यतां वनगोचरः ॥ २ ॥ तच्छ्रुत्वा दानवाः सर्वे मृगेन्द्रं भीमविक्रमम् ॥ परिक्षिपन्तो मुदितास्त्रासयामासुरोजसा ॥ ३ ॥ सिंहनादं नदित्वा तु पुनः सिंहो महाबलः ॥ बभञ्ज तां सभां रम्यां व्यादितास्य इवान्तकः ॥ ४ ॥ सभायां भज्यमानायां हिरण्यकशिपुः स्वयम् ॥ चिक्षेपास्त्राणि सिंहस्य रोषव्याकुललोचनः ॥ ५ ॥ सर्वास्त्राणामथ श्रेष्ठं दण्डमस्त्रं सुभैरवम् ॥ कालचक्रं तथात्पुग्रं विष्णुचक्रं तथैव च ॥ ६ ॥ धर्मचक्रं महच्चक्रमजितं नाम नामतः ॥ चक्रमेन्द्रं तथा घोरमृषिचक्रं तथैव च ॥ ७ ॥ पेटामहं तथा चक्रं त्रैलोक्यमहितस्वनम् ॥ विचित्रामशनीं चैव शुष्काद्रिं चाशानिद्रयम् ॥ ८ ॥

करने लगे ॥ ३ ॥ तब वह महाबली सिंह सिंहनाद करके मुख फैलाये कालकी समान उस सभाको तोड़ते हुए ॥ ४ ॥ उस सभाके दूटनेसे स्वयं हिरण्यकश्यप क्रोधसे लालनेत्र कर सिंहके ऊपर अस्त्र प्रहार करने लगा ॥ ५ ॥ तब सम्पूर्ण अस्त्रोंमें श्रेष्ठ भैरवदण्ड कालचक्र विष्णुचक्र ॥ ६ ॥ धर्मचक्र महच्चक्र अजितचक्र घोर इन्द्रचक्र तथा ऋषिचक्र ॥ ७ ॥ पितामहचक्र त्रिलोकीमें महाशब्द करानेवाले विचित्र अशानि शुष्क और आर्द्र

अशनी ॥ ८ ॥ रौद्र उग्र शूल कंकाल मुशल ब्रह्मशिर अस्त्र ब्रह्मास्त्र ॥ ९ ॥ ऐषीकास्त्र इन्द्रास्त्र आग्नेयास्त्र शिशिरास्त्र वायव्य कपाल और किंक-
रास्त्र ॥ १० ॥ अपूर्व शक्ति और अस्त्र हयशिरास्त्र सौम्यास्त्र ॥ ११ ॥ पिशाचास्त्र अद्भुत सर्पास्त्र मोहन शोषण सन्तापन और विलापन अस्त्र ॥ १२ ॥
जृम्भण प्रापण दारुण त्वाष्ट्र अस्त्र अक्षोभ्य कालमुद्गर दूसरों की सेनाको क्षुब्धित करनेवाला ॥ १३ ॥ संवर्तन मोहन मायाधर गंधर्वास्त्र असिरत्न नंदन
अस्त्र ॥ १४ ॥ प्रस्वापन प्रमथन वारुणास्त्र अप्रतिहत गतिवाला पाशुपतास्त्र ॥ १५ ॥ इत्यादि अनेक अस्त्र हिरण्यकशिपुने अग्निमें आहुतिकी समान

रौद्रं तदुग्रं शूलं च कङ्कालं मुशलं तथा ॥ अस्त्रं ब्रह्मशिरश्चैव ब्राह्ममस्त्रं तथैव च ॥ ९ ॥ ऐषीकमस्त्रमेन्द्रं च आग्नेयं शैशिरं तथा ॥
वायव्यं मथनं नाम कापालमथ किंकरम् ॥ १० ॥ तथाचाप्रतिमां शक्तिं क्रौञ्चमस्त्रं तथैव च ॥ अस्त्रं हयशिरश्चैव सौम्यमस्त्रं तथैव
च ॥ ११ ॥ पेशाचमस्त्रममितं सार्षपमस्त्रं तथाद्भुतम् ॥ मोहनं शोषणं चैव सन्तापनविलापने ॥ १२ ॥ जृम्भणं प्रापणं चैव त्वाष्ट्रं
चैव सुदारुणम् ॥ कालमुद्गरमक्षोभ्यं क्षोभणं तु महाबलम् ॥ १३ ॥ संवर्तनं मोहनं च तथा मायाधरं परम् ॥ गान्धर्वमस्त्रं दयि-
तमसिरत्नं च नन्दकम् ॥ १४ ॥ प्रस्वापनं प्रमथनं वारुणं चास्त्रमुत्तमम् ॥ अस्त्रं पाशुपतं चैव यस्याप्रतिहता गतिः ॥ १५ ॥
एतान्यस्त्राणि सर्वाणि हिरण्यकशिपुस्तदा ॥ चिक्षेप नरसिंहस्य दीप्तस्याग्नेर्यथाहुतिः ॥ १६ ॥ अस्त्रैः प्रज्वलितैः सिंहमावृणोदसु-
राधिपः ॥ विवस्वान्धर्मसमये हिमवन्तमिवांशुभिः ॥ १७ ॥ सद्यमर्षानिलोद्भूतो दैत्यानां सैन्यसागरः ॥ क्षणेन प्लावयन्सिंहं मैना-
कमिव सागरः ॥ १८ ॥ प्रासेः पाशैस्तथा शूलैर्गदाभिर्मुशलेस्तथा ॥ वज्रैरशनिकल्पैश्च शिलाभिश्च महाद्रुमैः ॥ १९ ॥

नृसिंहजीके ऊपर छोड़े ॥ १६ ॥ असुरराजने इन अस्त्रोंसे नृहसिंहजीको आच्छादन कर दिया जैसे गरमीमें सूर्य अपनी किरणोंसे हिमवान्को आच्छा-
दन करते हैं ॥ १७ ॥ वह दैत्योंकी सागररूप सेना उनके क्रोधरूप पवनसे क्षणमात्रमें नृसिंहको ढकने लगी, जैसा सागरने मैनाकको आच्छादन
किया था ॥ १८ ॥ प्रास पाश शूल गदा मुशल अशनि तुल्य वज्र शिला वृक्ष ॥ १९ ॥

मुद्गर कूट पाश शूल उलूखल पर्वत दीप्त शतग्री दारुण दंष्ट्रोसे ॥ २० ॥ सब ओरसे उन्हें घेर प्रहार करने लगे. उन महात्माका उससे थोड़ाभी अपकार न हुआ ॥ २१ ॥ वे दानव हाथमें पाश लिये महेन्द्रके वज्र और अशानिकी तुल्य वेगवाले सब ओरसे बाहुओंमें शस्त्र उठाये तीन शिरवाले सर्पकी समान स्थित हुए ॥ २२ ॥ सुवर्णकी मालाओंसे भूषित शरीर अनेक गदा और शस्त्रोंसे शरीर सज्जित किये मोतियोंकी मालासे भूषित शरीर विशालपंखवाले हंसोंकी समान शोभित होते थे ॥ २३ ॥ वायुकी समान पराक्रमी उनके बाजूबंद माला वलय (कंकन) खड्ग उत्तम शरीरमें महाशोभाको प्राप्त होते थे. जो प्रभातकालके

मुद्गरेः कूटपाशैश्च शूलोलूखलपर्वतैः ॥ शतग्रीभिश्च दीप्ताभिर्वण्डैरपि सुदारुणैः ॥ २० ॥ परिवार्य समन्तात् निघ्नन्नस्त्रैर्हरिं तदा ॥ स्वरूपमप्यस्य न क्षुण्णमूर्जितस्य महात्मनः ॥ २१ ॥ ते दानवाः पाशगृहीतहस्ता महेन्द्रवज्राशनितुल्यवेगाः ॥ समन्ततोऽभ्युद्यत-
बाहुशस्त्राः स्थितास्त्रिशिर्षा इव पन्नगेन्द्राः ॥ २२ ॥ सुवर्णमालाकुलभूषिताङ्गा नानाङ्गशोभोगपिनद्धगात्राः ॥ मुक्तावलीदामविभूषि-
ताङ्गा हंसा इवाभान्ति विशालपक्षाः ॥ २३ ॥ तेषां तु वायुप्रतिमोजसां वै केयूरमालावलयोत्कटानि ॥ तान्युत्तमाङ्गान्याभितो
विभान्ति प्रभातसूर्यांशुसमप्रभाणि ॥ २४ ॥ तैः प्रक्षिपद्भिर्ज्वलतानलोपमेर्महास्त्रपूगैः स समावृतो बभौ ॥ गिरिर्यथा संततवर्षिभिर्घनैः
कृतान्धकारो द्रुतकन्दरद्रुमः ॥ २५ ॥ तैर्हन्यमानोऽपि महास्त्रजालैः सर्वैस्तदा दैत्यगणैः समेतैः ॥ नाकम्पताजौ भगवान् प्रतापवान्
स्थितः प्रकृत्या हिमवान्निवाचलः ॥ २६ ॥ संतापितास्ते नरसिंहरूपिणा दितेः सुताः पावकदीप्ततेजसां ॥ भयादिचेतुः पवनोद्धता
यथा महोर्मयः सागरवारिसंभवाः ॥ २७ ॥

सूर्यकी समान शोभित होते थे ॥ २४ ॥ वह सूर्यकी समान बड़े बड़े अश्वोंको जो अग्निकी तुल्य प्रभाववाले थे प्रहार करते शोभित हुए जिस प्रकार
निरन्तर वर्षावाले घनोंसे अंधकारको प्राप्त हो कंदराके वृक्ष शोभित होते हैं ॥ २५ ॥ उन सम्पूर्ण दैत्योंके मिलकर एकसाथ बाणप्रहार करने पर भगवान्
प्रतापवान् संशयमें कंपित न हुए और हिमालयकी समान स्वभावमें स्थित रहे ॥ २६ ॥ जब अग्निकी समान नृसिंहजीने दितिके पुत्रोंको तापित किया

तब वह भयसे चलायमान हुए, जैसे पवनसे प्रेरणा की सागरकी तरंगें चलायमान होते हैं ॥ २७ ॥ वह बड़े वेगसे सौ धनुषोंद्वारा युगान्तकालकी समान बाणोंको एकसाथ नृसिंहके ऊपर छोड़ने लगे क्रोधसे असुरोंके अंग दीप्तिमान हो गये ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेडु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां नारसिंहे चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४४ ॥ वैशंपायन बोले, खर खरमुख मकर सर्पमुख ईहामृग वराहमुख ॥ १ ॥ बालसूर्यकी समान मुख वाले धूमकेतुकी समान मुखवाले चन्द्र अर्द्धचन्द्र प्रदीप्ताग्निमुख ॥ २ ॥ हंस कुकुटमुख मुख फैलाये भयावने पंचमुख जीम चाटते हुए काक और शतैर्धनुर्भिः सुमहातिवेगा युगान्तकालप्रतिमाञ्छरोचान् ॥ एकायनस्था मुमुचुर्नृसिंहे महामुराः क्रोधविदीपिताङ्गाः ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेडु हरिवंशे भविष्यपर्वणि नारसिंहे चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४४ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ खराः खरमुखाश्चैव मकराशीविषाननाः ॥ ईहामृगमुखाश्चान्ये वराहसदृशाननाः ॥ १ ॥ बालसूर्यमुखाश्चैव धूमकेतुमुखास्तथा ॥ चन्द्रार्द्धचन्द्रवक्राश्च प्रदीप्ताग्निमुखास्तथा ॥ २ ॥ हंसकुकुटवक्राश्च व्यादितास्या भयावहाः ॥ पञ्चास्या लेलिहानाश्च काकगृध्रमुखास्तथा ॥ ३ ॥ विद्युजिह्वास्त्रिशिर्षाश्च तथोल्कासन्निभाननाः ॥ महाग्राहनिभाश्चान्ये दानवा बलदर्पिताः ॥ ४ ॥ कैलासवपुषस्तस्य शरीरे शरवृष्टयः ॥ अध्वरस्य मृगेन्द्रस्य न व्यथां चक्रुराहवे ॥ ५ ॥ एवं भूयोऽपरान्धोरानसृजन्दानवाः शरान् ॥ मृगेन्द्रस्योरासि कुद्रा निःश्वसन्त इवोरगाः ॥ ६ ॥ ते दानवशरा घोरा मृगेन्द्राय समीरिताः ॥ विभ्रं जग्मुराकाशे खद्योता इव पर्वते ॥ ७ ॥ ततश्चक्राणि दिश्यानि दैत्याः क्रोधसमन्विताः ॥ मृगेन्द्रायाक्षिपन्त्याशु प्रज्वलन्तीव सर्वशः ॥ ८ ॥ तेरासीद्गगनं चक्रेः संपताद्विः समावृतम् ॥ युगान्ते संप्रकाशद्विश्चन्द्रसूर्यग्रहैरिव ॥ ९ ॥ गृध्रोंके मुखवाले ॥ ३ ॥ विद्युजिह्व त्रिशिर्ष उल्कामुख महाग्राहकी समान बलदर्पित दानव ॥ ४ ॥ कैलासकी समान शरीरवाले नृसिंहजीके शरीरमें बाण वर्षा करने लगे, परन्तु वह अवध्य मृगेन्द्रके शरीरमें व्यथा न कर सके ॥ ५ ॥ इस प्रकार वह दानव शरवर्षा करते हुए मृगेन्द्रके हृदयमें क्रोधकर सर्पकी समान बाणप्रहार करने लगे ॥ ६ ॥ वे नृसिंहजीके ऊपर छोड़े हुए दानवोंके बाण आकाशमें ऐसे लीन हो गये जैसे पर्वतमें खद्योत ॥ ७ ॥ तब वे दैत्य क्रोधकर दिव्यचक्र प्रज्वलित होते हुए नृसिंहजीके ऊपर प्रहार करने लगे ॥ ८ ॥ उनके पतनसे चारों ओर आकाश व्याप्त हो गया, जैसे

युगान्तमें चन्द्रमा और सूर्य प्रकाश करते हैं ॥ ९ ॥ वह चक्र उनके मुखमें ऐसे प्रवेश करने लगे, जैसे मेवकी गुहामें अथवा जैसे चन्द्रसूर्य मेवोंमें प्रवेश कर जाते हैं ॥ १० ॥ महात्मा मृगेन्द्रने अग्निकी समान प्रदीप्त वे सब चक्र निगल लिये ॥ ११ ॥ हिरण्यकशिपुने फिर एक महाबोर अग्निकी समान प्रज्वलित शक्ति उनके ऊपर छोड़ी ॥ १२ ॥ मृगेन्द्रने उस शक्तिको आता देख अपने महाहुंकारसेही उसको नष्ट कर डाला ॥ १३ ॥ मृगेन्द्रने तोड़ी हुई वह शक्ति पृथ्वीमें शोभित होने लगी, जैसे विस्फुलिंगों सहित जलती हुई उल्का पृथ्वीमें गिरती है ॥ १४ ॥ वह नाराचोंकी पांके उन मृग-
 तानि चक्राणि वदनं प्रविशन्ति विभान्ति वै ॥ मेघोदरदरीं घोरं चन्द्रसूर्यग्रहा इव ॥ १० ॥ तानि चक्राणि सर्वाणि मृगेन्द्रेण महात्मना ॥ निगीर्णानि प्रदीप्तानि पावकार्चिःसमानि वै ॥ ११ ॥ हिरण्यकशिपुर्देत्यो भूयः प्रासृजदूर्जिताम् ॥ शक्तिं प्रज्वालितं घोरं हुताश-
 नसमप्रभाम् ॥ १२ ॥ तामापतन्तीं संप्रेक्ष्य मृगेन्द्रः शक्तिमुत्तमाम् ॥ हुंकारेणैव रौद्रेण बभञ्ज भगवांस्तदा ॥ १३ ॥ रराज भग्ना सा शक्तिर्मृगेन्द्रेण महीतले ॥ साविस्फुलिङ्गा ज्वालिता महोल्केव नभश्च्युता ॥ १४ ॥ नाराचपङ्क्तिः सिंहस्य सृष्टा रेजे विदूरतः ॥ नीलोत्पलपलाशानां मालेवोज्ज्वलदर्शना ॥ १५ ॥ गर्जित्वा तु यथाकामं विक्रम्य च यथासुखम् ॥ तत्सेन्यमुत्सारितवान् तृणाग्राणां च
 मारुतः ॥ १६ ॥ ततोऽश्मवर्षं दैत्येन्द्रा व्यसृजन्त नभोगताः ॥ नगमात्रैः शिलाखण्डैर्गिरिकूटैर्महाप्रभैः ॥ १७ ॥ तदश्मवर्षं सिंहस्य गात्रे निपतितं महत् ॥ दिशो दश प्रकीर्णं हि खद्योतप्रकरो यथा ॥ १८ ॥ तदश्मौघैर्दिनिसुनास्तदा सिंहमारिंदम ॥ प्रच्छादयन्त्यथा मेघो घाराभिरिव पर्वतम् ॥ १९ ॥ न च तं चालयामासुर्देत्योघा देवमास्थितम् ॥ भीमवेगा बलश्रेष्ठं समुद्रा इव पर्वतम् ॥ २० ॥
 न्द्रसे दूरही शोभित हुई, जैसे नीले कमलोंकी माला शोभित होती है ॥ १५ ॥ यथायोग्य गर्जना और अना विक्रम कर नृसिंहजीने ऐसे उस सेनाको नष्ट कर दिया जैसे पवन तृणको नष्ट कर देती है ॥ १६ ॥ तब दैत्य आकाशसे पत्थरोंकी वर्षा करने लगे वह पर्वतोंकी समान शिलाखण्ड महाकान्ति-
 मान् पडने लगे ॥ १७ ॥ वह पत्थरोंकी वर्षा नृसिंहजीके शरीरपर होने लगी, दशों दिशा खद्योतकी समान उससे प्रकाशित होने लगी ॥ १८ ॥ तब दितिकुमार महापर्वतोंसे सिंहको ऐसे आच्छादन करने लगे, जैसे मेघ घाराओंसे पर्वतोंको आच्छादन करते हैं ॥ १९ ॥ उन देवको दैत्यसमूह

चलायमान करनेको समर्थ न हुए, जैसे समुद्र पर्वतको चलायमान नहीं कर सकते हैं ॥ २० ॥ तब पर्वतोंकी वर्षा होनेमें निरन्तर जलकी वर्षाभी होने लगी. अक्षमात्र धारा चारों ओरसे पतित होने लगी ॥ २१ ॥ आकाशसे बड़ी तीक्ष्ण जलधारा सहस्रों गिरने लगीं उनसे दिशा विदिशा आकाश सब ओरसे व्याप्त हो गया ॥ २२ ॥ धाराके संपात और वायुके स्फूर्जनसे तथा वर्षाके वेगसे कुछभी विदित नहीं होता था ॥ २३ ॥ वह आकाशसे पतित हुई धारा पृथ्वीमें पड़ती थीं पृथ्वीमें गिरकर उनको स्पर्श नहीं करती थीं ॥ २४ ॥ बाहरसेही जल वर्षता था मेघके ऊपरसे नहीं तब मायासे वह मृगे-
ततोऽश्मवर्षे निहते जलवर्षमनन्तरम् ॥ धाराभिरक्षमात्राभिः प्रादुरासीत्समन्ततः ॥ २१ ॥ नभसः प्रच्युता धारास्तिग्मवेगाः सहस्रशः ॥ आवृण्वन्त्सर्वतो व्योम दिशश्चोपदिशस्तथा ॥ २२ ॥ धाराणां सन्निपातेन वायोर्विस्फूर्जितेन च ॥ वर्द्धता चैव वर्षेण न प्राज्ञायत किंचन ॥ २३ ॥ धारा दिवि च संसक्ता वसुधायां च सर्वशः ॥ न स्पृशन्ति स्म तं तत्र निपतन्त्योऽनिशं भुवि ॥ २४ ॥ बाह्यतो ववृषे वर्षं नोपरिष्ठात्तु तोयदः ॥ मृगेन्द्रप्रतिरूपस्य स्थितस्य युधि मायया ॥ २५ ॥ हतेऽश्मवर्षे तुमुले जलवर्षे च शोषिते ॥ समृजुर्दानवा मायामग्निं वायुं च सर्वशः ॥ २६ ॥ नभसः प्रच्युतश्चैव तिग्मवेगः समन्ततः ॥ ज्वालामाली महारौद्रो दीप्ततेजाः समन्ततः ॥ २७ ॥ स सृष्टः पावकस्तेन दैत्येन्द्रेण महात्मना ॥ न शशाक महातेजा दग्धुमप्रतिमोजसम् ॥ २८ ॥ तमिन्द्रस्तो-
यदेः सार्द्धं सहस्राक्षोऽमितद्युतिः ॥ महतो तोयवर्षेण शमयामास पावकम् ॥ २९ ॥ तस्यां प्रतिहतायां तु मायायां युधि दानवाः ॥ समृजुर्धोरसंकाशं तमस्तीव्रं समन्ततः ॥ ३० ॥ तमसा संवृते लोके दैत्येष्वान्तायुधेषु वै ॥ स्वतेजसा परिवृतो दिवाकर इवाबभौ ॥ ३१ ॥
न्द्रसे युद्ध करनेको स्थित हुआ ॥ २५ ॥ जब पत्थर और जलवर्षा शान्त हो गई तब दानवोंने मायासे अग्नि और वायुकी रचना की ॥ २६ ॥ तब चारों ओर आकाशसे तीक्ष्णतेजसे युक्त ज्वालामालासे युक्त महारौद्र अग्नि पतित होने लगी ॥ २७ ॥ जब महात्मा दैत्येन्द्रने अग्निकी रचना की तथापि वह अग्नि उन महातेजस्वीको जलानेको समर्थ नहीं हुआ ॥ २८ ॥ उसको सहस्राक्ष महाकान्तिमान्ने बड़ी भारी जलवर्षासे शान्त कर दिया ॥ २९ ॥ दानव उस मायाके नष्ट होनेसे महाघोर अंधकारकी रचना करते हुए ॥ ३० ॥ जब अंधकार व्याप्त कर दैत्योंने अन्न उठाये तब

वह नृसिंह अपने तेजसे व्याप्त हो सूर्यकी समान शोभित हुए ॥ ३१ ॥ दानव रणमें इनका त्रिशिखा भृकुटी देखने लगे जैसे ललाटरूपी त्रिकूटमें त्रिप-
थगामिनी गंगा स्थित हो ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां नारसिंहे पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४५ ॥ वैशंपायन
बोले, जब सम्पूर्ण माया नष्ट हो गई तब दैत्य व्याकुल हो हिरण्यकशिपुकी शरणमें गये ॥ १ ॥ तब क्रोधसे जलते और तेजसे दग्ध करते हुए हिर-
ण्यकशिपु दैत्यने क्रोधसे पृथ्वीको चलायमान कर दिया ॥ २ ॥ उस समय जलके आकर सागर चलायमान हो गये और वनके कानन द्रुम सब चला-

त्रिशिखां भृकुटीं चास्य ददृशुर्दानवा रणे ॥ ललाटस्थां त्रिकूटस्थां गङ्गां त्रिपथगामिव ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे
भविष्यपर्वणि नारसिंहे पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४५ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः सर्वासु मायासु हतासु दितिनन्दनाः ॥ हिरण्य-
कशिपुं सर्वे विषण्णाः शरणं गताः ॥ १ ॥ ततः प्रज्वलितः क्रोधात्प्रदहन्निव तेजसा ॥ हिरण्यकशिपुर्दैत्यश्चालयामास मेदिनीम् ॥ २ ॥
ततः प्रक्षुभिताः सर्वे सागराः सलिलाकराः ॥ चलिता गिरयः सर्वे सकाननवनद्रुमाः ॥ ३ ॥ तस्मिन् क्रुद्धे तु दैत्येन्द्रे तमोभूतमभू-
जगत् ॥ तमसा समभूच्छन्नं न प्राज्ञायत किञ्चन ॥ ४ ॥ अवहः प्रवहश्चैव विवहश्च समरिणः ॥ पराहः संवहश्चैव उद्वहश्च महाबलः ॥ ५ ॥
तथा परिवहः श्रीमान्मारुता भयशंसिनः ॥ इत्येते क्षुभिताः सप्त मारुता गगनेचराः ॥ ६ ॥ ये ग्रहाः सर्वलोकस्य क्षये प्रादु-
र्भवन्ति वै ॥ ते ग्रहा गगने दृष्टा विचरन्ति यथासुखम् ॥ ७ ॥ अयोगतश्च तारासु सर्वेष्वक्षेषु संगताः ॥ सग्रहं सहनक्षत्रं प्रजज्वाल
नभो नृप ॥ ८ ॥ विवर्णत्वं च भगवान् गतो दिवि दिवाकरः ॥ कृष्णः कबन्धश्च महालक्ष्यते च नभस्तले ॥ ९ ॥

यमान हो गये ॥ ३ ॥ उस दैत्यके क्रोध करनेपर जगत् अंधकारमय हो गया और अंधकार व्याप्त होनेसे कुछ दिखाई नहीं देता था ॥ ४ ॥
आवह प्रवह विवह पराह संवह उद्वह महाबल ॥ ५ ॥ परिवह यह भयदायक पवन चलने लगी, यह आकाशचारी सारों पवन क्षुभित हो गई ॥ ६ ॥
जो ग्रह सब लोकके क्षयमें प्रादुर्भूत होते हैं वे ग्रह प्रसन्न हो आकाशमें विचरने लगे ॥ ७ ॥ नियत गतिवाले तारा नक्षत्र अनियत गतिवाले हो
गये ग्रह नक्षत्र सहित आकाश जल उठा ॥ ८ ॥ सूर्यभी आकाशमें कान्तिहीन हो गया आकाशमें काला कबन्ध दीखने लगा ॥ ९ ॥

सूर्यमेंसे काला धूम निकलने लगा और आकाशमें वारंवार सूर्य तापित होने लगे ॥ १० ॥ सात सूर्य धूम्रवर्ण आकाशमें स्थित हुए सात ग्रह चन्द्रमाके शृंगगामी हुए ॥ ११ ॥ अर्थात् वाम और दक्षिणमें शुक्र और बृहस्पति स्थित हुए, शनैश्वर और लाल सूर्यकी समान कान्तिमान् मंगल ॥ १२ ॥ यह सब एकसाथ कठिन मार्गमें आरोहण करने लगे, इनके सुवर्णमय शृंग युगान्तकी समान दीखने लगे ॥ १३ ॥ चन्द्रमा नक्षत्र और सात ग्रहोंसे आवृत हुआ और चराचरके विनाशके निमित्त रोहिणीसे प्रसन्न नहीं हुआ ॥ १४ ॥

अमुञ्चञ्चासितां सूर्यो धूमवर्ति भयावहाम् ॥ गगनस्थश्च भगवानभीक्ष्णं परितप्यते ॥ १० ॥ सप्तधूमनिभा घोराः सूर्या दिवि समुत्थिताः ॥ सोमस्य गगनस्थस्य ग्रहास्तिष्ठन्ति शृङ्गाः ॥ ११ ॥ वामे च दक्षिणे चैव स्थितौ शुक्रबृहस्पती ॥ शनैश्वरो लोहिताङ्गो लोहितार्कसमद्युतिः ॥ १२ ॥ समं समभिरोहन्ति दुर्गाणि गगनेचराः ॥ शृङ्गाणि कनकैर्घोरा युगान्तावर्तका ग्रहाः ॥ १३ ॥ चन्द्रमाः सह नक्षत्रैर्ग्रहेः सप्तभिरावृतः ॥ चराचरविनाशार्थं रोहिणीं नाभ्यनन्दत ॥ १४ ॥ गृहीतो राहुणा चन्द्र उल्काभिरभिहन्यते ॥ उल्काः प्रज्वलिताश्चन्द्रे प्रचेलुर्घोरदर्शनाः ॥ १५ ॥ देवानामपि यो देवः सोऽभ्यवर्षत शोणितम् ॥ अपतन् गगनादुल्का विद्युद्रूपाः सनिःस्वनाः ॥ १६ ॥ अकाले पादपाः सर्वे पुष्पन्ति च फलन्ति च ॥ लताश्च सफलाः सर्वा याः प्रादुर्दित्यनाशनम् ॥ १७ ॥ फले फलान्यजायन्त पुष्पे पुष्पं तथैव च ॥ उन्मीलन्ति निर्मीलन्ति हसन्ति च रुदन्ति च ॥ १८ ॥ विक्रोशन्ति च गम्भीरं धूमयन्ति ज्वलन्ति च ॥ प्रतिमाः सर्वदेवानां कथयन्ति युगक्षयम् ॥ १९ ॥

राहुसे गृहीत हुआ चन्द्रमा उल्कासे ताडित होने लगा और चन्द्रमासे घोररूप उल्का चलायमान होने लगी ॥ १५ ॥ देवादिदेव मेघोंसे रुधिर वर्षने लगा विजलीकी समान शब्द करती उल्का आकाशसे गिरी ॥ १६ ॥ अकालमें वृक्षोंमें फूल फल लागि आये और फलवती होकर सब लता दैत्यका नाश कथन करने लगीं ॥ १७ ॥ फलमें फल पुष्पमें पुष्प लगने लगे आसैं खोलती मीचती हंसती रोती ॥ १८ ॥ चिल्लाती धूम्र छोडती ज्वलित होती

हुई सब देवताओंकी प्रतिमा युगक्षय कीर्तन करने लगीं ॥ १९ ॥ अरण्यपशु पक्षियोंका ग्राम्यपशुओंसे संयोग हुआ और मृगेन्द्रके उपास्थित होनेमें भयंकर स्वरसे शब्द करने लगे ॥ २० ॥ नदियोंका जल मैला और प्रतिकूल गमन करने लगा अपराह्णमें प्रातः होकरभी सूर्यकी छाया न परिवर्तित हुई ॥ २१ ॥ दिशा रेणुसे व्याप्त हो प्रकाशित न हुई पूजनयोग्य वनस्पातियोंका पूजन नहीं हुआ ॥ २२ ॥ वायुवेगसे चलकर वस्तुओंको तोड़ने लगा उस समय किसीभी प्राणीकी छायाका परिवर्तन न हुआ ॥ २३ ॥ सूर्यके अपराह्णमें प्रातः होनेपर युगक्षय दीखने लगा तब हिरण्यकशिपु दैत्यके

आरण्यैः सह संसृष्टा ग्राम्याश्च मृगपक्षिणः ॥ चुरुशुभैरवं तत्र मृगेन्द्रे समुपस्थिते ॥ २० ॥ नद्यश्च प्रतिलोमा हि वहन्ति कलुषोदकाः ॥ अपराह्णते सूर्ये लोकानां क्षयकारके ॥ २१ ॥ न प्रकाशन्ति च दिशो रक्तेरेणुसमाकुलाः ॥ वानस्पत्या न पूज्यन्ते पूजनार्हाः कथञ्चन ॥ २२ ॥ वायुवेगेन हन्यन्ते भिद्यन्ते प्रणुदन्ति च ॥ तदा च सर्वभूतानां छाया न परिवर्तते ॥ २३ ॥ अपराह्णते सूर्ये लोकानां च युगक्षये ॥ तदा हिरण्यकशिपोर्दैत्यस्थोपरि वेश्मनः ॥ २४ ॥ भाण्डागारायुधागारे निविष्टमभवन्मधु ॥ तथैव चायुधागारे धूमराजिरदृश्यत ॥ २५ ॥ स च दृष्ट्वा महोत्पातान् हिरण्यकशिपुस्तदा ॥ पुरोहितं तदा शुक्रं वचनं चेदमब्रवीत् ॥ २६ ॥ किमर्थं भगवन्नेते महोत्पाताः समुत्थिताः ॥ श्रोतुमिच्छामि तत्त्वेन परं कौतूहलं हि मे ॥ २७ ॥ शुक्र उवाच ॥ शृणु राजन्नवहितो वचनं मे महासुर ॥ यदर्थमिह दृश्यन्ते महोत्पाता महाभयाः ॥ २८ ॥ यस्यैते संप्रदृश्यन्ते राज्ञो राष्ट्रे महासुर ॥ देशो वा हियते तस्य राजा वा बन्धमर्हति ॥ २९ ॥

ऊपरके स्थानके ॥ २४ ॥ भाण्डागार और आयुधागारमें शहतकी मक्खी छत्ता रखने लगी और इसी प्रकार आयुधागारमें धूमराजि दीखने लगीं ॥ २५ ॥ तब हिरण्यकशिपु इन महाउत्पातोंको देख अपने पुरोहित शुक्रसे यह वचन बोले ॥ २६ ॥ हे भगवन् ! यह महाउत्पात किस कारणसे होते हैं यह मैं तत्त्वसे सुननेकी इच्छा करता हूं इसमें मुझको परम कौतूहल है ॥ २७ ॥ शुक्र बोले, हे राजन् ! हमारे हितके वचन सुनो, जिस कारण यह भय देनेवाले महाउत्पात दिखाई देते हैं ॥ २८ ॥ हे महासुर ! जिसके राज्यमें इस प्रकारके उत्पात सुनाई वा दिखाई देते हैं या उसका देश हरण होता

हे वा राजा बंधनमें पड़ता है ॥ २९ ॥ इससे बुद्धिपूर्वक विचारनेसे सर्वनाश विदित होता है इसमें संदेह नहीं कि बड़ा भय आनकर प्राप्त होगा ॥ ३० ॥ जब शुक्रने हिरण्यकशिपुसे यह वचन कहे तब स्वस्ति कहकर वह दैत्यपतिसे विदा हो अपने स्थानको गया ॥ ३१ ॥ उनके जानेपर वह दैत्येन्द्र बहुत समयतक विचार करता रहा और दीन हो वह ब्रह्माके वचनोंको स्मरण करने लगा कि असुरोंका नाश और सुरोंका विजय होगा ॥ ३२ ॥ इसीके कारण यह घोर उत्पात सुनाई आते हैं तथा औरभी अनेक उत्पात दीखते हैं ॥ ३३ ॥ यह कालनिर्मित उत्पात दैत्योंके नाश करनेकोही

अतो बुद्ध्या समीक्षस्व यथा सर्वं प्रणश्यति ॥ बृहद्भयं हि न चिराद्भविष्यति न संशयः ॥ ३० ॥ एतावदुक्त्वा शुक्रस्तु हिरण्यक-
शिपुं तदा ॥ स्वस्तीत्युक्त्वा तु दैत्येन्द्रं जगाम स्वं निवेशनम् ॥ ३१ ॥ तस्मिन् गते स दैत्येन्द्रो ध्यातवान्सुचिरं तदा ॥ आसां-
चक्रे सुदीनात्मा ब्रह्मवाक्यमनुस्मरन् ॥ असुराणां विनाशाय सुराणां विजयाय च ॥ ३२ ॥ दृश्यन्ते विविधोत्पाता घोरा घोरनिद-
र्शनाः ॥ एते चान्ये च बहवो घोरा ह्युत्पातदर्शनाः ॥ ३३ ॥ दैत्येन्द्राणां विनाशाय दृश्यन्ते कालनिर्मिताः ॥ ततो हिरण्यकशिपुर्गदा-
मादाय सत्वरम् ॥ ३४ ॥ अभ्यद्रवत वेगेन धरणीमनुकम्पयन् ॥ हिरण्यकशिपुर्दैत्यो यदा संस्पृष्टवान्महीम् ॥ ३५ ॥ संदृष्टोष्ठपुटः
क्रोधाद्राह इव पूर्वजः ॥ मेदिन्यां कंपमानायां दैत्येन्द्रेण महात्मना ॥ ३६ ॥ महीधरेभ्यो नागेंद्रा निपेतुर्भयविह्वलाः ॥ विषज्वाला-
कुलेर्वक्रैर्विमुञ्चन्तो हुताशनम् ॥ ३७ ॥ चतुःशीर्षाः पञ्चशीर्षाः सप्तशीर्षाश्च पन्नगाः ॥ वासुकिस्तक्षकश्चैव कर्कोटकधनंजयो ॥ ३८ ॥

दीखते हैं तब हिरण्यकशिपुने बहुत शीघ्र गदाको ग्रहण कर ॥ ३४ ॥ धरणीको कंपायमान करते बहुत शीघ्रतासे गमन किया, जिस समय दैत्य हिरण्यकशिपुने पृथ्वीका स्पर्श किया ॥ ३५ ॥ तब अपने होठसे होठ चाटते हिरण्याक्षकी समान जब उस दैत्यने मेदिनी कंपित की ॥ ३६ ॥ तब पीड़ित हो पृथ्वीमेंसे बड़े बड़े सर्प निकलने लगे और विषकी ज्वालासे व्याकुल हो अधिको वमन करने लगे ॥ ३७ ॥ चार पांच तथा सात शिरके सर्प वासुकि तक्षक कर्कोटक धनंजय ॥ ३८ ॥

एलापत्र कालीय महापद्म सहस्रशिरके नाग हेमतालध्वज प्रभु ॥ ३९ ॥ हे राजन् । शेष अनन्त दुष्प्रकंप प्रकंपित दीप्तजलके अन्तरमें रहनेवाले पृथ्वीके धारण करनेवाले निकले ॥ ४० ॥ क्रोध कर दैत्यने यह सब कंपित कर दिये पातालतलमें विचरनेवाले नागतेजधारी मंगलरूप ॥ ४१ ॥ जौर जलभी सहसा क्रोध करनेसे कंपहीन हुए भागीरथी नदी सरयु कौशिकी ॥ ४२ ॥ यमुना कावेरी कृष्णा वेणी सुवेणा महाभागा गौदावरी ॥ ४३ ॥ चर्मण्वती नदनदीपति सिंधु मेकलप्रभव शोण मणिनिभोदक ॥ ४४ ॥ सुस्रोता नर्मदा वेत्रवती गोमती गोकुलसे आकीर्ण पूर्णा सरस्वती ॥ ४५ ॥

एलापत्रश्च कालीयो महापद्मश्च वीर्यवान् ॥ सहस्रशीर्षधृङ्नागो हेमतालध्वजः प्रभुः ॥ ३९ ॥ शेषोऽनन्तो महीपालो दुष्प्रकम्पः प्रकम्पितः ॥ दीप्तान्यन्तर्जलस्थानि पृथिवीधरणानि च ॥ ४० ॥ तदा क्रुद्धेन दैत्येन कम्पितानि समन्ततः ॥ पातालतलचारिण्यो नागतेजोधराः शिवाः ॥ ४१ ॥ आपश्च सदसा क्रुद्धा दुष्प्रकम्प्यरसाः शुभाः ॥ नदी भागीरथी चैव सरयुः कौशिकी तथा ॥ ४२ ॥ यमुना चैव कावेरी कृष्णा वेणा तथैव च ॥ सुवेणा च महाभागा नदी गौदावरी तथा ॥ ४३ ॥ चर्मण्वती च सिन्धुश्च तथा नदनदीपतिः ॥ मेकलाप्रभवश्चैव शोणो मणिनिभोदकः ॥ ४४ ॥ सुस्रोता नर्मदा चैव तथा वेत्रवती नदी ॥ गोमती गोकुलाकीर्णा तथा पूर्णा सरस्वती ॥ ४५ ॥ मही कालनदी चैव तमसा पुण्यवाहिनी ॥ सिता चक्षुमती चैव वेदिका च महानदी ॥ ४६ ॥ जम्बुद्वीपं रत्नवन्तं सर्वरत्नोपशोभितम् ॥ सुवर्णकूटकं चैव सुवर्णाकरमण्डितम् ॥ ४७ ॥ महानदश्च लोहित्यः शैलकाननशोभितः ॥ पत्तनं कौशिकारण्यं द्रविडं रजताकरम् ॥ ४८ ॥ मागधांश्च महाग्रामानङ्गान्वद्वांस्तथैव च ॥ सुह्यान्मल्लान्निदेहांश्च मालवाकाशिकोसलान् ॥ ४९ ॥ भुवनं वैनतेयस्य सुवर्णस्य च कम्पितम् ॥ कैलासशिखराकारं यत्कृतं विश्वकर्मणा ॥ ५० ॥

मही कालनदी तमसा पुण्यवाहिनी सिता चक्षुमती महानदी वेदिका ॥ ४६ ॥ रत्नवाला जम्बुद्वीप सब रत्नोंसे शोभित सुवर्णकूट सुवर्ण आकरसे मंडित ॥ ४७ ॥ महानद लोहित्य शैलकाननसे शोभित कौशिकवन पत्तन द्रविड रजताकर ॥ ४८ ॥ मागध महाग्राम अंग वंग कर्लिंग सुल मल्ल विदेह मालवान काशी कोसल ॥ ४९ ॥ गरुडका भवन सुवर्णका कंपित कैलासके शिखरके आकार विश्वकर्माका बनाया हुआ ॥ ५० ॥

रक्ततोष भीमवेग लोहित्य सागर (लालसागर) सुन्दर पांडुवर्ण मेघको समान कान्तिमान् क्षीरसागर ॥ ५१ ॥ हे राजेन्द्र ! सौ योजन ऊंचा उदय पर्वत
 नागपक्षसे सेवित सुवर्णवेदिक ॥ ५२ ॥ सूर्यकी समान प्रकाशित जातरूपमय वृक्ष शाल ताल तमाल और कर्णिकारके पुष्पोंसे युक्त ॥ ५३ ॥ विपुल
 अयोमुख और सब प्रकार धातुसे मंडित तमाल वनगंध सुन्दर मलयपर्वत ॥ ५४ ॥ सुराष्ट्र सुवाह्नीक भोज पांडु वंश कलिंग ताम्रलित ॥ ५५ ॥
 अंध्र पुंड्र वामचूड केरल देशोंसहित उस दैत्यने अप्सरा और दैत्योंको भुजित कर डाला ॥ ५६ ॥ अगम्य पूर्वनिर्मित अगस्त्यभवन सिद्ध चारणोंके
 रक्ततोयो भीमवेगो लोहित्यो नाम सागरः ॥ शुभः पाण्डुरमेवाभः क्षीरोदश्चैव सागरः ॥ ५१ ॥ उदयश्चैव राजेन्द्र उच्छ्रितः
 शतयोजनम् ॥ सुवर्णवेदिकः श्रीमान्नागपाशनिषेवितः ॥ ५२ ॥ आजमानोऽर्कसदृशैर्जातरूपमयेर्दुमैः ॥ शालैस्तालेस्तमालैश्च
 कर्णिकाभिश्च पुष्पितैः ॥ ५३ ॥ अयोमुखश्च विपुलः सर्वतो धातुमण्डितः ॥ तमालवनगन्धश्च पर्वतो मलयः शुभः ॥ ५४ ॥
 सुराष्ट्राश्च सुवाह्नीकाः शूराभीरास्तथैव च ॥ भोजः पाण्ड्याश्च वङ्गाश्च कालिङ्गास्ताम्रलितकाः ॥ ५५ ॥ तथैवान्ध्राश्च पुण्ड्राश्च
 वामचूडाः सकेरलाः ॥ क्षोभितास्तेन दैत्येन सदेवाः साप्सरोगणाः ॥ ५६ ॥ अगस्तिभुवनं चैव यदगम्यं पुरा कृतम् ॥ सिद्धचारणस-
 द्वैश्च सेवितं सुमनोहरम् ॥ ५७ ॥ विचित्रनागविहंगं सुपुष्पितलताद्रुमम् ॥ जातरूपमयैः शृङ्गेरप्सरोगणसेवितम् ॥ ५८ ॥ गिरिः
 पुष्पितकश्चैव लक्ष्मीवान्प्रियदर्शनः ॥ उत्थितः सागरं भित्त्वा वयस्यश्चन्द्रसूर्ययोः ॥ ५९ ॥ रराज सुमहाशृङ्गेर्गगनं विलिखन्निव ॥ सूर्य-
 चन्द्रांशुसंकाशैः सागराम्बुसमावृतः ॥ ६० ॥

समूहोंसे सेवित ॥ ५७ ॥ विचित्र नाग विहंगमोंसे युक्त पुष्पित लतावाले वृक्षोंसे व्याप्त सुवर्णके शृंगवाले पर्वत अप्सराओंसे सेवित ॥ ५८ ॥ पुष्पोंसे
 व्याप्त पर्वत लक्ष्मीकी समान प्रियदर्शन सागरको भेदकर चन्द्रसूर्यकी समान उठा ॥ ५९ ॥ और महाशृंगोंसे आकाशको छिन्नता हुआसा शोभित हुआ
 चन्द्रसूर्यकी समान कान्तिवाले सागरके जलसे व्याप्त ॥ ६० ॥

विद्युद्धान् श्रीमान् पर्वत सौ योजन ऊंचा कि जिस पर्वतपर बारंवार बिजलीका पात होता है ॥ ६१ ॥ सन्ने अथ श्रीमान् ऋत पर्वत कुंजर पर्वत
जिसपर अगस्त्यजीका बड़ा घर है ॥ ६२ ॥ विशाल गलीवाली दुर्धष सर्पोंकी पुरी तथा भोगवती पुरी उस दैत्यके भयसे कंपित हो गई ॥ ६३ ॥
महामेघ पारियात्र पर्वत चक्रवाक गिरि वाराहपर्वत ॥ ६४ ॥ प्राग्ज्योतिषपुर जो सुवर्णमय है जिसमें दुष्टात्मा नरक नाम दैत्य निवास करता है ॥ ६५ ॥
पर्वतश्रेष्ठ मेरु महागंभीर शब्दसे युक्त है राजन् ! जिसके चारों ओर साठ सहस्र पर्वत हैं ॥ ६६ ॥ तरुणसूर्यकी समान महेन्द्र पर्वत वह पर्वतराज

विद्युद्धान्पर्वतः श्रीमानायतः शतयोजनम् ॥ विद्युता यत्र संपाता निपात्यन्ते नगोत्तमे ॥ ६१ ॥ ऋषभः पर्वतश्चैव श्रीमानृषभसं-
स्थितः ॥ कुञ्जरः पर्वतश्चैव यत्रागस्त्यगृहं महत् ॥ ६२ ॥ विशालरथ्या दुर्धषा सर्पाणामालया पुरी ॥ तथा भोगवती चापि
दैत्येन्द्रेणाभिकम्पिता ॥ ६३ ॥ महामेघगिरिश्चैव पारियात्रश्च पर्वतः ॥ चक्रवांश्च गिरिः श्रेष्ठो वाराहश्चैव पर्वतः ॥ ६४ ॥ प्राग्ज्यो-
तिषपुरं चैव जातरूपमयं शुभम् ॥ यस्मिन्वसति दुष्टात्मा नरको नाम दानवः ॥ ६५ ॥ मेरुश्च पर्वतश्रेष्ठो मेघगम्भीरनिःस्वनः ॥
षष्टिं तत्र सहस्राणि पर्वतानां विशांपते ॥ ६६ ॥ तरुणादित्यसंकाशो महेन्द्रश्च महागिरिः ॥ देवावासः शुभः पुण्यो गिरिराजो दिवं
गतः ॥ ६७ ॥ हेमशृङ्गो महाक्षौलस्तथा मेघसखो गिरिः ॥ कैलासश्चापि दुष्कम्पो दानवेन्द्रेण कम्पितः ॥ ६८ ॥ यक्षराक्षसगन्धर्व-
नित्यं सेवितकन्दरः ॥ श्रीमान्मनोहरश्चैव नित्यं पुष्पितपादपः ॥ ६९ ॥ हेमपुष्करसंच्छन्नं तेन वैखानसं सरः ॥ कम्पितं मानसं
चैव राजहंसैर्निषेवितम् ॥ ७० ॥ विशृङ्गः पर्वतश्चैव कुमारी च सरिद्धरा ॥ तुषारचयसंकाशो मन्दरश्चैव पर्वतः ॥ ७१ ॥ उशीर
बीजश्च गिरी रुद्रोपस्थस्तथाद्रिराट् ॥ प्रजापतेश्च निलयस्तथा पुष्करपर्वतः ॥ ७२ ॥

देवताओंका निवासस्थान होनेसे मानो स्वर्गमें प्राप्त है ॥ ६७ ॥ हेमशृंग महापर्वत मेघसखा और दुष्कंप कैलासको भी दानवेन्द्रने कंपित कर दिया ॥ ६८ ॥
जिसकी कंदरा नित्य यक्षराक्षसोंसे सेवित हैं श्रीमान् मनोहर नित्य पुष्पितवृक्षोंवाले ॥ ६९ ॥ तथा हेमकमलसे व्याप्त वैखानस सरोवर और राजहं-
सोंसे सेवित मानससरोवरभी कंपित कर दिया ॥ ७० ॥ विशृंग पर्वत नदीश्रेष्ठ कुमारी तुषारसमूहकी समान मंदर पर्वत ॥ ७१ ॥ उशीर बीज पर्वत रुद्रके

निवासका स्थान पर्वतराज प्रजापतिका स्थान पुष्कर पर्वत ॥ ७२ ॥ देवावृत पर्वत वालुकपर्वत कौंच सप्तर्षि तथा धूमपर्वत ॥ ७३ ॥ यह पर्वत तथा देश और जनपद नदी और सागर सब उस दानवने कंपित कर दिये ॥ ७४ ॥ महीपुत्र व्याघ्राक्ष और कपिल आकाशचारी निशाके पुत्र पातालतलके निवास करनेवाले ॥ ७५ ॥ रुद्रके गण मेघनाद करनेवाले अंकुश हाथमें लिये ऊर्ध्वगामी भीमवेगवान् सबही कंपित कर दिये ॥ ७६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां नारसिंहे षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४६ ॥ वैशंपायन बोले, आदित्य साध्य विश्वेदेवा मरुत रुद्र देव देवावृतपर्वतश्चैव तथा वै वालुकागिरिः ॥ क्रौञ्चः सप्तर्षिर्लोलश्च धूमवर्णश्च पर्वतः ॥ ७३ ॥ एते चान्ये च गिरयो देशा जनपदास्तथा ॥ नद्यश्च सागराश्चैव दानवेन्द्रेण कम्पिताः ॥ ७४ ॥ कपिलश्च महीपुत्रो व्याघ्राक्षश्चैव कम्पितः ॥ खेचराश्च निशापुत्राः पातालतलवासिनः ॥ ७५ ॥ गणास्तथा परे रोद्रा मेघनादाङ्कुशायुधाः ॥ ऊर्ध्वगो भीमवेगश्च सर्व एवाभिकम्पिताः ॥ ७६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि नारसिंहे षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तत्रादित्याश्च साध्याश्च विश्वे च मरुतस्तथा ॥ रुद्रा देवा महात्मानो वसवश्च महाबलाः ॥ १ ॥ आगम्य ते मृगेन्द्रस्य सकाशं सूर्यवर्चसः ॥ ऊचुः संतस्तमनसो देवा लोकक्षयादिताः ॥ २ ॥ जहि देव दितेः पुत्रं दानवं लोकनाशनम् ॥ दुर्वृत्तमसदाचारं सह सर्वमहासुरैः ॥ ३ ॥ त्वं ह्येषामन्तकृष्णान्यो दैत्यानां दैत्यनाशन ॥ तत्राक्षय हितार्थाय लोकानां स्वास्ति वै कुरु ॥ ४ ॥ त्वं गुरुः सर्वलोकानां त्वमिन्द्रस्त्वं पितामहः ॥ ऋते त्वदन्यच्छरणं न भूतं न भविष्यति ॥ ५ ॥ तच्छ्रुत्वा वचनं देवो देवानामादिसंभवः ॥ ननाद सुमहानादमतिगम्भीरनिःस्वनम् ॥ ६ ॥ महात्मा वसु महाबली ॥ १ ॥ वै सूर्यकी समान प्रकाशमान मृगेन्द्रके निकट आकर लोकक्षयसे व्याकुलमन हो नारायणसे बोले ॥ २ ॥ हे देव ! लोकनाशी इस दितिके पुत्र दैत्यको मारो, यह बड़ा दुर्वृत्त असदाचारसे युक्त सब असुरोंसे युक्त है ॥ ३ ॥ हे दैत्यनाशन ! तुमही इन दैत्योंके नाशक हो अन्य कोई नहीं है सो लोकके हितके निमित्त इसको मारकर जगतका मंगल करो ॥ ४ ॥ तुम सब लोकोंके गुरु इन्द्र और पितामह हो, तुम्हारे सिवाय न कोई शरणदाता है न होगा ॥ ५ ॥ देवोंके आदिसंभव देव यह देवताओंके वचन सुन आतिगम्भीर शब्दोंसे पहानाद करने लगे ॥ ६ ॥

इस महासिंहनादसे नृसिंहजीने असुरोंके हृदय फाड़ डाले और मन व्याकुल कर दिखे ॥ ७ ॥ क्रोधवश नाम गण कालकेय वेग वेगलेय महाबली सिंह-
केय ॥ ८ ॥ संहारीय महानाद महावेगवान् कपिल महीपुत्र व्याघ्राक्ष क्षितिकंपन ॥ ९ ॥ खेचर निशापुत्र पातालतलनिवासी गण परम रौद्र मेघनाद अंकुश
आयुध ॥ १० ॥ ऊर्ध्वगामी भीमवेग भीम सूर्यलोचन वज्री शूली कराल हिरण्यकशिपु ॥ ११ ॥ घनमेघकी समान प्रकाशमान, मेघकी समान वेग-
वान् घने बादलकी समान शब्द तथा मेघकी समान कान्तिवाले दर्पित दैत्यगण मृगेन्द्रके प्रति धावमान हुए ॥ १२ ॥ देवारि दितिपुत्र क्रोधकर नृसिंहके

पाष्टितान्यसुरेन्द्राणां मृगेन्द्रेण महात्मना ॥ सिंहनादेन महता हृदयानि मनांसि च ॥ ७ ॥ गणः क्रोधवशो नाम कालकेयस्तथा परः ॥
वेगश्च वेगेलयश्च सिंहिकेयश्च वीर्यवान् ॥ ८ ॥ संहारीयो महानादो महावेगस्तथा परः ॥ कपिलश्च महीपुत्रो व्याघ्राक्षः क्षिति
कम्पमः ॥ ९ ॥ खेचराश्च निशापुत्राः पातालतलचारिणः ॥ गणस्तथा परो रौद्रो मेघनादोऽङ्कुशायुधः ॥ १० ॥ ऊर्ध्वगो भीमवेगश्च
भीमकर्माङ्कलोचनः ॥ वज्री शूली करालश्च हिरण्यकशिपुस्ततः ॥ ११ ॥ जीमूतघनसंकाशो जीमूत इव वेगवान् ॥ जीमूतघनसं
नादो जीमूतसदृशद्युतिः ॥ हस्तेर्दैत्यगणैस्तुष्टो मृगेन्द्रेण महात्मना ॥ १२ ॥ देवारिर्दितिजो हस्तो नृसिंहं समुपाद्रवत् ॥ समुत्पत्य
ततस्तीक्ष्णैर्मृगेन्द्रेण महानखैः ॥ १३ ॥ तत्रोद्धारसहायेन विदार्य निहतो युधि ॥ १४ ॥ मही च लोकश्च शशी नभश्च ग्रहाश्च सूर्यश्च
दिशश्च सर्वाः ॥ नद्यश्च शैलाश्च महार्णवाश्च गताः प्रकाशं दितिपुत्रनाशात् ॥ १५ ॥ ततः प्रमुदिता देवा ऋषयश्च तपोधनाः ॥
तुष्टुर्विविधैः स्तोत्रैरादिदेवं सनातनम् ॥ १६ ॥ देवा ऊचुः ॥ यत्त्वया विहितं देव नारसिंहमिदं वपुः ॥ एतदेवार्चयिष्यन्ति परावर-
विदो जनाः ॥ मृगेन्द्रत्वं च लोकेषु सर्वसत्त्वेषु वा विभो ॥ १७ ॥

ऊपर झपटा तब इसके आनेपर मृगेन्द्रने अपने तीक्ष्ण महानखोंसे ॥ १३ ॥ ओंकारकी सहायता द्वारा विदीर्ण कर डाला ॥ १४ ॥ मही लोक चन्द्रमा
आकाश ग्रह सूर्य सम्पूर्ण दिशा नदी शैल उस दैत्यके मरनेसे प्रकाशित हुए ॥ १५ ॥ तब प्रसन्न हो देवता और तपोधन ऋषि आदि देव सनातन
नारायणको अनेक स्तुतियोंसे प्रसन्न करते हुए ॥ १६ ॥ देवता बोले, हे देव ! जो आपने नृसिंहशरीर धारण किया है इसको परभवरके जाननेवाले

पूजन करेंगे, हे विभो ! आप आजसे सब जीवोंमें तथा प्राणियोंमें अधिक होनेसे मृगेन्द्र हुए ॥ १७ ॥ तुमको सुनि नित्य मृगेन्द्र कहकर गावेंगे हे विभो ! आपके प्रसादसे हम अपने स्थानको प्राप्त हुए ॥ १८ ॥ देवताओंके ऐसे कहनेपर महामनवाले नृसिंहजी प्रसन्न हुए और प्रसन्न हो ब्रह्माजी विष्णुकी स्तुति करने लगे ॥ १९ ॥ आपही अक्षर अव्यक्त अचिन्त्य गुह्य तथा उत्तम हो कूटस्थ अकृत कर्ता सनातन अनामय हो ॥ २० ॥ जो तत्त्वार्थमें निष्ठित सांख्य योगकी बुद्धि है वह उसके द्वारा आपही वेद विद्यात्मा पुरुष निरन्तर ध्रुव जाने

गायन्ति त्वां च सुमयो मृगेन्द्र इति नित्यशः ॥ त्वत्प्रसादात्स्वकं स्थानं प्रतिपन्नाः स्म वै विभो ॥ १८ ॥ एवमुक्तो देवसंचेनरसिंहो महामनाः ॥ ब्रह्मा च परमप्रीतो विष्णोः स्तोत्रमुदीरयत् ॥ १९ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ भवानक्षरमव्यक्तमाचिन्त्यं गुह्यमुत्तमम् ॥ कूटस्थमकृतं कर्तृ सनातनमनामयम् ॥ २० ॥ सांख्ययोगे च या बुद्धिस्तत्त्वार्थपरिनिष्ठिता ॥ तां भवान्वेद विद्यात्मा पुरुषः शाश्वतो ध्रुवः ॥ २१ ॥ त्वं व्यक्तस्य तथाव्यक्तस्त्वत्तः सर्वमिदं जगत् ॥ भवन्मया वयं देव भवानात्मा भवान्प्रभुः ॥ २२ ॥ चतुर्विभक्तमूर्तिं स्त्वं सर्वलोकविभुर्गुरुः ॥ चतुर्युगसहस्रेण सर्वलोकान्तकान्तकः ॥ २३ ॥ प्रतिष्ठा सर्वभूतानामनन्तबलपौरुषः ॥ कपिलप्रभृतीनां च यतीनां परमा गतिः ॥ २४ ॥ अनादिमध्यानिधनः सर्वात्मा पुरुषोत्तमः ॥ स्रष्टा त्वं त्वं च संहर्ता त्वमेको लोकभावनः ॥ २५ ॥ भवान्ब्रह्मा च रुद्रश्च महेन्द्रो वरुणो यमः ॥ भवान्कर्ता विकर्ता च लोकानां प्रभुरव्ययः ॥ २६ ॥

जाते हो ॥ २१ ॥ आप व्यक्त अव्यक्त स्वरूप हो तुमसेही यह सब जगत् स्थित है हम त्वन्मय हैं, हे देव ! आपही सबके आत्मा प्रभु हो ॥ २२ ॥ आप चतुर्विभक्तमूर्ति और सब लोकके गुरु हो चार सहस्र देवयुग बीचनेसे जगत् का अन्त करते हो ॥ २३ ॥ आपसेही सब भूतोंकी प्रतिष्ठा है आपमेंही अनन्त बल और पुरुषार्थ है आपही कपिल आदि यतियोंकी परम गति हो ॥ २४ ॥ आपही अनादि मध्य निधन सर्वात्मा पुरुषोत्तम हो आपही उत्पन्न और संहार करनेवाले एकही लोकभावन हो ॥ २५ ॥ आप ब्रह्मा रुद्र महेन्द्र वरुण यम हो आपही कर्ता विकर्ता लोकोंके अविनाशी प्रभु

हो ॥ २६ ॥ परम सिद्ध परम मंत्र परम मन परम धर्म परम यश अथ पुराणपुरुष आपहीको कहते हैं ॥ २७ ॥ परम सत्य परम हवि परम पवित्र परम मार्ग परम यज्ञ परम होत्र अथ पुराणपुरुष आपको कहते हैं ॥ २८ ॥ परम शरीर परम धाम परम योग परम वाणी परम रहस्य परम गति अथ पुराणपुरुष आपको कहते हैं ॥ २९ ॥ परंपरेसेभी परे जिससे कोई परे नहीं परमदेव परंपरासे परे प्रभु आपको अथ और पुराणपुरुष कहते हैं ॥ ३० ॥ परंपरेसेभी परे परम प्रधान परेसे परे तत्त्व परसे परे धाता अथ पुराणपुरुष आपको कहते हैं ॥ ३१ ॥ परसे परे परम रहस्य परसे परे परम तप अथ पुराण

परां च सिद्धिं परमं च देवं परं च मन्त्रं परमं मनश्च ॥ परं च धर्मं परमं यशश्च त्वामाहुर्ग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ २७ ॥ परं च सत्यं परमं हविश्च परं पवित्रं परमं च मार्गम् ॥ परं च यज्ञं परमं च होत्रं त्वामाहुर्ग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ २८ ॥ परं शरीरं परमं च धाम परं च योगं परमां च वाणीम् ॥ परं रहस्यं परमां गतिं च त्वामाहुर्ग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ २९ ॥ परं परस्यापि परं च यत्परं परं परस्यापि परं च देवम् ॥ परं परस्यापि परं प्रभुं च त्वामाहुर्ग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ ३० ॥ परं परस्यापि परं प्रधानं परं परस्यापि परं च तत्त्वम् ॥ परं परस्यापि परं च धाता त्वामाहुर्ग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ ३१ ॥ परं परस्यापि परं रहस्यं परं परस्यापि परं परं यत् ॥ परं परस्यापि परं तपो यत्त्वामाहुर्ग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ ३२ ॥ परं परस्यापि परं परायणं परं च गुह्यं च परं च धाम ॥ परं च योगं परमं प्रभुत्वं त्वामाहुर्ग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ ३३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमुक्त्वा स भगवान्सर्वलोकपितामहः ॥ स्तुत्वा नारायणं देवं ब्रह्मलोकं गतः प्रभुः ॥ ३४ ॥ ततो नदत्सु तूर्येषु नृत्यन्तीष्वप्सरःसु च ॥ क्षीरोदस्योत्तरं कूलं जगाम प्रभुरीश्वरः ॥ ३५ ॥ नारसिंहीं तनुं त्यक्त्वा स्थापयित्वा च तद्वपुः ॥ पौराणं रूपमास्थाय ययौ स गरुडध्वजः ॥ ३६ ॥

पुरुष आपको कहते हैं ॥ ३२ ॥ परंपरेसे परे परायण परम गुह्य परम धाम परम योग परम प्रभु आपको अथ पुरातन पुरुष कहते हैं ॥ ३३ ॥ वैशम्पायन बोले; इस प्रकार सब लोकके पितामहने जब कहा तब नारायणदेवकी स्तुति कर अपने ब्रह्मलोकको चले गये तब बाजोंके बजने और अप्सराओंके नृत्य करनेपर भगवान् क्षीरसागरके उत्तर तटपर चले गये ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ वहां उस नारसिंहशरीरको अदृश्य कर उसकी प्रतिमा स्थापन कर

पुराण चतुर्भुजरूपमें स्थित हो नारायण चले गये ॥ ३६ ॥ आठ चक्रके विभूति शोभित विमान अर्थात् श्रुतिप्रसिद्ध शब्द श्रोत्रादि ग्रह अतिग्राह्यरूपसे निरन्तर चाल्यमान देहस्त्री साधनसे वे अव्यक्त प्रकृति आठ आकारवाली है. उस अहंकारसे निकट देवात्मा नृसिंहरूपी अपने स्थान चिन्मात्रस्वरूपको प्राप्त हुए ॥ ३७ ॥ इस प्रकार नृसिंहरूपधारी इन महात्माने पूर्वकालमें हिरण्यकशिपु दैत्यका वध किया था ॥ ३८ ॥ इति श्रीमहा० खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पंडितज्वालाप्रसादमिश्रकृतभाषायां नारसिंहप्रादुर्भावे हिरण्यकशिपुवधकथनं नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥ वैशंपायन बोले, नृसिंहचरित्र वर्णन किया अब फिरभी इसके उपरान्त वामनचरित्र वर्णन कते हैं जिसमें रूप धारण करनेवालोंमें श्रेष्ठ नारायणने वामनरूप धारण किया ॥ १ ॥

अष्टचक्रेण यानेन भूतियुक्तेन शोभिना ॥ अव्यक्तः प्रकृतिर्देवः सस्थानमगमत्प्रभुः ॥ ३७ ॥ एवं महात्मना तेन नृसिंहवपुषा तदा ॥ देवेन निहतः पूर्वं हिरण्यकशिपुश्च सः ॥ ३८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि नारसिंहप्रादुर्भावे हिरण्यकशिपुवधकथनं नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ नृसिंह एष कथितो भूयोऽयं वामनो परः ॥ यत्र वामनमास्थाय रूपं रूपविदां वरः ॥ १ ॥ बलेर्बलवतो यज्ञो बलिना विष्णुना पुरा ॥ विक्रमैस्त्रिभिराक्रम्य त्रैलोक्यमखिलं हृतम् ॥ २ ॥ समुद्रवसना चोर्वी नानानगविभूषिता ॥ हृत्वा दत्त्वा सुरेन्द्राय शक्राय प्रभविष्णुना ॥ ३ ॥ जनमेजय उवाच ॥ अत्र मे संशयो ब्रह्मन्नत्र कौतूहलं महत् ॥ कथं नारायणो देवो वामनत्वमुपागतः ॥ ४ ॥ यः पुराणे पुराणात्मा भूत्वा नारायणः प्रभुः ॥ पद्मनाभो महाबाहुलोकानां प्रकृतिर्ध्रुवः ॥ ५ ॥ अनादिमध्यानिधनस्त्रैलोक्यादिः सनातनः ॥ देवदेवः सुराध्यक्षः कृष्णो लोकनमस्कृतः ॥ ६ ॥

बलि बलिके यज्ञमें महाबली विष्णुने अपने विक्रमसे त्रिलोकीको वशीभूत कर लिया था ॥ २ ॥ समुद्रपर्यन्त यह पृथ्वी अनेक पर्वतोंसे युक्त हरण कर विष्णुने सुरेन्द्रके निमित्त प्रदान की थी ॥ ३ ॥ जनमेजय बोले, हे ब्रह्मन् ! इसमें मुझे परम कुतूहल और संदेहभी है कि नारायणदेवने क्यों वामन-शरीर धारण किया ॥ ४ ॥ जो पुराणोंमें पुराणात्मा गाया जाता है वह नारायण प्रभु पद्मनाभ महाबाहु लोकोंकी प्रकृति ध्रुवरूप ॥ ५ ॥ अनादि मध्य निधन त्रैलोक्यके आदि सनातन देवदेव सुरोंके अध्यक्ष कृष्ण लोकसे नमस्कृत ॥ ६ ॥

हव्य कव्य ले जानेवाले श्रीमान् हव्यकव्यभोजी अविनाशी है वह देवमाता अदितिके गर्भमें कैसे प्राप्त हुए जो इन्द्रकेभी सखा हैं वह किस प्रकार वासवके अनुज हुए ॥ ७ ॥ वह उत्पन्न हो देवेश किस प्रकार विष्णुत्वको प्राप्त हुए हे विप्र ! आप उन महात्माका प्रादुर्भाव मुझसे कहिये ॥ ८ ॥ वेशंपापन बोले; ऋषिश्रेष्ठोंसे पूजित इस कथाको श्रवण कीजिये जो पुराणोंमें विद्वानोंने कही है और ब्रह्माकी प्रेरणासे है अर्थात् नारायणका देवताओंमें पक्षपात नहीं है, सत्त्वप्रधानरूप देवताओंके हैं, रजप्रधानरूप यक्षराक्षसोंके, तमप्रधानरूप भूत प्रेत पिशाचादिके होते हैं, सतोगुण सतोगुणको आकर्षण करता है, इस कारण नारायण देवताओंकी ओर सत्त्वगुणोंको प्राप्त होते हैं इन्द्रकेही पृथ्वीके बीज अंकुर तरुफलकी समान पांच रूप हैं अर्थात्

हव्यकव्यवहः श्रीमान् हव्यकव्यभुगव्ययः ॥ अदित्या देवमातुश्च कथं गर्भेऽभवत्प्रभुः ॥ सखा यो वासवस्यापि स कथं वासवानुजः ॥ ७ ॥ प्रसूतो देवदेवेशो विष्णुत्वं प्राप्तवान्कथम् ॥ एतदाचक्ष्व मे विप्र प्रादुर्भावं महात्मनः ॥ ८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ शृणु राजन्कथां दिव्यामर्चितामृषिपुङ्गवैः ॥ पुराणैः कविभिः प्रोक्तां ब्रह्मोक्तां ब्राह्मणेरिताम् ॥ ९ ॥ मरीचस्य सुरेशस्य कश्यपस्य प्रजापतेः ॥ अदितिर्दितिर्द्वे भार्ये भगिन्यौ जनमेजय ॥ १० ॥ अदित्यां जज्ञिरे देवाः कश्यपस्य महात्मनः ॥ धातार्यमा च मित्रश्च वरुणोऽशो भगस्तथा ॥ ११ ॥ इन्द्रो विवस्वान्पूषा च पर्जन्यो दशमस्तथा ॥ तथैकादशमस्त्वष्टा द्वादशो विष्णुरुच्यते ॥ १२ ॥

शुद्ध शबल सूत्र विराट् विष्णुसंज्ञक उसमें शुद्ध निर्विशेष है विष्णु सर्वविशेषमें युक्त है और राजाकी समान शिष्टोंपर अनुग्रह दुष्टोंपर निग्रह करता है यद्यपि सब उसीके अंग हैं परन्तु (त्याज्यो दुष्टः प्रियोऽप्यासीदंगुलीवोरगक्षता) अर्थात् सर्पसे काटी हुई अपनी अंगुलीभी तो त्याज्य है दुष्टकी तो कौन कहे इसी न्यायसे दुष्टोंका निग्रह करते हैं ॥ ९ ॥ देवताओंके ईश मरीचपुत्र कश्यपके अदिति और दिति यह दो विख्यात भार्या थीं ॥ १० ॥ महात्मा कश्यपसे अदितिमें देवता हुए धाता अर्यमा मित्र वरुण अंश भग ॥ ११ ॥ इन्द्र विवस्वान् पूषा और दशवां पर्जन्य ग्यारहवां त्वष्टा और बार-

हवां विष्णु कहलाता है ॥ १२ ॥ दितिके बलवान् हिरण्यकश्यप हुआ उसका अनुज महाप्रतापी हिरण्याक्ष हुआ ॥ १३ ॥ हिरण्याक्षशिपुके घोर पराक्रमी पांच पुत्र हुए प्रहाद अनुहाद जम्भ अनुहद और संह्राद ॥ १४ ॥ प्रहादके विरोचन और उसका पुत्र बलि हुआ उनके बड़े बली पुत्र और पौत्र अनेक हुए ॥ १५ ॥ वे तेजस्वी सुरारि दैत्येन्द्र मनस्वी जनोंके अनेक गण देशदेशमें स्थित हो गये ॥ १६ ॥ जब उन्होंने यह देखा कि नारसिंहेने हिरण्यकशिपुको मार डाला तब दैत्योंने देवताओंके वधके निमित्त बलिको इन्द्र किया ॥ १७ ॥ इनको धर्ममें तत्पर सत्यवाक् जितेन्द्रिय शूरता

दित्यां जातो हि बलवान् हिरण्यकशिपुः प्रभुः ॥ तस्यानुजस्य दैत्येन्द्रो हिरण्याक्षः प्रतापवान् ॥ १३ ॥ हिरण्यकशिपोः पुत्राः पञ्च घोरपराक्रमाः ॥ प्रहादश्चानुहादश्च जम्भः संह्राद एव च ॥ १४ ॥ विरोचनश्च प्राहादिस्तस्य पुत्रो बलिः स्मृतः ॥ पुत्रपौत्रं च बलवत्तेषामक्षयमव्ययम् ॥ १५ ॥ तेजस्विनां सुरारिणां दैत्येन्द्राणां मनस्विनाम् ॥ गणाः सुबहुशो राजन् देशे देशे सहस्रशः ॥ १६ ॥ ते दृष्ट्वा नारसिंहेन हिरण्यकशिपुं हतम् ॥ दैत्या देववधार्थाय बलिमिन्द्रं प्रचक्रिरे ॥ १७ ॥ दृष्ट्वा धर्मपरं नित्यं सत्यवाक्यं जितेन्द्रियम् ॥ शौर्याध्ययनसंपन्नं सर्वज्ञानविशारदम् ॥ १८ ॥ परावरगृहीतार्थं तत्त्वदर्शिनमव्ययम् ॥ तेजस्विनं सुररिपुं हिरण्यकशिपुं यथा ॥ १९ ॥ अभिषेकेण दिव्येन बलिं वैरोचनिं तथा ॥ दैत्याधिपत्ये दितिजास्तदा सर्वेऽभ्यपूजयन् ॥ २० ॥ अभिषिक्तस्तदा दैत्यैर्बलिर्बलवतां वरः ॥ ब्रह्मणा चैव तुष्टेन हिरण्यकशिपोः पदे ॥ २१ ॥ अभिषिक्तोऽसुरगणैर्बलिवैरोचनिस्तदा ॥ काञ्चनैः कलशैः स्फीतैः सर्वतीर्थाम्बुसंवृतैः ॥ २२ ॥

अध्ययनमें सम्पन्न सम्पूर्ण ज्ञानमें विशारद देखकर ॥ १८ ॥ किं पर अपरके अर्थ ग्रहण करनेमें समर्थ तत्त्वदर्शी अव्यय तेजस्वी सुररिपु हिरण्यकशिपुकी समान देखा ॥ १९ ॥ तब विरोचनपुत्र बलिको दिव्य अभिषेक किया सभ दानवोंने उसको दैत्योंके आधिपत्यमें पूजन किया ॥ २० ॥ तब इस प्रकार दैत्योंने महाबली बलिका अभिषेक किया ब्रह्माकी संतुष्टतासे हिरण्यकशिपुके पदमें स्थापित किया ॥ २१ ॥ इस प्रकार असुरोंने सब

तीर्थोंसे सोनेके कलशोंमें जल लाकर बलिको अभिषेक किया ॥ २२ ॥ अभिषेक करके फिर दानव जयशब्द करने लगे जब कि अतुलबलवान् बली सिंहासनपर स्थित हुए थे ॥ २३ ॥ इस प्रकार बली बलिको यह दैत्य अभिषेक कर अपने शिर पृथ्वीमें झुकाकर प्रार्थना करने लगे ॥ २४ ॥ दैत्य बोले, हे दैत्येन्द्र ! आपको विदित है जिस प्रकार हिरण्यकशिपुके वक्षवर्ती स्थावर जंगमात्मक त्रिलोकी थी ॥ २५ ॥ नारायणने उन तुम्हारे पितामहको मारकर त्रिलोकी हरण कर इन्द्रको अभिषेक किया है ॥ २६ ॥ सो आप अपने पितामहके राज्य लौटानेको योग्य है, हे नाथ !

जयशब्दं ततश्चकुरभिषिक्तस्य दानवाः ॥ बलेरतुलवीर्यस्य सिंहासनगतस्य वै ॥ २३ ॥ कृत्वेन्द्रं दानवाः सर्वे बलिं बलवतां वरम् ॥ ततो विज्ञापयामासुः शिरोभिः पतिताः क्षितौ ॥ २४ ॥ दैत्या ऊचुः ॥ विदितं तव दैत्येन्द्र हिरण्यकशिपोर्यथा ॥ त्रैलोक्यमासीदखिलं जगत्स्थावरजङ्गमम् ॥ २५ ॥ पितामहं तु हत्वा ते सुरेश्वरमिषूदन ॥ हतं तदैव त्रैलोक्यं शक्रश्चैवाभिषेचितः ॥ २६ ॥ तत्पितामहराज्यं त्वं प्रत्याहर्तुमिहाहंसि ॥ अस्माभिः सहितो नाथ त्रैलोक्यमिदमव्ययम् ॥ २७ ॥ प्रत्यानयस्व भद्रं ते राज्यं पैतामहं प्रभो ॥ २८ ॥ असुरगणसहस्रसंवृतस्त्वं जय दिवि देवगणान्महानुभावान् ॥ अमितबलपराक्रमोऽसि राजन्नतिशयसे स्वगुणैः पितामहं स्वम् ॥ २९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामने बलेरभिषेको नाम अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ निश्चय्य तेषां वचनं महामतिर्बलिस्तदा प्रीतमना महाबलः ॥ आज्ञापयामास स दैत्यकोटिं त्रैलोक्यमद्यैव जयाम सर्वम् ॥ १ ॥

हमारे सहित यह त्रिलोकी ॥ २७ ॥ आप फेर लीजिये आपका मंगल हो पितामहका राज्य स्वीकार करो ॥ २८ ॥ सहस्रों असुरभणोंके सहित तुम स्वर्गमें रहनेवाले महानुभाव देवताओंको जीतो, हे राजन् ! तुम अमितबल और पराक्रमसे युक्त हो और गुणोंमें अपने पितामहसे अधिक हो ॥ २९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने बलेरभिषेको नाम अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥ वैशम्पायन बोले, महाबली उनके यह वचन सुन बहुत प्रसन्न हुए और वह दैत्यसमूहको आज्ञा देता हुआ कि हम सब अभी त्रिलोकीका जय करें ॥ १ ॥

इत प्रकार विरोचनपुत्र बलिके वचन सुन युद्धदुर्मद दानव परम उद्योग करने लगे ॥ २ ॥ महापद्म निकुंभ कुम्भकर्ण कांचनाक्ष कपिस्कंध मैनाक
क्षितिकम्पन ॥ ३ ॥ शितकेश ऊर्ध्ववक्र वज्रनाभ शिखाजटावाला सहस्रबाहु विकट व्याघ्राक्ष प्रियदर्शन ॥ ४ ॥ एकाक्ष एकपाद सुंद विद्युदक्ष चतु-
र्भुज गजोदर गजशिरा गजस्कंध गजेश्वर ॥ ५ ॥ अष्टदंष्ट्र चतुरवक्र मेघनादी जलंधर कराल ज्वालजिह्वासुख शतांग शतलोचन ॥ ६ ॥ सहस्रपाद
सुमुख कृष्ण महाअसुर रणोत्कट दानपति शैलकंपी कुलाकुली ॥ ७ ॥ समुद्र रभस चण्ड महाअसुर धूम्र गोत्रज गोक्षुर रौद्र गोदन्त स्वस्तिक
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा बलैर्वैरोचनस्य तु ॥ उद्योगं परमं चक्रुर्दानवा युद्धदुर्मदाः ॥ २ ॥ महापद्मो निकुम्भश्च कुम्भकर्णश्च वीर्य-
वान् ॥ काञ्चनाक्षः कपिस्कन्धो मैनाकः क्षितिकम्पनः ॥ ३ ॥ शितकेशोर्ध्ववक्रश्च वज्रनाभः शिखी जटी ॥ सहस्रबाहुर्विकटो
व्याघ्राक्षः प्रियदर्शनः ॥ ४ ॥ एकाक्ष एकपादमुण्डो विद्युदक्षश्चतुर्भुजः ॥ गजोदरो गजशिरा गजस्कन्धो गजेश्वरः ॥ ५ ॥ अष्टदंष्ट्रश्च-
तुर्वक्रो मेघनादी जलंधरः ॥ करालो ज्वालजिह्वास्यः शताङ्गः शतलोचनः ॥ ६ ॥ सहस्रपादः सुमुखः कृष्णश्चैव महासुरः ॥ रणो-
त्कटो दानपतिः शैलकम्पी कुलाकुलिः ॥ ७ ॥ समुद्रो रभसश्चण्डो धूम्रश्चैव महासुरः ॥ गोत्रजो गोक्षुरो रौद्रो गोदन्तः स्वस्तिको
ध्रुवः ॥ ८ ॥ मांसलो मांसभक्षश्च वेगवान्केतुमाञ्छिविः ॥ पङ्कदिग्धशरीरश्च बृहत्कीर्तिर्महाहनुः ॥ ९ ॥ समप्रभो विकुम्भाण्डो
विरूपाक्षो महोदरः ॥ श्वेतशीर्षश्चन्द्रहनुश्चन्द्रहा चन्द्रतापनः ॥ १० ॥ विक्षरो दीर्घबाहुश्च मद्यपो मारुताशनः ॥ तालजङ्घो महाभागः
सरभः शलभः क्रथः ॥ ११ ॥ समुद्रमथनो नादी विततश्च महाबलः ॥ प्रलम्बो नरको व्याली धेनुकः काललोचनः ॥ १२ ॥
वरिष्ठश्च गरिष्ठश्च भूतलोमा तथा विधुः ॥ दुष्प्रसादः किरीटी च सूचीवक्रो महासुरः ॥ १३ ॥
ध्रुवः ॥ ८ ॥ मांसल मांसभक्ष वेगवान् केतुमान् शिवि पङ्कदिग्धशरीर बृहत्कीर्तिवाले महाहनु (ठोड़ी) वाले ॥ ९ ॥ समप्रभ विकुम्भाण्ड विरूपाक्ष
महोदर श्वेतशीर्ष चन्द्रहनु चन्द्रहा चन्द्रतापन ॥ १० ॥ विक्षर दीर्घबाहु मद्यप मारुताशन तालजंघ महाभाग सरभ शलभ क्रथ ॥ ११ ॥ समुद्रम-
थन नादी वितत महाबल प्रलम्ब नरक व्याली काललोचन ॥ १२ ॥ वरिष्ठ गरिष्ठ भूतलोमा विधु दुष्प्रसाद किरीटी सूचीवक्र महाअसुर ॥ १३ ॥

सुबाहु कंजबाहु करण कलशोदर सोमपा देवयाजी प्रवर वीरमर्दन ॥ १४ ॥ सुपथ खण्डमुक्ति शिखिनेत्र शिखिध्वज यह मरीचिके कीर्ति बढ़ानेवाले
 दैत्य कहे ॥ १५ ॥ इनके सिवाय औरभी नानाभूषणोंसे भूषित अनेक सहस्रों रथोंमें स्थित हो युद्ध करनेको चले ॥ १६ ॥ यह दैत्य दिव्यवस्त्र
 और दिव्यमाला अनुलेपन किये दिव्य कवच पहरे दिव्य ध्वजाओंसे युक्त ॥ १७ ॥ दिव्य आयुधधारी दैत्य मेघकी समान गर्जन करते बड़े बड़े रथ-
 समूहोंसे पृथ्वीको चलायमान करते ॥ १८ ॥ महाबली दिव्य बलवाले अस्त्रधारी सर्पके शरीरकी समान महाभुजाओंसे व्याप्त दुर्जय दैत्योंमें श्रेष्ठ सुरारि

सुबाहुः कंजबाहुश्च करणः कलशोदरः ॥ सोमपा देवयाजी च प्रवरो वीरमर्दनः ॥ १४ ॥ सुपथः खण्डमुक्तिश्च शिखिनेत्रः
 शिखिध्वजः ॥ यथास्मृति मया प्रोक्ता मरीचेः कीर्तिवर्धनाः ॥ १५ ॥ एते चान्ये च बह्वो नानाभूषणभूषिताः ॥ रथोर्वेर्बहुसहस्रेष्व-
 युयुंहुमरिंदमाः ॥ १६ ॥ दिव्याम्बरधरा दैत्या दिव्यमाल्यानुलेपनाः ॥ दिव्यैश्च कवचैर्नद्धा दिव्यैश्चोच्छ्रितैर्ध्वजैः ॥ १७ ॥ दिव्यायुध-
 धधरा दैत्या गर्जमाना यथाम्बुदाः ॥ बृहद्भी रथचोषैश्च चालयन्तो वसुन्धराम् ॥ १८ ॥ महाबला दिव्यबलान्नाधारिणो भुजङ्गभो-
 गप्रातिमेर्महाभुजैः ॥ सुदुर्जया दैत्यवृषाः सुरारयो दितिप्रिया लोहितलोहितेक्षणाः ॥ १९ ॥ ते जगमुरर्कज्वलनेन्द्रवर्या महेन्द्रवज्राश-
 नितुल्यवेगाः ॥ विवृद्धदंष्ट्रा हरिधूम्रकेशा विवर्द्धमानाः शरदीष मेघाः ॥ २० ॥ सहस्रबाहुर्बाणश्च बभूव पुत्रा महाबलः ॥ रथातिरथ-
 कोट्या वै सन्नह्यत महाबलः ॥ २१ ॥ सर्वे मायाधरा दैत्याः सर्वे दिव्यास्त्रयोधिनः ॥ सर्वे मदबलोत्सिताः सर्वे लब्धवराः पुरा ॥ २२ ॥
 सर्वे काञ्चनशोलाभाः पतिकोशेयवाससः ॥ किरीटोष्णीषमुकुटा दिव्यभूषणभूषिताः ॥ २३ ॥

दितिप्रिय लोहितवर्ण लाल नेत्र किये ॥ १९ ॥ सूर्यके प्रकाशकी समान पराक्रमी महेन्द्रके वज्रकी तुल्य वेगवाले बड़ी ढाढ हरित वर्णके धुमैले केश
 बड़े हुए शरत्कालके मेघकी समान ॥ २० ॥ बलिका पुत्र सहस्र भुजावाला बाण जो करोड़ों अतिरथियोंसेभी महाबली था ॥ २१ ॥ यह सब
 दैत्य मायाके जाननेवाले दिव्य अस्त्रधारी मदके बलसे उत्सिक्त सम्पूर्ण वरदान पाये हुए ॥ २२ ॥ सब सुवर्णके पर्वतकी समान कान्तिमान् पीत-
 रेशमी वस्त्र पहरे किरीट पगड़ी मुकुट दिव्य भूषणोंसे भूषित ॥ २३ ॥

सबके सुवर्णके कवच सुवर्णकी ध्वजा आकाशमें शरहतुके ग्रहोंकी समान रथमें स्थित विराजमान होते थे ॥ २४ ॥ तपाये हुए उत्तम सुवर्ण और अग्निकी समान कान्तिमान् सुवर्ण पर्वतपर स्थित टेसूके फूलकी समान शोभित होते थे ॥ २५ ॥ उनके मध्यमें चोमासेके उठे हुए मेघकी समान बाण शोभित होता था और शक्ति गदा हाथमें लिये त्रिनल्व (१२०० हाथके) प्रमाण रथमें स्थित था ॥ २६ ॥ उसमें विचित्र चित्रित ध्वजा और विचित्र रचना थी वह रथ गदा और षरिघसे सम्पूर्ण सुवर्णजालसे विभूषित था ॥ २७ ॥ दैत्य इस प्रकार उसके साथ थे जैसे सूर्यके संग वालखिल्य ऋषि

हिरण्यकवचाः सर्वे हिरण्यध्वजकेतवः ॥ स्यन्दनस्था व्यराजन्त शारदा इव खे ग्रहाः ॥ २४ ॥ तापनीयैर्वैरैर्निर्णैरनलज्ज्वलितप्रभैः ॥ हेमपर्वतशृङ्गस्थाः पुष्पिता इव किंशुकाः ॥ २५ ॥ तेषां मध्यगतो बाणः प्रावृषीवोत्थितो घनः ॥ स्थितः शक्तिगदापाणिस्त्रिनल्व-
प्रतिमे रथे ॥ २६ ॥ विचित्राश्वध्वजयुगे चित्रभक्तिविराजिते ॥ गदापारिघसंपूर्णे हेमजालविभूषिते ॥ २७ ॥ अन्वीयमानो दितिजैर्वा-
लखिल्यैरिवांशुमान् ॥ नानाप्रहरणैर्घोरैस्तीक्ष्णदंष्ट्रैरिवोरगैः ॥ २८ ॥ पञ्च तस्य महावीर्या दानवा युद्धदुर्मदाः ॥ ररक्षू रथमव्यग्रा-
व्यादितास्या भयावहाः ॥ २९ ॥ सुबाहुर्मेघनादश्च भीमगर्भश्च वीर्यवान् ॥ तथा कनकमूर्धा च वेगवान्केतुमानिति ॥ ३० ॥
कनकरजतभक्तिचित्रपार्श्वे पतंगपतिप्रतिमे रथे स्थितोऽभूत् ॥ ललदानिनदतुल्यनेमिघोषे सुरगणसैन्यवधाय दानवेन्द्रः ॥ ३१ ॥
अनायुषायाः पुत्रस्तु बलो नाम महासुरः ॥ वृतः शतसहस्रेण रथानां भीमवर्चसाम् ॥ ३२ ॥ युक्तमृक्षसहस्रेण रथमारुह्य वीर्यवान् ॥
नीलायसमयं घोरं वायसाङ्गं सुदुर्जयम् ॥ ३३ ॥

गमन करते हैं अनेक प्रकारके घोर प्रहारयुक्त तीक्ष्ण दंष्ट्रावाले सर्पोंकी समान थे ॥ २८ ॥ पांच महावीर युद्धदुर्मद दानव महामयावना सुख फैलाये उसके रथकी रक्षा करते थे ॥ २९ ॥ सुबाहु मेघनाद वीर्यवान् भीमगर्भ कनकमूर्धा वेगवान् केतुमान् ॥ ३० ॥ सुवर्ण और चांदीकी भक्ति (रचना) जिस रथके पार्श्वभागमें होती थी वह गरुडकी समान वेगवान् उस रथमें स्थित हुआ जिसकी नेमिका शब्द मेघकी समान होता है इस प्रकार दानवेन्द्र-
रथमें स्थित हुआ ॥ ३१ ॥ अनायुषाका पुत्र महाबली महासुर भयंकर सौ हजार रथोंसे युक्त ॥ ३२ ॥ जिसमें सहस्रकक्ष जुते हुए थे नीले लोह

मय घोर वायस अंकवाले परम दुर्जय थे ॥ ३३ ॥ वह श्रीमान् नीलाम्बरधारी वैदूर्य पर्वतकी समान दानव बड़े वेगसे धावमान हुआ ॥ ३४ ॥ वहां वह सागररूपी सेनाके मध्यमें शोभित हुआ जैसे प्रातःकाल सागरके समीप सूर्य शोभित होता है ॥ ३५ ॥ तपाये हुए सुवर्णकी समान कान्तिमान् चन्द्रमाके समान आकार और बिजलीकी तुल्य गुणसे युक्त मुख्य किरीटसे शोभायमान जैसे शृंगोंसे पर्वत शोभित होता है ॥ ३६ ॥ साठ सहस्र रथ नमुचि असुरके साथ चले जिनमें खर जुते जिनका मेघकी समान शब्द होता था ॥ ३७ ॥ वे सब चित्रयोधी अनेक प्रकारके प्रहार करनेवाले थे सब

नीलाम्बरधरः श्रीमान्वैदूर्याचलसन्निभः ॥ महता रथवेगेन प्रययौ दानवस्तदा ॥ ३४ ॥ तत्रैकार्णवसंकाशे सैन्यमध्ये व्यराजत ॥

प्रभातसमये श्रीमान्समुद्रस्थ इवांशुमान् ॥ ३५ ॥ सुततजाम्बूनदतुल्यवर्चसा निशाकराकारतडिङ्गणाकरः ॥ किरीटमुख्येन

विभाति शोभिना यथा गिरिः शृङ्गवेण भास्वता ॥ ३६ ॥ षष्ठी रथसहस्राणि नमुचेरसुरस्य वै ॥ खरयुक्तानि सर्वाणि मेघतुल्यरवाणि

च ॥ ३७ ॥ नानाप्रहरणाः सर्वे सर्वे ते चित्रयोधिनः ॥ महाभ्रघनसंकाशा वेगवन्तो महाबलाः ॥ ३८ ॥ रथो व्याघ्रसहस्रेण युक्तः

परमवेगवान् ॥ नमुचेरसुरेन्द्रस्य सर्वरत्नविभूषितः ॥ ३९ ॥ शार्दूलचिह्नः शुशुभे तस्य केतुर्हिरण्यः ॥ रथमध्ये सुरेशस्य मध्य-

दिनरविर्यथा ॥ ४० ॥ स भीमवेगश्च महाबलश्च प्रगृह्य चापं हिमवानिव स्थितः ॥ नीलाम्बरः काञ्चनपट्टनद्धो दिशागजो यद्रुपे-

तकक्षः ॥ ४१ ॥ किङ्किणीजालनिर्घोषं तपनीयविभूषितम् ॥ सपताकध्वजोपेतं ससंध्यमिव तोयदम् ॥ ४२ ॥ चक्रैश्चतुर्भिः

संयुक्तमष्टनल्लायतान्तरम् ॥ हेमजालाकुलं दीप्तं कालचक्रमिवोदितम् ॥ ४३ ॥

महामेघकी समान वेगवाले महाबली थे ॥ ३८ ॥ वह सहस्र व्याघ्र जुने रथमें स्थित हो परम वेगवान् नमुचि असुरका रथ सम्पूर्ण रत्नोंसे भूषित

था ॥ ३९ ॥ उसकी हिरण्य ध्वजा शार्दूलके चिह्नसे शोभित थी और उसके रथमें शोभा मध्याह्नके सूर्यकी समान थी ॥ ४० ॥ वह भीमवेग-

वान् महाबली भयंकर चाप लेकर हिमालयकी समान स्थित हुआ नीलाम्बर सुवर्णके पट्टसे जडित जैसे कक्षसहित दिशाका हाथी हो तद्वत् शोभित

हुआ ॥ ४१ ॥ किङ्किणीसमूहका शब्द सुवर्णसे भूषित पताका ध्वजासे युक्त संध्याकालीन मेघकी समान ॥ ४२ ॥ चार पहियोंसे संयुक्त आठ नल्ल

(३२०० हाथ) के अन्तरवाला सुवर्णजालसे आकुल और दीप्त कालचक्रकी समान उदित ॥ ४३ ॥ अनेक प्रकारके घोर आयुध धारे व्याघ्रचर्मसे मढ़े ईहामृगोंके समूहोंसे युक्त चित्र रचनासे विराजित ॥ ४४ ॥ बणोंसे पूर्ण तूणीर शक्ति तोमरसे संकुल गदा मुद्गरसे युक्त धनुषरत्नसे विभूषित ॥ ४५ ॥ लम्बायमान केशर और कान्तिवाले सहस्रों ऋक्षोंसे युक्त और सुवर्ण बढी सिंहध्वजाओंसे शोभित ॥ ४६ ॥ उस मयकी मायासे युक्त उस रथमें दैत्य शोभित हुआ और रथमें स्थित हो उदय हुए सूर्यकी समान शोभित हुआ ॥ ४७ ॥ उसमें उज्ज्वल रजतके बिंदु

नानायुधधरं घोरं व्याघ्रचर्मपरिष्कृतम् ॥ ईहामृगगणाकीर्णं चित्रभक्तिविराजितम् ॥ ४४ ॥ तूणीरशरसंपूर्णं शक्तितोमरसंकुलम् ॥ गदामुद्गरसंवाधं चापरत्नविभूषितम् ॥ ४५ ॥ युक्तमृक्षसहस्रेण लम्बकेशरवर्चसा ॥ राजतेन विकीर्णेन शोभितं सिंहकेतुना ॥ ४६ ॥ स तेन शुशुभे दैत्यो मयो मायाविसर्पिणा ॥ रथरत्ने स्थितः श्रीमानुदयस्थ इवांशुमान् ॥ ४७ ॥ विमलरजतविन्दुशोभिताङ्गं मणिकनकोज्ज्वलचारुभक्तिचित्रम् ॥ अयुतशतसहस्रमूर्जितानां मयमनुयाति तदा महारथानाम् ॥ ४८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे मयस्य युद्धाभिगमनं नामैकोनपञ्चाशत्तोऽध्यायः ॥ ४९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ पुलोमा तु महादैत्यस्तिमिराकारगह्वरम् ॥ आरुरोहायसं घोरं रथं पररथारुजम् ॥ १ ॥ उत्कर्णपर्वताकारं लोहजालान्तरान्तरम् ॥ नेमिघोषेण महता क्षुभ्यन्तमिव सागरम् ॥ २ ॥ गदापरिचनिर्घ्निशैः सतोमरपरश्वधैः ॥ शक्तिमुद्गरसंकीर्णं सतोयमिदं तोदयम् ॥ ३ ॥

शोभित होते थे उज्ज्वल सुवर्णकी विचित्र रचना हो रही थी सौ दश सहस्र महारथी उस मयके पीछे पीछे चल ॥ ४८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामनप्रादुर्भावे मयस्य युद्धाभिगमनं नामैकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥ वैशम्पायन बोले, पुलोमा नाम महादैत्य लोहेके बने तिमिरके समान महागह्वर रथमें चढा जो रथ दूसरेके रथोंका तोड़नेवाला था ॥ १ ॥ उठे पर्वतके आकारवाला लोहजालके अन्तरसे युक्त बड़े भारी पहियोंके शब्दसे सागरको क्षुभित करता हुआसा ॥ २ ॥ गदा परिवर्निर्घ्निश तोमर परश्व शक्ति मुद्गरोंसे संकीर्ण जल भरे

मेवकी समान प्रकाशित ॥ ३ ॥ सहस्र ऊंट जुते वायुकी समान वेगवान् रथमें चढ़कर पुलोमा चला ॥ ४ ॥ इस युद्धदुर्मद महारथी पुलोमाके साथ तेजसे सुवर्णकी समान प्रकाशमान साठ सहस्र रथ चले ॥ ५ ॥ बड़ी भारी खड्ग और धाजाओंसे युक्त पर्वतमें स्थित, सूर्यकी समान रथमें स्थित हुए शोभित होता था ॥ ६ ॥ सुन्दर सुवर्णकी पट्टियोंसे जड़ित कालकी समान वह महागदाको ग्रहण कर शत्रुके मध्यमें विराजित ऐसे हुआ मानो केतु काली लोहेकी गदा लिये पृथ्वीमें स्थित हो रहा है ॥ ७ ॥ बलवान् हयग्रीव, हयग्रीव नामक महाअसुरोंके सहित सां सहस्र रथोंसे युक्त ॥ ८ ॥

रथमुष्टसहस्रेण संयुक्तं वायुवेगिना ॥ पुलोमारुह्य युद्धाय प्रस्थितो युद्धदुर्मदः ॥ ४ ॥ षष्टिं रथसहस्राणि पुलोमानं महारथम् ॥ अन्वयुः सूर्यवर्णानि प्रदीप्तानीव तेजसा ॥ ५ ॥ खड्गध्वजेन महता तप्तकाञ्चनवर्चसा ॥ भ्राजते रथमध्यस्थः पर्वतस्थ इवांशु-
मान् ॥ ६ ॥ सुचारुचामीकरपट्टनद्धां महागदां कालनिभां महाबलः ॥ प्रगृह्य बभ्राज स शत्रुमध्ये कार्णायिसां केतुरिवास्थितो-
व्याम् ॥ ७ ॥ हयग्रीवस्तु बलवान् हयग्रीवैर्महासुरैः ॥ वृतः शतसहस्रेण रथानां रथिसत्तमः ॥ ८ ॥ धराधरनिभाकारं सपत्नानी-
चमर्दनम् ॥ स्यन्दनं भीममास्थाय युद्धायाभिमुखः स्थितः ॥ ९ ॥ श्वेतशैलप्रतीकाशः श्वेतकुण्डलभूषणः ॥ शुशुभे रथमध्यस्थः
श्वेतशृङ्ग इवाचलः ॥ १० ॥ महता सप्तशीर्षेण शोभितो नागकेतुना ॥ वैदूर्यमणिचित्रेण प्रवालङ्कुरशोभिना ॥ ११ ॥ अमित-
बलपराक्रमाकृतीनां वररथिनामनुजमुहूर्जितानाम् ॥ असुरगणशताभिगच्छमानं त्रिदशगणा इव वासवं प्रयान्तम् ॥ १२ ॥

पर्वतके समान आकार शत्रुकी सेनाका मर्दन करनेवाले महाभयंकर रथमें स्थित हो युद्ध करनेको चला ॥ ९ ॥ श्वेतपर्वतकी समान श्वेत कुंडल भूषण धारण किये श्वेत शृंग पर्वतकी समान रथके मध्यमें स्थित हुआ ॥ १० ॥ बड़ी भारी सात शिरवाली नागकेतुसे शोभित चित्र वैदूर्यमणिके अंकुरसे शोभित ॥ ११ ॥ अमित बल और पराक्रमकी आकृतिवाले बड़े बड़े रथी उसके साथ चले जिनके पीछे सैकड़ों असुरगण चलते थे जैसे इन्द्रके पीछे

देवता चलते हैं ॥ १२ ॥ सर्वशास्त्रमें विशारद महापांडित प्रह्लाद सब मायाधारी श्रीमान् सौ यज्ञका कर्ता ॥ १३ ॥ अग्निकी समान कान्तिमान् मेघोंके गर्जनाकी समान बड़ी भारी रथोंकिसे युक्त ॥ १४ ॥ उनके अमितवीर्यवान् शूर सुवर्णके कुंडल धारण करनेवाले सहस्रों दैत्योंके साथ देवतोंके सहित ब्रह्माजीकी समान प्रकाशित ॥ १५ ॥ अपने वीर्यसे अग्रणी बड़े दन मतवाले हाथीकी समान विक्रमवाले सब देवताओंकी सेना क्षुब्धित करनेको स्थित हुए ॥ १६ ॥ अपने वीर्यसे सागरकी समान दीप्ताग्निकी समान प्रज्वलित तेजमें सूर्यके आकार क्षमामें पृथ्वीकी समान ॥ १७ ॥ ताल ध्वजवाले

प्रह्लादस्तु महाप्राज्ञः सर्वशास्त्रविशारदः ॥ सर्वमायाधरः श्रीमान्यष्टा क्रतुशतैरपि ॥ १३ ॥ समन्यत तेजस्वी पावकार्चिः समप्रभः ॥ रथानीकेन महता दुर्दिनाम्भोदनादिना ॥ १४ ॥ शूरेणामितवीर्येण हेमकुण्डलधारिणा ॥ वृत्तो दैत्यसहस्रेण देवैरिव पितामहः ॥ १५ ॥ स्ववीर्यादग्रणीर्दत्तो मत्तवारणविक्रमः ॥ सुरसैन्यस्य सर्वस्य प्रतिक्षोभ इव स्थितः ॥ १६ ॥ स्ववीर्येणोदधेस्तुल्यः प्रदीप्ताग्निरिव ज्वलन् ॥ तेजसा भास्कराकारः क्षमया पृथिवीसमः ॥ १७ ॥ तालध्वजेन दीप्तेन रथेनातिविश्रजता ॥ तं यान्तमनुयान्ति स्म दानवाः शतसंघशः ॥ १८ ॥ सर्वे हिरण्यकवचाः सर्वे रत्नविभूषिताः ॥ दिव्याङ्गरागाभरणाः समरेष्वनिवर्तिनः ॥ १९ ॥ जाम्बूनदविचित्राङ्गा वैदूर्यविकृताङ्गाः ॥ दिव्यस्यन्दनमध्यस्थाः स्वस्था इव महाग्रहाः ॥ २० ॥ आचारवांश्चैव जितेन्द्रियश्च धर्मरतः सत्यपरोऽनसूयः ॥ स्थितोऽग्नितोयाम्बुदवायुकल्पो रूपी यथा सर्वहरः कृतान्तः ॥ २१ ॥ शम्बरस्तु महामायो रथयूथपयूथपः ॥ आरुरोह रथं दिव्यं सर्वयुद्धविशारदः ॥ २२ ॥

दीप्तिमान् रथसे विराजित उनके चलनेपर अनेक दानव उनके पीछे चले ॥ १८ ॥ सब सुवर्णके कवचवाले सबही रत्नोंसे भूषित दिव्य अंगरागके आभरणवाले समरसे निर्वृत्त न होनेवाले ॥ १९ ॥ जाम्बूनदकी समान विचित्र अंग वैदूर्य मणिजटित बाजूबंद पहरे दिव्य स्यन्दनके मध्यमें स्थित स्वस्थ हुए महाग्रहोंकी समान स्थित ॥ २० ॥ आचारवान् जितेन्द्रिय धर्मरत सत्यमें तत्पर असूयारहित अग्नि जल वायुके समान स्थित हुए जैसे कृतान्त स्थित होता है ॥ २१ ॥ महामायी शम्बर रथी यूथगतिर्योंका यूथपति सब युद्धका जाननेवाला दिव्य रथपर चढ़ा ॥ २२ ॥

वह महाबाहु लालनेत्र किये तपे सुवर्णके कुंडल धारण किये मेघकी समान वर्ण दिव्यमाला पहरे दिव्य अनुलेपन लगाये ॥ २३ ॥ विजली और ज्योतिके समान सूर्यकान्तिवाले मुकुटसे विराजित विचित्र मणि रत्न और वैडूर्यसे शोभित ॥ २४ ॥ महातपे सुवर्णके कवचसे विराजित सन्ध्याके लाल बादलोंसे संच्छन्न पर्वतकी समान ॥ २५ ॥ तीस सहस्र चित्रयोधाओंका समूह जो बली और कालकी समान था शम्बरके पीछे चला ॥ २६ ॥ शुक्रवर्णके सहस्र रथोंसे युक्त क्रौंच ध्वजयुक्त संग्रामशोभी रथसे व्याप्त ॥ २७ ॥ जिसमें अनेक वैडूर्य मणि और सुवर्णजाल शोभित हो रहे हैं अनेक प्रकारके

लोहिताक्षो महाबाहुः प्रतप्तोत्तमकुण्डलः ॥ जीमूतघनसंकाशो दिव्यस्रगनुलेपनः ॥ २३ ॥ विद्युज्ज्योतिर्निकाशेन मुकुटेनार्कवर्चसा ॥ मणिरत्नाविचित्रेण वैडूर्यवरशोभिना ॥ २४ ॥ तपनीयेन महता कवचेन विराजता ॥ संध्याभ्रेणेव संच्छन्नः श्रीमानस्तशिलो-
च्चयः ॥ २५ ॥ त्रिंशच्छतसहस्राणि दैत्यानां चित्रयोधिनाम् बलिनां कालकल्पानामन्वयुः शम्बरं तदा ॥ २६ ॥ युक्तं ह्यसहस्रेण शुक्रवर्णेन राजता ॥ क्रौञ्चध्वजेन दीप्तिन रथेनाहवशोभिना ॥ २७ ॥ व्यासक्तवैडूर्यसुवर्णजालं नानाविहङ्गैरपि भक्तिचित्रम् ॥ विद्युत्प्रभं भीमरवं सुवेगं रथं समारुह्य रराज दैत्यः ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे शम्बरा-
दिदैत्यसन्नहनं नाम पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ अनुहादश्च तत्रैव दैत्यः परमदुर्जयः ॥ हिरण्यकशिपोः पुत्रः प्रययो युद्धलालसः ॥ १ ॥ चतुश्चक्रेण यानेन त्रिनल्वप्रतिमेन तु ॥ युक्तेनाश्वैर्महावीर्यैः सिंहवक्त्रैरजिह्वगैः ॥ २ ॥ भीमगम्भी-
रनौदेन नेमिघोषेण वीर्यवान् ॥ चालयन्वसुधां सर्वां सशैलवनकाननाम् ॥ ३ ॥

विहंगोंकी रचना हो रही है विजलीकी समान भीमवेगवान् रथमें वह दैत्यराज चढा ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामनप्रादुर्भावे शम्बरादिदैत्यसन्नहनं नाम पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥ वैशम्पायन बोले, परम दुर्जय अनुहाद दैत्य हिरण्यकशिपुका पुत्र युद्ध करनेकी इच्छासे चला ॥ १ ॥ उसका रथ चार पहियेका (१२०० हाथके) विस्तारमें था सिंहके मुखवाले अकुटिल चलनेवाले घोड़े उसमें जुते थे ॥ २ ॥ उसके पहियोंका शब्द बड़ा गम्भीर होता था शैल वन कानन सहित सब पृथ्वीको चलायमान किये देता था ॥ ३ ॥

उस समय दैत्यसमूह गर्जना करते हुए अनुहादके पीछे चले सुवर्णके सैकड़ों सहस्र रथ उनके पीछे चले ॥ ४ ॥ परिष भिदिपाल भल्ल पाशे परसे अनेक आयुधधारी शूल मुद्गर हाथमें लिये ॥ ५ ॥ सुवर्णजालमें लगे हुए वज्रोसे अलंकृत चित्रकवच पहरे रथोंसे सज्जमान महाअसुर चले ॥ ६ ॥ उस समय बड़े विशाल पर्वतकी तुल्य चित्रित अंगवाले रथमें जो उसके अनुरूपही था वह दैत्यपति स्थित हुआ जिसकी समान और रूप नहीं था ॥ ७ ॥ बलवान् अग्निकी समान कान्तिमान् विरोचन सर्व अस्त्रमें कुशल बड़े भारी रथमें स्थित ॥ ८ ॥ व्यूहोंके विनियोगका जाननेवाला ज्ञानविज्ञानके विनर्हमाना दैत्योवा अनुहादं ययुः शुभाः ॥ शतं शतसहस्राणां रथानां हेममालिनाम् ॥ ४ ॥ परिवेभिन्दिपालेश्च भल्लैः पाशैः परश्वधैः ॥ विविधायुधहस्तास्ते शूलमुद्गरपाणयः ॥ ५ ॥ सुवर्णजालनिर्मुक्तैर्वज्रैश्च समलंकृताः ॥ रथैश्चित्रैश्च कवचैः सज्जमाना महासुराः ॥ ६ ॥ तदा विशालेन्द्रितशैलरूपे बभौ रथे काञ्चनचित्रिताङ्गे ॥ दैत्याधिपः सत्त्वबलानुरूपे समास्थितस्त्वप्रतिमे मुरूपे ॥ ७ ॥ विरोचनश्च बलवान्वैश्वानरसमद्युतिः ॥ महता रथवंशेन सर्वास्रकुशलः शुचिः ॥ ८ ॥ व्यूहानां विनियोगज्ञो ज्ञानविज्ञानतत्त्ववित् ॥ बलैः पिता सुरवरः सुराणामिव वासवः ॥ ९ ॥ सर्वायुधसमोपेतं किङ्किणीजालभूषितम् ॥ युक्तानां वाजिमुख्यानां सहस्रेणाशुगामिनाम् ॥ १० ॥ रथमारुह्य दैत्येन्द्रो बभौ मेरुरिवापरः ॥ किङ्किणीजालपर्यन्तं गजेन्द्रध्वजशोभितम् ॥ संध्याभ्रसमवर्णाभिः पताकाभिरलंकृतम् ॥ ११ ॥ प्रवालजाम्बूनदभक्तिचित्रं व्यालं विकारान्तरनेमिघोषम् ॥ रथं समारुह्य किरीटमाली ययौ स युद्धाय महासुरेन्द्रः ॥ १२ ॥ विरोचनानुजश्चैव कुजम्भो नाम दानवः ॥ स्यन्दनैर्बहुसाहसैर्मणिकाञ्चनभूषितैः ॥ १३ ॥ तत्त्वका ज्ञाता बलिका पिता अमुरोंमें श्रेष्ठ देवताओंमें इन्द्रकी समान ॥ ९ ॥ सम्पूर्ण आयुधोंसे युक्त किङ्किणीजालसे भूषित सहस्र वेगगामी घोड़ोंसे युक्त ॥ १० ॥ रथमें चढ़ वह दैत्येन्द्र मेरुकी समान स्थित हुआ किङ्किणीजाल पर्यन्त महेन्द्र ध्वजसे शोभित सन्ध्याकालसे मेघकी समान पताकाओंसे शोभित ॥ ११ ॥ मृगे और सुवर्णकी रचनासे व्याप्त सपके बंधसे युक्त पहियोंके महाशब्दसे युक्त किरीटधारी दैत्येन्द्र रथपर स्थित हो युद्ध करनेको चला ॥ १२ ॥ विरोचनका अनुज कुजम्भ नाम दानव अनेक सहस्रों मणिकंचनसे भूषित रथसे ॥ १३ ॥

युक्त महाबली शत्रुनाशी प्राप्त पाश गदा हाथमें लिये युद्धाकांक्षी दानवोंके सहित ॥ १४ ॥ पर्वतकी समान आकार काले अंजनकी छुटिकाकी समान
 कान्तिमान् विराजमान किरीटकी कान्तिसे व्याप्त ॥ १५ ॥ सर्वरत्न जड़े कवचसे युक्त बड़े भारी कान्तिमान् शरीरसे रथमें सूर्यचन्द्रमाकी समान
 शोभित ॥ १६ ॥ बड़े भारी सुवर्णके बने तालवृक्षसे शोभित रथमें मेरुमें स्थित सूर्यकी समान विराजित ॥ १७ ॥ रणपटु अतिवीर्यवान् सत्त्वबुद्धि
 समरमें शीघ्रतासे देवताओंके सम्मुख जानेवाले असुरगणोंसे आवृत्त कुजंत देवताओंसे व्याप्त इन्द्रकी समान शोभित हुआ ॥ १८ ॥ इसी प्रकार पर्वत
 वृत्तो मदबलोत्सितैर्देवारिभिरिंदमः ॥ प्राप्तपाशगदाहस्तैर्दानवैर्युद्धकाक्षिभिः ॥ १४ ॥ स पर्वतानिभाकारो भिन्नाञ्जनचयप्रभः ॥
 महता भ्राजमानेन किरीटेन सुवर्चसा ॥ १५ ॥ सर्वरत्नविचित्रेण कवचेन च संवृतः ॥ महता दीप्तवपुषा रथेनेन्दुरिवांशुमान् ॥ १६ ॥
 शातकोम्भेन महता तालवृक्षेण केतुना ॥ रराज रथमध्यस्थो मेरुस्थ इव भास्करः ॥ १७ ॥ रणपटुरतिवीर्यसत्त्वबुद्धिः सुरसमराभिमुखः
 प्रयाति तूर्णम् ॥ असुरगणसमावृतः कुजम्भस्त्रिदशगणैरिव वृत्रहामरन्दः ॥ १८ ॥ असिलोमा च तत्रैव दानवः पर्वतायुधः ॥ दारुणं
 वपुरास्थाय दारुणो दारुणाननः ॥ १९ ॥ रौद्रः शकटचक्राक्षो महाकायो महाबलः ॥ कृष्णवासा महादंष्ट्रः किरीटी लोहिताननः ॥ २० ॥
 वृत्तो दैत्यसहस्रोपैर्गिरिपादपयोधिभिः ॥ नानारूपधरेर्दत्तैर्दैत्यैस्त्रिदशशत्रुभिः ॥ २१ ॥ ते शूलहस्ता गगने चरन्त इतस्ततस्तोयदवृन्द-
 तुल्याः ॥ खं छादयन्तस्तपनीयानिष्का यथोन्नताः प्रावृषि कालमेघाः ॥ २२ ॥ अनायुषायाः पुत्रस्तु वृत्रो नाम महासुरः ॥ देवशत्रुर्म-
 हाकायस्ताम्रास्यो निर्नतोदरः ॥ २३ ॥ दीप्तजिह्वो हरिश्मश्रु ऊर्ध्वरोमा महाहनुः ॥ नीलाङ्गो लोहितमुखः किरीटी लोहिताम्बरः ॥ २४ ॥
 आयुधवाला असिलोमा दैत्य दारुण मुख दारुण शरीर ॥ १९ ॥ रौद्र शकट चक्राक्ष महाकायावान् महाबली कृष्ण वस्त्र धारे महाडाढसे युक्त किरीट-
 धारी लोहितानन ॥ २० ॥ सहस्रों दैत्योंसे व्याप्त जो गिरि और वृक्षोंसे युद्ध करते थे अनेक रूपधारी इस देवताओंके शत्रु दैत्योंके साथ ॥ २१ ॥
 जो शूल हाथमें लिये आकाशगामी इधर उधर मेघोंकी समान विचरनेवाले अपनी सुवर्णतुल्य कान्तिसे आकाशको आच्छादन करते वर्षाकालके मेघकी
 समान उन्नत ॥ २२ ॥ और अनायुषाका पुत्र वृत्र नाम दानव देवशत्रु महाकाय ताम्रास्य निर्नतोदर ॥ २३ ॥ दीप्तजिह्व हरिश्मश्रु ऊर्ध्वरोमा महाहनु

नीलांग लोहितमुख किरीटी लोहिताम्बर ॥ २४ ॥ आजानुबाहु विरुत श्वेतदंष्ट्र विभीषण महामाया धारण करनेवाला भीम सुवर्णकेयूर भूषणधारी ॥ २५ ॥
बड़े भारी मणिजटित कवचसे युक्त हेममालाधारी रौद्र चक्रकेतु अमर्षण ॥ २६ ॥ सैकड़ों किङ्कणीजालसे युक्त सुवर्णके भूषणसे विभूषित
ध्वजा पताकायुक्त सहस्र घोड़े जुते रथमें ॥ २७ ॥ बहुतसी रथोंकी सेना ले युद्ध करनेको गया वह दैत्योंका आनंद बढ़ानेवाला दिग्धरथमें स्थित हो
चला ॥ २८ ॥ तपाये सुवर्णबिंदुकी समान पिंगलनेत्रवान् दितिपुत्र दैत्योंकी सेनाका रक्षक खिले कमलकी समान सुन्दर नेत्रवान् श्वेतदन्तवाला रथके

आजानुबाहुर्विकृतः श्वेतदंष्ट्रो विभीषणः ॥ महामायाधरो भीमो हेमकेयूरभूषणः ॥ २५ ॥ महता मणिचित्रेण कवचेन तु संवृतः ॥
हेममालाधरो रौद्रश्चक्रकेतुरमर्षणः ॥ २६ ॥ किङ्किणीशतसंघुष्टं तपनीयविभूषितम् ॥ युक्तं हयसहस्रेण रक्तध्वजपताकिनम् ॥ २७ ॥
रथानकिन महता युद्धायाभिमुखो ययौ ॥ दिव्यं स्पन्दनमास्थाय दैत्यानां नन्दिवर्द्धनः ॥ २८ ॥ तपितकनकबिन्दुपिङ्गलाक्षो
दितितनयोऽसुरसैन्ययुद्धनेता ॥ विकसितकमलाभचारुचक्षुः सितदशनः शुशुभे रथासनस्थः ॥ २९ ॥ एकचक्रस्तु तत्रैव सूर्यचक्र
इवोदितः ॥ कालचक्रसमो रौद्रश्चक्रायुध इवोद्यतः ॥ सर्वायसमयं दिव्यं रथमास्थाय भासुरम् ॥ ३० ॥ वृत्तो दैत्यगणैर्हंसैः कालायस-
शिलायुधैः ॥ तस्याशीतिसहस्राणि रथिनां चित्रयोधिनाम् ॥ ३१ ॥ सर्वे कालान्तकप्रख्या रुधिराक्षा महाबलाः ॥ आयसैः काञ्चनैश्चैव
सन्नद्धा वरवर्णिनः ॥ ३२ ॥ व्यराजन्तान्तरिक्षस्था नीला इव पयोधराः ॥ सर्वे कालान्तकप्रख्या धीराः समरदुर्जयाः ॥ ३३ ॥ सागरो-
दरगम्भीरा नीलवक्त्रा दुरासदाः ॥ रेजुर्यान्तो सुरवरा वेलतीता इवार्णवाः ॥ ३४ ॥

ऊपर शोभित हुआ ॥ २९ ॥ एकचक्र दानव सूर्यचक्रकी समान उदय हुआ और कालचक्रकी समान महारौद्र चक्रायुधकी समान स्थित हुआ
जिसका कान्तिमान् लोहनिर्मित रथ था उसमें स्थित हुआ ॥ ३० ॥ काले लोह और शिलाके आयुध लिये दैत्य उसके साथ हुए उसके साथ विचि-
त्रयोधा अस्ती सहस्र रथी चले ॥ ३१ ॥ सबही कालकी समान रुधिराक्ष महाबली लोह और काञ्चनके वस्त्र पहरे श्रेष्ठ ॥ ३२ ॥ नीले पयोधरकी
समान अन्तरिक्षमें विराजमान थे सम्पूर्ण कालान्तककी समान धीर और समरदुर्जय थे ॥ ३३ ॥ सागरके उदरकी समान गम्भीर नील मुख दुरासद

वे असुर बेला त्यागे हुए सागरकी समान शोभित हुए ॥ ३४ ॥ वे भीममायाके जाननेवाले बड़े शरीरवाले किरीटवाले सुवर्णसे भूषित शरीर अपने आयुध उठाये दीप्तिमान् हस्तवाले पंखयुक्त पर्वतकी समान आकाशमें शोभित हुए ॥ ३५ ॥ तब बलिपुत्रने वृत्रभाताको देवताओंकी सेना नाश करनेकी आज्ञा दी ॥ ३६ ॥ वह तैयार हुआ सुवर्णके तालवृक्षकी समान उच्छ्रित बड़ी डाढ़ोंवाला मालावान् रुचिर कुंडलोंसे युक्त ॥ ३७ ॥ लालमाला वध्योंको धारे प्रचंड समरमें दुर्जय महाबली वृत्रनेत्र किरीट धनुषधारी प्रभिन्न मातंग और शार्दूलकी समान पराक्रमी ॥ ३८ ॥ महातालकी समान चाप और रुचिर

ते भीममायाः सुसमृद्धकायाः किरीटिनः काञ्चनभूषिताङ्गाः ॥ ययुस्तदा वायुधदीप्तहस्ता नभः सपक्षा इव पर्वतेन्द्राः ॥ ३५ ॥ संदिष्टो बलिपुत्रेण वृत्रभाता महासुरः ॥ वधाय सुरसैन्यस्य संनह्यस्वेति वीर्यवान् ॥ ३६ ॥ हेमताली महादंष्ट्रः स्रग्वी रुचिरकुण्डलः ॥ रक्तमाल्याम्बरधरश्चण्डः समरदुर्जयः ॥ ३७ ॥ सुमहावृत्तनयनः स किरीटी धनुर्धरः ॥ प्रभिन्न इव मातङ्गः शार्दूलसमविक्रमः ॥ ३८ ॥ महातालनिभं चापं तथा रुचिरसायकम् ॥ विस्फारयन्महावेगं वज्रानिष्पेषनिःस्वनम् ॥ ३९ ॥ रथेन खरयुक्तेन ध्वजेन भुजगेन ह ॥ शुशुभे स्यन्दनस्थः स संध्यागत इवांशुमान् ॥ ४० ॥ रथेस्तु बहुसाहस्रैर्हेमपट्टविभूषितैः ॥ कूटसुदूरसंपूर्णैर्जलपूर्णैरिवाम्बुदैः ॥ स दैत्येन्द्रोऽभिचक्राम तस्मिन्युद्ध उपस्थिते ॥ ४१ ॥ पवनसमगतिर्विशालवक्षा विकसितपङ्कजचारुगर्भगौरः ॥ प्रवररथगतो ययौ स तूर्णं त्रिदशगणैरभिलक्षितप्रभाषः ॥ ४२ ॥ सिंहिकातनयश्चैव राहुर्नाम महासुरः ॥ विकटः पर्वताकारः शतशीर्षा शतोदरः ॥ ४३ ॥

बाण धारे वज्रकी समान महावेगयुक्त धनुषको विस्फारण करते ॥ ३९ ॥ खरयुक्त रथ और सर्पकी ध्वजासे युक्त रथमें स्थित हुआ संध्याकालीन सूर्यकी समान स्थित हुआ ॥ ४० ॥ हेमपट्टसे विभूषित अनेकों सहस्र रथ कूट सुदूरसे सम्पूर्ण जलपूर्ण मेघकी समान वह दैत्येन्द्र उपस्थित हो उस युद्धकी ओर चला ॥ ४१ ॥ पवनकी समान गतिमान् चौड़ी छातीवाला खिले हुए कमलकी समान गौरवर्ण रथपर स्थित हो वह बहुत शीघ्रतासे चला और देवताभी उसके प्रभावसे चमत्कृत थे ॥ ४२ ॥ सिंहिकापुत्र राहु नामक महाअसुर विकट पर्वताकार सौ शिर और सौ उदरवाला ॥ ४३ ॥

पीतमाला और पीतवस्त्र धारण किये सुवर्णसे विभूषित स्निग्ध वैदूर्यमणि और कमलपत्रकी समान नेत्रवान् ॥ ४४ ॥ सम्पूर्ण काञ्चनसे युक्त मणिजालसे विभूषित सौ पताका और परमवाजियोंसे युक्त ॥ ४५ ॥ रथमें वह महावीर्यवान् दैत्य स्थित हुआ और पृथ्वीतलको कंपित करता महानाद करने लगा ॥ ४६ ॥ मयने उसकी सुवर्णकी दिव्यकेतु निर्माण की थी और मोरपक्षकी समान दिव्य लोहका कवच निर्माण किया ॥ ४७ ॥ दूसरेभी भीम-वेगवाले दिव्य रथ और अनेक प्रकारके आयुधोंसे सेव्यमान महाबली ॥ ४८ ॥ असुरगणोंका स्वामी अतिरथ महाअसुरोंका शरणदाता शत्रुओंके

पीतमाल्याम्बरधरो जाम्बूनदविभूषितः ॥ स्निग्धवैदूर्यसंकाशः पद्मपत्रनिभेक्षणः ॥ ४४ ॥ सर्वकाञ्चनसंयुक्तं मणिजालपरिष्कृतम् ॥ पताकाशतसंकीर्णं युक्तं परमवाजिभिः ॥ ४५ ॥ आरुरोह रथं दिव्यं दैत्यः परमवीर्यवान् ॥ ननाद च महानादं कम्पयन्वसुधातलम् ॥ ४६ ॥ मयेन विहितो दिव्यस्तस्य केतुर्हिरण्यमयः ॥ मयूरपक्षसंकाशं कवचं चायसं महत् ॥ ४७ ॥ भीमवेगरवैश्वान्ये रथैर्दिव्यैः सुरासुरैः ॥ नानाप्रहरणाकीर्णैः सेव्यमानो महाबलः ॥ ४८ ॥ असुरगणपतिर्गजेन्द्रगामी अतिरभसगतिर्महासुराणाम् ॥ अरिगणमभितो विभुः प्रपातो गिरिवरमस्तमिवांशुमान्तसुदीप्तः ॥ ४९ ॥ विप्रचित्तिस्तु तत्रैव दनोर्विशिविद्धनः कश्यपस्यात्मजः श्रीमान् ब्रह्मणस्तेजसा समः ॥ ५० ॥ यष्टा क्रतुसहस्राणां वेदवित्तपसान्वितः ॥ स्वयंभुवा दत्तवरो वरदश्च स्वयंभुवः ॥ ईशित्वं च महत्त्वं च वशित्वं च महाश्रुतेः ॥ ५१ ॥ ऐश्वर्यगुणसंपन्नो ब्रह्मेव स्वयमुज्जितः ॥ सार्धं पुत्रैश्च पौत्रैश्च संनह्यत महाबलः ॥ ५२ ॥ सर्वे मायाधराः शूराः कृतास्त्रा रणदुर्जयाः ॥ सर्वे कमलवर्णाभा हेमकूटोच्छ्रयोच्छ्रयाः ॥ ५३ ॥

सामनेको चला जिस प्रकार सूर्य अस्ताचलको प्राप्त होते हैं ॥ ४९ ॥ इस प्रकार दनुवंशका बढानेवाला विप्रचित्ति दानव कश्यपका पुत्र तेजमें ब्रह्माकी समान ॥ ५० ॥ सहस्रों यज्ञोंका कर्ता वेदवित् तपसे युक्त ब्रह्मासे वरदान पाये स्वयं वरका देनेवाला ईशपना महत्पना और वशपना यह उस महाकान्तिमानमें था ॥ ५१ ॥ ऐश्वर्यके गुणसे सम्पन्न स्वयं ब्रह्माजीकी समान पुत्रों तथा पौत्रोंके साथ वह महाबली तैयार हुआ ॥ ५२ ॥ सब मायाधारी शूर कृतास्त्र रणदुर्जय कमलकी समान वर्णवाले सबही हेमकूटके शिखरकी समान ऊंचे ॥ ५३ ॥

सब रजतकी समान वर्णवाले कैलासशिखरकी समान उनके रथ मयने स्वयं मायासे बनाये थे ॥ ५४ ॥ वह विचरते हुए शरदके मेघकी समान शोभित हुए सब श्वेत हंसकी ध्वजावाले श्वेतदण्डसे युक्त ॥ ५५ ॥ श्वेत वस्त्र धारण करनेवाले दैत्य श्वेतमालाओंसे विभूषित सब श्वेतछत्र धारे और श्वेत कुंडल पहरे हुए थे ॥ ५६ ॥ मोतियोंके हार पहरे स्वर्गपतिकी समान शोभित होते थे महाग्रहोंकी समान शत्रुओंके लोम खड़े करनेवाले ॥ ५७ ॥ लालवर्णके चित्रवस्त्र पहरे विचित्र आभरणोंसे विभूषित वह वीर्यवान् त्रैलोक्यविजय नामवाले रथमें स्थित होकर ॥ ५८ ॥ जो

सर्वे रजतसंकाशाः कैलासशिखरोपमाः ॥ मयेन निर्मितास्तेषां सर्वे मायामया रथाः ॥ ५४ ॥ विचरन्तो व्यराजन्त शारदा इव तोषदाः ॥ सर्वे हंसध्वजाः श्वेताः श्वेतदण्डसमुच्छ्रयाः ॥ ५५ ॥ श्वेताम्बरधरा दैत्याः श्वेतमाल्यविभूषिताः ॥ श्वेतातपत्रा सर्वे ते श्वेतकुण्डलमाण्डिताः ॥ ५६ ॥ मुक्ताहारवृत्तोरस्का भान्ति नाकेश्वरा इव ॥ महाग्रहनिभाकाराः शङ्खणां लोमहर्षणाः ॥ ५७ ॥ रक्तचित्राम्बरधराश्चित्राभरणभूषिताः ॥ त्रैलोक्यविजयं नाम रथमास्थाय वीर्यवान् ॥ ५८ ॥ कैलासशिखराकारमष्टनट्वायतान्तरम् ॥ युक्तं वाजिसहस्रेण सितेन शिववर्चसा ॥ पताकाशतसंछन्नं नानायुधविकल्पितम् ॥ ५९ ॥ हिमांशुकुन्दप्रतिमं विशालं सितातपत्रं दनुजेश्वरस्य ॥ विभाति तस्योपरि धार्यमाणं श्वेताद्रिमुखोपगतः शशाङ्कः ॥ ६० ॥ केशी दानवमुख्यस्तु जिह्मस्ताम्राक्षदर्शनः ॥ नीलमेघवयप्रलयः कालः पुरुषविग्रहः ॥ ६१ ॥ महाग्रहनिभाकारः शङ्खणां लोमहर्षणः ॥ चित्रमालयाम्बरधरो रक्ताभरणभूषितः ॥ ६२ ॥ शताक्षः शतबाहुश्च हरिश्मश्रुर्महाबलः ॥ शङ्कुकर्णो महानादो वपुषा घोरदर्शनः ॥ ६३ ॥

कैलासके शिखरकी समान आठ नल्व (३२०० हाथका) श्वेतकान्तिमान् सहस्र घोड़ोंसे संयुक्त सैकड़ों पताका और अनेक आयुधोंसे संयुक्त थे ॥ ५९ ॥ चन्द्रमा और कुंदके फूलकी समान विशाल छत्र दनुजपतिके ऊपर धारण किया गया उसकी ऐसी शोभा होती थी जैसे हिमालयके ऊपर चन्द्रमा ॥ ६० ॥ मुख्य केशी दानव जिह्म ताम्राक्ष दर्शन नीलमेघकी समान कालही मानो पुरुषशरीर धारण किये है ॥ ६१ ॥ महाग्रहके समान आकार और शत्रुओंको भयदाता चित्र माला और वस्त्र पहरे लाल आभरणसे विभूषित ॥ ६२ ॥ शताक्ष शतबाहु महाबली हरिश्मश्रु शङ्कुवर्ण महानाद शरीरसे घोरदर्शन ॥ ६३ ॥

दिव्यमहिषोंके गलेमें बंधे अनेक घंटारव शब्दसे विराजित महावारिधरके आकारवाले रथमें स्थित हो ॥ ६४ ॥ नील केशरकी कान्तिवाले उष्ट्रवज्रसे शोभित अनेक प्रकारकी पताकाओंसे विराजित ॥ ६५ ॥ सौ सहस्र महाकान्तिमान् रथोंके समूह उस अशुरेन्द्रके पीछे हुए जिनकी महाकान्ति थी ॥ ६६ ॥ वे काले अंजन पर्वतकी समान उसके पीछे जाते हुए शोभित होते थे दंष्ट्रासे अर्धचन्द्रके समान प्रकाशित उनके मुख बगले सहित मेघकी समान लक्षित होते थे ॥ ६७ ॥ वैदूर्यमणि और सुवर्णसे जड़ित बिजुलीकी समान सूर्यकी किरणोंकी तुल्य पर्वतपर स्थित अग्निकी समान उसका मुकुट युक्त महिषकैर्दिव्यैर्घण्टाकोटिकृतस्वनम् ॥ महावारिधराकारमास्थाय रथमुत्तमम् ॥ ६४ ॥ ध्वजेनोद्रेण महता नीलकेसरवर्चसा ॥ नानारागविचित्राभिः पताकाभिर्विभूषितम् ॥ ६५ ॥ द्विपञ्चाशत्सहस्राणि रथानामुग्रवर्चसाम् ॥ ययुस्तस्यासुरेन्द्रस्य प्रयातस्य सुरान्प्राप्ति ॥ ६६ ॥ भान्ति भिन्नाञ्जननिभाः प्रयातस्य महात्मनः ॥ दंष्ट्राद्धचन्द्रवदना सबलाका इवाम्बुदाः ॥ ६७ ॥ तत्तस्य वैदूर्यसुवर्णचित्रं विद्युत्प्रभं भास्करराश्मितुल्यम् ॥ किरीटमाभात्यसुरोत्तमस्य दावाग्निदीप्तं शिखरं यथाद्रेः ॥ ६८ ॥ वृषपर्वासुरश्चैव श्रीमांश्च सुरसूदनः ॥ आरुरोह रथं दिव्यं मेरुशृङ्गमिवांशुमान् ॥ ६९ ॥ प्रवालजाम्बूनदचित्रकूबरं महारथं भारसहं महार्हम् ॥ स्वलंकृतं राजतहेमकुण्डलं गभास्तिनक्षत्रताडिन्निकाशम् ॥ ७० ॥ केयूरयुक्ताङ्गदनद्धबाहुः सहस्रतारेण च चर्मणा सः ॥ सांग्रामिकैराभरणैश्च चित्रैर्मध्याह्नसूर्यप्रतिमो बभूव ॥ ७१ ॥ महाबलो बद्धतलाङ्गुलित्रो बलोत्कटः किंशुकलोहिताक्षः ॥ प्रगृह्य चामीकरचारुचित्रं चापं स्थितो वृत्तविशालनेत्रः ॥ ७२ ॥

शोभित होता था ॥ ६८ ॥ सुरसूदन श्रीमान् वृषपर्वा असुर मेरुशृंगपर सूर्यकी समान स्थित हुआ ॥ ६९ ॥ जिस रथका मूंगे और सुवर्णजड़ित कूबर था वह महाभारका सहन करनेवाला था चांदी और सुवर्णके कुंडलोंसे अलंकृत किया गया सूर्य नक्षत्र और बिजुलीकी समान ॥ ७० ॥ केयूर अंगद बाजूबंदोंसे शोभित भुजा सहस्र तार और चर्मसे बंधा संग्रामके विचित्र आभरणोंसे शोभित दुपहरके सूर्यकी समान लक्षित हुआ ॥ ७१ ॥ वहां बली अंगुलीत्राण बांधे बलसे उद्धत टेसूके फूलकी समान लालनेत्र सुवर्णका बड़ा धनुष ग्रहण किये विशाल नेत्रवाला वृत्त असुर स्थित हुआ ॥ ७२ ॥

महाअसुरेन्द्र और महाअसुरोंसे युक्त बलि रथके ऊपर स्थित हुआ वह उसका रथ वैडूर्य मणि और सुवर्णसे जटित सोलह नल्वका था ॥ ७३ ॥
 उसमें बुरे आकारवाले हाथीके मुखवाले सहस्र दानव लगे थे जिनके हृदयमें सुवर्णके भूषण थे और चौमासेके मेघोंकी समान शब्द करते थे ॥ ७४ ॥
 वहे महारथ देवरथकी समान सहस्र मायावाले मयने बनाया था ईहामृगोंके क्रीडाकी रचनासे युक्त दिव्यरथ कि जिसके पीछे दिव्यरथ चलते थे ॥ ७५ ॥
 बड़ी विशाल विस्तारवाली किंकिणी सुवर्णके सैकड़ों कमलोंसे युक्त बलि सुवर्णकी चित्रितपुष्पोंकी माला पहरे देवताओंसे युद्ध करनेको चला ॥ ७६ ॥

महासुरेन्द्रश्च महासुरैर्वृतो बलिस्तदा स्यन्दनमारुरोह ॥ वैडूर्यहेमोपचितं विशालं विद्युत्प्रभं षोडशनल्वमात्रम् ॥ ७३ ॥ युक्तं सहस्रेण
 दितेः सुतानां गजाननानां विकृताकृतीनाम् ॥ चामीकरोरःस्थलभूषितानां प्रनर्दतां प्रावृषि चाम्बुदानाम् ॥ ७४ ॥ महारथं देवर-
 थप्रकाशं सहस्रमायेन मयेन सृष्टम् ॥ ईहामृगाक्रीडितभक्तिचित्रं दिव्यं रथं दिव्यरथानुयातम् ॥ ७५ ॥ सकिङ्किणीकं विमलं
 सुविस्तृतं हिरण्यमयेः पद्मशतैरलंकृतम् ॥ अभ्याददे वैजयिर्कां जयाय स्रजं बलिर्हेमविचित्रपुष्पाम् ॥ ७६ ॥ अवध्यमालां प्रभया
 विचित्रां बलिस्तदा भाति भुजैर्विशालैः ॥ रराज तैः सर्वसमृद्धियुक्तैर्महार्चिषा सूर्य इवाम्बरस्थः ॥ ७७ ॥ स्रजं तदाबध्यति चास्य
 दुर्गा सर्वासुराणामिव हारभूताम् ॥ वैरोचनिः सर्वश्रियाभिजुष्टो विभ्राजतेऽसौ शरदीव चन्द्रः ॥ ७८ ॥ मेरोस्तटेर्वा ज्वलनप्रकाशो-
 रादित्यसंयुक्तमिवाभ्रजालम् ॥ प्रासाश्च पाशाश्च हिरण्यवद्धा वर्माणि खड्गाश्च परश्वधाश्च ॥ ७९ ॥ धनुषि वज्रायुधसप्रभाणि दिव्या
 गदा वज्रमुखाश्च शक्तयः ॥ दिव्याश्च खड्गा विशिखाश्च दीप्ता नाराचपूर्णा विविधाश्च तूणाः ॥ ८० ॥

प्रज्ञासे विचित्र अवध्य माला पहरे समृद्धिमान् विशाल भुजाओंसे बलि ऐसे शोभित हुआ जैसे आकाशमें सूर्य अपनी किरणोंसे शोभित होता है ॥ ७७ ॥
 सम्पूर्ण असुरोंकी हारभूत मालाको बांधे बलि सम्पूर्ण लक्ष्मीसे युक्त शरत्कालीन चन्द्रमाकी समान विराजमान हुआ ॥ ७८ ॥ जैसे मेरुके तटमें
 अपनी किरणोंसे सूर्य प्रकाशित होता है प्रास पाशा सुवर्णमें बांधे वर्म खड्ग तथा परशे लिये ॥ ७९ ॥ धनु वज्र आयुध दिव्य गदा वज्रमुख शक्ति

दिव्य खड्ग विशिख दीप्त नाराच और पूर्ण विधानके तरकस ॥ ८० ॥ उस दैत्यके रथमें शस्त्र उत्कापातकी समान प्रकाशित होते थे वे चामर और पीडसे युक्त सुवर्ण मोती हेममणियोंसे प्रकाशित होते थे ॥ ८१ ॥ रथकी वेदिकाओंमें बैठे महाअसुर नम्र हुए वृजन करते थे अयःशिर अश्वशिर बड़े दुस्तह शिविर मंतंग विशिर शताक्ष ॥ ८२ ॥ अय निकुंभ और क्रथन दानव यह दश उस दानव अधिपतिकी रक्षा करते थे और आगे सैकड़ों घोधा पैदल उस दानवराजकी रक्षा करते थे ॥ ८३ ॥ शतघ्नी चक्र अशानि शक्ति हाथमें लिये वह पवनकी तुल्य वेगगामी चले उसमें उस समय घंटे

धृता रथे दैत्यवृषस्य तस्य चकाशिरे प्रज्वलिता यथोल्काः ॥ ते चामरापीडधराः सुदंष्ट्राः सुवर्णमुक्ता मणिहेमाचित्राः ॥ ८१ ॥ वीज्यन्ति वालव्यजनैर्विनीता महासुराः स्यन्दनवेदिकास्थाः ॥ अयःशिराः अश्वशिरा दुरापः शिविर्मतङ्गो विशिराः शताक्षः ॥ ८२ ॥ अयो निकुम्भः क्रथनश्च दानवो ररक्षिरे ते दश दानवाधिपम् ॥ पुराश्चराश्चैव सहस्रशोऽसुराः पदातयो दानवराजराक्षिणः ॥ ८३ ॥ शतघ्नचक्राशनिशक्तिपाणयः प्रजगुरग्रेऽनिलतुल्यवेगिनः ॥ घण्टाः सुशब्दास्तपनीयवद्धा आढम्बरागर्गरडिण्डिमाश्च ॥ ८४ ॥ महारवा दुन्दुभयश्च नेदू रथप्रयाणे दितिजेश्वरस्य ॥ तस्थोत्थितः काञ्चनवेदिकाद्यो हिरण्ययो दिव्यमहापताकः ॥ ८५ ॥ महाध्वजो वै तपनीयनद्धो रराज वीरस्य यथा धिवस्वान् ॥ समुच्छ्रितं काञ्चनमात्रपत्रं स्रक्काञ्चनी वक्षसि चास्य भाति ॥ ८६ ॥ समन्ततश्चाप्यसुराश्चरन्ति दैत्यर्षयः प्राञ्जलयो जयन्ति ॥ पुरोहिताः शत्रुवधे समाहितास्तथैव चान्ये श्रुतशीलवृद्धाः ॥ ८७ ॥ जपेश्व मन्त्रैश्च तथोषधीभिर्महात्मनः स्वस्त्ययनं प्रचक्रुः ॥ स तत्र वस्त्राणि शुभाश्च गावः फलानि पुष्पाणि तथैव निष्कान् ॥ ८८ ॥

और डिमडिमका शब्द बराबर होता था ॥ ८४ ॥ महाशब्दवाली दुंदुभी वजने लगी जिस समय उस दैत्याधितिका रथ चला, उसकी कांचन वेदीसे बड़ी दिव्य रथकी पताका स्थित थी ॥ ८५ ॥ वह महाध्वजा सुवर्णसे मढी सूर्यकी समान विराजमान थी सुवर्णका छत्र हो रहा था और सुवर्णकी माला इसकी छातीपर शोभित थी ॥ ८६ ॥ चारों ओर उसके असुर चले और दैत्योंके जयशब्द ऋषि करने लगे पुरोहित शत्रुवधका अनुष्ठान करने लगे इसी प्रकार और शास्त्रपाठी महात्मा स्थित थे ॥ ८७ ॥ जप मंत्र और औषधीसे इन महात्माकी स्वस्तिगा वन करने लगे वह वस्त्र गौ सुन्दर फल

फूल और अशरफी ॥८८॥ बालगोंके निमित्त प्रदान करने लगा और कुबेरकी समान शोभित होने लगा सहस्र सूर्य समान प्रकाशित बहुत किंकिणीसे युक्त उत्कृष्ट सुवर्णसे चित्रित ॥८९॥ सहस्र चन्द्रमा और अनन्त तारकाओंकी समान तथा अग्निकी समान रथमें वह वीर दानव धनुष बाण ग्रहण कर शोभित हुआ ॥९०॥ देवताओंकी सेनाको डराता हुआ बड़े भयंकर रूपको धारण करता हुआ वह वेगवान् वीर रथसमूहसे युक्त दैत्यसागर देवताओंके प्रति चला ॥९१॥ जिस प्रकार महासागरमें तरंगें उठती हैं तैसे वे भयंकर शरीरसे त्रिलोकके विनास करनेवाले वे दैत्य बालिके रथके आगे चले वे महा-

बलिर्द्विजेभ्यः प्रयतः प्रयच्छन्विराजतेऽतीव पथा धनेशः ॥ सहस्रसूर्यो बहुकिङ्किणीकः पराद्धर्यजाम्बूनदहेमचित्रः ॥ ८९ ॥ सहस्र-
चन्द्रायुन तारकश्च रथो बलरग्निरिवावभाति ॥ तमास्थितो दानवसंगृहीतं महाबलः कार्मुकधृक् सबाणः ॥ ९० ॥ उद्धर्तयिष्यन्
त्रिदशेन्द्रसेनामतीव रोद्रं स बिभर्ति रूपम् ॥ स वेगवान् वीररथो घसंकुलः प्रयाति देशान् प्रति दैत्यसागरः ॥ ९१ ॥ महार्णवो वीचि-
तरङ्गसंकुलो यथा जलौघैर्युगसंक्षये तथा ॥ त्रैलोक्यविनासकरैर्वपुर्भिस्तान्यग्रतो यान्ति बले रथस्य ॥ महाबलान्युच्छ्रितकार्मुकाणि
सपर्वतानो वनानि राजन् ॥ ९२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि बलेरुद्योगो नामैकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥
वैशम्पायन उवाच ॥ श्रुतस्ते दैत्यसैन्यस्य विस्तरो जनमेजय ॥ भूयस्त्रिदशसैन्यस्य शृणु विस्तरमादितः ॥ १ ॥ सुराधिपस्तु
भगवानाज्ञापयत वै सुरान् ॥ मरुद्गणांस्तथादित्यान् विश्वान् देवान् वासवः ॥ २ ॥ वसुनष्टौ भृशं सर्वान्यक्षरक्षो महोरगान् ॥ विद्याधर-
गणान्त सर्वान् गन्धर्वान् महाबलान् ॥ ३ ॥ महार्णवान् शैलान् तथा रुद्रान् महौजसः ॥ यमवेश्रवणौ चोभौ वरुणं च जनाधिपम् ॥ ४ ॥

बली धनुष हुए पर्वत और वनकी समान शोभित हुए ॥ ९२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां बलेरुद्योगो नामैकपञ्चा-
शत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥ वैशम्पायन बोले, हे जन्मेजय ! दैत्योंकी सेनाका विस्तार सुनाया अब देवताओंकी सेनाका विस्तार सुनो ॥ १ ॥ भगवान् इन्द्रने
देवताओंको आज्ञा दी मरुद्गण आदित्य विश्वेदेवा ॥ २ ॥ आठ वसु यक्ष रक्ष महोरग विद्याधर महाबली गन्धर्व ॥ ३ ॥ महार्णव शैल रुद्र यम वरुण ॥ ४ ॥

सिद्ध महात्मा पितर मनस्वी सैकड़ों योगसिद्ध राजर्षि ॥ ५ ॥ सबको वीर्यवान् इन्द्रने आज्ञा दी कि आप दैत्योंके नाश करनेको तैयार हो ॥ ६ ॥ शक्रके वचन सुन सब देवता इन्द्रकी समान पराक्रमी सब तैयार हो गये ॥ ७ ॥ सब अनेक कवच और विचित्र ध्वजा धारण किये अनेक आयुध लिये मत हाथीकी समान ॥ ८ ॥ कोई व्याघ्र कोई हाथी कोई नाग और कोई वृषोंपर चढ़े ॥ ९ ॥ हरितनेत्र हरितरश्मि ऐरावतसे आवृत ध्वजा हरित वर्णके घोड़ोंवाले रथमें चढ़ इन्द्र युद्धको गया ॥ १० ॥ सूर्यकी समान वर्ण मलीनतारहित स्वच्छ त्वष्टाके बनाये हुए रथमें कि जिसमें अनेक सुवर्णके

ये तु सिद्धा महात्मानः पितरश्च मनस्विनः ॥ राजर्षयश्च शतशो योगसिद्धास्तथैव च ॥ ५ ॥ त्रिदशान्नापकः शक्र आज्ञापयति वीर्यवान् ॥ भवन्तो दैत्यनाशाय सन्नहन्तामिति प्रभुः ॥ ६ ॥ शक्रस्य वचनं श्रुत्वा ततः सर्वे दिवोक्तः ॥ सन्नहन्त महात्मानः शक्रस्य सम-
विक्रमाः ॥ ७ ॥ नानाकवाचिनः सर्वे विचित्रकवचध्वजाः ॥ नानायुधोद्यतत्करा मत्ता इव महागजाः ॥ ८ ॥ केचिदारुरुहुर्व्याघ्रान्
केचिदारुरुहुर्गजान् ॥ केचिदारुरुहुर्नागान् केचिदारुरुहुर्वृषान् ॥ ९ ॥ हरिनेत्रो हरिश्मश्रुर्द्विरदैरावृतध्वजम् ॥ रथं हरिहयैर्युक्तं स प्राया-
त्समरंप्रति ॥ १० ॥ आदित्यवर्णं विरजं सुधौतं त्वष्टा स्वयं निर्मितमीश्वरार्थम् ॥ जालेश्च जाम्बूनदभक्तिचित्रैरलंकृतं काञ्चनशम-
भश्च ॥ ११ ॥ सकूबरोपस्करबन्धुरेषं विद्युत्प्रभाभिः कृतमाभिताम्रम् ॥ कैलासशृंगोपममिन्द्रयानं सुचारुचारुप्रतिचक्रचक्रम् ॥ १२ ॥
तारांसहस्रैः खचितं ज्वलद्भिर्देवार्हमाल्यार्चितं सर्वदेहम् ॥ समुच्छ्रितं श्रीध्वजमक्षयाक्षं प्रज्वाल्यमानं पुरुषोत्तमेन ॥ १३ ॥ आस्थाय
तं भास्करमाशुवेगं शचीपतिलोकपतिः सुरेशः ॥ वज्रस्य धर्ता भुवनस्य गोप्ता ययौ महात्मा भगवान्महेन्द्रः ॥ १४ ॥

झरोखे और सुवर्णकी माला शोभित थीं ॥ ११ ॥ कूबर उपस्करसे बिजुलीकी प्रभाकी समान शोभित थीं सुन्दर पहियोंसे युक्त इन्द्रका रथ कैलासके समान प्रकाशित होता था ॥ १२ ॥ सहस्र ताराओंकी समान प्रकाशित मालाओंसे अर्चित सम्पूर्ण देह समुच्छ्रित श्री अक्षय ध्वज और पुरुषोत्तमसे प्रकाशमान ॥ १३ ॥ सूर्यकी समान वेगवान् रथमें स्थित हो शचीपति लोकपति सुरेश वज्रका धारण करनेवाला भुवनका गोप्ता महेन्द्र चला ॥ १४ ॥

अग्निकी समान प्रकाशवाले सहस्र ताराओंसे युक्त वर्मको पहरकर सूर्यकी समान कान्तिमान् किरीट और जांबुनदयुक्त वैजयन्ती माला पहरे ॥ १५ ॥
त्वाष्ट्रके किये सूर्यकी किरणकी समान तीक्ष्ण घोर धारवाले असुरोंके रुधिरसे लिप्त सौ पर्ववाले वज्रको ग्रहण कर ॥ १६ ॥ महाग्रहकी समान दो
महा अशनि और अमोघ उग्रशक्ति और महाचक्र ग्रहण कर इन्द्र युद्ध करनेको चले ॥ १७ ॥ सहस्रदृक् भूतपति सनातन सनातनकेभी सनातन और
खड्ग तथा व्याघ्रचर्म लेकर ॥ १८ ॥ तथा जो भूषण क्षीरसागरके मथनेसे उत्पन्न हुए थे जो देवताओंने असुरोंसे जीते थे चन्द्र सूर्य नक्षत्र विजु-

आमुच्य वर्माथ सहस्रतारं हुताशनादित्यसमप्रभावम् ॥ सूर्यप्रभं चामुमुचे किरीटं मालां च जाम्बूनदवैजयन्तीम् ॥ १५ ॥ त्वष्टा कृतं
भास्कररश्मिदीप्तं सुतीक्ष्णघोरामलतीव्रधारम् ॥ महासुराणां रुधिरार्द्रमुग्रं प्रगृह्य वज्रं शतपर्व भीमम् ॥ १६ ॥ महाशनी द्वे च
महाग्रहाभे दीप्ताममोघां च स शक्तिमुग्राम् ॥ चक्रं तथेन्द्रं सुमहत्प्रतापं प्रगृह्य शक्रः प्रययौ रणाय ॥ १७ ॥ सहस्रदृग्भूतपतिः
सनातनः सनातनानामपि यः सनातनः ॥ खड्गं च देवाधिपतिर्महात्मा व्याघ्रमादाय च चर्म चित्रम् ॥ १८ ॥ क्षीरोदधिक्षोभसमु-
च्छ्रितानि पुरामृतादुत्तमभूषणानि ॥ देवासुराणां समानिर्जितानि सोमार्कनक्षत्रताडितप्रभाणि ॥ १९ ॥ तत्तान्यदित्या माणिकुण्डलानि
युद्धं प्रयातस्य सुरेश्वरस्य ॥ तैर्भूषितो भाति सहस्रचक्षुरुद्योतयद्वे विदिशो दिशश्च ॥ २० ॥ हरिः प्रभुर्नेत्रसहस्रचित्रो विभाति युद्धा-
भिमुखः सुरेन्द्रः ॥ यथा सितं शारदमभ्रकल्पं नभस्तलं ऋक्षसहस्रचित्रम् ॥ २१ ॥ स्तुवन्ति यान्तं विपुलैर्वचोभिर्जयाशिषा चोजि-
तसत्त्ववीर्यम् ॥ अत्रिर्वसिष्ठो जमदग्निरुर्वो बृहस्पतिर्नारदपर्वतो च ॥ २२ ॥

लीकी समान कान्तिवाले ॥ १९ ॥ तथा युद्धमें जाते हुए अदितिके कुंडलोंसे युक्त इन्द्र इस प्रकार शोभित हुआ कि मानो दशों दिशाओंको प्रकाशित
कर रहा है ॥ २० ॥ हरि प्रभु इन्द्र सहस्रनेत्रवान् युद्धके सन्मुख जाता महाशोभित हुआ जिस श्वेत शरदके मेघोंके बीचमें चित्रवर्ण आकाश तारोंसे
शोभित होता है ॥ २१ ॥ इन्द्रके चलनेपर अत्रि वसिष्ठ जमदग्नि उर्व बृहस्पति नारद और पर्वत अनेक प्रकारके आशीर्वादोंसे और श्रेष्ठ वचनोंसे इन्द्रकी
स्तुति करने लगे ॥ २२ ॥

उनके पीछे देवगण महेन्द्र सूर्यकी समान कान्तिमान् चले विश्वेदेवा मरुत साध्य आदित्यगण यह सब चले ॥ २३ ॥ और देवराज पुरन्दरके मातलिसे संगृहीत किये अश्व देवेश्वरको वहन कर आकाशमें पदविक्षेप करते चले ॥ २४ ॥ ब्रह्मर्षि महर्षि राजर्षि क्षीणपुण्यवाले लोक यह सब सहसा इन्द्रके पीछे तेजसे प्रकाशित होते चले ॥ २५ ॥ शूल परशु और विचित्र अशनि ग्रहण कर सूर्यकी कान्तिकी समान सुवर्णके कवच पहरे चले ॥ २६ ॥ इसी प्रकार कुबेरजी सर्व श्रेष्ठ सहस्र घोड़े जुते रथमें स्थित हो दीप्तिमान् गदा हाथमें ग्रहण कर युद्ध करनेको चले ॥ २७ ॥ अग्निकी समान भूप्रवर्णवाले तमन्वयुर्देवगणा महेन्द्रं प्रयान्तमादित्यसमानवर्चसम् ॥ विश्वे च देवा मरुतस्तथैव साध्यास्तथादित्यगणाश्च सर्वे ॥ २३ ॥ ते देव-राजस्य पुरन्दरस्य ह्याश्च ये मातलिसंगृहीताः प्रयान्ति देवेश्वरमुद्रहन्तो नभस्तलं पद्मिरीवाक्षिपन्तः ॥ २४ ॥ ब्रह्मर्षयश्चैव महर्षयश्च राजर्षयश्चाक्षयपुण्यलोकाः ॥ सर्वेऽनुजग्मुः सहसा ज्वलन्तं तेजोऽन्वितं शक्रमभिप्रसाहम् ॥ २५ ॥ प्रगृह्य शूलांश्च परश्वर्धांश्च दीप्तानि चापान्यशनीर्विचित्राः ॥ वर्माणि चामुच्य हिरण्मयानि प्रयान्ति सूर्यांशुसमप्रभाणि ॥ २६ ॥ तथा कुबेरोऽश्वसहस्रयुक्तं श्रेष्ठं रथं सर्वसहं महार्हम् ॥ दिव्यं समारुह्य रणाय यातो धनेश्वरो दीप्तगदाग्रहस्तः ॥ २७ ॥ निशाचराः पावकधूमकाया रक्षोवृषा रुद्रसखस्य तस्य ॥ विशालनानायुधक्षीप्तहस्ता यान्त्यग्रतो वैश्रवणस्य राज्ञः ॥ २८ ॥ ते लोहिताक्षाः परिवार्य देवं व्रजन्ति भिन्ना-अनचूर्णवर्णाः ॥ यक्षोत्तमा यक्षपति धनेशं रक्षन्ति वै पाशगदासिहस्ताः ॥ २९ ॥ पुण्यः प्रभुः प्राणपतिर्जितात्मा वैवस्वतो धर्म-मृतां वरिष्ठः ॥ तडिद्गणाभं शतवाजियुक्तं रथं समारोहत सूर्यकल्पम् ॥ ३० ॥ तं लोकपालं पितरोऽनुजग्मुर्विविक्तपापा ज्वलितास्त-पोभिः ॥ सर्वे च भूता भुवनप्रधाना नानायुधव्यग्रकराः सुभीमाः ॥ ३१ ॥

राक्षसवृष रुद्रके सखा विशाल अनेक प्रकारके आयुध हाथमें लिये कुबेरके आगे २ चले ॥ २८ ॥ वे लालनेत्र किये देवको घेरकर भिन्न अंजनकी समान वर्णवाले चले यक्षोंमें उत्तम यक्षपति धनेशको गदा पाश खड्ग हाथमें लिये चले ॥ २९ ॥ पुण्य प्रभु प्राणपति जितात्मा वैवस्वत धर्मधारियोंमें श्रेष्ठ बिजलीकी समान प्रकाशित सौ घोड़ोंसे युक्त सूर्यकी समान प्रकाशित रथमें चढ़ा ॥ ३० ॥ उनके पीछे पापरहित तपसे प्रकाशमान पितर गये यह

सब भुवनप्रधान नानाभयंकर आयुध हाथमें लिये थे ॥ ३१ ॥ यह देव महाभय दण्डको हाथमें लिये जो साक्षात् लोकके निग्रहका अंकुश था और गलेमें सुवर्णके बने हुए कमलोंकी माला पड़ी हुई थी ॥ ३२ ॥ अस्थि मेद आमिषसे लित शरीर सब असुरोंको मारनेमें विरूप तेजोमय उग्ररूप सुदूर हाथमें लिये उसे खेंचते धूम्रनेत्र ॥ ३३ ॥ सैकड़ों व्याधिपोंसे युक्त हरितश्मश्रु उदारसत्त्व व्याधिपति काल महाअसुरोंके मारनेकी इच्छा करने लगे ॥ ३४ ॥ तीन शिरके सर्प उस रथको वहन करते थे सब सुवर्णनिर्मित रथ था उस रथमें कुंद और चन्द्रमाकी समान प्रकाशमान जलेश स्थित

दण्डं महास्रं परिगृह्य देवो लोकाङ्कुशं निग्रहनिश्चितार्थम् ॥ हिरण्मयानां कमलोत्पलानां मालां मनोज्ञामवसृज्य कण्ठे ॥ ३२ ॥ स्थितोऽस्थिमेदामिषलोहिताद्रिं सर्वासुराणां निधनं विरूपम् ॥ तेजोमयं सुदूरमुग्ररूपं विकर्षमाणोऽरुणधूम्रनेत्रः ॥ ३३ ॥ सम-
विन्वतो व्याधिशतैरनेकैर्ययौ हरिश्मश्रुरुदारसत्त्वः ॥ महासुराणां निधनाय बुद्धिं चक्रे तदा व्याधिपतिः कृतान्तः ॥ ३४ ॥ ततस्त्रिंशी-
र्षेभ्युजगेर्बृहद्भिर्युक्तं रथं हेमचितं महात्मा ॥ आस्थाय कुन्देन्दुनिभं जलेशो ययौ रणायामुरदर्पहन्ता ॥ ३५ ॥ वैदूर्यमुक्तामणिभू-
षिताङ्गस्तेजोमयः पाशगृहीतहस्तः ॥ महासुराणां निधनाय देवः प्रयाति रूप्याङ्गद्वन्द्वबाहुः ॥ ३६ ॥ कैलासशृङ्गप्रतिमोऽप्रमेयः
समुद्रनाथोऽमृतपो महात्मा ॥ महोरगेः स्वेस्तनयैः सुगुप्तो ययौ रथेनार्कसमप्रभेण ॥ ३७ ॥ युद्धाय तं यान्तमदीनसत्त्वं नभस्तले
चन्द्रमिवातिकान्तम् ॥ पश्यन्ति भूतानि महानुभावं संहृष्टरोमाणि कृताञ्जलीनि ॥ ३८ ॥ धातार्यमांशोऽथ भगो विवस्वान्पर्जन्यमित्रौ
च शशी च देवः ॥ त्वष्टा तथैवोर्जितविश्वकर्मा पूषा च साक्षाद्विवि देवराजः ॥ ३९ ॥

होकर असुरोंका दर्प चूर्ण करनेको चले ॥ ३५ ॥ वैदूर्य मुक्तामणिसे भूषित शरीर तेजोमय पाश हाथमें लिये रूप्यके बाजू हाथमें बांधे वरुणजी महासुरोंके मारनेको चले ॥ ३६ ॥ कैलासके शृंगकी समान समुद्रपति अमृत पीनेवाले महात्मा वरुण महासुरों और अपने पुत्रोंसे रक्षित हुए सूर्यकी समान रथमें स्थित हो गये ॥ ३७ ॥ युद्धके निमित्त जाने वे ऐसे शोभित हुए जैसे आकाशमें चन्द्रमा जाता है उन महानुभावको प्रसन्न चित्तसे हाथ जोड़कर सब प्राणी देखने लगे ॥ ३८ ॥ धाता अर्षमा अंश भग विवस्वान् पर्जन्य मित्र शशी देव त्वष्टा ऊर्जित विश्वकर्मा पूषा और साक्षात् देव-

राज ॥ ३९ ॥ यह सब सूर्यके ढकनेवाली ध्वजा किकिणीसे युक्त वैदूर्य और अशरफीके कंठे कंठमें बांधे इन्द्रके रथको प्रकाश करनेवाले सुन्दर घोड़ोंसे जुते रथमें यह देवता स्थित हुए ॥ ४० ॥ कोई सूर्यके समान आकारवाले कोई अग्निकी समान प्रभावाले कोई चन्द्रमाकी समान कान्तिमान् कोई विजलीकी समान प्रकाशित ॥ ४१ ॥ कोई नील प्रकाशित मेघकी समान कोई लृणलोहकी समान दिव्यकान्तिमान् वस्त्र धारण किये जो उत्तम प्रकाशमान विश्वकर्माके बनाये थे ॥ ४२ ॥ जो सुवर्णपुष्पकी माला पहरे जलपवनकी समान वेगसे चलते थे दोनों अश्विनीकुमार महानुभाव

सोरच्छदेः सध्वजकिङ्किणीकैर्वैदूर्यनिष्कैश्चितहेमकण्ठैः ॥ हयैर्वरेः शक्ररथप्रकाशैर्युक्तान् रथानारुरुहुः सुरास्ते ॥ ४० ॥ दिवाकराकार-
निभानि केचिद्धृताश्वनार्चिःप्रतिमानि केचित् ॥ निशाकरांशुप्रातिमानि केचित्तिडिङ्गणोद्योतनिभानि केचित् ॥ ४१ ॥ नीलांशुमेघ-
प्रतिमानि केचित्कार्णायसाकारनिभानि केचित् ॥ वर्माणि दिव्यानि महाप्रभाणि त्वष्टा कृतान्युत्तमभानुमान्ति ॥ ४२ ॥ आमुच्य
मालाश्च सुवर्णपुष्पाः प्रयान्ति तोयानिलतुल्यवेगाः ॥ द्वावश्विनौ चैव महानुभावौ रूपोत्तमौ धर्मभृतां वरिष्ठौ ॥ ४३ ॥ रथं समारुह्य
सुवर्णचित्रं रणं गतौ काञ्चनतुल्यवर्णौ ॥ भानोः सुता वे वसवश्च सर्वे बलोत्कटा दैत्यवधाय देवाः ॥ ४४ ॥ रथांश्च नागांश्च महाप्र-
माणानास्थाय जग्मुः सुशुभास्त्रहस्ताः ॥ रुद्राश्च सर्वेऽरुणधूमवर्णाः श्वेतैर्ययुर्गोपतिभिर्वृहद्भिः ॥ ४५ ॥ महोजसः सर्वगुणोपपन्ना
दीप्तात्मनो भाभिरिव ज्वलन्तः ॥ नानायुधव्यग्रकरोर्भुजैस्तेलोकान्तसमस्तानिव निर्दहन्तः ॥ ४६ ॥

रथमें अतिश्रेष्ठ धर्म धारण करनेवालोंमें परम श्रेष्ठ ॥ ४३ ॥ कांचनकी तुल्य वर्णवाले दोनों सुवर्णके रथमें चढ़कर युद्ध करनेको गये भानुके पुत्र आठों वसु बली दैत्योंके वध करनेको चले ॥ ४४ ॥ यह सुन्दर अस्त्र धारण किये महाप्रमाणवाले रथ और हाथियोंमें स्थित होकर चले अरुण धूमवर्णवाले सम्पूर्ण रुद्र श्वेत प्रकाशमान वृषके ऊपर स्थित हो चले ॥ ४५ ॥ यह महापराक्रमी सम्पूर्ण गुणोंसे उत्पन्न दीप्तिमान् अपनी कान्तिसे प्रकाशित होते हुए अनेक आयुधोंसे पूर्ण भुजावाले सम्पूर्ण लोकोंको भस्म करते हुए ॥ ४६ ॥

तपनीय कवच पहरे विजलीयुक्त बादलकी समान चले और तपसे प्रकाशमान विश्वेदेवा सूर्यकी किरणोंकी समान वर्णवाले तपसे प्रकाशित श्रेष्ठ बली ॥ ४७ ॥ आयुधोंसे दुर्निवार्य सेना साथ लेकर चले यह बड़े बली सहस्र कमलोंकी माला पहरे सुवर्णके रथसे युक्त जिनमें मुक्तामणि विचित्र जटित थी ॥ ४८ ॥ वे अनेक प्रकारके आकारवाले श्वेतछत्र धारे जो तेजोमय सुवर्णसे चित्रित और निर्मल थे तथा अग्निकी समान कान्तिमान् थे ॥ ४९ ॥ हृदय आच्छादन करनेवाली वस्तु धारे ध्वजा किंकिणीसे युक्त वायुसमान वेगगामी घोड़ों तथा कैलासके शृंग और दिशाके हाथियोंकी

ययुः ससैन्यास्तपनीयनद्धाः सविद्युतस्तोयधरा यथैव ॥ विश्वे च देवास्तपसा ज्वलन्तो वीर्योत्तमाः सूर्यमरीचिवर्णाः ॥ ४७ ॥ ययुः ससैन्या युधि दुर्निवार्या बलोत्कटा पद्मसहस्रमालाः ॥ रथैः सुयुक्तेस्तपनीयवर्णैर्वैदूर्यमुक्तामणिदामचित्रैः ॥ ४८ ॥ नानाविधाकार- समाकुलास्ते पारिप्लवैश्चैव सितातपत्रैः ॥ तेजोमयैः काञ्चनचारुचित्रैः सुनिर्मलैः पावकसन्निभास्ते ॥ ४९ ॥ उरश्छदैः सध्वजकिङ्किणी- कर्हयैश्च वायोः समवेगवद्भिः दिशां गजैश्चैव महाबलैस्तेः कैलासशृङ्गप्रतिमैर्महाद्भिः ॥ ५० ॥ प्रजग्मुरग्रायुधचापहस्ताश्चतुर्युगान्ते ज्वलिता इवोल्काः ॥ साध्याश्च देवाः सुमहाप्रभावाः स्वाधीनचक्राः प्रतिदीप्तवक्राः ॥ प्रयान्ति जाम्बूनदभूषिताङ्गा गाङ्गोघमात्रैर्गगने- बलोघैः ॥ ५१ ॥ विद्योतयन्तो विदिशो दिशश्च महाबलास्ते जयतां वरिष्ठाः ॥ वरिष्ठपुष्टौष्ठभुजाः सुहृता वैश्वानरार्कप्रतिमप्र- भावाः ॥ ५२ ॥ ते ब्रह्मविद्भिश्च समस्यमानाः संपूज्यमानाश्च सुरैः सशक्रैः ॥ गन्धर्वसंघैरनुगम्यमाना वधाय तेषामसुराधिपानाम् ॥ ५३ ॥ वैदूर्यवज्रस्फटिकाग्रचित्रैर्ध्वजैः सुवर्णैश्च परिष्कृतानाम् ॥ रूपं बभौ चोत्कटभूषणानां दैत्येन्द्रनाशाय विभूषितानाम् ॥ ५४ ॥

समान महाहाथी ॥ ५० ॥ यह सब हाथमें धनुष तथा दूसरे आयुध लिये चतुर्युगके अन्तमें प्रज्वलित उल्काकी समान चले महाप्रभाववाले साध्य देवता अपनी आधीन सेनावाले प्रदीप्त मुख सुवर्णसे भूषित अंग गंगाके समूहकी समान बड़ी सेना लिये आकाशमें चले ॥ ५१ ॥ दशों दिशाओंको प्रकाशित करते महाबली तेजसे प्रदीप्तिमान् हम पुष्ट भुजावाले सूर्य और अग्निकी समान प्रभाववाले ॥ ५२ ॥ ब्रह्मज्ञानियोंसे समस्यमान देवता तथा इन्द्रसे पूजित गन्धर्वसेनाको साथ लिये दैत्योंके मारनेको चले ॥ ५३ ॥ वैदूर्य वज्र और स्फटिकमणियोंसे युक्त सुवर्णसे अलंकृत अनेक भूषण पहरे

उन दैत्योंके नाश करनेवालोंका रूप महाशोभित हुआ ॥ ५४ ॥ युद्धमें उत्कट अपनी कान्तिपोंसे तथा अंधकार दूर करनेवाली कवचोंकी कान्तिसे उत्तम ध्वजा और अपने शरीरकी कान्तिसे तथा उज्ज्वल प्रज्ञाओंसे ॥ ५५ ॥ साध्यों सहित वे देवता शंख बजाते शोभित होते थे ॥ ५६ ॥ वे महा-
पला महारथी देवता रथोंमें बैठकर दैत्योंसे युद्ध करनेको चले वे उग्रकाय देवता हाथोंमें महाअस्त्र लिये दैत्योंके मारनेको चले ॥ ५७ ॥ इसी प्रकार और दूसरे महाबली बलोट्कट समर करनेवाले महामेघकी समान वर्णवाले चक्र हाथमें लिये मेघकी समान शब्द करनेवाले ॥ ५८ ॥ महेन्द्रकी केतुकी आत्मप्रभाभिश्च रणोत्कटाभिर्वर्मप्रभाभिश्च तमोनुदाभिः ॥ ध्वजोत्तमाभिः ॥ स्वशरीरभाभिर्महाप्रभाभिश्च महोज्ज्वलाभिः ॥ ५९ ॥ विभान्ति ते देववराः सप्ताध्याः प्रध्मातशङ्खस्वनासिंहनादाः ॥ ६० ॥ महारथस्थास्त्रिदिवौकसस्ते महाबलाः शत्रुबलं प्रयान्ति ॥ महास्त्र-
हस्ता ययुरुग्रकाया महासुराणां निधनाय देवाः ॥ ६१ ॥ तथैव सर्वे महतोऽतिवीर्या बलोट्कटास्ते समरं प्रतीताः ॥ ययुर्महामेघसमान-
वर्णाश्चक्रायुधास्तोयदनादनादाः ॥ ६२ ॥ महेन्द्रकेतुप्रतिमा महाबलाः प्रगृह्य सर्वासुरसूदनां गदाम् ॥ रणोत्कटा लोहितचन्दनाक्ताः
सहेममाल्याम्बरभूषिताङ्गाः ॥ ६३ ॥ ते युद्धशौण्डाः सुभुजास्त्रवीर्या बलोट्कटाः क्रोधविलोडिताक्षाः ॥ ययुः सजाम्बूनदपद्ममाला-
यथेष्टनानाविधकामरूपाः ॥ खगप्रभाइयामलितांसपीठाः पुरंदरं वै परिवार्य देवाः ॥ ६४ ॥ वैदूर्यचामीकरचारुरूपाण्याबध्य गात्रेषु
महाप्रभाणि ॥ वर्माणि दैत्यास्त्रनिवारणानि प्रयान्ति युद्धाय सपत्नसाहाः ॥ ६५ ॥ तैरुत्थितैः काश्चनवेदिकाद्यैर्वरध्वजैर्भास्कररश्मि-
वर्णैः ॥ ययौ सुराणां पृतनोग्रभासा समुन्नदन्ती युधि सिंहनादान् ॥ ६६ ॥

समान महाबली सब असुरसंहारिणी गदाको ग्रहण करे युद्धमें बड़े वीर लाल चंदन लगाये सुवर्णकी माला और श्रेष्ठवस्त्रोंसे भूषित ॥ ५९ ॥ युद्धके वीर भुजाओंमें शस्त्र लिये क्रोधसे लाल नेत्र किये सुवर्णके कमलोंकी माला पहरे कामरूप खड्गकी कान्तिसे कंधेको श्यामवर्ण किये इन्द्रको घेरे सब देवता ॥ ६० ॥ वैदूर्य मणियोंसे जड़े सुवर्णके महाकान्तिमान् वरुतर पहरे दैत्योंके निवारण करनेवाले देवता युद्ध करनेको चले ॥ ६१ ॥ सुवर्णकी वेदिकाओंमें जड़ी सुवर्णकी ध्वजा जिनका सूर्यकी समान प्रकाश था उससे युक्त देवताओंकी सेना महासिंहनाद करती चली ॥ ६२ ॥

इस प्रकार इन्द्रकी महाप्रभावशाली सेना चली वे असुरोंके जय करनेको और उनके मारनेके विभिन्न चले ॥ ६३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरि-
वंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामनप्रादुर्भावे द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५२ ॥ वैशम्पायन बोले, उस समय देवता और दैत्योंका विग्रह अद्भुत रूप दीखने
लगा जैसे युगान्तमें अपनी मर्यादाको त्याग कर दो समुद्र मिलते हैं ॥ १ ॥ अनेक प्रकारके आयुधोंकी ज्योतिसे प्रदीप्त शरीर महाबली धनुष चढ़ाये
युद्धमें उत्सुक हाथीकी सूंडकी समान हाथवाले दुर्जयमेवकी समान शब्दवाले ॥ २ ॥ सहसा धनुषको चढ़ाये सूर्यकी समान कान्तिमान् चक्र लिये

इत्येवमुक्तं त्रिदिवेश्वरस्य सैन्यं तदासीत्सुमहत्प्रभावम् ॥ युद्धं प्रयातस्य जयावहस्य वधाय तेषामसुराधिपानाम् ॥ ६३ ॥ इति श्रीम-
हाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः प्रवृत्तोऽसुर-
देवविग्रहस्तदद्भुतो भाति सुरासुराकुलः ॥ वेलामातिक्रम्य युगान्तकाले महार्णवान्योन्यमिवाश्रयन्तः ॥ १ ॥ नानायुधोद्योतविदीपि-
ताङ्गा महाबला व्यायतकार्मुकास्ते ॥ रणोत्सुका वारणहस्तहस्ताः सुदुर्जयास्तोयदनादनादाः ॥ २ ॥ विस्फारयन्तः सहसा धनुषि
चक्राणि चादित्यसमप्रभाणि ॥ समुत्क्षिपन्तो ह्यशनीश्च घोरान्खड्गान्श्च ते वज्रमुखाश्च शक्तीः ॥ ३ ॥ महागदाः काञ्चनपट्टनद्धास्तथा-
यसान्कार्मुकमुद्गरान्श्च ॥ शूलान्श्च वृक्षांश्च विगृह्य दीप्तान्नदन्ति शूराः शतशो रणस्थाः ॥ ४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतस्मिन्नन्तरे
तेषामन्योन्यमभिनिघ्नताम् ॥ द्वन्द्वयुद्धान्यवर्तन्त देवानां दानवैः सह ॥ ५ ॥ मरुतां पञ्चमो यस्तु स बाणेनाभ्ययुध्यत ॥ महाबलः
सुरवरः सावित्र इति यं विदुः ॥ ६ ॥ अनायुषायाः पुत्रस्तु बलो नाम महासुरः ॥ सोऽयुध्यत रणेऽप्युग्रो ध्रुवेण वसुना सह ॥ ७ ॥

घोर अशनि फेंकते खड्ग और वज्रमुख शक्ति छोड़ते ॥ ३ ॥ सुवर्णकी पट्टियोंसे जड़ी महागदा लोहेके धनुष और सुदूर शूल और वृक्ष ग्रहण कर
रणमें स्थित हो मत्त हुए सैकड़ों शूर शब्द करने लगे ॥ ४ ॥ वैशम्पायन बोले, इस समय परस्पर प्रहार करते उन देवता और दानवोंका द्वंद्व युद्ध
होने लगा ॥ ५ ॥ मरुतोंमें जो पांचवां है वह बाणके साथ युद्ध करने लगा महाबली देवताओंमें श्रेष्ठ जिसको सावित्र कहे हैं ॥ ६ ॥ अनायुषाका

पुत्र बल नाम महासुर वह महाउग्र वसुके साथ युद्ध करने लगा ॥ ७ ॥ नमुचि असुरश्रेष्ठ धरके संग युद्ध करने लगा श्रेष्ठ देवताओंके विश्वकर्मा प्रवरके संग युद्ध करने लगे ॥ ८ ॥ महादैत्य पुलोमा वायुके साथ युद्ध करने लगा वह पर्वताकार सेनासहित युद्ध करने लगा ॥ ९ ॥ हयग्रीव दितिपुत्र पूषाके साथ युद्ध करने लगा वह शूर महावीर्यवान् सूर्यकी समान कान्तिमान् थे ॥ १० ॥ महादैत्य महामाया करनेवाला महाअसुर शम्बर युद्धदुर्मद भगदेवताके साथ युद्ध करने लगा ॥ ११ ॥ शरभ और शलभ दैत्योंमें चन्द्रसूर्यकी समान सोमसे शैशिरास्रद्वारा युद्ध करने लगे ॥ १२ ॥ बलवान्

नमुचिश्चासुरश्रेष्ठो धरेण सह युध्यत ॥ प्रवरौ विश्वकर्माणौ ख्यातौ देवासुरेश्वरौ ॥ ८ ॥ पुलोमा तु महादैत्यो वायुना सह युध्यत ॥ ससैन्यः पर्वताकारो रणेऽयुध्यत दांशितः ॥ ९ ॥ हयग्रीविस्तु दितिजः सह पूष्णा त्वयुध्यत ॥ शूरेणामितवीर्येण भास्कराकारवर्चसा ॥ १० ॥ शम्बरस्तु महादैत्या महामायो महासुरः ॥ भगेनायुध्यत तदा सहितो युद्धदुर्मदः ॥ ११ ॥ शरभः शलभश्चैव दैत्यानां चन्द्रभास्करो ॥ प्रयुद्धौ सह सोमेन शैशिरास्रेण धीमता ॥ १२ ॥ विरोचनस्तु बलवान्बलैर्बलवतः पिता ॥ विष्वक्सेनेन साध्येन देवेन च स युध्यत ॥ १३ ॥ कुजम्भस्तु महातेजा हिरण्यकशिपोः सुतः ॥ अंशेनायुध्यत तदा प्रासप्रहरणेन वै ॥ १४ ॥ असिलोमा तु बलिना मारुतेन समं विभो ॥ तदायुध्यत दीप्तास्यो विकृतः पर्वतायुधः ॥ १५ ॥ अनायुषायाः पुत्रस्तु वृत्रो नाम महासुरः ॥ अश्विभ्यां देववैद्याभ्यां सह युध्यत संयुगे ॥ १६ ॥ एकचक्रस्तु दितिजश्चक्रहस्तो दुरासदः ॥ सहायुध्यत देवेन साध्येन दितिजारिणा ॥ १७ ॥ बलस्तु मधुपिङ्गाक्षो वृत्रभ्राता महासुरः ॥ मृगव्याधेन रुद्रेण सहायुध्यत वीर्यवान् ॥ १८ ॥

विरोचन बलिका पिता विष्वक्सेन साध्यदेवके संग युद्ध करने लगा ॥ १३ ॥ महातेजस्वी कुजम्भ हिरण्यकश्यका पुत्र प्रासप्रहारद्वारा अंशके संग युद्ध करने लगा ॥ १४ ॥ असिलोमा महाबलि मारुतके संग युद्ध करने लगा तब पर्वत आयुध लिये दीप्तमुख युद्ध करने लगा ॥ १५ ॥ अनायुषाका पुत्र वृत्रनामक महाअसुर देववैद्य अश्विनीकुमारोंके संग युद्ध करने लगा ॥ १६ ॥ एकचक्र दितिपुत्र चक्र हाथमें लिये दुरासद दैत्योंके शत्रु साध्यके साथ युद्ध करने लगे ॥ १७ ॥ मधुपिङ्गलनेत्र वृत्रका भ्राता बल महाबली मृगव्याध रुद्रके साथ युद्ध करने लगा ॥ १८ ॥

विकृताकार राहु शतशीर्षकासहोदर अभय हो अजैकपादके संग युद्ध करने लगा ॥ १९ ॥ दानवश्रेष्ठ केशी वर्षाकालीन मेघकी समान कान्तिमान् भीम धनेश्वरके साथ संग्राम करने लगा ॥ २० ॥ बली वृषपर्वा महारणमें निकुंभके साथ युद्ध करने लगा विश्वेदेवके संग बली विश्वेशका युद्ध होने लगा ॥ २१ ॥ महाबली प्रह्लाद अपने वार पुत्रोंसे युक्त रणमें दूसरे कालकी समान कालसे युद्ध करने लगा ॥ २२ ॥ अनुहाद धनद कुबेरसे संग्राम करने लगा यह गदा हाथमें लिये रिपुवाहिनीको शोभित करते युद्ध करने लगे ॥ २३ ॥ दैत्य विप्रचित्ति महात्मा वरुणके साथ दैत्योंके आनन्दका बढ़ानेवाला रण करनेको प्रवृत्त हुआ ॥ २४ ॥

राहुस्तु विकृताकारः शतशीर्षा सहोदरः ॥ अजैकपादेन रणे सहायुध्यत दंशितः ॥ १९ ॥ केशी तु दानवश्रेष्ठः प्रावृट्कालाम्बुदप्रभः ॥ धनेश्वरेण भीमेन सहायुध्यत संयुगे ॥ २० ॥ वृषपर्वा तु बलिना निकुम्भेन महारणे ॥ विश्वेदेवेन विश्वेशः सहायुध्यत वीर्यवान् ॥ २१ ॥ प्रह्लादस्तु महावर्यो वीरः स्वैस्तनयैर्वृतः ॥ युयुधे सह कालेन रणे काल इवापरः ॥ २२ ॥ अनुहादः कुबेरेण धनदेन महारणे ॥ गंदाहस्तेन युयुधे शोभयन् रिपुवाहिनीम् ॥ २३ ॥ विप्रचित्तिस्तु दैतेयो वरुणेन महात्मना ॥ प्रवृत्तो वै रणं कर्तुं दैत्यानां नन्दि-
वर्द्धनः ॥ २४ ॥ बलिस्तु सह शक्रेण सुरेशेन महात्मना ॥ युयुधे देवराजेन बलिना बलवान्रणे ॥ २५ ॥ शेषा देवाश्च दैत्याश्च
जघ्नुरन्योन्यमाहवे ॥ विनर्दन्तो महानादान् प्रासासिंशरशक्तिभिः ॥ २६ ॥ अट्टश्यन्त महोत्पाता ये प्रोक्ता जगतः क्षये ॥ मारुताः
सप्त ते क्षुब्धा व्यशीर्यन्त महीधराः ॥ २७ ॥ सप्त चैवोत्थिताः सूर्याः शोषयन्तो महार्णवान् ॥ बहुनाभिघ्नत धरा वायुना
मथिता यथा ॥ २८ ॥ व्युत्थिताश्च महामेघाः शक्रचापाङ्कितोदराः ॥ प्रणेदुः सर्वभूतानि सर्वाः सतिमिरा दिशः ॥ २९ ॥

महाबली राजा बली युद्धमें देवराज इन्द्रके साथ संग्राम करने लगा ॥ २५ ॥ शेष देवता और दैत्य परस्पर एक दूसरेको मारने लगे प्राप्त शक्ति बाण हाथमें लिये शब्द करने लगे ॥ २६ ॥ उस समय जगत्क्षयकारक अनेक उत्पात होने लगे सातों पवन वेगसे चलने लगीं सागर क्षुभित हो गये ॥ २७ ॥ महासागर सोखनेको सात सूर्य उदय हो गये और वायुसे मथित हो पृथ्वी चलायमान होने लगी ॥ २८ ॥ चक्रकी पंक्तिवाले अनेक मेघ उदय हो

गये सब भूत शब्द करने लगे और दिशाओंमें अंधकार छा गया ॥ २९ ॥ उस समय कालनिर्मित देवताओंकी घोर अजय दिखाई देने लगी युगान्त-
कालकी समान घोर उत्पात दिखाई देने लगे ॥ ३० ॥ उस समय अन्तरिक्ष दिशा भूमि सूर्य धूर उठनेके कारण नहीं दीखते थे पवन वेगसे चली जिससे
धुमेली हो दिशा अंधकारसे आच्छादित हो गई ॥ ३१ ॥ इस प्रकारसे बहुतसे उत्पात देवनिर्मित भूमि और अन्तरिक्षमें दिखाई देने लगे ॥ ३२ ॥
वह देवता और दैत्योंका भयंकर युद्ध श्रेष्ठ देवताओंको साथ लिये सुरुगुरु ब्रह्माजी देखते थे ॥ ३३ ॥ अंगोंसहित चार वेद तथा चौदह विद्याओंके
देवानामजयो घोरो दृश्यते कालनिर्मितः ॥ घोरोत्पातः समुद्भूतो युगान्तसमये यथा ॥ ३० ॥ न ह्यन्तरिक्षं न दिशो न भूमिर्न
भास्करोऽदृश्यत रेणुजालैः ॥ ववुश्च वातास्तुमुलाः सुधूमा दिशश्च सर्वास्तिमिरोपगूढाः ॥ ३१ ॥ एते चान्ये च बहवो दृश्यन्ते
देवनिर्मिताः ॥ भूमौ तथान्तरिक्षे च महोत्पातः समन्ततः ॥ ३२ ॥ तद्युद्धं देवदेत्यानां भीमानां भीमदर्शनम् ॥ अपश्यत
गुरुर्ब्रह्मा सर्वेरेव सुरैः सह ॥ ३३ ॥ वेदैश्चतुर्भिः साङ्गैश्च विद्याभिश्च सनातनः ॥ पद्मयोनिर्वृतः श्रीमान्सिद्धेश्च परमर्षिभिः ॥ ३४ ॥
नानामणिस्तम्भसः सचित्रमारुह्य यानं ददृशे स्वयंभूः ॥ सुभास्वरं भूतसहस्रयुक्तं प्रदीप्यमानं वपुषा वरेण ॥ ३५ ॥ सुतप्तजाम्बूनदभ-
क्तिचित्रमानन्दभेरीशतसंप्रणादम् ॥ नक्षत्रचण्डांशुभिरंशुमन्तं वैडूर्यसोमार्कविभूषिताङ्गम् ॥ ३६ ॥ तमात्मजो वै पुलहः
पुलस्त्यस्तथा मरीचिर्भृगुरङ्गिराश्च ॥ ऋक्सामभिः सम्यगभिष्टुवन्तः सेवन्ति देवं वरदं विमाने ॥ ३७ ॥ तं पावका लोकगुरुं
स्वयंभुवं सांगाश्च वेदा मखदेवताश्च ॥ सेवन्ति देवं भुवनेश्वरेशं भूतानि चान्यानि महानुभावम् ॥ ३८ ॥

सहित वह सनातन पद्मयोनि परमर्षियोंके साथ ॥ ३४ ॥ अनेक प्रकारकी मणियोंसे जड़ित सहस्र स्तंभवाले विमानमें स्थित होकर जो कि महाका-
न्तिमान् सहस्र भूतोंसे युक्त शरीरकी कान्तिसे प्रकाशमान् ॥ ३५ ॥ तपाये हुए सुवर्णकी भक्तिसे चित्रित अनेक भेरियोंके शब्दोंसे शब्दायमान नक्ष-
त्रोंकी प्रभासे प्रभावयुक्त वैडूर्यमणिसे युक्त चन्द्रसूर्यकी समानतासे विभूषित ॥ ३६ ॥ उनके पुत्र पुलह पुलस्त्य मरीचि भृगु अंगिरा ऋक्सामादि
वेदोंसे स्तुतिको प्राप्त हुए तथा देवताओंसे सेवित वरदाता विमानमें स्थित थे ॥ ३७ ॥ उन लोकगुरु स्वयंभूको अग्नि अंगोंसहित वेद मख देवता

सेवन करते थे तथा औरगी प्राणी उन महानुभाव भुवनेश्वरकी सेवा करते थे ॥ ३८ ॥ यह महर्षिसमूह वैश्वानर पावकयोनिवाले देवपुरोहित यह सब देवता और दैत्योंका युद्ध देखनेकी इच्छासे गये ॥ ३९ ॥ सनक सनख्यन सनातन सनत्कुमार कपिल जैगीषव्य यह छः योगीश्वर सूर्यकी समान कान्तिमान् अनेक भूषण धारण किये तथा नर और नारायण यह आकाशमें अन्तर्हित स्थित हुए युद्ध देखने लगे ॥ ४० ॥ सम्पूर्ण चन्द्रमाकी समान कान्तिमान् मुखोंमें चारों वेद धारण किये ब्रह्माजीने शरदके चन्द्रमाकी समान सब दिशा निर्मल कर दीं ॥ ४१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां देवासुरयुद्धे सनकादिगमनं नाम त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥ वैशम्पायन बोले, हे राजन् ! दोनों सेनाओंका फिर युद्ध होने

एते बभूवुश्च महर्षिसंवा वैश्वानराः पावकयोनयश्च ॥ सर्वे ययुर्देवपुरोहिताश्च युद्धोत्सुकाः सर्वसुरासुराणाम् ॥ ३९ ॥ योगेश्वराः षट् च दिवाकराभा विभूषणेर्भूषितसर्वदेहाः ॥ अन्तर्हिता वै दृढशुर्नभस्था नारायणश्च नरश्च देवाः ॥ ४० ॥ वक्रैश्चतुर्वेदधरैश्चतुर्भिः सम्पूर्ण-चन्द्रप्रतिमैः सुकान्तेः ॥ सर्वा दिशो निस्तमिराश्चकार नवोदितोऽसौ शरदीव चन्द्रः ॥ ४१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि देवासुरयुद्धे सनकादिकागमनं नाम त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ उभयोः सेनयो राजन् भूयो युद्धमवर्त्तत ॥ नादेन संचालयतां त्रैलोक्यमिदमव्ययम् ॥ १ ॥ गोमुखाडम्बराणां च भेरीणां मुरजैः सह ॥ झलरीडिण्डिमानां च व्यश्रूयन्त महास्वनाः ॥ २ ॥ प्रवृत्तो युद्धयज्ञस्तु तुमुलो लोमहर्षणः ॥ रणमध्ये महानादः स्वर्गीयः शूरसंमतः ॥ ३ ॥ युद्धयज्ञस्य नेताभूत्प्रहादो दैत्यसत्तमः ॥ विरोचनस्तथाध्वर्युर्धुद्धयज्ञप्रवर्त्तकः ॥ ४ ॥ होतु चैवात्र नमुचिर्बृत्रः स्तोत्रोपकल्पकः ॥ मन्त्रा दैत्याः समाख्याता यज्ञकर्मणि तत्र वै ॥ ५ ॥ अनुयातश्च पितृभिरधिको वा पराक्रमैः ॥ यज्ञे तत्राभवद्वाणः संयुगे चोपतिष्ठते ॥ ६ ॥

लगा उनके नादसे त्रिलोकी चलायमान हो गई ॥ १ ॥ गोमुख आडम्बर भेरी मुरज झलरी डिमडिमका महाशब्द होने लगा ॥ २ ॥ वह बडा तुमुल और लोमहर्षण युद्ध यज्ञ फिर प्रवृत्त हुआ वह रणमें महानाद स्वर्गीय और शूरसम्मत हुआ ॥ ३ ॥ दैत्यभेठ प्रहाद उस युद्धयज्ञका नेता हुआ और युद्ध यज्ञका प्रवृत्त करनेवाला था विरोचन अध्वर्यु हुआ ॥ ४ ॥ नमुचि होता और बृत्र स्तोत्रपाठ करनेवाला उस यज्ञकर्ममें दैत्य मंत्ररूप हुए ॥ ५ ॥ पितरोंके पीछे गमन करने वा उससेभी अधिक पराक्रमी उस युद्धरुपी यज्ञमें बाण यष्टा हुआ ॥ ६ ॥

ऐन्द्र पाशुपत और ब्रह्मा दुर्जय स्थूणाकर्ण हुआ अनुहादके प्रेरण किये मंत्र उसमें वर्तते थे ॥ ७५ ॥ शत्रुओंको मय देनेवाला श्रीमान् मय उद्गाता हुआ और वह श्रेष्ठ दैत्य गर्जना कर देवताओंकी सेनाको विदीर्ण करने लगा ॥ ८ ॥ और कान्तिमान् बलि राजा जप होमसे संयुक्त हो ब्रह्मापन करते थे ॥ ९ ॥ युद्धाग्निसे प्रज्वलित घोर वैररूपी ईंधनको ढालने लगा उस प्रकार वे असुर देवता और विष्णु के सहित हवन करते थे ॥ १० ॥ शंख और भोरियोंके महाशब्दही उसमें वेदके शब्द होते थे ॥ ११ ॥ बल बलक महाअसुर पुलोमा यह सम्पूर्ण रम्यभूमिको चमत्ता पात्र विधान कर भली ऐन्द्र पाशुपत ब्राह्मं स्थूणाकर्णं सुदुर्जयम् ॥ मन्त्रास्तत्राभ्यवर्तन्त साध्वनुहादयोऽजिताः ॥ ७ ॥ उद्गाता च मयः श्रीमान् स्थितः शत्रुभयंकरः ॥ विनदन्दितीजश्रेष्ठो देवानीकं व्यद्वारयत् ॥ ८ ॥ बलिस्तु राजा द्युतिमान्स्वयं तत्र महासुरः ॥ जाप्यैर्होमैश्च संयुक्तो ब्रह्मत्वमकरोत्प्रभुः ॥ ९ ॥ रणाग्निर्ज्वलितो घोरो वैरेन्धनसमीरितः ॥ हूयते त्वसुरैस्तत्र देवो विष्णुः सुरैः सह ॥ १० ॥ शङ्खशब्दैः सुतुमुलैर्भैरीणां च महास्वनेः ॥ उद्दुष्ट विमलं चैव ब्रह्मण्यं सुप्रयुज्यते ॥ ११ ॥ बलश्च बलकश्चैव पुलोमा च महासुरः ॥ प्रशस्तं च समं कृत्वा सत्रं सम्यक् प्रचक्रिरे ॥ १२ ॥ कल्माषदण्डविमला विपुला रथपंक्तयः ॥ युपाश्च समकल्पन्त युद्धयज्ञे महाफले ॥ १३ ॥ कर्णनालीकनाराचा वत्सदन्तोपबृंहिकाः ॥ तोमराः सोमकलशा विचित्राणि धनूंषि च ॥ १४ ॥ अस्थिन्ध्र कपालानि पुरोडाशाः शिरांसि च ॥ आज्यं च रौद्रं रुधिरं तस्मिन् यज्ञेऽभिहूयते ॥ १५ ॥ इध्माः परिधयस्तत्र प्रस्तारा विपुला गदाः ॥ हयग्रीवोऽसिलोमा च राहुः केशी च दानवः ॥ १६ ॥ विरोचनश्च जम्भश्च कुजम्भश्च महाबलः ॥ सदस्यास्तत्र तु मखे विप्रचित्तिस्तु वीर्यवान् ॥ १७ ॥ प्रकारसे यज्ञ करते थे ॥ १२ ॥ कल्माष अर्थात् चित्र विचित्र दंडोंसे उज्ज्वल सहस्रों रथसमूह उस युद्धयज्ञमें यूरस्थानमें कल्पित थे ॥ १३ ॥ कर्णनाली और नाराच वत्सदन्त और उपबृंहिका थे तोमर और विचित्र धनुष सोमकलश थे ॥ १४ ॥ अस्थि जिसमें कपाल और शिर पुरोडाश-स्थानमें थे रुधिर घृत उस यज्ञमें हवन किया जाता था ॥ १५ ॥ सेनाका मंडल होमका काष्ठ और गदाओंका परिस्तरण होता हुआ हयग्रीव असिलोमा राहु और केशी दानव ॥ १६ ॥ विरोचन जंभ और महाबली कुजम्भ उस यज्ञसभामें बैठनेवाले थे, और इसी प्रकार महाबली विप्रचित्ति था ॥ १७ ॥

रथोंके ध्रुवोंकी सदृश बाण खुदा हुए तथा धनुषकी कोटि और ज्या यहती सम्पूर्ण झुक हुए ॥ १८ ॥ वृषपर्वा इसमें प्रतिप्रस्थानकर्म करता था और अपनी सेनारूप महाक्षीके सहित बलि इसमें दीक्षित था ॥ १९ ॥ दितिपुत्र शम्बर शामित्रकर्म करता था, इस प्रकार यह अतिरात्र यज्ञकर्म होनेमें ॥ २० ॥ उस यज्ञकी दक्षिणा कालनेमि महाभसुर हुआ. हे राजन् ! वैतानयज्ञकर्ममें जो हव्यवाड् नामसे विख्यात है ॥ २१ ॥ वह मृतक हुए देवताओंके शरीरोंसे यज्ञामिषेचन होने लगा उस यज्ञों दैत्योंका निर्मित सवन होने लगा ॥ २२ ॥ दैत्य देवताओंका रुधिर पान करने लगे

इषवस्तु सुवास्तत्र रथाक्षसदृशाः शुभाः ॥ धनुष्कोट्यो धनुज्याश्च सुचस्तत्र महामखे ॥ १८ ॥ प्रतिप्रास्थानिकं कर्म वृषपर्वा-
करोदिह ॥ दीक्षितस्तत्र तु बलिस्तस्य पत्नी महाचमूः ॥ १९ ॥ शम्बरस्तत्र शामित्रमकरोदितिनन्दनः ॥ अतिरात्रे महाबाहुर्वितते
यज्ञकर्मणि ॥ २० ॥ दक्षिणास्तस्य यज्ञस्य कालनेमिर्महासुरः ॥ वैताने कर्मणि विभो यः ख्यातो हव्यवाडिव ॥ २१ ॥ त्रिदशानां
तु सैन्यस्य शरीरैर्गतजीवितैः ॥ तस्मिन्यज्ञे तु सवनं वर्धेत दैत्यनिर्मितम् ॥ २२ ॥ देवानां रुधिरं संख्ये पपुरुषा दितेः सुताः ॥
नर्दमानाः प्रमुदिताः सोमपानं रणाध्वरे ॥ २३ ॥ यदा बलिर्महादैत्यां विजेता समरे सुरान् ॥ तदा ह्यवभृथो यज्ञे भविष्याति न
संशयः ॥ २४ ॥ महासुरेन्द्रपतयो यज्जानो भूरिदक्षिणाः ॥ वेदवन्तो वृत्तवन्तः शूरा सर्वे तनुत्यजः ॥ २५ ॥ त्रैलोक्यहरणे सृष्टा
युद्धयज्ञाय दीक्षिताः ॥ बद्धकृष्णाजिनाः सर्वे व्रतिनो मुञ्जधारिणः ॥ २६ ॥ एकनिश्चयकार्याश्च त्रैलोक्यजयकाङ्क्षिणः ॥ सुरदानव-
दैत्यानां झन्दः समभवन्महात् ॥ २७ ॥ नानायुद्धावेहस्तानां त्वरितानां प्रधानताम् ॥ क्षेडितोत्कुष्ठनिनदैर्गजबृंहितानिःस्वनैः ॥ २८ ॥

वही उसका महागर्जनाके सहित सोमपान होता था ॥ २३ ॥ जिस समय महादैत्य बलि समरमें देवताओंको जीतेगा उस समय यज्ञका अवभृथ स्नान हो जायगा इसमें सन्देह नहीं ॥ २४ ॥ महासुरेन्द्रानि भूरिदक्षिणासे यज्ञ करने लगा वे सब वेदके ज्ञाता व्रती शूर इस यज्ञमें शरीर त्यागनेमें तत्पर थे ॥ २५ ॥ त्रैलोक्यके हरण करनेमें तत्पर युद्धयज्ञों दीक्षित सब कृष्णाजिन बांधे और सब व्रती मुंजधारी ॥ २६ ॥ एकही निश्चयसे कार्य कर-
नेवाले त्रिलोकीके जयकांक्षी उन देवता दानव और दैत्योंका महाखण्ड होने लगा ॥ २७ ॥ नाना आयुध हाथमें लिये शीघ्रतासे धावमान होनेवाले

ताल ठोकनेमें तत्पर और हाथियोंकी समान शब्द करनेवाले ॥ २८ ॥ चारों ओरसे रथके पहियोंका घरघर शब्द होने लगा कहीं शंख और दुंदुतीका शब्द कहीं घोड़ोंके हिंसनेका शब्द होने लगा ॥ २९ ॥ घोड़ेके हिंसने और दानवोंके गर्जनेसे ताल ठोकने हाथ पैरोंके पटकनेके शब्द करनेसे ॥ ३० ॥ शस्त्रवाले दानवोंकी सेना मयंकर कर्मसे प्रकाशित होने लगी ॥ ३१ ॥ तब नाग और रथ जाम्बूनदसे विभूषित बिजलीसहित मेघकी समान विराजमान होने लगे ॥ ३२ ॥ ऋषि शक्ति तीक्ष्ण गदा शूल शक्ति परसे यह सब पृथक् पृथक् सेनामें विराजमान होने लगे ॥ ३३ ॥

रथनेमिस्वनेघोरैस्तुमुलः सर्वतोऽभवत् ॥ शङ्खदुन्दुभिनिर्घोषैर्ह्यहेषितानिःस्वनेः ॥ २९ ॥ हयानां हेषमाणानां दानवानां च गर्ज-
ताम् ॥ क्ष्वेडितोत्क्रुधनिन्दैः पाणिपादरवेस्तथा ॥ ३० ॥ दानवानां परेषां च शस्त्रवन्ति महान्ति च ॥ समरे भीमकर्माणि
सैन्यानि प्रचकाशिरे ॥ ३१ ॥ ततो नागा रथाश्चैव जाम्बूनदविभूषिताः ॥ भ्राजमाना व्यराजन्त मेघा इव सविद्युतः ॥ ३२ ॥ ऋषि-
शक्तिगदास्तीक्ष्णशूलशक्तिपरश्वधाः ॥ चारु विभ्राजिरे तत्र तेष्वनीकेषु भागशः ॥ ३३ ॥ रथा बहुविधाकाराः शतशोऽथ सहस्रशः ॥
हेमप्रच्छन्नाशिखरा ज्वलन्त इव पावकाः ॥ ३४ ॥ दानवानां सुराणां च समाश्लेषन्त सैनिकाः ॥ काश्चैः कतचैः सर्वे ज्वलितार्कसम-
प्रभैः ॥ ३५ ॥ सन्नद्धाः समदृश्यन्त ज्योतींषि गगने यथा ॥ उद्यतेरायुधैश्चित्रैस्तलवद्भाः कलापिनः ॥ ३६ ॥ ऋषभाक्षा सुराणाश्चमू-
मुखगता बभुः ॥ नानावर्णाः पताकाश्च ध्वजमालाश्च संयुगे ॥ ३७ ॥ युद्धयन्तं रणशौण्डा समीरयामास मारुतः ॥ ध्वजालंकारव-
स्त्राणि कवचानि च राश्मिभिः ॥ ३८ ॥ भासयामास सर्वाणि राश्मिवर्णानि राश्मिवान् ॥ सर्वेषामप्रमेयाणां बलानां पादचारिणाम् ॥ ३९ ॥

अनेक प्रकारके सैकड़ों रथ शिखरमें सुवर्ण जड़े अग्निकी समान प्रज्वालित ॥ ३४ ॥ दानव और देवताओंके रथ सेनाके लोग देखने लगे सब कांचनके कवच सूर्यकी समान प्रकाशमान पहरे थे ॥ ३५ ॥ वह इस प्रकार दीखने थे जैसे आकाशमें तारे आयुध चित्रविचित्र उठाये तलवद्द कलापयुक्त ऋषभाक्ष देवताओंके समूह सेनामें प्राप्त हो शोभित हुए ॥ ३६ ॥ अनेक वर्णकी ध्वजा पताका ध्वजसमूह युद्धमें शोभित हुए ॥ ३७ ॥ उन वीरोंका युद्ध होते २ बड़ा दारुण हो गया ध्वजा अलंकार वस्त्र कवचोंकी कान्तिसे ॥ ३८ ॥ सब स्थान कान्तिमान् हो गये दोनों ओरके महाबली पादच-

रियोंके ॥ ३९ ॥ युद्धसे उठी हुई रजने दिशाओंका आच्छादन कर दिया सब दिव्य आयुधधारी और दिव्य वस्त्र पहरे हुए ॥ ४० ॥ एक दूसरेकी सेनाको स्तंभित करने लगे उस समय वे देव दानव पर्वतके कूटकी समान ऊंचे ॥ ४१ ॥ चित्रयोधी रणमें स्थित हो एक दूसरेको मारने लगे बड़े रुचिर तीक्ष्ण बाण दुरासदोंसे ॥ ४२ ॥ मुद्गर सुशल शूल जो लोहनिर्मित थे तिनसे अशनिकी समान वज्र खड्ग और वृक्षोंसे ॥ ४३ ॥ उन अद्भुत पराक्रमियोंका महापराक्रमयुक्त संग्राम होने लगा तब सावित्रको मारनेके लिये बाणने धनुष धारण किया ॥ ४४ ॥ और दिव्य बाणसमूहोंसे देवताओंको

रजः प्रच्छादयामास पत्रोर्ण पाण्डुरं दिशः ॥ दिव्यायुधधराः सर्वे दीप्तायुधपरिच्छिन्नाः ॥ ४० ॥ प्रतितस्तम्भिरेऽन्योन्यमनीकं प्रत्यनीकतः ॥ गिरिकूटोच्छ्रयाः सर्वे तदा ते देवदानवाः ॥ ४१ ॥ अन्योन्यमभिनिघ्नन्तो रणस्थाश्चित्रयोधिनः ॥ बाणेः सुरुचिरे- स्तीक्ष्णैः पत्रबाजैर्दुरासदैः ॥ ४२ ॥ मुद्गैर्मुशलैः शूलैर्यस्तुण्डैरूलूखलैः ॥ वज्रैरशनिकल्पैश्च खड्गवृक्षादिभिस्तथा ॥ ४३ ॥ तथा प्रवर्तिते तेषां विमर्देऽद्भुतविक्रमे ॥ सावित्रस्य वधं प्रेषुर्बाणो जग्राह कार्मुकम् ॥ ४४ ॥ शरजालेन दिव्येन च्छादयानः सुरोत्तमम् ॥ मन्त्रैर्हुत इवार्चिष्मान्तसंप्रजज्वाल तेजसा ॥ ४५ ॥ सागराभां महासेनां देवानां दैत्यपुङ्गवः ॥ संशोषयति बाणौघैरकी- शुभिरिवार्णवम् ॥ ४६ ॥ मारुतः सुमहावेगः सावित्रः शक्तिमुत्तमाम् ॥ चिक्षेप बलिपुत्राय शक्रोऽशनिमिवाद्रये ॥ ४७ ॥ आपतन्ती च सा शक्तिर्महोल्का ज्वलिता इव ॥ द्विधा छिन्ना क्षुरप्रेण बाणेनाद्भुतकर्मणा ॥ ४८ ॥ हतायामथ शक्त्यां तु सावित्रो देवसत्तमः ॥ विश्वकर्मकृतं दिव्यं सुतीक्ष्णं दानवार्दनम् ॥ ४९ ॥ सुपानधारं विमलं बिपुलं चन्द्रवर्चसम् ॥ अगृह्णान्निशितं खड्गमाशीविषमिवोरगम् ॥ ५० ॥ आच्छादन करने लगा मंत्रोंसे हवन की हुई अग्निकी समान वह तेजसे जल उठा ॥ ४५ ॥ देवताओंकी समुद्रकी समान महासेनाको वह दैत्य बाणोंसे ऐसे सोखने लगा जैसे सूर्य किरणोंसे सागरको सोखता है ॥ ४६ ॥ सब सावित्र मारुतने शक्ति ग्रहण कर बड़े वेगसे बलिके पुत्रके ऊपर प्रहार की जैसे पर्वतपर इन्द्रका वज्र पड़े ॥ ४७ ॥ महाउल्काकी समान जलती हुई उस महाशक्तिको देख उस बाणसे क्षुरप बाणसे बीचमें काट दी ॥ ४८ ॥ शक्तिके हन होनेसे देवश्रेष्ठ सावित्रने विश्वकर्माके बनाये दिव्य तीक्ष्ण दानवोंके नाश करनेवाले ॥ ४९ ॥ पुष्टधारवाले उज्ज्वल चन्द्रमाकी समान कान्ति-

मान् सूर्यकी समान महाखड्गको ग्रहण किया ॥ ५० ॥ उस महाकान्तियुक्त प्रज्वलित खड्गको ग्रहण कर वह महातेजस्वी बाणासुरके आगे स्थित हुआ ॥ ५१ ॥ बाणने उसको अपने निकट स्थित देख कि महाशरीर और लाल नेत्र किये है बड़ा शब्द किया ॥ ५२ ॥ फिर सूर्यकी समान कान्तिमान् वज्रसरीखे सर्पकी समान तीक्ष्ण बाणोंको धनुषपर चढ़ाया ॥ ५३ ॥ जिनके पुंखमें सुवर्ण जड़ित सब प्रकारसे अलंकृत महावेगवान् उग्र बाणोंको कानपर चढ़ाकर छोड़ा ॥ ५४ ॥ वे अग्निकी तुल्य बाण दृढ़ चापसे छोड़े हुए कैलासके मेघकी समान सावित्रको आच्छादन करने लगे ॥ ५५ ॥

तं गृहीत्वा रणमुखे प्रज्वलन्तं महाप्रभम् ॥ बाणाभ्याश्च महातेजाः खड्गपाणिर्वस्थितः ॥ ५१ ॥ स तं स्थितमथालक्ष्य सावित्रं बलिनन्दनः ॥ लोहिताक्षं महाकायं चिक्षेप च ननाद च ॥ ५२ ॥ ततोऽर्ककिरणाकारानशनिप्रतिमाञ्छितान् ॥ संदधे चाशु बाणो-
घानाशीविषशिलीमुखान् ॥ ५३ ॥ रुक्मपुंखान्प्रदीप्ताग्राणुग्रवेगानलंकृतान् ॥ आकर्णपूरांश्चिक्षेप शरानुग्रान्तसमन्ततः ॥ ५४ ॥ दृढचापप्रसुक्तास्ते शरा वैभानरप्रभाः ॥ सावित्रं छादयामासुः कैलासमिव तोयदाः ॥ ५५ ॥ सञ्छाद्यमानः शस्त्रौघैर्बाणेन बलि-
सूनुना ॥ पराङ्मुखः सुरवरः प्रयातः सरथध्वजः ॥ ५६ ॥ पराजित्य स सावित्रं बाणः परमहर्षितः ॥ प्रयुष्म कार्ष्णिकं घोरं गतः शक्ररथं प्रति ॥ ५८ ॥ बलश्याप्यसुरश्रेष्ठः प्रयुष्म महतीं गदाम् ॥ ध्रुवाय वसवे सूर्ये रोद्रां चिक्षेप दानवः ॥ ५८ ॥ तस्य निर्माथि-
तस्त्वंसो हेमाचित्रं च वर्म वै ॥ गदावेगेन भीमेन ध्रुवस्य समरे तदा ॥ ५९ ॥ शेषाश्च वसवः सर्वे दिव्यास्त्रैर्घोरदर्शनैः ॥ प्राञ्छादयन्त्रणे
देत्यमादित्यमिव तोयदाः ॥ ६० ॥

बलिपुत्र बाणके अशों तथा बाणोंसे आच्छादित हो वह देवताओंमें भेठ और रथ प्वजाके सहित युद्धसे पराङ्मुख हो गया ॥ ५६ ॥ इस प्रकार सावित्रको पराजय कर बाणासुर परम हर्षित हुआ तथा घोर धनुष ग्रहण कर इन्द्रके रथके सम्मुख चला ॥ ५७ ॥ और असुरभेठ बलनेत्री महागदाको ग्रहण कर ध्रुव वसुके शिरपर उस गदाका प्रहार किया ॥ ५८ ॥ उससे उसका सुवर्णनिर्मित वस्त्र चूर्ण हो गया ॥ इस प्रकार भीम नदाके वेगसे ध्रुवका ॥ ५९ ॥ वस्त्र चूर्ण किया तब शेष घोरदर्शन वसु रणमें देव्योंको ऐसे आच्छादन करने लगे जैसे

सूर्यको मेघ आच्छादन करते हैं ॥ ६० ॥ तब दानवश्रेष्ठ बल बाणोंसे सम्मर्दित होने लगा और रथसे उतर गदा ले बड़े वेगसे दौड़ा ॥ ६१ ॥ और महा असुरने वह गदा अपने शत्रुओंके शिरपर मारी उस महागदाने शत्रुओंको दिशा विदिशाओंमें पलायन करवा दिया ॥ ६२ ॥ वह ऐसी पतित हुए मानों इन्द्रने वज्र मारा उसके बिजलीकी समान शब्दको सुनकर वे सब कंपित हो गये ॥ ६३ ॥ रथोंसे भट्ट हो रथी पलायन करने लगे वोह रथोंकी सेना सूर्यकी समान कान्तिमान् होकर मेघवत् शब्द करती पलायन कर गई ॥ ६४ ॥ तब फिर देवताओंने चारों ओरसे बाणवर्षा करनी आरंभ की

ततः संमर्दितो बाणेर्वलो दानवसत्तमः ॥ अवांतरद्रथात्तस्माद्गदासुद्यम्य वेगवान् ॥ ६१ ॥ पातयामास शत्रूणां समाविध्य महासुरः ॥ दिशः प्राद्रावयत्सर्वास्त्रिदशान्त्सा महागदा ॥ ६२ ॥ इन्द्राशनिर्विन्द्रेण प्रवृद्धा सुमहास्वना ॥ तस्याः सविद्युद्रोषायास्तेन शब्देन वेपिताः ॥ ६३ ॥ व्यद्रवन्त परिभ्रष्टा रथेभ्यो रथिनस्तदा ॥ तदुदीर्णं रथानीकं सूर्याभं मेघानिःस्वनम् ॥ ६४ ॥ देवानां शरधाराभिः समन्तादभ्यवर्षत ॥ क्षुरकैर्विशिखैर्भस्त्रैस्तदन्तैः शिलीमुखैः ॥ ६५ ॥ मुहुर्मुहुर्महातेजाः प्रत्यविध्यन्महासुरान् ॥ बलाकस्तु गदापाणिर्व्यादितारुण्य इवान्तकः ॥ ६६ ॥ तडिद्गणार्कसदृशो वैश्वानर इवापरः ॥ पिवन्निव शरोघास्तान्देवचापसमुच्छ्रितान् ॥ ६७ ॥ अभ्यद्रवन्त दैत्येन्द्रो महार्णवे इवापरः ॥ अवस्फूर्जन्दिशः सर्वाः स्वेन क्लृपेण दानवः ॥ ६८ ॥ अरुजंस्त्रिदशान्दैत्यः सिन्धुवेगान्नगा इव ॥ समुद्रस्तरसा देवान्वायुर्वृक्षानिवोजसा ॥ ६९ ॥ शामयंश्च महेष्वान्वावसुभ्यां समसज्जत ॥ आपश्चेवानिलश्चैव ववर्षन्तुररिन्दमौ ॥ ७० ॥

क्षुरक विशिख मल्ल वत्सदन्त बाणोंसे ॥ ६५ ॥ वह महातेजस्वी महाअसुर फिर प्रहार करने लगा और बलक दैत्य गदा हाथमें लिये कालकी समान मुख फैलाये ॥ ६६ ॥ बिजलीके समूह तथा सूर्य और अग्निकी समान उन देवताओंके छोड़े हुए बाणोंको पान करता हुआ ॥ ६७ ॥ दूसरे महासागरकी समान वह दैत्येन्द्र धावमान हुआ और वह दानव अपने वीर्यसे सम्पूर्ण दिशाओंको शब्दायमान करता हुआ ॥ ६८ ॥ दैत्य देवताओंको इस प्रकार भेदन करने लगा जैसे सिंधुनदीका वेग पर्वतोंको नष्ट करता है, वा जैसे वायुका वेग वृक्षोंको मग्न करता है ॥ ६९ ॥ इस प्रकार वसुओंके छोड़े

हुए बाणोंको शान्त कर फिर वह आप और अनिल नामक दो वसुओंके साथ संग्राम करने लगा ॥ ७० ॥ वह दोनों महातेजस्वी मेघोंकी समान बाण प्रहार करने लगे तत्काल उस दैत्यने उन बाणोंको अन्तरिक्षमेंही छेदन कर दिया ॥ ७१ ॥ इस कर्मको सहन न करके ध्रुव उस दैत्यके सम्मुख हुआ तब वे महाशरवर्षणसे परस्पर एक दूसरेको प्रहार करने लगे ॥ ७२ ॥ वह उत्तम शूर देवता दैत्य परम यशस्वी नखोंसे शार्दूल और दांतोंसे हाथीकी समान ॥ ७३ ॥ रथकी शक्तियोंद्वारा परस्पर एक दूसरेके ऊपर बाण प्रहार करते थे और बाणप्रहारसे एक दूसरेके शरीरको विदीर्ण करने लगे ॥ ७४ ॥

शरवर्षाणि दीप्तानि मेघाविव परंतपो ॥ क्षिप्तास्तान्विशिखान्दीप्तानन्तरिक्षे स चिच्छिदे ॥ ७१ ॥ अमृष्यमाणस्तत्कर्म ध्रुवस्तम-
भिदुद्रुवे ॥ तौ पृथक् शरवर्षाभ्यामन्योन्यमभिजघ्नतुः ॥ ७२ ॥ उत्तमाभिजना शूरो देवदैत्यौ यशस्करो ॥ तौ नखैरिव शार्दूलो-
दन्तैरिव महाद्विपो ॥ ७३ ॥ रथशक्तिभिरन्योन्यं विशिखैश्चाप्यकृन्तताम् ॥ निर्भन्दन्तौ च गात्राणि विलिखन्तौ च सायकैः ॥ ७४ ॥
स्तम्भयन्तौ च बलिनो प्रतुदन्तौ स्थितौ रणे ॥ चरन्तौ विविधान्मार्गान्मण्डलानि च भागशः ॥ ७५ ॥ मुद्गैर्जघ्नतुः क्रुद्धावन्यो-
न्यमभिमानीनौ ॥ असिभ्यां चर्मणी दिव्ये विपुले च शरासने ॥ ७६ ॥ निकृत्याचलसंकाशौ बाहुयुद्धं प्रचक्रतुः ॥ व्यूढोत्क्रो-
दीर्घभुजौ नियुद्धकुशलाबुधौ ॥ ७७ ॥ बाहुभिः समसज्जेतामायसैः परिघैरिव ॥ तयोरासीद्गुजाघातैर्निग्रहः प्रग्रहस्तथा ॥ ७८ ॥
अतीव भीमः संह्रादो वज्रपर्वतयोरिव ॥ द्विपाविव विषाणाग्रैः शृंगोरिव महावृषौ ॥ ७९ ॥

वे दोनों एक दूसरेको स्तांभित करते तथा भेदन करते अनेक प्रकारके पैतरे बदलकर विचरण करने लगे ॥ ७५ ॥ फिर दोनों अभिमानी परस्पर क्रोध कर मुद्गोंसे मारने लगे फिर ढाल तलवार तथा दिव्य शरासन द्वारा युद्ध होने लगा ॥ ७६ ॥ फिर दो पर्वनोंकी समान बाहु युद्ध करने लगे चौड़ी छाती दीर्घ भुजा युद्धमें दोनों कुशल ॥ ७७ ॥ आयस अर्थात् लोहेके मुद्गोंकी समान भुजाओंसे युद्ध करने लगे भुजाओंके आघातसे उनका निग्रह और प्रग्रह (वैरबंधन) होते हुए ॥ ७८ ॥ तथा वज्र गिरते हुए पर्वतकी समान महाघोर शब्द होता हुआ जैसे दावोंसे दो हाथी और सींगोंसे दो बैल युद्ध करते

हों ॥ ७९ ॥ इस प्रकार परस्पर दोनोंका युद्ध सवा दो घडीतक बराबर होता रहा अन्त्यमें ध्रुव वसु, दैत्यो पराजित हो युद्धसे पराङ्मुख हो गया ॥ ८० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रापायां देवासुरयुद्धे चतुष्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५४ ॥ वैशम्पायनजी बोले, फिर क्रोधको प्राप्त हुए नमुचि और धर इन दोनोंको बड़ा दारुण युद्ध होने लगा ॥ १ ॥ और बड़ी भुजाओंवाले और बड़े धनुषोंको धारण करते हुए और शत्रुओंको दमन करनेवाले क्रोधको धारण करे नेत्रोंसे आँसु करते हुए परस्पर देखने लगे ॥ २ ॥ सुवर्णकी पीठवाले महाकठोर दुरासद

अन्योन्यमभिसंरब्धौ मुहूर्तं पर्यकर्षताम् ॥ ततः पराजितो देवो बलाकेन तथा ध्रुवः ॥ रथं त्यक्त्वा भयात्तस्य प्रनष्टः प्राङ्मुखो वसुः ॥ ८० ॥ इति श्रीमहाभारते हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे चतुःपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ पुनरेव तु तत्रासीन्महायुद्धं सुदारुणम् ॥ क्रुद्धस्य नमुचेऽथैव धरस्य च महात्मनः ॥ १ ॥ संरब्धौ च महाबाहु महेष्वासावरिन्दमौ ॥ परस्परमुद्देशेतां दहन्ताविव लोचनैः ॥ २ ॥ विस्फार्य च महाचापं हेमपृष्ठं दुरासदम् ॥ संरम्भात्स वसुश्चेत्स्त्यक्त्वा प्राणानयुध्यत ॥ ३ ॥ स सायकमयैर्जालैर्धरो दैत्यरथं प्रति ॥ भानुमद्भिः शिलाधौतैर्भानोः प्राच्छादयत्प्रभाम् ॥ ४ ॥ ततः प्रहस्य नमुचिर्धरस्य च शिलाशितान् ॥ असृजत्सायकान्दीप्तान्भूमिवेगान्दुरासदान् ॥ ५ ॥ महातेजा महाबाहुर्महावेगो महाथः ॥ विव्याधातिबल्यो दैत्यो नवभिर्निशितैः शूरेः ॥ ६ ॥ स तत्रैरिव मातङ्गो वार्यमाणः पतात्रिभिः ॥ अभ्यधावच्च संकुद्धो नमुचिं वसुसत्तमः ॥ ७ ॥

महाधनुषकी चढ़ाकर वह धर अपने प्राणोंका मोह त्यागकर नमुचिके संग युद्ध करने लगा ॥ ३ ॥ और प्रकाशमान शिलाकी समान निर्मल बाणरूपी जालोंको वह धर नमुचिदैत्यके रथके प्रति छोड़ता हुआ सूर्यकी प्रभाको आच्छादन करने लगा ॥ ४ ॥ और शिलाओंकी समान तीक्ष्ण दीप्तिमान् बड़े वेगवाले असह्य बाणोंको नमुचि हँसता हुआ धरपै छोड़ने लगा ॥ ५ ॥ महातेजस्वी बड़ी भुजाओंवाले महोदधिवान् महारथी और अतिरथि नमुचिने पैंने २ नव बाणोंसे धरको वेधन किया ॥ ६ ॥ और जैसे अंकुशोंसे भेदन किया हुआ हस्ती क्रोधित

होता है तैसेही बाणोंके वेधनसे क्रोधित हुआ वसुश्रेष्ठ धर नमुचिके सम्मुख दौड़ा ॥ ७ ॥ और वेगसे आते हुए धरको वर नमुचि देख देसे सम्मुख धावमान हुए कि जैसे मदोन्मत्त हस्तीके प्रति मदोन्मत्त हस्ती ॥ ८ ॥ तब सौ भोरियोंके समान शब्दवाले शंसको बजाय और उछलते हुए समुद्रकी तुल्य शत्रुकी सेनाको अत्यन्त क्षोभ कर ॥ ९ ॥ और श्रेष्ठ वर्णवाले शत्रुके घोड़ोंसे अपने हंसकी तुल्य कांतिवाले घोड़ोंको मिलाता हुआ नमुचि बाणोंकी वर्षासे धरको आच्छादन करने लगा ॥ १० ॥ और नमुचि और धर इन दोनोंके रथोंको परस्परमें मिले हुए देख देवताओंकी सेना अत्यन्त

तमापतन्तं वेगेन संरम्भान्नमुची रणे ॥ दैत्यः प्रत्यसरदेवं मत्तो मत्तमिव द्विपम् ॥ ८ ॥ ततः प्राध्मापयच्छङ्गं भेरीशतनिनादितम् ॥ विशोभ्य तद्रुलं र्षादुद्धृताणवसंप्रभम् ॥ ९ ॥ अश्वानृक्षसवर्णाभाहंसवर्णैः सुवाजिभिः ॥ मिश्रयन्त्समरे दैत्यो वसुं प्राच्छादयच्छरेः ॥ १० ॥ समाश्लिष्टावथान्योन्यं वसुदानवयो रथौ ॥ दृष्ट्वा प्राकम्पत मुहुर्निदृशानां मदद्रुलम् ॥ ११ ॥ क्रोधसंरम्भताम्राक्षो प्रेक्षमाणो मुहुर्मुहुः ॥ गर्जन्ताविव शार्दूलौ प्रभिन्नाविव वारणौ ॥ १२ ॥ महामेषोपमं रौद्रमासिद्धायोधनं तयोः ॥ रथाभवरसंवाधं मत्तवारणसंकुलम् ॥ १३ ॥ समाजमिव तं दृष्ट्वा प्रेक्षमाणा महारथाः ॥ आशंसन्तो जयं ताभ्यां योधा नैकत्रसंश्रयाः ॥ १४ ॥ तयोः प्रेक्ष्यन्त संरम्भं सन्निकृष्टं महास्रयोः ॥ सिद्धगन्धर्वमुनयो देवदानवयोस्तदा ॥ १५ ॥ तौ च्छादयन्तावन्योन्यं समरे निशितैः शरैः ॥ शरजालावृतं व्योम चक्रतुश्च महाबली ॥ १६ ॥

कांपने लगी ॥ ११ ॥ और क्रोधयुक्त लाल २ नेत्रोंसे परस्परमें दीखते हुए और शार्दूलोंकी तुल्य गर्जते हुए और मत्त हस्तियोंकी तुल्य जेदन करते हुए ॥ १२ ॥ इस प्रकार दोनों योद्धाओंका मनुष्य हस्ती घोड़ोंसे व्याप्त महामेषोंकी समान जयंकर युद्ध होने लगा ॥ १३ ॥ तित युद्धको समाजकी नाई देखते हुए महारथी तिन्होंके जयको कहते हुए ॥ १४ ॥ युद्धमें समूहके समूह स्थित होते हुए और सिद्ध तथा गन्धर्व और मुनि ये सम्पूर्ण समीपमें प्राप्त हो और महाअश्वोंको धारण करते हुए उनकी देवता और दानव युद्धमें देखने लगे ॥ १५ ॥ वे दोनों महाबली बाणोंकी वर्षा

करते हुए शरोंके जालोंसे आकाशको आच्छादन करने लगे, और परस्पर एक दूसरेको आच्छादन करने लगे ॥ १६ ॥ और तीक्ष्ण बाणोंसे पर-
स्पर हनन करते हुए दोनों महारथी रणमें बाण वर्षाते जलोंकी वर्षा करते हुए मेघोंकी समान दीखते लगे ॥ १७ ॥ और वे दोनों शत्रुनाशक सुवर्णसे
जडित बाणोंको छोड़ते हुए उल्काओंसे आकाशको सूर्यकी समान प्रकाशमान करने लगे ॥ १८ ॥ नमुचि और धर इन दोनोंके बाण आकाशमें ऐसे
प्रकाशमान होने लगे कि जैसे शरदतुके आकाशमें मतवाले सारसोंकी पंक्ति शोभित होती है ॥ १९ ॥ मरे हुए देवता घोड़े हाथियोंसे पृथ्वी ऐसे

तावन्योन्यं जिघांसन्तो शौरस्तीक्ष्णैर्महारथैः ॥ प्रेक्षणीयतमावास्तां वृष्टिमन्ताविवाम्बुदौ ॥ १७ ॥ सुवर्णविकृतान्बाणान्प्रमुञ्चन्ताव-
रिन्दमौ ॥ भास्कराभं तदाकाशमुल्काभिरिव चक्रतुः ॥ १८ ॥ तयोः शराः प्रकाशन्ते देवदानयोस्तदा ॥ पतयः शरदमत्तानां
सारसानामिवाम्बरे ॥ १९ ॥ त्रिदशाश्वगजानां हि शरीरैर्गतजीवितैः ॥ क्षणेन संवृता भूमिर्मघैरिव नभस्तलम् ॥ २० ॥ ततः सुधारं
ज्वलितं सूर्यमण्डलसन्निभम् ॥ घराय वसवे मुक्तं चक्रं नमुचिना रणे ॥ पतता तेन चक्रेण धरस्य स्यन्दनोत्तमः ॥ २१ ॥ सध्वजः
सायुधः साश्वो दग्धोऽर्ककिरणप्रभः ॥ स त्यक्त्वा स्यन्दनं देवः प्रदीप्तं चक्रतेजसा ॥ २२ ॥ भयात्तस्यासुरेन्द्रस्य गतः स्वगृहमुत्त-
मम् ॥ पराजित्यसुरं दैत्यो नमुचिर्बलगर्वितः ॥ २३ ॥ प्रयातः स्वेन सैन्येन भूयः सुरचमूं प्रति ॥ यो तो मयश्च त्वष्टा च
देवदैत्येषु विश्रुतो ॥ २४ ॥

व्याप्त हो गई कि जिस प्रकार मेघोंसे आकाश ॥ २० ॥ तब तीक्ष्ण धारवाले सूर्यके मंडलकी तुल्य कांतिमान् जलते हुए चक्रको नमुचि दैत्यने धरके
सन्मुख छोड़ा ॥ २१ ॥ ध्वजा आयुध घोड़ोंसे युक्त सूर्यकी समान प्रकाशमान रथको नमुचिके चक्रने दग्ध किया; तब वह धर चक्रके तेजसे दग्ध
हुए रथको त्याग ॥ २२ ॥ नमुचिके भयसे अपने घरको चला गया; तब धर देवताको जीत नमुचिदैत्य बलते गर्वित हो ॥ २३ ॥ अपनी सेनाके
संग ले फिर देवताओंकी सेनाके सन्मुख चला जो दोनों विख्यात और श्रेष्ठ देवता और दैत्योंमें श्रेष्ठ महात्मा त्वष्टा देवता और मय ॥ २४ ॥

श्रेष्ठ विश्वकर्माको सैकड़ों मायाके जाननेवाले दैत्य इन्होंका महाबोर दारुण युद्ध होने लगा ॥ २५ ॥ वह विरकालसे युद्धमें एक दूसरेकी स्यर्द्धा करते हुए थे उस समय त्वष्टा तीक्ष्ण बाणोंसे बलदर्पित दैत्यको ॥ २६ ॥ तीन सौ बाणोंसे वेधन करने लगा इस प्रकार आते हुए बाणोंको देख मय-नेसी बहुत तीक्ष्ण बाणोंसे त्वष्टाको विद्ध किया ॥ २७ ॥ वेगवाले वेधनेवाले सुवर्णजटि बाणोंसे मयदैत्य त्वष्टाको वेधन कर गर्जने लगा ॥ २८ ॥ त्वष्टा क्रोधित हो तीक्ष्ण बाणोंसे मयको भेदन कर दैत्योंकी सेनाके प्राणोंको खोजता हुआ क्रोधते सुवर्ण और मणियोंसे जटित विचित्र दंडवाली

प्रचरो विश्वकर्माणो मायाशतविशारदौ ॥ चोरस्तयोः संप्रहारः प्रावर्त्तत सुदारुणः ॥ २५ ॥ अन्योन्यस्पर्द्धिनोस्तत्र चिरात्प्रभृति संयुगे ॥ त्वष्टा तु निशितैर्बाणैर्दैत्यं तु बलदर्पितम् ॥ २६ ॥ पराक्रान्तं पराक्रम्य विव्याध त्रिशतैः शरैः ॥ मयस्तु प्रतिविव्याध त्वष्टारं निशितैः शरैः ॥ २७ ॥ सुघातैः सुप्रसन्नाग्रैः शतकुम्भविभूषितैः ॥ ननाद दितिजश्रेष्ठो हतस्त्वष्टुः शरैर्मयः ॥ २८ ॥ संकुद्धो दैत्यसैन्यस्य विचिन्वान्निव जीवितम् ॥ शक्तिं कनकवेदूर्यचित्रदण्डां महाप्रभाम् ॥ २९ ॥ देशो गृहीता समरे दैत्येन्द्रं समपातयत् ॥ भीमां सर्वायसीं दृष्ट्वा पुरंदर इवाशनिम् ॥ ३० ॥ तां त्वष्टुर्भुजनिर्मुक्तामर्कवैश्वानरप्रभाम् ॥ मयाश्चिच्छेद तीक्ष्णाग्रैस्तूर्ण सप्त-भिराशुगैः ॥ ३१ ॥ ततः क्षुण्वन्निव प्राणांस्त्वष्टुः कोपान्महासुरः ॥ प्रेषयामास संरन्धः शरान्बाह्विगवाससः ॥ ३२ ॥ चिच्छेद बाणांस्त्वष्टा तान् ज्वलितैर्नतपर्वभिः ॥ दैत्यस्य सुमहावेगैः सुवर्णविकृतैः शरैः ॥ ३३ ॥ तौ वृषावि नन्दतौ बलिनौ वासितान्तरे ॥ शार्दूलाविव चान्योन्यं प्रसक्तावभिजघ्नतुः ॥ ३४ ॥

महाक्रान्तिवाली शक्तिको ॥ २९ ॥ युद्धमें ग्रहण कर दैत्यपति मयके ऊपर छोड़ी, वह जयंकर लोहनिर्मित पुरन्दरके कवचकी समान थी ॥ ३० ॥ त्वष्टाकी भुजाओंसे छुटी हुई अग्निकी समान कांतिवाली शक्तिको मयदैत्यने वेगवान् तीक्ष्ण बाणोंसे छेदन कर दिया ॥ ३१ ॥ और त्वष्टाके प्राणोंके हरनेको मयदैत्यने क्रोधित हो तीक्ष्ण बाणोंको छोड़ा ॥ ३२ ॥ तब त्वष्टाने अपने प्रकाशमान बाणोंसे मयके महावेगवान् सुवर्णनिर्मित बाणोंको छेदन कर दिया ॥ ३३ ॥ महाबली वृषोंकी समान गर्जते और सिंहोंकी तुल्य पराक्रमोंको करते हुए और परस्परमें दाव देखते हुए परस्पर मारने लगे ॥ ३४ ॥

परस्पर युद्ध करते एक दूसरेके वध की इच्छा करनेवाले विपैले सर्यकी समान परस्पर देखने लगे ॥ ३५ ॥ इस प्रकार बड़े विस्तारवाले धनुषसे छोटे
 हुए बाणोंसे मारने लगे कि जैसे दांतोंके अग्रभागसे मदोन्मत्त हस्ती युद्ध करते हो ॥ ३६ ॥ तब बड़े विस्तारवाली, प्रकाशमान सुवर्णके बाजुओंवाली
 सम्पूर्णोंके प्राणोंको हरनेवाली गदाको ग्रहण कर त्वष्टापर छोड़ी ॥ ३७ ॥ उससे क्रोधी मयदैत्यने उत्तप घोड़ोंवाले त्वष्टाको ताड़न किया जैसे इन्द्र
 वज्रसे पर्वतोंको विदीर्ण करता है ॥ ३८ ॥ फिर युद्धमें क्रोधित हुआ मयदैत्य बहुतसे तीक्ष्ण बाणोंसे ॥ ३९ ॥ त्वष्टाके रथको ध्वजाको छेदन कर
 अन्योन्यं प्रतियुध्यन्तावन्योन्यवधकांक्षिणौ ॥ अन्योन्यमभिधीक्षन्तौ क्रुद्रावाशीविषावित्र ॥ ३५ ॥ महागजाविवासाद्य विषाणाग्रेः
 परस्परम् ॥ शूरेः पूर्णायतोत्सृष्टैरन्योन्यमभिजघ्नतुः ॥ ३६ ॥ ततः सुविपुलां दीप्तां मयो रुम्नाङ्गो गशम् ॥ त्वष्टारि प्राहिणोत्क्रुद्रः
 सर्वप्राणहरां रणे ॥ ३७ ॥ तथा जघानातिरथस्त्वष्टुरुत्तमवाजिनः ॥ गदया दानवः क्रुद्रो वज्रैर्गैन्द्रहाचञ्च ॥ ३८ ॥ ततः क्रुद्रो
 महादैत्यः क्षुराभ्यामथ संयुगे ॥ पुनर्द्राभ्यां शूराभ्यां तु निशिताभ्यां महारणे ॥ ३९ ॥ ध्वजं त्वष्टुरथ च्छित्त्वा सूतं निर्व्ययमक्षयम् ॥
 महाबलान्महावेगान्तत्तदध्वान् गदयाऽहनत् ॥ ४० ॥ दृष्ट्वा त्वष्टा हतं सूतमर्थांश्च विनिपातितान् ॥ हताशं रथमुत्सृज्य सूतं च पतितं
 भुवि ॥ ४१ ॥ विस्फारयन्महाचापं स्थितो भूमाविवाचलः ॥ हताश्वसूतं विरथं दृष्ट्वा रिपुमवस्थितम् ॥ ४२ ॥ जयश्रिया सेव्यमानो
 दीप्यमान इवानलः ॥ मयः कालान्तकप्रख्यश्चापपाणिरदृश्यत ॥ ४३ ॥ प्रादहदेवसेन्यानि दावाग्निरिव काननम् ॥ त्वष्टुः सोऽक्षिपता-
 नुग्रान्नाराचांस्तिग्मतजसः ॥ ४४ ॥

सारथीको यमलोकमें पहुँचा दिया, फिर बड़े शरीरवाले और बड़े वेगवान् श्रेष्ठ घोड़ोंको गदासे मारा ॥ ४० ॥ वह त्वष्टा रणमें भेदन की हुई ध्वजा
 और सूतको मृतक देख घोड़े तथा सूतरहित रथको त्याग पृथ्वीमें स्थित हुआ ॥ ४१ ॥ युद्धके निमित्त आने महान् धनुषको टंकारता पृथ्वीमें
 पर्वतकी समान स्थित हुआ; घोड़े सूत और रथहीन शत्रुको उपस्थित देख ॥ ४२ ॥ जयलुपी शोभाको प्राप्त हो युद्धमें दीप्तिमान् आग्नि और कालकी
 तुल्य प्रसिद्ध हाथमें धनुषको धारण किये मयदैत्य ॥ ४३ ॥ देवताओंकी सेनाको दग्ध करता हुआसा दीखने लगा, कि, जैसे वनको दग्ध करता

हुआ दावाग्रि तत्र अत्यन्त तेजवाले शिलापै पैनाये हुए ॥ ४४ ॥ अनेक प्रकारकी आकृतिवाले चौदह बाण ॥ ४५ ॥ मयदैत्यने छोड़े, वे सुवर्णके महनोंवाले बाण त्वष्टाकी सेनाके रुधिरको ऐसे पीते हुए, जैसे कालसे प्रेरणा किये हुए सर्प हों, रुधिरमें भोगे हुए वे बाण ऐसे शोभाको प्राप्त हुए ॥ ४६ ॥ कि जैसे आधे प्रवेश हुए क्रोधयुक्त बिलोंमें महान् सर्प हों, सुवर्णसे भूषित हुए बाणोंसे त्वष्टानेभी मयदैत्यको वेधन कर ॥ ४७ ॥ अत्यन्त उग्र चौदह बाणोंसे उस दैत्यकी सव्यभुजाको विदारण किया ॥ ४८ ॥ वे बाण मयदैत्यकी सव्य भुजाको भेदन कर और भूमिमें सर्पकी समान प्राप्त हुए प्रकाश

चतुदश शिलाघातान्तायकान्विविधाकृतान् ॥ ते पपुस्तस्य सैन्यस्य शोणितं रुक्मभूषणाः ॥ ४५ ॥ आशीविषा इव क्रुद्रा भुजङ्गाः कालचोदिताः ॥ ते क्षितिं समवर्तन्त शोभन्ते रुधिराक्षिताः ॥ ४६ ॥ अर्द्धप्रविष्टाः संरब्धा बिछानोव महोरगाः ॥ तं प्रत्यविध्यत्वष्टा तु जाम्बूनदाविभूषितैः ॥ ४७ ॥ चतुर्दशभिरत्युग्रैर्नाराचैरभिदारयन् ॥ ते तस्य दैत्यस्य भुजं सःपं निर्भिद्य पात्रिणः ॥ ४८ ॥ विदार्य विविशुभूमिं पन्नगा इव वेगतः ॥ ते प्रकाशन्त नाराचाः प्रविशन्तो वसुंधराम् ॥ ४९ ॥ अस्तं गच्छन्तमादित्यं प्रविशन्त इवांशवः ॥ मयस्त्रिभिरथानच्छत्त्वष्टारं तु पतत्रिभिः ॥ ५० ॥ सुपर्णवेगैर्विकृतैर्जलद्भिः प्राणनाशनैः ॥ त्वष्टाथ मयनिर्मुक्तैः सायकैरार्दितः प्रभुः ॥ ५१ ॥ अपयातो रणं हित्वा व्रीडयाभिसमन्वितः ॥ तं तत्र हतसूतं च भुजङ्गा इव निर्विषम् ॥ ५२ ॥ त्वष्टारं विरथं कृत्वा मुदितः स तु दानवः ॥ विस्फार्यमाणो रुचिरं चापं रुक्माङ्गदं दृढम् ॥ ५३ ॥

करने लगे ॥ ४९ ॥ जैसे अस्ताचलको जाते हुए सूर्यमें प्रवेश होती-किरण, तब मयने तीन बाणोंसे त्वष्टाको भेदन किया ॥ ५० ॥ वे रुधिरको भोजन करनेवाले और अत्यन्त उग्र जलते हुए ऐसे प्राणनाशी थे और मयदानवके बाणोंसे पीड़ित हुआ त्वष्टा ॥ ५१ ॥ युद्धको त्याग लज्जित हुआ रणसे चला गया, सूत और घोड़ोंके मारनेसे विषरहित सर्पकी नाई ॥ ५२ ॥ त्वष्टाको विरथ कर मयदानव अत्यन्त आनंदको प्राप्त हुआ, और अत्यन्त सुन्दर और सुवर्णके बाजुओंवाले और अत्यन्त दृढ़ ऐसे धनुषको टंकारता हुआ ॥ ५३ ॥

रणमें वह दैत्य प्रकाशमान अग्निकी समान स्थित हुआ; तब बलमें श्लाघनीय मदोन्मत्त पुलोमा दानव ॥ ५४ ॥ श्वेत घोड़ोंवाले रथमें स्थित हो रणमें दीखा और सम्पूर्ण प्राणियोंके शरीरमें स्थित होनेवाले ॥ ५५ ॥ और कालकी तुल्य बलवान् वायुदेवताके संग युद्ध करने लगा पुलोमा दैत्यके धनुषकी ज्याके शब्दको सुन पवन देवता ॥ ५६ ॥ ऐसे नहीं सह सके कि जैसे मदोन्मत्त हस्तीके शब्दको मदोन्मत्त हस्ती और पुलोमा दैत्यके छोड़े हुए बाणोंसे दशों दिशा ऐसे आच्छादन हो गई ॥ ५७ ॥ जैसे सूर्यकी किरणोंके जालसे आकाशसहित जगत् हो जाता है; वह ताँबेकेसे

रणे व्यतिष्ठदैत्येन्द्रो ज्वलन्निव हुताशनः ॥ पुलोमा तु बलश्लाघी दृप्तो दानवसत्तमः ॥ ५४ ॥ रथे श्वेतहयनेह सार्द्धं युध्याति वायुना ॥ सर्वेषामेव भूतानां यः प्राणः कथ्यते द्विजैः ॥ ५५ ॥ बलिना कालकल्पेन वायुना सह संगतः ॥ पुलोमस्तत्र पवनः श्रुत्वा ज्यातलानिःस्वनम् ॥ ५६ ॥ नामृष्यत यथा मत्तो गजः प्रतिगजस्वनम् ॥ दैत्यचापच्युतैर्बाणैः प्राच्छाद्यन्त दिशो दश ॥ ५७ ॥ रश्मिजालैरिवार्कस्य विततं साम्बरं जगत् ॥ स ताम्रनयनः क्रुद्धः श्वसन्निव महोरगः ॥ ५८ ॥ वृतो दैत्यशतैर्वायू रश्मिवानिव भास्करः ॥ दैत्यचापभुजोत्सृष्टाः शरा बर्हिणवाससः ॥ ५९ ॥ रुक्मपुंखाः प्रकाशन्त हंसाः श्रोणीकृता इव ॥ चापध्वजपताकाभ्यः शस्त्रा दीप्तिमुखाश्च्युताः ॥ ६० ॥ प्राप्तवन्तश्च दृश्यन्ते दैत्यस्यापततः शराः ॥ एवं सुतीक्ष्णान्खचराच्छलभानिव पावके ॥ ६१ ॥ सुवर्णविकृतान् चित्रान्मुमोच दितिजः शरान् ॥ तमन्तकमिव क्रुद्धमापतन्तं स मारुतः ॥ ६२ ॥

नेत्रवाला महान् सर्पकी नाई श्वास लेता हुआ ॥ ५८ ॥ सैकड़ों दैत्योंसे विरकर वायुदेवता ऐसे शोभाको प्राप्त हुआ कि जैसे किरणोंसे सूर्य और दैत्यकी भुजाओंद्वारा धनुषसे छोड़े हुए मोरके पंखोंकी तुल्य वर्णवाले ॥ ५९ ॥ सुवर्णके पंखोंवाले बाण हंसोंकी पंक्तिकी समान प्रकाशित हुए चाप ध्वजा पताकाओंसे निकले हुए दीप्तिमान् शस्त्र ॥ ६० ॥ वे दैत्योंके निकट प्राप्त हुए दीखने लगे; इस प्रकार तीक्ष्ण बाणोंको अग्निमें पतंगकी समान छोड़ता हुआ ॥ ६१ ॥ वे सुवर्णसे विकृत और चित्रविचित्र बाण छोड़ते क्रोधित हो कालकी समान आते हुए पुलोमा दैत्यको पवने देल ॥ ६२ ॥

प्राणपनसे नव बाणोंसे उसे वेधन किया; तब सनातन वायुने तिसका असह्य वेग देख ॥ ६३ ॥ उत्तम पराक्रममें स्थित हो उसके बाणसमूहको नष्ट किया ॥ ६४ ॥ और बलवान् पवनने शरोंके जालको नष्ट कर पैंने मुखोंवाले बीस बाणोंसे पुलोमा दैत्यको वेधन किया, और पवनोंके गणोंमें श्रेष्ठ और पराक्रमवाले दश देवता ॥ ६५ ॥ वेगसे धन्य धन्य कह सिंहनाद करने लगे; उस तुमुल और रोमहर्षको उपजानेवाले शब्दको सुन ॥ ६६ ॥ वे पौलोम संज्ञक दैत्य क्रोधमें मूर्च्छित हुए पवनके सन्मुख धावमान हुए, और पवनको प्राप्त हो शरोंकी वर्षासे आच्छादन करने लगे ॥ ६७ ॥ कि जैसे वर्षाकालमें

त्यक्त्वा प्राणानतिक्रम्य विव्याध नवभिः शरैः ॥ तस्य वेगमसंहार्यं दृष्ट्वा वायुः सनातनः ॥ ६३ ॥ उत्तमं जवमास्थाय व्यधमत्सा-
यकव्रजान् ॥ तेजो विधम्य बलवाञ्छाजालानि मारुतः ॥ ६४ ॥ विव्याध दैत्यं विशत्या विशिखैर्नतपर्वभिः ॥ मरुद्गणानां प्रवरा
दश दिव्या महौजसः ॥ ६५ ॥ साधु साध्विति योगेन सिंहनादं प्रचक्रिरे ॥ तस्मिन्तस्मुत्थिते शब्दे तुमुले लोमहर्षणे ॥ ६६ ॥
अभ्यधावन्त दितिजाः पौलोमाः क्रोधमूर्च्छिताः ॥ ते समासाद्य पवनं समावृण्वन् शरोत्तमैः ॥ ६७ ॥ पर्वतं वारिधाराभिः प्रावृषीव
बलाहकाः ॥ ते पीडयन्तः पवनं क्रुद्धाः सप्त महारथाः ॥ ६८ ॥ प्रजासंहरणे घोराः सामं सप्त ग्रहा इव ॥ ततो दक्षिणमक्षोभ्यं
नानारत्नविभूषितम् ॥ ६९ ॥ करं गजकराकारमुद्यम्य युधि मारुतः ॥ तेषां मूर्द्धसु दैत्यानां पातयामास वीर्यवान् ॥ ७० ॥
निहता वायुवेगेन तेन सप्त महारथाः ॥ त्यक्त्वा प्राणान् पुलोमा तु विव्याध नवभिः शरैः ॥ ७१ ॥

जलोंकी धारासे पर्वतको मेघ आच्छादन करते हैं, क्रोधित हुए ऐसे सात महारथी पवनको पीडित करने लगे ॥ ६८ ॥ कि जैसे प्रलयकालमें महाघो-
ररूप सात ग्रह चन्द्रमाको पीडित करते हैं, तब अक्षोभ्य अपने दक्षिण हाथको उठाय जो अनेक प्रकारके रत्नोंसे भूषित ॥ ६९ ॥ हस्तीकी शृङ्गाकी
तुल्य था; युद्धमें दैत्योंके मस्तकमें उस बलीने मारा ॥ ७० ॥ अपने वायुके वेगसे सात महारथोंको फेंक दिया; और वह पुलोमा प्राणको त्याग नष्ट

नाणोंसे वायुको वेधन करता हुआ ॥ ७१ ॥ वायुदेवताको प्रकाश करते हुए अचिंत्य बलयुक्त देख और ज्वलित होते हुए पुलोमाके बाणोंके समूहको
 देख उन महात्मा दानवोंके तेजोंको विदीर्ण किया, तब वे रुधिरमें भीगे हुए सुकुटोंवाले गैरुके पर्वतके समान भिन्न दीखे ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ और छिन्न
 भुजा वर्म अस्थियोंवाले सम्पूर्ण दानव युद्धभूमिमें पड़े हुए शोभित हुए; और भेदन किये हुए मद्यन्मत्त हाथी जिस प्रकार शोभाको प्राप्त हुए कि जैसे फूले
 हुए वृक्ष ॥ ७४ ॥ और महात्मा दानवोंके कटे हुए शरीरोंसे रौद्ररूप बड़ी भयानक नदी प्रवृत्त हुई ॥ ७५ ॥ और ढरनेवालोंके भयको बढ़ानेवाली नदी
 प्रदर्शितमसंहार्य दृष्ट्वा वायुं सनातनम् ॥ असंचिन्त्य सुरौघास्तान् ज्वलितांश्च पुलोमतः ॥ ७२ ॥ तेषां विदार्य तेजांसि दानवानां
 महात्मनाम् ॥ शोणिताक्लिन्नसुकुटा गैरिकाक्ता इवाद्रयः ॥ ७३ ॥ ते भिन्नवर्मास्थिभुजाः पतन्तो भान्ति दानवाः ॥ मातङ्गयूथसंभगाः
 पुष्पिता इष पादपाः ॥ ७४ ॥ तेषां विदारितैर्देहैर्दानवानां महात्मनाम् ॥ ततः प्रावर्त्तत नदी रौद्ररूपा भयावहा ॥ ७५ ॥ प्रस्रवन्ती रणे
 रक्तं भीरूणां भयवर्द्धिनी ॥ देवदैत्यगजाश्वानां रुधिरौघपरिप्लुता ॥ रणभूमिरभूद्रोद्रा तत्र तत्र सहस्रशः ॥ ७६ ॥ सभूता गतसत्त्वैश्च
 यक्षराक्षसखेचरेः ॥ सानुगेः सपताकैश्च सोपासङ्गरथध्वजेः ॥ ७७ ॥ शीर्णकुम्भैस्तथा नागैर्घण्टाभिस्तु विभूषितैः ॥ सुवर्णपुङ्खै-
 र्ज्वलितैर्नाराचैस्तिग्मतेजसैः ॥ ७८ ॥ देवदानवनिर्मुक्तैः सविषैरुरगैरिव ॥ प्राप्तोमरनाराचैः शक्तिखड्गपरश्वधैः ॥ ७९ ॥ सुवर्ण-
 विकृतैश्चापि गदामुशलपट्टिशैः ॥ कनकाङ्गदकेयूरैर्मणिभिश्च सकुण्डलैः ॥ ८० ॥ तनुत्रैः सतलत्रैश्च हारैर्निष्कैश्च शोभनैः ॥ हतैश्च
 दितिजैस्तत्र शस्त्रस्यन्दनवर्जितैः ॥ ८१ ॥ पतितैरपि विद्वैश्च शतशोऽथ सहस्रशः ॥ निपातितध्वजरथो हतवाजिरथद्विपः ॥ ८२ ॥
 वहने लगी, देवता और दानव हस्ती और घोड़ोंके रुधिरसे वह रणभूमि बड़ी भयानक होती हुई सहस्रों जीवयुक्त हुई ॥ ७६ ॥ और गतप्राणोंवाले राक्षस
 खेचर और धनुष यक्ष और ध्वजा रथ ॥ ७७ ॥ घंटाओंसे भूषित फूटे हुए मस्तकोंवाले हस्ती और प्रकाश करते हुए सुवर्णकी पंखोंवाले बाण ॥ ७८ ॥
 देव दानवोंसे छोड़े हुए विषैले सर्पोंकी समान प्राप्त और तोमर नाराच और भाले शक्ति परश्वध ॥ ७९ ॥ सुवर्णसे जड़ित धनुष गदा और मुशल पट्टिश
 सुवर्णके बाजू सुकुट शोभायमान कुंडल ॥ ८० ॥ तनुत्र, तलत्र, हार, धुकधुकी शस्त्र रथोंसे रहित भेदन किये हुए दैत्योंसे वह ॥ ८१ ॥ जो कि विद्व और पतित

थे गिरे हुए ध्वजा रथ घोड़े और हाथियोंसे ॥ ८२ ॥ रणभूमि शोभाको प्राप्त हुई; घोड़े हस्तिबोंके मरनेसे देवता और दैत्योंका युद्ध बराबर शोभाको प्राप्त हुआ; तब महाअसुरपालोंसे सहस्रों दैत्योंको साथ ले ॥ ८३ ॥ गदा और सुशलोंको धारण कर वायुदेवताको घेरता हुआ ॥ ८४ ॥ और वे दानवोंमें श्रेष्ठ एक लाख दैत्य पवनदेवताको हनन करते हुए, और तिन दैत्योंसे ताड़ना किया हुआ पवन अंकुशसे ताड़ना किये हस्तीकी समान शोभित हुआ ॥ ८५ ॥ वह महावायु पवन आठ सौ दैत्योंको मार मार्ग कर बड़ा शब्द करते हुए ॥ ८६ ॥ वह मार्ग अवतकभी दीखता है; उस वायुपंथा नाम मार्गको विमर्दों देवदैत्यानां सदृशः कर्मणा बभौ ॥ अथ दैत्यसहस्रेण पौलोमेन महासुरः ॥ ८३ ॥ संवृतः पवनः श्रीमान्गदामुशलपाणिना ॥ ८४ ॥ ते जघ्नुः शतसाहस्राः पवनं दानवोत्तमाः ॥ तैर्वध्यमानः स बभौ समन्तादर्पितैः शरैः ॥ ८५ ॥ हत्वाष्टौ तत्र योधानां शतानि पवनः प्रभुः ॥ कृत्वा मार्गं सुरश्रेष्ठो ननाद सुमहारथः ॥ ८६ ॥ अद्यापि च सुविस्तीर्णः पन्थाः संदृश्यते दिवि ॥ नाम्ना वायुरथो नाम सिद्धाः पर्यन्ति तं दिवि ॥ ८७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ हयग्रीवस्तु दितिजः पूषाणं प्रति वीर्यवान् ॥ ननाद सुमहानादः सिंहनादं महारथः ॥ ८८ ॥ विस्फार्य सुमहच्चापं हेमजालविभूषितम् ॥ पूषाणं दितिजोऽपश्यत्क्रुद्धो घोरेण चक्षुषा ॥ ८९ ॥ भुजाभ्यामाददानस्य संदधानस्य वै शरान् ॥ मुञ्चतः कर्षतो वापि ददृशुस्तत्र नान्तरम् ॥ ९० ॥ अग्निचक्रोपमं दीप्तं मण्डलीकृतकार्मुकम् ॥ तदासीद्दानवेन्द्रस्य सव्यदक्षिणमस्यतः ॥ ९१ ॥ रुक्मपुंखैस्ततस्तस्य चापमुक्तेः शितैः शरैः ॥ प्राच्छाद्यन्त शिलाधौतैर्दिशः सूर्यस्य च प्रभाः ॥ ९२ ॥

सिद्धजनही सदा देखते हैं ॥ ८७ ॥ वैशंपायनजी बोले; हे राजन् ! महाबली हयग्रीवदैत्य पूषाको प्राप्त हो सिंहकी समान नाद करने लगा ॥ ८८ ॥ सुवर्णके जालोंसे भूषित धनुषको टंकोर और क्रोधित हो घोरेनेत्रोंसे पूषाको देखने लगा ॥ ८९ ॥ और बाणोंको भुजाओंसे लेता हुआ संघाता हुआ छोड़ता हुआ खेंचता हुआ ऐसा कर्म करने लगा कि हयग्रीवके बीचमें अंतर नहीं दीखता था ॥ ९० ॥ और दाहिने बांये हाथसे फेंके हुए बाणोंका ऐसा चक्र हो गया कि जैसे घुमाया हुआ अग्निका चक्र हो ॥ ९१ ॥ सुवर्णके पंखोंवाले शिलापै पैनाये हुए धनुषसे छोड़े हुए बाणोंसे सूर्य

और दिशाओंको आच्छादन कर दिया ॥ ९२ ॥ तब सुवर्णके पंखोंवाले और पैनी धारोंवाले ऐसे बाणोंके ॥ ९३ ॥ आकाशमें उन आकाशचारि-
योंके बहुत समूह दीखने लगे, और पर्वतके शिखरकी तुल्य आकारवाले ध षसे छोटे हुए श्रेष्ठ बाण ॥ ९४ ॥ और पंक्तिरूप हुए आकाशमें जाते
हुए प्रकाश करने लगे कि जैसे आकाशमें जाते हुए कौंच गृध्रपक्षसे युक्त शिलापै पैनाये हुए सुवर्णसे भूषित ॥ ९५ ॥ और महावेगवाले प्रशस्त बाण
हयग्रीवने छोड़े, और धनुषके बलसे घुमाये हुए सुवर्णसे भूषित ॥ ९६ ॥ और बहुत पैने बाण पूषाके शरीरको सब ओरसे आच्छादन कर सुवर्णसे

ततः कनकपुंस्वानां शराणां नतपर्वणाम् ॥ ९३ ॥ नभश्चराणां नभसि दृश्यन्ते बहवो व्रजाः ॥ गिरिकूटनिभाच्चापात्प्रभवन्तः
शरोत्तमाः ॥ ९४ ॥ श्रेणीभूताः प्रकाशन्ते यान्तः श्येना इवाम्बरे ॥ गृध्रपत्राच्छिलाधोतान्कार्तस्वरविभूषितान् ॥ ९५ ॥ महा-
वेगान्प्रशस्ताग्रान्मुमोच दितिजः शरान् ॥ ततश्चपबलोद्धृताः शातकुम्भविभूषिताः ॥ ९६ ॥ देहे समवकीर्यन्त पूष्णः सन्निहिताः
शराः ॥ ते व्योम्नि रुक्मविकृताः संप्रकाशन्त सर्वशः ॥ ९७ ॥ खद्योता इव चर्मान्ते स्वे चरन्तः समन्ततः ॥ शिलाधोताः प्रसन्नाग्राः
पूषाणं सिषिचुः शराः ॥ ९८ ॥ पर्वतं वारिधाराभिर्यथा प्रावृषि तोयदाः ॥ ततः प्रच्छादयामास पूषाणं शरवृष्टिभिः ॥ ९९ ॥ पर्वतं
वारिधाराभिश्छादयन्निव तोयदः ॥ ततः स पूष्णो देवस्य बलं वीर्यं पराक्रमम् ॥ १०० ॥ व्यवसायं च सत्त्वं च पश्यन्ति त्रिदशा-
द्भुतम् ॥ तां समुद्रादिवोद्धृतां शरवृष्टिं समुत्थिताम् ॥ १ ॥ नाचिन्तयत्तदा पूषा दैत्यं चाभ्यद्रवद्रणे ॥ हेमपृष्ठं महानादं पूष्ण
आसीन्महाधनुः ॥ २ ॥

जटित हुए वे बाण आकाशमें ऐसे प्रकाशित हुए ॥ ९७ ॥ कि जैसे वर्षाकालमें आकाशमें जाते हुए सहस्रों पटबीजने, शिलापै पैनाये हुए और पैने
अग्रभागोंवाले ऐसे बाण पूषाको वेधन करने लगे ॥ ९८ ॥ जैसे वर्षाकालीन बादल पर्वतको आच्छादन करते हैं, इस प्रकार हयग्रीवने बाणोंकी
वर्षासे पूषाको आच्छादन कर दिया ॥ ९९ ॥ जलधारासे पर्वतकी समान पूषाको आच्छादन किया तब वीर्य पराक्रम ॥ १०० ॥
और परिश्रम शूरताको सम्पूर्ण देवता आश्चर्यरूप देखने लगे, हयग्रीवके धनुषसे होती हुई शरोंकी वर्षाको ॥ १ ॥ पूषा कुछभी चिन्ता न करता

हुआ क्रोधसे हयग्रीवके सामने धावमान हुआ; सुवर्णकी पृष्ठको बड़े शब्द करनेवाले पूषाका धनुष था ॥ २ ॥ उस इन्द्रके वज्रकी समान मंडलाकार धनुषको पूषा ग्रहण कर बाणोंसे आकाशको आच्छादन करने लगा ॥ ३ ॥ पूषाके धनुषसे सुवर्णके पंखोंवाले बाणोंकी आकाशमें विस्ताररूप माला हो गई ॥ ४ ॥ जब पूषाके छोटे हुए बाणोंकी महाघोर वर्षा प्रारंभ हुई तब सब ओर आकाशमें बाणजाल विस्तारित हो गये ॥ ५ ॥ पीछे उन शरोंके जालोंको हयग्रीवने तीक्ष्ण बाणसे नष्ट किया, तब सुवर्णके पंखोंवाले और कंकणके वर्णकी समान वस्त्रोंवाले ॥ ६ ॥

विकृतं मण्डलीभूतं शक्राशनिमिवापरम् ॥ ततः शराः प्रादुरासन्पूरयन्त इवाम्बरम् ॥ ३ ॥ सुवर्णपुंखाः पूष्णस्ते प्रभवन्तः शरा-
सनात् ॥ मालेव रुक्मपुंखानां वितता व्योम्नि पत्रिणाम् ॥ ४ ॥ प्रादुरासीन्महाघोरा बृहती पूषकार्मुकात् ॥ ततो व्योम्नि विभक्तानि
शरजालानि सर्वशः ॥ ५ ॥ आहतानि व्यशीर्यन्त शरैः सन्नतपर्वभिः ॥ ततः कनकपुङ्खानां छिन्नानां कङ्कवाससाम् ॥ ६ ॥ पततां
पात्यमानानां स्वमासीच्चावृतं रण ॥ पूषा प्रापूरयद्बाणैर्हयग्रीवं शिलाशितैः ॥ ७ ॥ नामाङ्कैरकंसदृशैर्दिव्यहेमपरिष्कृतैः ॥ ततो
व्यसृजदुग्धाणि शरजालानि दानवः ॥ ८ ॥ अमर्षी बलवान् क्रुद्धो दिधक्षन्निव पावकः ॥ पूष्णस्त्वाजौ ध्वजं चैव पताकां घनुरेव
च ॥ ९ ॥ रश्मीन् योक्राणि चाश्वानां हयग्रीवो रणेऽच्छिनत् ॥ अथाप्यश्वान्पुनर्हत्वा चतुर्भिः सायकोत्तमैः ॥ ११० ॥ साराथं
सुमहातेजा रथोपस्थादपातयत् ॥ कृतस्तु विरथः पूषा हयग्रीवेण संयुगे ॥ ११ ॥

गिरते हुए हयग्रीवके बाणोंसे आकाश आच्छादन हो गया और शिलोपै पैनाये हुए ॥ ७ ॥ अपने नामसे अंकित और सूर्यके तेजकी समान तेजवाले और सुवर्णसे जडित बाणोंसे पूषा हयग्रीवपै फिर वर्षा करने लगा, तब हयग्रीवभी उग्र शरोंकी वर्षा करने लगा ॥ ८ ॥ महाक्रोधी वह दैत्य अग्निकी समान जलता हुआ संग्रामम पूषाके ध्वजा पताका और धनुष ॥ ९ ॥ रश्मीं सूत घोड़ोंको नष्ट कर दिया और चार बाणोंसे फिर घोड़ोंको मार ॥ ११० ॥ उस महातेजस्वीने रथपैसे फिर सूतको पृथ्वीमें गिरा दिया, जब हयग्रीवने युद्धमें पूषाको विद्ध कर दिया ॥ ११ ॥

तब पूषा भयभीत हो उसके निकटसे चला गया; और मृत्युके मुखसे निकलेकी समान इन्द्रके रथके समीप चला गया ॥ १२ ॥ तब शंवर और भगका फिर घोर और बड़ा दाहण अद्भुत युद्ध होने लगा ॥ १३ ॥ सात हाथ प्रमाण बारह बिलस्त चौड़ा इन्द्रके वज्रकी तुल्य शब्दवाले दृढ ज्यावाले, बहुत भारको सहनेवाले धनुषको धारण कर रथके धुरेकी समान बाणोंको युद्धमें छोड़ने लगा ॥ १४ ॥ क्रोधसे रक्त नेत्र किये सम्पूर्ण योगके जाननेवाले शंवर दैत्यने देवताओंकी सेना विनाशित कर दी ॥ १५ ॥ और वह सेना समुद्रकी तरंगोंकी समान कंपित हुई तब बुरे नेत्रोंवाले भयानक रूप शंवरको आता

पूषा तस्य रथाभ्याशात्स ययौ तेन वै जितः ॥ गतः शक्ररथाभ्याशं मुक्तो मृत्युमुखादिव ॥ १२ ॥ तत्राद्भुतमिदं भूयो युद्धं वर्तत दारुणम् ॥ कृतप्रतिकृतं घोरं शम्बरस्य भगस्य च ॥ १३ ॥ सप्तकिष्कुपरीणाहं द्वादशारत्निकामुकम् ॥ चापं चाशनिनिर्घोषं दृढज्यं भारसाधनम् ॥ विक्षिपन्नक्षसदृशान्व्यसृजत्सायकान्वहन् ॥ १४ ॥ क्रोधसंरक्तनयनः शम्बरः सर्वयोगवित् ॥ तेन वित्रास्यमानानि देवसेन्यानि सर्वशः ॥ १५ ॥ समकम्पन्त भीतानि सिन्धोरिव महोर्मयः ॥ तमापन्तं संप्रेक्ष्य विरूपाक्षं विभीषणम् ॥ १६ ॥ भगः प्रस्फुरमाणौष्ठस्त्वरमाणो व्यदारयत् ॥ ततो भगो महेष्वासो दिव्यं विस्फारयन् धनुः ॥ १७ ॥ अवाकिरन्दैत्यगणाञ्छरजालेन छादयन् ॥ तमभ्यगाद्भगो दैत्यं तूर्णमस्यन्तमान्तिकात् ॥ १८ ॥ मातङ्गमिव मातङ्गो वृषं प्रति वृषो यथा ॥ तो प्रगृह्य महावेगो धनुषी भारसाधने ॥ १९ ॥ प्राच्छादयेतामन्योन्यं तक्षमाणौ रणे शरैः ॥ तयोः सुनुमुलं युद्धमासीद्वोरं महारणे ॥ १२० ॥ भगशम्बरयोर्भीममप्रमेयं महात्मनोः ॥ अथ पूर्णायतोत्सृष्टैः शरैः सन्नतपर्वाभिः ॥ २१ ॥

देख ॥ १६ ॥ क्रोधसे होठोंको कंपावमान करते भगदेवताने शीघ्रतासे शंवर दैत्यको निवारण किया, तब बड़े धनुषवाले भगदेव दिव्यधनुषको टंकोरता हुआ ॥ १७ ॥ धनुषकी ज्याके खैचनेसे सम्पूर्ण दिशाओंको शब्दावमान करता हुआ दैत्योंपर बाणजाल विस्तार करने लगा, शंवर दैत्यके सम्मुख भग शीघ्रतासे चला ॥ १८ ॥ जैसे हस्तीके प्रति हस्ती, और वृषके प्रति वृष जाता हो; और महावेगवाले वे दोनों महाभारी धनुषोंको ग्रहण कर ॥ १९ ॥ परस्पर आच्छादन करते हुए बाणोंसे छेदन करने लगे; तब भग और शंवरका तुमुल और घोर युद्ध होने लगा ॥ १२० ॥ यह युद्ध महा-

भयंकर और अप्रमय हुआ, और बड़े पैने धारवाले और बड़े वेगसे छोड़े हुए ऐसे बाणोंसे ॥ २१ ॥ परस्परमें हनन करने लगे, दोनोंके वस्त्रनर दूट गये सर्वांग विकृत होनेसे रुधिरसे पूर्ण हो गये ॥ २२ ॥ भेदन किये अंगोंवाले रथोंमें बैठे हुए मदोन्मत्त हुए पैने बाणोंसे परस्परमें छेदन करते हुए दोनोंके परस्परमें देखनेको समर्थ नहीं हुए ॥ २३ ॥ और क्रोधसे लाल २ नेत्र किये कालधर्मराज की तुल्य शीघ्रतासे शंबर दैत्यने बाणोंसे भगको भेदन किया ॥ २४ ॥ कि जैसे महान् सर्पोंको गरुड आकाशमें पकड़ता हो, शंबरके प्रेरित ॥ २५ ॥ उन बाणोंको अधिकी समान प्रकाशमान वेगवाले और सूर्यकी

व्यदारयेतामन्योन्यं काष्णो निर्भेद्य चर्मणी ॥ तौ तु विकृतसर्वाङ्गौ रुधिरेण समुक्षितौ ॥ २२ ॥ संप्रेक्ष्यमाणो राथेनावुभौ परमदुर्मदौ ॥ तक्षमाणो सितेर्वाणैर्न वीक्षितुमशक्नुताम् ॥ २३ ॥ अथ विव्याध समरे त्वरमाणोऽसुरो भगम् ॥ नाराचैः क्रोधताम्राक्षः कालान्तकयमोपमः ॥ २४ ॥ गरुत्मानिव चाकाशे पोथयानो महोरगम् ॥ नाराचा न्यपेतन्देहेऽतूर्णं शम्बरचोदिताः ॥ २५ ॥ तानन्तरिक्षे नाराचान् भगश्चिच्छेद पात्रिभिः ॥ ज्वलन्तमचलप्रेष्यं वैश्वानरसमप्रभम् ॥ २६ ॥ ततो भगं चतुःषष्ट्या विव्याधासुरसत्तमः ॥ शिलीमुखैर्महावेगेर्जाम्बूनदविभूषितैः ॥ २७ ॥ तदा तत्सुचिरं कालं युद्धं सममिवाभवत् ॥ शम्बरस्य च मायाभिर्नादृश्यत ततोऽम्बरम् ॥ २८ ॥ दोभ्यां चिक्षिपतश्चापं रणे विष्टभ्य तिष्ठतः ॥ श्रूयते धनुषः शब्दो विस्फूर्जितमिवाशनेः ॥ २९ ॥ स भगस्य हयान्दृष्ट्वा सारथिं च महाहवे ॥ अभ्यवर्षच्छतैरेनं पर्जन्य इव वृष्टिमान् ॥ १३० ॥ न तस्यासीदनिर्भिन्नं गात्रे द्रव्यद्रुलमन्तरम् ॥ भगदेवस्य दैत्येन शम्बरेणास्त्रघातिना ॥ ३१ ॥

सम कांतिवाले देख भगदेवताने अपने बाणोंसे उनको आकाशमें छेदन कर दिया ॥ २६ ॥ तब अत्यन्त तीक्ष्ण सुन्दर तीक्ष्ण मुखोंवाले अत्यन्त वेगवाले ऐसे चौंसठ बाणोंसे शंबर दैत्यने भगको वेधन किया ॥ २७ ॥ तब बहुत कालपर्यन्त मायावी शंबर और भगदेवता दोनोंका बराबर युद्ध होता रहा जिससे आकाश नहीं दीखता था ॥ २८ ॥ और भुजाओंसे धनुषको धारण करता हुआ रणमें स्थित हुआ, वज्र की तुल्य धनुषोंका शब्द सुना जाता था ॥ २९ ॥ शंबर दैत्य भगके बोड़े और सारथीको मारकर मेघकी समान इनपर वर्षा करने लगा ॥ १३० ॥ अन्नवाती शम्बर दैत्यके बाणोंसे सूर्यरूपी भगदेवताके

शरीरमें विना छिद्रके दो अंगुलीकाभी अंतर नहीं रहा ॥ ३१ ॥ महाबली मायाधारी शंबर दैत्यके दिव्य अस्त्रको अपने दिव्य अस्त्रसे धारण करता हुआ, तब दैत्य मायायुद्धसे अन्तर्हित हुआ ॥ ३२ ॥ तब अपनी माया और लाघवतासे भगदेवताको वंचित किया, भगने उसके रथ और घोड़ेको बाणोंसे आच्छादन कर दिया ॥ ३३ ॥ एक सहस्र मायाओंका धारनेवाला कांतिमान् देवताओंकी सेनाको भेदन करनेवाला शंबर दैत्य सौ बाणोंसे आच्छादित दीखने लगा ॥ ३४ ॥ और वह महाबली शंबर फिर प्राणोंसे रहित हुआसा पृथ्वीमें पड़ा हुआ दीखने लगा, और फिर सौ पर्वतोंकी तुल्य युद्ध करता दीखने लगा ॥ ३५ ॥ फिर वह बली दिग्गज हस्तीपर स्थित हुआ दीखने लगा फिर प्रादेशमात्र रूप धारण कर फिर पर्वतकी समान दीखने दैत्यस्य चोद्धतं दिव्यमस्त्रमस्त्रेण धारयन् ॥ मायायुद्धेन मायावी शम्बरः स्तमयोऽभवत् ॥ ३२ ॥ अवञ्चयद्गन् दैत्यो मायाभिर्लाघवेन च ॥ भगस्तस्य रथं साश्वं शरवर्षैरवाकिरत् ॥ ३३ ॥ सहस्रमायो द्युतिमान् देवसेनां निषूदयन् ॥ अदृश्यत शरैश्चक्रः शम्बरः शतशो रणे ॥ ३४ ॥ अदृश्यन्पतितो भूमौ गतचेता इवासुरः ॥ अथ स्म युध्यते भूयः शतधा शैलसन्निभः ॥ ३५ ॥ दिशागजेन्द्रमारुढो दृश्यते स पुनर्बली ॥ प्रादेशमात्रश्च पुनः पुनर्भवति शैलवत् ॥ ३६ ॥ महामेघ इव श्रीमान् तिर्यगूर्ध्वं च सोऽभवत् ॥ पुनः कृत्वा विरूपाणि विकृतानि च सर्वशः ॥ ३७ ॥ सर्वा भीषयते सेनां देवानां भीमदर्शनः ॥ ते भीताः प्रपलायन्ते सिंहं दृष्ट्वा मृगा यथा ॥ ततः सोऽन्यं वरं देहं कृत्वा प्रांशुतरं पुनः ॥ ३८ ॥ गच्छत्यूर्ध्वगतिं घोरो दिशः शब्देन पूरयन् ॥ नभस्तलगतश्चापि वर्षते वासवो यथा ॥ ३९ ॥ संवर्त्तकाम्बुदप्रख्यः पूरयन्पृथिवीतलम् ॥ संवर्त्तकोऽनलश्चैव भूत्वा भीमपराक्रमः ॥ १४० ॥ लगा ॥ ३६ ॥ और महामेघका रूप धारण कर कभी ऊपर और कभी तिरछा दीखने लगा, और फिर घोर विरूप और विकृत भयानक रूपको धारण कर ॥ ३७ ॥ और संपूर्ण देवताओंकी सेनाको डराने लगा और देवता उसके भयसे दौड़ने लगे कि जैसे सिंहसे मृग और फिर वह सूक्ष्म नवीन देह धारण कर ॥ ३८ ॥ दिशाओंको शब्दसे पूर्ण करता हुआ ऊंचा बढने लगा, और आकाशमें प्राप्त हो और प्रलयकालके संवर्त्तकमेघकी तुल्य भूमिको जलसे पूर्ण करता हुआ ॥ ३९ ॥ इन्द्रकी तुल्य वर्षने लगा, और पराक्रमवाला सौ आवर्तोंवाले सौ शिखाओंवाले फिर संवर्त्तकअग्नि हो ॥ १४० ॥

फिर सम्पूर्ण देवताओंको दहन करने लगा; फिर सौ मार्गोंवाला और सौ युफाओंवाला दो घड़ीमें पर्वत दीखने लगा ॥ ४१ ॥ और गिरता हुआ आकाशमें थाँपता हुआ सौ शृंगोंके पर्वतकी समान दीखने लगा; जिससे आदित्य और साध्य और विश्वेदेवा और देवताओंके ॥ ४२ ॥ फेंके हुए अश्वोंको प्रसता हुआ और रणमें युद्ध करता हुआ और अपने रथसहित ॥ ४३ ॥ गन्धर्वनगरकी समान उसी जगह अंतर्धान हो गया, तब देवता भयभीत हो भीमपराकरी होकर उसे देखने लगे ॥ ४४ ॥ सहस्र मायाओंको धारण करनेवाले शंबर दैत्यको देखने लगे, शंबरके युद्धमें स्थित भगदेवताभी

शतवर्त्मा शतशिखो ददाह च पुनः सुरान् ॥ मुहूर्ताच्च महाशैलः शतशीर्षा शतोदरः ॥ ४१ ॥ अदृश्यत दिवस्तम्भः शतशृङ्ग इवाचलः ॥ येऽन्ये दैत्याश्च साध्याश्च ये च विश्वे च देवताः ॥ ४२ ॥ क्षिपन्त्यस्त्राणि दिव्यानि तानि सोऽग्रसतासुरः ॥ युद्धयमानश्च समरे सरथः सोऽसुरोत्तमः ॥ ४३ ॥ गन्धर्वनगराकारस्तत्रैवान्तरधीयत ॥ ते भीताः समुदीक्षन्त त्रिदशा भीमविक्रमाः ॥ ४४ ॥ सहस्रमायं समरे शम्बरं चित्रयोधिनम् ॥ स भगो भयसंत्रस्तो दानवेन्द्रस्य संयुगे ॥ ४५ ॥ रथं त्यक्त्वा महाभागो महेन्द्रं शरणं गतः ॥ पराजित्य तु तं देवं दानवेन्द्रः प्रतापवान् ॥ ४६ ॥ गतो यत्र महातेजा जातवेदा महाप्रभः ॥ स वह्निर्वाग्भिरुग्राभिः क्रुद्धस्तर्जयते बली ॥ भवाम्येष हि ते मृत्युरित्युक्त्वान्तरधीयत ॥ ४७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतस्मिन्नन्तरे भूत्वा ब्राह्मणेन्द्रो महाबलः ॥ जघान सोमः शीतास्त्रो दानवानां चमूं रणे ॥ ४८ ॥ कैलासशिखराकारो द्युतिमद्भिर्गणैर्वृतः ॥ अवधीदानवान् दृष्ट्वा दण्डपाणिर्विवान्तकः ॥ ४९ ॥

भयभीत हो ॥ ४५ ॥ रथ छोड़ इन्द्रकी शरणमें गया, और प्रतापी शंबर दैत्य युद्धमें भगदेवताको जीत ॥ ४६ ॥ प्रकाश करता हुआ अग्निदेवताके सम्मुख गया; और अग्निदेवताको मैं तेरा मारनेवाला हूँ ऐसे कठोर वचनोंसे तर्जन कर अंतर्धान हो गया ॥ ४७ ॥ वैशम्पायन बोले; इसी अन्तरमें ब्राह्मणोंका राजा महाबली शीत शस्त्रोंवाला चंद्रमा दैत्योंकी सेनाको हनन करने लगा ॥ ४८ ॥ कैलासके शिखरकी तुल्य आकारवाले महाकांतिवाले ग्रहोंसे युक्त चंद्रमा दानवोंको दंडपाणि कालप्रभुकी समान हनन करने लगा ॥ ४९ ॥

वह प्रभु रथोंको तोड़ते और घोड़ोंको मारते दैत्योंमें प्रलयकालमें बलवन्त कालकी समान विचरने लगे ॥ १५० ॥ और बड़े वेगसे रथोंको तोड़ते हुए चंद्रमा दैत्योंको ऐसे दग्ध करने लगे जैसे वनको दावाग्रि जलाती है ॥ ५१ ॥ रथियोंसे रथी हाथियोंसे हाथी घुड़सवारोंसे घुड़सवार पैदलसे पैदलोंको मारकर पृथ्वीमें गिराने लगे ॥ ५२ ॥ सम्पूर्ण दानवोंकी सेनाको शीतसे हनन करने लगे कि जैसे वृक्षोंको वायु नष्ट करता है, महातेजस्वी चंद्रमा दानवोंकी सेनाको ऐसे नष्ट करने लगा ॥ ५३ ॥ और चंद्रमाका अस्र शत्रुओंके रुधिरसे ऐसे भीज गया कि जैसे क्रोधसे पशुओंको मारता हुआ महादे-

पोथयद्रथवृन्दानि वाजिवृन्दानि वै प्रभुः ॥ दैत्येषु विचरन् श्रीमान्युगान्ते कालवद्वली ॥ १५० ॥ सोऽमर्षाद्रथजालानि उरुवेगेन चन्द्रमाः ॥ ददाह दानवान्तसर्वान्दावाग्रिव चोदितः ॥ ५१ ॥ मृद्व्रथेभ्यो रथिनो गजेभ्यो गजयोधिनः ॥ साधिनश्चाश्वपृष्ठेभ्यो भूमौ चापि पदातिनः ॥ ५२ ॥ शीतेन व्यधमत्सर्वान्वायुर्वृक्षानिवोजसा ॥ चन्द्रमाः सुमहातेजा दानवानां महाचमूम् ॥ ५३ ॥ तदस्त्रमभवत्तस्य प्रदिग्धं शत्रुशोणितैः ॥ पिनाकमिव रुद्रस्य क्रुद्धस्याभिघ्नतः पशून् ॥ ५४ ॥ युगान्तकोपमः श्रीमान् दैत्येषु व्यचरद्वली ॥ आचार्यमहर्तां सेनां प्राद्रवन्तीं पुनः पुनः ॥ ५५ ॥ चन्द्रं मृत्युमिवायान्तं दृष्ट्वा योधा विसिष्मियुः ॥ यतो यतः प्रक्षिपति शिशिरास्त्रं तमोनुदः ॥ ५६ ॥ ततस्ततो व्यशीर्यन्त दैत्यसैन्यानि संयुगे ॥ व्यदारयत्स सैन्यानि स्वबलेनाभिसंवृतः ॥ ५७ ॥ ग्रसमानमनीकानि व्यादितास्यमिवान्तकम् ॥ तं तथा भीमकर्माणं गृहीतास्त्रं महादवे ॥ ५८ ॥

वका अस्र हो ॥ ५४ ॥ और वार २ पलायन की हुई देवताओंकी सेनाको निवारण कर कालप्रभुकी तुल्य महाबली चंद्रमा दैत्योंकी सेनामें विचरने लगा ॥ ५५ ॥ मृत्युकी नाई आता हुआ चंद्रमाको देख योधा विस्मयको प्राप्त हो गये और अंधकारको दूर करनेवाला शिशिरास्त्रको चंद्रमा जहां २ प्रेरणा करने लगा ॥ ५६ ॥ तहां २ सम्पूर्ण दैत्योंकी सेना नष्ट होने लगी; इस प्रकार अपनी सेनासे युक्त हुआ दैत्योंकी सेनाको विदारण करने लगा ॥ ५७ ॥ मुखको फाड़े कालकी नाई दैत्योंकी सेनाको ग्रस्ते हुए और भयानक कर्म करते हुए अस्त्रोंको धारण किये महायुद्धमें ॥ ५८ ॥

आते हुए चंद्रमाको देख वे दैत्योंमें चंद्रमा और भास्कररूप तालवृक्षके प्रमाणमात्र धनुषोंको आकर्षण करते हुए ॥ ५९ ॥ महाबलीदो योद्धा बाणोंसे चंद्रमाको वर्षा करते हुए महामेवकी समान आच्छादन करते और सुरासुरोंके धनुष्योंको खेंवनेसे ॥ ६० ॥ दशों दिशामें बड़ा शब्द हुआ, हस्तियोंके गर्जने और घोड़ोंके हँसनेसे ॥ ६१ ॥ भेरीशंख मृदंगके बजनेसे आकाशमें महानुमुल शब्द हुआ; युद्ध तथा जय और यशही इच्छा करते हुए योधा ॥ ६२ ॥ परस्पर गर्जने लगे जैसे गोशालाओंमें गोवृष, और पैंने बाणोंसे छेदन किए हुए दोनों सेनाओंके शिरोंकी ॥ ६३ ॥

दृष्ट्वा शशांकमायान्तं दैत्याभं चन्द्रभास्करो ॥ तालमात्राणि चापानि कर्षमाणौ महाबलौ ॥ ५९ ॥ छादयेतां शरैश्चन्द्रं वृष्टि-
मन्ताविवाम्बुदौ ॥ अथ विस्फार्यमाणानां कार्मुकाणां सुरासुरैः ॥ ६० ॥ अभवत्सुमहाशब्दो दिशः सन्नादयन्निव ॥ विन-
दद्भिर्महानागैर्हृषमाणैश्च वाजिभिः ॥ ६१ ॥ भेरीशंखनिनादैश्च तुमुलं सर्वतोऽभवत् ॥ युयुत्सवस्ते संख्या जगद्ग्रा यश-
स्विनः ॥ ६२ ॥ अन्योन्यमभिगर्जन्तो गोष्ठेष्विव महावृषाः ॥ शिरसां पात्यमानानां समरे निशितैः शरैः ॥ ६३ ॥ अश्मवृष्टिरि-
वाकाशे ह्यभवत्सेनयोस्तयोः ॥ कुण्डलोष्णीपधारीणि जातरूपपद्मजांसि च ॥ ६४ ॥ पतितानि रुम दृश्यन्ते शिरांसि रणमूर्धनि ॥
विशिखैर्मथितैर्गात्रैर्बाहुभिश्च सकार्मुकैः ॥ ६५ ॥ सहस्राभरणैश्चान्येर्विच्छिन्नैरुधिरोक्षितैः ॥ कवचैरावृतैर्गात्रैरुक्षभिश्चन्दनो-
क्षितैः ॥ ६६ ॥ मुखैश्च चन्द्रसंकाशैस्तप्तकुण्डलभूषणैः ॥ गजवाजिमनुष्याणां सर्वगात्रैः समन्ततः ॥ ६७ ॥ आसीत्सर्वा
समाकीर्णा मुहूर्तेन वसुंधरा ॥ चापमेवाश्च विपुलाः शस्त्रविद्युत्प्रकाशिनः ॥ वाहनानां च निर्घोषः स्तनयित्नुसमोऽभवत् ॥ ६८ ॥

आकाशमें पत्थरकी समान वर्षा होने लगी; और कुंडल और पगडियोंको धारण करे हुए सुवर्णकी मालासे युक्त ॥ ६४ ॥ शिर रणमें पड़े हुए दीखने लगे; और बाणोंसे छेदित शरीर और धनुषोंसे युक्त भुजा ॥ ६५ ॥ और रुधिरमें भीगे हुए सहस्रों भूषण और कवचोंसे युक्त शरीर और जांघ तथा चंदनसे प्रकाशमान ॥ ६६ ॥ सुवर्णके कुंडलसे शोभित मुखोंसे और हस्ती मनुष्य घोड़ोंके शरीरोंसे ॥ ६७ ॥ भूमि एक मुहूर्तमें भरपूर हो

गर्ह, धनुषरूपी घटाको शस्त्ररूपी बिजली और वाहनोंका शब्द मेघकी समान होने लगा ॥ ६८ ॥ इस प्रकार युद्धमें देवता और असुरोंका वह रुधिरको वहानेवाला कठिन संग्राम होने लगा ॥ १६९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पंचपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५५ ॥ वैशंपायन बोले, तुमुल और रोमहर्षोंको करनेवाले मयानक महायुद्धमें देवता और दानव क्रोध करते हुए बाणोंकी वर्षा करने लगे ॥ १ ॥ सवार हत होनेसे हस्ती बाणोंसे पीड़ित हुए बड़े शब्द करते तथा घोड़े दशों दिशाओंमें भागने लगे ॥ २ ॥ देवता और दानवोंके हाथों घोड़े उस युद्धमें बाणोंकी वर्षासे पीड़ित

स संप्रहारस्तुमुलः कटुकः शोणितोदकः ॥ प्रावर्त्तत सुराणां च दानवानां च संयुगे ॥ १६९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५५ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तस्मिन्महाहवे रौद्रे तुमुले लोमहर्षणे ॥ ववर्षुः शरवर्षाणि संरन्धा देवदानवाः ॥ १ ॥ व्याक्रोशन्त गजास्तत्र शरघातप्रपीडिताः ॥ अश्वाश्च पर्यधावन्त हतारोहा दिशो दश ॥ २ ॥ उत्पत्य निपतन्त्यन्ये शरवर्षप्रपीडिताः ॥ देवानां दानवानां च गजाश्चरथिनां रणे ॥ ३ ॥ समरे तत्र शूराणामन्योन्यमभिधावताम् ॥ धनुषां तलशब्देन न प्राज्ञायत किंचन ॥ ४ ॥ शरशक्तिगदाभिस्ते खड्गैश्चामिततेजसः ॥ निजधनुर्महतीं सेनामन्योन्यस्य परंतप ॥ ५ ॥ बाहूनामुत्तमाङ्गानां कार्मुकाणां च संयुगे ॥ राशयस्तत्र दृश्यन्ते देवदैत्यसमागमे ॥ ६ ॥ अश्वानां कुञ्जराणां च रथानां च वरूथिनाम् ॥ नान्तं समभिगच्छन्ति निहतानां सुरासुरैः ॥ ७ ॥ गदाभिरसिभिः प्राप्तेर्भलैः सन्नतपर्वभिः ॥ योधास्तत्राभ्यहन्यन्त हस्त्यश्चं चामितं बहुः ॥ ८ ॥

हुए ऊपरको उछल २ कर पृथ्वीमें गिरते थे ॥ ३ ॥ रथों चढ़े हुए देवता और दानवोंके ज्याके शब्दोंसे रणमें कोई जाना नहीं जाता था ॥ ४ ॥ बाण शक्ति गदा और खड्गोंसे अत्यन्त तेजवाले शूर वीर दोनों सेनाओंको हनन करने लगे ॥ ५ ॥ बहुतोंके भुजा और उत्तम अंग तथा धनुषोंके समूह पड़े हुए देवता और दानवोंके युद्धमें दीखने लगे ॥ ६ ॥ देवता दैत्योंके बाणोंसे मरे हुए घोड़ा हस्ती और रथोंका अंत नहीं मिला था ॥ ७ ॥ गदा असि प्राप्त बाणोंसे योधा औरभी बहुतसे हस्ती और घोड़ोंको मारने लगे ॥ ८ ॥

केशरूपी शैवाल और बूबवाली, बड़े वेगके तरंगोंवाली सेनाओंके मध्यमें रुधिरकी घोररूप नदी बहने लगी ॥ ९ ॥ और रणमें दानवोंसे हनन किये हुए देवताओंका महा हाहाकार शब्द होने लगा ॥ १० ॥ वैशंपायन बोले, भयको देनेवाला महाघोररूप विकृत रौद्र युद्ध देवताओंका दैत्योंके संग होने लगा ॥ ११ ॥ लाल नेत्र किये परम धनुषको धारण किये विष्वक्सेन नामवाले साध्यदेवताको रणमें विरोचनने हनन किया ॥ १२ ॥ तब विरोचनको आता देख देवताओंसे आवृत महाबली विष्वक्सेनने तीन बाण धनुषपर चढाय उसकी छातीमें मारे ॥ १३ ॥ और विष्वक्सेनके बाणोंसे अंकुशसे

प्रावर्तत नदी घोरा शोणितोघा तरङ्गिणी ॥ तदा मध्ये तु सैन्यानां केशशैवलशादृल ॥ ९ ॥ हाहाकारो महाशब्दो योधानामभव-
त्तदा ॥ दानवैर्हन्यमानानां त्रिदशानां महारणे ॥ १० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तेषां तदभवद्युद्धं देवानामसुरैः सह ॥ विभीषणं महा-
राट्त्रं विकृतं भीमदर्शनम् ॥ ११ ॥ विरोचनस्तु तत्रैव विष्वक्सेनं महाहवे ॥ जघान रुधिराभाक्ष साध्यं परमधन्विनम् ॥ १२ ॥
तमायान्तमभिप्रेक्ष्य विष्वक्सेनः सुरैर्वृतः ॥ अमेयात्मा सुरश्रेष्ठः प्रत्यविध्यत् स्तनान्तरे ॥ १३ ॥ साध्यस्य बाणाभिहतस्तोत्रा-
दित इव द्विपः ॥ विरोचनः प्रज्ज्वाल क्रोधेनाग्निरिवाध्वरे ॥ १४ ॥ स कार्मुकविनिर्मुक्तैः शरैर्दानवसत्तमः ॥ विष्वक्सेनं विभेदाजो
दीप्तैः सप्तभिराशुगैः ॥ १५ ॥ सोऽतिविद्धो बलवता दानवेन सुरोत्तमः ॥ मूर्च्छामभिजगामाशु ध्वजं चाप्याश्रयत्प्रभुः ॥ १६ ॥ ततः स
पुनराश्वास्य साध्यो युद्धे मनो दधे ॥ विस्फार्य च महाचापं दैत्यमध्ये व्यवस्थितः ॥ १७ ॥ विरोचनस्तु बलवानभ्ययुध्यत सर्वशः ॥
क्षोभयन्त्सुरसैन्यानि समन्तान्निशितैः शरैः ॥ १८ ॥

हाथीकी समान हनन किया हुआ विरोचन क्रोधसे यज्ञमें अग्निकी समान जल जठा ॥ १४ ॥ तब प्रकाशमान वेगवाले सात बाणोंको विरोचनने अपने धनुषपर चढाय युद्धमें विष्वक्सेनको सात बाणोंसे मारा ॥ १५ ॥ वह बलवान् विरोचनसे अत्यन्त विद्ध होकर विष्वक्सेन मूर्च्छाको प्राप्त हो ध्वजाके आश्रय स्थित हुआ ॥ १६ ॥ फिर सावधान हो धनुषको टंकार दे फिर दैत्योंके मध्यमें स्थित हुआ ॥ १७ ॥ और वह विरोचन तीक्ष्ण बाणोंसे देव-

ताओंकी सेनाको क्षोभित करता हुआ सब ओर युद्ध करने लगा ॥ १८ ॥ युद्ध करते हुए विरोचन दैत्यका युद्धमें गर्जते हुए मेघकी समान बड़ा शब्द सुनाई आने लगा ॥ १९ ॥ तब वह विरोचन देवताओंकी सेनाको हनन करता हुआ ऐसे गर्जने लगा कि जिस प्रकार ओलोंकी वर्षा करता हुआ विजलियोंसहित चंड मेघ गर्जता हो ॥ २० ॥ युद्धमें अस्त्रोंको उठाये बाणोंकी वर्षासे सम्पूर्ण देवताओंकी सेनाको युद्धमें भगाने लगा ॥ २१ ॥ रथोंपैसे रथी घोड़ोंपैसे सवार, और प्यादे ये सम्पूर्ण विरोचनके भयसे भाग गये ॥ २२ ॥ वज्रके शब्दकी तुल्य धनुषके शब्दको सुन भयसे रणमें

ततस्तस्यासुरेन्द्रस्य युध्यमानस्य संयुगे ॥ श्रूयते तुमुलः शब्दो जम्भूतस्येव गर्जतः ॥ १९ ॥ जगर्ज च महाघोषो विनिघ्नन्देववा-
हिनीम् ॥ चण्डेवगाश्मवर्षी च सविद्युत्स्तनायित्तुमान् ॥ २० ॥ दिशो विद्रावयामास शरवर्षेण दानवः ॥ सर्वसैन्यानि देवानामु-
द्यतास्त्रो महाहवे ॥ २१ ॥ ते प्राद्रवन्त वित्रस्ता रथेभ्यो रथिनस्तदा ॥ सादिनश्चाश्वपृष्ठेभ्यो भूमौ चापि पदातयः ॥ २२ ॥ श्रुत्वा
कार्मुकनिर्घोषं विस्फूर्जितमिवाशनेः ॥ सर्वसैन्यानि भित्तानि विव्यलीयन्त संयुगे ॥ २३ ॥ विरोचनभयत्रस्ता रथेभ्यो रथिनस्तदा ॥
पदातीनां ययुः संघा यत्र देवः शचीपातिः ॥ २४ ॥ विष्वक्सेनस्य साध्यस्य सर्वतः सुमहाबलः ॥ पादे रक्षःसहस्राणि निजघान
चतुर्दश ॥ २५ ॥ अश्ववृन्देषु नागेषु रथानिकेषु चाभिभूः ॥ पदातीनां च संघेषु विनिघ्नन् प्रत्यदृश्यत ॥ २६ ॥ वितत्य
इयेनवत्पक्षौ सर्वतः स वरूथिनीम् ॥ भित्त्वा च्छित्त्वा महाबाहुः शिरांस्यजौ ह्यकृन्तत ॥ २७ ॥ सादिनश्च पदातीश्च हतशेषा
रथास्तथा ॥ विष्वक्सेनेन सहिता विरोचनमथाद्रवन् ॥ २८ ॥

सम्पूर्ण देवताओंकी सेना छिप गई ॥ २३ ॥ विरोचनके भयसे डरते हुए रथी और प्यादोंके समूह इन्द्रके समीप प्राप्त हुए ॥ २४ ॥ उस समय उस
महाबली विरोचनने विष्वक्सेनके चौदह सहस्र पीठकी रक्षा करनेवालोंको हनन कर डाला ॥ २५ ॥ घोड़े, हाथी, रथ, प्यादोंके समूहमें वह विरोचन
हनन करता हुआ दीखने लगा ॥ २६ ॥ और वह विरोचन सिकारीकी समान पंखोंको फैलाता हुआ देवताओंकी सेनाको मारता २ शिरोंको छेदन
करने लगा ॥ २७ ॥ घोड़ोंके सवार और प्यादे मरनेसे बचे हुए रथी ये सम्पूर्ण विष्वक्सेनके संग हो विरोचनके सम्मुख हुए ॥ २८ ॥

खज्ज डाल गदा शक्ति परिघ प्राप्त तोमर इन हथियारोंसे हनन करने हुए सिंहनाद करने लगे ॥ २९ ॥ वह विरोचन फिर अपनी तलवारको ग्रहण कर बड़े वेगसे रथियोंका शिर और धनुषको काटने लगा ॥ ३० ॥ रथ हस्ती घोड़ोंके समूहमें स्थित और शत्रुओंको मर्दन करनेवाला विरोचन इक्रीस प्रकारके मार्गोंसे विचरने लगा ॥ ३१ ॥ और भ्रांत उद्भ्रांत आविद्ध आप्लुत संपात समुदीर्ण इन्होंको दिखाता हुआ ॥ ३२ ॥ कोई महात्मा विरोचनकी तीक्ष्ण तलवारसे भग्न कवचोंवाले देवता गर्जते हुए और कितने एक प्राणोंसे रहित हो पृथ्वीमें गिरे ॥ ३३ ॥ इस प्रकार महात्मा बलिसे छेदन किये

तेऽसिचर्मगदाशक्तिपरिघप्राप्तोमरेः ॥ तमेकमभ्यधावन्तं सिंहनादं प्रचक्रिरे ॥ २९ ॥ ततः सोऽसिं समुद्यम्य जवमास्थाय दानवः ॥ चकर्त रथिनामाजौ शिरांसि च धनुषि च ॥ ३० ॥ रथनागाश्ववृन्देषु बलवानरिसूदनः ॥ विरोचनश्चरन्मार्गान्प्रकारानेकविंशतिम् ॥ ३१ ॥ भ्रान्तमुद्भ्रान्तमाविद्धमाप्लुतं विप्लुतं युगम् ॥ संपातं समुदीर्णं च दर्शयामास दानवः ॥ ३२ ॥ केचिद्रासिना रुग्णा दानवेन महात्मना ॥ विनेदुच्छन्नवर्माणो निपेतुश्च गतासवः ॥ ३३ ॥ छिन्नपृष्ठा हतारोहा दानवेन महात्मना ॥ विद्रुताः स्वान्यनीकानि जघ्नुस्त्रिदशवारणाः ॥ ३४ ॥ निपेतुरुर्व्यामाकाशे निकृता दृढधन्विना ॥ विविधास्तोमराश्चापा महामात्रशिरांसि च ॥ ३५ ॥ प्रतीपमाहरन्नागानश्वांश्च दृढविक्रमान् ॥ आप्लुत्य रथिनः कांश्चित्पराभूश्य महाबलः ॥ ३६ ॥ सूतांश्चिच्छेद खज्जेन रथानपि च दानवः ॥ मुहुरुत्पततो दिक्षु धावतश्च यशस्विनः ॥ ३७ ॥ मार्गांश्चरति वै चित्रान् विस्मयन्तस्ततोऽसुरान् ॥ निजघान पदा कांश्चिदाक्षिप्यान्यानपोथयत् ॥ ३८ ॥

हुए वाहनोंसे रहित किये देवताओंके हस्ती उलटे दौडते हुए अपनी सेनाको मारने लगे ॥ ३४ ॥ दृढ धनुषधारी विरोचनके छेदन किये हुए अनेक प्रकारके तोमर धनुष पीलवानोंके शिर आकाशसे भूमिमें गिरने लगे ॥ ३५ ॥ और वह विरोचन दृढविक्रमी हाथी और घोड़ोंको मारता हुआ कितनेक रथियोंका तिरस्कार कर ॥ ३६ ॥ और कूदके अपने खज्जसे सूत और रथोंको छेदन करने लगा, वारंवार कूदता हुआ धावमान होता हुआ यशस्वियोंके ॥ ३७ ॥ चित्र विचित्र मार्गोंको विचरने लगा ऐसे विरोचनको देख सम्पूर्ण सुर विस्मयको प्राप्त हो गये किसीको पैरसे मारकर किसीको

एक दूसरेके ऊपर दे मारा ॥ ३८ ॥ किसीको खड्गसे छेदन कर किसीको शब्दसे भयभीत किया; और कोई ऊरुस्तंभसे गृहीत हुए विरोचनको देख
प्राणोंको त्याग पृथ्वीपर गिरे ॥ ३९ ॥ और रथोंके समूह घोंडे हस्ती और देवतोंके नाश होनेमें ॥ ४० ॥ दैत्योंमें श्रेष्ठ जंभ दैत्य अंशदेवतासे
वृषकी समान युद्ध करने लगा ॥ ४१ ॥ पर्वतके सम रूपवाला और मत्तहस्तीकी तुल्य पराक्रमी जंभ दैत्य और वेगवन्त बहुत बाणोंसे अंशदेवताको
वेधन करने लगा ॥ ४२ ॥ रथोंसे सहित देवताओंकी सहस्रोंही सेना जंभके बाणरूपी मार्गमें प्राप्त हो चलनेको समर्थ न हुई ॥ ४३ ॥ और सम्पूर्ण

खड्गेन चान्यांश्चिच्छेद नादेनान्यांश्च भीषयन् ॥ ऊरुस्तम्भगृहीताश्च निपतन्त्यपरे भुवि ॥ अपरे दैत्यमालोक्य भयात्प्राणानवा-
सृजन् ॥ ३९ ॥ तस्मिंस्तथा वर्तमाने युद्धे महाति दारुणे ॥ रथौघगजपत्तीनां सुराणां च महाक्षये ॥ ४० ॥ कुजम्भो दानवश्रेष्ठो
ह्यंशुमादित्यमाहवे ॥ योधयामास समरे वृषः प्रतिवृषं यथा ॥ ४१ ॥ जघानाचलसंकाशो मत्तवारणविक्रमः ॥ स्फुरद्भिर्निशितैस्ती-
क्ष्णशरेर्बहुभिराशुगेः ॥ ४२ ॥ देवसेन्यसहस्राणि सरथानि महाहवे ॥ तस्य बाणपथं प्राप्य नाभ्यवर्तन्त सर्वशः ॥ ४३ ॥ प्रणेदुः
सर्वभूतानि बभूवुस्तिमिरा दिशः ॥ देवानामजयः क्रूरः प्रत्यपद्यत दारुणः ॥ ४४ ॥ अंशस्तु दानवेन्द्रस्य जघानोत्तमविक्रमः ॥
अनीकं दशसाहस्रं कुञ्जराणां तरस्विनाम् ॥ ४५ ॥ आपतन्तं गजानीकं कुजम्भो वीक्ष्य दानवः ॥ गदापाणिस्वारोद्ग्रथोपस्थाद-
रिंदमः ॥ ४६ ॥ अद्रिसारमयीं गुर्वीं प्रगृह्य महतीं गदाम् ॥ अभ्यद्रवद्गजानीकं व्यादितास्य इषान्तकः ॥ ४७ ॥ स गजान् गदया
निघ्नन्व्यचरत्समरे बली ॥ कुजम्भो दानवश्रेष्ठो गदापाणिर्बलाधिकः ॥ ४८ ॥

प्राणी दुःखसे शब्द करने लगे, और दिशा अंधकारयुक्त हो गई और देवताओंकी बड़ी दारुण पराजय दीखने लगी ॥ ४४ ॥ तब देवताओंमें श्रेष्ठ
उत्तम पराक्रमी अंशदेवता जंभदैत्यकी बड़ी वेगवाली दश सहस्र हस्तिरथोंकी सेनाको मारने लगा ॥ ४५ ॥ और शत्रुओंको दमन करनेवाला कुजंभ दैत्य
आती हुई हस्तिरथोंकी सेनाको देख और हाथमें गदा धारण कर अपने रथसे नीचे उतरकर स्थित हुआ ॥ ४६ ॥ पर्वतकी तुल्य सारवाली बड़ी गदाको
ग्रहण कर हस्तिरथोंकी सेनामें मुख फैलाये कालकी समान दौड़ा ॥ ४७ ॥ और दानवोंमें श्रेष्ठ महाबली कुजंभ दैत्य अपनी गदासे हस्तिरथोंको हनन

करता हुआ एगमें दंडको हाथमें लिये विचरने लगा ॥ ४८ ॥ दानवोंमें श्रेष्ठ महाबली कुजंभ हस्तियोंके दांत और मस्तकोंको गिनगिनकर भेदन करता हुआ ॥ ४९ ॥ टूटे दांतोंवाले भेदित मस्तकोंवाले अनेक हस्ती कुजंभ दैत्यके भेदित किये हुए दशों दिशाओंमें फिरने लगे ॥ ५० ॥ और कुजंभ दैत्यके जो घोर पराक्रमी मंत्री थे वे तीक्ष्ण बाणोंकी वर्षा कर गजयोधाओंको मारने लगे ॥ ५१ ॥ धुर धुरप्र भाले दात्र और अंजलिक हथियारोंसे कुजंभ दैत्य देवताओंके अंगोंको छेदन करने लगा ॥ ५२ ॥ और गिरते हुए शिरोंकी वर्षासे आकाश ओलोंकी वर्षाके समान पूर्ण हो गया और महा-

विशीर्णदन्ताश्च बहून् भिन्नकुम्भाश्च दारुणान् ॥ अकरोद्दानवश्रेष्ठ उद्दिश्योद्दिश्य तान्बली ॥ ४९ ॥ विशीर्णदन्ता बहवो भिन्नकुम्भास्तथा परे ॥ कुजम्भेनादिता नागा व्यद्रवन्त दिशो दश ॥ ५० ॥ कुजम्भस्य च येऽमात्या दानवा घोरविक्रमाः ॥ नाराचैर्विविधैस्तीक्ष्णैरपास्तगजयोधिनः ॥ ५१ ॥ धुरैः धुरप्रैर्भलैश्च पातैरञ्जलिकैः शितैः ॥ चिच्छेद चोत्तमाङ्गानि कुजम्भो दानवोत्तमः ॥ ५२ ॥ शिरोभिः प्रपतद्भिस्तु गगनं प्रत्यपूर्यत ॥ अश्मवृष्टिरिवाकाशे बहुभिश्च सहाङ्कुशैः ॥ ५३ ॥ कृतोत्तमाङ्गाः स्कन्धेषु गजानां गजयोधिनः ॥ अद्दश्यन्त महाराज ताला विशिरसो यथा ॥ ५४ ॥ आपतन्तं महानागमंशस्यासुरसत्तमः ॥ जघानैकेषुणा क्रुद्धस्ततः स विमुखोऽभवत् ॥ ५५ ॥ विगाह्येवं गजानीकं कुजम्भो दानवोत्तमः ॥ विनिघ्नप्रवरान्सैन्यान्गदया बलिनां वरः ॥ ५६ ॥ एकप्रहाराभिहतान्कुजम्भेन महाराजान् ॥ अपश्यन्त सुराः सर्वे पर्वतानिव पातितान् ॥ ५७ ॥ कुजम्भस्य च मार्गेषु विशीर्णास्ते महाराजाः ॥ वज्राहता इवेन्द्रेण विशीर्णा इव पर्वताः ॥ ५८ ॥

अंकुशोंसे हत ॥ ५३ ॥ हस्तियोंपै बैठे हुए देवता शिरोंसे रहित ऐसे दीखने लगे कि जैसे शिरोंविना तालके वृक्ष ॥ ५४ ॥ सन्मुख आते हुए मदोन्मत्त अंशदेवताके हस्तीको जंभ दैत्यने एक बाणसेही ऐसा वेधन किया कि वह हस्ती पीछे फिर गया ॥ ५५ ॥ दानवोंमें श्रेष्ठ गदायुद्धका जाननेवाला कुजंभ दैत्य हस्तियोंकी सेनाको मर्दन कर और गदासे देवताओंको हनन करने लगा ॥ ५६ ॥ कुजंभके एकही प्रहारसे मारे हुए पर्वतकी समान पड़े हुए हस्तियोंको सम्पूर्ण देवता देखने लगे ॥ ५७ ॥ कुजंभके आगे हस्ती ऐसे वेधित हुए कि जैसे इन्द्रके वज्रसे पर्वत विदीर्ण हो ॥ ५८ ॥

और देवता उसको धूर्तिमान् कालकी समान देखने लगे और सिंहसे] जैसे मृग डरते हैं इस प्रकार उससे हस्ती, डरने लगे ॥ ५९ ॥
 हस्तियोंके रुधिरसे भीगी हुई छोहेकी गदाको धारण करे सुखको फाँड़े कुजंभ दैत्य कोथकर बड़ा भयानक रहा धारण कर गर्जने
 लगा ॥ ६० ॥ प्रलयकालमें प्रजाके नाशके अर्थ कालकी समान क्रोधित कुजंभ अपनी गदासे रणमें कोड़ा करने लगा ॥ ६१ ॥ गोपा-
 लकी समान दंडको धारण किये हस्तियोंको दौड़ाता और बड़े पराक्रमी दंडको उठाये ॥ ६२ ॥ कुजंभ दैत्यको सम्पूर्ण देवता क्रोधित कालकी समान

अपश्यंस्त्रिदशाः सर्वे मूर्तिमन्तमिवान्तकम् ॥ गजास्तथा व्यदीर्यन्त सिंहस्येवेतरे मृगाः ॥ ५९ ॥ स बभौ तां गदां बिभ्रत्प्रोक्षितां
 गजशोणितैः ॥ व्यादितास्यो नदत्क्रुद्धो रौद्ररूपो भयानकः ॥ ६० ॥ यथा हि भगवान् क्रुद्धः प्रजानां संक्षये पुरा ॥ विक्रीडमानो
 गदयारणमध्ये महासुरः ॥ ६१ ॥ गोपाल इव दण्डेन कालयन्स महागजान् ॥ क्रुद्धं कालमिवाकाले दण्डमुद्यम्य दानवम् ॥ ६२ ॥
 अपश्यन्त सुराः सर्वे कुजम्भं भीमविक्रमम् ॥ हतारोहास्तु तत्रान्ये प्रभिन्ना वारणोत्तमाः ॥ ६३ ॥ ते हन्यमाना गदया बाणैश्च
 भृशविक्षताः ॥ असहन्तः कुजम्भस्य गदावेगं महाहवे ॥ ६४ ॥ स्वान्यनीकानि गृहन्तः प्राद्रवन्तः महागजा ॥ महावात इवाभ्राणि
 विधमन्गदया गजान् ॥ अतिष्ठत्समरे दैत्यः कालः संवर्त्तको यथा ॥ ६५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि
 कुजम्भोत्कर्षवर्णनं नाम षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः सर्वाणि सैन्यानि देवराजस्य शासनात् ॥

अभ्यद्रवन्त दितिजान्नदन्तो भैरवान्नवान् ॥ १ ॥ तं बलौघमपर्यन्तं देवानां सुदुरासदम् ॥ रथनागाश्च कलिलं शंखदुन्दुभिनिस्वनम् ॥ २ ॥
 देखने लगे, आरोही और हाथी अनेक नष्ट हो गये ॥ ६३ ॥ वे गदासे हन्यमान और बाणोंसे महापीडित हो कुजंभके वेगको संग्राममें सहनेको समर्थ
 न हुए ॥ ६४ ॥ अपनी सेनाको मारते हुए हाथी दौड़े, वह गदासे हाथियोंको ऐसे मगाते लगा जैसे पवन मेव हो मगाती है वह दैत्य रणमें कालकी
 समान स्थित हुआ ॥ ६५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५६ ॥ वैशम्पायनजी बोले, तब
 सम्पूर्ण देवताओंकी सेना बड़े भयानक शब्दोंको करती हुई और दैत्योंके सम्मुख इन्द्रकी आज्ञासे चली ॥ १ ॥ असह्यरथ, हस्ती घोड़ेसे ग्याप्त शंख

नकारोंसे शब्दायमान वेगसे आती हुई देवताओंकी अपार और दुस्तह सेना दीखी ॥ २ ॥ धूलिसे सब ओर घ्यान दुष्पार सेनाको आता देख वह सैन्य सागर अक्षोभ्य वेलावाले समुद्रकी समान दीखी ॥ ३ ॥ आश्चर्यरूप अंतरहित बड़ी अद्भुत रथ हस्ती घोड़ोंसे व्याप्त देवताओंकी उदीर्ण महासेनाको ॥ ४ ॥ रोक वह महाबली कुजंभ रणमें सुमेरु पर्वतकी समान स्थित हुआ ॥ ५ ॥ और कुजंभसे गदाद्वारा निवारण की हुई देवताओंकी सेना विह्वल और निरुद्यम हो गई ॥ ६ ॥ उस दारुण संग्रामके वर्तमान होनेमें दानवोंका अधिपति असिलोमा ॥ ७ ॥ और देवताओंकी सेनाको धूमकेतुकी समान उदय

आपतन्तं सुदुष्पारं रजसा सर्वतो वृतम् ॥ सैन्यसागरमक्षोभ्यं वेलेव मकरालयम् ॥ ३ ॥ तदाश्चर्यमपश्यन्त अश्रद्धेयमिवाद्भुतम् ॥ उदीर्णां पृतनां सर्वां साक्षां सरथकुञ्जराम् ॥ ४ ॥ आचार्यः समरेऽतिष्ठत्कुजम्भस्तरसा बली ॥ सैन्यार्णवं देवतानां गिरमैरुवाचलः ॥ ५ ॥ अभीकिर्नां कुजम्भस्तु गदया स न्यवारयत् ॥ सा तथा वारिता सेना विह्वला भून्निरुद्यमा ॥ ६ ॥ तस्मिन्स्तथा वर्तमाने संप्रहारे सुदारुणे ॥ असिलोमा तु बलवान्दानवो दानवाधिपः ॥ ७ ॥ देवसैन्यस्य सर्वस्याधूमकेतुरिवोत्थितः ॥ तमांस्यर्क इवापोह्यत्सुरसैन्यानि संयुगे ॥ ८ ॥ सहस्ररश्मिप्रतिमो दानवस्य रथोत्तमः ॥ शरैर्मैघ इवावर्षद्देवानां किं प्रतापवान् ॥ ९ ॥ शरोघर-रश्मिभिर्दीप्तैः प्रतप्तो घोरविक्रमः ॥ रौद्रः क्रूरो दुराधवो दुरापो ध्वजिनीमुखे ॥ १० ॥ युध्यते दैवतैः सार्द्धं ग्रसमान इव प्रभुः ॥ उग्रेषुरुग्रवदनः समारुह्य महागजम् ॥ ११ ॥ सुराणामुत्तमाङ्गानि प्रचिनोति महाबलः ॥ ग्रसद्देवतसैन्यानि शरदंष्ट्रः प्रतापवान् ॥ १२ ॥

होता हुआ महाकोप कर दैत्य देवताओंकी सेनाको ऐसे नष्ट करने लगा कि जैसे अंधकारको सूर्य नष्ट करता है ॥ ८ ॥ सहस्र सूर्योंकी तुल्य कांति-वाला मायारूपी प्रतापी असिलोमा दैत्यका रथ देवताओंकी सेनापर मेघकी समान शरोंकी वर्षा करने लगा ॥ ९ ॥ बाणरूपी रश्मियोंसे प्रदीप्त प्रतप्त घोर दर्शनवाला रुद्ररूप सेनामें वह दुःखसे निवारण होनेवाला क्रूर ॥ १० ॥ कालकी समान ग्रसता हुआ असिलोमा देवतोंके संग युद्ध करने लगा भयानक सुखवाले हाथीपर चढ़ महान् हस्तियोंका मर्दन करने लगा ॥ ११ ॥ महाबली असिलोमा दैत्य देवताओंके एक शिरका ऊंचा ढेर बनाने लगा तथा

देवताओंको प्रसता हुआ शरोंकेसी ढाढ़ोंवाली महाप्रतापी ॥ १२ ॥ तलवारकी समान जीतवाला धनुषकी समान सुख फाड़े फरसेको धारण किये मृद-
गके तुल्य शब्द करता हुआ ॥ १३ ॥ और दानवोंमें व्याघ्ररूप असिलोमा रणमें स्थित हुआ, मोर्वीका शब्द मेघरूप और बड़ा महान् हुआ और
सेनाका समूह घोर समुद्ररूप हुआ ॥ १४ ॥ धनुषकी ज्याका कंपित होना विजलीरूप महामेघकी समान चार और बाणरूपी घोर सागर और भुजा-
रूपी घोर ग्राह ॥ १५ ॥ कार्मुकरूपी तरंगें बाणोंका आवर्त तलावरूप गदा तलवार मच्छरूप धनुषकी ज्या तटहर ॥ १६ ॥ और पदाति मीनरूपमें
इस प्रकार महागर्जता हुआ सेनारूपी समुद्रमें घोड़े हस्ती प्यादे रथ शूर वीर बहुत महारथोंको ॥ १७ ॥ वह दानवेश्वर असिलोमा युद्धमें

असिजिह्वश्चक्रहस्तश्चापव्यात्ताननोऽसुरः ॥ परश्वधनखः श्रीमान्मृदङ्गापूरितध्वनिः ॥ १३ ॥ तिष्ठते दानवश्रेष्ठः संयुगे व्याघ्रवद्वली ॥
मोर्वीघोषः स्तनयितुः पृषत्कः प्रथितो महान् ॥ १४ ॥ धनुर्विद्युद्गणश्चापो महामेघ इवापरः ॥ इष्वस्रसागरो घोरो बाहुग्राहो
दुरासदः ॥ १५ ॥ कार्मुकोर्मितरङ्गौघैर्बाणावर्तमहाहदः ॥ गदासिमकरो रौद्रो ज्यावेलः शिक्षयोद्धतः ॥ १६ ॥ पदातिमनिः सुमहान्
गर्जितोत्क्रुष्टघोषवान् ॥ हयान् गजान् पदार्तान् रथान् सहसा बहून् ॥ १७ ॥ न्यमज्जयत समरे परवीरान्महारथान् ॥ आप्लावयत्स
देवोवान् दारुणो दानवेश्वरः ॥ १८ ॥ प्रावर्तत युधि श्रीमान् युधि श्रेष्ठो युधिष्ठिरः ॥ अपश्यंस्त्रिदशः सर्वे शुद्धजाम्बूनदप्रभम् ॥ १९ ॥
सन्नद्धं तत्र युध्यन्तं ज्वलन्तमिव पावकम् ॥ मध्यदिनगतं सूर्यं ज्वलन्तमिव तेजसा ॥ २० ॥ न शेकुः सर्वभूतानि दानवं प्रसमीक्षि-
तुम् ॥ यथा प्ररूढं घर्मोन्ते दहेत्कक्षं हुताशनः ॥ २१ ॥ तथासुरवरो दैत्यो दहति स्म सुतेजसा ॥ देवानां दानवानां च बलं मर्दति
दारुणम् ॥ २२ ॥ विरूढमभवत्सर्वमाकुलं च समन्ततः ॥ शूराश्च ते बलोदग्रा हस्त्यश्चरथधूर्गताः ॥ २३ ॥

अपने शत्रुओंको डुबोता हुआ, इस प्रकार दारुण दैत्यने देवसमूहोंको घावित किया ॥ १८ ॥ श्रीमान् दैत्योंमें श्रेष्ठ महाबली असिलोमाको
सम्पूर्ण देवता शुद्ध सुवर्णकी तुल्य कांतिवाले कवचको धारण किये युद्ध करते ॥ १९ ॥ अग्निकी तुल्य जलते हुए मध्याह्नकालके
सूर्यकी समान तेजसे युक्त न देख सके ॥ २० ॥ तब असिलोमा दैत्यको सम्पूर्ण सेना देखनेको समर्थ नहीं हुई, और ग्रीष्मऋतुमें बड़ा
हुआ अग्नि जैसे फूसको जलाता है ॥ २१ ॥ तैसेही देवताओंको असिलोमा अपने तेजसे दहन करने लगा ॥ २२ ॥ और देवता और दानवोंकी

सेना मर्दन करने लगा, तब सेना भयानक शब्द करने लगी; और सम्पूर्ण शूर वीर व्याकुल और मूढ हो गये; हस्ती रथ घोड़ेर स्थित हुए ॥ २३ ॥
 भेद्युद्धिमें स्थित हो वे शूर वीर रणको नहीं त्यागते हुए, वह व्याकुलता और रोमोंको उपजानेवाला दारुण युद्ध हुआ ॥ २४ ॥ रुधिरकी नदी
 और कीच देवता और दानवोंके महाघोर युद्धमें हो गई; और भयवशी ग्राहसे पीड़ित हुए सम्पूर्ण दिशाको न जान सके ॥ २५ ॥ अनेक प्रकारसे
 किये हुए दानवोंके शस्त्रपातको न जानकर महारणमें मूढचित्त और व्याकुल हुए परस्पर हनन करने लगे शस्त्रोंके तेजसे विमूढ हुए अपने और परा्योंको

आयाँ बुद्धि समास्थाय न त्यजन्ति महारणम् ॥ तदुत्पिञ्जलकं युद्धमभवद्रोमहर्षणम् ॥ २४ ॥ देवदानवयोः संख्ये रुधिरस्रावकर्दमम् ॥
 न दिशः प्रत्यजानन्त भयग्राहनिपीडिताः ॥ २५ ॥ शस्त्रपातांश्च विविधान् दानवानां महारणे ॥ अन्योन्यं मूढचित्तास्ते निजघ्नुर्या-
 कुलीकृताः ॥ स्वान्परात्राभिजानन्ति विमूढाः शस्त्रपाणयः ॥ २६ ॥ शिरोरुहेषु संगृह्य कच्चिच्छूरस्य संयुगे ॥ शूरश्छिनत्ति मूर्ध्नां
 संदष्टौष्ठपुटाननम् ॥ २७ ॥ बाहुभिर्मुष्टिभिश्चैव वज्रकल्पैः सुदारुणैः ॥ प्रहरन्ति रणे वीरा आतशस्त्राः परस्परम् ॥ २८ ॥ योधप्राणहरे
 रौद्रे स्वर्गद्वारे नृपावृते ॥ संकुले तुमुले युद्धे वर्तमाने महाभये ॥ २९ ॥ हयो हयं गजो नागं वीरो वीरं महाहवे ॥ अभ्यद्रवज्जिघांसन्तो
 ह्यसमञ्जसमाहवे ॥ असुराश्च सुराश्चैव विक्रमाढ्या महारथाः ॥ ३० ॥ जुहुवुः समरे प्राणान्निजध्नुरितरेतरम् ॥ मुक्तकेशा विकवचा
 विरथाश्छिन्नकार्मुकाः ॥ ३१ ॥ हस्तेः पादेष्वप्युच्यन्ते दानवास्त्रिदशैः सह ॥ हरिस्तु निशितं भलं प्रेषयामास संयुगे ॥ ३२ ॥ स
 तस्य धनुषः कोटिं छित्त्वा भूमावपातयत् ॥ पुनश्चापि पृषत्कानां शतानि नतपर्शणाम् ॥ ३३ ॥

नहीं जानते हुए ॥ २६ ॥ कोईक शूर वीर होठोंको दाबते हुए किसी शूरवीरके केशोंको ग्रहण कर युद्धमें शिरको छेदन करने लगे ॥ २७ ॥ और शस्त्रोंको
 त्याग वज्रकी तुल्य महादारुण भुजा और मुष्टियोंसे रणमें प्रहार करने लगे ॥ २८ ॥ इस प्रकार संकुल तुमुल भयके उपजानेवाले महायुद्धमें ॥ २९ ॥
 धोडे घोड़ोंको हस्ती हस्तिओंको शूरवीर शूरवीरोंको बडे वेगसे भगाने लगे इस प्रकार असुर और देवता महापराक्रमी और महारथी ॥ ३० ॥
 प्राणोंको त्यागते हुए परस्पर हनन करने लगे; खुले केशोंवाले कवचोंसे और रथोंसे रहित छिन्न धनुषोंवाले ॥ ३१ ॥ दानव देवताओंके संग हाथ और
 पैरोंसे युद्ध करते हुए; तब हरिने अपने पैने भाले युद्धमें फेंके ॥ ३२ ॥ वह भाला उसके धनुषकी कोटीको छेदन कर पृथ्वीमें गिरा, फिर पैनी धारों-

वाले सौ बाण ॥ ३३ ॥ असिलोमाके ऊपर छोडे और छोडे हुए ॥ ३४ ॥ वे बाण पवनके वेगसे बडे वेगवन्त हुए असिलोमाके देहमें गडे हुए बिलमें
अर्ध मग्न सर्पकी समान शोभित हुए तब उसके छेदित शरीरसे रुधिर गिरने लगा ॥ ३५ ॥ उन अंगोंसे वह असिलोमा ऐसे शोभायमान हुआ जैसे गैरि-
कादि धातुओंको त्यागता हुआ सुमेरु पर्वत, तब फिर और बडे तीक्ष्ण बाण उसके ऊपर प्रहार किये ॥ ३६ ॥ तब असिलोमा क्रोधित हो और
फिर अन्य धनुषको धारण कर सुवर्णके पंखोंवाले बहुत पौने बाणोंको हरिके ऊपर छोडने लगा ॥ ३७ ॥ सर्प अग्नि और विषकी तुल्य बाणोंसे हरिके
मर्मको वेधन कर ऐसे आच्छादन करता हुआ जैसे पर्वतको मेघ ढकते हैं ॥ ३८ ॥ और कालकी समान सुवर्णकी पंखोंवाले सूर्यकी तुल्य कांतिवाले सौ

प्राहिणोत्सहसा तस्य दानवेन्द्रस्य संयुगे ॥ तस्य देहविमुक्तास्ते मारुतेन समीरिताः ॥ ३४ ॥ मग्नार्द्धकाया विविशुः पन्नगा इव पर्वते ॥
स तैर्निपतितैर्मात्रैः क्षराद्भिरसृगावलीः ॥ ३५ ॥ बभौ दैत्यो महाबाहुर्मैरुर्धातुमिवोत्सृजन् ॥ पुनश्चापि पृषत्कानां शतानि नतपर्व-
णाम् ॥ ३६ ॥ ततोऽसिलोमा संक्रुद्धः प्रगृह्यान्यन्महाधनुः ॥ रुक्मपुङ्गवांश्च निशितान् प्रेषयामास सायकान् ॥ ३७ ॥ तैस्तु मर्मसु
विव्याध सर्पानलविषोपमैः ॥ गात्रं संच्छादयामास महाभ्रैरिव पर्वतम् ॥ ३८ ॥ भूयः संधाय च शरं मुचोचान्तकसंनिभम् ॥ सुपुङ्गुं
सूर्यसंकाशं बाणमप्रतिमं रणे ॥ ३९ ॥ तेन बाणप्रहारेण संयुगे भीमकर्मणा ॥ मुमोह सहसा देवो भूमौ चापि पपात ह ॥ ४० ॥ ततो
हाहाकृताः सर्वे देवे भूतलमाश्रिते ॥ जगत्सदेवमाविशं यथार्कपतनं तथा ॥ ४१ ॥ परिवारं तु समरे तस्य हत्वा महासुरः ॥ एकत्रिं-
शत्सहस्राणि योधानां दानवोत्तमः ॥ ४२ ॥ जयश्रिया सेव्यमानो दीप्यमान इवाचलः ॥ प्रगृह्य कार्मुकं घोरं गतः शक्ररथं प्राति ॥ ४३ ॥
बाणोंको फिर धनुष्यपर संधान कर हरिके ऊपर छोडे ॥ ३९ ॥ तिन बाणोंके प्रहारसे युद्धमें वेधित हुए हरि मोहको प्राप्त हो पृथ्वीमें गिरे ॥ ४० ॥ तिस
समय सब देवता हाहाकार करने लगे और सूर्यके गिरनेकी समान जगत् भग्न हुआ ॥ ४१ ॥ उस दानवोंमें भेष्ठ असिलोमाने इकतीस हजार दूरिके परि-
वाररूप देवताओंको मार डाला ॥ ४२ ॥ और जयरूपी शोभासे सेवित हुआ अश्विकी तुल्य प्रकाशमान अपने घोर धनुष्यको धारण कर इन्द्रके रथके
प्रति गया ॥ ४३ ॥

और उसी युद्धमें दोनों अश्विनीकुमार देवताओंके शत्रु महाबली वृत्रासुरसे युद्ध करने लगे ॥ ४४ ॥ तर्कश धनुष धारण करे युद्धमें प्राणोंको त्यागने-
 वाला वृत्रासुर अश्विनीकुमारोंको प्राप्त हो युद्धमें पर्वतकी समान अचल स्थित हुआ ॥ ४५ ॥ युद्धमें शत्रुओंके रोमोंको खड़ा करनेवाले शंखको
 बजाकर धनुषकी ज्याके शब्दोंसे सम्पूर्ण प्राणियोंको मोहिन करता हुआ ॥ ४६ ॥ हर्षित रोमोंवाले यक्ष और देवताओंके समूह ये सम्पूर्ण समुद्रके
 शब्दकी तुल्य शब्दवाले शंखके शब्दको सुनते हुए ॥ ४७ ॥ गदा परिव अन्न शक्ति त्रिशूल फरसा ये सूर्म हथियार यक्ष राक्षसोंकी भुजाओंमें
 तथैव तु महायुद्धे ससैन्यावश्विनावुभौ ॥ प्रयुद्धौ सह वृत्रेण बलिना देवतारिणा ॥ ४४ ॥ बाणखट्वाधनुष्पाणिः समरे त्यक्तजीवितः ॥
 आसाद्य सोऽश्विनौ दैत्यः स्थितो गिरिरिवाचलः ॥ ४५ ॥ ततः शंखमुपाध्माय द्विषतां लोमहर्षणम् ॥ ज्याघोषतलशब्दैश्च सर्व-
 भूतान्यवेजयत् ॥ ४६ ॥ ततः संहृष्टरोमाणः शंखशब्दं विशुश्रुवुः ॥ यक्षराक्षसदेवोवा वृत्रस्यापि च निःस्वनम् ॥ ४७ ॥ गदा-
 तोमरनिस्त्रिशूलशक्तिपरश्वधाः ॥ प्रगृहीता व्यराजन्त यक्षराक्षसबाहुभिः ॥ ४८ ॥ तैः प्रमुक्तान्महाकायेः शूलशक्तिपरश्वधान् ॥
 भलैर्वृत्रपरिच्छेदभीमवेगरवैस्तथा ॥ ४९ ॥ अन्तरिक्षचराणां च भूमिस्थानां च गर्जताम् ॥ शरैर्विव्याध गात्राणि देवानां प्रियद-
 शिनाम् ॥ ५० ॥ वृत्रासुरभुजोत्सृष्टैर्वहुधा यक्षराक्षसाम् ॥ निकृत्तान्येव दृश्यन्ते शरीराणि शिरांसि च ॥ ५१ ॥ अथ रक्तमहावृ-
 ष्टिरभ्यवर्षत मेदिनीम् ॥ गदापरिघभिन्नानां देवानां गात्रसंभवा ॥ ५२ ॥ प्रच्छादयन्तं बाणोर्वैवृत्रं भीमपराक्रमम् ॥ ददृशुः सर्वभू-
 तानि भानुमन्तमिवांशुभिः ॥ ५३ ॥

शोभाको प्राप्त होने लगे ॥ ४८ ॥ बड़े शरीरोंवाले योधाओंकी तिन भुजाओंसे फेंके हुए त्रिशूल शक्ति फरसा हथियारोंको वह वृत्रासुर अपने बड़े
 वेग और शब्दोंको करनेवाले भालोंसे भेदन करने लगे ॥ ४९ ॥ और वह वृत्रासुर आकाश और पृथ्वीमें विचरते हुए और गर्जते हुए देवताओंके
 शरीरोंको छेदन करने लगे ॥ ५० ॥ वृत्रासुरकी भुजाओंसे छोड़े हुए बाणोंसे छेदन किये हुए बहुतसे यक्ष और राक्षसोंके शरीर और शिर पृथ्वीपै
 दीखने लगे ॥ ५१ ॥ गदा परिघोंसे भेदन किये हुए देवताओंके शरीरोंसे रुधिरकी महावर्षा पृथ्वीको सेचन करने लगी ॥ ५२ ॥ और बड़े भीम

पराक्रमवाले वृत्रासुरको सम्पूर्ण प्राणी देवताओंके समूहोंसे ऐसे आच्छादित देखने लगे कि जैसे मेघोंसे सूर्य ॥ ५३ ॥ और महाबली सूर्यकी समान तपता हुआ वृत्रासुर मर्मवेधी बाणोंसे अश्विनीकुमारोंको वेधन करने लगे ॥ ५४ ॥ और देवताओंके बाणोंसे वेधित होकर अनेक प्रकारके शब्दोंको करते हुए वृत्रासुरको भयभीत देवता कूछभी नहीं देखते हुए ॥ ५५ ॥ और खड्ग शक्ति गदा परिघ प्रास तोमर फरसा त्रिशूल हथियारोंकी वे सम्पूर्ण देवता वृत्रासुरपर वर्षा करने लगे ॥ ५६ ॥ तब सत्यपराक्रमी महाबली तिन बाणोंसे वेधित हुआ वृत्रासुर क्रोधित हो और सम्पूर्ण देवताओंपर बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥ ५७ ॥ वेधन किये हुए महाआयुधोंसे आच्छादित महारथी देवता वृत्रासुरके भयसे पीड़ित हुए और घोर आर्तनाद करने लगे ॥ ५८ ॥ गदा शक्ति त्रिशूल खड्ग तीक्ष्णरश्मिर्षादित्यः प्रतपन्सर्वदेवताः ॥ अश्विनोर्बलवान् क्रुद्धः सायकैर्मर्मभेदिभिः ॥ ५४ ॥ नदतो विविधान्नादानर्दितस्यापि सायकैः ॥ न मोहमसुरेन्द्रस्य दृढशुस्त्रिदशारणे ॥ ५५ ॥ तेऽसिचर्मगदाभिश्च परिघप्रासतोमरैः ॥ परश्वधैश्च शूलैश्च प्रववर्षुर्महारथाः ॥ ५६ ॥ ततो वृत्रः सुसंकुद्धस्तेस्तदाभ्यर्दितो बली ॥ अभ्यवर्षच्छैर्बाणैस्तात्सर्वान्तसत्यविक्रमः ॥ ५७ ॥ तेन वित्रासिता देवा विप्रकीर्णमहायुधाः ॥ घोरमार्तस्वरं चकुर्वृत्रासुरभयार्दिताः ॥ ५८ ॥ उरसृज्य ते गदाशक्तिशूलैर्घृणपरिघांशनीन् ॥ उत्तरां दिशमाजमुस्त्रासिता दृढधन्विना ॥ ५९ ॥ शूलशक्तिगदापाणिर्व्यूढोरस्को महाभुजः ॥ प्रावर्तत रणे वृत्रस्त्रासयानश्चराचरान् ॥ ६० ॥ तत्रैकस्तु महाबाहुरसिशूलधरः प्रभुः ॥ अभ्यधावत दैत्येन्द्रं वृत्रमप्रतिमं रणे ॥ ६१ ॥ तमापतन्तं संप्रेक्ष्य निर्भिन्नमिव वारणम् ॥ वत्सदन्तौघिभिः पाश्वैर्विव्याध सुरसत्तमम् ॥ ६२ ॥ सोऽतिविद्धो महेष्वासः शौर्यमितविक्रमः ॥ गदां जग्राह बलवान् गदायुद्धविशारदः ॥ ६३ ॥ परसा हथियारोंको त्याग वृत्रासुरके त्राससे सम्पूर्ण देवता उत्तरदिशामें चले गये ॥ ५९ ॥ दीर्घ छातीवाला महाभुजाओंवाला त्रिशूल गदाको हाथमें धारण किये वृत्रासुर चराचरसहित सम्पूर्ण देवताओंको त्रास देता हुआ विचरने लगा ॥ ६० ॥ और रणमें धीर्यतासे स्थित हुआ; तब महाभुजावाले त्रिशूलको धारण किये अश्विनीकुमार रणमें स्थित हुए और दैत्योंका अधिपति तुल्यतासे रहित वृत्रासुरके उनके सम्मुख दौड़ा ॥ ६१ ॥ भेदित किये हस्तीकी समान अश्विनीकुमारने धनुष धारण कर बछड़ेके दांतके तुल्य तीक्ष्ण तीन बाणोंसे वृत्रासुरको पार्श्वमें वेधन किया ॥ ६२ ॥ वह महाबली बाणोंसे

महाविद्ध होकर युद्धमें गदायुद्ध जानबेके कारण गदा ग्रहण करता हुआ ॥ ६३ ॥ पर्वतकी तुल्य सारवाली और बड़ी दृढ और ज्ञानक गदाको ग्रहण कर उसके वेगसे अश्विनीकुमारको ताड़न किया ॥ ६४ ॥ प्रकाशमान दीर्घ दृढ और रोमहर्षोंको उपजानेवाले त्रिशूलको अश्विनीकुमारने धारण कर वृत्रासुरको रा ॥ ६५ ॥ उस गदायुद्धको जाननेवाला वृत्रासुर अपनी गदाके अग्रभागसे त्रिशूलको भेदन कर वेगसे अश्विनीकुमारके ऊपर दौड़ा, जैसे सर्पके प्रति गरुड ॥ ६६ ॥ वृत्रासुरने आकाशमें कूद पर्वतके शिखरकी तुल्य गदाको घुमाय अश्विनीदेवताकी छातीमें मारी ॥ ६७ ॥

तां प्रगृह्य महाभीमामयः सारमर्यां दृढाम् ॥ अश्विनौ सहसागम्य ताडयामास वीर्यवान् ॥ ६४ ॥ दीप्यमानं ततः शूलमश्वी सुविपुलं दृढम् ॥ प्रासृजद्वृत्रेदत्याय सहसा रोमहर्षणम् ॥ ६५ ॥ भङ्क्त्वा शूलं गदाग्रेण गदायुद्धविशारदः ॥ अश्विनं सहसाभ्यर्च्य गरुत्मानिव पन्नगम् ॥ ६६ ॥ सोऽन्तरिक्षात्समुत्पत्य विधूय महतीं गदाम् ॥ नासत्योपरि चिक्षेप गिरिशृङ्गोपमां बली ॥ ६७ ॥ गदयाभिहतः सोऽश्वस्त्यक्त्वा शूलमनुत्तमम् ॥ प्रयातः सहसा तत्र यत्र युद्धयति वासवः ॥ ६८ ॥ पराजित्य तु संग्रामे अश्विनं भीमविक्रमम् ॥ जयश्रिया सेव्यमानो वृत्रो युद्धे व्यवस्थितः ॥ ६९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वृत्रासुरोत्कर्षवर्णनं नाम सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तत्रैव तु महायुद्धे रणाजिदेवसत्तमः ॥ युध्यते सह दैत्येन एकचक्रेण धीमता ॥ १ ॥ प्रच्छाद्य रथपन्थानमुत्क्रोशंश्च महाबलः ॥ एकचक्रस्य सैन्यं तच्छरवर्षैरवाकिरत् ॥ २ ॥ महासुरा महावीर्या महापट्टिशयोधिनः ॥ शूलानि च भुशुन्डीश्च क्षिपन्ति स्म महारणे ॥ ३ ॥

तब गदासे हनन हुआ अश्विनीदेवता त्रिशूलको त्याग वेगसे वहां गया जहां इन्द्र युद्ध करता था ॥ ६८ ॥ इस प्रकार बड़े पराक्रमी अश्विनीदेवताको रणमें जीत जयरूप शोभासे सेवित हुआ वृत्रासुर युद्धमें स्थित हुआ ॥ ६९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥ वैशम्पायनजी बोले, हे जनमेजय ! देवताओंमें श्रेष्ठ रणाजि नाम देवता तिसी युद्धमें एकचक्र दैत्यके संग युद्ध करने लगा ॥ १ ॥ वह रणाजि रथके पंथको रोक बड़े शब्दोंको करनेवाली एकचक्रकी सेनाको बाणोंकी वर्षासे आच्छादित करने लगा ॥ २ ॥ महावीर्यवाले और महापट्टि-

शोंसे युद्ध करनेवाले महासुर त्रिशूल भुशुंडी शस्त्रोंको रणमें देवताओंके सन्मुख फेंकने लगे ॥ ३ ॥ गदाशक्तिसे मिली हुई अकल्याणरूप दैत्योंकी की हुई ऐसी त्रिशूलकी वर्षा चराचरको दुर्निवार्य होने लगी ॥ ४ ॥ और महापर्वतोंके शिखरोंकी तुल्य आकारवाले, महापराक्रमोंवाले महारथी देवता और असुर परस्पर सन्मुख हो युद्ध करने लगे ॥ ५ ॥ एकचक्र दैत्य रथमें सैकड़ों घोड़े युक्त कर हिरण्यकाशिपुके रथकी तुल्य रथमें स्थित हो युद्ध करने लगा ॥ ६ ॥ घोड़ोंके पैरोंसे और रथके पहियोंके शब्दसे एकचक्रके बाणोंसे सैकड़ों देवता मृत्युको प्राप्त हो गये ॥ ७ ॥ छोटे चित्राविचित्र और

तच्छूलवर्षं सुमहद्गदाशक्तिसमाकुलम् ॥ अविशदितिजैर्मुक्तं दुर्निवार्यं चराचरैः ॥ ४ ॥ अन्योन्यमभिवर्तन्ते देवासुरगणा युधि ॥ महाद्रिशिखराकारा वीर्यवन्तो महाबलाः ॥ ५ ॥ तुरङ्गमाणां तु शतं युक्तं तस्य महारथे ॥ महासुरवरस्येव हिरण्यकाशिपोर्युधि ॥ ६ ॥ तेषां चरणपातेन चक्रत्रेमिस्वनेन च ॥ तस्य बाणनिपातेश्च हता वै शतशः सुराः ॥ ७ ॥ ततः स लघुभिश्चित्रैः शरैः सन्नतपर्वाभिः ॥ सायुधानच्छिन्नत्क्रुद्धः शतशोऽथ सहस्रशः ॥ ८ ॥ वध्यमानाः शरैस्तीक्ष्णै रथद्विरदवाजिनः ॥ गमिताः प्रक्षयं केचिन्निदशैर्दानवा रणे ॥ ९ ॥ ततः प्रक्षयिमाणांस्तानुपप्रेक्ष्य दितेः सुताः ॥ त्यक्त्वा बाणान्नयवर्तन्त प्रगृहीतवरायुधाः ॥ १० ॥ ते दिशो विदिशश्चैव प्राति- युद्धप्रहारिणः ॥ अभ्यघ्नन्निशितैः शस्त्रैर्देवान्दितिसुता रणे ॥ ११ ॥ रणाद्विचलितं घोरं परमं तिग्मतेजसम् ॥ मुमोचास्त्रं महाबाहुर्मथनं नाम संयुगे ॥ १२ ॥ ततः शस्त्राणि शूलानि निशितानि सहस्रशः ॥ अतिवीर्येण महता दितिजः संप्रचिच्छिदे ॥ १३ ॥

मोटी गांठोंवाले बाणोंसे वह रणाजि देवता सैकड़ों हजारहों योधाओंको छेदन करने लगे ॥ ८ ॥ देवताओंके तीक्ष्ण बाणोंसे वध किये हुए हस्ती घोड़े दानव मृत्युको प्राप्त हो गये ॥ ९ ॥ क्षीयमाण दैत्योंको देख और धनुषोंको धारण करते हुए अन्य दैत्य देवताओंको निवृत्त करते हुए ॥ १० ॥ प्रहार करते हुए दैत्य दिशा और विदिशाओंमें स्थित हो और पैने २ बाणोंसे देवताओंको हनन करने लगे ॥ ११ ॥ जलते हुए अत्यन्त तेजवाले घोररूप मथन नाम अस्रको रणाजि दैत्योंपर छोड़ता हुआ ॥ १२ ॥ तब अस्र और त्रिशूल सहस्रों हथियारोंको वह एकचक्र अपने अस्त्रसे छेदन करने लगे ॥ १३ ॥

और सम्पूर्ण विशूलोंको छेदन कर वह एकचक्र महासुर पैंने २ दश बाणोंसे तिस रणाजिको वेधन करता हुआ ॥ १४ ॥ और वह एकचक्र शस्त्रोंके वेगका हनन कर जलते हुए वेगवान् अश्वोंसे देवताओंके सहस्रों सेनापतियोंका मारने लगा ॥ १५ ॥ छेदन किये हुए तिन्होंके शरीरसे रुधिर निकलने लगा कि जैसे वर्षाकालमें पर्वतोंके शिखरपरसे जल गिरता हो ॥ १६ ॥ और इन्द्रके वज्रकी तुल्य स्पर्शवाले वेगवंत कुटिलतारहित ऐसे दैत्योंसे हनन किये हुए देवता त्रासको प्राप्त हो गये ॥ १७ ॥ एकचक्रके रथमें स्थित गजयूथको देखते हुए जो सम्पूर्ण आभूषणोंसे शब्दायमान और समुद्रके शब्दकी

छित्वा शूलेन तान्सर्वानेकचक्रो महासुरः ॥ अभ्यविध्यत तं साध्यं दशभिर्निशितैः शरैः ॥ १४ ॥ अस्त्रवेगेन हृत्वेव सोऽस्त्रैस्तस्यानु-
सैनिकान् ॥ ज्वलितैरपरैः श्मिन्निस्तानविध्यत्सहस्रशः ॥ १५ ॥ तेषां छिन्नानि गात्राणि विसृजन्ति स्म शोणितम् ॥ प्रावृषीवाम्बुवृष्टीनि
शृङ्गाणि धरणीभृताम् ॥ १६ ॥ इन्द्राशनिमस्पर्शैर्निपतद्भिरजिह्वगैः ॥ दितिर्जैर्वध्यमानास्ते वित्रेसुः सुरसत्तमाः ॥ १७ ॥ एकचक्रे
रथे तिष्ठन्नपश्यद्गजयूथपम् ॥ वराभरणनिहादान्समुद्रस्वनानिःस्वनान् ॥ १८ ॥ मत्तान्सुविहितान् दृष्टान्महामात्रैराधिष्ठितान् ॥
कुलीनान्वीर्यसंपन्नान् प्राति द्विरदघातिनः ॥ १९ ॥ शिक्षितान् गजशिक्षायामैरावतसमान्युधि ॥ न्यहनत्सुरसेन्यस्य गजान् गज
इवासुरः ॥ २० ॥ विक्षरन्तो महानागान्भीमवेगास्त्रिधा मदम् ॥ मेघस्तनितनिर्घोषान्महाद्रीनिव चोत्थितान् ॥ २१ ॥ सहस्रसंमितान्
दिव्याभ्राम्बूनदपरिष्कृतान् ॥ सुवर्णजालैर्विततांस्तरुणादित्यवर्चसः ॥ २२ ॥ एकचक्रो गदापाणिर्बलवान्गदिनां वरः ॥ उत्सारयामास
गजान्महाभ्राणीव मारुतः ॥ २३ ॥

तुल्य शब्दवाले ॥ १८ ॥ मदोन्मत्त और श्रेष्ठ पीलवानोंसे युक्त अच्छे कुलोंमें उत्पन्नवाले और बड़े पराक्रमोंवाले दूसरे हाथियोंको मारनेवाले ॥ १९ ॥
और गजशिक्षामें निपुण ऐरावत हस्तियोंकी तुल्य हस्तियोंको वह एकचक्र अपने फरसों और शरोंसे हनन करने लगा कि जैसे हस्तीको हस्ती मारता
है ॥ २० ॥ और भयानक रूपवाले तीन जगहसे मदोंको झिरते हुए मेघके गर्जितकी समान शब्द करने लगे, और पर्वतकी नई ऊंचे ॥ २१ ॥ सहस्रों
श्रेष्ठ और सुवर्णके गहनोवाले, और तरुण सूर्यकी तुल्य कांतिवाले ॥ २२ ॥ हस्तियोंको गदायुद्ध करनेवालोंमें श्रेष्ठ हाथमें गदाको धारण किये एकचक्र

ऐसे भगाने लगा जैसे मेघोंको वायु ॥ २३ ॥ हस्तियोंको हनन करनेनाला एकचक्र गदासे सम्पूर्ण हस्तियोंको हनन कर फिर घोड़ोंके समूहको देखने लगा ॥ २४ ॥ तोतेकी समान वर्णवाले कच्छ मोरकी तुल्य वर्णवाले कबूतर और हंसके सम वर्णवाले ॥ २५ ॥ मल्लिकाकी तुल्य नेत्रोंवाले और कौंचकी तुल्य वर्णवाले मनकी तुल्य वेगवाले घोड़ोंकी सेनाको वह महाबाहु ॥ २६ ॥ एकचक्र अपनी गदासे भेदन करने लगा; और रणाजि रणमें एकचक्रके कर्मको देख ॥ २७ ॥ वह श्रीमान् अचिन्त्यपराक्रमी रणमें उपरामको प्राप्त हो देवताओंकी सेनामें गया; गदायुद्धमें कुशल रथोंके समूहोंका पति ॥ २८ ॥

निहत्य गदया सर्वास्ताङ्गजान्गजमर्दनः ॥ भूयोऽश्वसंचान्तस बली निरैक्षत महासुरः ॥ २४ ॥ शुकवर्णानृष्यवर्णान्मयूरसदृशास्तथा ॥ पारावतसवर्णाश्च हंसवर्णास्तथैव च ॥ २५ ॥ मल्लिकाक्षान्विरूपाक्षान् क्रोश्वर्णान्मनोजवान् ॥ अश्वसेन्यं महाबाहुस्तदप्रतिमपौरुषः ॥ २६ ॥ निषूदयामास बली गदया भीमविक्रमः ॥ रणाजिस्तस्य समरे सर्वान्दृष्ट्वा सुरद्विषः ॥ २७ ॥ अचिन्त्यविक्रमः श्रीमानभ्ययादेववाहिनीम् ॥ गदायुद्धेषु कुशलो रथेन रथयूथपः ॥ २८ ॥ हृष्टसेन्यो महाबाहुः प्रस्थितः शक्रसन्निधौ ॥ त्रिंशच्छतसहस्राणि रथानां विनिहत्य सः ॥ २९ ॥ रणेऽतिष्ठत दैत्येन्द्रो विधूम इव पावकः ॥ तस्मिन्नेव तु संग्रामे बलहतो महासुरः ॥ ३० ॥ मृगव्याधं महात्मानं योधयत्यजितं रणे ॥ मृगव्याधस्य रुद्रस्य महापारिषदास्तथा ॥ ३१ ॥ समुत्पेतुर्वल दृष्ट्वा हुताग्निसमतेजसः ॥ गजेर्मत्ते रथेर्दिव्येर्वाजिभिश्च महाजवैः ॥ ३२ ॥ अस्त्रैश्च निशितैर्बाणैः शरैश्चानलसन्निभैः ॥ ददृशुस्ते ततो वीरा दीप्यमानं महासुरम् ॥ ३३ ॥ रश्मिवन्तमिवोद्यन्तं सुतेजोरश्मिमालिनम् ॥ संग्रामस्थं महावेगं महासत्त्वं महाबलम् ॥ ३४ ॥

महाबाहु रणाजि इन्द्रके समीप गया; और वह एकचक्र तीस सहस्र योधाओंको मार ॥ २९ ॥ रणमें ऐसे स्थित हुआ कि जैसे धूमरहित अग्नि, और उसी संग्राममें बलनाम दैत्य ॥ ३० ॥ मृगव्याध महात्मा रुद्रके संग युद्ध करने लगा; और होमी हुई अग्निके तुल्य तेजवाले मृगव्याधके पार्षद ॥ ३१ ॥ हुताग्निकी समान तेजवाले मनकी समान वेगवान् हस्ती रथ घोड़ोंसे सवार हो और बलको देख सन्मुख दौड़े ॥ ३२ ॥ पैसे अस्त्र और तीक्ष्ण भालेसे युक्त हुए उस महाबली असुरको देवता देखने लगे ॥ ३३ ॥ प्रकाशमान सूर्यकी समान उदय होते हुए सूर्यकी किरणोंके तुल्य महावेगवान् महाबली ॥ ३४ ॥

और महामति बड़े उत्साहयुक्त बड़े शरीर और बड़े रथवाले महायोध संपूर्ण दिशाओंमें स्थित बल देवको देख ॥ ३५ ॥ एकवार चारों ओरसे संप्रहार करने लगे; और सब प्रकार लोहेके बने पीतरंगवाले तीक्ष्ण मुखोंवाले ॥ ३६ ॥ बाणोंको वह मृगव्याध बलके महापर्वतकी समान शिरमें मारता हुआ, और शिरमें मारे हुए सात बाणोंसे वेधित हुआ ॥ ३७ ॥ बल दैत्य दशों दिशाओंको शब्दायमान करता हुआ आकाशमें उछला तब धनुषको चढ़ाये महाबली रथमें स्थित मृगव्याधने ॥ ३८ ॥ प्रसन्न हो आकाशमें बलके पीछे गमन किया; और तिस बलको आकाशमें बाणोंकी वर्षासे ऐसे आच्छादन

महामतिं महोत्साहं महाकायं महारथम् ॥ समीक्ष्य तं महायोधं दिक्षु सर्वास्ववस्थितम् ॥ ३५ ॥ ततः प्रहरणेघोरैरभिपेतुः समन्ततः ॥ तस्य सर्वायसास्तीक्ष्णाः शराः पीतमुखाः शिताः ॥ ३६ ॥ शिरस्यद्रिप्रतीकाशे मृगव्याधेन पातिताः ॥ तैश्च सप्तभिराविष्टाः शरैः शिरसि चार्पितैः ॥ ३७ ॥ उत्पपात तदा व्योम्नि दिशो दश विनादयन् ॥ ततस्तं त्रिदशो वीरः सरथः सज्जकार्मुकः ॥ ३८ ॥ अनुवव्राज संहृष्टः खे तदा स महाबलः ॥ असुरं छादयामास तं व्योम्नि शरवृष्टिभिः ॥ ३९ ॥ वृष्टिमानेव जीमूतो निदाघान्ते धराधरम् ॥ अर्द्यमानस्ततस्तस्तेन मृगव्याधेन दानवः ॥ ४० ॥ चकार निनदं घोरमम्बरे जलदो यथा ॥ स दूरं सहस्रोत्पत्य मृगव्याधरथं प्रति ॥ ४१ ॥ निपपात महावेगः पक्षवातैर्गिरिर्यथा ॥ बभञ्ज च ततो दैत्यो भग्नेषाकूबरं रथम् ॥ ४२ ॥ मृगव्याधः परित्यज्य स्थितो भूमौ महाबलः ॥ विरथं प्रेक्ष्य रुद्रं तु तस्य पारिषदाः शुभाः ॥ ४३ ॥ उत्थिता घोररक्ताक्षा व्योम्नि मुद्गरपाणयः ॥ स तु तैः सहस्रोत्थाय वेष्टितो विमलेऽम्बरे ॥ ४४ ॥

करता हुआ ॥ ३९ ॥ कि जैसे ग्रीष्मकालके अंतमें पर्वतको मेघ आच्छादन करते हैं; मृगव्याधसे पीडित हुआ वह बल दैत्य ॥ ४० ॥ आकाशमें मेघकी तुल्य बड़ा शब्द कर बल दैत्य आकाशमें ऊंचे चढ़ और मृगव्याधके रथपर ऐसे गिरा ॥ ४१ ॥ कि जैसे पंखोंवाला पर्वत गिरता हो, उससे मृगव्याधका रथ चूर्ण हो गया ॥ ४२ ॥ और टूटे हुए रथका परित्याग कर वह मृगव्याध भूमिमें स्थित हुआ; उनके पार्षद रुद्रको विरथ देख ॥ ४३ ॥ हाथोंमें मुद्गरोंको धारण करे क्रोधयुक्त लाल २ नेत्रोंवाले आकाशमें क्रूरे; और वह बलभी शीघ्र उठकर आकाशमें घुड़ करने लगा ॥ ४४ ॥

और उनके मुद्रांसे ऐसे मर्दित हुआ जैसे फरसोंसे वृक्ष, और गूडकी समान पराक्रमवाला वह बल दैत्य तिन गणांके वेगसे हनन हुआ ॥ ४५ ॥ फिर भूमिमें गिरा वह बल शाखाओंसे युक्त सालवृक्षको उखाड़ ॥ ४६ ॥ और सम्पूर्ण रुद्रके गणोंको हनन करने लगा और तिन गणांसे छेदन किया हुआ और रुधिरके समूहोंसे युक्त हुआ ॥ ४७ ॥ उदय होते हुए बालसूर्यकी समान दानव शोभित हुआ और मृग सर्प, वृक्षसाहित पर्वतके शिखरको उखाड़ ॥ ४८ ॥ वह दानव बलसे पूर्ण रुद्रके शार्पादोंको हनन करने लगा, तब उन महापार्षदोंके नष्ट होनेसे ॥ ४९ ॥ वह वीर्यवान् शेष सेनाको नाश करने लगा;

मुद्गरैर्हिंता भीमैर्वृक्षः परशुभिर्यथा ॥ तेषां वेगवतां वेगं निहत्य स महारथः ॥ ४५ ॥ निपपात पुनर्भूमौ सुपर्णसमविक्रमः ॥ स सालवृक्षमुत्पात्य महाशाखं महाबलः ॥ ४६ ॥ सर्वान्पारिषदान्तसंख्ये सूदयामास दानवः ॥ स तैर्वीजितदेहस्तु रुधिरोवपरिप्लुतः ॥ ४७ ॥ शुशुभे दानवश्रेष्ठो बालसूर्य इवोदितः ॥ अथोत्पात्य गिरेः शृङ्गं समृगव्यालपादपम् ॥ ४८ ॥ जवान तान्पारिषदान्तसमरे दानवेश्वरः ॥ ततस्तेषु च भग्नेषु महापारिषदेषु वै ॥ ४९ ॥ बलं तदवशेषं तु नाशयामास वीर्यवान् ॥ अश्वैश्चान्गजैर्नागान्याधान्योधै रथान्नयैः ॥ ५० ॥ दानवः सूदयामास युगान्तेऽन्तकवत्प्रजाः ॥ हतैरश्वैश्च नागैश्च भग्नैश्च महोरथैः ॥ ५१ ॥ त्रिदशैश्चाभवद्भूमौ रुद्रमार्गा समन्ततः ॥ एवं बलः स दैत्येन्द्रो मृगव्याधश्च वीर्यवान् ॥ ५२ ॥ युधि प्रवृद्धो बलिनौ प्रभिन्नावित्र वारणौ ॥ ५३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तत्रैव युध्यते रुद्रो द्वितीयो राहुणा सह ॥ विश्रुतस्त्रिषु लोकेषु क्रोधात्मा ह्यज एकपात् ॥ ५४ ॥ तद्यथा सुमहद्युद्धं तुमुलं लोमहर्षणम् ॥ आसीत्प्रतिभयं रौद्रं वीराणां जयमिच्छताम् ॥ ५५ ॥

घोड़ोंसे घोड़ोंको हस्तियोंसे हस्तियोंको और योधाओंसे योधाओंको रथोंसे रथोंको ॥ ५० ॥ यह बल ऐसे हनन करने लगा कि जैसे प्रलयकालमें प्रजाको काल मारता है, और हनन किये हुए घोड़े हस्तों रथोंसाहित ॥ ५१ ॥ देव दानवसे सम्पूर्ण पृथ्वी भयानक मार्गवाली होती हुई, इस प्रकारसे बल दैत्य मृगव्याध रुद्र ये दोनों बली ॥ ५२ ॥ रणमें ऐसे युद्ध करने लगे जैसे मतवाले दो हाथी लड़ते हों ॥ ५३ ॥ वैशम्पायन बोले, तीनों लोकोंमें विख्यात क्रोधकी मूर्ति और एक पैरवाला दूसरा अज नाम रुद्र तिसी रणमें राहुके संग युद्ध करने लगा ॥ ५४ ॥ उस समय जयकी इच्छा

करते हुए तिन दोनों शरवीरोंका बड़ा तुमुल और रोमहर्षोंकी उपजानेवाला भयानक रौद्र युद्ध होने लगा ॥ ५५ ॥ देवता और दानवोंके शरीरोंसे बड़ी दुस्तर और केशरूपी दूबोंको वहानेवाली शरीरोंके समूहोंको वहाती हुई रुधिरकी नदी बहने लगी ॥ ५६ ॥ भयानक आक्रान्तिवाले समर्थ क्रोधित हुए रुद्र शत्रुओंकी सेनाको विदारण करनेवाले सौ मुखोंवाले राहुको युद्धमें हनन करने लगे ॥ ५७ ॥ और दैत्योंके बाणोंसे क्रोधित हुए श्रीमान् रुद्र राहुके घोड़े सारथिसहित सुवर्णजडित रथको भेदन करते हुए ॥ ५८ ॥ महाबली एक रुद्रके पार्षदने प्रसन्न हो रणमें अपनी शक्तिसे राहुकी छातीमें वेधन किया ॥ ५९ ॥ और दानवोंमें श्रेष्ठ क्रोधसे मूर्च्छित भिन्नगात्र राहु आते हुए रुद्रके रथको ॥ ६० ॥ तलप्रहारसे क्रोधित और मूर्च्छित हो देवदानवदेहेस्तु दुस्तरा केशशाङ्गला ॥ शरीरसंघातवहा प्रसृता लोहितापगा ॥ ६१ ॥ आजघानाथ तंक्रुद्धो रुद्रो रौद्राकृतिः प्रभुः ॥ राहुं शतमुखं युद्धे शत्रुसैन्यनिवारणम् ॥ ६२ ॥ तस्य काञ्चनचित्राङ्गं रथं साश्वं ससारथिम् ॥ जघान समरे श्रीमान् क्रुद्धो दैत्यस्य सायकैः ॥ ६३ ॥ तस्य पारिषदस्त्वेकः शरशक्त्या महाबलः ॥ विभेद समरे दृष्टो दानवं तं स्तनान्तरे ॥ ६४ ॥ स भिन्नगात्रो रुद्रेण तथा पारिषदैरपि ॥ रुद्रस्य रथमायान्तं स राहुर्दानवोत्तमः ॥ ६५ ॥ प्रममाथ तलेनाशु सहसा क्रोधमूर्च्छितः ॥ भिन्नगात्रं शरैस्तीक्ष्णैर्मैरु सूर्य इवांशुभिः ॥ ६६ ॥ हतैर्दानवमुख्यैस्तु रुद्रेणामिततेजसा ॥ रुद्रपारिषदान्तसर्वाग्निजघान महासुरः ॥ ६७ ॥ वर्तमाने महाघोरे संग्रामे लोमहर्षणे ॥ रुधिरौघा महावेगा महानद्यः प्रसुम्नवुः ॥ ६८ ॥ दानवं समरे रुद्रो नीलाञ्जनचयोपमम् ॥ निर्विभेद शरैस्तीक्ष्णैर्मैरु सूर्य इवांशुभिः ॥ ६९ ॥ हतैर्दानवमुख्यैश्च शक्तिशूलपरश्वधैः ॥ पतितैः पर्वताभैश्च दानवैः कामरूपिभिः ॥ ७० ॥ उसने मथन किया वह सूर्यकी किरणोंके समान तीक्ष्ण बाणोंसे भिन्न शरीर हो गया ॥ ७१ ॥ राहुने तीक्ष्ण बाणोंसे रुद्र और रुद्रके पार्षदोंको वेगसे वेधन किया ॥ ७२ ॥ और रोमहर्षोंको उपजानेवाले रौद्र वर्तमान युद्धमें रुधिरके समूहोंको वहनेवाली बहूनसी महानदी वेगसे बहने लगी ॥ ७३ ॥ और नीले पर्वतकी समान राहु दानवने तीक्ष्ण बाणोंसे रुद्रको ऐसे वेधन किया कि जैसे किरणोंसे मेरुपर्वतको सूर्य ढकता है ॥ ७४ ॥ और त्रिशूल शक्ति फरसेसे हनन हुए पर्वतकी समान पृथ्वीमें गिरे हुए इच्छापूर्वक विचरनेवाले ॥ ७५ ॥

दानवोंमें मुख्य दानवोंसे किया हुआ रोमहर्षोंको उपजानेवाला महाघोर युद्ध हुआ। उसमें दैत्य देसूके फूलकी समान दीखने लगे; महामेरु, मृदंग, पणव ॥ ६६ ॥ शंख और पटहसे मिलकर महाशब्द हो गया; और शब्दको करते हुए मरे हुए दैत्य ॥ ६७ ॥ और देवतोंका उस रणमें दारुण शब्द सुनाई आने लगा, और घोड़ोंको सुम और रथकी पुटोंसे उठी हुई ॥ ६८ ॥ पृथ्वीकी रज सम्पूर्ण योधाओंका मार्ग और नेत्रोंको रोकती हुई सब पृथ्वी उस समय शस्त्ररूपी पुष्पोंके उपहारवाली हो गई ॥ ६९ ॥ दुःखपूर्वक दर्शनवाली और दुःखसे प्राप्त होनेको योग्य मांसरुधिरकी कीचवाली रणभूमि हो गई; और

वर्तमाने महाघोरे संग्रामे लोमहर्षणे ॥ विरेजुस्ते तदा दैत्याः पुष्पिता इव किंशुकाः ॥ महाभेरीमृदङ्गानां पणवानां च निःस्वनः ॥ ६६ ॥ शङ्खवेणुस्वनोन्मिश्रः संवभूवादुतोपमः ॥ हतानां स्वनतां तत्र दैत्यानां चापि निःस्वनः ॥ ६७ ॥ देवानां च तथा तत्र शुश्रुवे दारुणो महान् ॥ तुरङ्गमुखोत्कीर्णं रथनेमिसमुत्थितम् ॥ ६८ ॥ रुधोऽयं मार्गं योधानां चक्षुषि च धरारजः ॥ शस्त्रपुष्पोपहरा सा तत्रासीद्युद्धमेदिनी ॥ ६९ ॥ दुर्दर्शा दुर्विमाह्या च मांसशोणितकर्दमा ॥ भग्नैः खड्गैर्गदाभिश्च शक्तितोमरपाट्टिशैः ॥ ७० ॥ अपविद्वैश्च भग्नैश्च रथैः सांग्रामिकैर्हतैः ॥ निहतैः कुञ्जैर्मतैस्तथा त्रिदशदानवैः ॥ ७१ ॥ चक्राक्षयुगशस्त्रैश्च भग्नैरवनिपातितैः ॥ बभूवायोधनं घोरं पिशिताशनसंकुलम् ॥ ७२ ॥ उत्पेतुश्च कबन्धानि दिक्षु सर्वासु संयुगे ॥ अन्योन्यबद्धवैराणां दैत्यानां जयगृद्धिनाम् ॥ ७३ ॥ संप्रहारस्तथा युद्धे वर्ततेऽतिभयंकरः ॥ सेन्यानां संप्रयुद्धानां शूराणामनिवर्तिनाम् ॥ ७४ ॥ अजस्य चैकपादस्य राहोश्चैव महात्मनः ॥ तेषां तु तत्र पततां क्रुद्धानामतिनिःस्वनः ॥ ७५ ॥

भाला, खड्ग, गदा, शक्ति, तोमर, पाट्टिश ॥ ७० ॥ हथियारोंसे हनन हुए संग्रामके करनेवाले सैकड़ों रथ और मतवाले हस्ती और देवता दानव ॥ ७१ ॥ चक्रशस्त्रसे भग्न और निपातित हुए; मांसके भोजन करनेवालोंसे व्याप्त और महाघोर युद्ध हो गया ॥ ७२ ॥ जयकी इच्छा करते हुए परस्पर बद्ध वैरोंवाले शूरवीरोंके सम्पूर्ण शिरोंसे रहित कबन्ध दिशाओंमें उछलने लगे ॥ ७३ ॥ और युद्धमें पीठ न देनेवाले सम्यक् प्रकारसे युद्ध करनेवाले शूरवीरोंका बड़ा भयंकर प्रहार होने लगा ॥ ७४ ॥ एकपैरवाले अज और महात्मा युद्धमें बल प्रकाश करने लगे सम्पूर्ण सेनाका शब्द होने

लगा ॥ ७५ ॥ जैसे प्रलयकालमें मर्यादाको छोड़े हुए समुद्रोंका होता है, उनमें एक महाबलों और बड़ा भीम ऐसा धूम्राक्ष नाम रुद्र ॥ ७६ ॥ गदा परिघ शूल धारण किये युद्धमें केशीको भेदन करता हुआ; और अनेक प्रकारसे प्रहार करनेवाले और भयानक दर्शनोंवाले ॥ ७७ ॥ रुद्रके प्यारे पार्षद केशीके सम्मुख दौड़ने लगे; और शोभायमान तपे हुए सुवर्णके कुंडलोंवाला दानव रथमें स्थित हो ॥ ७८ ॥ दानवोंने युक्त दुर्जय केशी रुद्रसे; युद्ध करने लगा; और संग्राममें चतुर उग्र पराक्रमवाला युद्ध करता हुआ ॥ ७९ ॥ केशीके मुखसे विस्तार करती हुई अग्निकी ज्वाला निकलती हुई सिंहकी तुल्य ऊंचे

उद्धर्त इव भूतानां समुद्राणां तु शुश्रुव ॥ तत्रैकस्तु सुधूम्राक्षः श्रामान् रुद्रो मुनीश्वरः ॥ ७६ ॥ विभेद केशिनं शक्त्या गदापरिघशूलभृत् ॥ नानाप्रहरणा घोरा भीमाख्या भीमविक्रमाः ॥ ७७ ॥ निष्पेतु रुद्रदयिता महापार्षदास्तथा ॥ रथमास्थाय च श्रीर्मास्तप्तकाञ्चन-
कुण्डलः ॥ ७८ ॥ दानवैः संवृतः केशी युध्यते युद्धदुर्जयैः ॥ तस्य संग्रामशोण्डस्य संग्रामेषु युयुत्ततः ॥ ७९ ॥ निषेतुरुग्रवीर्यस्य
ज्वाला हि प्रसृता मुखात् ॥ स तु सिंहर्षभस्कन्धः शार्दूलसमविक्रमः ॥ ८० ॥ महाजलदसंकाशो मृदङ्गवानिनिःस्वनः ॥ तस्य निष्पत-
मानस्य दानवैः संवृतस्य च ॥ ८१ ॥ बभूव सुमहानादः क्षोभ्यं त्रिदिवं यथा ॥ तेन शब्देन वित्रस्ता त्रिदशानां महाचमूः ॥ ८२ ॥
द्रुमशैलप्रहरणा योद्धुमेवाभ्यवर्तत ॥ तेषां च देवदैत्यानां युयुत्सूनां परस्परम् ॥ सन्निपातः सुतुमुलो रौद्रो लोकभयावहः ॥ ८३ ॥
तेषां युद्धं महाघोरं संजज्ञे लोमहर्षणम् ॥ देवदानवसंचानां प्राणास्त्यक्त्वा महाहवे ॥ सर्वे ह्यतिबलाः शूराः सर्वे पर्वतसन्निभाः ॥ ८४ ॥

कंधेवाला शार्दूलकी समान पराक्रमी ॥ ८० ॥ महामेघकी तुल्य कांतिमान् और मृदंगके तुल्य शब्दवाला दानवोंने युक्त युद्धके सम्मुख आता हुआ केशी दैत्यका ॥ ८१ ॥ स्वर्गको क्षोभ कराता हुआ महान् शब्द होता हुआ उस शब्दसे देवताओंकी सेना डर गई ॥ ८२ ॥ पहाड और पर्वतोंके प्रहारवाला महायुद्ध हुआ उन देवता और दैत्योंके परस्पर लड़नेका तुमुल शब्द होने लगा; और लोकोंको भयका देनेवाला हो गया ॥ ८३ ॥ तिन्होंका युद्ध महाघोर और रोमोंको हर्ष करानेवाला हो गया; तिस महान् युद्धमें देवता और दानवोंके समूहके प्राणोंका नाश होने लगा; वे सब अतिबलवाले

शरवीर पर्वतके समान कांतिवाले ॥ ८४ ॥ सब अस्त्रविद्याओंमें निपुण सब शत्रुओंको उठाये हुए देवता और दानव आपसमें मारनेकी इच्छा करनेवाले प्राप्त हुए; तिन्होंके गर्जनेका शब्द मेघके गर्जनेकी समान होने लगा ॥ ८५ ॥ और महाघोर शब्द जंगम और स्थावर जगत्को कंशनेवाला सुनाई आगे लगा; रक्तकांतिवाली भयंकर धूलि उत्पन्न हुई, और तिन देवते और दैत्योंके समूहोंसे उठी हुई रजसे दशों दिशा रुकती हुई ॥ ८६ ॥ रेशमी वस्त्रकी समान लाल और पांडुवर्णवाली तिस धूलीसे ॥ ८७ ॥ और बहुरूपसे ढकनेसे कुछ न दीखा, न ध्वजा न पताका न वर्म न घोडा ॥ ८८ ॥ न

सब सर्वास्त्रविद्भांसः सर्वे सर्वायुधोद्यताः ॥ त्रिदशा दानवाश्चैव परस्परजिघांसवः ॥ तेषां वै नदतां शब्दः संयुगे मेघनिःस्वनः ॥ ८५ ॥ शुश्रुवेऽतिमहाघोरश्चरस्थावरकम्पनः ॥ रेणुश्चारुणसंकाशो भीमः स समपद्यत ॥ ८६ ॥ उद्धृतो देवदैत्योंधः संरुधो दिशो दश ॥ अन्योन्यं रजसा तेन कौशेयारुणपाण्डुना ॥ ८७ ॥ संवृता बहुरूपेण ददृशुर्न च किंचन ॥ न ध्वजो न पताकाश्च न वर्म तुरगोऽपि वा ॥ ८८ ॥ आयुधं स्यन्दनो वापि दृश्यते नैव सारथिः ॥ स शब्दस्तुमुलस्तेषामन्योन्यं समधावताम् ॥ ८९ ॥ निपेतुरुग्रवीर्यस्य ज्वाला हि प्रसृता मुखात् ॥ स तु सिंहर्षभस्कन्धः शार्दूलसमविक्रमः ॥ ९० ॥ तस्य निष्पतमानस्य दानवैः संवृतस्य च ॥ श्रूयते तुमुलः शब्दो न रूपाणि चकाशिरे ॥ ९१ ॥ दानवास्तत्र संकुद्रा दानवानेव जग्निरे ॥ त्रिदशास्त्रिदशाश्चैव निजघ्नस्तुमुले तदा ॥ ९२ ॥ न (ते) परांश्च विनिघ्नन्तः स्वांश्च युद्धे महासुरान् ॥ रुधिरार्द्रा तथा चकुर्मैदिनीं च महासुराः ॥ ९३ ॥ ततस्तु रुधिरौघेण संसिक्तमुदितं रजः ॥ शरीरशतसंकीर्णं बभूव धरणीतलम् ॥ ९४ ॥

आयुध, न रथ, न सारथी दीखता था केवल आपसमें दौड़ते हुआका शब्द सुनाई देता था ॥ ८९ ॥ और उस उग्रवीर्यके मुखसे अग्नि निकलने लगी; वह सिंहकी समान कंधेवाला शार्दूलकी समान पराक्रमी ॥ ९० ॥ दानवोंसे युक्त युद्धमें झपटा तब बड़ा तुमुल शब्द हुआ जिससे रूप प्रकाशित न हुए ॥ ९१ ॥ और क्रोध कर आपसमें दैत्यही दैत्योंको मारने लगे; और देवतेही देवतोंको काटने लगे ॥ ९२ ॥ ऐसे देवते और दैत्य दूसरोंको न मार अपनोंहीपर प्रहार कर रुधिरसे गीली पृथ्वीको करते हुए ॥ ९३ ॥ पीछे लोहूके समूहसे भीजी हुई धूलि कोमल हो गई, और पृथ्वीतलमें सैकड़ों शव

गिर गई ॥ ९४ ॥ शूल शक्ति गदा तलवार परिष प्राप्त तोमरोंसे देवते और दैत्य आपसमें काटने लगे ॥ ९५ ॥ और परिवोंके आकार बाहुओंसे रुद्रके पार्षद दैत्योंको पीड़ित करने लगे और दानवभी बड़े २ वृक्ष पत्थर और सूर्यकी समान प्रकाशित शरोंमें ॥ ९६ ॥ रुद्रके पार्षदोंको काटने लगे इसी अंतरमें क्रोधी हुआ दैत्य ॥ ९७ ॥ संग्राममें महाघोर अपनी सेनाको प्रसन्न करता हुआ परम क्रोध हर वज्रास्त्र लेकर ॥ ९८ ॥ दिव्यरूप वज्रास्त्रसे रुद्रके पार्षदोंको काटने लगा ॥ ९९ ॥ तब पीड़ित और भ्रांत हुए रुद्रके पार्षद पृथ्वीमें ऐसे गिरे जैसे वज्रमें हत हुए पर्वत और छिन्न वृक्ष गिरते

शूलशक्तिगदाखड्गपरिषप्रप्तोमरेः ॥ त्रिदशा दानवाश्चैव जघुरन्योन्यमाहवे ॥ ९५ ॥ बाहुभिः परिघाकारैर्निघ्नन्तः परिघैस्तथा ॥ रुद्रपारिषदान्सर्वान्तसूदयन्ति स्म दानवाः ॥ रुद्रपारिषदाश्चैव महाद्रुममहाश्मभिः ॥ ९६ ॥ व्यदारयन्नतिक्रम्य शस्त्रैश्चादित्यसंनिभैः ॥ एतस्मिन्नन्तरे क्रुद्धः केशी दानवसत्तमः ॥ ९७ ॥ संग्राममर्षी घोरः स स्वान्यनीकानि हर्षयन् ॥ तेषां परमसंकुद्धो वज्रमस्त्रमुदीरयत् ॥ ९८ ॥ वज्रेणास्त्रेण दिव्येन शस्त्रेण च महात्मना ॥ महापारिषदाः सर्वे निहता युधि दुर्जयाः ॥ ९९ ॥ वज्रास्त्रपीडिता भ्रान्ता रुद्रपारिषदा युधि ॥ विप्रकीर्णद्रुमाः पेतुः शैला वज्रहता इव ॥ १०० ॥ एवं सुतुमुलं युद्धमभवल्लोमहर्षणम् ॥ केशिनः सह रुद्रेण तदद्भुतमिवाभवत् ॥ १०१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे केशिरुद्रयुद्धकथनं नामाष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ वृषपर्वा तु दैत्येन्द्रो विश्वमद्भुतदर्शनम् ॥ निष्कुम्भं योधयामास लोहितार्कसमयुतिम् ॥ १ ॥ क्रोधमूर्च्छितवक्रस्तु धुन्वन्परमकार्मुकम् ॥ धनूंषि प्रेक्ष्य शत्रूणां सारथिं त्वारितोऽब्रवीत् ॥ २ ॥

हों ॥ १०० ॥ इस प्रकार केशीका रुद्रके साथ तुमुल और रोमहर्षण युद्ध हुआ यह बड़ा युद्ध हुआ ॥ १०१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे अष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५८ ॥ वैशम्पायन बोले, हे जनमेजय ! वृषपर्वा दैत्योंका राजा लालसूर्यके समान कांतिवाले निष्कुम्भसे युद्ध करने लगा ॥ १ ॥ क्रोधसे मूर्च्छित मुख वृषपर्वा अपने धनुषको कँपाता हुआ शत्रुकी सेनाको देख सारथीसे वेगसे कहने लगा ॥ २ ॥

हे सारथे ! इस मेरे रथको यहीं तुम प्राप्त करो; यह सब देवते मेरी सेनाका नाश करते हैं ॥ ३ ॥ इस कारण युद्धमें श्लाघावाले इन देवताओंको मैं मारनेकी
 इच्छा करता हूं और इन्हीं देवताओंने दानवोंकी सेनामें बड़ा छिद्र कर दिया है ॥ ४ ॥ तब अतिवेगवाले रथमें स्थित हुआ वह श्रेष्ठ रथी दैत्य बाणोंसे
 शत्रुओंको मारने लगा ॥ ५ ॥ तब देवते सन्मुख ठहरनेको समर्थ न हुए युद्धकी तौ कौन कहे; वृषपर्वाके बाणोंसे हत हुए देवते भागने लगे ॥ ६ ॥
 तब मृत्युके वंशमें प्राप्त हुए तिस देवताओंको देख जातियोंको पीड़ित विचारके महाबलवाला निष्कुंभ युद्ध करनेको तैयार हुआ ॥ ७ ॥ तिस निष्कुंभको
 अत्रैव तावत्त्वरितं नय मे सारथे रथम् ॥ एते देवाश्च सहिता गन्ति नः समरे बलम् ॥ ३ ॥ एतान्निहन्तुमिच्छामि समरश्लाघिनो
 रणे ॥ एतैर्हि दानवानीकं कृतच्छिद्रमिदं महत् ॥ ४ ॥ ततः प्रजविताश्वेन रथेन रथिनां वरः ॥ अरीनभ्यहनत्कुद्रः शरजालै-
 र्महासुरः ॥ ५ ॥ न स्थातुं देवताः शक्ताः किं पुनर्योद्धुमाहवे ॥ वृषपर्वेशुनिर्भिन्नाः सर्व एवाभिदुद्रुवुः ॥ ६ ॥ तान्मृत्युवंशमापन्नान्वै-
 वस्वतवशं गतान् ॥ समीक्ष्य निहतान् ज्ञातीनवतस्थे महासुरः ॥ ७ ॥ दृष्ट्वा तं तत्र निष्कुम्भं सर्वे ते त्रिदशोत्तमाः ॥ समेत्य
 सहिताः सर्वे द्रुतं तं पर्यवाश्यन् ॥ ८ ॥ व्यवस्थितं तु निष्कुम्भं दृष्ट्वा त्रिदशसत्तमम् ॥ बभ्रुवुर्बलवन्तो वै तस्यास्त्रबलतेजसा ॥ ९ ॥
 वृषपर्वा तु शैलाभं निष्कुम्भं समरे स्थितम् ॥ महेन्द्र इव धाराभिः शरवर्षैरवाकिरत् ॥ १० ॥ अचिन्तयित्वा तु शराञ्छारीरे
 पतितान्बहून् ॥ स्थितश्च प्रमुखे श्रीमान्तससैन्यः स महाबलः ॥ ११ ॥ संप्रहस्य महातेजा वृषपर्वाणमाहवे ॥ अभिदुद्राव वेगेन
 कम्पयन्निव मेदिनीम् ॥ १२ ॥ तस्य त्वाधावमानस्य दीप्यमानस्य तेजसा ॥ बभ्रुव रूपं दुर्धर्षं दीप्तस्येव विभावसोः ॥ १३ ॥
 देख बहुतसे देवता इकट्ठे हो निष्कुंभके चारों तरफ सहायता करने लगे ॥ ८ ॥ तब उस निष्कुंभको देवताओंमें श्रेष्ठ स्थित देख उसके अस्त्रबलके
 तेजसे सब देवते बलवाले होने लगे ॥ ९ ॥ तब पर्वतके समान स्थित हुए निष्कुंभको वृषपर्वा देख बाणोंकी वर्षा इस प्रकार करने लगा जिस तरह
 पर्वतपर जलधारा गिरती हो ॥ १० ॥ तब शरीरमें लगते हुए बाणोंको विचारकर सेनाके मुखमें स्थित हुआ महाबली निष्कुंभ ॥ ११ ॥ महातेजस्वी
 हैंसकर पृथ्वीको कंपाता हुआ वेगसे वृषपर्वाकी ओर दौड़ने लगा ॥ १२ ॥ उस तेजसे दीप्तिमान् दौड़ते हुए निष्कुंभका रूप प्रकाशमान अग्नि की समान

प्रकाशित हुआ ॥ १३ ॥ उस महातेजस्वीने रथको त्याग क्रोधको प्राप्त हो बड़ी शाखावाले और बहुत ऊंचे वृक्षको उखाड़कर ॥ १४ ॥ वृषपर्वाकी ओर फेंका, दानवने तिस वृक्षको एकही हाथसे ग्रहण कर ॥ १५ ॥ बहुतसा शब्द कर उसे भमाके वृषपर्वाके हाथी पीलवान रथ और रथमें बैठनेवाले ॥ १६ ॥ देवताओंको दानवने मारा; उस प्राणोंके हरनेवाले क्रोधी धर्मराजके समान ॥ १७ ॥ वृषपर्वाको प्राप्त हो सब देवते भागने लगे, और देवतोंको भय देनेवाले वृषपर्वाको आते हुए ॥ १८ ॥ देखकर धनुषधारी निष्कुंभ शब्द करने लगा, और क्रोधको प्राप्त हो मर्मको भेदन करनेवाले पैंने तीस रथं त्यक्त्वा महातेजाः सक्रोधः समपद्यत ॥ वृक्षमुत्पाटयामास महातालं महोच्छ्रयम् ॥ १४ ॥ ततश्चिक्षेप तं वृक्षं निष्कुम्भो वृषपर्वणः ॥ तं गृहीत्वा महावृक्षं पाणिनेकेन दानवः ॥ १५ ॥ विनद्य सुमहानादं भ्रामयित्वा च वीर्यवान् ॥ सगजान्सगजारोहा-स-थात्राथिनस्तथा ॥ १६ ॥ जवान दानवस्तेन शाखिना त्रिदशास्तदा ॥ तमन्तकमिव क्रुद्धं समरे प्राणहारिणम् ॥ १७ ॥ वृषपर्वा-णमासाद्य त्रिदशा विप्रदुद्रुवुः ॥ तमापतन्तं संक्रुद्धं त्रिदशानां भयावहम् ॥ १८ ॥ आलोक्य धन्वी निष्कुम्भश्चक्रो ध च ननाद च ॥ स तत्र निशितैर्बाणैस्त्रिंशद्भिर्मर्मभेदिभिः ॥ १९ ॥ निर्विभेद महावीर्यां निष्कुम्भो दानवाधिपः ॥ शरशक्तिभिरुग्रभिर्दृष्टयानामाधिरं प्रभुम् ॥ २० ॥ विद्धः समरमध्यस्थो रुधिरं प्राप्तवद्बहु ॥ उद्विग्ना मुक्तकेशास्ते भग्नदर्पाः पराजिताः ॥ २१ ॥ श्वस्तन्तो दुद्रुवुः सर्वे भयाद्रे वृषपर्वणः ॥ अन्योन्यं प्रममन्थुस्ते त्रासिता वृषपर्वणा ॥ २२ ॥ पृष्ठवक्त्राः सुसंविद्याः प्रेक्षयामाणा सुदुर्मुहुः ॥ त्यक्तगहरणाः सर्वे कृतास्ते वृषपर्वणा ॥ २३ ॥ संग्रामे युद्धशौण्डेन तदा निष्कुम्भसैनिकाः ॥ तत्रैव तु महावीर्यः प्रहादः कालमाहवे ॥ २४ ॥ बाणोंसे ॥ १९ ॥ वृषपर्वा महाबली दानवपतिको निष्कुंभने विद्ध किया और उग्र शर शक्तिसे दैत्योंके अधिनिको विद्ध किया ॥ २० ॥ तत्र पीडित हुआ निष्कुंभ युद्धमें शरीरसे बहुतसा रुधिर बहाने लगा, वे उद्विग्न और छूटे बालोंवाले गर्वसे रहित और पराजित ॥ २१ ॥ शासको लेते हुए देवते वृषपर्वा दैत्यके भयसे भागने लगे, और वृषपर्वासे दुःखित किये देवते आपसमें विलोडन करने लगे ॥ २२ ॥ दुःखमें मूढ़ हुए पीछेको बारंबार देखने लगे ऐसे युद्धमें वृषपर्वाने सब देवतोंके शस्त्र गिरा दिये ॥ २३ ॥ उसी काल संग्रामयुद्धमें निष्कुंभके सैनिक स्थित हुए, उसी समय और महावीर्यवान् ॥ २४ ॥

हिरण्यकशिपुका पुत्र प्रह्लाद लाल नेत्र किये युद्ध करने लगा और उस दानव वीर प्रह्लादके हाथसे युद्धकालमें जय प्राप्त किया ॥ २५ ॥ शुक्राचार्य जयको देनेवाली किया बहुत शीघ्रतासे करने लगे, और अग्निमें हवन करनेसे और ब्राह्मणोंको नमस्कार करनेसे ॥ २६ ॥ उस समय अग्निमें गंधको वहनेवाली सुंदर पवन चलने लगी, जयके अर्थ अभिमंत्रित कर अनेक प्रकारकी मालाओंको ॥ २७ ॥ स्वयं शुक्राचार्यने प्रह्लादके शिर गिरा बांधी, उस महात्माके युद्धके समय ॥ २८ ॥ अतिवीर्यवाले प्रह्लादके निमित्त शुक्राचार्य शांतिकर्म करने लगे, अर्थात् शुक्राचार्यके दश हजार शिष्य महात्मा

योधयामास रक्ताक्षो हिरण्यकशिपोः सुतः ॥ तस्य दानववीरस्य युद्धकाले जयक्रियाः ॥ २५ ॥ चकार त्वरया युक्तो भार्गवा विज-
यावहाः ॥ हुताशनं तर्पयतो ब्राह्मणांश्च नमस्यतः ॥ २६ ॥ आज्यगन्धप्रतिवहो मारुतः सुरभिर्वहौ ॥ स्रजश्च विविधाश्चित्रा जयार्थ-
मभिमन्त्रिताः ॥ २७ ॥ प्रह्लादस्य शुभे मूर्धन्यावबन्धोऽशना स्वयम् ॥ कालेन सह संग्रामे प्रयुद्धस्य महात्मनः ॥ २८ ॥ प्रह्लादस्या-
तिवीर्यस्य शान्तिं चक्रे स भार्गवः ॥ दश शिष्यसहस्राणि भार्गवस्य महात्मनः ॥ २९ ॥ यानि दानववीराणां जेषुः शान्तिमनुत्त-
माम् ॥ अथर्वाणमथो दिव्यं ब्रह्मसंस्तवचोदितम् ॥ ३० ॥ रणप्रवेशसदृशं कर्म वैजयिकं कृतम् ॥ ततः सर्वान्निदुषः समरंषानि-
वर्तिनः ॥ ३१ ॥ विद्यया तपसा युक्ताः कृतस्वस्त्ययनक्रियाः ॥ धनुर्हस्ताः कवचिनो वेगेनाप्लुत्य दानवाः ॥ बलिमभ्यर्च्य राजानं
प्रह्लादं पर्यवारयन् ॥ ३२ ॥ आस्थाय परमं दिव्यं रथं पररथारुजम् ॥ नानाप्रहरणाकीर्णं सवज्रमिव पर्वतम् ॥ ३३ ॥

दानव वीरकी ॥ २९ ॥ दैत्योंकी जयके अर्थ शांतिकर्म जाप करने लगे, दिव्य और ब्रह्माकी स्तुतिसे प्रेरित अथर्ववेदके मंत्रसे ॥ ३० ॥ विजयका देनेवाला रणप्रवेशकी समान वेदकी रीतिसे कर्म करवाता था, तब सब अस्त्रोंको जाननेवाले और युद्धमें नहीं भागनेवाले ॥ ३१ ॥ विशावृत्तिसे युक्त, और कल्याणरूप कर्मोंसे युक्त स्वस्तिवाचन किये और धनुषोंको हाथोंमें धारण करनेवाले और कवचोंको पहने हुए सब दैत्य बालि राजाकी पूजा कर प्रह्लादके चारों ओर स्थित हुए ॥ ३२ ॥ तब दिव्य और शत्रुके रथको भय देनेवाले नानाप्रकारके शस्त्रोंसे आकीर्ण वज्रसहित पवनकी समान रथमें

स्थित हुए ॥ ३३ ॥ तब एक मुहूर्तमें सेनाका कोलाहल होने लगा; जैसे मेघके आगममें मेरुके शिखरपर विजली प्रकाशित होती है ॥ ३४ ॥ तब अनेक प्रकारकी सेना प्रकाशित होने लगी; तब कमलके फूलोंकी मालाओंसे विभूषित दैत्य युद्ध करनेके अर्थ अपने २ भाताओंसे मिलकर तैयार होते रणमें आये कारण कि ये रणप्रिय थे ॥ ३५ ॥ और बड़े २ शस्त्रोंके धारण करनेवाला श्रीमान् सुन्दर कवचको धारण करनेवाला; झिलमटोप पहने धनुषको हाथमें लिये परमदुर्जय ॥ ३६ ॥ सेनासे संयुक्त और रथोंके बाजेसहित सहस्रों दैत्य उसके आगे चलने लगे ॥ ३७ ॥ उसके परम दुर्जय रथ

तद्भूव मुहूर्तेन क्ष्वेडितारुफोटिताकुलम् ॥ मेरोः शिखरमाकीर्णं द्यौरिवाम्बुधरागमे ॥ ३४ ॥ स्रजः पद्मपलाशानामामुच्य सुविभूषिताः ॥ बान्धवान्संपरित्यज्य निपतन्ति रणप्रियाः ॥ ३५ ॥ महायुधधरः श्रीमान्शुभचर्मधरः प्रभुः ॥ शिरस्त्राणतनुत्राणी धन्वी परमदुर्जयः ॥ ३६ ॥ सिंहशार्दूलदर्पाणां गदतां किङ्किणीकिनाम् ॥ तस्य दैत्यसहस्राणि प्रयान्त्यग्रे महारणे ॥ ३७ ॥ सैन्यपक्षहतास्तस्य रथाः परमदुर्जयाः ॥ सप्ततिर्वै सहस्राणि गजास्तावन्त एव च ॥ ३८ ॥ मध्ये व्यूहोदरस्थस्तु कालनेमिर्महासुरः ॥ धनुर्विस्फारयामास ननाद प्रजहास च ॥ ३९ ॥ तस्मिन् शतसहस्राणि पुरो यान्ति महाद्युतेः ॥ दानवानां बलवतां शक्रप्रतिमतेजसाम् ॥ ४० ॥ स समं वर्तमानस्तु पक्षाभ्यां विस्तृतो महान् ॥ अभवद्दानवव्यूहा दुर्मेघः सर्वदैवतैः ॥ ४१ ॥ षष्ठी रथसहस्राणि दानवानां धनुर्भूताम् ॥ नानाप्रहरणानां च परिमाणं न विद्यते ॥ ४२ ॥ गदापरिचनिर्घ्निशैः शूलमुद्गरपट्टिशैः ॥ प्रगृहीतैर्व्यराजन्त दानवाः पर्वतोपमाः ॥ ४३ ॥

शत्रुकी सेनाको मारने लगे; और सत्तर सहस्र रथ और सत्तर सहस्र हाथीके ॥ ३८ ॥ मध्यमें स्थित धनुषको कँपाता हुआ कालनेमि दैत्य शब्द करने और हँसने लगा ॥ ३९ ॥ उस महाद्युतिमान्के आगे इन्द्रकी समान बली सैकड़ों दानव चलने लगे ॥ ४० ॥ यह पक्षोंसे महाविस्तारको प्राप्त हो एकसाथ वर्तमान होता हुआ दानवोंका व्यूह सब देवतोंको दुर्मेघ हो गया ॥ ४१ ॥ साठ सहस्र रथी संग्राममें नहीं लौटनेवाले धनुषधारी दैत्योंका परिमाण नहीं था ॥ ४२ ॥ गदा, परिघ, निर्घ्निश, शूल, पट्टिश, मुद्गरोंको ग्रहण किये दैत्य पर्वतकी समान शोभित होने लगे ॥ ४३ ॥

शब्द करते हुए पुकारते हुए और महावीर्यवाले दैत्य युद्ध करने लगे ॥ ४४ ॥ सहस्रों प्रकारके बाजे बजने लगे, अतिवेगवाले घोड़े और हाथियोंके गर्जनेसे ॥ ४५ ॥ और नकारोंके बजनेसे आकाशके गर्जनेके समान शब्द होने लगा; और नकारे भेरी आदिके शब्द सुनाई देने लगे ॥ ४६ ॥ उस शंख और भेरी तूर्यके शब्द तथा रथोंके शब्दोंसे आकाश शब्दित होने लगा ॥ ४७ ॥ सागरके समान सेनासे परिवृत और कालके समान प्रहाद युद्ध करने लगा ॥ ४८ ॥ तब महापराक्रमी प्रहादके घोर शब्द करके प्राणी और त्रिलोकी विकृत स्वरसे हाहाकार करने लगे ॥ ४९ ॥

गर्जन्तो विनदन्तश्च विक्रोशन्तः पुनः पुनः ॥ अयुध्यन्त महावीर्याः समरेष्वनिवर्तिनः ॥ ४४ ॥ तत्र तूर्यसहस्राणि भेरीशङ्खवाणि च ॥ हयानां च गजानां च गर्जतामतिवेगिनाम् ॥ ४५ ॥ दुन्दुभीनां च निर्घोषः पर्जन्यनिनदोपमः ॥ शुश्रुवे शङ्खशब्दश्च पटहानां च निःस्वनः ॥ ४६ ॥ तेन शंखनिनादेन भेरीतूर्यखेण च ॥ निर्घोषेण रथानां च क्रोशतीव नभस्तलम् ॥ ४७ ॥ सागरप्रतिमोघेन बलेन महता वृतः ॥ प्रहादोऽयुद्धयत रणे कालान्तकयमोपमः ॥ ४८ ॥ तस्य नादेन रोद्रेण घोरेणाप्रतिमोजसः ॥ विनेदुः सर्वभूतानि त्रैलोक्यविकृतेः स्वनैः ॥ ४९ ॥ अन्तरिक्षात्परं त्यक्त्वा वायुश्च परुषो ववौ ॥ वमन्त्यः पावकं घोरं शिवाश्चैव ववाप्तिरे ॥ ५० ॥ प्रहादस्तु महावीर्यः प्रहसन्युद्धदुर्मदः ॥ उवाच वचनं श्रीर्मास्तत्कालक्षममुत्तमम् ॥ ५१ ॥ अद्याहं दर्शयिष्यामि स्वबाहुबलमूर्जितम् ॥ अद्य मद्भाणनिहतान्देवान्द्रक्ष्यथ संयुगे ॥ ५२ ॥ बान्धवा निहता येषां त्रिदशैरिह संयुगे ॥ अद्य निर्वर्तयिष्यन्ति शत्रुमांसानि दानवाः ॥ ५३ ॥

आकाशसे उल्का गिरने लगीं, कठिन वायु चलने लगा, अधिको प्रगट करती हुई शिवाजी प्रकाशित होने लगी ॥ ५० ॥ तब महावीर्यवान् दुर्मद श्रीमान् प्रहाद हँसकर उस कालके योग्य उत्तम वचन कहने लगा ॥ ५१ ॥ अब मैं अपनी बाहुके बलको दिखाऊंगा; हे दैत्यो ! अब मेरे बाणोंसे मेरे हुए देवताओंको तुम देखोगे ॥ ५२ ॥ जिन दैत्योंके बांधव देवताोंने मारे हैं अब उन शत्रुओंके मांसोंको वह दैत्य खावेंगे ॥ ५३ ॥

इस युद्धमें जो यह उठी हुई धूलि, उसको शत्रुओंके लोहूके छिड़कनेसे शांत करूंगा ॥ ५४ ॥ अंधेराके समूहसे हत हुए सूर्य, और सेनाकी धूलिसे लोहित हुए आकाशमें पक्षीजनेके समान मेरे बाण गिरेंगे ॥ ५५ ॥ और हे दैत्यो ! अब तुम सब प्रसन्न होकर देवताओंसे भयको त्यागो, और अब मैं कालरूपी इन्द्रको अपने धनुषसे मारूंगा ॥ ५६ ॥ और उग्रबाणोंकरके सब देवताओंको युद्धमें जीतूंगा ॥ ५७ ॥ क्योंकि मेरे पास तूण और सपोंके समान बाण अक्षय्य हैं और मेरे अगाड़ी युद्धमें जीनेकी इच्छावाले कौन ठहरनेको समर्थ हैं ॥ ५८ ॥ शत्रुओंके समूहको मारकर इममद्य समुद्रतं रेणुं समरमूर्द्धनि ॥ अहं तु शमयिष्यामि शत्रुशोणितविस्त्रवेः ॥ ५४ ॥ तिमिरोघहृताकं तु सैन्यरेण्वरूणीकृतम् ॥ आकाशं संपतिष्यन्ति खद्योता इव मे शराः ॥ ५५ ॥ हृष्टाः संपरिमोदध्वं देवेभ्यस्त्यज्यतां भयम् ॥ अद्याहं निहनिष्यामि कालेन्द्रं धनुषा रणे ॥ ५६ ॥ तोषयिष्यामि राजानं बलिं बलवतां रणे ॥ त्रिदशान्तसगणान्हृत्वा रणे चान्तक्रमन्तिकात् ॥ ५७ ॥ अक्षयाः सन्ति मे तूणाः शराश्चाशीविषोपमाः ॥ स्थातुं मे पुरतः शक्ताः के रणे जीवितेप्सवः ॥ ५८ ॥ इत्वा रिपुगणास्तुष्टिर-
नुरागश्च राजसु ॥ हतस्य त्रिदिवे वासो नास्ति युद्धसमा गतिः ॥ ५९ ॥ तद्भयं पृष्ठतः कृत्वा रणे दानवसत्तमाः ॥ निहत्येमान-
रीन्सर्वान्मोदध्वं नन्दने वने ॥ ६० ॥ एवमुक्त्वा महत्सैन्यं प्रहादो दानवोत्तमः ॥ कालसैन्यं महारौद्रं तरसामर्दतासुरः ॥ ६१ ॥
सर्वास्त्रविद्वान्वीरश्च नित्यं चाप्यपराजितः ॥ युद्धे ह्यभिमुखो नित्यं स्वबाहुबलदर्पितः ॥ ६२ ॥ षष्टिं रथसहस्राणि विविधायुध-
धारिणाम् ॥ प्रहादस्यातिवीर्यस्य ते तस्य तनया निजाः ॥ ६३ ॥

राजाकी प्रसन्नता करूंगा और युद्धमें मेरे हुआंका स्वर्गलोकमें वास होता है इस कारण युद्धके समान उत्तम गति नहीं है ॥ ५९ ॥ इस कारण सब दैत्य भयको छोडकर शत्रुओंको मारकर नंदनवनमें आनंद करो ॥ ६० ॥ ऐसे दानवश्रेष्ठ प्रहाद दैत्य अपनी सेनासे कहकर वेगसे कालकी महारौद्र सेनाको मर्दित करने लगा ॥ ६१ ॥ सब अस्त्रोंको जाननेवाला शूर नित्य अपराजित युद्धमें सन्मुख रहनेवाला और अग्नी बाहुके बलसे गर्वित ॥ ६२ ॥ प्रहादके युद्धमें सन्मुख खड़े होनेमें नानाप्रकारके शस्त्रोंको धारण करनेवाले दैत्योंके साथ सहस्र रथ स्थित हुए और बहुवसे प्रहादके पुत्र स्थित हुए ॥ ६३ ॥

नानाप्रकारके यज्ञोंके करनेसे क्षमावाले और धर्म करनेवाले और नित्यप्रति व्रतोंमें परायण ॥ ६४ ॥ दाता और भिषं वचनको कहनेवाले और शास्त्रोंको जाननेवाले अपनी स्त्रियोंमें रत और इन्द्रियोंको जीतनेवाले दाता ब्राह्मणभक्त, सत्य बोलनेवाले ॥ ६५ ॥ नित्यप्रति यज्ञ करनेवाले बाण और अन्न-विद्यामें चतुर बहुतसे पराक्रमवाले दृढ विक्रमी ॥ ६६ ॥ और मदवाले हाथीकी समान चलनेवाले और शत्रुकी सेनाओंको मर्दन करनेवाले, अपने चरणोंसे वृक्षोंको विदीर्ण करनेवाले ॥ ६७ ॥ युद्ध करनेकी इच्छावाले क्रोधमें रंजित नेत्रोंवाले और अपने २ ओष्ठोंके पुटाको दशनेवाले, अपनी २

तैस्तु क्रतुशतैरिष्टं विपुलैराप्तदक्षिणैः ॥ क्षान्ता धर्मपरा नित्यं सत्यव्रतपरायणाः ॥ ६४ ॥ दातारः प्रियवक्तारो वक्तारः शास्त्रस्तुषु ॥ स्वदाग्निरता दान्ता ब्रह्मण्याः सत्यसङ्गराः ॥ ६५ ॥ यष्टारः क्रतुभिर्नित्यं नित्यं चाध्ययने रताः ॥ इष्वस्त्रकुशलाः सर्वे बहुशो दृढ-विक्रमाः ॥ ६६ ॥ मत्तवारणाविक्रान्ताः शत्रुसैन्यप्रमर्दकाः ॥ दारयन्तः पदाक्षेपैः सुघोरांश्चातरेचकान् ॥ ६७ ॥ युद्धोत्सुकधिया नित्यं क्रोधरञ्जितलोचनाः ॥ संदृष्टौष्ठपुष्टा दैत्या विनेदुर्भामविक्रमाः ॥ क्षेपेडितास्फोटितरैरन्योन्यं समहर्षयन् ॥ ६८ ॥ वेणुशंखरवैश्वेव सिंहनादैश्च पुष्कलैः ॥ आप्लुत्याप्लुत्य सहस्रा रणे ववुरनेकशः ॥ ६९ ॥ तालमात्राणि चापानि विकृष्य सुमहाबलाः ॥ अमृष्यमाणाः सहस्रा दानवाश्चापपाणयः ॥ ७० ॥ सुरासुरैरप्यजितं योधयन्ति रणेऽन्तकम् ॥ प्रतप्तैर्माभरणाः सर्वे ते श्वेतवाससः ॥ ७१ ॥ दानवा मानिनः सर्वे सर्वे स्वर्गाभिकांक्षिणः ॥ सर्वे जयेषिणो वीराः सर्वे शत्रुवधोद्यताः ॥ ७२ ॥

भुजाओंको बजाकर परस्पर प्रसन्न होनेवाले महापराक्रमी दैत्य शब्द करने लगे ॥ ६८ ॥ शंख वेणु आदि अनेक प्रकारके शब्दों और बड़े २ सिंह-नादोंको करके क्रूद २ दो युद्धमें प्राप्त हो गर्जने लगे ॥ ६९ ॥ और कितनेक दैत्य तालवृक्षके समान लम्बे २ धनुषोंको खेंचने लगे; और कितनेक धनुषबाणोंको हाथमें लिये असहनशील ॥ ७० ॥ सुरासुरोंसे अजित कालसे युद्ध करनेमें प्रवृत्त हुए; और तपाये हुए सोनेके गहनोंको धारण किये वे सब सफेद वस्त्रोंको धारण किये ॥ ७१ ॥ अभिमानी और स्वर्गकी इच्छा और जयकी इच्छा करनेवाले शत्रुओंके मारनेमें पुरुषार्थ करने-

वाले कालसे युद्ध करने लगे ॥ ७२ ॥ तब पताका ध्वजा मालासे संयुक्त हाथी घोड़े रथोंसे पूर्ण और स्वर्गके मार्गकी इच्छा करनेवाली गर्वित
दैत्योंकी सेना शोभायमान हुई ॥ ७३ ॥ तब भीमपराक्रमी बहुत शब्द करता हुआ बड़े शरीरवाला और बहुतसे व्याधियोंसे युक्त काल चला ॥ ७४ ॥
उसने बलवान् गर्वसे पूर्ण सन्मुख गर्जनेवाले दैत्योंकी बड़ी सेनाको देखा ॥ ७५ ॥ और तिस दैत्योंकी वेगवार सेनाको आती हुई देख व्याधियोंके
सहित कालने प्रतिलोभ प्रकारसे घेर लिया ॥ ७६ ॥ तब दैत्योंकी सेनामें प्रवेश कर लोहके समान लाल नेत्र धिरे अपनी सेनासे युक्त कालने दैत्योंकी

शुशुभे सा चमूदीप्ता पताकाध्वजमालिनी ॥ गजाश्वरथसंवाधा स्वर्गमार्गाभिकांक्षिणी ॥ ७३ ॥ ततः कालः सुनिर्यातो भीमो
भीमपराक्रमः ॥ निनदन्सुमहाकायो व्याधिभिर्बहुभिर्वृतः ॥ ७४ ॥ ददर्श महतीं सेनां दानवानां बभूवसाम् ॥ अभिसंजातदर्पाणां
कालं समाभिगर्जताम् ॥ ७५ ॥ तदायान्तं तदानीकं दानवानां तरस्विनाम् ॥ प्रतिलोभं चकाराशु व्याधिभिः सहितोऽन्तकः ॥ ७६ ॥
प्रविश्य ध्वजिनीं चैषां पातयामास दानवान् ॥ कालो रुधिररक्ताक्षः स्वेनानीकेन संवृतः ॥ ७७ ॥ प्रहादबलमत्युग्रं प्रहादं च
महाबलम् ॥ आजघान रणे कालो दण्डमुद्गरपट्टिशैः ॥ ७८ ॥ शरशक्तप्रष्टिखट्वांश्च शूलानि मुशलानि च ॥ गदाश्च परिघाश्चैव
विचित्राश्च परश्वधाः ॥ ७९ ॥ धनुषि च विचित्राणि शतघ्नीश्च स्थिरायसीः ॥ पात्यन्ते व्याधिभिर्गुह्ये दानवानां चमूमुखे ॥ ८० ॥
बहवो व्याधयो युद्धे बहूनसुरपुङ्गवान् ॥ व्याधीनापि च दैत्यौघा निजधनुर्बहवो बहून् ॥ ८१ ॥

सेनाका नाश किया ॥ ७७ ॥ और सेनाको आनंद देनेवाले प्रहाद दैत्यको दंड मुद्गर पट्टिशसे मारने लगा ॥ ७८ ॥ शर शक्ति ऋष्टि तलवार शूल
मुशल गदा परिघ विचित्र फरसा ॥ ७९ ॥ धनुष विचित्र लोहेकी बनी शतघ्नियोंसे सब व्याधियें दैत्योंकी सेनाको मारने लगीं बहुतसी व्याधी युद्धमें
दैत्योंको मारने लगीं और बहुतसे दैत्यभी बहुतसी व्याधियोंको मारने लगे ॥ ८० ॥ कोई शूलसे और कोई कोई फरसोंसे और परमायुध ॥ ८१ ॥

परिघसे, कोई तलवारसे कटे हुए तडफने पृथ्वीमें गिरे ॥ ८२ ॥ इस प्रकार व्याधियोंने दानवोंको अनेक अन्धोंसे विदीर्ण किया; और वेभी अनेक आयुधोंसे व्याधियोंको मारने लगे, वे दैत्य उत्तम आयुधवाली व्याधियोंसे ॥ ८३ ॥ खड्ग सुशल तोक्षण प्राप्त तोमर मुद्गरोंसे जर्जरित हो फरसोंसे कट पृथ्वीमें गिरने लगे ॥ ८४ ॥ कितनेक मुद्गरोंसे आर कितनेक पाट्टियोंसे कटे हुए, कितनेक शस्त्रोंसे कटे हुए और कितनेक मुक्तोंसे मथित हुए ॥ ८५ ॥ और कितनेक दैत्य नेत्रोंसे रहित हुए लोहकी धार मुखसे पहाने लगे; तब कितनेक आर्त शब्द करने लगे; कितनेक सिंहकी समान गर्जने लगे ॥ ८६ ॥

शूलैः प्रमथिताः केचित्केचिच्छिन्नाः परश्वधैः ॥ परिघैराहताः केचित्केचिच्च परमायुधैः ॥ केचिद्विधा कृताः खड्गैः स्फुरन्तः पतिता भुवि ॥ ८२ ॥ व्याधयो दानवेरेव नानाशस्त्रैर्विदारिताः ॥ ते चापि व्याधिभिः सर्वे विविधैरायुधोत्तमैः ॥ ८३ ॥ खड्गैश्च मुशलेस्तीक्ष्णैः प्राप्ततोमरमुद्गरैः ॥ भिन्नाश्च दानवाः सर्वे निकृत्ताश्च परश्वधैः ॥ ८४ ॥ मुद्गरैः पाट्टिगैश्चैव व्याधिभिश्च महाबलैः ॥ कृत्वा शस्त्रैरनेकैश्च मुष्टिभिश्च हता भृशम् ॥ ८५ ॥ वेमुः शोणितमन्योन्यं विष्वग्दशनक्षणाः ॥ आर्तस्वरं च नदतां सिंहनादं च गर्जताम् ॥ ८६ ॥ बभूव तुमुलः शब्दः संग्रामे लोमहर्षणे ॥ मुष्टिभिश्चोत्तमाङ्गानि तलेर्मात्राणि चासकृत् ॥ ८७ ॥ सादितानि महीं जग्मुस्तिष्ठतामेव संयुगे ॥ अस्त्रफेना ध्वजावर्तां च्छिन्नबाहुमहोरगा ॥ ८८ ॥ शूलशक्तिमहामत्स्या चापग्राहसमाकुला ॥ रथेषूपलसंबन्धा ध्वजद्रुमलतावृता ॥ ८९ ॥ सशब्दघोरविस्तारा लोहितोदाभवन्नदी ॥ स्वधनुःशक्रधनुषौ काञ्चनाङ्गदविद्युतौ ॥ ९० ॥ तौ दैत्यकालजलदौ शरधारां व्यमुञ्चताम् ॥ तौ महामेघसंकाशौ रथनागगतौ तदा ॥ ९१ ॥

उनको युद्धमें लोमहर्षण उग्रशब्द होने लगा; कितनेक मुक्तोंकी मारसे शिरहीन हो पृथ्वीतलमें गिरे ॥ ८७ ॥ तब आसुरूपी ज्ञागोंवाली और ध्वजारूप भँवरवाली कटे हुए बाहुरूप सपोंवाली ॥ ८८ ॥ शूल शक्तिरूप महामच्छोंवाली, धनुषरूप ग्राहोंसे संयुक्त रथरूपी पत्थरोंसे संयुक्त ध्वजारूप वृक्षोंसे पूर्ण भूमि हो गई ॥ ८९ ॥ अपने कांचनांगद बिजलीकी समान तथा शक्रधनुषकी समान दोनों धनुषोंको ॥ ९० ॥ धारण कर काल और

प्रह्लाद बाणोंकी वर्षा करने लगे; वे दोनों महामेवकी समान रथ और हाथीपर चढे ॥ ९१ ॥ जलमरे बादलकी समान कुद हुए तमसुवर्णके बने वस्तर दिव्यहारसे भूषित ॥ ९२ ॥ सूर्य और वैश्वानर अग्निकी समान शोभित हुए वे दोनों महाबली सेनामें एक दूसरेको ॥ ९३ ॥ वज्रके समान बाणोंसे काटने लगे; परस्परके सम्मर्दसे वह युद्ध दारुण हो गया ॥ ९४ ॥ तब दोनोंके युद्धमें योधाओंकेभी यह निश्चय हुआ कि अब जीना कठिन है तब कितनेक बाणोंसे कटे हुए सब अंगोंवाले और कितनेक प्राणोंसे रहित; और कितनेक लोहूते भीगी हुई छातीवाले योधा पृथ्वीमें गिरने लगे ॥ ९५ ॥

बभ्रुवतुरभिकुट्टौ साम्बुगर्भाविबाम्बुदौ ॥ तप्तकाञ्चनसन्नाहौ दिव्यहाराविभूषितौ ॥ ९२ ॥ तौ विरेजतुरायतौ सूर्यवैश्वानरोपमौ ॥ तौ महाबलसंकाशावन्योन्यस्य चमृमुखे ॥ ९३ ॥ शकाशनिसमस्पर्शैर्वाणैर्जत्रपुराहवे ॥ परस्परं समाद्यन्त तयोर्युधि दुरासदम् ॥ ९४ ॥ नाशंसन्त तदा योधा जीवितान्यपि संयुगे ॥ शरीरैर्भिन्नवर्जङ्गा युधि प्रसीगवान्वयाः ॥ निपेतुर्योधमुख्यास्तु रुधिरोक्षितवृक्षतः ॥ ९५ ॥ पातितैर्निष्पताद्भिश्च पात्यमानैश्च संयुगे ॥ बभ्रुव भूः समाकीर्णा योधैरुद्धतजीवितैः ॥ ९६ ॥ अगृह्णन्त शरान्चोरांस्ते च संदधतोरस्तयोः ॥ अन्तरं ददृशे कश्चित्प्रयतादपि संयुगे ॥ ९७ ॥ लघुत्वाच्च महाबाहु युद्धशौण्डौ महावज्रो ॥ मण्डलीभूतधनुषौ सकृदेव बभ्रुवतुः ॥ ९८ ॥ प्रह्लादस्य च बाणैर्दुद्रावान्तकवाहिनी ॥ उद्यमाना बलवता वायुनेत्राभ्रमण्डलम् ॥ ९९ ॥ हतदर्पं तु विज्ञाय प्रह्लादः कालमाहवे ॥ अपयातं च समरे द्विषन्तं संप्रतर्क्य तम् ॥ १०० ॥ मत्वा वशगतं चैव प्रह्लादो युद्धपुरंदरः ॥ तत्रैशान्यां चमूं भूयः संमर्दं महासुरः ॥ १०१ ॥

गिरने गिरानेवालोंके गिरने गिरानेसे उन प्राणरहितोंसे पृथ्वी समाकीर्ण हो गई ॥ ९६ ॥ कोईती उस समय उन दोनोंका यह अन्तर नहीं देख सका; कि वे कब धनुष चढाते और बाण छोडते हैं ॥ ९७ ॥ शीघ्रानेसे दोनों महाबाहु महाबलवाले मंडलीभूत धनुषोंको धारण करे एकसेही दीखने लगे ॥ ९८ ॥ प्रह्लादके बाणोंके समूहसे कालकी सेना कटती हुई भागने लगी जैसे वायुसे भेवसमूह भागते हैं ॥ ९९ ॥ तब प्रह्लादने कालको हतदर्प जानकर कि अब समरसे भागा चाहता है और द्वेषयुक्त है ऐसा उसको विचार कर ॥ १०० ॥ अपने वशमें जानकर युद्धमें दुर्मंद प्रह्लाद धर्मराजकी सेनाको फिर

मर्दन करने लगा ॥ १ ॥ काल और प्रहादका परस्पर ऐसा युद्ध होने लगा कि न कभी पहले हुआ और न कभी अगाड़ी होगा ॥ २ ॥ अद्भुतवीर्यवाला
महारणमें प्रहार करनेवाला प्रहाद वृद्धिको प्राप्त हुआ; और काल युद्धसे चला गया ॥ ३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने
देवासुरयुद्धे एकोनषष्टितमोऽध्यायः ॥ ५९ ॥ वैशम्पायन कहने लगे; प्रहादका छोटा भाता अनुहाद अपनी सेनाको ले यशोंकी सेनाको क्षोभित करता
हुआ कुबेरके संग युद्ध करने लगा ॥ १ ॥ अर्थात् बहुतसी सेनाको ले अति प्रतापवाला धनाध्यक्ष कुबेरको पीड़ित करने लगा ॥ २ ॥ और यशोंको

कालप्रहादयोर्युद्धमभवद्यादृशं पुरा ॥ तादृशं सर्वलोकेषु न भूतं न भविष्यति ॥ २ ॥ एवमद्भुतवीर्यौजा महारणकृतत्रणः ॥ प्रहा-
दस्त्वथ वृद्धोऽत्र कालस्त्वपसृतो रणात् ॥ १०३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कालप्रहादयुद्धे एकोनषष्टि-
तमोऽध्यायः ॥ ५९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ धनाध्यक्षमनुहादः प्रहादस्यानुजो बली ॥ ससैन्यं योधयामास क्षोभयन्पुत्राहि-
नीम् ॥ १ ॥ महता च बलौघेन त्वनुहादोऽसुतोत्तमः ॥ अर्दयामास संकुद्रो धनाध्यक्षं प्रतापवान् ॥ २ ॥ अमृष्यमाणास्त्रिदशानाह-
वस्थानुदायुधान ॥ चकार कदनं चोरं धनुष्पाणिर्महासुरः ॥ ३ ॥ आवर्त इव संजज्ञे बलस्य महतो महान् ॥ क्षुभितस्याग्नेरस्य
सागरस्येव संप्लवः ॥ ४ ॥ त्रिदशानां शरीरेस्तु दानवानां च मेदिनी ॥ बभूव निचिता चौरैः पर्वतैरिव संप्लवे ॥ ५ ॥ मेखप्लवः तु
रक्तेन रञ्जितं संप्रकाशते ॥ सर्वतो माधवे मासि पुष्पितैरिव किंशुकैः ॥ ६ ॥ हनेरैरैर्गजैरश्वैः प्रावर्तत महानदी ॥ शोणितोवा महा-
चोरा यमराष्ट्रविवर्द्धिनी ॥ ७ ॥ शक्रन्मेदोमहापङ्का संप्रकीर्णान्त्रिशैवला ॥ छिन्नह्रायशिरोमीना अङ्गावयवशाङ्कला ॥ ८ ॥

धारण करनेवाले और युद्धमें स्थित देवताओंको नहीं सहता हुआ अनुहाद दैत्य धनुषको हाथमें लेकर देवताओंकी सेनाको काटने लगा ॥ ३ ॥
उस समय सेनाका बड़ा घमसान हुआ; जैसे प्रलयमें सागर क्षुभित हो जाता है ॥ ४ ॥ तब देवते और दैत्योंके शरीरोंसे पृथ्वी पर्वतोंकी समान व्याप्त
हो गई ॥ ५ ॥ और मेखपर्वतका पृष्ठभाग लोहसे रंगा हुआ प्रकाशित होने लगा जैसे वैशाखमें देसूके फूलोंसे चारों ओर प्रकाश होता है ॥ ६ ॥
तब मरेहुए वीर हाथी और घोड़ोंसे व्याप्त महाघोर यमराष्ट्रकी नदी प्रवृत्त हुई ॥ ७ ॥ विष्टा और मेदक्ष्य कीचवाली और आंतरुगी शैवालसे युक्त

छिन्नकायावाले शिररूप मछलियोंसे व्याप्त अंगके अवयवरूप शङ्खलसे पूर्ण ॥ ८ ॥ कंक सारस आदि पक्षियोंसे शब्दित वसाख्य ज्ञागोंसे आकीर्ण और मेघोंके समान शब्द करनेवाली ॥ ९ ॥ कायर पुरुषोंको दुष्प्रकार लोहकी नदी गरभीके अवसानमें हंससमूहसे युक्त दीखने लगी ॥ १० ॥ उस नदीको दैत्य और देवते तिरने लगे, जैसे पद्मरजसे ध्वस्त हुई कमलिनीको हाथी तरते हैं ॥ ११ ॥ पीछे बाणोंको छोड़नेवाले रथमें स्थित और यक्षोंकी सेनाको मारनेवाले अनुहादको देखकर ॥ १२ ॥ क्रोधको प्राप्त हो कुबेर दैत्योंकी सेनाको काटने लगा जैसे वायु आकाशसे मेघोंको भगाती है ॥ १३ ॥

गृध्रहंससमाकीर्णा केकिसारसनादिता ॥ वसाफेनसमाकीर्णा प्रोत्कृष्टस्तनितस्वरा ॥ ९ ॥ तां कापुरुषदुस्तारा युद्धभूमौ महानदीम् ॥ नदीमिवातपापाये हंससंघोपशोभिताम् ॥ १० ॥ त्रिदशा दानवाश्चैव तेरुस्ते दुस्तरां नदीम् ॥ यथा पद्मरजोध्वस्तां नलिनीं गजयूथपाः ॥ ११ ॥ ततः सृजन्तं बाणौघाननुहादं रथे स्थितम् ॥ ददर्श तरसा देवो निघ्नन्तं यक्षवाहिनीम् ॥ १२ ॥ क्रुद्धस्ततो दैत्यबलं सूदयामास वित्तपः ॥ विशिपन्निव खे वायुर्महाभ्रपटलं बलात् ॥ १३ ॥ समीक्ष्य तुमुलं युद्धमनुहादश्च वीर्यवान् ॥ रथेनादित्यवर्णेन कुबेरमभिदुद्रुवे ॥ १४ ॥ स धनुर्धन्विनां श्रेष्ठो विकृष्य रणमूर्धानि ॥ उत्ससर्ज शितान्बाणान्वित्तेजस्य महात्मनः ॥ १५ ॥ कुबेरं प्राप्य ते बाणा निर्भिद्य सुसमाहिताः ॥ अपरानृष्टतो जघ्नुर्व्यासक्तान्यक्षराक्षसान् ॥ १६ ॥ देवः शरैरभिहतो निर्जितैर्ज्वलनोपमैः ॥ अनुहादं प्रत्युदियात्संकुद्धः परमाद्वे ॥ १७ ॥ ततो वैश्रवणो राजा क्रुद्धो यक्षगणैः सह ॥ ववर्ष शरवर्षाणि दानवं प्रति वीर्यवान् ॥ १८ ॥ तद्यथा शारदं वर्षं गोवृषः शीघ्रमागतम् ॥ अपारयन्वारयितुं प्रतिगृह्णन्निमीलितः ॥ १९ ॥

तब तिस उग्र युद्धको देख अनुहाद दैत्य आदित्य वर्णवाले रथमें स्थित हो कुबेरके सन्मुख चला ॥ १४ ॥ धनुषविद्यावालोंमें श्रेष्ठ अनुहाद युद्धमें धनुष खेंचकर पैने २ बाणोंकी वर्षा महात्मा कुबेरके ऊपर करने लगा ॥ १५ ॥ तब वे बाण कुबेरको वेधकर पृष्ठभागमें स्थित हुए यक्षराक्षसोंकोभी मारने लगे ॥ १६ ॥ अग्निके समान प्रकाशवाले और पैने बाणोंसे हत हुए कुबेरजी युद्धमें क्रोधको प्राप्त हो अनुहाद दैत्यके सन्मुख धावमान हुए ॥ १७ ॥ तब बहुतसी यक्षोंकी सेनासे युक्त अतिवीर्यवान् दानवपर कुबेर बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥ १८ ॥ पीछे जैसे शरदनुमें वर्षाकी बूंदोंको गाय और बेल

शिरपर सहते हैं तैसे वह अनुहाद दैत्य बाणोंकी वर्षाको नेत्र भीच सहन करने लगा ॥ १९ ॥ इस प्रकार वह महाभसुर कुबेरकी दारुण बाणवर्षाको सहसा नेत्र भीचकर सहन करने लगा ॥ २० ॥ तब बाणोंकी वर्षासे क्रोधको प्राप्त हुआ अनुहाद दैत्य अपने सन्मुख इन्द्रकी केतुके समान प्रकाश-वान् ॥ २१ ॥ बड़ी हुई शाखाओंवाले फलोंसे युक्त वृक्षको देख उसी समय उखाड़ हाथमें ग्रहण कर ॥ २२ ॥ महात्मा कुबेरके अतिवेगवाले घोड़ोंको मारता हुआ, तब अनुहादके इस महत् कर्मको देखकर सब महाभसुर ॥ २३ ॥ सिंहोंके समान शब्द करने लगे, पीछे अनुहाद और कुबे-

एवमेव कुबेरस्य शरवर्षं महासुरः ॥ निमीलिताक्षः सहसा दैत्यः संहति दारुणम् ॥ २० ॥ रोषितः शरवर्षेण धनदेन महासुरः ॥ इन्द्रके-
तुप्रतीकांशमभितोऽपश्यत् द्रुमम् ॥ २१ ॥ प्रवृद्धशाखाषिटपं तरुणाङ्गुरपल्लवम् ॥ उत्पात्य कुपितो दैत्यस्तरुं फलसमन्वितम् ॥ २२ ॥
निजघान हयाञ्छ्रेष्ठाङ्कुबेरस्य महात्मनः ॥ तस्य कर्म महाघोरं दृष्ट्वा सर्वे महासुराः ॥ २३ ॥ सिंहनादं नदन्ति स्म अनुहादप्रहर्षिताः ॥
तयोस्तु तुमुलं युद्धं संजज्ञे देवदैत्ययोः ॥ २४ ॥ ततस्तौ क्रोधरक्ताक्षावन्योन्यवधकाक्षिणौ ॥ अन्योन्यं विविधैः शस्त्रैर्घोरैर्जघ्नतु-
राद्वे ॥ २५ ॥ त्रिदशा दानवान्तसर्वे मथित्वा प्राणदंस्तदा ॥ दानवैस्त्रिदशाश्चापि क्रुद्धैर्भुवि निपातिताः ॥ २६ ॥ दानवास्तथ
संकुद्धास्त्रिदशान्निशितैः शरैः ॥ विव्यधुर्वज्रसंकाशैः कङ्कपत्रैरजिह्वगैः ॥ २७ ॥ विदार्यमाणा दैत्यौघैस्त्रिदशास्तु महाबलाः ॥ अमर्षि-
ततराश्चक्रुर्धुद्धकर्माण्यभीतवत् ॥ २८ ॥ ते गदाभिः सुभीमाभिः पट्टिशैः शूलमुद्गरैः ॥ परिघैश्च सुतीक्ष्णाग्नेर्दानवाः पीडिताः शरैः ॥ २९ ॥

रका दारुण युद्ध परस्पर होने लगा ॥ २४ ॥ तब क्रोधसे लालनेत्रोंवाले परस्पर मारनेकी इच्छावाले दोनों नानाप्रकारके घोरशस्त्रोंसे युद्धमें काटने लगे ॥ २५ ॥ बलवाले देवताओंने बहुतसे दैत्य मार दिये, और क्रोधको प्राप्त हुए दैत्योंने बहुतसे देवते पृथ्वीतलमें गेर दिये ॥ २६ ॥ क्रोधको प्राप्त हुए दैत्य अग्निके समान प्रकाशवाले और कंकणक्षीकी पांखोंसे संयुक्त रेढे नहीं चलनेवाले पैने बाणोंसे देवतोंको बाँधने लगे ॥ २७ ॥ तब दैत्योंके समूहसे कटते हुए देवता क्रोध कर भयमें रहित हो कर्म करने लगे ॥ २८ ॥ भयंकर गदा पट्टिश शूल मुद्गर तीक्ष्ण परिघ बाणोंसे दैत्योंको पीड़ा देने

लगे ॥ २९ ॥ बाणोंसे भिन्न शरीर छातीवाले शस्त्रोंसे पीडित हुए दैत्य पत्थर और वृक्षोंको ग्रहण कर ॥ ३० ॥ बारंबार वीर्यसे लाखों देवताओंको तर्जन कर सहस्रों लाखोंको मर्दन करने लगे ॥ ३१ ॥ तब बड़े २ पत्थर और बड़े २ वृक्षोंसे उनका घोर युद्ध होने लगा ॥ ३२ ॥ परिघ पट्टिश भिदिपाल फरसोंसे कितनोंके शिर काटे गये; और कितनोंके शरीर काटे गये ॥ ३३ ॥ और कितनेक मरके लोहूसे भगी हुए पृथ्वीमें गिरे, और कितनेक परस्पर भाजते हुए ॥ ३४ ॥ और कितनोंके हृदय कटते हुए; और कितनेक पैरोंके कट जानेसे पृथ्वीमें गिरे, कोई त्रिशूल लगनेसे प्राणरहित

शरनिर्भिन्नगात्राश्च खड्गविच्छिन्नवक्षसः ॥ जगृहुस्ते शिलाश्चैव द्रुमांश्चासुरसत्तमाः ॥ ३० ॥ ते भीमसंगा दितिजा नर्दमानाः पुनः पुनः ॥ ममन्थुस्त्रिदशान्वीर्याच्छतशोऽथ सहस्रशः ॥ ३१ ॥ ततस्तु तुमुलं युद्धं तेषां समभिवर्तत ॥ शिलाभिर्भिपुलाभिश्च शतशश्चैव पादपैः ॥ ३२ ॥ परिवैः पट्टिशैर्भल्लैर्भिण्डपालैः परश्वधैः ॥ केचिन्निर्कृत्तशिरसाः केचिच्च विदलीकृताः ॥ ३३ ॥ केचिद्विनिहता भूमौ रुधिरार्द्राः सुरासुराः ॥ केचिद्रणाजिरान्नष्टाः परस्परवधादिताः ॥ ३४ ॥ विभिन्नहृदयाः केचिच्छिन्नपादाश्च शेरते ॥ विदारितास्त्रिशूलैश्च केचित्तत्र गतासवः ॥ ३५ ॥ तत्सुभीमं महयुद्धं देवदानवसंकुलम् ॥ बभूव तुमुलं युद्धं शिलापादपसंकुलम् ॥ ३६ ॥ धनुर्ज्यातन्निमधुरं हिक्रातालसमन्वितम् ॥ आर्तस्तनितघोषाढ्यं युद्धं गान्धर्वमाबभौ ॥ ३७ ॥ कुबेरः स धनुष्पाणिर्दानवान् रणमूर्धनि ॥ दिशो विद्रावयामास संक्रुद्धः शस्त्रृष्टिभिः ॥ ३८ ॥ कुबेरेणादितं सैन्यं विद्रुतं प्रेक्ष्य दानवः ॥ अभ्यद्रवदनुहादः प्रगृह्य महतीं शिलाम् ॥ ३९ ॥ क्रोधाद्विगुणरक्ताक्षः पितृतुल्यपराक्रमः ॥ शिलां तां पातयामास कुबेरस्य रथोत्तमे ॥ ४० ॥

हुए ॥ ३५ ॥ इस प्रकार देवता और दैत्योंका शिलावृक्षोंसे महाघोर युद्ध हुआ ॥ ३६ ॥ तन्वीकी समान शब्दायमान धनुषकी ज्या हिचकीरूपी ताल आर्तस्वरसे वह युद्ध गान्धर्वकी समान शोभित हुआ ॥ ३७ ॥ तब कुबेर धनुषको धारण कर क्रोधको प्राप्त हो बाणोंकी वर्षासे दैत्योंको दिशाओंमें भगाने लगा ॥ ३८ ॥ तब कुबेरसे पीडित भागती हुई सेनाको देख अनुहाद एक बड़ी शिला ग्रहण कर ॥ ३९ ॥ क्रोधसे दुगुने लालनेत्र कर

और पिता हिरण्यकशिपुके समान पराक्रमीने उस शिलाको ग्रहण कर कुबेरके उत्तम रथपर फेंका ॥ ४० ॥ तब गदाको धारण करनेवाले कुबेर आती हुई शिलाको देख वेगसे रथसे कूद पृथ्वीमें प्राप्त हुए ॥ ४१ ॥ तब चक्र कूबर ध्वजा बोडे शरासन आदिसे संयुक्त रथको तोड़ वह शिला पृथ्वीमें गिरी ॥ ४२ ॥ इस प्रकार कुबेरके रथको तोड़ अनुहाद दैत्य वृक्षोंसे देवताओंकी सेनाको मारने लगा ॥ ४३ ॥ तब कटे हुए शिरोंवाले लोहसे भीजे हुए बहुतसे देवता पृथ्वीमें गिरे ॥ ४४ ॥ इस प्रकार देवताओंकी सेनाको काटकर पर्वतके बड़े शृंगोंको ग्रहण कर अनुहाद कुबेरके ऊपर

आपतन्तीं शिलां दृष्ट्वा गदापाणिर्धनाधिपः ॥ रथादाप्लुत्य वेगेन वसुधायां व्यतिष्ठत ॥ ४१ ॥ सचक्रकूबरहयं सध्वजं सशरासनम् ॥

भङ्गत्वा रथोत्तमं तस्य निपपात शिला भुवि ॥ ४२ ॥ विमथ्य तु कुबेरस्य प्रहादस्यानुजो रथम् ॥ शूराणां कदनं चक्रे सस्कन्ध-

विटपैर्द्रुमैः ॥ ४३ ॥ निर्भिन्नशिरसो भग्रास्त्रिदशाः शोणितोक्षिताः ॥ द्रुमप्रव्याथितांगाश्च निपेतुर्धरणीतले ॥ ४४ ॥ विद्राव्य

विपुलं सैन्यमनुहादो महासुरः ॥ गिरिशृंगं गृहीत्वा तु कुबेरमभिदुदुवे ॥ ४५ ॥ तमापतन्तं धनदो गदामुद्यम्य वीर्यवान् ॥ विन-

दित्वाह्वयामास दानवेन्द्रं महाबलम् ॥ ४६ ॥ तस्य दैत्यस्य संक्रुद्धो गदां तां बहुकण्टकाम् ॥ न्यपातयत वित्तेशो दानवस्योरसि

प्रभो ॥ ४७ ॥ दैत्यः संक्रोधताग्राक्षस्तं प्रहारमचिन्तयत् ॥ वित्तेशस्योपरि तदा गिरिशृङ्गमपातयत् ॥ ४८ ॥ स विह्वलित-

सर्वाङ्गो गिरिशृङ्गेण ताडितः ॥ पपात सहसा भूमौ विशीर्ण इव पर्वतः ॥ ४९ ॥ वित्तेशं विह्वलं दृष्ट्वा सर्वे ते यक्षराक्षसाः ॥ परिवार्य

महात्मानं ररक्षुर्भीमविक्रमाः ॥ ५० ॥ सुहृत् विह्वलो भूत्वा पुनर्विश्रवसः सुतः ॥ उपतस्थे च सहसा धनदः क्रोधमूर्च्छितः ॥ ५१ ॥

झपटा ॥ ४५ ॥ उस आते हुए दैत्योंको देख गदाको धारण कर कुबेरने उस दानवेन्द्रको बुलाया ॥ ४६ ॥ और क्रोधकर उस दैत्यकी बहुत कांटोंसे

युक्त गदाको कुबेरने दानवके ऊपर प्रहार किया ॥ ४७ ॥ दैत्यने क्रोधकर उस प्रहारको न विचारकर कुबेरके ऊपर गिरि शृंगका प्रहार किया ॥ ४८ ॥

तब पर्वतके शृंगसे ताडित और विह्वल हो पीले नेत्रोंवाले कुबेर पृथ्वीमें गिरे जैसे छिन्न पर्वत ॥ ४९ ॥ तब विह्वलरूप कुबेरको देख सब यक्ष और

राक्षस चारों तरफसे महात्माको घेर रक्षा करते हुए ॥ ५० ॥ दो घडीतक विह्वल रहकर विश्रवसके पुत्र वेगसे क्रोधकर उठे ॥ ५१ ॥

और त्रिलोकीको शब्दित करता हुआ 'कुबेर फिर शब्द करने लगा जिससे पर्वत कंपित होने लगे ॥ ५२ ॥ उस कुबेरके फिर उठनेसे और अपनी ओर आया देख अवध्यरूप जानकर दानव पलायन कर गये ॥ ५३ ॥ तिन भागते हुए दैत्योंसे अनुहाद कहने लगा कि दर्पयुक्त कालनेमि सुनेमि महानेमि दैत्योंको ॥ ५४ ॥ अपनेको अपने वीर्यको और अपने कुलको भूलकर जयसे प्राकृत मनुष्योंकी समान कहां भागे जाते हो ॥ ५५ ॥ हे महावीर्यो ! कहां गमन करते हो लौट आओ, क्या प्राणोंकी रक्षा करते हो, यह कुबेर युद्धके अर्थ समर्थ नहीं

स ननाद महानादं त्रैलोक्यमभिनादयन् ॥ जनयन्निव निर्घोषं विधमन्निव पर्वतान् ॥ ५२ ॥ तमवध्यं तु विज्ञाय निहन्तुं पुनस्तथितम् ॥ प्रेक्ष्य पिङ्गाक्षमायान्तं दानवा विप्रदुद्रुवुः ॥ ५३ ॥ तांस्तु विद्रवतो दृष्ट्वा अनुहादो ह्यसुरो ब्रवीत् ॥ कालनेमिं दानवं च वीर्यदर्पसमन्वितम् ॥ ५४ ॥ आत्मानं चैव वीर्यं च विस्मृत्याभिजनं तथा ॥ क्व गच्छथ भयत्रस्ताः प्राकृता इव दानवाः ॥ ५५ ॥ निवर्तध्वं महावीर्याः किं प्राणान् परिरक्षथ ॥ नाहं युद्धाय यक्षोऽयं महतीयं विभीषिका ॥ ५६ ॥ एतां विभीषिकामद्य दानवानां समुत्थिताम् ॥ विक्रम्य विधमिष्यामि निवर्तध्वं महासुराः ॥ ५७ ॥ तेऽसुराः सन्निवृत्ताश्च समदा इव कुञ्जराः ॥ निजघ्नुः परमक्रुद्धा देवसेन्यं महासुराः ॥ ५८ ॥ क्षीणप्रहरणाः केचिन्महामेघनिभस्वनाः ॥ दूर्पोत्कटा भुजैरेव संप्रहारं प्रचक्रिरे ॥ ५९ ॥ प्रांशुभिश्चैव काष्ठैश्च शिलाभिश्च महाबलाः ॥ बाहुभिश्च तथान्योन्यमाक्षिपन्ति स्म वेगिताः ॥ ६० ॥ सुष्टिभिश्च तलैश्चैव नखपातेर्महाबलाः ॥ पादपैश्च महाशाखैर्युध्यन्त रणाजिरे ॥ ६१ ॥

हे ॥ ५६ ॥ और यह हमारी सेना बड़ी जय मानती है, अपने पराक्रमसे दानवोंको जयदायक इस महामयको विक्रम करके मारुंगा तुम सब चले आओ ॥ ५७ ॥ तब सब दैत्य उलटे फिरकर क्रोधको प्राप्त हो मतवाले हाथीकी समान देवताओंकी सेनाको मारने लगे ॥ ५८ ॥ और जब युद्धमें शस्त्र टूट गये तब गर्वके प्रतापसे भुजाओंके द्वारा प्रहारकर महामेघकी समान गर्जने लगे ॥ ५९ ॥ और कितनेक धूलि और कितनेक काष्ठोंसे और कितनेक हाथोंसे वेगसे मारने लगे ॥ ६० ॥ और कितनेक सुकों, कितनेक नखों और कितनेक महाशाखावाले वृक्षोंसे दैत्य और देवते युद्ध करने

लगे ॥ ६१ ॥ तब क्रोधको प्राप्त हुआ अनुहाद दैत्य देवताओंकी महासेनाको वनकी अग्निकी समान जलाने लगा ॥ ६२ ॥ तब लोहसे जीजे हुए बहुतसे योधा गिरने लगे और लाल फूलवाले वृक्षोंकी समान पृथ्वीमें गिरे ॥ ६३ ॥ कुबेरने क्रोधकर सर्पोंके समान बाणोंसे अनुहाद दैत्यको बाँधा, तब अनुहादके मुखसे बहुतसी अग्नि निकलने लगी ॥ ६४ ॥ पीछे अनुहाद दैत्य कुबेरको सहस्रों बाणोंसे क्रोधकर कालके समान बाँधने लगा ॥ ६५ ॥ तब बाणोंसे बाँधे हुए और चारों तरफसे लोहसे जीजे हुए कुबेरके शरीरसे बहुतसा लोह पर्वतके झरनेकी समान झरने लगा ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ तब

अनुहादस्तु संक्रुद्धो देवतानां महाचमूम् ॥ ममन्थ परमायत्तो वनान्यग्निरिवोत्थितः ॥ ६२ ॥ रुधिराद्रास्तु बहवः शरैरेते योधसत्तमाः ॥ विकृताः पतिता भूमौ ताम्रपुष्पा इव द्रुमाः ॥ ६३ ॥ अनुहादश्च विक्रान्तो देवांस्त्वाशीविषोपमान् ॥ युध्यमानस्य समरे व्यसृजन्नि-
शिताञ्छरान् ॥ ६४ ॥ धनाधिपेन विद्वस्य अनुहादस्य संयुगे ॥ अङ्गारमिश्राः क्रुद्धस्य मुखान्निश्चेरुरर्चिषः ॥ ६५ ॥ अथ बाणसहस्रेण
वित्तेशं दानवोत्तमः ॥ विव्याध स शरैः क्रुद्धो दण्डपाणिरिवान्तकः ॥ ६६ ॥ कुबेरस्तु शरैर्भिन्नः समन्तात्क्षतजोक्षितः ॥ रुधिरं
परिसुम्नाव गिरिः प्रस्रवणेरिव ॥ ६७ ॥ लब्ध्वा स तु पुनः संज्ञां रोषरक्तेक्षणः सुरः ॥ गदामथ समासाद्य भीमां भीमपराक्रमः ॥ चिक्षेपं
दैत्यमुद्दिश्य बलात्क्रोधेन मूर्च्छितः ॥ ६८ ॥ आप्राप्तमन्तरे सोऽथ तां गदां गदयासुरः ॥ बभञ्ज विनदन् क्रुद्धस्तदाश्चर्यमभूत्तदा ॥ ६९ ॥
प्रगृह्य तु गदां भूयो ह्यभिदुद्राव दानवम् ॥ तमापतन्तं दृष्ट्वैव अनुहादो महाबलः ॥ ७० ॥ गिरिशृङ्गमिवोत्पाट्य कैलासाचलस-
न्निभम् ॥ धनाधिपं प्रदुद्राव व्यादितास्य इवान्तकः ॥ ७१ ॥

फिर संज्ञाको प्राप्त हो महापराक्रमी कुबेरने गदाको ग्रहण कर लाल आँखें कर बड़े क्रोधसे दैत्यके गदा मारी ॥ ६८ ॥ तब अनुहादने अपनी गदासे वह गदा मार्गमेंही तोड़ दी, और महाशब्द किया यह बड़ा आश्चर्य हुआ ॥ ६९ ॥ फिर दूसरी गदाको ग्रहण कर कुबेर दैत्यके सन्मुख जाने लगे महाबली अनुहाद उसे आता देख ॥ ७० ॥ तब कैलासपर्वतके समान कांतिवाले पर्वतके शृंगको ग्रहणकर अनुहाद कुबेरके सन्मुख मुख फैलाये कालकी समान

चला ॥ ७१ ॥ सम्पूर्ण देवताओंसे अजेय कालकी समान उसे आता देख कुबेर युद्ध छोड़ इन्द्रके निकट गये ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ इस प्रकार कुबेर उस महाकर्मको देख भयसे इन्द्रके समीप चला गया ॥ ७४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने देवासुरयुद्धे षष्ठितमोऽध्यायः ॥ ६० ॥ वैशंपायन बोले, दैत्योंका स्वामी विप्रचित्ति दैत्य प्रकाशरूप और सर्पोंके समान बाणोंसे अविनाशी वरुणको बंधने लगा ॥ १ ॥ तब दैत्यके बाणोंसे दग्ध होते हुए वरुणने युद्धमें कर्तव्यको नहीं जाना ॥ २ ॥ जैसे सर्वलोकके स्वामी विष्णुके अगाड़ी ब्रह्माजी स्थित

तमन्तकमिवायान्तमजेयं सकलैः सुरैः ॥ असन्तमिव तं दैत्यं त्रैलोक्यमखिलं रूपा ॥ ७२ ॥ तमालोक्य तथाभूतं धनाध्यक्षो रणं भयात् ॥ अपहाय ययौ तत्र यत्र शक्रः सुराधिपः ॥ ७३ ॥ तस्य चापि महत्कर्म दृष्ट्वा वित्तपतिस्तदा ॥ जगाम भयसंत्रस्तो यत्र देवः शचीपतिः ॥ ७४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे अनुवादकुबेरयुद्धवर्णनं नाम षष्ठितमोऽध्यायः ॥ ६० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ विप्रचित्तिस्तु वरुणं दैत्यानामादिरव्ययम् ॥ जघानेषुगणैः क्रुद्धो दीप्तैरिव महोरगेः ॥ १ ॥ स दह्यमानो दैत्येन दीप्तैः शरगभस्तिभिः ॥ नाभ्यजानत कर्तव्यं संग्रामे स जलेश्वरः ॥ २ ॥ सर्वलोकेभ्यस्स्येव परमेष्ठी प्रजापतिः ॥ न शक्नोत्यग्रतः स्थातुं विप्रचित्तेर्जलाधिपः ॥ ३ ॥ वज्रो नाम महाव्यूहो निर्भयः सर्वतोमुखः ॥ तं व्यूह्य प्रत्ययुध्यन्त दानवा देवान् हिनिम् ॥ ४ ॥ वह्निज्वालासमं तत्र रविमण्डलसन्निभम् ॥ मुखमाभाति दैत्यस्य विप्रचित्तेर्महात्मनः ॥ ५ ॥ वरुणस्तु महातेजा विप्रचित्तिं महासुरम् ॥ प्रदहन्निव तेजोभिर्जिगीषुः प्रत्यवैक्षत ॥ ६ ॥

होनेको समर्थ नहीं है, तैसै विप्रचित्ति दैत्यके सन्मुख वरुण स्थित होनेको समर्थ नहीं हुए ॥ ३ ॥ और वज्रनाम व्यूहको रचकर सब दैत्य देवताओंकी सेनाके संग युद्ध करने लगे ॥ ४ ॥ और अग्निकी लटाके समान प्रकाशित और सूर्यके मण्डलके समान तेजवान् विप्रचित्ति दैत्यका मुख उस समयमें हो गया ॥ ५ ॥ तब महातेजवाले वरुण विप्रचित्ति दैत्यको अपने नेत्रोंके तेजसे दग्ध करते

हुए, और जीतनेकी इच्छासे दैत्यके सन्मुख दीखने लगे ॥ ६ ॥ और मालाआदियोंसे भूषित केयूर अंगदवाले दैत्यने पांच अंगुलके अंतरसे युक्त और कैलासपर्वतके शिखरकी समान परिघ ग्रहण किया ॥ ७ ॥ जो सोनेकी डोरियोंसे बंधा हुआ धर्मराजके दंडके समान दैत्योंके भय दूर करनेवाला था ॥ ८ ॥ उस परिघशस्त्रको जो इन्द्रध्वजकी समान था क्रोधसे विप्रचित्ति दैत्य ग्रहण कर भ्रमाने लगा और मुख फैलाकर शब्द करने लगा ॥ ९ ॥ तब कंठमें स्थित धुकधुकी और भुजाओंमें स्थित बाजुओंसे और विचित्ररूप कुंडलों और विचित्र मालाओंसे ॥ १० ॥ इस प्रकार भूषण और तिस

स्रग्दाममालाभरणः केयूराङ्गदभूषणः ॥ जग्राह परिवं दैत्यः कैलासशिखरोपमम् ॥ ७ ॥ पिनद्धं काञ्चनैः पट्टैर्हैममालिनमायसम् ॥ यमदण्डोपमं घोरं दैत्यानां भयनाशनम् ॥ ८ ॥ भ्रामयामास संक्रुद्धो महाशक्रध्वजोपमम् ॥ विननाद विवृत्तास्यो विप्रचित्तिर्महासुरः ॥ ९ ॥ स कण्ठस्थेन निष्केण भुजस्थैरपि चाङ्गदैः ॥ कुण्डलाभ्यां विचित्राभ्यां भ्राजते काञ्चनस्रजा ॥ १० ॥ दानवो भूषणैर्भाति परिघेणायसेन च ॥ यथेन्द्रधनुषा मेघः सविद्युत्स्तनयित्तुमान् ॥ ११ ॥ प्रस्फुटपरिघास्त्रेण वातस्कन्धान्महास्वनः ॥ जन्वाल च सधूमार्चिः साङ्कर्षण इवानलः ॥ १२ ॥ विद्याधरगणैः सार्द्धं गन्धर्वनगरैरपि ॥ सह चैवामरावत्या सिद्धलोकैस्तथा सह ॥ १३ ॥ ग्रहनक्षत्ररचितं सार्कचन्द्रविभूषितम् ॥ दैत्येन्द्रपरिघोद्धतं भ्रमतीव नभस्तलम् ॥ १४ ॥ दुरासदः सुसंजज्ञो परिघाभरणक्षमः ॥ सुरेन्धनोऽसुरेन्द्राग्रियुगान्ताग्निरिवोत्थितः ॥ १५ ॥

लोहेके परिघसे विप्रचित्ति शोभित होने लगा जैसे इन्द्रके धनुष विजली और गर्जनसे मेघ शोभित हों ॥ ११ ॥ उस महापरिघास्त्रसे स्फुरायमान पवनकी समान महाशब्दायमान होता हुआ प्रलयाग्निकी समान क्रोधसे जल उठा ॥ १२ ॥ तब आकाशचारी विद्याधरोंके समूह गंधर्वनगर और अमरावती और सिद्धलोकोंके सहित ॥ १३ ॥ ग्रहनक्षत्रसे रचित सूर्य और चंद्रमासे विभूषित आकाश विप्रचित्तिसे परिघसे फेंकनेसे भ्रमने लगा ॥ १४ ॥ वह परिघ बड़ा दुरासद हो गया कोई उसको धारण न कर सका, देवतारूपी ईंधनको जलानेवाली असुरोंकी अग्नि कालाग्निकी समान स्थित हुई ॥ १५ ॥

तब वरुण और सब देवते भयसे वहां ठहरनेको समर्थ न हुए; तहां अकेला इन्द्रही निर्भय हो स्थित रहा सूर्यके समान तेजवाले घोर क्रूर दर्शन उस परि-
षको विप्रचित्ति दैत्यने ॥ १६ ॥ वरुणकी सेनापर फेंका, वह संग्राममें गिरकर महात्मा वरुणकी ॥ १७ ॥ एक लक्ष सेनाको नष्ट करता हुआ अर्थात्
देवतोंके शरीरोंके सहस्रों टुकड़े हो गये ॥ १८ ॥ और विशीर्यमाण हुए आकाशमें उल्काकी समान प्रकाशित हुए तब फिर घुमाकर वरुणपर फेंका ॥ १९ ॥
तब तिस प्रकारके पड़नेसे वरुणके शरीरसे वह टूट गया; और वरुणका शरीर क्षत विक्षत हो गया ॥ २० ॥ उसके लगनेसे वरुण चलायमान न हुआ.

त्रिदश। वरुणश्चैव न शेकुः स्पन्दितुं भयात् ॥ तत्रासीन्निर्भयस्त्वेकः कौशिको वासवः प्रभुः ॥ भास्करप्रतिमं घोरं परिघं रोद्रदर्श-
नम् ॥ १६ ॥ पातयामास सेनायां जलेशस्य स दानवः ॥ पतता तेन संग्रामे जलेशस्य महात्मनः ॥ १७ ॥ भूतानां शतसाहस्रं
परिघेण समाहतम् ॥ तेषां गात्राणि चासाद्य व्यशीर्यन्त सहस्रशः ॥ १८ ॥ विशीर्यमाणं विवभावुल्काशतमिवाम्बरे ॥ भूयश्चैनं
तदाभ्राम्य वरुणाय न्यपातयत् ॥ १९ ॥ पातयमाने तदा तस्मिञ्छरीरे वारुणे तदा ॥ स भिन्नः परिघो घोरो देवगात्रे व्यशीर्यत् ॥ २० ॥
शीर्यमाणस्य चूर्णानि खद्योता इव चाम्बरे ॥ स तु तेन प्रहारेण न चचाल जलाधिपः ॥ २१ ॥ परिघेण हतः संख्ये यथा वज्रहतोऽ-
चलः ॥ स्वसैन्येष्वपि भग्रेषु भिन्नदेहेषु चाहवे ॥ २२ ॥ मुहूर्त्तमभवत्क्षोभ्यनपाप्मपतिरमर्षणः ॥ सोऽमर्षं च समापन्नो वरुणोऽमित-
विक्रमः ॥ २३ ॥ सर्वसंहारमकरोत्स्वपक्षस्यारिमर्दनः ॥ स सागरैश्चतुर्भिश्च वृतो दीप्तैः पन्नगैः ॥ २४ ॥ शङ्खमुक्तामणिचितो
विभ्रत्तोयमयं वपुः ॥ पाण्डुरोद्भूतवसनो नानारत्नविभूषितः ॥ २५ ॥

जैसे भूमिकंपमें पर्वत ॥ २१ ॥ और वह युद्धमें परिघसे वज्रसे हत हुए पर्वतकी समान ताडित हुए तब संग्राममें अपनी सेनाको भिन्न देखकर ॥ २२ ॥
दो घड़ोतक अतिबलवान् वरुण क्रोधको प्राप्त हो महापराक्रमी जलपति ॥ २३ ॥ शत्रुओंका संहार करने लगे, और चार समुद्रोंसे परिवृत बहुतसे
प्रकाशवान् सपोंसे युक्त ॥ २४ ॥ शंख मोती मणिसे शोभित जलमय शरीरको धारण किये सफेद वस्त्रोंको धारण किये नानाप्रकारके रत्नोंसे जडित ॥ २५ ॥

बाजुबंधको धारण किये फांसियोंको लिये कछुवे और मच्छियोंसे युक्त वरुण क्रोधको प्राप्त हो अपनी सेनाको देख ॥ २६ ॥ कहने लगे कि हे देवताओ !
 दैत्योंको मारनेकी इच्छा करके युद्ध करो; और मैं इस विप्रचित्तिको मारुंगा. इस कारण भयको त्यागकर लडो ॥ २७ ॥ तब वे समुद्रमें वसनेवाले सब
 सर्प युद्धमें दैत्योंको मारने लगे और शब्द करने लगे ॥ २८ ॥ नालीक बाण गदा मूसलोंसे प्रसन्न हो वरुणकी सेना दैत्योंको काटने लगी ॥ २९ ॥ तब क्रोधको
 प्राप्त हो महाबली पराक्रमी विप्रचित्ति दैत्य सर्पोंके शरीरोंको धुनने लगा ॥ ३० ॥ गरुड अस्र तथा सर्पोंके खानेवाले गरुडोंसे समरमें वह दानवश्रेष्ठ सर्पोंको

वरुणः पाशधृक् श्रीमान्कूर्ममीनसमाकुलः ॥ वरुणस्तु तदा क्रुद्धस्तान्निरीक्ष्य स्वसैनिकान् ॥ २६ ॥ उवाच दृष्ट्वा युध्यध्वं दानवानां
 जिवांसया ॥ अहमेनं हनिष्यामि भयं मुक्त्वा तु युध्यत ॥ २७ ॥ ततस्ते पन्नगाः सर्वे महार्णवनलाश्रयाः ॥ जघ्नुर्दैत्यात्रणमुखे नदन्तो
 जयगृह्णिनः ॥ २८ ॥ ते तु नालीकनाराचैर्गदाभिर्मुशलेस्तथा ॥ अभ्यग्नन्दानवान् दृष्ट्वा मुदिता वरुणानुगाः ॥ २९ ॥ विप्रचित्तिस्तु
 संकुद्रो महाबलपराक्रमः ॥ पन्नगानां शरीराणि व्यधमयुद्धदुर्मदः ॥ ३० ॥ गारुडेनापि चास्त्रेण पन्नगान्दानवोत्तमः ॥ समरे घातयामास
 गरुडेः पन्नगाशनैः ॥ ३१ ॥ स शरैः सूर्यसंकाशैः शातकुम्भविभूषितैः ॥ पन्नगान्तसमरे वीरः प्रममाथ सुदुर्जयान् ॥ ३२ ॥ समरे भिन्न
 गात्रास्ते पन्नगाः शरपीडिताः ॥ पेतुर्मथितसर्वाङ्गा गजा इव महागजैः ॥ ३३ ॥ तपन्तं तमिवादित्यं दीप्तिर्गोणभस्तिभिः ॥ अभ्य-
 घावत संकुद्धः समरे वरुणः प्रभुः ॥ ३४ ॥ ततस्तु दानवास्तत्र भिन्नदेहाः सदस्रशः ॥ व्यथिता विद्रवन्ति स्म दिशो दश विचेतसः ॥ ३५ ॥

मारने लगा ॥ ३१ ॥ वे सुवर्णसे भूषित सूर्यकी समान प्रकाशमान बाणोंसे युद्धमें दुर्जय सर्पोंको मथन करने लगा ॥ ३२ ॥ तब बाणोंसे पीडित सर्पोंके
 मथित कटे हुए शरीरोंवाले सर्प पृथ्वीमें गिरने लगे; जैसे अतिबलवाले हाथियोंसे मथित हो अल्पबलवाले हाथी गिरते हैं ॥ ३३ ॥ पीछे दीप्तिरूप बाणोंको
 लिये क्रोधको प्राप्त हो वरुण सूर्यकी समान तपते हुए युद्धमें विप्रचित्तिके ऊपर चला ॥ ३४ ॥ तब वरुणके बाणोंसे कटे हुए सहस्रों दैत्य दशों दिशामें

अचेत हो भागने लगे ॥ ३५ ॥ इस प्रकार पराक्रमी वरुण इन्द्रके निमित्त युद्ध करता हुआ; और वरुणके युद्धमें शब्द करते हुए युद्ध करने लगे ॥ ३६ ॥ तब वरुणके सर्प समरमें उत्कंठ हो पत्थरोंसे और चुकोंसे विप्रचित्ति दैत्यको चारों तरफ मारने लगे ॥ ३७ ॥ तब अनेक प्रकारके शस्त्र और पत्थरोंसे महातेजस्वी विप्रचित्ति दैत्यभी वरुणकी सेनाको भागाने लगा ॥ ३८ ॥ तब अग्निके समान प्रकाशवाले शीघ्र चलनेवाले ऐसे बाणोंसे महावेगवाले वरुणके घोड़ोंको विप्रचित्ति दैत्यने बाँधा ॥ ३९ ॥ तिस कर्मसे विप्रचित्ति दैत्यका तेज ऐसे बढ़ता हुआ जैसे घृतकी आहुतास इन्द्रस्थार्थे पराक्रम्य वरुणस्त्यक्तजीवितः ॥ विनर्दमानो युयुधे समरे पाशभृद्रः ॥ ३६ ॥ वरुणः पन्नगाश्चैव मुष्टिभिः संमरोत्कटाः ॥ अभ्यवर्तन्त समरे विप्रचित्तिं महासुरम् ॥ ३७ ॥ ततोऽस्त्रैश्च शिलाभिश्च प्राहरत्स बभूवोत्कटः ॥ व्यपोहत महातेजा विप्रचित्ति-र्महासुरः ॥ ३८ ॥ ततः पावकसंकाशैः स मुक्तैः शीघ्रगामिभिः ॥ वरुणस्य महावेगान्बिभेद समरे हयान् ॥ ३९ ॥ कर्मणा तेन महता विप्रचित्तेर्महात्मनः ॥ अग्रेराज्याहुतस्येष तेजः समभिवर्धत ॥ ४० ॥ स शरैः सूर्यसंकाशैः सुमुक्तैः शीघ्रगामिभिः ॥ वारुणीं तां महासेनां निर्ममन्थ महाबलः ॥ ४१ ॥ क्षीणास्त्रां सायकाक्रान्तां शरजालेन मोहिताम् ॥ शूलशक्त्यष्टिभिर्नां च चकार रुधिरोक्षिताम् ॥ ४२ ॥ स शरैर्वह्निं संकाशैः सुमुक्तैर्नतपर्वभिः ॥ वरुणस्य महावेगात् बिभेद समरे हयान् ॥ ४३ ॥ अभिद्रुतोऽथ दैत्येन ससेन्यः सलिलाधिपः ॥ महेन्द्रं शरणं प्राप्तो विप्रचित्तेर्भयार्दितः ॥ ४४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामने विप्रचित्तियुद्धं नामैकषष्ठितमोऽध्यायः ॥ ६१ ॥

अग्निका तेज बढ़ता है ॥ ४० ॥ पीछे सूर्यकी समान प्रकाशवाले शीघ्रगामी बाणोंसे महाबली विप्रचित्ति दैत्य वरुणकी सब सेनाको मथने लगा ॥ ४१ ॥ तब क्षीणशस्त्रवाली बाणोंसे आक्रान्त और बाणोंके जालसे मोहित शूल शक्ति ऋष्टि इन्द्रोंसे कटी हुई लोहूसे भीजी हुई वरुणकी सेना हो गई ॥ ४२ ॥ अग्निकी समान प्रकाशमान छोड़े हुए श्रेष्ठ बाणोंसे बड़े वेगसे वरुणके घोड़ोंको मार डाला ॥ ४३ ॥ तब दैत्यसे भयमान अपनी सेनाके सहित वरुण भागकर इन्द्रकी शरणमें जाकर स्थित हुआ ॥ ४४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने देवासुरयुद्धे एकषष्ठितमोऽध्यायः ॥ ६१ ॥

वैशंपायन बोले, देवताओंके पराजयको देख ब्रह्मर्षियोंसे स्तुति किये देवताओंमें उत्तम अग्नि दैत्योंके मारनेको मन करते हुए ॥ १ ॥ अर्थात् स्वयंप्रभा नामवाली शांडिलीका पुत्र और हव्यको वहनेवाला और हिरण्यरूप वीर्यवान् पीले नेत्रोंवाले और देवदूत आहुतिको स्नानेवाले ॥ २ ॥ और लाल रंगवाले और लाल ग्रीवावाले, हर्ता, दाता, हवि और कवि पावक और विश्वभुक् देव इन नामोंवाले और सब देवताओंके सुख एक राजा ॥ ३ ॥ प्रभु, ब्रह्मात्मा, सुवर्चस सहस्रार्चि विभावसु कृष्णवर्त्मा चित्रभानु देवराट् ॥ ४ ॥ देवाग्रचित्र लोकसाक्षी ब्राह्मणके हाथकी आहुति

वैशम्पायन उवाच ॥ पराजयं तु देवानां दृष्ट्वाग्निर्देवसत्तमः ॥ चकार बुद्धिं दैत्यानां वधे ब्रह्मर्षिभिः स्तुतः ॥ १ ॥ स्वयंप्रभायाः शाण्डिल्या यः पुत्रो हव्यवाहनः ॥ हिरण्यरेताः पिङ्गक्षो देवदूतो हुताशनः ॥ २ ॥ रोहितो लोहितग्रीवो हर्ता दाता हविः कविः ॥ पावको विश्वभुग्देवः ॥ सर्वदेवाननः प्रभुः ॥ ३ ॥ सुब्रह्मात्मा सुवर्चस्कः सहस्रार्चिर्विभावसुः ॥ कृष्णवर्त्मा चित्रभानुर्देवानामपि देवराट् ॥ ४ ॥ लोकसाक्षी द्विजदुतः सदाचिष्मान्वषट्कृतः ॥ हव्यभक्षः शमीगर्भः स्वयोनिः सर्वकर्मकृत् ॥ ५ ॥ पावनः सर्वभूतानां त्रिदशानां तपोनिधिः ॥ शमनः सर्वपापानां लेलिहानस्तपोमयः ॥ ६ ॥ प्रदक्षिणावर्तशिखः शुचिरोमा मखाकृतिः ॥ हव्यभुक् भूत-भव्येशो यज्ञभागहरो हरिः ॥ ७ ॥ सोमपः सुमहातेजा भूतेशः सुमहातपाः ॥ अधृष्यः पावको भूतिभूतात्मा वै स्वधाधिपः ॥ ८ ॥ स्वाहापतिः सामगीतः सोमपूताशनोऽद्रिधृक् ॥ देवदेवो महाक्रोधो रुद्रात्मा ब्रह्मसंभवः ॥ ९ ॥ लोहिताश्वं वायुचक्रं रथमास्थाय भूतधृक् ॥ धूमकेतुर्धूमशिखो नीलवासाः सुरोत्तमः ॥ १० ॥

प्रेमसे ग्रहण करनेवाले अर्चिष्मान् वषट्कृत हव्यभक्ष शमीगर्भ स्वयोनि और सब कर्मोंको करनेवाला ॥ ५ ॥ और सब भूतोंको पवित्र करनेवाला और देवताओंकी तपकी खान और सबके पापोंको शान्त करनेवाला और लेलिहान और तपोमय ॥ ६ ॥ और प्रदक्षिणावर्त शिखा शुचिरोमा मखाकृति हव्यभुक् भूत भव्येश हव्यभागहर हरि ॥ ७ ॥ सोमप महातेजा भूतेश महातपस्वी सर्वभूतपात और अधृष्य और पावकभूती भूतात्मा स्वधाधिप ॥ ८ ॥ स्वाहापति सामगीत सोमपूताशन अर्चिधृक् देवदेव महाक्रोध रुद्रात्मा ब्रह्मसंभव ॥ ९ ॥ धूमकेतु धूमशिख सुरोत्तम नामोंवाला अग्नि लालबोडोंसे

जुता हुआ और वायुके समान पहियोंवाले रथमें नीले वस्त्रोंको पहनकर बैठा ॥ १० ॥ और दिव्य आग्नेय अस्त्रको ग्रहणकर अग्निदेव दैत्योंके सहस्र लाख अर्ब ॥ ११ ॥ सेनाको प्रलयकालकी अग्निके समान जलाने लगा; और सब प्राणियोंका प्राणरूप होकर देहमें पांच प्रकारसे स्थित होने-वाला ॥ १२ ॥ अग्निकी सारथी और मित्र प्रभु ईश्वर सब लोकोंका प्रसन्नजनरूप और युगान्तमें सबोंको नाशनवाला ॥ १३ ॥ जिसकी योनि सात स्वरोके द्वारा वाणीसे उच्चारित की जाती है; और आकाशमें रहनेवाला और दूर गमन करनेवाला और शब्दके उपजानेवाला ॥ १४ ॥ और कर्ता, विकर्ता, उद्यम्य दिवमाग्नेयं शस्त्रं देवो रणे महान् ॥ दानवानां सहस्राणि प्रयुतान्यनुशानि च ॥ ११ ॥ ददाह भगवान्वाहिः संक्रुद्धः प्रलये यथा ॥ प्राणो यः सर्वभूतानां देहे तिष्ठति पञ्चधा ॥ १२ ॥ यन्ता यश्च हुताशश्च सखा च प्रभुरीश्वरः ॥ प्रभञ्जनेयो लोकानां युगान्ते सर्व-नाशनः ॥ १३ ॥ सप्तस्वरगता यस्य योनिर्भीर्भिरुद्गीर्यते ॥ यो ह्याकाशमयो देशो दूरगः सर्वसंभवः ॥ १४ ॥ यश्च कर्ता विकर्ता च गतिर्गतिमतां प्रभुः ॥ वेदकर्ता समो लोके ब्रह्मणा यः सनातनः ॥ १५ ॥ अमूर्तिमन्तं यं प्रादुर्महाभूतं महत्तरम् ॥ सोऽग्निं समीरयामास शमीगर्भं समीरणः ॥ १६ ॥ त्रिदिशरोहिभिर्ज्वालैर्जृम्भमाणो दिशो दश ॥ दानवानामभावाय युगान्ताग्निरिवोत्थितः ॥ १७ ॥ मेदोमज्जामहापङ्कां केशशैवलशालिनीम् ॥ योधशीर्षोपलव्हां मृताद्विपतटोत्कटाम् ॥ १८ ॥ शोणितोदां रणे दृष्ट्वा संग्रामसरितं विभुः ॥ वाहिः प्रस्कन्दयामास दैत्यानां भयवर्द्धनः ॥ १९ ॥ ततोऽग्निर्दितिजान्तसर्वान्प्रहादप्रमुखांस्तथा ॥ पराजयानः स विभुः क्रोशमानो महामृधे ॥ २० ॥

और गतिवालोंकी गति और वेदकर्ता और ब्रह्माके समान लोकमें सनातन ॥ १५ ॥ जिसको मूर्तिसे रहित महाभूत कहते हैं वह वायु अग्निकी सहा-यता करता हुआ ॥ १६ ॥ स्वर्गको प्राप्त होनेवाली ज्वालाओंसे दशों दिशाओंमें जृम्भमाण अग्नि दैत्योंके नाशके अर्थ प्रलयकी अग्निके समान हो उठा ॥ १७ ॥ तब मेद मज्जारूप कीचड़वाली केशरूप हरियाई और काँइसे संयुक्त और योद्धाओंके शिररूप पत्थरोंसे संयुक्त और मरे हुए हाथीरूप तटसे संयुक्त ॥ १८ ॥ लोहकी बहती हुई नदीको देखकर दैत्योंको भय देनेवाला अग्निदेव बल करने लगा ॥ १९ ॥ तब प्रहाद औँदि सब दैत्योंको यह

अग्नि जीतने लगा; और युद्धमें महाशब्द करने लगा ॥ २० ॥ कितने एक दैत्य जलते हुए केशोंसे संयुक्त और कितने एक दैत्य जलते हुए सम्पूर्ण अंगोंसे संयुक्त होने लगे; और कितनेक दैत्योंके हाथ मुख जलने लगे ॥ २१ ॥ कितने एक दैत्योंकी जांघ जलने लगी, और कितने एक दैत्योंके छत्र ध्वजा रथ जलने लगे इस प्रकाशित हुए अग्निसे सब दैत्य दग्ध होने लगे ॥ २२ ॥ तब भयसे पीडित दैत्य सब प्रकारके शस्त्र ध्वजा रथादिको छोड़ अग्निसे पराजित हो दशों दिशाओंको भागने लगे ॥ २३ ॥ और युद्धमें प्रकाशमान अग्निको नहीं देखते हुए दानव दिशा आकाश पृथ्वी मेघ इन सबोंको जलते हुए

केचित्प्रदीप्तेर्भुकुटेः केचिद्दीप्तेः शिरोरुहेः ॥ केचित्प्रदीप्तवसनैः केचिद्दीप्तेर्भुजाननैः ॥ २१ ॥ केचित्प्रदीप्तेरुरुभिः केचिच्छत्रैर्ध्वजै रथैः ॥ असुरास्तत्र दृश्यन्ते प्रदीप्तेनाग्निना वृताः ॥ २२ ॥ त्यक्त्वायुधानि सर्वाणि सध्वजांश्च रथोत्तमान् ॥ प्रयान्ति समरे भीताः पावकेन पराजिताः ॥ २३ ॥ न च पश्यन्ति ते वह्निं प्रदीप्तध्वजिनीमुखे ॥ दिशः खं ग च मेघांश्च दीप्तान्पश्यन्ति दानवाः ॥ २४ ॥ ध्रुवः स्वयंभुवा सृष्टो युगान्तस्तोययोनिना ॥ इत्येवं दानवाः सर्वे मेनिरे त्रस्तचेतसः ॥ २५ ॥ मयश्च शम्बरश्चैव महामायाधरौ तदा ॥ पार्जन्यवारुणी माये सृजतां वारिविश्वरे ॥ २६ ॥ ताभ्यां वह्निः स मायाभ्यां सिच्यमानः समन्ततः ॥ तोयोवैः पर्वतनिभैर्मृद्रचिरभव-द्रणे ॥ २७ ॥ शाम्यमाने तु समरे पावके दैत्यनाशिनि ॥ बृहत्कीर्तिर्बृहत्तेजा वह्निमाह बृहस्पतिः ॥ २८ ॥ गुरुरुवाच ॥ हिरण्यरेतः सुमुख ज्वलनाह्वय सर्वभुक् ॥ सप्तजिह्वानन क्षाम लेलिहान महाबल ॥ २९ ॥

देखने लगे ॥ २४ ॥ तब सब दैत्य व्याकुल हो कहने लगे कि निश्चय ब्रह्माजीने यह युगान्त अग्नि रचा है ॥ २५ ॥ तब मय और शंबर महामायावाले दैत्य पानीको झिरानेवाली पार्जन्य और वारुणी नामोंवाली दो मायाओंको रचते हुए ॥ २६ ॥ तब तिन दोनों मायाओंके प्रतापसे पर्वतके समान पानीकी धारासे सिच्यमान हो अग्नि युद्धमें कोमलतेजवाला होने लगा ॥ २७ ॥ तब दैत्योंको नाशनेवाले युद्धमें कोमलतेज होनेवाले अग्निसे बड़ी कीर्तिवाले अतितेजस्वी बृहस्पतिजी कहने लगे ॥ २८ ॥ गुरु बोले, हे हिरण्यरेत ! हे सुशिख ! हे ज्वलन ! हे अक्षय ! हे सर्वभुक् ! हे सप्त-

जिह्व ! हे अनल ! हे क्षाम ! हे लेलिहान ! हे महाबल ! ॥ २९ ॥ हे विभो ! तेरा वायु आत्मा है घास तेरा शरीर है और जल तेरी योनि है और जलकी तू योनि है ॥ ३० ॥ हे महाभाग ! तेरी लटा ऊपरको व नीचेको व पार्श्वको व चारों तरफ विचरती हैं ॥ ३१ ॥ हे अग्ने ! सर्वरूप तूही है और तेरे विषय सब यह जगत् है और सर्वप्राणियोंको धारण करनेवाला तूही है ॥ ३२ ॥ और इस संसारको भरनेवाला भी तूही है; और परम हविरूप द्रव्य भी तूही है; और यज्ञोंमें तुझे ही सब कालमें संत पूजते हैं ॥ ३३ ॥ और तूही प्राणियोंके शरीरोंमें अन्नको खाता है, और जलको

आत्मा वायुस्तव विभो शरीरं सर्ववीरुधः ॥ योनिरापश्च ते प्राक्ता योनिस्त्वमासि चाम्भसः ॥ ३० ॥ ऊर्ध्वं चाधश्च गच्छन्ति संचरन्ति च पार्श्वतः ॥ अर्चिषस्ते महाभाग सर्वतः प्रभवन्ति च ॥ ३१ ॥ त्वमेवाग्ने सर्वमासि त्वयि सर्वमिदं जगत् ॥ त्वं धारयासि भूतानि भुवनं त्वं विभर्षि च ॥ ३२ ॥ त्वमग्ने हव्यवाडेकस्त्वमेव परमं हविः ॥ यजन्ति च सदा सन्तस्त्वामेव परमाध्वरे ॥ ३३ ॥ त्वमन्नं प्राणिनां भुङ्क्षे जग्धपीतासि त्वं प्रभो ॥ त्वयि प्रवृत्तो विजयस्त्वयि लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥ ३४ ॥ सर्वाल्लोकांस्त्रीनिमान् हव्यवाह प्राप्ते काले त्वं पचस्येव दीप्तः ॥ त्वमेवैकस्तपसे जातवेदो नान्यस्त्वत्तो विद्यते गोषु देव ॥ ३५ ॥ वृषाकपिः सिन्धुपतिस्त्वमग्ने महामखे-
ष्वग्रपहरस्त्वमेव ॥ विश्वस्य भूम्नस्त्वमसि प्रसूतिस्त्वं च प्रतिष्ठा भगवन् प्रजानाम् ॥ ३६ ॥ सृजस्यपो रश्मिभिर्जातवेदस्तथोषधीरो-
पधीनां रसांश्च ॥ विश्वं त्वमादाय युगान्तकाले स्रष्टा भवस्यानल सर्गकाले ॥ ३७ ॥

पीता है; और तेरेसे ही यह विजय प्रवृत्त हुआ है और तेरे विषे यह सब लोक प्रतिष्ठित हैं ॥ ३४ ॥ इन तीन लोकोंके रचनेके समयपै पकानेवाला तूही है, और तपके अर्थ जातवेद नामसे विख्यात भी तूही है; और तेरे सिवाय अन्नतत्ता कोई भी नहीं है ॥ ३५ ॥ तूही शिवरूप और तूही समुद्रोंका पति है और यज्ञोंमें अन्नभागको भी हरनेवाला तूही है; और तुझसे संसार उपजा है तेरे हीमें सम्पूर्ण संसार स्थित होता है ॥ ३६ ॥ हे अग्ने ! अपनी किरणोंसे जलको रचे है और औषधी भी तूही है और औषधियोंका रस भी तूही है और

प्रलयकालमें इस संसारको तूही ग्रहण करता है और उत्पत्तिकालमें तूही इस जगत्को रचनेवाला है ॥ ३७ ॥ हे अग्ने ! सब प्राणियोंकी योनि तूही वेदमें गाया गया है, सो देवताओंके कल्याणके अर्थ तैने बहुतसे दैत्योंका नाश किया है ॥ ३८ ॥ तू इस जलसे उपजा है सो यज्ञकी कांतिवाले पावक जलको प्राप्त हो क्यों शिथिल होता है ॥ ३९ ॥ हे देवसत्तम ! इन देवताओंको दैत्योंके भयसे रक्षा कर और हे युगांताप्त अर्थात् प्रलयकी अग्निके समान, हे दैत्योंका नाश करनेवाले, विश्वकर्म, सहस्रभुक्, पिंशाक्ष, लोहितग्रीव, कृष्णवर्त्म, हुताशन, हे अग्ने ! तूही रक्षा करनेके योग्य है ॥ ४० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां देवासुरयुद्धे द्विषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६२ ॥ वैशम्पायनजी बोले, बृहस्पतिजीके सत्यवचनको

त्वमग्ने सर्वभूतानां योनिर्वेदेषु गीयते ॥ त्वया देव हितार्थाय निहता दानवा रणे ॥ ३८ ॥ स्वयोनिस्ते महातेजस्तोयं मस्रशतार्चितम् ॥ तां स्वयोनिं समासाद्य किं विषीदसि पावक ॥ ३९ ॥ त्रायस्व समरे देवान्दैत्येभ्यः सुरसत्तम ॥ पिङ्गाक्ष लोहितग्रीव कृष्णवर्त्मन् हुताशन ॥ ४० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनेऽग्निस्तवो नाम द्विषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ बृहस्पतेस्तु वचनं श्रुत्वा सत्यं समीरितम् ॥ भूयः प्रजज्वाल रणे हविषेव महामखे ॥ १ ॥ हतास्तु माया दैत्यानां प्रदीप्तेनाग्निना रणे ॥ हतमाया हतबला बलिं ते समुपस्थिताः ॥ २ ॥ पराजितेषु दैत्येषु वह्निनाद्भुतकर्मणा ॥ प्रह्लादस्तूत्तरं वाक्यमाह दैत्यपतिं बलिम् ॥ ३ ॥ भवानग्निश्च वायुश्च भास्करः सलिलं शशी ॥ नक्षत्राणि दिशो व्योम भूश्च दानवसत्तम ॥ ४ ॥ भविष्यं चैव भूतं च भवच्चासुरसत्तम ॥ दत्तं चैतद्भगवता वरदेन स्वयंभुवा ॥ ५ ॥

सुनकर युद्धमें फिर अग्नि प्रज्वलित हुआ जैसे घृतसे यज्ञमें प्रज्वलित होता है ॥ १ ॥ तब अग्निने सब दैत्योंकी माया नाश कर दी, तब माया और सेनासे रहित बहुतसे दैत्य बलिराजाके पास प्राप्त हुए ॥ २ ॥ अद्भुतकर्मवाले अग्निने जब सब दैत्य जीत लिये तब प्रह्लाद दैत्योंका राजा राजा बलिसे कहने लगा ॥ ३ ॥ हे दैत्यसत्तम ! तूही अग्नि है तूही वायु है तूही सूर्य है, तूही जल है और तूही चंद्रमा है, और तूही नक्षत्ररूप है और तूही आकाशरूप है ॥ ४ ॥ तूही विशारूप है तूही पृथ्वीरूप है, तुमही भूत हो और तुमही वर्तमान हो. हे महाभाग ! ब्रह्माजीने तुम्हें वरदान दिया है ॥ ५ ॥

तिससे तुम इन्द्रपनेको और अमरपनेको और युद्धमें जीतकर ऐश्वर्यको और सबको वशमें करनेको और अपरिमित बलको तुम प्राप्त हुए हो ॥ ६ ॥
 हे दैत्यराज ! सब भूतोंका ईश्वर तुममेंही प्राप्त है; और सब कालमें प्रभुभी तुमही हो, और महायोगियोंके ईश्वरभी तुमही हो और युद्धमें शूरवीरभी तुमही हो ॥ ७ ॥ और सात्त्विक गुणभी तुमही हो, ऐसे तुम इन्द्र और सब देवताओंको जीतो ॥ ८ ॥ कारण कि ब्रह्माजीने जैसे कहा है. हे राजन् ! तैसेही होगा और अन्यथा नहीं होगा; तब प्रह्लादके वचनको सुन परमप्रसन्न हो बलिराज अपने रथपर चढ़ा ॥ ९ ॥ जहां इन्द्रका रथ खड़ा
 इन्द्रत्वं चामरत्वं च युद्धे चाप्यपराजयः ॥ ईशित्वं च वशित्वं च बलं चैवामितं शुभम् ॥ ६ ॥ सर्वभूतेश्वरत्वं च दैत्यराज सदा तव ॥
 महायोगीश्वरत्वं च शूरत्वं च महामृधे ॥ ७ ॥ अणिमा लघिमा चैव ये चान्ये सात्त्विका गुणाः ॥ तत्पराजित्य दैत्येन्द्र देवान्सर्वाश्च
 सानुगान् ॥ ८ ॥ यथोक्तं ब्रह्मणा राजंस्तत्तथा न तदन्यथा ॥ तस्य तद्वचनं श्रुत्वा प्रह्लादस्य महात्मनः ॥ बलिः परमसंहृष्टः प्राया-
 च्छक्ररथं प्रति ॥ ९ ॥ ततः प्रयान्तं त्रिदशेन्द्रसन्निधौ महासुरेन्द्रं बलिमुत्तमश्रियम् ॥ तमञ्जसा जग्मुरभिप्रदक्षिणं द्विजाश्च पुण्याः
 पशवश्च सत्तमाः ॥ १० ॥ महाजटाभारधरास्तपस्विनस्तदा तमाहुर्विधिमन्त्रमङ्गलैः ॥ अभिषुवन्तः कवयः स्वलंकृतं बलिं प्रयान्तं
 रणमूर्द्धनि स्थिताः ॥ ११ ॥ प्रतप्तजाग्बूनदचित्रभूषणैर्दिव्यैश्च रत्नैर्विविधैरलंकृतः ॥ विराजमानः परमेण वर्चसा रणे विभात्याग्नि-
 शिखेव दानवः ॥ १२ ॥ स वै तदा शत्रुबलार्दितं बलं बलिर्दृष्ट्वात्तमसत्त्वदीर्यवान् ॥ जलागमे श्रीमदिवाभ्रमण्डलं विशीर्यमाणं
 नभसीव वायुना ॥ १३ ॥

था तहां जाकर प्राप्त हुए; जब इन्द्रके समीपमें दैत्योंका इन्द्र और उत्तम शोभावाला बलिराजा गमन करने लगा तब बलिराजाकी मंगलरूप पक्षी और मंगलरूप पशु परिक्रमा करने लगे ॥ १० ॥ और गमन करनेके समय बड़ी जटाको धारण करनेवाले तपस्वी और कवि नानाप्रकारके मंगलरूप मंत्रोंसे बलिराजाकी स्तुति करने लगे ॥ ११ ॥ तपायमान सुवर्णके चित्रभूषण और नानाप्रकारके दिव्य रत्नसे अलंकृत और उत्तमतेजसे शोभित ऐसा बलि-
 राजा अग्निके समान प्रकाशित होने लगा ॥ १२ ॥ तब उत्तम वीर्य और पराक्रमवाले बलिराजाने शत्रुओंकी सेनासे पीड़ित अपनी सेनाको देखा; जैसे

वायुसे आकाशमें बादल नष्ट होते हैं ॥ १३ ॥ चारों ओरसे युद्धमें अग्निसे रक्षित देवताओंकी सेनाको देख बड़े उन्मत्त और शीघ्रतासे प्रहार होनेवाले पर्वसंधिमें समुद्रके वेगकी समान ॥ १४ ॥ शूल बरछी ऋष्टि गदा तलवार बाणोंको शत्रुओंकी सेनामें फेंकने लगा, और मदोन्मत्त हाथीकी तरह शब्द करने लगा, जैसे वर्षाके समयमें बादल शब्द करते हैं ॥ १५ ॥ पीछे दिव्य अस्त्ररूप धूमवाला और भुजाओंके वेगरूप बायुवाला महाबली पौरुष और पराक्रमरूप इन्धनयुक्त बली घोररूप अग्निके समान युद्धमें प्रकाशित हुआ, जैसे प्रजाको दग्ध करनेवाले कालाग्नि हो ॥ १६ ॥ इति श्रीमहाभारते

ततो ददृशोऽथ बलानि सर्वतो रणे प्रगुप्तानि द्रुताशनेन वै ॥ समुच्छ्रिताऽन्युग्रतराणि तत्र वै समुद्रवेगानिव पर्वसन्धिषु ॥ १४ ॥ सशूलशक्त्यृष्टिगदासिसायकान् क्षिपन् रिपूणां समरे महात्मनाम् ॥ ननाद सिंहर्षभमत्तनागवज्जलागमे तोयदवच्च वीर्यवान् ॥ १५ ॥ दिव्यास्त्रधूमः सुभुजोऽग्रवायुर्महाबलः पौरुषविक्रमेन्धनः ॥ प्रजा दिघक्षन्निव कालवह्निः सुघोररूपो विबभौ रणे बलिः ॥ १६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे त्रिषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ बलिना तु सुराः सर्वे वर्जयित्वा सुराधिपम् ॥ रणे शरशतोभिन्नाः ससैन्या वै पराजिताः ॥ १ ॥ विमुखा याति दैत्येन्द्रैर्वध्यमाना महाचमूः ॥ जितास्तु बलिना देवाः शक्रमाहुर्महाबलम् ॥ २ ॥ देवा ऊचुः ॥ भवानिन्द्रश्च धाता च लोकानां प्रभुरव्ययः ॥ त्वमप्रतिमकर्मा च तथेवानुपमद्युतिः ॥ ३ ॥ विद्रुतानीह सैन्यानि सहास्माभिः सुरेश्वर ॥ रथचक्रध्वजाक्षाणि विभिन्नानि महासुरैः ॥ ४ ॥

खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने देवासुरयुद्धे त्रिषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६३ ॥ वैशम्पायन बोले, तब बलिराजाने एक इन्द्रके विना सैकड़ों बाणोंसे सब देवते वींधे और सेनासहित जीत लिये ॥ १ ॥ तब दैत्योंसे मरते हुए और बलिके जीते हुए सब देवते महाबलवाले इन्द्रसे कहने लगे ॥ २ ॥ देवता बोले कि, हे इन्द्र ! तुमही हमारे इन्द्र हो और तुमही धाता हो और लोकोंके प्रभुभी तुमही हो ॥ ३ ॥ और तुमही अविनाशी हो और अप्रतिम कर्म करनेवालेभी तुमही हो और उत्तमकीर्तिवालेभी तुमही हो ॥ ४ ॥

सो हे देवताओंके ईश्वर ! सब देवताओंसहित सेना भागी जाती है और रथ हाथों घोड़े योधा सहस्रों प्यादे गदा मुशल पट्टिशोंसे सैकड़ों छिन्नभिन्न कर दिये हैं ॥ ५ ॥ बलिराजाने ऐसा भयानक रूप कर्म युद्धमें किया है; सो दैत्योंसे मरती हुई अपनी सेनाको अब क्यों त्यागते हैं ॥ ६ ॥ हे देवश्रेष्ठ ! हे शरण्य ! शरणको प्राप्त हुए देवताओंकी रक्षा करो, इन्द्र देवताओंके वचनको सुन ॥ ७ ॥ संवर्तक अग्निके समान क्रोधको प्राप्त हो सब दैत्योंको दग्ध करने लगा, अर्थात् सूर्यकी किरणोंके समान प्रकाशवाले मुकुटको धारण करनेवाले ॥ ८ ॥ और वैदूर्य रत्नके समान कांतिवाले और

रथहस्त्यश्वयोधाश्च पदाताश्च सहस्रशः ॥ भिन्नाश्विन्नाश्च शतशो गदामुशलपट्टिशैः ॥ ५ ॥ महाभैरवरूपं हि दैत्येन्द्रेण कृतं रणे ॥ किमुपेक्षसि दैत्येन्द्रेर्हन्यमानां महाचमूम् ॥ ६ ॥ त्रायस्व त्रिदशश्रेष्ठ शरण्यः शरणागतान् ॥ श्रुत्वा तु वचनं तेषां देवानाममराधिपः ॥ ७ ॥ संवर्ताग्निसमकुद्धः सर्वान्दहति दानवान् ॥ दिवाकरकराकारं किरीटं धारयन्प्रभुः ॥ ८ ॥ वैदूर्यवर्णसंकाशो नानारत्नचिताङ्गदः ॥ मयूररोमा रक्ताक्षः शतबाहुः सहस्रदृक् ॥ ९ ॥ हरिरेको हरिश्चमश्रुर्नानाकेतुर्महाबलः ॥ वज्रप्रहरणः श्रीमान्योगी शतशिरोधरः ॥ १० ॥ सधनुर्वद्धसन्नाहः शतादित्यसमप्रभः ॥ देवगन्धर्वयक्षोघैरनुयातः सहस्रशः ॥ ११ ॥ सामगैश्च जपैश्चापि स्तुयमानो महर्षिभिः ॥ शतपर्व महारौद्रं स्फोटनं सर्वतोमुखम् ॥ १२ ॥ प्रगृह्य रुचिरं वज्रं दीप्तं रौद्राट्टहासिनम् ॥ दैत्यानयोधयत्सर्वान्महेन्द्रः पाकशासनः ॥ १३ ॥

अनेक प्रकारके रत्नोंसे जटित बाजबंदको धारण करनेवाले और धूम्रनेत्रोंवाले और सौ बाहु और सहस्र नेत्रोंवाले ॥ ९ ॥ अकेले हरि डाढीवाले अनेक केतुध्वजावाले महाबली वज्रका प्रहार करनेवाले, योगी सौ शिरोको धारण करनेवाले ॥ १० ॥ धनुष कवचको धारण करनेवाले, सौ सूर्योंके समान तेजबोल देवते गन्धर्व यक्षोंके समूहसे परिवृत ॥ ११ ॥ सामवेदके गाने और जाप करनेवाले महर्षियोंसे स्तुति किये और सौ पर्वोंसे संयुक्त महारुद्र सब तर्फको मुखवाले ॥ १२ ॥ महाकांतिमान् रौद्र हासयुक्त वज्रको धारण करनेवाले पाकरिपु इन्द्र सब दैत्योंसे युद्ध करने लगे ॥ १३ ॥

सब भूतोंसे अदृश्य अदितिके प्रियपुत्र थे तैयार हुए बलि और इन्द्रका आपसमें उग्र युद्ध होने लगा ॥ १४ ॥ वह दोनोंका संग्राम बड़ा अद्भुत हुआ वह दोनों बड़े वीर मदसे उदग्र थे इस कारण बड़ा तुमुल संग्राम हुआ ॥ १५ ॥ तब प्रह्लाद दैत्यने सैकड़ों स्तुतिरूप जयके देनेवाले कर्मोंसे बलिराजाको प्रबोधित किया, तब वह अग्निके समान प्रकाशित हुए ॥ १६ ॥ इन्द्र और बलिराजाके लोमहर्षण युद्धको देख दैत्य और देवताओंका फिर युद्ध होने लगा ॥ १७ ॥ फिर अस्त्रोंसे इन्द्र बलिको बाँधने लगे, तब बलिराजाने शस्त्रोंके सौ सौ टुकड़े कर दिये ॥ १८ ॥ पीछे क्रोधको प्राप्त हो बली इन्द्रने

अधृष्यः सर्वभूतानामदित्या दयितः सुतः ॥ ततः प्रवृत्तः संग्रामो बलिवासवयोस्तदा ॥ १४ ॥ उभाभ्यां देवदैत्याभ्यामाचिरान्महद्-
द्भुतः ॥ अतिवीर्यबलोदग्रस्तुमुलो लोमहर्षणः ॥ १५ ॥ प्रह्लादेन स्तुतिशतैः कर्मभिर्जयसंमतैः ॥ प्रबोधितो दैत्यपतिरग्निरिद्ध इवा-
बभौ ॥ १६ ॥ सुरासुरेन्द्रयोर्दृष्ट्वा संग्रामं लोमहर्षणम् ॥ देवानां दानवानां च भूयो युद्धमभूत्तदा ॥ १७ ॥ ततोऽविध्यन्महेन्द्रस्तं
बलिमस्त्रैर्महाबलम् ॥ तान्यस्त्राणि महाबाहुश्चिच्छेद शतधा रणे ॥ १८ ॥ ततः क्रुद्धः पुनस्तत्र निजग्रे दानवं महत् ॥ आग्नेयमथ
शत्रुघ्नं चिक्षेपेन्द्रो महाबलः ॥ तं दृष्ट्वा खे समागच्छत्प्रलयानलसन्निभम् ॥ १९ ॥ पातयामास तच्चैद्रं वारुणास्त्रेण धीमता ॥ संक्रुद्धो
मघवा वज्रमगृह्णात्पर्वतोपयम् ॥ २० ॥ हंतुकामो रणश्लाघी बलिं दैत्याधिपं रणे ॥ ततः शुश्राव देवेन्द्रः कौशिको हरिवाहनः ॥ २१ ॥
अशरीरां शुभांवाणीं तस्मिन्महाति वेशसे ॥ निवर्तस्व महाबाहो सुराणां नन्दिवर्धन ॥ २२ ॥ पुरंदर सुरश्रेष्ठ न जेष्यासि रणे बलिम् ॥
तपसात्युत्तमो दैत्यो वरदानेन चाधिकः ॥ २३ ॥

द्वारारणरूप आग्नेयास्त्रको बलिके ऊपर छोड़ा, प्रलयकी अग्निके समान अस्त्रको आते हुए आकाशमें देख वारुणास्त्रने उसे बलिने मिरा दिया ॥ १९ ॥ फिर क्रोधको प्राप्त हो इन्द्रने बलिराजाके मारनेको पर्वतके समान वज्रको ग्रहण किया ॥ २० ॥ जब बलिके मारनेको वज्र उठाया तब हरिवाहन इन्द्रने आकाशवाणी सुनी ॥ २१ ॥ आकाशसे अशरीरिणी श्रुतवाणी कहने लगी, हे अदितिपुत्र ! युद्धसे निवृत्त हो ॥ २२ ॥ इस बलिराजाको युद्धमें तुम नहीं जीत सकोगे, कारण कि तपसे बलिराजा तुमसे उत्तम है, और ब्रह्माजीके वरदानसे ॥ २३ ॥

स्वयंभूके परितोषसे सत्य बोलनेसे और धर्मोंके करनेसे बलिराजा तुमसे अधिक है. हे देवेश ! सब देवताओंसहित तुम इसको नहीं जीत सकते ॥ २४ ॥ जो इसको जीतनेवाला सनातन है तिनको तुम श्रवण करो; जो ब्रह्माका सर्वस्व और देवताओंकी परम गति है ॥ २५ ॥ धर्मका परम रहस्य और परेसे परे श्रीमान् गतिरूप, व्यक्त और अव्यक्त महाभूत और भूत भविष्य वर्तमानक जाननेवाला ॥ २६ ॥ सहस्रों शिरो-वाला, सहस्र पैरोंवाला, सहस्रों नेत्रोंवाला शंख चक्र गदा पद्मको धारण करनेवाला पीछे वज्रोंको धारण करनेवाला और दैत्योंको मारनेवाला ॥ २७ ॥

स्वयंभूः परितोषाच्च सत्यधर्माच्च वासव ॥ नैष शक्यस्त्वया जेतुं त्रिदशैर्वा सुरेश्वर ॥ २४ ॥ यो ह्यस्य जेता भगवांस्तं शृणुष्व समाहितः ॥ ब्रह्मणः स हि सर्वस्वं देवानां चैव सा गतिः ॥ २५ ॥ परं रहस्यं धर्मस्य परस्य च परा गतिः ॥ परात्परतरः श्रीमान् परावरगतिः प्रभुः ॥ २६ ॥ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ शङ्खचक्रगदापाणिः पीतवासाः सुरारिहा ॥ २७ ॥ जेता जेयो जयः श्रीमान्सोऽस्य जेता भविष्यति ॥ श्रुत्वा दिव्यां तु मधुरां वाणीं तामशरीरिणीम् ॥ २८ ॥ अपयातो रणाच्छक्रः सार्द्धं सर्वैः सुरोत्तमैः ॥ अपयाते तु देवेन्द्रे कौशिके हरिवाहने ॥ २९ ॥ सिंहनादो महानासीद्दानवानां महामृधे ॥ ततः किलकिलाशब्दः क्ष्वेडितास्फोटितस्वनः ॥ ३० ॥ शंखानां निनदश्चात्र योधानां वलिगतस्वनः ॥ वादित्राणां च निर्घोषस्तुमुल्लूक्यभक्तदा ॥ ३१ ॥ जयशब्दरवाश्चैव देवानां तु पराजये ॥ ससैन्यो दैत्यराजस्तु स्तूयमानः सुहृद्गणैः ॥ बलीन्द्रो विबभौ दैत्यो हिरण्यकशिपु-र्यथा ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामने देवासुरसंग्रामो नाम चतुःषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥

और सबको जीतनेवाला और आप किसीसे जीतमें नहीं आनेवाला पुरुष इस बलिराजाको जीतेगा; तब ऐसी दिव्यरूप वाणीको सुनकर ॥ २८ ॥ सब देवताओंके सहित इन्द्र युद्धसे निवृत्त हो गया हरिवाहन इन्द्र जब चला गया ॥ २९ ॥ तब सब दैत्य युद्धमें उग्र सिंहनाद करने लगे; अर्थात् किलकिलशब्द और अपने २ भुजाओंको बजानेका शब्द ॥ ३० ॥ शंखोंके शब्द और योधाओंकी टढ़ी बोलीके शब्द और अनेक प्रकारके बाजोंके महाशब्द होने लगे ॥ ३१ ॥ पीछे देवताओंके हारनेमें जयजय शब्द करते हुए दैत्योंसे संयुक्त स्तुतिको प्राप्त हो बलिराजा अपने स्थानमें प्राप्त हुए; और हिरण्यकशिपु दैत्यके समान प्रकाशित होने लगे ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने देवासुरयुद्धे शका-

पयाने चतुःषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥ वैशंपायन बोले, जब देवता प्रयत्नसे रहित हो गये और त्रिलोकी दैत्योंसे रक्षित हुई और मय शंबर तथा बलवाले बलिकी जय हुई ॥ १ ॥ सब दिशा शुद्ध हो गई, और धर्म कर्म प्रवृत्त होने लगे, और अधर्मके मार्ग दूर होने लगे ॥ २ ॥ प्रह्लाद शंबर मय अनुह्लाद इन्होंसे चारों दिशा रक्षित होने लगी, और सब दैत्योंसे आकाशकी पालना होने लगी ॥ ३ ॥ और अपनी प्रकृतिमें लोक स्थित होने लगा और सन्मार्ग प्रवृत्त होने लगा ॥ ४ ॥ और सब पापोंका अभाव होने लगा और जावकी स्थिरता होने लगी और सिद्धोंका तप प्रवृत्त होने

वैशम्पायन उवाच ॥ निष्प्रयत्नेषु देवेषु त्रैलोक्ये दैत्यपालिते ॥ जये बलेर्बलवतो मयशम्बरयोस्तथा ॥ १ ॥ सुसाधु दिक्षु सर्वासु प्रवृत्ते धर्मकर्मणि ॥ अपवृत्ते चन्द्रमसि अयनस्थे दिवाकरे ॥ २ ॥ प्रह्लादशम्बरमयैरनुह्लादेन चैव हि ॥ दिक्षु सर्वासु गुप्तासु गगने दैत्यपालिते ॥ ३ ॥ दैत्येषु मखशोभाश्च स्वर्गार्थं दर्शयत्सु च ॥ प्रकृतिस्थे तदा लोके वर्तमाने च सत्पथे ॥ ४ ॥ अभावे सर्वपापानां भावे चैव तथा स्थिते ॥ भावे तपसि सिद्धानां सर्वत्राश्रमरक्षिषु ॥ ५ ॥ चतुष्पादे स्थिते धर्मे अधर्मे पादविग्रहे ॥ प्रजापालनयुक्तेषु भ्राजमानेषु राजसु ॥ ६ ॥ स्वधर्मसंप्रयुक्तेषु सर्वाश्रमनिवासिषु ॥ अभिषिक्तोऽसुरैः सर्वदैत्यराजो बलिस्तदा ॥ ७ ॥ हृष्टेष्वसुरसंघेषु नदत्सु मुदितेषु च ॥ अथाभ्युपगता लक्ष्मीर्बलिं पद्मासने स्थिता ॥ ८ ॥ पद्मोद्यतकरा देवी वरदाऽसुरमोहिनी ॥ श्रीरुवाच ॥ बले बलवतां श्रेष्ठ महाराज महाद्युते ॥ ९ ॥

लगा और पापकर्मवालोंका अभाव होने लगा ॥ ५ ॥ और चार पैरवाला धर्म स्थित होने लगा; और एक पैरवाला पाप स्थित होने लगा; और प्रजाकी पालना करनेमें युक्त राजा होने लगे ॥ ६ ॥ और सब आश्रमनिवासी अपने २ धर्मोंमें स्थित होने लगे ऐसे कालमें देवराज्यपै दैत्योंने बलिराजाका अभिषेक किया ॥ ७ ॥ असुरोंके प्रसन्न होकर शब्द करनेमें पद्मासनमें स्थित और पद्मोंको हाथमें धारण करनेवाली लक्ष्मी देवी ॥ ८ ॥ और वरके देगेवाली और शूरवीरको सेवनेवाली लक्ष्मी बलिराजाको प्राप्त होकर कहने लगी. श्री बोली; हे बलवालोंमें श्रेष्ठ ! महाकान्तिमान् दैत्यराज ॥ ९ ॥

देवताओंके पराजयसे मैं तुमपर प्रसन्न हुई हूं तुम्हारा मंगल प्राप्त होगा; तुमने अपने बलमें युद्धमें इन्द्रको जीत लिया ॥ १० ॥ तब तुम्हारे उच्चम बलको देखकर मैं तुम्हारे पास आपही प्राप्त हुई हूँ. हे दैत्यश्रेष्ठ ! हिरण्यकशिपुके कुलमें उपजे हुए तेरे ऐसे कर्मोंमें आश्चर्य नहीं ॥ ११ ॥ सुरेंद्रको जय करनेवाला तुम्हारा कर्म है. हे राजन् ! तुम्हारे पितामह हिरण्यकशिपुने ॥ १२ ॥ यह संपूर्ण त्रिलोकी भोगी है. परन्तु तिससे तुम धर्ममार्गमें विशेष हो ॥ १३ ॥ इस कारण तुमही इस त्रिलोकीको भोगोगे, ऐसे कह वर देनेवाली और सौम्य लक्ष्मी बलि राजाके शरीरमें प्रविष्ट हुई ॥ १४ ॥

प्रीतास्मि तव भद्रं ते देवतानां पराजये ॥ यस्त्वया युधि विक्रम्य देवराजः पराजितः ॥ १० ॥ दृष्ट्वा ते परमं सत्त्वं ततोऽहं स्वयमागता ॥ नाश्चर्यं दानवश्रेष्ठ हिरण्यकशिपोः कुले ॥ ११ ॥ प्रसूतस्यासुरेन्द्रस्य तव कर्मेदमहिमम् ॥ विशेषतस्त्वया राजन्दैत्येन्द्रः प्रपितामहः ॥ १२ ॥ येन भुक्तं हि निखिलं त्रैलोक्यमिदमव्ययम् ॥ विशेषतस्तव विभो सर्वे धर्मपथे स्थिताः ॥ १३ ॥ तेन त्रैलोक्यमुख्येन भोक्ष्यस्यमितविक्रम ॥ एवमुक्त्वा तु सा देवी लक्ष्मीर्दैत्यपतिं बलिम् ॥ १४ ॥ प्रविष्टा वरदा सौम्या सर्वभूतमनोरमा ॥ शिष्टाश्च देव्यः प्रवरा ह्यीः कीर्तिद्युतिरेव च ॥ १५ ॥ प्रभा धृतिः क्षमा भूतिर्नीतिर्विद्या दया स्मृतिः ॥ स्मृतिर्लज्जा तथा मेधा लक्ष्मीरीहा गतिस्तथा ॥ १६ ॥ श्रुतिः प्रीतिरिला कीर्तिः शान्तिः पुष्टिः क्रियास्तथा ॥ सर्वाश्चाप्सरसो दिव्या नृत्यगीतविशारदाः ॥ १७ ॥ पतिं प्राप्ताः सुदैतेयं त्रैलोक्ये सवराचरे ॥ प्राप्तमैश्वर्यममितं बलिना ब्रह्मवादिना ॥ १८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे पञ्चषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६५ ॥

जब वह सौम्या सब प्राणियोंका जो मनोहर रूप उसमें प्रविष्ट हुई, तब शेष देवी और ही कीर्ति द्युति ॥ १५ ॥ प्रभा धृति क्षमा भूति नीति दया मति स्मृति मेधा पुष्टि मुक्ति ॥ १६ ॥ श्रुति प्रीति इला कीर्ति शान्ति पुष्टि यह सब और दिव्य अप्सरा नृत्य और गीतमें कुशल ॥ १७ ॥ अपने पति बलि राजाको प्राप्त हुई. इस प्रकार ब्रह्मवादी बलि राजाने दैत्योंके संग चराचर त्रिलोकीका ऐश्वर्य प्राप्त किया ॥ १८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे

भाविष्यपर्वणि भाषायां वामने देवासुरयुद्धे पंचषष्ठितमोऽध्यायः ॥ ६५ ॥ जनमेजय बोले, किं हे ब्राह्मणो ! दैत्योंसे पराजित हुए देवता क्या करने लगे ? और देवताओंने फिर स्वर्गलोक कैसे प्राप्त किया ॥ १ ॥ वैशम्पायनजी बोले, किं तिस आकाशवाणीको इन्द्र सुनकर देवताओंको संग ले अदितिके उत्तम स्थानमें प्राप्त होनेके लिये पूर्व दिशामें अदितिके स्थानमें गया ॥ २ ॥ पीछे अदितिके स्थानको प्राप्त हो जो युद्धमें आकाशवाणीके सुखसे सुना था, वह सब वृत्तान्त अदितिसे कहने लगा ॥ ३ ॥ तब अदिति कहने लगी कि, हे पुत्र ! जो ऐसा है तो तुमसे विरोचनका पुत्र बलिराजा युद्धमें नहीं

जनमेजय उवाच ॥ पराजिताः सुरा दैत्यैः किमकुर्वत वै मुने ॥ कथं च त्रिदिवं लब्धं भूयो देवैर्द्विजोत्तम ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ श्रुत्वा वाणीं तु तां दिव्यां सह देवैः सुराधिपः ॥ प्राग्दिशं प्रस्थितः श्रीमानदित्यालयमुत्तम ॥ २ ॥ प्राप्यादित्यालयं शक्रः कथयामास तां गिरम् ॥ अदित्यां सा यथा युद्धे तेन वाणी पुरा श्रुता ॥ ३ ॥ अदितिहवाच ॥ यद्येवं पुत्र युष्माभिर्न शक्यो हन्तुमाहवे ॥ बलिर्विरोचनसुतः सर्वैश्चैव मरुद्गणैः ॥ ४ ॥ सहस्रशिरसा हन्तुं केवलं शक्यतेऽसुरः ॥ तेनैकेन सहस्राक्ष न ह्यन्येन शतक्रतो ॥ ५ ॥ तद्वः पृच्छस्व पितरं कश्यपं सत्यवादिनम् ॥ पराजयार्थं दैत्यस्य बलेस्तस्य महात्मनः ॥ ६ ॥ ततोऽदित्या सह सुराः संप्राप्ताः कश्यपान्तिकम् ॥ अपश्यन्कश्यपं तत्र मुनिं दिव्यतपोनिधिम् ॥ ७ ॥ आद्यं देवं गुरुं दिव्यं क्लृप्तं त्रिषवणाम्बुभिः ॥ तेजसा भास्कराकारं गौरमग्निशिखाप्रभम् ॥ ८ ॥ न्यस्तदण्डं तपोयुक्तं बद्धकृष्णाजिनोत्तरम् ॥ वल्कलाजिनसंवीतं प्रदीप्तं ब्रह्मवर्चसा ॥ ९ ॥ हुताशमिव दीप्यन्तमाज्यमन्त्रपुरस्कृतम् ॥ स्वाध्यायनिरतं शान्तं वपुष्मन्तमिवानलम् ॥ १० ॥

मर सकता है ॥ ४ ॥ वह सहस्राक्ष सहस्र मस्तकवाले परमेश्वरके हाथसे निश्चय मरेगा अन्यसे नहीं ॥ ५ ॥ सो मैं महात्मा बलिराजाके पराजयके निमित्त ब्रह्मवादी कश्यपजी तुम्हारे पिताके समीप जाकर पूछती हूं ॥ ६ ॥ तब अदितिके सहित सम्पूर्ण देवता कश्यपजीके निकट प्राप्त हो दीप्त तपके निधि ॥ ७ ॥ आद्य और देवताओंके गुरु दिव्य तेजसे सूर्यके आकार और अधिकी शिखाके समान काण्तिवाले ॥ ८ ॥ और न्यस्तदंड तपसे युक्त कृष्णमृगछालाको कांधेपर धारण करनेवाले वृक्षके वल्कलोंको शरीरपर धारण करनेवाले और जटाके समूहसे भूषित ॥ ९ ॥ आज्य मंत्रपुरस्कृत रूप अधिकी

समान दीप्पमान और स्वाध्यायमें रत और साक्षात् अग्निके समान प्रकाशित ॥ १० ॥ ब्रह्मादियोंमें श्रेष्ठ देव व दैत्योंके गुरु और तमते हुए सूर्यकी समान तेजवाले मरीचि ऋषिके पुत्र ॥ ११ ॥ और सर्व प्राणियोंके रचनेवाले प्रजाके पति आत्मभावसे विशेष करके तांसे प्रजापति ॥ १२ ॥ कश्यपजीको देखते हुए पीछे अदिति सहित सब देवता प्रणाम कर अंजलि बांध वचन कहने लगे जैसे ब्रह्माजीसे ब्रह्माजीके पुत्र कहते हैं ॥ १३ ॥ और जो युद्धमें आकाशवाणीसे इन्द्रने श्रवण किया था कि सब देवताओंसे बलि दैत्य जीतनेमें नहीं आ सकता. यह सब वृत्तान्त कहते हुए ॥ १४ ॥ तब तिन पुत्रोंके वचनको

तं ब्रह्मादिनां श्रेष्ठं सुरासुरगुरुं प्रभुम् ॥ प्रतपन्तमिवादित्यं मारीचं दीप्ततेजसम् ॥ ११ ॥ यः स्रष्टा सर्वभूतानां प्रजानां पतिरुत्तमः ॥ आत्मभावविशेषेण तृतीयो यः प्रजापतिः ॥ १२ ॥ ततः प्रणम्य ते वीराः सहादित्याः सुरर्षभाः ॥ ऊचुः प्राञ्जलयः सर्वे ब्रह्माणमिव मानसाः ॥ १३ ॥ तच्छ्रुतं युधि शक्रेण सरस्वत्या समीरितम् ॥ अजेयस्त्रिदशैः सर्वैर्बलिर्दानवसत्तमः ॥ १४ ॥ श्रुत्वा तु वचनं तेषां पुत्राणां कश्यपस्तदा ॥ चकार गमने बुद्धिं ब्रह्मलोकाय लोककृत् ॥ १५ ॥ कश्यप उवाच ॥ गच्छाम ब्रह्मसदनं ब्रह्मचोषनिनादितम् ॥ यथाश्रुतं च तत्रैव ब्रह्मणे वदतानघाः ॥ १६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततोऽदित्या सह सुरा यान्तं कश्यपमन्वयुः ॥ प्रास्थितं ब्रह्मसदनं देवर्षिगणसेवितम् ॥ १७ ॥ ते मुहूर्तेन संप्राप्ता ब्रह्मलोकं दिवोकसः ॥ दिव्यैः कामगमैर्यानेर्महाहैः सुमनोहरैः ॥ १८ ॥ दिदृक्षवस्ते ब्रह्माणं तपसो राशिमव्ययम् ॥ अभ्यगच्छन्त विस्तीर्णा ब्रह्मणः परमां सभाम् ॥ १९ ॥ षट्पदोद्गीतनिनदां सामगीतविमिश्रिताम् ॥ श्रेयस्करीमामित्रर्षीं दृष्ट्वा संजहृषुर्मुदा ॥ २० ॥

सुनकर लोकोंके रचनेवाले कश्यपमुनि ब्रह्मलोकमें गमन करनेके लिये बुद्धि करने लगे ॥ १५ ॥ कश्यप मुनि कहने लगे, हे पुत्रो! ब्रह्मलोकमें हम सब चलेगे, सो जैसे तुमने आकाशवाणीसे सुना है वह सब ब्रह्माजीके सन्मुख वर्णन करना ॥ १६ ॥ वैशम्पायन बोले, देवर्षिगणोंसे सेवित ब्रह्मलोकको कश्यपजीके संग अदिति और संपूर्ण देवता गमन करने लगे ॥ १७ ॥ तब दिव्यरूप विमानमें बैठकर वे सब देवता एक मुहूर्तमें ब्रह्मलोकमें जाकर प्रात हुए ॥ १८ ॥ तब यथायोग्य तपकी राशि और अविनाशी ब्रह्माजीको देखनेके लिये बड़ी विस्तारवाली ब्रह्माजीकी सभामें गये ॥ १९ ॥ भौरोंके गानसे संयुक्त और सामवेदके

गानसे मिली हुई कल्याणको करनेवाली और शत्रुओंको नाशनेवाली ब्रह्माजीकी सभाको देखकर प्रसन्न हुए ॥ २० ॥ वेद और वेदाङ्गके पारको जानने-
वाले ऋच और बहुच यज्ञसंबंधी नामोंसे विख्यात ब्राह्मणोंके विस्तारित किये अक्षर ॥ २१ ॥ कर्मोंमें अनेक प्रकारकी वाणीको श्रवण करते और यज्ञ
वेदांग आदि कर्मको जाननेवाले तथा पदके क्रमको जाननेवाले ॥ २२ ॥ ब्राह्मणोंके शब्दसे शब्दित होते हुए और यज्ञकी स्तुतिको जाननेवाले और
शिक्षावाले ॥ २३ ॥ २४ ॥ और शब्दके यथार्थ अर्थको जाननेवाले और संपूर्ण विद्याओंमें कुशल और मीसांसारूप वाक्योंको जाननेवाले और सब

ब्राह्मणेश्व महाभागेर्वेदवेदाङ्गपारगेः ॥ ऋचो ब चमुख्यैश्च शिक्षाविद्भिस्तथा द्विजेः ॥ शब्दनिर्वचनार्थं च प्रेर्यमाणपदाक्षराः ॥ २१ ॥
शुश्रुवुस्तेऽमरव्याघ्रा विततेषु च कर्मसु ॥ यज्ञवेदाङ्गविदुषां पदक्रमविदां तथा ॥ २२ ॥ घोषेण परमर्षीणां सा बभूव निनादिता ॥
यज्ञसंस्तवाविद्भिश्च शिक्षाविद्भिस्तथा द्विजेः ॥ २३ ॥ शब्दनिर्वचनार्थज्ञैः सर्वविद्याविशारदैः ॥ मीमांसाहितवाक्यज्ञैः सर्ववादविशा-
रदैः ॥ २४ ॥ हृष्टपुष्टस्वरेस्तत्र द्विजेन्द्रेर्धल्लुवादिभिः ॥ नादितं ब्रह्मसदनं प्रवरं देवसन्नमत् ॥ २५ ॥ ते तत्र समनुप्राप्य शृण्वन्तो वे
ध्वनिं सुराः ॥ पृतान्यात्मशरीराणि मेनिरे तु न संशयः ॥ २६ ॥ तूर्णोभूता एकाचित्ता ब्रह्मण्यगतमानसाः ॥ विस्मयोत्फुल्लनयना
निरीक्षन्तः परस्परम् ॥ २७ ॥ नमस्कुर्वन्ति च पुनर्गुरुं लोकगुरुं प्रभुम् ॥ मनसैव सुरश्रेष्ठाः पुरस्कृत्य तु कश्यपम् ॥ २८ ॥ पुनः
संपूज्य परमं वेदोच्चारणनिःस्वनम् ॥ गम्भीरोदारमधुरं सुस्वरं हंसगद्गदम् ॥ २९ ॥ ऐक्यनानात्वसंयोगसमवायविशारदैः ॥ लोका-
यतिकमुख्यैश्च शुश्रुवुः स्वनमीरितम् ॥ ३० ॥

प्रकारके वेदोंके वादको जाननेवाले ॥ २५ ॥ हृष्ट पुष्ट स्वरवाले ब्राह्मणोंके शब्दोंसे शब्दित वह ब्रह्मलोक देवलोककी समान शब्दायमान हो रहा था ॥ २६ ॥
ऐसे उत्तम ब्रह्मलोकमें वेदोंकी ध्वनिको सुनते हुए सब देवता पहुँचे और सब देवता अपने अपने शरीरको पवित्र मानते हुए इसमें संशय नहीं ॥ २७ ॥
पीछे मौनको धारण करनेवाले और ब्रह्माजीमें मनको लगाये आश्चर्यसे फूले हुए नेत्रोंवाले देवता आपसमें देखने लगे ॥ २८ ॥ इसके उपरान्त मनसे
प्रसन्न हुए सब देवता कश्यपजीको आगे कर जनपदके स्वाधी ब्रह्माजीको प्रणाम करने लगे ॥ २९ ॥ ऐक्य और नानाप्रकार संयोग समवायके जाननेवाले

शास्त्राभिमानो देवताओंके अनेक प्रकारके शब्दोंको श्रवण करते हुए ॥ ३० ॥ जहां तहां ब्रह्मलोकमें उत्तम व्रतको धारण करनेवाले और जप होम आदि कर्मोंको करनेवाले ब्राह्मणोंको देखने लगे ॥ ३१ ॥ इस सभामें लोकके पितामह देवता और दैत्योंके गुरु और दिव्य मायासे सेवित विधिपूर्वक उपास्यमान थे ॥ ३२ ॥ तिस ब्रह्माजीको प्रजापति दक्ष प्रचेता पुलह मरीचि ब्राह्मण ॥ ३३ ॥ भृगु, अत्रि, वसिष्ठ, गौतम, नारद, मनु, आकाश, वायु, तेज, जल, पृथ्वी ॥ ३४ ॥ शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, प्रकृति, विकृति और सब प्रकारके पृथ्वीके कारण ॥ ३५ ॥ अंग उपांगोंसहित चारों वेद सब

तत्र तत्र च विप्रेन्द्रात्रियतान् संशितव्रतान् ॥ जपहोमपरान्मुख्यान्ददृशुः कश्यपात्मजाः ॥ ३१ ॥ तस्यां सभायामास्ते स्म ब्रह्मा लोकपितामहः ॥ सुरासुरगुरुः श्रीमान्विधिवद्देवमायया ॥ ३२ ॥ उपासते च तत्रैनं प्रजानां पतयः प्रभुम् ॥ दक्षः प्रचेताः पुलहो मरीचिश्च द्विजोत्तमः ॥ ३३ ॥ भृगुरत्रिर्वसिष्ठश्च गौतमो नारदस्तथा ॥ मनुर्द्यौरन्तरिक्षं च वायुस्तेजो जलं मही ॥ ३४ ॥ शब्दस्पर्शौ च रूपं च रसो गन्धस्तथैव च ॥ प्रकृतिश्च विकाराश्च यच्चान्यत्कारणं महत् ॥ ३५ ॥ साङ्गोपाङ्गाश्चतुर्वेदाः सरहस्यपदक्रमाः ॥ क्रियाश्च क्रतवश्चैव संकल्पः प्राण एव च ॥ ३६ ॥ एते चान्ये च बहवः स्वयंभुवमुपस्थिताः ॥ अर्थो धर्मश्च कामश्च द्वेषो दर्पश्च नित्यदा ॥ ३७ ॥ शक्रो बृहस्पतिश्चैव संवर्तो बुध एव च ॥ शनैश्चरोऽथ राहुश्च ग्रहाः सर्वे ह्यशेषतः ॥ ३८ ॥ मरुतो विश्वकर्मा च नक्षत्राणि च भारत ॥ दिवाकरश्च सोमश्च ब्रह्माणं समुपासते ॥ सावित्री दुर्गतरणी वाणी सप्तविधा तथा ॥ ३९ ॥ सर्वाणि श्रुतिशास्त्राणि गाथाश्च नियमास्तथा ॥ भाष्याणि सर्वशास्त्राणि देहवन्ति विशांपते ॥ क्षणा ल्वा मुहूर्ताश्च दिवा रात्रिश्च भारत ॥ ४० ॥

क्रिया, सब यज्ञ, संकल्प प्राण ॥ ३६ ॥ इसके अतिरिक्त औरभी स्वयंभूके निकट उपस्थित हुए अर्थ, धर्म, काम, द्वेष, दर्प ॥ ३७ ॥ शक्र, बृहस्पति, संवर्त, बुध, शनैश्चर, राहु, शेष रहे सब ग्रह ॥ ३८ ॥ मरुत, विश्वकर्मा, सब नक्षत्र, सूर्य, चंद्रमा, यह सब ब्रह्माजीकी उपासना करते हैं गायत्री, सात प्रकारकी वाणी ॥ ३९ ॥ सब स्मृति, शास्त्र, सब गाथा, सब निगम, देहवाले सब भाष्यरूप, शास्त्र, और क्षण, लव, मुहूर्त, दिन, रात्रि ॥ ४० ॥

पक्ष मास, ऋतु, संवत्सर, कृतयुग, त्रेतायुग, द्वापर, कलियुग, संध्या, महीना, रात ॥ ४१ ॥ दिव्य कालचक्र, ये सब और अन्यज्ञी दिव्य बहुतसे ब्रह्मा-
जीके समीपमें स्थित थे ॥ ४२ ॥ ऐसी दिव्यरूप और सब कामना देनेवाले ब्रह्मसन्नामें अपने धर्मात्मा पुत्र देवताओंसहित कश्यप ऋषि प्रविष्ट हुए ॥ ४३ ॥
वह सब प्रकारके तेजसे संयुक्त दिव्य और ब्रह्मर्षिगणोंसे सेवित ब्रह्माके योग्य लक्ष्मीसे प्रकाशित, चिन्ता और ग्लानिसे रहित ॥ ४४ ॥ और परम आस-
नपर स्थित ब्रह्माजीको देख शिरसे प्रणाम करने लगे ॥ ४५ ॥ अपने अपने शिरोंसे ब्रह्माजीके चरणोंका स्पर्श कर सब पापोंसे विमुक्त शान्तरूप कश्य-

अर्घमासाश्च मासाश्च ऋतवः षट् तथैव च ॥ संवत्सराश्चतुर्युगं मासा रात्रिश्चतुर्विधा ॥ ४१ ॥ कालचक्रं च यद्विव्यमानित्यं ध्रुव-
मव्ययम् ॥ एते चान्ये च बहवः स्वयंभुवमुपस्थिताः ॥ ४२ ॥ ते प्रविष्टाः सभां दिव्यां ब्रह्मणः सर्वकामदाम् ॥ कश्यपस्त्रिदशैः
सार्द्धं पुत्रैर्वर्मेविशारदैः ॥ ४३ ॥ सर्वतेजोमयीं दिव्यां ब्रह्मर्षिगणसेविताम् ॥ ब्राह्म्या श्रिया दीप्यमानमचिन्त्यं विगतकृमम् ॥ ४४ ॥
ब्रह्माणं वीक्ष्य ते सर्वे आसीनं परमासने ॥ जग्मुर्मूर्ध्ना शुभो पादौ ब्रह्मणस्ते दिवोकसः ॥ ४५ ॥ शिरोभिः स्पृश्य चरणौ तस्य ते
परमिष्ठिनः ॥ विमुक्ताः सर्वपापेभ्यः शान्ता विगतकल्मषाः ॥ ४६ ॥ दृष्ट्वा तु तान्सुरान्तसर्वान्कश्यपेन सहागतान् ॥ आह ब्रह्मा
महातेजा देवानां प्रभुरीश्वरः ॥ ४७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे षट्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६६ ॥
ब्रह्मोवाच ॥ यदर्थमिह संप्राप्ता भवन्तः सर्वे एव हि ॥ विजानाम्यहमव्यग्र एतत्सर्वं महाबलाः ॥ १ ॥ भविष्याति च वः सोऽर्थः
कांक्षितो यः सुरोत्तमाः ॥ बलेर्दानवमुख्यस्य यो विजेता भविष्याति ॥ २ ॥

पसहित सब देवता हो गये ॥ ४६ ॥ तब कश्यपके सहित सब देवताओंके आगमनको देख अति तेजवान् और सब देवताओंके ईश्वर ब्रह्माजी कहने
लगे ॥ ४७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामने ब्रह्मलोकगमने षट्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६६ ॥ ब्रह्माजी बोले, हे
देवताओ! जिस प्रयोजनके अर्थ तुम यहां आनकर प्राप्त हुए हो. हे महाबलवालो! तिस अर्थको मैं यथार्थ जानता हूं ॥ १ ॥ तुम्हारा वांछित मनोरथ
होगा, बलिदैत्यको जीतनेवाला उत्पन्न होगा ॥ २ ॥

सो सब दैत्योंकाही जीतनेवाला नहीं, किन्तु त्रिलोकीका जीतनेवाला और देवताओंमें श्रेष्ठ ॥ ३ ॥ और सब प्राणियोंको पालनेवाला, विश्वकी योनि, सनातन जिसके पूर्वदेहको हिरण्यगर्भ कहते हैं ॥ ४ ॥ और सबसे बड़ा और किसीकी जीतमें नहीं आनेवाला विभु ॥ ५ ॥ और अतिवीर्यवाले बलिराजाको और विश्वको जीतनेवाला ॥ ६ ॥ सबका उत्पत्तिकारण मुझसेभी पूर्व होनेवाला, इस जगत्की उत्पत्ति करनेवाला और अचिन्त्य और विश्वात्मा और योगयुक्त तपस्वी जिसको महाभाग देवताभी नहीं जान सकते कि कौन है. यह वेदात्मा विश्व और पुरुषोत्तम रूप है ॥ ७ ॥

न खल्वसुरसंधानामेको जेता स विश्वकृत् ॥ त्रैलोक्यस्यापि जेतासौ देवानामपि चोत्तमः ॥ ३ ॥ धाता चैव हि लोकानां विश्वयोनिः सनातनः ॥ पूर्वदेहं सदा प्राहुर्हमगर्भनिदर्शनम् ॥ ४ ॥ आत्मा देवेन विभुना कृतो जेयो महात्मना ॥ बलेरसुरमुखस्य विश्वस्य जगत्स्तथा ॥ ५ ॥ प्रभवः स हि सर्वेषामस्माकमपि पूर्वजः ॥ अचिन्त्यः स हि विश्वात्मा योगयुक्तः परंतपः ॥ ६ ॥ तं देवापि महात्मानं न विदुः कोऽप्यसाविति ॥ वेदात्मानं च विश्वं च स देवः पुरुषोत्तमः ॥ ७ ॥ तस्यैव तु प्रसादेन प्रवक्ष्येऽहं परां गतिम् ॥ यत्र योगं समास्थाय तपश्चरति दुश्चरम् ॥ ८ ॥ क्षीरोदस्योत्तरे कूले उदीच्यां दिशि देवताः ॥ अमृतं नाम परमं स्थानमाहुर्मनीषिणः ॥ भवन्तस्तत्र वै गत्वा तपसा संशितव्रताः ॥ ९ ॥ अमृतं स्थानमासाद्य तपश्चरत दुश्चरम् ॥ तत्र श्रोष्यथ विस्पष्टां स्निग्धगम्भीरानिःस्वनाम् ॥ १० ॥ उष्णगे तोयपूर्णस्य तोयदस्य समस्वनाम् ॥ युक्ताक्षरपदस्निग्धां रम्यामभयदां शिवाम् ॥ ११ ॥

तिसके प्रसादसे परमगतिको मैं कहता हूं. जिससे योगको प्राप्त हो दुश्चर तप किया जाता है ॥ ८ ॥ क्षीर सागरके उत्तर कूलपै उत्तर दिशामें अमृत-नामसे विख्यात जिस देवका स्थान है वहां तुम सब व्रतधारी जाके ॥ ९ ॥ अमृतस्थानमें प्राप्त हो घोर तप करो, वहां तुम विस्पष्ट स्निग्ध और गम्भीर शब्दवाली ॥ १० ॥ और गरमीमें समुद्रकी समान गर्जनेवाली दिव्य, स्पष्ट अक्षर और पदोंसे युक्त रमणीय अक्षरकी देनेवाली और पवित्र ॥ ११ ॥

और सत्य और परम संस्कारों युक्त दिव्य और सब पापोंको नाशनेवाली वरदायक ॥ १२ ॥ साक्षात् अवतार लेनेवाला देवादिदेव ईश्वरकी कही हुई वाणीको तप व्रतके अन्तमें तुम अवण करोगे ॥ १३ ॥ उन विश्वके देव महात्माकी यह अमोघ वाणी होगी कि हे देवताओ ! तुम्हारा आगमन मेरे निकट सफल है ॥ १४ ॥ सो मैं किसके अर्थ किस वरको दूं ? और वरको देनेवाला मैं स्थित हूं, तब अदिति और कश्यप देवसे यह वर मांगें ॥ १५ ॥ उनके चरणोंमें शिरसे प्राणम करके कहें, हे देव योगात्मा ! तुम साक्षात् हमारे पुत्र हो जाओ इसमें संदेह न हो ॥ १६ ॥ तब वह देव यही वरदान

वाणी परमसंस्कारों वरदां ब्रह्मवादिनीम् ॥ दिव्यां सरस्वतीं सत्यां सर्वकिल्बिषनाशिनीम् ॥ १२ ॥ सर्वदेवाधिदेवस्य भाषितां भावितात्मनः ॥ तस्य व्रतसमाप्तौ तु यावद्भूतविसर्जनम् ॥ १३ ॥ अमोघस्य तु देवस्य विश्वेदेवा महात्मनः ॥ स्वागतं वः सुरश्रेष्ठा मत्सकाशे व्यवस्थिताः ॥ १४ ॥ कस्य किं वा वरं देवा ददामि वरदः स्थितः ॥ तं कश्यपोऽदितिश्चैव वरं गृहीत वै ततः ॥ १५ ॥ प्रणम्य शिरसा पादौ तस्मै योगात्मने तदा ॥ भवानेव च नः पुत्रो भवत्विति न संशयः ॥ १६ ॥ उक्तश्च परया भक्त्या तथास्त्विति स वक्ष्यति ॥ देवा ब्रुवन्तु तं सर्वे भ्राता नस्त्वं भवेति ह ॥ १७ ॥ तथास्त्विति च स श्रीमान्वक्ष्यते सर्वलोककृत् ॥ १८ ॥ तस्मादेवं गृहीत्वा तु वरं त्रिदशसत्तमाः ॥ कृतकृत्याः पुनः सर्वे गच्छध्वं स्वं स्वमालयम् ॥ १९ ॥ तथास्त्विति सुराः सर्वे कश्यपोऽदितिरेव च ॥ वन्दित्वा ब्रह्मचरणौ गताः सौम्यां दिशं प्रति ॥ २० ॥ ते चिरेणैव संप्राप्ताः क्षीरोदस्योत्तरं तटम् ॥ यथोद्दिष्टं भगवता ब्रह्मणा ब्रह्मवादिना ॥ २१ ॥ तेऽतीत्य सागरान्सर्वान्पर्वतांश्च बहूक्षणात् ॥ नद्यश्च विविधा दिव्याः पृथिव्यां सुरसत्तमाः ॥ २२ ॥

देने और सब देवता उनसे कहें कि आप हमारे भ्राता हो ॥ १७ ॥ सब लोकके रचनेवाले भगवान् उनसे तथास्तु कहेंगे ॥ १८ ॥ तिस ईश्वरसे वरको प्राप्त हो कृतकृत्य हुए सब देवता अपने अपने स्थानोंको गमन करें ॥ १९ ॥ ऐसेही हो, यह कहके सब देवता और कश्यप अदिति यह सब ब्रह्माजीके चरणारविन्दोंमें नमस्कार कर उत्तर दिशाको जाने लगे ॥ २० ॥ और थोड़ेसेही कालमें ब्रह्मवादी ब्रह्माजीके कहे हुए क्षीरसागरको प्राप्त हुए ॥ २१ ॥ वे बहुतसे समुद्र, पर्वत, वन, दिव्यरूप नदीको क्षणमें उल्लंघन कर अनेक प्रकारकी नदी और पृथ्वी देखते हुए ॥ २२ ॥

तथा घोर रूप और सब प्राणियोंसे वर्जित सूर्यके प्रकाशसेही रहित, मर्यादाहीन, अंधेरेसे आच्छादित दिशाको देखते कश्यपसहित सब देवता अमृतस्थानको प्राप्त हुए ॥ २३ ॥ कश्यपजीके सहित सब देवता दीक्षाको ग्रहण कर व्रतको सहस्रों वर्षोंतक धारण किये रहे ॥ २४ ॥ देवताओंका ईश, योगरूप और नारायण देव सहस्रनेत्रोंवाले ईश्वरको प्रसन्न करनेको ब्रह्मचर्य मौनस्थान आसन शान्ति दमसे देवता उग्र तप करने लगे ॥ २५ ॥ और महात्मा कश्यपजी उस ईश्वरको प्रसन्न करनेके अर्थ वेदोक्त उत्तम स्तोत्रको कहने लगे, जिसको परम स्तव कहते हैं ॥ २६ ॥

पश्यन्ति च सुचोरां वै सर्वसत्त्वविवर्जिताम् ॥ अभास्कराममर्षादां तपसा संवृतां दिशम् ॥ अमृतं स्थानमासाद्य कश्यपेन सुरैः सह ॥ २३ ॥
 दीक्षिताः कामदं दिव्यं व्रतं वर्षसहस्रकम् ॥ प्रसादार्थं सुरेशाय तस्मै योगाय धीमते ॥ नारायणाय देवाय सहस्राक्षाय धीमते ॥ २४ ॥
 ब्रह्मचर्येण मौनेन स्थानवीरासनेन च ॥ दमेन च सुराः सर्वे तपो दुश्चरमास्थिताः ॥ २५ ॥ कश्यपस्तत्र भगवान्प्रसादार्थं महा-
 त्मनः ॥ उदीरयति वेदोक्तं यमाहुः परमं स्तवम् ॥ २६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे सप्त-
 षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६७ ॥ कश्यप उवाच ॥ नमोस्तु १ देवदेवेश एकशृङ्ग वराह वृषार्चिष ४ वृषसिन्धो ५ वृषाकपे सुरवृषभ सुर-
 निर्मित अनिर्मित भद्रकपिल विष्वक्सेन ध्रुव धर्म धर्मराज वैकुण्ठ त्रेतावर्त्त १७ अनादिमध्यनिधन धनंजय शुचिश्रवः अग्निज २१
 वृष्णिज अज अजय मृतेशय सनातन विधातस्त्रिकाम त्रिधाम त्रिककुत् ३० ककुद्भिन् दुन्दुभे ३२ महानाभ लोकनाभ पद्मनाभ
 विरिञ्चे वरिष्ठ बहुरूप विरूप विश्वरूपाक्षयाक्षय सत्याक्षर हंसाक्षर ४३ हव्यभुक् खण्डपरशो शुक्र मुञ्जकेशो हंस महाहंस महद-
 इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने सप्तषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६७ ॥ अब वेदोक्त स्तोत्र कहा जाता है. कश्यप उवाच ।
 नमोस्तु १ ते देवदेवेश एकशृङ्ग वराह वृषार्चिष (धर्मके खंभ) ४ वृषसिन्धो (धर्मसागर) ५ वृषाकपे सुरवृषभ सुरनिर्मित अनिर्मित भद्र कपिल विष्व-
 क्सेन ध्रुव धर्म धर्मराज वैकुण्ठ त्रेतावर्त्त (श्रौतकर्मसे त्रेतायुगके प्रवर्त्तक) १७ अनादिमध्यनिधन धनंजय शुचिश्रवः अग्निज (कार्तिकेय) २१
 वृष्णिज अज अजय मृतेशय सनातन विधातस्त्रिकाम त्रिधाम त्रिककुत् (धर्म, ज्ञान, वैराग्यके स्कंध) ३० ककुद्भिन् दुन्दुभे (विजयके शब्द-
 वाले) ३२ महानाभ लोकनाभ पद्मनाभ विरिञ्चे वरिष्ठ बहुरूप विरूप विश्वरूपाक्ष, क्षयाक्षय सत्याक्षर हंसाक्षर (अजपामंत्र) ४३ हव्यभुक्, खण्ड-

परशो, शुक्रमुंजकेश, हंस महाहंस, महदक्षर, हृषीकेश सूक्ष्म, परमसूक्ष्म तुराषाट् विश्वमूर्त्त सुरायज, नील, निस्तमो, विरजस्तमोरजः सत्त्वधाम, सर्व लोक सर्वलोकप्रतिष्ठ शिपिविष्ट सुतप, तपोय, अग्र, अग्रज, धर्मनाभ गभस्तिनाभ, धर्मनेम, सत्यधाम, सत्याक्षर, गभस्तिनेमे विपाप्मन् चन्द्ररथ (समष्टिमनोधिहृद विराडात्मा) ७४ विपाप्मन् त्वमेव समुद्रवास (आपही समुद्रमें निवास करते हो) अजैकपात् सहस्रशीर्ष सहस्रसंमित, महाशीर्ष, सहस्रदृक्, सहस्रपात् अधोमुख, महामुख महापुरुष, पुरुषोत्तम, सहस्रबाहो, सहस्रमूर्त्त, सहस्रास्य, सहस्राक्ष, सहस्रभुज, सहस्रभुव, सहस्रशस्त्वामाहुर्वेदाः (वेदआपके सहस्रों रूप कहता है) विश्वेदेव, विश्वसंभव, सर्वेषामेव देवानां सौभग आदौ गतिः (धर्मरूप) ९७ विश्वं त्वमाप्यायनः विश्वं त्वामाहुः (तुम विश्वरूप हो)

क्षर हृषीकेश सूक्ष्म परसूक्ष्म तुराषाट् विश्वमूर्त्त सुरायज नील निस्तमो विरजस्तमोरजः सत्त्वधाम सर्वलोकप्रतिष्ठ शिपिविष्ट सुत-
पस्तपोय अग्र अग्रज धर्मनाभ गभस्तिनाभ धर्मनेम सत्यधाम सत्याक्षर गभस्तिनेमे विपाप्मन् चन्द्ररथ ७४ त्वमेव समुद्रवासाः
अजैकपात् सहस्रशीर्ष सहस्रसंमित महाशीर्ष सहस्रदृक् सहस्रपात् अधोमुख महामुख महापुरुष पुरुषोत्तम सहस्रबाहो सहस्रमूर्त्त
सहस्रास्य सहस्राक्ष सहस्रभुज सहस्रभुव सहस्रशस्त्वामाहुर्वेदाः विश्वेदेव विश्वसंभव सर्वेषामेव देवानां सौभग आदौ गतिः ९७ विश्वं
त्वमाप्यायनः विश्वं त्वामाहुः पुष्पहास परमवरदस्त्वमेव त्वमेव वौषट् ओंकारवषट्कारं त्वामेकमाहुरष्टयं मखभागप्राशिनम् शत-
धार १०५ सहस्रधार १०६ भूर्द् भुवर्द् स्वर्द् भूर्भुवःस्वर्द् त्वमेव भूतं भुवनं त्वं स्वधा त्वमेव ब्रह्मेश्य ब्रह्ममय ब्रह्मादिस्त्वमेव
द्यौरसि पृथिव्यसि पूषासि मातरिश्वासि धर्मोसि मघवासि होता पोता नेता हन्ता मन्ता होम्यहोता परात्परस्त्वम् होम्यहोता
त्वमेव आपोसि विश्ववाक् धात्रा परमेण धाम्ना त्वमेव दिग्भ्यः सुक् १३२ सुग्भाण्ड १३३ त्वं गण इष्टोसि इज्योसि ईड्योसि
पुष्पहास परमवरदस्त्वमेव (तुमही परम वरदाता हो) त्वमेव वौषट् ओंकारवषट्कारं त्वामेकमाहुरष्टयं मखभागप्राशिनम् (आपहीको अग्र और यज्ञ-
ज्ञागका ओंका कहते हैं) शतधार १०५ सहस्रधार १०६ भूर्द् भुवर्द् स्वर्द् भूर्भुवःस्वर्द् त्वमेव भूतं भुवनं त्वं स्वधा त्वमेव ब्रह्मेश्य ब्रह्ममय ब्रह्मादिस्त्वमेव
द्यौरसि पृथिव्यसि (स्वर्ग पृथ्वी तुम हो) पूषासि मातरिश्वासि (पवन हो) धर्मोसि मघवासि (इन्द्र हो) होता पोता नेता हन्ता मन्ता होम्यहोता
परात्परस्त्वं होम्य होता त्वमेव (होमकी वस्तु और होता तुम हो) आपोसि विश्ववाक् धात्रा परमेण धाम्ना त्वमेव दिग्भ्यः सुक् १३२ सुग्भाण्ड १३३ त्वं

गण इष्टोसि इज्योसि ईड्योसि त्वष्टा त्वमसि समिद्धस्त्वमेव गतिर्गतिमतामसि (गतिनालोंकी आप गति हो) मोक्षोसि योगोसि गुह्योसि सिद्धोसि धन्योसि धातासि परमोसि यज्ञोसि सोमोसि यूपोसि दक्षिणासि दीक्षासि विश्वमसि स्थविष्ठ स्थविर विश्वतुराषाट् हिरण्यगर्भं हिरण्यनाभं हिरण्यनारायण नारायणांतरं, नृणामयन आदित्यवर्णं आदित्यतेजः महापुरुष सुरोत्तम आदिदेव, पद्मनाभ, पद्मेशय, पद्माक्ष पद्मगर्भं, हिरण्याग्रकेश शुक्र, विश्वेदेव, विश्वतोमुख, विश्वाक्ष, विश्वसंभव, विश्वभुक् त्वमेव (यह सब आपही हो) भूरिविक्रम, चक्रक्रम, त्रिभुवन सुविक्रम स्वर्विक्रम, बभ्रु, सुविभुः प्रभाकर, शंभुः

त्वष्टा त्वमसि समिद्धस्त्वमेव गतिर्गतिमतामसि मोक्षोसि योगोसि गुह्योसि सिद्धोसि धन्योसि धातासि परमोसि यज्ञोसि सोमोसि यूपोसि दक्षिणासि दीक्षासि विश्वमसि स्थविष्ठ स्थविर विश्व तुराषाट् हिरण्यगर्भं हिरण्यनाभं हिरण्यनारायण नारायणान्तरं नृणामयन आदित्यवर्णं आदित्यतेजः महापुरुष सुरोत्तम आदिदेव पद्मनाभ पद्मेशय पद्माक्ष पद्मगर्भं हिरण्याग्रकेश शुक्रविश्वदेव विश्वतोमुख विश्वाक्ष विश्वसंभव विश्वभुक्त्वमेव भूरिविक्रम चक्रक्रम त्रिभुवन सुविक्रम स्वर्विक्रम बभ्रु सुविभुः प्रभाकर शंभुः स्वयंभूश्च भूतादिः भूतात्मन् महाभूत विश्वभुक्त्वमेव विश्वगोप्तासि विश्वंभर पवित्रमसि हविर्विशारद हविकर्मा अमृतेन्धन सुरासुरगुरो महादिदेव नृदेव ऊर्ध्वकर्मन् २०२ पूतात्मन् अमृतेश दिवस्पृक् विश्वस्य पते घृताच्यसि २०७ अनन्तकर्मन् २०८ द्रुहिणवंश स्ववंश विश्वपास्त्वं त्वमेव विश्वं विभर्षि वरार्थिनो नम्रायस्वेति २१३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे अष्टषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६८ ॥

स्वयंभूश्च, भूतादिः भूतात्मन्, महाभूत, विश्वभुक् त्वमेव विश्वगोप्तासि (आपही संसारके रक्षक हो) विश्वंभर, पवित्रमसि, हविर्विशारद, हविकर्मा अमृतेन्धन, सुरासुरगुरो महादिदेव नृदेव ऊर्ध्वकर्मन् २०२ पूतात्मन् अमृतेश दिवस्पृक् विश्वस्य पते घृताच्यसि २०७ अनन्तकर्मन् २०८ द्रुहिणवंश स्ववंश विश्वपास्त्वं त्वमेव विश्वं विभर्षि वरार्थिनो नम्रायस्वेति ॥ इस स्तोत्रके पाठसे हे देव । तू हमारी रक्षा कर २१३ ॥ इति श्रीम० खिलेषु ह०

भविष्यपर्वणि भाषायां वामने महापुरुषस्तवे अष्टपष्ठितमोऽध्यायः ॥ ६८ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि वेदको जाननेवाले कश्यपजीके सुखसे कहे हुए इस स्तोत्रको सुनकर भगवान् नारायण ॥ १ ॥ मेवके समान शब्दवाले और स्निग्ध गंभीर रूप ऐसे देवताओंके शब्दको सुनकर प्रीतियुक्त मनसे स्पष्ट-रूप ॥ २ ॥ वचनको महात्मा देवताओंके प्रति कहने लगे वह वाणी स्वच्छ पद अक्षरयुक्त थी, आकाशसे शब्द सुनने लगा और विष्णुका साक्षात् दर्शन नहीं हुआ, वह श्रीमान् देव विष्णु प्रसन्न हो कहने लगे ॥ ३ ॥ भगवान् बोले, कि हे देवताओ ! तुम्हारे निश्चयसे मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हुआ

वैशम्पायन उवाच ॥ नारायणस्तु भगवान्भुत्वैतत्परमं स्तवम् ॥ ब्रह्मज्ञेन द्विजेन्द्रेण कश्यपेन समीरितम् ॥ १ ॥ स्निग्धगम्भीरनि-
घोषजीमूतस्वननिःस्वनम् ॥ मनसा प्रीतियुक्तेन विबुधानां महात्मनाम् ॥ २ ॥ उवाच वचनं सम्यग्दृष्टपुष्टपदाक्षरम् ॥ आकाशाच्छु-
श्रुवे शब्दो दर्शनं नोपलभ्यते ॥ श्रीमान् प्रीतमना देवः प्रोवाच प्रभुरीश्वरः ॥ ३ ॥ विष्णुरुवाच ॥ प्रीतोऽस्मि वः सुरश्रेष्ठाः सर्वे
मत्तो विनिश्चयम् ॥ वरं वृणुत भद्रं वो वरदोऽस्मि सुरोत्तमाः ॥ ४ ॥ कश्यप उवाच ॥ यदेव भगवान् प्रीतः सर्वेषाममरोत्तमः ॥
तदेव कृतकृत्याः स्म त्वं हि नः परमा गतिः ॥ ५ ॥ यदि प्रसन्नो भगवान् दातव्यो वा वरो यदि ॥ वासवस्यानुजो भ्राता ज्ञातीनां
नन्दिवर्द्धनः ॥ ६ ॥ अदित्या वामनः श्रीमान् भगवानस्तु वै सुरः ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ अदितिर्देवमाता च एतमेवार्थमुत्तमम् ॥
पुत्रार्थे वरदं प्राह भगवन्तं वरार्थिनी ॥ ७ ॥ अदितिरुवाच ॥ याचे त्वां पुत्रकामा वै भवान्पुत्रो भवत्विति ॥ निःश्रेयसाय सर्वेषां
देवानां हि महात्मनाम् ॥ ८ ॥

हूँ, सो वर मांगो, तुम्हारा कल्याण हो मैं तुमको वर देनेवाला हूँ ॥ ४ ॥ कश्यपऋषि बोले, कि हे देवश्रेष्ठ ! जो इस सबोंपर तुम प्रसन्न हुए हो तो हमभी सब कृतकृत्य हुए कारण कि तुमही हमारी परमगति हो ॥ ५ ॥ जो आप प्रसन्न होकर वर देना चाहते हो तो इन्द्रके छोटे भाता देवताओंके आनंदको बढ़ानेवाले ॥ ६ ॥ तुम मेरे पुत्र वामननामसे अदितिके शरीरमें जन्म लो, वैशम्पायन बोले, कि देवताओंकी माता अदितिभी पुत्र होनेके निमित्त वर मांगने लगी ॥ ७ ॥ अदिति बोली, कि हे देव ! तुम मेरे पुत्र हो जाओ और संपूर्ण देवताओंका मंगल करो ॥ ८ ॥

महात्मा देवता कहने लगे कि हमारे कल्याणके अर्थ हे देव ! हमारे भ्राता, स्वामी, भर्ता, धाता और शरण तुमही हो. हे देव ! जब तुम अदितिके पुत्र-
भावको प्राप्त होंगे, तब इन्द्र आदि सब देवता तुमको देव कहकर बोलेंगे, इस कारण तुम कश्यपजीके पुत्र हो ॥ ९ ॥ वैशम्पायन कहने लगे, कि इन पूर्वोक्त
वचनोंको सुन विष्णुभगवान् देवता और कश्यपमुनिसे कहने लगे कि, ऐसेही होगा, और तुम्हारे मंगलकी प्राप्ति होगी ॥ १० ॥ तुम मनोवांछित
कामनाको प्राप्त होंगे और जो तुम्हारे शत्रु हैं, वे सब एक मुहूर्तभी मेरे सन्मुख स्थित नहीं रहेंगे, सब दैत्योंके समूहको और शेष रहे देवशत्रुओंको मारके

देवा ऊचुः ॥ भ्राता भर्ता च दाता च शरणं च भवस्व नः ॥ अदित्याः पुत्रतां याते त्वयि देवाः सवासवाः ॥ देवशब्दं वहिष्यन्ति
कश्यपस्यात्मजो भव ॥ ९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततस्तानब्रवीद्विष्णुर्देवान् कश्यपमेव च ॥ एवं भवतु भद्रं वो यथेष्टं काममा-
प्नुत ॥ सर्वेषामेव युष्माकं ये भविष्यन्ति शत्रवः ॥ १० ॥ मुहूर्तमपि ते सर्वे न स्यास्यन्ति ममाग्रतः ॥ इत्वासुरगणान्तत्सर्वान्ये
चान्ये देवशत्रवः ॥ ११ ॥ करिष्ये देवताः सर्वा यज्ञभागाग्रभोजिनः ॥ हव्यादांश्च सुरान्तत्सर्वान् कव्यादांश्च पितृनपि ॥ १२ ॥
करिष्ये विबुधश्रेष्ठाः पारमेष्ठ्येन कर्मणा ॥ यथागतेन मार्गेण निवर्तध्वं सुरोत्तमाः ॥ १३ ॥ देवमातुस्तथादित्याः कश्यपस्यामि-
त्मनः ॥ यथामनीषितं कर्ता गच्छध्वं स्वं स्वमालयम् ॥ १४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमुक्ते तु वचने विष्णुना प्रभविष्णुना ॥
देवाः प्रहृष्टमनसः पूजयन्ति स्म सर्वशः ॥ १५ ॥ विश्वेदेवा महात्मानः कश्यपोऽदितिरेव च ॥ साध्या मरुद्गणाश्चैव शक्रश्चैव महा-
बलः ॥ नमस्कृत्य सुरेशाय तस्मै देवाय रहसे ॥ १६ ॥

देवताओंको यज्ञभागमें अगाडी भोजन करनेवाला कहंगा ॥ ११ ॥ और हे देवश्रेष्ठ ! हव्यके खानेवाले देवताओंको और कव्यके खानेवाले पितरोंको
कहंगा ॥ १२ ॥ यह कार्य प्राजापत्य विधानसे कहंगा. हे देवताओ ! जिस मार्गसे तुम आये हो उसी मार्गके द्वारा तुम गमन करो ॥ १३ ॥ देवता-
ओंकी माता अदितिका और महात्मा रूप कश्यपजीका मनोवांछित सफल कहंगा इस कारण तुम अपने अपने स्थानको प्राप्त हो ॥ १४ ॥ वैशम्पायन
बोले, विष्णु भगवान् के यह वचन सुनकर प्रसन्न हुए देवता भली प्रकारसे विष्णुको पूजने लगे ॥ १५ ॥ फिर विश्वदेवा, कश्यपजी, अदिति, साध्य देवता

मरुद्गण महाबली इन्द्र यह सब तिस विष्णुदेवको प्रणाम कर ॥ १६ ॥ पूर्वदिशामें कश्यपजीके आश्रममें प्राप्त हुए तब ब्रह्मर्षिगणोंसे सेवित कश्यपजीके आश्रममें जाकर वेदशास्त्रका पाठ करते इस इच्छासे सब देवता विचरने लगे कि अदिति कब गर्भको धारण करेगी ॥ १७ ॥ तब देवताओंकी माता अदितिने भूतात्मा महात्मा अति तेजवाले गर्भको दिव्य सहस्र वर्षोंतक धारण किया ॥ १८ ॥ जब दिव्य सहस्र वर्ष पूर्ण हो गये तब देवताओंके भयको दूर करनेवाले और दैत्योंको नाशनेवाले ॥ १९ ॥ उत्तम गर्भको जनानी हुई और गर्भस्थित विष्णुने त्रिलोकीके तेजोंको ग्रहण कर ॥ २० ॥ अतएव आश्रमं तत्र ब्रह्मर्षिगणसेवितम् ॥ चेरुः स्वाध्यायनियता अदित्या

के भयको दूर करनेवाले और दैत्योंको नाशनेवाले ॥ १९ ॥ उत्तम गर्भको जनाता हुआ जल नगर पर्वत ॥ चेरुः स्वाध्यायनियता अदित्या
प्रयाताः प्राग्दिशं दिव्यं विपुलं कश्यपाश्रमम् ॥ गत्वा त आश्रमं तत्र ब्रह्मर्षिगणसेवितम् ॥ चेरुः स्वाध्यायनियता अदित्या
गर्भमीप्सवः ॥ १७ ॥ अदितिर्देवमाता च गर्भं दध्रेऽतितेजसम् ॥ भूतात्मानं महात्मानं दिव्यं वर्षसहस्रकम् ॥ १८ ॥ पूर्ण
वर्षसहस्रे तु प्रसूता गर्भमुत्तमम् ॥ सुराणां शरणं देवमसुराणां विनाशनम् ॥ १९ ॥ गर्भस्थेन तु देवेन परित्राताः सुरास्तदा ॥
आददानेन तेजांसि त्रैलोक्यस्य महात्मना ॥ २० ॥ तस्मिन् जाते तु देवेशे त्रैलोक्यस्य सुखावहे ॥ भयदे दैत्यसंचानां सुराणां
नन्दिवर्द्धने ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे एकोनसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ६९ ॥
वैशम्पायन उवाच ॥ प्रजानां पतयः सप्त सप्त चैव महर्षयः ॥ तस्य देवस्य जातस्य नमस्कारं प्रचक्रिरे ॥ १ ॥ भारद्वाजः
कश्यपो गौतमश्च विश्वामित्रो जमदग्निर्वसिष्ठः ॥ यश्चोदितो भास्करे संप्रणष्टे सोऽप्यत्रात्रिभगवानाजगाम ॥ २ ॥ मरीचिराङ्गिरा-
श्चैव पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः ॥ दक्षप्रजापतिश्चैव नमस्कारं प्रचक्रिरे ॥ ३ ॥

श्वेव पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः ॥ दक्षप्रजापतिश्चैव नमस्कारं प्रचक्रिरे ॥ २ ॥
सब देवताओंकी रक्षा की ॥ २० ॥ जब त्रिलोकीके आनंददाता नारायणने जन्म लिया तब देवताओंको आनंद और दैत्योंको महाभय
हुआ ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने वामनेप्रसूतौ एकोनसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ६९ ॥ वैशम्पायन कहने
लगे, कि जब वामनजीका जन्म हुआ तब सात प्रजापति और सात महर्षि उनको नमस्कार करने लगे ॥ १ ॥ भरद्वाज, कश्यप, गौतम, विश्वामित्र,
जमदग्नि, वसिष्ठ और भास्करके कर्ता अत्रि आये ॥ २ ॥ मरीचि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, दक्ष प्रजापति नमस्कार करने लगे ॥ ३ ॥

वसिष्ठका पुत्र, और्व, स्तम्ब, कश्यप, कपीवान्, अकपीवान्, दत्तात्रेय, अत्रि, ज्यवन ॥ ४ ॥ वसिष्ठ नामसे विख्यात सात वसिष्ठके पुत्र हिरण्यगर्भके पुत्र ॥ ५ ॥ तेजस्वी गार्ग्य, पृथु, अन्धज्य, वामन, देवबाहु, यदुध, सोमको पुत्र पर्जन्य ॥ ६ ॥ हिरण्यरोमा, वेदशिरा, सत्यनेत्र, विश्वेदेवा, अति-विश्व, दूसरा ज्यवन, सुधामा, विरजा ॥ ७ ॥ अतिनाम, सहिष्णु, यह सब नमस्कार करने लगे और प्रकाशमान शरीरवाले और संपूर्ण गहनोसे,

और्वो वसिष्ठपुत्रश्च स्तम्बः कश्यप एव च ॥ कपीवानकपीवांश्च दत्तोऽत्रिश्च्यवनस्तथा ॥ ४ ॥ वसिष्ठपुत्राः सप्तासन्वासिष्ठः इति विश्रुताः ॥ हिरण्यगर्भस्य सुताः पूर्वजाताः सुतेजसः ॥ ५ ॥ गार्ग्यः पृथुस्तथैवान्यो जन्यो वामन एव च ॥ देवबाहुर्यदुधश्च पर्जन्यश्चैव सोमजः ॥ ६ ॥ हिरण्यरोमा वेदशिराः सप्तनेत्रस्तथैव च ॥ विश्वोऽतिविश्वश्च्यवनः सुधामा विरजास्तथा ॥ ७ ॥ अतिनामा सहिष्णुश्च नमस्कारमकुर्वत ॥ उद्योतमाना वपुषा सर्वाभरणभूषिताः ॥ ८ ॥ उपनृत्यन्ति देवेशं विष्णुमप्सरसां वराः ॥ ततो गन्धर्वतूर्येषु प्रणदत्सु विहायसि ॥ ९ ॥ बहुभिः सह गन्धर्वैः प्रागायत च तुम्बुरुः ॥ महाश्रुतिश्चित्रशिरा ऊर्णायुरनघ-स्तथा ॥ १० ॥ गोमायुः सूर्यवर्चाश्च सोमवर्चाश्च सप्तमः ॥ युगपस्तृणपः कार्ष्णिर्नन्दिश्च त्रिशिरास्तथा ॥ ११ ॥ त्रयोदशः शालिशिराः पर्जन्यश्च चतुर्दशः ॥ कलिः पञ्चदशश्चात्र तत्रैव तु महीपते ॥ १२ ॥ दश पञ्च त्विमे प्रोक्ता नारदश्चैव षोडशः ॥ हाहा हूहूश्च गन्धर्वौ हंसश्चैव महाद्युतिः ॥ १३ ॥

भूषित ॥ ८ ॥ अप्सराओंके गणभी नृत्य करने लगे और गन्धर्व अपने बाजोंको बजाने लगे ॥ ९ ॥ और आकाशमें गंधर्वोंके संग तुंबरु गंधर्व गान करने लगा और महाश्रुति, चित्रशिरा, ऊर्णायु, अनघ ॥ १० ॥ गोमायु, सूर्यवर्चा, सोमवर्चा, सप्तम युगप, तृणप, कार्ष्णि, नन्दि, त्रिशिरा ॥ ११ ॥ तेरहवां शालिशिरा, चौदहवां पर्जन्य, कलि पन्द्रहवां ॥ १२ ॥ यह पन्द्रह और सोलहवें नारदजी, हाहा हूहू गंधर्व और अतिकीर्तिवाले हंस ॥ १३ ॥

यह देव, गन्धर्व, केशवका गान करने लगे और प्रसन्न हुई और सब प्रकारके गहनोंसे भूषित ऐसी अप्सरा ॥ १४ ॥ सुंदर शरीर, सुन्दर जंवावाली, सर्वांग शुभ दर्शनवाली बड़े नेत्रोंवाली नृत्य और गान करने लगीं ॥ १५ ॥ अनेक सुमध्या, चारुमध्या, प्रिया, मुख्या, वरानना, अनूका, जामी, मिश्रकेशी, अलंबुषा ॥ १६ ॥ मरीचि, शुचिका, विद्युत्पर्णा, तिलोत्तमा, अद्रिका, लक्ष्मणा, रम्भा, मनोरमा ॥ १७ ॥ असिता, सुबाहु, सुप्रिया, सुभगा, उर्वशी, चित्रलेखा, सुग्रीवी, सुलोचना ॥ १८ ॥ पुण्डरीका, सुगंधा और सुरथा, प्रमाथिनी, नन्दा, शारद्वती और भी

सर्वे ते देवगन्धर्वा उपगायन्ति केशवम् ॥ तथैवाप्सरसो हृष्टाः सर्वालंकारभूषिताः ॥ १४ ॥ वपुष्मन्तः सुजचनाः सर्वाङ्गशुभ-
दर्शनाः ॥ ननृतुश्च महाभागा जगुश्चायतलोचनाः ॥ १५ ॥ सुमध्याश्चारुमध्याश्च प्रियमुख्या वराननाः ॥ अनूकाथ तथा जामी
मिश्रकेशी त्वलंबुषा ॥ १६ ॥ मरीचिशुचिकाश्चैव विद्युत्पूर्णा तिलोत्तमा ॥ अद्रिका लक्षणा चैव रम्भा तद्वन्मनोरमा ॥ १७ ॥
असिता च सुबाहुश्च सुप्रिया सुभगा तथा ॥ उर्वशी चित्रलेखा च सुग्रीवा च सुलोचना ॥ १८ ॥ पुण्डरीका सुगंधा च सुरथा
च प्रमाथिनी ॥ नन्दा शारद्वती चैव तथान्यास्तत्र संघशः ॥ १९ ॥ मेनका सहजन्या च पर्णिका पुञ्जिकस्थला ॥ एताश्चाप्सर-
सोऽन्याश्च प्रनृत्यन्ति सहस्रशः ॥ २० ॥ धातार्यमा च मित्रश्च वरुणोऽशो भगस्तथा ॥ इन्द्रो विवस्वान् पूषा च त्वष्टा च सविता
तथा ॥ २१ ॥ कथितो विष्णुरित्येवं काश्यपेयो गणस्तथा ॥ इत्येते द्वादशादित्या ज्वलन्तः सूर्यवर्चसः ॥ २२ ॥ चक्रुस्तस्य
सुरेशस्य नमस्कारं महात्मनः ॥ मृगव्याधश्च सर्पश्च निर्ऋतिश्च महाबलः ॥ २३ ॥ अजेकपादहिर्बुध्न्यः पिनाकी चापराजितः ॥
दहनोऽथेश्वरश्चैव कपाली च विशांपते ॥ २४ ॥

अनेकों ॥ १९ ॥ मेनका, सहजन्या, पर्णिका, पुञ्जिकस्थला यह भी और अन्य भी सहस्रों अप्सरा नृत्य करने लगीं ॥ २० ॥ धाता,
अर्यमा, मित्र, वरुण, अंश, मन, इन्द्र, पूषा, विवस्वान्, त्वष्टा, सविता ॥ २१ ॥ विष्णु, यह काश्यपगण कक्ष है और अग्निके समान
तेजवाले बारह सूर्य ॥ २२ ॥ उन जन्मे हुए सुरेशको नमस्कार करने लगे और मृगव्याध सर्प निर्ऋति ॥ २३ ॥ अजेकपाद, अहिर्बुध्न्य,

पिनाकी, अपराजित, दहन, ईश्वर, कपाली ॥ २४ ॥ स्थाणु भव भगवान् रुद्र स्थित हुए और दोनों अश्विनीकुमार, आठ वसु महाबलवाले मरुत ॥ २५ ॥ विश्वेदेवा, साध्य यह हाथ जोड़कर स्थित हुए और शेषनागजीके छोटे भ्राता महाभाग वासुकी आदि ॥ २६ ॥ अपहर्ता, महाबली तक्षक अघस नामोंवाले महाक्रोधी महाबलवाले सर्प ॥ २७ ॥ औरभी बहुतसे सर्प सब अंजली बांधकर तिन जन्मे हुए ईश्वरको नमस्कार करने लगे ताक्ष्य, अरिष्टनेमि और महाबली गरुड ॥ २८ ॥ और अरुण, आरुणि, गरुड अंजली बांधकर स्थित हुए और लोककर्ता श्रीमान् ब्रह्माजीभी स्वयं

स्थाणुर्भगश्च भगवान् रुद्रास्तत्रावतस्थिरे ॥ अश्विनौ वसवश्चाष्टौ मरुतश्च महाबलः ॥ २५ ॥ विश्वेदेवाश्च साध्याश्च तस्य प्राञ्जलयः स्थिताः ॥ शेषानुजा महाभागा वासुकिप्रमुखास्तथा ॥ २६ ॥ कच्छपश्चापहर्ता च तक्षकश्च महाबलः ॥ अधृष्टास्तेजसा युक्ता महाक्रोधा महाबलः ॥ २७ ॥ एते नागा महात्मानस्तस्मै प्राञ्जलयः स्थिताः ॥ ताक्ष्यश्चारिष्टनेमिश्च गरुडश्च महाबलः ॥ २८ ॥ अरुणश्चारुणिश्चैव वेनतेया ह्युपस्थिताः ॥ पितामहश्च भगवान् स्वयमागम्य लोककृत् ॥ प्राह चैवं गुरुः श्रीमान्सह सर्वैर्महात्मभिः ॥ २९ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ यस्मात्प्रसूयते लोकः प्रभविष्णुः सनातनः ॥ तस्माल्लोकेश्वरः श्रीमान्विष्णुरेव भवत्वयम् ॥ ३० ॥ एवमुक्त्वा तु भगवान् सार्द्धं देवर्षिभिः प्रभुः ॥ नमस्कृत्वा सुरेशाय जगाम त्रिदिवं पुनः ॥ ३१ ॥ स तु जातः सुरेशानः कश्यपस्यात्मजः प्रभुः ॥ नवदुर्दिनमेवाभो रक्ताक्षो वामनाकृतिः ॥ ३२ ॥ श्रीवत्सेनोरासि श्रीमान् रोमजातेन राजता ॥ उत्फुल्ललोचनाः सर्वाः पश्यन्त्यप्सरसरस्तदा ॥ ३३ ॥ दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता ॥ यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासा तस्य महात्मनः ॥ ३४ ॥

सब महात्माओंके संग आकर तहां कहने लगे ॥ २९ ॥ ब्रह्माजी बोले, कि जिससे यह लोक उत्पन्न होता है वह सनातन विष्णु यही है और लोकोंके ईश्वर श्रीमान् विष्णुभी यही है ॥ ३० ॥ यह कहकर देवर्षियोंके सहित ब्रह्माजी नमस्कार कर स्वर्गको चले गये ॥ ३१ ॥ और देवताओंके स्वामी कश्यपके पुत्र नवीन दुर्दिनमें मेघके समान कान्तिवाले लालनेत्रवाले वामनरूपको धारण किये ॥ ३२ ॥ श्रीवत्से से शोभित वामनजी उत्पन्न हुए; तब उत्फुल्लनेत्रोंवाली सब अप्सरा उनको देखने लगीं ॥ ३३ ॥ यदि आकाशमें सहस्र सूर्योंसे एकवेर जो कान्ति उपजती है, तैसीही कान्ति उन महात्माकी

थी ॥ ३४ ॥ और देवर्षियोंके समान श्रीमान् भूत भविष्यत् वर्तमानको जाननेवाले, शुद्धरोमोंवाले, बड़ी छाती सब प्रकारके तेजोंसे संयुक्त ॥ ३५ ॥ पुण्यशीलोंके गतिरूप, पापकर्मशालोंको अगतिरूप, योगको जाननेवाले ॥ ३६ ॥ महात्मा जिनको जानते हैं आठ गुणोंवाले देवताओंमें श्रेष्ठ और मोक्षकी इच्छावाले ब्राह्मण जिनको प्राप्त हो ॥ ३७ ॥ भवभीरु जन्म और मरणसे छूट जाते हैं, और सब आश्रमनिवासी जिसको तप कहते हैं ॥ ३८ ॥ और जिसको उग्र व्रत करनेवाले मुनि सेवते रहते हैं, और सर्वोंमें अनन्त नामसे विख्यात और सब प्रकारके सर्वोत्कर्षके सेवित ॥ ३९ ॥ सहस्र शिरो-सुरर्षिप्रतिमः श्रीमान्भूर्भुवो भूतभावनः ॥ शुचिरोमा महास्कन्धः सर्वतेजोमयः प्रभुः ॥ ४० ॥ या गतिः पुण्यकीर्तीनामगतिः पापकर्म-नाम् ॥ योगसिद्धा महात्मानो यं विदुर्योगमुत्तमम् ॥ ४१ ॥ यस्याष्टगुणभैश्वर्यं यमाहुर्देवसत्तमम् ॥ यं प्राप्य शाश्वतं विप्रा नियता मोक्षकाङ्क्षिणः ॥ ४२ ॥ जन्मनो मरणाच्चैव मुच्यन्ते भवभीरवः ॥ यदेतत्तप इत्याहुः सर्वाश्रमनिवासिनः ॥ ४३ ॥ सेवन्ते यं यताहारा दुश्चरं व्रतमास्थिताः ॥ योऽनन्त इत नागेषु सेव्यते सर्वभोगिभिः ॥ ४४ ॥ सहस्रमूर्धा रक्ताक्षः शेषादिभिरनुत्तमैः ॥ यो यज्ञ इति विप्रेन्द्रेरिज्यते स्वर्गलिप्सुभिः ॥ ४५ ॥ नानास्थानगतः श्रीमानेकः कविरनुत्तमः ॥ यं वेदा गान्ति वेत्तारं यज्ञभागप्रदायिनम् ॥ ४६ ॥ वृषार्चिश्चन्द्रसूर्याक्षं देवमाकाशविग्रहम् ॥ स प्राह त्रिदशान्सर्वान्वाचा वै परया विभुः ॥ ४७ ॥ जानन्नपि महातेजा गतो योगेन बालताम् ॥ किं करोमि सुरश्रेष्ठाः कं वरं च ददामि वः ॥ ४८ ॥ यत्काङ्क्षितं वै सर्वेषां तद्वै भूत मुदा युताः ॥ तस्य तद्वचनं श्रुत्वा वामनस्य महात्मनः ॥ ४९ ॥

वाले लाल नेत्रोंवाले, स्वर्गके अर्थ इच्छा करनेवाले ब्राह्मणोंसे पूजित यज्ञरूप ॥ ४० ॥ नानाप्रकारके स्थानोंमें प्राप्त श्रीमान् अतिउच्चम कवि जिसको वेदवेत्ता कहते हैं और सबके अर्थ यज्ञभागको प्राप्त करनेवाले ॥ ४१ ॥ चन्द्रमा सूर्यरूप दो नेत्रोंवाला, धर्मकान्ति, देव और आकाश विग्रहवाले मधु-रवाणीसे सब देवताओंसे कहने लगे वह जानकरभी योगभावसे बालभावको प्राप्त हुए बोले, कि हे देवश्रेष्ठो ! मैं क्या करूं ? और किस वरको तुम्हारे अर्थ दूं ? ॥ ४२ ॥ जो तुमको वांछित हो, वह प्रसन्न होकर तुम कहो तब उन महात्मा वामनजीके वचनको सुनकर ॥ ४३ ॥ प्रसन्नमन हो इन्द्र

आदि सम्पूर्ण देवता अंजलि बांधकर वामनजीसे कहने लगे ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ब्रह्माजीके वरदानसे और तप और बडे पराक्रमसे बलिराजाने हमारा यह सम्पूर्ण जगत् हर लिया है ॥ ४६ ॥ और वह बलिराजा हम सबोंसे अवध्य है, दैत्योंमें मुख्य और महात्मा है ॥ ४७ ॥ सो तुम उसका तिरस्कार करनेके योग्य हो, अन्य कोई नहीं, इस कारण हम सब तुम्हारी शरण हैं, आप सब देवताओंका भय हरनेवाले हैं ॥ ४८ ॥ हे सुरेश्वर ! ऋषियोंके व लोकोंके हितके अर्थ अदिति और कश्यपके प्यारके अर्थ ॥ ४९ ॥ पितरोंको कव्य और देवताओंको हव्य प्रवृत्त करनेको और हे महाबाहो ॥ ५० ॥

सर्वे ते हृष्टमनसो देवाः कश्यपनन्दनम् ॥ ऊचुः प्राञ्जलयो विष्णुं सुराः शक्रपुरोगमाः ॥ ४५ ॥ ब्रह्मणो वरदानेन हृतं नो निखिलं जगत् ॥ तपसा महता चैव विक्रमेण दमेन च ॥ ४६ ॥ बलिना दैत्यमुख्येन सर्वज्ञेन महात्मना ॥ अवध्यः किल सोऽस्माकं सर्वेषां देवसत्तम ॥ ४७ ॥ भवान्प्रभवते तस्य नान्यः कश्चन सुव्रत ॥ यत्प्रपद्यामहे सर्वे भवन्तं शरणार्थिनः ॥ शरण्यं वरदं देवं सर्वदेवभयापहम् ॥ ४८ ॥ ऋषीणां च हितार्थाय लोकानां च सुरेश्वर ॥ प्रियार्थं च तथादित्याः कश्यपस्य तथैव च ॥ ४९ ॥ कव्यं पितृणामुचितं सुराणां हव्यमुत्तमम् ॥ प्रवर्तेत महाबाहो यथापूर्वं सुरोत्तम ॥ ५० ॥ आनृण्यार्थं सुरेशस्य वासवस्य महात्मनः ॥ प्रत्यानय महेन्द्रस्य त्रैलोक्यमिदमव्ययम् ॥ ५१ ॥ ऋतुना वाजिमेधेन यजते स हि दानवः ॥ यत्प्रत्यानयने युक्तं लोकानां तद्विचिन्तय ॥ ५२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमुक्तस्तदा देवैर्विष्णुर्वामनरूपधृक् ॥ प्रहर्षयन्नुवाचाथ सर्वान्देवानिदं वचः ॥ ५३ ॥ विष्णुरुवाच ॥ तस्य यज्ञसकाशं मां महर्षिवेदपारगः ॥ बृहस्पतिर्महातेजा नयत्वङ्गिरसः सुतः ॥ ५४ ॥

आप प्रवृत्त हूजिये महात्मा इन्द्रका ऋण दूर करनेको इस त्रिलोकीको इन्द्रके अर्थ फिर प्राप्त कीजिये ॥ ५१ ॥ इस समयमें बलिराजा अश्वमेध यज्ञ करता है, सो जिस प्रकार लोकोंका फिर राज्य इन्द्रको मिले, ऐसा चिन्तवन करो ॥ ५२ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकार सम्पूर्ण देवताओंके वचनको श्रवण कर सर्व देवताओंको प्रसन्न करनेवाले वामनरूपको धारण कर विष्णु वचन कहने लगे ॥ ५३ ॥ विष्णु बोले, कि हे देवताओ ! वेदके

पारको जाननेवाले बड़े ऋषि और उग्रतेजवाले अंगिरा ऋषिके पुत्र बृहस्पति मुझे बलिके यज्ञमें ले चले ॥ ५४ ॥ तहां मैं प्राप्त होकर यथायोग्य त्रिलो-
 कीके हरनेके लिये यज्ञभूमिमें विचरण करूंगा ॥ ५५ ॥ वैशंपायन बोले, कि तब श्रीमान् बृहस्पति जहां बलिराजाका यज्ञ हो रहा था, वहां वामन-
 जीको लाये ॥ ५६ ॥ अर्थात् मूँजकी तागडी धारण किये यज्ञोपवीत धारण करे छत्र, दण्ड, मृगछाला, धुन्न और लालरंग नेत्रोंवाले, बालकरूप धारण
 किये वामनजी ॥ ५७ ॥ उस ब्रह्मर्षिगणोंसे सेवित यज्ञवाटमें जाकर भगवान् स्वयं उस यज्ञका वर्णन करने लगे ॥ ५८ ॥ लोकेश्वरोंकेभी ईश्वर ब्रह्मादि
 देवताओंके भेजे हुए बालक होकरभी बूढ़ोंके समान कर्म करनेवाले ॥ ५९ ॥ इस प्रकार वह अचिन्त्यात्मा वामनजी दैत्योंके पति विरोचन बलिराजाके
 तस्याहं समनुप्राप्तो यज्ञवाटं सुरोत्तमाः ॥ विचारिष्ये यथायुक्तं त्रैलोक्यहरणाय वै ॥ ५५ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततो बृहस्पतिर्धी-
 माननयद्रामनं प्रभुम् ॥ यज्ञवाटं महातेजा दानवेन्द्रस्य धीमतः ॥ ५६ ॥ मौञ्जी यज्ञोपवीती च छत्री दण्डी ध्वजी तथा ॥ वामनो
 धूम्ररक्ताक्षो भगवान्बालरूपधृक् ॥ ५७ ॥ तं गत्वा यज्ञवाटं च ब्रह्मर्षिगणसंकुलम् ॥ आत्मना चैव भगवान्वर्णयामास तं क्रतुम् ॥ ५८ ॥
 लोकेश्वरेश्वरः श्रीमान्सुरैर्ब्रह्मपुरोममैः ॥ अघ्यास्यमानो भगवान्वृद्धोऽप्यथ वृद्धवत् ॥ ५९ ॥ दानवाधिपतेस्तस्य बलेर्विरोचनस्य च ॥
 यज्ञवाटमचिन्त्यात्मा जगाम सुरसत्तमः ॥ ६० ॥ पालितोऽपि हि दैतेयैः सांग्रामिकपरिच्छदेः ॥ द्वारे दानवसंवाधे सहसैव विवेश
 ह ॥ ६१ ॥ ऋषिभिश्चैव मन्त्राद्यैः सर्वतः परिवारितम् ॥ दैत्यदानवराजेन्द्रमुपतस्थे बलिं बली ॥ ६२ ॥ वर्णयित्वा यथान्यायं यज्ञं
 यज्ञसनातनः ॥ विस्तरेण नरश्रेष्ठ प्रयोगैर्विविधैस्तथा ॥ ६३ ॥ शुक्रादीनृत्विजश्चापि यज्ञकर्मविचक्षणान् ॥ सर्वानेव निजग्राह चकार
 च निरुत्तरान् ॥ ६४ ॥ आरादथ बलेस्तस्य ऋत्विजामभितस्तथा ॥ यज्ञमात्मानमेवासौ हेतुभिः कारणं विभुः ॥ ६५ ॥
 यज्ञस्थानमें प्राप्त हुए ॥ ६० ॥ युद्धके योग्य सामग्रीवाले दैत्योंसे आच्छादित यज्ञद्वारमेंभी वामनजी वेगसे प्रवेश कर पड़े ॥ ६१ ॥ तहां मंत्रोंको
 उच्चारण करनेवाले ऋत्विक् जनोंसे चारों ओर परिवारित, दैत्योंके बलिराजा बलिके समीपमें वह बली स्थित हुए ॥ ६२ ॥ और ब्रह्मर्षिगणोंसे सेवित
 स्थित तिस यज्ञभूमिमें प्राप्त हो यज्ञकी सराहना करने लगे और यथायोग्य यज्ञका वर्णन कर विस्तारपूर्वक नामाप्रकारके प्रयोगोंसे ॥ ६३ ॥ शुक्राचार्य
 आदि यज्ञकर्मके जाननेवाले ऋत्विजोंको वामनजी अपने वाक्योंसे उत्तर देनेको असमर्थ करते हुए ॥ ६४ ॥ पीछे सब ऋत्विक् बलिराजाके समीपमें

आत्मरूप इस यज्ञको कारणसहित विभु ॥ ६५ ॥ अप्रकाशरूप वैदिक मंत्रोंसे ऋषिके समूहोंके प्रत्यक्ष वर्णन करने लगे ॥ ६६ ॥ तब सब वृद्धरूप उपाध्याय और मुनियोंको जब बालकरूप महाबली वामनजीने उत्तर देनेको असमर्थ कर दिया ॥ ६७ ॥ तब विरोचनके पुत्र बलिने वामनजीको अद्भुत माना और मस्तकसे अंजलिको बांध विस्मित हो बलि कहने लगा ॥ ६८ ॥ किं तुम कहाँसे आये और कौन हो ? किसके शिष्य हो और यहां किस प्रयोजनसे आये हो ? ऐसे उत्तम ज्ञानवाले ब्राह्मण पहले कभी मैंने नहीं देखे, बालक और बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ, ज्ञान और विज्ञानको जानने-वाला ॥ ६९ ॥ बुद्धिवालोंमें श्रेष्ठ ज्ञानविज्ञानमें श्रेष्ठ हो, शिष्टोंकी वाणी और रूपसे संपन्न मनोहर और प्रियदर्शन हो ॥ ७० ॥ इस प्रकारके पुत्र वैदिकैरप्रकाशैश्च पुनरप्यथ भारत ॥ प्रत्यक्षमृषिसंघानां वर्णयामास चित्रगुः ॥ ६६ ॥ ततो निरुत्तरान्दृष्ट्वा सोपाध्यायानृषींश्च तान् ॥ अवृद्धेनापि वृद्धास्तान्वामनेन महोजसा ॥ ६७ ॥ अद्भुतं चापि मेने स विरोचनमुतो बली ॥ मूर्ध्ना कृत्वाञ्जलिश्चेदमब्रवीद्विस्मितो वचः ॥ ६८ ॥ कुतस्त्वं कोऽसि कस्यासि किं ते हारित प्रयोजनम् ॥ नैवंविधः परिज्ञातोऽदृष्टपूर्वो मया द्विजः ॥ ६९ ॥ बाला मतिमतां श्रेष्ठो ज्ञानविज्ञानकोविदः ॥ शिष्टवाग्रूपसंपन्नो मनोज्ञः प्रियदर्शनः ॥ ७० ॥ नेदृशाः सन्ति देवानामृषीणामपि सूनवः ॥ न नागानां न यक्षाणां नासुराणां न रक्षसाम् ॥ ७१ ॥ न पितॄणां न सिद्धानां गन्धर्वाणां तथैव च ॥ योऽसि सोऽसि नमस्तेऽस्तु ब्रूहि किं करवाणि ते ॥ ७२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ उक्त एवं ह्यचिन्त्यात्मा बलिना वामनस्तदा ॥ प्रोवाचोपायतत्त्वज्ञः स्मितपूर्वमिदं वचः ॥ ७३ ॥ इति श्रीमहाभारते हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७० ॥

देवता और ऋषियोंकेभी नहीं हैं. नाग, यक्ष, दैत्य, राक्षस, पितर और गंधर्वोंकेभी पुत्र तेरे समान नहीं हैं ॥ ७१ ॥ जैसा तुम्हारा रूप है ऐसा पितर सिद्ध और गंधर्वोंका नहीं होता, तुम जो कोईभी हो मैं तुमको नमस्कार करता हूँ कहो तुम्हारा क्या प्रिय कर्म ? ॥ ७२ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकार बलिराजाके वचन श्रवण कर उपायके तत्त्वको जाननेवाले वामनजी मंद मुसकान सहित कहने लगे ॥ ७३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामनप्रादुर्भावे सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७० ॥

विष्णु बोले, कि बहुत खानेके पदार्थोंसे युक्त और सुंदर संस्कारोंसे ग्याप्त असुरेश बलिराजाका यज्ञ हो रहा है ॥ १ ॥ यह अति अद्भुत है; जैसे पहले ब्रह्माजीका यज्ञ हुआ था तथा असुरेशशत्रु इन्द्र, वरुण, यमके यज्ञ थे. है दैत्येन्द्र बलिराजा ! देवताओंके स्वामी इन्द्र, यम, वरुणकेभी यज्ञोंसे तैने विशेष यज्ञ किये हैं ॥ २ ॥ और स्वर्गमार्गको दिखानेवाले सब यज्ञोंमें उत्तम अश्वमेध यज्ञसे सब पापोंके नाशके अर्थ तुम पूजा करते हो ॥ ३ ॥ सो ब्रह्मादियोंने सर्व कामनासे संयुक्त और संपूर्ण यज्ञोंमें उत्तम और अश्वमेध नामसे विख्यात तुम्हारा यज्ञ माना है, यह श्रुति है कि अश्वमेध सब

विष्णुरुवाच ॥ अहो यज्ञोऽसुरेशस्य बहुभक्षः सुसंस्कृतः ॥ पितामहस्येव पुरा यजतः परमेष्ठिनः ॥ १ ॥ सुरेशस्य च शक्रस्य यमस्य वरुणस्य च ॥ विशेषितस्त्वया यज्ञो दानवेन्द्र महाबल ॥ २ ॥ यजता वाजिमेधेन ऋतूनां प्रवरेण तु ॥ सर्वपापविनाशाय त्वया स्वर्गप्रदर्शना ॥ ३ ॥ सर्वकाममयो ह्येष संमतो ब्रह्मादिनाम् ॥ ऋतूनां प्रवरः श्रीमानश्वमेध इति श्रुतिः ॥ ४ ॥ सुवर्णशृङ्गे हि महानुभावो लोहक्षुरो वायुजवो महारयः ॥ स्वर्गेक्षणः काञ्चनगर्भगौरः स विश्वयोनिः परमो हि मेध्यः ॥ ५ ॥ आस्थाय वैवाजिनमश्वमेधमिद्धा नरा दुष्कृतमुत्तरन्ति ॥ आहुश्च यं वेदविदो द्विजेन्द्रा वैश्वानरं वाजिनमश्वमेधम् ॥ ६ ॥ यथाश्रमाणां प्रवरो गृहाश्रमो यथा नराणां प्रवरो द्विजातयः ॥ यथाऽसुराणां प्रवरो भवानिह तथा ऋतूनां प्रवरोऽश्वमेधः ॥ ७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतच्छ्रुत्वा तु वचनं वामनेन समीरितम् ॥ मुदा परमया युक्तः प्राह दैत्यपतिर्वलिः ॥ ८ ॥

यज्ञोंसे उत्तम है ॥ ४ ॥ सुवर्णके शृङ्गोंसे संयुक्त महानुभाववाला और वायुके समान वेगवान्, महात्मा लोहक्षुरनामक वायुके समान वेगवासी और सत्यरूप नेत्रोंवाला सुवर्णके गर्भकी समान गौर वर्ण और विश्वयोनि परम अश्वमेध है अर्थात् पवित्र है ॥ ५ ॥ और अश्वमेध यज्ञसे मनुष्य पापोंको तिरते हैं, अश्वमेधयज्ञके घोड़ेको वेदके जाननेवाले ब्राह्मण अग्निरूप कहते हैं ॥ ६ ॥ जैसे सब आश्रमोंमें उत्तम गृहाश्रम है, जैसे सब मनुष्योंमें उत्तम ब्राह्मण है, जैसे सब दैत्योंमें उत्तम तुम हो. तैसेही संपूर्णयज्ञोंमें उत्तम यह अश्वमेध यज्ञ है ॥ ७ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकार वामनजीके कहे

वचनोंको श्रवण कर आनंदसे प्रसन्न हुआ दैत्योंका पति बलिराजा कहने लगा ॥ ८ ॥ बलि बोले; कि हे ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ ! तुम किसके शिष्य हो ? और क्या इच्छा करते हो, जो मैं तुमको वर दूं, तुम्हारा मंगल हो; मुझसे वर मांगो. मुझसे तुम मनवांछित लको प्राप्त होगे ॥ ९ ॥ वामन कहने लगे; मैं राज्य असवारी, रत्न भार्याको नहीं मांगता हूं जो तुम मुझपर प्रसन्न हो और धर्ममें बुद्धि है ॥ १० ॥ तो गुरुके प्रयोजन सिद्ध करनेके लिये मुझे तीन चरण पृथ्वी दो, यही परम वर है यह वामनजीके वचन सुन दैत्यराज बलिराजा कहने लगा ॥ १ ॥ कि हे विप्रेन्द्र ! तीन पैग पृथ्वीसे

बलिरुवाच ॥ कस्यासि ब्राह्मणश्रेष्ठ किमिच्छसि ददामि ते ॥ वरं वरय भद्रं ते यथेष्टं काममाप्नुहि ॥ ९ ॥ वामन उवाच ॥ न राज्यं न च यानानि न रत्नानि न च स्त्रियः ॥ कामये यदि तुष्टोऽसि धर्मे च यदि ते मतिः ॥ १० ॥ गुर्वर्थं मे प्रयच्छस्व पदानि त्रीणि दानव ॥ त्वमग्निशरणार्थाय एष मे प्रवरो वरः ॥ वामनस्य वचः श्रुत्वा प्राह दैत्यपतिर्बलिः ॥ ११ ॥ बलिरुवाच ॥ त्रिभिः किं त्वं विप्रेन्द्र पदैः प्रवदतां वर ॥ शतं शतसहस्राणां पदानां मार्गतां भवान् ॥ १२ ॥ शुक्र उवाच ॥ मा ददस्व महाबाहो न त्वं वेत्सि महासुर ॥ एष मायाप्रतिच्छन्नो भगवान्प्रवरो हरिः ॥ १३ ॥ वामनं रूपमास्थाय शक्रप्रियहितेप्सया ॥ त्वां वञ्चयितुमायातो बहुरूपधरो विभुः ॥ १४ ॥ एवमुक्तः स शुक्रेण चिरं संचिन्त्य वै बलिः ॥ प्रहर्षेण समायुक्तः किमतः पात्रमिष्यते ॥ १५ ॥ प्रगृह्य हस्ते संभ्रान्तो भृङ्गारं कनकोद्भवम् ॥ बलिरुवाच ॥ विप्रेन्द्र प्राङ्मुखस्तिष्ठ स्थितोऽस्मि कमलेश्वर ॥ १६ ॥

तुम्हें क्या लाभ होगा, वर वीस लाख पैग पृथ्वीको मांगो ॥ १२ ॥ तब शुक्राचार्य कहने लगे; हे राजन् ! हे महाबाहो ! ! पृथ्वीका दान तुम मत करो, इनको तुम नहीं जानते हो, यह मायासे आच्छादित साक्षात् विष्णु हैं ॥ १३ ॥ सो वामनरूपको धारण कर इन्द्रका प्रिय करनेके निमित्त तुझे ठगनेके अर्थ बालकका रूप धर आये हैं, यह विभु बहुरूपधारी हैं ॥ १४ ॥ इस प्रकार शुक्राचार्यके वचनको श्रवण कर बहुत कालतक चिन्ता कर आनंदित हुआ बलिराजा वामनजीसे अधिक अन्य पात्रको न जानकर ॥ १५ ॥ हाथमें सुवर्णकी शरीको ले बलिराजा कहने लगा. बलि बोले;

कि हे विप्रेन्द्र ! कमलनेत्र ! मैं पूर्वको सुख करे स्थित हूं ॥ १६ ॥ और आप उच्चरको सुख कीजिये. और तीन पैग पृथ्वीका ग्रहण करनेके अर्थ मेरे हाथसे जलकी प्राप्ति करो, क्योंकि तेरे गुरुकी वांछा पूर्ण होनी चाहिये ॥ १७ ॥ तब फिर शुकाचार्य कहने लगे; कि हे दैत्य ! इसके अर्थ पृथ्वीका दान मत दे, मैंने जान लिया कि यह साक्षात् विष्णु हैं, सो तुझको ठगता है. तुम ठगाईमें मत आओ ॥ १८ ॥ तब बलिराजा बोला; कि इस यज्ञमें साक्षात् आप आनकर प्राप्ति हो गये हैं. जिस बातकी इच्छा यह विष्णु भगवान् करेंगे, सोही मैं दूंगा ॥ १९ ॥ क्योंकि इस विष्णुसे

प्रतीच्छ देहि किं भूमिं का (किं) मात्रा भोः पदत्रयम् ॥ दत्तं च पातय जलं नैव मिथ्या भवेद्गुरुः ॥ १७ ॥ शुक्र उवाच ॥ भो न देयं कुतो दैत्य विज्ञातोऽयं मया ध्रुवम् ॥ कोऽयं विष्णुरहो प्रीतिर्वञ्चितस्त्वं न वञ्चितः ॥ १८ ॥ बलिरुवाच ॥ कथं स नाथोऽयं विष्णुर्यज्ञे स्वयमुपस्थितः ॥ दास्यामि देवदेवाय यद्यदिच्छत्ययं विभुः ॥ १९ ॥ को वान्यः पात्रभूतोऽस्माद्विष्णोः परतरो भवेत् ॥ एवमुक्त्वा बलिः शीघ्रं पातयामास वै जलम् ॥ २० ॥ वामन उवाच ॥ पदानि त्रीणि दैत्येन्द्र पर्याप्तानि ममानघ ॥ यन्मया पूर्वमुक्तं हि तत्तथा न तदुन्यथा ॥ २१ ॥ वैशम्पायन उवाच-॥ इत्येतद्वचनं श्रुत्वा वामनस्य महौजसः ॥ कृष्णाजिनोत्तरीयं स कृत्वा वैरोच- निस्तदा ॥ २२ ॥ एवमस्तिवति दैत्येशो वाक्यमुक्त्वारिसूदनः ॥ ततो वारिसमापूर्णं भृङ्गारं स परामृशत् ॥ २३ ॥ वामनो ह्यसु- रेन्द्रस्य चिकीर्षुः कदनं महत् ॥ क्षिप्रं प्रसारयामास दैत्यक्षयकरं करम् ॥ २४ ॥

उपरान्त अन्य उत्तम कौन पात्र है, इस प्रकार कह उस समय बलिराजाने अपने हाथमें जल ग्रहण किया ॥ २० ॥ तब वामनजी कहने लगे; कि हे दैत्येन्द्र ! मेरे पैरोंसे नापी हुई तीन पैग पृथ्वी तुझको दो. अन्य पदार्थकी अभिलाषा नहीं है ॥ २१ ॥ वैशम्पायन बोले; कि इस प्रकार वामनजीके वचनको श्रवण करके काले मृगकी छालाको कंधेपर धारण करनेवाले बलिराजा कहने लगे ॥ २२ ॥ ऐसेही होगा, तब जलसे पूरित झारीको अच्छी प्रकार हाथमें धारण कर लिया ॥ २३ ॥ तब बलिराजाके राज्यको खोनेकी इच्छासे वामनजीने तिसी समय अपना दैत्यका क्षय करने-

वाला हाथ फैलाया ॥ २४ ॥ जब पूर्वको मुखकर बलिराजाने मनसे द्वासीसहित जलको वामनजीके हाथमें दिया ॥ २५ ॥ तब तिस अचिन्त्य अतिपरा-
क्रम करनेवाले और बलिराजाकी लक्ष्मीकां हरनेवाले महात्मा वामनजीके अद्भुतरूपको देख ॥ २६ ॥ लक्ष्मणोंको जाननेवाले बुद्धिमान् प्रहाद वचन
कहने लगे. प्रहाद बोले, कि हे राजन् ! वामनरूपा धारण करनेवाले इस बालकके हाथमें जल मत दो ॥ २७ ॥ यह वही विष्णु हैं, जिसने तुम्हारे प्रपि-
तामह हिरण्यकशिपुको मारा है सोई तुमको ठगनेके लिये इस स्थानमें प्राप्त हुए हैं ॥ २८ ॥ बलिराजा बोले, कि इस देवके अर्थमें प्रतिग्रह दूंगा

प्राङ्मुखश्चापि दैत्यैश्च तस्मै सुमनसा जलम् ॥ दातुकामः करे यावत्तावत्तं प्रत्यषेधयत् ॥ २५ ॥ तस्य तद्रूपमालोक्य ह्यचिन्त्यं च
महात्मनः ॥ अभूतपूर्वं च हरेर्जिहीर्षोः श्रियमासुरीम् ॥ २६ ॥ इङ्कितज्ञोऽग्रतः स्थित्वा प्रहादस्त्वब्रवीद्विचः ॥ प्रहाद उवाच ॥ मा
ददस्व जलं हस्ते बटोर्ध्वामनरूपिणः ॥ २७ ॥ स त्वसौ येन ते पूर्वं निहतः प्रपितामहः ॥ विष्णुरेष महाप्राज्ञस्त्वां वञ्चयितुमा-
गतः ॥ २८ ॥ बलिरुवाच ॥ हन्त तस्मै प्रदास्यामि देवायेमं प्रतिग्रहम् ॥ अनुग्रहकरं देवमीदृशं जगतः प्रभुम् ॥ २९ ॥ ब्रह्म-
णोऽपि गरीयांसं पात्रं लप्स्यामहे वयम् ॥ अवश्यं चासुरश्रेष्ठ दातव्यं दीक्षितेन वै ॥ ३० ॥ इत्युक्त्वासुरसंवांनां मध्ये वैरोचनिस्तदा ॥
देवाय प्रददौ तस्मै पदानि त्रीणि विष्णवे ॥ ३१ ॥ प्रहाद उवाच ॥ दानवेश्वर मा दास्त्वं विप्रायास्मै प्रतिग्रहम् ॥ नेमं विप्रशिंशुं
मन्ये नेदृशो भवति द्विजः ॥ ३२ ॥ रूपेणानेन दैत्येन्द्र सत्यमेवं ब्रवीमि ते ॥ नारसिंहमहं मन्ये तमेवं पुनरागतम् ॥ ३३ ॥

और यदि यह साक्षात् विष्णु हैं, तो बड़ा अच्छी बात है ॥ २९ ॥ ब्रह्मजोसेभी उत्तम यह पात्र हयको प्राप्त हुआ. हे असुरश्रेष्ठ ! दीक्षित पुरुषको
अवश्य दान देना चाहिये ॥ ३० ॥ इस प्रकार दैत्योंके समूहमें कह बलिराजा तीन पैग पृथ्वी वामनजीके अर्थ दान करने लगे ॥ ३१ ॥ जिस समय
वामनजीके हाथमें बलिराजा जल देने लगा, तब प्रहाद बोला, कि हे दैत्यराज ! इस बालकके अर्थ प्रतिग्रह मत दो, इस बालकको मैं ब्राह्मणका पुत्र
नहीं जानता, ऐसा ब्राह्मण नहीं होता है ॥ ३२ ॥ और हे दैत्येन्द्र ! इस रूपसे फिर मैं तिस नृसिंहजीके आगमनको मानता हूं, यह मैं सत्यही कहता

हूं ॥ ३३ ॥ बलिराजा हँसकर पुडकता हुआ प्रहादसे कहने लगा; कि हे दैत्यजी ! ब्राह्मण दानकी याचना करे, और दाता दान नहीं दे; तब दोनोंकी अलक्ष्मी यजमानके शरीरमें प्रवेश करती है ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ जो यजमान ब्राह्मणके अर्थ प्रतिज्ञा करके प्रतिग्रह नहीं देता है, वह पापी मित्र गोत्रसे संयुक्त नरकमें जाता है ॥ ३६ ॥ इस कारण अलक्ष्मीके भयसे भयभीत हुआ मैं इस पृथ्वीका दान करता हूं, इस ब्राह्मणसे अधिक कोई दान लेने वाला नहीं है ॥ ३७ ॥ इस कारण इसे अवश्य दान दूंगा. हे दानव ! इस समय मेरा हृदय अत्यन्त प्रसन्न है ॥ ३८ ॥ वामनरूपको धारण करनेवाले

एवमुक्तस्तदा तेन प्रहादेनामितौजसा ॥ प्रहादमब्रवीद्वाक्यमिदं निर्भर्त्सयन्निव ॥ ३४ ॥ बलिरुवाच ॥ देहीति याचते यो हि प्रत्याख्याति च योऽसुर ॥ उभयोरप्यलक्ष्म्या वै भागस्तं विशते नरम् ॥ ३५ ॥ प्रतिज्ञाय तु यो विप्रे न ददाति प्रतिग्रहम् ॥ स याति नरकं पापी मित्रगोत्रसमन्वितः ॥ ३६ ॥ अलक्ष्मीभयभीतोऽहं ददाम्यस्मै वसुन्धराम् ॥ प्रतिग्रहीता चाप्यन्यः कश्चिदस्माद्विजोऽथ वै ॥ ३७ ॥ नाधिको विद्यते यस्मात्तददामि वसुन्धराम् ॥ हृदयस्य च मे तुष्टिः परा भवति दानव ॥ ३८ ॥ दृष्ट्वा वामनरूपेण याचन्तं द्विजपुङ्गवम् ॥ एष तस्मात्प्रदाल्यामि न स्थास्यामि निवारितः ॥ ३९ ॥ भूयश्च प्राब्रवीदेवं वामनं विप्ररूपिणम् ॥ स्वल्पैः स्वल्पमते किं ते पदैस्त्रिभिर्नुत्तमम् ॥ ४० ॥ कृत्स्नां ददामि ते विप्र पृथिवीं सागरेवृताम् ॥ वामन उवाच ॥ न पृथ्वीं कामये कृत्स्नां संतुष्टोऽस्मि पदैस्त्रिभिः ॥ एष एव रुचिष्यो मे वरो दानवसत्तम ॥ ४१ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तथास्त्विति बलिः प्रोच्य स्पर्शयामास दानवः ॥ पदानि त्रीणि देवाय विष्णवेऽमिततेजसे ॥ ४२ ॥

इस उत्तम ब्राह्मणको देखकर अभी मैं दान देता हूं, किसीके कहनेसे मैं निवारित नहीं हूंगा ॥ ३९ ॥ इस प्रकार कहकर फिर वामनजीसे बलिराजा कहने लगे, कि हे स्वल्पमते ! तीन पैग पृथ्वीसे तुमको क्या होगा ॥ ४० ॥ सब समुद्रोंसे पारवृत्त इस संपूर्ण पृथ्वीको मैं तुम्हारे अर्थ देता हूं लो, तब वामनजी कहने लगे, कि संपूर्ण पृथ्वीको लेनेकी मेरी इच्छा नहीं है, मैं तीन पैग पृथ्वीमें प्रसन्न हूं हे दानवश्रेष्ठ ! यह वरदान मुझे देना चाहिये ॥ ४१ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि ऐसेही होगा, यह वचन बलिराजा कह तीन पैग पृथ्वी वामनजीके अर्थ देनेको अपने हाथसे दक्षिणासहित जलको वामन-

जीके हाथमें छोड़ते हुए ॥ ४२ ॥ जब वामनजीके हाथमें जलका स्पर्श हुआ, तब वामनजीने वामनरूपको त्याग सर्वदेवमय रूपको दिखाया ॥ ४३ ॥ अर्थात् पृथ्वी दोनों चरण, आकाश मस्तक, चन्द्रमा और सूर्य नेत्र, पिशाच पैरोंकी अंगुली, गुह्यक हाथोंकी अंगुलि ॥ ४४ ॥ और विश्वेदेवा जानु गोद, साध्य देवता और यक्ष नख, अप्सरा लेख और विजली दृष्टि, सूर्यकी किरणें केश ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ रोम विदिशा, दिशा कान, दोनों अश्विनीकुमार कानके भीतर सुननेका शब्द, वायु नासिका ॥ ४७ ॥ चंद्रमा प्रसाद, धर्म मन, सत्य वाणी, सरस्वती तोये तु पतिते हस्ते वामनोऽभूद्वामनः ॥ सर्वदेवमयं रूपं दर्शयामास वै विभुः ॥ ४३ ॥ भूः पादौ द्यौः शिरश्चास्य चन्द्रादित्यौ च चक्षुषी ॥ पादाङ्गुल्यः पिशाचाश्च हस्ताङ्गुल्यश्च गुह्यकाः ॥ ४४ ॥ विश्वेदेवाश्च जानुस्था जङ्घे साध्याः सुरोत्तमाः ॥ यक्षा नखेषु संभूता लेखाश्चाप्सरसस्तथा ॥ ४५ ॥ ताडिद्वृष्टिः सुविपुला केशाः सूर्याश्चस्तथा ॥ तारका रोमकूपाणि रोमाणि च महर्षयः ॥ ४६ ॥ बाहवो विदिशश्चास्य दिशः श्रोत्रे तथैव च ॥ अश्विनौ श्रवणौ चास्य नासा वायुर्महाबलः ॥ ४७ ॥ प्रसादश्चन्द्रमाश्चैव मनो धर्मस्तथैव च ॥ सत्यमस्याभवद्वाणी जिह्वा देवी सरस्वती ॥ ४८ ॥ ग्रीवादितिर्महादेवी तालुः सूर्यश्च दीप्तिमान् ॥ द्वारं स्वर्गस्य नाभिर्वै मित्रस्त्वष्टा च वै भ्रुवौ ॥ ४९ ॥ मुखं वैश्वानरश्चास्य वृषणो तु प्रजापतिः ॥ हृदयं भगवान्ब्रह्मा पुंस्त्वं वै विश्वतोमुनिः ॥ ५० ॥ पृष्ठेऽस्य वसवो देवा मरुतः पादसंधिषु ॥ सर्वच्छन्दांसि दक्षना ज्योतीषि विमलाः प्रभाः ॥ ५१ ॥ ऊरू रुद्रो महादेवो धैर्यं चास्य महार्णवः ॥ उदरे चास्य गन्धर्वा भुजगाश्च महाबलाः ॥ ५२ ॥ लक्ष्मीर्मैधा धृतिः कान्तिः सर्वविद्या च वै कटिः ॥ ललाटमस्य परमं स्थानं च परमात्मनः ॥ ५३ ॥

जिह्वा ॥ ४८ ॥ अदिति ग्रीवा, प्रकाशमान सूर्य तालु, स्वर्गका द्वार नाभि, मित्र और त्वष्टा दोनों भृकुटी ॥ ४९ ॥ अग्नि मुख, दक्षप्रजापति वृषण, ब्रह्मा हृदय, कश्यपजी पुरुषपन ॥ ५० ॥ पृष्ठभागमें वसु देवता, मरुत देवता सब संधियोंमें, और सब छंद दांतोंके स्थानमें और ज्योतिर्गण प्रभा ॥ ५१ ॥ महादेव ऊरु, समुद्र धैर्य, गंधर्व और दिव्य बली सर्प उदरमें ॥ ५२ ॥ लक्ष्मी मेधा धृति कान्ति विद्या ये कटिमें, और परमात्माका परम स्थान

मस्तक है ॥ ५३ ॥ सब ज्योति तप और देवताओंका राजा इन्द्र उन महात्माका तेज है ॥ ५४ ॥ स्तन और कांखमें चारों वेद, पशुबंध तथा ब्राह्म-
 णोंकी चेष्टा दृष्टि है ॥ ५५ ॥ इस प्रकार उन विष्णुके रूपको देख क्रोधको प्राप्त हुए महादेव समीपमें प्राप्त होने लगे जैसे पतंग अग्निमें जाते हैं ॥ ५६ ॥
 इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने विश्वरूपप्रकाशे एकसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७१ ॥ वैशम्पायन बोले; कि हे जन्मेजय !
 तिन दैत्योंके नाम रूप आभरण और मुख्य शस्त्रोंको श्रवण करो ॥ १ ॥ विप्रचित्ति, शिबि, शंकु, अयःशंकु, अयःशिरा, अश्वशिरा, बली, हयग्रीव ॥ २ ॥

सर्वज्योतींषि यानीह तपः शक्रस्तु देवराट् ॥ तस्य देवाधिदेवस्य तेजो ह्याहुर्महात्मनः ॥ ५४ ॥ स्तनौ कक्षौ च वेदाश्च ओष्ठौ
 चास्य मखाः स्थिताः ॥ इष्टयः पशुबन्धाश्च द्विजानां चेष्टितानि च ॥ ५५ ॥ तस्य देवमयं रूपं दृष्ट्वा विष्णोर्महासुराः ॥ अभ्यस-
 र्पन्त संक्रुद्धाः पतङ्गा इव पावकम् ॥ ५६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे एकसप्ततितमोऽ-
 ध्यायः ॥ ७१ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ शृणु नामानि सर्वेषां रूपाण्यभिजनानि च ॥ आयुधानि च मुख्यानि दानवानां महात्मनाम् ॥ १ ॥
 विप्रचित्तिः शिबिः शङ्करयः शङ्कुस्तथैव च ॥ अयःशिरा अश्वशिरा हयग्रीवश्च वीर्यवान् ॥ २ ॥ वेगवान्केतुमानुयः सोमव्यग्रो महा-
 सुरः ॥ पुष्करः पुष्कलश्चैव साश्वोऽश्वपतिरेव च ॥ ३ ॥ प्रहादोऽश्वशिराः कुम्भः सहादो गगनप्रियः ॥ अनुहादो हरिहरो वाराहः
 संहरोरुजः ॥ ४ ॥ वृषपर्वा विरूपाक्षो अतिचन्द्रः सुलोचनः ॥ निष्प्रभः सुप्रभः श्रीर्मास्तथैव च निरुदरः ॥ ५ ॥ एकवक्रो महा-
 वक्रो द्विवक्रः कालसन्निभः ॥ शरभः शलभश्चैव कुणपः कुलपः क्रथः ॥ ६ ॥ बृहत्कीर्तिर्महागर्भः शङ्कुकर्णो महाध्वनिः ॥ दीर्घ-
 जिह्वोऽर्कवदनो मृदुबाहुर्मृदुप्रियः ॥ ७ ॥

वेगवान्, केतुमान्, उग्र, सोम, व्यग्र, पुष्कर, पुष्कल, साश्व, अश्वपति ॥ ३ ॥ प्रहाद, अश्वशिरा, कुम्भ, सहाद, गगनप्रिय, अनुहाद, हरि, हर, वाराह,
 संहर, अरुज ॥ ४ ॥ वृषपर्वा, विरूपाक्ष, सुनींद्र, चंद्रलोचन, निष्प्रभ, सुप्रभ, निरुदर ॥ ५ ॥ एकवक्र, द्विवक्र, महावक्र, कालसन्निभ, शरभ, शलभ,
 कुणप, कुलप, क्रथ ॥ ६ ॥ बृहत्कीर्ति, महागर्भ, शंकुकर्ण, महाध्वनि, दीर्घजिह्व, अर्कवदन, मृदुबाहु, मृदुप्रिय ॥ ७ ॥

वायु, गविष्ठ, नमुचि, शम्बर, महान् विशर, चंद्रहंता, क्रोधहंता, क्रोधवर्द्धन ॥ ८ ॥ कालक, कालकाक्ष, वृत्र, क्रोध, विमोक्षण, गरिष्ठ, हविष्ठ, प्रलंब, नरक, पृथु ॥ ९ ॥ चन्द्रतापन, वातापी, केतुमान्, बडर्पित, अमिलोमा, पुलोमा, बाष्कल, प्रमद ॥ १० ॥ मद, शृगालवदन, कराल, केशि, एकाक्ष, एकबाहु, तुहुंड, सृमल, सूर ॥ ११ ॥ इनको आदि ले औरती बहुतसे दैत्य महाविष्णु ने घेर कर स्थित हुए ॥ १२ ॥ कितनेही फांसीको हाथमें लिये और कोई मुखको फैलाये, कितनेही गधेके समान शब्द करनेवाले, कितनेही शत्रु, वज्र और चक्रको हाथोंमें लिये ॥ १३ ॥

वायुर्गविष्ठो नमुचिः शम्बरो विशरो महान् ॥ चन्द्रहन्ता क्रोधहन्ता क्रोधवर्द्धन एव च ॥ ८ ॥ कालकः कालकाक्षश्च वृत्रः क्रोधो विमोक्षणः ॥ गविष्ठश्च हविष्ठश्च प्रलम्बो नरकः पृथुः ॥ ९ ॥ चन्द्रतापनवातापी केतुमान्बडर्पितः ॥ असिलोमा पुलोमा च बाष्कलः प्रमदो मदः ॥ १० ॥ शृगालवदनश्चैव करालः केशिरेव च ॥ एकाक्षश्चैकबाहुश्च तुहुण्डः सृमलः सूरः ॥ ११ ॥ एते चान्ये च बहवः क्रममाणं त्रिविक्रमम् ॥ उपतस्थुर्महात्मानं विष्णुं दैत्यगणास्तदा ॥ १२ ॥ प्रासोद्यतकराः केचिद्व्यादिनास्याः खरस्वनाः ॥ शनघ्नी-चक्रहस्ताश्च वज्रहस्तास्तथा परे ॥ १३ ॥ खड्गपट्टिशहस्ताश्च परश्वधधराः परे ॥ प्रासमुद्गरहस्ताश्च तथा परिघपाणयः ॥ १४ ॥ महाशनिव्यग्रकरा मौशलास्तु महाबलाः ॥ महावृक्षोद्यतकरास्तथैव च धनुर्धराः ॥ १५ ॥ गदाभुशुण्डिहस्ताश्च वज्रहस्तास्तथा परे ॥ महापट्टिशहस्ताश्च तथा परिघपाणयः ॥ १६ ॥ असिकम्पनहस्ताश्च दानवा युद्धदुर्मदाः ॥ नानाप्रहरणा घोरा नानावेषा महाबलाः ॥ १७ ॥ कूर्मकुट्टवक्राश्च हस्तिवक्रास्तथा परं ॥ खराष्ट्रवदनाश्चैव वराहवदनास्तथा ॥ १८ ॥

और कितनेही खड्ग, पट्टिश, फरशेको धारण किये, कितनेही प्रास, मुद्गर, परिघोंको हाथोंमें लिये ॥ १४ ॥ और कोई महाभयानि, शिला, मुशल और वहावृक्षोंको तथा महाधनुष्योंको हाथोंमें धारण करनेवाले ॥ १५ ॥ गदा भुशुण्डी हाथमें लिये, वज्र लिये, महापट्टिश परिघ लिये ॥ १६ ॥ कितनेही तलवारोंको हाथोंमें फिरानेवाले, कितनेही अनेक प्रकारके प्रहारोंको धारण करनेवाले और कितनेही युद्धमें दुर्मद, कितनेही अनेक प्रकारके वेषोंको धारण करनेवाले ॥ १७ ॥ कितनेही कछुए तथा मुरगेके मुखके समान मुखवाले,

कितनेही हाथीके समान मुखवाले, कितनेही गधे और ऊंटके समान मुखवाले कितनेही शूकरके समान मुखवाले ॥ १८ ॥ कितनेही भयंकर मुख मच्छके समान मुखवाले और कितनेही शिशुमार, मच्छके समान मुखवाले ॥ १९ ॥ कोई बिआव तोनेके समान दीर्घमुखवाले ॥ २० ॥ कोई मूषक, मृग ऊंटसे दीर्घमुख, नकुल, कबूतर ॥ २१ ॥ कौच, चक्रवा, गोधा, मत्स्य, ऋक्ष, शार्ङ्गल, गेंडा, भिंह, भेड, भैंसके समान मुखवाले ॥ २२ ॥ और कितनेही हाथीके चर्मके बत्तोंको, छोटे, कितनेही मृगछालाके बत्तोंवाले कितनेही चीरछा बत्तोंवाले और कितनेही वृक्षोंके बत्तोंके बत्तों-

भीमा मकरवक्राश्च शिशुमारमुखास्तथा ॥ मार्जारशुकवक्राश्च दीर्घवक्राश्च दानवाः ॥ १९ ॥ गरुडाननाः खड्गमुखा मयूरवदना-
स्तथा ॥ अश्ववक्रा बभ्रुवक्रा घोरा मृगमुखास्तथा ॥ २० ॥ उष्ट्रशूल्यकवक्राश्च दीर्घवक्राश्च दानवाः ॥ नकुलस्येव वक्राश्च
पारावतमुखास्तथा ॥ २१ ॥ चक्रवाकमुखाश्चैव गोधवक्रास्तथा परे ॥ तथा मृगाननाः शूरा गोजादिमहिषाननाः ॥ २२ ॥ कृक-
लासमुखाश्चैव व्याघ्रवक्रास्तथा परे ॥ ऋक्षशार्ङ्गलवक्राश्च सिंहवक्रास्तथा परे ॥ २३ ॥ गजेन्द्रचर्मवसनास्तथा कृष्णाजिनाम्बराः ॥
चीरसंवृतगात्राश्च तथा फलकवाससः ॥ २४ ॥ उष्णीषिणो मुकुटिनस्तथा कुण्डलिनोऽसुराः ॥ किरीटिनो लम्बाशिखाः कम्बुग्रीवाः
सुवर्चसः ॥ २५ ॥ नानावेषधरा दैत्या नानामाल्यानुलेपनाः ॥ स्वान्यायुधानि दीप्तानि प्रगृह्यासुरसत्तमाः ॥ २६ ॥ क्रममाणं
हृषीकेशमुपातिष्ठन्त दानवाः ॥ प्रमथ्य सर्वान्दैतेयान्पादहस्ततलैः प्रभुः ॥ २७ ॥ रूपं कृत्वा महाकायं जहाराशु स मेदिनीम् ॥
त्रैलोक्यं क्रममाणस्य द्युतिरादित्यसंभवा ॥ २८ ॥

वाले ॥ २३ ॥ कितनेही पगडी बांधनेवाले कितनेही मुकुटको धारण करनेवाले, कितनेही कुण्डलोंको पहरनेवाले, कितनेही दीर्घ चोटीवाले, कितनेही शंखके समान ग्रीवावाले, और कितनेही सुंदर तेजवाले थे ॥ २४ ॥ २५ ॥ कितनेही अनेक प्रकारके वेषोंको धारण करनेवाले, कितनेही अनेक प्रकारकी पाला और चंदन आदि अनुलेपोंको धारण करनेवाले सब दैत्य अनेक प्रकारके प्रकाशितरूप अपने शस्त्रोंको ग्रहण कर ॥ २६ ॥ पैरोंसे पृथ्वीको नापनेवाले विष्णुके समीपमें प्राप्त हुए, तब पैर और हाथोंके तलवोंसे प्रभुने सब दैत्योंको मथकर ॥ २७ ॥ तब वह महाकायरूप करके

पृथ्वीको हरण करते हुए, त्रिलोकीको हरनेके समय विस्तृत रूपवाले विष्णुकी कान्ति सूर्यके समान हुई ॥ २८ ॥ और पृथ्वीको विक्रमण करनेके समय चंद्रमा और सूर्य विष्णुके दोनों स्तनोंके मध्यस्थानमें स्थित हुए और आकाशमें प्रक्रमण करनेके समय विष्णुके सक्थिदेशमें चंद्रमा और सूर्य स्थित हुए, अर्थात् कटिके नीचे आकाश स्थित हुआ ॥ २९ ॥ विष्णुके अतिविक्रमण करनेके समय चन्द्रमा और सूर्य पादमूलमें स्थित हुए ऐसे अमितवीर्यवाले विष्णुके पशुको ब्राह्मण कहते हैं कि सब लोकोंको जीतकर और बहुतसे दैत्योंको मारकर ॥ ३० ॥ लोकनमस्कृत विष्णु भगवान् इन्द्रको पृथ्वी देते गये और पृथ्वीतलके नीचे सुतल नामक पाताल ॥ ३१ ॥ बलवान् विष्णु भगवान्ने बलिराजाके निवासको दिया, तब बलितस्य विक्रमतो भूमिं चन्द्रादित्यौ स्तनान्तरे ॥ नभः प्रक्रममाणस्य सक्थिदेशे व्यवस्थितौ ॥ परं विक्रममाणस्य जानुदेशे व्यवस्थितौ ॥ २९ ॥ विष्णोरमितवीर्यस्य वदन्त्येवं द्विजातयः ॥ जित्वा लोकत्रयं कृत्स्नं हत्वा चासुरपुङ्गवान् ॥ ३० ॥ ददौ शक्राय वसुधां हरिलोकनमस्कृतः ॥ सुतलं नाम पातालमधस्ताद्रसुधातले ॥ ३१ ॥ बलेर्दत्तं भगवता विष्णुना प्रभविष्णुना ॥ तदवाप्यासुरश्रेष्ठश्चकार मतिमुत्तमाम् ॥ ३२ ॥ रसातलतले वासमकरोदसुराधिपः ॥ तत्रस्थश्च महातेजा ध्यानं परममास्थितः ॥ ३३ ॥ उवाच वचनं धीमान् विष्णुं लोकनमस्कृतम् ॥ किं मया देव कर्तव्यं ब्रूहि सर्वमशेषतः ॥ ततो दैत्याधिपं प्राह देवो विष्णुः सुरोत्तमः ॥ ३४ ॥ विष्णुरुवाच ॥ ददामि ते महाभाग परितुष्टोऽस्मि तेऽसुर ॥ वरं वरय भद्रं ते यथेष्टं काममाप्नुहि ॥ ३५ ॥ मा च शक्रस्य वचनं प्रतिहासीः कथंचन ॥ अहमाज्ञापयामि त्वां श्रेयश्चैवमवाप्स्यसि ॥ ३६ ॥ राजा उत्तम मतिको प्राप्त हो पातालमें वास करने लगे ॥ ३२ ॥ और तहां परम ध्यानमें स्थित हुआ बलिराजा ॥ ३३ ॥ लोकनमस्कृत विष्णु भगवान्ने वचन कहने लगा, कि हे देव ! मुझे क्या करना चाहिये ? सो आप विस्तारसे कहिये तब बलिराजासे विष्णु भगवान् कहने लगे ॥ ३४ ॥ हे महाभाग ! तेरे निमित्त वर दूंगा, तू वरको मांग मैं प्रसन्न हुआ हूँ तेरा कल्याण हो और मनोवांछित फलको प्राप्त हो ॥ ३५ ॥ और इन्द्रके वचनको कभीभी न हँसना, मैं तुझे आज्ञा देता हूँ, तू सुखको प्राप्त होगा ॥ ३६ ॥

इस प्रकार कहकर फिर बलिराजाको मधुरवाणीसे सात्वत करनेवाले और सर्व लोकको करनेवाले वरेण्य विष्णु कहने लगे ॥ ३७ ॥
जो तैने अपने हाथसे जल दिया और मैंने वह जल ग्रहण किया, इस कारण दैत्य और देवताओंसे तुमको भय न होगा ॥ ३८ ॥ हे
महाभसुर ! सुतलनामक पाताल लोकमें सब दैत्यगणोंके संग तुम मेरे प्रसादसे वास करो ॥ ३९ ॥ और देवताओंके देव अति-
तेजस्वी इन्द्रकी शिक्षाका कभी नाश नहीं करना, यह मेरी आज्ञा मानना ॥ ४० ॥ हे महाभसुर ! तुमको सब देवताओंकी पूजा करनी योग्य है. हे महाभाग !

अथ दैत्याधिपं प्राह विष्णुर्देवाधिपानुजः ॥ वाचा परमया देवो वरेण्यः प्रभुरीश्वरः ॥ ३७ ॥ यत्त्वया सलिलं दत्तं गृहीतं पाणिना
मया ॥ तस्मात्ते दैत्यदेवेभ्यो नास्ति जातु भयं क्वचित् ॥ ३८ ॥ सुतलं नाम पातालं तत्र त्वं सानुगो वस ॥ सर्वदैत्यगणैः सार्द्धं
मत्प्रसादान्महाभसुर ॥ ३९ ॥ न च ते देवदेवस्य शक्रस्यामिततेजसः ॥ शासनं प्रतिहन्तव्यं स्मरता शासनं मम ॥ ४० ॥ देवताश्चापि
ते सर्वाः पूज्या एव महाभसुर ॥ भोगांश्च विविधान्सम्यक् यज्ञांश्च सहदाक्षिणान् ॥ ४१ ॥ प्राप्स्यसे च महाभाग दिव्यान्कामान्यथे-
प्सितान् ॥ इह चासुत्र चाक्षय्यान्विविधांश्च परिच्छदान् ॥ ४२ ॥ दैत्याधिपत्यं च सदा मत्प्रसादादवाप्स्यसि ॥ यदा चेतां मया
प्रोक्तां मर्यादां चालयिष्यसि ॥ वधिष्यन्ति तदा हि त्वां नागपाशैर्महाबलाः ॥ ४३ ॥ नमस्कार्याश्च ते नित्यं महेन्द्राद्या दिवौकसः ॥
मम ज्येष्ठः सुरश्रेष्ठः शासनं प्रतिगृह्यताम् ॥ ४४ ॥ बलिरुवाच ॥ देवदेव महाभाग अद्भुतचक्रगदाधर ॥ सुरासुरगुरो श्रेष्ठ सर्वलो-
कमहेश्वर ॥ तत्रासतो मे पाताले भागं ब्रूहि सुरोत्तम ॥ ४५ ॥

तुम दक्षिणासहित यज्ञके फलको प्राप्त होगे ॥ ४१ ॥ मनोवांछित रूप दिव्यकामनाओंको तुम प्राप्त होगे और इस लोकमें तथा परलोकमें सुखको और
अनेक प्रकारके स्थानोंको ॥ ४२ ॥ दैत्योंके राजपनेको और अनेक प्रकारके भोगोंको तुम मेरे प्रसादसे प्राप्त होगे, और जब तुम मेरी कही इस मर्यादाको
उल्लंघन करोगे तो तुमको अतिबलवाले सर्प अपने फणोंसे मारेंगे ॥ ४३ ॥ इस कारण तुम महेन्द्रादिको नित्य नमस्कार करना, मेरे बड़े भ्राता देवताओंमें
श्रेष्ठ इन्द्रकी शिक्षा सब कालमें ग्रहण करनी चाहिये ॥ ४४ ॥ बलि कहने लगा, कि हे देवदेव ! हे महाभाग ! हे शंख चक्र गदाधर ! हे सुरासुरगुरुश्रेष्ठ !

हे सर्वलोकमहेश्वर ! पातालमें वास करनेवाले मुझे भागकी कल्पना कीजिये ॥ ४५ ॥ और किस प्रकार मैं तहां स्थिति कहां ? मुझे भोजनके लिये क्या मिलेगा जिससे मेरी अक्षय तृप्ति होवे. विष्णु भगवान् बोले ॥ ४६ ॥ हे दैत्यसत्तम ! वेदके जाननेवालेके विना श्राद्ध किया और ब्राह्मे विना वेदका पाठ किया और दक्षिणारहित यज्ञ और ऋत्विक्के विना हवन और श्रद्धाके विना दान किया और संस्कारके रहित हविर्द्रव्य यह छः भाग तुम्हारे हैं, इनका फल तुवको मिलेगा ॥ ४७ ॥ मुझसे वैर करनेवालोंका और मेरे भक्तोंसे वैर करनेवालोंका पुण्य और कयविक्रय करते अभिहोत्रियोंका

ममात्रमशनं देव प्राशनार्थमारिंदम ॥ तद्वदस्व सुरश्रेष्ठ तृप्तिर्येन ममाक्षया ॥ ४६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अश्रोत्रियं श्राद्धमधीतमव्रतम-
दक्षिणं यज्ञमननर्त्विजा द्रुतम् ॥ अश्रद्धया दत्तमसंस्कृतं हविरंते प्रदत्तास्तव दैत्य भागाः ॥ ४७ ॥ पुण्यं सद्योषितं यच्च मद्भ्रागद्वेषिणां
तथा ॥ क्रयविक्रयसक्तानां पुण्यं यच्चाभिहोत्रिणाम् ॥ ४८ ॥ अश्रद्धया च यद्दानं ददतां यजतां तथा ॥ तत्सर्वं तव दैत्येन्द्र
मत्प्रसादाद्भाविष्यति ॥ ४९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतच्छ्रुत्वा तु वचनं बलिर्निष्णोर्महात्मनः ॥ एवमस्तिवाति तं प्रोक्त्वा पाताल-
मसुरोत्तमः ॥ ५० ॥ प्रविवेश महानादो देवाज्ञां प्रतिपालयन् ॥ भगवानपि राज्यानां प्रविभागांश्चकार ह ॥ ५१ ॥ ददौ पूर्वा दिशं
चैर्द्रां शक्रायामिततेजसे ॥ याम्यां यमाय देवाय पितृराज्ञे महात्मने ॥ ५२ ॥ पश्चिमां तु दिशं प्रादाद्रुणाय महात्मने ॥ उत्तरां च
कुबेराय यक्षाधिपतये दिशम् ॥ ५३ ॥ अधस्तां नागराजाय सोमायोर्द्धां दिशं ददौ ॥ एवं विभज्य त्रैलोक्यं विष्णुर्वलवतां वरः ॥ ५४ ॥

पुण्य ॥ ४८ ॥ और श्रद्धासे रहित दान और पूजन यह सब हे दैत्येन्द्र ! मेरे प्रसादसे तेरा भाग होगा ॥ ४९ ॥ वैशम्पायन कहने लगे कि इस प्रकार विष्णुके वचनको सुनकर “ऐसेही हो” इस वचनको कहकर असुरश्रेष्ठ ॥ ५० ॥ विष्णुकी आज्ञाको प्रतिपालन कर बलि पाताललोकमें प्रवेश कर गया और विष्णुने देशोंका विभाग किया ॥ ५१ ॥ अर्थात् इन्द्रकी पूर्व दिशाको अमिततेजवाले इन्द्रके अर्थ देते हुए और दक्षिणदिशाको पितरोंके राजा धर्मराजके अर्थ दिपा ॥ ५२ ॥ और पश्चिम दिशा वरुणजीको दी, उच्चर दिशा यक्षोंके राजा कुबेरको दी ॥ ५३ ॥ और नीचेके लोक शेष-

नागको दिये, और ऊर्ध्वदिशाको चंद्रमाके अर्थ दिया, इस प्रकार बलवालोंमें उचम विष्णुजी त्रिलोकीका विभाग कर ॥ ५४ ॥ देवताओंके शोकको दूर कर सब प्राणियोंमें इन्द्रकी प्रतिष्ठा कर महर्षियोंसे पूज्यमान सर्वश्रेष्ठ वामनजी स्वर्गको गये ॥ ५५ ॥ अतितेजस्वी दुर्धर्ष वामनजी जब चले गये तब सब देवता इन्द्रको आगे कर आनंदित हुए ॥ ५६ ॥ वैशंपायनजी बोले, कि जब वामनजी बलिराजाको सात शिरोंवाले और कंबल अश्वतर आदि सर्पोंसे बांधकर स्वर्गमें चले गये ॥ ५७ ॥ तब नागोंके बंधनसे पीड़ित हो बलिराजाके समीपमें सहज्ज्ञासे नारद मुनि प्राप्त हुए ॥ ५८ ॥ तब

जगाम त्रिदिवं देवः पूज्यमानो महर्षिभिः ॥ वामनः सर्वभूतेशः प्रतिष्ठाप्य च वासवम् ॥ ५५ ॥ तस्मिन्प्रयाते दुर्धर्ष वामनेऽमितते-
जसि ॥ सर्वे मुमुक्षुरे देवाः पुरस्कृत्य शतक्रतुम् ॥ ५६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ गते तु त्रिदिवं कृष्णे बद्धा वैरोचनिं बलिम् ॥ नागेः
सप्तशिरोभिश्च कम्बलाश्वतरादिभिः ॥ ५७ ॥ नागबन्धनदुःखार्तं बलिं वैरोचनिं ततः ॥ यद्वच्छयासो देवर्षिनारदः प्रत्यपद्यत ॥ ५८ ॥
स तं कृच्छ्रगतं दृष्ट्वा कृपयाभिपरिप्लुतः ॥ उवाच दावनश्रेष्ठं मोक्षोपायं ददामि ते ॥ ५९ ॥ स्तवं देवाधिदेवस्य वासुदेवस्य धीमतः ॥
अनादिनिधनस्यास्य अक्षयस्याव्ययस्य च ॥ ६० ॥ तमधीष्वाथ देत्येन्द्रः विशुद्धेनान्तरात्मना ॥ तद्गतस्तन्मना भूत्वा द्रुतं
मोक्षमवाप्स्यसि ॥ ६१ ॥ ततो विरोचनसुतः प्रयतः प्राञ्जलिः शुचिः ॥ मोक्षविशकमव्यग्रो नारदात्समधीतवान् ॥ ६२ ॥
तमधीत्य स्तवं दिव्यं नारदेन समीरितम् ॥ पृथिवी चोद्धृता येन तं जजाप महासुरः ॥ ६३ ॥

संकटमें बलिराजाको देख दयासंयुक्त नारदमुनि कहने लगे, कि हे दानवश्रेष्ठ ! मैं तेरे अर्थ इस पीडासे छूटनेका उपाय देता हूँ ॥ ५९ ॥ देवादिदेव वासुदेवका स्तव कहता हूँ वह आदि और अंतरहित अक्षय अविनाशी है ॥ ६० ॥ हे दैत्यराज ! उसे तुम शुद्ध अंतरात्मासे मनको लगाय पाठ करो। तत्काल इस दुःखसे छूट जाओगे ॥ ६१ ॥ तब विरोचनका पुत्र बलिराजा अंजलि बांध मोक्षविशक स्तोत्रको नारदजीसे पढ़ने लगा ॥ ६२ ॥ उस नारदजीके कहे दिव्य स्तोत्रको पढ़कर उन पृथ्वीके उद्धार करनेवालेका स्तोत्र जपने लगे ॥ ६३ ॥

जिस करके इस पृथ्वीका उद्धार हुआ था अब जिस स्तोत्रको बलिराजाने जगा है वह स्तोत्र वर्णन किया जाता है, ॐ अनन्तपाति अक्षय महात्मा जल-
शायी पद्मनाभ विष्णुके लिये नमस्कार है ॥ ६४ ॥ आप सात सूर्यकी समान शरीर करके त्रिलोकीको आक्रमण किये हों। हे भगवन् ! आप काल-
केभी काल हो। इस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ६५ ॥ चन्द्र, सूर्य, आकाश, यज्ञ, तप, क्रियाके नष्ट होनेसे आप फिर लोकोंकी चिन्ता करते हो, इस
सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ६६ ॥ ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र, वायु, अग्नि, सरित, भुजंग, पर्वत, द्विजेन्द्रने यह आपमें स्थित देखा। इस सत्यसे छुड़ाओ ॥ ६७ ॥ पहले

ॐ नमोऽस्त्वनन्तपतये अक्षयाय महात्मने ॥ जलेशयाय देवाय पद्मनाभाय विष्णवे ॥ ६४ ॥ सप्तसूर्यवपुः कृत्वा त्रीँलोकान् क्रान्त-
वानसि ॥ भगवान्कालकालस्त्वं तेन सत्येन मोक्षय ॥ ६५ ॥ नष्टचन्द्रार्कमग्ने क्षीणयज्ञतपःक्रिये ॥ पुनश्चिन्तयसे लोकांस्तेन
सत्येन मोक्षय ॥ ६६ ॥ ब्रह्मरुद्रेन्द्रवाय्वग्निसरिद्धुजगपर्वताः ॥ त्वत्स्थया दृष्ट्वा द्विजेन्द्रेण तेन सत्येन मोक्षय ॥ ६७ ॥ मार्केण्डेन
पुरा कल्पे प्रविश्य जठरं तव ॥ चराचरगतं दृष्ट्वं तेन सत्येन मोक्षय ॥ ६८ ॥ एको विद्यासहायस्त्वं योगी योगमुपागतः ॥ पुनस्त्रे-
लोक्यमुत्सृज्य तेन सत्येन मोक्षय ॥ ६९ ॥ जलशय्यामुपासीनो योगनिद्रामुपागतः ॥ लोकांश्चिन्तयसे भूयस्तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७० ॥
वाराहं रूपमास्थाय वेदयज्ञपुरस्कृतम् ॥ धरा जलोद्धृता येन तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७१ ॥ उद्धृत्य दंष्ट्रया यज्ञास्त्रिन् पिंडान्कृतवानसि ॥
त्वं पितॄणामपि हरे तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७२ ॥ प्रदुद्बुधुः सुराः सर्वे हिरण्याक्षभयार्दिताः ॥ परित्रातास्त्वया देव तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७३ ॥

कल्पमें मार्केण्डेय आपके शरीरमें प्रविष्ट हुए थे। और आपमें चराचर जगत् देखा था उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ६८ ॥ एक आप योगी विद्यासहाय
होकर योगको प्राप्त हुए हो, फिर त्रिलोकी छोड़ते हो। उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ६९ ॥ जलशय्यामें बैठे योगनिद्राको प्राप्त हुए फिर आप लोककी
चिन्ता करते हो उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ७० ॥ आपने वाराहरूप धारण कर वेदयज्ञको आगे कर जिस सत्यसे पृथ्वी उद्धार की उससे मुझे
छुड़ाओ ॥ ७१ ॥ आपने दंष्ट्रासे उद्धार कर यज्ञके तीन पिंड किये तुम पितरोंके उद्धारक हो उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ७२ ॥ सब देवाता हिरण्या-

क्षके जयसे जागे थे, हे देव ! आपनेही उनकी रक्षा की थी उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ७३ ॥ दीर्घमुखवाले रूपसे युद्धमें हिरण्याक्षका चक्रसे शिर काटा उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ७४ ॥ पहले हिरण्यकश्यप भिन्न शिर अस्थि होकर गिरा था उसे आपने हुंकारसे नष्ट किया उस सत्यसे मुझे बचाओ ॥ ७५ ॥ जब ब्रह्माके देखते दानवोंने वेदका हरण किया. हे देव ! तब आपनेही उसे छुड़ाया उस सत्यसे मुझे छुड़ाइये ॥ ७६ ॥ आपने हयशिररूप धारण कर मधुकैटभको यार ब्रह्माको वे वेदादि बिये, उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ७७ ॥ देव, दानव, राक्षस, यक्ष, सिद्ध, महोरग तुम्हारा अन्त कोई

दीर्घवक्त्रेण रूपेण हिरण्याक्षस्य संयुगे ॥ शिरो नहार चक्रेण तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७४ ॥ भग्नमूर्द्धास्थिमस्तिष्को हिरण्यकशिपुः पुरा ॥ हुंकारेण हतो दैत्यस्तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७५ ॥ दानवाभ्यां हता वेदा ब्रह्मणः पश्यतः पुरा ॥ परित्रातास्त्वया देव तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७६ ॥ कृत्वा हयशिरोरूपं हत्वा तु मधुकैटभो ॥ ब्रह्मणे तेऽर्पिता वेदास्तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७७ ॥ देवदानवगन्धर्वा यक्षसिद्धमहोरगाः ॥ अन्तं तव न पश्यन्ति तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७८ ॥ अपांतरतमा नाम जातो देवस्य वे सुतः ॥ कृताश्च तेन वेदार्थास्तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७९ ॥ वेदयज्ञाग्निहोत्राणि पितृयज्ञहवींषि च ॥ रहस्यं तव देवस्य तेन सत्येन मोक्षय ॥ ८० ॥ ऋषिर्दीर्घ- तमा नाम जात्यन्धो गुरुशापतः ॥ त्वत्प्रसादाच्च चक्षुष्मांस्तेन सत्येन मोक्षय ॥ ८१ ॥ ग्राह्यस्तं गजेन्द्रं च दीनं मृत्युवशं गतम् ॥ भक्तं मोक्षितवांस्त्वं हि तेन सत्येन मोक्षय ॥ ८२ ॥ अक्षयश्चान्ययश्च त्वं ब्रह्मण्यो भक्तवत्सलः ॥ उच्छ्रितानां नियन्तासि तेन सत्येन मोक्षय ॥ ८३ ॥

नहीं देखते. उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ७८ ॥ अपांतरतमा नामवाला देवपुत्र हुआ था. उसने वेदार्थ किया था उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ७९ ॥ दीर्घतमा नामक ऋषि गुरुके शापसे अंधजाति वेद, अग्निहोत्र, पितृ, यज्ञ, हवि और जो वेदमें आपका रहस्य है. उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ८० ॥ दीर्घतमा नामक ऋषि गुरुके शापसे अंधजाति आपकेही प्रसादसे नेत्रवान् हुआ उसी सत्यसे मुझे बचाओ ॥ ८१ ॥ ग्राहसे गृहीत मृत्युके वशीभूत अपने भक्त गजेन्द्रको आपने छुड़ाया उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ८२ ॥ आप अक्षय अविनाशी ब्रह्मण्य भक्तवत्सल हो आप उच्छ्रितोंके नियन्ता हो उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ८३ ॥

शंख, चक्र, गदा, तूण, शार्ङ्ग धनुष और गरुडको मैं शिरसे प्रणाम करता हूं. वे इससे मुझे छुड़ावें ॥ ८४ ॥ शंख, चक्र, गदा, तूण, शार्ङ्ग, गरुडादिक यह सब बंधनसे बलिको छुड़ानेके निमित्त भगवान्‌से प्रार्थना करने लगे ॥ ८५ ॥ तब भगवान्‌ने प्रसन्न हो गरुडजीको राजा बलिके बंधन खोलनेकी आज्ञा दी ॥ ८६ ॥ तब अतुलपराक्रमी गरुड पंखोंको फैलाये हुए जहां बलिराजा स्थित था. उस पृथ्वीके मूलमें प्राप्त हुए ॥ ८७ ॥ तब गरुडजीके आगमनको जान बलिराजाको छोड़कर गरुडजीके भयसे पीड़ित सब सर्प भोगवती पुरीमें प्राप्त हुए ॥ ८८ ॥ फिर विष्णुके प्रसादसे छुटे हुए

शार्ङ्ग चक्रं गदां पद्मं शार्ङ्गं गरुडमेव च ॥ प्रसादयामि शिरसा ते बन्धान्मोक्षयन्तु माम् ॥ ८४ ॥ शङ्खचक्रगदातूणशार्ङ्गं च गरुडादयः ॥ प्रसादयामासुर्हरिं बलिं मोक्षय बन्धनात् ॥ ८५ ॥ ततः प्रसन्नो भगवानादिदेश खगेश्वरम् ॥ गरुडं नागहन्तारं बलिं मोक्षय बन्धनात् ॥ ८६ ॥ ततो विशिष्य गरुडः पक्षावतुलविक्रमः ॥ जगाम वसुधामूलं यत्रास्ते संयतो बलिः ॥ ८७ ॥ आगमं तस्य विज्ञाय नागा मुक्त्वा महासुरम् ॥ ययुः पुरीं भोगवतीं वेनतेयभयार्दिताः ॥ ८८ ॥ मुक्तं कृष्णप्रसादेन चिन्तयानमघोमुखम् ॥ भ्रष्टश्रियमुवाचेदं गरुत्मान्पन्नगाशनः ॥ ८९ ॥ गरुड उवाच ॥ दानवेन्द्र महाबाहो विष्णुस्त्वामब्रूतिप्रभुः ॥ मुक्तो निवस पाताले सपुत्रजनबान्धवः ॥ ९० ॥ इतस्त्वया न गन्तव्यं गव्यूतिमपि दानव ॥ समयं यदि भिन्द्यास्त्वं मूर्द्धा ते शतधा भवेत् ॥ ९१ ॥ पक्षीन्द्रवचनं श्रुत्वा दानवेन्द्रोऽब्रवीदिदम् ॥ स्थितोऽस्मि समये तस्य अनन्तस्य महात्मनः ॥ ९२ ॥ जीवोपायं तु भगवान्मम किञ्चित्करोतु सः ॥ इहस्थोऽहं सुखासीनो येनाप्याये खगेश्वर ॥ ९३ ॥

विष्णुको चिन्तवन करते लक्ष्मीसे भष्ट सर्पोंके बंधनसे रहित बलि राजासे गरुडजी कहने लगे ॥ ८९ ॥ हे दानवेन्द्र ! हे महाबाहो ! विष्णुने तुमसे कहा है कि तुम मुक्त होकर पुत्र जन बांधवोंसहित पातालमें वास करो ॥ ९० ॥ और यहांसे हे दानव ! तुम इस देशसे दो कोश आगेभी न जाना, जो इस प्रतिज्ञाको भेदन करोगे तो तुम्हारे मस्तकके सौ सौ टुकड़े होंगे ॥ ९१ ॥ गरुडजीके वचन सुन बलिराजा कहने लगे, कि मैं विष्णुकी आज्ञाको याने समयपर स्थित हूं ॥ ९२ ॥ परन्तु वे ईश्वर मेरे जीवनके अर्थ भोजनकामी उपाय करेंगे,

जिससे यहाँ स्थित हुआ मैं पुष्ट होता रहूंगा ॥ ९३ ॥ बालिके वचन सुन गरुडजी कहने लगे; कि हे राजन् ! तुम्हारे जीकनका उपाय पहलेही विष्णुने कर दिया है ॥ ९४ ॥ अर्थात् विधिको नहीं जाननेवाले, और प्रायश्चित्तको नहीं जाननेवाले तथा ऋत्विक्संज्ञासे भिन्न ब्राह्मण जो यज्ञको करेंगे वह यज्ञभाग तुम्हें है ॥ ९५ ॥ अर्थात् तिस यज्ञभागको देवता नहीं ग्रहण करेंगे इस करके पुष्ट हुए तुम सुखपूर्वक यहाँ रहो ॥ ९६ ॥ हे दानवेन्द्र ! इस प्रकारसे त्रिलोकभावन विष्णुने तुमको संदेशा दिया है ॥ ९७ ॥ वैशम्पायनजी बोले; कि इस प्रकार यह पापनाशक पूर्वोक्त स्तोत्र

बलेस्तु वचनं श्रुत्वा गरुट्मानिदमब्रवीत् ॥ पूर्वमेव कृतस्तेन जीव्योपायो महात्मना ॥ ९४ ॥ वर्तयिष्यन्ति ये यज्ञा विधिहीना न ऋत्विजः ॥ प्रायश्चित्तमजानन्तो यज्ञभागस्ततस्तव ॥ ९५ ॥ न तेषां यज्ञभागं वै प्रतिगृह्णन्ति देवताः ॥ अनेनाप्यायितव्रतः सुखमात्रं निवत्स्यासि ॥ ९६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ संदेशमेतं भगवान्दत्तवान्कश्यपात्मजः ॥ दानवेन्द्रं महाबाहो विष्णुन्नेत्रो- व्यभावनः ॥ ९७ ॥ इमं स्तवमनन्तस्य सर्वपापप्रमोचनम् ॥ यः पठेत् नरो भक्त्या तस्य नश्यति किल्बिषम् ॥ ९८ ॥ गोहत्यायाः प्रमुच्येत ब्रह्मघ्नो ब्रह्महत्याया ॥ अपुत्रो लभते पुत्रं कन्या चैवेप्सितं पतिम् ॥ ९९ ॥ सद्यो गर्भात्प्रमुच्येत गर्भिणी जनयेत्सुतम् ॥ ये च मोक्षेपिणो लोके योगिनः सांख्यकापिलाः ॥ १०० ॥ स्तवेनानेन गच्छन्ति श्वेतद्वीपमकल्मषाः ॥ सर्वकामप्रदो ह्येष स्तवोऽ- नन्तस्य कीर्त्यते ॥ १ ॥ यः पठेत्प्रातरुत्थाय शुचिः प्रयतमानसः ॥ सर्वान्कामानवाप्नोति मानवो नात्र संशयः ॥ २ ॥

जो पढ़ेगा, तिसके सब पाप नाशको प्राप्त होंगे ॥ ९८ ॥ गायका मारनेवाला गोहत्यासे छूट जायगा, ब्राह्मणका मारनेवाला ब्रह्महत्यासे छूट जायगा और जिसके पुत्र नहीं होता हो वह पुत्रको प्राप्त होगा और कन्या वांछित वरको प्राप्त होगी ॥ ९९ ॥ और लग्नगर्भवाली स्त्री गर्भसे छूट जायगी और गर्भिणी स्त्री पुत्रको जनेगी, और इस स्तोत्रके प्रतापसे मोक्षकी इच्छावाले योगी कपिलशास्त्र सांख्यके ज्ञाता ॥ १०० ॥ इससे पापरहित हो श्वेतद्वीपमें जायकर प्राप्त होंगे, यह विष्णुका स्तोत्र सब कामनाओंका देनेवाला है ॥ १ ॥ पवित्र हो जो मनुष्य प्रातः उठकर इस स्तोत्रका पाठ

करेगा, वह मनुष्य सब कामनाओंको प्राप्त होगा इसमें संशय नहीं ॥ २ ॥ यह वामन अवतार वेदको जाननेवाले ब्राह्मणोंसे कहने योग्य है, वेद-
वादी ब्राह्मण इसका पाठ करते हैं ॥ ३ ॥ इस वामनजीके दिव्य आख्यानको पर्वकालमें शक्तिसहित नित्य श्रवण करे तो ॥ ४ ॥ राजा सुनकर
शत्रुओंको निश्चय जीते, जैसे महाबली विष्णुने जय की इससे उत्तम यश और बड़े धनको प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ वह सद्गतिको प्राप्त हो सब प्राणि-
योंका प्रिय होता है, धन धान्य और सद्गुणी पुत्रोंकी वृद्धि होती है, तथा आरोग्यता होती है ॥ ६ ॥ और इस स्तोत्रके पठन करनेवाले
मनुष्यपर सब कामनाओंको देनेवाले विष्णु भगवान् प्रसन्न हो जाते हैं ऐसे वेदव्यासजीने कहा है, ॥ १०७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे
भविष्यपर्वणि त्रिषायां वामनप्रादुर्भावो नाम द्विसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७२ ॥ धन्य उपारख्यानसे आरंभ कर बाणासुरके जयपर्यन्त श्री-
एष वै वामनो नाम प्रादुर्भावो महात्मनः ॥ वेदविद्भिर्द्विजैरेव पठ्यते वैष्णवं यशः ॥ ३ ॥ यस्त्विमं वामनं दिव्यं प्रादुर्भावं महात्मनः ॥
शृणुयान्नियतो भक्त्या सदा पर्वसु पर्वसु ॥ ४ ॥ परान् विजयते राजा यथा विष्णुर्महाबलः ॥ यशो विमलमाप्नोति विपुलं चाप्नुते वसु ॥ ५ ॥
प्रियो भवति भूतानां सर्वेषां वामनो यथा ॥ पुत्रपौत्राश्च वर्द्धन्ते आरोग्यं गुणसंपदः ॥ ६ ॥ प्रीयते पठतश्चास्य देवदेवो जनार्दनः ॥
सर्वकामयुतश्चैव कृष्णद्वैपायनोऽब्रवीत् ॥ १०७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावो नाम द्विसप्त-
तितमोऽध्यायः ॥ ७२ ॥ जनमेजय उवाच ॥ किमर्थं भगवान्विष्णुर्देवदेवो जनार्दनः ॥ गतः कैलासशिखरमालयं शंकरस्य च ॥ १ ॥
ष्णुकी उत्कर्षता वर्णन की उनके प्रादुर्भावमें उनके निर्गुण सगुण स्वरूपका व्याख्यान कर भारत श्रवण फलश्रुति दर्शनपर्यन्त समाप्त किया, बाणयुद्धमें
हरिहरका अभेद कहा (स च ममात्मा भद्रसेन इतिवत्) इनका अत्यन्त अभेद माननेसे शास्त्रशासकभाव सिद्ध नहीं होता इसीसे वह अभेद औप-
चारिक है ऐसा माननेवाला मंदमति पुरुषोंकी मतिको शोधन करनेके लिये अब कैलासयात्रा और त्रिपुरवधतक ग्रंथ आरंभ करते हैं उन दोनोंकी
संवर्त्तमानता वर्णन करके जैसे योगीके कायव्यूह देहके विद्यमान होनेमें ऐकात्म्यता सिद्ध होती है, देहभेदसे ऐकात्म्य नष्ट नहीं होता, क्योंकि सर्वोत्तम
अद्वैत योग्य है, सो अनुशासनपर्वमें श्रीकृष्ण शंकरका आराधन करनेको कैलास गये, यह संक्षेपसे कहकर अब विस्तारसे कहते हैं कि सच्चिदानंद

जैसे वेदवासीजीने मुझसे कहा है, उन गरुडवाहनवाले श्रीकृष्णचंद्रको नमस्कार कर मैं कहता हूं ॥ ११ ॥ यह आख्यान यथाशक्ति जैसा सुना है, कहता हूं, शुश्रूषासे रहित और नृशंस व तपसे रहित ॥ १२ ॥ तथा मूर्खके आगे यह पुण्यकथा कहनी उचित नहीं है, और यह आख्यान पुण्यवानोंको पुण्यरूप है. स्वर्ग और यशका देनेवाला धन्य सब कालमें बुद्धि और शुद्धिका करनेवाला है ॥ १३ ॥ पुण्यात्माओंको नित्यप्रति ध्यान करने योग्य है, कारण कि यह वेदके अर्थोंसे निश्चित है, उपनिषदोंमें इसका वर्णन है, जिसकी महात्मा जन आलोचना करते हैं कार्यकारणमें प्राप्त हुए हरिहरको जीवेशरूपसे वर्णन करते हैं, जीवईश्वरमें सर्वथा अनेक शास्त्रोंमें प्रतिपादन किया है, किसी पुराणमें विष्णु, किसीमें शिव पक्ष लेकर वर्णन

द्वेपायनोऽथ भगवान्यथा प्रोवाच मां तथा ॥ नमस्कृत्य प्रवक्ष्यामि केशवं खगवाहनम् ॥ ११ ॥ यथाशक्ति यथाप्रज्ञं शृणु यत्नेन सुव्रत ॥ न चाशुश्रूषवे वाच्यं नृशंसायातपस्विने ॥ १२ ॥ नानर्थाया वक्तव्यं पुण्यं पुण्यवतां सदा ॥ स्वर्ग्यं यशस्यं धन्यं च बुद्धिशुद्धिकरं सदा ॥ १३ ॥ ध्येयं पुण्यात्मनां नित्यमिदं वेदार्थानिश्चितम् ॥ अनेकारण्यसंयुक्तं सेवन्ते नित्यमीदृशम् ॥ १४ ॥ मुनयो वेदनिरता नारदाद्यास्तपोधनाः ॥ अत्यद्भुतं महापुण्यं वृत्तं कैलासपर्वते ॥ १५ ॥ शिवयोर्देवयोस्तत्र हरेश्चैव भवस्य ह ॥ हतेष्णसुरसंघेषु नरकादिषु भूमिषु ॥ १६ ॥ हतेष्वथ नृपेष्वेवं किंचिच्छिष्टेषु शत्रुषु ॥ शासति स्म सदा विष्णुः पृथिवीं पुरुषोत्तमः ॥ १७ ॥ द्वारवत्यां जगन्नाथो वसन्वृष्णिभिरीश्वरः ॥ रुक्मिण्या संगतो देवो वसंस्तत्र पुरे हरिः ॥ १८ ॥ कदाचिच्च तथा सार्द्धं शेते रात्रौ जगत्पतिः ॥ विहरंश्च यथायोगं प्रीतः प्रीतियुजा तथा ॥ १९ ॥

किया है, इसमें विष्णु जीवरूप और शिव ईश्वररूपसे प्रतिपादन किया जाता है ॥ १४ ॥ इस आख्यानको वदनिरत नारद आदि मुनि नित्य सेवते हैं, और कैलासपर्वतमें ॥ १५ ॥ विष्णुका और शिवका अद्भुतरूप वृत्तान्त हुआ है, जब नरकासुर आदि दैत्योंके समूह मारे गये ॥ १६ ॥ और राजाओंके मरनेपर कुछेक शत्रु बाकी रह गये, तब श्रीकृष्ण पुरुषोत्तम भगवान् पृथ्वीमें शिक्षा देने लगे ॥ १७ ॥ और द्वारकापुरीमें वृष्णियोंके साथ वह जगन्नाथ वास करते रुक्मिणीके संग रहने लगे ॥ १८ ॥ किसी समयमें रुक्मिणीके संग रात्रिमें क्रीडा करनेवाले और प्रसन्न हुए जगत्पति

विष्णु शयन करने लगे ॥ १९ ॥ उस समय सुवर्णके भूषण पहरे रुक्मिणी कहने लगी कि हे देवेश ! हे माधव ! सोनेके गहनोंको धारण करनेवाले, आनन्दके देनेवाले ॥ २० ॥ अतिबलवान् और रूपसे संपन्न तुम्हारे समान रूपवाले वृष्णिवंशवालोंके नेता और अतिवीर्यवान् और तपोनिधि ॥ २१ ॥ सब शास्त्रके अर्थमें दक्ष और राजविद्यामें प्रवीण आदि गुणोंसे युक्त पुत्रकी इच्छा करती हूं, सो हे श्रेष्ठ ! सो तुम देनेको योग्य हो ॥ २२ ॥ आपमें सबका दातृत्व स्थित है, तुम सब जगत्के कर्ता हो, दाता हो भोक्ता हो, और जगत्पति हो ॥ २३ ॥ विशेषकर शुश्रूषा करनेवाले भृत्योंके तुमही

अथोवाच तदा देवी रुक्मिणी रुक्मभूषणा ॥ पुत्रमिच्छामि देवेश त्वत्तो माधव नन्दनम् ॥ २० ॥ बलिनं रूपसंपन्नं त्वयैव सदृशं प्रभो ॥ वृष्णीनामपि नेतारं वीर्यवन्तं तपोनिधिम् ॥ २१ ॥ सर्वशास्त्रार्थकुशलं राजविद्यापुरस्कृतम् ॥ एवमादिगुणैर्युक्तं दातुमर्हसि सत्तम ॥ २२ ॥ त्वयि सर्वस्य दातृत्वं नित्यमेव प्रातिष्ठितम् ॥ त्वं हि सर्वस्य कर्ता च दाता भोक्ता जगत्पतिः ॥ २३ ॥ विशेषतस्तु भृत्यानां शुश्रूषा नियतात्मनाम् ॥ वक्तव्यं किमु देवेश यदि भक्तास्मि केशव ॥ २४ ॥ अनुग्रहो यदि स्यान्मे देवदेव जगत्पते ॥ दातुमर्हसि पुत्रं त्वं वीर्यवन्तं जनार्दन ॥ २५ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ इत्युक्तो देवदेवेशः प्रियया प्रीयमाणया ॥ तया महिष्या रुक्मिण्या रुक्मिशत्रुर्यदृद्धहः ॥ २६ ॥ प्रोवाच वचनं काले रुक्मिणी यादवेश्वरः ॥ दातास्मि तादृशं पुत्रं यं त्वमिच्छसि भामिनि ॥ २७ ॥ नित्यं भक्तासि मे देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ अवश्यं तव दास्यामि पुत्रं शत्रुनिबर्हणम् ॥ २८ ॥ पुत्रेण लोकात् जयाति सतां काम-
दुषा हि ये ॥ नरकं पुदिति ख्यातं दुःखं च नरकं विदुः ॥ २९ ॥

स्वामी हो, हे देवेश ! विशेष क्या कहूं, आपमें मेरी पूर्ण भक्ति है ॥ २४ ॥ यदि मुझपर अनुग्रह है तो हे जनार्दन ! वीर्यवाले पुत्रको तुम देनेको योग्य हो ॥ २५ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकार प्रिया रुक्मिणीके वचन सुन रुक्मके शत्रु और यदुवंशमें उत्पन्न होनेवाले ॥ २६ ॥ श्रीकृष्ण रुक्मिणीसे समयके अनुसार कहने लगे कि हे भामिनी ! जैसे पुत्रकी तुम इच्छा करती हो वैसेही पुत्रको मैं तुम्हें दूंगा ॥ २७ ॥ तुम मेरी नित्य भक्तिवाली हो इसमें संशय नहीं कर निश्चयही शत्रुओंको जीतनेवाला तुम्हें पुत्र दूंगा ॥ २८ ॥ पुत्रसे उत्तम लोकमें मनुष्य प्राप्त होते

हैं, पुत्र सत्पुरुषोंको कामधेनु है, और पुत्राप्त नरकका है अथवा दुःखका है ॥ २९ ॥ तिससे जो रक्षा करे तिसको पुत्र कहते हैं, ऐसे पुत्रको इस लोकमें और परलोकमें चाहते हैं. हे प्रिये ! पुत्रवाले पुरुषको अनन्त शुभरूप लोक प्राप्त होते हैं ॥ ३० ॥ और प्रथम पति भार्यामें प्रवेश करता है, फिर माताके पेटमें गर्भरूप होकर रहता है, फिर नये रूपको धारण कर दशवें महीनेमें जन्मता है ॥ ३१ ॥ पुत्रवाले मनुष्यसे इन्द्रजी भय मानता है, और पुत्रसे रहित मनुष्य उत्तम लोकोंको नहीं प्राप्त हो सकता, परन्तु कुपुत्रसे बंध्या भार्या रहनी उत्तम है ॥ ३२ ॥ कुपुत्रसे नरक होता है, और सुपुत्रसे

पुद्गलापात्ततः पुत्रमिहेच्छति परत्र च ॥ अनन्ताः पुत्रिणो लोकाः पुरुषस्य प्रिये शुभाः ॥ ३० ॥ पतिर्जायां प्राविशति गर्भो भूत्वा स मातरम् ॥ तस्यां पुनर्नवो भूत्वा दशमे मासि जायते ॥ ३१ ॥ पुत्रवन्तं विभेतीन्द्रः किञ्च तेनाजितं भवेत् ॥ नापुत्रो हिन्दुस्ते लोकान्कुपुत्राद्वन्ध्यता वरा ॥ ३२ ॥ कुपुत्रो नरके यस्मात्सुपुत्रात्स्वर्ग एव हि ॥ तस्माद्विनीतं सत्पुत्रं श्रुतवन्तं दयापरम् ॥ ३३ ॥ विद्या विनयो यस्माद्विद्यायुक्तं सुधार्मिकम् ॥ इच्छेत्पुत्रं पुत्रकामः पुरुषो यत्नवान्बुधः ॥ ३४ ॥ तस्मादास्यामि ते पुत्रं विद्यावन्तं सुधार्मिकम् ॥ एष गच्छामि पुत्रार्थं कैलासं पर्वतोत्तमम् ॥ ३५ ॥ तत्रोपास्य महादेवं शंकरं नीललोहितम् ॥ ततो लब्धास्मि पुत्रं ते भवाद्वृतहिते रतात् ॥ ३६ ॥ तपसा ब्रह्मचर्येण भवं शंकरमव्ययम् ॥ तोषयित्वा विरूपाक्षमादिदेवमजं विभुम् ॥ ३७ ॥ गमिष्याम्यहमद्यैव द्रष्टुं शंकरमव्ययम् ॥ स च मे दास्यते पुत्रं तोषितस्तपसा मया ॥ ३८ ॥

स्वर्ग होता है, इस कारण विनीत श्रुतवाला दयावान् हो ॥ ३३ ॥ विद्यासे विनय होती है, इसलिये विद्यावान् धार्मिक पुत्रकी पुरुष इच्छा करे ॥ ३४ ॥ इस कारण विद्यावान् धार्मिक पुत्रको तुम्हें दूंगा, अब पुत्रकी प्राप्तिके अर्थ पर्वतोंमें उत्तम कैलासपर्वतको जाता हूँ ॥ ३५ ॥ तहां नीललोहितरूप महादेवजीकी उपासना कर प्राणियोंपर दया करनेवाले महादेवजीसे पुत्रको प्राप्त करूंगा ॥ ३६ ॥ और तपसे ब्रह्मचर्यसे अविनाशी विरूपाक्ष आदिदेव अज विभुको प्रसन्न करूंगा ॥ ३७ ॥ अविनाशी महादेवजीके देखनेको मैं अभी गमन करता हूँ, तपसे प्रसन्न हो महादेवजी मुझे पुत्र देने ॥ ३८ ॥

तहां जाय पार्वतीसहित महादेवको नमस्कार कर पवित्र मुनियोंसे युक्त तपोमयी ॥ ३९ ॥ अग्निहोत्रोंसे आकुल, दिव्य मंजाजलसे प्रावित मृग और पक्षियोंसे युक्त, सिंह और हाथियोंके समूहसे व्याप्त ॥ ४० ॥ झड़वरीके फलोंसे पूरित और वानरोंसे शोभित वृक्षोंवाली, तथा नेत्र आदिसे आरुढ महावृक्षोंवाली, केलोंसे मण्डित ॥ ४१ ॥ वेदोंके तत्त्वार्थके विचारमें निपुण और प्रमाणमें कुशल ॥ ४२ ॥ मुनियोंसे युक्त यह एक है और यह तत्त्व है, ऐसे निश्चित मनवाले मुनियोंसे उपास्यमान ॥ ४३ ॥ और इतिहास पुराणके जाननेवाले महर्षि और सिद्धोंसे सेव्यमान और स्वर्गको जानेके

तत्र गत्वा महादेवं नमस्कृत्य सहोमया ॥ प्रविश्य बदरीं पुण्यां मुनिजुष्टां तपोमयीम् ॥ ३९ ॥ अग्निहोत्राकुलां दिव्यां गङ्गाम्बुप्रावितां सदा ॥ मृगपक्षिसमायुक्तां सिंहद्विपशताकुलाम् ॥ ४० ॥ बदरीफलसंपूर्णां वानरक्षोभितद्रुमाम् ॥ वेत्रारूढमहावृक्षां कदलीखण्डमण्डिताम् ॥ ४१ ॥ मुनिभिर्वेदतत्त्वार्थविचारनिपुणैः सदा ॥ वेदनिश्चिततत्त्वार्थैः प्रमाणकुशलैर्युताम् ॥ ४२ ॥ इदमेकमिदं तत्त्वमिति निश्चितमानसैः ॥ उपास्यमानामन्यत्र सिद्धैः सिद्धार्थतत्परैः ॥ ४३ ॥ इतिहासपुराणज्ञैः सेव्यमानां महर्षिभिः ॥ गच्छद्भिः स्वर्गनिलयं परित्यज्य कलेवरम् ॥ ४४ ॥ प्रसिद्धां महतीं देवीं यास्यामि सुकृतालयाम् ॥ इत्युक्त्वा विररामेव देवदेवो जनार्दनः ॥ ४५ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भवि० कैलासयात्रायां त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ प्रभातायां तु शर्वर्यां गन्तुमैच्छज्जनार्दनः ॥ दुताग्निः कृतकल्याणः समाप्तवरदक्षिणः ॥ १ ॥ गाश्च दत्त्वाथ विप्रेभ्यो नमस्कृत्य द्विजोत्तमान् ॥ आस्थानमण्डपं कृष्णः प्रविवेश जगत्पतिः ॥ २ ॥ आसनं महदास्थाय वृष्णीनाहूय सर्वशः ॥ बलभद्रं शिनेः पुत्रं हार्दिक्यं शुक्रसारणौ ॥ ३ ॥

तमय इस शरीरको ॥ ४४ ॥ त्यागनेवाले जनोंसे पूर्ण प्रसिद्ध सुकृत देवस्थानरूप बदरीपुरीमें प्रवेश कर स्थित हुंगा, इस प्रकार कहकर देवदेव जनार्दन श्रीकृष्ण विरामको प्राप्त हुए ॥ ४५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७३ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि जब रात्रि व्यतीत हो गई, प्रभात हुआ, तब गमन करनेकी इच्छावाले श्रीकृष्ण अग्निमें हवन कर और दक्षिणा दान दे ॥ १ ॥ ब्राह्मणोंको गोदान देकर ब्राह्मणोंको नमस्कार कर जगत्पति श्रीकृष्ण अपने बैठनेके स्थानमें प्रवेश करते हुए ॥ २ ॥ तहां सुंदर आसनपर स्थित हो

सब वृष्णिवंशको और बलदेव, सात्यकि, कृतवर्मा, शुक, सारण ॥ ३ ॥ उग्रसेन और नीतिमें कुशल महाबुद्धिमान् उद्धव किं जिनकी बुद्धिके आश्रय हो सब यादव सुखपूर्वक जीते हैं ॥ ४ ॥ सब यदु और सब वृष्णियोंके नेता और धर्ममें तत्पर और जिस महात्माकी नीतिसे देवताभी तप मानते हैं ॥ ५ ॥ जिसकी बुद्धिके वशसे विष्णु सब पृथ्वीको शिक्षित करते हुए उन वृष्णियोंमें श्रेष्ठ वीर और देवताओंकी समान कान्तिवाले उद्धव ॥ ६ ॥ और अन्यभी सब यादवोंसे श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे, कि हे यादवो ! मेरे वचनको तुम सब श्रवण करो. हे उद्धव ! मेरे पिताने जो मेरे अर्थ वचन कहा है, वहभी

उग्रसेनं महाबुद्धिमुद्धवं नीतिमत्तरम् ॥ यस्य बुद्धिं समाश्रित्य जीवन्ते यादवाः सुखम् ॥ ४ ॥ नेता च यदुवृष्णीनां स तु धर्मपरो यदा ॥ यस्य बिभ्यति देवाश्च नीतेस्तस्य महात्मनः ॥ ५ ॥ यस्य बुद्धिवशाद्रिष्णुः शशास पृथिवीं सदा ॥ तं च वृष्णिवरं वीरमुद्धवं देवमुप्रभम् ॥ ६ ॥ अन्यानापि यदून्सर्वानुवाच भगवान् हरिः ॥ शृण्वन्तु मम वाक्यानि यादवाः सर्व एव हि ॥ शृणु चापि वचो मम पितुरुद्धव मे सखे ॥ ७ ॥ बाल्यात्प्रभृति यो यन्नो मम दुष्टनिबर्हणे ॥ प्रत्यक्षं भवता दृष्टं पूतनानिधनं नृप ॥ ८ ॥ केशी च निहतो बाल्ये मया बालेन यादवाः ॥ गोवर्द्धनोद्धतः शैलो मापश्च परिपालिताः ॥ ९ ॥ अभिषिक्तोऽस्मि शक्रेण देवानामग्रतः स्थितः ॥ कंसोऽपि निधनं नीतो मया चाणूरमुष्टिकौ ॥ १० ॥ उग्रसेनोऽभिषिक्तश्च कृता द्वारवती मया ॥ अन्ये चापि नृपा राजन्वलिनो निहता मया ॥ ११ ॥ योऽपि वीरो जरासन्धो निगृहीतो बलान्मया ॥ भीमेन बाल्ना राजन्नयेन मम यादवाः ॥ १२ ॥ शृगालो निहतः संख्ये गोमन्ताद्बुच्छता मया ॥ योऽपि वीरो दुरात्माऽसौ दानवो नरको हतः ॥ १३ ॥

सुनो ॥ ७ ॥ मैंने दुष्टोंके निग्रह करनेमें बाल्यअवस्थासे यत्न किया है सो प्रथम पूतना मारी है, यह प्रत्यक्ष आपने देखा है ॥ ८ ॥ पीछे केशी मैंने बालकपनेमें मारा, गोवर्द्धन पर्वत धारण किया है, और गायोंकी पालना की ॥ ९ ॥ फिर इन्द्रने मेरा अभिषेक किया है, इसके पीछे चाणूर मुष्टिक करके सहित कंसभी मारा है ॥ १० ॥ और उग्रसेनका अभिषेक कर द्वारकापुरी बसाई, औरभी बहुतसे बलवाले राना मैंने मारे ॥ ११ ॥ और जरासंध राजाभी बलवाले भीमसेनके हाथसे मैंने मरवा दिया ॥ १२ ॥ गोमंतपर्वतसे गमन करते मैंने युद्धमें शृगालराजाकोभी मारा, बड़े वीर दुरात्मा

नरकासुरकोभी मैंने मारा ॥ १३ ॥ इस प्रकार यह लोक मैंने निष्कण्टक कर दिया है, परन्तु भौमासुरका सखा वीर नृप हुआ है ॥ १४ ॥ वह पौंड्र वीर्यवालोंका नेता और सब कालमें मेरा वैरी, द्रोणाचार्यका शिष्य, और बली ब्रह्मास्त्रको जाननेवाला पण्डित ॥ १५ ॥ शास्त्रोंको जाननेवाला, नीतिमान्, सबोंका नेता और यत्नवाला योधा, युद्धप्रिय, दूसरे परशुरामजीकी समान ॥ १६ ॥ हमारा एकांत द्वेषी, सब कालमें मेरे छिद्रको ढूंढनेवाला पौंड्र राजा छिद्रको प्राप्त होतेही हमारी पुरीको पीड़ित करेगा ॥ १७ ॥ और वह अल्पसाध्य राजा नहीं है, वह बड़ा बली पुंड्रेश है. उससे

निष्कण्टकमिमं लोकं कृतवात्राजसत्तमाः ॥ किं तु वीरो नृपो यज्ञे सखा भोमस्य यादवाः ॥ १४ ॥ पौण्ड्रो वीर्यवतां नेता द्वेषा चासौ सदा मम ॥ शिष्यो द्रोणस्य राजेन्द्रो बली ब्रह्मास्त्रवित्कृती ॥ १५ ॥ शास्त्रज्ञो नीतिमान्साक्षात्रेता सर्वस्य यत्नवान् ॥ योद्धा युद्धप्रियो राजा जामदग्न्य इवापरः ॥ १६ ॥ एकान्तशत्रुरस्माकं छिद्रान्वेषी सदा मम ॥ बाधिष्यते पुरीं योद्धा न्छिद्रं यदि लभेत सः ॥ १७ ॥ न ह्यल्पसाध्यो बलवान् पुण्ड्रस्येशो नृपोत्तमाः ॥ यत्ता भवन्तस्तिष्ठन्तु प्रगृहीतशरासनाः ॥ १८ ॥ यथा न बाधते राजा पुरीं यदुकुलाश्रयाम् ॥ अहं तु यास्ये कैलासं कुतश्चित्कारणानृपाः ॥ १९ ॥ शंकरं द्रष्टुकामोऽस्मि भूतभावनभाव- नम् ॥ यावदाममनं मह्यं तावद्यत्ता भवन्त्वह ॥ २० ॥ मया विरहितां चेमां यदि जानाति पुण्ड्रकः ॥ आगमिष्यति राजेन्द्रो योत्स्यते च पुरीमिमाम् ॥ २१ ॥ इमां निर्यादवीं कर्तुं शक्नोतीति च मे मतिः ॥ यत्ता भवत राजेन्द्राः खड्गैः पाशैः परश्वधैः ॥ २२ ॥

हे यादवो ! तुम धनुष बाण आदिसे सावधान रहियो ॥ १८ ॥ जिससे पौंड्रक राजा इस द्वारकापुरीको बाधा नहीं दे. हे यादवो ! मैं किसी कारणसे कैलासको ॥ १९ ॥ भूतभावन महादेवजीके देखनेको जाता हूं, जबतक बेरा आगमन हो, तबतक सावधान रहो ॥ २० ॥ मुझरहित यदि इस पुरीको जान लेगा तो पौंड्रराजा इस पुरीमें आकर युद्ध करेगा ॥ २१ ॥ और वह राजा इस पुरीको यादवोंसे रहित कर सकता है, यह मैं मानता हूं, इस कारण तलवार, पाश, फरसा, भिंदियाल, पाषाण कर्षक मंजादिसे स्वस्तिकादिसे तैयार हो. शास्त्रोंको धारण कर सदा सावधान रहो ॥ २२ ॥

द्वारकापुरीके सब दरवाजोंको किवाड़ोंसे बंद कर दो ॥ २३ ॥ एक बड़े द्वारको जाने आनेके निमित्त खुला रहने दो और जो राजाके सम्मुख गमन करे, वह छापा लगवाकर गमन कर सके ॥ २४ ॥ और छापेसे रहित द्वारपालके देखते कोईभी प्रवेश नहीं कर सके, जबतक मेरा आगमन न हो, तबतक ऐसे होना चाहिये ॥ २५ ॥ और न शिकार खेलनेको जाना चाहिये और न पुरीसे बाहर क्रीड़ा करनी चाहिये और आनेजानेमें अपने पराये पुरुषको सदा जानना चाहिये ॥ २६ ॥ जबतक मेरा आगमन हो, तबतक यह सब करना इस प्रकार सब यादोंसे कहकर फिर सात्यकिसे कहने लगे ॥ २७ ॥

पाषाणैः कर्षणीयैश्च सन्नद्धा भवत स्वकैः ॥ पिधाय च कपाटानि महाद्वाराणि यत्नतः ॥ २३ ॥ एक एव महाद्वारो गमनागमने सदा ॥ मुद्रया सह गच्छन्तु राज्ञो ये गन्तुमीप्सवः ॥ २४ ॥ न चासुद्रः प्रवेष्टव्यो द्वारपालस्य पश्य ॥ यावदागमनं मह्यं तावदेवं भविष्यति ॥ २५ ॥ मृगया नात्र कर्तव्या न च क्रीडा बहिः पुरात् ॥ ज्ञातव्याश्च परे स्वे च गमनागमने सदा ॥ २६ ॥ एकमादिक्रिया कार्या यावदागमनं मम ॥ इत्युक्त्वा यादवान्सर्वान् सात्यकिं पुनराह च ॥ २७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां चतुःसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७४ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ सात्यके शृणु मद्राक्षयं यत्तो भव युधांवर ॥ त्वं तु खड्गी गदी भूत्वा चापपाणिस्तनुव्रवान् ॥ १ ॥ तिष्ठ यत्नेन रक्षस्व पुरीं बहुनृपाश्रयाम् ॥ न च निद्रा त्वया कार्या रात्रौ यदुवृषप्रभो ॥ २ ॥ न च व्याख्या त्वया कार्या शास्त्राणां शास्त्रतत्पर ॥ न च वादस्तथाकार्यो वादिभिः सह वृष्णिष ॥ ३ ॥ त्वं हि योद्धा बलिर्ज्ञाता धनुर्वेदाख्यवेदवित् ॥ तथा कुरु यथा वीर नोपहास्या भवेदियम् ॥ ४ ॥

इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां चतुःसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७४ ॥ श्रीकृष्ण भगवान् बोले कि हे सात्यके ! मेरे वाक्यको श्रवण करो. हे युधांवर ! सावधान हो और तलवार गदा धनुष आदि हथियारोंको ग्रहण करो ॥ १ ॥ इस यत्नसे पुरीकी रक्षा करो और हे प्रिय यदुवृष ! तुम रात्रिमें शयन न करना ॥ २ ॥ हे शास्त्रकुशल ! उस समय शास्त्रकी व्याख्याभी न करना हे वृष्णिपति ! वादीजनोंके संग वादभी न करना ॥ ३ ॥ और तुमही योद्धा हो, तुमही बली हो और तुमही धनुर्वेदको जाननेवाले हो हे वीर ! तैसे करना जिस प्रकार हम उपहास्यताको प्राप्त न हो ॥ ४ ॥

तब सात्यकि बोला कि हे जनार्दन ! अपनी शक्तिपूर्वक तुम्हारे वचनोंको करूंगा. हे जगन्नाथ ! तुम्हारी आज्ञा मैं सब कालमें धारण करूंगा ॥ ५ ॥
हे माधव ! बलदेवजीके भृत्यके समान होकर विचरूंगा और जबतक आपका आगमन होगा तबतक यत्नसे रहूंगा ॥ ६ ॥ हे गोविंद ! तुम्हारी कृपा
जो सुझपर रहेगी, तो शत्रुओंके निग्रह करनेमें मुझे कुछभी दुस्ताध्य नहीं ॥ ७ ॥ जो इन्द्र, धर्मराज, कुबेर, वरुण यह आवें तो इन देवताओंकोभी
जीत सकता हूं फिर एक मनुष्यरूप पौराजाके जीतनेकी कौन कथा है ॥ ८ ॥ हे प्रिय ! तुम अपने कार्यको गमन करो. मैं निरन्तर सावधान हूं

सात्वकिरुवाच ॥ करिष्यामि वचस्तुभ्यं यथाशक्ति जनार्दन ॥ आज्ञा तव जगन्नाथ धार्या यत्नेन मे सदा ॥ ५ ॥ भृत्यवत्प्रचरिष्यामि
कामपालस्य माधव ॥ यावदागमनं तुभ्यं तावत्स्थास्यामि यत्नतः ॥ ६ ॥ प्रसादस्तव गोविन्द यदि स्यान्मायि माधव ॥ किं नः
मे च दुःसाध्यं शत्रूणां निग्रहे रणे ॥ ७ ॥ यदि शक्रं यमं वापि कुबेरमपि पाशिनम् ॥ सर्वानेतान्विजेष्यामि किमु पौण्ड्रं नृपो-
त्तमम् ॥ ८ ॥ गच्छ कार्यं कुरुष्वेदं यतोऽहं सततं हरे ॥ उद्धवं पुनराहेदं कृष्णः पद्मानिभेक्षणः ॥ ९ ॥ शृणुद्धव त्वं वाक्यं मे
कुर्यास्त्वेतत्प्रयत्नवान् ॥ रक्ष्या नयेन राजेन्द्र पुरीं द्वाखती त्वया ॥ १० ॥ यतो भव सदा तात कुरु साहाय्यमत्र नः ॥ लज्जा मम
समुत्पन्ना वदतस्तव साम्प्रतम् ॥ ११ ॥ त्वं हि नेता समस्तस्य विद्यापारस्य सर्वतः ॥ को नु शक्षयति मेधावी वक्तुं विद्यावतः
पुरः ॥ १२ ॥ यत्कार्यं तद्भवान्वेत्ति ह्यकार्यं वापि सर्वतः ॥ अतोऽहं विरमे तात वक्तुं संप्राति वृष्णिप ॥ १३ ॥ उद्धव उवाच ॥
किमिदं तव गोविन्द वर्तते मां प्रति प्रभो ॥ अहो प्रसन्नता मया किं तु प्रीतिरियं तव ॥ १४ ॥

फिर कमललोचन श्रीकृष्ण उद्धवजीसे कहने लगे ॥ ९ ॥ हे उद्धव ! तुम यत्नपूर्वक मेरे वचन करना नीतिपूर्वक इस पुरीकी रक्षा करना तुमको
उचित है ॥ १० ॥ हे तात ! सावधान होकर हमारी सहाय करना और तुम्हारे आगे कहनेमें मुझे लाज आती है ॥ ११ ॥ क्योंकि सब विद्याके
पारगायी तुमही नेता हो, इस कारण विद्यावालेके सन्मुख कौन शिक्षा देनेको समर्थ है ॥ १२ ॥ कार्य और अकार्यको तुम भली भाँतिसे जानते हो.
हे वृष्णिपाल ! इस कारण आपके सन्मुख कुछ विशेष कहना उचित नहीं ॥ १३ ॥ उद्धवजी बोले कि हे गोविंद ! यह आप कैसे वचन मुझसे

कहते हो या तो आपकी प्रसन्नता है, या प्रीतिसे कहते हो ॥ १४ ॥ हे जगन्नाथ ! आपके विस्तारको मैं जानता हूं. जिसपर तुम प्रसन्न होते हो तिसको क्या नहीं होता, तुम मुझपर प्रसन्न होनेसे यह कहते हो ॥ १५ ॥ तुमही सब जगत्के कर्ता और हर्ता हो, तथा सब कार्योंके उत्पत्ति-स्थान हो. वक्ता श्रोता और प्रमाणको जाननेवाले धाता ध्यानमय और ध्येय ऐसा तुमको ब्रह्म जाननेवाले कहते हैं आप शत्रुओंके जीतनेवाले और देवताओंकी रक्षा करनेवाले हो ॥ १६ ॥ १७ ॥ तुम्हारीही कृपासे हतवैरी होकर हम जीते हैं नीतिको जाननेवालेभी तुम हो, और सब कार्योंके

जानाम्यहं जगन्नाथ प्रसादस्यैष विस्तरः ॥ यस्य प्रसन्नो भवसि तस्य किं नास्ति केशव ॥ १५ ॥ त्वं हि सर्वस्य जगतः कर्ता हर्ता प्रधानतः ॥ प्रभवः सर्वकार्याणां वक्ता श्रोता प्रमाणवित् ॥ १६ ॥ ध्याता ध्यानमयो ध्येय इति ब्रह्मविदो विदुः ॥ जेता देवरिपूर्णां च गोप्ता नाकसर्दा भवान् ॥ १७ ॥ त्वं नाथा वयमेवेति जीवामो निहताद्विषः ॥ इयं नीतिरहं मन्ये नेता नीतिर्यतो भवान् ॥ १८ ॥ को नु नाम नयो वेद त्वां विना साम्प्रतं वद ॥ नीतिस्त्वं सर्वकार्याणामिति मे निश्चिता मतिः ॥ १९ ॥ दुर्गादो नवमार्गोऽयमित्याहुस्तद्विदो जनाः ॥ चतुर्द्धा प्रोच्यते नीतिः सामदाने जनार्दन ॥ २० ॥ दण्डो भेदो मनुष्याणां निग्रहावग्रहे सदा ॥ दण्डयेषु दण्डमिच्छन्ति सामान्यं तु नये हरे ॥ २१ ॥ बलवत्स्वथ दानं तु त्रयाणामप्यगोचरे ॥ प्रयोक्तव्यो महाभेद इति नीतिमता मतम् ॥ २२ ॥ तेषु तेष्वथ सर्वेषु प्रमाणं त्वां विदुर्बुधाः ॥ किमत्र बहुनोक्तेन सर्वं त्वायि समर्पितम् ॥ २३ ॥

नीतिरूप आप तुम हो ॥ १८ ॥ और तुम्हारे सिवाय नीतिको जाननेवाला कौन है सो तो आप कहिये आप सब कार्योंकी नीति हो, यह मेरी निश्चित मति है ॥ १९ ॥ यह नीतिमार्ग दुर्घट है ऐसा नीतिके जाननेवाले कहते हैं. हे जनार्दन ! चार प्रकारसे नीति कही है साम, दान ॥ २० ॥ दण्ड, भेद, यह मनुष्योंके निग्रह अवग्रहमें प्रयोग किया जाता है, दंडके देने योग्योंको बंड देना उचित है, और सामान्यको साम उचित है ॥ २१ ॥ और बलवानोंमें दानका देना उचित है और इन तीनोंसे जो वशमें नहीं आवे तो भेद करना उचित है, ऐसे नीतिवालोंका मत है ॥ २२ ॥ और तहां तहां सब कार्योंमें विद्वान् आपको प्रमाणरूप मानते हैं, बहुत कहनेसे क्या है. सब कार्य आपहीमें समर्पित है ॥ २३ ॥

वैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकार कह नीतिको जाननेवाले उद्धवजी शान्त हो गये तब भगवान् श्रीकृष्ण ॥ २४ ॥ यादवोंकी सभामें बड़ी झुजावाले व ॥ १६ ॥
देवजी और राजा उग्रसेनसे कहने लगे ॥ २५ ॥ पीछे फिर श्रीकृष्ण बलदेवजीसे कहने लगे कि आप प्रमाद नहीं करना सब कालमें यत्नवान् रहना ॥ २६ ॥
हे महाबाहो ! जहां तुम स्थित रहोगे, तहां जगत्को क्या पीडा हो सकती है ? इस कारण हे आर्य ! सब कालमें गदाको धारण करना, क्रीडा न
करना ॥ २७ ॥ सब यत्नसे इस द्वारकापुरीकी रक्षा करो और जैसे हम उपहास्यताको प्राप्त न हों तैसे करो गदा ग्रहण करो ॥ २८ ॥ और सब कालमें उत्साह

वैशम्पायन उवाच ॥ इत्युक्त्वा विररामैव उद्धवो नीतिमत्तरः ॥ ततः स भगवान्विष्णुरेवमेव नृपोत्तम ॥ २४ ॥ कामपालं महिवा-
हुमुवाच यदुसंसादि ॥ उग्रसेनं नृपं राजंस्तथा हार्दिक्यमेव च ॥ २५ ॥ कामपालं पुनर्विष्णुरिदं प्रोवाच तत्त्ववित् ॥ न प्रमादस्त्वया
कार्यः सर्वदा यत्नवान् भव ॥ २६ ॥ स्थिते त्वयि महाबाहो का पीडा जगतो भवेत् ॥ गदी भव सदा त्वार्य न क्रीडा सर्वदा भवेत् ॥ २७ ॥
रक्ष त्वं सर्वदा यत्नात्पुरीं द्वारवतीं प्रभो ॥ नोपहास्या यथा स्याम तथा कुरु गदी भव ॥ २८ ॥ उत्साहः सर्वदा कार्यो
निरुत्साहो न यत्नतः ॥ बाढमित्यब्रवीद्रामः कृष्णं वृष्णि कुलोद्भवम् ॥ २९ ॥ वृष्णयः सर्व एवैते स्वं स्वं सन्न समाययुः ॥ गन्तु-
मेच्छज्जगन्नाथः कैलासं पर्वतोत्तमम् ॥ ३० ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७५ ॥
वैशम्पायन उवाच ॥ ततः संचिन्तयामास गरुडं पक्षिपुङ्गवम् ॥ आगच्छ त्वरितं ताक्ष्यं इति विष्णुर्जगत्पातिः ॥ १ ॥ ततः स
भगवांस्ताक्ष्यो वेदराशिरिति स्मृतः ॥ बलवान्विक्रमी योगी शास्त्रनेता कुरुद्रह ॥ २ ॥

करना और यत्नसे भी उत्साहका त्याग न करना, इस वचनको सुन बलदेवजी श्रीकृष्णसे कहने लगे कि आपका कहना ठीक है सब किया जायगा ॥ २९ ॥
इसके उपरान्त सब यादव अपने अपने स्थानको चले गये तब श्रीकृष्ण भगवान् कैलासपर्वतमें गमन करनेकी इच्छा करने लगे ॥ ३० ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७५ ॥ वैशम्पायन कहने लगे, तदनंतर श्रीकृष्णने
पक्षियोंमें श्रेष्ठ गरुडजीको स्मरण किया अर्थात् यह विचार जगत्पातिने किया कि हे गरुड ! शीघ्र आ ॥ १ ॥ हे राजन् ! उसी समय वेदोंके जानने-

वाले अतिबलवान् और योगशास्त्रके जाननेवाले ॥ २ ॥ यज्ञमूर्ति, पुराणात्मा, साममूर्द्धा और पवित्र ऋग्वेदरूप पंखोंवाले पिंगल और जटिलकी आकृतिवाले ॥ ३ ॥ तांबेके समान तुंडवाले अमृतको हरनेवाले शत्रुओंको जीतनेवाले महाशिरवाले और सारोंके पेरी कमलके फूलोंकी समान नेत्रोंवाले साक्षात् दूसरे विष्णु भगवान् ॥ ४ ॥ विष्णु श्रीकृष्णके वाहन दैत्योंकी स्त्रियोंकी गर्भको खंडन करनेवाले राक्षस और दैत्योंके समूहको पंखोंके बलसे जीतनेवाले ॥ ५ ॥ महाबली गरुडजी श्रीकृष्णके आगे प्रगट हो गोडोंसे पृथ्वीमें पड बोले, हे विष्णु ! हे जागते ! ॥ ६ ॥ हे देवदेवेश ! हे स्वामिन् !

यज्ञमूर्तिः पुराणात्मा साममूर्द्धा च पावनः ॥ ऋग्वेदपञ्चवान्पक्षी पिङ्गलो जटिलाकृतिः ॥ ३ ॥ तात्रतुण्डः सोमहरः शक्रजेता महा-
शिराः ॥ पद्मगारिः पद्मनेत्रः साक्षाद्विष्णुरिवापरः ॥ ४ ॥ बाह्वनं देवदेवस्य दानवीगर्भकृन्तनः ॥ राक्षसासुरसंचानां जेता पक्षबलेन
यः ॥ ५ ॥ प्रादुरासीन्महावीर्यः केशवस्याग्रतस्तदा ॥ जानुभ्यामपतद्भूमौ नमो विष्णो जगत्पते ॥ ६ ॥ नमस्ते देवदेवेश हरे स्वामि-
न्निति ब्रुवन् ॥ परस्पर्श पाणिना कृष्णः स्वागतं ताक्षर्यं पुङ्गवम् ॥ ७ ॥ इत्युवाच तदा ताक्षर्यं यास्ये कैलासपर्वतम् ॥ शूलिनं द्रष्टु-
मिच्छामि शंकरं शाश्वतं शिवम् ॥ ८ ॥ बाढमित्यब्रवीत्ताक्षर्यं आरुह्यैनं जनार्दनः ॥ तिष्ठध्वमिति होवाच यादवान्पार्श्ववर्तिनः ॥ ९ ॥
ततो ययौ जगन्नाथो दिशं प्रागुत्तरां हरिः ॥ रवेण महता ताक्षर्यं स्त्रैलोक्यं समकम्पयत् ॥ १० ॥ सागरं क्षोभयामास पद्भ्यां पक्षी
व्रजंस्तदा ॥ पक्षेण पर्वतान्सर्वान्वहन् देवं जनार्दनम् ॥ ११ ॥

हे हरे ! इस प्रकार कहते हुए नमस्कार करने लगे तब श्रीकृष्णने अपने हाथसे स्पर्श कर कहा; हे गरुड ! तुम्हारा सुंदर आगमन हुआ ॥ ७ ॥ और
हे प्रिय ! मैं महादेवजीके देखनेको कैलासपर्वतमें गमन करूंगा, उन शाश्वत शूलधारी शिवके देखनेकी इच्छा करता हूं ॥ ८ ॥ तब गरुडजीने कहा
बहुत अच्छा तब श्रीकृष्ण गरुडपर चढ समीपमें खडे हुए यादवोंसे कहने लगे कि हे प्रियो ! तुम स्थित रहो ॥ ९ ॥ तब ऐशान्य दिशाको भगवान्
गमन करने लगे गरुडजी बडे वेगसे त्रिलोकीको कंपायमान करते हुए चले ॥ १० ॥ पैरोंसे गरुडजीने समुद्रको क्षोभित किया और पंखोंसे सब पर्वतोंको

कं पाते श्रीकृष्णको वहन करने लगे ॥ ११ ॥ गरुडजी समुद्रको क्षोभित करते चले तब आकाशमें स्थित देवता और गंधर्व इष्टरूप वाणियोंसे श्रीकृष्णकी स्तुति करने लगे ॥ १२ ॥ जय देव जगन्नाथ जय जगत्पति विष्णु, हे अजेय ! आपकी जय हो. हे भूतभावन ॥ १३ ॥ परमसिंहरूप दैत्य-
 दानवोंके मारनेवाले हो आपको नमस्कार है हे अजेय ! योगिध्येय परागते ! आपकी जय हो ॥ १४ ॥ नारायण देव हरे कृष्ण जगत्पते आदिकर्ता
 पुराणात्मन् ब्रह्मयोनि सनातन ॥ १५ ॥ सबके ईश निर्गुण गुणात्मा भक्तिप्रिय दानवनाशक भक्तके निमित्त नमस्कार है ॥ १६ ॥ अचिन्त्यमूर्ति
 ततो देवाः सगन्धर्वा आकाशोऽधिष्ठितास्तदा ॥ तुष्टुबुः पुण्डरीकाक्षं वाग्भिरिष्टाभिरीश्वरम् ॥ १७ ॥ जय देव जगन्नाथ जय विष्णो
 जगत्पते ॥ जयाजेय नमो देव भूतभावनभावन ॥ १८ ॥ नमः परमसिंहाय दैत्यदानवनाशन ॥ जयाजेय हरे देव योगिध्येय
 परागते ॥ १९ ॥ नारायण नमो देव कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥ आदिकर्तः पुराणात्मन् ब्रह्मयोनि सनातन ॥ २० ॥ नमस्ते सकलेशाय
 निर्गुणाय गुणात्मने ॥ भक्तिप्रियाय भक्ताय नमो दानवनाशन ॥ २१ ॥ अचिन्त्यमूर्तये तुभ्यं नमस्ते सकलेश्वर ॥ इत्यादिभिस्तदा
 देवं वाग्भिराशानमव्ययम् ॥ २२ ॥ तुष्टुबुद्धेर्गन्धर्वा ऋषयः सिद्धचारणाः ॥ शृण्वन्नेव जगन्नाथः स्तुतिवाक्यानि तानि च ॥ २३ ॥
 ययो साद्धं सुरगणैर्मुनिभिर्वेदपारगैः ॥ यत्र पूर्वं स्वयं विष्णुस्तपस्तेपे सुदारुणम् ॥ २४ ॥ लोकवृद्धिकरः श्रीमालोकानां हित-
 काम्यया ॥ वर्षायुतं तपस्तप्तं विष्णुना प्रभविष्णुना ॥ २५ ॥ यत्र विष्णुर्जगन्नाथस्तपस्तप्त्वा सुदारुणम् ॥ द्विधाकरोत्स्वमात्मानं
 नरनारायणारुण्यया ॥ २६ ॥ गङ्गा यत्र सरिच्छ्रेष्ठा मध्ये धावति पावनी ॥ यत्र शक्रः स्वयं हत्वा घृत्रं वेदार्थतत्त्वगम् ॥ २७ ॥
 सबके ईश्वर आपके निमित्त नमस्कार है. इस प्रकारकी वाणियोंसे अविनाशी ईशान देवकी ॥ २८ ॥ देवता, गंधर्व, ऋषि, सिद्ध, चारण, श्रीकृष्णकी
 स्तुति करते हुए जनार्दन देव इस प्रकार स्तुति वाक्योंको सुनते हुए ॥ २९ ॥ श्रीकृष्ण देवता और मुनियोंके संग गये, जहां पहले दारुण तप किया
 था ॥ ३० ॥ लोकोंके हितकी कामनासे लोकवृद्धिके निमित्त श्रीमान् समर्थ विष्णुने स्वयं दशसहस्र वर्षतक उग्र तप करके ॥ ३१ ॥ अर्थात् जहां
 जगन्नाथ विष्णुने दारुण तप करके नर नारायण नामसे अपनी आत्माको दो प्रकारसे किया ॥ ३२ ॥ जहां सब नदियोंमें श्रेष्ठ पवित्र गंगाजी मध्य-

भागमें चलती है, और जहां वेदार्थोंके तत्त्वको जाननेवाले वृत्रासुरको इन्द्रने मारकर ॥ २२ ॥ ब्रह्महत्या दूर करनेको दश सहस्र वर्षोंतक तप किया था और जहां विष्णुका ध्यानकर असिद्ध सिद्ध होते हैं ॥ २३ ॥ और जहां लोक दुःखदाई रावणको मारकर रामचन्द्रजीने शिक्षा देनेको इच्छासे घोर तप किया था ॥ २४ ॥ जहां पवित्ररूप देवता और मुनि सिद्धिको प्राप्त होते हैं और जहां नित्यप्रति साक्षात् केशव विष्णु वसते हैं ॥ २५ ॥ जहां मुनिगणोंके सहित यज्ञ होते हैं; और जिसके स्मरण करनेसे मनुष्य स्वर्गको गमन करते हैं ॥ २६ ॥ जिसको मुनिजन

ब्रह्महत्याविनाशार्थं तपो वर्षायुतं चरत् ॥ यत्र सिद्धाश्च सिद्धाः स्युर्ध्यात्वा देवं जनार्दनम् ॥ २३ ॥ यत्र हत्वा रणे रामो रावणं लोकरावणम् ॥ एतच्छासनमिच्छंश्च तपो घोरमतप्यत ॥ २४ ॥ देवाश्च मुनयश्चैव सिद्धिं याप्ति शुचिव्रताः ॥ यत्र नित्यं जगन्नाथः साक्षाद्भसति केशवः ॥ २५ ॥ यत्र यज्ञाः प्रवर्तन्ते नित्यं मुनिगणैः सह ॥ यस्याः स्मरणमात्रेण नरः स्वर्गं गमिष्यति ॥ २६ ॥ स्वर्गसोपानमिच्छन्ति यां पुण्यां मुनिसत्तमाः ॥ शत्रवो मित्रतां याप्ति यत्र नित्यं नृपोत्तम ॥ २७ ॥ यामाहुः पुण्यशीलानां स्थानमुत्तमधर्मिणाम् ॥ यत्र विष्णुं समाराध्य देवाः स्वर्गं समाययुः ॥ २८ ॥ सिद्धक्षेत्रमिदं प्राहुर्ऋषयो वीतमत्सराः ॥ विशालां बदरीं विष्णुस्तां द्रष्टुं सकलेश्वरः ॥ २९ ॥ सायाह्ने चापरगणैर्मुनिभिस्तत्त्वदर्शनाभिः ॥ प्रविवेश महापुण्यमृषिजुष्टं तपोवनम् ॥ ३० ॥ अग्निहोत्राकुले काल पक्षिव्याहारसंकुले ॥ नीडस्थेषु विदंगेषु दुह्यमानासु गोषु च ॥ ३१ ॥ ऋषिष्वप्यथ तिष्ठत्सु मुनिवीरेषु सर्वतः ॥ समाधिस्थेषु सिद्धेषु चिन्तयत्सु जनार्दनम् ॥ ३२ ॥

साक्षात् स्वर्गकी सीढ़ी मानते हैं, और जहां वास कर शत्रुभी मित्रभावको प्राप्त हो जाते हैं ॥ २७ ॥ जो पुण्यशीलोंका और उत्तमधर्मवालोंका परम स्थान है, और जहां विष्णुकी आराधना कर देवता स्वर्गमें प्राप्त हुए हैं ॥ २८ ॥ और जिसको मत्सररता रहित मुनिजन सिद्धक्षेत्र कहते हैं; ऐसी विशाला बदरीको देखनेके अर्थ ॥ २९ ॥ सबके ईश्वर विष्णु सायंकालमें देवताओंके गण और तत्त्वोंको जाननेवाले मुनियोंके संग ऋषियोंसे जुष्ट और महापवित्र तपोवनमें प्रवेश करते हुए ॥ ३० ॥ जो अग्निहोत्रोंसे आकुल पक्षियोंके बोलनेसे संकुल है, सब पक्षी अपने अपने घोंसलोंमें स्थित हो रहे हैं, और गायें दुही जाती हैं ॥ ३१ ॥ अपने आसनोंपर मुनिजन स्थित हो रहे हैं, और समाधिमें स्थित होनेवाले मुनिजन विष्णुके चिंतन करनेमें लग रहे हैं जहां

घृत गरम हो रहा है, जहां अग्नि प्रज्वलित हो रहा है और जहां चारों ओर अग्निमें हवन हो रहा है ॥ ३२ ॥ और जहां अतिथि की पूजा हो रही है, ऐसे संध्यासमयमें देवताओं के संग श्रीकृष्ण ॥ ३३ ॥ मुनियों से जुष्ट और तपोमयी ऐसी बदरीपुरी अर्थात् बद्रीकाभनमें प्रवेश करने लगे ॥ ३४ ॥ तब आश्रमके मध्यभागमें श्रीकृष्ण प्रवेश कर ॥ ३५ ॥ गरुडजी से उत्तर दीपिकाओं से दीपित प्रदेशमें प्रवेश कर देवताओं के साथ स्थित हुए ॥ ३६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां षट्सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७६ ॥ वैशम्पायन बोले, कि तब देवताओं के देवता

अधिष्ठितेषु हविषु ज्वालयमानेषु चाग्निषु ॥ ह्वयमानेषु तत्रैव पावकेषु समन्ततः ॥ ३३ ॥ अतिथौ पूज्यमाने च संध्याविष्टे जगन्मये ॥

स तस्यामथ वेलायां देवैः सह जनार्दनः ॥ ३४ ॥ विवेश बदरीं विष्णुर्मुनिजुष्टां तपोमयीम् ॥ आश्रमस्याथ मध्यं तु प्रविश्य

हरिरीश्वरः ॥ ३५ ॥ गरुडादवसूत्याथ दीपिकादीपिते तदा ॥ प्रदेशे पुण्डरीकाक्षः स्थितस्तावत्सहामरैः ॥ ३६ ॥ इति श्रीमहाभारते

खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां षट्सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततो मुनिगणा दृष्ट्वा देवदे-

वमुपस्थितम् ॥ समाप्य चाग्निहोत्राणि संपूज्यातिथिसत्तमान् ॥ १ ॥ मुनयो दीर्घतपसः समाधौ कृतनिश्चयाः ॥ जटिनो मुण्डिनः

केचिच्छिराधमनिसंतताः ॥ २ ॥ निर्मज्जा नीरसाः केचिद्वेताला इव केचन ॥ अश्मकुट्टाशनपराः पर्णभक्षास्तथा परे ॥ ३ ॥ वेद-

विद्याव्रतस्नाता निराहारा महातपाः ॥ स्मरन्तः सर्वदा विष्णुं तद्भक्तास्तत्परायणाः ॥ ४ ॥ आसन्नमुक्तयः केचित्केचिद्व्यानैकतत्पराः ॥

ध्यानेन मनसा विष्णुं दृष्टवन्तस्तपोधनाः ॥ ५ ॥

श्रीकृष्णको आया देख मुनिगण अग्निहोत्रोंको समाप्त कर और अतिथियोंका पूजन कर ॥ १ ॥ दीर्घकालसे तप करनेवाले, कोई समाधिमें निश्चय करनेवाले, जटाको धारण करनेवाले, मुंडोंको मुंडानेवाले और कोई नसोंसे व्याप्त ॥ २ ॥ कितनेही मज्जासे रहित, कितने रससे रहित, कितनेही वेतालोंकी समान रहनेवाले, कितनेही पत्थरसे कूटे हुए पदार्थको खानेवाले, और कितनेही परभिक्षा करनेवाले ॥ ३ ॥ कितनेही वेदविद्याव्रतोंसे स्नात किये, कितनेही भोजनको नहीं करनेवाले और कितनेही सब कालमें विष्णुका स्मरण कर उनमें भक्ति करनेवाले ॥ ४ ॥ और कितनेही निकट मुक्तिवाले,

कितनेही ध्यानमें तत्पर, कितनेही ध्यानमें मनसे विष्णुको देखनेवाले, कोई तपकोही धन माननेवाले ॥ ५ ॥ और कितनेही एकवर्षमें भोजन करनेवाले, कितनेही जलमें विचरनेवाले, और कितनेही इन्द्रकोभी भय देनेवाले और कितनेही श्रुतिस्मृतिमें परायण ॥ ६ ॥ वसिष्ठ, वामदेव, रैभ्य, धूम्र, जाबालि, कश्यप, कण्व, भरद्वाज, गौतम, ॥ ७ ॥ अत्रि, अश्वशिरा, भद्र, शङ्खनिधि, कुणि, वेदव्यास, पवित्राश, महाशन, याज्ञवल्क्य ॥ ८ ॥ कक्षीवान् अंगिरा, दीर्घतपा, असित, देवल और महातप करनेवाले वाल्मीकि ॥ ९ ॥ इनके सिवाय औरभी मुनि अर्धको ग्रहण कर श्रीकृष्णके देखनेको अपनी

संवत्सराशिनः केचित्केचिज्जलविचारिणः ॥ शक्रस्य भयदातारः श्रुतिस्मृतिपरायणाः ॥ ६ ॥ वसिष्ठो वामदेवश्च रैभ्यो धूम्रस्तथैव च ॥ जाबालिः कश्यपः कण्वो भरद्वाजोऽथ गौतमः ॥ ७ ॥ अत्रिश्चाशिरा भद्रः शङ्खः शङ्खनिधिः कुणिः ॥ पाराशर्यः पवित्राशो याज्ञवल्क्यो महामनाः ॥ ८ ॥ कक्षीवानङ्गिराश्चैव मुनिर्दीप्ततपास्तथा ॥ असितो देवलस्तात वाल्मीकिश्च महातपाः ॥ ९ ॥ एते चान्ये च मुनयो द्रष्टुमीश्वरमव्ययम् ॥ आदायार्घ्यं यथायोग्यमुदजात्स्वात्सनायतुः ॥ १० ॥ ते च गत्वा हरिं कृष्णं विष्णुमाश जनार्दनम् ॥ भक्तिनम्रास्तदा देवं प्रणमुर्भक्तवत्सलम् ॥ ११ ॥ नमोऽस्तु कृष्ण कृष्णोति देव देवेति केशवम् ॥ प्रणवात्मन् जगन्नाथ नताः स्म शिरसा हरे ॥ १२ ॥ कृष्ण विष्णो हृषीकेश केशवेति च सर्वदा ॥ प्रणामप्रवणा विप्राः प्राहुरित्थं जगत्पातिम् ॥ १३ ॥ इदमर्घ्यमिदं पादमिदं विष्टरमेव च ॥ कृतार्थाः सर्वदा देव प्रसन्नो नो जगत्पातिः ॥ १४ ॥ किं कुर्मः किं नु नः कृत्यं कश्चिद्रोषः प्रभो हरे ॥ इति प्राञ्जलयः सर्वे प्राहुर्देवस्य पश्यतः ॥ १५ ॥

अपनी कुटियोंसे आये ॥ १० ॥ भक्तिसे नम्र हुए मुनि भक्तवत्सल ईश्वर, विष्णु, जनार्दन श्रीकृष्णको प्रणाम करते हुए ॥ ११ ॥ कहने लगे, हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे देवदेव ! हे प्रणवात्मन् ! हे जगन्नाथ ! हे हरे ! हम शिरसे नमस्कार करते हैं ॥ १२ ॥ हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे विष्णु ! हे केशव ! हे हृषीकेश ! तुमको सब मुनि जगत्का पति मानते हैं, और प्रणाम करते हैं ॥ १३ ॥ यह अर्घ्य, यह पाद और यह आसन ग्रहण करो, तुमने हम सबको कृत कृत्य कर दिया इस कारण हे देव ! हमपर प्रसन्न रहो ॥ १४ ॥ और हम क्या करें ? क्या हमारा कृत्य है ? क्या हमसे कोई दोष हुआ है ? इस प्रकार

भा. टी.

प. ३ अ. ७

॥ १८२ ॥

सब हाथ जोड़ श्रीकृष्णके देखते हुए कहने लगे ॥ १५ ॥ तब सब देवताओंसे युक्त श्रीकृष्ण कहने लगे कि, हे मुनिवरो ! तुम लोगोंने सब सुकृत किया है, इस कारण तुम्हारा उत्तम तप बढ़ता रहे ॥ १६ ॥ इस प्रकार कहते हुए तिन गहड़जीके संग प्रसन्न हुए रात्रिमें श्रीकृष्ण आसनको प्राप्त हुए ॥ १७ ॥ फिर सब मुनियोंसे अग्निहोत्रमें, तपमें, भृत्योंमें कुशल पूछने लगे ॥ १८ ॥ तब सब मुनि श्रीकृष्णसे कुशल कहते हुए ॥ १९ ॥ इसके उपरान्त नीवार धान्य, फल, मूल, आदिसे सब देवताओंका और विशेष कर श्रीकृष्णका मुनिजन आतिथ्य करने लगे. सो आतिथ्यको प्राप्त होकर

कृष्णोऽपि तद्यथायोगमुपयुज्य सहामरेः ॥ कृतं सर्वं मुनिवरा वर्द्धतां तप उत्तमम् ॥ १६ ॥ इति ब्रुवन् पुराणात्मा प्रतिस्तेन गुरुमता ॥ आसनं लम्भयामास रात्रौ देवो जनार्दनः ॥ १७ ॥ कुशलं पृष्ठवान् भूयो मुनीनां भावितात्मनाम् ॥ अग्निहोत्रेषु तपासि तथा भृत्येषु सर्वतः ॥ १८ ॥ एवमादि जगन्नाथः पृष्ठवानीश्वरस्तदा ॥ सर्वत्र कुशलं तेऽत्र ब्रूयुः कृष्णस्य सर्वतः ॥ १९ ॥ आतिथ्यं चक्रिरे ते तु नीवारेः ऋतमूलकैः ॥ देवानामथ सर्वेषां विष्णोः कृष्णस्य यत्नतः ॥ आतिथ्यमुपयुञ्जानस्ततः प्रीतोऽभवद्भरिः ॥ २० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः स भगवान्विष्णुर्दुर्विज्ञेयगतिः प्रभुः ॥ तत्र पूर्वं तपस्तप्तमात्मना यादवेश्वरः ॥ १ ॥ गङ्गायाश्चोत्तरे तीरे देशं द्रष्टुमुपागतः ॥ स्वयमेव हरिः साक्षात्प्रविवेश तपोवनम् ॥ २ ॥ प्रविश्य सुचिरं देशं ददर्श च मनोरमम् ॥ निषसाद ततस्तस्मिन्नाश्रमे पुण्यवर्द्धनः ॥ ३ ॥ समाधौ योजयामास मनः पद्मनिभेक्षणः ॥ किमप्येष जगन्नाथो ध्यात्वा देवेश्वरः स्थितः ॥ ४ ॥

श्रीकृष्ण अतिप्रसन्न हुए ॥ २० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि प्रापायां कैलासयात्रायां सप्तसप्ततितमाऽध्यायः ॥ ७७ ॥ वंशंपायन कहने लगे कि, तब अलक्ष्यगति विष्णु जगवान्ने जहां पहले तप किया था ॥ १ ॥ गंगाजीके उत्तर तीरपर तिस देशके देखनेको साक्षात् हरि भगवान्ने तपोवनमें प्रवेश किया ॥ २ ॥ तहां मनोरम देशमें प्रवेश कर उच्चम आश्रममें पुण्य बढ़ानेवाले स्थित हुए ॥ ३ ॥ कमललोचन श्रीकृष्णने समा-

धिमें मनको युक्त कर तब देवताओंके ईश्वर श्रीकृष्ण ध्यानमें कुछ विचारने लगे ॥ ४ ॥ जब देवगुरु समाधिमें दीपककी नाई प्रकाशित हुए, तब महा-
घोररूप शब्द चारों ओरसे होने लगा ॥ ५ ॥ कि खाओ खाओ प्रसन्न हो इन मृगोंको प्राप्त हो, और श्रीकृष्णके प्रसादसे सब कुत्तोंको मैं प्रेरता
हूं ॥ ६ ॥ यह विष्णु कृष्ण हरि ईश अच्युत स्थित है, हे विष्णो ! हे देवेश ! हे स्वामिन् ! हे माधव ! हे केशव ! तुमको नमस्कार हो ॥ ७ ॥
इत्यादि महारात्रिमें घोर शब्द प्रगट हुआ फिर दौड़ते हुए मृगोंके पीछे भागते हुए व्याधेका ॥ ८ ॥ कुत्तोंका और भयवाले मृगोंका और ऋक्षोंका

स्थिते देवगुरो तच्च समाधौ दीप्तिद्वारौ ॥ तत्र शब्दो महाघोरः प्रादुरासीत्समन्ततः ॥ ५ ॥ खाद खादत मोदेत यात यात मृगानि-
मान् ॥ प्रेषयेह पुनः सर्वान्प्रसादाच्छार्ङ्गधन्वनः ॥ ६ ॥ एष विष्णुरयं कृष्णो हरिरीशः स्मृतोऽच्युतः ॥ नमोऽस्तु विष्णो देवेश
स्वामिन् माधव केशव ॥ ७ ॥ इत्यादिशब्दः सुमहानाविरासीत्तदा निशि ॥ ततश्च सुमहानादः सिंहानां मृगविद्विषाम् ॥ ८ ॥
धावतां च शुनां राजन्मृगाननुविनर्दताम् ॥ मृगाणां भीतियुक्तानामृक्षाणां द्वीपिनां तथा ॥ ९ ॥ गजानां नदतां राजन्वृद्धितं च
ततस्ततः ॥ महावातसमुद्धतक्षुभितस्येव वारिधेः ॥ १० ॥ नादस्त्रैलोक्यवित्रासः प्रादुरासीत्तदा निशि ॥ श्रुत्वा शब्दं हरिर्देवस्तादृशं
तत्र धिष्ठितः ॥ ११ ॥ समाधिक्षोभमासाद्य विश्वस्य च जगत्पतिः ॥ ततः संचिन्तयामास कोऽयमेष महास्वनः ॥ १२ ॥ कस्यायमी-
दृशः शब्दः स्तुतियुक्तो मम त्विति ॥ अहोऽस्मिन्मृगयाशब्दः शुनां संचरतां वने ॥ १३ ॥ मृगाणामथ सर्वेषां नादश्च सुमहानयम् ॥
व्यामिश्रस्तुतियुक्ताभिर्वाग्भिर्मम समन्ततः ॥ १४ ॥

गेंडोंका ॥ ९ ॥ और गर्जनेवाले हाथियोंका जहां तहांसे बढता हुआ और महावायुसे क्षुभित हुए समुद्रके शब्दकी समान ॥ १० ॥ त्रिलोकीमें त्रासका
देनेवाला शब्द रात्रिमें प्रगट होने लगा तब समाधिमें स्थित श्रीकृष्ण यह शब्द सुन ॥ ११ ॥ समाधिके क्षोभको प्राप्त हो जगत्पति श्वास ले चिन्ता
करने लगे कि यह महाशब्द क्या है ॥ १२ ॥ मेरी स्तुतिसे संयुक्त यह किसका ऐसा शब्द है ? और आश्चर्य है कि इस वनमें शिकारके अर्थ विचरते
हुए कुत्तोंका शब्द ॥ १३ ॥ सब मृगोंका शब्द और मेरी स्तुतिसे मिला हुआ शब्द चारों ओर हो रहा है ॥ १४ ॥

इस प्रकार मनमें चिन्ता कर सब दिशाओंको चारों ओरसे देख उसका कारण देखनेको स्थित हुए ॥ १५ ॥ तब जहां श्रीकृष्ण स्थित थे तहां भागते हुए मृग आये और तिनके पीछे कुत्तोंका समूह भागता हुआ आया ॥ १६ ॥ जहां सैकड़ों सहस्रों दीपकोंसे चांदना हो रखा था, इस कारण अंधेरेका नाश हो दिनका समय हो गया ॥ १७ ॥ तब भूतोंके समूह सब ओर दीखने लगे और महाघोर पिशाच शब्द करने लगे ॥ १८ ॥ और मांसको तक्षण करते हुए लोहको पीते हुए और विकृत मुखोंवाले महाघोर पिशाच प्रगट हुए ॥ १९ ॥

इति संचिन्त्य मनसा दिशो विप्रेक्ष्य सर्वतः ॥ तत आस्ते हरिस्तत्र ज्ञातुं तस्य समुद्रवम् ॥ १५ ॥ ततो मृगाः समाधावन्यत्र तिष्ठति केशवः ॥ तांश्चैवानुचरो राजन् सगणः समपद्यत ॥ १६ ॥ अथ वै दीपिका राजन् उत्तशोऽथ सहस्रशः ॥ ततस्तमोऽपि व्यनशदिवैव समपद्यत ॥ १७ ॥ ततो नु भूतसंघाश्च समदृश्यन्त तत्र ह ॥ पिशाचाश्च महाघोरा नदन्तो बहु विस्वनम् ॥ १८ ॥ भक्षयन्तोऽथ पिशितं पिबन्तो रुधिरं बहु ॥ प्रादुरासन्महाघोराः पिशाचा विकृताननाः ॥ १९ ॥ हन्यमाना इता राजन्पतन्तः पतिता मृगाः ॥ इतश्चेतश्च धावन्तो बाणेर्विद्धा मृगा द्विपाः ॥ २० ॥ ततो मृगसहस्राणि समुदीर्णानि भारत ॥ यत्रासौ तिष्ठते देवस्तत्र याता निरन्तरम् ॥ २१ ॥ अन्तरीकृत्य देवेशं स्थितानीत्यनुशुश्रुम ॥ पिशाच्यो विकृताकाराः कराळा रोमहर्षणाः ॥ २२ ॥ पुत्रवत्यः समापेतुर्यत्र तिष्ठति केशवः ॥ श्वगणस्तत्र राजेन्द्र चरत्येवं ततस्ततः ॥ २३ ॥ ततः स भगवान्विष्णुः सर्वमाळोक्य वेष्टितः ॥ विस्मयं परमं गत्वा पश्यन्नास्ते स्म केशवः ॥ २४ ॥

और जहां तहांसे भयसे भागते हुए बाणोंसे बिंधे हुए मरनेके तुल्य और मृतक हुए मृग पढ़ने लगे ॥ २० ॥ हे राजन् ! तब सहस्रों मृग तहां प्राप्त हुए जहां देव श्रीकृष्ण स्थित थे ॥ २१ ॥ और श्रीकृष्णको चारों ओरसे घेरकर स्थित हुए यह हमने सुना है विकृत आकारवाली पिशाचनी कराळरूप-वाली जिनको देखनेसे रोमावली अर्थात् रूप खंडे हो जाय ॥ २२ ॥ पुत्रवती पिशाचोंकी स्त्रियों श्रीकृष्णके निकट प्राप्त हुईं हे राजेन्द्र ! तहां चारों ओरसे कुत्तोंके गण विचरने लगे ॥ २३ ॥ तब श्रीकृष्ण भगवान् सबोंको घेरा हुआ देख परम आश्चर्यको प्राप्त हो उन्हें देखने तहांही स्थित

रहे ॥ २४ ॥ और कहने लगे किसका यह विस्तारपूर्वक शब्द है और किसका यह कुटुम्ब यहां प्राप्त हुआ है, और कौन मेरी जाति व स्तुति कर रहा है किससे मैं प्रसन्न हुंगा ॥ २५ ॥ और जब मैं प्रसन्न हुआ, तब किसको मुक्ति दुर्लभ है. इस प्रकार चिन्ता करके मनुष्यकी चेष्टासे भगवान् स्थित हुए ॥ २६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां अष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७८ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि नब उनके पीछे विकृत मुखवाले और धूरिको उड़ानेवाले पिङ्गलरोमोंवाले लम्बी जिह्वा और बड़ी डोड़ीवाले ॥ १ ॥ लम्बे केश, विरूप नेत्र, हीर्ही हाहा

कस्यैव विस्तृतो नादः कस्य वायं जनोऽपतत् ॥ को नु मां स्तौति भक्त्या वै भविष्ये प्रीतिमान् म् ॥ २६ ॥ कस्य मुक्तिः समायाता प्रीति मयि सुदुर्लभा ॥ इति संचिन्त्य भगवानास्ते प्राकृतवद्भिरः ॥ २६ ॥ इति श्रीमहाभारत खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि अष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तेषामनु महाचोरो पिशाचो विकृताननो ॥ प्राक्षु पिङ्गलरोमाणो दीर्घजिह्वो महाहनू ॥ १ ॥ लम्बकेशो विरूपाक्षो हा हा हा इति वादिनो ॥ खादन्तो मांसपिटकं पिबन्तो रुधिरं बहु ॥ २ ॥ आन्त्रवेष्टितसर्वाङ्गो दीर्घो कुशकृतोदरो ॥ लम्बमानमहाप्रान्तशूलप्रोतशिरोधरो ॥ ३ ॥ कर्षन्तो श्वयूथानि बाहुभ्यां तत्र तत्र ह ॥ हसन्तो विविधं हासं स्वजातितदृशं नृप ॥ ४ ॥ वदन्तो बहुरूपाणि वचांसि प्राकृतानि च ॥ कम्पयन्तो महातृशानुरुपादप्रवहने ॥ ५ ॥ सूक्तिणी लोहिहन्तो च दन्तान्कटकटायिनो ॥ अस्थिस्रायुसमाकीर्णो धमनीरज्जुसंततो ॥ ६ ॥

बोलनेवाले मांसकी पेटोंको खानेवाले बहुतसे रुधिरको पीनेवाले ॥ २ ॥ आंतोंसे वेष्टित अंगोंवाले लम्बे और ऊँचा उदरवाले. लम्बायमान शूल प्रोत-वत् शिरको धारण करनेवाले ॥ ३ ॥ दोनों भुजाओंसे मुरदोंके शिरोंको खींचनेवाले और अनेक प्रकारके हास्यको करते अपनी जातिके सदृश चेष्टा करनेवाले ॥ ४ ॥ बहुतसे रूपोंसे संयुक्त प्राकृत वचनोंको कहनेवाले, अपनी जंवाओंसे बड़े बड़े वृक्षोंको कैंपानेवाले ॥ ५ ॥ और सूक्तिणी अर्थात् अपने ओष्ठप्रांत देशको अपनी जीभसे चाटनेवाले, दांतोंको चवानेवाले, अस्थि और नसोंसे आकीर्ण धमनीरूप रज्जुमें विस्तृत ॥ ६ ॥

हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे माथेव ! इन वचनोंको सदा कहनेवाले और किस समय विष्णु देखेंगे, वह विष्णु अब कहां स्थित हैं ॥ ७ ॥ हमारे स्वामी श्रीकृष्ण कहां स्थित हैं, कैसे देखनेको हम यत्न करें ? और किस देशमें वह देवेशरूप ईश्वर बसते हैं ॥ ८ ॥ कमलके पत्तोंकी सदृश नेत्रोंवाले साक्षात् इन्द्रके छोटे भाता कहां है ? जिसको ब्रह्मके जाननेवाले विद्वान् साक्षात् ब्रह्म कहते हैं ॥ ९ ॥ उन जन्मसे रहित और विश्वके रचनेवाले ईश्वरके देखनेको हम यत्न करते हैं और अंतकालमें इसी ईश्वरमें तीनों जगत् लय होते हैं ॥ १० ॥ उस अज विश्वके कर्ताको अब कहां देखेंगे जिनका विस्तार किया यह

वदन्तो कृष्ण कृष्णोति माधवोति स संततम् ॥ कदा नु द्रक्ष्यते विष्णुः स इदानीं कं तिष्ठति ॥ ७ ॥ स्वामिनः कुत्र वसतिः कुतो द्रष्टुं यतामहे ॥ अत्र वा कुत्र देवेशः कुतो नु स्थास्यते हरिः ॥ ८ ॥ कुतः पद्मपलाशाक्षः साक्षादिन्द्रानुजो हरिः ॥ यमाहुः पुण्डरीकाक्षं ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः ॥ ९ ॥ तमजं पुरुषं विष्णुं द्रष्टुमभ्युद्यता वयम् ॥ अन्तर्काले जगन्नाथं प्रविवेशं जगन्नयम् ॥ १० ॥ तमजं विश्वकर्तारं कुतो द्रक्ष्याम साम्प्रतम् ॥ यस्य विस्तार एष लोकाः प्राणिनिवासिनः ॥ ११ ॥ तं द्रष्टुं देवमीशानं यतामः साम्प्रतं हरिम् ॥ दशा घोरतमा लोके विद्विष्टा सर्वजन्तुभिः ॥ १२ ॥ पेशाचीयं समुत्पन्नं कथं नो प्राविशद्भलात् ॥ नस्मांसास्त्रिकलुषा सर्वभीतिप्रदायिनी ॥ १३ ॥ अहो नो दुष्कृतं कर्म प्राक्तनं कर्मसंचये ॥ अत्रैव महती प्रीतिर्वर्तते सर्वज्ञ तथा ॥ १४ ॥ यध्वत्रो दुष्कृतं कर्म तापत्स्थास्यति तादृशी ॥ दशा सा सर्वाविद्विष्टा प्राणिपीडनक्रोरिणी ॥ १५ ॥

लोक प्राणियोंका निवासरूप है ॥ ११ ॥ ऐसे ईश्वरको शीघ्र हम कैसे देखेंगे, कैसे जतन करेंगे संसारमें हमारी दशा बड़ी घोर है, और सब जंतुओंसे त्यागी हुई है ॥ १२ ॥ और पिशाचोंके योग्य मनुष्योंके बांस और हाड आदिको ग्रहण करानेवाली और सब प्रकारके भयको देनेवाली ऐसी बुरी दशा बलसे कैसे हमारेको प्राप्त हुई आश्चर्य है ॥ १३ ॥ पूर्वजन्ममें हम लोगोंने बहुत बुरे कर्म किये हैं, जिससे इन पूर्वोक्त बुरे कर्मोंमेंही हमारी प्रीति सब कालमें बनी रहती है ॥ १४ ॥ और जबतक हम उस दोनोंसे किया बुरा कर्म स्थित रहेगा तबतक प्राणियोंको पीडा करनेवाली और सबोंसे त्यागी

हुई दशा हमारी रहेगी ॥ १५ ॥ बहुत जन्मोंमें हमसे बुराही कर्म बन आया है, इस कारण यह घोररूप फल अवश्या निवृत्त नहीं होता ॥ १६ ॥ क्यों कि कुत्तोंके समूहोंके संग प्राणियोंको मारनेके अर्थ हम सावधान हैं, और बाल्य अवस्थासेही इसमें रत हैं ॥ १७ ॥ अज्ञानसे आवृत चित्तवाले प्राणी कृत्य और अकृत्यको नहीं जानते और यौवन अवस्थामें विषयोंसे भ्रमित हुए ॥ १८ ॥ चित्तवाले मनुष्य अपने कल्याणके लिये यत्न नहीं करते कारण कि उनके चित्त विषयवासनामें रत हैं ॥ १९ ॥ और वृद्ध अवस्थामें घोररूप दुःखदाता ज्वर आदि अनेक सर्वथा दुष्कृतं कर्म बहुभिर्जन्मसंचयैः ॥ तथा हि तत्फलं घोरमद्यापि न निवर्तते ॥ १६ ॥ यताः स्म प्राणिनो हन्तुं श्वगणैः सह साम्प्रतम् ॥ तथा हि प्राणिनो लोके बाल्यमादौ समास्थिताः ॥ १७ ॥ अज्ञानावृताचिताश्च कृत्याकृत्यं न जानते ॥ तथा यौवनिनो भ्रान्ता विषयैर्बहुलीकृताः ॥ १८ ॥ यतन्ते श्रेयसे नैव ततो विषयसंस्थिताः ॥ विषयाविष्टचित्ता हि मनुष्या न विजानते ॥ १९ ॥ तथा च वृद्धभावे तु व्याधिभिर्बहुभिर्वृताः ॥ ज्वरादिभिर्महाघोरैर्नानादुःखविधायिभिः ॥ २० ॥ यतन्ते न हि वै श्रेयो विनष्टेन्द्रियगोचराः ॥ ततो मृता गर्भवासे वसन्ति सततं नराः ॥ २१ ॥ विण्मूत्रकलिले घोरे दुःखैर्बहुभिराचिताः ॥ च्यवन्ते तु ततो घोराद्गर्भात् संसारमण्डले ॥ २२ ॥ परस्परं विहिंसन्तः कुर्वन्तः कर्मसंचयम् ॥ महत्येवं सदा घोरे संसारे दुःखसंकुले ॥ २३ ॥ पापानि बहुरूपाणि कुर्वन्तेऽज्ञानतस्तदा ॥ संसारस्यैव महिमा विस्तृतः सर्वजन्तुषु ॥ २४ ॥ अच्छेद्यः शस्त्रसंपातेरुपायैर्बहुभिः सदा ॥ एतस्मान्न निवर्तन्ते मर्त्याः प्राकृतबुद्धयः ॥ २५ ॥

प्रकारकी व्याधियोंसे पीडित ॥ २० ॥ मष्ट इन्द्रियोंवाले होकर मनुष्य कल्याणके अर्थ यत्न नहीं करते हैं, फिर मरकर गर्भवास करते हैं अर्थात् ॥ २१ ॥ विषा और मूत्रसे युक्त गर्भमें निरंतर वसते हैं, पीछे बहुतसे दुःखोंसे व्याप्त हुए घोर रूप गर्भसे संसारमण्डलमें जन्मते हैं ॥ २२ ॥ अब परस्परमें हिंसा करते हुए और कर्मका संचय करते हुए इस दुःखयुक्त घोरसंसारमें ॥ २३ ॥ अज्ञानसे बहुतसे पापोंको करते हैं, ऐसे संसारकी महिमा प्राणि-योंमें विस्तृत है ॥ २४ ॥ यह शस्त्र आदि अनेक प्रकारके उपायोंसे अच्छेद्य अर्थात् कटनेके योग्य नहीं है, इस कारण प्राकृत बुद्धिवाले मनुष्य इस

संसारसे निवृत्त नहीं होते ॥ २५ ॥ इस मनुष्येन्द्रको मारकर मैं इसके धनको हूँ और इसके धनको चुराकर मैं अपना बना लूँ ॥ २६ ॥ और इस शतरूप मनुष्यको झिड़ककर धनको हूँगा, इत्यादि मनोरथोंसे व्याकुल हुए मूर्ख प्राणियोंको पीड़ा देनेके अर्थ यत्न करते हैं ॥ २७ ॥ इस दुःखके मूलरूप संसारकी सब कालमें शंस चक्र गदाको धारण करनेवाले नारायणही औषधी है ॥ २८ ॥ कारण कि वह आदिवेव पुराणात्मा और ब्रह्म जाननेवाले आत्मा, विष्णु हैं, इस कारण हम सब यत्नसे तिन विष्णुको देखेंगे ऐसे बोलते हुए दोनों पिशाच विष्णुके आगे प्रगट हुए ॥ २९ ॥

इमं हत्वा मनुष्येन्द्रमिदमस्माद्धराभ्यहम् ॥ चोरयित्वा धनमिदं हरिष्याम्याददाभ्यहम् ॥ २६ ॥ निर्भत्स्येनमिमं शान्तं हरिष्यामि धनं बली ॥ इत्यादिव्याकुला मूर्खा यतन्ते प्राणिपीडनम् ॥ २७ ॥ अस्यैव दुःखमूलस्य संसारस्य सदा हरिः ॥ भेषजं सर्वथा देवः शङ्खचक्रगदाधरः ॥ २८ ॥ आदिदेवः पुराणात्मा आत्मा ब्रह्मविदां सदा ॥ ते वयं सर्वयत्नेन द्रक्ष्यामः सर्वथा हरिम् ॥ इत्थं पिशाचौ भाषान्तौ प्रादुरस्तां हरेः पुरः ॥ २९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायामेकोनाशीतितमोऽध्यायः ॥ ७९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः स भगवान्विष्णुः पिशाचौ मांसभक्षकौ ॥ ददर्शार्थं महाघोरो दीपिकाधारिणौ हरिः ॥ १ ॥ विलोकयांचक्रतुस्तौ पिशाचौ देवकीसुतम् ॥ स्थितं सुखासने विष्णुं दृष्ट्वा लोकेश्वरेश्वरम् ॥ २ ॥ तौ च गत्वा समुद्देशं पिशाचौ केशवस्य ह ॥ ततस्तावूचतुर्विष्णुमन्तरीकृत्य केशवम् ॥ ३ ॥

इति श्रीम० खिलेषु ह० भ० भाषायां कैलासयात्रायामेकोनाशीतितमोऽध्यायः ॥ ७९ ॥ वैशम्पायन बोले कि, इसके उपरान्त विष्णु भगवान् ने मांसको भक्षण करनेवाले और दीपकको धारण करनेवाले महाघोर रूप दो पिशाचोंको देखा ॥ १ ॥ और वह दोनों पिशाच सुंदर आसनपर स्थित हुए देवकी पुत्र लोकेश्वर विष्णुको देखते हुए ॥ २ ॥ तब लोकेश्वरोंके ईश्वररूप विष्णुको देखकर और विष्णुके समीपमें जायकर और विष्णुको मध्यमें

कर दोनों पिशाच कहने लगे ॥ ३ ॥ हे मनुष्य ! तुम कौन हो और किसके शिष्य हो ? और कहाँसे आये हो ? मृगोंसे व्याप्त ॥ ४ ॥ और मनुष्योंसे रहित हाथियोंसे आकृत, पिशाचगणोंसे सेवित और श्वापद प्राणियोंसे और सिंहोंसे सेव्यमान ॥ ५ ॥ वनमें तुम किस कारण आये हो ? कुमार अवस्थायुक्त सुंदर अंगवाले साक्षात् दूसरे विष्णुकी समान पक्षोंकी समान नेत्रोंवाले श्याम और कमंडलुके समान कांतिवाले और स्वयं लक्ष्मीपति ॥ ६ ॥ हमसे प्रीति करनेवाले हो तुम देव, यक्ष, गंधर्व वा, किन्नर हो ॥ ७ ॥ वा इन्द्र, कुबेर, यम वा वरुण हो, ध्यानार्पित मनवालेकी समान को भगवान्कस्य वा मर्त्यः कुतश्चागम्यते त्वया ॥ किमर्थमिह संप्राप्तो वने घोरे मृगाकुले ॥ ४ ॥ निर्मनुष्ये द्वीपिवृते पिशाचगणसेविते ॥ श्वापदैः सेव्यमाने च विपिने व्याघ्रसंकुले ॥ ५ ॥ सुकुमारोऽनवद्याङ्गः साक्षाद्विष्णुस्वापरः ॥ पद्मपत्रेक्षणः इयामः पद्माभिः श्रीपतिः स्वयम् ॥ ६ ॥ अस्मात्प्रीतिकरः साक्षात्प्राप्तो विष्णुस्वापरः ॥ देवो वा यदि वा यक्षो मन्धर्वः किन्नरोऽपि वा ॥ ७ ॥ इन्द्रो वा धनदो वापि यमोऽथ वरुणोऽपि वा ॥ एकाकी विपिने घोरे ध्यानार्पितमना इव ॥ ८ ॥ ब्रूहि मर्त्य यथातत्त्वं ज्ञातुमिच्छामि मानद ॥ एवं पृष्ठः पिशाचाभ्यामाह विष्णुरूकमः ॥ ९ ॥ क्षत्रियोऽस्मीति मामाहुर्मनुष्याः प्रकृतिस्थिताः ॥ यदुवंशे समुत्पन्नः क्षात्रं वृत्तमनुष्ठितः ॥ १० ॥ लोकानामथ पातास्मि शास्ता दुष्टस्य सर्वदा ॥ कैलासं गन्तुकामोऽस्मि द्रष्टुं देवमुमापतिम् ॥ ११ ॥ इत्येवं मम वृत्तान्तः कथ्यतां कौ युवामिति ॥ युवामिह समायातो किमर्थं ब्राह्मणाश्रमम् ॥ १२ ॥ एषा हि महती पुण्या नानाविधनिषेविता ॥ बहुरीयं समाख्याता न क्षुद्रैराश्रिता कश्चित् ॥ १३ ॥

इस वनमें अकेले तुम कैसे हो ? ॥ ८ ॥ हे मनुष्य ! यथार्थ वर्णन करो, मैं जाननेकी इच्छा करता हूँ इस प्रकार पिशाचोंसे पूछे हुए महापराक्रमी श्रीकृष्ण कहने लगे ॥ ९ ॥ किं यदुवंशमें उत्पन्न होनेवाले और क्षात्रवृत्तमें अनुष्ठित मैं क्षत्रिय हूँ ऐसा प्रकृतिमें स्थित मनुष्य कहत हूँ ॥ १० ॥ लोकोंकी रक्षा करनेवाला और सब कालमें दुष्टोंकी शिक्षा देनेवाला मैं क्षत्रिय हूँ, सो महादेवजीको देखनेके लिये कैलासपर्वतको गमन करनेवाला हूँ ॥ ११ ॥ यह मेरा वृत्तान्त है, परंतु तुम दोनों कौन हो ? यह कहो, और इस ब्राह्मणाश्रममें तुम किस कारण आये हो ? ॥ १२ ॥ पवित्र और

अनेक प्रकारके विषोंसे सेवित यह बदरीपुरी विख्यात है, यह शुद्ध पुरुषोंसे कहींभी सेवित नहीं हो सकती ॥ १३ ॥ तपस्वियोंसे जुष्ट और सिद्धोंसे सेवित यह चदरिकाणम है यहां कुत्तोंके गण और मांसको भोजन करनेवाले पिशाच नहीं दीखते हैं ॥ १४ ॥ और यहां मृग मारनेके योग्य नहीं हैं, और यहां शिकार नहीं सेला जाता है. और शुद्ध कृतघ्न नास्तिकोंका प्रवेश यहां नहीं हो सकता है ॥ १५ ॥ और इस देशका मैं रक्षा करनेवाला हूं, इसमें संशय नहीं, जो व्यतिक्रम करेगा, मैं बत्नसे उसकी शिक्षा करूंगा ॥ १६ ॥ तुम दोनों कौन हो ? कहां जाते हो और किसकी यह बड़ी सेना है ? और यहांसे अगाड़ी तुम प्रवेश नहीं करना, कारण कि ऋषिजन वसते हैं ॥ १७ ॥ और तपस्वियोंके तपमें विघ्न हो सकता है. इस कारण प्रथम तपस्विभिस्तपोयुक्तैर्जुष्टा सिद्धनिषेविता ॥ श्रमणा नात्र दृश्यन्ते पिशाचा मांसभोजनाः ॥ १४ ॥ न हन्तव्या मृगाश्चात्र मृगया नात्र वर्तते ॥ न तु शुद्रैः प्रवेष्टव्या न कृतघ्नैर्न नास्तिकैः ॥ १५ ॥ अहमस्य तु देशस्य रक्षिता नात्र संशयः ॥ व्यतिक्रमो यदि भवेत्तस्य शास्तास्मि यत्नतः ॥ १६ ॥ कौ भवन्तो क्व नु युवां कस्येयं मदती चमूः ॥ नातः परं प्रवेष्टव्यमृषयस्तत्र संस्थिताः ॥ १७ ॥ विघ्नस्तत्र प्रवर्तेत तपस्सु च तपस्विनाम् ॥ इद्वै स्थीयतां तावद्वक्तव्यं च ततः सुखम् ॥ १८ ॥ अन्यथाहं निषेद्धा स्यां बलाद्राक्ष्ये-स्तथैव च ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवं पृष्टौ पिशाचौ तु वक्तुमेवोपचक्रतुः ॥ १९ ॥ तयोरेको महाघोरः पिशाचो दीर्घबाहुकः ॥ उवाच वचनं तत्र यथा हृदि समर्पितम् ॥ २० ॥ पिशाच उवाच ॥ श्रूयतामभिधास्यामि समाहितमना भव ॥ नमस्कृत्य जगन्नाथं हरिं कृष्णं जगत्पतिम् ॥ २१ ॥ आदिदेवमजं विष्णुं वरेण्यमनघं शुचिम् ॥ वक्ष्यामि सकलं यद्वत्तथा शृणु यदीच्छसि ॥ २२ ॥ यहीं स्थित रहो और फिर सुखपूर्वक बोलो ॥ १८ ॥ और यदि मेरे वचनको नहीं मानोगे तो बलसे और वाक्यसे रोक दूंगा. वैशंपायन बोले; कि इस प्रकार पूछे हुए दोनों पिशाच कहनेको समीपमें पहुँचे ॥ १९ ॥ परन्तु तिन दोनोंमें जो एक महाघोर, दीर्घ भुजाओंवाला पिशाच था; वह हृदयमें स्थित वचन कहने लगा ॥ २० ॥ पिशाच कहने लगा, जनकके नाथ और जगत्के पति हरि कृष्णको नमस्कार कर मैं वर्णन करता हूं, तुम सावधान मन होकर सुनो ॥ २१ ॥ आदिदेव अज वरेण्य अनघ और पवित्र विष्णुका ध्यान कर मैं सब कहूंगा. जो तुम्हारी इच्छा है सो सुनो ॥ २२ ॥

मांस खानेवाला, घोर दर्शन, विकृत घोर मृत्युके समान मानो दूसरी मृत्यु में घंटाकर्ण नाम पिशाच हूं ॥ २३ ॥ महादेवके मित्र साक्षात् कुबेरका अनुचर हूं, और यह मेरा छोटा भाई है और मैं अंतककाभी अंतक हूं ॥ २४ ॥ और यह वही मृगया विष्णुकी पूजाके अर्थ है, और यह मेरी सेना है, और कुर्चोंका गणभी मेराही है ॥ २५ ॥ और मैं भूतसेवित कैलासपर्वतसे आया हूं, पाप करनेवाला मैं पिशाचके वेषसे युक्त हूं ॥ २६ ॥ पूर्व कालमें मैं निरन्तर विष्णुको दूषित करता हुआ दोनों कानोंमें घंटे बांधकरके कि मेरे कानोंमें विष्णुका नाम प्रवेश न करे, इस प्रकार विचार

घण्टाकर्णोऽस्मि नाम्नाहं पिशाचो घोरदर्शनः ॥ मांसादो विकृतो घोरः साक्षान्मृत्युरिवापरः ॥ २३ ॥ धनदस्यानुगन्ताहं साक्षाद्ब्रह्मसत्त्वस्य च ॥ ममायमनुजः साक्षादन्तकस्यान्तको ह्यहम् ॥ २४ ॥ मृगयंयं सुमहती विष्णोः पूजार्थमित्युत ॥ ममेयं वर्तते सेना श्रगणोऽपि ममेव तु ॥ २५ ॥ आगतोऽहं महाशैलान्तकैलासाद्गतसेवितात् ॥ अहं पिशाचवेषेण संविष्टः पापकर्मकृत् ॥ २६ ॥ सततं दूषयन्विष्णुं घण्टामाबध्य कर्णयोः ॥ मम न प्रविशेन्नाम विष्णोरिति विचिन्तयन् ॥ २७ ॥ अहं कैलासनिलयमासाद्य वृषभध्वजम् ॥ आराध्य तं महादेवमस्तुवं सततं शिवम् ॥ २८ ॥ ततः प्रसन्नो मामाह वृणीष्वेति वरं हरः ॥ ततो मुक्तिर्मया तत्र प्रार्थिता देवसन्निधौ ॥ २९ ॥ मुक्तिं प्रार्थयमानं मां पुनराह त्रिलोचनः ॥ मुक्तिप्रदाता सर्वेषां विष्णुरेव न संशयः ॥ ३० ॥ तस्माद्भूत्वा च बदरीं तत्राराध्य जनार्दनम् ॥ मुक्तिं प्राप्नुहि गोविन्दान्नरनारायणाश्रमे ॥ ३१ ॥ इत्युक्तो देवदेवेन शूलिना ज्ञातवानहम् ॥ तमेव परमं मत्वा गोविन्दं गरुडध्वजम् ॥ ३२ ॥

कर ॥ २७ ॥ कैलासपर्वतमें जायकर महादेवजीकी आराधना कर निरंतर महादेवजीकी स्तुति करने लगा ॥ २८ ॥ तब प्रसन्न हुए महादेव मुझसे कहने लगे कि वर मांग, तब मैंने महादेवके समीपमें मुक्तिकी प्रार्थना करी ॥ २९ ॥ तब मुक्तिकी प्रार्थना करनेवाले मुझसे महादेव कहने लगे कि सबको मुक्तिका देनेवाला विष्णु है, इसमें संशय नहीं ॥ ३० ॥ इस कारणसे बद्रीकाश्रममें नरनारायणके आश्रममें जायकर विष्णु भगवान्की आराधना करनेसे तू मुक्तिको प्राप्त होगा ॥ ३१ ॥ इस प्रकार महादेवजीके कहनेसे तिसी विष्णुको परम मानकर गरुडध्वजरूप गोविन्दको जानता

हुआ ॥ ३२ ॥ तिनसे मुक्तिकी प्रार्थना करनेवाला मैं इस देशमें प्राप्त हुआ हूं, औरभी मेरा कार्य सुनो. जो तुमको सुननेकी अभिलाषा है ॥ ३३ ॥ पश्चिमसमुद्रके तटपर यदुवृष्णिज्योंसे आकीर्ण और समुद्रकी तरंगोंसे आकुल द्वारवती पुरी है ॥ ३४ ॥ तिस पुरीमें हरि भगवान् पुरुषोत्तम लोकोंका हित करनेके निमित्त वसते हैं. तिनको देखनेके अर्थ ॥ ३५ ॥ इन अनुचरोंके संग निकलकर प्राप्त हुए हैं, सो सबोंके ईश्वररूप विष्णुको अब हम देखेंगे ॥ ३६ ॥ लोकोंके उत्पत्तिस्थान और संसारकी रक्षा करनेवाले, कर्ता, हर्ता और जगत्के पति और आदिकेभी आदि सबोंके उत्पत्तिस्थान और कारण ॥ ३७ ॥ सबोंकी रक्षा करनेवाले, सबोंके पापोंको हरनेवाले, पुरातन प्रभुओंकेभी प्रभु और

तस्मात्प्रार्थयमानस्तन्मुक्तिदेशममुं गतः ॥ अन्यच्च शृणु मे कार्यं यदि कौतुहलं तव ॥ ३३ ॥ पुरी द्वारवती नाम पश्चिमस्योदये-
स्तटे ॥ यदुवृष्णिसमाकीर्णा सागरोर्मिसमाकुलाम् ॥ ३४ ॥ अध्यास्ये स हरिविष्णुस्तां पुरीं पुरुषोत्तमः ॥ द्रष्टुं लोकहितार्थाय वसन्तं
द्वारकापुरे ॥ ३५ ॥ निर्गताः साम्प्रतं मर्त्यं वयमेतैः सदानुगैः ॥ विष्णुः सवन्धरः साक्षाद्द्रष्टव्योऽस्माभिरद्य वै ॥ ३६ ॥ लोकानां
प्रभवः पाता कर्ता हर्ता जगत्पतिः ॥ आदिः स हि समस्तस्य प्रभवः कारणं हरिः ॥ ३७ ॥ कर्ता समस्तस्य हरिः पुरातनः प्रभुः
प्रभूणामपि यः सदात्मकः ॥ तदादिदेवं वरदं वरेण्यं द्रष्टुं हरिं संप्रति संयताः स्मः ॥ ३८ ॥ यस्य प्रसादाज्जगदेवमासीत्स्वप्राणिगन्धर्व-
महोरगौघम् ॥ देवं जगद्योनिमजं जनार्दनं द्रष्टुं हरिं संप्रति संयताः स्मः ॥ ३९ ॥ यस्योदयाद्विश्वमिदं प्रभूतं लयं च तस्मिन्समुपैति
कल्पे ॥ तस्यैव साक्षाद्भवति विश्वं द्रक्ष्याम देवं पुरुषोत्तमं हरिम् ॥ ४० ॥

सत्यआत्मावाले, वर देनेवाले, आदिदेव विष्णुको देखनेके अर्थ अब हम सब यत्न कर रहे हैं ॥ ३८ ॥ और जिसके प्रसादसे प्राणी गन्धर्व महासर्पके समूहरूप जनत् हो गया है, देव और जगत्के योनि, अजन्मा और दुष्टजनोंके पीडा देनेवाले विष्णुको देखनेके लिये अब हम यत्न कर रहे हैं ॥ ३९ ॥ और जिसके उग्रसे यह विश्व उत्पन्न हुआ है, और प्रलयमें जिसके शरीरमें यह जगत् लय होगा, और जिसके साक्षात् वशकर्मी संसार है, ऐसे पुरुषो-
त्तमरूप विष्णुको देखेंगे ॥ ४० ॥ और जो सब संसारके रचनेवाले पालनेवाले देव हर्ता और भुवनके ईश्वर हरि पुरातन और आद्यमें होनेवाले अवि-

नाशी विष्णुको हम देखेंगे ॥ ४१ ॥ ब्रह्मा आदिको करनेवाले, भुवनके रक्षक पृथ्वीके कर्ता एकही नारायण जिनकी कृपासे योगियोंको शुद्ध बुद्धिकी प्राप्ति होती है, उन नारायणका दर्शन हम करेंगे ॥ ४२ ॥ वह जगत्पति इस संपूर्ण जगत्को निगलकर साक्षात् बालककी समान होकर शयन कर बडके पत्रमें स्थित हो पैरोंके चलाते हैं, और हाथोंको कँपाते हैं ॥ ४३ ॥ जिसके उदरमें पुरातन मार्कण्डेय मुनि प्रवेश कर मायासहित सब लोकोंके देखने हुए और फिर बाहर आकरभी यह सब कुछ देखते हुए ॥ ४४ ॥ वही महात्मा जगत्के आदि कालमें संसारको पेटमें रखकर शयन कर जाते

स्रष्टा च योऽसौ सकलस्य देवः पाता च हर्ता च हरिः स एव ॥ द्रक्ष्याम नित्यं भुवनेश्वरं हरिं पुराणमाद्यं प्रभविष्णुमव्ययम् ॥ ४१ ॥ अजस्य कर्ता भुवनस्य गोप्ता भुवश्च कर्ता हरिरिक एव ॥ तं योगिनो योगविशुद्धबुद्धिं लभेम तेनैव मतिः समाकुला ॥ ४२ ॥ निगीर्य विश्वं सकलं जगत्पतिः श्रेते शिश्रुत्वं समवाप्य साक्षात् ॥ वटस्य पत्रे जगतां निवासः पादौ च विशिष्य करौ विधुन्वन् ॥ ४३ ॥ यस्योदरे देवमुनिः पुसतनो ददर्श लोकानखिलान्स मायया ॥ प्रविश्य विश्वं सकलं यथावद्वह्मिण्या भूतमभूदिदं महत् ॥ ४४ ॥ निगीर्य विश्वं जगदादिकाले श्रेते महात्मा जलधेर्जलौघे ॥ देव्या श्रिया चामरलोलहस्तया निषेव्यमाणः पुरुषोत्तमस्तदा ॥ ४५ ॥ नाभेश्च यस्याविरभूत्सपत्रं पद्मं महत्काञ्चनसप्रभं प्रभोः ॥ जन्मारूपदं लोकयुरोर्यदासीद्विस्तारं पद्मं जगदादिसृष्टौ ॥ ४६ ॥ दधार यो भूतपतिर्महान्मर्ही दंष्ट्राग्रसंस्थापितरूढमूलाम् ॥ नदन्महामेघ इवादिक्काले कुर्वन्वराहो मुनिगतिमूर्तिः ॥ ४७ ॥ हरिः पुराणः पुरुषोत्तमः प्रभुः कर्ता समस्तस्य समस्तसाक्षी ॥ यज्ञात्मको यज्ञपतिर्जगत्पतिर्द्रष्टुं तमीशं वयमुद्यताः स्मः ॥ ४८ ॥

हैं, उस समय सागरमें देवी लक्ष्मी चमर हाथमें लिये उन पुरुषोत्तमकी सेवा करती है ॥ ४५ ॥ और जिसकी नाभिते सुवर्णकी सदृश कान्तिवाला पत्रोंसहित कमल प्रगट हुआ, तिस विस्तारित कमलमें जगत्की सृष्टिके अर्थ ब्रह्माजी जन्मे हैं ॥ ४६ ॥ और भूतपति जो अपनी दाढके अग्रभागपर पृथ्वीको दृढ स्थापित कर महामेघकी समान शब्द करते हुए वाराहजी पृथ्वीको धारण करते हुए जिनकी कीर्ति मुनि गाते हैं ॥ ४७ ॥ और वही वाराह हरि पुराण पुरुषोत्तम प्रभु सबके करनेवाले, सबके साक्षी, यज्ञात्मक, यज्ञपति, जगत्पति हैं, उनको देखनेके लिये हम उद्यत हुए हैं ॥ ४८ ॥

कितनेही इस देवको बहुतरूपोंसे वर्णन करते हैं, और वेदान्त करके संस्थापित सत्त्वसंयुक्त तिस ईश्वरके देखनेको हम उद्यत होते हैं ॥ ४९ ॥ और श्रुति, स्मृति, न्यायसे निविष्ट चित्तवाले बहुतसे बहुत प्रकारसे कहते हैं, और अजन्मा साक्षात् आत्मा है, ईश्वरके देखनेको हम सब उद्यत हुए हैं ॥ ५० ॥ जो आव वरका देनेवाला, श्रेष्ठ प्रकाशवाला और एकांत तत्त्ववाला सब प्राणियोंमें स्थित और देव, दुष्टोंको पीडा देनेवाला है, जिसको पुरातन मुनि ऐसा कहते हैं, ऐसे ईश्वरके हम देखनेको यत्न करते हैं ॥ ५१ ॥ और आदिकालमें जिस जगत्पतिमें यह विश्व स्थित है तिसके देखनेको हम साव-

केचिद्बहुत्वेन वदन्ति देवमेकात्मना केचिदिमं पुराणम् ॥ वेदान्तसंस्थापितसत्त्वयुक्तं द्रष्टुं तमीशं वयमुद्यताः स्मः ॥ ४९ ॥ अनेकमेकं बहुधा वदन्ति श्रुतिस्मृतिन्यायनिविष्टचित्ताः ॥ आहुर्यमात्मानमजं पुराविदो द्रष्टुं तमीशं वयमुद्यताः स्मः ॥ ५० ॥ यं प्राहुरीड्यं वरदं वरेण्यमेकान्ततत्त्वं मुनयः पुरातनाः ॥ यं सर्वगं देवमजं जनार्दनं द्रष्टुं हारिं संप्रति संयताः स्मः ॥ ५१ ॥ यस्मिन्विश्वमिदं प्रोत-मादिकाले जगत्पतो ॥ तं द्रष्टुमभिसंवृताः किं नु वक्ष्याम साम्प्रतम् ॥ ५२ ॥ गच्छामो वयमन्यत्र गच्छ त्वं काममन्यतः ॥ नियमोऽप्यस्ति नो मर्त्यं यथेष्टं गच्छ साम्प्रतम् ॥ ५३ ॥ रात्रिमध्यमनुप्राप्तं नात्र कार्या विचारणा ॥ इत्युक्त्वा घोररूपोऽसौ पिशाचो विकृताननः ॥ ५४ ॥ तस्मिन्नेव समे देशे पीत्वा च रुधिरं बहु ॥ भक्षयित्वा यथाकामं मांसराशिं विचक्षणः ॥ ५५ ॥ अपः संस्पृश्य तत्रैव पार्श्वे संस्थाप्य साधनम् ॥ आन्त्रपाशं महाघोरं संस्थाप्य विपुलं महत् ॥ ५६ ॥

धान हैं, और अब हम क्या कहें ॥ ५२ ॥ हे मनुष्य ! अब हम अन्य जगह गमन करते हैं, और तू अन्य जगह गमन कर और जिधर इच्छा हो, उस यथेष्ट देशको चला जा ॥ ५३ ॥ बहुत घोर रात्रि है, इसका विचार न करना इस प्रकार कहकर विहृत सुखवाला घोररूप पिशाच ॥ ५४ ॥ इस देशमें बहुतसे रुधिरका पान कर और यथायोग्य मांसके समूहका भक्षण कर ॥ ५५ ॥ और जलके कुड़े कर और समीपमें सब प्रकारके साधन और महाघोर रूप अन्त्रपाशको स्थापन कर ॥ ५६ ॥

कुशके आसनोंको बिछा, पानीसे आप पवित्र हो और सब कुत्तोंके गणोंको त्याग बड़े यत्नसे ॥ ५७ ॥ आसनपर स्थित हो समाधिके लिये यत्न करने लगा। फिर एकाग्रचित्त होकर विष्णुको नमस्कार कर घोररूप पिशाच भक्तवत्सल भगवान्‌के इस मंत्रका पाठ करने लगा ॥ ५८ ॥ भगवान्‌को नमस्कार है। वासुदेव और चक्रगदाको धारण करनेवालेको नमस्कार है ॥ ५९ ॥ ॐ नारायणके अर्थ नमस्कार है, विष्णु और प्रभविष्णुको नमस्कार है, हे केशव ! तुम्हारे कीर्तनसे मेरे आत्माकी शुद्धि हो ॥ ६० ॥ और यह घोररूप जन्म मेरे मत हों। हे गोपते ! तुम्हारे स्मरणसे मैं देवदूत हो जाऊं ॥ ६१ ॥

आसनं कुशसंयुक्तं कृत्वा चाभ्युक्ष्य वारिणा ॥ उत्सार्य श्वमणान् सर्वान्यत्नेन महता तदा ॥ ५७ ॥ सुखासनं समाख्याय समाधौ यतते श्वपः ॥ एकचित्तस्तदा भूत्वा नमस्कृत्य च केशवम् ॥ इमं मन्त्रं पठन्घोरः पिशाचो भक्तवत्सलम् ॥ ५८ ॥ नमो भगवते तस्मै वासुदेवाय चक्रिणे ॥ नमस्ते गदिने तुभ्यं वासुदेवाय धीमते ॥ ५९ ॥ ओं नमो नारायणाय विष्णवे प्रभविष्णवे ॥ मम भूयान्मनः-शुद्धिः कीर्तनात्तव केशव ॥ ६० ॥ जन्मेदमीदृशं घोरं मा भून्मम दुरासदम् ॥ देवदूतो भविष्यामि स्मरणात्तव गोपते ॥ ६१ ॥ तव चक्रप्रहारेण कायो नश्यतु मामकः ॥ मम भूयो भवो मा भूदेषा मे प्रार्थना विंभो ॥ ६२ ॥ अर्थिनां कल्पवृक्षोऽसि दाता सर्वस्य सर्वदा ॥ यत्र यत्र भवेज्जन्म तत्र तत्र भवान्हादि ॥ ६३ ॥ वर्त्ततां मम देवेश प्रार्थनेषा ममापरा ॥ नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं भवत्वेवं सदा मम ॥ ६४ ॥ निर्विघ्ना प्रार्थना देव नमस्तेऽस्तु सदा मम ॥ यदा मे मरणं भूयात्तदा मां भूत्स्मृतिभ्रमः ॥ ६५ ॥ दिने दिने क्षणं चित्तं त्वयि संस्थं भवत्विति ॥ एवं प्रेरय मां देव मा भूते चित्तमीदृशम् ॥ ६६ ॥

और तुम्हारे चक्रके प्रहारसे मेरा शरीर बूट हो जाय और फिर मुझे यह संसार न मिले हे विंभो ! यह मेरी प्रार्थना है ॥ ६२ ॥ आप अर्थियोंके कल्पवृक्ष हो और सब कालमें सर्वोंके दाता तुमही हो। हे देव ! जहां जहां मेरा जन्म हो, तहां तहां मेरे हृदयमें तुम स्थित रहो ॥ ६३ ॥ यह दूसरी मेरी प्रार्थना है, सो पूरी हो। तुम्हें मेरा बारंबार नमस्कार है ॥ ६४ ॥ हे देव ! विघ्नोंसे रहित सदा मेरी प्रार्थना हो, तुम्हें नमस्कार है। जब मेरी मृत्यु हो जाय, तबभी स्मृति बनी रहे ॥ ६५ ॥ दिनरात्रिमें और क्षणक्षणमें मेरा चित्त तुममें स्थित रहे। हे देव !

ऐसे मेरेको प्रेरित कर और ऐसा तुम्हारा चित्त न हो कि ॥ ६६ ॥ यह नृशंसरूप पिशाच है, इसपर क्या दया करनी उचित है. हे देव ! आप इस बातका विचार करो यह हमारा दास है ॥ ६७ ॥ हे विभो ! मेरा मन पराई पीडाके अर्थ मत्त न हो. हे भगवन् ! हे प्रभो ! आपको नमस्कार है. और सब इन्द्रियें इन्द्रियोंके अर्थोंको न भजें ॥ ६८ ॥ हे केशव ! तुम्हारे प्रसादसे अंतकालमें यह हो, पृथ्वी मेरी नासिकाकी रक्षा करे, और जल मेरी जिह्वा रक्षा करे ॥ ६९ ॥ सूर्य मेरे नेत्र रक्षा करे और वायु मेरे स्पर्शकी रक्षा करो, आकाश मेरे कानोंकी रक्षा करो और

नृशंसोऽयं पिशाचोऽयं दयास्मिन्का भवेदिति ॥ एवं चिन्तय मां देव भृत्यो मयामिति प्रभो ॥ ६७ ॥ परपीडा न मत्तोऽस्तु नमस्ते भगवन्प्रभो ॥ इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु मा भूवन् साम्प्रतं हि मे ॥ ६८ ॥ अन्तकाले ममाप्येवं प्रसादात्तव केशव ॥ पृथिवी यातु मे प्राणं रसनां यातु मे पयः ॥ ६९ ॥ सूर्यश्च यातु मे चक्षुः स्पर्शं यातु च मारुतः ॥ श्रोत्रमाकाशमप्येतु मनः प्राणं च गच्छतु ॥ ७० ॥ जलं मां रक्षतां नित्यं पृथिवी रक्षतां हरे ॥ सूर्यो मां रक्षतां विष्णो नमस्ते सूर्यतेजसे ॥ ७१ ॥ वायुर्मां रक्षतां दुःखादाकाशं च जनार्दन ॥ न मनः सर्वगं देव रक्षतां विषयान्तरे ॥ ७२ ॥ मनो विपर्यये घोरे पुरुषान् इन्ति नित्यशः ॥ पापेषु योजयेत्पुंसः परपीडात्मकेषु च ॥ ७३ ॥ मनस्तद्रक्षतां देव भूयो भूयो जनार्दन ॥ मा भून्मनासि कालुष्यं मनो मे निर्मलं भवेत् ॥ ७४ ॥ कलुषं तस्य यच्चित्तं नरके पातयत्यमुम् ॥ बाह्यानि निर्मलान्येवमिन्द्रियाणि भवन्त्युत ॥ ७५ ॥

मन मेरे प्राणोंकी रक्षा करो ॥ ७० ॥ जल, पृथ्वी, सूर्य, वायु, आकाश दुःखोंसे मेरी रक्षा करो. सूर्यके समान तेजस्वी ! आपको नमस्कार है ॥ ७१ ॥ हे जनार्दन ! वायु और आकाश दुःखोंसे मेरी रक्षा करें. हे देव ! मेरा मन विषयोंमें नहीं लगे. ऐसी मेरी रक्षा करो ॥ ७२ ॥ मनके विपर्यय होनेसे पुरुषोंका नाश होता है, और यही मन मनुष्यको पापोंमें और परपीडामें युक्त करता है ॥ ७३ ॥ इस कारण हे देव ! बारंबार मेरे मनकी रक्षा करो. मेरे मनमें कालुष्य मत रहो और मेरा मन निर्मल हो जाय ॥ ७४ ॥ जिसका चित्त

कालिससे संयुक्त होता है वह नरकमें वास करता है, और बाह्यइन्द्रियें तो निर्मल होतीही हैं ॥ ७५ ॥ परन्तु जिसका मन कालिससे संयुक्त होता है, तहां यह इन्द्रियें कुछ कार्य नहीं कर सकतीं, जिसकी बुद्धिमें अपवित्र वस्तु है उसकी अंगशुद्धि क्या करेंगे ॥ ७६ ॥ हे केशव ! उसके बाहरसे स्नान करनेसे क्या है ? उसका बाह्यगोचर स्नान व्यर्थ है ॥ ७७ ॥ इस कारण हे जनार्दन ! सब प्रकार मेरे चित्तकी तुम रक्षा करो, हे देव ! यह इन्द्रियोंका समूह बलवान् है, इसके विषयोंकोभी निवारण करो ॥ ७८ ॥ हे जगन्नाथ ! परवादसे वाणोंकी रक्षा करो, और हे जनार्दन ! पराये

न तानि कार्यवन्तीह मनश्चेत्कलुषं भवेत् ॥ नाङ्गानि मुष्टिना मेध्यं गृहीत्वा यो व्यवस्थितः ॥ ७६ ॥ बहिः प्रक्षालनं कुर्वन् किं भवेत्तस्य केशवः ॥ व्यर्थं हि केवलं तस्य प्रग्रहो बाह्यगोचरः ॥ ७७ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन चित्तं रक्ष जनार्दन ॥ बलवानिन्द्रियग्रामो वारयेनं जनार्दन ॥ ७८ ॥ परीवादाजगन्नाथ वाचं रक्ष दुरुद्धासु ॥ परद्रव्यान्मनो रक्ष परद्वाराजनार्दन ॥ सर्वत्र मे दया भूयात्प्रसादात्तव केशव ॥ ७९ ॥ त्वय्येव भक्तिरचला भूयाद्भूतेषु मे दया ॥ बहुनात्र किमुक्तेन शृणुष्वेदं वचो मम ॥ ८० ॥ सुखे दुःखे च रागे च भोजने गमने तथा ॥ जाग्रत्स्वप्नेषु सर्वत्र त्वय्येव रमतां मनः ॥ ८१ ॥ मामकं देवदेवेश नमस्तेऽस्तु जनार्दन ॥ इति बुवन्चोरतमो जात्या हीनो न चिन्तितः ॥ ८२ ॥ पिशाचो भगवद्भक्तः समाधिं समपद्यत ॥ दृढं बद्धात्मनः काममान्त्रपाशेन मांसपः ॥ ८३ ॥ निश्चलेनैव मनसा सुखमास्ते स्म संयतः ॥ ध्यायन् हरिं जगद्योनिं विष्णुं पीताम्बरं शिवम् ॥ ८४ ॥

द्रव्यसे और पराई स्त्रीसे मेरी रक्षा करो, हे केशव ! तुम्हारे प्रसादसे सब जगह दया ॥ ७९ ॥ तुममें अचलता भक्ति रहे, और बहुत कहनेसे क्या है हे भगवन् ! तुम मेरे एक वचनको सुनो ॥ ८० ॥ सुख, दुःख, प्रीति, भोजन, गमन, जागने और सोने, इन सबमें मेरा मन तुममेंही लगा रहे ॥ ८१ ॥ और हे जनार्दन देवदेवेश ! आपको नमस्कार है ऐसा कह घोरतम जातिहीन विचार छोड़ ॥ ८२ ॥ वह पिशाच भगवत्का भक्त होकर तमाधिकी प्राप्त हुआ अर्थात् आतोंकी फांसीसे अपने शरीरको दृढ बांध ॥ ८३ ॥ निश्चलरूप मन करके सुखपूर्वक बैठा हुआ हरि जगद्योनि विष्णु पीताम्बर

शिव ॥ ८४ ॥ मुकुन्द, आदिपुरुष एककार्य अनामय नित्यशुद्ध, ज्ञानगम्य, सब प्राणियोंके कारण ॥ ८५ ॥ श्रीकृष्णका ध्यान करता हुआ और ओंकाररूप सनातन वेदको पढ़ता हुआ, नासिकाके अग्रभागको देखता हुआ निर्वाण दीपकी समान अचल हो ओंकार उच्चारण करता ॥ ८६ ॥ निरंतर एकाग्र चित्तको विष्णुमें समर्पित करके ॥ ८७ ॥ विकल्पसे रहित चित्तको हृदयके मध्यमें प्राप्त कर कपलरूप हृदयमें जगत्पति विष्णुको स्थापन कर ॥ ८८ ॥ और तीन प्रकारसे सनातन विष्णुको जपता हुआ मांसनक्षी पिशाच सुखपूर्वक महायोगी होकर स्थित हुआ ॥ ८९ ॥ इति श्रीम-

मुकुन्दमादिपुरुषमेकाकारमनामयम् ॥ नित्यं शुद्धं ज्ञानगम्यं कारणं सर्वदेहिनाम् ॥ ८५ ॥ नासिकाग्रं समालोक्य पठन् ब्रह्म सनातनम् ॥ निर्वातस्थो यथा दीपः प्रोच्चरन् प्रणवं सदा ॥ ८६ ॥ प्रणवं वाचकं मत्वा वाच्यं ब्रह्मेति निश्चितः ॥ एकाग्रं सततं कृत्वा चित्तं विष्णो समर्पितम् ॥ ८७ ॥ विकल्परहितं चित्तं हृदि मध्ये न्यवेशयत् ॥ पुण्डरीके शुभदले समावेश्य जगत्पतिम् ॥ ८८ ॥ आस्ते सुखं महायोगी पिशिताशस्तदा महान् ॥ त्रिधामानं जपन्तत्र स्मरन्विष्णुं सनातनम् ॥ ८९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां घण्टाकर्णचित्तसमाधिर्नामाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः स भगवान् विष्णुः पिशाचं दृष्ट्वास्तदा ॥ चिन्तयन्तं स्वमात्मानं शुद्धिबुद्धिसमन्वितम् ॥ १ ॥ आत्मन्यवस्थितं साक्षात्पठन्तं प्रणवं सकृत् ॥ प्रार्थयन्तं स्वमात्मानमेकान्ते नियतं हरिः ॥ २ ॥ अचिन्तयज्जगन्नाथः कारणं पुण्यसंचये ॥ ध्यात्वा तु सुचिरं विष्णुः कारणं पुण्यकर्मणः ॥ ३ ॥

हाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां घण्टाकर्णचित्तसमाधिर्नामाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८० ॥ वैशम्पायन बोले, इस प्रकार भगवान् विष्णुने पिशाचको देखा कि अपने आत्माको चिन्तन करता, शुद्ध और बुद्धिसे युक्त ॥ १ ॥ आत्मामें स्थित अकेले ओंकारको पढ़ता और अपने आत्मासे प्रार्थना करनेवाला था, उसे देख हरि ॥ २ ॥ जगन्नाथ उसके पुण्यसंचयका कारण विचारने लगे और चिरकालमें ध्यान कर ॥ ३ ॥ कि

कुबेरके उपदेशस यह पृथ्वीमें यह शब्द पढ़ता है सुत्रे पृथ्वीमें वासुदेव, कृष्ण, माधव नामसे पुकारते हैं ॥ ४ ॥ जनार्दन, हरि, विष्णु, भूतभावन, भाव, नरकारि, जगन्नाथ, नारायण, परायण, ॥ ५ ॥ इन नामोंसे दिनरात सोता हुआ, जागता हुआ स्थित हुआ मोहन करता हुआ, गमन करता हुआ और कहता हुआ ॥ ६ ॥ मेरा जप करता है और मांसकी बोटीको खाता हुआ, लोहको पीता हुआ और बहुतसे मृगोंको मारता हुआ ॥ ७ ॥ मारनेमें, भोजन करनेमें, जागने सोनेमें सब कार्योंमें मैंही करता हूं, ऐसे मानता है ॥ ८ ॥ सो इस घोर कर्मका पाक यही है, इस प्रकार निश्चय

धनदस्योपदेशेन पठन्सुबहुशः क्षितौ ॥ वासुदेवेति कृष्णेति माधवेति च मां सदा ॥ ४ ॥ जनार्दन हरे विष्णो भूतभावन भावन ॥ नमस्कारि जगन्नाथ नारायण परायण ॥ ५ ॥ इति मां नामभिर्नित्यं पठत्येव दिवानिशम् ॥ स्वपन् जाग्रस्तथा तिष्ठन् भुञ्जन् मच्छंस्तथा वदन् ॥ ६ ॥ भक्षयन्मांसपित्तं पिबञ्छोणितमेव वा ॥ बाधमानं च सुचिरं इत्वा चापि मृगान्बहून् ॥ ७ ॥ इनने भोजने चैव जाग्रत्स्वप्ने तथैव च ॥ सर्वेष्वपि च कार्येषु कर्ताहमिति मन्यते ॥ ८ ॥ एतस्य कर्मणः पाक एष घोरस्य कर्मणः ॥ निश्चित्येवं जगन्नाथः प्रीतस्तस्य बभूव ह ॥ ९ ॥ अदर्शयत्स्वमात्मानमनन्तरस्य जगत्पतिः ॥ शुद्धेऽन्तःकरणे तस्य पिशाचस्यापि भूमिप ॥ १० ॥ स च घोरः पिशाचोऽपि ददर्शात्मानि केशवम् ॥ पीतकौशेयवसनं पद्माक्षं श्यामलं हरिम् ॥ ११ ॥ शङ्किनं चक्रिणं विष्णुं स्रग्विणं गदिनं विभुम् ॥ किरीटिनं कौस्तुभिनं श्रीवत्साच्छादितोरसम् ॥ १२ ॥ नोलमेघनिभं कान्तं गरुडस्थं प्रभञ्जनम् ॥ चतुर्भुजं शुभगिरं निश्चलं सर्वगं शिवम् ॥ १३ ॥

कर जगन्नाथ अर्थात् श्रीकृष्ण प्रसन्न होकर ॥ ९ ॥ अपने स्वरूपको दिखाते हुए, हे राजन् ! उस पिशाच का अंतःकरण शुद्ध हो गया था, इससे दर्शन पाया ॥ १० ॥ जब वह घोररूप पिशाच अपनेही आत्मामें पीले रेशमी वस्त्रोंको धारण करनेवाले कमलके समान नेत्रोंवाले और श्याम रंगवाले ॥ ११ ॥ शंख, चक्र, गदा, माला, मुकुट, कौस्तुभयणिको धारण करनेवाले और श्रीवत्सविन्दसे आच्छादित छातीवाले ॥ १२ ॥ नोलमेघके समान कानिमान्, प्रकाशित और गरुडपर स्थित और चार भुजावाले सुंदर वाणीवाले और निश्चल सर्वग और कल्याणरूप ॥ १३ ॥ आदि-

अंतरहित, नित्य और मायावी, मायासे रहित सत्यरूप, सब कालमें शुद्ध और बुद्धिमें प्राप्त होनेके योग्य और सब कालमें मलसे रहित ॥ १४ ॥
श्रीकृष्णको अनेक प्रकारसे मनमें देखकर फिर नेत्रोंको बंदकर मैं कृतार्थ हुआ। ऐसा मानता हुआ ॥ १५ ॥ और कहने लगा कि अब साक्षात्
विष्णुको मैंने देखा और विष्णु मुझसे प्रसन्न हैं, इस कारण मुझे विष्णुके दर्शन हुए हैं ॥ १६ ॥ और मेरे जन्मका कृत्य सिद्ध हुआ। इसके उपरान्त
मेरे कोईभी कृत्य नहीं है मेरे हृदयकी ग्रन्थी छूट गई है, यशमें मेरी इन्द्रियें वशी हो गई हैं ॥ १७ ॥ और विशेष करके मैंने मनभी जीत लिया है,

अनादिनिधनं नित्यं मायाविनममायिनम् ॥ सत्ययुक्तं सदा शुद्धं बुद्धिगम्यं सदा मलम् ॥ १४ ॥ मनस्येवं जगन्नाथं दृष्ट्वा विष्णु-
मनेकधा ॥ अनुमील्यैव नयने कृतार्थोऽस्मीत्यमन्यत ॥ १५ ॥ अथ दृष्टो हरिविष्णुः साक्षात्सर्वत्रगः शुभः ॥ प्रसन्नो हि हरिर्मह्यं
तेनाहं दृष्टवान्हरिम् ॥ १६ ॥ सिद्धं मे जन्मनः कृत्यं किमतः कृत्यमस्ति मे ॥ ग्रन्थयो मम निर्भिन्ना वश्यान्येवेन्द्रियाणि मे ॥ १७ ॥
प्रायेण जितमित्येव मनो मन्ये स्मृते हरो ॥ ईषणा च निरस्ता मे प्रसन्नोऽहं तथाभवम् ॥ १८ ॥ एतेभ्योऽपि पिशाचेभ्यो निर्मुक्तः
साम्प्रतं तथा ॥ योऽसौ ममानुजः साक्षात्स च भक्तस्तथा हरो ॥ १९ ॥ कालेन चैव निर्मुक्तो विष्णोः सायुज्यमाप्नुयात् ॥ इत्येवं चिन्त-
यित्वा स आन्त्रपाशं विभिद्य च ॥ २० ॥ क्रमेण प्राणानुन्मुच्य विलेक्य च दिशस्तथा ॥ शरीरं सुगमं कृत्वा प्राविशत्स सुखेन
ह ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां पिशाचस्य विष्णुसाक्षात्कारो नाम एकाशीतितमोऽ-
ध्यायः ॥ ८१ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ पिशिताशो जगन्नाथं ददर्शाथ जगद्गुरुम् ॥ समाधौ च यथादृष्टं भूमौ चापि तथा हरिम् ॥ १ ॥

और मेरी इच्छा दूर हो गई है, और मैं प्रसन्न हो गया हूं ॥ १८ ॥ और इन पिशाचोंसेभी मैं अलग हो गया हूं। और जो मेरा छोटा भाता है, वहभी
मेरी समान विष्णु भगवान्का भक्त है ॥ १९ ॥ और समय पाकर निर्मुक्त हुआ मैं विष्णुके समीप प्राप्त हूंगा, ऐसा विचार कर आन्त्रपाशको भेदन
कर ॥ २० ॥ क्रमसे अपने प्राणोंको छोड़ और सब दिशाओंको देख और शरीरको समरुा कर सुखसे संयुक्त हुआ ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते
खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि मायायां कैलासयात्रायां घंटाकर्णस्य विष्णुसाक्षात्कारो नाम एकाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८१ ॥ वैशम्पायन बोले, कि जैसे

उग्र पिशाचने समाधिमें श्रीकृष्णको देखा. तैसेही पृथ्वीमें भी स्थित हुए श्रीकृष्णको देखा ॥ १ ॥ “ यह विष्णु है यह विष्णु है ” इस प्रकार वह पिशाच कहने लगा, जैसा समाधिमें देखा था वैसा प्रत्यक्ष देखता हूं इस प्रकार कह नाचना और हँसना हुआ फिर बोला ॥ २ ॥ किं चक्र शर शार्ङ्ग धनुष ध्वजा गदा रथ तूणयुक्त शस्त्रोंको हाथमें धारण किये, सहस्रशिरोवाले और सब देवताओंके स्वामी जगत्के निवास विष्णु भगवान् यही हैं ॥ ३ ॥ सर्वोंको जीतनेवाले, जगत्के स्वामी, पुरातन पुरुषोंमें उत्तम, विश्वके ईश और विश्वके कर्ता सनातन विष्णु यही हैं ॥ ४ ॥ इन्हीं विष्णुके दोनों स्तनोंके

अयं विष्णुरयं विष्णुरित्यूचे पिशिताशनः ॥ समाधौ च यथा दृष्टः सोऽयमत्रापि दृश्यते ॥ त्र्युक्त्वा च पुनर्ब्रूते नृत्यान्निव हसन्निव ॥ २ ॥ अयं स चक्री शरशार्ङ्गधन्वा गद्दी रथी सध्वजतूणपाणिः ॥ सहस्रमूर्द्धा सकलामरेश जगत्प्रसूतिर्जगतां निवासः ॥ ३ ॥ विष्णुर्जिष्णुर्जगन्नाथः पुराणः पुरुषोत्तमः ॥ विश्वात्मा विश्वकर्ता यः सोऽयमेव सनातनः ॥ ४ ॥ अस्यैव देवस्य हरेः स्तनान्तरे विराजते कौस्तुभरत्नदीपः ॥ यस्य प्रसादाज्जगदेतदादौ विराजते चन्द्रमसेव रात्रिः ॥ ५ ॥ योऽसौ पृथ्वीं दधाराशु दंष्ट्रया जलसंचयात् ॥ योऽयमेव हरिः साक्षाद्वाराहं वपुरास्थितः ॥ ६ ॥ बद्धा तथा दानवमुग्रपौरुषं ददौ च शक्राय ततोऽनु राज्यम् ॥ बलिं बलादेव हरिः स वामनः स्तुतश्च भक्त्या मुनिभिः पुरातनैः ॥ ७ ॥ दंष्ट्राकरालः सुमहान् इत्वा यो दानवात्रणे ॥ निःशोकमखिलं लोकं चकारासौ जनार्दनः ॥ ८ ॥ आदौ दधारेकभुजेन मन्दरं निर्मित्य सर्वानमुरात्महार्णवे ॥ ददौ च शक्राय सुधामयं महान् स एष साक्षादिह मामवस्थितः ॥ ९ ॥

बीचमें कौस्तुभमणि विराजमान है, जिससे चंद्रमाकी समान रात्रि प्रकाशित हो रही है ॥ ५ ॥ जिन्होंने जलके समूहसे पृथ्वीको अपनी डांडपर रखकर बाहर निकला था. वह साक्षात् वाराहरूपको धारण करनेवाले विष्णु यही हैं ॥ ६ ॥ इन्हीं भगवान्ने उग्र पौरुषवाले बलि दैत्यको बांधकर इन्द्रके अर्थ उनका राज्य दिया, उस समय पुरातन मुनियोंसे स्तुतिको प्राप्त हुए बली विष्णु यही हैं ॥ ७ ॥ जो बड़ी डांडोंवाले कराल बड़े रूपको धारण करनेवाले युद्धमें दैत्योंको मार शोकसे रहित इस लोकको करते हुए वह विष्णु यही हैं ॥ ८ ॥ जो आदिमें एकभुजासेही मंदराचल पर्वतको

धारण कर समुद्रके सब दैत्योंको जीत इन्द्रको अमृत देते हुए वह विष्णु यही स्थित हैं ॥ ९ ॥ मधुकैटभ दैत्यको वधकर समुद्रमें शेषनागरूप शय्यापर शयन करते हैं ॥ १० ॥ जिसको विद्वान् आद्य जगत्पति सबका धाता अजन्मा अर्ग्योंको जीतनेवाला सूक्ष्मसे सूक्ष्म और स्थूलसे स्थूल कहते हैं, वह विष्णु यही हैं ॥ ११ ॥ और संहार कालमें यह जगत् जिसमें स्थित होता है, और आदिमें जिससे उत्पन्न होता है वह विष्णु यही हैं ॥ १२ ॥ और जिसकी इच्छासे यह जगत् प्रवृत्त और निवृत्त हो जाता है, सो पुरुषोत्तम शिव यादवेश्वर विष्णु यही मेरे समीप स्थित हैं ॥ १३ ॥ जो भृगुवं-

यः ज्ञोते जलधौ नागे देव्या लक्ष्म्या सुखावहे ॥ इत्वा तो दानवो घोरा मधुकैटभसांजितौ ॥ १० ॥ यमादुराद्यं विबुधा जगत्पतिं सर्वस्य धातारमजं जनित्रम् ॥ अणोरणीयांसमतिप्रमाणं स्थूलात्स्थविष्ठं हरिमेव विष्णुम् ॥ ११ ॥ यत्र स्थितमिदं सर्वं प्राप्ते लोकस्य नाशने ॥ आदौ यस्मात्समुत्पन्नं सोऽयं विष्णुरिति स्थितः ॥ १२ ॥ यस्येच्छया सर्वमिदं प्रवृत्तं प्रवर्तते चापि जनार्दनस्य ॥ अयं स विष्णुः पुरुषोत्तमः शिवः प्रवर्तते मामिह यादवेश्वरः ॥ १३ ॥ भृगोर्वंशे समुत्पन्नो जामदग्न्य इति श्रुतः ॥ शिष्यत्वं समवाप्येव मृगव्याधस्य यः स्थितः ॥ १४ ॥ जवान वीर्याद्वलिनं महारणे कुठारस्त्रेण गिरीशशिष्यः ॥ सहस्रबाहुं कृतवीर्यसंभवं ह्येगं जैश्वेव रथैश्च निर्मतम् ॥ १५ ॥ कुरुक्षेत्रं समाप्ताद्य यश्चकार पितृक्रियाम् ॥ निःक्षत्रियमिमं लोकं कृतवानेकविंशतिः ॥ १६ ॥ रघोरथ कुले जातो रामो नाम जनार्दनः ॥ सीतया च श्रिया युक्तो लक्ष्मणानुचरः कृती ॥ १७ ॥ कृत्वा च सेतुं जलधौ जनार्दनो इत्वा च रक्षःपतिमाश्रुगेः शूरेः ॥ दत्त्वा च राज्यं स विभीषणाय दक्षश्वमेधैरयजन्न योऽसौ ॥ १८ ॥

शमें जमदग्नि के पुत्र परशुराम नामसे उत्पन्न हो जो मृगव्याध के शिष्यत्वको प्राप्त हो अर्थात् ॥ १४ ॥ महादेवजी के शिष्य होकर युद्धमें परसा ले महाबली कृतवीर्य के पुत्र, घोड़े, हाथी, रथमें बैठनेवाले सहस्रबाहुको मारवे हुए ॥ १५ ॥ पीछे इक्रीसवार इस लोकको क्षत्रियोंसे रहित कर कुरुक्षेत्रमें प्राप्त हो पितृक्रिया की वह विष्णु यही है ॥ १६ ॥ जो रघुवंशमें उत्पन्न हो सीता और शोभासे संयुक्त अनुगामी लक्ष्मण भातासे संयुक्त विद्वान् ॥ १७ ॥ रामचंद्र समुद्रमें सेतुको बनाय और तीक्ष्ण बाणोंसे रावणको मार और विभीषणको राज्य दे पीछे दश अश्वमेधयज्ञ करते हुए, वह विष्णु भी यही हैं ॥ १८ ॥

और वसुदेवके कुलमें जन्म लेनेवाले वासुदेव नामसे विख्यात जो बलदेवजीके संग गोकुलमें क्रीडा करते थे ॥१९॥ सीधे शयन करते बालकरूप धारण करनेवाले श्रीकृष्ण पूतनाके दिये हुए स्तनको पी पूतनाको मारकर फिर सुखपूर्वक वास करते हुए ॥ २० ॥ दूधके पीने और नैनीघृतके खानेसे क्रोधको प्राप्त हुई माताने रस्सीसे इन विष्णुको बांध दिया ॥२१॥ तब दृढरूप रस्सीसे बंधे हुए यमलार्जुन वृक्षोंको गिराया और गोकुलमें वास कर गोपियोंके संग सुख और स्तनको आच्छादित कर क्रीडा करी ॥ २२ ॥ विष्णु भगवान् वृन्दावनमें गोकुलवासियोंके साथ निवास करते केशीनामक अश्व (घोड़े) को वसुदेवकुले जातो वासुदेवेति शब्दितः ॥ गोकुले क्रीडते योऽसौ संकर्षणसहायवान् ॥ १९ ॥ उत्तानशायी शिशुरूपधारी पितृ स्तनं पूतनिकाप्रदत्तम् ॥ व्यसुं चकाराशु जनार्दनस्तदा दनोः सुतां तामवसत्सुखं हरिः ॥ २० ॥ पयःपानं तथा कुर्वन् भक्षयन्क्षिपिण्डकम् ॥ दाम्ना बद्धोदरो विष्णुर्मात्रा रुषितया दृढम् ॥ २१ ॥ ततश्च दाम्ना सुदृढेन बद्धो जघान योऽसौ यमलार्जुनौ च ॥ क्रीडन्हरिर्गोकुलवासवासी गोपीभिरास्वाद्य सुखं स्तनं च ॥ २२ ॥ वृन्दावने वसन्विष्णुर्गोपैर्गोकुलवासिभिः ॥ तत्र हत्वा हयं राजन् विरराजांशुमानिव ॥ २३ ॥ यः क्रीडते नागफणौ जनार्दनो निषेव्यमाणः सह गोपदारकैः ॥ महाहृदे नागपतिं जगत्पतिर्ममर्द वीर्यातिशयं प्रदर्शयन् ॥ २४ ॥ यो धेनुकं तालवने तत्फलैः सममच्छिनत् ॥ हत्वा दानवमुग्रं तं गोपान्विस्मापयत्यसौ ॥ २५ ॥ दधार यो गंधरमुग्रपौरुषान्महामतिर्मेघसमागमे सति ॥ विडम्बयच्छक्रबलं प्रमोदयन् गोपांश्च गोपीश्च स गोकुलं हरिः ॥ २६ ॥ गोपीनां स्तनमध्ये तु क्रीडते काममीश्वरः ॥ योऽसौ पिबंस्तदधरं मायामानुषदेहवान् ॥ २७ ॥

मार सूर्यकी समान प्रकाशित हुए ॥ २३ ॥ मोर्षोंके बालकोंके संग यमुनामें कालियसर्पके फनोंपर क्रीडा करी और वीर्यके अतिशयको दिखानेके लिये कालियसर्पको जगन्नाथने नाथा ॥२४॥ और तालवनमें उग्ररूप धेनुक दानवको तिसी वनके फलोंसे मार गोपोंको आश्चर्य दिखाया ॥२५॥ जब इन्द्रने क्रोधकर वज्रपर जल वरसाया, तब श्रीकृष्णने उनकी रक्षा की, और गोप गोपी गोकुलको आनंदित किया और उग्ररूप गोवर्द्धन पर्वतको धारण किया ॥ २६ ॥ और मायासे मनुष्यदेहको धारण करनेवाले गोपियोंके अधराभृतको पीनेवाले तथा गोपियोंके स्तनोंमें इच्छापूर्वक क्रीडा करने-

वाले ॥ २७ ॥ तथा गोपियोंके अधरामृतका पान कर उनके संग एकान्तस्थानमें शयन करनेवाले उनके स्तनोंके आलिंगनसे प्रसन्न हुए ॥ २८ ॥
अक्रूरके संग बुलाये हुए मार्गमें चलनेके समय अक्रूरने यमुनाके जलमें जो ईश्वर देखे वही स्थलमें देखे ॥ २९ ॥ मथुरापुरीमें चलने हुए बलवान् जनार्दन मार्गमें अपने बलसे उग्ररूप रजक (घोड़ी) को मारकर वह ईश्वर मनोवांछित वस्त्रोंको ग्रहण कर बलदेवजीके संग मथुरापुरीमें विचरे ॥ ३० ॥
और मालाकारकी बहुतसी मालाओंको ग्रहण कर तिसको वरदान दे कुब्जासे सुंदर अनुलेपन ग्रहण कर उसको सुंदर रूपवाली बना दिया ॥ ३१ ॥

गोपीभिरास्वाद्यमुखं विविक्ते शेते स्म रात्रौ सुखमेव केशवः ॥ स्तनान्तरेष्वेव तदा च तासां कामी च कान्ताधरपल्लवं पिबन् ॥ २८ ॥
अक्रूरेण समाहूतस्तेन गच्छन् हि यामुने ॥ जले यो ह्यर्चितस्तेन नागलोकैः स एव हि ॥ २९ ॥ ततश्च गच्छन्बलवान् जनार्दनो हत्वा
तमुग्रं रजकं बलात्पथि ॥ हत्वा च वस्त्राणि यथेष्टमीश्वरो ययौ सरामो मथुरां पुरीं हरिः ॥ ३० ॥ लब्ध्वा च दामानि बहूनि कामदो
दत्त्वा वरं माल्यकृते महान्तम् ॥ लब्ध्वानुलेपं सुरभिं च यादवः कुब्जां चकाराशु महार्हिरूपाम् ॥ ३१ ॥ योऽसौ चापं समादाय मध्ये
च्छित्त्वा महद्भनुः ॥ सिंहनादं महाश्वके कल्पान्ते जलदो यथा ॥ ३२ ॥ हत्वा गजं घोस्मुद्वयरूपं विषाणमादाय ततोऽनु केशवः ॥
ननर्त रङ्गे बहुरूपमीश्वरः कंसस्य दत्त्वा भयमुग्रवीर्यः ॥ ३३ ॥ योऽसौ हत्वा महामल्लं चाणूरं निहतद्विषम् ॥ यादवैभ्यो ददौ प्रीतिं
कंसस्येव तु पश्यतः ॥ ३४ ॥ जघान कंसं रिपुपक्षघातिनं पितृद्विषं यादवनामधेयम् ॥ संस्थाप्य राज्ये हरिरुग्रसेनं सान्दीपिनं
काश्यमुपागतो यः ॥ ३५ ॥ विद्यामवाप्य सकलां दत्त्वा पुत्रं महामुनेः ॥ साग्रजोऽथ जगामाशु मथुरां यादवीं पुरीम् ॥ ३६ ॥

इसके उपरान्त रंगसमाजमें जाकर धनुषको ग्रहण कर बीचसे तोड़ सिंहके शब्दकी समान शब्द कर कि जिस प्रकार कल्पके अंतमें मेवोंका शब्द होता है ॥ ३२ ॥ फिर उदग्र रूपवाले कुवलयापीड हाथीको मार तिसके दांतोंको ग्रहण कर रंगसमाजमें विचरते हुए केशवने कंसको अति भय दिखाया ॥ ३३ ॥ फिर कंसके देखते हुए महामल्ल चाणूरको मारकर यादवोंको प्रसन्न किया ॥ ३४ ॥ तिसके पीछे शत्रुके पक्षको मारनेवाले पिताके वैरी कंसको मार उग्रसेन राजाको राज्यपर स्थित कर सान्दीपिनी नामक गुरुके समीप प्राप्त हुए ॥ ३५ ॥ तहां संपूर्ण विद्याको प्राप्त हो दक्षिणामें गुरुको पुत्रका दान दे

बलदेवजीके संग श्रीकृष्ण मथुरामें प्राप्त हुए ॥ ३६ ॥ और निशुंभ नरकासुर दैत्यको मारकर और दैत्योंको पीठा देकर संग्राम कर ब्राह्मण सुनियोंके समूह देवतोंकी जगत्पतिने रक्षा की ॥ ३७ ॥ ऐसे विष्णु भगवान्को अब मैंने देखा है सो कृतकृत्य हुआ और मैं मोक्षको प्राप्त हूंगा ॥ ३८ ॥ कारण कि जिसने साक्षात् विष्णुको देख लिया, उसके हाथमें मुक्ति स्थित है, वह यह विष्णु मेरे सन्मुख स्थित है ॥ ३९ ॥ निश्चयही मैंने पूर्वजन्ममें बहुत धर्मका संचित किया जिससे यह विष्णु भगवान्का दर्शन मुझे प्राप्त हुआ है ॥ ४० ॥ सर्वथा मैं पुण्यवान् हूं मेरे संसारके बंधन नष्ट हो गये, और क्या

हत्वा निशुम्भं नरकं महामतिः कृत्वा सुघोरं कदनं जनार्दनः ॥ ररक्ष विप्रान्मुनिवारसंघान्देवांश्च सर्वान् जगतो जगत्पतिः ॥ ३७ ॥ स एष भगवान्विष्णुरद्य दृष्टो जनार्दनः ॥ कृतकृत्योऽस्मि संजातः सायुज्यं प्राप्तवानहम् ॥ ३८ ॥ येन दृष्टो हरिः साक्षात्तस्य मुक्तिः करे स्थिता ॥ सोऽयमेष हरिः साक्षात्प्रत्यक्षमिह वर्तते ॥ ३९ ॥ नूनं जन्मान्तरे पूर्वं धर्मः संचित एव मे ॥ यस्य पाकः समुत्पन्नो येनासौ दृश्यते मया ॥ ४० ॥ सर्वथा पुण्यवानस्मि नष्टसंसारबन्धनः ॥ किमस्मै दीयते वस्तु किं नु वक्ष्यामि साम्प्रतम् ॥ करिष्ये किमहं विष्णो वदस्वाद्य यथेप्सितम् ॥ ४१ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ इत्युक्त्वा विस्तरं नादं ननर्द बहुशस्तदा ॥ जहास विकृतं भूयो ननर्त पिशिताशनः ॥ ४२ ॥ नमो नमो हरे कृष्ण यादवेश्वर केशव ॥ प्रत्यक्षं च हरेस्तत्र ननर्त विविधं नृप ॥ ४३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां घण्टाकर्णस्तुतिर्नाम द्वाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८२ ॥

वस्तु मैं इनको दूं ? क्या अब कहूं ? ॥ ४१ ॥ हे विष्णो ! मैं अब क्या कहूं ? जो अब वांछित हो सो कहो ॥ ४२ ॥ वैशम्पायनजी बोले कि, इस प्रकार ऊंचे स्वरसे कहकर वह पिशाच फिर बड़े वेगसे गर्जकर नाचने लगा ॥ ४३ ॥ हे हरे ! हे केशव ! हे कृष्ण ! हे यादवेश्वर ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार है, ऐसे कहता हुआ श्रीकृष्णके सन्मुख नानाप्रकारसे नाचने लगा ॥ ४४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां घण्टाकर्णस्तुतिर्नाम द्वाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८२ ॥

वैशम्पायन बोले कि इस प्रकार वह पिशाच बारंवार हँसकर फिर मरे हुए ब्राह्मणके शरीरको लाकर ॥ १ ॥ उसके दो भागकर उस महाघोर बालमुक्तको ले पानीसे शुद्ध कर ॥ २ ॥ सुंदर पात्रमें धर श्रीकृष्णको नमस्कार कर अंजलि बांध नम्र हो देवेशसे योग्य इस प्रकार कहने लगा ॥ ३ ॥ हे जगन्नाथ ! हे प्रभो ! तुम्हारे योग्य यह भक्ष्य पदार्थ है. इसको ग्रहण कीजिये और हे हरे ! तुम्हारे सरीसोंको यह पदार्थ सब प्रकारसे ग्रहण करना चाहिये आप सर्वात्मा हो ॥ ४ ॥ हे विष्णो ! हम भक्तिसे नम्र हैं. इसमें विचार नहीं करना चाहिये. जो भक्तिनम्र

वैशम्पायन उवाच ॥ विहस्य विकृतं भूयः प्रनृत्य च यथाबलम् ॥ ब्राह्मणस्य हतस्याथ शवमादाय सत्वरः ॥ १ ॥ द्विधाकृत्य महाघोरं पिशितं केशशाद्वलम् ॥ ततः खण्डं समादाय अद्भिरभ्युक्ष्य यत्नतः ॥ २ ॥ विधाय पात्रे सुशुभे नमस्कृत्य जनार्दनम् ॥ इदं प्रोवाच देवेशं प्राञ्जलिः प्रणतः स्थितः ॥ ३ ॥ गृहाण मे जगन्नाथ भक्ष्यं योग्यं तव प्रभो ॥ भवादृशैर्जगन्नाथ ग्राह्यं सर्वात्मना हरे ॥ ४ ॥ भक्तिनम्रा वयं विष्णो नात्र कार्या विचारणा ॥ दत्तं यद्भक्तिनम्रेण ग्राह्यं तत्स्वामिना हरे ॥ ५ ॥ नवं सुसंस्कृतं भक्ष्यं ब्रह्मण्यं शवमुत्तमम् ॥ अस्माकं पिशिताशनानां शास्त्रे नियतमेव हि ॥ ६ ॥ तस्माद्गृहाण भगवन् यदि दोषो न विद्यते ॥ इत्युक्त्वा विकृतं भूयो विहस्य स तु कामतः ॥ ७ ॥ दातुमैच्छत्तदा खण्डमस्पृश्यं तु शवस्य ह ॥ ततः प्रीतोऽभवत्तस्मै मनसा पूजयञ्च तम् ॥ ८ ॥ अहोऽस्य स्नेहकारुण्यं मायि सर्वत्र वर्तते ॥ इति संचिन्त्य मनसा प्रोवाच यदुपुद्भवः ॥ ९ ॥

पुरुष है, वह स्वामीको ग्रहण करना उचित है ॥ ५ ॥ नवीन अच्छी प्रकार संस्कारित किया ब्राह्मणका शरीररूप सुरदा भक्ष्य हमारे शास्त्रमें उत्तम कहा है ॥ ६ ॥ इस कारण हे भगवन् ! जो दोष नहीं हो तो आप ग्रहण कीजिये, इस प्रकार बारंवार विकृत कहकर और हँसकर ॥ ७ ॥ नहीं स्पर्श करनेके योग्य उस सुरदेके टुकड़ेको श्रीकृष्णके लिये देनेकी इच्छा करने लगा तब तिस पिशाचके अर्थ प्रसन्न हुए श्रीकृष्ण तिसको मनसे पूजते हुए ॥ ८ ॥ कहने लगे कि आश्चर्य है ! इसका स्नेह मेरे विषे सब स्थानोंमें है इस प्रकार मनमें चिंतन करके श्रीकृष्ण कहने लगे ॥ ९ ॥

हे पिशाच ! इसको मुझे मत दो, मुझ सरीखे मनुष्य ब्राह्मणकी शवकां स्पर्श नहीं करते ॥ १० ॥ कारण कि धर्मकी आकांक्षावाले सब मनुष्योंकी सब कालमें ब्राह्मण पूजने योग्य है, और घोरकर्मवाले पिशाच ब्राह्मणके मारनेमें यत्न करते हैं ॥ ११ ॥ किसी कालमेंभी ब्राह्मण मारनेके योग्य नहीं है, क्यों कि ब्राह्मणके मारनेसे निश्चय नरक होता है इस कारण हमको यह सुरदा स्पर्श करना योग्य नहीं है, इसमें संशय नहीं करना ॥ १२ ॥ परन्तु तेरा कल्याण हो. मैं तेरी प्रीतिसे प्रसन्न हुआ, और जिस भक्तिसे तेरा मन निर्मल हुआ. और जिसका मन शुद्धिको प्राप्त हो, तिसपर मैं प्रसन्न हो जाता हूं ॥ १३ ॥ और इस कीर्तनसे निरंतर तेरा अंतःकरण शुद्ध प्रतीत होता है, सो मैं तुझसे अति प्रसन्न हूं,

अलभतेन सर्वत्र पिशाच पिशिताशन ॥ अस्पृश्यं मादृशैरेतद्ब्रह्मण्यं शवमुत्तमम् ॥ १० ॥ ब्राह्मणः सर्वथा पूज्यो जन्तुभिर्धर्मका-
ङ्क्षिभिः ॥ पिशाचा घोरकर्माणो यतन्ते ब्रह्महिंसने ॥ ११ ॥ न हन्तव्याः सदा विप्रास्तद्धिंसा नरकावहा ॥ तस्मादस्पृश्यमस्माभिर्नात्र
कार्या विचारणा ॥ १२ ॥ भक्त्या प्रीतोऽस्मि भद्रं ते मनोनिर्मलता मया ॥ मनःशुद्धिं यदा यत्नं ततः प्रीतोऽस्मि मांसप ॥ १३ ॥
अस्मात्संकीर्तनाच्छब्दच्छुद्धं हि करणं तव ॥ अतीव मनसा प्रीत इत्युक्त्वा भगवान् हरिः ॥ १४ ॥ पस्पर्शाङ्गं तदा विष्णुः पिशाच-
स्याथ सर्वतः ॥ करेण मृदुना देवः पापान्निर्मोचयद्धरिः ॥ १५ ॥ ततस्तस्याभवद्रूपं कामरूपसमप्रभम् ॥ दीर्घकुञ्चितकेशाढ्यो
दीर्घबाहुः सुलोचनः ॥ १६ ॥ समाङ्गुलिः समनखः समवक्रः समुन्नतः ॥ पद्माक्षः पद्मवर्णाभः पद्मकेसरभूषणः ॥ १७ ॥ केयूरी
चाङ्गदी चैव कौशेयवसनस्तदा ॥ ज्ञानवान्सत्त्वसंपन्नः साक्षादिन्द्र इवापरः ॥ १८ ॥

ऐसे कहकर भगवान् हरि ॥ १४ ॥ श्रीकृष्ण उस पिशाचके सब अंगोंको चारों ओरसे कोमल हाथसे स्पर्श करते हुए और पापोंसे उस पिशाचको छुडाते हुए ॥ १५ ॥ तब उसका रूप कामदेवके समान कांतिमान् लंबे केशोंवाला लम्बी भुजाओंवाला और सुंदर नेत्रोंवाला ॥ १६ ॥ समान अंगुलियोंवाला और समान नखोंवाला समान मुख सम्यक् प्रकारसे ऊंची नासिकावाला और कमलके समान नेत्रवाला और कमलके वर्णकी समान कांति और कमलके केशरकी समान भूषित ॥ १७ ॥

और केयूर बाजूबंदको धारण करनेवाला, रेशमी कपड़ोंको पहने हुए, ज्ञानमाला और सत्त्वगुणोंसे संयुक्त, साक्षात् इन्द्रके समान मानो दूसरा इन्द्र ॥ १८ ॥ गंधर्वके समान गानेवाला और सिद्धके समान सिद्ध वह पिशाच होता हुआ अर्थात् श्रीकृष्णके कोमल हाथके छूनेसे ॥ १९ ॥ जैसा रूप उस पिशाचको मिला, तैसे रूपको उग्रतप करनेवाले मुनिजनभी प्राप्त नहीं हो सकते ॥ २० ॥ जो बड़ा घोर परमदारुण तप करके रूप प्राप्त होता है, यह उस पिशाचने पाया ॥ २१ ॥ हे राजन् ! ऐसा कौन जन है जो श्रीकृष्णके आश्रित होकर दुःखी रहे, वह सर्वत्र कल्याणको प्राप्त होता है, जो नित्य जनार्दनको ॥ २२ ॥ नित्यप्रति ध्यान करता पढ़ता जय करता है, तो ऐसी क्या वस्तु है, जिसकी उसे प्राप्ति नहीं हो सकती है,

गन्धर्व इव गायंस्तु सिद्धः सिद्ध इव स्वयम् ॥ साक्षात्स्पर्ष्टुं तदा विष्णोः करेण मृदुपूर्वकम् ॥ १९ ॥ न नूनं तादृशं रूपमासीत् कालान्तरेष्वपि ॥ अद्यापि नैव मुनयो लभन्ते तादृशं वपुः ॥ २० ॥ कृत्वा सुबहुं शो घोरं तपः परमदारुणम् ॥ यच्च लब्धं तदा तेन पिशाचेन नृपोत्तम ॥ २१ ॥ को नु नाम जगन्नाथमाश्रितः सीदते नृप ॥ स हि सर्वत्र कल्याणो यो हि नित्यं जनार्दनम् ॥ २२ ॥ ध्यायन्पठन् जपन्वापि तस्य किं नास्ति भूयते ॥ ततः प्रोवाच भगवान् स्थितं काममिवापरम् ॥ २३ ॥ अक्षयः सर्ववासस्ते यावदिन्द्रो वसिष्यति ॥ तावत्स्वर्गी भवानस्तु शासनान्मम नान्यतः ॥ २४ ॥ नष्टे शक्रे ततः स्वर्गात्सायुज्यं मम गच्छतु ॥ योऽयं भ्राता तव स्वर्गी यावदिन्द्रो भवेत्तदा ॥ २५ ॥ वरं वरय भद्रं ते यस्ते मनसि वर्तते ॥ दातास्मि सर्वं सर्वत्र नात्र कार्या विचरणा ॥ २६ ॥ घण्टाकर्ण उवाच ॥ यश्चेमं संगमं देव संस्मरन्नियतात्मवान् ॥ भक्तिस्तस्याचला देव त्वयि भूयाज्जनार्दन ॥ २७ ॥ मनःशुद्धिर्भवेत्तस्य मा भूत्कलुषता हरे ॥ कालुष्यं मनसस्तस्य मा भूदेष वरो मम ॥ २८ ॥

कामदेवके समान रूपको धारण करनेवाले पिशाचसे श्रीकृष्ण कहने लगे ॥ २३ ॥ कि जवतक इन्द्र स्वर्गमें वास करेगा तबतक तुम्ही स्वर्गमें वसेगा यह मेरी आज्ञा है, इसमें अन्यथा न होगा ॥ २४ ॥ और जब इन्द्र नष्ट हो जायगा, तब तू मेरे समीपमें प्राप्त होगा और तेरा भ्राताभी तेरे संग स्वर्गमें वास करेगा ॥ २५ ॥ तेरा कल्याण हो, जो तेरे मनमें हो सो तू मांग और मैं सब जगह सब वरोंको दूंगा, इसमें संशय नहीं ॥ २६ ॥ घंटाकर्ण बोला, हे देव ! जो निरंतर इस मेरे तुम्हारे संगमका स्मरण करे, उस मनुष्यकी तुममें अचल भक्ति हो ॥ २७ ॥ तिसके मनकी शुद्धि रहे

और तिसके मनमें क्लेश न रहे, उसके मनमें कलुषता न हो. यही वर दो ॥ २८ ॥ तब श्रीकृष्ण कहने लगे कि ऐसेही होना और तू स्वर्गमें गमन कर और इन्द्रका अतिथि हो जा. अर्थात् तुझे देखकर इन्द्र प्रसन्न होगा ॥ २९ ॥ इस प्रकार कह श्रीकृष्णने उस ब्राह्मणको जो पिशाचने पहले भेंटमें दिया था उसको जिवापा और उस ब्राह्मणसे स्तुतिको प्राप्त हो श्रीकृष्ण उस ब्राह्मणको पूजकर ॥ ३० ॥ फिर उस देशसे उठ श्रीकृष्ण जहां अभिहोत्र करनेवाले सिद्ध और मुनि वास करते थे, तहां प्राप्त हुए ॥ ३१ ॥ और वह घंटाकर्णजी श्रीकृष्णकी आज्ञासे स्वर्गमें प्राप्त हुआ. इस कारण हे राजन् ! यदि तुम मनकी

एवमस्त्विति देवेशः स्वर्गं गच्छेति केशवः ॥ इन्द्रातिथिर्भवानस्तु त्वां प्रतीक्ष्य हरिः स्थितः २९ ॥ इत्युक्त्वा भगवान् कृष्ण उत्थाप्य ब्राह्मणं तदा ॥ तेन स्तुतो जगन्नाथः पूजयित्वा च तं द्विजम् ॥ ३० ॥ ततो विसृज्य मोहिदस्तस्माद्देशादुपगमत् ॥ यत्र ते मुनयः सिद्धा अभिहोत्रसमन्विताः ॥ ३१ ॥ स च स्वर्गीं ततः स्वर्गमाज्ञया केशवस्य ह ॥ तस्मात्पठ सदा राजन् मनःशुद्धिं यदिच्छसि ॥ मनश्च शुद्धं भवति पठतस्ते जगत्पते ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि घंटाकर्णमुक्तिप्रदानं नाम त्र्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः स भगवान्विष्णुर्मुनिभ्यस्तत्त्वमादितः ॥ कथयामास यद्वृत्तं पिशाचस्य महात्मनः ॥ १ ॥ तच्छ्रुत्वा मुनयः सर्वे विस्मयं परमं गताः ॥ अहोऽस्य कर्मणः पाकस्तव संदर्शनादिति ॥ २ ॥ अर्चितो मुनिभिः सर्वैः प्रीतः प्रीतिमतां प्रियः ॥ ततः प्रभाते विमले सूर्ये चाभ्युदिते सति ॥ ३ ॥

शुद्धिकी इच्छा करते हो. तो सब कालमें इस आख्यानका पाठ करो इसके पाठ करनेसे निश्चय मन शुद्ध हो जाता है ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां घंटाकर्णमुक्ते त्र्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८३ ॥ वैशम्पायन बोले, तब श्रीकृष्णने पिशाचके संग जो वृत्तान्त हुआ, वह सब मुनियोंसे कहा ॥ १ ॥ तब सब मुनियोंने सुनकर अतिआश्चर्य माना और बोले आपके दर्शनसे उस पिशाचका जन्म सफल हुआ. यह अतिउत्तम हुआ ॥ २ ॥ पीछे सब मुनिजनोंसे अर्चित किये श्रीकृष्णजी अत्यन्त प्रसन्न हुए फिर प्रातःकाल सूर्यके उदय होनेपर ॥ ३ ॥

नखपर चढ विष्णु कैलासपर्वतको गये और मुनिजनोंसे कहने लगे कि, तुमकोभी तहां गमन करना योग्य है ॥ ४ ॥ जहां तप करनेवाले विश्वेश्वर सिद्ध वास करते हैं और जहां साक्षात् कुबेर महादेवजीकी उपासना करते हैं ॥ ५ ॥ जहां मानससरोवर नामक हंसोंका स्थान है और जहां भृंगीरिटि शिवकी उपासना करके ॥ ६ ॥ गणोंके स्वाभिभावको प्राप्त होकर महादेवजीके समीपमें विचरते हैं, और जहां सिद्ध, वराह, हाथी, गैंडा, मृग ॥ ७ ॥ यह परस्पर मित्रभावसे क्रीडा करते हैं और जहां समुद्रमें जानेवाली गंगा आदिक नदियें उत्पन्न हुई हैं ॥ ८ ॥ जहां महादेवजीने

आरुह्य गरुडं विष्णुर्ययौ कैलासमुत्तमम् ॥ भवद्विस्तत्र मन्तव्यमित्युक्त्वा मुनिसत्तमान् ॥ ४ ॥ यत्र विश्वेश्वराः सिद्धास्तपस्यन्ति यत्तत्रताः ॥ यत्र वैश्रवणः साक्षादुपास्ते शंकरं सदा ॥ ५ ॥ यत्र तन्मानसं नाम सरो हंसालयं महत् ॥ यत्र भृङ्गीरिटिदैवमुपास्ते शंकरं शिवम् ॥ ६ ॥ गाणपत्यमवाप्याथ हरपार्श्वचरः सदा ॥ यत्र सिंहा वराहाश्च द्विपद्रीपिमृगेः सह ॥ ७ ॥ क्रीडन्ति वन्यरतयः परस्परहिते रताः ॥ यत्र नद्यः समुत्पन्ना गंगाद्याः सागरंगमाः ॥ ८ ॥ यत्र विश्वेश्वरः शम्भुरच्छिन्नद्रुहणः शिरः ॥ यत्रोत्पन्ना महावेत्रा भूतानां दण्डतां ययुः ॥ ९ ॥ उमया यत्र सहितः शंकरो नीललोहितः ॥ ऋषिभिः प्रार्थितः पूर्वं ददौ यत्र गिरिः सुताम् ॥ १० ॥ शंकराय जगद्धात्रे शिवाय जगतीपते ॥ यत्र लेभे हरिश्चक्रमुपास्य बहुभिर्दिनेः ॥ ११ ॥ पुष्करैः शतपत्रैश्च नेत्रेण च जगत्पतिम् ॥ मुहूर्ता यत्र समाश्रित्य क्रीडन्ते सिद्धकिन्नराः ॥ १२ ॥ प्रियाभिः सह मोदन्ते पिवन्ते मधु चोत्तमम् ॥ यमुद्धृत्य भुजैः सर्वैः पोलस्त्यो विरसाम ह ॥ १३ ॥ तमारुह्य महाशैलं देवकीनन्दनो हरिः ॥ मासनस्योत्तरं तीरं जगाम यदुनन्दनः ॥ १४ ॥

ब्रह्माजीके पंचम शिरको छेदन किया था और जहां उत्पन्न हुए बड़े बड़े नेत्र प्राणिपोंकी दण्डताको प्राप्त होते हैं ॥ ९ ॥ और जहां पार्वतीके संग नीललोहित महादेवजी वास करते हैं, और जहां ऋषियोंकी प्रार्थनासे हिमाचलें जगद्धाता शंकर महादेवजीके अर्ध अपनी पुत्रोंको दिया ॥ १० ॥ जहां बहुत दिनोंतक कमलोंसे महादेवजीकी उपासना कर एकनेत्र चढाय विष्णु भगवान्ने चक्र पाया था जिसका गुफाओंमें आभित हो सिद्ध किन्नर क्रीडा करते हैं ॥ ११ ॥ १२ ॥ अपनी अपनी भार्याओंके संग क्रीडा करते और आनंदित हो उच्चम मधुका पान करते हैं, और जिसको रावण सब भुजाओंसे उठा नहीं सका ॥ १३ ॥ ऐसे कैलास पर्वतमें आरोहण कर देवकीनन्दन हरि मानस सरोवरके उच्चर तीरपर गये ॥ १४ ॥

पीछे केशोंको बढाये चौर वसन धारे. मनुष्य शरीर धारण किये ॥ १५ ॥ तपमें बल लगाये श्रीकृष्ण वेदसंमत गरुडसे उतर कर पृथ्वीमें स्थित हुए ॥ १६ ॥ तब हरिने बारह वर्षतक तप करनेका मनमें विचार किया और शुद्ध भूमिमें स्थित हुए फाल्गुनके महीनेमें श्रीकृष्णने तपका आरंभ किया ॥ १७ ॥ शाकोंका भोजन करनेवाले मंत्रोंको जपनेमें तत्पर वेदोंके अध्ययनमें तत्पर विष्णु किस उद्देशसे तप करते हैं ॥ १८ ॥ उसे कोई यथेष्ट न जान सका ईश्वरकी चिन्तना दुर्ज्ञेय है, इस प्रकार भूतसेवित पर्वतमें श्रीकृष्णके तप करनेपर ॥ १९ ॥ कश्यपके पुत्र गरुड तप करते हुए श्रीकृष्णके समीपमें होम करनेके तपश्चतुर्गुण किल हरिर्विष्णुः सर्वेश्वरः शिवः ॥ जटी चीरी जगन्नाथो मानुषं वपुरास्थितः ॥ १५ ॥ तपसे धृतचित्तस्तु शुचो भूमावुपा- विशत् ॥ अवरुह्य ततो यानाद्गरुडाद्वेदसंमितात् ॥ १६ ॥ द्वादशाब्दं तपश्चतुर्गुणं मनो दधे ततोऽहरिः ॥ फाल्गुनेन तु मासेन समारेभे जगत्पतिः ॥ १७ ॥ शाकभक्षः कृतजपो वेदाध्ययनतत्परः ॥ किमुद्दिश्य जगन्नाथस्तपश्चरति मानवः ॥ १८ ॥ तं न विद्मो यथाकामं दुर्ज्ञेयेश्वरचित्तना ॥ तपस्यति तदा विष्णो पर्वते भूतसेविते ॥ १९ ॥ गरुडः कश्यपसुत इन्धनानि समाचिनोत् ॥ होमार्थं वासुदेवस्य चरतस्तप उत्तमम् ॥ २० ॥ चक्रराजोऽथ पुष्पाणि संचिनोति तदा हरेः ॥ दिक्षु सर्वासु सर्वत्र ररक्ष जलजस्तदा ॥ २१ ॥ खड्ग आहृत्य यत्नेन कुशान्सुबहुशस्तदा ॥ गदा कौमोदकी चैव परिचर्या चकार ह ॥ २२ ॥ धनुःप्रवरमत्युग्रं शार्ङ्गं दानवभीषणम् ॥ स्थितं हि पुरतस्तस्य यथेष्टं भृत्यवत्स्वयम् ॥ २३ ॥ जुहोति भगवान्विष्णुरेधोभिर्बहुभिः सदा ॥ आज्यादिभिस्तदा इव्येरग्निं संपूज्य माधवः ॥ २४ ॥ सप्तार्चिषः समानि च समस्तव्यस्ततः कृती ॥ एकस्मिन्नेकदा मासे भुञ्जानो नियतात्मवान् ॥ २५ ॥ लिये ईंधनोंको इकट्ठा करने लगे ॥ २० ॥ सुदर्शन चक्र श्रीकृष्णके समीपमें पुष्पोंको इकट्ठा करने लगा, और संपूर्ण दिशाओंमें पांचजन्य शंख रक्षा करने लगा ॥ २१ ॥ और यत्नसे नंदक खड्ग बहुतसी कुशाओंको श्रीकृष्णके समीप लाकर गेरता था कौमोदकी गदा श्रीकृष्णकी सेवा करती थी ॥ २२ ॥ और दैत्योंको भय देनेवाला शार्ङ्ग धनुष श्रीकृष्णके सन्मुख यथेष्ट भृत्यके समान स्थित हुआ ॥ २३ ॥ भगवान् विष्णु अनेक प्रकारके काष्ठों और घृतआदिसे हवन कर अग्निकी पूजा करने लगे ॥ २४ ॥ वह सूर्यकी समान कान्तिवाले कृतकृत्य एक महीनेमें एक दिन भोजन करते

थे ॥ २५ ॥ फिर दो महीनेके उपरान्त फिर तीन चार पांच छैः महीने पीछे भोजन करते थे फिर एक वर्षमें एक दिन ऐसे भोजन किया इस प्रकार जगत्पति श्रीकृष्ण एक महीना कम बारह वर्षतक ॥ २६ ॥ २७ ॥ अग्निमें हवन कर मंत्रका पाठ करते हुए महादेवजीका ध्यान करते हुए आरण्यक विधिको पढ़ते हुए साक्षात् सर्वेश्वर हरि ओंकारका विचार करते हुए ध्यानमें तत्पर हो स्थित हुए ॥ २८ ॥ इति श्रीम० खिलेषु० ह० भविष्य-पर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां चतुरशीतितमोऽध्यायः ॥ ८४ ॥ वैशम्पायनजी बोले कि, तब साक्षात् इन्द्र ऐरावत हाथीपर चढ़कर सप करनेवाले

द्वितीये त्वथ पर्याये भुञ्जन्नेकेन केशवः ॥ एकस्मिन्वत्सरे भुञ्जंस्तथैवैकेन केनचित् ॥ २६ ॥ समाप्य तत्तपः सर्वमेवमेव जगत्पातिः ॥ द्वादशाब्दे तथा पूर्णे ऊनमासे जगत्पतिः ॥ २७ ॥ जुह्वन्नग्निं समास्थाय पठन्मंत्रं जनार्दनः ॥ आरण्यकं पठन्विष्णुः साक्षात्सर्वेश्वरो हरिः ॥ आस्ते ध्यानपरस्तत्र पठन्प्रणवमुत्तमम् ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां कृष्ण तपोवर्णनं नाम चतुरशीतितमोऽध्यायः ॥ ८४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तत इन्द्रः स्वयं तत्र आरुह्य गजमुत्तमम् ॥ द्रष्टुं सर्वेश्वरं विष्णुं तपस्यन्तं समाययौ ॥ १ ॥ ततो यमस्तु भगवानारुह्य महिषं वरम् ॥ किंकरैश्च स्वयं साक्षादाययौ नगमुत्तमम् ॥ २ ॥ प्रचेता हंसमारुह्य वारुणेश्च समन्वितः ॥ श्वेतच्छत्रसमायुक्तः श्वेतव्यजनवीजितः ॥ ३ ॥ ययौ कैलासशिखरं द्रष्टुं केशवमञ्जसा ॥ अन्ये चापि तथा देवा आदित्या वसवस्तथा ॥ ४ ॥ रुद्राश्चैव तथा राजन्द्रष्टुं केशवमाययुः ॥ सिद्धाश्च मुनयश्चैव गन्धर्वा यक्ष-किन्नराः ॥ ५ ॥ सर्वाश्चाप्सरसो राजनृत्यगीतविशारदाः ॥ ततो देवगणाः सर्वे कैलासं समपद्यत ॥ ६ ॥

विष्णुके देखनेको प्राप्त हुआ ॥ १ ॥ इसके उपरान्त भैसेपर चढ़कर धर्मराज अपने दूतोंसहित कैलासपर्वतमें प्राप्त हुए ॥ २ ॥ फिर श्वेतछत्रको लगानेवाला और श्वेत वीजनासे वीजित वरुणजी हंसपर चढ़ ॥ ३ ॥ अपने भूत्योंके सहित श्रीकृष्णके देखनेको कैलासपर्वतमें प्राप्त हुए हे राजन् ! अन्यभी देवता आदित्य, सब वसु ॥ ४ ॥ और सब रुद्र श्रीकृष्णके देखनेको आये, सिद्ध, मुनि, गंधर्व, यक्ष, किन्नर ॥ ५ ॥ नृत्यगीतमें विशारद

अम्सरा और सब देवता कैलासपर्वतमें आये ॥ ६ ॥ पर्वत, पारदऋषि और दूसरे मुनिजन विस्मयसे चलायमान नेत्रवाले ऋषि और देवगण ॥ ७ ॥ यह सब श्रीकृष्णके देखनेको कैलासपर्वतमें आये और सब कहने लगे कि ऐसा आश्चर्य है कि न हुआ न हांगा, तिसको देखो कि योगिजनोंको ध्यान करनेके योग्य और सबके बढेगी श्रीकृष्ण आप तप करते हैं ॥ ८ ॥ ऐसा समय कब होगा. ऐसे सब गज मानने लगे जब जगत्पतिको बारह वर्ष तप करते पूर्ण हो नये तब सब जनतके ईश्वर महादेव पार्वती और भूतसंघके संग लोकहितकारी श्रीकृष्णके देखो. आये ॥ ९ ॥ कुबेर एत्योंके संग

पर्वतो नारदश्चैव तथान्ये मुनिसत्तमाः ॥ विस्मयस्थितलोलाक्षाः सर्वदेवगणास्तथा ॥ ७ ॥ आश्चर्यं खलु पश्यध्वं न भूतं न भविष्यति ॥ योगिष्येयः स्वयं कृष्णो यत्तप्यति गुरुः स्वयम् ॥ ८ ॥ कोऽन्वत्र समयो भूयादिति ते मेनिरे गणाः ॥ ततः समाप्ते सकले जगत्पतेर्व्रते समूले सकलेश्वरः शिवः ॥ द्रष्टुं हारं लोकहितैषिणं प्रभुं ययो भवान्या सह भूतसंघैः ॥ ९ ॥ सार्द्धं कुबेरेण सगुह्यकेन सरन्या प्रियेण प्रभुरीश्वरः शिवः ॥ स्वयं जटी भूतपिशाचसंवृतः शरी च खड्गी शशिखण्डशेखरः ॥ १० ॥ करेण विभ्रत्सह दर्भ-कुण्डिकां करेण साक्षादपरेण दीपिकाम् ॥ अन्येन विभ्रन्महतीं स डिण्डिमां शूलं च विभ्रन्नपरेण बाहुना ॥ ११ ॥ गुणान्स रुद्राश-कृतांसमुद्रहन् जटाभिरापिङ्गलताम्रमूर्तिः ॥ विराजमानः प्रभुरिन्दुशेखरो वृषेण युक्तः स सितेन शंकरः ॥ १२ ॥ उमास्तनद्वन्द्व-समर्पिताननस्तथा समाश्लिष्य निशीडिताधरः ॥ गङ्गाम्बुविक्षालितचन्द्रशेखरस्तां चापि वीक्षन्बहुशस्तदा शिवः ॥ १३ ॥

साविके प्रिय जटाको धारण करनेवाले पिशाचोंसे परिवृत शर और खड्गको धारण करनेवाले और चन्द्रमाको मस्तकमें धारण किये ॥ १० ॥ एक हाथमें डानके समूहको धारण किये दूसरेमें दीपिका लिये तीसरे हाथमें बड़ी डिण्डिमा धारे और चौथे हाथमें विशूलको लिये ॥ ११ ॥ रुद्राशोंकी मालाओंको पहरे पीली जटाओंको धारे पार्वतीसे संयुक्त, ताम्रमूर्ति सफेद रंगके बैलसे संयुक्त, विराजमान चन्द्रशेखर ॥ १२ ॥ और पार्वतीजीके दोनों स्तनोंके बीचमें मिलापकर अधरामृतको पीउन करनेवाले गंगाजलसे क्षालित शिर और पार्वतीजीकी ओर वारंवार देखते हुए ॥ १३ ॥

जस्म आदि सुस्तर लेप किये और महासर्पोंसे जटाओंको बांधे, नरके शिरोंकी माला धारे, शिवजी केशवके देखनेको आये ॥ १४ ॥ जिसको सांख्यवादी
 अन्य महापुरुष पुरातन कहते हैं और चित्तके उत्तम चौबीस तत्त्वगुण हैं, उस देवके संपूर्ण गुण कौन जान सकता है ॥ १५ ॥ और जिसको एक पुरातन
 पुरुष कणाद अज महेश्वर कहते हैं, जिसने दक्षके यज्ञका नाश कर देवता और दैत्योंको मारा जो सनातन हैं ॥ १६ ॥ भूतोंके तत्त्वोंको जाननेवाला
 भूतेश, भूतभावन, वामदेव, विरूपाक्ष जिसको तत्त्व जानेवाले कहते हैं ॥ १७ ॥ महादेव, सहस्राक्ष, कालमूर्ति, चतुर्भुज, रुद्र, रोदन, विश्वेश्वर, शिव
 भस्माङ्गरागेरनुलेपिताननो महोरगेवद्वज्रटः सनातनः ॥ शिरः कपालेः परिशोभितस्तदा द्रष्टुं हरिं केशवमभ्ययाच्छिवः ॥ १४ ॥ यमाहु-
 रग्र्यं पुरुषं महान्तं पुरातनं सांख्यनिबद्धदृष्टयः ॥ यस्यापि देवस्य गुणान्समर्थास्तत्त्वांश्चतुर्विंशतिमाहुरेके ॥ १५ ॥ यमाहुरेकं पुरुषं
 पुरातनं कणादनामानमजं महेश्वरम् ॥ दक्षस्य यज्ञं विनिहत्य यो वै विनाश्य देवानसुरान् सनातनः ॥ १६ ॥ यं विदुर्भूततत्त्वज्ञं भूतेशं
 भूतभावनम् ॥ वामदेवं विरूपाक्षमाहुस्तत्त्वविदो जनाः ॥ १७ ॥ महादेवं सहस्राक्षं कालमूर्तिं चतुर्भुजम् ॥ रुद्रं रोदननामानमाहुर्विश्वे-
 श्वरं शिवम् ॥ १८ ॥ अप्रमेयमनाधारमाहुर्माहेश्वरा जनाः ॥ नम्रं नम्रपरीतं तु नागिनं त्वग्निवर्चसम् ॥ १९ ॥ आहुर्विश्वेश्वरं शान्तं शिवमादिं
 सनातनम् ॥ तस्य मूर्तिरिमाः सर्वा धराद्याः सकला नृपः ॥ २० ॥ भूमिरापोनलो वायुः खं सूर्यश्च तथा शशी ॥ अग्निश्च यजमानश्च
 प्रकृतिश्चैवमष्टधा ॥ २१ ॥ महादेवो महायोगी गिरीशो नीललोहितः ॥ आदिकर्ता महाभर्ता शूलपाणिरुमापतिः ॥ द्रष्टुं विश्वेश्वरं विष्णुं
 भूतसंवेः समाययो ॥ २२ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भवि० कैलासयात्रायां शिवागमनकथनं नाम पञ्चाशीतिमोऽध्यायः ॥ ८५ ॥
 नाम जिनको कहते हैं ॥ १८ ॥ सब महात्मा जिनको अप्रमेय अनाधार नम्र नागोपवीत, नागी, अग्निवर्चा ॥ १९ ॥ शान्त, विश्वेश्वर, शिव, आदि
 सनातन कहते हैं. हे जिनार्दव ! जिसकी मूर्ति यह पृथ्वी आदि सब पदार्थ हैं ॥ २० ॥ अर्थात् पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा,
 यजमान यह उसकी आठ प्रकृति हैं ॥ २१ ॥ महादेव महायोगी, गिरीश, नीललोहित, आदिकर्ता, महाभर्ता, शूलपाणि, उमापति महादेव भूतगणोंके
 संग विश्वके ईश्वररूप विष्णुके देखनेको आये ॥ २२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां शिवागमनकथनं नाम

पंचाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८५ ॥ वेशंपायनजी बोले कि, उन महादेवजीके अगाडी सहस्रों भूतोंके समूह और घंटाकर्ण, विरूपाक्ष, कुंडधार, कुमुद्रह ॥ १ ॥ दीर्घरोमा, दीर्घभुज, दीर्घबाहु, निरंजन, उरुवक्र, शतमुख, शतग्रीव शतोदर ॥ २ ॥ कुंडोदर, महाग्रीव, स्थूलजिह्व, द्विबाहुक, पार्श्ववक्र, सिंहमुख, उन्नतांस, महाहनु ॥ ३ ॥ त्रिबाहु, पंचबाहु, व्याघ्रवक्र, शतानन इत्यादि बहुतसे दीर्घमुखोंवाले और दीर्घभुजोंवाले और दीर्घनेत्रोंवाले ॥ ४ ॥ नृत्य करते हुए बैठते हुए परस्पर स्फोटन करते हुए और कितनेही घोररूप कितनेही विकृतमुखोंवाले ॥ ५ ॥ प्रेतोंके भक्षण करनेवाले और प्रेतोंको बहानेवाले, मांस और रुधिरका वेशंपायन उवाच ॥ तस्याग्रे समपद्यन्त भूतसंघाः सहस्रशः ॥ घण्टाकर्णो विरूपाक्षः कुण्डधारः कुमुद्रहः ॥ १ ॥ दीर्घरोमा दीर्घभुजो दीर्घबाहुनिरञ्जनः ॥ उरुनेत्रः शतमुखः शतग्रीवः शतोदरः ॥ २ ॥ कुण्डोदरो महाग्रीवः स्थूलजिह्वो द्विबाहुकः ॥ पार्श्ववक्रः सिंहमुख उन्नतांसो महाहनुः ॥ ३ ॥ त्रिबाहुः पञ्चबाहुश्च व्याघ्रवक्रः सिताननः ॥ एते चान्ये च बहवो दीर्घास्या दीर्घलोचनाः ॥ ४ ॥ नृत्यन्तः प्रहसन्तश्च स्फोटयन्तः परस्परम् ॥ तथान्ये घोररूपाश्च तथान्ये विकृताननाः ॥ ५ ॥ प्रेतभक्षाः प्रेतवाहा मांसशोणितभोजनाः ॥ शवानि सुनहून्याशु भक्षयन्तस्ततस्ततः ॥ ६ ॥ पिबन्तो रुधिरं घोरं खण्डयन्तः शवान्बहून् ॥ कराला वितता दीर्घा धमनिस्त्रायु- संतताः ॥ ७ ॥ नानाविधाः सुवीराश्च शूलग्रप्रोतमानुषाः ॥ शिरोमालावृताः केचिदन्त्रपाशावपाशिताः ॥ ८ ॥ डिण्डिमैरदृहासैश्च नादयन्तो वसुन्धराम् ॥ कपालिनो भैरवाश्च जटिला मुण्डिनस्तथा ॥ ९ ॥ एवं बहुविधा घोराः पिशाचा विकृताननाः ॥ तथान्ये मुनिवीराश्च ध्यायन्तः परमेश्वरम् ॥ १० ॥

भोजन करनेवाले बहुतसे सुरदोंको भक्षण करनेवाले ॥ ६ ॥ घोररूप लोहूको पीनेवाले और बहुतसे सुरदोंको खण्डित करनेवाले, कराल, विस्तृत, लम्बी नाडी और नसोंसे व्याप्त ॥ ७ ॥ नानाप्रकारकी आकृतिवाले वीर शूलके अग्रभागमें मनुष्योंको लटकाये और शिरोंकी मालाको पहननेवाले, कितनेही अंत्रपाशको धारण करनेवाले ॥ ८ ॥ और डिण्डिम तथा अदृहासोंसे इस पृथ्वीको शब्दित करते, कपालोंको धारण करनेवाले जय देनेवाले, जटाधारी, मुंड मुंडाये हुए ॥ ९ ॥ बहुत प्रकारके घोरमुख पिशाच महादेवजीके अगाडी स्थित हो रहे हैं और बहुतसे मुनिजन परमेश्वरका ध्यान कर व्रती हुए ॥ १० ॥

देव और वेदके अंगोंका विधिपूर्वक पठन करनेवाले कोई कुंडिका और कोई कुशाके चीरोंको धारण किये ॥ ११ ॥ कोई कौपीनमात्र वस्त्रोंको धारण किये और कितनेही काषाय वस्त्रोंको धारण किये. कितनेही शक्तिसे माहेश्वरके स्तोत्रोंसे महादेवजीकी स्तुति करते मुनिजनोंके गण और महादेवजीके गण और सिद्ध अपनी अपनी स्त्रियोंको लिये ॥ १२ ॥ यह और वे मुनिगण दूसरी ओर दूसरे गण अपनी स्त्रियोंके साथ ॥ १३ ॥ गंधर्व तथा नृत्यकर्म और गायनकर्ममें चतुर कन्या, विद्याधर यह सब महादेवजीकी स्तुति गान कर रहे हैं ॥ १४ ॥ और गमन करते हुए महादेवजीके आगे अप्सरा-पठन्तो वेदवाक्यानि सांगानि विविधानि च ॥ कुण्डिकास्थकराः केचित्केचित्कुशविचारिणः ॥ ११ ॥ कौपीनवसनाः केचित्केचित्काषायसंवृताः ॥ स्तुवन्तः शंकरं भक्त्या स्तोत्रैर्माहेश्वरेस्तथा ॥ १२ ॥ एकत्र ते मुनिगणा अपरत्र गणास्तथा ॥ अन्यत्र सिद्ध-गन्धर्वाः प्रियाभिः सह संगताः ॥ १३ ॥ नृत्यान्ति नृत्यकुशला गायन्ति स्म च कन्यकाः ॥ विद्याधरास्तथान्यत्र स्तुवन्तः शंकरं शिवम् ॥ १४ ॥ ननृतुस्तस्य पुरतो गच्छन्तोऽप्सरसां गणाः ॥ एवमेतेर्महाघोरेः पिशाचेर्भूताकिन्नरैः ॥ १५ ॥ मुनिभिश्चैव प्रमथेः समं शर्वः समाययो ॥ यत्र विश्वेश्वरो विष्णुस्तपस्तेपे सुदारुणम् ॥ १६ ॥ यत्र ते लोकपालाश्च तिष्ठन्ति स्म दिदृक्षया ॥ उमया लोकभाविन्या मंगया चन्द्रशेखरः ॥ १७ ॥ स सर्वलोकप्रभवो भवो विभुर्जटी च साक्षात्प्रणवात्मकः कृती ॥ द्रष्टुं हरिं विष्णुमुदारविक्रमो ययो ययेष्टं पिशिताश्नैर्वृतः ॥ १८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां महादेवागमने षडशी-तितमोऽध्यायः ॥ ८६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवं बहुविधैर्भूतैः पिशाचेरुरगेः सह ॥ आगत्य भगवान्नुद्रः शंकरो वृषवाहनः ॥ १ ॥ ओंके गण नाच रहे हैं इस प्रकार महाघोर पिशाच भूत, किन्नर ॥ १५ ॥ मुनि, प्रमथगण, आदिके सहित शिवजी, जहां विष्णु दारुण तप करते थे, वहां आये ॥ १६ ॥ जहां वे लोकपाल महादेवजीके देखनेकी इच्छासे स्थित थे वहां लोकभाविनी उमा और गंगाको साथ लिये ॥ १७ ॥ सब लोकके उत्पन्न करता विश्व जटाधारी साक्षात् ओंकारात्मक कृती उदार विक्रम पिशाचादिके सहित विष्णुके देखनेको आये ॥ १८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां महादेवागमने षडशीतितमोऽध्यायः ॥ ८६ ॥ वैशम्पायन बोले, इस प्रकार बहुतसे भूत

पिशाच व सर्पोंको संग लिये बैलपर चढ़े भगवान् महादेवजीने आनकर ॥ १ ॥ उच्चम तप तपते देवताओंके पति पवित्र हव्यका अधिमें हवन करते ॥ २ ॥ और गरुडजीसे हवनके काष्ठको इकट्ठे कराये हुए, जटा और पुराने वस्त्रको धारण किये चक्रसे पुष्पोंको इकट्ठा कराते, खड्गसे कुशाको संग्रह कराते ॥ ३ ॥ पद्मासे समाचारको कराते हुए और इन्द्र आदिक देवताओंके समूहसे और मुनिगणोंसे युक्त ॥ ४ ॥ सब जीवोंको अचिन्त्य, कुछेक ध्यान करते हुए विष्णुको वृषभपर स्थित भूतभावन भगवान् शिवने देखा ॥ ५ ॥ तब प्रसन्न हुए प्रसन्नात्मा, मस्तकमें तीसरे नेत्रवाले उमापति प्राप्त हुए, तब, भूत, पिशाच, राक्षस, गुह्यक ॥ ६ ॥ ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ मुनि यह सब जयशब्द करने लगे. हे देव ! हे जगन्नाथ ! हे देव रुद्र ! हे

दृढदर्श विष्णुं देवेशं तपन्तं तप उत्तमम् ॥ जुह्वानमग्निं विधिवद्भवेमेष्यैर्जगत्पतिम् ॥ २ ॥ गरुडाहृतकाष्ठं तु जटिलं चीरवाससम् ॥ चक्रेणानीतकुसुमं खड्गानीतकुशं तथा ॥ ३ ॥ गदाकृतसमाचारं देवदेवं जनार्दनम् ॥ इन्द्राद्यैर्देवसंवेष्टं वृतं मुनिगणैः सह ॥ ४ ॥ अचिन्त्यं सर्वभूतानां ध्यायन्तं किमपि प्रभुम् ॥ अवरुह्य वृषाच्छर्वो भगवान् भूतभावनः ॥ ५ ॥ ततः प्रीतः प्रसन्नात्मा ललाटाक्ष उमापतिः ॥ ततो भूतपिशाचाश्च राक्षसा गुह्यकास्तथा ॥ ६ ॥ मुनयो विप्रवर्याश्च जयशब्दं प्रचक्रिरे ॥ जय देव जगन्नाथ जय रुद्र जनार्दन ॥ ७ ॥ जय विष्णो हृषीकेश नारायण परायण ॥ जय रुद्र पुराणात्मन् जय देव हरेश्वर ॥ ८ ॥ आदिदेव जगन्नाथ जय शंकर भावन ॥ जय कौस्तुभदीप्तांग जय भस्मविराजित ॥ ९ ॥ जय चक्रगदापाणे जय शूलिस्त्रिलोचन ॥ जय मोक्तिकदीप्तांग जय नागविभूषण ॥ १० ॥ इति ते मुनयः सर्वे प्रणामं चक्रिरे हरिम् ॥ तत उत्थाय भगवान् दृष्ट्वा देवमवस्थितम् ॥ ११ ॥

जनार्दन ! आपकी जय हो ॥ ७ ॥ हे विष्णो ! हे इन्द्रियोंके ईश ! हे पूण्यात्मन् ! हे हरेश्वर ! आपकी जय हो ॥ ८ ॥ हे आदिदेव जगन्नाथ ! हे शंकर भावन ! हे कौस्तुभमणिको धारण करनेवाले ! हे भस्मविराजित ! आपकी जय हो ॥ ९ ॥ चक्र गदा हाथमें लिये आपकी जय हो त्रिशूलधारी त्रिलोचन आपकी जय हो. मोतियोंसे प्रकाशित अंगवाले आपकी जय हो नागोंके आभूषण धारण करनेवाले देव तुम्हारी जय हो ॥ १० ॥ इस प्रकार वह सब मुनि हरिभगवान्की स्तुति करने लगे (इन विशेषणोंसे यहां अभेद दिखाया है) ऐसे स्तुति श्रवण कर विष्णु भगवान् उठकर स्थित हुए

भगवान् ॥ ११ ॥ वृषध्वजावाले, विरूपाक्ष, शंकर नीले वं रक्त वर्णवाले शिवजीको देख प्रसन्न हो रतुति करने लगे ॥ १२ ॥ श्रीभगवान् बोले,
हे शीतकंठ ! हे नीलधीव ! हे वेधा ! हे शोचिष ! हे उपवासिन् ! तुमको नमस्कार है ॥ १३ ॥ हे मीढुष ! हे गदिन् ! हे नदाचारी हर ! तुमको
नमस्कार है, हे विश्वतंतु ! हे वृषरूपी ! आपको नमस्कार है ॥ १४ ॥ हे अमूर्त्तदेव ! हे पिनाकिन् कुब्ज कूप शिव ! शिवरूपिन् ! आपके अर्थ
नमस्कार है ॥ १५ ॥ हे तुष्ट्य ! हे तुंड ! हे तुष्टितुंड ! आपके अर्थ नमस्कार है, और शांतरूपी शिव गिरीश आपके अर्थ नमस्कार है, और पर्वतमें

वृषध्वजं विरूपाक्षं शंकरं नीललोहितम् ॥ तंतो हृष्टमना विष्णुस्तुष्टाव हरमीश्वरम् ॥ १२ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ नमस्ते शितिकण्ठाय
नीलधीवाय वेधसे ॥ नमस्ते शोचिषे अस्तु नमस्ते उपवासिने ॥ १३ ॥ नमस्ते मीढुषे अस्तु नमस्ते गादिने हर ॥ नमस्ते
विश्वतनवे वृषाय वृषरूपिणे ॥ १४ ॥ अमूर्त्ताय च देवाय नमस्तेऽस्तु पिनाकिने ॥ नमः कुब्जाय कूपाय शिवाय शिवरूपिणे ॥ १५ ॥
नमस्तुष्ट्याय तुण्डाय नमस्तुष्टितुण्डाय च ॥ नमः शिवाय शान्ताय गिरिशाय च ते नमः ॥ १६ ॥ नमो हराय विप्राय नमो
हरिहराय च ॥ नमोऽघोराय घोराय घोरघोरप्रियाय च ॥ १७ ॥ नमोऽघण्टाय घण्टाय नमो घटिघटाय च ॥ नमः शिवाय शान्ताय
गिरीजाय च ते नमः ॥ १८ ॥ नमो विरूपरूपाय पुराय पुरहारिणे ॥ नम आद्याय बीजाय शुचयेऽष्टस्वरूपिणे ॥ १९ ॥ नमः
पिनाकहस्ताय नमः शूलासिधारिणे ॥ नमः खट्वाङ्गहस्ताय नमस्ते कृत्तिवाससे ॥ २० ॥

शयन करनेवाले आपके अर्थ नमस्कार है ॥ १६ ॥ हे हर ! हे विप्र ! हे हरिहर ! हे घोर ! हे अघोर ! हे घोरघोरप्रिय ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार
है ॥ १७ ॥ घंटा अघंटा रूप, घटिघटरूप तुम्हारे अर्थ नमस्कार है, शांतरूप सर्वरूप भूतोंके अधिपति आपको नमस्कार है ॥ १८ ॥ विरूपवान्
रूपवान्, पुरुरूप, पुरनाशक, आद्य, विज्ञ, शुचि, अष्टस्वरूपी आपको नमस्कार है ॥ १९ ॥ पिनाक धनुष और शूल खट्वाङ्गको धारण करनेवाले,
और खट्वाङ्गके अंग अर्थात् पाया आदिको हाथमें धारण करनेवाले, और चर्मके वस्त्रोंको धारण करनेवाले तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ २० ॥

हे देव देव आकाशमूर्ति ! हे हरिरूप ! हे हर तीक्ष्णतेजको धारण करनेवाले ! आपके अर्थ नमस्कार है ॥ २१ ॥ हे भक्तप्रिय ! भक्तोंको वर देनेवाले ! भक्त आकाशमूर्ति देव ! हे अभ्रमूर्ति जगत्की मूर्तिको धारण करनेवाले ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ २२ ॥ हे चंद्रदेव ! हे सूर्यदेव ! हे प्रधानदेव ! हे भूतपति ! आपके अर्थ नमस्कार है ॥ २३ ॥ हे कराल ! हे मुंडरूप ! हे विकृतजटाको धारण करनेवाले ! हे अज ! हे भूतभावन ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ २४ ॥ हे हरिकेश ! हे पिण्डरूप ! हे अभीष्ट अर्थात् अश्वादिकोंकी रश्मिको हाथमें धारण करनेवाले हर ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार है

नमस्ते देवदेवाय नम आकाशमूर्तये ॥ हराय हरिरूपाय नमस्ते तिग्मतेजसे ॥ २१ ॥ भक्तप्रियाय भक्ताय भक्तानां वरदायिने ॥ नमोऽभ्रमूर्तये देव जगन्मूर्तिधराय च ॥ २२ ॥ नमश्चन्द्राय देवाय सूर्याय च नमो नमः ॥ नमः प्रधानदेवाय भूतानां पतये नमः ॥ २३ ॥ करालाय च मुण्डाय विकृताय कपर्दिने ॥ अजाय च नमस्तुभ्यं भूतभावनभावन ॥ २४ ॥ नमोऽस्तु हरिकेशाय पिण्डलाय नमो नमः ॥ नमस्तेऽभीष्टहस्ताय भीरुंभीरुहराय च ॥ २५ ॥ हराय भीतिरूपाय घोरानां भीतिदायिने ॥ नमो दक्षमखप्राय भगनेत्राप-
हारणे ॥ २६ ॥ उमापते नमस्तुभ्यं कैलासनिलयाय च ॥ आदिदेवाय देवाय भवाय भवरूपिणे ॥ २७ ॥ नमः कपालहस्ताय नमोऽजमथनाय च ॥ त्र्यम्बकाय नमस्तुभ्यं त्र्यक्षाय च शिवाय च ॥ २८ ॥ वरदाय वरेण्याय नमस्ते चन्द्रशेखर ॥ नम इध्माय हविषे ध्रुवाय च कुशाय च ॥ २९ ॥ नमस्ते शक्तियुक्ताय नागपाशप्रियाय च ॥ विरूपाय सुरूपाय मद्यपानप्रियाय च ॥ ३० ॥

हे ॥ २५ ॥ त्र्यम्बर रूपको धारण करनेवाले हर घोरपुरुषोंको भय देनेवाले और दक्ष प्रजापतिके यज्ञनाशक, भगके नेत्रोंके हरनेवाले तुम्हारे लिये नमस्कार है ॥ २६ ॥ हे उमापति ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार है, और कैलासमें स्थान करनेवाले आदिदेव और भवरूपी तुम्हारे लिये नमस्कार है ॥ २७ ॥ कपाल हाथमें रखनेवाले त्र्यम्बर त्र्यक्ष शिव तुम्हारे लिये नमस्कार है ॥ २८ ॥ वर देनेवाले, वरेण्य, चन्द्रशेखर, इच्छारूप, हविरूप, ध्रुव, कृष्ण तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ २९ ॥ शक्तियुक्तके अर्थ नमस्कार है, नागपांसीके प्रिय विरूप सुरूप, मद्यपानप्रिय तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ ३० ॥

नित्य स्मशानमें प्रीति करनेवाले और जयशब्दके प्रिय, स्वरप्रिय वामनरूप स्वर स्वररूपी आपके अर्थ नमस्कार है ॥ ३१ ॥ भद्रप्रिय, भद्र, भद्ररूपको धारण करनेवाले तुम्हारे अर्थ नमस्कार है, और विरूप, स्वरूप, महाघोर ॥ ३२ ॥ घट, घटभूषी, घंटेकी आभूषण करनेवाले तीव्र तीव्ररूप और तीव्रप्रिय तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ ३३ ॥ और नग्न, नग्नरूप, नग्नरूपप्रिय, भूतवास, आपको नमस्कार है, सब आवासरूप आपको नमस्कार है ॥ ३४ ॥ सर्वात्मा भूतिदायक, आपके अर्थ नमस्कार है और वामदेव महादेव आपके अर्थ नमस्कार है ॥ ३५ ॥ हे स्तुतिमतां वर ! तुम्हारी स्तुति

इमज्ञानरतये नित्यं जयशब्दप्रियाय च ॥ स्वरप्रियाय स्वर्णाय स्वरोय स्वररूपिणे ॥ ३१ ॥ भद्रप्रियाय भद्राय भद्ररूपधराय च ॥ विरूपाय सुरूपाय महाघोराय ते नमः ॥ ३२ ॥ घण्टाय घण्टभूषाय घण्टभूषणभूषिणे ॥ तीव्राय तीव्ररूपाय तीव्ररूपाप्रियाय च ॥ ३३ ॥ नग्नाय नग्नरूपाय नग्नरूपप्रियाय च ॥ भूतवास नमस्तुभ्यं सर्वावास नमो नमः ॥ ३४ ॥ नमः सर्वात्मने तुभ्यं नमस्ते भूतिदायक ॥ नमस्ते वामदेवाय महादेवाय ते नमः ॥ ३५ ॥ का नु वाक् स्तुतिरूपा ते को नु स्तोतुं प्रशक्यात् ॥ कस्य वा स्फुरते जिह्वा स्तुतो स्तुतिमतां वर ॥ ३६ ॥ क्षमस्व भगवन्देव भक्तोऽहं त्राहि मां हर ॥ सर्वात्मन् सर्वभूतेश त्राहि मां सततं हर ॥ ३७ ॥ रक्ष देव जगन्नाथ लोकान् सर्वात्मना हर ॥ त्राहि भक्तान् सदा देव भक्तप्रिय सदा हर ॥ ३८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां विष्णुकृतेश्वरस्तुतिर्नाम सप्ताशीतितमोऽध्यायः ॥ ८७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततो वृषध्वजो देवः शूली साक्षादुमापतिः ॥ करं करेण संस्पृश्य विष्णोश्चक्रधरस्य ह ॥ १ ॥

करने योग्य कौन वाणी है ? और कौन तुम्हारी स्तुति करनेको समर्थ है. और तुम्हारी स्तुति करनेमें किसकी जिह्वा फुस्ती है ॥ ३६ ॥ हे हर ! क्षमा करो, मैं तुम्हारा भक्त हूँ, येरी रक्षा करो. हे सर्वात्मन् ! हे सर्वभूतेश ! मेरी सदा रक्षा करो ॥ ३७ ॥ हे देव ! हे जगन्नाथ ! तुम सर्वात्मा होकर लोकोंकी रक्षा करो. हे महादेव ! हे भक्तप्रिय ! तुम निरंतर भक्तोंकी रक्षा करो ॥ ३८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रायां कैलासयात्रायां ईश्वरस्तुतौ सप्ताशीतितमोऽध्यायः ॥ ८७ ॥ वैशम्पायनजी बोले, तब वह वृषध्वज, शूली सत्स्वरूप

६. वं.
॥ १०२ ॥

उमापति शिव चक्रको धारण करनेवाले विष्णु भगवान् के हाथको हाथसे स्पर्श करके ॥ १ ॥ भगवान् स्व सव देवता और भावितात्मावाले सुनियोंके सुनते हुए गरुडध्वज केशवसे कहने लगे ॥ २ ॥ हे देवदेव ! हे चक्रपाणे ! हे जनार्दन ! यह क्या है किस कारण यह तपश्चर्या तुम करते हो ! और हे विभो ! तुम्हारी क्या प्रार्थना है ॥ ३ ॥ तुम आप विष्णु हो, हे हरे ! आपही तप हो हे देव ! हे जनार्दन ! तुम्हारी यह तपश्चर्या पुत्रके निमित्त है ॥ ४ ॥ सो हे जगत्पते ! मैंने पहले तुमको पुत्र दिया है, हे कारणात्मक ! इसमें कारण सुनो ॥ ५ ॥ हे हरे ! प्रथम सतयुगमें मैं किसी समय

प्रोवाच भगवानुद्रः केशवं गरुडध्वजम् ॥ शृण्वतां सर्वदेवानां सुनीनां भावितात्मनाम् ॥ २ ॥ किमिदं देवदेवेश चक्रपाणे जनार्दन ॥ तपश्चर्या किमर्थं ते प्रार्थना तव कां विभो ॥ ३ ॥ स्वयं विष्णुर्भवान्नित्यस्तपस्त्वं तपसा हरे ॥ त्रार्य यदि ते देव तपश्चर्या जनार्दन ॥ ४ ॥ पुत्रो दत्तो मया देव पूर्वमेव जगत्पते ॥ शृणु तत्रापि भगवन्कारणं कारणात्मक ॥ ५ ॥ तपश्चर्यं प्रवृत्तोऽहं कुतश्चिन्कारणाद्धरे ॥ वर्षायुतं महाघोरं पुरा कृतयुगे तदा ॥ ६ ॥ भवानी तत्र मे देव परिचर्तुं तदाभवत् ॥ पित्रा नियुक्ता देवेश उमेषा वरवर्णिनी ॥ ७ ॥ भीतिं इन्द्रस्तदा देव मारं मां प्रेषयत्तदा ॥ मधुना सह संयुक्तो मारो मामागतस्तदा ॥ ८ ॥ लक्ष्यं मामकरोत्तत्र बाणस्थं प्रेषितस्य ह ॥ एषा मां सेवते तत्र दानात्पुष्पादिनां हरे ॥ ९ ॥ तंतः क्रुद्धोऽहमभवं दृष्ट्वा मारं तथाविधम् ॥ क्रुद्धयतो मम देवेश नेत्रादग्निः पंपात ह ॥ १० ॥ सोऽयमग्निस्तदा मारं भस्मसात्कृतवान् हरे ॥ अचिन्तयं तदा विष्णो शक्रस्येतच्चिकीर्षितम् ॥ ११ ॥

दशसहस्र वर्षतक महाघोर तप करनेको प्रवृत्त हुआ ॥ ६ ॥ और हे देव ! पिता हिमाचलसे दी हुई वह वरवर्णिनी उमा पार्वती मेरी परिचर्या करने लगी ॥ ७ ॥ हे देव ! तब भयभीत हुए इन्द्रने मेरे प्रति कामदेवको प्रेरण किया फिर वह कामदेव पुष्परसोंसे संयुक्त हुआ मेरे सम्मुख आया ॥ ८ ॥ फिर अपने पुष्परूपी बाणोंसे लक्ष्य कर मुझको मारने लगा तब यह पार्वती मुझको पुष्पादिकोंसे सेवने लगी ॥ ९ ॥ तब मैं तिस प्रकार विधिवाले कामदेवको देख क्रोधित हुआ तो मेरे क्रोध करते हुए नेत्रोंसे अग्नि निकली ॥ १० ॥ हे हरे ! फिर उस अग्निने कामदेवको भस्म कर दिया, हे विष्णो !

भा. ६
॥ १०२ ॥

॥ १०२ ॥

पीछे वह इन्द्रका कर्तव्य सुझाको विदित हुआ ॥ ११ ॥ हे देवेश ! तब सुझको दया आने लगी और हे विष्णु ! फिर मैंने प्रसन्न हो ब्रह्माको प्रेरित किया ॥ १२ ॥ हे जगत्पते ! तब मैंने पुरुषरूप करके तुम्हारा बड़ा पुत्र उसे विधान किया है और वह प्रद्युम्ननामसे विख्यात है ॥ १३ ॥ सो हे देव ! उसको तुम कामदेव जानो, इसमें संदेह नहीं, इस प्रकार वह शिवजी कहकर फिर अपने देहको याथात्म्य दिखानेकी इच्छा करते हुए याथात्म्य ॥ १४ ॥ सुननेकी इच्छावाले मुनियोंके मध्यमें विष्णुको उद्देश लेकर हाथोंमें अंजली बांधकर ॥ १५ ॥ पार्वतीके संग शिवजी यथार्थ आत्माके वर्णन करनेकी

ततः प्रभृति देवेश दया तं प्रति वर्तते ॥ ब्रह्मणा च नियुक्तोऽस्मि प्रीतस्तत्र जनार्दन ॥ १२ ॥ नियुक्तः पुत्ररूपेण स ते देव जगत्पते ॥
 ष्येष्टस्तव सुतो देव प्रद्युम्नेत्याभिविश्रुतः ॥ १३ ॥ स्मरं तं विद्धि देवेश नात्र कार्या विचारणा ॥ इत्युक्त्वा पुनराहेदं याथात्म्यं
 दर्शयन्निव ॥ १४ ॥ मुनीनां श्रोतुकामानां याथात्म्यं तत्र सत्तमः ॥ अञ्जलिं संपुटं कृत्वा विष्णुमुद्दिश्य शंकरः ॥ १५ ॥ उभया
 सार्द्धमीशानो याथात्म्यं वक्तुमेहत ॥ हरे कुर्वति तत्रैवमञ्जलिं कुरुसत्तम ॥ १६ ॥ मुनयो देवगन्धर्वाः सिद्धाश्च सहकिन्नराः ॥ अञ्जलिं
 चक्रिरे विष्णो देवदेवेश्वरे हरो ॥ १७ ॥ महेश्वर उवाच ॥ यत्तत्कारणमाहुस्तत्सांख्याः प्रकृतिसंज्ञकम् ॥ ततो महान् ससुत्पन्नः प्रकृति-
 र्यस्य कारणम् ॥ १८ ॥ त्रिधा भूतं जगद्योनिं प्रधानं कारणात्मकम् ॥ सत्त्वं रजस्तमो विष्णो जगदण्डं जनार्दन ॥ १९ ॥ तस्य
 कारणमाहुस्त्वां सांख्यप्रकृतिसंज्ञकम् ॥ तद्रूपेण भवान्विष्णो परिणम्याधितिष्ठति ॥ २० ॥

इच्छा करने लगे, हे कुरुभेष्ट ! उस समय नारायणको हाथ जोड़कर ॥ १६ ॥ मुनि देव गंधर्व सिद्ध किन्नर यह सब देवदेवेश्वर विष्णुकी अंजली बांधने लगे ॥ १७ ॥ शिवजी बोले, जो कुछ प्रकृतिसंज्ञक कारण सांख्यके जाननेवाले कहते हैं, उससे महान् उत्पन्न हुआ जो प्रकृतिका कारण है ॥ १८ ॥ तीन प्रकार जगत्की योनि प्रधान कारणात्मक कहते हैं और सत्त्वगुण, रजोगुण, तमोगुणको इस जगत्रूपी अण्डका कारण कहते हैं, हे जनार्दन ! ॥ १९ ॥ इन सबोंके कारण सांख्यके जाननेवाले तुम्हींको कहते हैं तिसी रूपसे तुम विष्णु परिणामके अधिष्ठाता हो ॥ २० ॥

तिससे महाघोर अधिष्ठातासे अहंकर उत्पन्न हुआ सो हे जगन्नाथ ! तुम आदिमें जगत्के परिणाम हो ॥ २१ ॥ हे प्रभो ! अहंकारसे महान् कारण उत्पन्न हुए हैं और पश्चात् तन्मात्रा हुई हैं और पंचतत्त्व हुए हैं ॥ २२ ॥ सो हे जगत्पते ! तिन पांच तत्त्वोंको तुम्हाराही रूप कहते हैं पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, अग्नि ये पांच तत्त्व हैं ॥ २३ ॥ चक्षु, घ्राण, स्पर्श, जिह्वा, श्रोत्र वह पांच इन्द्रियें हैं और हे देव ! इनका प्रेरनेवाला छठा मन है ॥ २४ ॥ हे जनार्दन ! वाक् आदिक अन्य कर्मेन्द्रियें हैं, उन सबोंको नियंता आत्मा होकर नियन्ता तुमही हो ॥ २५ ॥ हे हरे ! अपने अपने

तस्मात्तु महतो घोरादहंकारो महानभूत् ॥ स त्वमादौ जगन्नाथ परिणामस्तथा हि सः ॥ २१ ॥ अहंकारात्प्रभो देव कारणानि महान्ति च ॥ तन्मात्राणि तथा पञ्च भूतानि प्रभवत्युत ॥ २२ ॥ तानि त्वामादुरीक्षानं भूतानीह जगत्पते ॥ पृथिवी वायुराकाशमापो ज्योतिश्च पञ्चमम् ॥ २३ ॥ चक्षुर्घ्राणं तथा स्पर्शो रसनं श्रोत्रमेव च ॥ मनः षष्ठं तथा देव प्रेरकं तत्र तत्र ह ॥ २४ ॥ कर्मेन्द्रियाणि चान्यानि वागादीनि जनार्दन ॥ त्वमेव तानि सर्वाणि करोषि नियतात्मवान् ॥ २५ ॥ स्वेषु स्वेषु जगन्नाथ विषयेषु तथा हरे ॥ निवेशयसि देवेश योग्यामिन्द्रियपद्धतिम् ॥ २६ ॥ यदा त्वं रजसा युक्तस्तदा भूतानि सृष्टवान् ॥ यदा च सत्त्वयुक्तोऽसि तदा पाता जगत्रयम् ॥ २७ ॥ तदा त्वं तमसाकृष्टस्तदा संहरसे जगत् ॥ त्रिभिरेव गुणैर्युक्तः सृष्टिरक्षाविनाशने ॥ २८ ॥ वर्तसे विविधां भूतिमादाय नियतात्मवान् ॥ इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु नियोजयसि माधव ॥ २९ ॥

विषयोंमें इन इन्द्रियोंको तुम प्रवेश करते हो ॥ २६ ॥ जब तुम रजोगुणसे युक्त होते हो, तब जीवोंको रचते हो और जब सत्त्वगुणसे युक्त होते हो, तब तीनों लोकोंकी पालना करते हो ॥ २७ ॥ और जब तमोगुणसे युक्त होते हो तब जगत्का संहार करते हो, इस प्रकार तीन गुणोंसे युक्त हुए तुम सृष्टिकी रक्षा और विनाश करते हो ॥ २८ ॥ हे माधव ! नियत आत्मावाले तुम तीन प्रकारके पेश्वर्यको प्राप्त होकर इन्द्रियोंको इन्द्रियके अर्थमें नियुक्त करते हो ॥ २९ ॥

हे जगद्गुरो ! प्राणियोंके उपभोगको अन्न रचकर फिर सब भोगोंवाले तुम सब जीवोंमें वर्तते हो ॥ ३० ॥ सृष्टिकालमें तुम ब्रह्मा हो और स्थितिकालमें विष्णु हो जाते हो और संहारसमय तुम रुद्र नामवाले हो. ऐसे तुम तीन धामवाले हो ॥ ३१ ॥ हे देव ! पृथ्वी, वायु, जल, अग्नि, आकाश, मन, बुद्धि, यह तुम्हारी प्रकृति मुझसे सर्वत्र भिन्न है ॥ ३२ ॥ सहस्र पुरुष अर्थात् ईश्वर और सहस्रनेत्र, सहस्रचरण, सहस्र प्रकार, सहस्र मुख, सहस्रात्मा और स्वर्गके पति हो ॥ ३३ ॥ तुम इस सब भूमिको व्याप्त होकर और सातों द्वीप व सागरोंमें व्याप्त हो और सूक्ष्मरूपसे सब जगह दशांशुल परिमित

प्राणिनामुपभोगार्थमन्तः स्थित्वा जगद्गुरो ॥ तस्मात्सर्वत्र भूतेषु वर्तसे सर्वभोगवान् ॥ ३० ॥ ब्रह्मा त्वं सृष्टिकाले तु स्थितो विष्णुरसि प्रभो ॥ संहारे रुद्रनामसि त्रिधामा त्वमसि प्रभो ॥ ३१ ॥ भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च ॥ एताः प्रकृतयो देव भिन्नाः सर्वत्र ते द्ये ॥ ३२ ॥ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ सहस्रधारः सहस्री सः स्यात्मा दिवस्पतिः ॥ ३३ ॥ भूमिं सर्वाभिमां प्राप्य सप्तद्वीपां ससागराम् ॥ अणुः सर्वत्रगो भूत्वा अत्यतिष्ठदशाङ्गुलम् ॥ ३४ ॥ त्वमेवेदं जगत्सर्वं यद्भूतं यद्भविष्यति ॥ त्वत्तो विराट् प्रादुरभूत्सम्राट् चैव जनार्दन ॥ ३५ ॥ तव वक्राज्जगन्नाथ ब्राह्मणो लोकरक्षकः ॥ प्रादुरासीत्पुराणात्मन् षट्कर्मनिरतः सदा ॥ ३६ ॥ राजन्यस्तु तथा बाह्वोरासीत्संरक्षणे रतः ॥ ऊर्ध्वोऽवैश्यस्तथा विष्णोः पादाञ्छूद्र उदाहृतः ॥ ३७ ॥ एवं वर्णां जगन्नाथ तव देहाज्जनार्दन ॥ मनसस्तव देवेश चन्द्रमाः समपद्यत ॥ ३८ ॥ सुखकृत्सर्वभूतानां शीतांशुरमितप्रभः ॥ अक्ष्णोः सूर्यः समुत्पन्नः सर्वप्राणिविलोचनः ॥ ३९ ॥

देशमें स्थित हो ॥ ३४ ॥ जो जगत् हो गया है. और जो होगा, सो तुम्ही हो. हे जनार्दन ! तुमहीसे विराटरूप उत्पन्न है. और तुमसेही सम्राटरूप उत्पन्न है ॥ ३५ ॥ हे जगन्नाथ ! तुम्हारे मुखसे लोककी रक्षा करनेवाले षट्कर्मोंमें रत ब्राह्मण उत्पन्न हुए हैं ॥ ३६ ॥ और रक्षा करनेमें तत्पर सत्री तुम्हारी भुजाओंसे हुए हैं, और जांबोंसे वैश्य उत्पन्न हुए हैं. और पैरोंसे शूद्र हुए हैं ॥ ३७ ॥ हे जगन्नाथ देव ! इस प्रकार सब वर्ण तुम्हारे देहसे उत्पन्न हुए हैं और तुम्हारे मनसे चन्द्रमा हुआ है ॥ ३८ ॥ जो सब भूतोंको सुख करनेवाला, शीतल किरणोंसे युक्त अमृतके समान और जिनसे सब

प्राणियोंका नेत्ररूप सूर्य हुआ है, जिसकी कान्तिसे संपूर्ण जगत् प्रकाशमान हो रहा है ॥ ३९ ॥ और सुखसे अग्नि और प्राणसे वायु उत्पन्न हुई है ॥ ४० ॥ नाभिसे अन्तरिक्ष और शिरसे महाघोर स्वर्ग उत्पन्न हुआ है ॥ ४१ ॥ चरणोंसे पृथ्वी उत्पन्न हुई है, हे जगत्पते ! तुम्हारे कानोंसे दिशा हुई है, इस प्रकार सब जगत्को तुम रचकर फिर विसीमें तुम व्याप्त होकर अब स्थित हो रहे हो ॥ ४२ ॥ हे केशव ! तुम इन सब लोकोंको व्याप्त होकर स्थित हो रहे हो, क्योंकि इसी कारण तुम्हारा विष्णु नाम है कि विष्णु अर्थात् सब स्थानमें व्याप्त ॥ ४३ ॥ नार नाम, जलोंके समूहका है, और उनके अयन नाम प्रवृत्त करनेवाले तुमही हो, इस कारण तुमको नारायण कहते हैं ॥ ४४ ॥ और हे देव ! तुम जीवोंको हरते हो, इस कारण

यस्य भासा जगत्सर्वं भासते भानुमानसौ ॥ मुखेऽदिन्द्रश्च अग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत ॥ ४० ॥ नाभेरभूदन्तरिक्षं तव देव जनार्दन ॥ घोरसंघातु महाघोरा शिरसस्तव गोपते ॥ ४१ ॥ पद्भ्यां भूमिः समुत्पन्ना दिशः श्रोत्राज्जगत्पते ॥ एवं सृष्ट्वा जगत्सर्वं व्याप्य सर्वं व्यवस्थितः ॥ ४२ ॥ व्याप्य सर्वानिमल्लोकान् स्थितः सर्वत्र केशव ॥ ततश्च विष्णुनामासि घातोव्याप्तेश्च दर्शनात् ॥ ४३ ॥ नारा आपः समाख्यातास्तासामयनमादितः ॥ यतस्त्वं भूतभव्येश तन्नारायणशब्दितः ॥ ४४ ॥ हरसि प्राणिनो देव ततो हरिरिति स्मृतः ॥ शंकरोऽसि सदा देव ततः शंकरतां गतः ॥ ४५ ॥ बृहत्त्वादबृंहणत्वाच्च तस्माद्ब्रह्मेति शब्दितः ॥ मधुरिन्द्रियनामेति ततो मधुनिषूदनः ॥ ४६ ॥ हृषीकाणीन्द्रियाण्याहुस्तेषामीशो यतो भवान् ॥ हृषीकेशस्ततो विष्णो रूपातो देवेषु केशव ॥ ४७ ॥ क इति ब्रह्मणो नाम ईशोऽहं सर्वदेहिनाम् ॥ आवां तवाङ्गसंभूतो तस्मात्केशवनामवान् ॥ ४८ ॥

तुमको हरि कहते हैं, हे देव ! तुम सदा शं अर्थात् मंगल करते हो इस कारण तुमको शंकर कहते हैं ॥ ४५ ॥ ॥ बृहत् होनेसे और बृंहण अन्योको बढानेवाले होनेसे तुम ब्रह्म कहलाते हो, और मधु इन्द्रियोंका नाम है, इस कारण तुम मधुनिषूदन कहाते हो ॥ ४६ ॥ हृषीक नाम इन्द्रियोंका है तिनके तुम ईश हो सो हे केशव ! इस कारण तुम देवताओंमें हृषीकेशनामसे विख्यात हो ॥ ४७ ॥ क यह ब्रह्मका नाम है मैं सर्वदेहधारियोंका ईश हूं हम दोनों तुम्हारे अंगसे प्रगट हैं इस कारण केशव नाम है ॥ ४८ ॥

मा नाम विद्याका है इसके आप ईश हो इस कारण माधव नाम है धव नाम स्वामीका है ॥ ४९ ॥ गौ नाम वाणीका है उसको आप जानते हो इस कारण आप गोविन्द नामसे कहे जाते हो ॥ ५० ॥ त्रि नाम तीन वेदोंको जो यथार्थ नामसे आक्रमण करता है इस कारण आपको त्रिविक्रम कहते हैं ॥ ५१ ॥ अणु होनेसे आपको वामन कहते हैं मननसे मुनि और यमसे घाति कहलाते हो ॥ ५२ ॥ जिस कारण कि आप तप करते हो इससे तपस्वी कहाते हैं आपमें सब प्राणी निवास करते हैं इस कारणसे आप भूतावास कहे जाते हो ॥ ५३ ॥ हे हरे ! आप सब भूतोंके ईश हो इससे ईश्वर

मा विद्या च हरे प्रोक्ता तस्या ईशो यतो भवान् ॥ तस्मान्माधवनामासि धवः स्वामीति शब्दितः ॥ ४९ ॥ गोरेशा तु यतो वाणी तां च वेद यतो भवान् ॥ गोविन्दस्तु ततो देव मुनिभिः कथ्यते भवान् ॥ ५० ॥ त्रिरित्येव त्रयो वेदाः कीर्तिता मुनिसत्तमैः ॥ क्रमते तांस्तथा सर्वास्त्रिविक्रम इति श्रुतः ॥ ५१ ॥ अणुर्वा मननामासि यतस्त्वं वामनारुयया ॥ मननान्मुनिरेवासि यमनाद्यतिरुच्यते ॥ ५२ ॥ तपश्चरसि यस्मात्त्वं तपस्वीति च शब्दितः ॥ वसन्ति त्वयि भूतानि भूतावासस्ततो हरे ॥ ५३ ॥ ईशस्त्वं सर्वभूतानामीश्वरोऽसि ततो हरे ॥ प्रणवः सर्ववेदानां गायत्री छन्दसां प्रभो ॥ ५४ ॥ अक्षराणामकारस्त्वं स्फोटस्त्वं वर्णसंश्रयः ॥ रुद्राणामहमेवासि वसूनां प्लवको भवान् ॥ ५५ ॥ अश्वत्थो वृक्षजातीनां ब्रह्मा लोकगुरुर्भवान् ॥ मेरुस्त्वं पर्वतेन्द्राणां देवर्षीणां च नारदः ॥ ५६ ॥ दानवानां भवान्दैत्यः प्रह्लादो भक्तवत्सलः ॥ सर्पाणामेव सर्वेषां भवान्वासुकिर्लज्जितः ॥ ५७ ॥ गुह्यकानां च सर्वेषां भवान्धनद एव च ॥ वरुणो यादसां राजा गङ्गा त्रिपथभागभवान् ॥ ५८ ॥

हो आप सब वेदोंमें प्रणव और छन्दोंमें गायत्री हो ॥ ५४ ॥ आप अक्षरोंमें अकार और वर्णोंके संश्रयमें स्फोट हो रुद्रोंमें मेरा रूप वसुओंमें आप अग्नि हो ॥ ५५ ॥ वृक्षोंकी जातिमें अश्वत्थ (पीपल) लोकगुरु ब्रह्मा आप हो तुम पर्वतोंमें मेरु और देवर्षियोंमें नारद हो ॥ ५६ ॥ दानवोंमें आप दैत्य और भक्तवत्सल प्रह्लाद हो सब सर्पोंमें आप वासुकी हो ॥ ५७ ॥ सब गुह्यकोंमें आप कुबेर हो जलोंके राजा आप वरुण हो त्रिपथगा आप

गंगा हो ॥ ५८ ॥ आप सर्वभूतोंकी आदि हो आपसे सब संसार होकर आपहीमें लय हो जाता है ॥ ५९ ॥ हे देव ! मैं और तुम सर्वगामी हैं. हे जनार्दन ! जो आप हो सो मैं हूं. हे जगत्पते ! शब्दार्थकी समान हममें तुममें भेद नहीं है ॥ ६० ॥ हे गोविंद ! लोकमें आपके जितने नाम हैं वेही मेरे नाम हैं इसमें संदेह नहीं ॥ ६१ ॥ हे जगन्नाथ ! आपकी उपासना मेरी हो. हे देवेश ! जो आपसे द्वेष करता है इसमें संदेह नहीं कि वह मुझसे द्वेष करता है ॥ ६२ ॥ हे देव ! जो तुम्हारा विस्तार है वही मैं भूतपति हूं. हे हरे ! ऐसी कोई वस्तु नहीं जो तुम्हारे बिना हो ॥ ६३ ॥ हे जगत्पते !

आदिस्त्वं सर्वभूतानां मध्यमन्तस्तथा भवान् ॥ त्वत्तः समभवद्विश्वं त्वयि सर्वं प्रलीयते ॥ ५९ ॥ अहं त्वं सर्वगो देव त्वमेवाहं जनार्दन ॥ आवयोरन्तरं नास्ति शब्दैरर्थैर्जगत्पते ॥ ६० ॥ नामानि तव गोविन्द यानि लोके महान्ति च ॥ तान्येव मम नामानि नात्र कार्या विचारणा ॥ ६१ ॥ त्वदुपासा जगन्नाथ सेवास्तु मम गोपते ॥ यश्च त्वां द्रष्टुं देवेश स मां द्रष्टुं न संशयः ॥ ६२ ॥ त्वद्विस्तारो यतो देव अहं भूतपतिस्ततः ॥ न तदस्ति विना देव यत्ते विरहितं हरे ॥ ६३ ॥ यदासीद्वर्तते यच्च यच्च भावि जगत्पते ॥ सर्वं त्वमेव देवेश विना किंचित्त्वया नहि ॥ ६४ ॥ स्तुवन्ति देवाः सततं भवन्तं स्वर्गुणैः प्रभो ॥ ऋक्च त्वं पञ्चुरेवासि सामासि सततं प्रभो ॥ ६५ ॥ किमुच्यते मया देव सर्वं त्वं भूतभावन ॥ नमः सर्वात्मना देव विष्णो माधव केशव ॥ ६६ ॥ नमस्करोमि सर्वात्मनमस्तेऽस्तु सदा हरे ॥ नमः पुष्करनाभाय वन्दे त्वामहर्माश्वर ॥ ६७ ॥ इति श्रीम० खि० इ० भविष्यर्षणि कैलासयात्रायां शिवकृतविष्णुस्तुतिर्नामाष्टाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८८ ॥

जो हो गया और जो होगा. हे देवेश ! वह सब कुछ तुमही हो तुम्हारे बिना कुछ नहीं है ॥ ६४ ॥ हे विष्णो ! आपके गुणोंके कारण देवता नित्य आपकी स्तुति करते हैं. हे प्रभो ! तुम ऋक् यजु तथा सामरूप हो ॥ ६५ ॥ हे भूतभावन ! मैं क्या कहूं सब आपहीका रूप है. हे भूतभावन ! सर्वात्मा केशव माधव आपको नमस्कार है ॥ ६६ ॥ हे सर्वात्मन् ! हे हरे ! मैं आपको सदा नमस्कार करता हूं पृष्करनाम्नाम ईश्वररूप आपके लिये नमस्कार है ॥ ६७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यर्षणि भाषायां कैलासयात्रायां शिवकृतविष्णुस्तुतिर्नामाष्टाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८८ ॥

वैशंपायन बोले, देवदेवेशके प्रति इस प्रकार कहकर फिर शिवजी मुनियोंसे कहने लगे. हे विप्रो ! जो भक्त देसनेको आये हैं वे इस प्रकार जाने ॥ १ ॥ यही परम वस्तु है इससे परे और कुछ नहीं है तुम इसीको जानो कारण कि यही परंपर है ॥ २ ॥ हे विप्रो ! इसीका निरन्तर मनमें ध्यान करना चाहिये, यही तुम्हारा परम भेष और यही तुम्हारा परम धन है ॥ ३ ॥ यही तुम्हारे जन्मका कृत्य और यही तुम्हारे तपका फल है यही तुम्हारा पुण्यस्थान और यही सनातन धर्म है ॥ ४ ॥ यही मोक्षदाता और यही मार्ग यही पुण्यदाता और यही साक्षात् कर्मोंका फल है ॥ ५ ॥ इसीको विद्वान् ब्रह्मवादी

वैशम्पायन उवाच ॥ इत्युक्त्वा देवदेवेशं मुनीनाह पुनः शिवः ॥ एवं जानीत हे विप्रा ये भक्ता द्रष्टुमागताः ॥ १ ॥ एतदेव परं वस्तु नैकस्मात्परमस्ति वः ॥ एतदेव विजानीध्वमेतद्रः परमं तपः ॥ २ ॥ एतदेव सदा विप्रा ध्येयं सततमानसैः ॥ एतद्रः परमं श्रेय एतद्रः परमं धनम् ॥ ३ ॥ एतद्रो जन्मनः कृत्यमेतद्रस्तपसः फलम् ॥ एष वः पुण्यनिलय एष धर्मः सनातनः ॥ ४ ॥ एष वो मोक्षदाता च एष मार्ग उदाहृतः ॥ एष पुण्यप्रदः साक्षादेतद्रः कर्मणां फलम् ॥ ५ ॥ एतदेव प्रशंसन्ति विद्वांसो ब्रह्मवादिनः ॥ एष त्रयीगतिर्विप्राः प्राथ्यो ब्रह्मविदां सदा ॥ ६ ॥ एतदेव प्रशंसन्ति सांख्ययोगसमाश्रिताः ॥ एष ब्रह्मविदां मार्गः कथितो वेदवादिभिः ॥ ७ ॥ एवमेव विजानीत नात्र कार्या विचारणा ॥ हरिरेकः सदा ध्येयो भवद्भिः सत्त्वमास्थितैः ॥ ८ ॥ नान्यो जगति देवोऽस्ति विष्णोर्नारायणात्परः ॥ ओमित्येवं सदा विप्रा पठत ध्यात केशवम् ॥ ९ ॥ ततो निःश्रेयसप्राप्तिर्भविष्यति न संशयः ॥ एवं ध्यातो हरिः साक्षात्प्रसन्नो वो भविष्यति ॥ १० ॥

प्रशंसा करते हैं हे ब्राह्मणो ! यही कर्मकाण्डसे प्रार्थनीय यही सदा ब्रह्मज्ञानियोंसे प्रार्थनीय है ॥ ६ ॥ सांख्ययोगके आश्रित पुरुष इसीकी प्रशंसा करते हैं वेदवादियोंने कहा है यही ब्रह्मज्ञानियोंका मार्ग है ॥ ७ ॥ इसीको जानना चाहिये और विचार करनेकी आवश्यकता नहीं सतोयुगमें आश्रित हुए तुमको एक नारायणकाही सदा ध्यान करना चाहिये ॥ ८ ॥ विष्णु नारायणसे अधिक जगत्में कोई और देवता नहीं है. हे विप्रो ! ॐ इस प्रकार उच्चारण कर सदा केशवका ध्यान और पाठ करो ॥ ९ ॥ इसमें सन्देह नहीं तब आपको मंगलकी प्राप्ति होगी इस प्रकार ध्यान करनेसे साक्षात् हरि

तुमपर प्रसन्न होने ॥ १० ॥ यह हरि निश्चय संसारका बंधन छुटानेवाले हैं जो आप अच्युतके प्राप्त होनेकी इच्छा करते हो तो सदा अच्युतका ध्यान करो ॥ ११ ॥ यह गुरु संसाररोगका नाश करेंगे तुम सदा विष्णुका स्मरण करो ब्रह्मादि तीन शरीर धारण करनेवालेका ध्यान करो ॥ १२ ॥ हे ब्राह्मणो ! सदा यत्नसे मनका संयमन करो, हे तपोधनो ! शुद्ध अन्तःकरण होनेसे विष्णु प्रसन्न होते हैं ॥ १३ ॥ मुझे सब यत्नसे ध्यान करकेही केशवको जानोगे मैं सदा उपास्य हूं इन हरिमें सदा मेरा ध्यान करो ॥ १४ ॥ यह उपाय जो मैंने कहा है इसमें संदेह नहीं है यही मायापति हैं, हे

भवनाशमयं देवः करिष्यति दृढं हरिः ॥ सदा ध्यात हरिं विप्रा यदीच्छा प्राप्तुमच्युतम् ॥ ११ ॥ एष संसारविभवं विनाशयति वो गुरुः ॥ स्मरध्वं सततं विष्णुं पठध्वं त्रिशरीरिणम् ॥ १२ ॥ मनःसंयमनं विप्राः कुरुध्वं यत्नतः सदा ॥ शुद्धेऽन्तःकरणे विष्णुः प्रसीदति तपोधनाः ॥ १३ ॥ ध्यात्वा म मर्वशब्दे ततो जानीत केशवम् ॥ उपास्योऽहं सदा विप्रा उपास्योऽस्मिन् हरो स्मृतः ॥ १४ ॥ उपायोऽयं मया प्रोक्तो नात्र संदेह इत्यपि ॥ अयं मायी सदा विप्रा यतध्वमवनाशने ॥ १५ ॥ यथा वो बुद्धिरासिला शुद्धा भवति यत्नतः ॥ तथा कुरुत विप्रेन्द्रा यथा देवः प्रसीदति ॥ १६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमुक्तास्ततः सर्वे मुनयः पुण्यशीलिनः ॥ यथावदुपगृह्णाना निरसन् संशयं नृप ॥ १७ ॥ एवमेवेति तं विप्राः प्राहुः प्राञ्जलयो हरम् ॥ छिन्नो नः संशयः सर्वो मृहीतोऽर्थः स तादृशः ॥ १८ ॥ एतदर्थं समायाता वयमद्य तवालयम् ॥ संगमाद्युवयोः सर्वो नष्टो मोहो महानिह ॥ १९ ॥

विप्रा ! पापनाशके निमित्त तुम सदा इनका जप करो ॥ १५ ॥ जिससे तुम्हारी सम्पूर्ण बुद्धि शुद्ध हो जाय, हे विप्रेन्द्रो ! वही करो जिससे यह देव प्रसन्न हो जाय ॥ १६ ॥ वैशम्पायन बोले, जब इस प्रकारसे कहे गये तब वे पुण्यशाली मुनि संदेहरहित हो यथायोग्य सत्कार करने लगे ॥ १७ ॥ आपका कहना ऐसेही है इस प्रकारसे हाथ जोड़ शंकरसे कहने लगे हमारा सन्देह सब दूर हुआ आपका अर्थ ग्रहण किया ॥ १८ ॥ इसी निमित्त

हम आपके स्थानमें आये थे आप दोनोंके संगमसे हमारा मोह नष्ट हो गया है ॥ १९ ॥ हे देवेश ! आप जैसा कहते हो उसीसे हमारा परम मंगल होना जैसे भगवान् रुद्रने कहा है. उसीके अनुसार नारायणमें यत्न करेंगे इस प्रकार वे मुनि प्रसन्न हो, केशवको प्रणाम करने लगे ॥ २० ॥ इति श्रीम० खिलेषु ह० भविष्यपर्वणि भा० कैलासयात्रायां नवाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८९ ॥ वैशम्पायन बोले, तब भगवान् रुद्र सबको विस्मय कराते हुए विश्वेश्वर हरिकी स्तुति करने लगे वह अर्थवाली स्तुति मुनिजनोंके श्रवण करते होने लगी ॥ १ ॥ महेश्वर बोले, वासुदेव बुद्धिमान् आपके निमित्त

यथा वदसि देवेश तथा नः श्रेयसे परम् ॥ यथाह भगवान् रुद्रो यतामः सततं हरौ ॥ इति ते मुनयः प्रीताः प्रणेमुः केशवं हरिम् ॥ २० ॥ इति श्रीम० खिलेषु ह० भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां नवाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः स भगवान् रुद्रः सर्वान्विस्मापयन्निव ॥ स्तुत्या प्रचक्रमे स्तौतुं विष्णुं विश्वेश्वरं हरिम् ॥ अर्थोभिस्तु तदा वाग्भिर्मुनीनां शृण्वतां तथा ॥ १ ॥ महेश्वर उवाच ॥ नमो भगवते तुभ्यं वासुदेवाय धीमते ॥ यस्य भासा जगत्सर्वं भासते नित्यमच्युत ॥ २ ॥ नमो भगवते देव नित्यं सूर्यात्मने नमः ॥ यः शीतयति शीतांशुलोकान् सर्वानिमान्विभुः ॥ ३ ॥ नमस्ते विष्णवे देव नित्यं सोमात्मने नमः ॥ यः प्रजाः प्रीणयत्येको विश्वात्मा भूतभावनः ॥ ४ ॥ नमः सर्वात्मने देव नमो वागात्मने हरे ॥ यो दधार करेणासौ कुशचीरादि यत्सदा ॥ ५ ॥ दधार वेदान् सर्वाश्च तुभ्यं ब्रह्मात्मने नमः ॥ सर्वान्संहारते यस्तु संहारे विश्वदृक् सदा ॥ ६ ॥

नमस्कार है जिनकी कान्तिसे सब जगत् भासमान होता है. हे अच्युत ! आपको नमस्कार है ॥ २ ॥ भगवान् देव नित्य सूर्यात्माके निमित्त नमस्कार है जो विश्व चंद्रमा इन सब लोकोंको शीतल करता है ॥ ३ ॥ हे विष्णु ! उस सोमात्माको हम नित्य नमस्कार करते हैं जो भूतभावन विश्वात्मा प्रजाको प्रसन्न करता है ॥ ४ ॥ उस सर्वात्मा वागात्मा देवके अर्थ नमस्कार है जो सदा हाथमें कुश चीरादि धारण करते हैं ॥ ५ ॥ तथा सब वेदोंको धारण करनेवाले ब्रह्मात्माको नमस्कार है, जो सबके संहारकर्त्ता संहाररूप विश्वदृक् हैं ॥ ६ ॥

आपही क्रोधात्मा विरूप हो रुद्रात्मा आपके निमित्त नमस्कार है आप सृष्टिमें सबके स्रष्टा और प्राणियोंके प्राण देनेवाले हो ॥ ७ ॥ आप अज विष्णु हो विश्वके सृजनेवाले आपको नमस्कार है, आदिप्रकृतिके मूलभूतोंको उत्पन्न करनेवाले ॥ ८ ॥ देवदेवेश प्रधानपुरुषके निमित्त नमस्कार है आप पृथ्वीमें गन्धरूपसे, प्राणियोंमें प्राणरूपसे स्थित हो ॥ ९ ॥ दृढ दृढरूप गंधात्मा आपको नमस्कार है, सर्वत्र प्राणियोंके मुख देनेवाले रसरूप आपको नमस्कार है ॥ १० ॥ विश्वरूप रसरूपके निमित्त नमस्कार है, तेजमें सूर्यरूप और आपही प्राणियोंपर दया करने-

क्रोधात्मासि विरूपोऽसि तुभ्यं रुद्रात्मने नमः ॥ सृष्टौ स्रष्टा समस्तानां प्राणिनां प्राणदायिने ॥ ७ ॥ अजाय विष्णवे तुभ्यं स्रष्ट्रे विश्वसृजे नमः ॥ आदौ प्रकृतिमूलाय भूतानां प्रभवाय च ॥ ८ ॥ नमस्ते देवदेवेश प्रधानाय नमो नमः ॥ पृथिव्यां गन्धरूपेण संस्थितः प्राणिनां हरे ॥ ९ ॥ दृढाय दृढरूपाय तुभ्यं गन्धात्मने नमः ॥ अपां रसाय सर्वत्र प्राणिनां सुखहेतवे ॥ १० ॥ नमस्ते विश्वरूपाय रसाय च नमो नमः ॥ तेजसा भास्करो यस्तु घृणो जन्तुहितः सदा ॥ ११ ॥ तस्मै देव जगन्नाथ नमो भास्क-
ररूपिणे ॥ वायोः स्पर्शगुणो यत्र शीतोष्णसुखदुःखदः ॥ १२ ॥ नमस्ते वायुरूपाय नमः स्पर्शात्मने हरे ॥ आकाशेऽवस्थितः शब्दः सर्वश्रोत्रनिवेशनः ॥ १३ ॥ नमस्ते भगवन्निष्णो तुभ्यं सर्वात्मने नमः ॥ यो धार जगत्सर्वं मायामानुषदेहवान् ॥ १४ ॥ नमस्तुभ्यं जगन्नाथ मायिनेऽप्रायदायिने ॥ नम आद्याय बीजाय निर्गुणाय गुणात्मने ॥ १५ ॥ अचिन्त्याय सुचिन्त्याय तस्मै चिन्त्यात्मने नमः ॥ हराय हरिरूपाय ब्रह्मणे ब्रह्मदायिने ॥ १६ ॥

वाल हो ॥ ११ ॥ भास्कररूप देव जगन्नाथके वास्ते नमस्कार है जहां वायु स्पर्शगुणवाला शीतोष्ण सुखदुःख देनेवाला है ॥ १२ ॥ वायुरूप स्पर्शात्मा हरिके निमित्त नमस्कार है आकाशमें सबकी श्रोत्रक्रिया प्रवृत्त करनेवाला शब्द स्थित है ॥ १३ ॥ हे विष्णु भगवन् ! सर्वात्मारूप आपको नमस्कार है, जो मायासे मनुष्यदेह धारण करके जो सम्पूर्ण जगत्को धारण करता है ॥ १४ ॥ आप मायि जगन्नाथ अमायि देनेवालेके निमित्त नमस्कार है, आदिबीज निर्गुण गुणात्माके निमित्त नमस्कार है ॥ १५ ॥ अचिन्त्य सुचिन्त्य चिन्त्यात्माके निमित्त नमस्कार है हरहररूप ब्रह्म देव-

दाताके अर्थ नमस्कार ॥ १६ ॥ ब्रह्मवित् ब्रह्म ब्रह्मात्मा आपके निमित्त नमस्कार है सहस्रशिर सहस्रकिरणवालेके वास्ते नमस्कार है ॥ १७ ॥ सहस्र-
मुख सहस्रनेत्र विश्व विश्वरूप विश्वके कर्ताके निमित्त नमस्कार है ॥ १८ ॥ विश्ववक्त्र भूतावास आपके निमित्त नमस्कार है हे हरे । इन्द्रिय इन्द्ररूप
विषय आपको नमस्कार है ॥ १९ ॥ अश्वशिरसू वेदाभरणरूप आपके निमित्त नमस्कार है अग्नि अग्निरति ज्योतिषोंके पति आपको नमस्कार है ॥ २० ॥
सूर्य सूर्यपुत्र तेजोंके पति आपको नमस्कार है सोम सौम्य शीतात्मा आपके निमित्त नमस्कार है ॥ २१ ॥ यज्ञ इज्य हवि हव्य संस्कृत सुव पात्र यज्ञांग

नमो ब्रह्मविदे तुभ्यं ब्रह्मब्रह्मात्मने नमः ॥ नमः सहस्रशिरसे सहस्रकिर्णाय च ॥ १७ ॥ नमः सहस्रवक्त्राय सहस्रनयनाय च ॥
विश्वाय विश्वरूपाय विश्वकर्त्रे नमो नमः ॥ १८ ॥ विश्ववक्त्रे नमो नित्यं भूतावास नमो नमः ॥ इन्द्रियायेन्द्ररूपाय विषयाय सदा
हरे ॥ १९ ॥ नमोऽश्वशिरसे तुभ्यं वेदाभरणरूपिणे ॥ अग्नयेऽग्निरति तुभ्यं ज्योतिषां पतये नमः ॥ २० ॥ सूर्याय सूर्यपुत्राय
तेजसां पतये नमः ॥ नमः सोमाय सौम्याय नमः शीतात्मने हरे ॥ २१ ॥ नमो यज्ञाय इज्याय हविषे हव्यसंस्कृते ॥ नमः सुवाय
पात्राय यज्ञाङ्गाय पराय च ॥ २२ ॥ नमः प्रणवदेहाय क्षरायाप्यक्षराय च ॥ वेदाय वेदरूपाय शस्त्रिणे शस्त्ररूपिणे ॥ २३ ॥ गद्दिने
खड्गिने तुभ्यं शङ्खिने चक्रिणे नमः ॥ शूलिने चर्मिणे नित्यं वरदाय नमो नमः ॥ २४ ॥ बुद्धिप्रियाय बुद्धाय प्रबुद्धाय सुखाय च ॥
हरये विष्णवे तुभ्यं नमः सर्वात्मने गुरो ॥ २५ ॥ नमस्ते सर्वलोकेश सर्वकर्त्रे नमो नमः ॥ नमः स्वभावशुद्धाय नमस्ते यज्ञ-
सूकर ॥ २६ ॥ नमो विष्णो नमो विष्णो नमो विष्णो नमो हरे ॥ नमस्ते वासुदेवाय वासुदेवाय धीमते ॥ २७ ॥

पर आपके निमित्त नमस्कार है ॥ २२ ॥ प्रणव देह क्षर अक्षर वेद वेदरूप शस्त्री शस्त्ररूपी आपके निमित्त नमस्कार है ॥ २३ ॥ गदा खड्ग शंख चक्र
शूल चर्मचारी वरदात्मा नित्य आपको नमस्कार है ॥ २४ ॥ बुद्धिप्रिय बुद्ध प्रबुद्ध सुख हरि विष्णु सर्वात्मा गुः आपको नमस्कार है ॥ २५ ॥ सर्व-
लोकेश सबके कर्ता आपको नमस्कार है, स्वभावशुद्ध यज्ञवाराहके निमित्त नमस्कार है ॥ २६ ॥ विष्णु विष्णु विष्णु हरिके वास्ते नमस्कार है वासुदेव

६. पं.
॥ २०८ ॥

वासुदेव बुद्धिमान् के निमित्त नमस्कार है ॥ २७ ॥ कृष्ण कृष्ण सर्वावास के निमित्त नमस्कार है. फिरभी आरक निमित्त नमस्कार है. हे जनार्दन !
आप लोककी पालना करो ॥ २८ ॥ इस प्रकार जगन्नाथ स्तुति कर मुनिश्रेष्ठोंसे कहने लगे इस स्तोत्रका पाठकर नित्य केशवकी निकटता करो ॥ २९ ॥
वह सब भूतोंके शरण्य हैं आपका मंगल विधान करेंगे और जो इस पापमोचन स्तोत्रको धारण करेंगे ॥ ३० ॥ उन पढ़ने सुननेवालोंपर हरि प्रसन्न
होंगे वह धर्मात्मा मंगल देंगे इसमें विचार करनेकी आवश्यकता नहीं ॥ ३१ ॥ भक्तवत्सल केशवको अवश्यही मनसे ध्यान करना चाहिये जो आप
नमः कृष्णाय कृष्णाय सर्वावास नमो नमः ॥ नमो भूयो नमस्तेऽस्तु पादि लोकान् जनार्दन ॥ २८ ॥ इति स्तुत्वा जगन्नाथमुवाच
मुनिसत्तमान् ॥ इदं स्तोत्रमधीयाना नित्यं व्रजत केशवम् ॥ २९ ॥ शरण्यं सर्वभूतानां तत्र श्रेयो विधास्यति ॥ ये चेमं धार-
यिष्यन्ति स्तवं पापविमोचनम् ॥ ३० ॥ तेषां प्रीतिः प्रसन्नात्मा पठतां शृण्वतां हरिः ॥ श्रेयो दास्यति धर्मात्मा नात्र कार्या
विचारणा ॥ ३१ ॥ अवश्यं मनसा ध्यात केशवं भक्तवत्सलम् ॥ श्रेयः प्राप्तुं यदीच्छन्ति भवन्तः शंसितव्रताः ॥ ३२ ॥ इत्युक्त्वा
भगवान् रुद्रस्तत्रैवान्तरधीयत ॥ सगणः शंकरः साक्षादुमया भूतभावनः ॥ ३३ ॥ नेमुस्तं मुनयः सर्वे परां निर्वृतिमाययुः ॥ तमेव
परमं तत्त्वं मत्वा नारायणं हरिम् ॥ विस्मयं मरमं गत्वा मेनिरे स्वकृतार्थताम् ॥ ३४ ॥ लोकपालास्तदा विष्णुं नमस्कृत्य हरिं
मुदा ॥ जग्मुः स्वान्यथ वेदमानि गणैः सर्वैर्नृपोत्तम ॥ ३५ ॥ आरुह्य भगवान्विष्णुर्गुरुडं पक्षिपुङ्गवम् ॥ शङ्खी चक्री गद्दी खड्गी
शार्ङ्गी तूणी तनुव्रवान् ॥ ३६ ॥ यथागतं जगन्नाथो ययौ वदरिकामनु ॥ सायाह्ने पुण्डरीकाक्षोऽनित्यं मुनिनिषेविताम् ॥ ३७ ॥
शंसितव्रतवाले मंगलकी इच्छा करते हो तौ ॥ ३२ ॥ यह कह भगवान् रुद्र वहांही अन्तर्धान हो गये, गण और उमाके सहित जब भूतात्मा अन्तर्धान
हुए ॥ ३३ ॥ तब मुनि उनको नमस्कार कर परमनिवृत्तिको प्राप्त हुए उन नारायण हरिको परमतत्त्व मानकर परम विस्मयको प्राप्त हो अपनेको कृतार्थ
मानते हुए ॥ ३४ ॥ और लोकपालभी प्रेमसे हरि विष्णुको नमस्कार करके हे राजन् ! अपने समूहोंके सहित अपने २ स्थानको गये ॥ ३५ ॥ और
भगवान् विष्णुभी पक्षिश्रेष्ठ गरुडके ऊपर चढ़कर शंख चक्र गदा खड्ग शार्ङ्ग धनुष लिये तरकस धारण किये ॥ ३६ ॥ वदरिकाश्वको वथानाति गये

म. वि.

॥ २०८ ॥

॥ २०८ ॥

और वह पुण्डरीकाक्ष संध्याके समय नित्य मुनिजनोंसे सेवित स्थानको प्राप्त हो ॥ ३७ ॥ वहां जाकर नम्र हुए हरि मुनियोंसे आर्चित हो आसनपर सुखसे स्थित हुए ॥ ३८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां नवतितमोऽध्यायः ॥ ९० ॥ वैशंपायन बोले, इसी समय राजोंमें बली पौंड्रराजा बली प्रराक्रमसम्पन्न योधा ॥ १ ॥ सदा वृष्णिवंशियोंका शत्रु कृष्णसे द्वेष करनेवाला, बलसे सब राजोंको बुलाकर सभामें इस प्रकारके वचन कहने लगा ॥ २ ॥ हमने सब पृथ्वी और सब राजोंको जीत लिया है परन्तु कृष्णके आश्रित हो सब वृष्णिवंशी बड़े गर्वित हो रहे

तत्र गत्वा यथायोगं विनम्य हरिरीश्वरः ॥ अर्चितो मुनिभिः सर्वैर्निवसाद् सुखासने ॥ ३८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां नवतितमोऽध्यायः ॥ ९० ॥ ६९ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ एतस्मिन्नेव काले तु पौण्ड्रो नृपवरोत्तमः ॥ बलवान्सत्त्वसंपन्नो योद्धा विपुलविक्रमः ॥ १ ॥ वृष्णिशत्रुस्सदा राजा कृष्णद्वेषी बलात्तदा ॥ नृपान्सर्वान्समाहूय प्रोवाच नृपसंसदि ॥ २ ॥ जिता च पृथिवी सर्वा जिताश्च नृपसत्तमाः ॥ वृष्णयस्ते बलान्मत्ताः कृष्णमाश्रित्य गर्विताः ॥ ३ ॥ दास्यन्ति मे करं सर्वे नहि ते कृष्णसंश्रयात् ॥ स तु कृष्णश्चक्रबलान्मामवज्ञाय तिष्ठति ॥ ४ ॥ अहं चक्रीति गर्वोऽभूत्तस्य गोपस्य सर्वदा ॥ शङ्की चक्री गदी शार्ङ्गी शरी तूणी सहायवान् ॥ ५ ॥ एवमादिर्महागर्वस्तस्य संप्रति वर्तते ॥ लोके च मम यन्नाम वासुदेवेति विश्रुतम् ॥ ६ ॥ अगृह्णाम तन्नाम गोप्ते मदबलान्वितः ॥ तस्य चक्रस्य यच्चक्रं ममापि निश्चितं महत् ॥ ७ ॥ गर्वइन्तु सदा तस्य नाम्ना चापि सुदर्शनम् ॥ सहस्रारं महाघोरं तस्य चक्रस्य नाशनम् ॥ ८ ॥ अनेकमहत् चक्रं गोपजस्य नृपोत्तमाः ॥ ममाप्येतदनुर्दिव्यं शार्ङ्गनाम महारवम् ॥ ९ ॥

हैं ॥ ३ ॥ मुझे सब कर देते हैं परन्तु वे कृष्णके आश्रयसे कर नहीं देते हैं, वह कृष्ण चक्रके बलसे मेरी अवज्ञा करके स्थित हुआ है ॥ ४ ॥ मैं चक्रधारी हूं यह गर्व सदा उस गोपको रहता है, शंख चक्र गदा शार्ङ्ग धनुष सदा धारण किये रहता है ॥ ५ ॥ इत्यादि औरभी उसको अनेक प्रकारसे गर्व है और लोकमें जो मेरा नाम वासुदेव है ॥ ६ ॥ सो बलसे मत्त हो उसने वह मेरा नाम ग्रहण कर लिया है उसके चक्रसे मेरा चक्र बहुत तीक्ष्ण है ॥ ७ ॥ सुदर्शन चक्र जो मेरा है वह सदा उसके सहस्र आरेवाले महाघोर चक्रका नाशक है ॥ ८ ॥ हे राजोंमें श्रेष्ठ ! उस गोपका चक्र मेरे चक्रसे

हत होनेके योग्य है; और बड़े शब्दवाला शार्ङ्ग नाम धनुष मेरे पासभी है ॥ ९ ॥ तथा कौमोदकी नाम दृढ गदा मेरे पास है जो सहस्र धारवाले काला यस्त्र लोहकी निर्मित है ॥ १० ॥ इस प्रकार नन्दक नाम महादृढ खड्ग मेरे पास रहता है यह कालकामी काल खड्ग कृष्णके खड्ग का नाशक है ॥ ११ ॥ हे राजो ! सो यह गदा खड्ग चक्र तरकसधारी कृष्ण युद्धमें जीतने योग्य है इसमें विचार करना नहीं ॥ १२ ॥ हे राजो ! नित्यही मुझको गदा चक्र

गदा कौमोदकी नाम ममेयं बृहती दृढा ॥ कालायस्त्रसहस्रस्य भारेण सुकृता मया ॥ १० ॥ खड्गो नन्दकनापासो ममायं त्रिपुलो दृढः ॥ अन्तकस्यान्तको घोरस्तस्य खड्गस्य नाशकः ॥ ११ ॥ तत्रायं च गदी खड्गी शंखी चक्रो तनुवान् ॥ युधि जेता च कृष्णस्य नात्र कार्या विचारणा ॥ १२ ॥ मां संभूत नृपाश्चैव गदिनं चक्रिणं तथा ॥ शङ्खिनं शार्ङ्गिणं वीरं ब्रूत नित्यं नृपोत्तमाः ॥ १३ ॥ वासुदेवेति मां ब्रूत न तु गोपं यदूतमम् ॥ एकोऽहं वासुदेवो हि हत्वा तं गोपदारकम् ॥ १४ ॥ सख्युर्मम बलाद्धन्ता नरकस्य महात्मनः ॥ मां तथा यदि न ब्रूत दण्ड्या भारशतेः शतम् ॥ १५ ॥ सुवर्णस्य च निष्कस्य धान्यस्य बहुशस्तदा ॥ तथा ब्रुवति राजेन्द्रे मनसा दुस्सहं यथा ॥ १६ ॥ केचिल्लजासमायुक्ता आसंस्ते बलवत्तराः ॥ रसज्ञा बलवीर्यस्य राजानस्ते सदा नृप ॥ १७ ॥

शार्ङ्ग शंखधारी वीर कहा करो ॥ १३ ॥ मुझको वासुदेव कहो उस यदुकुलोत्पन्नको नहीं एकही मैं वासुदेव हूं उस गोपके बालकको मारकर प्रसन्न हुंगा ॥ १४ ॥ कारण कि उसने मेरे सखा नरकासुरको मारा है और जो मुझे वासुदेव नहीं कहेगा उससे सौ मार सुवर्ण दण्ड लिया जायगा ॥ १५ ॥ अनेक सुवर्णके निष्क और बहुत धान्य दण्ड लिया जायगा राजाके मनसे दुस्सह यह बात कहनेपर ॥ १६ ॥ कोई बली राजा लज्जित हो वहां

बैठे रहे, वे तदा उस राजाके बलनीर्षके ज्ञाता थे ॥ १७ ॥ और दूसरे राजा सत्य है ऐसे है इस प्रकार कहने लगे, कोई बलमयसे युक्त हो बोले, हम केशवको रणमें जीतेने ॥ १८ ॥ इति श्रीम० खिलेषु ह० भविष्यपर्वणि भाषायां पौंड्रकोक्तावेकनवतितमोऽध्यायः ॥ ११ ॥ वैशम्पायन बोले उस समय सर्वलोकके जाननेवाले मुनिश्रेष्ठ नारदजी कैलासके शिखरसे उतर कर पौंड्रकके नगरको चले ॥ १ ॥ आकाशमार्गसे चल राजाके उत्तम नगरमें आये और द्वारपालसे आज्ञा पाकर राजाके घरमें प्रविष्ट हुए ॥ २ ॥ वहां महामुनिने राजासे अर्घ्य पाद्य आदि सत्कार प्राप्त किया और

अपरे तु नृपा राजन्नेवमेवेति चुकुशुः ॥ अन्ये बलमदोत्सिता जेष्यामः केशवं रणे ॥ १८ ॥ इति श्रीम० खिलेषु ह० भ० पौण्ड्र-
कोक्तावेकनवतितमोऽध्यायः ॥ ११ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः कैलासशिखराग्निरगतो मुनिसत्तमः ॥ नारदः सर्वलोकज्ञः
पौण्ड्रस्य नगरं प्रति ॥ १ ॥ अर्वातीयं नभोभागात्प्रत्यागम्य नरोत्तमम् ॥ द्वाःस्थेन च समाज्ञप्तः प्रविवेश गृहोत्तमम् ॥ २ ॥
अर्घादिसमुदाचारं नृपाल्लब्ध्वा महामुनिः ॥ निषसादासने शुभ्रे ह्यास्तृते शुभवाससा ॥ ३ ॥ कुशलं पृष्ठवान्भूयो नृपः स मुनिसत्तमम् ॥
उवाच नारदं भूयः पौण्ड्रको बलगर्वितः ॥ ४ ॥ भवान्सर्वत्र कुशलः सर्वकार्येषु षण्डितः ॥ प्रथितो देवसिद्धेषु गन्धर्वेषु महात्मसु ॥ ५ ॥
सर्वत्रगो निराबाधो गन्ता सर्वत्र सर्वदा ॥ अगम्यं तव विप्रेन्द्र ब्रह्माण्डे नहि किञ्चन ॥ ६ ॥ नारदेदं वद त्वं हि यत्र यत्र गतो भवान् ॥
तत्र तत्र तपःसिद्धो लोके प्रथितवीर्यवान् ॥ पौण्ड्र एव च विख्यातो वासुदेवेति शब्दितः ॥ ७ ॥

सुन्दर वस्त्र बिछे आसनपर विराजमान हुए ॥ ३ ॥ तब राजाने मुनिराजसे कुशल पूछी नारदजीसे पौंड्रकने कहा ॥ ४ ॥ आप सर्वत्र कुशल और सब कार्यमें षण्डित हो देव सिद्ध महात्मा गन्धर्वोंमें प्रसिद्ध हो ॥ ५ ॥ आप सर्वत्र बाधा रहित होकर गमन कर सकते हैं, हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! आपको ब्रह्माण्डमें कोई स्थान अगम्य नहीं है ॥ ६ ॥ हे नारदजी ! कहिये आप जहां जहां गमन करते हो वहां वहां तपसिद्धिके लोक विख्यात हैं वहां वहां मैं पौंड्र वासुदेव नामसे विख्यात हूं ॥ ७ ॥

शंख चक्र गदा शार्ङ्ग खड्ग तरकस धारण किये राजसिंहोंका जीतनेवाला सदा सबका दाता हूं ॥ ८ ॥ सब राज्यका भोक्ता बलसे राजोंका शासन करने-
वाला महाबली हूं, शत्रुकी सेनाको अजेय और अपने जनोंकी रक्षा करता हूं ॥ ९ ॥ और जो यह गोप कृष्ण वासुदेव कहाता है उस मेरे नाम धारण
करनेवालेमें इतना वीर्य नहीं है ॥ १० ॥ वह गोप बालकपनकी चंचलतासे वृथा मेरा नाम धारण करता है. हे विप्रेन्द्र ! ऐसा निश्चय कहो कि मैंही
एक स्थित रहूं ॥ ११ ॥ इस जगत्में उस बलिष्ठ यदुको जीतकर मैंही वासुदेव कहाऊं और बलसे सब वृष्णियोंको मार उस पुरीको नष्ट करूंगा ॥ १२ ॥

शङ्खी चक्री गदी शार्ङ्गी खड्गी तूणी तनुत्रवान् ॥ विजेता राजसिंहानां दाता सर्वस्य सर्वदा ॥ ८ ॥ भोक्ता राज्यस्य सर्वस्य शास्ता
राजा बलाद्वली ॥ अजेयः शत्रुसेनानां रक्षिता स्वजनस्य ह ॥ ९ ॥ योऽद्य गोपकनामासौ वासुदेवेति शब्दितः ॥ तस्य वीर्यकले न
स्तो नाम्नोऽस्य मम धारणे ॥ १० ॥ स हि गोपो वृथा बाल्यादारयत्येव नाम मे ॥ इदं निश्चिनु विप्रेन्द्र एक एव भवाम्यहम् ॥ ११ ॥
वासुदेवो जगत्यस्मिन्निजित्य बलिष्ठ यदुम् ॥ वृष्णीन्सर्वान्बलात् क्षित्वा निहनिष्ये च तां पुरीम् ॥ १२ ॥ द्वारकां विष्णुनिलयां
योद्धा चाहं महामते ॥ एते च बलिनः सर्वे नृपा मम समागताः ॥ १३ ॥ अथाश्व वेगिनः सन्ति रथा वायुजवा मम ॥ नानामन्त्राः
सहस्रं च गजा नियुतमेव च ॥ १४ ॥ एतेनाहं बलेनाजो हनिष्ये केशवं रणे ॥ तस्मादेवं सदा विप्र वद ब्रह्मपुरे मम ॥ १५ ॥
इन्द्रस्यापि सदा विप्र वद नारद साम्प्रतम् ॥ प्रार्थनेषां मम विभो नमस्ये त्वां तपोधन ॥ १६ ॥ नारद उवाच ॥ सर्वत्रगः सदा
चास्मि यावद्ब्रह्माण्डसांस्थितिः ॥ आचार्यः सर्वकार्येषु गमने केनचिन्नृष ॥ १७ ॥

उस विष्णुकी स्थानकी द्वारकामें जाकर युद्ध करूंगा और यह सब बली राजा मेरी सहायताको आये हैं ॥ १३ ॥ वेगवाले घोड़े और वायुवेगकी
समान वेगवाली मेरे रथ हैं अनेक मंत्र सहस्रों और नियुत (लक्ष) हाथी मेरे यहां विद्यमान हैं ॥ १४ ॥ इस बली सेनासे रणमें केशवको मैं मारूंगा
हे ब्रह्मन् ! इस कारणसे हमारे आगे कहिये ॥ १५ ॥ इन्द्रकामी क्या ऐश्वर्य है. हे नारदजी ! सो आप कहिये. हे विप्र ! हे तपोधन ! यह मेरी
प्रार्थना है आपको नमस्कार करता हूं ॥ १६ ॥ नारदजी बोले, जहांतक ब्रह्माण्डकी स्थिति है मैं वहांतक सब जगह जा सकता हूं सब स्थानमें

गमन करनेवालोंमें मुझे आचार्य जानिये ॥ १७ ॥ परन्तु हे राजन् ! चक्रपाणि जनार्दन देवके पृथ्वी शासन करनेपर किस प्रकार तुम ऐसे वचन कहनेका साहस करते हो ॥ १८ ॥ सर्वत्रगामी विष्णु देव बंधुओंसहित दुष्टोंको मारकर स्थित है इन हरिके स्थित होनेमें वासुदेव नाम किसमें स्थित हो सकता है ॥ १९ ॥ सूर्यके प्रकाश पर्यन्त पृथ्वीके पालन करनेवाले श्रीकृष्णके होते मूढ़ और प्राकृत जनके सिवाय ऐसा कौन कह सकता है ॥ २० ॥ सर्वत्रगामी विष्णु तेरा दर्प चूर्ण करेंगे वह शार्ङ्गधनुष गदा धारण करनेवाले विष्णु अचिन्त्य प्रभाववाले हैं ॥ २१ ॥ वह आदिदेव पुराणात्मा तेरा दर्प चूर्ण

किन्तु वक्तुं तथा राजन् तस्ये नृपसत्तम ॥ महीं शासति देवेशे चक्रपाणौ जनार्दने ॥ १८ ॥ विष्णौ सर्वत्रगे देवे दुष्टान् हत्वा सबान्धवान् ॥ वासुदेवेति को नाम तिष्ठत्यस्मिन् हराविति ॥ १९ ॥ को नाम वक्तुमेवेदं कृष्णे शासति गोमती ॥ अज्ञानाद्रक्तुमेवं च समर्थाः प्राकृता जनाः ॥ २० ॥ हरिः सर्वत्रगो विष्णुर्दर्पं ते व्यपनेष्यति ॥ अचिन्त्यविभवो विष्णुः शार्ङ्गधन्वा गदाधरः ॥ २१ ॥ आदिदेवः पुराणात्मा दर्पं ते व्यपनेष्यति ॥ हास्यमेतन्महाराज यच्च वै तत्र संस्थितम् ॥ २२ ॥ शार्ङ्गं खड्गं तथा राजन्महाघोरं न दाप्यते ॥ अतीव हासकालोऽयं तव सम्प्रति वर्तते ॥ २३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पौण्ड्रकनारदसंवादे द्विनवातितमोऽध्यायः ॥ ९२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः क्रुद्धो महाराज पौण्ड्रो मदनलान्वितः ॥ नारदं विप्रवर्यं तं प्रोवाच नृपसंसादि ॥ १ ॥ किमिदं प्राह विप्रर्षे राजाहं च द्विजैः सह ॥ गच्छ त्वं काममथवा मुने शापप्रदः सदा ॥ २ ॥ भीतस्त्वत्तो महाबुद्धे गच्छ त्वं काममद्य हि ॥ इत्युक्तो नृपवर्येण तृष्णीमेव स नास्दः ॥ ३ ॥

करेंगे, हे महाराज ! इसी बातकी तुम इच्छा करने हो यह हास्यकी बात है ॥ २२ ॥ उनका महाघोर शार्ङ्ग धनुष और खड्ग तुम्हारे धनुषसे न टूटेगा यह तुम्हारी बातें बड़ी हास्यकी है ॥ २३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पौण्ड्रकनारदसंवादे द्विनवातितमोऽध्यायः ॥ ९२ ॥ वैशम्पायन बोले, तब मदके बलसे क्रोधित हो पौंड्रक राजा राजसभामें नारदजीसे कहने लगा ॥ १ ॥ हे विप्रर्षे ! यह तुम क्या कहते हो मैं ब्राह्मणोंके सहित राजा हूं हे मुने ! आप शाप देनेवाले हो यथेच्छ गमन कीजिये ॥ २ ॥ हे महाबुद्धे ! मुझे आपसे भय है आप अभी गमन

कीजिये ज्यों राजाने ऐसा कहा तब नारदजी मौन धारण किये ॥ ३ ॥ आकाशमार्गसे केशवके निकट गये वह विष्णुके निकट जाकर विष्णुसे सब वर्णन करते हुए ॥ ४ ॥ उन यथेष्ट कहनेवालेसे विष्णु भगवान् कहने लगे, हे द्विजश्रेष्ठ ! प्रातःकालमें उसका अभिमान नष्ट करूंगा ॥ ५ ॥ ऐसा कह प्रभु बदरीकाश्रममें विरामको प्राप्त हुए तब वह महाबाहु पौण्ड्र बहुतसी सेना साथ लिये ॥ ६ ॥ अनेक सहस्र घोड़े और बहुतसे हाथियोंसे युक्त करोड़ों शस्त्रोंसे युक्त सत्यसंजर वह राजा ॥ ७ ॥ सहस्रों प्यादोंके साथ एकलव्यादि राजाओंसे सेवित ॥ ८ ॥ आठ सहस्र रथ दस सहस्र हाथी एक

जगामाकाहागमनो यत्र तिष्ठति केशवः ॥ स गत्वा विष्णुसंकाशं विष्णोः सर्वं शशंस ह ॥ ४ ॥ तच्छ्रुत्वा भगवान्विष्णुर्धथेष्टं वदतामिति ॥ दर्पं तस्यापनेष्यामि श्रोभृते द्विजसत्तम ॥ ५ ॥ इत्युक्त्वा विराममेव तस्मिन्बदरिकाश्रमे ॥ ततः पौण्ड्रे महाबाहुर्वलेर्बहुभिरिश्वरः ॥ ६ ॥ अश्वरेकसाहस्रैर्गर्जैर्बहुभिरन्वितः ॥ शस्त्रकोटिसमायुक्तः स राजा सत्यसंजरः ॥ ७ ॥ अनेकशतसाहस्रैः पत्तिभिश्च समन्वितः ॥ एकलव्यप्रभृतिभी राजभिश्च समन्ततः ॥ ८ ॥ अष्टौ रथसदृशाणि नामानामयुतं तथा ॥ अर्बुदं पत्तिसंघानां तद्वलं समपद्यत ॥ ९ ॥ एतेन च बलेनाजौ प्रस्फुरन्नुपसत्तमः ॥ विरराज महाराज उदयस्थो महारविः ॥ १० ॥ स ययौ मध्यरात्रेण नगरीं द्वारकामनु ॥ पत्तयो दीपिकाहस्ता राज्ञो तमसि दारुणे ॥ ११ ॥ ययुर्विविधशस्त्रोच्चान्संपतन्तो महाबलाः ॥ द्वारकां वीर्यसंपन्ना महाघोरां नृपोत्तमाः ॥ १२ ॥ रथं महान्तमारुह्य शस्त्रौघैश्च समावृतम् ॥ पट्टिशसिसमाकीर्णं गदापरिघसंकुलम् ॥ १३ ॥ शक्तितोमरसंकीर्णं ध्वजमालासमचितम् ॥ किङ्किणीजालसंयुक्तं शरासिप्राससंयुतम् ॥ १४ ॥

अर्बुद पैदल लेकर चला ॥ ९ ॥ इतनी सेना लिये संग्रामके निमित्त चलता हुआ राजा उदय हुए सूर्यकी समान विराजमान हुआ ॥ १० ॥ वह आधी रातके समय द्वारकापुरीको गया और उस अंधेरीरातमें पैदल मसाल लेकर चले ॥ ११ ॥ और वे महाबली अनेक शस्त्र लिये चले वे श्रेष्ठ राजा महाघोर वीर्यसम्पन्न द्वारकापुरीको ॥ १२ ॥ बड़े बड़े रथोंमें बैठे शस्त्रसमूह लिये पट्टिश तलवार गदा परिघ लेकर घेरते हुए ॥ १३ ॥ शक्तितोमरसे संकीर्ण ध्वजमालासे युक्त किङ्किणीजाल और शर तलवार प्राससे संयुक्त ॥ १४ ॥

महाघोर महारौद्र प्रलयके मेघकी समान धनु गदासे युक्त महाबाह्यकी समान बडी ॥ १५ ॥ अग्नि सूर्यके समान आकारवाली सेना द्वारकाको चली उस प्रकार वह बलवान् राजा प्रकाशमें चला ॥ १६ ॥ और जगन्नाथ कृष्ण तथा वृष्णिपोंके मारनेकी इच्छा करने लगा और वह महा बुद्धिमान् राजा मुख्य २ सेना साथमें लिये था ॥ १७ ॥ पुरके द्वारमें प्राप्त हो यन्त्रे सेनाको स्थापन कर स्थित हुए सब राजोंसे इस प्रकार पौडूक कहने लगा ॥ १८ ॥ हमारा नाम सुनाकर भेरी बाजा बजाया जाय या तौ युद्ध करो या हमारी देने योग्य वस्तु कररूपसे प्रदान करो ॥ १९ ॥ महाबली

महाघोरं महारौद्रं युगान्तजलदोपमम् ॥ धनुर्गदासयाकीर्णं महाबाह्योपमं महत् ॥ १५ ॥ अग्न्यर्कसदृशाकारं ययौ द्वारवतीमनु ॥ गृहीतदीपिको राजा वीर्यवान्बलवानृप ॥ १६ ॥ इन्तुमेच्छजगन्नाथं वृष्णींश्चैव समन्ततः ॥ आकर्षन्बलमुख्यांस्तान् राज्ञः सर्वान् महाद्युतिः ॥ १७ ॥ पुरद्वारं समासाद्य बलं संस्थाप्य यत्नतः ॥ इदं प्रोवाच राजा तु नृपान्सर्वानवस्थितान् ॥ १८ ॥ ताडयतामत्र भेरी तु नाम विश्राव्य मामकम् ॥ युध्यतां युध्यतामत्र देयं वा प्रतिदीयताम् ॥ १९ ॥ आगतः पौण्ड्रको राजा युद्धार्थी वीरवत्तरः ॥ इन्तुकामः समग्रान्वः कृष्णबाहुबलाश्रयान् ॥ २० ॥ इति ते प्रेषिताः सर्वे समीयुः सूचकान्बहून् ॥ दीपिकाश्च प्रदीप्यन्ते बह्वयः शतसहस्रशः ॥ २१ ॥ इतश्चेतश्च राजानो युद्धयन्ते युद्धलालसाः ॥ पुरीं ते पुरतस्तत्र क्षत्रियाः शस्त्रिणस्तथा ॥ २२ ॥ सिंहनादं प्रकुर्वन्तः शस्त्रधारासमाकुलाः ॥ कुतोऽयं वृष्णिप्रवरः कुतो राजा जगत्पतिः ॥ २३ ॥ कुतोऽयं सात्याकिवीरः कुतो हार्दिक्य एव च ॥ कुतो नु बलभद्रश्च सर्वयादवसत्तमः ॥ इत्येवं कथयन्तो वै सजानः सर्व एव ते ॥ २४ ॥

पौडूक राजा युद्ध करनेको आया है और कृष्णके बाहुबलका आश्रय किये तुम सबके मारनेकी इच्छा करता है ॥ २० ॥ इस प्रकार आज्ञासे वे सब भेरे जाकर घोषणा करने लगे और सैकड़ों मसालें जलाई गई ॥ २१ ॥ इधर उधरसे वे शस्त्रधारी क्षत्रिय राजा पुरीको घेरकर युद्ध करने लगे ॥ २२ ॥ शस्त्रधारा लिये सिंहनाद करने लगे और बोले, वह वृष्णीयोंमें उत्तम राजा जगत्पति कहां है ॥ २३ ॥ वीर सात्यकि और हार्दिक्य कहां है सब

८६.
॥ २१२ ॥

यादवोंमें बली बलभद्र कहां हैं, इस प्रकार वे सब राजा कहने लगे ॥ २४ ॥ सब ओरसे बड़े बड़े शस्त्र लिये तथा अनेक शर और चाप धारण किये युद्धके निमित्त वस्तर धारण किये चारों ओरसे द्वारकापुरीको घेरने लगे ॥ २५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशो भविष्यपर्वणि भाषायां पौण्ड्र-
कवधे त्रिनवतितमोऽध्यायः ॥ ९३ ॥ वैशम्पायन बोले, तब सब यादव इस प्रकार सेनाका संचय देखकर कि महाशस्त्र धारियोंद्वारा रात्रिमें व्यसन प्राप्त हुआ है ॥ १ ॥ महाबाबूसे उद्धव कल्पान्तमें युद्धकी समान है, तब वेभी युद्धकी इच्छासे शस्त्र लेकर स्थित हुए सब शस्त्रयोधी यादव हाथोंमें आदाय शस्त्राणि बहूनि सर्वतः शरांश्च चापानि बहूनि सर्वे ॥ युद्धाय सन्नाहनिबद्धशो ययुर्हरेः पुरां द्वारवतीं नृपोत्तमाः ॥ २५ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशो भविष्यपर्वणि पौण्ड्रकवधे त्रिनवतितमोऽध्यायः ॥ ९३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततश्च यादवाः सर्वे दृष्ट्वा सैनिकसंचयम् ॥ रात्रौ च व्यसनं प्राप्तं महाशस्त्रसमाकुलम् ॥ १ ॥ महाबातसमुद्भूतं कल्पान्ते समरोपमम् ॥ सन्नद्धाः समपद्यन्त शस्त्रिणो युद्धालसाः ॥ २ ॥ गृहीतदीपिकाः सर्वे यादवाः शस्त्रयोधिनः ॥ सात्यकिर्बलभद्रश्च हार्दिक्यो निशठस्तथा ॥ ३ ॥
उद्धवोऽयं महाबुद्धिरुग्रसेनो महाबलः ॥ अन्ये च यादवाः सर्वे कवचप्रग्रहे रताः ॥ ४ ॥ समस्तयुद्धकुशला रात्रौ सन्नाहयोधिनः ॥ शस्त्रिणः खड्गिनश्चैव सर्वे शस्त्रसमाकुलाः ॥ ५ ॥ युद्धाय समपद्यन्त बहवो बाहुशालिनः ॥ राथिनो गदिनश्चैव सादिनः सायुधास्तथा ॥ ६ ॥ नित्ययुक्ता महात्मानो धन्विनः पुरुषोत्तमाः ॥ निर्ययुर्नगरात्पूर्णं दीपिकाभिः समन्ततः ॥ ७ ॥ कुतः पौण्ड्रक इत्येवं वदन्तः सर्वसात्वताः ॥ दीपिकादीपितो देशो निस्तमाः समपद्यत ॥ ८ ॥
मशाल लिये तथा सात्यकि बलभद्र हार्दिक्य निशठ ॥ २ ॥ ३ ॥ महाबुद्धि उद्धव महाबली उग्रसेन औरभी सब यादव कवच पहरे हुए ॥ ४ ॥ सम्पूर्ण युद्धमें कुशल रात्रिमें युद्ध करनेकी इच्छासे तय्यार शस्त्र खड्ग धारे सब प्रकारसे चतुर ॥ ५ ॥ बड़ी भुजावाले युद्ध करनेमें तत्पर रथमें बैठनेवाले गदावाले रथी युद्धमें तत्पर आयुध लिये ॥ ६ ॥ नित्य युक्त महात्मा धनुषधारी पुरुषोत्तम प्रकाश किये बहुत शीघ्र नगरसे बाहर निकले ॥ ७ ॥ पौंड्रक कहां है, इस प्रकार वे सब कहते चले, मशालोंसे सब प्रकार उजाला हो गया ॥ ८ ॥

भा. ८६
प. १५.९४

॥ २१२ ॥

जब कहीं अंधकार न रहा तब वृष्णियोंका शत्रुओंके साथ महाघोर संग्राम हुआ ॥ ९ ॥ तब रोमहर्षण तुमुल संग्रामके होनेमे घोड़े घोड़ोंके और हाथी हाथियोंके साथ भिड़ गये ॥ १० ॥ रथ रथोंसे रथवान् रथवानसे खड्गवाले खड्गवालोंसे गदावाले गदावालोंसे भिड़ गये ॥ ११ ॥ यह मिलाप परस्पर बड़ा दारुण हुआ उनका शब्द महाप्रलयके संक्षोभकी समान हुआ ॥ १२ ॥ चारों ओरसे धावमान होते हुए राजोंको प्रहार करने लगे यह महाबाहु खड्गधारी बली पतित होता है ॥ १३ ॥ अहो यह बाण तो बड़ा घोर है यह गदा धारण किये राजा हग सबको बाधा देता है ॥ १४ ॥ मह रथो

ततो वितिमिरो देशः समन्तात्प्रत्यपद्यत ॥ युद्धं समभवद्घोरं वृष्णिभिः शत्रुभिः सह ॥ ९ ॥ ततो महान् समभवत्सन्नादो रोमहर्षणः ॥ हया हयैः समायुक्ता गजाश्च गजयूथपैः ॥ १० ॥ रथा रथैः समायुक्ताः साक्षिभिः सादिनस्तथा ॥ खड्गिनः खड्गिभिः सार्द्धं गदिभिर्गदिनस्तथा ॥ ११ ॥ परस्परव्यतीकारो रण आसीत्सुदारुणः ॥ महप्रलयसंक्षोभः शब्दस्तेषां महात्मनाम् ॥ १२ ॥ धावन्तः प्रहरन्त्येतान् हन्त्येतान्सर्वतो नृपान् ॥ अयमेष महान्बाहुः खड्गी पतति वीर्यवान् ॥ १३ ॥ अयमेष शूरो घोरो वर्ततेऽतिसुदारुणः ॥ गदी चापं महावीर्यः सर्वान्नो बाधते नृपः ॥ १४ ॥ अयं रथी शरी चापी गदी तूणी तनुव्रवान् ॥ यादृशः सर्वतो याति कुन्तपाणिरयं बली ॥ १५ ॥ अयमत्र महाशूली संश्रितः सर्वतो दिशम् ॥ गजोऽयं सविषाणाग्रो वर्तते सर्वतः प्रति ॥ १६ ॥ अतिसर्वत्रगः शूरो वेगवान्वातसन्निभः ॥ शराञ्छरेः समाहन्ति दण्डान्दण्डेर्भगत्पते ॥ १७ ॥ कुन्तान्कुन्तैः समाजघ्नुर्गदाभिश्च गदास्तथा ॥ परिघान्परिघैः सार्द्धं शूलाञ्छूलेः समन्ततः ॥ १८ ॥

धनुष गदा बाण तर्कस लिये सब ओरसे बरछी लियेकी समान धावमान होता है ॥ १५ ॥ यह बड़ा शूळ लिये चारों ओरसे धावमान होता है यह हाथी बड़े दांतवाला सब ओर धावमान होता है ॥ १६ ॥ यह शूर सब ओरसे पवनकी समान वेगसे धावमान होता है शरोंको शरोंसे दण्डोंके दण्डसे हनन करता है ॥ १७ ॥ बरछीवालोंको बरछीसे गदावालोंको गदासे परिघवालोंको परिघोंसे शूळवालोंको चारों ओर शूलसे हनन करने लगे ॥ १८ ॥

हे महाराज ! इस प्रकार उनका घोर संग्राम हुआ बड़ा संग्राम और बड़ाही शब्द हुआ ॥ १९ ॥ संग्राममें बड़े शब्दवाले मणी शब्द करने लगे शंसोंका घोर शब्द होने लगा ॥ २० ॥ यह रात्रिमें घोरशब्द युद्धका हुआ जब इस प्रकार शत्रुओंके साथ यादवोंका घोर संग्राम हुआ ॥ २१ ॥ कोई विकल हो पृथ्वीपर गिरने हुए कोई हाथ चरण शिरहीन हो पृथ्वीमें गिरे ॥ २२ ॥ शस्त्रधारी महाबली राजा पृथ्वीमें गिरने लगे कोई वस्त्र भिन्न होकर सत्स प्रकार पृथ्वीमें गिर पड़े ॥ २३ ॥ परस्पर युद्ध कर एक दूसरेके वधकी इच्छा किये शस्त्र त्यागे सब प्रकार क्षत शरीर हुए ॥ २४ ॥ यमराज्यकी वृद्धि करनेवाले

एवं तेषां महाराज कुर्वतां रणमुत्तमम् ॥ संग्रामः सुमहानासीच्छब्दश्चापि महानभूत् ॥ १९ ॥ भूतानि सुबहुन्याजो शब्दवान्ति महान्ति च ॥ प्रादुरासन्सहस्राणि शंसानां भीमनिःस्वनः ॥ २० ॥ रात्रौ प्रादुरभूच्छब्दः संग्रामे रोमहर्षणः ॥ वर्तमाने महायुद्धे वृष्णीनां चैव तैः सह ॥ २१ ॥ केचिदग्रस्ताः समापेतुः पुथिव्यां पृथिवीक्षितः ॥ केचित्पतिताश्चिह्नैश्च विप्रकीर्णशिरोधराः ॥ २२ ॥ पेतुरुर्व्यां महावीर्या राजानः शस्त्रपाणयः ॥ केचित्तु भिन्नवर्माणः समापेतुः सहस्रधा ॥ २३ ॥ परस्परं समाश्रित्य परस्परवधेषुभिः ॥ न्यस्तशस्त्रा महात्मानः समन्तात्क्षतविग्रहाः ॥ २४ ॥ पेतुर्गतासवः केचिद्यमराष्ट्रविवर्द्धनाः ॥ एवं ते निहता राजन्योधिताः सर्व एव तु ॥ २५ ॥ एतस्मिन्नन्तरे शूर एकलव्यो निषादपः ॥ धनुर्गृह्य महाघोरं कालान्तकयमोपमः ॥ २६ ॥ शूरेनेकसाहसैरहंयामास यादवान् ॥ परं शूतैः शराणां तु निशितैर्मर्मभेदिभिः ॥ २७ ॥ वृष्णीनां च बलं सर्वं पोथयामास सर्वतः ॥ बुद्धयतः शस्त्रपाणांश्च क्षत्रियान्कीर्यवत्तरान् ॥ २८ ॥ निशठं पञ्चविंशत्या शराणां नतपर्वणाम् ॥ सारणं दशभिर्विद्धा हादिक्यं पञ्चभिः शूरेः ॥ २९ ॥

माणरहित हो पृथ्वीमें गिरने लगे इस प्रकार सब प्रकार युद्ध करनेवाले राजा मृतक हुए ॥ २५ ॥ इसी समय निषादपति शूर एकलव्य राजा कालान्तक यमकी समान घोर धनुष ग्रहण कर ॥ २६ ॥ सहस्रों बाणोंसे यादवोंका मर्दन करने लगा वह मर्मभेदी सैकड़ों बाण थे ॥ २७ ॥ वह चारों ओरसे सब यादवोंकी सेनाको नष्ट करने लगा और वीर्यवान् शस्र लिये क्षत्रियोंसे युद्ध करने लगा ॥ २८ ॥ बड़े तीक्ष्ण पञ्चीस बाणसे निशठको दश बाणसे

सारणको पांच बाणसे हार्दिक्यको ॥ २९ ॥ नव्वे बाणसे उग्रसेनको सात बाणसे वसुदेवको दशसे उद्धवको पांचसे अक्रूरको विद्ध किया ॥ ३० ॥ इस प्रकार तीक्ष्ण बाणोंसे सबको विद्ध किया इस प्रकार यादवी सेनाको विद्रावण कर अपना नाम सुनाकर वह बली ॥ ३१ ॥ एकलव्य बली यदुओंको व्यथित करने लगा और बोले अब वोह वीर सात्यकि कहां जाता है ॥ ३२ ॥ और मदमत्त हलधर गदाधर कहां जाता है इस प्रकार सिंहोंको विस्मित करता हुआ सिंहनाद करने लगा ॥ ३३ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भवि० पाषाणं पौण्ड्रकवधे चतुर्नवतितमोऽध्यायः ॥ ९४ ॥ वैशम्पायन बोले जब इस प्रकार यादवी सेना और वृष्णिवीर निवृत्त हुए और उसके भीत होने तथा अनेक वीरोंके मरनेमें ॥ १ ॥ दीपिका शान्त होने और चारों ओर निश्शब्द होनेपर

उग्रसेनं नवत्याशु वसुदेवं च सप्तभिः ॥ उद्धवं दशभिश्चैव अक्रूरं पञ्चभिः शूरेः ॥ ३० ॥ एवमेकैकशः सर्वे निहता निशितेः शूरेः ॥ विद्राव्य यादवीं सेनां नाम विश्राव्य वीर्यवान् ॥ ३१ ॥ एकलव्यो यदुष्वान्वीर्यवान्बलवानहम् ॥ इदानीं सात्यकिर्वीरः क यास्यति महाबलः ॥ ३२ ॥ मदमत्तो हली साक्षात्क यातीह गदाधरः ॥ इत्याह सिंहनादेन सिंहान्विस्मापयन्निव ॥ ३३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भवि० पौण्ड्रकवधे चतुर्नवतितमोऽध्यायः ॥ ९४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ निवृत्तेष्वथ सैन्येषु वृष्णिवीरेषु चैव हि ॥ भीतेष्वथ महाराज हतेषु युधि सर्वतः ॥ १ ॥ दीपिकासु प्रशान्तासु निःशब्दे सति सर्वतः ॥ जितमित्येव यन्मत्वा वृष्णीनां बलमुत्तमम् ॥ २ ॥ ततः पौण्ड्रो महावीर्यो बभाषे सैनिकान्स्वकान् ॥ शीघ्रं गच्छत राजेन्द्राष्टद्वेः कुन्तेः पुरीमिमाम् ॥ ३ ॥ कुठारेः कुन्तलेश्वे पाषाणेः सर्वतोदिशम् ॥ कर्षणस्यैः सुपाषाणेः सर्वतो यात भूमिपाः ॥ ४ ॥ भिक्षन्तां प्राकारचयाः प्रासादाश्च समन्ततः ॥ गृहान्तां कन्यकाः सर्वा दास्यश्चैव समन्ततः ॥ ५ ॥ गृहान्तां वसुमुख्यानि धनानि सुबहून्यय ॥ ते तथेति महात्मानो राजानः सर्व एव तु ॥ ६ ॥

उन्होंने जान लिया कि हमने वृष्णिवंशियोंको जीत लिया ॥ २ ॥ तब महावीर पौण्ड्र अपनी सेनासे कहने लगा. हे राजेन्द्र ! शीघ्रतासे जाकर टंक और बरछोंसे इस पुरीको खोदो ॥ ३ ॥ कुहाड़े कुन्तल और पाषाण सब ओर डालो खेंचनेपोग्य पत्थरोंको सब ओर ले चलो ॥ ४ ॥ इसका परकोटा और प्राकार सब ओरसे तोड़ डालो सब राजकन्या दासी करनेको ग्रहण करो ॥ ५ ॥ सुरुष रत्न और धन ग्रहण कर लो वह आज्ञा सुन उन राजोंने कहा

ऐसेही होगा ॥ ६ ॥ पौडूककी आज्ञासे कुठारोंद्वारा प्राकारको ढाने लगे रसआदिके संचयवाले प्रासाद और प्राकार भग्न करने लगे ॥ ७ ॥ तब चारों ओरसे महाशब्द प्रगट हुआ जिस समय बलपूर्वक टांकियोंसे प्रासाद छेदित होने लगे ॥ ८ ॥ हे महाराज ! उस समय पूर्वके द्वारसे प्राकार कुछ भग्न हो गया उस महाघोर शब्दको सुनकर सात्यकि क्रोधसे मूर्च्छित हो गया ॥ ९ ॥ कि यादवेश्वर लृण मुझमें यह सब सौंपकर अविनाशी शंकरके देखनेको कैलासपर्वतमें गये हैं ॥ १० ॥ द्वारकापुरीकी रक्षा मुझे अत्रथ्य करनी चाहिये यह मनमें विचार शीघ्रतासे धनुष लाकर ॥ ११ ॥ महात्मा दारुकके पुत्रसे

कुठारेः सर्वतश्चैव चिच्छिदुः पोण्ड्रकाज्ञया ॥ प्राकारांश्चैव सर्वत्र प्रासादान् रससंचयान् ॥ ७ ॥ अथ तत्र महाशब्दः प्रादुरासीत् समन्ततः ॥ टङ्केषु पात्यमानेषु प्राकारेषु महाबलैः ॥ ८ ॥ पूर्वद्वारे महाराज भिन्नाः प्राकारसंचयाः ॥ श्रुत्वा शब्दं महाघोरं सात्यकिः क्रोधमूर्च्छितः ॥ ९ ॥ मयि सर्वं समारोप्य केशवो यादवेश्वरः ॥ गतः कैलासशिखरं द्रष्टुं शंकरमव्ययम् ॥ १० ॥ अवश्यं हि मया रक्ष्या पुरी द्वारवती त्वियम् ॥ इति संचिन्त्य मनसा धनुरादाय सत्वरम् ॥ ११ ॥ रथं महान्तमारुह्य दारुकस्य महात्मनः ॥ पुत्रेण संस्कृतं घोरं यन्ता च स्वयमेव हि ॥ १२ ॥ धनुर्महत्तदादाय शरांश्चाशीविषोपमान् ॥ आमुच्य कवचं घोरं शस्त्रसंपातदुःसहम् ॥ १३ ॥ अङ्गदी कुण्डली तूणी शरी चापी गदासिमान् ॥ ययौ युद्धाय शौनेयः संस्मरन्केशवं वचः ॥ १४ ॥ दीपिकादीपिते देशे ययौ सात्यकिरुत्तमः ॥ तथैव बलदेवोऽपि रथमारुह्य भास्वरम् ॥ १५ ॥ गद्दी शूरो महावीर्यः प्रायाद्रणचिकीर्षया ॥ सिंहनादं प्रकुर्वन्तो मुञ्चन्तो भैरवं रवम् ॥ १६ ॥ उद्धवोऽपि बली साक्षाद्भजमारुह्य सत्वरम् ॥ मत्तं महारवं घोरं संग्रामे नीतिमत्तरम् ॥ १७ ॥

लाये महारथमें चढ़कर जो उसके द्वारा सजाया गया था और स्वयं उसका यन्ता होकर ॥ १२ ॥ बड़ा धनुष ग्रहण कर आशीविषकी समान घोर बाण लेकर दुस्सह शस्त्रपात सहनेवाला घोर कवच पहन कर ॥ १३ ॥ बाजूबंद कुंठल धारण किये शर और गदा तत्वार लिये श्रीलृणके वचन स्मरण करता सात्यकि युद्ध करनेको चला ॥ १४ ॥ मशालें जलवाकर सात्यकि उस स्थानमें पहुँचा, इसी प्रकार प्रकाशमान रथमें स्थित हो बलदेवजी चले ॥ १५ ॥ यह महाबली गंदा और धनुषबाणको हाथमें लिये लढाईकी इच्छासे चले, सिंहनाद और भयंकर शब्द करते चले ॥ १६ ॥ बली ऊधोर्मा हाथीके

ऊपर चढ़कर जो मत्त और महाघोर संग्राममें नीतियुक्त था ॥ १७ ॥ यह ऊधो परमप्रसन्नतासे संग्राममें राजनीति विचारते चले दूसरे वृष्णिवंशी संग्रामकी इच्छासे चले ॥ १८ ॥ हाथी घोड़ोंपर चढ़े हार्दिक्य आदि यादव आगे प्रकाशके निमित्त दीपिकावालोंसे युक्त ॥ १९ ॥ सिंहनाद करते केशवका वचन स्मरण किये युद्धकी लालसासे पूर्वद्वारमें प्राप्त हुए ॥ २० ॥ वे महाबली परस्पर मिलकर वहां स्थित हुए महाघोर प्रकाशमें जब दीपिका प्रज्वलित हुई ॥ २१ ॥ तब सात्यकि वीर शर चाप लिये तरकस धारण किये धनुषपर वायव्य अस्त्र चढ़ाकर ॥ २२ ॥ श्रेष्ठ धनुषको कान-

ययो नीतिं विचिन्वानः परां प्रीतिं महाबलः ॥ अन्ये च वृष्णयः सर्वे ययुः संग्रामलालसाः ॥ १८ ॥ रथान् गजान् समारुह्य हार्दिक्यप्रमुखास्तथा ॥ दीपिकाभिश्च सर्वत्र पुरोवृत्ताभिरिश्वराः ॥ १९ ॥ सिंहनादं प्रकुर्वन्तः स्मरन्तः केशवं वचः ॥ पूर्वद्वारं समागम्य वृष्णयो युद्धलालसाः ॥ २० ॥ ते समेत्य यथायोगं स्थितास्तत्र महाबलाः ॥ स्थिते सैन्ये महाघोरे दीपिकादीपिते पथि ॥ २१ ॥ शिनिर्वीरः शरी चापी गदी तूणीरवान्विभो ॥ वायव्यास्त्रं समादाय योजयित्वा महाशरम् ॥ २२ ॥ आकर्णपूर्ण-माकृष्य धनुःप्रवरमुत्तमम् ॥ मुमोच परसैन्येषु शिनिर्वीरः प्रतापवान् ॥ २३ ॥ वायव्यास्त्रेण ते सर्वे तत्रस्था नरसत्तमाः ॥ विजिता द्वास्त्रवीर्येण यत्र तिष्ठति पोण्ड्रकः ॥ २४ ॥ तत्र गत्वा स्थिताः सर्वे निर्द्धृता वातरंहसा ॥ यत्र पूर्वं स्थिताः सर्वे विद्रुता राजस-त्तमाः ॥ २५ ॥ तत्र स्थित्वा च शौनेयः शरमादाय सत्वरम् ॥ निशितं सर्पभोगाभं बभाषे सात्यकिस्तदा ॥ २६ ॥ क इदानीं महाबुद्धिः पोण्ड्रको राजसत्तमः ॥ स्थितोऽस्ति व्यवसायेन शरी चापी महाबलः ॥ २७ ॥

पर्यन्त सँचकर शत्रुकी सेनामें प्रहार करने लगा ॥ २३ ॥ जो वहां स्थित थे वे सब वायव्य अस्त्रसे पराजित हो पौंड्रकके समीप चले गये ॥ २४ ॥ वातके वेगसे पराजित हो वे सब वहां स्थित हुए जहां पहले व्याकुल हो स्थित हुए थे ॥ २५ ॥ और सात्यकि वहां स्थित हो शर ग्रहण कर जो सर्पकी समान था कहने लगा ॥ २६ ॥ इस समय वह बुद्धिमान पौंड्रक कहां है मैं धनुषबाण शर चापधारीसे युद्ध करनेको स्थित हूं ॥ २७ ॥

मैं उस दुरात्माको आज बध करूंगा मैं केशवका मृत्यु उसके मारनेके निमित्त स्थित हूँ ॥ २८ ॥ सब क्षत्रियोंके देखते उसका शिर छेदन कर उस दुरा-
त्माके शरीरकी बली गिद्ध और कुरोंको ढुंगा ॥ २९ ॥ कारण कि उसके सिवाय चोरकी सपान कर्म कौन कर सकता है जब कि रात्रिमें सब
यादव सो रहे थे तब आया ॥ ३० ॥ यह राजा बली नहीं सर्वथा चोर है यदि समर्थ होता तो यह अधम इस प्रकार चोरी नहीं करता ॥ ३१ ॥
अहो इसके चोरवत् आनेसे मैं किसी प्रकार इसको बली नहीं मानता हूँ ॥ ३२ ॥ यह कह महाबली सात्यकिके हास्य करने लगा और धनुष चढ़ाकर

यदि द्रष्टा दुरात्मानं ततो हन्ता नृपाधमम् ॥ भृत्योऽस्मि केशवस्याहं जिघांसुः पौण्ड्रकं स्थितः ॥ २८ ॥ छित्त्वा शिरस्तु तस्यास्य
सर्वक्षत्रस्य पश्यतः ॥ बलिं दास्यामि वृधेभ्यः श्वभ्यश्चैव दुरात्मनः ॥ २९ ॥ को नाम ईदृशं कर्म चोरवच्च समाचरेत् ॥ सुप्तेषु निशि
सर्वत्र यादवेषु महात्मसु ॥ ३० ॥ चोरोऽयं सर्वथा राजा नहि राजा बलान्वितः ॥ यदि शक्तो न कुर्याच्च चौर्यमेवं नृपाधमः ॥ ३१ ॥
अहोऽस्य बलिनो राज्ञश्चोरकार्यं प्रकुर्वतः ॥ सर्वथागमनं तस्य नहि पश्यामि साम्प्रतम् ॥ ३२ ॥ इत्युक्त्वा सात्यकिवीरः प्रजहास
महाबलः ॥ विस्फार्य सुदृढं चापं संदधे कार्मुके शरम् ॥ ३३ ॥ आकर्ण्य वचनं वीरः सात्यकेस्तस्य धीमतः ॥ क नु कृष्णः क
गोपालः कुतः सोऽयं प्रवर्तते ॥ ३४ ॥ स्त्रीहन्ता पशुहन्ता च क्व च स्वामीति सेवितः ॥ स इदानीं क्व वर्तते गृहीत्वा मम नाम तत् ॥ ३५ ॥
हन्ता सख्युर्महावीर्यो नरकस्य महात्मनः ॥ ममेव तात युद्धेऽस्मिन् हते तस्मिन्दुरात्मनि ॥ ३६ ॥ गच्छ त्वं कामतो वीर
योद्धुं न क्षमते भवान् ॥ अथवा तिष्ठ किञ्चित्तु ततो द्रष्टासि मे बलम् ॥ ३७ ॥

उसपर बाण चढ़ाता हुआ ॥ ३३ ॥ वह वीर उस सात्यकिके वचन सुनकर बोला वह गोपालकृष्ण कहां है ॥ ३४ ॥ वह स्त्रीहन्ता पशुहन्ता स्वामी सेवित
मेरा नाम ग्रहण कर इस समय कहां गया है ॥ ३५ ॥ जितने महाबली नरक महात्मा मेरे सखाको मारा है, हे तात ! इस युद्धमें उस दुरात्माकोही
माहंगा ॥ ३६ ॥ हे वीर ! तेरी जहां इच्छा हो वहां चला जा सुझसे युद्ध करनेको तू समर्थ नहीं है अथवा क्षणमात्र ठहरकर मेरा बल देख ले ॥ ३७ ॥

घोर बाणोंसे तेरा शिर पृथ्वीमें गिराये देता हूं. हे वीर ! तेरे हत होनेसे पृथ्वी तेरा लुपित पान करेगी ॥ ३८ ॥ जब वह गोप सुनेगा कि सात्याकि मृतक हो गया जो गर्व उसका महान् वर्तता है ॥ ३९ ॥ सो तेरे मरनेसे वह नष्ट हो जायगा तुझे रक्षामें स्थित कर वह गोपाल कैलासपर्वतको ॥ ४० ॥ चला गया है यह हमने पहले सुन रक्खा है. हे सात्यकि ! जो तुझे सामर्थ्य है तौ तीक्ष्ण बाण ग्रहण कर यह कह बाण लेकर युद्ध करनेको स्थित हुआ ॥ ४१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पौंड्रकवधे सात्यकिपौंड्रभाषणं नाम पञ्चमवतितमोऽध्यायः ॥ ९५ ॥ वैशम्पायन बोले, हे

शिरस्ते पातयिष्यामि शरैर्घोरैर्दुरासदैः ॥ इतस्य तव वीरेह भूमिः पास्यति शोणितम् ॥ ३८ ॥ श्रोष्यते स तथा गोपो इतः सात्य-
किरित्यपि ॥ यो गर्वस्तस्य गोपस्य सर्वदा वर्तते महान् ॥ ३९ ॥ विनश्यति स तु क्षिप्रं इतै त्वयि यदूतम् ॥ त्वयि रक्षां समादिश्य
गोपः कैलासपर्वतम् ॥ ४० ॥ गत इत्येवमस्माभिः श्रुतं पूर्वं महामते ॥ शरं गृह्ण निशितं यदि शक्तोऽसि सात्यके ॥ इत्युक्त्वा
बाणमादाय ययौ योद्धुं व्यवस्थितः ॥ ४१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पौंड्रकवधे सात्यकिपौंड्रभाषणं
नाम पञ्चमवतितमोऽध्यायः ॥ ९५ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः क्रुद्धो महाराज सात्यकिर्वृष्णिपुङ्गवः ॥ उवाच वचनं राजन्वासुदेवं
स्मरन्निव ॥ १ ॥ अवोचदीदृशं वाक्यं वासुदेवं नृपाधमः ॥ को नाम जगतां नाथमित्थं ब्रूयाजिजीविषुः ॥ २ ॥ मृत्युस्त्वां सर्वथा
याति वदन्तं तादृशं वचः ॥ जिह्वा ते शतधा दीर्घाद्भदतस्तादृशं वचः ॥ ३ ॥

महाराज ! यह वचन सुन सात्यकिको बड़ा क्रोध हुआ और श्रीकृष्णको स्मरण करता हुआ वचन कहने लगा ॥ १ ॥ हे नृपाधम ! जो कि तू
वासुदेवके प्रति ऐसे वचन कहता है जीनेकी इच्छा करनेवाला जगन्नाथके प्रति कौन ऐसे वचन कह सकता है ॥ २ ॥ ऐसे वचन कहते हुए सर्वथा
तेरे निमित्त मृत्यु प्राप्त होगी ऐसे वचन कहनेमें तेरी जिह्वाके सौ खण्ड होंगे ॥ ३ ॥

हे पौंड्रक ! यह मैं तेरा शिर कायासे पृथक् करूंगा और जो वासुदेव नाम तुझमें वर्तता है ॥ ४ ॥ सो जबतक कायासे तेरा शिर न भिरेगा तबहतिक यह नाम तुझमें है सो प्रातःकाल हमारे भगवान् रुष्णही वासुदेव रहेंगे ॥ ५ ॥ वह एकही जगन्नाथ सबके कर्ता और सर्वगामी हैं. हे दुरात्मन् ! इसमें सन्देह नहीं वही देव सर्वथा स्थित रहेंगे ॥ ६ ॥ हे नीच राजन् ! मैं तुम्हारी कायासे सर्वथा तेरा शिर काटकर गिराऊंगा जो भगवान् विष्णु नहीं आवेंगे ॥ ७ ॥ अब तू सब अपना अस्त्र और वीर्यका बल मुझे दिखा. हे राजन् ! इससे अधिक तुम्हारा पराक्रम नहीं है ॥ ८ ॥ मैं युद्धको खड़ा

एष ते पातयिष्यामि शिरः कायाच्च पौण्ड्रक ॥ यन्नाम वासुदेवेति तव संप्रति वर्तते ॥ ४ ॥ य वत्पतति कायात्ते शिरस्तावत्प्रवर्तते ॥ स एव श्वो न भगवान्वासुदेवो भविष्यति ॥ ५ ॥ एक एव जगन्नाथः कर्ता सर्वस्य सर्वगः ॥ दुरात्मन्सर्वथा देवो भविष्यति न संशयः ॥ ६ ॥ एष तेऽहं शिरः कायात्पातयिष्यामि राजक ॥ यदसौ भगवन्विष्णुर्नागमिष्यति साम्प्रतम् ॥ ७ ॥ अस्त्रवीर्यं बलं चैव सर्वं दर्शय साम्प्रतम् ॥ नातः परतरं राजन्वीर्यं च तव वर्तते ॥ ८ ॥ सर्वं दर्शय यत्नेन स्थितोऽस्मि व्यवसायवान् ॥ शरीचापी गदी खड्गी सर्वथाहमुपस्थितः ॥ ९ ॥ नैतन्नगरमायासीः सत्यमेतद्ब्रवीम्यहम् ॥ सर्वथा कृतकृत्योऽस्मि दृष्ट्वा त्वां वासुदेवकम् ॥ १० ॥ तवाङ्गं तिलशः कृत्वा श्वभ्यो दास्यामि राजक ॥ इत्युक्त्वा बाणमादाय वासुदेवं महाबलः ॥ ११ ॥ आकर्णपूर्णमाकृष्य विव्याध निशितं शरम् ॥ स तेन विद्धो यदुना वासुदेवः प्रतापवान् ॥ १२ ॥ वमञ्छोणितमत्युष्णमङ्गान्नेत्रावृणोत्तम ॥ ततश्चक्रोध नृपतिर्वासुदेवः प्रतापवान् ॥ १३ ॥

हूं तू यह सब यत्नसे दिखा शर चाप गदा खड्ग लिये मैं सर्वथा उपस्थित हूं ॥ ९ ॥ इस नगरमें तू न आवेगा यह मैं सत्य कहता हूं तुझ मिथ्या वासुदेवको देख मैं सर्वथा कृतकृत्य हूं ॥ १० ॥ हे नीच ! तेरे शरीरको तिलकी समान टुकड़े कर कुत्तोंको दे दूंगा यह कहकर वह बली बाण लेकर पौंड्रकके ऊपर ॥ ११ ॥ कानपर्यन्त धनुष चढ़ाय बाण छोड़ता हुआ उस बाणसे पौंड्रक बिद्ध होकर ॥ १२ ॥ मुख और नेत्रसे शोणित वमन करने लगा और उस प्रतापी पौंड्रकने बड़ा क्रोध किया ॥ १३ ॥

नौ और दस बड़े तीक्ष्ण बाणोंसे राजाने सात्यकिको बिद्ध किया और बड़ी गर्जना की ॥ १४ ॥ तब यमराजाकी समान घोर धनुष चढ़ाकर पौंड्र कने बाणद्वारा ॥ १५ ॥ सात्यकिको बिद्ध कर अपनी सेनाके लोगोंको प्रसन्न किया, सत्यसंगर सात्यकि नाराचसे बिद्ध होकर ॥ १६ ॥ जो बाण उसके ललाटमें लगा था उसके वेगसे वह वृष्णियोंमें श्रेष्ठ चेष्टारहित हो रथमें स्थित हुआ ॥ १७ ॥ तब पौंड्रकने दस बाण उसके घोड़ोंके मारे और पचास बाणसे उसके साराथि और घोड़ोंको बिद्ध किया ॥ १८ ॥ वे घोड़े और साराथि रुधिरसे लित हो गये और पौंड्रकके देखते २ विह्वल हो

नवभिर्दशभिश्चैव शरैः सन्नतपर्वभिः ॥ विव्याध सात्यकिं राजा नदंश्च बहुधा किल ॥ १४ ॥ ततो नाराचमादाय निशितं यमसंनि-
भम् ॥ धनुराकृष्य भगवान्वासुदेवो नृपोत्तम ॥ १५ ॥ विव्याध सात्यकिं भूयो निशि प्रह्लादयन्स्वकान् ॥ नाराचेन समाविद्धः
सात्यकिः सत्यसङ्गरः ॥ १६ ॥ ललाटे सुदृढं वीरो वृष्णीनामग्रणीस्तदा ॥ निषसाद् रथोपस्थे निश्चेष्ट इव सत्तमः ॥ १७ ॥ ततः
स पौण्ड्रको राजा विद्धा दशभिराशुगैः ॥ साराथिं पञ्चविंशत्या हयैश्च चतुरो नृप ॥ १८ ॥ ते हया रुधिराक्ताङ्गा साराथिश्च समन्ततः ॥
विह्वलाः समपद्यन्त वासुदेवस्य पश्यतः ॥ १९ ॥ वासुदेवो रथे चापि सिंहनादं समाददे ॥ तेन नादेन तत्राभूद्विबुद्धः सात्यकिर्नृप ॥ २० ॥
विद्धान् हयैस्तथा दृष्ट्वा साराथिं च तथागतम् ॥ शैनेयोऽथ महावीर्यो रुषितो नृपसत्तमः ॥ २१ ॥ अलं द्रक्ष्यामि ते वीर्यमित्यु-
क्त्वा बाणमाददे ॥ विव्याध तेन बाणेन वक्षस्येनं महाबलः ॥ २२ ॥ ततश्च चाल तेनाजौ वासुदेवः शरेण ह ॥ सुस्राव रुधिरं घोर-
मत्युष्णं वक्षसो नृप ॥ २३ ॥ रथोपस्थे पपाताशु निश्चसन्नुरगो यथा ॥ कृत्यं चापि न जानाति केवलं निषसाद् ह ॥ २४ ॥

गये ॥ १९ ॥ यह देख पौंड्रकने सिंहनाद किया उस शब्दसे सात्यकिको चेतना हुई ॥ २० ॥ घोड़ोंको बिद्ध और साराथिकी यह दशा देखकर महा-
बली सात्यकि महाक्रोधित हुआ ॥ २१ ॥ उस तुम्हारा पराक्रम देख लिया यह कहकर बाण ग्रहण किया और पौंड्रककी छातीमें बाण मारा ॥ २२ ॥
बुद्धमें उस बाणसे सात्यकिने राजाको चलायमान कर दिया और छातीसे बहुतसा रुधिर निकलने लगा ॥ २३ ॥ तब वह सर्पकी समान श्वास लेता

रथके ऊपर मुर्छित हो गिरा और कुछ कर्तव्यको न जानकर केवल विषादको प्राप्त हुआ ॥ २४ ॥ तब सात्यकिने दश बाणसे उसके रथको विद्ध किया और भालेसे उसकी ध्वजाको छेदन कर दिया ॥ २५ ॥ चारों घोड़े मारकर और बाणोंसे सारथिको विद्ध कर पौंड्रकके देखते युद्ध करने लगा ॥ २६ ॥ और उसके सारथिका शिर काटकर नीचे गिरा दिया रथकी ग्रंथि तोड़ दी और घोड़ोंको प्राणरहित कर दिया ॥ २७ ॥ दश बाणोंसे उसके चक्रको तिलकी समान काट दिया और पौंड्रकको देखकर बड़ा हास्य किया ॥ २८ ॥ तब महाबली सात्यकि सबके देखते बड़ा शब्द करने

सात्यकिस्तु रथं विद्धा दशभिः सायकैस्तथा ॥ ध्वजं चिच्छेद् भल्लेन वासुदेवस्य वृष्णिपः ॥ २५ ॥ ह्याश्च चतुरो हत्वा बाणैः सारथि-
मेव च ॥ युयुधानोऽथ राजेन्द्र पौण्ड्रकस्य च पश्यतः ॥ २६ ॥ सारथेश्च शिरः कायादाहरत्स रथात्तदा ॥ रथग्रन्थिं च चिच्छेद् ह्याश्च
व्यसवोऽभवन् ॥ २७ ॥ चक्रं च तिलशः कृत्वा बाणेर्दशभिरंहसा ॥ जहास विपुलं राजन्वासुदेवं महाबलः ॥ २८ ॥ ततः परं मह-
त्प्रायं सात्यकिर्वृष्णिनन्दनः ॥ शब्दं कृत्वा बली साक्षात्सर्वक्षत्रस्य पश्यतः ॥ २९ ॥ शरैः सप्ततिसंख्याकैरर्दयामास सत्वरम् ॥ ते
शराः शलभाकारा निपेतुः सर्वशस्तदा ॥ ३० ॥ शिरस्तः पार्श्वतश्चैव पृष्ठतः पुरतस्तथा ॥ केवलं धैर्यनिचयस्तृषार्तः शरवान्
यथा ॥ ३१ ॥ यथा मनस्वी रिक्तश्च तथा तिष्ठति पौण्ड्रकः ॥ ततश्चक्रोद्य बलवान्वासुदेवः प्रतपवान् ॥ ३२ ॥ अर्धचन्द्रं समा-
दाय विव्याध युधि सात्यकिम् ॥ विद्धा सप्तभिरायान्तं क्रोधेन प्रस्फुरन्निव ॥ ३३ ॥ विद्धोऽथ सात्यकिस्तेन शरैः पञ्चभिराशुगैः ॥
चापं चिच्छेद् पौण्ड्रस्य सिंहनादं व्यनीनदन् ॥ ३४ ॥

लगा ॥ २९ ॥ और (३०) सत्तर बाणोंसे फिर मर्दन किया, वे शलभके आकारके बाण सब ओर पतित होने लगे ॥ ३० ॥ शिर पार्श्व पीछे
आगे सब ओर बाण गिरने लगे जैसे कोई बाणवाला प्यासा होता है इस प्रकार पौंड्रक होकर धैर्य धारण कर स्थित हुआ ॥ ३१ ॥ और जैसे कोई
बुद्धिमान् रीता होकर स्थित होता है इस प्रकार पौंड्रक स्थित हुआ परंतु फिर वह बलवान् पौंड्रक क्रोधित हुआ ॥ ३२ ॥ और अर्धचन्द्र बाण
लेकर युद्धमें सात्यकिको विद्ध किया और सात बाणसे क्रोधित हो उसने विद्ध किया ॥ ३३ ॥ तब सात्यकिने विद्ध होकर पांच बाणोंसे पौंड्रकका

धनुष छेदन कर दिया और सिंहनाद किया ॥ ३४ ॥ तब पौंड्रकने गदा लेकर उसे घुमाकर बड़ी शीघ्रतासे सात्यकिकी छातीमें मारी ॥ ३५ ॥ यदुनं-
दनने आती हुई उस गदाको बायें हाथसे लेंचकर और उसीसे पौंड्रकको युद्धमें ताड़न किया ॥ ३६ ॥ पौंड्रकनेभी उसे बीचमेंही पकड़कर दश शक्तिसे
युद्धमें सात्यकिको ताड़न किया ॥ ३७ ॥ सत्यसंगर सात्यकि युद्धमें उन शक्तियोंसे विद्ध हो अपना धनुष छोड़ दूसरा धनुष ग्रहण कर उस वृष्णिवंशियोंमें
भेठने पौंड्रकको ताड़न किया ॥ ३८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां पौंड्रकवधे षण्णवतितमोऽध्यायः ॥ ९६ ॥

वासुदेवो गदां गृह्य भ्रामयित्वा पदात्पदम् ॥ त्वरितं पातयामास सात्यकेर्वक्षसि प्रभो ॥ ३५ ॥ सव्येन तां समाकृष्य करेण यदु-
नन्दनः ॥ शरं प्रगृह्य विव्याध सात्यकिर्युधि पौंड्रकम् ॥ ३६ ॥ तमन्तरे गृहीत्वाशु वासुदेवः प्रतापवान् ॥ शक्तिभिर्दशभिश्चैन
सात्यकिं निजघान ह ॥ ३७ ॥ ताभिर्विद्धो रणे वीरः सात्यकिः सत्यसंगरः ॥ अपास्य धनुरन्यत्तद्वनुरादाय सत्वरम् ॥ आजघान
तदा वीरो वृष्णीनामग्रणीर्नृपः ॥ ३८ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भवि० कैलासयात्रायां पौंड्रकवधे षण्णवतितमोऽध्यायः ॥ ९६ ॥
वेशम्पायन उवाच ॥ ततः क्रुद्धो गदापाणिः सात्यकिर्वृष्णिनन्दनः ॥ वासुदेवं जघानाशु मदया तीक्ष्णया नृप ॥ १ ॥ सात्यकिं वासु-
देवस्तु गदयाभ्यहनद्रुह्य ॥ तावुद्यतगदो वीरो शुशुभाते सुदारुणो ॥ २ ॥ हस्तौ वने यथा सिंहो परस्परवधेषिणो ॥ ततः स सात्यकिः
क्रुद्धः सव्यं मण्डलमागमत् ॥ ३ ॥ दक्षिणं वासुदेवस्तु तं जघान स्तनान्तरे ॥ युयुधानोऽथ वरिस्तु बाह्वोर्मध्यमताडयत् ॥ ४ ॥
दृढं स ताडितो वीरो जानुभ्यामपतद्भुवि ॥ तत उत्थाय वीरस्तु ललाटेऽभ्यहनद्रुदाम् ॥ ५ ॥

वेशम्पायन बोले, हे राजन् ! तब वृष्णिनन्दन सात्यकिने गदा ले उसी तीक्ष्णगदासे पौंड्रकको ताड़न किया ॥ १ ॥ बली पौंड्रकनेभी गदा लेकर सात्यकिको
ताड़न किया, गदाको उठाये वे दोनों वीर बड़ी शोभाको प्राप्त हुए ॥ २ ॥ जैसे परस्पर वधकी इच्छा किये वनमें दो मतवाले सिंह हो तब क्रुद्ध होकर
सात्यकि सव्यमण्डलको प्राप्त हुआ ॥ ३ ॥ और दक्षिण ओर पौंड्रक हुआ उस समय उनकी छातीमें आघात किया युद्ध करते हुए उस वीरकी
छातीमें आघात किया ॥ ४ ॥ तब सात्यकिसे वह वीर दृढ ताड़ित हो पृथ्वीमें जंघाके बलसे बैठ गया फिर बड़ी शीघ्रतासे उठकर राजाने ललाटमें

आघात किया ॥ ५ ॥ सात्यकि कुछ विषण्ण होकर फिर बहुत शीघ्रतासे उठा और गदासे पौंड्रकको ताडन किया ॥ ६ ॥ तब बली वीर पौंड्रकने साक्षात् मृत्युकी समान क्रोधकर नेत्रोंसे जलाते हुए सात्यकिको गदासे ताडन किया ॥ ७ ॥ वह सात्यकि उसकी भुजासे छोड़ी हुई गदासे ताडित हो सहसा मृत्युकी गोदीमें प्राप्त हुएकी समान पृथ्वीमें पतित हुआ ॥ ८ ॥ फिर चैतन्यताको प्राप्त हो हाथोंसे गदाको दृढतापूर्वक ग्रहण कर प्रहार करता हुआ ॥ ९ ॥ उस कालायस ओहेकी बनी महामदाको दो टुकड़े कर और त्यागन कर वह वीर सिंहनाद करने लगा ॥ १० ॥ तब वह महाबली

विषण्णः किञ्चिदास्थाय तत उत्थाय सत्वरम् ॥ गदयाभ्यहनद्वीरः सात्यकिः पौण्ड्रसत्तमम् ॥ ६ ॥ वासुदेवो बलिर्वीरः साक्षान्मृत्युरिवापरः ॥ जघान गदया वृष्णि निर्दहन्निव चक्षुषा ॥ ७ ॥ स तथा ताडितो वृष्णिर्गदया बाहुमुक्तया ॥ आलम्ब्य भूमिं सहसा मृत्योरङ्कगतो यथा ॥ ८ ॥ संज्ञां पुनः समालम्ब्य पाणिभ्यां दृढमेव च ॥ गदां तस्य महाराज गृहीत्वा प्रग्रहेण ह ॥ ९ ॥ द्विधा कृत्वा महागुर्वी गदां कालायसीं शुभाम् ॥ उत्सृज्य सहसा वीरः सिंहनादं व्यनीनदत् ॥ १० ॥ तत उत्सृज्य राजा तु वासुदेवो महाबलः ॥ सव्येन सात्यकिं गृह्य दक्षिणेन करेण ह ॥ ११ ॥ मुष्टिं कृत्वा महाघोरां वासुदेवः प्रतापवान् ॥ ताडयामास मध्ये तु स्तनयोः सात्यकेर्नृप ॥ १२ ॥ शैनेयो वृष्णिवीरस्तु गदामुत्सृज्य सत्वरम् ॥ तलेनाभ्यहनद्वीरो वासुदेवं रणाजिरे ॥ १३ ॥ तलेन वासुदेवोऽपि सात्यकिं सत्यसंगरम् ॥ तयोरेवं महाघोरं तलयुद्धं प्रवर्तत ॥ १४ ॥ जानुभ्यां मुष्टिभिश्चैव बाहुभ्यां शिरसा तदा ॥ उरसोरः समाहत्य जानुभ्यां जानुनी तथा ॥ १५ ॥

राजा गदाको छोडकर बायें हाथसे सात्यकिको पकड दक्षिण हाथकी ॥ ११ ॥ महाघोर मुष्टिसे वीरने सात्यकिकी छातीको ताडन किया ॥ १२ ॥ तब वीर सात्यकिनेभी शीघ्रतासे गदाको छोड युद्धमें राजाको तलप्रहारसे ताडित किया ॥ १३ ॥ राजानेभी तलप्रहारसे सात्यकिको ताडन किया इस प्रकार दोनोंका घोर तलयुद्ध हुआ ॥ १४ ॥ जानु मुष्टि बाहु शिर हृदयसे हृदय और जानुसे जानु ताडन करने लगे ॥ १५ ॥

हाथसे हाथको आहत कर ताडन करने लगे. हे राजन् ! जैसे वनमें तालवृक्ष निकट होकर युद्ध करें ॥ १६ ॥ और उनका सन्निकर्षतासे महाशब्द हो इस प्रकार शब्द होने लगा वे पौंड्रक और सात्यकि दोनों युद्धमें बड़े विख्यात थे ॥ १७ ॥ जब कि रातका अंधेरा घोर था दीपक बुझ गये तब वे दोनों शस्त्र त्याग मल्लयुद्ध करने लगे ॥ १८ ॥ हे महाराज ! उस समय दोनों सेनाओंको संदेह होने लगा क्या सात्यकि वीर इससे हत हो जायगा ॥ १९ ॥ वा यह पौंड्रक राजा इससे हत हो जायगा इस समय यह दोनों वीर परस्पर वधकी इच्छा करते ॥ २० ॥ युद्ध करते हुए स्वर्गको जांयगे और किसी प्रकार

कराभ्यां करमाहत्य तौ युद्धं संप्रचक्रतुः ॥ तालयोस्तत्र राजेन्द्र वृक्षयोः सन्निकर्षयोः ॥ १६ ॥ वने यथा निरुत्पन्नस्तथैवाभूमहास्वनः ॥ तावाजौ प्रथितौ वीराबुभौ पौण्ड्रकसात्यकी ॥ १७ ॥ निशि स्तिमितमूकायां शस्त्रं त्यक्त्वा महाबलौ ॥ युयुधाते महारङ्गे मल्लौ द्वाविव विश्रुतौ ॥ १८ ॥ उभे सेने महाराज्ञोः संशयं जग्मतुस्तदा ॥ किं नु स्यात्सात्यकिर्वीरो हतस्तेन भविष्यति ॥ १९ ॥ आहोस्विद्रासु- देवस्तु हतस्तेन महात्मना ॥ अद्य वै तौ महावीरौ परस्परवधेषिणौ ॥ २० ॥ युध्यमानौ महावीरौ तदा (नरो) स्वर्गं गमिष्यतः ॥ अन्यथा नोपरम्येतां युद्धाद्वीरौ सुनिश्चितौ ॥ २१ ॥ अहो वीर्यमहो धैर्यमेतयोर्बलशालिनोः ॥ एतौ महाबलौ लोके एतौ प्रकृति- सत्तमौ ॥ २२ ॥ नैवं युद्धं महाघोरमासीद्देवासुरेष्वपि ॥ न श्रुतो न च वा दृष्टः संग्रामोऽयं कदाचन ॥ २३ ॥ एते वै सैनिका ब्रह्म- सेनयोरुभयोरपि ॥ रात्रौ निशीथे मेघौवे दृष्ट्वा युद्धं सुदारुणम् ॥ २४ ॥ अथ तौ बाहुभिर्वीरौ संनिपेततुरजसा ॥ दशभिर्मुष्टिभिर्जघ्ने सात्यकिः पौण्ड्रकं तदा ॥ २५ ॥

यह दोनों वीर युद्धसे विरामको प्राप्त न होंगे ॥ २१ ॥ इन बलशालियोंके धैर्य और पराक्रमको धन्य है यह लोकमें दोनों महाबली और श्रेष्ठ प्रकृति- वाले हैं ॥ २२ ॥ ऐसा घोर युद्ध तौ देवता और असुरोंमेंभी नहीं हुआ था ऐसा संग्राम न कभी देखा न सुना ॥ २३ ॥ इस प्रकार दोनों सेनाके लोग कहने लगे आधी रातके समय मेघसमूहमें दारुण युद्ध देखकर चकित हुए ॥ २४ ॥ तब वे दोनों वीर बाहुयुद्धमें प्रवृत्त हुए तब सात्यकिने राजाके दश धुंसे मारे ॥ २५ ॥

पौंड्रने सात्याकिंके पांच घुंसे मारे उनके मारे उनके चटचट शब्दसे ब्रह्माण्डको महाक्षोभ हुआ और सबको आश्चर्य करनेवाला शब्द सर्वत्र होने लगा ॥ २६ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पौंड्रकवधो नाम सप्तनवतितमोऽध्यायः ॥ १७ ॥ वैशंपायन बोले, इसी समय निषादपति एक-
लव्य महाक्रोधित हो बलरामके ऊपर घनुष लेकर शीघ्रतासे चला ॥ १ ॥ दश नाराच और बाणोंसे उनको विद्ध किया और सब क्षत्रियोंके देखते
उनका आधा धनुष छेदन कर दिया ॥ २ ॥ दश बाणसे सूत और तीस बाणसे रथको ताड़ित किया और मल्लाघसे बलदेवजीने एकलव्यकी ध्वजा

पञ्चामैः सात्याकिं पौण्ड्रः समाजघ्ने महाबलः ॥ तयोश्चटचटाशब्दो ब्रह्माण्डक्षोभणो महान् ॥ प्रादुरासीत्तु सर्वत्र सर्वान्विस्मापयन्निव ॥ २६ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पौण्ड्रकवधो नाम सप्तनवतितमोऽध्यायः ॥ १७ ॥ ॥ ७ ॥ वैशम्पायन
उवाच ॥ एतस्मिन्नन्तरे क्रुद्ध एकलव्यो निषादपः ॥ बलभद्रमभि क्षिप्रं घनुरादाय सत्वरम् ॥ १ ॥ नाराचैर्दशभिर्विद्धा बाणैश्च
दशभिः परैः ॥ चिच्छेद् धनुरर्धं तत्सर्वक्षत्रस्य पश्यतः ॥ २ ॥ सूतं दशभिर्गहत्य रथं त्रिंशद्भिरेव च ॥ ध्वजं चिच्छेद् भलेन निषा-
दस्य जगत्पतिः ॥ ३ ॥ ततः परं महद्बाणं निषादो वीर्यसंमतः ॥ दृढमूर्ध्ना समायुक्तं दशतालप्रमाणतः ॥ ४ ॥ कामपालं शरेणाशु
जघान जनमध्यतः ॥ बलदेवो महावीर्यः सर्पः शेष इव श्वसन् ॥ ५ ॥ दशभिस्तद्वनुर्दिव्यं शरैः सर्पसमेवैलः ॥ चिच्छेद् मुष्टिदेशे
तु माधवो माधवाग्रजः ॥ ६ ॥ एकलव्यो निषादेशः खड्गमादाय सत्वरः ॥ प्राहिणोद्वलमादाय निशितं घोरविग्रहम् ॥ ७ ॥

छेदन कर दी ॥ ३ ॥ तब वह बली निषाद दीर्घ चापको ग्रहण कर जो दीर्घ ज्यासे युक्त थी जिसका प्रमाण दश तालका था ॥ ४ ॥ उससे मनु-
ष्योंके देखते बलदेवजीको ताड़न किया महाबली बलदेवजी सर्पकी समान श्वास लेने लगे ॥ ५ ॥ तब लव्यके बड़े भाता बलरामजीने उसके दिव्य
धनुषको मुष्टिदेशमेंसे छेदन कर दिया ॥ ६ ॥ तब निषादपति एकलव्य शीघ्रतासे खड्ग लेकर उस घोर विग्रहवालेको बलरामजीके ऊपर प्रहार करता

हुआ ॥ ७ ॥ उसको दूसरे प्रतापवान् यदुनन्दन बलरामजीने पांच बाणोंसे तिलकी समान कर दिया ॥ ८ ॥ तब उस निषादने काले लोहेके बने उस खड्गको बड़े वेगसे सारथिके ऊपर चलाया ॥ ९ ॥ यदुनन्दन बलरामजीने उस खड्गकोभी बाहोंके मध्यमें भेदित कर दिया ॥ १० ॥ तब उस राजाने अनेक बंदे लगी हुई शक्तिको ग्रहण कर बलदेवके ऊपर प्रहार किया ॥ ११ ॥ और उस राजाने महाघोर सिंहनाद किया वह कल्याणी शक्ति बलदेवके निकट प्राप्त हुई १२ ॥ बलभद्रने आती हुई उस महाशक्तिको देखकर ग्रहण कर लिया जिससे निषादेश तथा और सब विस्मित हो गये ॥ १३ ॥

तमन्तरे पटुवीरो वृष्णिवरिः प्रतापवान् ॥ तिलशः पञ्चभिर्बाणैश्चकार यदुनन्दनः ॥ ८ ॥ ततोऽपरं महत्खड्गं सर्वकाठायसं शुभम् ॥ प्राहिणोत्सारथैः कायमाल्येयाथ निषादजः ॥ ९ ॥ तं चापि दशभिर्बाणैः माधवो यदुनन्दनः ॥ बाह्वोरन्तरयोश्चैव निर्विभेदं महारणे ॥ १० ॥ ततः शक्तिं समादाय घण्टामालाकुलां नृपः ॥ निषादो बलदेवाय प्रेषयित्वा महाबलः ॥ ११ ॥ सिंहनादं महाघोरमकरोत्स निषादपः ॥ सा शक्तिः सर्वकल्याणी बलदेवमुपागतम् ॥ १२ ॥ उत्पतन्ती महाघोरां बलभद्रः प्रतापवान् ॥ आदायाथ निषादेशं सर्वान्विस्मापयन्निव ॥ १३ ॥ तथैव तं जघानाशु वक्षोदेशे स माधवः ॥ स तथा ताडितो वीरः स्वशक्त्याथ निषादपः ॥ १४ ॥ विह्वलः सर्वगात्रेषु निपपात महीतले ॥ प्राणसंशयमापन्नो निषादो रामताडितः ॥ १५ ॥ निषादास्तस्य राजेन्द्र शतशोऽथ सहस्रशः ॥ अष्टाशीतिसहस्राणि निषादास्तस्य योधिनाः ॥ १६ ॥ गदिनः खड्गिनश्चैव मेहष्वासा महाबलाः ॥ शरैरनेकसहस्रैः शक्तिभिश्च परश्वधैः ॥ १७ ॥ गदाभिः पाट्टिशैः शूलैः परिधैः प्राप्तोमरैः ॥ कुन्तैश्च कुठारैश्च यादवानां महोजसाम् ॥ १८ ॥

तब बलरामजीने उसको वक्षस्थलमें ताडन किया जब वीर निषादपति उस अपनी शक्तिसे ताडन किया ॥ १४ ॥ तब सब शरीरसे विह्वल होकर वह पृथ्वीमें गिरा और रामसे ताडित हो निषाद प्राणसंशयको प्राप्त हुआ ॥ १५ ॥ हे राजन् । उसके ताडित होनेपर सैकड़ों निषाद अर्थात् अठासी सहस्र राक्षस उसके साथ युद्ध करनेवाले ॥ १६ ॥ गदा खड्ग लिये महातरकस घोर महाबली सैकड़ों बाण शक्ति फरसे ॥ १७ ॥ गदा पाट्टिश शूल परिघ

प्राप्त तोषर बछी कुठारोंसे महाबली यादवोंको ॥ १८ ॥ शलभकी समान अग्नि प्रदीप्त किये दूसरे रामकी समान बलरामके ऊपर बाणप्रहार करने लगे ॥ १९ ॥ कोई कुहाड़े कोई बरछे और कोई परशोंसे मारने लगे कोई गदा शक्तिसे प्रहार करने लगे ॥ ॥ जिस प्रकार स्फुरायमान अग्निके ऊपर कोई प्रहार करता है, तब बलरामजीने क्रोधकर हलको उठाया ॥ २१ ॥ उन सबको खेंचकर मुशलसे पीड़न करने लगे वे पर्वत आश्रयवाले निषाद इस प्रकार ताड़ित ॥ २२ ॥ सैकड़ों पृथ्वीपर गिरने लगे, हे महाराज ! क्षणमें उन सब महाबलियोंको मारकर ॥ २३ ॥

शलभा इव राजेन्द्र दीप्यमानं हुताशनम् ॥ ते शरैः पातयांचक्रु रामं रामनिवापरम् ॥ १९ ॥ केचित्कुठारेराजघ्नः केचित्कुन्तैः परश्वधैः ॥ गदाभिः केचिदाग्नान्ति शक्तिभिश्च तथा परे ॥ २० ॥ निजघ्नः सहसा रामं स्फुरन्तं पावकं यथा ॥ ततः क्रुद्धो हली साक्षाद्धलमुद्यम्य सत्वरम् ॥ २१ ॥ सर्वानाकर्षयामास मुशलेन हि पीडयन् ॥ ते हन्यमाना राजेन्द्र निषादाः पर्वताश्रयाः ॥ २२ ॥ निपेतुर्धरणीपृष्ठे शतशोऽथ सहस्रशः ॥ क्षणेन तन्महाराज इत्वा सर्वान्महाबलान् ॥ २३ ॥ सिंहवद्व्यनदंस्तत्र तस्थौ रामो महाबलः ॥ ततो रात्रौ महाघोराः पिशाचाः पिशिताशनाः ॥ २४ ॥ आकृण्व मांसयूथानि भक्षयन्तः समासते ॥ पिबन्तः शोणितं कोष्ठात्संछिद्य च शवं बहु ॥ २५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकलव्यसैन्यवधो नामाष्टनवतितमोऽध्यायः ॥ ९८ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ क्रव्यादाः सर्व एवाशु भक्षयन्तस्तदा शवम् ॥ हसन्तो विविधं घोरं नादयन्तो वसुंधराम् ॥ १ ॥ राक्षसाश्च पिशाचाश्च पिबन्तः शोणितं बहु ॥ आशिखं भुञ्जते राजञ्छकस्य पिशिताशनाः ॥ २ ॥

सिंहकी समान शब्द करते बलरामजी वहां स्थित हुए उस रात्रिमें मांस खानेवाले महाघोर पिशाच ॥ २४ ॥ मांसके समूहोंको खेंचकर भक्षण करते हुए स्थित थे और मृतकोंके कोष्ठोंमें छेदकर उनका रुधिर पान करते थे ॥ २५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्य-पर्वणि साषायां एकलव्यसैन्यवधो नामाष्टनवतितमोऽध्यायः ॥ ९८ ॥ वैशंपायन बोले, तब चारों ओरसे क्रव्याद शवोंका भक्षण करने लगे और पृथ्वीको नादित करते वारंवार हास्य करने लगे ॥ १ ॥ राक्षस और पिशाच घोर रुधिर पान करने लगे और वे मांसके खानेवाले शिलाप-

र्यन्त शक्को भक्षण करने लगे ॥ २ ॥ हे राजन् ! वे रणसे संतुष्ट हो वहां नृत्य करने लगे कौए बगले गृध्र श्येन शृगाल ॥ ३ ॥ और राक्षस यह
 युद्धमें मांस भक्षण करते प्रवृत्त हुए इसी समय एकलव्यकी मूर्च्छा जागी ॥ ४ ॥ वह सब पर्वतचारी निषादोंको हत देखकर गदा ले बलरामके ऊपर
 झपटा ॥ ५ ॥ और उस गदाको बलरामजीके शिरपर मारा, हे राजन् ! तब बलरामजीने गदा ग्रहण कर उस निषादपतिकी ॥ ६ ॥ जो बड़ा क्रूर
 था हलायुधने मदमत्त हो गदासे प्रहार किया, तब उनका भयंकर गदायुद्ध होने लगा ॥ ७ ॥ हे राजन् ! उनके युद्धका शब्द आकाशमें होने लगा
 नृत्यन्ति स्म तदा राजन्नगर्ग्यो रणतोषिताः ॥ काक्य बलाका गृध्राश्च श्येना गोमायवस्तथा ॥ ३ ॥ भक्षयन्तः प्रवर्तन्ते राक्षसाश्चैव
 दारुणाः ॥ एतस्मिन्नन्तरे वीरो निषादो लब्धसंज्ञकः ॥ ४ ॥ इतान्सर्वान्समालोक्य निषादान्नगचारिणः ॥ गदामादाय कुपितो
 राममेव जगाम ह ॥ ५ ॥ जवान गदया राजञ्छत्रदेशे निषादपः ॥ ततो रामो मदी राजन्निषादं बाहुशालिनम् ॥ ६ ॥ आजघ्रे
 गदया क्रूरं मदमत्तो हलायुधः ॥ तयोश्च तुमुलं युद्धं गदाभ्यां समवर्तत ॥ ७ ॥ आकाशे शब्द आसीत् तयोर्युद्धे महाभुजः ॥
 समुद्राणां यथा घोषः सर्वेषां सन्निगच्छताम् ॥ ८ ॥ कल्पक्षये महाराज शब्दः सुतुमुलोऽभवत् ॥ क्षोभितो नागराजश्च नागाः क्षोभं
 समापयुः ॥ ९ ॥ पृथिवी चान्तरिक्षं च सर्वं शब्दमयं नभौ ॥ ततः स पौण्ड्रको राजा सात्यकिं वृष्णिनन्दनम् ॥ १० ॥ गदयेव
 जवानाशु सत्वरं रणकोविदः ॥ युयुधानो बली राजन्वासुदेवं जवान ह ॥ ११ ॥ तयोश्च तुमुलः शब्दः प्रादुरास्मिन्महारणे ॥ चतुर्णां
 युध्यतां राजन्परस्परवधेषिणाम् ॥ १२ ॥ ब्रह्माण्डक्षोभणो राजञ्छब्द आसीत्सुदारुणः ॥ ततो रजः प्रादुरभूत्तस्मिन्संग्राममूर्धनि ॥ १३ ॥
 जैसे मर्यादा त्यागकर चलनेसे समुद्रोंका शब्द होता है ॥ ८ ॥ हे महाराज ! वह शब्द कल्पक्षयकी समान हुआ उससे नागराज और नागभी क्षुभित
 हो गये ॥ ९ ॥ पृथ्वी अन्तरिक्ष सब शब्दमय हो गया उस समय पौंड्रक राजा वृष्णिनन्दन सात्यकिको ॥ १० ॥ बहुत शीघ्रतासे गदासे ताडन करता
 हुआ हे राजन् ! सात्यकिने उसको मंदासे ताडन किया ॥ ११ ॥ उस महारणमें उनका भयंकर शब्द होने लगा कारण कि वे चारों परस्पर वधकी
 इच्छासे युद्ध करने लगे ॥ १२ ॥ हे राजन् ! उस समय ब्रह्माण्डका क्षोभ करनेवाला दारुण शब्द हुआ तब उस संग्राममें बड़ी रज उठी ॥ १३ ॥

हे राजन् ! तब अंधकारके क्षय होनेमें तारे कान्तिहीन हो गये फिर प्रातःकाल होनेपर सर्वथा अंधकार नष्ट हो गया ॥ १४ ॥ भगवान् सूर्य उदय हुए चन्द्रकान्ति मलीन हुई तब उन चारों वीरोंका बड़ा युद्ध होने लगा. हे राजन् ! सूर्योदयमें वह युद्ध देवासुरयुद्ध की समान हुआ ॥ १५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पौण्ड्रकयुद्धे नवनवतितमोऽध्यायः ॥ ९९ ॥ वैशम्पायन बोले, तब निर्मल प्रभात होनेमें भगवान् देवकीपुत्र जगत्पति बद्रिकाश्रमसे जानेकी इच्छा करने लगे ॥ १ ॥ हे राजन् ! वे सब सुनियोंको नमस्कार कर द्वारकापुरीको चले और गरुडपर चढ़ बड़े वेगसे

तारका निष्प्रभा राजंस्तमस्येवं क्षये गते ॥ उपसि-प्रतिबुद्धायां ततो निःशेषतां ययौ ॥ १४ ॥ उदितो भगवान्सूर्यश्चन्द्रश्च क्षयमाययौ ॥ तयोर्युद्धं प्रादुरभूच्चतुर्णां बाहुशालिनाम् ॥ देवासुरसमं राजञ्जुदिते भास्करे महत् ॥ १५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पौण्ड्रकयुद्धे नवनवतितमोऽध्यायः ॥ ९९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः प्रभाते विमले भगवान्देवकीसुतः ॥ गन्तुमेच्छजगन्नाथः पुरं बदरिकाश्रमात् ॥ १ ॥ नमस्कृत्य सुनन्तिर्सान्ध्ययौ द्वारवतीं नृप ॥ आरुह्य गरुडं विष्णुर्वेगेन महता प्रभुः ॥ २ ॥ सुमहान्छुश्रुवे शब्दस्तेषां युद्धं प्रकुर्वताम् ॥ गच्छता देवदेवेन पुरीं द्वारवतीं नृप ॥ ३ ॥ अचिन्तयजगन्नाथः को न्वयं शब्द उत्थितः ॥ संग्रामसंभवो घोर आर्यशैनेयसंयुतः ॥ ४ ॥ व्यक्तमागतवान्पौण्ड्रो नगरीं द्वारकामनु ॥ तेन युद्धं समभवत्पौण्ड्रकेन दुरात्मना ॥ ५ ॥ यदूनां वृष्णिवीराणां युद्धयतामितरेतरम् ॥ शब्दोऽयं सुमहान्व्यक्तो नात्र कार्या विचारणा ॥ ६ ॥ इत्येवं चिन्तयित्वा तु दध्मौ शङ्खं महारवम् ॥ पाञ्चजन्यं हरिः साक्षात्प्रणियन्वृष्णिपुङ्गवान् ॥ ७ ॥

गमन किया ॥ २ ॥ तब उनको उन युद्ध करनेवालोंका महाशब्द सुनाई आने लगा, जब कि द्वारकाके समीपमें आगये थे ॥ ३ ॥ तब जगन्नाथ विचारने लगे कि यह कैसा शब्द है इस घोर संग्राममें आर्य (बलराम) और सात्याकिकामी शब्द सुनाई आता है ॥ ४ ॥ इससे विदित होता है अवश्यही पौंड्र द्वारकापुरीमें आया है इस दुरात्मा पौंड्रके साथ युद्ध होता है ॥ ५ ॥ यह वृष्णिवीर यदु महायुद्ध करते हैं इसमें संदेह नहीं कि यह सब शब्द उसीका है ॥ ६ ॥ यह विचार कर हरिने यदुवंशियोंके प्रसन्न करनेको अपना महाशब्दवाला पांचजन्य शंख बजाया ॥ ७ ॥

उस शब्दसे कृष्णने आकाशको पूर्ण कर दिया यादव और वृष्णिवंशी उस शंखका घोर शब्द सुनकर ॥ ८ ॥ जान गये कि श्रीकृष्ण आये निश्चयही यह उनके शंखका शब्द है. हे राजन् ! इस प्रकार वृष्णि और यादवोंने माना ॥ ९ ॥ तब वे वृष्णि और यादव निर्भय हो गये उसी समय पक्षियोंमें श्रेष्ठ गरुडजी दीखे ॥ १० ॥ तब वह देवकीपुत्र उन यादवोंके द्वारा देखे गये सूत मागध उन जगत्पति के आगे चलने लगे ॥ ११ ॥ स्तुतियोग्य लक्ष्मीपति कमलाकान्तकी वह स्तुति करने लगे और सब यादव श्रीकृष्णके पीछे गमन करने लगे ॥ १२ ॥

रोदसी पूरयामास तेन शब्देन केशवः ॥ यादवा वृष्णयश्चैव श्रुत्वा शङ्कस्य ते रवम् ॥ ८ ॥ व्यक्तमायाति भगवान्पाञ्चजन्यरवो ह्ययम् ॥ इति ते मेनिरे राजन्वृष्णयो यादवास्तथा ॥ ९ ॥ निर्भयाः समपद्यन्त वृष्णयो यादवाश्च ते ॥ तस्मिन्नेव क्षणे दृष्टस्ताक्षर्यश्च पततां वरः ॥ १० ॥ ततश्च देवकीसुनुर्दृष्टस्तेर्भादवेश्वरः ॥ सूताश्च मागधाश्चैव पुरो यान्ति जगत्पतेः ॥ ११ ॥ स्तुत्या स्तुतं हारं विष्णुमीश्वरं कमलक्षणम् ॥ भ्राताश्च यादवाः सर्वे शरिववृर्जनार्दनम् ॥ १२ ॥ कृष्णस्तु गरुडं भूयो गच्छ त्वं नाकमुत्तमम् ॥ इत्युक्त्वा गरुडं विष्णुर्विसृज्य यदुनन्दनः ॥ १३ ॥ दारके पुनराहेदं रथमानय मे प्रभो ॥ स तयेति प्रतिज्ञाय रथमादाय सत्वरम् ॥ १४ ॥ रथोऽयं भगवन्देव किमतः कृत्यमस्ति मे ॥ संप्रुक्त्वा रथमादाय प्रणम्याग्रे स्थितो हरेः ॥ १५ ॥ गतेऽथ गरुडे विष्णू रथमारुह्य सत्वरम् ॥ यत्र युद्धं भवति तत्र माति सम केशवः ॥ १६ ॥ तत्र गत्वा महाराज युद्धयतां च महात्मनाम् ॥ पाञ्चजन्यं महाशङ्खं दध्मो यदुवृषोत्तमः ॥ १७ ॥

तब श्रीकृष्णने गरुडके प्रति स्वर्ग जानेको कहा जब ऐसा कह श्रीकृष्णने गरुडको विदा किया ॥ १३ ॥ तब दारुडको आज्ञा दी कि हमारा रथ लाओ वह बहुत अच्छा ऐसा कह शीघ्र रथको लाता हुआ ॥ १४ ॥ और बोला हे भगवन् देव ! यह रथ विदामान है कहिये अब क्या आज्ञा है यह कह रथ लिये प्रणाम कर नारायणके आगे स्थित रहा ॥ १५ ॥ गरुडके चले जानेपर विष्णुजी उत्तम रथके ऊपर स्थित हो जहां युद्ध हो रहा था वहां श्रीकृष्ण गये ॥ १६ ॥ हे महाराज ! वहां जाकर उन महात्माओंको युद्ध करते देख यदुभेठने अपना उत्तम पांचजन्य शंख बजाया ॥ १७ ॥

तब पौंड्रकने श्रीकृष्णको युद्धके निमित्त आया देखकर सात्यकिको छोड़ श्रीकृष्णके सन्मुख उपास्थित हुआ ॥ १८ ॥ तब क्रोधकर सात्यकिने राजाको निवारण किया. हे राजन् ! जब मैं सन्मुख स्थित हूँ तो मुझे छोड़ कहां जाते हो सनातन धर्म क्यों छोड़ते हो ॥ १९ ॥ हे राजेन्द्र ! मुझे जीतकर फिर दूसरेके साथ युद्ध करनेको जाओ हे वीर ! मेरे स्थित होनेमें क्षत्रियताको छोड़ जाना उचित नहीं है ॥ २० ॥ मैं युद्धमें तुम्हारा सम्पूर्ण गर्व नष्ट कर दूंगा यह कह यादवेश्वर उस जाते हुएके आगे स्थित हुआ ॥ २१ ॥ पौंड्रके आगे जब सात्यकि स्थित हुआ तब केशवने देखा तब

पौण्ड्रोऽथ वासुदेवस्तु कृष्णं दृष्ट्वा रणोत्सुकम् ॥ सात्यकिं पृष्ठतः कृत्वा वासुदेवमुपागमत् ॥ १८ ॥ क्रुद्धोऽथ सात्यकी राजन्वा-
स्यामास पौण्ड्रकम् ॥ न गन्तव्यमितो राजन्नेष धर्मः सनातनः ॥ १९ ॥ जित्वा मां गच्छ राजेन्द्र परं योद्धुं महारणे ॥ क्षत्रियोऽसि
महावीर स्थिते मयि रणोत्सुके ॥ २० ॥ एष ते गर्वमखिलं नाशयिष्यामि संयुगे ॥ इत्युक्त्वा चाग्रतस्तस्थौ गच्छतो यादवे-
श्वरः ॥ २१ ॥ पौण्ड्रस्य शिनिनप्ता तु पश्यतः केशवस्य ह ॥ अवज्ञाय शिनेः पौत्रं कृष्णमेव जगाम ह ॥ २२ ॥ निर्भर्त्स्य
सदृसा भूयः सात्यकिः क्रोधमूर्च्छितः ॥ गदया प्राहरत्पौण्ड्रं वासुदेवस्य पश्यतः ॥ २३ ॥ यथाम्राणं यथायोगं सात्यकिः सत्य-
विक्रमः ॥ दृष्ट्वाथ भगवानेवं सात्यकिं प्रशंसं ह ॥ २४ ॥ निवार्य सात्यकिं कृष्णो यथेष्टं क्रियतामसौ ॥ उपारमद्यथायोगं सात्यकिः
कृष्णवारितः ॥ २५ ॥ स ततः पौण्ड्रको राजा वासुदेवमुवाच ह ॥ भो भो यादव गोपाल इदानीं क्व गतो भवान् ॥ २६ ॥

सात्यकिका तिरस्कार कर वह श्रीकृष्णकेही सन्मुख चला ॥ २२ ॥ उसके बारंवार घुड़कनेमें सात्यकि क्रोधसे मूर्च्छित हो गया और श्रीकृष्णके देसते पौंड्रके ऊपर गदा प्रहार किया ॥ २३ ॥ सत्यविक्रम सात्यकिने अपने पूरे बलसे प्रहार किया यह देखकर भगवान् ने सात्यकिकी प्रशंसा की ॥ २४ ॥ तब श्रीकृष्णने सात्यकिको निवारण कर कहा इसे यथेष्ट करने दो, तब कृष्णके निषेध करनेसे सात्यकि निवारित हुआ ॥ २५ ॥ तब पौंड्रकने वासु-
देवसे कहा. हे यादव गोपाल इतने समयतक तू कहां था ॥ २६ ॥

मैं वासुदेव तुम्हें देखनेको आया हूं हे कृष्ण ! बलसहित मैं तुमको मारकर अपनी सेनाके साथ ॥ २७ ॥ पृथ्वीमें एकही वासुदेव हूंगा हे गोविंद ! जो तुम्हारा बोर विस्वात चक्र है ॥ २८ ॥ और इस तुम्हारे चक्रसे मैं पीडित हूंगा. हे माधव ! इस समय तुम्हारे चक्रमें जो बल है ॥ २९ ॥ सो सब क्षत्रियोंके देखते वह सब बल मैं नष्ट करूंगा मुझ शार्ङ्गीके सामने शार्ङ्गी नहीं रह सकते ॥ ३० ॥ हे माधव ! तुम्हारे शंखमें जो बल है सो दिखाओ. हे जनार्दन ! शंख चक्र गदाका धारण करनेवाला मैं हूं ॥ ३१ ॥ मुझहीको बलशाली ऐसा कहते हैं, पहले तुमने बली वृद्ध बालक

त्वां द्रष्टुमथ संप्राप्तो वासुदेवोऽस्मि साम्प्रतम् ॥ हत्वा त्वां सबलं कृष्ण बलैर्बहुभिरान्वितः ॥ २७ ॥ अहमेको भविष्यामि वासुदेवो महीतले ॥ यच्चक्रं तव गोविन्द प्रथितं सुप्रभं महत् ॥ २८ ॥ अनेन तव चक्रेण पीडितोऽस्मि च तद्रणे ॥ चक्रमस्तीति तद्वीर्यं तव माधव साम्प्रतम् ॥ २९ ॥ नाशयिष्यामि तत्सर्वं सर्वक्षत्रस्य पश्यतः ॥ शार्ङ्गीति मां विजानीहि न त्वं शार्ङ्गीति शिष्यते ॥ ३० ॥ (शंखमस्तीति तद्वीर्यं तव माधव साम्प्रतम्) ॥ शंखी चाहं गदी चाहं चक्री चाहं जनार्दन ॥ ३१ ॥ मामेव हि सदा ब्रूयुर्जानन्तो वीर्यशालिनः ॥ आदौ त्वं बलवद्वृद्धान् हत्वा स्त्रीबालकान्बहून् ॥ ३२ ॥ गाञ्च हत्वा महागर्वस्तव सम्प्रति वर्त्तते ॥ तत्तेऽहं व्यपनेष्यामि यदि तिष्ठसि मत्पुरः ॥ ३३ ॥ शस्त्रं गृहाण गोविन्द यदि योद्धुं व्यवस्थितः ॥ इत्युक्त्वा बाणमादाय तस्थो पार्श्वे जगत्पतेः ॥ ३४ ॥ एतद्वचनमाकर्ण्य वासुदेवेन भाषितम् ॥ स्मितं कृत्वा हरिः कृष्णो बभाषे पौण्ड्रकं नृपम् ॥ ३५ ॥ कामं वद नृप त्वं हि पातक्यस्मि सदा नृप ॥ गोघाती बालघाती च स्त्रीहन्ता सर्वथा नृप ॥ ३६ ॥

और स्त्री बहुतोंको मारा है ॥ ३२ ॥ और बैलको मारकर सम्प्रति तुमको बड़ा गर्व हो रहा है, सो जो मेरे सामने तुम स्थित रहे तो वह तेरा घमण्ड मैं दूर कर दूंगा ॥ ३३ ॥ हे गोविन्द ! यदि युद्ध करना प्रिय मानते हो तो शस्त्र ग्रहण करो यह कह बाण लेकर जगत्पतेके आगे स्थित हुआ ॥ ३४ ॥ पौंड्रक वासुदेवके कहे यह वचन सुनकर हँसकर श्रीकृष्ण उससे कहने लगे ॥ ३५ ॥ हे राजन् ! मैं पातकी हूं इस बातको आप

अच्छी प्रकार कहिये गोवाती बालवाती तथा सर्वथा मैं स्त्रीहन्ता हूं ॥ ३६ ॥ हे राजन् ! तुमही सदा शंख चक्र गदा धारण करनेवाले हो और मेरा वासुदेव नाम मिथ्याही है ॥ ३७ ॥ शार्ङ्ग धनुष चक्र गदा शंख यह सब वृथाही है परन्तु यदि मानो तो मैं कुछ कहता हूं बली क्षत्रिय मुझ जगत्पतिके स्थित होनेमें ॥ ३८ ॥ मेरे जीवित होनेमेंभी तुमको ऐसा कहते हैं और जो असुरोंको मारनेवाला तुम्हारा महाचक्र है ॥ ३९ ॥ मेरा चक्र बडेपनमें उसकी बराबर बलमें नहीं आयुधोंमें भी शब्दमात्रसे सादृश्यता है बलसे नहीं है ॥ ४० ॥ हे राजन् ! मैं सदा प्राणियोंके प्राणका देनेवाला गोप

चक्री भव गदी राजञ्छार्ङ्गी च सततं भव ॥ नामधेयं वृथा मया वासुदेवेति च प्रभो ॥ ३७ ॥ शार्ङ्गी चक्री गदी शङ्खीत्येवमादि वृथा मम ॥ किं तु वक्ष्यामि किंचित् शृणुष्व यदि मन्यसे ॥ क्षत्रिया बलिनो ये तु स्थिते मयि जगत्पतो ॥ ३८ ॥ तथा नु ब्रुवते त्वां हि जीवत्येव मयि प्रभो ॥ यत्ते चक्रं महाघोरमसुरान्तकरं महत् ॥ ३९ ॥ तत्तुल्यं मम चक्रं तु वृत्ततो न तु वीर्यतः ॥ आयुधेष्वथ सर्वत्र शब्दसादृश्यमस्ति ते ॥ ४० ॥ गोपोऽहं सर्वदा राजन्प्राणिनां प्राणदः सदा ॥ गोप्ता सर्वेषु लोकेषु शास्ता दुष्टस्य सर्वदा ॥ ४१ ॥ कथनं सर्वकार्यं हि जित्वा शत्रून्प्राधम ॥ अजित्वा किं भवान्ब्रूते स्थिते मयि च शस्त्रिणि ॥ ४२ ॥ हत्वा मां ब्रूहि राजेन्द्र यदि शक्तोऽसि पौण्ड्रक ॥ स्थितोऽहं चक्रमाश्रित्य रथी चापी गदासिमान् ॥ ४३ ॥ रथमारुह्य युद्धाय सन्नद्धो भव मानद ॥ इत्युक्त्वा भगवान्विष्णुः सिंहनादं व्यनीनदत् ॥ ४४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कै० कृष्णपौण्ड्रकयुद्धं नाम शततमोऽध्यायः ॥ १०० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः शरं समादाय वासुदेवः प्रतापवान् ॥ पौण्ड्रं जघान सहसा निशितेन शरेण ह ॥ १ ॥

हूं सब लोकका रक्षक और दुष्टोंका शास्ता हूं ॥ ४१ ॥ हे नृपाधम ! सब शत्रुओंको जीतकर कार्यका कथन करना ठीक है मुझ शस्त्रधारीके विना जीते तुम किस प्रकार ऐसा कहते हो ॥ ४२ ॥ हे पौंड्रक ! यदि समर्थ है तो मुझको जीतकर ऐसा कह, मैं चक्र रथ गदा चाप तलवारसे युक्त हूं ॥ ४३ ॥ तुम रथपर स्थित युद्धके निमित्त तैयार हो. हे मानद ! शीघ्र आओ यह कह भगवान् विष्णुने सिंहनाद किया ॥ ४४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पौंड्रकयुद्धं नाम शततमोऽध्यायः ॥ १०० ॥ वैशम्पायन बोले, तब प्रतापवान् वासुदेव तीक्ष्ण बाण लेकर

पौंड्रकको तीक्ष्ण बाणसे ताडन करते हुए ॥ १ ॥ तब पौंड्रकवासुदेवने दश बाणोंसे वृष्णिनंदन वासुदेवको ताडन किया ॥ २ ॥ पच्चीस बाणसे दारुकको दश बाणसे घोड़ोंको और सत्तर बाणसे वासुदेवको ताडित किया ॥ ३ ॥ तब केशिविषूदन हास्य करके मनसेही इसकी बड़ाई करके ॥ ४ ॥ बलवान् अपना शार्ङ्ग धनुष चढाकर तीक्ष्ण बाणोंसे उसकी ध्वजाओंको छेदन कर दिया ॥ ५ ॥ और फिर यदुनंदनने सारथिका शिर उसकी कायासे पृथक् कर दिया, और चार बाणोंसे चारों घोड़ोंको मार दिया ॥ ६ ॥ फिर राजाके रथ और उनके पार्ष्णिग्राहोंको मार दिया और चक्रको तिलकी समान

पौण्ड्रोऽथ वासुदेवस्तु शरैर्दशभिराशुभैः ॥ वासुदेवं जघानाशु वाष्णेयं वृष्णिनन्दनम् ॥ २ ॥ दारुकं पञ्चविंशत्या हयान्दशभिरेव च ॥ सप्तत्या वासुदेवं तु यादवं वासुदेवकः ॥ ३ ॥ ततः प्रहस्य सुचिरं केशवः केशिसूदनः ॥ दृष्टोऽसाविति मनसा संपूज्य यदुनन्दनः ॥ ४ ॥

आकृष्य शार्ङ्गं बलवान्संधाय रिपुसूदनः ॥ नाराचेन सुतीक्ष्णेन ध्वजं चिच्छेद् केशवः ॥ ५ ॥ सारथेश्च शिरः कायादाहत्य यदुनन्दनः ॥ अर्थाश्च चतुरो हत्वा चतुर्भिः सायकोत्तमैः ॥ ६ ॥ रथं राज्ञः समाहत्य तदोभौ पार्ष्णिसारथी ॥ चक्रं च तिलशः कृत्वा इसकिंचिदिव स्थितः ॥ ७ ॥ पौण्ड्रको वासुदेवस्तु रथादुत्प्लुत्य सत्वरः ॥ आदाय निशितं खड्गं प्राहिणोत्केशवाय सः ॥ ८ ॥

स खड्गं शतधा कृत्वा तूष्णीमासीच्च केशवः ॥ ततः परं महाघोरं परिघं कालसंमितम् ॥ ९ ॥ गृहीत्वा वासुदेवाय वासुदेवः प्रतापवान् ॥ प्राहिणोद्वृष्णिवीराय सर्वशत्रुस्य पश्यतः ॥ १० ॥ तद्विधा जगतां नाथश्चकार यदुनन्दनः ॥ ततश्चक्रं महाघोरं सहस्रारं महाप्रभम् ॥ ११ ॥ त्रिशङ्गारसमायुक्तमायसास्यममित्रदा ॥ आदायाथ महाराज केशवं व्यक्यमब्रवीत् ॥ १२ ॥

काटकर मार दिया ॥ ७ ॥ तब पौंड्रक वासुदेव शीघ्र रथसे उतरकर तीक्ष्ण खड्ग लेकर केशवके ऊपर प्रहार करता हुआ ॥ ८ ॥ श्रीकृष्णने उस खड्गके सौ खण्ड कर दिये और चुप रहे तब महाघोर कालकी समान परिघ लेकर ॥ ९ ॥ प्रतापवान् पौंड्रकने श्रीकृष्णके ऊपर प्रहार किया यह सब हस्त्रियोंने देखा ॥ १० ॥ जगन्नाथ यदुनंदनने उसके दो खण्ड कर दिये तब अपना सहस्र आरेवाला महाघोर चक्र लेकर ॥ ११ ॥ जो कि तीस गारका लोहमय था उसको ग्रहण कर पौंड्रक श्रीकृष्णसे कहने लगा ॥ १२ ॥

इस घोरचक्रको देखो यह तुम्हारा दर्प चूर्ण करेगा. हे गोविंद ! महागर्वीले ! इसी चक्रसे तुम्हारा गर्व ॥ १३ ॥ सब क्षत्रियोंके देखते दूर कहंगा तुम्हारे उद्देश्यसे दूसरोंको दुरासद यह छोड़ंगा ॥ १४ ॥ हे कृष्ण ! यदि समर्थ हो तौ इस चक्रको तोड़ो, यह कह वह महाबली उसको सौ बार बुमाकर ॥ १५ ॥ राजा पौंड्रक श्रीकृष्णके ऊपर छोटता हुआ तब महाबलीने क्रुदकर उस चक्रको वंचित कर दिया ॥ १६ ॥ तब उस वीर्यवान् ने महाघोर सिंहनाद किया जिसको सुनकर भगवान् देवकीपुत्र परम विस्मयको प्राप्त हुए ॥ १७ ॥ आश्चर्य है कि इस पौंड्रकका वीर्य और धैर्य दुस्सह पश्येदं निशितं घोरं तव चक्रविनाशनम् ॥ अनेन तव गोविन्द दर्पं दर्पवतां वर ॥ १३ ॥ अपनेष्यामि वाष्णेय सर्वक्षत्रस्य पश्यतः ॥ त्वामुद्दिश्य महाघोरं कृतमन्यदुरासदम् ॥ १४ ॥ यदि शक्तो हरे कृष्ण दारयेदं महारूपदम् ॥ इत्युत्तवा तच्छतगुणं भ्रामयित्वा महाबलः ॥ १५ ॥ चिक्षेपाथ महावीर्यः पौण्ड्रको नृपसत्तमः ॥ अवप्लुत्य ततो देशात्तदुत्सृज्य महाबलः ॥ १६ ॥ सिंहनादं महाघोरं व्यनदद्वीर्यवांस्तदा ॥ ततो विस्मयमापन्नो भगवान्देवकीसुतः ॥ १७ ॥ अहो वीर्यमहो धैर्यमस्य पौण्ड्रस्य दुःसहम् ॥ इति मत्वा जगन्नाथ उत्थितश्च रथोत्तमात् ॥ १८ ॥ ततः शिलां समादाय प्रेषयामास केशवम् ॥ तां शिलां प्रेषयामास तस्मै यदुकुलोद्ग्रहः ॥ १९ ॥ पौण्ड्रेण सुचिरं कालं विक्रीड्य भगवान् हरिः ॥ ततश्चक्रं समादाय निशितं रक्तभोजनम् ॥ २० ॥ दैत्यमांसप्रदिग्धाङ्गं नारीगर्भविमोचनम् ॥ शातकुम्भमयं घोरं दैत्यदानवनाशनम् ॥ २१ ॥ सहस्रारं शतारं तदद्भुतं दैत्यभीषणम् ॥ ऐश्वर्यवर्म परमं नित्यं सुरगणाचिंतम् ॥ २२ ॥ विष्णुः कृष्णस्तथा शार्ङ्गो नित्ययुक्तः सदा हरिः ॥ जघान तेन गोविन्दः पौण्ड्रकं नृपसत्तमम् ॥ २३ ॥

हे यह विचार कर जगन्नाथ रथसे उठे ॥ १८ ॥ तब उसने शिला लेकर भगवान् के ऊपर छोड़ी यदुकुलोत्पन्नने उस शिलाका उसहीके ऊपर प्रहार किया ॥ १९ ॥ इस प्रकार भगवान् हरि पौंड्रकके साथ बहुत समयतक क्रीडा करके रक्तभोजन करनेवाले तीक्ष्ण चक्रको ग्रहण करते हुए ॥ २० ॥ जिसका अंग दैत्योंके मांससे अर्चित था जो स्त्रियोंका गर्भ मोचन करनेवाला सुवर्णनिर्मित महाघोर दैत्य दानवोंका नाश करनेवाला ॥ २१ ॥ सहस्र शत आरोंसे युक्त अद्भुत दैत्योंको भय देनेवाला परम ऐश्वर्यका वस्तरूप देवगणोंसे अर्चित ॥ २२ ॥ जिससे शार्ङ्गधारी विष्णु कृष्ण सदा युक्त रहते

हैं उस चक्रसे गोविन्दने पौंड्रको मारा ॥ २३ ॥ वह मांसभोजी चक्र तत्काल उसका देह विदीर्ण कर सर्वेश्वर कृष्णकेही हाथमें फिर आनकर प्राप्त हुआ ॥ २४ ॥ तब पौंड्रक राजा प्राणरहित हो पृथ्वीमें गिरा इस प्रकार दुर्विज्ञेयगति प्रभु भगवान् उसको मारकर यादवोंसे पूजित हो सुधर्मा सभामें आनकर प्राप्त हुए ॥ २५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां पौंड्रकवासुदेववधो नामैकाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०१ ॥

वैशम्पायन बोले, तब वीर्यवानोंमें श्रेष्ठ बलरामजीने एकलव्य निषादपतिको शक्तिसे ताड़न कर बड़ा सिंहनाद किया ॥ १ ॥ तब निषादेशने क्रोधकर तस्य देहं विदार्यांशु चक्रं पिशितभोजनम् ॥ कृष्णस्याथ करं भूयः प्राप सर्वेश्वरस्य ह ॥ २४ ॥ ततः स पौण्ड्रको राजा गतासुः प्रापतद्भुवि ॥ निहत्य भगवान्विष्णुर्दुर्विज्ञेयगतिः प्रभुः ॥ प्रतिपेदे सुधर्मा तु यादवैः पूजितो हरिः ॥ २५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां पौंड्रकवासुदेववधो नामैकाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०१ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ निषादेशं ततो रामः शक्त्या वीर्यवतां वरः ॥ आजघान स्तनद्वन्द्वे सिंहनादं व्यनीनदत् ॥ १ ॥ ततः क्रुद्धो निषादेशो रामं मत्तं महाबलम् ॥ गदया लोकविख्यातो जघान स्तनवक्षसि ॥ २ ॥ आहतः स तु तेनाशु बलभद्रो महाबलः ॥ उभाभ्यां चैव रामस्तु कराभ्यां वृष्णि-पुङ्गवः ॥ ३ ॥ गदां मृह्य महाघोरामायान्तां प्राणहारिणीम् ॥ दुद्रवाथ निषादेशः समुद्रं मकराज्यम् ॥ ४ ॥ धावत्येवं तदा राज्ञि एकलव्ये निषादपे ॥ धावत्येवं च रामोऽपि यत्र यातो निषादपः ॥ ५ ॥ सागरं स प्रविश्याशु गत्वा योजनपञ्चकम् ॥ भीत एव तदा राजन्नेकलव्यो निषादपः ॥ ६ ॥ कंचिद्दीपान्तरं राजन्प्रविश्य न्यवसत्तदा ॥ ततो रामो निषादेशं जिगाय यदुनन्दनः ॥ ७ ॥ मत्तं महाबली बलरामको लोकविख्यात अपनी गदासे छातीमें ताड़न किया ॥ २ ॥ महाबली बलभद्र उस गदासे ताड़ित होकर तत्काल अपने दोनों हाथोंसे ॥ ३ ॥ प्राण हरनेवाली महाघोर गदाको ग्रहण कर समुद्रमें मकरकी समान निषादपतिके ऊपर धावमान हुए ॥ ४ ॥ जब राजा एकलव्य इस प्रकार धावमान हुआ तब वह जिधर चला उधरही बलरामजी धावमान होने लगे ॥ ५ ॥ फिर सागरमें प्रवेश कर पांच योजनतक जाकर एक-लव्य राजा मयभीत हो ॥ ६ ॥ किसी और द्वीपमें प्रवेश कर निवास करने लगा तब राम इस प्रकार निषादपतिको जीतकर ॥ ७ ॥

हं.
॥१२५॥

उस मणिरत्नोंसे शोभित सभामें बलरामजी प्रविष्ट हुए और युद्धसंसक्त सात्यकिभी उस सभामें प्रविष्ट हुआ ॥ ८ ॥ दूसरे यादवभी यथायोग्य उपस्थित हुए जब चारों ओरसे वृष्णिवीर उपस्थित हुए ॥ ९ ॥ तब केशव यथायोग्य सब वृष्णियोंको अभिवादन कर भगवान् देवकीपुत्र समयके अनुसार वचन कहने लगे ॥ १० ॥ कैलास शिखरपर नीललोहित शंकरका दर्शन किया, हे यदुवीरो ! उन्होंने प्रसन्न होकर मुझे वर दिया है ॥ ११ ॥ वहां देवता और तपोधन मुनिभी आये थे मुझे देख शंकर प्रसन्न हो स्तुति कर चले गये ॥ १२ ॥ हे यादवश्रेष्ठो ! रात्रिमें मैंने बड़ा अद्भुत कृत्य देखा दो महाघोर पिशाच मेरी कथा कहते थे ॥ १३ ॥ और

तां सभां मणिरत्नाढ्यां प्रविवेश हलायुधः ॥ सात्यकिर्युद्धसंसक्तस्तां सभां प्रविवेश ह ॥ ८ ॥ अन्ये च यादवा राजन्यथायोगमुपस्थितः ॥ आसीनेषु च सर्वेषु वृष्णिवीरेषु सर्वतः ॥ ९ ॥ अभिवाद्य यथायोगं वृष्णीन्सर्वांश्च केशवः ॥ उवाच वचनं काले भगवान् देवकीसुतः ॥ १० ॥ दृष्टं कैलासशिखरं शंकरो नीललोहितः ॥ स तु मह्यं यदुवराः प्रीतिमांश्च ददौ वरम् ॥ ११ ॥ तत्र देवाः समायाता मुनयश्च तपोधनाः ॥ दृष्ट्वा मां शंकरश्चैव प्रीतः स्तुत्वा समाययो ॥ १२ ॥ अत्यद्भुतं मया दृष्टं रात्रौ यादवसत्तमाः ॥ पिशाचौ द्वौ महाघोरौ वदन्तौ मामिकां कथाम् ॥ १३ ॥ मृगयां चक्रतुस्तौ तु चिन्तयन्तौ तु मां सदा ॥ दृष्ट्वा मां तौ तु राजेन्द्राः प्रीतिमन्तौ तपस्विनौ ॥ १४ ॥ भक्तिनम्रौ महात्मानौ प्रणामं चक्रतुस्तदा ॥ ततोऽहं सर्वथा प्रीतिस्तौ नीतौ स्वर्गमुत्तमम् ॥ १५ ॥ तोषयित्वा महादेवं मया चाद्य समागतम् ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततस्ते वृष्णयः सर्वे देवदेवं शशंसिरे ॥ १६ ॥ सर्वथा कृतकृत्यास्ते वृष्णयः केशवाश्रयाः ॥ यादवाः सर्व एवेते स्वं स्वं जन्मुर्बथालयम् ॥ १७ ॥

मृगया करते हुए दोनों मेरा चिन्तन करते थे, हे राजेन्द्र ! दोनों मुझे देखकर प्रीति करते हुए कारण कि तपस्वी थे ॥ १४ ॥ वे दोनों महात्मा प्राकृतिसे नम्र हुए मुझे प्रणाम करने लगे तब मैंने सर्वथा प्रसन्न हो उनको स्वर्गकी प्राप्ति कर दी ॥ १५ ॥ और फिर महादेवको संतुष्ट कर मैं इस स्थानमें आनकर प्रात हुआ हूं, तब वे सब वृष्णिवंशी उन देवदेवकी प्रशंसा करने लगे ॥ १६ ॥ सर्वथा वे केशवके आश्रयवाले वृष्णिवंशी कृतकृत्य हुए और सब यादव

भा. टी.

प ३५१०८

॥१२५॥

देवदेवकी प्रशंसा करते अपने २ स्थानको गये ॥ १७ ॥ तब रुक्मिणीके भवनमें नारायण प्रविष्ट हुए रुक्मिणी और सत्यभामासे हरिने वह सब वृत्तान्त कहा ॥ १८ ॥ वे केशवके साथ महाप्रीति युक्त हुई यह केशवकी सब चेष्टा तुमसे वर्णन की ॥ १९ ॥ महाबली दुष्टोंको मार इस प्रकार वह सब पृथ्वीकी पालना करते हुए घोरकर्मा नरक और नृपश्रेष्ठ पौंड्रकको ॥ २० ॥ तथा हयग्रीव निशुंभ सुन्द उपसुन्दको मारकर मुनियोंसे अर्चित हो देवेश विप्रोंकी रक्षा करने लगे ॥ २१ ॥ ब्राह्मणोंके निमित्त केशवने बहुत द्रव्य और गौबोंका दान किया अग्निहोत्र करते ब्राह्मणोंको तृप्त करते हुए ॥ २२ ॥

अभ्यन्तरे जगन्नाथः प्रविश्य हरिरीश्वरः ॥ रुक्मिणीसत्यभामाभ्यामाचचक्षे यथाभवत् ॥ १८ ॥ ते प्रीते प्रीतियुक्तेन केशवेन समन्विते ॥ एतत्ते सर्वमाख्यातं केशवस्य विचेष्टितम् ॥ १९ ॥ शशास पृथिवीं कृत्स्नां दुष्टान् हत्वा महाबलान् ॥ नरकं घोरकर्माणं पौण्ड्रकं नृपसत्तमम् ॥ २० ॥ हयग्रीवं निशुम्भं च तथा सुन्दोपसुन्दकौ ॥ ररक्ष विप्रान् देवेशो मुनीन्मुनिवरौचितः ॥ २१ ॥ विप्रेभ्यश्च ददौ वित्तं गाश्च दत्त्वा स केशवः ॥ अग्निहोत्रं प्रयुञ्जानो ब्राह्मणांश्च सुतर्पयन् ॥ २२ ॥ मुनींश्च ब्रह्मचर्येण देवान्यज्ञैरनेकधा ॥ स्वधया च पितृन्सर्वान्प्रीणयन्नेव सर्वदा ॥ २३ ॥ तस्मिञ्छासति देवेशे राज्यं निष्कण्टकं प्रभो ॥ सुखमेव प्रजाः सर्वा जीवन्ति ब्राह्मणादयः ॥ २४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां पौण्ड्रकवधसमाप्तौ द्वाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०२ ॥ जनमेजय उवाच ॥ भूय एव द्विजश्रेष्ठ शङ्खचक्रगदाभृतः ॥ चरितं श्रोतुमिच्छामि विस्तरेण तपोधन ॥ १ ॥

ब्रह्मचर्यसे मुनियोंको यज्ञोंसे देवतोंको और स्वधासे पितरोंको तृप्त करते हुए ॥ २३ ॥ उस देवेशको निष्कण्टक राज्य करनेमें ब्राह्मणादि सब प्रजा सुखसे निवास करती थी ॥ २४ ॥ इति श्रीम० खि० हरिवंशे भविष्यपर्वणि साषायां कैलासयात्रायां पौण्ड्रकवधसमाप्तौ द्वाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०२ ॥ जनमेजय बोले, हे द्विजश्रेष्ठ ! आप फिरभी शंख चक्र गदा धारण करनेवाले श्रीकृष्णका चरित्र कहिये, हे तपोधन ! विस्तारसे कहो ॥ १ ॥

केशवसंबन्धी कथा सुनते मेरी तृप्ति नहीं होती है ऐसा कौन है जो देवदेव चक्रवर्ती हरिके ॥ २ ॥ चरित्र श्रवण कर उसमें रमण करता हुआ रातदिन तृप्त हो यही एक पुरुषार्थ है कि नारायणकी कथा श्रवण करे ॥ ३ ॥ अब यह कहिये कि जगत्के वास्ते हंस डिम्भककी लड़ाई सब जगत्को विस्मयदायक किस प्रकारसे हुई ॥ ४ ॥ महात्मा विचक्र दानवका युद्ध कैसे हुआ हमने सुना है कि प्रथम उनकी मित्रता थी ॥ ५ ॥ उनके दो पुत्र बड़े बली भृगुके शिष्य हुए वह वीर सम्पूर्ण अस्त्रमें कुशल और हरिसे वर पाये हुए थे ॥ ६ ॥ आपने पहले कहा है कि उनमें बड़ा संग्राम हुआ था और

नाहि ते तृप्तिरस्तीह शृण्वतः केशवीं कथाम् ॥ को नु नाम हरेर्विष्णोर्देवदेवस्य चक्रिणः ॥ २ ॥ शृण्वंस्तथा रमन्वापि तृप्तिं याति दिवानिशम् ॥ पुरुषार्थोऽयमेवैको यत्कथाश्रवणं हरेः ॥ ३ ॥ कथमासीनगद्धेतोर्हंसस्य डिम्भकस्य च ॥ समितिः सर्वभूतानां सदा विस्मयदायिनी ॥ ४ ॥ विचक्रस्य कथं युद्धं दानवस्य महात्मनः ॥ स तयोर्मित्रतां यात इत्येवमनुशुश्रुम ॥ ५ ॥ तौ सुतो वीर्यसंपन्नौ शिष्यौ भृगुसुतस्य ह ॥ सर्वास्रकुशलो वीरौ हरेर्लब्धवरो किल ॥ ६ ॥ संग्रामः सुमहानासीदित्युक्तं भवता पुरा ॥ तयोश्च नृपयोर्विप्र केशवस्य जगत्पतेः ॥ ७ ॥ कस्य पुत्रौ समुत्पन्नौ यथाभूद्विग्रहो महान् ॥ अष्टाशीतिसहस्राणि दानवानां तरस्विनाम् ॥ ८ ॥ बलान्यथ विचक्रस्य शितशूलधराणि च ॥ आसन् युद्धे महाराज दानवस्य महात्मनः ॥ ९ ॥ यदूनामन्तरं प्रेम्सुर्यदूनां युद्धकाङ्क्षया ॥ देवासुरे महायुद्धे देवान् जयति दुर्धरः ॥ तद्वधार्थं सदा यत्नमकरोच्चैव केशवः ॥ १० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्यानं त्र्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०३ ॥

उनका केशवके साथभी संग्राम हुआ था ॥ ७ ॥ वह किसके पुत्र हुए जिससे महाविग्रह हुआ अष्टाशी सहस्र बड़े शीघ्रगामी दानवोंका ॥ ८ ॥ जो कि विचक्रकी सेना थी उन तीक्ष्ण शूलधारी महात्मा दानवोंका युद्ध हुआ ॥ ९ ॥ यदुओंका अन्तर देखनेवाले यदुओंसे युद्ध करनेवाले देवासुरके महायुद्धमें उसने देवताओंको जीता था श्रीकृष्णने उसके मारनेको सदा यत्न किया ॥ १० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसडिम्भकोपाख्यानं

अधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०३ ॥ वैशंपायन बोले, हे राजन् । शाल्ववंशमें ब्रह्मदत्त नाम राजा था वह पवित्र आत्मा सब प्राणियोंपर दया करता था ॥ १ ॥
नित्य पंचयज्ञमें तत्पर जितात्मा जितेन्द्रिय ब्रह्मका जाननेवाला वेदवित् सदा यज्ञमय कल्याणरूप था ॥ २ ॥ हे राजन् । उसकी रूपगुणोंसे सम्पन्न
दो भार्या थीं परन्तु उनके कोई सन्तान नहीं था ॥ ३ ॥ उनके साथ राजा ऐसे प्रसन्न रहता जैसे इन्द्राणीके साथमें इन्द्र उसका ब्राह्मणोंमें भेष्ट मित्रसह
नामका सखा था ॥ ४ ॥ वह महायोगी वेदवेदांग जाननेमें तत्पर था परन्तु जिस प्रकार राजाके कोई सन्तान नहीं थी इसी प्रकार उस ब्राह्मणके भी

वैशम्पायन उवाच ॥ आसीच्छाल्वेषु राजेन्द्र ब्रह्मदत्तो नृपोत्तमः ॥ नाम्ना राजन् स पूतात्मा सर्वभूतदयापरः ॥ १ ॥ पञ्चयज्ञपरो नित्यं
जितात्मा विजितेन्द्रियः ॥ ब्रह्मविद्वेदविज्ञैव सदा यज्ञमयः शिवः ॥ २ ॥ तस्य भार्ये महीपाल रूपोदार्यगुणान्विते ॥ बभूवतुः सुसंपन्ने
अनपत्ये नृपोत्तम ॥ ३ ॥ स ताभ्यां सुमुदे राजा शच्या शक्र इवाम्बरे ॥ नाम्ना मित्रसहो नाम सखा चासीद्विजोत्तमः ॥ ४ ॥ तस्य
राज्ञो महायोगी वेदवेदान्ततत्परः ॥ अनपत्यः स विप्रेन्द्रो यथा राजा बभूव ह ॥ ५ ॥ स राजा सहितस्ताभ्यामर्चयामास शंकरम् ॥
पुत्रार्थं शूलिनं शर्वं दश वर्षाण्यनन्यधीः ॥ ६ ॥ स विप्रो वैष्णवं सत्रं पुत्रार्थं समयोजयत् ॥ अर्चितस्तेन राजेन्द्र शंकरो नीललो-
हितः ॥ ७ ॥ आत्मानं दर्शयामास स्वप्ने राजानमब्रवीत् ॥ प्रीतोऽस्मि तव भद्रं ते वरं वरय सुव्रत ॥ ८ ॥ अथ राजा जगन्ना-
थमुवाचेदं स्मयन्निव ॥ पुत्रो मम भवेतां हि तथेत्युक्त्वा वृषध्वजः ॥ ९ ॥ अन्तर्धानं गतः शम्भुः प्रतिबुद्धस्ततो नृपः ॥ सोऽपि
मित्रसहो विद्वान्देवं केशवमव्ययम् ॥ १० ॥

सन्तान नहीं थी ॥ ५ ॥ तब उसके सहित राजाने शंकरकी आराधना की अनन्यबुद्धिसे दश वर्षतक शूलधारी महादेवका तप किया ॥ ६ ॥ उस
ब्राह्मणने पुत्रके निमित्त वैष्णव यज्ञ किया, हे राजन् । उसने नीललोहित शंकरका आराधन किया ॥ ७ ॥ तब अपना दर्शन देकर शंकरने स्वप्नमें
राजासे कहा, हे सुव्रत । तुम्हारा मंगल हो मैं तुमसे प्रसन्न हूँ वर मांगो ॥ ८ ॥ तब राजाने मुस्काकर देवदेव जगन्नाथसे यह वचन कहे मेरे दो पुत्र
हों यही वर दीजिये शिवजीने कहा ऐसाही होगा ॥ ९ ॥ जब यह कह शिवजी अन्तर्धान हुए तब राजा जागृत हुआ और वह विद्वान् मित्रसह ब्राह्मण

ह. वं.
॥ १२७ ॥

अविनाशी केशव ॥ १० ॥ जगन्नाथका पांच वर्षपर्यन्त पूजन करता हुआ इस प्रकार उस विप्रने जनार्दन देवका पूजन किया ॥ ११ ॥ हरिने अपनी आत्माके समान उसको एक पुत्र दिया वह दोनोंकी भार्या शंकरके तेजसे गर्भवती हुई ॥ १२ ॥ हे महाराज ! ब्राह्मणकी स्त्री वैष्णवतेजसे गर्भधारण करती हुई, वे महाबली पुत्रोंको दोनों रानी गर्भमें धारण करती हुई ॥ १३ ॥ हे महाराज ! क्रमसे राजाके दो पुत्र हुए तब राजाने उनकी नामकर्मादि क्रिया करी ॥ १४ ॥ विधिपूर्वक नामकरण करके ब्राह्मणोंको बहुतसा दान दिया उस विनीत आत्मा ब्राह्मणकेही एक पुत्र हुआ ॥ १५ ॥ हे राजन् !

पञ्चवर्षे जगन्नाथमर्चयामास भक्तिः ॥ आर्चितस्तेन विप्रेण देवदेवो जनार्दनः ॥ ११ ॥ पुत्रमेकं ददौ तस्मै स्वात्मना सदृशं हरिः ॥ ते भार्ये गर्भमाधत्तां तेजसा शंकरस्य ह ॥ १२ ॥ विप्रभार्या महाराज वैष्णवं तेज आदधत् ॥ महिष्यो ते महावीर्ये पुत्रौ शंकरनिर्मितौ ॥ १३ ॥ असूयेतां महीपाल क्रमेणैव नृपस्य ह ॥ स तयोश्च महाराज नामकर्मादिकाः क्रियाः ॥ १४ ॥ चकार विधिवत्सर्वा विप्रेभ्योऽदान्महद्दानम् ॥ स च विप्रो विनीतात्मा पुत्रमेकं हि लब्धवान् ॥ १५ ॥ साक्षादिव जगन्नाथं स्थितं पुत्रात्मना नृप ॥ जातकर्मादिकं सर्वं ब्राह्मणः स चकार ह ॥ १६ ॥ तौ कुमारावयं चैव त्रयः सवयसोऽभवन् ॥ वेदानधात्य ते सर्वाञ्छ्रुत्वा चान्वीक्षिर्को तथा ॥ १७ ॥ धनुर्वेदे तथास्त्रे च निपुणास्तेऽभवंस्तदा ॥ हंसो ज्येष्ठो नृपसुतो डिम्भकोऽन्तरोऽभवत् ॥ १८ ॥ स च विप्रसुतो राजन् जनार्दन इति स्मृतः ॥ अन्योन्यं मित्रतां याताः सर्वे चैव कुमारकाः ॥ १९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भाविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोत्पत्तौ चतुरधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०४ ॥

वह साक्षात् जगन्नाथही पुत्ररूपसे उत्पन्न हुए जातकर्मादि उस ब्राह्मणके सहित राजाने किये ॥ १६ ॥ वे तीनों कुमार एक अवस्थाके हुए वे सब वेदोंको पढ़ राजनीतिका श्रवण कर ॥ १७ ॥ धनुर्वेद और अस्त्रविद्यामें निपुण हो गये बड़े पुत्रका नाम हंस और छोटेका डिम्भ हुआ ॥ १८ ॥ और ब्राह्मणके बेटेका नाम जनार्दन हुआ वे सब कुमार परस्पर मित्रतावको प्राप्त हुए ॥ १९ ॥ इति श्रीम० खि० ह० भाविष्यपर्वणि भाषायां हंसडिम्भको-

मा. टी.

प. ३ अ. १०४

॥ १२७ ॥

तत्तौ चतुरधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०४ ॥ वैशंपायन बोले, तब महाबुद्धिमान् हंस डिम्भक जो कि शंकरकी आत्मा और मनरूप थे तप करनेकी इच्छासे ॥ १ ॥ हिमालयपर जाकर तप करने लगे और शंकरके उद्देश्यसे तप करने लगे ॥ २ ॥ हम दोनों अस्रविद्यामें वीर्यवान् हो जाँय इस प्रकार वे दोनों मनमें धारण कर एकाग्र और नियमित होकर वायु और जलके आहारसे निर्वाह करते रहने लगे ॥ ३ ॥ देवदेवेश शंकरको नमस्कार रातदिन करने लगे हे हर, शर्व, शिवानंद, नीलग्रीव, उमापते ॥ ४ ॥ वृषभध्वज विरूपाक्ष हर्यक्ष जगत्के पति भक्तिप्रिय गिरीश वासुदेव शिव अच्युत ॥ ५ ॥ सद्योजात वैशम्पायन उवाच ॥ हंसश्च डिम्भकश्चैव तपश्चतुर् मङ्गमतिः ॥ मनश्चक्रतुरात्मांशौ शंकरस्य नृपोत्तम ॥ १ ॥ गत्वा तु हिमवत्पार्श्वं तपश्चक्रतुरञ्जसा ॥ उद्दिश्य शंकरं शर्वं नीलग्रीवमुमापतिम् ॥ २ ॥ वीर्यान्ने चैव नो स्यातामित्याधाय तु मानसे ॥ एकाग्रौ प्रयतौ भूत्वा वाय्वम्बुप्राशिनौ नृप ॥ ३ ॥ नमस्ते देवदेवेति शंकरेति दिवानिशम् ॥ हर शर्व शिवानन्द नीलग्रीव उमापते ॥ ४ ॥ वृषध्वज विरूपाक्ष हर्यक्ष जगतां पते ॥ भक्तप्रिय गिरीशेश वासुदेव शिवाच्युत ॥ ५ ॥ सद्योजात महादेव देवदेव गुह्यशय ॥ भूतभावन देवेश प्रणवात्मन् सदाशिव ॥ ६ ॥ इत्यादिनामभिर्नित्यं स्तुवन्तौ शंकरं भवम् ॥ हृदि कृत्वा विरूपाक्षं तपस्तेपेतुरञ्जसा ॥ ७ ॥ निर्ममौ निरहंकारो मौनव्रतसमास्थितौ ॥ वर्षाणिह तदा राजन्पञ्च चक्रतुरोजसा ॥ ८ ॥ ततः प्रीतोऽभवच्छर्वस्ताभ्यां संयमनेन च ॥ स ददौ दर्शनं नेजं व्याघ्रचर्माम्बरो हरः ॥ ९ ॥ त्रियक्षः शंकरः शर्वः शूलपाणिरुमापतिः ॥ अग्रतः संस्थितं शर्वं चन्द्रार्द्धकृतशेखरम् ॥ तौ दृष्ट्वा प्रीतमनसौ नमश्चक्रतुरञ्जसा ॥ १० ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ वर वरय भद्रं वां यथेच्छा वां तथास्तु वै ॥ तावूचतुस्तदा राजन्प्रीतस्त्वं भगवन्पदि ॥ ११ ॥ महादेव देवदेव गुहाशय भूतभावन देवेश प्रणवात्मन् सदाशिव ॥ ६ ॥ इत्यादि नामोंसे नित्य शंकरकी स्तुति करते हुए इस प्रकार विरूपाक्षको हृदयमें धारण कर वह तप करने लगे ॥ ७ ॥ ममता अहंकाररहित मौनव्रतमें स्थित हुए पाँच वर्षतक बराबर तप करते रहे ॥ ८ ॥ तब उनके संयम नियमसे शिवजी प्रसन्न हुए और व्याघ्रचर्मधारी शिवने उनको दर्शन दिया ॥ ९ ॥ त्रिनेत्र शंकर शर्व शूलपाणि उमापति चन्द्रार्द्धशेखर शिवजीको आगे स्थित देखकर वे दोनों प्रसन्न हो नमस्कार करते हुए ॥ १० ॥ श्रीभगवान् बोले, तुम वर मांगो जो इच्छा होमे सो मैं दूँगा तब वह कहने लगे, हे भगवन् ! यदि तुम हमारे

ऊपर प्रसन्न हों तो ॥ ११ ॥ देवता असुरोंकी मुख्य सेना यक्ष गन्धर्व दानवोंसे हम अजय हों यही हमारा प्रथम वर है ॥ १२ ॥ और दूसरा वर यह दो कि हमारे रौद्र अस्त्रोंका संग्रह हो जाय माहेश्वर अस्त्र रौद्रास्त्र ब्रह्मशिर अस्त्र ॥ १३ ॥ अभेद कवच और अभेद धनुष और रक्षाका करने-वाला परशा दो ॥ १४ ॥ हे देव ! युद्धमें हमारी सहायताके निमित्त दो भूतोंको दीजिये यही हो वचन कह शिवजीने भृंगी और रिटिकों आज्ञा दी ॥ १५ ॥ सब प्राणियोंके हित करनेवाले कुंडोदर और विरूपाक्षसे कहते हुए तुम और यह दोनों भूत इनकी रणमें सदा सहाय करना ॥ १६ ॥

देवासुरचमूमुख्यैर्यक्षैर्गन्धर्वदानवैः ॥ आवामजय्यौ सर्वात्मनेष नो प्रथमो वरः ॥ १२ ॥ द्वितीयो नो विरूपाक्ष रौद्रास्त्राणां च संग्रहः ॥ माहेश्वरं तथा रौद्रमस्त्रं ब्रह्मशिरो महत् ॥ १३ ॥ अभेद्यं कवचं दिव्यमच्छेद्यं चापि कार्मुकम् ॥ परशुं च तथा शर्वं सदा रक्षार्थमेव च ॥ १४ ॥ सहायौ द्वौ महादेव भूतौ युद्धे हि गच्छताम् ॥ एवमास्तिवति देवेश आह भृंगिरिटी हरः ॥ १५ ॥ कुण्डोदरं विरूपाक्षं सर्वप्राणिहिते रतम् ॥ युवामथ च भूतेशौ सहायौ सततं रणे ॥ १६ ॥ संग्रामं गच्छतां घोरमेतयोर्बलशालिनोः ॥ इत्युक्त्वा भगवाञ्छर्वस्तत्रैवान्तरधीयत ॥ १७ ॥ ततस्तौ वीर्यसंपन्नौ हंसो डिम्भक एव च ॥ कृतास्त्रौ शस्त्रसंपन्नौ चापिनौ वीर्यवत्तरौ ॥ १८ ॥ आमुक्तकवचौ वीरावजय्यौ देवदानवैः ॥ अत्यन्तभक्तौ देवेशे शंकरे नीललोहिते ॥ १९ ॥ नित्योत्सवकरो देवे भस्मोद्भूलनशोभिनौ ॥ कृतत्रिपुण्ड्रकौ नित्यं जटाशुक्रशिरोधरो ॥ २० ॥ रुद्राक्षार्पितसर्वांगो व्याघ्रचर्माम्बरावृतौ ॥ नमः शिवाय शान्ताय महादेवाय धीमते ॥ २१ ॥

इन दोनों बलियोंके संग्राममें जानेपर तुम इनके साथ जाना यह कह भगवान् शिव वहांही अन्तर्धान हो गये ॥ १७ ॥ तब वे बड़े बली हंस और डिम्भक अस्त्रवान् वीर्यसंपन्न चापवाले बड़े वीर्यवान् ॥ १८ ॥ कवच पहरे देवदानवोंको अजय्य बड़े वीर देवेश नीललोहित शंकरके बड़े भक्त ॥ १९ ॥ शिवका नित्य उत्सव करनेवाले शरीरमें भस्म लगाये नित्य त्रिपुण्ड्रधारी जटा शिरपर धारे ॥ २० ॥ सब अंगमें रुद्राक्ष धारण किये व्याघ्रचर्म ओढ़े ' नमः शिवाय ' शान्तरूप महादेव धीमान्को नमस्कार है ॥ २१ ॥

इत्यादि नामोंसे महादेवकी स्तुति करते साक्षात् महादेवकी समानही जटाधारी शोभाको प्राप्त हुए ॥ २२ ॥ तब वे अपने घर जाकर पिताके चरण ग्रहण करते हुए तथा पिताके सखा और माताके चरणोंको नमस्कार करते हुए ॥ २३ ॥ हे राजन् ! वह महात्मा जनार्दनभी बहुत समयपर महाविद्याके पारको प्राप्त होता हुआ ॥ २४ ॥ वह हृषीकेश विष्णु पीतकौशेय धारण करनेवालेकी ब्रह्मतत्त्वमें तत्पर हो नित्य उपासना करने लगा और जितेन्द्रिय रहने लगा ॥ २५ ॥ फिर हंस और डिम्बकने अपना विवाह किया और महात्मा जनार्दननेभी विवाह किया ॥ २६ ॥ यह सब यज्ञ करनेवाले नित्य

इत्यादिभिर्महादेवं स्तुवन्तो नामभिः शिवम् ॥ साक्षादिव महादेवो रजतुर्जलधारिणो ॥ २२ ॥ ततः स्वभवनं गत्वा पितुः पादाव-
गृह्यताम् ॥ पितुश्च सख्युर्बलिनो मातुश्च चरणौ तदा ॥ २३ ॥ जनार्दनोऽपि धर्मात्मा कालेन महता नृप ॥ विद्यापरं महाबुद्धिर्यु-
क्तेनासावुपेयिवान् ॥ २४ ॥ स च विष्णुं हृषीकेशं पीतकौशेयवाससम् ॥ ब्रह्मतत्त्वपरो नित्यमुपास्ते विजितेन्द्रियः ॥ २५ ॥ हंसश्च
डिम्बकश्चैव कृतदारो बभूवतुः ॥ जनार्दनोऽपि धर्मात्मा कृतदारो बभूव ह ॥ २६ ॥ सर्वे ते यज्ञनिरताः पञ्चयज्ञपरास्तथा ॥
स्वदारनिरताः सर्वे गुरुशुश्रूषणे रताः ॥ धर्म एव परं श्रेय इति ते मेनिरे नृप ॥ २७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवं० भ०
हंसडिम्बकौपाख्ये पञ्चाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०५ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः कदाचित्तो वीरो मृगयामाटतुः
किल ॥ जनार्दनेन सहितौ रथैश्चैर्गजैरपि ॥ १ ॥ वनं गत्वा तु तौ वीरो सिंहव्याघ्रांश्च जघ्नतुः ॥ शितैर्बाणैर्महाराज वराहानथ
सर्वशः ॥ २ ॥ व्यालानन्यान्मृगान् हिंस्रान्शूभिश्च सहितौ नृप ॥ एष आयाति विपुलो वराहो दीर्घलोचनः ॥ ३ ॥

पंचयज्ञमें तत्पर अपनी क्षीमें निरत गुरु शुश्रूषामें तत्पर हुए. हे राजन् ! धर्मही परम श्रेय है इस बातको उन्होंने पूर्णरूपसे जान लिया था ॥ २७ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे ऋषिपर्वणि भाषायां हंसडिम्बकौपाख्याने पञ्चाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १९ ॥ वैशम्पायन बोले, एक समय वह
दोनों वीर मृगयाके निमित्त गये रथ हाथियोंपर स्थित जनार्दनके सहित पयान किया ॥ १ ॥ वह दोनों वीर वनमें जाकर सिंह व्याघ्रोंको मारने
लगे. हे महाराज ! तीक्ष्ण बाणोंसे वराहोंको मारने लगे ॥ २ ॥ व्याल मृग हिंस्रक जीव कुत्ते आदिके सहित वे दोनों बोले कि यह दीर्घलोचन

वाराह आता है ॥ ३ ॥ इसको बाणोंसे छेदन करो यह मृगराज आता है यह दूसरा महिष जिसके शृंगमें सरीसृप प्राप्त हो रहे हैं ॥ ४ ॥ यह मृगोंके साथ बालकोंको बटाते हैं यह व्याकुल हो खरगोशोंका झुंड फिर रहा है ॥ ५ ॥ यह बच्चा स्तनपान कर रहा है इसको मत मारो और इन सबको कुत्तोंसे घेरकर पकड़ लो ॥ ६ ॥ इस प्रकार उस राजाके मृगया करनेमें महान् शब्द हुआ. हे नृपथेष्ठ ! वह शब्द क्षत्रिय और व्याधोंके दौड़नेका हुआ ॥ ७ ॥ वह दोनों राजा अनेक प्रकारके मृग व्याघ्र और सिंहोंको मारकर सूर्यके मध्यस्थानमें प्राप्त होनेसे श्रमको प्राप्त

एनं बाणेन संचिन्धि याति चायं मृगाधिपः ॥ अयमन्योऽथ महिषः शृङ्गप्रोत्तसरीसृपः ॥ ४ ॥ एते खलु मृगाः सार्द्धं शार्ङ्गैर्वाधान्ति सर्वशः ॥ एतदभ्रमति सर्वत्र भीतं शशकुलं महत् ॥ ५ ॥ श्रावं स्तनं पिबत्साधु न हृत्तव्यमिदं शुभम् ॥ ग्रहीतव्यमिदं सर्वं निरुप्य भगणेरिह ॥ ६ ॥ इत्यादिशब्दः सुमहान्मृगयां कुर्वतां नृप ॥ क्षत्रियाणां नृपश्रेष्ठ व्याधानां चैव धावताम् ॥ ७ ॥ इत्वा मृगान्सुबहुशो व्याप्राप्तुं सिंहांनृपोत्तमो ॥ श्रमं च जगमर्तुर्भीरो मध्यं याते दिवाकरे ॥ ८ ॥ अलं हि मृगयास्माकं श्रमः समुपजायते ॥ इत्युचतुर्महाराज पुष्करं जग्मुतुः सरः ॥ ९ ॥ सरःसमीपमागम्य मुनिसिद्धनिषेवितम् ॥ वीजन्मारुतसानूपं श्रमात्तत्र सुखस्थितो ॥ १० ॥ ततो जनाः सरः सर्वे विगाह्य श्रमकर्षिताः ॥ विसान्प्रवालान्पद्मानां भक्षयामासुरार्तवत् ॥ ११ ॥ जनार्दनेन सहितो हंसो डिम्भक एव च ॥ सरः क्वचित्समाश्रित्य श्रमं संत्यज्य तिष्ठतः ॥ १२ ॥

हुए ॥ ८ ॥ बोले कि मृगयाकी आवश्यकता नहीं अब हमको श्रम होता है. हे महाराज ! ऐसा कह वे दोनों पुष्करके समीप गये ॥ ९ ॥ सरके समीप प्राप्त हुए जो मुनि और सिद्धों करके सेवित है और पवन होने लगी जिससे सुखपूर्वक विश्राम लेते हुए ॥ १० ॥ तब सब आदमी श्रमसे कर्षित हो उस सरोवरको अवगाहन करने लगे कमलनाल प्रवाल पद्मको आतोंकी समान भक्षण करने लगे ॥ ११ ॥ जनार्दनके सहित वे हंस और डिम्भक कहीं सरोवरमें स्नान कर श्रमरहित स्थित हुए ॥ १२ ॥

उस सरोवरके किनारे विश्राम लेकर स्थित हुए मुनियोंके मुखसे वेदको सुनने लगे ॥ १३ ॥ वे माध्यन्दिनशाखाको स्वरसहित श्रवण करने लगे वेद ध्वनिको श्रवण कर वे दोनों परम प्रसन्न हुए ॥ १४ ॥ और मुनियोंके किये यज्ञोंके देखनेकी इच्छा करने लगे मृगोंसहित उस सेनाको वहां स्थापित कर ॥ १५ ॥ महाचाप और बाण धारण किये वह जनार्दन वीर हंस और डिम्भक सभामें प्रवेश कर मुनिजनोंको प्रणाम करते हुए ॥ १६ ॥ हे महाराज ! वे ऋषिके आश्रममें पैरों पैरों चले वहां महर्षि कश्यपका वैष्णव यज्ञ होता था जय होममें परायण वे ऋषि मुनियोंके साथ यजन करते

विश्रम्य सरसस्तीरे तद्भासाते सुखं नृपो ॥ अश्रुण्वतां परं ब्रह्म मुनिमुख्यैः समीरितम् ॥ १३ ॥ मध्यंदिनं तथा सर्वैः सवनं सस्वरं नृपो ॥ ततः प्रीतो नृपो भूत्वा श्रुत्वा वेदध्वनिं तदा ॥ १४ ॥ ऐच्छेतां तौ तदा द्रष्टुं यज्ञं मुनिकृतं तदा ॥ स्थापयित्वा ततः सेनां सर्वा मृगसमन्विताम् ॥ १५ ॥ आदाय च महाचापे शरान्कतिचिदेव च ॥ जनार्दनस्तदा वीरो हंसो डिम्भक एव च ॥ १६ ॥ पदातिनो महाराज जग्मतुश्चाश्रमं किल ॥ महर्षेः काश्यपस्याय सत्रं वैष्णवसंज्ञकम् ॥ यजन्तो मुनिभिः सार्द्धं जपहोमपरायणैः ॥ १७ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भवि० हंसडिम्भकोपाख्याने मृगयावर्णनं नाम षडधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०६ ॥ केशम्पायन उवाच ॥ जनार्दनश्च धर्मात्मा हंसो डिम्भक एव च ॥ सद्ः प्रविश्य सत्रस्य नमश्चक्रुर्मुनीश्वरान् ॥ १ ॥ तानागतान्महात्मानो मुनयः शिष्यसंयुताः ॥ अर्घ्यपाद्यासनादीनि चक्रुः पूजां प्रयत्नतः ॥ २ ॥ तौ नृपो स च विप्रेन्द्रः सपर्या प्रतिगृह्य च ॥ प्रीतात्मानो महात्मान आसते समुखं नृप ॥ ३ ॥

ये ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे ऋषिपर्वणि भाषायां हंसडिम्भकोपाख्याने मृगयावर्णनं नाम षडधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०६ ॥ केशम्पायन बोले, जनार्दन धर्मात्मा हंस और डिम्भ उस यज्ञमें प्रवेश कर नमस्कार करते हुए ॥ १ ॥ शिष्योंके सहित मुनि उनको आया हुआ देखकर अर्घ्य पाद्य आसन देकर उनकी पूजा करते हुए ॥ २ ॥ वह नृप और वह विप्रेन्द्र उस पूजाको ग्रहण कर प्रसन्न हो सुखसे आसनपर बैठे ॥ ३ ॥

तव मौनव्रती उन मुनियोंसे हंसने कहा. हे मुनिश्रेष्ठो ! हमारे पिताभी यज्ञ करनेकी इच्छा करते हैं ॥ ४ ॥ हे मुनिश्रेष्ठो ! यज्ञके अन्तमें आप हमारे यहां आइये हम दिग्विजय कर राजसूय यज्ञ करेंगे ॥ ५ ॥ हे ब्राह्मणो ! हम अपने धर्मात्मा पितासे यज्ञ करावेंगे. हे विप्रेन्द्रो ! शिष्य और परिच्छदोंसहित आप पधारिये ॥ ६ ॥ हय अभी दिग्विजय करेंगे हम यहीं सेनाके संचयको कर सकते हैं ॥ ७ ॥ हमारे सामने देव दानव खड़े होनेको समर्थ नहीं हैं हमने कैलासवासी शिवसे वर पाया है ॥ ८ ॥ हमारे पास शत्रुनाशक अनेक अस्त्र हैं मर्दसे बली हंस यह कहकर मौन हुआ ॥ ९ ॥ मुनि बोले, हे राजन् ! जो

ततो हंसो बभाषे तान्मुनीन्संयतवाङ्मनः ॥ पिता हि नौ मुनिश्रेष्ठा यष्टुमेच्छत्ससाधनम् ॥ ४ ॥ गन्तव्यं तत्र युष्माभिः सत्रान्ते मुनिसत्तमाः ॥ राजसूयेन यज्ञेन कृत्वा दिग्विजयं वयम् ॥ ५ ॥ याजयिष्यामहे विप्राः पितरं धार्मिकं नृपम् ॥ आयान्तु तत्र विप्रेन्द्राः सशिष्याः सपरिच्छदाः ॥ ६ ॥ वयमद्यैव सहितौ दिशो जेष्यामहे वयम् ॥ शक्ता वयमिद्वैतत्कर्तुं सैनिकसंचयेः ॥ ७ ॥ आवयोः पुरतः स्थातुं न शक्ता देवदानवाः ॥ कैलासनिलयाद्देवाद्रं लब्धाः स्म यत्नतः ॥ ८ ॥ अजय्यौ शत्रुसंचानामस्त्राणि विविधानि च ॥ इत्युक्त्वा विररामेव हंसो मदबलान्वितः ॥ ९ ॥ मुनय उचुः ॥ यदि स्यात्तत्र गच्छामो वयं शिष्यैर्नृपोत्तम ॥ आस्महे वान्यथा राजन्नित्यूचुः किल तापसाः ॥ १० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततो देशान्महाराज गन्तुं निश्चितमानसो ॥ पुष्करस्योत्तरं तीरं दुर्वासा यत्र तिष्ठति ॥ ११ ॥ यतयो नियता भूत्वा मन्त्रब्रह्मनिषेविणः ॥ ब्रह्मसूत्रपदे सक्तास्तदर्थालोकतत्पराः ॥ १२ ॥ निर्ममा निरहंकाराः कौपीनाच्छादनव्रताः ॥ तमात्मानं जगद्योनिं विष्णुं विश्वेश्वरं विभुम् ॥ १३ ॥

यज्ञ होगा तौ हम शिष्योंसहित जायंगे हम जरूर जायंगे इसमें सन्देह नहीं ॥ १० ॥ वैशंपायन बोले, हे राजन् ! तब वे वहां निश्चितको प्राप्त हो देशान्तरोंमें जानेकी इच्छा करने लगे जहां पुष्करके उत्तरकी ओर दुर्वासाजी स्थित थे ॥ ११ ॥ जहां नियत होकर यति मंत्ररूपी ब्रह्म (वेद) की उपासना करते थे ब्रह्मसूत्रके पदोंमें आसक्त और उसके अर्थ देखनेमें तत्पर ॥ १२ ॥ ममत्व और अहंकारसे हीन कौपीनसे आच्छादन व्रतवाले उस आत्मा जगत्के योनि विष्णु विश्वेश्वर विभु ॥ १३ ॥

ब्रह्मरूप शुभ शान्त अक्षर सर्वतोमुख वेदान्तमूर्ति अव्यक्त अनंत शाश्वत शिव ॥ १४ ॥ नित्ययुक्त विरूपाक्ष भूताधार अनामय मनसे सर्वतोमुख नारायणका ध्यान करते हुए ॥ १५ ॥ दुर्वासाके सभामें उपासना करते जो वेदान्तकेही एक गुरु हैं तर्कसे निश्चित तत्त्वके जाननेवाले ज्ञानसे निर्मित चिचवाले ॥ १६ ॥ हंस और परमहंस जो दुर्वासाके शिष्य थे उन दोनोंने जाकर उन ऊर्ध्वरेतस महात्माको देखा ॥ १७ ॥ वह महाबुद्धि दुर्वासा परब्रह्मका विचार कर रहे थे कारण कि क्रोध करके त्रिलोकको नष्ट करनेकी सामर्थ्य थी ॥ १८ ॥ जिनको क्रोध करनेपर देवताभी देखनेको समर्थ

ब्रह्मरूपं शुभं शान्तमक्षरं सर्वतोमुखम् ॥ वेदान्तमूर्तिमव्यक्तमनन्तं शाश्वतं शिवम् ॥ १४ ॥ नित्ययुक्तं विरूपाक्षं भूताधारमनामयम् ॥ ध्यायन्तं सर्वदा देवं मनसा सर्वतोमुखम् ॥ १५ ॥ दुर्वाससा सदोपास्यं वेदान्तेकरसं गुरुम् ॥ तर्कनिश्चिततत्त्वार्था ज्ञाननिर्मलचेतसः ॥ १६ ॥ हंसाः परमहंसाश्च शिष्या दुर्वाससः प्रभो ॥ गत्वा तत्र महात्मानो तो दृष्ट्वा तूर्ध्वरेतसम् ॥ १७ ॥ दुर्वाससं महाबुद्धिं विचिन्वानं परं पदम् ॥ क्रुद्धो यदि स दुर्वासा दग्धुं लोकानिमात्क्षमः ॥ १८ ॥ देवा अपि च यं द्रष्टुं क्रुद्धं वे न क्षमाः सदा ॥ रोषमूर्तिः सदा यस्तु रुद्रात्मा विश्वरूपधृक् ॥ १९ ॥ रक्तकौपीनवसनो हंसः परम एव च ॥ दृष्ट्वैनं च तयोरेवं बुद्धिरासीन्महामते ॥ २० ॥ को नामासौ महाभूतः काषायी वर्णवित्तमः ॥ कश्चायमाश्रमो नाम विहाय च गृहाश्रमम् ॥ २१ ॥ गृहस्थ एव धर्मात्मा गृहस्थो धर्मवित्तमः ॥ गृहस्थो धर्मरूपस्तु गृहस्थो वर्ण एव च ॥ २२ ॥ गृहस्थश्च सदा माता प्राणिनां जीवनं सदा ॥ तं विनान्येन रूपेण वर्तते योऽतिमूर्खवत् ॥ २३ ॥

नहीं हो सकते थे जो सदा रोषमूर्ति रुद्रात्मा विश्वरूपधारी थे ॥ १९ ॥ लाल कौपीनका वसन किये इनको देखकर हंसकी यह बुद्धि हुई ॥ २० ॥ यह महाभूत काषाय वस्त्रधारी कौन है और किसका यह आश्रम है जिसने गृहस्थाश्रम त्याग दिया है ॥ २१ ॥ गृहस्थही धर्मात्मा है गृहस्थही धर्मजन्मनेवालोंमें श्रेष्ठ है गृहस्थही धर्मरूप और गृहस्थही वर्ण है ॥ २२ ॥ गृहस्थही सदा माता सदा प्राणियोंका जीवन है उसके बिना जो और रूपसे वर्तता है वह मूर्ख है ॥ २३ ॥

यह उन्मत्त विरूप अथवा मूर्ख है यह ध्यान लोगोंके ठगनेके निमित्त करता है ॥ २४ ॥ यह प्राकृत अज्ञानी क्या ध्यान करते हैं मैं इन दुरारोह अनेक आश्रमोंका कल्पना करनेवालोंको ॥ २५ ॥ तथा मंदबुद्धियोंको गृहस्थमें स्थापन करना बलसे ही इन मूढ विज्ञानमें तत्पर ब्राह्मणोंको ॥ २६ ॥ जो असद्व्याहमें गृहीत मूर्ख दुर्भति इन ब्राह्मणोंका थास्ता हमारे सिवाय कौन है ॥ २७ ॥ हम इनको धर्ममें स्थापन कर निवृत्त होंगे, हे राजन् ! इस प्रकार वे दोनों राजकुमार उस ब्राह्मणके सहित ॥ २८ ॥ अर्थात् जनार्दनके सहित प्राग्यक्षयके कारण हे राजेन्द्र ! उस संयतचिचाले यतिके समीप

उन्मत्तोऽयं विरूपोऽयमथवा मूर्खः एव च ॥ ध्यायन्निव सदा चायमास्ते वञ्चयितापि वा ॥ २४ ॥ किमेते प्राकृतज्ञाना ध्यायन्त इति किंचन ॥ वयमेतान् दुरारोहानाश्रमान्तरकल्पकान् ॥ २५ ॥ स्थापयिष्यामहे सर्वान्मन्दबुद्धीनिमान् गृहे ॥ बलादेव द्विजानेतान्मूढ-विज्ञानतत्परान् ॥ २६ ॥ असद्राह्मणीतांश्च बालिशान्दुर्मतीनिमान् ॥ एषां शास्ता च को मूढो न विप्रो वयमत्र ह ॥ २७ ॥ धर्मे वर्त्मनि संस्थाप्य पुनर्यास्याव निवृत्तो ॥ इति संचिन्त्य तौ वीरो विप्रेण सहितौ नृप ॥ २८ ॥ जनार्दनेन राजानो मोहाद्भाग्यश्यामृप ॥ समीपं तस्य राजेन्द्र यतेः संयतचेतसः ॥ २९ ॥ गत्वा च प्रोचतुरुभौ दुर्वाससमतीन्द्रियम् ॥ यतश्च नियतान्कुद्धो राजानो राजसत्तम ॥ ३० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०७ ॥ हंसडिम्भकावूचतुः ॥ ज्ञानलेशाद्दिहनात्मन् किं ते व्यवसितं द्विज ॥ कश्चायमाश्रमो विप्र भवता यः समाश्रितः ॥ १ ॥ गृहमेधं परित्यज्य किं त्वया साधितं पदम् ॥ दम्भं एव भवान्व्यक्तं शङ्के नास्त्यत्र कारणम् ॥ २ ॥

गये ॥ २९ ॥ और जाकर वे दोनों अतीन्द्रिय दुर्वाससे बोले अर्थात् वे दोनों यतीन्द्रके ऊपर कुद हुए ॥ ३० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि प्रापायां हंसडिम्भकोपाख्याने सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०७ ॥ हंसडिम्भक बोले, हे द्विज ! ज्ञानलेशसे विहीन ! यह तुम्हारी क्या व्यवस्था है, हे विप्र ! जिसमें तुम स्थित हो यह कौनसा आश्रम है ॥ १ ॥ गृहस्थको छोड़कर यह आपने क्या साधन किया है हम जानते हैं

सर्वथा आपने पाखण्ड साधा है इसमें और कुछ कारण नहीं है ॥ २ ॥ हे मूढ ! तुम निवृत्त हुएसे इन लोकोंको नाश करते हो निश्चय इन सबको तुम नरकमें गिराओगे ॥ ३ ॥ स्वयं भी नष्ट हुए और इन मूर्खोंको तुम नष्ट करते हो. हे मन्दमति ब्राह्मण ! क्या कोई तुम्हारा शास्ता नहीं हैं ॥ ४ ॥ इसमें संदेह नहीं कि तुम सर्वथा पापके विनेता हो. हे ब्राह्मण ! इस आप्तमको छोडकर आप. गृहस्थ हो आइये ॥ ५ ॥ हे विप्र ! सदा यत्नसे पंचयज्ञ करते रहिये तब स्वर्गको जाओगे कारण कि वहां बड़ा सुख है ॥ ६ ॥ हे विप्र ! यही कल्याणका मार्ग है जो आपकी जीवनमें स्पृहा है नौ करो जन

लोकांश्चेमान्सदा मूढ नाशयिष्यसि निर्वृतः ॥ एतान्सर्वान्विनेतासि नरके पातयिष्यसि ॥ ३ ॥ स्वयं नष्टः परान्मुखं नाशयिष्यसि यत्नतः ॥ अहो शास्ता कथं नास्ति तव मन्दमतेर्द्विज ॥ ४ ॥ सर्वथा त्वद्विनेता च पापो नास्त्यत्र संशयः ॥ त्यक्त्वेममाश्रमं विप्र गृही भव यतात्मवान् ॥ ५ ॥ पञ्च यज्ञान्सदा विप्र कुरु यत्नपरो भव ॥ ततः स्वर्गं परं गत्वा स्वर्गे हि सुमहत्सुखम् ॥ ६ ॥ एष श्रेयःपथो विप्र जीविते चेत्स्पृहा तव ॥ इत्युक्तवन्तो धर्मात्माश्चुत्वा विप्रो जनार्दनः ॥ ७ ॥ उवाच च यतिं दृष्ट्वा प्रणम्यासौ सुनी- तवत् ॥ मा ब्रूतामीदृशं वाक्यं राजानो मन्दतेजसौ ॥ ८ ॥ अश्रान्वयीदृशं घोरं लोकयोरुभयोरपि ॥ को वस्तुमीशो मन्दात्मा यदि जीवेत्स बान्धवः ॥ ९ ॥ सर्वथा काल एवायं युवयोर्मन्दचेतसोः ॥ समाप्त आयुषः शेषो ब्रह्मदण्डहतो युवाम् ॥ १० ॥ एते हि यतयः शुद्धा ज्ञानदीपितचेतसः ॥ ज्ञानाग्निदग्धकर्माणः प्राणान्प्राणेषु जुह्वति ॥ ११ ॥ ऋते वामीदृशं वाक्यं कः समर्थो सनुशुक्ल ॥ सर्वथा ज्ञातमस्माभिः समाप्तमिह जीवितम् ॥ १२ ॥

इन दोनोंने ऐसा कहा तो जनार्दन ब्राह्मण इस वचनको सुन ॥ ७ ॥ सुनीतवत् प्रणाम कर यतिको देखकर कहने लगा. हे मन्दतेजवाले राजकुमारो ! इनके प्रति ऐसे वचन न कहो ॥ ८ ॥ इस प्रकारके घोर वचन दोनों लोकमें कोई नहीं कह सकता है कौन बंधुओंके सहित जीनेकी इच्छा करनेवाला इनसे यह कह सकता है ॥ ९ ॥ सर्वथा तुम मंदबुद्धिवालोंको यह कालस्वरूप है आयु तुम्हारी समाप्त हो गई अब तुमपर ब्रह्मदण्ड गिरेगा ॥ १० ॥ यह शुद्ध यति ज्ञानसे दीप्तचित्त ज्ञान आग्निसे दीप्तिमान् शरीर प्राणोंको प्राणोंमें ज्वन करनेवाले हैं ॥ ११ ॥ इनसे ईशके बिना कौन ऐसे

वचन बोल सकता है सर्वथा हमने जाना कि तुम्हारा जीवन समाप्त हो चुका ॥ १२ ॥ हे राजकुमारो ! यात्रामें ऋषियोंके किये चार आश्रम हैं. ब्रह्मचर्य गृहस्थ वानप्रस्थ सन्यास ॥ १३ ॥ उनमें सबमें श्रेष्ठ यह चौथा संन्यास आश्रम है सो इस पुण्यतर आश्रममें यह महाबुद्धि स्थित है ॥ १४ ॥ हम जानते हैं कि आपने अच्छी प्रकार बुद्धोंकी सेवा न की है तपस्वियोंसे ज्ञान नहीं प्राप्त किया भला ऐसा कौन कह सकता है ॥ १५ ॥ हे राजन् ! प्राणधारीयोंको इस प्रकारके वचन सुनने अश्राव्य हैं हे मंदात्मन् ! तुम मेरे मित्र हो क्या कहें ॥ १६ ॥ हे राजन् !

चत्वार आश्रमाः पूर्वमृषिभिर्विहिता नृपो ॥ ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थश्च भिक्षुकः ॥ १३ ॥ तेषामग्रश्चतुर्थोऽयमाश्रमो भिक्षुकः स्मृतः ॥ आस्ते तस्मिन्महाबुद्धिः स हि पुण्यतरः स्मृतः ॥ १४ ॥ नोपासिता भवद्भ्यां च बृद्धाः स यन्निनीतवत् ॥ ज्ञानं नाप्तं तपस्विभ्यस्तथा चेवं वदेत कः ॥ १५ ॥ अश्राव्यमीदृशं घोरं मया प्राणभूतानृप ॥ किं करिष्यामि मंदात्मन्मित्रत्वाद्भवतो नृप ॥ १६ ॥ ज्ञानं यदाप्तं भवता गुरुभ्यस्तदत्र दुःखाय हि केवलं नृप ॥ ज्ञानं हि धर्मप्रभवं यथेष्टं बलाद्विपापस्य विधातृरूपम् ॥ १७ ॥ युवां विहाय यास्ये वा पतेयं वा शिलातलम् ॥ पिबेयं वा विषं घोरं पतेयं वा महोर्मिषु ॥ १८ ॥ आत्मानं वात्र संत्यक्ष्ये पश्यतां शृण्वतां पुनः ॥ इत्युक्त्वा विललापेवं मा ब्रूतमिति तौ वदन् ॥ १९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने अष्टाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः क्रुद्धोऽथ दुर्वासा धक्षन्निव तयोरसून् ॥ एकेनाक्ष्णाऽथ दुर्वासा रौद्रेणाग्नियुजा सदा ॥ १ ॥

तुमने जो गुरुओंसे ज्ञान प्राप्त किया है वह केवल दुःखकेही निमित्त है धर्मसे उत्तम है परन्तु तुम्हारा ज्ञान तौ पापकी उत्पत्तिकेही कारण है ॥ १७ ॥ मैं तुमको छोड़कर चला जाऊंगा या शिलातलमें अपनेको गिरा दूंगा वा विष पी लूंगा या सागरमें गिर पड़ूंगा ॥ १८ ॥ अथवा कहते सुनतेमें अपने आत्माको त्यागन कहूंगा इस प्रकार विलाप कर वह जनार्दन कहने लगा कि तुम दोनों ऐसे वचन मत कहो ॥ १९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसडिम्भकोपाख्याने अष्टाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०८ ॥ वैशम्पायन बोले, तब क्रोधकर दुर्वासा उनके प्राणोंको

जलाते हुएसे अग्निकी समान रौद्र प्रज्वलित एक नेत्रसे ॥ १ ॥ रोषसे चलित इन्द्रिय हो उन दोनोंको देखने लगे. हे राजन् ! उस समय वह लोकोंको भरभीभूत करने लगे ॥ २ ॥ और दूसरे सौम्य नेत्रसे उस ब्राह्मणको देखते हुए नष्ट हो नष्ट हो इस प्रकारके वचन कहने लगे ॥ ३ ॥ हे दोनों कुमारो ! यहांसे चले जाओ क्यों देर करते हो मेरे वचनके रोषको सहनेको तुम समर्थ नहीं हो ॥ ४ ॥ नहीं तो मैं सम्पूर्ण राजोंके भस्म करनेमें समर्थ हूं फिर मेरे आगे साहस करनेको समर्थ न होना ॥ ५ ॥ शंख चक्र गदाके धारण करनेवाले लोकमें विरूपात नारायण तुम्हारे दर्पको चूर्ण

पश्यंस्तौ च दुरात्मानौ रोषव्याकुलितेन्द्रियः ॥ कुर्वन्निव तदा लोकान्भस्मभूतानिमातृप ॥ २ ॥ ब्राह्मणं चक्षुषा पश्यन्सौम्येनान्येन केवलम् ॥ उवाच वचनं राजन्ध्वंसत ध्वंसतेति च ॥ ३ ॥ इतो गच्छत राजानौ किं विलम्बत मा चिरम् ॥ न वां वचनसंभूतं रोषं धारयितुं क्षमे ॥ ४ ॥ अन्यथा वो महीपालान्सर्वान्दग्धुमहं क्षमः ॥ किमतः साहसं वक्तुं कश्च शक्नोति मत्पुरः ॥ ५ ॥ दूर्पं वा लोकविरूपातः शङ्खचक्रगदाधरः ॥ व्यपनेष्यति मन्दज्ञौ किं वो वक्ष्यामि साम्प्रतम् ॥ ६ ॥ तत उत्थाय धर्मात्मा गन्तुमेच्छयतीश्वरः ॥ ततो निषेधुं हंसस्तं यतते स्म यतीश्वरम् ॥ ७ ॥ तस्य बाहुं समादाय हंसो नृपवरोत्तमः ॥ कौपीनं चिच्छिदे क्रूरः कृतान्त इव सत्तम ॥ ८ ॥ यतयोऽन्ये पलायन्ति दिशो दश विचेतसः ॥ कष्टं हेति वदन्विप्रो मित्रभावाजनार्दनः ॥ ९ ॥ न्यवारयद्यथाशक्ति किमिदं साहसं त्विति ॥ दुर्वासाः सत्यधर्मस्तु हन्तुमीशोऽपि तं ततः ॥ १० ॥ मन्दं मन्दमुवाचेदं हंसं डिम्भकमेव च ॥ शापेनाहं समयोऽपि हन्तुं राजकुलाधमो ॥ ११ ॥

करेंगे अब मैं क्या कहूं ॥ ६ ॥ जब वह धर्मात्मा ईश्वर यह कहकर वहांसे चलनेकी इच्छा करते हुए तब इस यतीश्वरको हंसने निषेध कर ॥ ७ ॥ नृपवर हंसने उनकी बाहु पकड़ कर क्रूरतासे उनकी कौपीन छेदन कर दी तब कालकी समान दिसाई देने लगे ॥ ८ ॥ दूसरे यति विचेत हो दशों दिशाओंमें पलायन करने लगे उस समय मित्रभावसे जनार्दन कष्ट है कष्ट है ऐसा कहने लगा ॥ ९ ॥ और यथाशक्ति उनको निवारणभी करने लगा कि यह क्या साहस है यद्यपि सत्यधर्म दुर्वासा उन्हेंको मारनेको समर्थ थे ॥ १० ॥ परन्तु हंसडिम्भकसे मन्द मन्द कहने लगे मैं शापसे इन

नीच कुल राजोंको मारनेमें समर्थगी हूं ॥ ११ ॥ तौभी यति होनेके कारण मैं ऐसा न कहूंगा जो जगन्नाथ केशव शंख चक्र गदाधर हैं वह केशव यादवेश्वर ॥ १२ ॥ शंख चक्र गदापाणि तुम्हारा अभिमान दूर करेंगे वह यदुपति लोककी रक्षा करेंगे ॥ १३ ॥ तुम दोनोंका सजीव है कारण कि उनके हाथसे मरनेमें स्वर्ग होगा और तुम्हारा बंधु जरासंधभी तुमसे कहनेकी इच्छा न करेगा ॥ १४ ॥ इस प्रकारके लोक विद्वेषमें वह धर्मपथमें स्थित होकरभी इस प्रकार संन्यासियोंका दोह करनेसे वह तुमको त्याग देगा ॥ १५ ॥ उस मगधदेशके अधिपतिके तथापि न करोम्यन्तं यतयो ह्यत्र ते वयम् ॥ यो हि देवो जगन्नाथः केशवो यादवेश्वरः ॥ १२ ॥ शंखचक्रगदापाणिर्गर्वं वा व्यप-
नेष्यति ॥ लोके तस्मिन्यदुश्रेष्ठे रक्षत्येवं जगत्पतो ॥ १३ ॥ युवयोः सर्वथा जीवः सजीव इति मे मतिः ॥ जरासन्धोऽपि वां बन्धुः स च वक्तुं न चेच्छति ॥ १४ ॥ ईदृशं लोकाविद्विष्टं स हि धर्मपथे सदा ॥ एतावता स वां बन्धुर्न हि भूयो भविष्यति ॥ १५ ॥ विद्वेषो ह्यस्तु वां तस्य मागधस्य महीपतेः ॥ श्रुत्वेदं घोररूपं तु स हि बन्धुः सहेत चेत् ॥ १६ ॥ धर्मनाशो भवेत्तस्य नात्र कार्या विचारणा ॥ इत्युक्त्वा गच्छ गच्छेति हंसं प्राह पुनः पुनः ॥ १७ ॥ जनार्दनमुवाचेदं दुर्वासा यतिसत्तमः ॥ स्वस्त्यस्तु तव विप्रेन्द्र भक्तिरस्तु जनार्दने ॥ १८ ॥ संगतिस्तव तस्यास्तु शङ्खचक्रगदाभृतः ॥ अद्य श्वो वा परश्वो वा साधुस्व सदा भवान् ॥ १९ ॥ नहि साधोर्विनाशोऽस्ति लोकयोरुभयोरपि ॥ गच्छ सर्वं पितुर्हृदि ज्ञात्वा वृत्तं यथास्मिन्नम् ॥ २० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने दुर्वासाभाषणे नवाधिशततमोऽध्यायः ॥ १०९ ॥
साथ तुम्हारा विद्वेष होगा जो इस घोररूप अनिष्टको सुनकर वह सहन करे ॥ १६ ॥ इसमें सन्देह नहीं कि उसका धर्म नाश हो जायगा यह कह बारंवार हंससे कहा चला जा चला जा ॥ १७ ॥ और यतिश्रेष्ठ दुर्वासाने जनार्दनसे कहा, हे विप्रेन्द्र ! तुम्हारे कल्याण और जनार्दनमें भक्ति हो ॥ १८ ॥ और तुम्हारी शंख चक्र गदाधारीसे संगति होगी आज कल वा परसों आप श्रेष्ठ साधुत्व को प्राप्त होगे ॥ १९ ॥ दोनों लोकमें साधुओंका विनाश नहीं होता है जाकर यह सब वृत्तान्त अपने पितासे कह देना ॥ २० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्य-

पर्वणि ज्ञापायां हंसडिभोपाख्यानं दुर्वासोपाखणे नवाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०९ ॥ वैशंपायन बोले, तब वह हंस और ढिंभक कालसे प्रेरित हो
क्रोवित हुए शिष्य कमण्डलु द्विदल काष्ठ ॥ १ ॥ दण्ड पात्र इत्यादि सबको छेदन भेदन करके उस देशमें व्याधोंसे मांस पकवाते हुए ॥ २ ॥ वहां उसे
मक्षण करके फिर अपनी पुरीमें आये और धर्मात्मा जनार्दन स्नेहसे उनके पीछे पीछे गया ॥ ३ ॥ और अब यह नष्ट हुए ऐसा जानकर वह बड़ा
दुःखी हुआ और उन सबके चले जानेपर यतिश्रेष्ठ दुर्वासा ॥ ४ ॥ पलायन करते हुए सब यतियोंसे इस प्रकार बोले और पवित्र देश पुष्करसे निक-

वेशम्पायन उवाच ॥ ततस्तौ हंसडिम्भकौ क्रुद्धौ कालेन चोदितौ ॥ शिष्यं कमण्डलुं चैव द्विदलं दारुमेव च ॥ १ ॥ दण्डान्पात्र-
विशेषांश्च छित्त्वा भित्त्वा च सर्वशः ॥ तस्मिन्देसे महाराज व्याधैर्मांसान्यदीदहन् ॥ २ ॥ भक्षयित्वा ततो देशात्स्वपुरीं तौ प्रजग्मतुः ॥
जनार्दनश्च धर्मात्मा स्नेहादनुययौ तयोः ॥ ३ ॥ नष्टाविमाविति तदा स मेने दुःखितः परम् ॥ गतेषु तेषु सर्वेषु दुर्वासा यतिस-
त्तमः ॥ ४ ॥ पलायनपरान्सर्वानिदं प्राह यतीश्वरान् ॥ इतो देशाद्विनिर्गत्य पुष्करात्पुण्यसंयुतात् ॥ ५ ॥ मन्दं मन्दं समाश्वास्य
विश्रम्य च ततस्ततः ॥ प्रविश्य द्वारकां देवं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥ ६ ॥ दृष्ट्वा च तस्मै प्रभवे वक्ष्यामो यतिसत्तमाः ॥ स हि रक्षन्
जगदिदं धर्मवर्त्मनि संस्थितः ॥ ७ ॥ आद्यो लोकगुरुर्विष्णुर्धृतात्मा तत्त्ववित्प्रियः ॥ उद्धृत्य कण्टकान्सर्वान् उशास पृथिवीमि-
माम् ॥ ८ ॥ स च पापान्महाघोरान्सर्वान्पापकृतान्प्रभुः ॥ रक्षेत्रः सकलान्सर्वान् ज्ञानेषु नियतात्मनः ॥ ९ ॥ इदमद्य क्षमं विप्रा
यानमद्य विधीयताम् ॥ साहसं यत्कृतं ताभ्यां पात्रभेदादि सत्तमाः ॥ १० ॥

लकर ॥ ५ ॥ मंद मंद समझाते हुए इधर उधर ठहराते हुए और बोले द्वारकामें शंख चक्र गदाधारीके निकट जाकर उन प्रभुका दर्शन ॥ ६ ॥ कर
उनसे हम यह वृत्तान्त कहेंगे वह इस जगत्की रक्षा करते धर्ममार्गमें स्थित हैं ॥ ७ ॥ आद्य लोकके गुरु विष्णु यतात्मा तत्त्वके जाननेवाले प्रिय सब
कंटकोंको नष्ट करके इस पृथ्वीका पालन करते हैं ॥ ८ ॥ यह प्रभु सब महाघोर पाप और पापात्माओंसे ज्ञानमें नियतात्मा हो हम सबकी रक्षा
करते हैं ॥ ९ ॥ हे ब्राह्मणो ! अब यही ठीक है कि उनके निकट चले, जो उन दोनोंने साहस किया है वह उनसे कहें जो उन्होंने हमारे पात्रोंका

६. वं.
॥ २३४ ॥

छेदन मोदन किया है ॥ १० ॥ यह हम जनार्दनको दिखावें वह जानी यति इस प्रकारकी प्रतिज्ञा करके ॥ ११ ॥ उन टूटे हुए दारुमय पात्रोंको लेकर
द्विदल कषाय वस्त्र और कौपीन वल्कलको लेकर ॥ १२ ॥ तथा अलाबु फलके मूलसे अर्धप्रोत दो तुकड़े हुए पात्रको ले तथा अन्य वस्तुओंकोभी
लेकर केशवके दर्शनको गये ॥ १३ ॥ पांच सहस्र मुनियोंको साथ लेकर तपोयोनि ईश्वरके अंश दुर्वासाजी ॥ १४ ॥ एक दिन रात बराबर चलकर
कृष्णकी पाली हुई द्वारकामें वे चतुर महात्मा कोई लोमवान् कोई केशवर्जित प्राप्त हुए ॥ १५ ॥ हे राजेन्द्र ! प्रातःकाल वे यतीश्वर वापिकामें पहुँच वहाँ
एतत्सर्वमशेषेण दर्शयाम जनार्दनम् ॥ तथेति ते प्रतिज्ञाय यतयो ज्ञानचक्षुषः ॥ ११ ॥ छिन्नं ताभ्यां समादाय शिष्यं दारुमयं
तथा ॥ द्विदलं कर्पटं चैव कौपीनमथ वल्कलम् ॥ १२ ॥ कमण्डलुं तदा राजन्नर्धप्रोतकपालकम् ॥ एतानन्यान्समादाय द्रष्टुं
केशवमाययुः ॥ १३ ॥ पञ्च चैव सहस्राणि पुरस्कृत्य महामुनीन् ॥ दुर्वाससं तपोयोनिमीश्वरस्यात्मसंभवम् ॥ १४ ॥ अहोरात्रेण
ते सर्वे द्वारकां कृष्णपालिताम् ॥ ययुर्दान्ता महात्मानो लोमशाः केशवर्जिताः ॥ १५ ॥ प्रातः प्रविश्य राजेन्द्र वापिकायां यतीश्वराः ॥
स्नात्वाोपस्पृश्य ते सर्वे यत्नेन महता तदा ॥ १६ ॥ द्रष्टुमभ्युद्यता विष्णुं कण्टकोद्धृतितत्परम् ॥ एकरूपं समास्थाय सुधर्मायामव-
स्थितम् ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भोपाख्याने यतीनां द्वारकागमनं नाम
दशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ अथ सर्वेश्वरो विष्णुः पद्मकिञ्जल्कलोचनः ॥ श्यामः पीताम्बरः
श्रीमान्प्रलम्बाम्बरभूषणः ॥ १ ॥ किरीटी श्रीपतिः कृष्णो नीलकुञ्चितमूर्द्धजः ॥ अव्यक्तः शाश्वतो देवः सकलो निष्कलः शिवः ॥ २ ॥
स्नान कर बड़े यत्नसे ॥ १६ ॥ कंटकोंके उद्धार करनेमें युक्त केशवके देखनेकी इच्छा करने लगे जो एक रूपमें स्थित हो सुधर्मांमें स्थित हैं ॥ १७ ॥
इति श्रीम० खि० ह० भविष्यपर्वणि भाषाया हंसडिम्भोपाख्याने यतीनां द्वारकागमनो नाम दशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११० ॥ वैशम्पायन बोले,
तब कमललोचन सर्वेश्वर विष्णु श्यामरूप पीताम्बरधारी श्रीमान् प्रलम्बायमान अम्बरकी समान भूषण धारे ॥ १ ॥ किरीटधारी श्रीपति कृष्ण
नील कुञ्चित केशवाले अव्यक्त शाश्वत देव सकल निष्कल शिव ॥ २ ॥

भा. वि.

पृ. २ १२५

॥ २३४ ॥

कृष्ण विहार और क्रीडा करते थे उस समय अनेक कुमार और सात्यकि उनके साथ थे ॥ ३ ॥ यादवोंके साथ गोलाकार पाशोंको खेल रहे थे युयुधानके सहित कृष्ण अपना प्रिय करते थे ॥ ४ ॥ कि यह प्रथमका अक्ष हमारा है तुम्हारा पीछे होगा जब कमल लोचन कृष्णने सात्यकिसे ऐसा कहा ॥ ५ ॥ तब उनके पार्श्वमें स्थित वसुदेवादि दूसरे यादव तथा उद्धव आदिनी वहां स्थित थे ॥ ६ ॥ वह भूतात्मा भूतभावन उस समय दूसरे व्यापारोंसे रहित थे और सुग्रीवके साथ रामकी समान विहारमें तत्पर थे ॥ ७ ॥ वह महाविष्णु अच्युत मध्याह्न समयमें

क्रीडाविहारोपगतः कदाचिदभवद्धारिः ॥ कुमारैरपरैः सार्द्धं सात्यकिप्रमुखैर्नृप ॥ ३ ॥ गोलक्रीडां सुधर्मायां मध्ये यादवसत्तमः ॥ चकार प्रियकृत्कृष्णो युयुधानेन केशवः ॥ ४ ॥ ममायं प्रथमो गोलस्तव पश्चाद्रविष्यति ॥ इति ब्रुवंस्तदा विष्णुः सात्यकिं कमल-
क्षणः ॥ ५ ॥ पार्श्वस्था यादवास्तस्य वसुदेवपुरोगमाः ॥ उद्धवप्रमुखा राजन्नासेदुः क्वचिदत्र वै ॥ ६ ॥ अन्यव्यापाररहितो भूतात्मा भूतभावनः ॥ विजहार यथा रामः सुग्रीवेण पुरा नृप ॥ ७ ॥ मध्यंदिने महाविष्णुः शैनेयेन सहाच्युतः ॥ विक्रीड्य सुचिरं कृष्ण उपारंसीत्स यादवः ॥ ८ ॥ द्वाःस्थने वारिताः पूर्वं द्वायैव च समास्थिताः ॥ इदमन्तरमित्येव विविशुस्तां सभां नृप ॥ ९ ॥ यतयो दीर्घतपसः पुरस्कृत्य तपोधनम् ॥ दुर्वाससं सुमनसो ददृशुर्यादवेश्वरम् ॥ १० ॥ गोलक्रीडासमाप्तं करसंस्थितगोलकम् ॥ पद्मपत्र-
विशालक्षं विष्णुं तं सात्यकिं हरिम् ॥ ११ ॥ एकेनाक्षणा ह्लादयन्तं परेणान्येन गोलकम् ॥ यतयश्च महाराज प्रत्यदृश्यन्त तत्पुरः ॥ १२ ॥ वृष्णिपः पुण्डरीकाक्षः सात्यकिर्बलभद्रकः ॥ वसुदेवस्तथाक्रूर उग्रसेनस्तथा नृप ॥ १३ ॥

सात्यिकिके साथ विहार कर उग्ररामको प्राप्त हुए ॥ ८ ॥ पहले द्वारपालोंने तपस्वियोंको श्रीकृष्णको क्रीडा करते देखकर निवृत्त कर रक्खा था अब समय देखकर वे तपस्वी सभामें प्रविष्ट हुए ॥ ९ ॥ वे दीर्घतपवाले यति तपोधन दुर्वासाको आगे करके श्रेष्ठ मनवाले यादवेश्वरका दर्शन करते हुए ॥ १० ॥ जिनके हाथमें क्रीडा करनेका पासा विद्यमान है पद्मपत्रकी समान विशाललोचन विष्णु और सात्यिकिको देखा ॥ ११ ॥ एक ओर दृष्टिसे प्रसन्न करके दूसरे ओर गोलकको देखते वे महातपस्वी श्रीकृष्णको देखते हुए ॥ १२ ॥ वृष्णिपति पुण्डरीकाक्ष सात्यकि बलभद्र वसुदेव अक्रूर राजा उग्रसेन ॥ १३ ॥

औरभी दूसरे यादव उन्हें देख आश्चर्यको प्राप्त हो कहने लगे यह क्या ऐसे सब मनमें भ्रान्त हो कहने लगे ॥ १४ ॥ तीनों जगत्को दग्ध करनेमें समर्थ दुर्वासाके पीछे अनेक ऋषि गमन करने लगे अर्धकौपीन वस्त्रवाले स्मरण करनेवाले किसी द्विजको देख ॥ १५ ॥ जो कि अन्तरके तापसे युक्त छिन्न दण्ड धारण किये यति जो कि रोषसे अन्तरमें प्रज्वलित हो रहे थे कारण कि हंसके द्वारा उनको बड़ा कश्मल आनकर प्राप्त हुआ था ॥ १६ ॥ नेत्रमें उठी हुई महाअग्निसे यादवेश्वरको देखने लगे तब सब यादव भीत हो दुर्वासाको देखने लगे ॥ १७ ॥ यह दुर्वासा क्रोध कर क्या कहेंगे और अन्ये च यादवाः सर्वे सभ्रमं प्रतिपेदिरे ॥ इदं किमिदमित्येवं व्याशङ्कमनसोऽभवन् ॥ १४ ॥ पृष्ठतोऽप्यनुगच्छन्ति दिग्दक्षान्तं जगत्रयम् ॥ अर्धकौपीनवसनं स्मरन्तं कमपि द्विजम् ॥ १५ ॥ अन्तस्तापसमायुक्तं छिन्नदण्डधरं यतिम् ॥ अन्तर्ज्वलन्तं रोषेण हंसासादितकल्मषम् ॥ १६ ॥ नेत्रोत्थितमहावाह्निं प्रेक्षन्तं यादवेश्वरम् ॥ दुर्वाससं ते ददृशुर्भीता यादवसत्तमाः ॥ १७ ॥ किं करिष्यत्यसौ क्रुद्धः किं वा वक्ष्याति नः प्रभुः ॥ इति प्राञ्जलयः सर्वे यादवाः प्रतिपेदिरे ॥ १८ ॥ इदमासनमित्येवं किंचिदूचुश्च वृष्णयः ॥ ततः कृष्णो हृषीकेशः किंचिदुत्प्लुत्य तत्पुरः ॥ १९ ॥ इदमासनमित्येवं स्थीयतामिह निर्वृतः ॥ अहमद्य स्थितो विप्र किं करोऽस्मीति चाब्रवीत् ॥ २० ॥ ततः किंचिदिवासीन आसने यतिविग्रहः ॥ आसने संस्थिते तस्मिन्यतयो वीतमत्सराः ॥ २१ ॥ आसनानि यथायोगं भोजिरे निर्वृताः किल ॥ अर्वादिसमुदाचारं चक्रे कृष्णः किराटभृत् ॥ २२ ॥ आह भूयो हृषीकेशो यतिं दुर्वाससं प्रभुम् ॥ किमर्थं ब्रूहि विप्रेन्द्र अस्मिन्प्रत्यागमो हि वः ॥ २३ ॥ हमारे प्रभु क्या करेंगे इस प्रकार हाथ जोड़कर सम्पूर्ण यादव स्थित हुए ॥ १८ ॥ कोई कोई वृष्णिवंशी कहने लगे यह आसन है विराजिये तब हृषीकेश श्रीकृष्णजी कुछ आगे बढ़कर बाले ॥ १९ ॥ यह आसन है इसपर सुखसे बैठिये और मैं आपकी आज्ञामें स्थित हूं क्या कहूं ॥ २० ॥ तब वह दुर्वासा कुछेक आसनपर बैठते हुए, जब वे आसनपर बैठ गये तब दूसरे यतिभी ॥ २१ ॥ यथायोग्य अपने आसनोंपर बैठते हुए तब श्रीकृष्णने सब अर्वादिका आचार किया ॥ २२ ॥ फिर हृषीकेश दुर्वासा ऋषिसे कहने लगे, हे विप्रेन्द्र ! कहिये इस समय आप कैसे पधारें हैं ॥ २३ ॥

इसमें मैं कोई बड़ा कारण आपकी दृष्टिसे देखता हूँ। हे द्विजश्रेष्ठ ! आप पापरहित संन्यासी हो ॥ २४ ॥ हे द्विजश्रेष्ठ ! आप सदा स्पृहारहित हो आपको कोई इच्छा न होनेसे कुछ प्रार्थनाभी नहीं है ॥ २५ ॥ स्पृहासे प्रेरित कर्मवाले क्षत्रियोंके निकट जाते हैं। हे विप्र ! हमसे निरूपणीय कोई वस्तु नहीं है ॥ २६ ॥ हे ब्रह्मन् ! आपके आगमनकारण जाननेकी मुझे बड़ी अभिलाषा है परन्तु इतना अनुमान करता हूँ कि इसमें कुछ कारण है ॥ २७ ॥ सो आप कहिये यह हम आपसे जाननेकी इच्छा करते हैं चक्रपाणि जनार्दनके ऐसा कहने पर ॥ २८ ॥ उन ब्राह्मणश्रेष्ठको बड़ा क्रोध

दृष्टं वा ह्यथवा किञ्चित्कारणं चास्ति वो महव ॥ संन्यासिनो द्विजश्रेष्ठा यूयं विगतकल्मषाः ॥ २४ ॥ निस्पृहाश्च सदा यूयमस्मत्तो द्विजपुङ्गवाः ॥ प्रार्थ्यं नाम न चेवास्ति स्पृहा नैवास्ति वो यतः ॥ २५ ॥ स्पृहाप्रेरितकर्माणः क्षत्रियान् यान्ति सुव्रताः ॥ निरूप्यमाणमस्माभिर्विप्र किञ्चिन्न दृश्यते ॥ २६ ॥ न जाने कारणं ब्रह्मन्युष्मदागमनं प्रति ॥ एतावता चानुमेयं किञ्चित्कारणमस्ति वै ॥ २७ ॥ तद्ब्रूहि यदि विद्येत त्वत्तो ज्ञास्यामहे वयम् ॥ इत्युक्तवाति देवेशे चक्रपाणो जनार्दने ॥ २८ ॥ तस्यापि राजन्विप्रस्य भूयः कोपो महानभूत् ॥ तस्मादभ्यधिकः पूर्वात्कोपः संजायते महान् ॥ २९ ॥ दिधक्षन्निव लोकांस्त्रीन् भक्षयन्निव पश्यतः ॥ रोषरक्तेक्षणः क्रुद्धो हसन्निव दहन्निव ॥ ३० ॥ उवाच वचनं विष्णुं दुर्वासाः क्रोधमूर्च्छितः ॥ न जाने इति कस्मात्त्वं ब्रूषे नो यादवेश्वर ॥ ३१ ॥ जानामि त्वां महादेवं वञ्चयन्निव भाषसे ॥ पुरातना वयं विष्णो पूर्ववृत्तान्तवेदिनः ॥ ३२ ॥ यथा हि देवदेवोऽसि मायामानुषदेहवान् ॥ निगूहसे प्रभुरतः कस्मान्नो जगतीपते ॥ ३३ ॥

बड़ा और पहलेसेजी अधिक कोप बढ़ने लगा ॥ २९ ॥ तीनों लोकको जलाते हुएसे और देखनेसे भक्षण करने हुएसे रोषसे लालनेत्र कर हँसते और जलाते हुएसे ॥ ३० ॥ क्रोधसे मूर्च्छित हो दुर्वासा विष्णु भगवान्से बोले, हे यादवेश्वर ! यह आप किस प्रकारसे कहते हैं कि हम नहीं जानते ॥ ३१ ॥ मैं तुम महादेवको जानता हूँ आप वंचना करते हुए इस प्रकारके वचन कहते हो ॥ ३२ ॥ आप देवदेव मायासे मनुष्यका शरीर धारण कर आये हो। हे जगत्पते ! फिर आप हमसे किस कारण छिपाव करते हो ॥ ३३ ॥

ह. वं.
२३६॥

आप ब्रह्मविद पुरुषोंकी मूर्ति हो, यही आपका परम पद है जिसे पहले ब्रह्माने अर्चन किया और जिसको पहले हमने जाना ॥ ३४ ॥
जिससे यह सब संसार हुआ है वही आप परम पद हो जिसको तत्त्वज्ञानी स्थूलरूपभी जानते हैं ॥ ३५ ॥ जिसको पुरातनविद
ऐसा जानते हैं वही यह परम शरीर है जो कर्मसेही प्राप्त है, जिसको स्मरण कर हम शान्त होते हैं ॥ ३६ ॥ जिस प्रत्यक्ष हुए रूपकोभी मनुष्य
नहीं जानते हैं, न मूढबुद्धि और न हमही जिसको यथार्थतासे जानते हैं ॥ ३७ ॥ हम नहीं जानते हैं आप ऐसे साहसके वचन कैसे कहते हो, जो
सोऽसि ब्रह्मविदां मूर्तिस्तवेतत्परमं पदम् ॥ यदभ्यर्च्य पुरा ब्रह्मा यच्च ज्ञाना वयं पुरा ॥ ३४ ॥ यतो विश्वमिदं भूतं तदेतत्परमं पदम् ॥
यच्च स्थूलं विजानन्ति पुरा तत्त्वेन चेतसा ॥ ३५ ॥ पुराविदोऽथ विश्वेश तदेतत्परमं वपुः ॥ कर्मणा प्राप्यते यत्तु यत्स्मृत्वा
निर्वृता वयम् ॥ ३६ ॥ ॥ प्रत्यक्षमपि यद्रूपं नैव जानन्ति मानुषाः ॥ न हि मूढधियो देव न वयं तादृशा हरे ॥ ३७ ॥ न जाने
इति यद्रूपे किमतः साहसं वचः ॥ ये हि मूलं विजानन्ति तेषां तु प्रविवेचनम् ॥ ३८ ॥ कुर्वतः किं फलं देव तव केशिनिषूदन ॥
वेदान्ते प्रथितं तेजस्तव चेदं विचार्यते ॥ ३९ ॥ ये च विज्ञानतृप्तास्तु योगिनो वीतकल्मषाः ॥ पश्यन्ति ह्रत्सरोजेऽपि तदेवेदं वपुः
प्रभो ॥ ४० ॥ वेदैर्यद्गीयते तेजो ब्रह्मेति प्रतिपाद्य वे ॥ तदेवेदं विजानेऽहं रूपमेश्वरमेव च ॥ ४१ ॥ वैष्णवं परमं तेज इति
वेदेषु पठ्यते ॥ अवगच्छाम्यहं विष्णो तदेवेदं वपुस्तव ॥ ४२ ॥ य ओमित्युच्यते शब्दो यस्य वागिति गीयते ॥ स एवासि प्रभो
विष्णो न जाने इति मा वद ॥ ४३ ॥

मूलको जानता है उसका विचार कैसा ॥ ३८ ॥ हे देव ! हे केशिनिषूदन ! इस प्रकार आपका वेदान्तमें कथित तेज विचारा जाता है ॥ ३९ ॥
जो पापरहित योगी वेदान्तमें तृप्त हैं वह अपने हृदयकमलमें आपका दर्शन करते हैं ॥ ४० ॥ जो वेदोंमें गाया जाता है जो ब्रह्मसे प्रतिपादित होता
है उसी ईश्वरके रूपको हम जानते हैं ॥ ४१ ॥ वैष्णवही परम तेज है ऐसा वेदोंमें पढ़ा जाता है ! हे विष्णो ! हम उसी आपके रूपके जाननेकी
इच्छा करते हैं ॥ ४२ ॥ जिसको ॐ कहते हैं और वाक् (वाणी) कहते हैं वही आप प्रभु विष्णु हो हम नहीं जानते ऐसा मत कहो ॥ ४३ ॥

भा. वे.

प. ३ अ. ११४

॥ २३६ ॥

जो कुछ तुमसे परोक्ष हो तो यह कह सकते हैं, हम नहीं जानते. हे गोविंद ! ऐसा मत कहो ॥ ४४ ॥ जिससे यह विश्व उदय हुआ है और जिसमें लय हो जाता है हे केशव ! उसी तुम्हारे इस वैष्णव तेजके जाननेकी इच्छा करता हूं ॥ ४५ ॥ तुम सब जगत्के कर्ता भूतभावके पाति हो सदा हृदयमें दीखते हो जो आपको स्मरण करते हैं ॥ ४६ ॥ हे विष्णो ! मेरी बुद्धिमें वायु विष्णु है जब यह ध्यान होता है. हे विष्णो ! तब वही रूप मेरे हृदयमें स्थिति करता है ॥ ४७ ॥ कभी आकाशही विष्णु है ऐसा ध्यानमें आता है तब वही रूप हृदयमें स्थित होता है ॥ ४८ ॥ कभी यह

परोक्षं यदि किञ्चित्स्यात्तव वक्तुं प्रयुज्यते ॥ न जाने इति गोविन्द मा वादीः साहसं हरे ॥ ४४ ॥ विश्वं यदा प्रादुरासीद्यस्मिंल्लीनं क्षये सति ॥ इदं तदैश्वरं तेजस्त्ववगच्छामि केशव ॥ ४५ ॥ कर्ता त्वं भूतभव्येश प्रतिभासि सदा हृदि ॥ यद्यद्रूपं स्मरेन्नित्यं तत्तदेवासि मे हृदि ॥ ४६ ॥ वायुरेव यदा विष्णुरिति मे धीयते मतिः ॥ तदा तद्रूपमेवासि हृन्मध्ये संस्थितो विभो ॥ ४७ ॥ आकाशो विष्णुरित्येव कदाचिद्धीयते मतिः ॥ तदा तद्रूपमेवासि हृन्मध्ये संस्थितो विभो ॥ ४८ ॥ पृथिवी विष्णुरित्येतत्कदाचिद्धीयते मतिः ॥ तदा पार्थिवरूपस्त्वं प्रतिभासि सदा मम ॥ ४९ ॥ रसोऽयं देव इत्येव कदाचिच्चिन्त्यते मया ॥ तदा रसात्मना विष्णो हृन्मध्ये संस्थितो विभो ॥ ५० ॥ यदा त्वं तेज इत्येवं स्मर्ता स्यां पुरुषोत्तम ॥ तदा तद्रूपसंपन्नः प्रतिभासि सदा हृदि ॥ ५१ ॥ चन्द्रमा हरिरित्येवं तदा चान्द्रमसं वपुः ॥ निरीक्ष्य चक्षुषा देव ततः प्रीतोऽस्मि केशव ॥ ५२ ॥ यदा सौरं वपुरिति स्मर्ता स्यां जगतीपते ॥ तदा तद्भावनायोगात्सूर्य एव विराजसे ॥ ५३ ॥

मध्यमें आता है कि पृथ्वीही विष्णु है तब तुम हमको पार्थिवरूप दीखते हो ॥ ४९ ॥ कभी आपको मैं रसरूपसे विचार करता हूं तब आपको मैं रसरूप देखता हूँ ॥ ५० ॥ हे पुरुषोत्तम ! जब आकाश और तेजस्वरूपसे आरका ध्यान करता हूं तब वही रूप मेरे हृदयमें दीखने लगता है ॥ ५१ ॥ जब आपको चन्द्रमारूपसे विचार करता हूं तब आप चन्द्रमारूपसे दीखते हो. हे देव ! इस प्रकार आपको देख मैं प्रसन्न होता हूं ॥ ५२ ॥ हे जगतीपते ! जब आपको सूर्यरूपसे विचार करता हूं, तब उसकी भावनासे सूर्यरूप दीखते हो ॥ ५३ ॥

इस कारण सर्वत्र तुमही हो यह मेरी निश्चित मति है. हे जनार्दन ! हम नहीं जानते ऐसी बात आप मत कहो ॥ ५४ ॥ हे विष्णो ! सर्वज्ञ होकर आप हमारे दुःखको क्यों नहीं जानते हे विष्णो ! हम अत्यन्त दुःखी होकर आपके निकट आये हैं ॥ ५५ ॥ हे केशव ! आप ऐसी हमारी दशाको क्यों नहीं स्मरण करते हो हमारा भाग्यही नष्ट हुआ है यह हम विचार करते हैं ॥ ५६ ॥ हे प्रभो ! जो हमारा भाग्यही नष्ट है जो आप हमको भूल गये हो कोई क्षत्रिय कुमार शिवके वरदानसे गर्वित हुए ॥ ५७ ॥ हंस और डिम्बक नामवाले हमको बाधा देते हैं. हे केशव ! गृहस्थही सर्वश्रेष्ठ है तस्मात्सर्वं त्वमेवासि निश्चिता मतिरीदृशी ॥ अतो न जानेऽहमिति वक्तुं नेशो जनार्दन ॥ ५४ ॥ इत्यर्थे संस्थितो विष्णो पीडां नो नैव चिन्त्यसे ॥ अत्यन्तदुःखिता विष्णो वयं त्वामनुसंस्थिताः ॥ ५५ ॥ ईदृशीयमवस्था नो नैतां स्मरसि केशव ॥ एतत्पु-
नर्भाग्यमतो नष्टमित्येव चिन्तये ॥ ५६ ॥ मन्दभाग्या वयं विष्णो यतो नो न स्मरेः प्रभो ॥ कोचित्क्षत्रियदायादौ गिरीशवरग-
र्वितो ॥ ५७ ॥ नाम्ना हंसडिम्बकौ च बाधेते नो जनार्दन ॥ गर्हस्थं हि सदा श्रेयो वदन्ताविति केशव ॥ ५८ ॥ इतस्ततश्च धावन्तो
वदन्तो बहु किल्बिषम् ॥ अयुक्तं बहु भाषन्तो धर्षयन्तौ च नः सदा ॥ ५९ ॥ इदमन्यत्कृतं देव असह्यं पापमुच्यते ॥ पश्येदं
बहुधा देव भिन्नं भिन्नं सहस्रशः ॥ ६० ॥ शिष्यं च दारवं पात्रं द्विदलान्घ्रेणुकान्वहन् ॥ इदमप्यपरं पश्य तयोः साहसचेष्टितम् ॥ ६१ ॥
कौपीनं बहुधा च्छिन्नं तदस्माकं महद्धनम् ॥ कृतं कपालमात्रेण कमण्डलु जगत्प्रभो ॥ ६२ ॥
यह वह कहते हैं ॥ ५८ ॥ इधर उधर धावमान होते बड़े दुर्वाक्य कहते थे, औरभी अनेक अयुक्त वचन कह सदा हमारी धर्षणा
करते हैं ॥ ५९ ॥ हे देव ! यह और असह्य पाप उनका है आप देखिये कि हमारे पात्रोंके सहस्रों खण्ड कर दिये हैं ॥ ६० ॥ शिष्य काष्ठ पात्र
द्विदल वेणु यह खण्ड २ कर दिये यह आप उनकी दूसरी साहस चेष्टा स्मरण कीजिये ॥ ६१ ॥ हमारी महाधन कौपीनभी

छेदन कर दी है. हे जगत्प्रभो ! हमारा कमण्डलु तोड़कर कपाल मात्र कर दिया है ॥ ६२ ॥ आप क्षात्रव्रतमें स्थित हुए नित्य हमारी रक्षा करते हो. हे देव ! यह बड़ा आश्चर्य है. प्रतिदिन हमारी रक्षा करते हो ॥ ६३ ॥ हे प्रभो ! हम मन्दात्मा मन्दभाग्य हैं क्या करें. हे जगत्पते ! कहिये आपके शिवाय हम किसकी शरण जाँय ॥ ६४ ॥ यदि वे जाँते रहे तो त्रिलोकी नष्ट हो जायगी, न ब्राह्मण न राजा न वैश्य न शूद्र कोई न रहेंगे ॥ ६५ ॥ वे दोनों अत्यन्त बलि तीक्ष्ण दण्ड धरनेवाले हैं उनके आगे खड़े होनेको देवता और इन्द्र समर्थ नहीं है ॥ ६६ ॥ न ग्रीष्म न राजा

त्वं तु नो क्षरसे नित्यं क्षात्रं वै व्रतमास्थितः ॥ चित्रं चित्रमिदं देव रक्षस्यपि सदानिशम् ॥ ६३ ॥ किं करिष्यामि मन्दात्मा मन्दभाग्या वयं विभो ॥ किन्नः शरणमद्यैव तद्ब्रूहि जगतां पते ॥ ६४ ॥ जीवन्तो तो यदि स्यातां नष्टा लोका इमे त्रयः ॥ न विप्रा न च राजानो न वैश्या न च पादजाः ॥ ६५ ॥ अत्यन्तबालिनो मत्तो तीक्ष्णदण्डधरो नृप ॥ न तयोः पुरतः स्थातुं शक्ता देवाः सवासवाः ॥ ६६ ॥ न च भीष्मो न वा राजा बाल्हीको भीमविक्रमः ॥ यो हि वीरो जरासन्धः क्षत्रियाणां भयंकरः ॥ ६७ ॥ नैव च प्रायशः स्थातुं गिरीशवरदर्पिणोः ॥ तयोः कृष्ण हरे शक्तो नित्यमप्रतिसङ्गिनोः ॥ ६८ ॥ तस्मात्त्वं जहि तो वीरो रक्ष लोकानिमान्प्रभो ॥ अन्यथा रक्षसीत्येवं व्यर्थः शब्दोऽत्र जायते ॥ ६९ ॥ बहुनात्र किमुक्तेन रक्ष रक्ष जगत्त्रयम् ॥ इत्युक्त्वा विररामेव दुर्वासाः क्रोधमूर्च्छितः ॥ ७० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने दुर्वासःसमागमो नामैकादशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १११ ॥

पराक्रमी बाल्हीक कोई ऐसा बलि नहीं जो वीर जरासन्ध क्षत्रियोंको भय देनेवाला है ॥ ६७ ॥ वहनी भिवके वरसे अभिमानवाले उनके समाने खड़ा नहीं हो सकता है. हे कृष्ण ! उन सदा संगति करनेवालोंके सामने आपही समर्थ हैं ॥ ६८ ॥ हे प्रभो ! इस कारण आप इन दोनोंको मारकर जगत्की रक्षा करो नहीं तो रक्षा करनेका शब्द तुममें वृथा हो जायगा ॥ ६९ ॥ बहुत कहनेसे क्या है आप त्रिलोकीकी रक्षा कीजिये क्रोधमूर्च्छित दुर्वासा यह कहकर मौन हुए ॥ ७० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसडिम्भकोपाख्याने दुर्वासःसमागमो नामैकादशाधि-

कशततमोऽध्यायः ॥ १११ ॥ वैशंपायन बोले, इस प्रकार दुर्वासाके वचन सुनकर श्रीकृष्ण कुछ दीर्घनिश्वास ले दुर्वासाको देखकर यादवेश्वर कहने लगे ॥ १ ॥ यह सब हमाराही दोष है आप इसको क्षमा करिये, आप हमारे वचन सुनकर शान्त हुईये ॥ २ ॥ हे विप्र ! उन हंस और डिम्भकको मैं युद्धमें जीतूंगा चाहे उनको गिरीश वा कुबेर किसीने वर क्यों न दिया हो ॥ ३ ॥ यम वरुण चाहें चतुर्मुख ब्रह्मासे क्यों न वर पाये हों मैं उन दोनोंको सेनासहित मारकर तुमको प्रसन्न करूंगा ॥ ४ ॥ आप इस बातमें क्रोध न करें मैं सत्यकी सौगन्ध कर कहता हूं उन दोनों नृपाधमोंको मारकर मैं

वैशम्पायन उवाच ॥ यत्तेर्वचनमाकर्ण्य मन्दमुच्छस्य केशवः ॥ दुर्वाससं समालोक्य बभाषे यादवेश्वरः ॥ १ ॥ क्षन्तव्यं भवता सर्वं दोष एव ममेव हि ॥ शृणु वाक्यं ममेतत्तु श्रुत्वा शान्तिपरो भव ॥ २ ॥ जेष्यामि तौ रणे विप्र हंस डिम्भकमेव च ॥ गिरीशो वा वरं दद्याच्छक्रो वा धनदोऽपि वा ॥ ३ ॥ यमो वा वरुणो वापि ब्रह्मा वाथ चतुर्मुखः ॥ सबलो सानुजो हत्वा पुनर्दास्यामि वो रतिम् ॥ ४ ॥ सत्येनैव शपाम्यद्य मा रोषवशमो भव ॥ रक्षां वोऽहं करिष्यामि हत्वा तौ च नृपाधमौ ॥ ५ ॥ जानामि तौ दुरात्मानौ युष्मद्दोषकरो हि तौ ॥ श्रुतं च पूर्वमस्माभिस्तीक्ष्णदण्डधराविति ॥ ६ ॥ अत्यन्तबलिनो मत्तो गिरीशवरदपितौ ॥ नाल्पप्रयत्नसंसाध्यौ जरासन्धहितैषिणौ ॥ ७ ॥ प्राणानपि तयो राजा दास्यत्येव न संशयः ॥ जरासन्धो महीपालो विना तौ जयते महीम् ॥ ८ ॥ जये तयोर्विप्रवर्य तत्र श्रेयो भवेत्ततः ॥ यत्र यत्र तु तौ गत्वा स्थितावित्यनुशुश्रुम ॥ ९ ॥

तुम्हारी रक्षा करूंगा ॥ ५ ॥ तुम्हारे साथ द्वेष करनेवाले उन दुरात्माओंको मैं जानता हूं मैंने उनके तीक्ष्ण दंडकी वार्ता पहले सुन ली है ॥ ६ ॥ वे दोनों बड़े बली मत्त शिवके वरदानसे गर्वित हैं और जरासन्धके हितकारी होनेसे थोड़े प्रयत्नसे साध्य नहीं हो सके हैं ॥ ७ ॥ राजा उनको अपने प्राणतक दे देगा इसमें संशय नहीं राजा जरासन्ध उनकी सहायताके बिनाही पृथ्वी जीत सकता है ॥ ८ ॥ हे विप्रश्रेष्ठ ! उनके जीतनेमें ही मंगल होगा, हमने सुना है कि जहां जहां जाकर स्थिति करेंगे ॥ ९ ॥

वहीं वहीं मैं उनका वध करूंगा इसमें सन्देह नहीं. हे यतियो ! आप स्वच्छन्दतासे जाकर अपना कार्य करो ॥ १० ॥ शीघ्रही उन युद्ध करनेवालोंको मैं जीतूंगा तब यादवेश्वरसे प्रसन्न हो वह कहने लगे ॥ ११ ॥ जगत्का मंगल करनेवाले कृष्ण ! आपकी जय हो. हे जगन्नाथ केशव ! आपको जगत्में दुस्साध्य क्या है ॥ १२ ॥ आप त्रिलोकीके अधिपति त्रिधामा हो सब संहारके करनेवाले हो आप देवताओंकेभी देवता सर्वत्र समदृष्टि हो ॥ १३ ॥ हे विष्णो देव ! हे चक्रपाणि कृष्ण ! आपको नमस्कार है. स्वभावशुद्ध शुद्ध नियमित आपके निमित्त नमस्कार है ॥ १४ ॥ हे शब्दगोचर देवेश भक्त-

तत्र तत्र च हन्ताहं नात्र कार्या विचारणा ॥ गच्छध्वं यतयः स्वेरं निजकार्यपरायणाः ॥ १० ॥ अचिरेणैव कालेन जेष्यामि रणपु-
ङ्गवो ॥ ततः प्रीतः प्रसन्नात्मा यादवेश्वरमह सः ॥ ११ ॥ स्वस्त्यस्तु भवते कृष्ण जगतां स्वस्ति कुर्वते ॥ किञ्च नाम जगन्नाथ
दुःसाध्यं तव केशव ॥ १२ ॥ त्रिलोकेश त्रिधामासि सर्वसंहारकारकः ॥ देवानामपि देवेश सर्वत्र समदर्शनः ॥ १३ ॥ विष्णो देव
हरे कृष्ण नमस्ते चक्रपाणये ॥ नमः स्वभावशुद्धाय शुद्धाय नियताय च ॥ १४ ॥ शब्दगोचर देवेश नमस्ते भक्तवत्सल ॥ अज्ञा-
नादथवा ज्ञानाद्यन्मयोक्तं क्षमस्व तत् ॥ १५ ॥ त्वमेवाहं जगन्नाथ नावयोरन्तरं पृथक् ॥ अतः क्षमस्व भगवन्क्षमासारा हि
साधवः ॥ १६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ क्षन्तव्यं भवता विप्र क्षमासारा वयं सदा ॥ संन्यासिनः क्षमासाराः क्षमा तेषां परं बलम् ॥ १७ ॥
क्षमा मोक्षकरी नित्यं तत्त्वज्ञानमिव द्विज ॥ क्षमा धर्मः क्षमा सत्यं क्षमा दानं क्षमा यशः ॥ १८ ॥ क्षमा स्वर्गस्य सोपानमिति
वेदविदो विदुः ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन क्षमां पालयत स्वकाम् ॥ १९ ॥

वत्सल ! आपके निमित्त नमस्कार है जो ज्ञानसे वा अज्ञानसे मैंने कहा है सो क्षमा करो ॥ १५ ॥ हे जगन्नाथ ! तुम मैं एकही हूं हममें आपमें
अन्तर नहीं है इस कारण हे भगवन् ! क्षमा करो. साधु क्षमावाले होते हैं ॥ १६ ॥ श्रीभगवान् बोले, हे विप्र ! आपही क्षमा करो तुम क्षमासारवाले
हो संन्यासी क्षमासारवाले होते हैं उनका क्षमाही परम बल है ॥ १७ ॥ हे द्विज ! तत्त्वज्ञानकी समान क्षमा नित्य मोक्ष करनेवाली है, क्षमा धर्म क्षमा
सत्य क्षमा दान और क्षमा यश है ॥ १८ ॥ क्षमाही स्वर्गकी सीढ़ी है ऐसा वेदवादी कहते हैं इस कारण सब प्रयत्नसे तुम क्षमाकी पालना करो ॥ १९ ॥

पुम सम्पूर्ण यतीश्वर प्रत्यक्ष ज्ञानसे युक्त हो जोही यति है वह मुझे सदैव पूजने चाहिये ॥ २० ॥ यति ब्राह्मण भिक्षुकोंको सदा भोजन देना चाहिये, सो आप सब हमारे यहां भोजन कीजिये, बहुत अच्छा यह वचन कह उन सबने नारायणके स्थानमें भोजन करनेकी इच्छा की ॥ २१ ॥ तब हरि ईश्वर अपने भवनमें प्रवेश कर चार प्रकारके भोजन विधिपूर्वक कराकर ॥ २२ ॥ सत्कारपूर्वक उन यतियोंको भोजन कराते हुए और देवेशने कह उनके वस्त्र फटे अलग कराय नवीन वस्त्र दिये ॥ २३ ॥ हे जनमेजय ! इस प्रकार सबको भोजन दिया वस्त्र दिये वह यथायोग्य प्रसन्न हो अपने २ स्थानोंको

प्रत्यक्षज्ञानसंयुक्ता यूयं सर्वे यतीश्वराः ॥ य एते यतयो विप्राः पूजनीया मयाद्य वै ॥ २० ॥ भोक्तव्या यतयो विप्रा भिक्षुकाः सर्व एव हि ॥ तथेति ते प्रतिज्ञाय भोक्तुमैच्छन्हरिर्गृहे ॥ २१ ॥ ततः स्वभवनं विष्णुः प्रविश्य हरिरीश्वरः ॥ चतुर्विधं तथाहारं कारयित्वा यथाविधि ॥ २२ ॥ भोजयामास तान्सर्वान्यतीन्यतिवरार्चितः ॥ छित्त्वा छित्त्वा च देवेशो दुकूलानि मृदूनि सः ॥ २३ ॥ ददौ तेभ्यस्तदा विष्णुः सर्वेभ्यो जनमेजय ॥ ते च प्रीता यथायोगं यथापूर्वं ततो गताः ॥ २४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने यतिभोजनं नाम द्वादशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ दुर्वासास्त्वथ तत्रैव नारदेन महात्मना ॥ चिन्तयन् ब्रह्मणस्तत्त्वं विजहार यथासुखम् ॥ १ ॥ भगवानपि गोविन्दस्तयोर्वासममन्यत ॥ ततस्तौ हंसडिम्भकौ तस्मिन्काले महीपतिम् ॥ २ ॥ ब्रह्मदत्तं महीपालं पितरं वीर्यशालिनम् ॥ प्रावेचतामिदं वाक्यं समन्ताज्जनसंसादि ॥ ३ ॥ राजसूयं महायज्ञं पितः कुरु सुयत्नतः ॥ अस्मिन्मासि नृपश्रेष्ठ यत्तवो यज्ञसिद्धये ॥ ४ ॥

गये ॥ २४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसडिम्भकोपाख्याने यतिभोजनं नाम द्वादशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११२ ॥ वैशम्पायन बोले, उस समय महात्मा नारदजीके साथ दुर्वासाजी ब्रह्मतत्त्वका विचार करते यथासुखसे विहार करने लगे ॥ १ ॥ भगवान् गोविन्दने भी उनको अपने यहां टिकाया उस समय हंस और डिम्भभी राजा ॥ २ ॥ ब्रह्मदत्त बड़े बलीसे जनसभामें इस प्रकारके वचन कहने लगे ॥ ३ ॥ हे पिताजी ! आप यत्नसे राजसूय यज्ञ करनेकी इच्छा करिये. हे राजन् ! इसी महीनेमें आप यज्ञ सिद्धिके निमित्त यत्न करिये ॥ ४ ॥

हे राजन् ! हम आपके निमित्त दिग्विजय करेंगे, हाथी घोड़े सेनासे युक्त हम जायेंगे ॥ ५ ॥ हे राजन् ! यज्ञसिद्धि के निमित्त सामान मँगवाइये बहुत अच्छा ऐसा ब्रह्मदत्तने कहा ॥ ६ ॥ उस ब्राह्मण जनार्दनने उनका इस प्रकारसे साहस देखकर उसे असम्भव जानकर अपने निम्न हंससे कहा ॥ ७ ॥ हे हंस ! हमारे वचन सुनकर निश्चय करो, हे आयुष्मन् ! आप बड़ा साहस करनेको उद्यत हुए हैं ॥ ८ ॥ जब कि जरासंध भीष्म बाहीक तथा महावीर यादव स्थित हैं ॥ ९ ॥ और सत्यसंध जितेन्द्रिय महाबली भीष्मजी स्थित हैं जिन्होंने इसीस वार पृथ्वीका जय करनेवाले परशुरामको ॥ १० ॥

आवां तेऽद्य महाराज दिशां विजयतत्परो ॥ यतिष्यावो बलेः सार्द्धं गजैरथै रथैरपि ॥ ५ ॥ संभारा यज्ञसिद्धयर्थमानेतव्या नृपोत्तम ॥ तथेति स महाबाहो ब्रह्मदत्तोऽब्रवीत्तदा ॥ ६ ॥ जनार्दनस्तु विप्रेन्द्रो दृष्ट्वा साहसतत्परो ॥ अशक्यमिति मन्वानो वयस्यं हंसमब्रवीत् ॥ ७ ॥ शृणु हंस वचो मह्यं श्रुत्वा निश्चित्य वीर्यवान् ॥ आयुष्मन्साहसं कर्तुमुद्यतोऽसि नृपोत्तम ॥ ८ ॥ स्थिते भीष्मे जरासंधे बाह्लीके च नृपोत्तमे ॥ किं च वीरेषु सर्वेषु यादवेषु नृपोत्तम ॥ ९ ॥ भीष्मो हि बलवान्वृद्धः सत्यसंधो जितेन्द्रियः ॥ त्रिःसप्तकृत्वः पृथिवीं यो जिगाय भृगूत्तमः ॥ १० ॥ तं युद्धे जितवान्भीष्मः सर्वशत्रुस्य पश्यतः ॥ जरासन्धस्य यद्दीर्यं तद्भवान्वेति संयुगे ॥ ११ ॥ वृष्णिवीरास्तु ते सर्वे कृतास्त्रा युद्धदुर्मदाः ॥ तत्र कृष्णो हृषीकेशो जितशत्रुः कृती सदा ॥ १२ ॥ जरासंधेन सहितः सदा युद्धे जितश्रमः ॥ प्रमुखे तस्य न स्थातुं शक्तो जीवन्नृपोत्तमः ॥ १३ ॥ बलभद्रस्तथा मत्तः क्रुद्धो यदि भवेद्बली ॥ लोकानिमान्समाहर्तुं शक्नोतीति मतिमर्म ॥ १४ ॥

सब क्षत्रियोंके देखते युद्धमें जीत लिया जो जरासंधका वीर्य है वह आप युद्धमें जानतेही हैं ॥ ११ ॥ इधर सब वृष्णिवंशी कृतास्त्र और युद्धमें दुर्मद हैं उनके अधिपति कृष्ण शत्रुओंके जीतनेवाले महाचतुर हैं ॥ १२ ॥ जरासंधके साथही युद्धमें श्रम जीतनेवाले हैं उनके सामने कोई राजा स्थित हो जीवित नहीं रह सकते ॥ १३ ॥ और प्रमत्त बलराम यदि क्रुद्ध होतौ इन लोकोंको नष्ट कर सकते हैं यह मेरी बुद्धिमें आता है ॥ १४ ॥

इसी प्रकार वीर सात्यकि बुद्धमें शत्रुओंको जीत सकता है इसी प्रकार औरती सब यादव कृष्णके आश्रयवाले प्रबल हैं ॥ १५ ॥ और हमारा यति-
योंके साथ पहले विरोध हो चुका है और दुर्वासा यतियोंके साथ कृष्णको देखनेके निमित्त गये हैं ॥ १६ ॥ यह हमने भोजनको आये हुए
ब्राह्मणोंसे सुना है इसमें जैसे सिद्धि हो वैसे मंत्रियोंके साथ विचार कीजिये ॥ १७ ॥ पीछे राजसूय महायज्ञका अनुष्ठान करेंगे, हंसने कहा
मंदात्मा हीनबल वृद्ध भीष्म कौन है ॥ १८ ॥ क्या वह वृद्ध हमारे सामने स्थित हो सकता है यह अत्यन्त आश्चर्यकी बात है कि हमारे सामने

तथा च सात्यकिर्वीरः शक्तो जेतुं रणे रिपून् ॥ तथान्ये यादवाः सर्वे कृष्णमाश्रित्य दंशिताः ॥ १५ ॥ अस्माभिश्च कृतः पूर्वं
विरोधो यतिभिः सह ॥ दुर्वासा यतिभिः सार्धं गतो द्रष्टुं स केशवम् ॥ १६ ॥ इति श्रुतं नृपश्रेष्ठ ब्राह्मणाद्ब्रह्ममागतात् ॥ तथा
सति यदा सिद्धये तथा चिन्त्यं च मन्त्रिभिः ॥ १७ ॥ ॥ ततः पश्चाद्विधास्यामो राजसूयं महाक्रतुम् ॥ हंस उवाच ॥ को नाम
भीष्मो मंदात्मा वृद्धो हीनबलः सदा ॥ १८ ॥ आवयोः पुरतः स्थातुं शक्तः स किल वृद्धकः ॥ यादवा इति चित्रं न शक्ताः
स्थातुं रणे द्विज ॥ १९ ॥ कश्च कृष्णः पुरः स्थातुं बलदेवश्च मत्तकः ॥ शैनेयश्चापि विप्रेन्द्र स्थातुं न इति चिन्तय ॥ २० ॥
जरासन्धस्तु धर्मात्मा बन्धुरेव सदा मम ॥ मच्छ विप्र यदुश्रेष्ठं ब्रूहि मद्रचनात्त्वरन् ॥ २१ ॥ दीयतां करसर्वस्वं यज्ञार्थं सुन्दरं बहु ॥
लवणानि बहून्यथ मृह्य केशव मा चिरम् ॥ २२ ॥ आगच्छ त्वरितं कृष्ण न ते कार्यं विलम्बनम् ॥ इति ब्रूहि यदुश्रेष्ठं याहि
त्वरितविक्रमः ॥ २३ ॥ न ब्रूयाश्चोत्तरं विप्र शपेयं त्वां प्रियोऽसि मे ॥ मित्रभावादिदं ब्रूहि पश्यामि त्वां पुनः पुनः ॥ २४ ॥

यादव स्थित हो सकते हैं ॥ १९ ॥ कौन कृष्ण और मत्त बलराम कौन है, विप्रेन्द्र ! कहीं सात्यकिभी हमारे सामने स्थित हो सकता है ॥ २० ॥
धर्मात्मा जरासन्ध हमारा सदा बन्धु है, हे विप्र ! जाओ हमारे वचनोंसे यदुश्रेष्ठसे कहो ॥ २१ ॥ यज्ञके निमित्त हमको बहुतसा कर दे और बहुतसे
लवणभी केशवसे ग्रहण करो ॥ २२ ॥ और वे कृष्ण यह लेकर बहुत शीघ्र आवे देर न करे बुग जलदी जाकर वह श्रीकृष्णसे कहो ॥ २३ ॥ हे
विप्र ! मैं तुमको अपनी सौगन्ध दिवाकर कहता हूँ कि इसमें प्रत्युत्तर न देना मैं तुमका वारंवार मित्रभावसे देखता हुआ कहता हूँ ॥ २४ ॥

ऐसे कहनेपर ब्राह्मणने कुछ उत्तर नहीं दिया. हे राजन् ! मित्रभाव और स्नेहसे कुछ न बोला ॥ २५ ॥ वह धर्मात्मा जनार्दन नित्य जानेकी इच्छा करता आज जाऊं कल जाऊं प्रतिदिन ऐसा कहता ॥ २६ ॥ शंस चक्र गदा धारण करनेवाले देवके देखनेकी इच्छा करता ॥ २७ ॥ फिर प्रातःकाल वह द्वारकापुरीके देखनेको शीघ्रतासे चल हरि कृष्ण हृषीकेशको मनसे स्मरण करता चला ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्य-पर्वणि प्रपापां हंसडिम्भकोपाख्याने त्रयोदशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११३ ॥ वैशंपायन बोले, तब वह हरिभक्त ब्राह्मण विष्णुके समीप चले. हे

इति संचोदितो विप्रो नोत्तरं प्रत्यभाषत ॥ मित्रभावात्तथा राजन् स्नेहाच्च जनमेजय ॥ २५ ॥ जनार्दनस्तु धर्मात्मा नित्यं गन्तुं समुद्यतः ॥ अद्य श्वो वा परश्वो वा गच्छामीति यतेत सः ॥ २६ ॥ देवं द्रष्टुं जगद्योनिं शंसचक्रगदाधरम् ॥ एक एव च धर्मात्मा हयमारुह्य सत्वरम् ॥ २७ ॥ प्रातरेव जगामाशु द्रष्टुं द्वारवर्ती द्विजः ॥ हारिं कृष्णं हृषीकेशं मनसा संस्मरन् द्विजः ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने त्रयोदशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः प्रायाद्धरिं विष्णुं ब्राह्मणो ब्रह्मवित्तमः ॥ हयैनेकेन राजेन्द्र त्वरितं स ययौ नृप ॥ १ ॥ यथा निदाघसमये सूर्याशुपरिपीडितः ॥ पान्थो याति जलं दृष्ट्वा त्वरितं तत्पिपासया ॥ २ ॥ धावत्येष तथा विप्रो हारिं द्रष्टुं जनार्दनः ॥ गच्छन्स चिन्तयामास चोद्यन् हयमुत्तमम् ॥ ३ ॥ हंस एव प्रियो मह्यं कुर्यात् प्रियहितं मम ॥ तथाहि प्रेषितस्तेन हारिं पश्याम्यहं प्रभुम् ॥ ४ ॥ अहमेव सदा धन्यो मत्तो ह्यभ्यधिको नहि ॥ यतो द्रक्ष्याम्यहं विष्णुं वसन्तं द्वारकापुरे ॥ ५ ॥

राजेन्द्र ! एक घोड़ेपर चढ़ वह बड़ी शीघ्रतासे चला ॥ १ ॥ जैसे गरमीके समय सूर्यकी किरणोंसे पीड़ित हुआ प्यासके कारण पथिक वृक्षके नीचे जाता हो ॥ २ ॥ इसी प्रकार यह ब्राह्मण हरिको देखनेको धावमान हुआ घोड़ेको प्रेरण कर जाता हुआ वह चिन्ता करने लगा ॥ ३ ॥ हंस मेरा प्रिय है सदैव मेरा प्रियहित करता है उसने मुझे अबभी नारायणके दर्शनके निमित्त प्रेरण किया है ॥ ४ ॥ मैं बड़ा धन्य हूँ मुझसे अधिक कोई धन्य नहीं है जो कि मैं द्वारकापुरीमें निवास करते विष्णुका दर्शन करूँगा ॥ ५ ॥ फिर वह मेरी माताभी धन्य है जो फिर आये हरिक!

दर्शन करेगी वह देवी इनको देखकर सर्वथा कृतार्थ हो जायगी ॥ ६ ॥ खिले हुए कमलकी समान मुझ उन शंख चक्र गदाधारी नारायणको देखूंगा ॥ ७ ॥ मैं नीलकमलकी समान कान्तिमान् उन विष्णुका मुख देखूंगा शंख चक्र गदा और शार्ङ्ग धनुष्य तथा वनमालासे विभूषित ॥ ८ ॥ उनको और कमलकी समान खिले उनके नेत्रोंको मैं अदीनात्मा देखूंगा इस समयमें दुःखरहित और शान्त हूं ॥ ९ ॥ वह योगात्मा अपनी सौम्य दृष्टीसे मुझको देखेगी अथवा वह मेरा प्रिय कहकर स्वस्तिवाचन कहेंगे ॥ १० ॥ वह त्रिलोकीके आनन्ददायक चक्रधारीके शरीरका मैं दर्शन करूंगा अब उनके चरण-

सा हि मे जननी धन्या हरिं दृष्ट्वा पुनर्गतम् ॥ कृतार्थं सर्वदा देवी द्रक्ष्यत्येषा मनस्विनी ॥ ६ ॥ मुखमुन्निद्रहेमाब्जकिञ्चलकसदृशप्रभम् ॥ द्रक्ष्यामि देवदेवस्य चक्रिणः शार्ङ्गधन्वनः ॥ ७ ॥ वपुर्द्रक्ष्याम्यहं विष्णोर्नीलोत्पलदलच्छवि ॥ शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गवनमालाविभूषितम् ॥ ८ ॥ नेत्रे ते देवदेवस्य पद्मकिञ्चलकसप्रभे ॥ पश्याम्यहमदीनात्मा नष्टदुःखोऽस्मि निर्वृतः ॥ ९ ॥ अपि द्रक्ष्याति योमात्मा सौम्येनैव स्वचक्षुषा ॥ अपि वा मत्प्रियं ब्रूयात्स्वस्ति चेति च वा वदेत् ॥ १० ॥ द्रक्ष्यामि चक्रिणो वर्ष्म ततस्त्रैलोक्यसन्निभम् ॥ पादाब्जं चक्रिणो द्रष्टुं त्वरत्येव च मे मनः ॥ ११ ॥ वक्षःस्थलं सदा विष्णोः स्फुरद्रत्नप्रभायुतम् ॥ पश्यन्निव च गच्छामि स्मरंश्चानिहमीश्वरम् ॥ १२ ॥ पीतकौशेयवसनं लम्बहारविभूषितम् ॥ ईषत्स्मिताधरं विष्णुं पश्यामि च पुनः पुनः ॥ १३ ॥ स्मरतश्च हरेरूपं रोमहर्षोऽयमीदृशः ॥ नच्छतश्च पुरो भावि शङ्खचक्रगदासिमान् ॥ १४ ॥

कमल देखनेको मेरा मन शीघ्रता करता है ॥ ११ ॥ विष्णुका वक्षस्थल रत्नोंकी कान्तिसे सदा स्फुरायमान होता है मैं उसको देखता हुआ जाऊंगा और रातदिन स्मरण करूंगा ॥ १२ ॥ पीत रेशमीन वस्त्र धारण किये लम्बायमान हारसे विभूषित कुछेक मुस्कानवाले अधरयुक्त विष्णु भगवान्का बार-बार दर्शन करूंगा ॥ १३ ॥ उनका रूप स्मरण करकेही मेरे रोमाञ्च होते हैं और चलते हुए मेरे आगे शंख चक्र गदा अस्ति हाथमें लिये शोभित

होते हैं ॥ १४ ॥ वह जगत् के गुरु देवदेव मेरे आगे चलते हुए दीखते हैं यह मेरी जिह्वा इनसे बोलनेको स्फुरायमान होती है ॥ १५ ॥ परन्तु कर दो यह वचन उनसे कहनाही महादुःखकारक है सो उस राजाके ऐसे वचन हैं यही महासाहस है ॥ १६ ॥ हे विष्णो ! हंसका कर दे यह उसकी आज्ञा मानकर निर्दय वचन कहना पड़ेगा और प्रभुके सन्मुख कहा जायगा ॥ १७ ॥ मैं मूठोंका अग्रणी निर्लज्जापूर्वक कैसे इस बातको कहूंगा कि, हे विष्णो यदुपुंगव ! आप हंसका कर दो ॥ १८ ॥ करमें आपको अनेक प्रकारके लवण देने चाहिये शार्ङ्गिके सन्मुख में यह

यातीव च पुरो भाति मद्यं देवो जगद्गुरुः ॥ एषोऽयामिति मे वक्तुं जिह्वा प्रस्फुरतीव तम् ॥ १५ ॥ इदं दुःखतरं मन्ये करं देहीति मद्रचः ॥ इदं तत्साहसं मन्ये तद्वचस्तस्य भूषतेः ॥ १६ ॥ हंसस्य करदो विष्णुस्तदाज्ञापरिचारकः ॥ तस्य सर्वं पुरो गत्वा वक्ताहं किल निर्दयः ॥ १७ ॥ मूढानामग्रणीरस्मि निर्लज्जश्च तथा वदन् ॥ करं देहि हरे विष्णो हंसस्य यदुपुङ्गव ॥ १८ ॥ लवणानि बहुन्याशु पातव्यानि करात्मना ॥ इति वक्तुं न मे युक्तं पुरतस्तस्य शार्ङ्गिणः ॥ १९ ॥ तथापि मित्रभावात् वक्तव्यं घोरमीदृशम् ॥ कष्टो ह्ययं मित्रभावो मनुष्याणां कृतात्मनाम् ॥ २० ॥ अथवा सर्वविद्विष्णुः सर्वस्य हृदि संस्थितम् ॥ जानात्येव सदा भावं प्राणिनां शोभने रतः ॥ २१ ॥ तथा सति न मे दोषो मित्रभावो यतो ह्ययम् ॥ सर्वथा रक्षतां विष्णुर्घोरं वक्तुं यतस्य मे ॥ २२ ॥ द्रक्ष्याम्यहं जगन्नाथं नीलकुञ्चितमूर्द्धजम् ॥ कम्बुग्रीवाधरं विष्णुं श्रीवत्साच्छादितोरसम् ॥ २३ ॥ स्फुरत्पद्ममहाबाहुं रत्नच्छायाविराजितम् ॥ द्रक्ष्यामि केशवं विष्णुं चक्रिणं यादवेश्वरम् ॥ २४ ॥

कहनेके योग्य नहीं हूँ ॥ १९ ॥ तथापि राजाके मित्रभावसे यह घोरवार्ता मुझे कहनी पड़ेगी कृतात्मा मनुष्योंका मित्रभावभी बड़े कष्टका देनेवाला है ॥ २० ॥ अथवा सबके जाननेवाले विष्णु सबके हृदयमें स्थित हैं वह प्राणियोंके हितमें तत्पर सब प्राणियोंको जानते हैं ॥ २१ ॥ मैं उस राजाकी मित्रतासे यह कहूंगा इसमें मुझको दोष न लगेगा सर्वथा इस घोर वचनसे विष्णु मेरी रक्षा करेंगे ॥ २२ ॥ नीले घुँघुरवाले बालसे युक्त जगन्नाथका मैं दर्शन करूंगा जिनकी शंखकी समान गरदन विष्णुरूप जिनका हृदय श्रीवत्साच्छादित है ॥ २३ ॥ स्फुरायमान कमलकी समान महाभुजा

रत्नोंकी कान्तिसे शोभित शंख चक्र गदाधारी केशवकों में दर्शन करूंगा ॥ २४ ॥ पूजनीय ऐश्वर्यवाले देव भूत भाविष्य वर्तमानके ज्ञाता अपनी इच्छासे जगत्की रक्षा करनेवाले जलशायीका ॥ २५ ॥ दर्शन कर सर्वथा मैं लृतार्थ होकर दुःस्वरहित हो जाऊंगा साक्षात् हरिको देखकर मेरा जन्म सफल हो जायगा ॥ २६ ॥ हरिको साक्षात् कर आज मेरे पत्र सफल हो जायेंगे जगन्मय विष्णुको देख वह मेरे नेत्र सफल होंगे ॥ २७ ॥ मैं घोर वचन कहूंगा तथापि विष्णु मेरे ऊपर प्रसन्न होंगे दोनों नेत्रोंसे भली प्रकार देखकर मैं विष्णुका दर्शन करूंगा ॥ २८ ॥ नखशिखपर्यन्त मैं विष्णुको अचिन्त्यविभवं देवं भूतभव्यभवत्प्रभुम् ॥ आत्मेच्छया जगद्रक्षं द्रक्ष्यामि जलशायिनम् ॥ २९ ॥ कृतार्थः सर्वथा चाहं भवामि विगतज्वरः ॥ अद्य मे सफलं जन्म साक्षाद्रष्टवतो हरिम् ॥ ३० ॥ अद्य मे सफला यज्ञाः साक्षात्कृतवतो हरिम् ॥ नेत्रे मे सफले विष्णुं पश्यतश्च जगन्मयम् ॥ ३१ ॥ प्रीतिमानस्तु मे विष्णुर्वक्तुर्घोरस्य कर्मणः ॥ उन्मिषन्नेत्रयुग्मेन द्रक्ष्यामि सकृद्विश्वम् ॥ ३२ ॥ आमूलमसकृद्विष्णुं पश्यामि च पुनः पुनः ॥ पिबामि नेत्रयुग्मेन वपुः कृष्णस्य केवलम् ॥ ३३ ॥ धारयिष्याम्यहं पांसुं तत्पदप्रभवं शिवम् ॥ ततः कृतार्थतां यास्ये स्वर्गमार्गो हि तद्रजः ॥ ३४ ॥ मेघगम्भीरानिघोषं श्रोष्यामि च हरेः स्वरम् ॥ पादाब्जं चक्रिणो विष्णोः पश्यामि च जगत्पतेः ॥ ३५ ॥ पश्यामि च हरेर्वक्त्रं पूर्णेन्दुसदृशप्रभम् ॥ हरेरिदं जगद्रूपं पश्यामीव च सर्वतः ॥ ३६ ॥ प्रसदितु सदा विष्णुरयुक्तं वक्तुमिच्छतः ॥ आलोलकुण्डलयुतं हरिचन्दनचर्चितम् ॥ ३७ ॥ स्फुरत्केयूररत्नार्चिर्बाहुद्वयविराजितम् ॥ सव्ये द्योतन्महाशङ्खं राश्मिजालविराजितम् ॥ ३८ ॥

भली प्रकारके दर्शन करूंगा उन कृष्णके शरीरको मैं अपने नेत्रयुगलसे दर्शन करूंगा ॥ २९ ॥ उनके चरणकमलकी धूरि में अपने शिरपर धारण करूंगा, तब लृतार्थताको प्राप्त हूंगा कारण कि उनके चरणोंकी रजस्वर्गका मार्ग है ॥ ३० ॥ मेघकी समान गम्भीर हरिका शब्द मैं श्रवण करूंगा चक्रधारी विष्णुके चरणकमलोंका दर्शन करूंगा ॥ ३१ ॥ पूर्णचन्द्रमाकी समान कान्तिमान् हरिका मुख देखूंगा और हरिका यह रूप सब प्रकारसे देखूंगा ॥ ३२ ॥ अयुक्त कहनेवालेभी मुझपर विष्णु सदा प्रसन्न होंगे चलायमान कुंडलोंसे युक्त हरिचन्दनसे चर्चित ॥ ३३ ॥ स्फुरायमान बाजूबंद रत्नोंकी कान्तिवाली दोनों

भुजाओंसे विराजित सीधे हाथमें महाशंख और रत्नोंसे प्रकाशित है ॥ ३४ ॥ उदय होते हुए सूर्यके वर्णकी समान कान्तिवाले चक्रकी ज्वालासे विरा-
जित उज्ज्वल कंकणसे युक्त तत्ते सुवर्णके बने अंगदवाले ॥ ३५ ॥ पीत रेशमीन वस्त्र धारण किये विस्तीर्ण हृदयवाले देवेश अच्युतका मैं कब दर्शन
करूंगा ॥ ३६ ॥ जो उनका दर्शन करूंगा इससे मैं सर्वथा कृतकृत्य हूँ मुझे नमस्कार है मुझे नमस्कार है जो मैं हरिको देखूंगा ॥ ३७ ॥ जगन्नाथ
बलभद्रके समीप विष्णु जिष्णु जगत्के गुरुका मैं आज दर्शन करूंगा ॥ ३८ ॥ कौस्तुभमणीसे स्फुरायमान वक्षस्थल पीताम्बर मकराकृत कुंडल

प्रोद्यद्भास्करवर्णाभं चक्रज्वालाविराजितम् ॥ प्रोज्ज्वलत्कङ्कणयुतं तप्तजाम्बूनदाङ्गदम् ॥ ३५ ॥ पीतकौशेयवसनं विस्तीर्णो र-
स्कमच्युतम् ॥ कदा द्रक्ष्यामि देवेशमिदानीमथवाऽन्यदा ॥ ३६ ॥ सर्वथा कृतकृत्योऽहं यद्रूपद्रष्टुमुद्यतः ॥ नमो मह्यं नमो मह्यं
यत्तो द्रष्टुमहं हरिम् ॥ ३७ ॥ उद्यतोऽस्मि जगन्नाथं बलभद्रकृतास्पदम् ॥ द्रक्ष्याम्यवश्यमेव जिष्णुं विष्णुं जगद्गुरुम् ॥ ३८ ॥
श्रीकौस्तुभोद्भवरुचिं स्फुरितोरुवक्षः पीताम्बरं मकरकुण्डलपङ्कजाक्षम् ॥ कृष्णं किरीटवरचक्रगदोर्ध्वहस्तं तेजोमयं मम हरेर्वपुरस्तु
भूत्ये ॥ ३९ ॥ वेदोदघो विशदशास्त्रमहाहियोगे निष्णातशुद्धमतिमन्दरमथ्यमाने ॥ उद्योतमानममरेरनिशं निषेव्यं नारायणारूपममृतं
प्रपिबामि वाद्य ॥ ४० ॥ ध्येयं मुमुक्षुभिरमेयमनाद्यनन्तं स्थूलं सुसूक्ष्मतरमेकमनेकमाद्यम् ॥ ज्योतिस्त्रिलोकजनकं त्रिदशैकवन्द्य-
मक्ष्णोर्ममास्तु सततं हृदयेऽच्युतारूपम् ॥ ४१ ॥

धारण किये कमलनेत्र लक्षण किरीटी चक्र गदा पद्मधारी हरिका तेजोमय शरीर मेरे मंगलके निमित्त हो ॥ ३९ ॥ वेदरूपी सागर शास्त्ररूपी शेषपर योगमें
स्थित हो शयन करनेवाले शास्त्रके परागामी शुद्धमति मंदरके मथनेमें प्रकाशमान देवतोंसे नित्य सेवित नारायणरूपी अमृतका मैं आज पान करूंगा ॥ ४० ॥
मुमुक्षुओंसे ध्यानके योग्य आदि अन्त रहित स्थूल सूक्ष्मरूप एक अनेक रूपवाले ज्योतिरूप त्रिलोकीके उत्पन्नकर्ता देवताओंके नमस्कारके

योग्य मेरे नेत्र और हृदयमें सदा अच्युत विराजमान हों ॥ ४१ ॥ इस प्रकार वह ब्राह्मण विचार करता द्वारकापुरीको गया अपनेको कृतार्थ मान
 शीघ्रतासे घोड़ा चढ़ाने लगा ॥ ४२ ॥ इति श्रीमहाभारते लिखेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसदिम्भकोपाख्याने विप्रस्य द्वारवतीगमने चतुर्दशा
 धिकशततमोऽध्यायः ॥ ११४ ॥ वैशम्पायन कहने लगे, उस धर्मात्मा ब्राह्मणने द्वारे स्थितही सर्वस्व निवेदन कर दिया पीछे धर्मात्मा श्रेष्ठ
 ब्राह्मण सभामें प्रविष्ट हुआ ॥ १ ॥ उस सुधर्मा सभामें मूर्तिमान् केशवका दर्शन किया जो बलरामके साथ महाआसनपर स्थित थे ॥ २ ॥ आगे
 सात्त्विक और पीछे नारदजी स्थित थे और उग्रसेनको आगे किये दुर्वाससे कथोपकथन करते थे ॥ ३ ॥ मुख्य गंधर्व गाने और अप्सराओंके गण
 चिन्तयन्निति विप्रेन्द्रो ययौ द्वारवतीं पुरीम् ॥ मत्वा कृतार्थमन्तमानं वादयन्त्यमुत्तमम् ॥ ४२ ॥ इति श्रीमहाभारते लिखेषु हरिवंशे
 भविष्यपर्वणि हंसदिम्भकोपाख्याने विप्रस्य द्वारवतीगमने चतुर्दशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ स निवे-
 दितसर्वस्वो द्वाःस्थेन हि जनार्दनः ॥ अथ प्रविश्य धर्मात्मा सुधर्मा वै द्विजोत्तमः ॥ १ ॥ अपश्यद्देवदेवेशं सुधर्माकृतिसंस्थितम् ॥
 बलभद्रेण संयुक्तमध्यासितमहासनम् ॥ २ ॥ अग्रतः स्थितश्चैनेयं पार्श्वतः स्थितनारदम् ॥ दुर्वाससा कृतकथमुग्रसेनपुरस्कृतम् ॥ ३ ॥
 गायद्गन्धर्वमुख्यैश्च नृत्यदप्सरसां गणेः ॥ सेव्यमानं महाराज सूतमागधवन्दिभिः ॥ ४ ॥ उद्गीयमानयशसं माधवं मधुसूदनम् ॥
 उद्गीयमानं विप्रैश्च सामभिः सामगैर्हरिम् ॥ दृष्ट्वा प्रीतिमना विष्णुं प्रोद्धतपुलकच्छविः ॥ ५ ॥ नाम्ना जनार्दनोऽस्मीति ननाम चरणौ हरेः ॥
 बलभद्रं ततो देवं ववन्दे शिरसा द्विजः ॥ ६ ॥ दूतोऽस्मि देवदेवेश हंसस्य दिम्भकस्य च ॥ इति ब्रुवाणं विप्रेन्द्रमिदमाह स माधवः ॥ ७ ॥
 नृत्य करते थे. हे महाराज ! सूत मागध वन्दिजन उनकी सेवा करते थे ॥ ४ ॥ मधुसूदन माधवका यश वे गान करते थे साम जाननेवाले ब्राह्मण
 सामवेदके मंत्रोंका पाठ करते थे इस प्रकार विष्णुको प्रसन्न देख छविसे पुलकायमान हो ॥ ५ ॥ अपना जनार्दन नाम लेकर इसने हरिके
 चरणोंको प्रणाम किया फिर बलरामजीको शिर झुकाकर प्रणाम किया ॥ ६ ॥ और कहा हे देवदेव ! मैं हंस और दिम्भकका दूत हूं ब्राह्मणको ऐसा
 कहते सुन श्रीकृष्ण कहने लगे ॥ ७ ॥

हे ब्राह्मण ! पहले विष्टरपर बैठो पीछे अपना प्रयोजन कहो तब आसनपर स्थित हो ब्राह्मण बोला ॥ ८ ॥ तब श्रीकृष्णने उसका सत्कार कर कुशल पूछी ब्रह्मदत्त तथा हंसडिम्बकके यहांभी कुशल पूछी ॥ ९ ॥ हे द्विज ! हमने प्रयोजन और पराक्रम सुना है जिस प्रकार हंस डिम्बकमें बल है, हे जनार्दन ! तुम्हारे पिता कुशल हैं ॥ १० ॥ जनार्दन बोले, हे केशव ! ब्रह्मदत्त और मेरे पिता कुशलसे हैं, हे जगन्नाथ ! हंस और डिम्बकभी प्रसन्न हैं ॥ ११ ॥ श्रीभगवान् बोले, उन हंस और डिम्बकने क्या कह दिया है, हे द्विजोत्तम ! विशंक होकर वह तुम सब कहो ॥ १२ ॥ जो वाच्य अवाच्य जैसे

आस्वेदं विष्टरं पूर्वं पश्चाद्ब्रूहि प्रयोजनम् ॥ तथेति चाब्रवीद्विप्रो महदासनमास्थितः ॥ ८ ॥ वाचा संपूज्य विप्रेन्द्रमपृच्छत्कुशलं हरिः ॥ ब्रह्मदत्तस्य राजेन्द्र हंसस्य डिम्बकस्य च ॥ ९ ॥ श्रुतं चापि तयोर्वीर्यं प्रयोजनमतो द्विज ॥ अपि वा कुशलं विप्र पितुस्तव जनार्दन ॥ १० ॥ जनार्दन उवाच ॥ कुशलं ब्रह्मदत्तस्य पितुश्च मम केशव ॥ तयोरेव जगन्नाथ हंसस्य डिम्बकस्य च ॥ ११ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ किमाह तुर्महीपालो तौ हंसडिम्बकौ नृपो ॥ ब्रूहि सर्वमशेषेण नात्र शङ्का द्विजोत्तम ॥ १२ ॥ वाच्यं वाप्यथवावाच्यं कर्तव्यमथ चेतरत् ॥ श्रुत्वा तस्य विधास्यामो युक्तरूपं द्विजोत्तम ॥ १३ ॥ दूतोऽसि सर्वथा विप्र न वाच्यावाच्यकल्पना ॥ यत्कर्मकारनिर्दिष्टं तद्वाच्यं दूतजन्मना ॥ १४ ॥ नात्र शङ्का त्वया कार्वा वक्तव्यस्येतरस्य च ॥ अतो वद यथा प्रोक्तं तांभ्यामिह जनार्दन ॥ १५ ॥ केशवेनैव मुक्तस्तु प्रोवाच स जनार्दनः ॥ अजानन्निव किं ब्रूषे सर्वं प्रत्यक्षदर्शिवान् ॥ १६ ॥ न चास्ति ते परोक्षं तु जगद्वृत्तान्तमच्युत ॥ सर्वं हि मनसा पश्यन् किं त्वमात्थ वेदति माम् ॥ १७ ॥

कुछभी कर्तव्य अकर्तव्य हो, तुम कहो हे ब्राह्मण ! उस वार्ताको सुनकर हम वैसा विधान करेंगे ॥ १३ ॥ हे विप्र ! आप दूत हो वाच्यकी कल्पना करें मत कहना जो कर्मकारने कहा है वह सर्वथा वर्णन करो ॥ १४ ॥ किसी प्रकारके वचन कहनेमें तुम कोई शंका न करना, हे जनार्दन ! इस कारण जो कुछ उन्होंने कह दिया है सो यथायोग्य कह देना ॥ १५ ॥ केशवके यह वचन सुन जनार्दनने कहा आर वेजानकी समान क्यों बोलते हो सब कुछ प्रत्यक्षके देखनेवाले हो ॥ १६ ॥ हे अच्युत ! आपको जनमें कुछभी अविदित नहीं है सब कुछ मनसेही देखते हुए सुझसे कहनेको क्यों

कहते हो ॥ १७ ॥ हे जगतीपते विष्णो ! आपही विद्वानोंके द्वारा गाये जाते हो इच्छासेही आपको सब कुछ प्राप्त होता है दृष्ट अदृष्ट आप सबके ज्ञाता हो ॥ १८ ॥ सब जगत्में तुम और तुममें यह जगत् प्रतिष्ठित है आपसे रहित चराचर जगत्में कोई पदार्थ नहीं है ॥ १९ ॥ हे जगत्पते ! आप सर्वगामी हो आपको कुछभी अवेष नहीं है तुमही इन्द्र और सब भूतोंके संहार करनेवाले रुद्र हो ॥ २० ॥ हे विष्णु माधव ! आप सब लोककी रक्षा करनेवाले हो आप संसारके स्रष्टा होकर कहो यह कैसे कहते हो ॥ २१ ॥ हे माधव ! आपको विद्वान् नित्य ज्ञानरूपा कहकर मान विद्वाद्भिर्गायसे विष्णो त्वमेव जगतीपते ॥ इच्छया सर्वमाप्नोषि दृष्टादृष्टविवेचनम् ॥ १८ ॥ त्वमेवेऽजगत्सर्वं जगच्च त्वयि तिष्ठति ॥ न त्वया रहितो स्येकः पदार्थः सचराचरः ॥ १९ ॥ नास्ति किञ्चिद्वेद्यं ते सर्वमोऽसि जगत्पते ॥ त्वमिन्द्रः सर्वभूतानां रुद्रः संहारक-र्मकृत् ॥ २० ॥ रक्षितासि सदा विष्णुः सर्वलोकस्य माधव ॥ संसारस्य भवान्स्रष्टा किं त्वमात्थ वदेति माम् ॥ २१ ॥ विद्वाद्भिर्गायसे नित्यं ज्ञानात्मेति च माधव ॥ प्राणं प्राणविदः प्राहुस्त्वामेव पुरुषोत्तम ॥ २२ ॥ शब्दं शब्दविदः प्राहुस्त्वामेव पुरुषोत्तम ॥ तथा सति हृषीकेश किं त्वमात्थ वदेति माम् ॥ २३ ॥ तथापि शृणु देवेश चोदितोऽस्मि यतस्त्वया ॥ वदेत्यसकृदेतत्तस्माद्रक्षयामि माधव ॥ २४ ॥ राजसूयेन यज्ञेन ब्रह्मदत्तोऽद्य यक्ष्यते ॥ तदर्थं प्रेषितस्ताभ्यां हंसेन डिम्भकेन च ॥ २५ ॥ करार्यं यदुमुख्येभ्यस्तव चामन्त्रणाय हि ॥ लवणं नहु देयं ते यज्ञार्थं तस्य केशव ॥ २६ ॥ इत्यर्थं प्रेषितस्ताभ्यां करं देहि तदाज्ञया ॥ इदं त्वमपरं ताभ्यामुक्तं शृणु जगत्पते ॥ २७ ॥

करते हैं. हे पुरुषोत्तम ! प्राणवित् आपको प्राणात्मा कहते हैं ॥ २२ ॥ शब्दवित् आपको शब्दरूप कहते हैं. हे हृषीकेश ! ऐसा होनेपर फिर आप हमसे कैसे पूछते हो ॥ २३ ॥ हे देवेश ! तथापि आपकी प्रेरणासे मैं कहता हूँ जो आप मुझसे बार बार पूछते हो इससे मैं कहता हूँ ॥ २४ ॥ ब्रह्मदत्त राजसूय यज्ञ करेगा उसी निमित्त मुझे हंस और डिम्भकेन भेजा है ॥ २५ ॥ कि उन यदुमुख्योंसे यज्ञके निमित्त कर लाओ और यज्ञमें आनेको कहो. हे केशव ! यज्ञके निमित्त आपको लवण देना चाहिये ॥ २६ ॥ इस निमित्त करके उन्होंने मुझे तुम्हारे पास भेजा है. हे जगत्पते ! उनकी कही

यह और बात सुनो ॥ २७ ॥ सो आप बहुत शीघ्रतासे लवण ग्रहण करके उन राजोंके निकट चलिये बस यही कहना है ॥ २८ ॥ हे राजन् ! उसके दूत होकर यह कहनेको मैं आया हूं तब श्रीकृष्ण हँसकर दूतसे कहने लगे ॥ २९ ॥ हे दूत ! हे द्विजोत्तम ! तुम हमारे वचन सुनो तुमने सत्य कहा है मैं उनको कर दूंगा जिस कारण कि मैं करदाता हूं ॥ ३० ॥ हे विप्र ! जो वे मुझसे कर मांगते हैं यह उनकी बड़ी दीठता है आश्चर्यकी बात है कि उनकी बड़ी दीठता है ॥ ३१ ॥ हमसे कर मांगते हैं यह पहलीही बात है यह कह श्रीकृष्ण यदुओंको कहने लगे ॥ ३२ ॥ हे यदुश्रेष्ठ ! कैसे

लवणानि बहून्याशु प्रगृह्य त्वरितं भवान् ॥ आणच्छतु तयो राज्ञोः सेयं केशव वाग्विभो ॥ २८ ॥ इत्युक्तवति विप्रेन्द्रे दूते तत्र तयोर्नृप ॥ प्रहस्य सुचिरं कृष्णो बभाषे दूतमीश्वरः ॥ २९ ॥ शृणु दूत वचो मया युक्तमुक्तं द्विजोत्तम ॥ करं ददामि ताभ्यां तु करदोऽस्मि यतो नृप ॥ ३० ॥ धाष्टर्यमेतत्तयोर्विप्र मत्तो यस्तु करग्रहः ॥ अहो धाष्टर्यमहो धाष्टर्यं तयोः क्षत्रियबीजयोः ॥ ३१ ॥ इदमश्रुतपूर्वं मे मत्तो यस्तु करग्रहः ॥ इत्युक्त्वा केशवो दूतामिदमाह स्म यादवान् ॥ ३२ ॥ हास्यमेतद्यदुश्रेष्ठ मत्तो यस्तु करग्रहः ॥ यथासौ राजसूयस्य ब्रह्मदत्तो महीपतिः ॥ ३३ ॥ तौ तु याजयितारौ हि हंसो डिम्भक एव च ॥ वोढा किल यदुश्रेष्ठो लवणस्य दुरात्मनः ॥ ३४ ॥ करदो वासुदेवो हि जितोऽस्मि यदुसत्तमाः ॥ हास्यं हास्यमिदं भूयः शृणुष्वं यादवा वचः ॥ ३५ ॥ इत्युक्तवति देवेशे बलभद्रपुरोगमाः ॥ यादवाः सर्व एषेते हासाय समवास्थिताः ॥ ३६ ॥ करदः कृष्ण इत्येवं ब्रुवन्तः सर्वसात्वताः ॥ हासं मुमुचुरत्यर्थं तलं दत्त्वा परस्परम् ॥ ३७ ॥ तलशब्दो हासशब्दो रोदसी पर्यपूरयत् ॥ स च विप्रो नृपश्रेष्ठ नन्दयन्मित्रमात्मनः ॥ ३८ ॥

हास्यकी बात है जो हमसे कर मांगते हैं वह ब्रह्मदत्त राजा यज्ञ करता है ॥ ३३ ॥ वह हंस और डिम्भक उसको यज्ञ करावेंगे और मैं उस दुरात्माका लवण ले चलेवाला हूंगा ॥ ३४ ॥ हे यदुश्रेष्ठ ! मैं उसको कर देनेवाला होकर उससे जीता गया हूं यह महाहास्यकी वार्ता है हे यादवों ! सुनो तौ ॥ ३५ ॥ देवेशके ऐसा कहने पर बलभद्र आदि सब यादव हँसने लगे ॥ ३६ ॥ लो अब कृष्णजी कर देनेवाले हुए ऐसा सब यादव कहने लगे और ताली बजाय परस्पर हास्य करने लगे ॥ ३७ ॥ उस तालीके महाशब्दसे व्यावापृष्टी पूर्ण हो गई और वह ब्राह्मण अपने मित्रको प्रसन्न करता हुआ बोला ॥ ३८ ॥

अहो बडे कष्टकी बात है कि जो मैं दूत होकर यहां आया हूं इस प्रकार लज्जित हो दूत नौचेको सुख करे स्थित हुआ ॥ ३९ ॥ इति श्रीमहाभारते
खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसडिम्भकोपाख्याने पंचदशाविक्रान्ततमोऽध्यायः ॥ ११५ ॥ वैशंपायन बोले, जब सब हास्य कर रहे थे तब
सबके सामने श्रीकृष्ण दूतसे बोले तुम हमारे वचनसे जाओ ॥ १ ॥ और शीघ्र जाकर हंस डिम्भकसे कहो कि मैं शार्ङ्ग धनुषसे निकले हुए शिलापर
पैनाये तीक्ष्ण बाणोंसे ॥ २ ॥ अथवा असिसे जो बड़ी तीक्ष्ण अथवा चक्रसे उनका शिर छेदन करूंगा जो मुझसे बलि मांगते हैं ॥ ३ ॥ जो कि

अहो कष्टमहो कष्टं दौत्यं यत्कृतवानहम् ॥ इति लज्जासमाविष्टस्तूष्णीमासीदवाङ्मुखः ॥ ३९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे
भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने वासुदेवावक्यं नाम पञ्चदशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११५ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ हासं कुर्वन्तु
तेष्वेवं केशवः केशिसूदनः ॥ उवाच वचनं दूतं गच्छ मद्रचनाद्विज ॥ १ ॥ तावित्थं हंसडिम्भको ब्रूहि त्वरितविक्रमः ॥ बाणैर्दा-
स्यामि निशितैः शार्ङ्गमुक्तैः शिलाशितैः ॥ २ ॥ असिना वाथ दास्यामि निशितेन महात्मनोः ॥ शिरो वा छेत्स्यते चक्रं मत्करप्र-
हितं बलिम् ॥ ३ ॥ यो वरं दत्तवान् रुद्रो युवयोर्धाष्ट्यकारणम् ॥ स एव रक्षिता वां स्यात्तं जित्वा वां निहन्म्यहम् ॥ ४ ॥ देशोऽयं
संविधातव्यो यत्र नः संगतिर्भवेत् ॥ तत्र गन्ता तथा चास्मि सबलः सहवाहनः ॥ ५ ॥ भक्तौ निर्भयो भूत्वा गच्छेतां सबलै नृपौ ॥
पुष्करे वा प्रयागे वा मथुरायामथापि वा ॥ ६ ॥ तत्राहं सबलो याता नात्र कार्या विचारणा ॥ अथवा मित्रभावाच्च वक्तुमेवं न ते
क्षमम् ॥ ७ ॥ न शक्यं यत्त्वया वक्तुं तच्च वक्ष्यति सात्यकिः ॥ त्वया सह ततो गत्वा साक्षिभूतो भव द्विज ॥ ८ ॥

तुम्हारी धृष्टताका कारण वरदान तुमको शिवजीने दिया है वह यदि तुम्हारी रक्षा करेंगे तो उनको जीतकर युद्धमें तुम्हारा वध करूंगा ॥ ४ ॥ वह
देशनिर्णय कर लो जहां हमारा तुम्हारा संगम होगा वहां मैं बलवाहनसहित प्राप्त हूंगा ॥ ५ ॥ और आपसी निर्भय हो सेनासहित वहां चलिये पुष्कर
प्रयाग मथुरा जहां इच्छा हो युद्ध हो ॥ ६ ॥ वहीं मैं सेनासहित प्राप्त हूंगा इसमें सन्देह नहीं है अथवा मित्रभावसे जो यह बात तुम न कह
सको तो मत कहो ॥ ७ ॥ हम सात्यकिको भेजते हैं वह सब कहेगा वह तुम्हारे साथ जायगा तुम साक्षीरूपा रहना ॥ ८ ॥ हे विप्रेन्द्र ! मैं यह

जानता हूँ कि आपका मुझमें प्रेम है इससे तुम विजयी होकर दुःखसंकुल संसारमें सदा मेरी कथामें तत्पर हो ॥ १ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरि-
वंशे भविष्यपर्वणि त्रापायां हंसडिम्भकोपाख्याने षोडशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११६ ॥ वैशम्पायन बोले, श्रीकृष्ण ब्राह्मणसे यों कह सात्याकिसे बोले, हे
सात्याकि ! हमारे वचनसे तुम वहां जाकर उन दोनोंसे कहो ॥ १ ॥ जो कुछ हमने कहा है वह सब उनसे कहो और जैसे युद्धमें हमारी संगति हो वह
बलसे कहना ॥ २ ॥ तुम गोधा अंगुलिवाण युक्त धनुष लेकर जाओ और केवल एक घोड़ेपर चढ़कर सहायहीन होकर जाओ ॥ ३ ॥ बहुत अच्छा

इदं च जाने विप्रेन्द्र स्नेहो मम सदा त्वयि ॥ तेन त्वं विजयी भूत्वा संसारे दुःखसंकुले ॥ मत्कथापरमो नित्यं सदा भव जनार्दन ॥ १ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने षोडशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥
इत्युक्त्वा ब्राह्मणं कृष्णः सात्याकिं पुनराह सः ॥ गत्वा शौनेय विप्रेण ब्रूहि मद्रचनातयोः ॥ १ ॥ यन्मयोक्तमशेषेण वद गत्वा तयोः
पुरः ॥ यथा नः संगतिर्गुह्ये तथा वद बलात्तदा ॥ २ ॥ धनुरादाय गच्छ त्वं बद्धगोधाङ्गुलित्रवान् ॥ एकेनाश्वेन गच्छ त्वमसहायो
यदूतम ॥ ३ ॥ सात्याकिस्तं तथेत्युक्त्वा हयमारुह्य शीघ्रगम् ॥ गन्तुमेच्छततो राज्ञस्सहायः स सात्याकिः ॥ ४ ॥ जनार्दनं विसृज्याशु
दूतं तं यादवेश्वरः ॥ अहो धाष्ट्र्यमहो धाष्ट्र्यमित्युवाच जनार्दनः ॥ ५ ॥ नमस्कृत्य तदा दूतो माधवं माधवेश्वरम् ॥ स ययौ
शाल्वनगरं शौनेयेन समन्वितः ॥ ६ ॥ ततः प्रविश्य धर्मात्मा ब्राह्मणो ब्रह्मवित्तमः ॥ आसनं महदास्थाय विसृज्य यादवे पुनः ॥ ७ ॥
आस्ते सुखं यदा विप्रः शौनेयेन समन्वितः ॥ अथ तं हंसडिम्भयोर्दर्शयामास सात्याकिम् ॥ ८ ॥

यह वचन कह सात्याकि घोड़ेपर चढ़ इकलाही जानेकी इच्छा करने लगा ॥ ४ ॥ और यादवेश्वरने उस जनार्दन दूतको बहुत शीघ्र विदा करके
बारंबार कहा उन दोनोंकी बढीही ठीठता है ॥ ५ ॥ तब वह दूत माधवेश्वर यादवको नमस्कार करके सात्याकिके सहित शाल्वनगरको गया ॥ ६ ॥
तब वह ज्ञानी धर्मात्मा ब्राह्मण राजभवनमें प्रवेश कर आसनपर बैठा सात्याकिके निमित्तभी आसन दिया ॥ ७ ॥ जब वह ब्राह्मण सात्याकिके सहित

सुसते बैठा तब हंस डिंभको निमित्त सात्याकको दिखाया ॥ ८ ॥ कि यह नारायणकी दौहिनी भुजारूप सात्यकि उनके निकटसे दूत होकर आया है उसके यह वचन सुन हंस कहने लगे ॥ ९ ॥ मैंने पहले इनका नाम सुना है आज देखती लिया धनुर्वेद वेद शस्त्रमें ॥ १० ॥ यह धीर बहादी निपुण है यह हमने सुना है अब यह हमारी दृष्टिके सम्मुख होकर प्रसन्नता प्राप्त करेगा ॥ ११ ॥ वासुदेव और बलभद्र कुशलसे हैं तथा सब यादव उससेवाधि प्रसन्न हैं ॥ १२ ॥ कुछ हँसकर सात्यकिनै कहा सब कुशल है तब वाक्यविशारद हंसने जनार्दनसे कहा ॥ १३ ॥

दूतोऽयं सात्यकिः प्राप्तः सव्यो बाहुरयं हरेः ॥ तस्य तद्वचनं श्रुत्वा हंसः प्राह वचस्तदा ॥ ९ ॥ श्रुतः समागमः पूर्वमग्रे दृष्टो मया त्वसौ ॥ धनुर्वेदे च वेदे च शास्त्रे शस्त्रे तथैव च ॥ १० ॥ निपुणोऽयं सदा धीर इत्येवमनुशुश्रुम ॥ अथो दृष्टिपथं प्राप्तः प्रीतिं नो विदधात्यसौ ॥ ११ ॥ कुशलं वासुदेवस्य बलभद्रस्य वा पुनः ॥ कुशलाः सात्वताः सर्वे उग्रसेनपुरोगमाः ॥ १२ ॥ तथेति सात्यकिः प्राह मन्दमुन्मथिताननः ॥ ततो जनार्दनं प्राह हंसो वाक्यविशारदः ॥ १३ ॥ अपि दृष्टस्त्वया चकीर्त्तिर्नः कार्यमीदृशम् ॥ वद सर्वमशेषेण मा वृथा कालमत्यगाः ॥ १४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भाविष्यपर्वणि हंसडिंभकोपाख्याने सप्तदशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ इत्युक्तवति हंसे च धर्मात्माय जनार्दनः ॥ उवाच प्रहसन्वीरः स्तुवन्मारायणं सदा ॥ १ ॥ अद्राक्षमद्राक्षमहं जनार्दनं हस्तस्यशंखं वरचक्रधारिणम् ॥ आतप्तजाम्बूनदधूषिताङ्गदं स्फुरत्प्रभाद्योतितरत्नधारिणम् ॥ २ ॥ अद्राक्षमेनं यदुभिः पुरातनैः संसेव्यमानं मुनिवृन्दमुख्यैः ॥ संस्तूयमानं प्रभुभिः समागधैः स्मितप्रवाळाधरपल्लवारुणम् ॥ ३ ॥

आमने श्रीकृष्णको देखा हमारा कार्य क्या सिद्ध है सम्पूर्ण वार्ता कहो वृथा समयका सोना गला नहीं ॥ १४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भाविष्यपर्वणि भाषायां हंसडिंभकोपाख्याने सप्तदशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११७ ॥ वैशम्पायन बोले, हंसके ऐसा कहनेपर धर्मात्मा जनार्दन नारायणकी स्तुति करता हुआ हँसकर बोला ॥ १ ॥ हां हां हाथमें शंख चक्र लिये सुवर्णकी बनी गदा धारण किये चारों ओर कान्तिमान् रत्नोंको धारे जनार्दनका मैंने दर्शन किया है ॥ २ ॥ पुरातन यदु और मुरुष मुनिवृन्दोंसे सेवित बड़े मागधोंसे स्तूयमान हास्यमुख मूनेकी समाप अधरवाले

श्रीकृष्णका दर्शन किया ॥ ३ ॥ पुरातन कवियों द्वारा स्तुति किये हुए देवताओंके जानने योग्य फूले नील कमलकी समान लक्ष्मीसे सेवित सिले कमली समान उदरवाले श्रीकृष्णको हमने देखा ॥ ४ ॥ उन अजन्मा जगत्के गुरुको वचनोंसे यादवोंको प्रसन्न करते हुए और मुनियोंसे वेदार्थ निरूपण करते हुए मैंने देखा है ॥ ५ ॥ वारंवार मैंने समस्त लोकोंके हितैषी हरिकका दर्शन किया है जो शत्रुओंको तिरस्कार कर जगत्के हितके निमित्त स्थित हैं ॥ ६ ॥ विहारके समय यदुवंशियोंके साथ श्रीकृष्णको मैंने कठिा करते देखा है जो आप यदुवंशियोंमें मुख्य ईश्वर होकर यदुवं-

अद्राक्षमेनं कविभिः पुरातनैर्विविच्य वेद्यं विधिवत्सहामरेः ॥ प्रफुल्लनीलोत्पलशोभितं श्रिया विनिद्रहेमाब्जविराजितोदरम् ॥ ४ ॥

भूयोऽहमद्राक्षमजं जगद्गुरुं प्रमोदयन्तं वचनेन यादवान् ॥ निरूपयन्तं विधिवन्मृनीश्वरः प्रवृत्तवेदार्थविधिं पुरातनैः ॥ ५ ॥

अद्राक्षमद्राक्षमहं पुनः पुनः समस्तलोकैकहितैषिणं हरिम् ॥ वसन्तमस्मिन्नगतो हिताय जगन्मयं तान्परिभूय शत्रून् ॥ ६ ॥

भूयोऽप्यपश्यं सह यादवेश्वरैर्विक्रीड्यमानं च विहारकाले ॥ रमन्तमीड्यं रमयन्तमीश्वरान्यदूतमान्यादवमुख्यमीश्वरम् ॥ ७ ॥

भूयोऽप्यपश्यं सरसीरुहेक्षणं समेतया भीष्मतनूजया हरिम् ॥ वसन्तमम्भोनिधिशायिनं विभुं भक्तप्रियं भक्तजनारूपदं शिवम् ॥ ८ ॥

अद्राक्षमद्राक्षमहं सुनिर्वृतः पिबन्पिबंस्तस्य वपुः पुरातनम् ॥ नेत्रेण मीलद्विवरेण केवलं धन्योऽहमस्मीति तदा व्यचिन्तयम् ॥ ९ ॥

अद्राक्षमम्भोजयुगं दधानं प्रभुं विभुं भूतमयं विभावनम् ॥ आद्यं ककुच्चान्मुरुं विभावसुं संस्मृत्य संस्मृत्य तमेव निर्वृतः ॥ १० ॥

अद्राक्षं जगतामीशं वक्षोरारजितकौस्तुभम् ॥ वीज्यमानं हारिं कृष्णं चामराणां शतैः सदा ॥ ११ ॥

शियोंको रमण कराते हुए रमते हैं ॥ ७ ॥ फिर मैंने उन हरिको भीष्मसुता रुक्मिणीसे वार्ता करते देखा है उन जलशायी हरि सर्वव्यापक भक्तप्रिय भक्तजनोंके स्थान शिवस्वरूपका दर्शन किया है ॥ ८ ॥ शान्त होकर उनके शरीरको नेत्रोंद्वारा पान कर और फिर नेत्रोंको मीचकर मैं धन्य हूं इस प्रकार विचारते हुए वारंवार हरिकका दर्शन किया है ॥ ९ ॥ प्रभु विभु भूतमय नारायणका कमलयुगल धारण किये देखा है आद्यपुरुष ककुच्चान् (महात्म्यवाले) कान्तिमान्को वारवार स्मरण करता हूं ॥ १० ॥ वक्षस्थलमें विराजित कौस्तुभवाले सैकड़ों चामरोंसे वीज्यमान केशवका मैंने

दर्शन किया है ॥ ११ ॥ आप दोनों विद्वेषयुक्त होनेके कारण विछत चित्तसे आप दोनोंका स्मरण करते विष्णुने कहा है कि हंस और डिंगल कहाँ है ॥ १२ ॥ उन दोनों मन्दात्माओंको मैं कब देखूंगा और वह कब मेरे सम्मुख होंगे इस प्रकार शंख हाथमें धारण किये विचार करते ॥ १३ ॥ कर देनेकी वार्ता सुनकर हास्यमें तत्पर यतीश्वर नारद और दुर्वासासे वार्ता करते हुए ॥ १४ ॥ ब्रह्मसूत्र पदरूप वाणीको मुनीश्वरोंके निमित्त देते हुए उन हरिको देखकर मैं बारबार विचार करने लगा ॥ १५ ॥ उन हमारे दोनों राजोंने बड़ी असावधानी की है. हे राजन् ! अब यह कार्य आप

युवां विद्वेषयुक्तेन चेतसा यादवेश्वरम् ॥ स्मरन्तं सर्वदा विष्णुं कचैवं क च वेत्ति कः ॥ १२ ॥ क च द्रक्ष्यामि तौ मन्दो कुतो वा मत्पुरोगतो ॥ ध्यायन्तमित्थं देवेशं करे शंखवहं सदा ॥ १३ ॥ हसन्तमेनमद्राक्षं करदं हास्यतत्परम् ॥ वदन्तं नारदे वाचं दुर्वाससि यतीश्वरे ॥ १४ ॥ ब्रह्मसूत्रपदां वाणीं दापयन्तं मुनीश्वरम् ॥ दृष्ट्वाहं तं हारिं देवं पुनः पुनरचिन्तयम् ॥ १५ ॥ असाध्यमिदमारब्धं ताभ्यामिति नृपोत्तम ॥ नारब्धव्यमिदं कार्यमितः प्रभृति भूमिष ॥ १६ ॥ निवृत्ता सा कथा हंसाचिन्तयद्ग्रहणं तव ॥ तद्दृत्तमाखिलं सर्वं वदिष्यति हि सात्यकिः ॥ एतद्रचनमाकर्ण्य हंसः क्रुद्धोऽब्रवीद्रचः ॥ १७ ॥ हंस उवाच ॥ अरे ब्राह्मणदायाद का नाम तव वागियम् ॥ आवयोः पुरतो वक्तुं त्रैलोक्यं जेतुमिच्छतोः ॥ १८ ॥ मायया त्वां भ्रमयति कृष्णो लीलाविधानवित् ॥ तं दृष्ट्वा भ्रम एवेष तव संजायते महान् ॥ १९ ॥ शंखचक्रगदाशार्ङ्गवनमालाविभूषितम् ॥ वृष्णिवीरं समावेश्य समुच्छ्रितयशोधरम् ॥ २० ॥

आरंभ मत करो ॥ १६ ॥ जो तुमने कथा ग्रहण की थी वह निवृत्त हो गई शेष सब वृत्तान्त सात्यकि वर्णन करेगा यह वचन सुन क्रोधकर हंस कहने लगा ॥ १७ ॥ हंस बोला; अरे ब्राह्मणसन्तान ! यह तुम कैसी वाणी बोलते हो जो त्रिलोकी जीतनेमें समर्थ हमारे सामने तुम ऐसी वाणी बोलते हो ॥ १८ ॥ लीलाके विधाव जाननेवाले श्रीकृष्णने तुमको मायासे भ्रमा दिया है उनको देखतेही यह तुमको महाभ्रम हो गया है ॥ १९ ॥ शंख चक्र गदा शार्ङ्ग वनमालासे विभूषित वृष्णिवीरको प्राप्त होकर जिन्होंने अपना बड़ा यश कर रक्खा है ॥ २० ॥

सूत मागधोंसे स्तुतिको प्राप्त होकर अपना यश फैलानेवाले और विक्रमसे लोकोंको मंडन करनेवाले ॥ २१ ॥ चतुर्बाहु बलसे आक्रान्त वृष्णि और यदुवंशियोंके संमत श्रीकृष्णको देखकर तुमको भ्रम हो गया है यह बड़े आश्चर्यकी बात है ॥ २२ ॥ और इस समयभी वह दुर्मति तुमको भ्रमाते हैं। हे मन्दात्मन् विप्र ! उन्होंने जो तुमको भ्रमाया है यह इन्द्रजाल विद्या है ॥ २३ ॥ हे विप्र ! उस भ्रमसेही तुमको यह चपलता प्राप्त हुई है तुम्हें तो हमारी समान वर्तना चाहिये ॥ २४ ॥ हे ब्राह्मण ! मैंही तुम्हारे इस प्रकारके वचन सहन कर सकता हूं सोभी यह मित्रतावकी बात है अन्यथा कौन इन

सूतमागधसंस्तावप्रकटद्वारबाहुकम् ॥ अत्यद्भुतयशोराशिं विक्रमालोकमण्डनम् ॥ २१ ॥ चतुर्भुजं बलाक्रान्तं वृष्णिथादवसंमतम् ॥ अहोऽद्य भ्रम एवैष दर्शनात्तस्य चक्रिणः ॥ २२ ॥ इदानीं च महाराज भ्रामयत्येव दुर्मतिः ॥ त्वामेव विप्र मन्दात्मन्निन्द्रजालिकता हि या ॥ २३ ॥ चापल्यमिदमेवैतत्तव विप्र भ्रमोद्भवम् ॥ अहो हि खलु सादृश्यं वक्तव्यं भवता मम ॥ २४ ॥ अहमेव त्वया विप्र मर्षये प्रोदितं वचः ॥ सखिभावाद्विजश्रेष्ठ अन्यथा कः सहोदिदम् ॥ २५ ॥ गच्छ मन्दमते विप्र यथेष्टं साम्प्रतं तव ॥ द्विज गच्छ यथेष्टं त्वं पृथिवीं पृथिवी तव ॥ २६ ॥ जित्वा गोपालज्ञायादं हत्वा यादवकान् बहून् ॥ एष नः प्रथमः कल्पो जेष्याम इति यादवान् ॥ २७ ॥ गच्छ गच्छेति विप्र त्वं धृष्टं परुषवादिनम् ॥ शत्रुपक्षस्तुतिपरं सह युक्त्वा सदा मया ॥ २८ ॥ न मे विप्रवधः कार्यः कष्टादपि हि सर्वतः ॥ इत्युक्त्वा ब्राह्मणं भूयो हंसः सात्यकिमब्रवीत् ॥ २९ ॥ भो भो यादवदायाद किमर्थं प्राप्तवानिह ॥ किमब्रवीन्नन्दसुतः किं वासौ मेऽदिशत्करम् ॥ ३० ॥

वचनोंको सह सकता है ॥ २५ ॥ हे मन्दमति ब्राह्मण ! आप अब यहांसे यथेष्ट गमन करिये आपकी पृथ्वी है चाहे जहां यथेष्ट गमन करो ॥ २६ ॥ गोपालकी सन्तानोंको जीत बहुतसे यादवोंको मार डालूंगा अब पहला काम हमारा यादवोंका मारनाही है ॥ २७ ॥ हे विप्र ! तुम अब जाओ तुम ठीठ और परुषवादीको मैं रक्षना नहीं चाहता मेरे साथ भोजन कर शत्रुपक्षकी स्तुति करते हो ॥ २८ ॥ कष्ट परभी मैं ब्राह्मणका वध नहीं करता हूं यह ब्राह्मणसे कथन कर फिर हंस सात्यकिसे कहने लगा ॥ २९ ॥ हे यादवसंतान ! तुम यहां किस कारणसे आये हो नन्दपुत्रने क्या कहा है क्या

वह मुझको कर देंगे ॥ ३० ॥ सात्यकि बोला, हे हंस ! यह वचन सत्यही है की शंख चक्र गदा धारण करनेवालेके तीक्ष्ण धारावाले शिलापर पेने किये शार्ङ्गधनुषसे निकले बाणोंसे ॥ ३१ ॥ और अपनी तीक्ष्ण तलवारसे मैं तुमको कर दूंगा. हे हंस ! करदानमें तत्पर मैं तुम्हारा शिरच्छेदन कर दूंगा ॥ ३२ ॥ हे मन्दात्मन् नृपाधम ! तुम्हारी बड़ी धृष्टता है जो देवदेव जगन्नाथसे कर लेनेकी इच्छा करते हो ॥ ३३ ॥ इस करसे आपकी जिह्वा छेदन कर दी जायगी उन हारेके शंख और शार्ङ्ग धनुषका शब्द श्रवण करके ॥ ३४ ॥ कौन जीवित रह सकता है तुम क्षणमात्र ठहरो शिवके वरसे सात्यकिरुवाच ॥ इदं सत्यं वचो हंस शङ्खचक्रगदाभृतः ॥ शिरोनिशितधाराग्रैः शार्ङ्गमुक्तैः शिलाशितैः ॥ ३१ ॥ दास्यामि करसर्व-स्वमसिना निशितेन ते ॥ शिरश्छेत्स्यामि ते हंस करदानस्य संग्रहम् ॥ ३२ ॥ धाष्टर्यं हि तव मन्दात्मन् किमतोऽपि नृपाधम ॥ देवदेवान्जगन्नाथात्करमिच्छति यो नृपः ॥ ३३ ॥ तस्यैष करसंक्षेपो जिह्वाच्छेदो नराधम ॥ तस्य शार्ङ्गरवं श्रुत्वा शङ्खस्य च हरेः पुनः ॥ ३४ ॥ को नाम जीवितं काङ्क्षेतिष्ठेदानीं त्वमद्य वै ॥ गिरिशिवरदपेण को ब्रूयादीदृशं वचः ॥ ३५ ॥ सहाया वयमेवैते बलभद्रपुरोगमाः ॥ प्रथमो बलभद्रोऽसौ द्वितीयोऽहं च सात्यकिः ॥ ३६ ॥ कृतवर्मा तृतीयस्तु चतुर्थो निशठो बली ॥ पञ्चमोऽथ च बभ्रुस्तु षष्ठश्चैवोत्कलः स्मृतः ॥ ३७ ॥ सप्तमस्तारणो धीमानस्त्रशस्त्रविशारदः ॥ अष्टमस्त्वथ सारङ्गो नवमो विपृथुस्तथा ॥ ३८ ॥ दशमश्चोद्धवो धीमान्वयमेते बलान्विताः ॥ त एते पुरतो गोमुः शङ्खचक्रगदाभृतः ॥ ३९ ॥ देवदेवस्य युद्धेषु तिष्ठन्त्येव दिवा-निशम् ॥ यो हि वीरो सुतो तस्य नास्त्यसदृशो बले ॥ ४० ॥

दर्पित हो कौन ऐसे वचन कह सकता है ॥ ३५ ॥ और बलभद्रको आदि ले हम सब उनके सहायकारी हैं प्रथम बलभद्र और दूसरा मैं सात्यकि ॥ ३६ ॥ तीसरा कृतवर्मा चौथा बली निशठ पांचवां बभ्रु छठा उत्कल ॥ ३७ ॥ सातवां अस्त्रशस्त्रमें पंडित बुद्धिमान् तारण है आठवां सारंग और नववां विपृथु है ॥ ३८ ॥ दशवां बुद्धिमान् उद्धव यह सब महाबली हैं यह दश शंख चक्र गदा धारण करनेवालेके सम्मुख रक्षा करनेको चलते हैं ॥ ३९ ॥ यह युद्धमें देवदेवके आगे दिनरात रहते हैं और जो उनके वीर दो पुत्र अश्विनीकुमारकी समान बली हैं ॥ ४० ॥

वही दोनों युद्धमें मत्त तुमको मारनेको समर्थ हैं जो शिरीश देव तुमको वर देनेवाले हैं उनके बलसे दर्पित तुम ॥ ४१ ॥ धनुष बाण धारण किये श्रीकृष्णके संग युद्ध करनेको स्थित नहीं हो सकते उनके साथ कौन शत्रु युद्ध कर सकता है जिनके संग्राममें ॥ ४२ ॥ इस प्रकारके भृत्य शत्रुओंसे युद्ध करते हैं उन त्रिलोकीकी रक्षा करनेवालेसे तुम कर ग्रहणकी इच्छा करते ऐसोंसे युद्ध करनेको कौन न जायगा ॥ ४३ ॥ जो त्रिलोकीकी रक्षा करता है वह अवश्य युद्धमें तुम्हारा वध करेगा संग्राममें शार्ङ्ग धनुषसे निकले बाण तुम्हारा वध करेंगे ॥ ४४ ॥ जगत्प-

तावेव वां क्षमो युद्धे इन्तुं कलमदान्वितौ ॥ यो गिरीशो गिरा देवो वरं दत्त्वा स तिष्ठति ॥ ४१ ॥ युवां हि किंबलौ युद्धे तिष्ठतः सशरं धनुः ॥ गृहीत्वा शत्रुभिः सार्द्धं युद्धं कर्तुं समुद्यतौ ॥ ४२ ॥ ईदृशेष्वथ भृत्येषु युद्धं कुर्वत्सु शत्रुभिः ॥ त्रैलोक्यं रक्षतस्तस्मात्करामिच्छन् व्रजेत कः ॥ ४३ ॥ हनिष्यत्येव वां युद्धे त्रैलोक्यं यो हि रक्षति ॥ शरेण निशितेनाजौ शार्ङ्गमुक्तेन केवलम् ॥ ४४ ॥ क्व नः संग्राम इत्येवं पुनराह जगत्पतिः ॥ पुष्करे पुण्यदे नित्यमुत गोवर्द्धने गिरो ॥ ४५ ॥ मथुरायां प्रयागे वा दर्शन्यतो बलानि मे ॥ शङ्खचक्रधरे देवे जगत्पालनतत्परे ॥ ४६ ॥ राजसूयं महायज्ञं कर्तुमिच्छति कः स्वयम् ॥ वदन्वा स्वस्तिमान्मर्त्यस्त्वां विना को व्रजेत्सुखम् ॥ ४७ ॥ इदमिच्छसि चेन्मूढ हास्यतां यासि भूतले ॥ इत्युक्त्वा सात्यकिर्वीरो हसन्निव भुवि स्थितः ॥ ४८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसदिग्भकोपाख्याने सात्यकिवाक्यं नामाष्टादशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११८ ॥

विने कहा है पुष्कर देश वा पावित्र गोवर्द्धन आदिके स्थानमें हमारा तुम्हारा संग्राम कहां होगा ॥ ४५ ॥ मथुरा वा प्रयाग जहां तेरी इच्छा हो वहां मुझे अपना बल दित्वा शंख चक्रधारी जगत्के पालन करनेवाले देवके विद्यमान होनेमें ॥ ४६ ॥ कौन स्वयं राजसूय यज्ञ कर सकता है और तेरे बिना ऐसा कहकर कौन इसमें अपना कल्याण मान सकता है ॥ ४७ ॥ हे मूढ ! जो तू ऐसी इच्छा करेगा तो भूतलमें तेरा महा हास्य होगा ऐसा कह सात्यकि हँसता हुआ अपने आसनपर स्थित रहा ॥ ४८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसदिग्भ-

कोपाख्याने सात्यकिवाक्यं नामाष्टादशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११८ ॥ वैशंपायन बोले, हे महाराज ! तब तो हंस और डिम्भक क्रुद्ध हुए और रोषसे व्याकुल नेत्र कर इस प्रकार कहने लगे ॥ १ ॥ सब राजोंको देखते क्रोधसे मानो दिशाओंको जलाते हुए और सात्यकिके वचन सुन हाथसे हाथ मलते हुए बोले ॥ २ ॥ क्या वह नंदपुत्र लृष्ण और क्या वस्तु बलराम है यह कह फिर आक्षेप कर सात्यकिके कहने लगा ॥ ३ ॥ अरे यादवपुत्र ! हमारे सन्मुख तू क्या कहता है ! हे मन्दात्मन् ! यहांसे निकल जा तू इस समय दूत है ॥ ४ ॥ नहीं तो ऐसे वचन कहनेवालेको मैं तत्काल वैशम्पायन उवाच ॥ ततः क्रुद्धौ महाराज हंसो डिम्भक एव च ॥ इदं वै प्रोचतुर्वाक्यं रोषव्याकुलितेक्षणो ॥ १ ॥ दिधक्षन्तो दिशः सर्वाः सर्वान्वीक्ष्य नृपौत्तमान् ॥ करेण निष्पीड्य करं स्मरन्तो तद्वचो महत् ॥ २ ॥ क तु क वा नन्दसूनुः क वा रामो बलौत्कटः ॥ इति बुवाणो साक्षेणौ सात्यकिं सत्यसंगरम् ॥ ३ ॥ अरे यादवदायाद किं ब्रूषे नः पुरो गतः ॥ इतो निर्गच्छ मन्दात्मन्दूतस्त्वमसि साम्प्रतम् ॥ ४ ॥ अन्यथा वध्य एव त्वं प्रलपन् परुषं वचः ॥ सत्यं निर्लज्ज एवासि यद्व्या ईदृशं वचः ॥ ५ ॥ आवामिदं जगत्सर्वं शासितुं संयतो नृपो ॥ को नाम मानुषे लोके करदो नैव जीवति ॥ ६ ॥ इत्वा गोपालकान्सर्वान्वद्वा यादवकान्वहन् ॥ गृहीमः करसर्वस्वं ततो गच्छ नराधम ॥ ७ ॥ अवध्यो दूततां प्राप्तो बह्वबद्धं प्रभाषसे ॥ ईश्वरो नौ वरं दाता ह्यस्त्राणामपि च मभुः ॥ ८ ॥ रक्षितारो महाभूतो संग्रामं गच्छतोश्च नौ ॥ पितरं याजयिष्यावो जित्वा गोपालकं रणे ॥ ९ ॥ एते प्रोक्ता भृशं युद्धे कातराः सर्व एव ते ॥ इत्वा तान्सबलान्युद्धे पुनर्जेष्यामि केशवम् ॥ १० ॥

मार डालता, तू सत्यही निर्लज्ज है जो इस प्रकारके वचन कहता है ॥ ५ ॥ हम दोनों राजा इस सम्पूर्ण जगत्के शासन करनेमें समर्थ हैं ऐसा कौन है जो हमको कर दिये बिना जीवित रह सकता है ॥ ६ ॥ सब गोपालोंको मार और यादवोंको मारकर हम सर्वस्व उनका ग्रहण कर लेंगे, हे नराधम ! तू यहांसे जा ॥ ७ ॥ दूतताको प्राप्त होनेसे तू अवध्य है बहुत अनुचित वचन कह रहा है ईश्वरने हमको वर और अस्त्र दिये हैं ॥ ८ ॥ और संग्राममें हम दोनोंकी शिवके दो गण रक्षा करते हैं, हम गोपालोंको रणमें जीतकर पिताको यज्ञ करावेंगे ॥ ९ ॥ जिनका तुमने नाम लिया है यह सब युद्धमें

कातर हैं उन सबको युद्धमें जीत केशवको जीतूंगा ॥ १० ॥ शरासन ग्रहण कर महासेना सजाओ जो प्राप्त सुशल कवच धारण किये हो ॥ ११ ॥ सहस्रो रथमें चढ़कर गदा परिघ लिये बहुत धनवती और बहुत साधनसे सम्पन्न ॥ १२ ॥ घोर सेनाको बड़े बड़े अध्यक्ष लेकर चले सात्याकि तू अवध्य होकर जा तुझे मरणसे भय नहीं है ॥ १३ ॥ हमारा संग्राम पुष्करमें कल वा परसोंसेही आरंभ होगा, तब हम केशवका बल देख लेंगे और जिनका नाम तैने लिया है उनका बलभी देखेंगे ॥ १४ ॥ सात्याकि बोला, हे हंस ! मैं तुम्हारे मारनेको वहां चलता हूं और अबभी मारनेको समर्थ हूं पर मैं

संहर्तव्या महासेना प्रगृहीतशरासना ॥ गृहीतप्रासमुशला गृहीतकवचा सदा ॥ ११ ॥ आरूढरथसाहस्रा गदापरिघसंकुला ॥ सुप्रभूतेन्धनवती प्रभूतबलसाधना ॥ १२ ॥ चाल्यतां वाहिनी घोरा बलाध्यक्षा समन्ततः ॥ अवध्य एव गच्छ त्वं न ते मरणतो भयम् ॥ १३ ॥ संग्रामः पुष्करेऽस्माकं श्वः परश्वोऽपि वा नृप ॥ ततो ज्ञास्यामहे वीर्यं केशवस्य बलस्य च ॥ ये त्वयोक्ता नृपाः संख्ये तेषामपि च यद्वलम् ॥ १४ ॥ सात्याकिरुवाच ॥ हंसागच्छामि वां हन्तुं श्वः परश्वोऽपि वा नृप ॥ अद्यैव हि मया वध्यो न चेद्दूतो भवाम्यहम् ॥ १५ ॥ न हि श्वो वा परश्वो वा युवां कटुकभाषिणौ ॥ दौत्ये हि दुःखमनुलं वहाम्येव सदा नृणाम् ॥ १६ ॥ अन्यथाहं युवां इत्वा ततो यास्यामि निर्वृतिम् ॥ स्ववीर्यं बाहुदर्पं च दर्शयन्वां नृपाधमौ ॥ १७ ॥ शङ्खचक्रगदापाणिः शार्ङ्गधन्वा किरीटभृत् ॥ नीलकुञ्चितकेशाढ्यो लम्बबाहुः श्रिया वृतः ॥ १८ ॥ स सर्वलोकप्रभवो विश्वरूपः स्वरूपवान् ॥ दैत्यदानवहन्तासो योगिध्येयः पुरातनः ॥ १९ ॥ पद्मकिञ्जल्कनयनः श्यामलः सिंहविक्रमः ॥ सृष्टिस्थितिलयेष्वेकः कर्ता त्रिजगतो गुरुः ॥ २० ॥

दूत हूं ॥ १५ ॥ तुम कटु बोलनेवालोंको कल परसोंतकभी क्षमा नहीं करता दूत होनेसे यह कठिन दुःख धारण करना पडा ॥ १६ ॥ नहीं तो अभी तुमको मारकर शान्तिको प्राप्त होता, हे नृपाधमो ! अपनी बाहुओंका बलवीर्य दिखाऊंगा ॥ १७ ॥ शंख चक्र गदा पद्म हाथमें लिये किरीट-धारी शार्ङ्गधन्वा नील कुंचित केशवान् लम्बाप्रमाण भुजा लक्ष्मीसे युक्त ॥ १८ ॥ सब लोकके उत्पन्न करता विश्वरूप स्वरूपवान् दैत्य दानवोंके मारनेवाले योगियोंको ध्यान करने योग्य पुरातन ॥ १९ ॥ कमलकी समान नेत्र श्यामस्वरूप सिंहकी समान चालवाले सृष्टि स्थिति लयमें वह एकही

कर्ता तीनों जगत्के गुरु ॥ २० ॥ तीक्ष्ण बाणसे आपका अभिमान दूर करेंगे यह कह रथपर चः सात्यकि चला गया ॥ २१ ॥
 इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भाषायां हंसडिम्भकोपाख्याने एकोनविंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११९ ॥ वैशम्पायन बोले; शिनिपुंगव
 सात्यकि द्वारकापुरीमें प्रवेश कर उनका सब वृत्तान्त श्रोष्ठणसे कहता हुआ ॥ १ ॥ तब प्रातःकाल होतेही केशिसूदन केशव
 चक्रपाणि गदा धारण करनेवाले अपने बलाध्यक्षसे बोले ॥ २ ॥ रथ कुंजर घोड़ेवाली तथा अनेक भेरियोंसे युक्त हमारी सेना तयार करो जो प्राप्त
 श्रेण निशितेनाजो दुर्प वां व्यपनेष्यति ॥ इत्युक्त्वा रथमारुह्य प्रययौ सात्यकिः किल ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु
 भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने एकोनविंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११९ ॥ वैशम्पायन उच्यते ॥ प्रविश्य स पुरं विष्णोः
 सात्यकिः शिनिपुङ्गवः ॥ आचचक्षेऽथ कृष्णाय यथावृत्तं तयोस्तथा ॥ १ ॥ ततः प्रभाते विमले केऽवः केशिसूदनः ॥ बलाध्यक्षा-
 नुवाचेदं चक्रपाणिर्गदाधरः ॥ २ ॥ संनह्यतां बलं सर्वं रथकुञ्जराजिमत् ॥ अनेकभेरीपणवं प्राप्तासिपरिचाकुलम् ॥ ३ ॥ सध्वजं
 सपताकं च सालंकारपरिच्छदम् ॥ ते तथेति प्रतिज्ञाय सर्वं चक्रुरधीनगाः ॥ ४ ॥ आदाय सुदृढं चापं रथमारुह्य दांशिताः ॥ अग्रतो
 जगमुरत्यर्थं सेनायाः पुरुषोत्तमाः ॥ ५ ॥ सात्यकिश्च तथा राजन्प्रगृहीतशरासनः ॥ बभौ क्रोधसमायुक्तो जगामाग्रे महाबलः ॥ ६ ॥
 अन्ये च यादवाः शूराः प्रगृहीतमहायुधाः ॥ सिंहनादं प्रकुर्वन्तो जगमुरत्यर्थमुत्तमाः ॥ ७ ॥ हरिस्तु रथमारुह्य संस्कृतं दारुकेण ह ॥
 शार्ङ्गभारसहं घोरं गृहीत्वा सशरं धनुः ॥ ८ ॥ चक्रपाणिस्तदा शङ्गी गदाशरवरासिमान् ॥ बद्धगोधाङ्गुलित्राणः पीतवासा जनार्दनः ॥ ९ ॥
 परिघ धारण किये ॥ ३ ॥ ध्वजा पताका और सब अलंकारोंसे व्याप्त है शीघ्र तयार करो बहुत अच्छा ऐसा कहकर उन्होंने बहुत शीघ्र वह
 किया ॥ ४ ॥ दृढ चाप धारण कर रथमें स्थित हुए वे पुरुषश्रेष्ठ रथमें चढ़कर आगे २ चले ॥ ५ ॥ हे राजन् ! सात्यकिनी शरासन ग्रहण कर क्रोधको
 प्राप्त हो आगे आगे गमन करने लगा ॥ ६ ॥ औरभी शूर यादव आयुध ग्रहण किये सिंहनाद करते गमन करने लगे ॥ ७ ॥ और श्रोष्ठण दारुकके
 सजाये रथमें चढ़कर और शार्ङ्गभारके सहन करनेवाले घोर बाण धनुषको लिये ॥ ८ ॥ चक्र गदा शर आसि ग्रहण करे गोधांगुलि त्राण बांधे पीत

वस्त्र पहरे जनार्दन ॥ ९ ॥ कमलोंकी माला पहरे नये मेघकी समान कान्तिमान् बाल गोंसे स्तुतिको प्राप्त हो प्रसन्नतासे चले ॥ १० ॥ सूत मागधपुत्र
उनको गाने लगे सब सेना लेकर उत्तर दिशाको चले ॥ ११ ॥ सम्पूर्ण बलसे श्रीकृष्ण पांचजन्य शंखको मुखमें रखकर शत्रुओंको जय देनेवाले महा-
शब्द करने लगे ॥ १२ ॥ जब श्रीकृष्णने उस शंखराजको बजाया तब उसने शब्दसे आकाशको पूर्ण कर दिया ॥ १३ ॥ इस प्रकारसे उस शंखके
बजनेमें सहस्रों शंख बजने लगे तथा बहुतसी भेरी और मृदंग बजने लगे ॥ १४ ॥ यह ऐसा शब्द हुआ जैसे चौमासेमें मेघ शब्द करते हैं. हे महाराज

पद्ममालावृतोरस्को नवजीमूतसन्निभः ॥ ययौ रथगतो विप्रेः स्तूयमानो मुदान्वितैः ॥ १० ॥ सूतेर्मागधपुत्रेश्च गीयमानस्ततस्ततः ॥
आनीय सेनां सकलां ययौ काष्ठामथोत्तराम् ॥ ११ ॥ पाञ्चजन्यं मुखे न्यस्य सर्वप्राणेन केशवः ॥ दध्मौ महारवं कुर्वञ्छूणां भयवर्द्ध-
नम् ॥ १२ ॥ आध्मातस्तेन हरिणा स चक्रे शङ्खराट् ध्रुवम् ॥ रवः स रोदसी राजन्पूरयामास सर्वतः ॥ १३ ॥ तस्मिन् शङ्खे
तथाध्माते दध्नुः शङ्खान् सहस्रशः ॥ भेर्यश्चापि समाध्माता मृदङ्गा बहवो नृप ॥ १४ ॥ नेदुरत्यर्थमतुलं धर्मान्ते जलदा यथा ॥
अथाययुर्महाराज पुष्करं पुण्यवर्धनम् ॥ १५ ॥ सरसस्तस्य राजेन्द्र पुष्करस्य नृपोत्तमाः ॥ प्रतीक्ष्य हंसडिम्भकौ युद्धाय समव-
स्थिताः ॥ १६ ॥ निवेशं कारयामासुर्यादवाः सर्व एव हि ॥ स्वं स्वं ययुः सुखं राजन्प्रगृहीतकुटीमठम् ॥ १७ ॥ भगवानपि गोविन्दः
सरो दृष्ट्वा सुशोभनम् ॥ उपस्पृश्य जले तस्मिन्प्रणम्य यतिपुङ्गवान् ॥ १८ ॥

फिर वे पुण्यस्थान पुष्करमें प्राप्त हुए ॥ १५ ॥ वे राजोंमें उत्तम उस पवित्र सरोवर पुष्करमें प्राप्त हुए और हंस डिम्भकभी वाट देखते वहां स्थित
हुए ॥ १६ ॥ सब ओर यादवोंने अपने डेरे ढाल दिये अपने कुटीमठमें प्राप्त हो सब प्रसन्नतासे स्थित हुए ॥ १७ ॥ भगवान् गोविंदजी उस मनोहर
सरोवरको देखकर यतिश्रेष्ठोंको प्रणाम कर जलस्पर्श करते हुए ॥ १८ ॥

और उनके आगमनकी इच्छासे उसके तटमें स्थित हुए और ब्राह्मणोंकी वेदध्वनि श्रवण करने लगे ॥ १९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसडिम्भकोपाख्याने कृष्णपुष्करप्रवेशो नाम विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२० ॥ वैशम्पायन बोले; हे नृप ! तब वे हंस और डिम्भकभी पुष्करको चले और महाचाप ग्रहण कर रथ ध्वजासे युक्त ॥ १ ॥ महाभूतकी समान वे प्रलय करनेको चले शरीरमें अस्त्र लगाये महाशब्द करसे हुए ॥ २ ॥ ललाटमें त्रिपुंड्र लगाये रुद्राक्षसे शोभित मानो दो रुद्रही लोक संहार करनेको प्रगट हुए हैं ॥ ३ ॥ हे राजन् ! उनके पीछे

तयोरागमनं लिप्सुरास्ते तीरे यथासुखम् ॥ शृण्वन् वेदध्वनिं विष्णुर्ब्राह्मणानां समन्ततः ॥ १९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने कृष्णपुष्करप्रवेशो नाम विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ अयं तो हंसडिम्भको जग्मुतुः पुष्करं प्रति ॥ प्रगृहीतमहाचापौ सरथौ सध्वजौ नृप ॥ १ ॥ पुरस्समहाभूतौ संहरन्ताविवोल्बणौ ॥ प्रकुर्वन्तौ सिंहखं भस्मना परिलेपितौ ॥ २ ॥ त्रिपुंड्रकललाटान्तौ रुद्राक्षपरिशोभितौ ॥ अन्यौ द्वाविव रुद्रौ तौ लोकसंहारकारकौ ॥ ३ ॥ ततोऽनुजग्मुः शतशः सैन्यानि नृपसत्तम ॥ अक्षौहिण्यो दशैवासंस्तयोरथ समागताः ॥ ४ ॥ विचक्रस्तु महाराज दानवो नगसन्निभः ॥ तयोरेव सखा पूर्वमासीच्च बलशालिनोः ॥ ५ ॥ शक्रो यस्य पुरसरः स्थातुं शक्तो न वज्रभृत् ॥ यो हि वीरो महाराज देवदैत्यसमागमे ॥ ६ ॥ देवान्निग्रस्तथा राजन् देवेन्द्रमजयन्महान् ॥ अकरोच्च पुरा युद्धं विष्णुना प्रभविष्णुना ॥ ७ ॥ यो हि द्वारवर्ती प्राप्य बबाधे यदुपुङ्गवान् ॥ स तदानीं महाराज श्रुत्वा युद्धमुपस्थितम् ॥ ८ ॥

सैकड़ों सेना चलने लगी दश अक्षौहिणी सेना उनके रथके साथ चली ॥ ४ ॥ हे महाराज ! एक पर्वतकी समान बड़ा बली विचक्र नाम दानव उन दोनों बलशालियोंका सखा था ॥ ५ ॥ जिसके सामने वज्रधारी इन्द्रभी खड़े होनेको सम नहीं था. हे महाराज ! जो वीर देवता दैत्योंके समागममें ॥ ६ ॥ देवताओंको मार देवेन्द्रको जीतता हुआ और जिसने पहिले विष्णुके साथ युद्ध किया था ॥ ७ ॥ और जिसने द्वारकापुरमें जाकर यदुवंशियोंको

दुःखी किया था. हे महाराज ! वह उपस्थित युद्ध श्रवण कर ॥ ८ ॥ परिव हाथमें लिये सैकड़ों दानवोंको संग लिये वृष्णिवंशियोंसे दैव करता चला ॥ ९ ॥ इस प्रकार वह हंस डिम्बकी सहायता करनेको उद्यत हुआ विचक्र दैत्यका हिडिंब राक्षसपति ॥ १० ॥ बड़ा मित्र था अर्थात् युद्धमें प्राणोंतकका देनेवाला था शिला शूल तल्वार हाथमें लिये राक्षसोंके साथ ॥ ११ ॥ पुरुषोंके खानेवाले राक्षसोंका अधिपति उसको सहायता करनेको गया, उसके साथमें अट्टासी सहस्र दानव थे ॥ १२ ॥ हे महाराज ! इन सबके हाथमें शिला और परिव थीं उनकी महासेना यादवोंसे

अनेकशतसाहस्रैर्दानवैः परिघायुधैः ॥ वृतः समभवद्दैत्यो वृष्णिद्वेषानृपोत्तम ॥ ९ ॥ हंसस्य डिम्भकस्याथ साहाय्यं कर्तुमुद्यतः ॥

विचक्रस्याय दैत्यस्य हिडिम्बो राक्षसेश्वरः ॥ १० ॥ अतीव मित्रतां यातो दद्यात्प्राणांश्च संयति ॥ राक्षसेरपरैः सार्धं शिलाशूलासिपा-

णिभिः ॥ ११ ॥ ययौ तस्य सहायार्थं हिडिम्बः पुरुषादपः ॥ अष्टाशीतिसहस्राणि राक्षसास्तस्य चाभयन् ॥ १२ ॥ अनुयाता महाराज शिलापरिवबाहवः ॥ तयोस्तत्र महासेन्यं गच्छतोः केशवं प्रति ॥ १३ ॥ मिश्रितं दैत्यसंघेश्च राक्षसेश्च समन्ततः ॥ अत्यद्भुतं

महारौद्रं त्रैलोक्यभयदायकम् ॥ १४ ॥ दैत्येन सहितौ तौ हि जग्मतुः पुष्करं प्रति ॥ तावेतौ हंसडिम्भकौ हतुं केशवमञ्जसा ॥ १५ ॥ ततः श्रुत्वा जरासन्धो विग्रहं यदुभिः सह ॥ नाकरोनृपसाहाय्यं पापं मे भवितेति ह ॥ १६ ॥ गच्छतोः समितिं राजहंसस्य डिम्भकस्य च ॥ अतित्वरितविक्रान्तास्ते ययुः पुष्करं प्रति ॥ १७ ॥ सिंहनादं विमुञ्चन्तः कथयन्तः परस्परम् ॥ अहमेव नृपा

युद्धं करोमि प्रथमं हरेः ॥ १८ ॥ इत्यनुवृत्ता राजञ्छतशः केशवं प्रति ॥ संप्राप्तास्ते नृपश्रेष्ठाः पुष्करं पुण्यवर्द्धनम् ॥ १९ ॥

युद्ध करनेको चली ॥ १३ ॥ इस प्रकार दैत्य और राक्षसोंसे संयुक्त वह सेना महारौद्र अति अद्भुत त्रिलोकीको भय देनेवाली हुई ॥ १४ ॥ इस प्रकार वे दोनों दैत्योंके संग पुष्करको चले वे हंस डिम्बक केशवके मारनेकी इच्छासे चले ॥ १५ ॥ उस समय जरासन्धने यदुओंके संग विग्रह सुन्कर इसमें पाप जानकर राजोंकी सहायता न की ॥ १६ ॥ हंस और डिम्बक इस प्रकारसे अतिविक्रमको प्राप्त हो पुष्करके प्रति गमन करने लगे ॥ १७ ॥ सिंहनाद करते गमन करने लगे कि प्रथम मैंही राजोंसे पहले श्रीकृष्णसे युद्ध करूंगा ॥ १८ ॥ इस प्रकारसे सबही राजा कहने लगे कि इस प्रकार

इस पुण्यवर्द्धन पुष्करमें संग्राम होगा ॥ १९ ॥ मुनियोंसे युक्त और वृद्ध २ ऋषियोंसे सेवित यह सब लोकोंमें पुष्करही अत्यन्त श्रेष्ठ है ॥ २० ॥
 पुष्कर और पुण्डरीकाक्ष यह दोही दर्शन और स्पर्शसे पाप दूर करनेवाले हैं ॥ २१ ॥ हे राजन् ! यह पुष्कर और पुण्डरीकाक्ष दोही देवता
 मुनिश्रेष्ठ और महात्माओंसे सेवित हैं ॥ २२ ॥ हे नृपश्रेष्ठ ! यह दोनोंही पापके नाशक हैं जहां ये दोनों स्थित थे वहां राजा गये ॥ २३ ॥ वहां
 उन्होंने परम देव श्रीकृष्णको देखा वह पुष्कर ब्रह्मस्थान मुनिश्रेष्ठोंसे सेवित है ॥ २४ ॥ हे राजन् ! मगजे इन दोनोंको नमस्कार करो यहां सब
 मुनिजुष्टं तपोवृद्धैर्ऋषिभिश्च निषेवितम् ॥ अत्यन्तभद्रं लोकेषु पुष्करं प्रथमं नृप ॥ २० ॥ पुष्करं पुण्डरीकाक्षो द्वावेव जगतीपते ॥
 दर्शनात्स्पर्शनाच्चैव किल्बिषच्छेदिनो नृप ॥ २१ ॥ पुष्करं पुण्डरीकाक्षो द्वावेवः नृपसत्तम ॥ सेव्यमानो मुनिश्रेष्ठैरमरोचैर्म-
 हात्मभिः ॥ २२ ॥ द्वावेव हि नृपश्रेष्ठ सर्वपापप्रणाशको ॥ तावुभौ यत्र सहितौ तत्र ते संस्थिता नृपाः ॥ २३ ॥ दृष्टवन्तो हरिं
 विष्णुं विष्टरश्रवसं परम् ॥ पुष्करं पुण्यनिष्ठयं तीर्थं ब्रह्मनिषेवितम् ॥ २४ ॥ ताभ्यां कुह नमस्कारं मनसा नृपसत्तम ॥ अहो निःशे-
 षमभवत्तत्र भूयो न संशयः ॥ २५ ॥ सैन्यं तत्र च संप्राप्तं दैत्यराक्षसमाकुलम् ॥ अनेकभेरीपणवज्ञशरीडिण्डिमाकुलम् ॥ २६ ॥
 नानापणवसंमिश्रं रक्षोनादविनादितम् ॥ प्रविश्य सरसस्तीरं पुष्करस्य विशांपते ॥ दर्शयामास देवेश युद्धाय समुपस्थितम् ॥ २७ ॥
 इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने एकविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२१ ॥ वेशम्पपायन
 उवाच ॥ द्वे सेने संगते राजन्सध्वजे सपरिच्छदे ॥ महापरिघसंकीर्णे गदाशक्तिसामकुले ॥ १ ॥
 पापोंका निशेष हो जायगा इसमें संदेह नहीं ॥ २५ ॥ फिर दैत्यराक्षसोंसे युक्त वह सेना वहां प्राप्त हुई अनेक भेरी पणव ज्ञशरी और डिण्डिमसे
 संयुक्त थी ॥ २६ ॥ अनेक प्रकारके बाजोंसे संयुक्त राक्षसोंके नादसे शब्दायमान इस प्रकार पुष्करके स्थानमें प्राप्त होकर युद्धके निमित्त स्थित
 केशवको देखा ॥ २७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसडिम्भकोपाख्याने एकविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२१ ॥
 वंशपायन बोले, हे राजन् ! जब ध्वजापरिच्छेदसहित दोनों सेनाकी संगति हुई तब महापरिघ तथा गदा शक्तिसे समाकुल ॥ १ ॥

भेरी झंझरसे सम्पूर्ण डिमडिमके शब्दसे संकुल महाशस्त्र ग्रहण किये शूल तलवार कार्मुक धारण किये ॥ २ ॥ परस्पर उत्साहपूर्वक दारुण युद्ध करने लगे, वे बाण धनुषसे मुक्त होकर प्राणियोंको निर्भय कर ॥ ३ ॥ शरीरोंको विदीर्ण करने लगे योधाओंकी भुजाओंसे छूटे सङ्ग वीरोंकी छातीको विदीर्ण कर ॥ ४ ॥ तथा उनके स्फुरायमान शिरोंको ग्रहण कर आकाशको गये उसी प्रकार राजोंसे छोटे हुए परिघ ॥ ५ ॥ राक्षसोंके शरीर तिलकी समान खण्ड खण्ड करने लगे, इस प्रकार एक दूसरेके वधकी इच्छासे सिंहनाद करने लगे ॥ ६ ॥ हे राजेन्द्र ! राक्षस राजा

भेरीझंझरसंपूर्णें डिण्डिमारावसंकुले ॥ प्रगृहीतमहाशस्त्रे शूलासिवरकार्मुके ॥ २ ॥ परस्परकृतोत्साहे चक्राते युद्धमुल्बणम् ॥ ते शराः कार्मुकोत्सृष्टा निर्भिद्याथ शरीरिणाम् ॥ ३ ॥ शरीराणि महाराज जगमुदूरं सहस्रशः ॥ भटबाहुविनिर्मुक्त्यः खड्गा निर्भिद्य वक्षसि ॥ ४ ॥ स्फुरन्तश्च तथा राजञ्छिरांस्याहृत्य खं ययुः ॥ परिघाश्च तथा राज्ञां बाहुभिः परिचोदिताः ॥ ५ ॥ तिलशश्चकुरतुलं शरीरं नृप रक्षसाम् ॥ दैत्यानां कुर्वतां नादमन्योन्यवधकाङ्क्षिणाम् ॥ ६ ॥ दैत्या रक्षांसि राजेन्द्र राजानश्च समन्ततः ॥ अन्योन्यं परिजेर्जघ्नुश्चापमुक्तेः शिलाशितैः ॥ ७ ॥ शरैश्च भोगिभोगाभैस्तीक्ष्णमन्ये महाबलाः ॥ राक्षसा दानवाश्चान्ये मत्तमातङ्गविक्रमाः ॥ ८ ॥ अन्योन्यं जघ्निरे राजंश्चापमुक्तेर्महाशरैः ॥ नागा नागैर्महाराज हया अश्वैः समन्ततः ॥ ९ ॥ रथा रथैः समाजग्मुः सादिनः सादिभिस्तथा ॥ पट्टिशसिशिरात्रातैः कुन्तैः सायककर्षणैः ॥ १० ॥ सशक्तिपरिघप्रासपरश्वधसमाकुलेः ॥ भिण्डिपालैर्महारोद्रेर्जघ्नुरन्योन्यमाहवे ॥ ११ ॥

और दैत्य एक दूसरेको मिला और परिघोंसे मारने लगे ॥ ७ ॥ दूसरे महाबली सर्पके शरीरकी समान तीक्ष्ण बाणोंसे मारने लगे वे राक्षस दानव मत्त मातङ्गकी समान पराक्रमी थे ॥ ८ ॥ चापसे छूटे महाबाणोंसे परस्पर एक दूसरेको मारने लगे, हे महाराज ! अनेक हाथी और घोड़ोंसे हाथी घोड़ोंका युद्ध होने लगा ॥ ९ ॥ रथी रथियोंसे अश्वारोही अश्वारोहियोंसे युद्ध करने लगे, पट्टिश अस्ति शर समूह कुन्त सायक कर्षण ॥ १० ॥ शक्ति परिघ

मास परसोंसे समाकुल भिंडिपाल आदिसे परस्पर एक दूसरेको मारने लगे ॥ ११ ॥ इस प्रकार चापसे छटे हुए बाणोंसे परस्पर एक दूसरेको मारने लगे हे राजन् ! राक्षस दावन और क्षत्रिय इधर उधर दौड़ते महाशब्द करने लगे ॥ १२ ॥ कोई तलवारसे मारकर पृथ्वीमें गिर पड़े किन्हीं बलियोंके मस्तक गदासे चूर्ण हो गये ॥ १३ ॥ हे महाराज ! किन्हींकी गर्दन परिघसे चर्ण हो गई कोई यमलोक और कोई स्वर्गको जाने लगे ॥ १४ ॥ कोई अप्सराओंसे संगतिको प्राप्त हो अपने कलेवरको देखने लगे कोई अपने पराधोंको भ्रान्त हाकर मारने लगे ॥ १५ ॥ हे राजन् ! इस अवसरमें सैकड़ों शंख और भेरी

अन्योन्यं जग्निरे राजश्चापमुक्तेः शिलाशितेः ॥ राक्षसा दानवा राजन्क्षत्रियाश्च समन्ततः ॥ इतश्चेतश्च धावन्तः कुर्वन्तो विस्वरं
रवम् ॥ १२ ॥ हताः केचिन्महाराज पेतु रुव्यां महासीभिः ॥ केचिन्मथितमस्तिष्का गदाभिर्वीर्यवत्तमाः ॥ १३ ॥ भिन्नग्रीवा
महाराज परिघैः परिघायुधैः ॥ यमराष्ट्रं गताः केचित्केचिस्वर्गं समाययुः ॥ १४ ॥ अप्सरोभिः समासेदुः पश्यन्तः स्वकलेवरम् ॥
केचित्स्वांश्च परांश्चैव हत्वा भ्रान्ता इवाभवन् ॥ १५ ॥ एतास्मिन्नन्तरे राजन् शङ्का भेर्यः सहस्रशः ॥ सस्वनुः सर्वतः सैन्ये मृदङ्गा
बहवस्तथा ॥ १६ ॥ मध्यांदिनगते सूर्ये तापं दधाति घोरवत् ॥ ततः पिशाचा विकृताः करात्कविततोदराः ॥ १७ ॥ राक्षसाश्च
महाघोराः पिशितं केशशाङ्गलम् ॥ मुदिता भक्षयामासुः पिबन्तः शोणितं बहु ॥ १८ ॥ संचितानि शवान्यासन्कबन्धाः खड्गपा-
तिताः ॥ विभज्य देशं बहुशो युद्धभूमौ श्वाशिनः ॥ १९ ॥ अथ ज्येना मृगाश्चैव कङ्का गृध्रास्तथा परे ॥ तुण्डैः शवान्विनिष्कृष्य
भक्षयन्ति ततस्ततः ॥ २० ॥

सेनामें चारों ओरसे बजने लगीं और बहुतसे मृदंग बजने लगे ॥ १६ ॥ जिस समय सूर्य मध्याह्न समयको प्राप्त हो घोर प्रचण्ड हुए उस समय घोर
सुख बड़े पेटघाले पिशाच और महाघोर राक्षस मांस खाते प्रसन्न हो रुधिर पान करने लगे ॥ १७ ॥ और संचित हुए खड्गसे पातित हो कबंध नाचने
लगे बहुतसे देशको विभाग कर युद्धभूमिमें मृतकोंको मारने लगे ॥ १८ ॥ १९ ॥ तब श्येन मृग कंक गृध्र तुण्डोंसे मृतकोंको खेंचने लगे ॥ २० ॥

हे राजन् ! उस युद्धमें सत्तासी सहस्र हाथी और चालीस सहस्र (हजार) घोड़े मृतक हुए ॥ २१ ॥ हे महाराज ! एक लक्ष रथीभी मृतक हुए और तीस करोड़ घुड़सवार मृतक हुए ॥ २२ ॥ सूर्यके मध्याह्नकालमें इस प्रकार मृत्युको प्राप्त हुए और कोई प्यासे हो पुष्करमें प्रवेश करने लगे ॥ २३ ॥ और कोई पृथ्वीको आलिंगन कर युद्धमें भीत होकर बोलने लगे कोई रथसे गिरकर खुले बाल पृथ्वीमें गिरने लगे ॥ २४ ॥ कोई सवार होठ चाटते पृथ्वीपर गिरें वह युद्ध पुष्करतीर्थमें महाकोर हुआ. हे राजन् ! जैसा पूर्वकालमें देवता और दैत्योंका युद्ध हुआ था ॥ २५ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे

सप्ताशीतिसहस्राणि हता नागा नृपोत्तम ॥ त्रिंशत्सहस्रमयुतं निहता ह्यसत्तमाः ॥ २१ ॥ हतं लक्षं महाराज रथानां रथिभिः सह ॥ त्रिंशत्कोटयो हतास्तत्र सादिनः सायुधा भृशम् ॥ २२ ॥ मध्वादिनगते सूर्ये हताः केचन निर्गताः ॥ केचिच्च तृषिता राजन्निविशुः पुष्करं सरः ॥ २३ ॥ केचिद्धूमिं समालिङ्ग्य भीता इत्यब्रुवन् रणे ॥ मुक्तकेशाः पतन्ति स्म रथान्संत्यज्य केचन ॥ २४ ॥ संदृष्टोऽष्टपुटाः केचित्सादिनः पुरतो हताः ॥ अत्यद्भुतं महायुद्धमासीत्पुष्करतीर्थके ॥ यथा देवासुरं युद्धमासीत्पूर्वं नृपोत्तम ॥ २५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि द्वाविंशत्याधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतस्मिन्नन्तरे राजन्द्रन्द्वयुद्धमवर्तत ॥ विचक्रं योधयामास शार्ङ्गधन्वा गदाधरः ॥ १ ॥ बलभद्रोऽथ हंसेन डिम्भकेन च सात्यकिः ॥ वसुदेवोऽग्रसेनाभ्यां हिडिम्बः पुरुषादकः ॥ २ ॥ शेषाश्च शेषे राजेन्द्र चक्रयुद्धमदीनमाः ॥ वासुदेवस्त्रिसप्तत्या दैत्यं वक्षस्यताडयत् ॥ ३ ॥ शूरेर्निशितधाराग्रैर्विस्मयं दर्शयन् रणे ॥ दानवो देवदेवेशं दृष्टेन निशितेन च ॥ ४ ॥

भविष्यपर्वणि भाषायां हंसर्दिभकोपाख्याने द्वाविंशत्याधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२२ ॥ वैशम्पायन बोले, हे राजन् ! उसी समय द्वंद्वयुद्ध होने लगा शार्ङ्गधन्वा गदाधर विचक्रके साथ युद्ध करने लगे ॥ १ ॥ बलभद्र हंसके साथ और डिम्भके साथ सात्यकिका संग्राम होने लगा वसुदेव और अग्रसेनके साथ राक्षस हिडिम्बका युद्ध होने लगा ॥ २ ॥ हे महाराज ! शेष योधा बड़ी धीरतासे दूसरोंके साथ संग्राम करने लगे वासुदेवने ७३ बाण दैत्यकी छातीमें मारे ॥ ३ ॥ वह बाण बड़े तीक्ष्ण थे जिससे रणमें दानवको बड़ा विस्मय हुआ दानवनेभी श्रीकृष्णको बड़े तीक्ष्ण ॥ ४ ॥

बाणसे कर्णपर्यन्त खेंचकर छातीमें इन्द्रके देखते २ प्रहार किया ॥ ५ ॥ उस बाणसे वक्षस्थलमें विद्ध होकर जनार्दन देव रुधिर वमन करने लगे जैसे आदि-
कालमें प्रजा ॥ ६ ॥ तब श्रीकृष्णने क्रोधकर क्षुरसे इसकी ध्वजा छेदन कर दी चारों घोड़े मारकर तीन बाणोंसे साराथिको मारकर अपना महाशंस बजाया
जैसे तारकामय संग्राम हुआ था तब क्रोधपूर्ति दानवों तत्काल रथसे उतरकर ॥ ७ ॥ ८ ॥ दुस्सह वीर्यशालिनी महाघोर गदाको ग्रहण कर उस दैत्येन्द्रने
श्रीकृष्णके किरीटपर आघात किया ॥ ९ ॥ और फिर मस्तकपर प्रहार करके सिंहनाद किया, और फिर उन राक्षसने एक महाशिलाको ग्रहण कर ॥ १० ॥

शरेणाकर्णमाकृष्य धनुःप्रवरमीश्वरम् ॥ जघान स्तनमध्ये च पश्यतस्तु शचीपतेः ॥ ५ ॥ तेन विद्धोऽथ भगवान्वक्षोदेशे जनार्दनः ॥
अवमच्छोणितं विष्णुरादिकाले यथा प्रजाः ॥ ६ ॥ ततः क्रुद्धो हृषीकेशः क्षुरप्रेणाहनद्धजम् ॥ अर्थांश्च चतुरो हत्वा साराथिं च
शरेस्त्रिभिः ॥ ७ ॥ ततो दध्मो महाशङ्खं यथा तारामये रणे ॥ रथादुत्थुत्य सहसा दानवः क्रोधमूर्च्छितः ॥ ८ ॥ गदां गृह्य महाघोरां
दुःसहां वीर्यशालिनीम् ॥ तथा जघान दैत्येन्द्रः किरीटे केशवस्य ह ॥ ९ ॥ ललाटे च पुनर्विष्णुं सिंहनादं व्यनीनदत् ॥ ततः शिलां
च महतीं प्रगृह्य दनुजः किल ॥ १० ॥ भ्रामयित्वा दक्षगुणं प्राहरत्केशवोरसि ॥ तामापतन्तीं संप्रेक्ष्य हस्तेनादाय केशवः ॥ ११ ॥
जघान च तथा दैत्यं स पपातादितः क्षितौ ॥ गतासुरिव संजज्ञे श्वसन्निव पपात ह ॥ १२ ॥ प्राप्य संज्ञां ततो दैत्यः क्रोधाद्विगुणमा-
बभौ ॥ आदाय परिघं घोरमिदमाह जनार्दनम् ॥ १३ ॥ अनेन तव गोविन्द दर्पजातं विहन्यहम् ॥ विक्रमज्ञस्तदा चासि मम
देवासुरे रणे ॥ १४ ॥ तावेव विपुलौ बाहू स एवास्मि जनार्दन ॥ तथापि युध्यसे वीर ज्ञात्वा त्वं मामकं बलम् ॥ १५ ॥

उसे दश वार घुमाकर केशवके हृदयमें प्रहार किया, उसे अपना देख केशवने हाथसेही ग्रहण कर ॥ ११ ॥ उससे दैत्यकोही मारा जिससे अर्दित हो दैत्य
पृथ्वीपर श्वास उठा प्राणरहितकी समान गिर पड़ा ॥ १२ ॥ तब वह दैत्य संज्ञाको प्राप्त होकर दुगुना क्रोध कर परिघको उठाया जनार्दनसे बोला ॥ १३ ॥
हे गोविंद ! जान लो कि इससे तुम्हारा दर्प चूर्ण हो जायगा देवासुरके युद्धमें आपने मेरा पराक्रम देखा है ॥ १४ ॥ यह वही मेरी विपुल भुजा और

वही तुम हो. हे वीर ! तौमी तुम युद्ध कर मेरा बल देखोगे ॥ १५ ॥ अब मेरी भुजासे छूटे हुए इस परिघको निवारण करो, ऐसा देवदेव शंख चक्र
 गदाधारीसे कहकर सबके देखते दैत्यने वह परिघ लोकेशपर फेंका ॥ १६ ॥ कृष्णने उसको भुजासे ग्रहण कर कहा अब तुझको मारा और खड्गसे
 उसके खण्ड खण्ड कर डाले ॥ १७ ॥ तब उस दैत्यने सौ शाखका महावृक्ष उखाड़कर उससे हरिको ताडन किया ॥ १८ ॥ उसकोभी श्रीकृष्णने तिलकी
 बराबर खण्ड कर दिया इस प्रकार माधव बहुत कालतक दैत्यके साथ क्रोडा करके ॥ १९ ॥ तीक्ष्ण बाण लेकर दैत्यके मारनेकी इच्छा करने लगे,
 वारयेनं महाबाहो परिघं बाहुनिःसृतम् ॥ इत्युक्त्वा देवदेवेशं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥ चिक्षेप दैत्यो लोकेशं सवलोकस्य पश्यतः ॥ १६ ॥
 तं गृह्य बाहुना कृष्णो हतोऽसीति वदन् हरिः ॥ खण्डशः कारयामास खड्गेन निशितेन ह ॥ १७ ॥ उत्पाट्य वृक्षं दैत्येशः शतशाखं
 महाशिखम् ॥ तेन संपोथयामास विष्टरश्रवसं विभुम् ॥ १८ ॥ छित्त्वा तं चापि खड्गेन तिलशश्च चकार ह ॥ विक्रीड्य सुचिरं
 विष्णुस्तेन दैत्येन माधवः ॥ १९ ॥ हन्तुमेच्छतदा दैत्यमादाय निशितं शरम् ॥ आग्नेयास्त्रेण संयोज्य जघानेनं महान् हरिः ॥ २० ॥
 संदह्य स शरो दैत्यं सर्वलोकस्य पश्यतः ॥ यथापूर्वं जगामाशु करं भगवतः पुनः ॥ २१ ॥ हतशिष्टास्ततो दैत्याः पलायन्तो दिशो
 दृश ॥ अद्यापि न निवर्तन्ते गच्छन्तो वै महोदाधिम् ॥ २२ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरि० भवि० हंसडिम्भकोपाख्याने कृष्णस्योत्कर्ष-
 वर्णनं नाम त्रयोविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ बलदेवस्तु धर्मात्मा धनुरादाय सत्वरम् ॥ जघान
 हंसं दशभिर्बाणैर्बाणभृतां वरः ॥ १ ॥ तं प्रत्यविध्यन्नाराचैर्हंसः पञ्चभिराशुगैः ॥ तानन्तरे हला छित्त्वा नाराचैर्दशभिः पुनः ॥ २ ॥
 और उसे आग्नेयास्त्रसे संयुक्त कर मारा ॥ २० ॥ सब लोकके देखते उससे वह रत्य भस्म हो गया और वह अब फिर भगवान् के हाथमें आ
 गया ॥ २१ ॥ मरनेसे शेष रहे दैत्य दशों दिशाओंको भाग गये वे समुद्रमें गये आजतक नहीं लौटे हैं सागरमें चले गये ॥ २२ ॥ इति श्रीमहाभारते
 खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसडिम्भकोपाख्याने कृष्णस्योत्कर्षवर्णनं नाम त्रयोविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२३ ॥ वैशम्पायन बोले,
 धर्मात्मा बलदेवजी शीघ्र धनुष लेकर दश बाणोंसे हंसको ताडन करते हुए ॥ १ ॥ हंसने उनको पांच बाणोंसे विद्ध किया दश बाणोंसे बलरामजीने

उनको छेदन कर दिया ॥ २ ॥ और हंसके मस्तकमें नाराचोंका प्रहार किया वह दृढ बाण गिरकर उसकी संज्ञाको हरता हुआ तब वह बहुत कालतक रथमें स्थित होकर संज्ञाको प्राप्त हो बाण ग्रहण करता हुआ ॥ ३ ॥ और संज्ञाको प्राप्त हो उस बाणसे यदुवीरको विद्ध किया और देवताओंको विस्मय कराता हुआ सिंहकी समान गर्जने लगा ॥ ४ ॥ तब क्रोधको प्राप्त हुए हली उस बाणने विद्ध होकर रुधिर वमन करते हुए ॥ ५ ॥ लोहितवर्णका शरीर हो जानेसे कुंकुमसे रंगेकी समान हो गये, तब युद्धमें स्थित सौ सहस्र बाणोंसे बलरामजीने उसको अर्दित किया ॥ ६ ॥ इस प्रकार बलरामजीने हंसगतिवाले

नाराचेनाशु विव्याध ललाटे हंसमोजसा ॥ दृढं पतन्स नाराचस्तस्य संज्ञां समाददे ॥ रथोपस्थे चरं स्थित्वा तूणाद्वाणं समा-
ददे ॥ ३ ॥ लब्ध्वा हंसः स संज्ञां तु विद्धा तेन यदूत्तमम् ॥ सिंहवद्व्यनदद्वंसो देवान्निस्मापयन् रणे ॥ ४ ॥ ततः क्रुद्धो हली
विद्धस्तेन बाणेन माधवः ॥ वमञ्छ्रेणितमत्युष्णं निश्वासश्च रणाजिरे ॥ ५ ॥ लोहिताविष्टगात्रस्तु कुङ्कुमाद्रं स्थाभवत् ॥ नाराचैः
शतसाहस्रैरर्दयामास माधवः ॥ ६ ॥ हंसं हंसगतिं वरिं नीलवासा हलायुधः ॥ ते मुक्ता निशिता घोरा नाराचाश्च सुवाजिनः ॥ ७ ॥
रथे ध्वजे तथा चापे चक्रे तूणीद्वये नृप ॥ पतिताः सर्वतो राजन् व्यथां चैव तथा ददुः ॥ ८ ॥ ततः क्रुद्धो महाराज हंसो वीर्य-
मदान्वितः ॥ शूरेण हलिनं विद्धा ध्वजं चिच्छेद् कालवित् ॥ ९ ॥ शूरेश्चतुर्भिरश्वाश्च सूतं प्रेताधिपं ददौ ॥ ततः क्रुद्धो हली तस्मै
गदां गृह्य महारणे ॥ १० ॥ आपपात महाबाहुर्हंसं शेष इव श्वसन् ॥ तथा रथं ध्वजं चक्रमश्वान्सूतं हलायुधः ॥ बभञ्ज तिलशः
सर्वं ननाद च पुनः पुनः ॥ ११ ॥ भूयश्च गदया हंसं चिक्षेप च बली किल ॥ सोऽपि हंसो गदां गृह्य रथात्तस्माद्वापतत् ॥ १२ ॥

वीर हंसको विद्ध किया, वे शीघ्रगामी नाराच उनके धनुषसे निकलकर ॥ ७ ॥ रथ ध्वजा चाप केतु दोनों तरफसमें चारों ओरसे पतित हो उसको व्यथित करने लगे ॥ ८ ॥ हे महाराज ! तब वीर्य और मदसे युक्त हंस बड़ा क्रोधित हुआ एक बाणसे बलरामको वेध कर उनकी ध्वजा छेदन कर दी ॥ ९ ॥ चार बाणोंसे घोड़ों और सारथिकों को मार डाला तब बलरामजीने क्रोध कर गदा ग्रहण की ॥ १० ॥ और श्वास लेते हुए हंसपर झपटे उससे बलरामजीने रथ ध्वजा रथके पहिये घोड़े सारथिकों तिलकी समान खण्ड खण्ड कर बारंवार शब्द किया ॥ ११ ॥ और फिर गदा लेकर हंसके मारी और हंस गदा लेकर रथसे

उतरा ॥ १२ ॥ तब वे महाबली दोनों युद्ध करने लगे वे महाबली महातेजस्वी लोकमें विख्यात ॥ १३ ॥ अतिअद्भुत विक्रान्त परस्पर वधकी इच्छा करनेवाले अम किये हंसकी समान गमन करनेवाले ॥ १४ ॥ ऐसे युद्ध करने लगे जैसे देवासुरके संग्राममें इन्द्रका और वृत्रासुरका संग्राम हुआ था दोनोंके रुधिरसे शरीर संसक्त हो गये ॥ १५ ॥ और युद्धमें महाखेदित हो गये, तब बलरामजी दक्षिणमार्गसे चलने लगे ॥ १६ ॥ और हंसने सव्यमार्ग ग्रहण किया और हाथीकी समान विक्रमवाले युद्धमें प्रहार करने लगे ॥ १७ ॥ और अपने पूर्णबलसे एक दूसरेको प्रहार करने लगे, देवासुरके युद्धकी ततस्तौ हंसहलिनो युयुधाते महारणे ॥ महारथो महाबाहू लोके प्रथिततेजसो ॥ १३ ॥ अत्यद्भुतं सुविक्रान्तौ परस्परवधेषिणो ॥ कृतश्रमो महायुद्धे हंसविक्रान्तगामिनो ॥ १४ ॥ यथा देवासुरे युद्धे शक्रवृत्रो पुराम्बरे ॥ उभौ संसक्तसर्वाङ्गौ शोणितेन महारणे ॥ १५ ॥ अत्यन्तस्वेदिनो युद्धे परस्परबलेन ह ॥ ततश्च दक्षिणं मार्गं बलभद्रोऽन्वगच्छत ॥ १६ ॥ सव्यं तु हंसो राजेन्द्रो व्यगृह्णात्स्वयमेव हि ॥ पोथयाञ्चक्रतुर्युद्धे गदाभ्यां गजविक्रमो ॥ १७ ॥ यथाप्राणं महाबाहू जघ्नतुर्मरणाय तो ॥ अतिप्रवृद्धं संग्रामं देवासुररणोपमम् ॥ १८ ॥ विदधाते महारङ्गे पश्यतां त्रिदिवौकसाम् ॥ देवाश्च मुनयश्चैव विस्मयं परिजग्मिरे ॥ १९ ॥ अहो खल्वीदृशं युद्धं दृष्टं पूर्वं न च श्रुतम् ॥ इत्युचुर्विस्मयवशाद्देवगन्धर्वकिन्नराः ॥ २० ॥ परस्परकृतोत्साहो चक्रतुर्युद्धमुत्तमम् ॥ अथ हंसो महारङ्गे दक्षिणं दक्षिणोत्तमः ॥ २१ ॥ व्यचरन्मार्गमत्यर्थं सव्यं तु बलवान्बलः ॥ निकुञ्च्य जातुनी पूर्वं चक्रतुर्गदया भृशम् ॥ रणे रणविदां श्रेष्ठो पश्यतां त्रिदिवौकसाम् ॥ २२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकपोख्यानं हंसबलभद्रयुद्धे चतुर्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२४ ॥

समान युद्ध होने लगा ॥ १८ ॥ देवता उस युद्धको देखने लगे देवता और मुनि सब विस्मित हो गये ॥ १९ ॥ अहो हमने ऐसा युद्ध कभी नहीं देखा था; यह विस्मित हो देवता गन्धर्व किन्नर कहने लगे ॥ २० ॥ परस्पर उत्साहसे युद्ध करने लगे फिर युद्धमें हंस बाहू ओरसे, बलराम दक्षिण ओरसे युद्ध करने लगे ॥ २१ ॥ बलरामजी सव्य मार्ग चलने लगे जांच सकोड बडे वेगसे गदाप्रहार करने लगे इस प्रकार युद्धमें उन युद्ध करनेवालोंमें श्रेष्ठको देवता देखने लगे ॥ २२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसबलभद्रयुद्धवर्णनो नाम चतुर्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२४ ॥

वैशम्पायन बोले, इधर डिम्भक और सात्याकिका महायुद्ध होने लगा वह दोनों वीर युद्धमें विख्यात थे ॥ १ ॥ युद्धविद्यामें महानिपुण वृद्धोंकी सेवा किये हुए थे सात्याकिने वेदपारगामी डिम्भकको दश बाण ॥ २ ॥ मारकर उसे विद्ध किया और तीक्ष्ण बाणोंसे इन्हको विद्ध किया उस बलीसे क्षत्रियग्रेष्ठ डिम्भक विद्ध होकर ॥ ३ ॥ पांच सहस्र बाणोंसे युद्धमें उसे विद्ध करने लगा, उनको बीचमेंही सात्याकिने कट दिया और बड़ा शब्द किया ॥ ४ ॥ और क्रोधकर सात बाणोंसे राजाको विद्ध किया फिर उस डिम्भकने लक्ष बाणोंसे सात्याकिको विद्ध किया ॥ ५ ॥ तब क्रोधकर सात्याकिने उसका वैशम्पायन उवाच ॥ युद्धं चक्रतुरत्यर्थं ततो डिम्भकसात्यकी ॥ तावुभौ बलिनौ वीरो विख्याते क्षत्रियेषु च ॥ १ ॥ कृतश्रमो महायुद्धे सततं वृद्धसेविनौ ॥ सात्यकिर्दशभिर्बाणैः डिम्भकं वेदपारगम् ॥ २ ॥ अविध्यन्निशितैर्बाणैस्तेन वृक्रे तयोरसि ॥ स तेन विद्धो बलिना डिम्भकः क्षत्रियोत्तमः ॥ ३ ॥ नाराचैः पञ्चसाहस्रैर्विव्याध युधि गर्वितः ॥ तान्तरे वृष्णिवीरो निषिद्धन्निनदन् ब्रुवन् ॥ ४ ॥ अथ क्रुद्धो नृपवरो विद्धः सप्तभिराशुगैः ॥ पुनः शतसहस्रेण प्रत्यविध्यत सात्यकिम् ॥ ५ ॥ सात्यकिस्त्वय विक्रान्तो धनुश्चिच्छेद तस्य तत् ॥ अर्धचन्द्रेण तीक्ष्णेन डिम्भकस्य स यादवः ॥ ६ ॥ आजग्रे डिम्भको वीरश्चापमादाय चापरम् ॥ क्षुरप्रेणाय रोद्रेण तैलघौतेन विक्रमा ॥ ७ ॥ स तेन विद्धो बाणेन वमञ्छोणितक्रं नृप ॥ अतीव शुशुभे राजन्वसन्ते किंशुको यथा ॥ ८ ॥ धनुश्चिच्छेद भूषस्तु गृहीतं यत्पुरा धनुः ॥ ततोऽन्यद्धनुरादाय डिम्भको यादवेश्वरम् ॥ ९ ॥ जघान निशितैर्बाणैः सर्वशत्रुस्य पश्यतः ॥ स धनुः पुनरत्युग्रं चिच्छेद युधि सात्यकिः ॥ १० ॥

धनुष छेदन कर दिया यह अर्धचन्द्र बाणसे छेदन किया ॥ ६ ॥ तब डिम्भकने और चाप लेकर सात्याकिको विद्ध किया उसने क्षुरेकी समान तीक्ष्ण बाणसे विद्ध किया ॥ ७ ॥ उस बाणसे विद्ध हो राजा शोणित वमन करने लगे, वसन्तमें टेसूके फूलके समान शोभित हुए ॥ ८ ॥ और वह उसका धनुष फिर छेदन कर दिया तब डिम्भकने दूसरा धनुष लेकर सात्याकिको ॥ ९ ॥ तीक्ष्ण बाणोंसे सब क्षत्रियोंके देखते, विद्ध किया, सात्याकिने फिर उसका धनुष छेदन कर दिया ॥ १० ॥

जब तीक्ष्ण बाणसे उस दुरात्माका धनुष छेदन किया तब बहुत शीघ्र उसने दूसरा धनुष लिया ॥ ११ ॥ और उससे सात्यकिको द्विद्ध किया. हे राजेन्द्र ! इस प्रकारसे १००० धनुष छेदन कर दिये ॥ १२ ॥ और सब क्षत्रियोंके सामने सात्यकि सिंहनाद करने लगा तब वीर डिंभक और सात्यकि धनुष त्यागन कर ॥ १३ ॥ खड्ग ग्रहण कर दोनों युद्ध करनेको तयार हुए, तब खड्गके युद्ध जाननेमें श्रेष्ठ सात्यकि और डिंभक ॥ १४ ॥ अर्थात् दुश्शासनका पुत्र महाभाग सोमदत्तका पुत्र महाबली अभिमन्यु और नकुल यह खड्गयुद्ध करनेवालोंमें श्रेष्ठ कहे हैं. हे राजन् ! इन छहोंमें यह युद्ध करनेवालोंमें श्रेष्ठ

शरेण तक्षिणपुङ्गेन डिम्भकस्य दुरात्मनः ॥ ततोऽन्यद्धनुरादाय सत्वरं स नृपोत्तमः ॥ ११ ॥ धनुषा तेन राजेन्द्र सात्यकिं विव्यधे पुनः ॥ एवं धनूषि राजेन्द्र शतं पञ्च च पञ्च च ॥ १२ ॥ छित्त्वा ननाद शैनेयः सर्वक्षत्रस्य पश्यतः ॥ धनुषी तौ परित्यज्य वीरो डिम्भकसात्यकी ॥ १३ ॥ खड्गौ प्रगृह्य चात्युग्रौ युद्धाय समुपस्थितौ ॥ तौ हि खड्गविदां श्रेष्ठौ वीरौ डिम्भकसात्यकी ॥ १४ ॥ दोःशासननिर्महाभागः सौमदत्तिस्तथैव च ॥ अभिमन्युश्च विक्रान्तो नकुलश्च तथैव च ॥ १५ ॥ एते खड्गविदां श्रेष्ठाः कीर्तिता युधि सत्तमाः ॥ एतेष्वेतौ नृपश्रेष्ठौ पट्सु वै नृपसत्तम ॥ १६ ॥ तावेतावसिना युद्धं चक्रतुर्गुदलालसौ ॥ भ्रान्तमुद्भ्रान्तमाविद्धं प्राविद्धं बाहुनिःसृतम् ॥ १७ ॥ आकरं विकरं भिन्नं निर्मर्यादममानुषम् ॥ संकोचितं कुलचितं सव्यजानु विजानु च ॥ १८ ॥ आहिकं चित्रकं क्षिप्तं कुसुम्बं लम्बनं धृतम् ॥ सर्वबाहुविनिर्बाहुः सव्येतरमथोत्तरम् ॥ १९ ॥ त्रिबाहुस्तुङ्गबाहुश्च सव्योन्नतमुदासि च ॥ पृष्ठतः प्रथितं चैव यौधिकं प्रथितं तथा ॥ २० ॥ इति प्रकारान् द्वात्रिंशच्चक्रतुः खड्गयोधिनौ ॥ पुनः पुनः प्रहरन्तौ न च श्रममुपेयतुः ॥ २१ ॥

हैं ॥ १५ ॥ १६ ॥ दोनों युद्धकी लालसासे खड्गयुद्ध करने लगे, भ्रान्त उद्भ्रान्त आविद्ध प्राविद्ध इत्यादि बत्तीस प्रकारके तलवारके हाथ घुमाते ॥ १७ ॥ आकर विकर भिन्नमर्याद अमानुष संकोचित कुलचित सव्यजानु विजानु ॥ १८ ॥ आहिक चित्रक क्षिप्त कुसुमलम्बन धृत सर्वबाहु निर्बाहु सव्येतर उत्तर ॥ १९ ॥ त्रिबाहु तुंगबाहु सव्य उन्नत उदासि पृष्ठकी और हाथ घुमाना यौधिक प्रथित ॥ २० ॥ इस ३२ प्रकारसे युद्ध करने लगे और बारंवार प्रहार

करकेभी श्रमको न प्राप्त हुए ॥ २१ ॥ हे महाराज ! इस प्रकार वे युद्धके निमित्त निश्चय किये थे, तब देवता गन्धर्व ऋषि ॥ २२ ॥ जय हो इस प्रकार उन परिश्रम करनेवालोंको संतुष्ट करने लगे इन दोनों बलशालियोंका बड़ा पराक्रम है ॥ २३ ॥ यह दोनों युद्ध करनेमें समर्थ धनुषविद्याके पारगामी हैं, एक शिवका और एक द्रोणाचार्यका शिष्य है ॥ २४ ॥ अर्जुन सात्याकि वासुदेव जगत्पति हे महाराज ! संग्राममें यह तीन महाविख्यात हैं ॥ २५ ॥ और डिम्भक कार्तिकेय शिव यह तीन महारथी हैं यह वीर्य और बलमें प्रसिद्ध हैं ॥ २६ ॥ इस प्रकार देव गन्धर्व सिद्ध यक्ष महोरग युद्ध देखनेकी

पुष्करस्थो महाराज युद्धाय कृतनिश्चयो ॥ ततो देवाः सगन्धर्वाः सिद्धाश्च परमर्षयः ॥ २२ ॥ तुष्टुवुस्तौ महाराज जये कृतपरिश्रमो ॥ अहो वीर्यमहो धैर्यमनयोर्बाहुशालिनोः ॥ २३ ॥ एतावेव रणे शक्तौ खड्गे धनुषि पारगौ ॥ एकः शिष्यो गिरीशस्य द्रोणस्यान्यो हि धीमतः ॥ २४ ॥ अर्जुनः सात्याकिश्चैव वासुदेवो जगत्पतिः ॥ त्रय एते महाराज प्रथिताः संगरे सदा ॥ २५ ॥ डिम्भकः शक्तिभृच्छर्व-स्रय एते महारथाः ॥ प्रसिद्धाः सर्व एवैते वीर्येषु च बलेषु च ॥ २६ ॥ इति ते देवगन्धर्वाः सिद्धा यक्षा महोरगाः ॥ दिवि स्थिताः समं ब्रूयुर्दृढदर्शनलालसाः ॥ २७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने पञ्चविंशत्याधिकशत-तमोऽध्यायः ॥ १२५ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ वसुदेवोऽग्रसेनौ च वृद्धौ युद्धे सुनिर्वृतौ ॥ जराजरितसर्गाङ्गौ पलिताङ्गशिरोरुहौ ॥ १ ॥ ज्ञानविज्ञानसंपन्नौ राजमार्गविशारदौ ॥ युयुधाते महारङ्गे राक्षसेन दुरात्मना ॥ २ ॥ शरेरनेकसाहस्रैर्दध्यामासतू रणे ॥ राक्षसेन्द्रं दुरात्मानं हिडिम्बं पुरुषादकम् ॥ ३ ॥

इच्छासे आकाशमें स्थित हुए कहने लगे ॥ २७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसडिम्भकोपाख्याने पञ्चविंशत्याधिकशत-तमोऽध्यायः ॥ १२५ ॥ वैशम्पायन बोले, वसुदेव और अग्रसेन दोनों युद्धमें बड़े पराक्रमको प्राप्त हुए जरासे सर्गांग जर्जरित और श्वेतबालवाले ॥ १ ॥ ज्ञान विज्ञानमें तत्पर राजमार्गके जाननेवाले उस महायुद्धमें राक्षसके साथ युद्ध करते थे ॥ २ ॥ और सहस्रों बाणोंसे युद्धमें उस राक्षसको अर्द्धित

करने लगे वह पुरुषमक्षी दुरात्मा हिडिम्ब राक्षस था ॥ ३ ॥ वह हिडिम्ब राक्षस सब ओरसे यदुवंशियोंको मक्षण करता था वह दुष्टात्मा लम्बी भुजा और लम्बी ठोड़ीवाला महवृद्धिको प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥ लम्बोदर विरूपाक्ष पीले केश और नेत्र श्येनकेसी नासिका, महामयंकर, ऊर्ध्वरोमा, महाभुज ॥ ५ ॥ पर्वताकार शरीर, दीर्घ डाढ़ों, गीदड़केसा मुख, लम्बोदर, दीर्घदन्त, जगत्के ग्रास करनेमें तत्पर ॥ ६ ॥ ऊंचे कंधेवाला, बड़ी छाती लम्बी गरदन हाथीकी समान, बड़ा मांसके लोढ़ोंको खाता, रुधिरपान करता हुआ ॥ ७ ॥ हाथियोंसे हाथियोंको घोंड़ोंसे घोंड़ोंको रथोंसे रथोंको

हिडिम्बो राक्षसेन्द्रस्तु भक्षयन्सर्वतो नरान् ॥ अतिप्रवृद्धो दुष्टात्मा लम्बबाहुर्महाहनुः ॥ ४ ॥ लम्बोदरो विरूपाक्षः पिङ्गकेशो विलोचनः ॥ श्येननासो महारौद्र ऊर्ध्वरोमा महाभुजः ॥ ५ ॥ पर्वताकारवर्णा च दीर्घदंष्ट्रः शिवाननः ॥ लम्बोदरो दीर्घदन्तो जगद्ग्रासपरस्तथा ॥ ६ ॥ उत्तुङ्गासो महोरस्करो दीर्घग्रीवो गजोपमः ॥ भक्षयन्मांसपिष्टकं पिबन् शोणितसंचयम् ॥ ७ ॥ गजान्नागैः समाहत्य हयैरश्वात्रपोत्तम ॥ रथात्रयैः समाहत्य सादिनः सादिभिस्तथा ॥ ८ ॥ मनुष्यान्तः पुरो दृष्ट्वा नास्यग्रासं चकार सः ॥ कांश्चिद्धृत्वा महाराज वृष्णिपालान्समन्ततः ॥ ९ ॥ भक्षयामास सहसा हिडिम्बः पुरुषादकः ॥ यान्पश्यन्पुरतो रक्षस्तान् जघान विरूपधृक् ॥ १० ॥ भक्षयन्नपरान्वृष्णिन्यादवान् राक्षसेश्वरः ॥ चिक्षेप सहसा कांश्चिद्धिडिम्बः पुरुषादकः ॥ ११ ॥ अन्तकाले यथा क्रुद्धो रुद्रः प्राणभृत्तो नृपः ॥ क्षणेनैकेन सर्वास्तान्भक्षयामास राक्षसः ॥ १२ ॥ केचिद्भीता दिशः प्रापुर्वृष्णयो वीर्यशालिनः ॥ केचित्तु भक्षितास्तेन रक्षसा वृष्णिपुङ्गवाः ॥ १३ ॥

सवारोंको सवारोंसे मारता हुआ ॥ ८ ॥ आगे मनुष्योंको देखकर नासिकासेही श्वासके द्वारा ग्रस लेता था, किसीको पकड़कर निगल जाता था. हे महाराज ! इस प्रकार अनेक वृष्णिवंशियोंको ॥ ९ ॥ खाने लगा जिसको उसने आगे देखा उसीका वध किया विरूपधारे ॥ १० ॥ दूसरे वृष्णिवंशी और यादवोंको वह राक्षस खाने लगा, और किसीको वह हिडिम्ब फेंकने लगा ॥ ११ ॥ अन्तकालमें क्रोधकर रुद्र जैसे प्रजाका संहार करते हैं, इस प्रकार वह क्षणमात्रमें सबको मक्षण करने लगा ॥ १२ ॥ कोई बली वृष्णि डरकर दिशाओंमें भाग गये, और किन्हींको वह

राक्षस भक्षण कर गया ॥ १३ ॥ हे राजन् ! जिस प्रकार कुंभकर्णने वानरोंको भक्षण किया था इस प्रकार वह यादवोंकी सेनाको भक्षण करने लगा ॥ १४ ॥ चित्रगढकी समान यादवी सेना निश्चेष हो गई तब दोनों वृद्ध यादव क्रुद्ध हुए और महाघोर धनुषको ग्रहण कर राक्षसके सन्मुख हुए ॥ १५ ॥ जैसे सिंहके सन्मुख मृग होते हैं तब वह महाराक्षस मुख फैलाकर उन दोनोंके ऊपर दौड़ा ॥ १६ ॥ और पातालकी समान मुख फैलाये खानेकी इच्छा करने लगा और भक्षण करता हुआ रथसे धावमान हुआ ॥ १७ ॥ तब उन दोनों वीरोंने बाणोंसे उसका मुख पूर्ण कर कुम्भकर्णों यथा राजन्भक्षयामास वानरान् ॥ (निःशेषं वृष्णिसेन्यं तु चक्रार पुरुषादकः) ॥ १४ ॥ निश्चेष्टं वृष्णिसेन्यं तु स्थितं चित्रगढे यथा ॥ एतस्मिन्नन्तरे क्रुद्धो वृद्धो यादवपुङ्गवो ॥ धनुर्गृह्य महाघोरं राक्षसस्य पुरः स्थितौ ॥ १५ ॥ यथा क्रुद्धस्य सिंहस्य मृगो वृद्धतमाविव ॥ व्यादायास्यं महारक्षस्तो वृद्धावभ्यधावत ॥ १६ ॥ चित्वादिषुर्वैरूपाक्षः पातालतलसन्निभः ॥ ततोऽरथः पर्यधावत्खादन् खादन्कलेवरम् ॥ १७ ॥ पूरयामासतुर्वीरो शरैर्यदुवृषौ नृप ॥ हिडिम्बस्य महाघोरं व्यादितास्यमिवान्तकम् ॥ १८ ॥ सर्वास्तान्वारयामास देवशत्रुर्विरूपधृक् ॥ धावति स्म ततो रक्षो व्यादितास्यं भयानकम् ॥ १९ ॥ तथोर्गृहीत्वा धनुषी बभञ्ज युधि सत्वरम् ॥ बाहू प्रसार्य दुष्टात्मा राक्षसो विकृताननः ॥ २० ॥ वसुदेवं महीपालं राजानं वृद्धसेविनम् ॥ ग्रहीतुं राक्षसश्रेष्ठो यतते नृपसंसदि ॥ २१ ॥ हिडिम्ब उवाच ॥ एष वां भक्षयिष्यामि वसुदेवं त्वया सह ॥ उग्रसेन किमर्थं त्वं तिष्ठसे मत्पुरोगमः ॥ २२ ॥ आगच्छ प्रविशास्यं मे आसभूतो तु वां मम ॥ विधिना निर्मितो वृद्धो वसुदेवो हरेः पिता ॥ २३ ॥ दिया वह हिडिम्बका मुख बड़ा घोर था ॥ १८ ॥ उस देवशत्रु विह्वले उन सबको निवारण किया और प्रधानक मुख फैलाये वह राक्षस धावमान होने लगा ॥ १९ ॥ और उन दोनोंके धनुष लेकर बहुत शीघ्र तोड़ डाले और वह दुष्टात्मा राक्षस बाहें फैलाकर ॥ २० ॥ वसुदेव राजा वृद्धसेवीको ग्रहण करनेकी इच्छा राजाके सन्मुख करने लगा ॥ २१ ॥ हिडिम्ब बोला, हे वसुदेव ! मैं अभी तुम्हारे साथ उग्रसेनके खानेकी इच्छा करता हूं मेरे सामने उग्रसेनकी क्या सामर्थ्य है ॥ २२ ॥ आओ तुम मेरे मुखमें प्रवेश कर जाओ हरिके पिता वसुदेवको मेरे मुखमें आनेके

निमित्त परमात्माने कल्पित कर दिया है ॥ २३ ॥ मैं शीघ्र विक्रमी भूखा भ्रमसे आतं हो रहा हूं मेरे मुखमें शीघ्र प्रवेश करो अब तुम जा नहीं सकते ॥ २४ ॥ तुम दोनोंका रुधिरपान कर मैं शान्त हो जाऊंगा, और पीछे तुम दोनों वृद्धोंका मांस खाऊंगा ॥ २५ ॥ यह कहकर उस महाठो-
ढीवाले राक्षसने खानेको मुख फैलाया, और राक्षसेश्वर उन्हे खानेको दौड़ा ॥ २६ ॥ तब उग्रसेन और वसुदेव भयभीत हो सब ओर देखने लगे,
और शस्त्ररहित हो वहांसे पृथक् हो गये ॥ २७ ॥ इस अवसर प्रतापवान् बलरामजीने उग्रसेन वसुदेवजीको इस प्रकार देखकर ॥ २८ ॥ हंससे

बुभुक्षितः श्रमार्तश्च युद्धे त्वरितविक्रमः ॥ मन्मुखान्नेव गच्छेतां प्रविशेतां त्वरान्वितो ॥ २४ ॥ युवयोः शोणितं पीत्वा तृप्तिं
यास्यामि निर्वृतः ॥ खादामि च पुनर्मांसं वृद्धयोर्युवयोः सुखम् ॥ २५ ॥ इति ब्रुवंस्तथा रक्षो व्यादितास्यं महाह्रु ॥ धावति स्म
तदा क्षिप्रं हिडिम्बो राक्षसेश्वरः ॥ २६ ॥ वसुदेवोऽग्रसेनौ च भीतो विप्रेक्ष्य सर्वतः ॥ दिशोऽभ्यभजतां राजन्निःशस्त्रैर्वाण-
पुङ्गवो ॥ २७ ॥ एतस्मिन्नन्तरे दृष्ट्वा बलभद्रः प्रतापवान् ॥ दृष्ट्वा च तो तथाभूतो वसुदेवोऽग्रसेनको ॥ २८ ॥ वासुदेवे समीदृश्य
हंसं युध्यन्तमीश्वरे ॥ निर्गत्य चान्तरं तस्य राक्षसस्य दुरात्मनः ॥ २९ ॥ मा कृथाः साहसं रक्षो मुञ्चेतो राजसत्तमो ॥ स्थितोऽ-
स्मि युध्यतां रक्षो मया शूत्रान् जिघांसता ॥ ३० ॥ अहमेव हनिष्ये त्वां का चेयं तव भीषिका ॥ इति ब्रुवाणं हलिनं तो विसृज्य
महारणे ॥ ३१ ॥ महानयमसौ दुष्टो भक्षयाम्येनमग्रतः ॥ विदार्य पूर्ववद्भक्तं बलभद्रमुपाद्रवत् ॥ ३२ ॥ विसृज्य सशरं चापं
राक्षसस्य पुरः स्थितः ॥ मुष्टिं प्रगृह्य बलवान्स्फोटयन्बाहुमुत्तमम् ॥ ३३ ॥

युद्ध करनेको वासुदेवसे कहकर और उस दुरात्मा राक्षसके बीचमें प्राप्त हो बोले ॥ २९ ॥ हे राक्षस ! इन्हे छोड़ साहस मत कर मैं स्थित हूं मुझ
शत्रुनाशक करबेवाले साथ युद्ध कर ॥ ३० ॥ मैं तुझको वध करूंगा तुझसे क्या भय है बलरामजीको ऐसा कहते देख महायुद्धमें वह उन दोनोंको
छोडकर ॥ ३१ ॥ यह कुदिल महाअनयसंपन्न है पहिले इसेही भक्षण करूं, यह कह मुख फैलाकर बलरामके सन्मुख धावमान हुआ ॥ ३२ ॥ वहभी
शरचापको छोडकर राक्षसके सन्मुख स्थित हुए, और घूंसा बनाकर अपनी भुजाको ठोकते हुए ॥ ३३ ॥

ह. वं.

॥ २५७ ॥

तव दुष्टात्मा हिडिम्बकनेमी घुंसा उठाकर कालकी समान घुंसा बलरामजीकी छातीमें यास ॥ ३४ ॥ क्रोधकर बलरामजीको मुष्टिसे उसने मारा और बलरामजीने राक्षसको मारा ॥ ३५ ॥ उस समय नर और राक्षस वीरका मुष्टियुद्ध होने लगा और दोनों युद्धभूमिमें युद्ध करते रहे ॥ ३६ ॥ उन दोनोंके घुंसाका चटचटा शब्द होने लगा तब राक्षसराजने संग्राममें रामको घुंसेसे ॥ ३७ ॥ छातीमें मारा जैसे इन्द्र वज्र मारे तब बलरामजीनेभी यत्नसे घुंसा बनाकर ॥ ३८ ॥ देवशत्रु हिडिम्बकी छातीमें मारा तब रामने तलमहार उस राक्ष-

हिडिम्बस्त्वथ दुष्टात्मा मुष्टिं कृत्वा भयानकाम् ॥ जघान वक्षो रामस्य व्यादितास्य इवान्तकः ॥ ३४ ॥ क्रुद्धोऽथ बलभद्रस्तु मुष्टिना तेन ताडितः ॥ जघान मुष्टिना तेन राक्षसेशमनिन्दितः ॥ ३५ ॥ मुष्टियुद्धं समभवन्नरराक्षसवीरयोः ॥ युद्धयतोर्युद्धरंगेऽथ नरराक्षससिंहयोः ॥ ३६ ॥ तयोश्चटचटाशब्दः प्रादुरासीद्भयानकः ॥ अथ राक्षसराजस्तु मुष्टिना राममाहवे ॥ ३७ ॥ जघान वक्षोदेशे तु वज्रेणैव पुरंदरः ॥ अथ रामो बली साक्षान्मुष्टिं संवर्त्य यत्नतः ॥ ३८ ॥ हिडिम्बं ताडयामास वक्षस्यमराविद्विषम् ॥ तलाभ्यामथ रामस्तु वक्त्रे हत्वा स राक्षसम् ॥ ३९ ॥ आहतस्तलघातेन हिडिम्बो राक्षसेश्वरः ॥ जानुभ्यामपतद्भूमौ गतासुर्वीर-राक्षसः ॥ ४० ॥ तत उत्पाद्य रामस्तु दोभ्यां संगृह्य राक्षसम् ॥ आदाय बाहुवेगेन भ्रामयित्वा पदात्पदम् ॥ ४१ ॥ व्याविध्यत्सुचिरं रामो दर्शयन्नात्मनो बलम् ॥ उत्क्षिप्य राक्षसेन्द्रं तं सर्वलोकस्य पश्यतः ॥ ४२ ॥ गन्धूतिमात्रं चिक्षेप ततो देशादलायुधः ॥ गतासु राक्षसश्रेष्ठस्ततो देशान्निराक्रमत् ॥ ४३ ॥ ये केचिद्राक्षसास्तत्र हतशेषा महारणे ॥ बलभद्रात्ततो भीता जग्मुश्चैवं दिशो दश ॥ ४४ ॥

सके मुखमें किया ॥ ३९ ॥ राक्षसपति तलके आघातसे ताडित होकर गतासु हो जंवाके बल पृथ्वीमें गिरा ॥ ४० ॥ तब बलरामजीने भुजाओंसे बली राक्षसको पकडकर बड़े वेगसे घुमाया ॥ ४१ ॥ और अपना बल दिखाकर उसे महाताडित कर सर्वके देखते २ दूर फेंक दिया ॥ ४२ ॥ और उन महाबलीने उस राक्षसको दो कोसपर फेंक दिया प्राणरहित हो राक्षसश्रेष्ठ उस देशसे पृथक् हो गया ॥ ४३ ॥ जो वहां राक्षस थे वे हत होकर बल-

भा. टी.

प. ३५. १२६

॥ २५७ ॥

रामके डरसे दशों दिशाओंमें भाग गये ॥ ४४ ॥ तब अंशुमाली भगवान् सूर्य अपना तेज संहार कर प्रजाओंके चक्षुओंका प्रकाश हरण करते अस्त हुए और कुछ अंधकार छाने लगा ॥ ४५ ॥ जब प्रजापति जगत्के गुरु सूर्य विश्वमुख सानरमें प्रविष्ट हुए, उस समय संध्याके अन्धकारको दूर करता चन्द्रमा उदय हुआ ॥ ४६ ॥ हे राजन् ! फिर प्रातःकालमें उठकर राजा कहने लगे कि गोवर्द्धनमें युद्ध करना श्रेष्ठ है जहां किन्नरोंके गीतोंका शब्द होता है, ऐसा कहकर वे सब गोवर्द्धनको गमन करने लगे ॥ ४७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि प्रापायां हंसडिम्भकोपाख्याने

अथांशुमाली भगवान् दिनेशः संहृत्य तेजांसि सहस्ररश्मिः ॥ अस्तं ययौ चक्षुरपि प्रजानामीषत्तमश्चापि समाविवेश ॥ ४५ ॥ तस्मिन्प्रविष्टेऽथ समुद्रतोयं प्रजापतौ विश्वमुखे जगद्गुरौ ॥ नक्षत्रनाथः समुपाजगाम संध्यातमोऽपि व्यनश्चतुर्पोत्तम ॥ ४६ ॥ प्रभातकाले नृपसत्तमो रणो गोवर्द्धने किन्नरगीतनादिते ॥ इति ब्रुवन्तो नृपसत्तमास्तदा व्युपारमंस्तत्र रणोत्सवे नृप ॥ ४७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने हिडिम्बपराभवो नाम षड्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ उभौ तौ हंसडिम्भको रात्रावेव महागिरिम् ॥ जग्मतुः सहितौ राजन् गोवर्द्धनमथो नृप ॥ १ ॥ अथ प्रभाते विमले सूर्ये चाभ्युदिते सति ॥ गोवर्द्धनं जमामाशु केशवः केशिसूदनः ॥ २ ॥ शैनेयो बलभद्रश्च यादवाः सारणादयः ॥ गन्धर्वैरप्सरोग्भिश्च नादितं बहुधा गिरिम् ॥ ३ ॥ जग्मतुः सहितौ राजन् गोवर्द्धनमथो गिरिम् ॥ गोधनैरथ सैन्यैश्च नादितं बहुधा गिरिम् ॥ ४ ॥ तस्योत्तरं नृपश्रेष्ठ पार्श्वे संप्राप्य यादवाः ॥ निकषा यमुनां राजंस्ततो युद्धमवर्तत ॥ ५ ॥

हिडिम्बपराभवो नाम षड्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२६ ॥ वैशम्पायन बोले, वे दोनों हंस और डिम्भक रात्रिमेंही महागिरि गोवर्द्धनको चले ॥ १ ॥ फिर विमल प्रातःकाल होनेसे केशिसूदन केशवजी गोवर्द्धनको चले ॥ २ ॥ शैनेय बलभद्र सारण आदि यादव चले गन्धर्व और अप्सराओंसे वह पर्वत शब्दायमान था ॥ ३ ॥ तथा गोधनादिके शब्दोंसेभी वह पूर्ण था, हे राजन् ! इस प्रकारसे वे गोवर्द्धन पर्वतको गये ॥ ४ ॥ हे राजन् ! वह यादव

उसके उत्तर पार्श्वमें प्राप्त होकर यमुनाके किनारे युद्ध करने लगे ॥ ५ ॥ हंस डिम्बकने वसुदेवको सात बाणोंसे विद्ध किया पच्चीससे सारण और दशसे कंकको विद्ध किया ॥ ६ ॥ फिर हंस डिम्बकका यादवोंके संग संग्राम होने लगा उग्रसेनने ७३ बाण ॥ ७ ॥ विराटने तीस सात्याकिने सात विपृथुने ८० उद्धवने दश प्रद्युम्नने तीस साम्बने सत्तर अनाधृष्टिने ७१ बाण मारे ॥ ८ ॥ ९ ॥ उस प्रकार वे पराक्रम प्रकाश करके युद्ध करने लगे वे सब यादव अतिअद्भुत महाघोर युद्ध करने लगे ॥ १० ॥ वासुदेवके देखते उन दोनोंसे युद्ध होने लगा. हे महाराज ! बलदर्पित वे सब युद्ध करने विव्याध हंसडिम्बकौ वसुदेवश्च सप्तभिः ॥ सारणः पञ्चविंशत्या दशभिः कङ्क एव च ॥ ६ ॥ हंसेन डिम्बकेनाथ यादवैश्च समन्ततः ॥ उग्रसेनस्त्रिसप्तत्या शराणां नतपर्वणाम् ॥ ७ ॥ विराटस्त्रिंशता राजन्सात्यकिश्चापि सप्तभिः ॥ अशीत्या विपृथू राजसुद्धवो दशभिः शरेः ॥ ८ ॥ प्रद्युम्नस्त्रिंशता राजन्साम्बश्चापि च सप्तभिः ॥ अनाधृष्टिस्त्वेकषष्ट्या शराणां नतपर्वणाम् ॥ ९ ॥ एवं वै सहिता राजन्श्चक्रयुद्धमदीनवत् ॥ अत्यद्भुतं महाघोरं यादवाः सर्व एव हि ॥ १० ॥ चक्रुस्ताभ्यां महायुद्धं वासुदेवस्य पश्यतः ॥ सर्वानपि महाराज यादवान्बलदर्पितान् ॥ ११ ॥ तावुभौ हंसडिम्बकौ नृपांस्तान्प्रत्यविध्यताम् ॥ प्रत्येकं दशभिर्विद्धा बाणैर्निशितको मलेः ॥ १२ ॥ जग्नतुश्च शरेस्तीक्ष्णैरत्यर्थं यादवेश्वरान् ॥ व्यथिताः सर्व एवैते वमन्तः शोणितं बहु ॥ १३ ॥ माधवे किंशुका राजन्पुष्पिता इव ते बभुः ॥ भीताश्च यादवा राजन्पलायनपरायणाः ॥ १४ ॥ एतस्मिन्नन्तरे राजन्वसुदेवात्मजो नृप ॥ वासुदेवो हली युद्धे प्रमुखे धन्विनो तयोः ॥ १५ ॥ चक्रतुर्युद्धमतुलं स्कन्दशक्राविवाम्बरे ॥ तयोरेव सगन्धर्वाः सिद्धा यक्षा महर्षयः ॥ १६ ॥ लगे ॥ ११ ॥ वे हंस और डिम्बक उन राजोंको विद्ध करके प्रत्येकको तीक्ष्ण बाणोंसे वेध कर ॥ १२ ॥ तीक्ष्ण बाणोंसे यादवेश्वरोंको विद्ध करने लगे वे सब व्यथित हो अधिरवमन करने लगे ॥ १३ ॥ और चैतके महीनेमें टेसूके फूलकी समान शोभित हुए और भीत होकर यादव भागनेकी इच्छा करने लगे ॥ १४ ॥ हे राजन् ! उसी समय श्रीकृष्ण और बलराम युद्धमें उन दोनों धनुषधारियोंके साथ ॥ १५ ॥ इन्द्र और स्कन्दकी समान आकाशमें तुमुल युद्ध करने लगे, उस समय गन्धर्व सिद्ध यक्ष महर्षि ॥ १६ ॥

देवता देवासुरयुद्धकी सगान इस युद्धको देखने लगे. हे राजन् उस समय शिवजीके भेजे हुए दी भूतेश्वर वहां आनकर प्राप्त हुए ॥ १७ ॥
 उन्हें उनकी रक्षाके निमित्त शिवजीने भेजा था, तब हंस और वासुदेव दोनों युद्ध करने लगे ॥ १८ ॥ तथा राम और डिम्भक
 युद्ध करने लगे वह सब अस्त्रशस्त्रसे विशुन्ध हुए बलमें युक्त थे ॥ १९ ॥ और अपने २ रथमें स्थित हुए शंख बजाने लगे तब हृषीकेश
 पांचजन्य नामक महाशंखको बजाने लगे ॥ २२ ॥ इस प्रकार वह कमललोचन सबको आश्चर्य कराने लगे, तब वे दोनों महाघोर शरीरवाले

विमानस्थाश्च ददृशुर्बुद्धं देवासुरोपमम् ॥ ततः प्रादुरभूतां तौ दूतौ भूतेश्वरो नृप ॥ १७ ॥ शूलिना प्रेषितो युद्धे रक्षार्थं बलिनी-
 स्तयोः ॥ हंसोऽथ वासुदेवश्च युद्धं चक्रतुरीश्वरो ॥ १८ ॥ रामश्च डिम्भकश्चैव संयुक्तौ युद्धकाङ्क्षया ॥ विशून्याः सर्व एवैते ह्यस्त्रे
 शस्त्रे तथा बले ॥ १९ ॥ शंखान्दध्मुः पृथक् हादं स्वे स्वे सर्वे रथे स्थिताः ॥ अथ कृष्णो हृषीकेशः पाञ्चजन्यं महारवम् ॥ २० ॥
 दध्मौ पद्मपलाशाक्षः सर्वान्विस्मापयन्निव ॥ अथ भूतो महाघोरौ लम्बोदरशरीरिणौ ॥ २१ ॥ दुद्रुवतुर्महाराज शूलमाक्षय केश-
 वम् ॥ शूलेन पोथयां राजन् चक्रतुर्यादवेश्वरम् ॥ २२ ॥ ताभ्यां समाहतौ विष्णुर्देवगन्धर्व संनिधौ ॥ ईषत्स्मिताधरो देवः किञ्चि-
 दुत्प्लुत्य सत्वरम् ॥ २३ ॥ रथाद्रथिवरश्रेष्ठस्तौ प्रगृह्य जनार्दनः ॥ भ्रामयित्वा शतगुणमलातमिव केशवः ॥ २४ ॥ कैलासं च
 समुद्दिश्य प्रचिक्षेप ततो हरिः ॥ ता उपेत्य गिरेः शृंगं कैलासस्य महामते ॥ २५ ॥ दृष्ट्वा तत्कर्म देवस्य विस्मयं जग्मतुः परम् ॥
 हंसश्च दृष्ट्वा तत्कर्म रोषताम्रायतेक्षणः ॥ २६ ॥

लम्बोदर ॥ २१ ॥ शूल हाथमें ऊपर लिये केशवके दौड़े और शूलसे यादवेश्वरको वींधने लगे ॥ २२ ॥ देव गंधर्वोंके सामने उनसे समाहत हुए
 विष्णु भगवान् कुछ हँसते हुए वहांसे कूदे ॥ २३ ॥ रथियोंमें श्रेष्ठ श्रीलङ्घने रथसे कूदकर उन दोनोंको पकड़ लिया और अलातचक्रकी समान
 उनको सौ बार घुमाया ॥ २४ ॥ और कैलासपर्वतपर उन दोनोंको फेंक दिया वे दोनों कैलासपर्वतके शृंगपर गिरे ॥ २५ ॥ और देवका यह कर्म

देखकर परम विस्मयको प्राप्त हुए हंस वह कर्म देखकर बड़ा क्रोधित हुआ ॥ २६ ॥ और देवताओंके सुनते वह हंस कहने लगा. हे केशव ! तुम हमारे राजसूय यज्ञमें क्यों विघ्न करते हो ॥ २७ ॥ ब्रह्मदत्त राजा उस यज्ञको करेंगे जो प्राणोंकी रक्षा करना चाहते हो तौ हमारा कर दो ॥ २८ ॥ अथवा तुम क्षणमात्र स्थित हो तौ बहुत कर दोगे. हे नन्दपुत्र ! तुमको इतना देना होगा कि उससे हमारा यज्ञ हो जायगा ॥ २९ ॥ जैसे देवताओंके पति शिव हैं, इस प्रकार मैं राजाओंका अधिपति हूँ युद्धमें तुम्हारा सम्पूर्ण दर्प चूर्ण करूँगा ॥ ३० ॥ यह कहकर तालके वृक्षकी समान चापको चढाय

उवाच वचनं हंसः शृण्वतां त्रिदिवौकसाम् ॥ किमर्थं राजसूयस्य विघ्नं चरसि केशव ॥ २७ ॥ ब्रह्मदत्तो महीपालो यष्टा तस्य महाकृतोः ॥ करं दिश यथायोगं यदि प्राणान् हि रक्षसि ॥ २८ ॥ अथवा त्वं क्षणं तिष्ठ ततो ज्ञात्वा परं बहु ॥ ददासि त्वं नन्दपुत्र ततो यष्टा स मे गुरुः ॥ २९ ॥ ईश्वरोऽहं सदा राज्ञां देवानामिव शूलभृत् ॥ एष ते वीर्यमतुलं नाशयिष्यामि संयुगे ॥ ३० ॥ इत्युक्त्वा सशरं चापं शालतालौपमं नृप ॥ आकूष्य च यथाप्राणं नाराचेन च केशवम् ॥ ३१ ॥ ललाटे चिक्षिपे हंसो ललाम इव सोऽभवत् ॥ उवाच सात्यकिं कृष्णो रथं वाहय मे प्रभो ॥ ३२ ॥ दारुकं पृष्ठवाहं तं कृत्वा देशं तमीश्वरः ॥ अथ तेन समादिष्टः सात्यकिर्वाहयन्नरथम् ॥ ३३ ॥ मण्डलानि बहून्याजो दर्शयामास सत्वरम् ॥ अथ विद्धो दृढं तेन शरेण हरिरीश्वरः ॥ ३४ ॥ आग्नेयमघ्नं संयोज्य शरे कस्मिंश्चिद्व्ययः ॥ उवाच हंसं राजेन्द्र सात्यकिं प्रेरयन्नरे ॥ ३५ ॥ अनेन त्वां दहे पाप यदि शक्तोऽसि वारय ॥ अलं ते बह्वबद्धेन क्षत्रियोऽसि सदा शठ ॥ ३६ ॥

बाण रख यथाशक्ति चढाय केशवके ॥ ३१ ॥ मस्तकमें प्रहार किया, यह बड़ी अद्भुत वार्ता हुई, तब कृष्णने सात्यकिसे कहा तुम हमारा रथ चालन करो ॥ ३२ ॥ तब श्रीकृष्णने दारुकको पृष्ठवाहक करके, सात्यकिद्वारा रथको चालन कराया ॥ ३३ ॥ और संग्राममें वह अनेक मंडल दिखाता रथ चलाने लगा, श्रीकृष्ण उसके शरसे दृढ विद्ध हो गये थे ॥ ३४ ॥ तब श्रीकृष्णने धनुषके ऊपर दिव्य बाण चढाय अग्नि अघ्नसे संयुक्त किया और सात्यकिको प्रेरण करते हंससे बोले, हे पापी ! इस बाणसे मैं तुझको मारूँगा ॥ ३५ ॥ यदि समर्थ हो तौ निवारण कर बहुतसी अबद्ध

बातोंसे क्या है तू क्षत्रियोंमें सदा शठ है ॥ ३६ ॥ जो मुझसे कर लेनेकी इच्छा है तो अपना बल बिंवा, हे हंस ! तैने पुष्करमें रहनेवाले यति-
 योंको पीडित किया है ॥ ३७ ॥ हे नराधम ! मेरे होते तू ब्राह्मणोंका शासन कर सकता है मुझ जगत्के स्वामीने क्षत्रियरूपी कंटकको वध कर दिया
 है ॥ ३८ ॥ मैं लोकमें असत् और ब्राह्मणद्वेषियोंकी शासन करनेवाला हूं, हे नृपाधम ! तू तौ यतियोंमें मुख्य यतियोंके पाससेही दग्ध हो रहा
 है ॥ ३९ ॥ आज तुझे मृत्युके अर्थ सौंपकर ब्राह्मणोंकी रक्षा कलंगा, यह कहकर वह अस्त्र युद्धमें श्रीकृष्णने त्यागन किया ॥ ४० ॥ हंसने वारु-
 मत्तश्चेत्करमिच्छेस्त्वं दर्शयाद्य पराक्रमम् ॥ यतयो बाधिता हंस पुष्करे संस्थितास्त्वया ॥ ३७ ॥ शास्ता त्वं खलु विप्राणां स्थिते
 मयि नराधम ॥ स्थिते मयि जगन्नाथे हत्वा क्षत्रियकण्टकान् ॥ ३८ ॥ शास्तास्म्यथो सतां लोके दुष्टानां ब्रह्मविद्विषाम् ॥ शापेन
 यतिमुख्यानां हत एव नृपाधम ॥ ३९ ॥ मृत्यवे त्वां निवेद्याद्य रक्षिता ब्राह्मणानहम् ॥ इति ब्रुवंस्तदस्त्रं तु मुमोच युधि केशवः ॥ ४० ॥
 तदस्त्रं वारुणेनाथ हंसोपि प्रत्यषेधयत् ॥ वायव्यमथ गोविन्दो मुमोच युधि हंसके ॥ ४१ ॥ तदस्त्रं वारयामास माहेन्द्रेण नृपोत्तमः ॥
 अथ माहेश्वरं कृष्णो मुमोचात्युग्रमाहवे ॥ ४२ ॥ रौद्रेण तत्ततो हंसो वारयामास तत्क्षणात् ॥ गान्धर्वं राक्षसं चैव पैशाचमथ
 केशवः ॥ ४३ ॥ ब्रह्मास्त्रमथ कुबेरासुरं याम्यमेव च ॥ चत्वार्येतानि हंसस्तु मुमोच युधि सत्वरम् ॥ ४४ ॥ वारणार्थं तदस्त्राणां
 चतुर्णां माधवस्य ह ॥ अथ ब्रह्मशिरो नाम घोरमस्त्रं विनाशकम् ॥ ४५ ॥ मुमोच हंसमुद्दिश्य देवदेवो जनार्दनः ॥ योजयामास
 तद्वंसे महाघोरपराक्रमम् ॥ ४६ ॥ अथ भीतो महारौद्रमस्त्रं दृष्ट्वा नृपोत्तमः ॥ हंसोऽपि तेन राजेन्द्र वारयामास तं शरम् ॥ ४७ ॥
 पाक्षसे उसको निवारण कर दिया तब श्रीकृष्णने वायव्यअस्त्रको चलाया ॥ ४१ ॥ हंसने उसे माहेन्द्र अस्त्रसे निवारण किया तब श्रीकृष्णने युद्धमें
 माहेश्वर अस्त्र चलाया ॥ ४२ ॥ हंसने उसको रौद्रास्त्रसे निवारण कर दिया, तब गन्धर्व राक्षस पिशाच अस्त्र केशवने चलाये ॥ ४३ ॥
 तब ब्रह्मास्त्र कुबेरास्त्र आसुर याम्य यह चार अस्त्र हंसने युद्धमें श्रीकृष्णके ऊपर छोडे ॥ ४४ ॥ श्रीकृष्णने घोर ब्रह्मशिर नामक अस्त्रसे उनका निवारण
 कर दिया ॥ ४५ ॥ और फिर यही घोर अस्त्र हंसके ऊपर घोर पराक्रमवाला संयुक्त किया ॥ ४६ ॥ तब इस महारौद्र अस्त्रको देखकर राजा हंस

डर गया, और हंसने उसी अस्त्रसे उसको वारण किया ॥ ४७ ॥ तब देवदेव जनार्दनने यमुनाजलका स्पर्श कर वैष्णव अस्त्र बाणपर संवदन किया ॥ ४८ ॥ और भूतभावने उसको बाणपर चढाया, जिस अस्त्रसे देवताओंने असुरोंको मारकर राज्य प्राप्त किया था, वही अस्त्र उस राजाके वधके निमित्त चढाया ॥ ४९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसकेशवयुद्धे सप्तविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२७ ॥ वैशम्पायन बोले वह राजा महारौद्र अस्त्रको देखकर भीत हुआ और वह हंस चेतारहितकी समान हो गया ॥ ११ ॥ और रथसे उतरकर यमुनामें धावमान हुआ जहां

यमुनाप उपस्पृश्य देवदेवो जनार्दनः ॥ अस्त्रं वैष्णवमाश्रय शरे स निशिते हरिः ॥ ४८ ॥ योजयामास भूतात्मा भूतभावनभावनः ॥ येन देवा रणे हत्वा राज्यमापुः पुराऽसुरान् ॥ यदस्त्रं योजयामास वधार्थं तस्य भूपते ॥ ४९ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भवि० हंसडिम्भकोपाख्याने हंसकेशवयुद्धे सप्तविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ अथ भीतो महारौद्रमस्त्रं दृष्ट्वा नृपोत्तम ॥ हंसो राजा महाराज निश्चेष्ट इव संबभौ ॥ १ ॥ उत्प्लुत्य स रथात्तस्माद्यमुनामभ्यधावत ॥ यत्र कृष्णो हृषीकेशः कालि याहिं ममर्द ह ॥ २ ॥ महाहडं महारौद्रं यावत्पातालसंस्थितम् ॥ तावदीर्घं महानीलं कालाञ्जननिभं हि यत् ॥ ३ ॥ तस्मिन् हरे महाघोरे पपाताथ स हंसकः ॥ हंसे पतति तस्मिन्स्तु महान् रावो बभूव ह ॥ ४ ॥ गिरीणां पात्यमानानां समुद्र इव वज्रिणा ॥ रथादुत्प्लुत्य कृष्णोऽपि तस्योपरि पपात ह ॥ ५ ॥ देवदेवो जगन्नाथो जगद्विस्मयप्रदः ॥ प्राहरत्तं महाबाहुः पादाभ्यामथ केशवः ॥ ६ ॥ पादक्षेपं नृपस्तस्माल्लब्ध्वा हंसो नृपोत्तम ॥ ममार च नृपश्रेष्ठ केचिदेवं वदन्ति हि ॥ ७ ॥

कृष्णने कालियनागको यमुनामें मर्दन किया था ॥ २ ॥ वह महारौद्र हड पातालमयर्त गहरा था वह उतनाही दीर्घातोलकी समान स्थित था ॥ ३ ॥ उस महाघोर हडमें वह हंस निपतित हुआ, हंसके गिरनेसे उसने महाशब्द हुआ ॥ ४ ॥ जैसे इन्द्रके मारे पर्वत सागरमें गिरे थे तब रथसे कूदकर श्रीकृष्ण उसके ऊपर पतित हुए ॥ ५ ॥ वह देवदेव जगन्नाथ जगत्को विस्मय कराते हुए पैरोंसे उसको प्रहार करते हुए ॥ ६ ॥ वह नृप श्रीकृष्णके

पादप्रक्षेपको प्राप्त होकर मर गया ऐसा कोई २ कहते हैं ॥ ७ ॥ कोई कहते हैं पातालको चला गया वहां सर्पोंने मक्षण कर लिया. हे राजन् ! अब-
तक उसे किसीने देखा हो ऐसा हमने नहीं सुना ॥ ८ ॥ फिर जगन्नाथ अपने रथमें आनकर स्थित हुए. हे महाराज ! उसके मरनेपर धर्मपुत्र युधिष्ठिरने
राजसूय यज्ञ किया था ॥ ९ ॥ इस प्रकार तुम्हारे पूर्व पितामहका यज्ञ हुआ, और जो यह हंस जीता रहता तो उस यज्ञकी कौन प्रशंसा करता ॥ १० ॥
हे महाराज ! वह सर्व अस्त्रका जाननेवाला रुद्रसे अस्त्रबलको प्राप्त होकर गर्वित हुआ था, क्षणमें यह वार्ता पृथ्वीमें व्याप्त हो गई कि ॥ ११ ॥ शत्रु-

अन्ये पातालमायातो भक्षितः पन्नगैरिति ॥ अद्यापि नैव राजेन्द्र दृष्ट इत्युनुशुश्रुम ॥ ८ ॥ यथापूर्वं जगन्नाथो रथं समुपजग्मिवान् ॥
हते तस्मिन्महाराज धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः ॥ ९ ॥ अकरोद्राजसूयं च तत्र पूर्वपितामहः ॥ यदि जीवेदसो हंसः को नमस्यति तं
क्रतुम् ॥ १० ॥ स च सर्वास्त्रविन्नित्यं रुद्रालङ्घनः प्रभो ॥ क्षणादेव महाराज वार्तयं गामगादत ॥ ११ ॥ इतो हंसो इतो हंसः
कृष्णेन रिपुमर्दिना ॥ जगुर्गन्धर्वपतयो देवलोकं दिवा निशम् ॥ १२ ॥ कृष्णेन लोकनाथेन विष्णुना प्रभविष्णुना ॥ यमुनाया हृदे
घोरे हंसो निहत इत्यपि ॥ १३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने हंसवधो नामाष्टाविंशत्य-
धिकशततमोऽध्यायः ॥ १२८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ श्रुत्वा निहतमत्युग्रं भ्रातरं वीर्यशालिनम् ॥ बलदेवं परित्यज्य युध्यमानं
महारणे ॥ १ ॥ डिम्भको वीर्यसंपन्नो यमुनामनुजग्मिवान् ॥ तमन्वधावद्रेगेन बलभद्रो दलायुधः ॥ २ ॥ हंसो हि यत्र पतितस्तत्रासौ
निपपात ह ॥ यमुनायां महाराज विलोडय जलसंचयम् ॥ ३ ॥

वातो श्रीकृष्णेन हंसको मार डाला गन्धर्वपति देवलोकमें यह वार्ता रातदिन गाते हैं ॥ १२ ॥ लोकनाथ प्रभु विष्णु श्रीकृष्णेन यमुनाके घोर हृदमें
इसको मार डाला ॥ १३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसवधो नामाष्टाविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२८ ॥ वैशं-
पायन बोले, बड़े बली अपने भ्राताको मरा हुआ देखकर युद्धमें लड़ते हुए बलदेवसे युद्ध करना छोड़कर ॥ १ ॥ बड़ा बली डिम्भक यमुनाके निकट
गया बलरामजीभी उसके पीछे हुए ॥ २ ॥ जहां हंस निपतित हुआ था वहीं यह क्रूढ़ पडा और यमुनाका जल विलोडित करने लगा ॥ ३ ॥

और क्रोधकर बहुत प्रकारसे उस जलमें डूँढकर वारंवार गोता मारकर और वारंवार खोजकर ॥ ४ ॥ कहींभी अपने बली भाताको न पाया और बाहर निकलकर श्रीलङ्गको देखकर वह ॥ ५ ॥ बड़ा बली डिम्भक वचन कहने लगा, अरे गोपपुत्र ! बताओ तौ वह हंस कहां स्थित है ॥ ६ ॥ धर्मात्मा वासुदेवने कहा यमुनासे पूछ, यह वार्ता प्रसन्नतासे कहीं ॥ ७ ॥ यह सुनकर डिम्भक फिर यमुनामें प्रविष्ट हुआ और वहां बहुत प्रकारसे भाईको ढूँढा ॥ ८ ॥

अथ क्रुद्धः स डिम्भको भ्रामयित्वा जलं बहु ॥ उन्मज्ज्योन्मज्ज्य सहसा निमज्ज्य च पुनः पुनः ॥ ४ ॥ न ददर्श तदा राजन् भ्रातरं वीर्य-
शालिनम् ॥ उन्मज्ज्याय महाबाहुर्वासुदेवं विलोक्य च ॥ ५ ॥ उवाच वचनं राजन् डिम्भको वीर्यवत्तमः ॥ अरे गोपकदायाद कासो
हंस इति स्थितः ॥ ६ ॥ वासुदेवोऽपि धर्मात्मा यमुनां पृच्छ राजक ॥ इत्यब्रवीत्प्रसन्नात्मा वासुदेवः प्रतापवान् ॥ ७ ॥ तच्छ्रुत्वा यमुनां
भूयः प्रविश्य डिम्भकः किल ॥ बहुप्रकारमुद्दिक्ष्य भ्रातरं भ्रातृवत्सलः ॥ ८ ॥ विलडाप ततो राजा डिम्भको भ्रान्तमानसः ॥ क नु
गच्छसि राजेन्द्र विहायेनमबान्धवम् ॥ ९ ॥ कुतो भ्रातरितो गच्छेः परित्यज्यैव मामिह ॥ विलप्यैवं नृपश्रेष्ठ डिम्भको भ्रातृवत्सलः ॥ १० ॥
आत्मत्यागे मनः कुर्वन् यमुनाया महाहृदे ॥ निमज्ज्योन्मज्ज्य सहसा मरणे कृतनिश्चयः ॥ ११ ॥ हस्तेन जिह्वामाकृष्य भूयो भूयो
विलप्य च ॥ ततः समूळामाकृष्य जिह्वां साहसकृत्स्वयम् ॥ १२ ॥ ममारान्तर्जले राजन् डिम्भको नरकाय वै ॥ एवं तु निहते हंसे
डिम्भके वीर्यशालिनि ॥ १३ ॥ आगमत्पुण्डरीकाक्षो भूतान्निस्मापयन्निव ॥ ततः प्रीतिः प्रसन्नात्मा वासुदेवः प्रतापवान् ॥ १४ ॥

जब न मिला तब डिम्भक विलाप करने लगा कि भाता ! मुझे छोड़कर तू कहां जाते हो ॥ ९ ॥ हे भाता ! मुझे छोड़ कहां गये हो, इस प्रकार
नृपश्रेष्ठ भाताके निमित्त विलाप करके ॥ १० ॥ उस यमुनाके महाहृदमें प्राणत्यागनकी इच्छा करता हुआ वारंवार मरनेके निमित्त डूबने लगा ॥ ११ ॥
हाथसे जीभको खँच वारंवार विलाप करने लगा और फिर अपने हाथसे जिह्वाको खँच लिया ॥ १२ ॥ और जलके भीतर नरक जानेके निमित्त मर
गया इस प्रकार बली डिम्भक और हंसके मरनेमें ॥ १३ ॥ श्रीलङ्ग प्राणियोंको विस्मय कराते वहां आये तब प्रसन्न हो प्रतापवान् श्रीलङ्ग ॥ १४ ॥

बलभद्रके सहित गोवर्धनमें विश्राम कर कुछ कालनक वहां निवास करते हुए ॥ १५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि प्रपायां हंसडिम्भ-
 कवधो नामैकोनत्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२९ ॥ वैशम्पायन बोले, यशोदा और नन्दगोप श्रीकृष्णके दर्शनकी लालसा किये उन्हें बलदेवजीके
 साथ गोवर्धनमें आया सुनकर ॥ १ ॥ मयखन दही दूध ऊथर वनके फूल मयूरांगद ले ॥ २ ॥ सब गोप और गोपियोंके साथ प्रसन्न हो गोवर्धनको
 गये ॥ ३ ॥ किसी एक वृक्षके नीचे बैठे हुए काले मृगकी समान नेत्रवाले श्रीकृष्णको बलरामजी सहित देखा ॥ ४ ॥ उन महाबलीयोंको देखकर
 गोवर्धनेऽथ विश्रम्य बलभद्रसहायवान् ॥ कंचित्कालं महाराज पूर्वभुक्तमुवास ह ॥ १५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे
 भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकवधो नामैकोनत्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ यशोदा नन्दगोपश्च कृष्णदर्श-
 नलालसौ ॥ गोवर्धनगतं श्रुत्वा वासुदेवं सहाग्रजम् ॥ १ ॥ नवनीतं च दधि च पायसं कृसरं तथा ॥ वन्यं पुष्पं महाराज मयूरा-
 ङ्गदमेव च ॥ २ ॥ बलवैरपरैः सार्द्धं गोपीभिश्च समन्ततः ॥ जमतुः सहसा प्रीतौ गोवर्धनमथो नृप ॥ ३ ॥ कचिद्दृष्टे तमासक्तं
 कृष्णं कृष्णमृगेषणम् ॥ ददर्शतुर्महाबाहुं वासुदेवं सहाग्रजम् ॥ ४ ॥ प्रणमतुः सुसंहृष्टौ तत्र दृष्ट्वा महाबलौ ॥ दर्शयामासतुदेवौ
 पायसानि महान्ति च ॥ ५ ॥ तात मातर्व्रजे गोष्ठे कुशलं वा स्वगोधनम् ॥ अपि गावः क्षीरवत्यो वत्सा वत्सपराः पितः ॥ ६ ॥
 अपि वा सुशुभं क्षीरमपि गावः सुशोभनाः ॥ अपि वा दारका मातर्वत्सपाळाः पिबन्ति च ॥ ७ ॥ बहूनि चापि दामानि कीलका
 अपि वा बहु ॥ तृणानि बहुरूपाणि किं वा सन्ति पितः सदा ॥ ८ ॥ शकटानि सुगन्धीनि किं वा सन्ति पितर्धुवम् ॥ अपि गोप्यः
 पुत्रवत्यो दारकान् किमजीजनन् ॥ ९ ॥

उन्होंने प्रणाम किया और वह दुग्धादि उनको भेटमें दिया ॥ ५ ॥ श्रीकृष्ण बोले, हे तात ! माता ! ब्रजमें (मोठ) में कुशल है गौ दूधवाली हैं
 और बच्छडे गले हैं ॥ ६ ॥ आपके दूध अच्छा है, और गऊ सुन्दर हैं. हे माता ! बालक उनका दूध मली प्रकार पीते हैं ॥ ७ ॥ बहुतसी माला
 और कीलक और अनेक प्रकारके तृण आपके यहां विद्यमान हैं क्या ? ॥ ८ ॥ हे पिता क्या शकट और सुगन्धि पदार्थ आपके यहां विद्यमान हैं ? और

गोपी पुत्रवती अच्छे बालकोंको उत्पन्न करनेवाली है ॥ ९ ॥ हे माता ! क्या ब्रजमें सब प्रकारसे अतिव्रत घट विवाहान हैं ? हे पिता ! क्या प्रति-
दिन गौ अधिक दूध देती हैं ॥ १० ॥ आपके भक्तजन दूध दही क्या अधिक होता है ? और सम्पूर्ण गोशय निरोग तो है ॥ ११ ॥ नंदजी बोले,
हे यदुश्रेष्ठ ! हमारे यहां सब प्रकारसे निरोगता है हे केशव ! सम्पूर्ण कालमें गोधनमें कुशल है ॥ १२ ॥ हे देवेश ! आपकी रक्षा करनेसे हम
सदा कुशलवाले हैं गोधन और बछड़े सब कालमें निरोग हैं ॥ १३ ॥ आपका दर्शन नहीं होता यही हमको महादुःख है, इसी दुःखसे बुद्धि विशीर्ण होती

घटाः किं बहवो मातराभिन्नाः सर्वतो ब्रजे ॥ किं गावः क्षीरमतुलं स्रवन्त्यहरहः पितः ॥ १० ॥ ह्ययङ्गवीनं क्षीराणि दधि वा किमजी-
जनन् ॥ गोधनं सर्वमेवेदं नीरोगं प्रतिपद्यते ॥ ११ ॥ नन्द उवाच ॥ सर्वमेतद्यदुश्रेष्ठ नीरोगं बहुशः प्रभो ॥ कुशलं गोधनस्यैव
सर्वकालेषु केशव ॥ १२ ॥ रक्षणात्तव देवेश सदा कुशलिनो वयम् ॥ सगोधनास्सकृत्साश्च नीरोगा इव केशव ॥ १३ ॥ एकमेव सदा
दुःखं न त्वां द्रक्ष्यामि केशव ॥ यदेतत्केवलं दुःखमिति धीः शीर्यते सदा ॥ १४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमादि विलप्यन्तं
गच्छेत्याह स केशवः ॥ यशोदां पुनराहेदं मातर्गच्छ गृहं प्रति ॥ १५ ॥ ये च त्वां कीर्तयिष्यन्ति ते च स्वर्गमवाप्नुयुः ॥ ये केचित्त्वां
नमस्यन्ति ते मे प्रियतराः सदा ॥ १६ ॥ मद्भक्ताः सर्वदा सन्तु गच्छेत्याह च तां हरिः ॥ इत्युक्त्वा पितरौ देवो वासुदेवः सना-
तनः ॥ १७ ॥ गाढमालिङ्ग्य तौ प्रीतौ प्रेषयामास केशवः ॥ यशोदा नन्दगोपश्च जगमतुः स्वगृहं प्रति ॥ १८ ॥ ततः कृष्णो
हृषीकेशो यादवैः सह वृष्णिभिः ॥ गन्तुमैच्छत्तदा विष्णुः पुरीं द्वारवतीं किल ॥ १९ ॥

हे ॥ १४ ॥ वैशम्पायन बोले, यह वचन कहकर जब नन्दने आंसू भर लिये तब श्रीकृष्णने उनसे घर जानेको कहा और यशोदा मातासे भी घर जानेको
कहा ॥ १५ ॥ माता ! जो तुम्हारा कीर्तन करेंगे उनको स्वर्गकी प्राप्ति होगी, और जो कोई तुमको नमस्कार करेंगे वे मेरे सदा प्रिय होंगे ॥ १६ ॥
मेरे भक्त होंगे यह कहकर हरिने जानेको कहा, यह कहकर सनातन वासुदेवने ॥ १७ ॥ माता पिताको गाढ आलिंगन कर जानेकी आज्ञा दी, यशोदा
नन्द और गोप अपने २ घरोंको गये ॥ १८ ॥ तब हृषीकेश कृष्ण यादव और वृष्णिवंशियोंके सहित अपनी पुरीमें जानेकी इच्छा करने लगे ॥ १९ ॥

जो इसे नित्य सुनते और पाठ करते हैं वह पुत्रवान् धनवान् होकर अन्तमें मुक्तिको प्राप्त होते हैं ॥ २० ॥ इति श्रीम० लि० ह० भवि० भाषायां यशोदानन्दगोपबलभद्रसमागमो नाम त्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३० ॥ वैशम्पायन बोले, जब यादवोंके सहित पुष्करको प्राप्त होकर विष्णुजी नमन करने लगे तब पुष्करमें स्थित अनेक मुनियोंको देखने लगे ॥ १ ॥ वे अभिमानरहित ऋषि मिलकर भगवान् के निकट प्राप्त होकर उन यादव-
ष्ठके प्रति अर्घ्यादिका आचार करते हुए ॥ २ ॥ भूतभव्यभवत्प्रभु विश्वेश्वर देवस्य कहने लगे, हे जनार्दन ! यह आपका पराक्रम बड़ाही अद्भुत है ॥ ३ ॥

य एतच्छृणुयान्नित्यं पठेद्वापि समाहितः ॥ पुत्रवान् धनवान् च गच्छति ॥ २० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि यशोदानन्दगोपबलभद्रकृष्णसमागमो नाम त्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ गच्छन्नथ महाविष्णुः पुष्करं प्राप्य यादवैः ॥ अपश्यन्मुनिमुखांस्तु पुष्करस्थानृपोत्तम ॥ १ ॥ ते समेत्य महादेवमृषयो वीतमत्सराः ॥ अर्घा-
दिसमुदाचारं कृत्वेनं यादवोत्तमम् ॥ २ ॥ प्रोचुर्विश्वेश्वरं विष्णुं भूतभव्यभवत्प्रभुम् ॥ अत्यद्भुतमिदं विष्णो तव वीर्यं जनार्दन ॥ ३ ॥
येन तौ निहतौ युद्धे हंसौ डिम्भक एव च ॥ यो विचक्रौ दुराधर्षो देवैरपि सुदुःसहः ॥ ४ ॥ सङ्गरे निहतो देव दुःसाध्य इति नो मतिः ॥
क्षेमो नः सर्वकार्येषु चरतां तप उत्तमम् ॥ ५ ॥ निष्कल्मषा भविष्यामस्तव संस्मरणाद्धरे ॥ त्वं हि सर्वस्य दुःखस्य हर्ता त्वां ध्यायतां
सदा ॥ ६ ॥ त्वदनुस्मरणं जन्तोः सदा पुण्यप्रदं प्रभो ॥ त्वं हि नः सततं धाता विधाता तपसो हरेः ॥ ७ ॥ त्वमोङ्कारो वषट्कारस्त्वं
यज्ञस्त्वं पितामहः ॥ त्वं ज्योतिर्ब्रह्मणो मूर्तिस्त्वं ब्रह्मा रुद्र एव च ॥ ८ ॥

जो आपने युद्धमें हंस और डिम्भकको मार डाला जो दुराधर्ष देवताओंकोभी दुस्तह थे ॥ ४ ॥ हम तो उनको दुस्तह्य मानते थे जिनको आपने युद्धमें मार डाला, अब हमारे तप तथा अन्य सब कार्यमें मंत्रल होगा ॥ ५ ॥ हे हरे ! आपके स्मरणसे हम पापरहित हो जायेंगे आपही सब दुःखके हर्ता हो आपके ध्यान करनेसे ॥ ६ ॥ आपका स्मरण प्राणियोंको सदा आनंद देनेवाला है, हमारे आपही धाता विधाता तपके आदिकारण हो ॥ ७ ॥ तुम ओंकर वषट् यज्ञ

इ. वं.

॥२६३॥

और पितामह हो तुम ज्योति ब्रह्ममूर्ति ब्रह्मा और रुद्र हो ॥८॥ आप सब भूतोंके प्राण और अन्तरात्मा हो. हे जगत्पते ! सब भूतोंको यज्ञ दानसे आपही उपासनीय हो ॥ ९ ॥ विश्वके उत्पन्न करनेवाले विश्वमूर्तिको नमस्कार है. हे देव ! ब्राह्मणद्वेषियोंको मारकर सदा इस जगत्की रक्षा करो ॥ १० ॥ बहुत अच्छा कह हरि द्वारकापुरीको गये और मागधोंसे स्तुतिको प्राप्त हो वहां निवास करने लगे ॥ ११ ॥ हे जनमेजय ! इस प्रकार भगवान्की चेष्टा हैं सो तुम्हारे पुछनेपर कही अब और क्या सुननेकी इच्छा है ॥ १२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि द्वारकायां कृष्ण

प्राणस्त्वं सर्वभूतानामन्तरात्मेति कथ्यते ॥ उपास्यः सर्वभूतानां यज्ञैर्दानैर्जगत्पते ॥ ९ ॥ नमो विश्वसृजे देव नमस्ते विश्वमूर्तये ॥ पाहि लोकमिमं देव हत्वा ब्रह्माद्विषः सदा ॥ १० ॥ स तथेति हरिर्विष्णुर्ययौ द्वारवर्ती पुरीम् ॥ अवसद्वृष्णिभिः सार्द्धं स्तूयमानः स मागधैः ॥ ११ ॥ इयं च देवदेवस्य चेष्टा हि जनमेजय ॥ सा प्रोक्ता ते पृच्छते राजन् किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ १२ ॥ इति श्रीमहाभारते भविष्यपर्वणि द्वारकायां कृष्णप्रत्यागमनं नामैकत्रिंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३१ ॥ जनमेजय उवाच ॥ भगवन्केन विधिना श्रोतव्यं भारतं बुधैः ॥ फलं किं के च देवाश्च पूज्या वै पारणोष्विह ॥ १ ॥ देयं समाप्ते भगवन् किं च पर्वणिपर्वणि ॥ वाचकः कीदृशश्चात्र पृष्टव्यस्तद्वर्षीहि मे ॥ २ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ शृणु राजन्विधिमिमं फलं यच्छति भारतात् ॥ श्रुताद्भवन्ति राजेन्द्र यत्त्वं मामनुपृच्छसि ॥ ३ ॥ दिवि देवा महीपाल क्रीडार्थमवानि गताः ॥ कृत्वा कार्यमिदं चैव ततश्च दिवमागताः ॥ ४ ॥

प्रत्यागमनं नामैकत्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३१ ॥ जनमेजय बोले, हे भगवन् ! पंडितोंको किस प्रकार भारतकी कथा सुननी चाहिये इसका क्या फल है और पारणमें किन किन देवताओंका पूजन करना चाहिये ॥ १ ॥ हे भगवन् ! पर्वकी समाप्तिमें क्या देना चाहिये ॥ २ ॥ और कैसे वाचककी पूजा करनी चाहिये वह आप हमसे कहिये. वैशम्पायन बोले, हे राजन् ! भारतश्रवणकी विधि हमसे सुनिये ! हे राजन् ! जो आप हमसे पूछते हो सो मैं कहता हूं ॥ ३ ॥ स्वर्गसे देवताही क्रीडा करनेके निमित्त पृथ्वीमें अवतार ले आये थे, और यह कार्य करके फिर स्वर्गमें चले गये ॥ ४ ॥

भा. टी.

प.३अ.१३०

॥२६३॥

जो मैं तुमसे कहता हूँ सो सावधान होकर सुनो, जैसे देवताओंका पृथ्वीतलमें जन्म हुआ है ॥ ५ ॥ यहां रुद्र, साध्य, विश्वेदेवा, आदित्य, अश्विनीकुमार, लोकपाल, महर्षि ॥ ६ ॥ गृह्यक, गन्धर्व, नाग, विद्याधर, सिद्ध, धर्म, स्वयंभू, मुनि, कात्यायन ॥ ७ ॥ गिरि, सागर, नदी, अप्सराओंके गण, ग्रह, संवत्सर, अयन, ऋतु ॥ ८ ॥ स्थावर, जंगम, सुर असुर, सहित सब जगत् यह सब भारतमें एकही स्थानमें दीखते हैं ॥ ९ ॥ उन वेदमें प्रतिष्ठावाले देवताओंके

इन्त पत्ते प्रवक्ष्यामि तच्छृणुष्व समाहितः ॥ ऋषीणां देवतानां च संभवं वसुधातले ॥ ५ ॥ अत्र रुद्रास्तथा साध्या विश्वेदेवाश्च
 आश्रिताः ॥ आदित्याश्चाश्विनौ देवौ लोकपाला महर्षयः ॥ ६ ॥ गृह्यकाश्च सगन्धर्वा नागा विद्याधरास्तथा ॥ सिद्धा धर्मः स्वयंभूश्च
 मुनिः कात्यायनो वरः ॥ ७ ॥ गिरयः सागरा नद्यस्तथेवाप्सरसां गणाः ॥ ग्रहाः संवत्सराश्चैव अयनान्यृतवस्तथा ॥ ८ ॥ स्थावर
 जङ्गमं चैव जगत्सर्वं सुरासुरम् ॥ भारते भरतश्रेष्ठ एकस्थमिह दृश्यते ॥ ९ ॥ तेषां श्रुतिप्रतिष्ठानां नामकर्मानुकीर्तनात् ॥
 कृत्वापि पातकं चोरं सद्यो मुच्येत मानवः ॥ १० ॥ इतिहासमिमं श्रुत्वा यथावदनुपूर्वशः ॥ संयतात्मा शुचिर्भूत्वा पारं गत्वा च
 भारते ॥ ११ ॥ तेषां शृणु त्वं श्राद्धानि श्रुत्वा भारत भारतम् ॥ ब्राह्मणेभ्यो यथाज्ञत्तया भक्त्या च भरतर्षभ ॥ १२ ॥ महादा
 नानि देयानि रत्नानि विविधानि च ॥ गावः कांस्योपदोहाश्च कन्याश्चैव स्वलंकृताः ॥ १३ ॥ सर्वकामगुणोपेता यानानि विविधानि
 च ॥ भाजनानि विचित्राणि भूमिर्वासांसि काञ्चनम् ॥ १४ ॥

नामकर्म कीर्तन करनेसे घोर पाप करनेवालाभी शीघ्र पापसे छूट जाता है ॥ १० ॥ यथायोग्य इस इतिहासको यथायोग्य श्रवण कर नियममें तत्पर, पवित्र
 होकर जो भारतको सम्पूर्ण सुनते हैं वे पापरहित होते हैं ॥ ११ ॥ हे राजन् ! उन भारतमें मृत हुए मीमादिके श्राद्धमें ब्राह्मणोंको यथाशक्ति दान करना
 चाहिये ॥ १२ ॥ अनेक रत्नोंके महादान देने चाहिये बौ कांसिके पात्र दुहने योग्य वरतन अलंकार की हुई कन्या ॥ १३ ॥ सम्पूर्ण कामना देनेवाले

विविध यान, विचित्र भाजन, भूमि, वस्त्र, कंचन ॥ १४ ॥ वाहन, मतवाले हाथी, सेज, पालकी, अलंकृत रथ ॥ १५ ॥ जो घरमें महामूल्य वस्तु और श्रेष्ठ धन है आत्मा स्त्री पुत्र वह सब वाचकको दान कर सकता है ॥ १६ ॥ जो परमश्रद्धासे दान करते सम्पूर्ण पारायण क्रमसे करते हैं और शक्तिये अच्छे मनवाले हृष्ट शुश्रूषा करनेवाले कंठरहित ॥ १७ ॥ सत्य और ऋजुतामें रत इन्द्रियजित, पवित्र, शौचपरायण, श्रद्धावाले क्रोधिर्जित हैं उनको जैसे इसकी सिद्धि होती है सो सुनो ॥ १८ ॥ पवित्र शील आचारसे युक्त शुक्लवस्त्र जितेन्द्रिय संस्कृतज्ञ सब शास्त्रके जाननेवाले श्रद्धायुक्त निन्दार-वाहनानि च देयानि ह्येषा मत्ताश्च वारणाः ॥ शयनं शिविकाश्चैव स्थन्दनाश्च स्वलंकृताः ॥ १९ ॥ यद्यद्गृहे वरं किञ्चिद्यद्यस्ति महद्द्रुमु ॥ तत्तदेयं द्विजातिभ्य आत्मा दराश्च सूनवः ॥ २० ॥ श्रद्धया परया दत्तं क्रमशस्तस्य पारगः ॥ शक्तिः सुमना हृष्टः शुश्रूषुरविकम्पनः ॥ २१ ॥ सत्यार्जवरतो यतः शुचिः शौचपरायणः ॥ श्रद्धधानो जितक्रोधो यथा सिद्धयति तच्छृणु ॥ २२ ॥ शुचिः शीलान्विताचारः शुक्लवासा जितेन्द्रियः ॥ संस्कृतः सर्वशास्त्रज्ञः श्रद्धधानोऽनसूयकः ॥ २३ ॥ रूपवान्सुभगो दान्तः सत्यवादी जितेन्द्रियः ॥ दानमानग्रहीता च कार्यो भवति वाचकः ॥ २४ ॥ अविलम्बमनायस्तमद्रुतं धीरभूर्जितम् ॥ असंसक्ताक्षरपदं न च भावसमन्वितम् ॥ २५ ॥ त्रिषष्टिवर्णसंयुक्तमष्टस्थानसमीरितम् ॥ वाचयेद्वाचकः स्वस्थः स्वाधीनः सुसमाहितः ॥ २६ ॥ नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ॥ देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत् ॥ २७ ॥ ईदृशाद्वाचकाद्राजञ्छ्रुत्वा भारत भारतम् ॥ नियमस्थः शुचिः श्रोता शृण्वन् स फलमश्नुते ॥ २८ ॥

हित ॥ २९ ॥ रूपवान् सुन्दर चतुर सत्यवादी जितेन्द्रिय दानमानका ग्रहण करनेवाला वाचक होना चाहिये ॥ २० ॥ आलस्यरहित अद्रुत धीर बलसम्पन्न अक्षरपदका स्वष्ट उच्चारण करनेवाला, लोभादिकी अधिकतासे हीन ॥ २१ ॥ त्रैसठ वर्णोंके आठों स्थानसे वर्णोंके उच्चारणका जानने-वाला स्वस्थ स्वाधीन होकर वाचकको भारतका पाठ करना चाहिये ॥ २२ ॥ आरंभमें नारायण नर नरोत्तम और देवी सरस्वतीको नमस्कार कर इस जयनामक ग्रंथका उच्चारण करे ॥ २३ ॥ हे राजन् ! इस प्रकारके वाचकसे भारतका श्रवण कर नियममें स्थित हो पवित्र श्रोता सुनकर सम्पूर्ण फलको

प्राप्त होता है ॥ २४ ॥ पहले पारायणकी समाप्तिमें ब्राह्मणोंकी यथाकाम अर्चना करे तो मनुष्यको अग्निष्टोमका फल मिलता है ॥ २५ ॥ अप्सराओंसे युक्त अच्छे विमानकी प्राप्ति होती है, वह देवताओंसे सेवित हो स्वर्गको जाता है ॥ २६ ॥ दूसरे पारणको प्राप्त होकर अतिरात्र यज्ञका फल पाता है सम्पूर्ण रत्नोंवाले विमानपर चढ़कर स्वर्गको जाता है ॥ २७ ॥ दिव्यमाला और वस्त्र धारण किये दिव्यगंधसे विभूषित होकर नित्य दिव्यगंधसे युक्त हो देवलोकमें महिमाको प्राप्त होता है ॥ २८ ॥ तीसरे पारणको प्राप्त हो द्वादशाह यज्ञका फल पाता है देवरूप हो दश सहस्र वर्ष स्वर्गमें निवास

पारणं प्रथमं प्राप्य द्विजान्कामैश्च तर्पयेत् ॥ अग्निष्टोमस्य यागस्य फलं वै लभते नरः ॥ २५ ॥ अप्सरोगणसंकीर्णं विमानं लभते महत् ॥ प्रहृष्टः स तु देवैश्च दिवं याति समाहितः ॥ २६ ॥ द्वितीयं पारणं प्राप्य अतिरात्रफलं लभेत् ॥ सर्वरत्नमयं दिव्यं विमानमधिरोहति ॥ २७ ॥ दिव्यमाल्याम्बरधरो दिव्यगन्धविभूषितः ॥ दिव्यांगदधरो नित्यं देवलोके महियते ॥ २८ ॥ तृतीयं पारणं प्राप्य द्वादशाहफलं लभेत् ॥ वसत्यमरसंकाशे वर्षाण्ययुतशो दिवि ॥ २९ ॥ चतुर्थं वाजपेयस्य पञ्चमे द्विगुणं फलम् ॥ उदितादित्यसंकाशं ज्वलन्तमनलोपमम् ॥ ३० ॥ विमानं विबुधैः सार्द्धमारुह्य दिवि गच्छति ॥ वर्षायुताभिर्भवने शक्रस्य दिवि मोदते ॥ ३१ ॥ षष्ठे द्विगुणमस्तीति सप्तमे त्रिगुणं फलम् ॥ कैलासशिखराकारं वैदूर्यमणिवेदिकम् ॥ ३२ ॥ परिक्षिप्तं च बहुधा मणिविद्रुमभूषितम् ॥ विमानं समाधिष्ठाय कामगं साप्सरोगणम् ॥ ३३ ॥ सर्वलोकान्विचरते द्वितीय इव भास्करः ॥ अष्टमे राजसूयस्य पारणे लभते फलम् ॥ ३४ ॥

करता है ॥ २९ ॥ चौथे पारणमें वाजपेय यज्ञका फल और पांचवेंमें इससे दूना होता है तब यह उदय होते हुए सूर्यकी समान प्रकाशमान निर्मल ॥ ३० ॥ विमानमें बैठ देवताओंके साथ स्वर्गको जाता है दश सहस्र वर्षतक इन्द्रके समीप आनंद करता है ॥ ३१ ॥ छठेमें इससे दूना और सातवेंमें उससे तिसुना फल होता है जहां कैलासके शिखराकार वेदी बनी हुई है ॥ ३२ ॥ अनेक प्रकारसे मणिविद्रुमसे भूषित कामगामी विमानोंके ऊपर बैठ अप्सराओंसे सेवित हो स्वर्गको जाता है ॥ ३३ ॥ और दूसरे सूर्यकी समान प्रकाशमान हो सब लोकोंमें विचरता है ॥ ३४ ॥

और चन्द्रोदयकी समान उज्ज्वल विमानमें स्थित होता है जो चन्द्रमाकी किरणोंकी समान वेगागामी विमान हैं ॥ ३५ ॥ चन्द्रमाकी समान कान्ति-
वाली छियोंसे सेवित, उनके नूपुर और मेखलाओंके शब्द सुनता हुआ ॥ ३६ ॥ सुन्दर छियोंकी गोदीमें सुखसे सोया हुआ जागता है, नौवें पार-
णमें अभ्यषेधके फलको प्राप्त होता है ॥ ३७ ॥ सुवर्णके स्तंभ लगे वैदूर्यमणिकी वेदिका तथा सुवर्ण गवाक्षोंसे सब ओर व्याप्त ॥ ३८ ॥ अप्सरा
गन्धर्वोंसे सेवित होकर स्वर्गचारियोंके साथमें परम कान्तिवाली लक्ष्मीसे शोभित हो ॥ ३९ ॥ दिव्य माला और वस्त्र धारण किये, दिव्य चंक्र लगभगे,
चन्द्रोदयनिभं सभ्यं विमानमधिरोहति ॥ चन्द्ररश्मिप्रतीकाशैर्हृष्यैर्युक्तं मनोजवेः ॥ ३५ ॥ सेव्यमानो वरस्त्रीणां चन्द्रकान्ततरेमुखः ॥
मेखलानां निनादेन नूपुराणां च निःस्वनेः ॥ ३६ ॥ अङ्गे परमनारीणां सुखं सुतो विबुध्यते ॥ नवमे क्रतुराजस्य वाजिमेधस्य
भारत ॥ ३७ ॥ काञ्चनस्तम्भनिर्व्यूहं वैदूर्यकृतवेदिकम् ॥ जाम्बूनदमयेर्दिव्यैर्गवाक्षैः सर्वतो वृतम् ॥ ३८ ॥ सेवितं चाप्सरःसं-
घैर्गन्धर्वैर्दिविचारिभिः ॥ विमानं समधिष्ठाय श्रिया परमया ज्वलन् ॥ ३९ ॥ दिव्यमाल्याम्बरधरो दिव्यचन्दनभूषितः ॥ मोदते
देवतेः सार्द्धं दिवि देव इवापरः ॥ ४० ॥ दशमं पारणं प्राप्य द्विजातीनभिवन्द्य च ॥ किङ्किणीजालनिर्घोषं पताकाध्वजशोभि-
तम् ॥ ४१ ॥ रत्नवेदिकसंकाशं वैदूर्यमणितोरणम् ॥ हेमजालपरिक्षिप्तं प्रवालवलभीमुखम् ॥ ४२ ॥ गन्धर्वैर्गीतकुशलैरप्सरोभि-
निषेवितम् ॥ विमानं सुकृतावासं सुखेनैवोपपद्यते ॥ ४३ ॥ मुकुटेनार्कवर्णेन जाम्बूनदविभूषणः ॥ दिव्यचन्दनदिग्धांगो दिव्यमा-
ल्यविभूषितः ॥ ४४ ॥ दिव्यौलो कान्तिप्रचरति दिव्येर्भोगैः समन्वितः ॥ विबुधानां प्रसादेन श्रिया परमया युतः ॥ ४५ ॥

देवताकी समान स्वर्गमें आनंद पाता है ॥ ४० ॥ दशवें पारणमें ब्राह्मणोंको प्रणाम कर किङ्किणीजालके शब्द पताका ध्वजासे शोभित ॥ ४१ ॥
रत्नवेदीकी समान वैदूर्य मणि और तोरणसे व्याप्त हेमजालसे परिक्षिप्त प्रवाल और झालरोंसे व्याप्त ॥ ४२ ॥ गीतमें कुशल गन्धर्व और अप्सरा-
ओंसे सेवित ऐसा सुखदायक विमान पुण्यसेही प्राप्त होता है ॥ ४३ ॥ सूर्यकी समान प्रकाशित सुख सुवर्णके भूषण धारण किये दिव्य गंध शरीरमें
लगाये, दिव्यमालासे विभूषित ॥ ४४ ॥ दिव्य शोभसे युक्त होकर वह दिव्यलोकमें विचरण करता है. देवताओंके प्रसादसे वह परम लक्ष्मीसे युक्त

होता है ॥ ४५ ॥ बहुत वर्षोंतक स्वर्गलोकोंमें महिमाको प्राप्त होता है तब गंधर्वोंके सहित इकोस सहस्र वर्षतक ॥ ४६ ॥ इन्द्रलोकमें आनंद करता है दिव्य यान और अनेक प्रकारके लोकोंमें ॥ ४७ ॥ दिव्य नारियोंके समूहसे व्याप्त अमरकी समान शोभित होता है तब सूर्य और चन्द्र लोकमें ॥ ४८ ॥ तथा शिवके लोकमें होता हुआ विष्णुकी सात्विक्यताको प्राप्त होता है हे महाराज ! इसमें कुछभी सन्देह नहीं है ॥ ४९ ॥ परंतु हमारे गुरुने कहा है कि श्रद्धा करकेही यह सब कार्य सिद्ध होते हैं जो जो मनमें इच्छा हो सो वाचकको देना चाहिये ॥ ५० ॥ हाथी घोड़े

अथ वर्षगणानेवं स्वर्गलोके महीयते ॥ ततो गन्धर्वसहितः सहस्राण्येकविंशतिः ॥ ४६ ॥ पुरंदरपुरे रम्ये शकेण सह मोदते ॥ दिव्ययान-
विमानेषु लोकेषु विविधेषु च ॥ ४७ ॥ दिव्यनारिणां कर्णो निवसत्यमरो यथा ॥ ततः सूर्यस्य भवने चन्द्रस्य भवने तथा ॥ ४८ ॥
शिवस्य भवने राजन्विष्णोर्याति सलोकताम् ॥ एवमेतन्महाराज नात्र कार्या विचारणा ॥ ४९ ॥ श्रद्धानेन वै भाव्यमेवमाह
गुरुर्मम ॥ वाचकस्य तु दातव्यं मनसा यद्यदिच्छति ॥ ५० ॥ हस्त्यश्वरथयानादि वाहनं च विशेषतः ॥ कटकं कुण्डले चैव ब्रह्म-
सूत्रं तथापरम् ॥ ५१ ॥ वस्त्रं चैव विचित्रं च गन्धं चैव विशेषतः ॥ देवत्पूजयेत्तं तु विष्णुलोकमवाप्नुयात् ॥ ५२ ॥ अतः परं प्रव-
क्ष्यामि यानि देयानि भारते ॥ वाच्यमानेऽथ विप्रेभ्यो राजन्पर्वणि पर्वणि ॥ ५३ ॥ जातिं देशं च सत्यं च माहात्म्यं भरतर्षभ ॥
धर्मवृत्तिं च विज्ञाय क्षत्रियाणां नराधिप ॥ ५४ ॥ स्वस्ति वाच्य द्विजानादौ ततः कार्यं प्रवर्तयेत् ॥ समाप्ते पर्वणि ततः स्वशक्त्या
तर्पयेद्विजान् ॥ ५५ ॥ आदौ तु वाचकं चैव वस्त्रगन्धसमन्वितम् ॥ विधिवद्भोजयेद्भोजनमधुपायससंयुतम् ॥ ५६ ॥

रथ यान और वाहन कटक कुंडल ब्रह्मसूत्र ॥ ५१ ॥ सुन्दर क्त्र और विविध प्रकारके गन्धद्रव्योंसे कहनेवालेकी देवताकी समान पूजा करनेसे देव-
लोककी प्राप्ति होती है ॥ ५२ ॥ अब भारतके सुननेमें जो देना चाहिये सो सुनो. हे राजन् ! वाचनेवाले को पर्वपर्वमें ॥ ५३ ॥ जाति देश सत्य
माहात्म्य तथा क्षत्रियोंकी धर्मवृत्तिको जानकर ॥ ५४ ॥ पहले ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन कराकर कार्य प्रारंभ करे, पर्वकी समाप्ति में ब्राह्मणोंको यथा-
शक्ति तृप्त करे ॥ ५५ ॥ वाचकको वस्त्रगंधादिसे तृप्त कर और विधिपूर्वक मधु पायस खाकर प्रसन्न करे ॥ ५६ ॥

किं मूल फल खीर मधु घृतद्वारा आस्तिकोंको भोजन करावे बुरा और ओदन (जात) खावे ॥ ५७ ॥ पूरे पूर मोदक (लड्डू) खावे. हे राजन् ! सभापर्वकी पूर्वमें ब्राह्मणोंको हविष्यान्न भोजन करावे ॥ ५८ ॥ वनपर्वमें मूल फलोंसे ब्राह्मणोंको भोजन करावे अरणी पर्वार्घ्यायमें जलके घड़े प्रदान करे ॥ ५९ ॥ मुख्य २ वनके मूल फलोंसे तृप्त करे और सब कामनासे युक्त ब्राह्मणोंको तृप्त करे ॥ ६० ॥ विराटपर्वमें विविध प्रकारके वस्त्र दे. हे राजन् ! उद्योगपर्वमें सर्वगुणयुक्त ॥ ६१ ॥ गंधादिसे अलंकृत किये ब्राह्मणोंको भोजन करावे और भीष्मपर्वमें उत्तम यान दान करे,

ततो मूलफलप्रायं पायसं मधुसर्पिषा ॥ आस्तिके भोजयेद्वाजन्द्याच्चैव गुडौदनम् ॥ ५७ ॥ अपूपैश्च पूपैश्च मोदकैश्च समन्वितम् ॥ सभापर्वणि राजेन्द्र हविष्यं भोजयेद्विजान् ॥ ५८ ॥ अरण्यके मूलफलेस्तर्पयेच्च द्विजोत्तमान् ॥ अरणीपर्व आसाद्य जलकुम्भान् प्रदापयेत् ॥ ५९ ॥ तर्पणानि च मुख्यानि कन्यमूलफलानि च ॥ सर्वकामगुणोपेतं विप्रेभ्योऽन्नं प्रदापयेत् ॥ ६० ॥ विराटपर्वणि तथा वासांसि विविधानि च ॥ उद्योगे भरतश्रेष्ठ सर्वकामगुणान्वितम् ॥ ६१ ॥ भोजनं भोजयेद्विजान् गन्धमालपैरलंकृतान् ॥ भीष्मपर्वणि राजेन्द्र दत्त्वा यानमनुत्तमम् ॥ ततः सर्वगुणोपेतमन्नं दद्यात्सुसंस्कृतम् ॥ ६२ ॥ द्रोणपर्वणि विप्रेभ्यो भोजनं परमार्चितम् ॥ शराश्च देया राजेन्द्र चापान्यसिवरास्तथा ॥ ६३ ॥ कर्णपर्वण्यपि तथा भोजनं सार्वकामिकम् ॥ विप्रेभ्यः संस्कृतं सम्यक् दद्यात्संयतमानसः ॥ ६४ ॥ शल्यपर्वणि राजेन्द्र मोदकैः सगुडौदनैः ॥ अपूपैस्तर्पयेच्चैव सर्वमन्नं प्रदापयेत् ॥ ६५ ॥ गदापर्वण्यपि तथा मुद्रमिश्रं प्रदापयेत् ॥ स्त्रीपर्वणि तथा रत्नैस्तर्पयेत्तु द्विजोत्तमान् ॥ ६६ ॥

और सर्व कामगुणोंसे युक्त संस्कार किया अन्न दे ॥ ६२ ॥ द्रोणपर्वमें परम सुन्दर भोजन ब्राह्मणोंको जिमावे, तथा शर चार और अस्त्र (तलवार) का दान करे ॥ ६३ ॥ कर्णपर्वमें सब कामना देनेवाला भोजन करावे और यह अच्छी तरह बनाय जितेन्द्रियता युक्त ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥ ६४ ॥ शल्यपर्वमें गुड मोदक और ओदन जिमावे, तथा मालपुष्प और सब प्रकारके अन्नभी दे ॥ ६५ ॥ और गदापर्वमें मृग मिलाकर दे स्त्रीपर्वमें ब्राह्मणोंको

रत्नभा दे ॥ ६६ ॥ ऐषीकपर्वमें घृत और ओदन दे और सब प्रकारसे उत्तम अन्न दे ॥ ६७ ॥ शान्तिपर्वमें ब्राह्मणोंको हविष्य भोजन करावे अश्वमेधपर्वमें
 सब कायना देनेवाला भोजन दे ॥ ६८ ॥ आश्वमेधासिकपर्वके अन्तमें ब्राह्मणोंको हविष्यान्न भोजन करावे मूसलपर्वमें सर्वगुण गंधादिका अनुलेपन
 करे ॥ ६९ ॥ महाप्रस्थानपर्वमें सर्व गुण और कामनासे युक्त भोजन दे, स्वगारोहण पर्वमेंभी ब्राह्मणोंको हविष्य अन्न भोजन करावे ॥ ७० ॥ हरिवंश
 की समाप्तिमें सहस्र ब्राह्मणोंको भोजन करावे, और सुवर्णके निष्कसहित ब्राह्मणोंको एक गौ दान करे ॥ ७१ ॥ हे राजन् ! जो श्रोता दरिद्र हो तो
 घृतोदनं पुरस्ताच्च ऐषिके दापयेत्पुनः ॥ ततः सर्वगुणोपेतमन्नं दद्यात्सुसंस्कृतम् ॥ ६७ ॥ शान्तिपर्वण्यपि गते हविष्यं भोजयेद्
 द्विजान् ॥ आश्वमेधिकमासाद्य भोजनं सार्वकामिकम् ॥ ६८ ॥ तथाश्वमनिवासे तु हविष्यं भोजयेद्द्विजान् ॥ मौसले सार्वगुणिकं
 मन्धमाल्यानुलेपनम् ॥ ६९ ॥ महाप्रस्थानिके तद्वत्सर्वकामगुणान्वितम् ॥ स्वर्गपर्वण्यपि तथा हविष्यं भोजयेद्द्विजान् ॥ ७० ॥
 हरिवंशसमाप्तौ तु सदस्रं भोजयेद्द्विजान् ॥ गामेकां निष्कसंयुक्तां ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥ ७१ ॥ तद्वर्द्धेनापि दातव्या दरिद्रेणापि
 पार्थिव ॥ प्रतिपर्वं समाप्तौ तु पुस्तकं वै विचक्षणः ॥ ७२ ॥ सुवर्णेन च संयुक्तं वाचकाय निवेदयेत् ॥ हरिवंशे पर्वणि च पापसं तत्र
 भोजयेत् ॥ ७३ ॥ श्लोकं वा श्लोकपादं वा अक्षरं वा नृपात्मज ॥ शृणुयादेकचित्तस्तु स विष्णुदयितो भवेत् ॥ ७४ ॥ व्यासं
 चैव सपत्नीकं पूजयेच्च यथाविधि ॥ लक्ष्मीनारायणं देवं पूजितं तच्च पूजयेत् ॥ ७५ ॥ वाचकं पूजयेद्यस्तु भूमिवत्समुपेक्षुभिः ॥
 विष्णुः संपूजितस्तेन स साक्षादेवकीसुतः ॥ ७६ ॥

इससे आधा दान करे, और प्रतिपर्वकी समाप्तिमें एक पुस्तक ॥ ७२ ॥ सुवर्णके सहित वाचकको निवेदन करे हरिवंशपर्वमें पापसका भोजन दे ॥ ७३ ॥
 हे राजन् ! एक श्लोक श्लोकका आधा चौथाई वा एक अक्षरभी जो एकचित्त होकर सुनता है वही विष्णुके लोकको जाता है ॥ ७४ ॥ व्यासजीको
 सीसहित विधिपूर्वक पूजन करे, और लक्ष्मीनारायणका पूजन करे ॥ ७५ ॥ जो भूमि वत्स और धेनुसे वाचकका पूजन करता है मानो उसने विष्णुकी

मली प्रकार पूजा की ॥ ७६ ॥ हे राजन् ! प्रत्येक पारणमें सब संहिताका जाननेवाला ॥ ७७ ॥ सुन्दर देशमें स्थिति कर रेशमी वस्त्रादिके सहित युक्त हो
शुक्ल वस्त्र पहरे श्रीमान् पवित्र और अलंकृत हो ॥ ७८ ॥ गन्धमालासे पृथक् २ शिष्टसम्मत संहिताकी पुस्तकका पूजन करे ॥ ७९ ॥ मक्षणयोग्य अन्न
पीनेके पदार्थ और भी वस्तु सुवर्ण मौ वस्त्र ब्राह्मणोंको दे ॥ ८० ॥ सर्वत्र तीन पल सुवर्ण देना चाहिये वा उससे आधा वा उससे चौथाई दे परन्तु
वित्तकी शठता न करे ॥ ८१ ॥ जो जो अपनेको इष्ट हो वह वह ब्राह्मणोंको देने चाहिये सब प्रकार अपने गुरु और वाचकको सन्तुष्ट करे सब देवता

पारणे पारणे राजन्यथावद्भरतर्षभ ॥ समाप्य सर्वाः प्रयतः संहिताः शुस्रकोविदः ॥ ७७ ॥ शुभे देशे निवेश्याथ क्षौमवस्त्रा
भिसंवृतः ॥ शुक्लाम्बरधरः श्रीमान्छुचिर्भूत्वा स्वलंकृतः ॥ ७८ ॥ अर्चयेत्तं यथान्यायं गन्धमालैः पृथक् पृथक् ॥ संहितापुस्तकान्
राजन्प्रयतः शिष्टसंमतः ॥ ७९ ॥ भक्ष्येर्षासैश्च पेयैश्च कामैश्च विविधैः शुभैः ॥ हिरण्यं गां च कर्त्रं च दक्षिणामथ दापयेत् ॥ ८० ॥
सर्वत्र त्रिपलं स्वर्णं दातव्यं प्रणतात्मना ॥ तद्वर्द्धं पादशेषं वा वित्तशक्त्यविमर्जितम् ॥ ८१ ॥ यद्यदेवात्मनोऽभीष्टं तत्तद्देयं द्विजातये ॥
सर्वथा तोषयेद्भक्त्या वाचकं गुरुमात्मनः ॥ देवताः कीर्तयेत्सर्वा नरनारायणौ तथा ॥ ८२ ॥ ततो गन्धैश्च माल्यैश्च स्वलंकृतद्विजो-
त्तमान् ॥ तर्पयेद्विविधैः कामैर्दानैश्चोच्चावचेस्तथा ॥ ८३ ॥ अतिरात्रस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥ प्राप्नुयाच्च ऋतुफलं तथा
पर्वणि पर्वणि ॥ ८४ ॥ वाचको भरतश्रेष्ठ व्यक्ताक्षरपदस्वरः ॥ भविष्यं श्रावयेद्विप्रान् भारतं भरतर्षभ ॥ ८५ ॥ भुक्तवत्सु
द्विजेन्द्रेषु यथावत्संप्रदापयेत् ॥ वाचकं भरतश्रेष्ठ भोजयित्वा स्वलंकृतम् ॥ ८६ ॥

और नरनारायणका स्मरण करे कीर्तन करे ॥ ८२ ॥ फिर गन्धमालासे ब्राह्मणोंको अलंकृत करके अनेक कामनासे छोटे बड़े दोनोंको दे ॥ ८३ ॥
तौ मनुष्य अतिरात्र यज्ञके फलको प्राप्त होता है तथा वर्षपर्वमें यज्ञके फलको प्राप्त होता है ॥ ८४ ॥ हे राजन् ! वाचनेवाला स्पष्ट पद अक्षरसे युक्त
भविष्यपर्व भारत ब्राह्मणोंको सुनावे ॥ ८५ ॥ जब ब्राह्मण भोजन कर चुके तब दान देकर और वाचकको भोजन कर चुकनेपर अलंकृत करे ॥ ८६ ॥

वाचकके सन्तुष्ट होनेपर विष्णु की प्रीति होती है ब्राह्मणोंके प्रसन्न होनेपर सब देवता प्रसन्न हो जाते हैं ॥ ८७ ॥ फिर यथायोग्य ब्राह्मणोंका भक्षण पोषण करना चाहिये, सब कामनायुक्त साधुओंको पूर्ण करे ॥ ८८ ॥ हे राजन् ! यह तुमसे भारत सुननेकी विधि कहीं जो तुमने सुनसे पूछा यह श्रद्धावान् को करना चाहिये और इसमें विश्वास करना चाहिये ॥ ८९ ॥ हे नृशेखर राजन् ! भारतके श्रवण और पारणमें श्रेयकी इच्छा करनेवालेको सदा यत्नवान् होना चाहिये ॥ ९० ॥ नित्य भारत सुने और कहे जिसके घरमें भारत है उसके हाथमें जय है ॥ ९१ ॥ भारतही परम पुण्य है और भारतमें अनेक

वाचके परितुष्टे तु शुभा प्रीतिरनुत्तमा ॥ ब्राह्मणेषु च तुष्टेषु प्रसन्नाः सर्वदेवताः ॥ ८७ ॥ ततो हि भरणं कार्यं द्विजानां भरतर्षभ ॥ सर्वकामैर्यथान्यायं साधुभिश्च यथाक्रमम् ॥ ८८ ॥ इत्येष विधिरुद्दिष्टो मया ते द्विपदां वर ॥ श्रद्धावानेन वै भाव्यं यन्मां त्वं परिपृच्छसि ॥ ८९ ॥ भारतप्रवणे राजन्पारणे च नृपोत्तम ॥ सदा यत्नवता भाव्यं श्रेयस्तु परमिच्छता ॥ ९० ॥ भारतं शृणुयान्नित्यं भारतं परिकीर्तयेत् ॥ भारतं भवने यस्य तस्य हस्तगतो जयः ॥ ९१ ॥ भारतं परमं पुण्यं भारते विविधाः कथाः ॥ भारतं सेव्यते देवैर्भारतं परिकीर्तयेत् ॥ ९२ ॥ भारतं सर्वशास्त्राणामुत्तमं भरतर्षभ ॥ भारतात्प्राप्यते मोक्षस्तत्त्वमेतद्ब्रवीमि ते ॥ ९३ ॥ महाभारतमाख्यानं क्षितिं गां च सरस्वतीम् ॥ ब्राह्मणं केशवं चापि कीर्तयन्नावसीदति ॥ ९४ ॥ वेदे रामायणे पुण्ये भारते भरतर्षभ ॥ आदौ चान्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते ॥ ९५ ॥ यत्र विष्णुकथा दिव्याः श्रुतयश्च सनातनाः ॥ तच्छ्रोतव्यं मनुष्येण परं पदमिहेच्छता ॥ ९६ ॥ एतत्पवित्रं परममेतद्धर्मनिदर्शनम् ॥ एतत्सर्वगुणोपेतं श्रोतव्यं भूतिमिच्छता ॥ ९७ ॥

कथा हैं भारतको देवता नित्य सेवते हैं इससे नित्य भारतका कीर्तन करे ॥ ९२ ॥ हे राजन् ! यही सब शास्त्रोंमें श्रेष्ठ है, भारतश्रवणसे सुक्ति हो जाती है यह मैं तत्त्वसे कहता हूँ ॥ ९३ ॥ महाभारतकी कथा पृथ्वी गौ सरस्वती ब्राह्मण और केशवका स्मरण करनेसे पुरुष दुःख नहीं पाता है ॥ ९४ ॥ वेद रामायण पवित्र भारतमें आदि मध्य और अन्तमें सर्वत्र हरि गाये जाते हैं ॥ ९५ ॥ जहां विष्णुकी दिव्य कथा है वहां सनातनी श्रुति है सो परमपदकी इच्छावाले मनुष्यको सदा सुननी चाहिये ॥ ९६ ॥ यही परम पद और धर्मका निदर्शन है यही सब गुणोंसे युक्त ऐश्वर्यकी

इच्छावालेको सुननी चाहिये ॥ ९७ ॥ इस संसारमें यही वांछित फल देनेका कारण है और सार है इस प्रकार व्यासजीने हरिवंशका माहात्म्य कहा है ॥ ९८ ॥ सहस्र अश्वमेध और सौ वाजपेय यज्ञसे जो फल होता है वह हरिवंशके पारणसे फल होता है ॥ ९९ ॥ अजर अमर एक आदि अन्तःस्थ सगुण अगुण आदि स्थूल सूक्ष्मरूप निरुपम अनुमेय योगियोंके ज्ञानमें आने योग्य त्रिभुवनगुरु विष्णु ईशकी मैं शरण होता हूं ॥ १०० ॥ सम्पूर्ण कष्ट दूर हों त्वं मंगल दृष्टिगोचर हों सब वांछित अर्थ इसके पारणसे प्राप्त होते हैं ॥ १०१ ॥ इति श्रीम० वि० ह० म० मा० हरिवंशश्रवणफलकथनं नाम द्वात्रिंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३२ ॥ जनमेजय बोले, हे ब्रह्मन् ! मैं तत्त्वते शिवद्वारा त्रिपुरासुरका वध सुनना चाहता हूं, जो आकाशचारी तीन पुर हैं उबका संक्षेपसे वर्णन करो यद्यपि भारतकी समाप्ति करके अब प्रश्नका संभव युक्त नहीं परन्तु “आत्मा वा अरे श्रोतव्येति” क्रियतेऽसंसारसंसारं वाञ्छितस्यैव कारणम् ॥ हरिवंशस्य श्रवणमिति द्वैपायनोऽब्रवीत् ॥ ९८ ॥ अश्वमेधसहस्रेण वाजपेयशतैस्तथा ॥ यत्फलं प्राप्यते पुंभिस्तद्वरेर्वैशपारणात् ॥ ९९ ॥ अजरममरमेकं ध्येयमाद्यन्तःस्थं सगुणमगुणमाद्यं स्थूलमत्यन्तसूक्ष्मम् ॥ निरुपममनुमेयं योगिनां ज्ञानगम्यं त्रिभुवनगुरुमांशं त्वां प्रपन्नोऽस्मि विष्णो ॥ १०० ॥ सर्वस्तरतु दुर्माणि सर्वो भद्राणि पश्यतु ॥ सर्वेषां वाञ्छिता अर्था भवन्त्वस्य च पारणात् ॥ १०१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि श्रवणफलकथनं नाम द्वात्रिंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३२ ॥ जनमेजय उवाच ॥ त्र्यक्षाद्रधमहं ब्रह्मन् श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ॥ त्रयाणां पुरसंज्ञानां खेचराणां समासतः ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ शृणु विस्तरतः सर्वं यन्मां पृच्छसि नेधनम् ॥ दैत्यानां बाहुबलिनां सर्वप्राणिविरोधिनाम् ॥ २ ॥ श्रुतिद्वारा फिर दृढता प्रतिपादन करानेके लिये प्रश्न करते हैं (त्र्यक्षात्) श्रवण मनन निदिध्यासनरूप दर्शन साधन इन्द्रियवत् नेत्रवाले, वा विद्वान् श्रवणादि समुदायवान् तीन नेत्रवालेसे (त्रिपुर) स्थूल सूक्ष्म कारण देहोंका समूलोच्छेद किस प्रकारसे होता है अर्थात् मनन निदिध्यासन फलोपकार्यद्वारा वेदान्त महावाक्य श्रवणसे कैसे संसारका विच्छेद होता है कारण कि ज्ञानप्राप्तसे किसी अर्थका उच्छेद देखा नहीं है सो कहो ॥ १ ॥ वैशम्पायन बोले, जो तुम पूछते हो वह विस्तारसे सुनो, वे बड़े बली दैत्य सब प्राणियोंके निरोध करनेवाले थे, शमादिक वेदता और काम क्रोधादिक असुर यह,

अध्यात्मविद्यामें बृहदारण्यकमें कथन किया है ॥ २ ॥ जैसे परमात्मा शंकरने श्रवणादि साधनवाले तीन शूलोंसे बंध किया है सो सुनो यह असुर सब भूतोंके बंधकी इच्छा करनेवाले थे ॥ ३ ॥ यह त्रिपुर (जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति) के अभिमानी विश्व तैजस प्राज्ञद्वारा भोगयोग्य बहुतसी धातु (मायाका कार्य) और उनके गुणोंसे युक्त हैं अर्थात् आकाशरूप अपने कारणमें मेघसमूहकी समान स्वयं उठे हुए हैं ॥ ४ ॥ प्राकाररूप अन्नमय पिंडके सुवर्णरूप प्रकाशमान मणि सर्व रत्न और तोरणोंसे अर्थात् भोगमोक्षकी उपयोगी इन्द्रियोंसे संयुक्त हैं ॥ ५ ॥ वह आकाशमें परम लक्ष्मीसे प्रकाशमान थे बड़े

शंकरेण बंधं राजन् शूलैस्त्रिभिरजिह्वैः ॥ कृतं पुराऽसुरेन्द्राणां सर्वभूतवधैषिणाम् ॥ ३ ॥ त्रिपुरं पुरुषव्याघ्रं बृहद्भूतसमीरितम् ॥ विक्रामति नभोमध्ये मेघवृन्दमिवोत्थितम् ॥ ४ ॥ प्राकारेण प्रवृद्धेन काञ्चनेन विराजता ॥ मणिभिश्च प्रकाशद्भिः सर्वरत्नैश्च तोरणैः ॥ ५ ॥ बभासे नभसो मध्ये श्रिया परमया ज्वलन् ॥ गन्धर्वाणामिवोदग्रं कर्मणा साधितं परम् ॥ ६ ॥ वाजिनः पक्षसंयुक्ता वहन्ति बलदर्पिताः ॥ पुरं प्रभाकरश्रेष्ठं मनोभिः कामबृंहणैः ॥ ७ ॥ धावन्ति हेषमाणास्ते विक्रमैः प्राणसंभृतैः ॥ आहूयन्त इवाकाशं सुरैः श्यामदलप्रभैः ॥ ८ ॥ वायुवेगसमैर्वैभैः कालयन्त इवाग्बरम् ॥ असुराः समदृश्यन्त चक्षुर्भिर्विदितात्माभिः ॥ ९ ॥ ऋषिभिर्ज्वलनप्रख्यैस्तपसा दग्धकिल्बिषैः ॥ गीतवादित्रबहुलं गन्धर्वनगरोपमम् ॥ १० ॥ चित्रायुधसमाकीर्णैः प्रतप्तकनकप्रभैः ॥ भवनेर्बहुभिश्चैव प्रांशुभिः समलंकृतैः ॥ ११ ॥

गन्धर्वोंके कर्मसे साधित अर्थात् यज्ञादिसे गंधर्वपुरकी समान शोभित थे ॥ ६ ॥ उसको परम बलरूपी इन्द्रियरूपी घोड़े वहन करते हैं और यथेच्छ मनकी वृत्तियोंसे इच्छित स्थानमें पहुँचा देते हैं ॥ ७ ॥ और उत्तर उत्तर वासनाके बढनेसे धावमान होते हुए कामरूपी तृष्णासे पुष्ट हुए वे घोड़े सुख प्राणों द्वारा चलायमान होते हैं और काले सुरोंसे मानो आकाशको हूयमान करते हैं ॥ ८ ॥ वायुकी समान वेगवालोंसे वे असुर आकाशरूप कारण ब्रह्मको ग्रसते हुए दीखते हैं और चार दर्शन साधन आदि अनुमानसे जाने जाते हैं ॥ ९ ॥ तपसे दग्धपाप हुए ऋषियोंकी समान वह नगर गन्धर्वनगरकी समान शोभित हुआ ॥ १० ॥ चित्रआयुधोंसे युक्त जो कनककी समान प्रकाशित हैं

ॐ॥

अर्थात् कामके उद्दीपन करनेवाले कटाक्षादिसे समाकीर्ण और चित्तके प्रवेशवाले स्त्रीरूपी भवनोंसे युक्त हैं ॥ ११ ॥ साक्षात् स्वर्गकी समान बड़े बड़े महलोंसे संयुक्त और ग्रहोंके ऊपर मनोरथरूपी दूसरे पुरोंसे संयुक्त हैं ॥ १२ ॥ आकाशमें सूर्यकी समान वह दैत्यनगर शोभित हुआ जो बड़ी अटारी युक्त तपाये सुवर्णकी समान कान्तिमान् था ॥ १३ ॥ हे राजन् ! तेजोंसे प्रदीप्त होकर वह शोभित हुआ और उसमें दैत्योंके बड़े बड़े सिंहनादे होते थे ॥ १४ ॥ वह चैत्ररथ वनकी समान महाशोभाको प्राप्त हुआ वहीं वहीं पलाका और अस्त्रियोंसे विराजित था ॥ १५ ॥ इस प्रकार अंबरमें त्रिपुर विराजमान हुआ. हे राजन् ! उसमें सूर्यनाभ (चक्षु) चन्द्रनाभ (मन) उसमें अधिपति हैं ॥ १६ ॥ तथा औरभी बलसे दर्पित दानव मोहित होकर देवेन्द्रभवनाकारेः शुशुभे तन्महाद्युति ॥ प्रासादाग्रेः प्रवृद्धैश्च कैलासशिखरप्रभैः ॥ १२ ॥ शुशुभे दैत्यनगरं बहुसूर्यामिवाम्बरम् ॥ वराट्टालकसम्पन्नं तप्तकाञ्चनसप्रभम् ॥ १३ ॥ प्रदीप्तमिव तेजोभी रराजाथ महाप्रभो ॥ क्ष्वेडितोत्कृष्टबहुलं सिंहनादाविनादितम् ॥ १४ ॥ बभौ वल्गुजनाकीर्णं वनं चैत्ररथं यथा ॥ समुच्छिन्नपताकं तदासिभिश्च विराजितम् ॥ १५ ॥ रराज त्रिपुरं राजन्महाविद्युदिवाम्बरे ॥ सूर्यनाभश्च दैत्येन्द्रश्चन्द्रनाभश्च भारत ॥ १६ ॥ तथान्ये च महावीर्या दानवा बलदर्पिताः ॥ ममृदुश्च बभञ्जश्च मोहिताः परमेष्ठिना ॥ १७ ॥ पन्थानं देवगमनं पितृयानं च भारत ॥ तैरेवमसुराग्रेश्च प्रगृहीतशरासनैः ॥ १८ ॥ दानवैर्नरशार्दूल देवयाने महापथे ॥ पितृवह्निबलोपेते हृते भरतसत्तम ॥ १९ ॥ ब्रह्माणमभ्यघातन् सर्वे सुरगणारतथा ॥ विवर्णवदना दीनाश्चिन्नेव गतिकर्मणि ॥ २० ॥ अब्रुवंश्च गताः स्थित्वा स्वरेणार्तनिनादिना ॥ हन्यामहे कृन्तुणैर्भागोच्छेदेन भागद ॥ २१ ॥ तेषां चैव वेधोपायं वदस्व वदतां वर ॥ यं ज्ञात्वा बाहुबलिनो बाधेम समरे परान् ॥ २२ ॥

मर्दित और भजन करने लगे ॥ १७ ॥ अर्थात् देवयान पितृयान मार्गको प्राप्त करानेवाले कर्म और उपासनाको नष्ट करने लगे और उन्होंने बड़े बड़े धनुष धारण किये ॥ १८ ॥ हे महाराज ! जब उन्होंने अग्नि बलवाले देवयान और पितृबलसे युक्त पितृयानका हरण किया अर्थात् धर्मकर्मसे श्रद्धा नष्ट की ॥ १९ ॥ सब देवता दोनों मार्गके नष्ट होनेसे ब्रह्माके निकट गये और कर्म नष्ट होनेसे विवर्णवदन तथा दीन हो गये ॥ २० ॥ और आर्तस्वरसे दीन होकर कहने लगे पुण्यलोककी प्राप्तिके न होनेसे हम असुरोंसे हत हुए हैं ॥ २१ ॥ हे वदतां वर ! आप उनके वधका उपाय कहिये जिसको

जानकर हम शत्रुओंको बाधा दे सकें ॥ २२ ॥ तब ब्रह्मा उन्हें समझाते हुए बोले, हे देवताओं ! शत्रुओंके नाशका उपाय सुनो ॥ २३ ॥ वे दानव शंकररूपी सुखबोधके विना मृत्युको प्राप्त न होंगे, इस कारण उस अविनाशीकी प्रार्थना करो ॥ २४ ॥ हे भारत ! तब वे सब रुद्रके सहित पृथ्वीमें आकर प्राप्त हुए विन्ध्यपाद मेरु और पृथ्वीतलमें अर्थात् कारण कर्मभूमिमें उग्रतपस्वरूप प्राणोंके साथ शंकरकी शरणमें गये ॥ २५ ॥ वे सब सुनि तप चान्द्रायणादि वानप्रस्थ धर्मयोग निष्काम कर्मास्तुष्टान गृहस्थधर्म जप वेदाभ्यास ब्रह्मचारी धर्म ब्रह्मसंहिता ओंकार जपते हरको प्राप्त हुए ॥ २६ ॥ जिन महात्माओंकी तपयोगके ऐश्वर्यकी प्रार्थना करनेवाली परस्त्रियोंकी तथा कामादिकी विफलता होती हुई इस कारण वे तृष्णादिक परम दुर्बल हो गये,

सान्त्वयित्वा तु वरदो ब्रह्मा प्रोवाच देवताः ॥ शृणुध्वं देवताः सर्वाः शत्रुप्रतिकृतिं पराम् ॥ २३ ॥ अवध्या दानवाः सर्वे ऋते शंकरमव्ययम् ॥ प्रतिगृह्य च तद्वाक्यं मनोभिर्वाग्भिरेव च ॥ २४ ॥ भूमौ प्रपदिरे सर्वे सह रुद्रैश्च भारत ॥ विन्ध्यपादे च मेरो च मध्ये च पृथिवीतले ॥ २५ ॥ तपसोग्रेण योगज्ञाः सर्वे ते मुनयोऽभवन् ॥ काश्यपेयं हरं प्राप्ता जपन्तो ब्रह्मसंहिताम् ॥ २६ ॥ एषां च परदारणामभवद्बन्धता जने ॥ विन्यस्तदर्भनिचये ताम्रलोहं च भूषणम् ॥ २७ ॥ परिधानानि चर्मणि मृदूनि च शुभानि च ॥ स्वयंमृतानां कृष्णानां मृगाणां कुरुसत्तम ॥ २८ ॥ गृहीतानि विमुक्तानि देहेभ्यो वनचारिणाम् ॥ अन्तरिक्षमथोपेत्य विविशुर्मायया वृताः ॥ २९ ॥ हरालयं सुराः सर्वे व्याघ्रचर्मनिवासिनः ॥ प्राणिपत्याथ ते दीना भगवन्तं जगत्पतिम् ॥ ३० ॥

कुशसमूहको विछाये लोहकपी भूषणवाले ॥ २७ ॥ मृदु और शुभ मृगचर्म धारण किये हे कुरुसत्तम ! वे मृगचर्म स्वयं मृतक हुए मृगोंके थे ॥ २८ ॥ वे वनचारी मृगोंके थे इनसे वे कामादिक अस्यन्त दरिद्री हो अन्तरिक्षरूपी हृदयाकाशमें सूक्ष्म वासनारूपसे विलीन हुए ॥ २९ ॥ वे व्याघ्रचर्म धारण करनेवाले देवता हरके स्थानको गये और दीन होकर जगत्पतिको प्रणाम किया अर्थात् संसारके दुःख हरनेवाले निर्गुण ब्रह्मके उपलब्धि स्थान हृदया काश सगुण ब्रह्ममें उनकी उपासना करनेको चले, वे शान्ति आदि देवता विषयोंको भोगनेवाले व्याघ्रको मार उसका चर्म धारण किये थे ॥ ३० ॥

और अच्छे वचनोंसे नारायणके प्रति वचन कहने लगे जैसे भस्मसे ढकी अग्निमें हवि निष्फल है ऐसे हमारे मलिन चित्त है ॥ ३१ ॥ हे भगवन् ! आपसे विमुख होनेमें हमको आत्मज्ञानका वरदान वृथाही है यथाकाल यथादेशमें ब्रह्माका वचन कीजिये हमको तत्त्वज्ञान दीजिये ॥ ३२ ॥ जो कुछ देवदेवने खेचर (हृदय आकाश) में उपासकोंके समीप कहा है (कि मैं तुमको सब पापोंसे छुड़ा दूंगा सोच मत करो) उस मोक्षरूप अर्थके वैभवसे ॥ ३३ ॥ प्रगट हुए और महादेव इन्द्रादि देवताओंके सहित आदित्यमार्गमें स्थित हो प्रगट हुए ॥ ३४ ॥ यह सब सुवर्णकी समान दीप्तिमान् हुए और स्रक्के साथ वह तेजसे अधिक जलाने लगे अर्थात् उपासक अधिक शोभित हुए ॥ ३५ ॥ और वे सब सुव्यक्तेनाभिधानेन प्रभाषन्त हरं ततः ॥ हविर्दत्तमाविज्ञानाद्भस्मच्छन्नेषु वह्निषु ॥ ३१ ॥ वरदानं वृथास्मासु भगवन्विमुखे त्वयि ॥ यथादेशं यथाकालं क्रियतां ब्रह्मणो वचः ॥ ३२ ॥ यदुक्तं देवदेवेन खेचराणां समीपतः ॥ एवं देवेष्वोभिश्च भाविनोऽर्थस्य वैभवात् ॥ ३३ ॥ समनह्यन्महादेवो देवैः सह सवासवैः ॥ आदित्यपथमास्थाय सन्नद्धाः समलंकृताः ॥ ३४ ॥ सर्वे काञ्चनवर्णाभा बभुर्दीप्ता इवाग्रयः ॥ रुद्रेण सहिता रुद्रा दहन्त इव तेजसा ॥ ३५ ॥ सन्नद्धाः कुशलाः सर्वे प्राञ्जवः पर्वता इव ॥ विश्वे विश्वेन वपुषा बलिनः कामरूपिणः ॥ ३६ ॥ समनह्यन्महात्मानो दानवान्तं विधित्सवः ॥ एभिः सह धनाध्यक्षैः समन्तात्परिवारितः ॥ ३७ ॥ त्रिपुरं योघय्यक्षः प्रगृह्य सशरं धनुः ॥ अथ दैत्या भिन्नदेहाः पुराट्ठालं गता इव ॥ ३८ ॥ न्यपतन्त विदेह्यस्ते विंशीर्णा इव पर्वताः ॥ अतिविद्धाः सुविद्धाश्च रणमध्यगता नृप ॥ ३९ ॥ न्यपतन्त दैत्यसंघाता वज्रेणेव हता नगाः ॥ आसिभिश्च हता देवैः शक्तिचक्रपरश्वधैः ॥ ४० ॥ चतुर पर्वतोंकी समान प्रकाशित और सन्नद्ध हुए और तपोयोगबलसे सब (कामरूप) सर्वात्मिक हो गये ॥ ३६ ॥ इस प्रकार वे महात्मा दानवोंके वधकी इच्छा करके इन धनाध्यक्ष (अर्द्धावित्त मुख्य अध्यक्षों) शमादिसे परिवारित हुए ॥ ३७ ॥ तब विद्वान् ऋक्ष त्रिपुरसे युद्ध करनेकी इच्छा करते हुए अर्थात् कोश भंग करनेको उद्यत हुए और प्रणवरूपी धनुष और आत्मारूपी बाण लिया, तब योगारंभ करनेके उपरान्त कामादि दैत्य भिन्न देहवाले हो गये और वे स्थूलरूप रणमें अधिकतर भिन्न हो गये ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ और वज्रसे हत हुए पर्वतकी समान वे पृथ्वीमें गिरे देवताओंने आसि

और शक्तिसे तथा फरसोंसे दैत्योंको मारा ॥ ४० ॥ वे दैत्य युद्धमें बाणोंसे भिन्नदेह हो गये और छिन्न हुए पंखवाले पर्वतोंकी समान पृथ्वीमें गिरे ॥ ४१ ॥ और योगियों द्वारा बलसे निरुद्धमान हुए दैत्य दुष्ट वचन कहते प्रदीप्त हुए फिर कषायद्वारा जड़ीभूत हो लघुको प्राप्त होते हैं, और क्षयकर्मसे क्षय हुए परस्पर बाधा देते हैं ॥ ४२ ॥ वे दिव्यचक्षु होकरभी चक्षुसे उनको न देख सके सूर्यके बोधवाले निशामुखमेंभी अविद्यारूपमें स्थित होनेसे छिन्न भिन्न हो देवता (शमदमादि) पृथ्वीमें गिरे ॥ ४३ ॥ तब दैत्य जयको प्राप्त हो रात्रिमें तीक्ष्ण बाणोंसे देवताओंको मारते मेघकी समान गंभीर शब्द करते हुए ॥ ४४ ॥ और जयको प्राप्त हो परस्पर जल्पना करने लगे और संग्राममें जय पानेवाले सब देवताओंको व्याकुल कर दिया ॥ ४५ ॥

बाणैश्च भिन्नमर्माणो दैत्येन्द्रा युद्धमोचरे ॥ प्रपेतुः सहिता उर्व्यां छिन्नपक्षा इवाचलाः ॥ ४१ ॥ तत्र संज्ञां विमुञ्चन्ति दीव्यमानेन तेजसा ॥ एवं तेऽन्योन्यसंबाधे क्षीयन्ते क्षयकर्मणा ॥ ४२ ॥ नोपालभ्यन्त चक्षुर्भ्यामपि दिव्येन चक्षुषा ॥ अस्तं प्राप्ते दिनकरे सुरेन्द्रास्ते निशामुखे ॥ छिन्नभिन्नक्षतमुखा निपेतुर्वसुधातले ॥ ४३ ॥ अथ दैत्या जयं प्राप्ता निशायां निशितैः शरैः ॥ विनेदुर्विपुलेर्नादैर्मैधा इव महारवाः ॥ ४४ ॥ जयप्राप्त्यासुराश्चैव तेऽन्योन्यमभिजल्पिरे ॥ श्लासितास्त्रिदशाः सर्वे संग्रामजयकाक्षिणः ॥ ४५ ॥ अस्माभिर्वैलसंपन्नेः सह प्रासासितोमरेः ॥ विरेजुश्च जयं प्राप्ता उशुनोहव्यबोधिताः ॥ ४६ ॥ समरे बलसंपन्नाः सायुधा दैत्यसत्तमाः ॥ सुरैश्च सहिताः सर्वे रथमास्थाय शंकरः ॥ ४७ ॥ दर्पितान्निनददैत्यान् प्रदहन्निव तेजसा ॥ युगान्तकाले वितते रश्मिवानिव निर्दहन् ॥ ४८ ॥ सर्वभूतानि भूताग्र्यः प्रलये समुपस्थिते ॥ स रथो वाजाभिः शृङ्गैरुद्धमानो मनोजवैः ॥ ४९ ॥

और उशनाकी हविसे बोधित हुए प्रास असि तोमर लिये बलसम्पन्न जयको प्राप्त हो शोभित हुए उस भृगुका रूप बृहस्पतिजीने देवताओंके जय और दैत्योंके क्षयके निमित्त धारण किया है यह मैत्रायणी श्रुति है ॥ ४६ ॥ वे दैत्य आयुध लिये समरमें बलसम्पन्न हो गये तब रथलको छोड़ शंकर देवताओंके सहित रथमें स्थित हुए अर्थात् सूक्ष्मदेहमें प्रवेश होनेसे पहले लय विक्षेप विघ्न होते हैं ॥ तब अस्मितारूपमें प्राप्त होनेपर उनका बाध होता है, तब योगिरूप शंकर देवताओंके साथ रथमें चढकर ॥ ४७ ॥ अपने तेजसे शब्द करते हुए दैत्योंको जलाने लगे, जैसे युगान्तकालमें सूर्य जलता है ऐसे कामादिकको जलाने लगे ॥ ४८ ॥ जब सब भूतोंकी प्रलय उपस्थित होने लगी, तब वह रथ वासनामय सूक्ष्म इन्द्रियोंसे चालित

होता हुआ ॥ ४९ ॥ आकाशमें विजलयुक्त मेघकी समान शोभित हुआ वह योगसे उत्तम वृषभरूपी धर्मसे जो ध्वजाग्रकी समान ऊंचा था गर्जने लगे ॥ ५० ॥ हे राजन् वह रथ आकाशमें इन्द्रधनुषकी समान शोभित हुआ तब आकाशमें स्थित हुए सिद्ध शिवजीकी प्रार्थना करने लगे, अर्थात् स्तितिरूप विघ्न प्राप्त हुआ ॥ ५१ ॥ तब वह अपने पूर्वजन्मके कर्मोंसे शिवजीको प्रार्थना करने लगे अर्थात् सत्यव्रतपरायण शान्त ऋषि ॥ ५२ ॥ और अमृतके प्राप्त होनेवाले सम्पूर्ण देवता गन्धर्व अप्सरा यह सब गन्धर्व स्वरासे ॥ ५३ ॥ प्रहृष्टमुख हो सौम्यरूप पित्रके स्थानान्तरमें समूहोंवाली अटारी जिनमें सैकड़ों शतघ्नी विद्यमान हैं ॥ ५४ ॥ ऐसे जग्यावने दैत्यके नगरमें दैत्य दानव बाणोंकी वर्षा करने लगे अर्थात् सूक्ष्म देहमें युद्ध विवभो नभसो मध्ये सविद्युदिव तोयदः ॥ वृषभेण ध्वजाग्रेण गर्जमानेन भारत ॥ ५० ॥ भाति स्म सरथो राजन् सेन्द्रायुध इवाम्बुदः ॥ ततोऽम्बरगताः सिद्धास्तुष्टुवृषभध्वजम् ॥ ५१ ॥ कर्माभिः पूर्वजं पूर्वंः शुचिभिस्तृणम्बकं तदा ॥ ऋषयश्च तपःशान्ताः सत्यव्रतपरायणाः ॥ ५२ ॥ अमृतप्राप्तिनश्चैव सुरसंचास्तथैव च ॥ गन्धर्वाप्सरसश्चैव गन्धर्वेण स्वरेण वै ॥ ५३ ॥ प्रहृष्टवदनाः सौम्याः पैत्र्ये स्थानान्तरे नृप ॥ चयाट्टालकसंपन्ने शतघ्नीशतसंकुले ॥ ५४ ॥ तस्मिन्स्तु दैत्यनगरे सर्वभूतभयावहे ॥ ततस्तु शरवर्षाणि मुमुक्षुर्दैत्यदानवाः ॥ ५५ ॥ सुराणामरयो मध्ये तीक्ष्णाग्राणि समन्ततः ॥ शतघ्नीभिश्च निघ्नन्तो भल्लैः शूलैश्च भारत ॥ ५६ ॥ ते चक्रिरे महत्कर्म दानवा युद्धक्रोविदाः ॥ गदाभिश्च गदां जघ्नुर्भल्लैर्भल्लांश्च चिच्छिदुः ॥ ५७ ॥ अस्त्रैरस्त्राण्यवा धन्त मायां मायाभिरेव च ॥ ततोऽपरे समुद्यम्य शरशक्तिपरश्वधान् ॥ ५८ ॥ अशनींश्च महाघोरान्मुक्तान् शतसहस्रशः ॥ असिभिर्मायाविहितैर्मृत्योर्विषयगोचरे ॥ ५९ ॥

हुआ ॥ ५५ ॥ तब दैत्य देवताओंपर बाण वर्षा करने लगे शतघ्नी भाले और शूलसे मारने लगे ॥ ५६ ॥ युद्धमें चतुर दानवोंने उस समय महत्कर्म किया गदासे गदा भालेसे भाले मारकर छेदन करने लगे ॥ ५७ ॥ अस्त्रसे अस्त्र और मायासे मायाका बाध होने लगा तब दूसरे शर शक्ति और फरसोंको लेकर ॥ ५८ ॥ सैकड़ों महाघोर अशनी वज्रोंको छोड़ने लगे और मायाकी तलवार जो अज्ञानरूपी मृत्युके निकट है छोड़ने लगे ॥ ५९ ॥

तब देवता उनसे वध्यमान होकर बाणोंकी वर्षा करते स्थित हुए तब गन्धर्वनगरी समान हरका रथ फिर सीधित होने लगा ॥ ६० ॥ प्राप्ते आसि
तोमरोसे देवताओंद्वारा ताडित हो और बड़े झारवाले देवताओंके प्रहारसे युक्त अनेक विचित्र अस्त्रोंको धारण किये इन्द्र स्थित हुआ (इन्द्रसे योगी
जानना) ॥ ६१ ॥ हे राजन् ! तब स्वर्गके स्थानमें बड़ा भारी शब्द होने लगा ऋषियोंका और ब्रह्मपुत्रोंका बड़ा शब्द हुआ ॥ ६२ ॥ और
शंकरके आगे यह रथ भूमिमें प्रतिष्ठित हुआ और सब लोकोंके देवते अजेय होकरभी पराजयको प्राप्त हुआ ॥ ६३ ॥ हे राजन् ! उस रथभेष्टके

ते वध्यमान विबुधाः शरवर्षैरवस्थिताः ॥ गन्धर्वनगराकारः सोऽसीदत्सहरो रथः ॥ ६० ॥ इन्द्रमानोऽसुरगणैः प्राप्तासिशरतोमरैः ॥
तैश्च दैत्यप्रहरणैर्गुरुभिर्भारसाहिभिः ॥ चित्रैश्च बहुभिः शस्त्रैरतिष्ठत शचीपतिः ॥ ६१ ॥ ततो मध्ये दिव्यशब्दः प्रादुरासीन्महीपते ॥
ऋषीणां ब्रह्मपुत्राणां महतामपि भारत ॥ ६२ ॥ स एष शंकरस्याग्रे रथो भूमिं प्रतिष्ठितः ॥ अजेयो जय्यतां प्राप्तः सर्वलोकस्य
पश्यतः ॥ ६३ ॥ तस्मिन्निपतिते राजन् रथानां प्रवरे रथे ॥ निपेतुः सर्वभूतानि भूतले वसुधाधिप ॥ ६४ ॥ विचेलुः पर्वताग्राणि
चेलुश्चैव महाद्रुमाः ॥ विचुक्षुधुः समुद्राश्च न रेजुश्च दिशो दश ॥ ६५ ॥ वृद्धाश्च ब्रह्माणास्तत्र जेषुश्च परमं जपम् ॥ यत्तद्ब्रह्ममयं तेजः
सर्वत्र विजयैषिणाम् ॥ ६६ ॥ शान्त्यर्थं सर्वभूतानामिह लोके परत्र च ॥ समाधायात्मनात्मानं योगप्राप्तेन हेतुना ॥ ६७ ॥ रथन्तरेण
साम्राथ ब्रह्मभूतेन भारत ॥ तेजसा ज्वलयन्विष्णो व्यक्षस्य च महात्मनः ॥ ६८ ॥ सर्वेषां चैव देवानां बलिनां कामरूपिणाम् ॥
ऋषीणां तपसाढ्यानां वसतां विजने वने ॥ ६९ ॥

पतित होनेमें सब प्राणी पृथ्वीमें गिर पड़े ॥ ६४ ॥ पर्वतके शृंग चलायमान हो गये महावृक्ष चलायमान हो गये सब समुद्र भुजित हुए और दिशां
शोभित न हुई ॥ ६५ ॥ तब वृद्ध ब्राह्मण परत्र जप करने लगे और जीतनेवालोंका जो ब्रह्मतेज है ॥ ६६ ॥ उसकी शान्तिके अर्थ सब भूत इस
लोक और परलोकमें आत्माको आत्मासे समाधान कर अर्थात् जीवन्मुक्ति और विदेहमुक्तिके निमित्त योगप्राप्तिके हेतुसे ॥ ६७ ॥ रथंतर साम
(प्रणवारूप्य प्रतीक तथा शब्द ब्रह्मरूप साम) करके विष्णुके तेजसे प्रज्वलित महात्मा व्यक्षका ॥ ६८ ॥ सब बली तथा कामरूपी देवताओंका तथा

निर्जन वनमें निवास करनेवाले बड़े बड़ी तपस्वियोंको ॥ ६९ ॥ महायोगी विष्णुजी सब ओरसे तत्त्वसे भरे हुए रूपमें स्थित हो रथको उद्धार करने लगे ॥ ७० ॥ सम्पूर्ण बल और पुरुषार्थवाले देवताओंको देखकर हेतुरूप सींगोंपर उठाकर देवयान और पितृयानमार्गकी प्राप्तिके निमित्त हवयरूप अन्धकारसे उद्धार कर प्राणरूप योगबलसे मर्जने लगे ॥ ७१ ॥ इस प्रकार लिंगशरीररूप भूमिको जातकर योगभूमिकी प्राप्ति कहते हैं वह श्रृंगवान् तीसरे वायु विषय शुद्धत्व पदार्थको प्राप्त होकर पर्वमें समुद्रकी समान नाद करने लगा ॥ ७२ ॥ उस नादसे युद्धदुर्मद दैत्य वित्रस्त हो गये और फिर युद्ध करनेको तत्पर हुए अर्थात् लय विक्षेप विघ्न वहांभी आनकर प्राप्त हुए पहले लीन सुषुप्तिमें कहे जाते हैं दूसरा लीन विदेह कहा जाता है कारण

अथ विष्णुर्महायोगी सर्वतोऽदृश्य तत्त्वतः ॥ वृषरूपं समास्थाय प्रोज्जहार रथोत्तमम् ॥ ७० ॥ समाश्रान्तं देवगणैः समग्रबलपौरुषैः ॥ बलवास्तोलयित्वा तु विषाणाभ्यां महाबलः ॥ ननाद प्राणयोगेन मथ्यमान इवार्णवः ॥ ७१ ॥ तृतीयं वायुविषयं समाक्रम्य विषाणवान् ॥ ननाद बलवान्नादं समुद्र इव पर्वणि ॥ ७२ ॥ ततो नादेन वित्रस्ता दैतेया युद्धदुर्मदाः ॥ पुनस्ते कृतसन्नादा युयुधः सुमहाबलाः ॥ ७३ ॥ सर्वे वै बाहुबलिनः समर्थबलपौरुषाः ॥ सुरसैन्यं प्रमर्दन्तः प्रगृहीतशरासनाः ॥ ७४ ॥ अग्निं संघाय धनुषि शितं बाणं सुपत्रिणम् ॥ ब्रह्मास्त्रेणाभिसंयोज्य ब्रह्मदण्डं शिशोऽव्ययः ॥ सुमोच दैत्यनगरं त्रिधामात्रानुसंज्ञितम् ॥ ७५ ॥

कि उसमें स्थूल शरीर स्थाय होता है तीसरा लय प्रकृतिलीन कहाता है ॥ ७३ ॥ वे सब बड़े बाहुबली समर्थ बल और पुरुषार्थवान् थे, और शरासन ग्रहण कर देवताओंकी सेनाको मर्दन करने लगे ॥ ७४ ॥ धनुषमें अग्नि चढाकर बड़ा तीक्ष्ण बाण लेकर ब्रह्मास्त्रसे उसको संयुक्त कर अविनाशी शिवने तीन प्रकार पात्रावाला बाण प्रहार किया, अर्थात् अग्निदेवतात्मक तत्त्वमरयादि महावाक्यको ओंकाररूप धनुषपर चढाय " ओमि-
त्येतदक्षरमिदं सर्वं " सूक्ष्मबुद्धिसे तीक्ष्णकर भ्रमरहित वाक्यके तात्पर्यको जान, सूक्ष्मचित्तवृत्तिरूप ब्रह्मविद्या ब्रह्मास्त्रसे चिदाभास संज्ञक जीवको संयुक्त कर मूल अज्ञानरूप तीसरे दैत्य नगरपर उसको छोड़ा, मूल अज्ञान नष्ट होनेसे चौथा अविनाशी अवशिष्ट रहता है वह ब्रह्मदण्ड तीन मात्रा अकार

उकार मकार रूप विश्व तेषाम् प्राज्ञ संज्ञाफलं था ॥ ७५ ॥ सूक्ष्मधारायुक्त स्थूलदशार्म जाग्रते आदि भेदसे तीन प्रकार है ऐसा मनमें विचार कर शास्त्र-
युक्ति वीर्य ध्यानबल उग्रतप (मनश्चिद्विषयोंकी एकाग्रता) जीव ब्रह्मकी अभेदताका बाण छोड़ा ॥ ७६ ॥ वह सर्व प्राण हरनेवाला बाण कैर्योंके नगरपर
छोड़ा जो दीप्तिमान् सुवर्णके वर्णकी समान थे और बड़े निर्मल थे यह काव्यशोभा है ॥ ७७ ॥ विषैले सपनोंकी समान उन बाणोंको छोड़कर ओ बड़े दीप्तिमान्
तीन थे और वेमशान् थे उन्होंने त्रिपुर विदीर्ण कर दिया ॥ ७८ ॥ शरावातसे वह पुर विन्ध्याचलके शृंगकी समान प्रदीप्त हुआ उस पुरके सहित गोपुरादि
स्थान विदीर्ण होने लगे ॥ ७९ ॥ अग्निमर्त्तवाले पदार्थ अग्निसे प्रसीत हो गये और वह पुर पृथ्वीपर गिरे, जैसे यज्ञ बैसी पूजा इस न्यायसे बुद्धिमय पुर

तं बाणं त्रिविधं वीर्यात्संधाय मनसा प्रभुः ॥ सत्येन ब्रह्मयोगेन तपसोऽग्रेण भारत ॥ ७६ ॥ सुमोच दैत्यनगरे सर्वप्राणहराञ्छरान् ॥
दीप्तान्कनकवर्णान्भान्सुवर्णान्श्च सुनिर्मलान् ॥ ७७ ॥ मुक्त्वा धरशरान्चोशान्क्षविषानिव पन्नगान् ॥ सुदीप्तैस्त्रिभिर्बाणैर्वैगिभिस्तद्विद्व-
रितम् ॥ ७८ ॥ शरवातप्रदीप्तानि विन्ध्याग्राणीव भारत ॥ गोपुराणि पुरेः सार्द्धं व्यशीर्यन्त नराधिप ॥ ७९ ॥ अग्निना संप्रदीप्तानि
वह्निगर्भाणि भारत ॥ धरणौ संप्रपद्यन्त पुराणि वसुधाधिप ॥ ८० ॥ तानि वेदूर्यवर्णानि शिखराणि गिरेरिव ॥ शंकरेण प्रदग्धानि
ब्रह्मास्त्रेणापतन् नृप ॥ ८१ ॥ इते च त्रिपुरे देवैर्बाहो इषांस्त्रिकोरीताः ॥ सर्वान् जहीति शत्रूंस्तत्र प्रवृद्धान्पुंसुषोत्तम ॥ ८२ ॥
विष्णुरेव महायोगी योगेन प्रस्मयन्निव ॥ स्तूयते ब्रह्मसदृशैर्ऋषिभिः शंकरेण च ॥ ब्रह्मणः सहितैर्देवैः संपन्नबलपौरुषैः ॥ ८३ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रिपुरवधो नाम त्रयस्त्रिंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३३ ॥

रज्जुसर्पकी समान नष्ट हो गये ॥ ८० ॥ वे वेदूर्यमणिके वर्णवाले पर्वतशिखरकी समान शंकररूप कल्याणकारी जीवने ब्रह्मविद्यालपी अस्त्रसे नष्ट कर दिये
॥ ८१ ॥ त्रिपुरके नष्ट होनेमें देवता जयध्वनि करके लगे हे पुरुषोत्तम ! धर्मरूप महाविष्णु आप सब शत्रुओंको जीतो ॥ ८२ ॥ विष्णुरूप धर्म महायोगी योगसे
(बुद्धिद्वारा) अजुष्टानको प्राप्त होकर आश्चर्यकी समान स्तुति किया जाता है और ब्रह्माकी समान ऋषि और सम्पन्न बलपौरुषवाले देवताओंके सहित
ब्रह्माद्वारा स्तुतिको प्राप्त होता है तात्पर्य यह है कि इस अध्यायमें सम्पूर्ण भारतका यह आशय प्रगट किया है कि धर्मबलसे अविद्या नष्ट होकर विद्यासे
परमानन्दकी प्राप्ति होती है ॥ ८३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां त्रिपुरवधो नाम त्रयस्त्रिंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३३ ॥

वैशंपायन बोले; अब क्रमसे हरिवंशकी कथाकी सूची कहते हैं, पहले आदिसर्ग फिर भूतसर्ग ॥ १ ॥ वैष्णवपुत्र पृथुका आख्यान, मनुका कीर्तन, वैश्वन्त-
कुलकी उत्पत्ति, धुंधुमारकी कथा ॥ २ ॥ गालवकी उत्पत्ति, इक्ष्वाकुवंशका कीर्तन, पितृकल्पकी, उत्पत्ति, चन्द्रमा बुधकी उत्पत्ति ॥ ३ ॥ कीर्तिवर्द्धन अमावसुका
वंशकथन, इन्द्रकी च्युति और प्रतिष्ठा, क्षत्रवृद्धोत्पत्ति ॥ ४ ॥ दिवोदासकी प्रतिष्ठा, क्षत्रियश्रेष्ठ त्रिशंकुका चरित्र, यथातिचरित्र, पुरुवंशका कीर्तन ॥ ५ ॥
कृष्णका चरित्र, स्यमंतकमणिका वर्णन, संक्षेपसे विष्णुका प्रादुर्भाव ॥ ६ ॥ तारकामय युद्ध, ब्रह्मलोकका वर्णन, ब्रह्माके वचनसे विष्णुका योगनिद्रासे
वैशम्पायन उवाच ॥ हरिवंशोऽत्र वृत्तान्ताः प्रकीर्त्यन्ते क्रमोदिताः ॥ तत्राद्यमादिसर्गस्तु भूतसर्गस्ततः परः ॥ १ ॥ पृथोर्वैष्णवस्य
चाख्यानं मनूनां कीर्तनं तथा ॥ वैवस्वतकुलोत्पत्तिर्धुंधुमारकथा तथा ॥ २ ॥ गालवोत्पत्तिरिक्ष्वाकुवंशस्याप्यनुकीर्तनम् ॥ पितृ-
कल्पस्तथोत्पत्तिः सोमस्य च बुधस्य च ॥ ३ ॥ अमावसोरन्वयस्य कीर्तनं कीर्तिवर्द्धनम् ॥ च्युतिप्रतिष्ठे शक्रस्य प्रसवः क्षत्र-
वृद्धजः ॥ ४ ॥ दिवोदासप्रतिष्ठा च त्रिशङ्कोः क्षत्रियस्य च ॥ यथातिचरितं चैव पुरुवंशस्य कीर्तनम् ॥ ५ ॥ कीर्तनं कृष्णसंभूतेः
स्यमन्तकमणेस्तथा ॥ संक्षेपात्कीर्तिता विष्णोः प्रादुर्भावस्ततः परम् ॥ ६ ॥ तारकामययुद्धं च ब्रह्मलोकस्य वर्णनम् ॥ योग-
निद्रासमुत्थानं विष्णोर्वाक्यं च वेधसः ॥ ७ ॥ पृथ्वीवाक्यं च देवानामंशावतरणं तथा ॥ ततो नारदवाक्यं च स्वप्नगर्भविधिस्तथा ॥ ८ ॥
आर्यास्तवः पुनः कृष्णे समुत्पत्तिः प्रपञ्चतः ॥ गोव्रजे गमनं विष्णोः शकटस्य निवर्तनम् ॥ ९ ॥ पूतनाया वधो भङ्गो यमलार्जुनयो-
रपि ॥ वृकसंदर्शनं चैव वृन्दावननिवेशनम् ॥ १० ॥ प्रावृषो वर्णनं चापि यमुनाहृददर्शनम् ॥ कालीयस्यापि दमनं धेनुकस्य च
भञ्जनम् ॥ ११ ॥ प्रलम्बनिधनं चैव शरद्वर्णनमेव च ॥ गिरियज्ञप्रवृत्तिश्च गोवर्द्धनविधारणम् ॥ १२ ॥

उठना ॥ ७ ॥ पृथ्वीके वाक्य, देवताओंका अंशावतार होना, नारदवाक्य, स्वप्नगर्भविधि ॥ ८ ॥ आर्यास्तव, प्रपञ्चसे कृष्णकी उत्पत्ति, विष्णुका गोव्रजमें
जाना, शकटका तोड़ना ॥ ९ ॥ पूतनावध, यमलार्जुनवृक्षका गिराना, वृकोंका दीखना, वृन्दावनमें जाना ॥ १० ॥ वर्षाका वर्णन, यमुनाहृदका देखना
कालीनागका दमन, धेनुकवध ॥ ११ ॥ प्रलम्बनिधन, शरद्वर्णन, गिरियज्ञप्रवृत्ति, गोवर्द्धनधारण ॥ १२ ॥

गोविन्दका अभिषेक, गोपियोंसे कीडा अरिष्टासुरनिधन, अक्रूरका प्रेषण ॥ १३ ॥ अन्धकके वाक्य, केशीका निधन, अक्रूरका आना, नागलोकका दर्शन ॥ १४ ॥ धनुर्भङ्ग, कंसवाक्य कथन, कुवलयपीड और चाणूरका वध ॥ १५ ॥ कंसको निधन, उसकी स्त्रियोंका विलाप करना, उग्रसेनका अभिषेक, यादवोंको आश्वासन करना ॥ १६ ॥ गुरुकुलसे लौटकर आना, रामकृष्णसे वचन कहना, मथुराका घेरना, जरासंधका लौट जाना ॥ १७ ॥ विकट्टुवाक्य, रामका दर्शन और भाषण, गोमन्तका अधिरोहण, जरासंधकी गति ॥ १८ ॥ गोमन्तपर्वतका जलाना, करवीरपुरमें जाना, शृगालवध, गोविन्दस्याभिषेकं च गोपीसंकीर्तनं तथा ॥ रिष्टासुरस्य निधनमक्रूरप्रेषणं तथा ॥ १३ ॥ अन्धकस्य च वाक्यानि केशिनो निधनं तथा ॥ अक्रूरागमनं चैव नागलोकस्य दर्शनम् ॥ १४ ॥ धनुर्भङ्गस्य कथनं कंसवाक्यमतः परम् ॥ कुवलयपीडितश्चाणूरान्धवधस्तथा ॥ १५ ॥ कंसस्य निधनं चापि विलापः कंसयोषिताम् ॥ उग्रसेनाभिषेकश्च यादवाश्वासनं तथा ॥ १६ ॥ प्रत्यागातिर्गुरुकुलादथोक्ता रामकृष्णयोः ॥ मथुरायाश्चोपरोधो जरासन्धनिवर्तनम् ॥ १७ ॥ विकट्टुवाक्यं रामस्य दर्शनं भाषणं तथा ॥ गोमन्तारोहणं चापि जरासंधगतिस्तथा ॥ १८ ॥ गोमन्तस्य गिरेर्दोहः करवीरपुरे गतिः ॥ शृगालस्य वधस्तत्र मथुरागमनं ततः ॥ १९ ॥ यमुनाकर्षणं चैव मथुरापकमस्तथा ॥ उपायेन वधः कालयवनस्य प्रकीर्तितः ॥ २० ॥ निर्माणं द्वारवत्यास्तु रुक्मिणीहरणं तथा ॥ विवाहश्चैव रुक्मिण्या रुक्मिणो निधनं तथा ॥ २१ ॥ बलदेवाह्निकं पुण्यं बलमाहात्म्यमेव च ॥ नरकस्य वधः पारिजातस्य हरणं तथा ॥ २२ ॥ द्वारवत्या विशेषेण पुनर्निर्माणकीर्तनम् ॥ द्वारकायां प्रवेशश्च सभायां च प्रवेशनम् ॥ २३ ॥ नारदस्य च वाक्यानि वृष्णिवंशानुकीर्तनम् ॥ षट्पुरस्य वधाख्यानं मेघकस्य निवर्हणम् ॥ २४ ॥ समुद्रयात्रा कृष्णस्य जलकीडाकुतूहलम् ॥ तथा भैमप्रवीराणां मधुपानपवर्तकम् ॥ २५ ॥ मथुरामें जाना ॥ १९ ॥ यमुनाकर्षण, मथुराका अपक्रम उपायसे कालयवनका वध ॥ २० ॥ द्वारकापुरीका निर्माण, रुक्मिणीहरण, रुक्मिका निधन ॥ २१ ॥ बलदेव आह्निक, बलदेवजीका माहात्म्य, नरकवध, पारिजातहरण ॥ २२ ॥ विशेष कर फिर द्वारकापुरीका निर्माण कहना, द्वारका और सभामें प्रवेश ॥ २३ ॥ नारदके वाक्य, वृष्णिवंशका कीर्तन, षट्पुरका आख्यान, मेघकका निवर्हण ॥ २४ ॥ कृष्णकी समुद्रयात्रा, जलविहार

वर्णन, भैमवंशपालोंका मधुपान करना ॥ २५ ॥ हरिके निकट छालिख्य गांधर्व (गीत) का गान करना, मातुदुहिता मातुमतीका हरण ॥ २६ ॥ शम्बरवध, धन्योपाख्यान कथन, वासुदेवमाहात्म्य, बाणासुरका युद्ध ॥ २७ ॥ भविष्यपर्वमें पुष्करमातुर्वि कथन, वाराह नृसिंह और वामन चरित्रवर्णन ॥ २८ ॥ कृष्णकी कैलास यात्रा, पौंड्रकवध, हंस डिम्भक वध कथन ॥ २९ ॥ त्रिपुरसंहार हे राजन् । इस ग्रंथमें पापनाशक इतने चरित्र वर्णन किये हैं ॥ ३० ॥ जो सावधान होकर सायंप्रातःकालमें यह वृत्तान्त सुनते हैं हे कुरुराज ! वह कामनाको प्राप्त हो विष्णुके धानको जाते हैं यह धन्य यशदाता

ततश्छालिख्यगान्यसिमुशहरणं हरेः ॥ भानोश्च दुहितुर्मातुमत्याहरणकीर्तनम् ॥ २६ ॥ शम्बरवधश्च धन्योपाख्यानमेव च ॥ वासुदेवस्य माहात्म्यं बाणयुद्धं प्रपाञ्चितम् ॥ २७ ॥ भविष्यं पुष्करं चैव प्रपञ्चेनैव कीर्तितम् ॥ वाराहं नारासिंहं च वामनं बहुविस्तरम् ॥ २८ ॥ कैलासयात्रा कृष्णस्य पौंड्रकस्य वधस्ततः ॥ हंसस्य डिम्भकस्यैव वधश्चैव प्रकीर्तितः ॥ २९ ॥ पुरत्रयस्य संहार इति वृत्तान्तसंग्रहः ॥ कथितो नृपशार्दूल सर्वपापप्रणाशनः ॥ ३० ॥ वृत्तान्तं शृणुयाद्यस्तु सायं प्रातः समाहितः ॥ याति वैष्णवं धाम लब्धकामः कुरुद्रह ॥ धन्यं यशस्यमायुष्यं भक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ ३१ ॥ इति श्रीम० वि० ह० भवि० वृत्तान्तसंग्रहो नाम चतुर्विंशधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३४ ॥ इति हरिवंशः समाप्तः ॥ अथ श्रवणफलकथनम् ॥ जनमेजय उवाच ॥ हरिवंशे पुराणे तु श्रुते मुनिवरोत्तम ॥ किं फलं किं च देयं वै तद्ब्रूहि त्वं ममाग्रतः ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ हरिवंशे पुराणे तु श्रुते च भरतोत्तम ॥ कायिकं वाचिकं चैव मनसा समुपार्जितम् ॥ २ ॥

आयु भाकि और मुक्तिका देनेवाला है ॥ ३१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वृत्तान्तसंग्रहो नाम चतुर्विंशधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३४ ॥ अथ श्रवणफलकथनम् ॥ ॥ जनमेजये बोले, हे द्विजोत्तम ! हरिवंशके श्रवण करनेका क्या फल है और क्या विधान है इसमें क्या देना चाहिये सो आप हमसे कहिये ॥ १ ॥ वैशम्पायन बोले, हे भरतसत्तम ! हरिवंशपुराण श्रवण करनेमें कायिक वाचिक और मानसिक पाप ॥ २ ॥

सब ऐसे नष्ट हो जाता है जैसे सूर्योदयमें जाड़ा नष्ट हो जाता है जो अठारह पुराणोंके सुननेका फल है ॥ ३ ॥ इसमें सन्देह नहीं वह फल वैष्णव (हरिभक्त) को प्राप्त हो जाता है हरिवंशका एक श्लोक आधा श्लोक वा चौथाई ॥ ४ ॥ जो श्रद्धासे सुनते हैं वे वैष्णवपदको प्राप्त होते हैं जम्बुद्वीपको प्राप्त हो कलिमें इसके सुननेवाले दुर्लभ होंगे ॥ ५ ॥ हे राजन् ! यह मैं सत्यही सत्य कहता हूं पुत्रकी कामना करनेवाली स्त्रियोंको विष्णुका यश सुनना चाहिये ॥ ६ ॥ और तीन निष्क सुवर्ण दक्षिणामें देना चाहिये यह वाचकको यथाशक्ति फलकी इच्छा कर देना चाहिये ॥ ७ ॥ और

तत्सर्वं नाशमायाति हिमं सूर्योदये यथा ॥ अष्टादशपुराणानां श्रवणाद्यत्फलं भवेत् ॥ ३ ॥ तत्फलं समवाप्नोति वैष्णवो नात्र संशयः ॥ इलोकाद्वै इलोकपादं वा हरिवंशसमुद्रनम् ॥ ४ ॥ शृण्वन्ति श्रद्धया युक्ता वैष्णवं पदमायुगुः ॥ जम्बुद्वीपं समाश्रित्य श्रोतारो दुर्लभाः कलौ ॥ ५ ॥ भविष्यन्ति नरा राजन् सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ स्त्रीभिश्च पुत्रकामाभिः श्रोतव्यं वैष्णवं यशः ॥ ६ ॥ दक्षिणा चात्र देया वै निष्कत्रयसुवर्णकम् ॥ वाचकाय यथाशक्त्या यथोक्तं फलमिच्छता ॥ ७ ॥ स्वर्णशृङ्गां च कपिर्लां सवत्सां वस्त्रसंयुताम् ॥ वाचकाय प्रवद्याद्वै आत्मनः श्रेयकाङ्क्षया ॥ ८ ॥ अलंकारं प्रदद्याच्च पाण्योर्वै भरतर्षभ ॥ कर्णस्याभरणं दद्याद्यानं च सविशेषतः ॥ ९ ॥ भूमिदानं समादद्याद्ब्राह्मणाय नराधिप ॥ भूमिदानसमं दानं न भूतं न भविष्यति ॥ १० ॥ शृणोति श्रावयेद्वापि हरिवंशं तु यो नरः ॥ सर्वथा पापनिर्मुक्तो वैष्णवं पदमाप्नुयात् ॥ ११ ॥ पितृनुद्धरते सर्वानेकादश समुद्रवान् ॥ आत्मानं ससुतं चैव स्त्रियं च भरतर्षभ ॥ १२ ॥ दशांशश्चात्र होमो वै कार्यः श्रोत्रा नराधिप ॥ इदं मया तवाग्रे च त्वं प्रोक्तं नरर्षभ ॥ १३ ॥

सोनेके साँग मढवाकर बछड़े सहित कपिला नौको वस्त्रसहित अपने मंगलके निमित्त वाचकको देनी चाहिये ॥ ८ ॥ और बहुमूल्यके अलंकारभी देने चाहिये कर्ण आभरण और विशेषकर यानभी देने चाहिये ॥ ९ ॥ हे राजन् ! ब्राह्मणके निमित्त भूमिदान करना चाहिये पृथ्वीदानकी समान और दान न है और न होगा ॥ १० ॥ जो ब्राह्मण हरिवंश सुनते और सुनाते हैं वह सर्वथा पापरहित हो वैष्णवपदको प्राप्त होते हैं ॥ ११ ॥ और अपने ग्यारह पितरोंका उद्धार करते हैं. हे राजन् ! अपनेको पुत्र और स्त्रियोंको उद्धार करता है ॥ १२ ॥ हे राजन् ! श्रोताको दशांश हवन करना चाहिये. हे

राजन् । यह मैंने सब आपके आगे वर्णन किया ॥ १३ ॥ इसके स्मरणमात्रसे यह प्राणी सब पापोंसे छूट जाते हैं, अपुत्र पुत्रको और निर्धन धनको प्राप्त होता है ॥ १४ ॥ जो फल मनुष्योंको नरमेध और अश्वमेधसे प्राप्त होता है वह फल इस पुराणके श्रवणसे मिलता है ॥ १५ ॥ ब्राह्मण हत्यारा, गजहत्यारा, गोहत्यारा, सुरापान करनेवाला, गुरुद्वीगानी, ऐसे पुरुषोंकी एकबार पुराण श्रवण करनेसे पवित्र हो जाते हैं इसमें संदेह नहीं ॥ १६ ॥ हे

यस्य स्मरणमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ अपुत्रः पुत्रमाप्नोति अधनो धनमाप्नुयात् ॥ १४ ॥ नरमेधः श्वमेधोऽपि यत्फलं प्राप्नोति नरे ॥ तत्फलं लभते नूनं पुराणश्रवणादरे ॥ १५ ॥ ब्रह्महा भूगहा गोघ्नः सुरापानो गुरुतल्पगः ॥ सकृत्पुराणश्रवणात्पूतो भवति नान्यथा ॥ १६ ॥ इदं मया ते परिकीर्तितं महच्छ्रीकृष्णमाहात्म्यमपारमद्भुतम् ॥ शृण्वन् पठन्नाशु समाप्नुयात्फलं यच्चापि लोकेषु सुदुर्लभं महत् ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि श्रवणफलकथनं नाम पञ्चत्रिंशधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३५ ॥ इति हरिवंशग्रन्थः समाप्तः ॥ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥

राजन् । यह मैंने तुम्हारे आगे श्रीकृष्णका अपार और अद्भुत चरित्र कीर्तन किया इसके श्रवण पठन करनेसे यह प्राणी लोकमें दुर्लभ फलको प्राप्त होता है ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि

पञ्चत्रिंशद्विकशततमोऽध्यायः ॥ १३५ ॥

॥ इति हरिवंशे भाषाटीकायुतं भविष्यपर्व समाप्तम् ॥

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

[१=हरिवंशपर्व :: २=विष्णुपर्व :: ३=भविष्यपर्व]

अ	श्लोकारम्भ	पर्व अ० श्लोक	श्लोकारम्भ	पर्व अ० श्लोक	श्लोकारम्भ	पर्व अ० श्लोक	श्लोकारम्भ	पर्व अ० श्लोक	
श्लोकारम्भ	पर्व अ० श्लोक	अकृत्वा पादयोः शौचं	१.३.१२२	अक्षकं बीजकैश्चैव	२.६८.१६	अगच्छ दृढवा भूता	१.६.१७	अग्निं विविक्षुः कृष्णेन	२.११२.२६
अंशस्तु दानवेन्द्रस्य	३.५३.४५	अकृष्टपच्या पृथिवी	१.५.३२	अक्षत्रियाश्च राजानो	३.३.६	अगस्तिभुवनं चैव	३.४६.५७	अग्निं संधाय घनुषि	३.१३३.७५
अंशावतरणं विष्णोर्य	१.५४.१३	अक्रूरं कुरु मे प्रतिमेतां	२.२२.६८	अक्षप्रपातने चैव डिम्भौ	२.१०२.१०	अगस्त्येन पुलस्त्येन	२.१२५.६०	अग्निमग्निः प्रविष्टस्तु	२.१२५.३४
अंशावतरणे कृत्स्नं	२.४६.३२	अक्रूरगच्छ शीघ्रं	२.२२.६४	अक्षयश्चाव्ययश्च	३.७२.८३	अगस्त्यो गालवो गार्ग्यः	२.१०६.८६	अग्निमाहवनीयं च वेदीं	१.४०.२८
अशेऽस्मि युवर्जार्जिता	१.१०.११	अक्रूरयज्ञा इति ते ख्याता	१.३६.२७	अक्षयः सर्ववासस्ते	३.८३.२४	अगस्त्यो गालवो गार्ग्यः	२.१०६.८६	अग्निं राहवनीयस्तु ततः	२.१२२.२०
अकरात्तेत्र शैलेन्द्र	३.३५.२८	अक्रूरस्तु ततो रतू	१.३६.४	अक्षयाः संति मे तूणाः	३.५६.५८	अगाध द्योतमानं च	२.११.४६	अग्निर्वा ब्राह्मणो वादि न	२.८०.४४
अकरोत्पुत्रकामस्तु	१.१०.३	अक्रूरस्तु महातेजा	२.२२.१०२	अक्षरं च क्षरं चैव	३.१६.४६	अगाधे सलिलस्तब्धे	३.१०.३४	अग्निश्चक्षुर्हं विज्योति	३.१४.५४
अकरोद्राजसूयं कृत	३.१२८.१०	अक्रूरस्त्वन्वकैः	१.३६.३०	अक्षराणामकारस्त्वं	३.८८.५५	अगृह्णन्त शरांधोरांस्ते	३.५६.६७	अग्निष्टोमादयो यज्ञा	२.११०.७८
अकर्तव्यं यदि कृतं	२.२३.१६	अक्रूरस्य कथामिश्च	२.२६.३१	अक्षराद ब्राह्मणाः सौम्या	३.२१.६	अगृह्णन्ममतन्नाम	३.६१.७	अग्निष्वाता इतिख्याता	१.१८.१६
अकर्मण्येषु वृक्षेषु	२.८.१४	अक्रूरेण समाहूतस्तेन	३.८२.२६	अक्षः श्रुतर्वाचा एतः	२.६१.१६	अगृह्णीतां बराह्मिया	२.६४.५६	अग्निः सुवर्णस्य गुरु	१.५२.४४
अकस्मात्तुपुरी सा	१.२६.६२	अक्रूरेणोग्रसेनयां	१.३४.१४	अक्षान्तश्चारिसेनयां	२.५१.४१	अग्नयर्कं संग्रशाकारं	३.६३.१६	अग्निहोत्राकुलां दिव्यां	३.७३.४०
अकारणार्थेन विकृष्यमाणा	२.६५.५५	अक्रूरेणोग्रसेन्यां	१.३८.५५	अक्षान रुक्मी ततो	२.६१.३६	अग्निचक्रोपमं दीप्तं	३.५५.६१	अग्निहोत्रा कुले काले	२.२५.११
अकार्यं कारिणं वापि	२.७८.१०	अक्रूरे विपृथो चैव	२.५६.४८	अक्षुद्राः सत्यवन्तश्च	२.१२१.५३	अग्निजिह्वो दभरोमा	३.३४.३५	अग्निहोममयंलोकं	१.४६.२०
अकाले पादपः सर्वे	३.४६.१७	अक्रूरोदन्तवक्त्रं तु	२.५६.५६	अक्षौहिणीस्तु शूराणां	२.१६.७६	अग्निना संप्रदीप्तानि	३.१३३.८०	अग्नेराहवनीयस्य प्रभया	२.१२२.१४
अकिंचिदुक्त्वा तं विप्रं	२.११२.१८	अक्रूरोऽपि नमस्कृत्य	२.२७.८	अक्षौहिण्यश्च तस्यास	२.३६.३८	अग्निपुत्रः कुमास्तु	१.३.४२	अग्नेर्जन्म तथा श्रुत्वा	१.१८.६३
अकृताग्राणिभोक्षयन्ति	३.३.४१	अक्रूरोऽपि यथाज्ञप्तः	२.२४.३	अक्षौहिण्या तु सैन्यस्य	१.३५.१६	अग्निं दैत्याः प्रवृत्ताग्रैरभि	३.२८.८५	अग्रतः स्थितशैनेयं	३.११५.३

अङ्गे परमनारीणां	३.१३२.३७	अचिन्त्यरूपमास्थाय	२.२२.३८	अजश्यामी तु पाश्वरीं	३.१.१३	अणुर्वामननामासि	३.८८.५२	अतिप्रसंगं तु विचिन्त्य	२.८६.५२
अंगदी कुंडली तूणीं	३.६५.१४	अचिन्त्यविक्रमः श्रीमान्	३.५८.२८	अजस्तु रघुतो जज्ञे	१.१५.२६	अणुहः कस्य वै पुत्रः	१.२०.६	अतिरात्रस्य यज्ञस्य	३.१३२.८४
अंगपुत्रो महानीसीद्रा	१.४१.४३	अचिन्त्य विभवं देवं	३.११४.२५	अजस्य कर्ता भुवनस्य	३.८०.४२	अणुहस्तो नृपश्रेष्ठो	१.२३.२४	अतिवृष्टस्य तैर्मघैः	२.१८.४५
अंगप्रथमतो जज्ञे	१.३१.३४	अचिन्त्यश्च प्रमेय	३.३२.५५	अजस्य चैकपादस्य	३.५८.७५	अणुहो नाम तस्याऽसीत्	१.२३.५	अतसर्वत्रगः शूरो	३.६४.१७
अंगवंग कलिगैश्च	२.५६.५३	अचिन्त्याय सुचिन्त्याय	३.६०.१६	अजातपुत्राय सुतान्	१.३८.८	अत ऊर्ध्वं च्युते	३.४.३	अतीतानागतानां वै	१.७.८६
अंगात्सुनीयापत्यं वै	१.२.२०	अचिन्त्याह्यप्रमेयासि	२.१२०.२५	अजातशत्रुः शत्रूणां	१.३४.४०	अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि	१.३२.७५	अतीत देवा रक्षन्ति	२.३२.१३
अंगांगान्युपगृह्यैव	३.२८.५१	अचिरेणैव कालेन	३.११२.११	अजाय विष्णवे	३.६०.८	अतः परं प्रवक्ष्यामि	३.१३२.५३	अतीव बलदेवं तं	२.६२.२
अंगान् वंगान् कलिगाश्च	३.४.३१	अच्छोदं नाम विख्यातं	१.१८.२७	अजाश्चै वैकवशाश्च	३.१४.४३	अतः प्रभृति संग्रामो	२.३६.८१	अतीव बालभावतवाहातु	२.५१.२
अंगारवर्णां सिकता	३.२७.३३	अजकस्य तु दायादा	१.२७.११	अजितात्मा ममभ्राता	२.७०.२२	अतः प्रसादयिष्ये त्वां	२.५१.३	अतीव भीमः संह्लादो	३.५४.७६
अंगारस्य तु दायादो	१.३२.१२६	अजगन्ध कृतोन्मुक्तः	३.२७.२६	अजीजनत्पुष्करिण्यां	१.२.१६	अतः समस्तदेवानां	२.७१.२६	अतीव मित्रतां यातो	३.१२१.१७
अंगिराश्चोदधिष्यश्च	१.७.७१	अजमीढस्य कशिन्यां	१.३२.४३	अजेय इतितं तु हृष्ट्वा	२.११६.१४४	अतस्तेवर्तयिष्येऽहमिति	१.२०.१४१	अतीव रम्यः सोऽथासीद	२.६८.७६
अंगिरास्तपसो मूर्ति	१.७.७५	अजमीढस्य दायादो	१.२०.३७	अजेयः शाश्वतो देवः	२.१२७.७८	अतिक्रम्योदधेर्वलामपरांते	२.३६.३१	अतीव शशुभे रूपं	२.१२२.३
अंगुष्ठमात्रं पुरुष	१.१७.७	अजमीढस्य पत्नस्तु	१.३२.४२	अजेयस्सर्व लोकेषु	२.५०.४६	अतिथौ पूज्यमाने	३.७६.३४	अतीव सुकुमारांगी	२.२८.८३
अंगुष्ठाद् क्षिराद्दक्ष	३.३६.२०	अजमीढात्पुनर्जातः	१.३२.७६	अजै रूपादहिबुध्न्यः	१.३.५०	अतिदाहो महान्स्वेदः	२.११७.५६	अतीव जयेल्लोकान्स	२.८६.६२
अंगुष्ठाद् ब्रह्मणा जाता	१.२.५२	अजमीढाः स्मृता ह्येते	१.३२.८१	अजैकपादहिबुध्न्यः	३.६६.२४	अयिदुल्ललितैः कन्या	२.६०.६६	अतीव हि त्व स्त्रीलोके	२.२८.१०२
अचलोऽयं शिलायोनि	२.४२.२६	अजमीढोद्विमीदश्च	१.२०.१८	अभिल्लिकण्टकवनं	२.८.२३	अतिदैवं तु कृष्णस्य	२.१८.६२	अतीव हि पुरी रम्या	२.६३.२२
अचिन्तयज्जगन्नाथ	३.८१.३	अजमीढोऽपरो वंशः	१.३२.६३	अंजनं रोचनं चापि	२.७८.२८	अतिनामा सहिष्णुश्च	१.७.३१	अतीवामानुषीं मेधां	२.३३.८
अचिन्तयज्जगन्नाथ	३.१००.४	अजय्यौ शत्रुसंधानाम	३.१०७.६	अट्ठवं पृथिवी कृत्स्ना	२.१.२७	अतिनामा सहिष्णुश्च	३.६६.८	अतो बुद्ध्या समीक्षस्व	३.४६.३०
अचिन्तयित्वा तु	३.५६.११	अजरममरमेकं	१.१३२.१००	अट्टशला जनपदा	३.३.१२	अतिप्रवृद्धो मतश्च	२.२४.११	अतर्थं न प्रविष्टोऽहं	२.५१.१६
अचिन्त्यं सर्वभूतानां	३.८७.५	अजरश्चामरश्चैव	२.१२६.१५०	अणिमा लघिमा चैव	३.६३.८	अतिप्रसक्तौ तौ हृष्ट्वा	२.७.१२	अतर्थं वैनतेय त्वां	२.५५.१००

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

३

अतोर्य वनतेतोऽयं	२.५१.३४	अत्र हेतुरहं युद्धे	२.८३.३०	अथ ते पार्षदास्तत्र	२.११७.६	अथ पुत्र सहस्राणि	१.३.७	अथ रामोऽन्नवीद्वाक्यं	२.१२२.११
अत्यद्भुतं समादृष्टं	३.१०२.१३	अत्राश्चयत्तिकं स्तोत्रं	२.१०६.१	अथ ते सोदरा जाता	१.२१.३३	अथ पुत्रानिमांस्तस्य	१.७.२८	अथर्वभूता इत्येते	३.१४.२६
अत्यद्भुतं सुगन्धं च	२.६६.१६	अत्रिर्वसिष्ठी भगवान्	१.७.३४	अथ ती जातहर्षो तु	२.१४.१	अथप्रद्युम्नकोन्तेय	३.६०.५२	अथर्वाणं सुशिरसं	२.७२.३३
अत्यद्भुतं सविक्रांतो	३.१२४.१४	अत्रिश्रेष्ठानि गोत्राणि	१.३१.१५	अथ ती बाहुभिर्वीरो	३.६७.२५	अथ प्रभाते विमले	३.१२७.२	अथ वर्षगणानेवं	३.१३२.४६
अत्यद्भुतमाचिन्त्यं च	२.६४.४२	अत्रैव तावत्त्वरितं	३.५६.३	अथ ती हसडिम्भकौ	३.१२१.१	अथ बाणसहस्रेण	३.६०.६६	अथवा कार्यलोपो वै	२.१२७.५०
अत्यद्भुतामिदवाक्यं	२.१२१.११३	अत्रैवोदाहरन्तीमं	१.३२.१५	अथ दामोदरः श्रीमान्	२.८.८	अथ बाणस्तु तं दृष्ट्वा	२.१२६.३६	अथवा तिष्ठत रथैः	२.३५.७६
अत्यद्भुतानि कर्माणि	१.१.७	अत्रोपविष्टं देवेशं	२.५०.३०	अथ दीक्षां समास्थाय	३.२६.२	अथ बाणोऽन्नवीद्वाक्यं	२.११६.१६	अथवा त्वं क्षणं तिष्ठ	३.१२७.२६
अत्यन्तखेदिनो युद्धे	३.१२४.१६	अथ कालोत्सवं चक्रे	२.६३.१८	अथ दीर्घस्य कालस्य	१.५२.३०	अथ ब्रह्मा महाभागो	३.२८.३७	अथवा नैव विद्यते	३.२४.१४
अत्यन्तबलिनोमत्तौ	३.१११.६६	अथ कृष्णं तदोवाच	२.८५.५६	अथ दीर्घेण कालेन	१.२६.५५	अथ भीतो महारौद्रमस्त्रं	३.१२७.४७	अथवा भवितव्येन	२.७२.१५
अत्यन्तबलिनोमत्तौ	३.११२.७	अथ कृष्णस्य कौरव्य	२.७६.१	अथ दुर्योधनो राजा	१.३६.२८	अथ भीतो महारौद्रमस्त्रं	३.१२८.१	अथवा मे प्रयच्छस्व	२.६१.१५
अत्यर्थं तप्यते वीर	२.१०४.२८	अथ कृष्णोऽन्नवीद्वाक्यं	२.१२७.१२२	अथ दृष्टो हरिविष्णुः	३.८१.१६	अथ भूतानि सर्वाणि	३.२८.६५	अथ वायुर्धनीभूतो	३.२८.१०
अत्यर्थं रूपतः कान्ता	२.५६.४०	अथ क्रुद्धो सडिम्भको	३.१२६.४	अथ देवप्रभावेन	२.८७.१६	अथ भूत्वा कुमारी	१.३७.१०	अथ वायोरतिगतिमास्थाय	२.१२२.१०
अत्र ते कीर्तयिष्यामि	१.१६.१८	अथ क्रुद्धो नृपवरो विद्ध	३.१२५.५	अथ दैत्या जयं प्राप्ता	३.१३३.३३	अथ मूर्ति समाधाय	३.१६.१६	अथ वा सर्वं विद्विष्णुः	३.११४.२१
अत्र ते वसतस्तात	२.३७.३१	अथगन्धं समासाद्य	३.३०.६	अथ दैत्याधिपं प्रात	३.७२.३७	अथ योगविदां श्रेष्ठं	३.१२.१	अथ वाहं भविष्यामि	२.३२.४५
अत्र नो रोचते मह्यं	२.५६.७	अथ चित्रस्थस्यापि	१.३१.४६	अथ दैत्या हतास्तत्र	३.२८.८४	अथ रक्तमहावृष्टि	३.५७.५२	अथ विज्ञानं योगेन	१.३६.३५
अत्र मे नारदः प्राह	२.२२.६०	अथ चिन्तयती सा तु	२.११६.२	अथ द्वाखतीं प्राप्य	२.११६.१	अथ रत्नानि चाग्र्याणि	१.३६.२६	अथ विव्यधिरे देवाः	१.४६.६२
अत्र मे शंकते बुद्धिः	२.२२.४७	अथ चेष्टितुमारब्धा	३.१८.२१	अथ द्वितीयं वक्ष्यामि	२.७६.४१	अथ राजा जगन्नाथ	३.१०४.६	अथ विव्याद्य समरे	३.५५.१२४
अत्र मे संशयस्तीव्र	१.१६.३८	अथ तत्र महाशब्दः	३.६५.८	अथ नारायणसुतो	२.७३.५०	अथ राजा विवस्वन्त	१.३८.१७	अथ विष्णुरयं	३.८२.२
अत्र मे संशयो	३.४८.४	अथ तस्य निरीक्षन्त्या	२.१०४.६	अथ पर्वतभूतं तत्तिमिरं	२.११३.२२	अथ राजा सरस्नातो	१.२४.१७	अथ विष्णुर्महातेजा	२.७३.१
अत्र रुद्रास्तथा साध्या	३.१३२.६	अथ तान्वाग्भिरुग्राभि	२.११६.११४	अथ पार्थिवमैश्वर्यं	३.१६.४७	अथ राजा सुतं दृष्ट्वा	१.२०.११६	अथ विष्णुमहायोगी	३.१३३.७०

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

४

अथ वै दीपिका राजन्	३.७८.१७	अथान्यद्वनुरादाय	२.६०.२१	अथेन्द्रो गरुडं बाणैः	२.७३.८४	अदितिर्दितिर्दनुः	३.१४.३०	अदृष्टेनाहनो वीरः	२.६०.३४
अथ शांगयिधसुतं	२.७३.४५	अथान्यद्रूपमास्थाय	३.१४.३	अथैतं द्वारकां रम्यां	२.७२.१	अदितिर्देवमाता च	३.६८.१८	अदृष्ट्वा या तु नाश्राति	२.७६.७१
अथश्येना मुगाश्चैव	३.१२२.२०	अथान्वगच्छद् गोविन्दं	२.५७.४२	अथैनं छन्दयामास	२.८५.३७	अदितिर्ब्रतकं चक्र	२.८१.१६	अदेया ह्यप्रतिग्राह्या	२.११६.१८४
अथ संकर्षणः श्रीमाविन्तां	२.४१.५	अथापश्यतमागम्य	१.२०.१०२	अथैनं सन्नतिधीरा	१.२४.२७	अदितिश्च सपीलोमी	२.६५.३४	अद्भिः संध्यादिता मुर्वी	३.३४.४२
अथ सत्यवती गर्भं	१.२७.२६	अथापश्यदगयुद्धे विशेषं	२.३६.२६	यथैराववमारुह्य	२.७३.१४	अदितिश्च सुरभिश्चैते	१.५५.२२	अद्भुतं चापि मेने च	३.६६.६८
अथ समरहते तु	२.१०७.३१	अथाब्रवीत्समुद्रस्तु	२.११३.४	अथोकारसहायोऽसौ	३.४१.४३	अदितिस्तपसेन्द्राणी	२.८१.१४	अद्भिर्ददौ नारदाय	२.७६.६
अथ सर्वेश्वरो विष्णुः	३.१११.१	अथा ब्रवीत्समुद्रस्तु	२.११३.८	अथोग्रचक्रश्चक्रेण	२.६३.१२१	अदित्या कश्यपो दत्तः	२.६७.६७	अद्भिर्दद्यात्सतीः सर्वा	२.७६.३
अथ सा पूजनीया वै	१.२०.६२	अथाम्पुत्याय विमनाः	२.१२१.७४	अथोपकल्पयामा	२.६७.४१	अदित्या कश्यपो दत्तः	२.६६.२६	अद्भिश्चातिश्रमो नित्यं	२.३०.१३
अथ सिंहं प्रधावन्त	१.३८.२८	अथामज्जत्पुनस्तत्र	२.२६.६३	अथोरसि पतत्तोयं	२.६६.२६	अदित्यां जज्ञिरे	३.१४.५७	अद्यतोऽस्मि जगन्नाथं	३.११४.३८
अथ सुतलमाक्रम्य	३.२८.४२	अथाययौ विष्णुपदी	२.७४.१८	अथोवाच तदा देवी	३.७३.२०	अदित्यां जज्ञिरे देवाः	३.४८.११	अद्य त्वं वै मया युद्धे	२.१२६.४३
अथ सौभषितः श्रीमान्	२.२८.६६	अथार्थं गृहमासाद्य	२.६४.२	अथोवाच महातेजा	२.६३.३२	अदित्या तपसा विष्णुः	२.७१.२१	अद्य त्वां नाशयिष्यामि	१.४८.२७
अथ सौमित्रिणा बाणैः	१.५४.५०	अथावयोः पुरं रोद्धुं	२.३६.४	अथोवाच रजिस्तत्र	१.२८.११	अदृषितानुधर्मणभतरि-	२.६०.७३	अद्य द्वारवतीं चैव	२.७५.४८
अथांशुमाली भगवान्	३.१२६.४५	अथाष्टबाहुः कृष्णस्तु	२.१२२.४	अथो सोऽपश्यत् वलं	२.११६.६१	अदृश्यन्तदिवस्तम्भः	३.५५.१४२	अद्यप्रभृति गोपानां गवां	२.१२.४६
अथाकाशगतं पार्थ	२.६०.६४	अथाष्टधार बाणैः	२.७३.६८	अदम्भ ववृत्तयस्सर्वे	२.२२.१४	अदृश्यन्त महोत्पाता	३.५३.२७	अद्यप्रभृति तानीह सहिताः	२.६३.१०
अथाकाशो पुनर्वाचिमध्वीप	२.११२.१०	अथासुरा सूक्तोयाद्या	२.८५.१०	अदर्शनं तमानीयं	२.११६.५६	अदृश्यन्पतिती भूमौ	३.५५.१३५	अद्यप्रभृति ते यात्रा स्वर्गोक्ता	२.४०.४०
अथाचष्ट मुनिः सर्व	२.७२.६	अथास्तां गच्छति तदा	२.२५.१	अदर्शनेन मरणं तस्या	२.११६.४१	अदृश्ये सर्वलोके	३.३३.२६	अद्यप्रभृति मासौद्वौ ज्ञास्य	१.१६.४८
अथाज्ञया कंसनिकुम्भ	२.८६.४	अग्रास्य पुत्रस्त्वपरो	१.२०.३१	अदर्शयत्स्वमात्मानं	२.८१.१०	अदृष्ट दोषेण रणे भवन्तो	२.४३.५४	अद्यप्रभृति देवानामेष	२.१.२५
अथातो दीर्घकालस्य	१.५२.३४	अथाह कृष्णमक्रूरो	२.२६.४०	अदितरेपि पुत्रत्वमेत्य	१.४२.५२	अदृष्ट पूर्वमन्यैर्वा योग्या	२.६२.४५	अद्यप्रभृति देवेन्द्रम	३.५.१७
अथाधि श्रुतपर्यन्ते	२.१७.२०	अथाहान्तहिता विप्रो	२.२४.५६	अदिति च दिति	३.३६.२२	अदृष्टपूर्वश्च मया	२.११६.७१	अद्यप्रभृति सर्वेषां देवानां	२.८१.१२
अथान्तरिक्षे बहुधा	२.११६.११६	अथाहुको महाबाहुः	२.१२८.१	अदिति धर्षयामास	२.६३.१७	अदृष्टश्चाश्रुतश्चैव	२.११८.३७	अद्यप्रभृति सैन्यैर्म	२.३५.३६

श्रीहरिवंशपुराणम् १: श्लोकानुक्रमणी

५

अद्यप्रभृति सैन्यैर्मै गिरि	२.४२.२५	अद्राक्षं जगतामीशं	३.११८.११	अधिष्ठितेषु हविषु	३.७६.३३	अनन्तो धारणार्थिच	२.७१.३१०	अनादिमध्यनिधनः	३.४७.२५
अद्य बाहुसहस्रेण	२.१२६.४२	अद्राक्षमद्राक्षमहं	३.११८.२	अधीत्य सर्वमध्यात्मं	३.३२.६१	अनन्या प्रमदा लोके	२.५६.४	अनादिमध्यनिधन	३.४८.६
अद्य मे सफला यज्ञा	३.११४.२७	अद्राक्षमद्राक्षमहं	३.११८.६	अधृष्य सर्वभूतानां	१.३१.४१	अनपत्या तु तस्यासीद	२.१०४.६	अनाद्यन्तेन नित्येन	३.२८.४५
अद्य सात्राजिती देवी	२.६५.३६	अद्राक्षमद्राक्षमहं	३.११८.६	अधृष्यं सर्वभूतानां	३.३४.३०	अनपत्योऽभवद्राजा	१.३२.११६	अनाधृष्टिश्च धर्मात्मा	२.८४.६
अद्य सा भीष्मकसुता	२.१०५.७६	अद्राक्षमपि गोविन्दं	२.७१.४१	अधृष्यः सर्वभूतानां	३.६४.१४	अनपात्यस्य शून्यस्य	२.२२.२२	अनाधृष्यस्तु राजर्षि	१.३२.१
अद्यापि च सुविःतीर्णः	३.५५.८७	अद्राक्षमम्भोजयुगं	३.११८.१०	अधोक्षजेन प्रद्युम्नो नियुक्ते	२.६२.५७	अनमित्रममित्राणां जेता	१.३८.१२	अनानीय स्वसारं तु	२.६०.३१
अद्यापि च हितार्थाय	१.४१.११६	अद्राक्षमेनं कविभिः	३.११८.४	अधोमुखमुखः सर्वे बद्ध	२.८५.५२	अनमित्रस्य धर्मात्मा	१.१५.२४	अनायुषायाः पुत्रस्तु	३.४६.३२
अद्यापि तानि राज्यानि	२.६७.४०	अद्राक्षमेनं यदुभिः	३.११८.३	अध्यतिष्ठद्ब्रणाकांशी मेरुं	१.४३.८	अनया सह जाह्नव्या	१.५३.४१	अनायुषायाः पुत्रस्तु	३.५१.२३
अद्यापि भुवि गंगेयस्त	१.५३.४८	अद्रिसारमयीं गुर्वी	३.५६.४७	अध्यास्ये स हरिर्विष्णु	३.८०.३५	अनुरण्यसूतो निघ्नो	१.१५.२३	अनायुषायाः पुत्रस्तु	३.५३.१६
अद्यापि मनसा घात्रा	३.१६.२६	अद्रोहसमयं कृत्वा मुनी	१.२०.१२८	अध्वर्युर्ज्ञानं संपन्नस्त	३.५.१५	अनष्टद्रव्यता चैव न शोको	१.३३.२२	अनायुषायास्तनया	३.१४.६१
अद्याहं दर्शयिष्यामि	३.५६.५२	अद्वितीयं प्रहारेषु क्षुर	१.४८.४२	अनंग इति विख्यात-	२.१०४.५७	अनष्टद्रव्यता यस्य बभूवा	१.३३.४६	अनारोप्यमसंभेद्यं	२.२७.४५
अद्याहमवगच्छामि सर्वथा	२.६५.४२	अधः प्रस्तारशयने शायान	१.२०.५४	अनन्तं केशिहन्तारं	२.१२७.११२	अनाख्यात्वा कथं नाम	२.७२.१४	अनावृष्टिभये तस्मिन्	१.१३.२२
अद्याहमिममुत्पाद्य सकानन	२.१८.२८	अधमस्त्वं मम मतो	१.४८.२५	अनन्तमक्षयं दिव्यं	२.१२०.३	अनागताश्च सप्तैते स्मृता	१.७.४६	अनावृष्ट्या यदा राज्य	१.३६.३२
अद्यैव किं चिरेण स्म	२.६.३	अधमंप्रायपुरुषं स्वल्प	१.५३.६०	अनन्तरं सुयज्ञस्तु	१.३६.६	अनागसि मयि ज्येष्ठे	२.७०.१३	अनिकेतः सुरारिघ्नः	२.१०६.७६
अद्यैव गच्छ भगवन्द्वारकां	२.७०.४८	अधर्मो वर्तमानस्य	१.३३.१२	अनन्तरशाश्वतो देवस्सहस्र	२.२२.४०	अनाज्ञया मद्बचदाद्विज्ञाप्यः	२.६८.३	अनियुक्तपुरो भागो न	२.७१.३
अद्यैव तिथिनक्षत्रं मुहूर्तं	२.५४.६	अधस्तात्तस्य वृक्षस्य मुनि	२.३६.२१	अनन्तरश्मिसंयुक्ते ददृशे	१.४२.२७	अनाथवत्तां रुदतीं सख्यः	२.११८.१७	अनिरुद्धः प्रहस्याथ	२.११६.१४७
अद्यैव दोष्यतां क्षिप्रमल-	२.४२.४४	अधस्थां नागराजाय	३.७२.५४	अनन्तरोपवासेन शाक	२.८०.१२	अनादि निघ्नं नित्यं	३.८१.१४	अनिरुद्धं गुणैर्दातुं कृत	२.६१.१२
अद्यैव नगरी ह्येषा	२.३५.५१	अधावनस्थलच्चापि जले	२.८८.५४	अनन्तरोपवासेन सेक्तव्यः	२.८०.१७	अनादिनिघ्नो देवः	३.३२.४८	अनिरुद्धमिति ख्यातं कर्मणा	२.६१.१०
अद्यैव निश्चयप्राप्तिर्वदि	२.६.६	अधिवास्याद्य चात्मानं	२.५०.२२	अनन्तवीर्यं धृतकर्माणमाद्यं	२.७२.३८	अनादिमध्यनिधनं	१.४८.३३	अनिरुद्धस्य वदनं	२.११८.८७
अद्योपहारो रुद्रस्य	२.६६.६१	अधिश्मण्वेलायां प्राप्तायां	२.२५.५	अनन्तश्चैव नागानां	२.१२८.३१	अनादिमध्यनिधनः सोमो	२.८२.१४		

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

६

अनिरुद्धस्य वीर्याख्यो	२.१२७.२१	अनुज्ञातश्च पोण्ड्रेण	२.५६.२६	अनुह्लादश्च विक्रान्तो	३.६०.६४	अनेन हि कलत्रेण तवान्त	२.३१.१०	अन्तर्विविहजनानां निहता	२.७५.५३
अनिरुद्धस्य सुप्रज्ञः	२.१२७.३२	अनुज्ञाता नरेन्द्रेण	२.५०.५८	अनुह्लादसुतो ह्यायुः	१.३.७४	अनेनेष्ट्वा च लोकान्तः	१.२६.४२	अन्तर्भूमिगतस्तत्र	१.११.३३
अनिरुद्धे हते वीरे	२.१२१.२८	अनुज्ञाप्य ततो ज्ञातीन	२.६६.२४	अनुह्लादस्तु संक्रुद्धो	३.६०.६२	अन्तकप्रतिमे तस्मिन्नित्वृत्ते	१.५३.५८	अन्तर्वेदी च यज्ञानाम	२.३.१४
अनिरुद्धो रणे वीरः	२.११६.११६	अनुत्तरं नाम तपो येन	१.२५.४	अनूपविषयश्चैव संमुद्रान्ते	२.३७.३२	अन्तकाले ममाप्येवं	३.८०.६६	अन्तर्हितो देवदेवः सोमः	२.६७.५३
अनिरुद्धो हतो ब्रह्मन्	२.१२१.७८	अनुत्पन्नेषु नवसु पुत्रे	१.१०.४	अनूपविषये चैव वेलावना	२.३७.४०	अन्तकाले यथा क्रुद्धो	३.१२६.११	अन्तर्हितो मोहयित्वा	२.६०.३
अनिदिष्टा मथा भिक्षा	१.३०.२४	अनुद्धृतं यज्ञकर्तारिमन्तं	२.७२.४७	अनूपोपवर्तः कान्तैः कान्त्या	२.५८.५२	अन्तः पुरचराणां च	२.२६.६	अन्तवान् भविता शापो	१.२२.८
अनिलस्य शिवाभार्या	१.३.४१	अनुनीयर्क्षराजानं निर्ययी	१.३८.४२	अनृते धर्मभग्ने च न	२.७१.७	अन्तः पुरद्वारगतं परिधं	२.११६.६६	अन्तश्चरं पुरुषं गुह्यसंज्ञ	२.७२.५०
अनिवार्यमभेद्यं च दिव्य	२.६२.११	अनुप्रविश्य यवनो ददर्श	२.५७.५१	अनृत्यद्भ्यसंविगतो	२.१२६.१४७	अन्तः पुरं चा कृष्णस्य	२.५८.४३	अन्तश्चरं रोचनं चारु	२.७२.३५
अनिष्टगन्धहरणं	२.६५.२७	अनुप्रविश्य योगेन	१.५५.१४	अनेकमहतं चक्रं	३.६१.६	अन्तः पुरोपभोग्यासु	२.६२.४	अन्तस्तापसमायुक्त	३.१११.१६
अनिष्पन्तामपि क्रियां	२.५१.२३	अनुमानेन विज्ञेया	३.३०.१०	अनेकमेकं बहुधा	३.८०.५०	अन्तरिक्षचरा च त्वं	२.११८.७६	अन्त्यस्य श्रुतदेवायां	१.३४.२५
अनीविनीं कुजभस्तु	३.५७.६	अनुमान्य तु सर्वज्ञं	३.२.१४	अनेकशतसाहस्रैः	३.६३.८	अन्तरिक्षचराणां च	३.५७.५०	अन्त्या सद्ये निवत्स्यन्ति	३.३.१७
अनुकूलं तु देवेश	१.६.४१	अनुम्लोचेत्यभिख्याता	३.३६.४६	अनेकशतसाहस्रं दानवै	३.१२१.६	अन्तर्दिक्षाच्छुमा वाचः	३.३२.५१	अन्धकं च महाबाहु	१.३७.२
अनुक्तेनापि सुहृदा वक्तव्यं	२.७१.५	अनुयातश्च पितृभिरधिको	३.५४.६	अनेकशाखश्चैत्यश्च	२.११६.६७	अन्तरिक्षात्परं त्यक्त्वां	३.५६.५०	अन्धकं वारयामास दित्या	२.८६.२०
अनुक्त्वा वचनं किञ्चित	२.६१.४४	अनुयाता महाराज	३.१२१.१३	अनेन तव गोविन्	३.१२३.१४	अन्तरिक्षे च गन्धर्वैः	३.६३.४२	अन्धकस्तव्य तं दृष्ट्वा	२.८६.४७
अनुगीतानि दास्यत्यपि	२.६५.३०	अनुयोस्सुचिरं कालं	२.५१.४७	अनेन तव चक्रेण	३.१००.२६	अन्तरिक्षे स्थितस्तत्र	२.११६.६५	अन्धकस्य च वाक्यानि	३.१३४.१४
अनुग्रहार्थं भूतानां	३.१५.८	अनुलोमकरः सूर्यस्त्वयने	१.५१.१५	अनेन तव धर्मेण	१.१०.१३	अन्तर्धानगता देवा विमानैः	२.३०.४०	अन्धकस्य वचःश्रुत्वा	२.२४.१
अनुग्रहो यदि स्यान्मे	३.७३.२५	अनुवव्राज संहृष्टः	३.५८.३६	अनेन त्वां दहे पाप	३.१२७.३६	अन्तर्धानं कलौ याति	१.२६.६८	अन्धकस्य सुतो यज्ञे	२.३८.४४
अनुजमुनूपाश्चैव प्रस्थितं	२.५१.६५	अनुशिष्टौ च तौ वीरौ	२.२७.६	अनेन प्राप्त कालास्ते निहता	२.४८.२६	अन्तर्धानं गतः शम्भुः	३.१०४.१०	अन्धकात्काश्यदुहिता	१.३७.१७
अनुजमुश्च गोपालाः	२.१७.३४	अनुह्लादः कुबेरेण	३.५३.२३	अनेन यदुमुख्येन	२.११५.१८	अन्तर्धानं जगामाशु तेन	२.१७.३८	अन्धकारी कृतं व्योम	२.१०६.१०
अनुजमुस्तदा सर्वे	३.५.६	अनुह्लादश्च तत्रैव	३.५१.१	अनेन शंबरं हत्वा	२.१०८.२३	अन्तर्धानमुपागम्य	२.१२६.१११	अन्धकारीकृतो लोके	२.१२५.१

अन्धको नारदवचः श्रुत्वा	२.८७.१	अन्ये च यादवाः सर्वे	३.१११.१४	अन्योऽन्यं रममाणौ तु	२.१०.४३	अपयाते ततो देवे	२.१२६.१	अपश्यद्द्वारि तत्रस्थां	२.६३.४६
अन्धकोऽनुद्विग्नमना	२.२३.२	अन्ये पातालमायातो	३.१२८.८	अन्योन्यव्यतिषक्ताभिः	२.७.६	अपयातो रणं हित्वा	३.५५.५२	अपश्यन्त महात्मानो	२.१२७.४४
अन्धतोशलको हत्वा	२.३०.५५	अन्येऽप्येवं गमिष्यन्ति	२.११३.६	अन्योन्यसंपद्धिनोस्तत्र	३.५५.२६	अपयातो रणच्छकः	३.६४.२६	अपश्यन्त रथं दिव्यमायान्तं	२.५३.८
अन्धमल्लं च निकृति	२.३०.८	अन्येऽस्म परिगायन्ति	२.११.२६	अन्योऽन्यस्यभिसमरे	१.४७.३३	अपयाने ततो बुद्धि	१.३६.१४	अपश्यन्त सुराः	३.५६.६३
अन्नजा भुवि मर्त्यानां	१.५०.३०	अन्ये ह्यगता भान्ति	१.४३.२३	अन्ववायस्तु सुमहां	१.११.७	अपयाने मतिं कृत्वा दूतं	२.५७.३२	अपश्यन्स्त्रिदशाः	३.५६.५६
अन्यथा वध्य एव त्वं	२.११६.५	अन्यो घन्यः संस्कृत	२.७२.५६	अन्वालभत तां देवी	२.८६.६	अपयान्तं गुहं दृष्ट्वा	२.१२६.३१	अपः संपृश्य तत्रैव	३.८०.५६
अन्यथा वो महीपालान्	३.१०६.५	अन्योऽन्यं पितरो यूयं	१.१७.३२	अन्विष्यतस्य भगवान्	२.८५.४५	अपरः केशवस्यायं	१.४१.१५६	अप स्ववशगाः कृत्वा	१.४७.५६
अन्यथाहं निषेद्धा	३.८०.१६	अन्योन्य बाण वर्षेण	३.३८.२८	अन्वीयमानो दितिर्जैर्वा	३.४६.२८	अपरं चैव सोमेन	२.२६.५६	अयाज्यान्याजयिष्यन्ति	३.३.३६
अन्यथाहं युवां हत्वा	३.११६.१७	अन्योन्य भेदो भ्रातॄणां	२.७१.६	अपकारिणि विस्त्रम्भं	१.२०.१२२	अपराजिता नमस्ये	२.१०७.१०	अपानः पश्चिमकाय	१.४०.५८
अन्यदिष्वासनं तं तु ग्रहीतु	२.७३.६६	अन्योन्यं जघ्नतुः	२.१२६.७६	अपक्षिगण संघाते	३.३३.२५	अपराजितादहं कृष्णं	२.३६.४५	अपानपाश्चोद्धवभोजमिश्रा	२.८६.६४
अन्यव्यापार रहितो	३.१११.७	अन्योन्यं जघ्नरे	२.१२२.६	अपगच्छापगच्छ त्वं	२.१२६.२५	अपराह्णगते सूर्ये	३.४६.२४	अपांतरतमा नाम	३.७२.७६
अन्यस्मिन्वाजले माघ	२.८१.२७	अन्योन्यं जघ्नरे	३.१२२.१२	अपतित्वं स्त्रियाश्च्रेयां	२.३१.२४	अपरे तु नृपा	३.६१.१८	अपां तु नीलिकां विद्या	२.१२३.२६
अन्याश्च वृद्धान्वृष्णीनां	३.१००.६	अन्योन्यं प्रतियुध्यन्तावन्यो	३.५५.३५	अपत्यं कृतिकानां तु	१.३.४३	अपरे ये तु दैत्या	१.४८.५२	अपां तु वरुणं राज्ये	१.४.३
अन्यानपि यदूत्सर्वा	३.७४.७	अन्योन्यं विविधैरस्त्रैः	२.३६.१२	अपत्याख्यानयोगेन ब्राह्म	२.७६.५०	अपरे हा हतास्समेति	२.१२.२२	अपां पतिरतिक्रुद्धः	२.१२७.६२
अन्यापि प्राकृता नारी	२.२८.४१	अन्योन्यमभिगर्जन्तो	३.५५.१६३	अपदात्तु पदो जातस्य	३.१६.१०	अपवाह्यं गुहं शीघ्रमपयाहि	२.१२६.२७	अपापास्त्यज्यमाना	३.५.३८
अन्याश्च सरितो रम्या	२.७७.१६	अन्योन्यमभिनिघ्नन्तो	३.५४.४२	अपद्यातो महेन्द्रो ही	२.७२.६४	अपवाह्यं गुहं शीघ्रं	२.१२६.३६	अपामग्नेस्सुरेशस्य	२.५८.१७
अन्ये कृष्णं चरा राजन्	२.१२१.६५	अन्योन्यामभिवर्तन्ते	३.५८.५	अपघ्नंसेति बहुशोवदन्	१.१२.१५	अपवाह्यं रथैर्ननं	२.१२६.१४४	अपामघस्ताल्लोको वै	२.१६.२६
अन्ये च मञ्चा बहवः	२.२६.१२	अन्योन्यमभिवीक्षन्ते	२.१२१.७०	अपघ्नस्ता विसंज्ञाश्च	१.४५.१६	अपविद्धैश्च भग्नैश्च	३.५८.७१	अपालयन्तरो याति	१.२७.११२
अन्ये च यादवा राजन्	३.१०२.६	अन्योन्यमभिसंरब्धौ	३.५४.८०	अपनीय तः कण्ठात्	२.७६.१२	अपश्यन्चापि पुरुषं	३.१०.२२	अपावृत्ते चन्द्रपथे अयन्तं	१.४६.४१
अन्ये च यादवाः शूरा	३.१२०.७	अन्योऽन्यमूचुस्ते सर्वे	१.३.२२	अपनेष्यामि बाष्पण्य	३.१०१.१४	अपश्यद्देवदेवेशं	३.११५.२	अपावृत्ते महाद्वारे वर्त्तमाने	१.४६.४५

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

८

अपास्तैर्बहुभिर्योधैस्तुरगैः	२.४३.५०	अप्रमाणं करिष्यन्ति	३.४.८	अभवत्सा सरिच्छ्रेष्ठा	१.६.६४	अभिवाद्याभिवाद्याना	१.४६.१५	अभेद्यं कवचं दिव्यमच्छ्रेयं	३.१०५.१४
अपि कीटपतंगैश्च	३.२८.७०	अप्रमेयं ह्यविहतं	२.१२६.१०७	अभावे सर्वपापानां	३.६५.५	अभिशास्तास्तु ते देवाः	१.१७.२६	अभोग्यं तत्पशूनां हि अपेयं	२.११.४५
अपि चाप्युक्तवान्देवो	२.७०.७	अप्रमेयमनाधारमाहुः	३.८५.१६	अभिगम्या ब्रूवन्त्सेसवे	२.६१.२१	अभिषिक्तं तु तं गोभिश्शक्रो	२.१६.७०	अभीममम्भो विसृजन्ति	२.६५.२२
अपि दृष्टस्त्वया	३.११७.१४	अप्रमेयस्त्वचिन्त्यश्च	२.१०२.३७	अभिजात्याऽथ तपसा	१.७.५०	अभिषिक्तस्तदा	३.४८.२१	अभ्यद्रवत दैव्येन्द्रो	३.५४.६८
अपि द्रक्ष्यति योगात्मा	३.११४.१०	अप्रमेया महोत्सेषाम्	२.६८.२४	अभिजिन्नाम नक्षत्रं	२.४.१७	अभिषिक्तोऽसुरगणैः	३.४८.२२	अभ्यद्रवत वेगेन	३.४६.३५
अपि मार्दवं भावेन गात्रं	१.२०.१२६	अप्रवृत्ताः प्रपत्स्यन्ते	३.३.३०	अभिज्ञस्तस्य भावानां गह	२.४१.४४	अभिषिच्य जयन्त	२.६७.३२	अभ्यधावत गोविन्दो	२.२१.१४
अपि वा सुशुभंक्षीरमपि	३.१३०.७	अप्रशान्तमहातूर्या गीत-	२.८८.७६	अभितः पर्वताकार	२.११६.१७६	अभिषिच्य भूतेशं	३.१७.२४	अभ्यधावत्सुसंख्यो	२.३५.६१
अपुत्रस्य स राजस्तु	१.३५.१७	अप्राप्तांश्चान्तरिक्षे	२.६३.६१	अभिदुद्राव रामं तु	२.३६.१८	अभिषिच्य स्वराजे तु	१.२४.२६	अभ्यधावन्त दितिजाः	३.५५.६७
अपुत्रस्याथ राजस्तु	१.३५.३७	अप्सरोगणसंकीर्णं	३.१३२.२६	अभिदुद्राव रामं तु	२.४३.६७	अभिषिच्याधिराज्ये तु	१.४.१	अभ्यन्तरे जगन्नाथः	३.१०२.१८
अपुत्रस्याथ राजस्तु	२.५७.१६	अप्सरोगिः समागम्य	३.२७.३६	अभिद्रुतोऽथ दैत्येन	३.६१.४४	अभिषिच्याधिराज्ये	३.३७.४	अभ्यषिञ्चत्पृथुं वैन्यं	३.३०.२
अपुत्राणां हि नारीणामेक	२.२६.१४	अप्सरोगिः समासेदुः	२.१२२.१५	अभिद्रुत्य निकुम्भं च	२.८५.१७	अभिषेकार्यमाजगमुयंतो	२.४४.५८	अभ्याशे वर्ततो कालो	२.२४.६८
अपुत्रो लभते पुत्रमघनो	२.८५.७६	अप्सु सृजन्कलदेमन्य	३.६.४	अभिन्नबन्धने मृत्यौ	१.४६.४२	अभिषेकार्द्रं केशेन राज्ञा	१.५४.३०	अभ्युपेत्य तदात्युग्रैः	२.१२२.५३
अपुत्रोलभते पुत्रं	२.१२५.६२	अबाधं तदसंख्येयं	२.१२२.६०	अभिभूतश्च कृष्णेन	२.१०२.२३	अभिषेकेण गोविन्दो	२.३२.५५	अमरैरावृतं पुण्यं पुण्य	१.४०.६
अपुनर्भाविनां लोकाः	३.१७.६७	अब्जस्त्वमिति होवाच	१.२६.१४	अभिमन्युश्च दशमो	१.२.१६	अभिषेकेण दिव्येन	२.४४.५६	अमर्षादन्वशासच्च	३.५.२०
अपूर्वैश्चैव पूर्वेश्च	३.१३२.५८	अब्दं द्रव्यनमुक्तं च अयनं	१.८.६	अभिमानवतीमिष्टां प्राणैः	२.६६.३	अभिषेकेण दिव्येन	३.४८.२०	अमर्षो बलवान्	३.५५.१०६
अपृच्छं तमहं तातं	१.१६.३४	अब्रुवश्च गताः स्थित्वा	३.१३३.२१	अभियान्ति ततोऽन्योन्यं	२.१२८.६	अभिषेकेण सत्कृत्य	२.५०.५५	अमर्षो वैरशीलश्च सदा	२.२२.७१
अपृथग्धर्मचरणास्ते	१.२.३४	अभयं चाभिषेकं च	२.४४.५६	अभिवर्द्धति चाधर्मं	१.४१.१०६	अभिषिक्तं तु सोमं	३.२०.१८	अमानुषाणि कर्माणि	२.२०.४
अपेयः पेयसलिलः सागर	२.८८.५३	अभयं तेऽस्तु सुश्रोणि	२.११६.८८	अभिवाद्य महात्मान	२.२१६.२१	अभिहत्य तु तौ	३.२६.२२	अमावसुरिति ख्यातमायोः	१.१८.३०
अप्यमूर्तनिधयः पितॄन्	१.१८.२८	अभवत्पर्वताकारश्छिन्न	२.१२६.१३३	अभिवाद्य यथायोगं	३.१०२.१०	अभूतश्चाप्यजातश्च	३.१६.५	अमावसोरन्वयस्य	३.१३४.४
अप्युन्नतिं प्राप्य नृपा	१.२०.१२५	अभवत्स यदा राजन्त	२.६१.११	अभिवाद्य स दुर्बुद्धिः	२.६६.८	अभेद्यं कवचं चास्य	२.१०६.४४	अमित्रादुन्नतिं प्राप्य	१.२०.१३६

श्रीहरिवंशपुष्पाणम् :: श्लोकानुक्रमणी

६

अमोघना वायुवशोपवाता	२.६५.५	अम्बरीमस्तु नाभागिः	१.१५.१८	अयं स नाथो भर्ता	२.१०४.१०	अयोगतश्च तारासु	३.४६.८	अरिष्टो नाम हि गवाम्	२.२१.७
अमुञ्चच्चासितां सूर्यो	३.४६.१०	अम्बुभक्षा वायुभक्षा	१.४५.३५	अयं स निघने हेतुः	१.४८.१२	अयोधयज्जयन्तश्च	२.६६.७०	अरिष्टो बलिपुत्रस्तु	१.४३.१६
अमित बलपराक्रमा	३.५०.१२	अम्लानमाल्यधारिण्यस्ताः	२.८८.५६	अयं स निर्धृणो युद्धे	१.४८.८	अयोध्यां चैव राष्ट्रं	१.१३.४	अरिष्टो बलिपुत्रस्तु	१.४७.७
अमूर्त्तय च देवाय	३.८७.१५	अयं तु मार्गो बलतः	२.३०.२६	अयं स रिपुरस्माकं	१.४८.६	अयोध्यायामयोध्यायां	१.५४.२६	अरिष्टो बलिपुत्रश्च	१.५४.७२
अमूर्त्तिमन्तः पितरो	१.१८.५६	अयं ते वीर विक्रान्तो बालः	२.४४.४६	अयं स विग्रहोऽस्माकमशम्यः	१.४८.७	अयोनावुत्सृजतं सा कुमारं	१.२५.३६	अरुजंश्चैव प्राग्वंशं	३.३२.२०
अमूर्त्तिमन्तं यं प्राहुर्महा	३.६२.१६	अयं त्रैलोक्यनाथस्य	२.११८.७२	अयं स विष्णुर्देवानां	१.४८.६	अयो निकुम्भः	३.५१.८३	अरुजस्त्रिदशान्दैत्याः	३.५४.६६
अमृतप्राशिनश्चैव	३.१३३.५३	अयं त्वां गरुडस्तत्र	२.६३.३६	अयं सौभपतिश्श्रीमान्	२.५२.४२	अयोनिजो भवेयं	२.७६.१७	अरुणश्चारुणिश्चैव	३.६६.२६
अमृतं स्थानमासाद्य	३.६७.१०	अयं दर्शितकल्याणो लोको	२.६६.३६	अयमत्र महाशूली	३.६४.१६	अयोमुखश्च विपुलः	३.४६.५४	अरुणावरजं श्रीमानारुहः	१.४४.४७
अमृतस्येव संवाहः	३.५.२	अयं देवसमूहस्त्य	२.११८.६	अयमस्य विपन्नस्य बान्धव	२.४४.५२	अरक्षितारो हर्तारो	३.३.५	अरुणो गरुडभ्राता	३.३७.२०
अमृताया द्वितीयोऽपि	२.६६.४६	अयं घनोघः सुमहान्	२.१०१.३	अयमास्थाय वसुधां	२.२५.३१	अरण्यमिदमल्पोदमल्पकक्षं	२.८.१३	अरुणो गरुडश्चैव	३.१४.६४
अमृतारम्भनिर्मुक्तं मंदरा	१.४४.४२	अयं धृतो मया शैलः	२.१८.२६	अयमेष शरो घोरो	३.६४.१४	अरण्यश्च प्रकाश्च	१.७.२६	अरुणोदयकाले च ययो	२.६४.२०
अमृतार्थे पुरा चापि	२.२२.४२	अयं भगवता पूर्वं	२.१०४.११	अयस्मयप्रतिच्छन्ता	२.११८.८२	अरथो पत्तिनी युद्धे	२.३६.४२	अरुन्धति कृतं ह्येतन्मयैव	२.७६.३५
अमृतेन तु तृप्तिः	३.२.१३	अयं भविष्ये कथितो	२.२५.२८	अयाचितेन भुञ्जीत	२.८०.२३	अरमसारमयं नूनं हृदयं	२.१२.२४	अरुन्धति मया दृष्टं	२.७८.२४
अमृते निर्मिते पूर्वं विष्णु	२.२२.४१	अयं यद्यावयोरेथं गोमन्त	२.४२.७५	अयादवो यदि भवान्	२.२३.४	अरविन्दकृता पीडो रज्जु	२.८.५	अरुन्धती च साध्वीनां	२.३.२४
अमृष्य माणस्तत्कर्म	३.५४.७२	अयं रथीशरी चापि	३.६४.१५	अयुताजित्सहस्राजित	१.३७.५	अरामयद्रहस्यैतां न	२.६४.१६	अरुन्धती वसुं यामी	३.३६.२४
अमृष्यमाणां स्त्रिदशानाह	३.६०.३	अयं ममानुजो भ्राता	१.५४.४४	अयुताजित्सुतस्त्वा	१.१५.१६	अरिघ्न ममरानी के चक्रं	१.४४.३८	अरुन्धती वसुयामी	१.३.३१
अमोगे केशहरणमसंकल्पे	१.४५.४१	अयं स कालो दैत्यानां	१.४८.१४	अयुतानि तथा चाष्टौ	२.१०३.२२	अरिष्टनेमिपत्नीनाम्	१.३.६४	अरुन्धत्यारुणी चैव	३.१४.४५
अमोघदर्शनं सत्यं	३.१३.२३	अयं स किल युद्धेषु सुरार्थे	१.४८.१३	अयुद्धेनैव दाशार्हस्त्यक्त	२.५७.४	अरिष्टनेमिरश्वश्च सुधर्मा	१.३४.१६	अरूपी रूपसंपन्नो	३.१६.१७
अमोघयद्भरद्वाजो मरुद्भिः	१.३२.१६	अयं स चक्री शरशाङ्ग	३.८२.३	अयुध्यत महावीर्ये	२.११६.१२०	अरिष्टनेमिरश्वश्च सुधर्मा	१.३८.५७	अरे ब्राह्मणदायाद	३.११८.१८
अमोघस्य तु देवस्य	३.६७.१४	अयं स नाथो देवानामस्काकं	१.४८.१०	अयुध्यतो वृथा ह्येषां	२.११६.२६	अरिष्टा तु महासत्त्वान्	१.३.११६	अरे यादवदायाद किं	३.११६.४

अरोगवीरपुरुषा हस्त्य	१.५४.६०	अर्द्धचन्द्रं समादाय	३.६६.३३	अलकः काशिराजस्तु	१.२६.७४	अवतीर्य मदोत्सिक्तो	२.११६.२१	अवन्ध्यं चाप्रमेयं	३.२३.३४
अरोगो बलवांश्चैव	२.१२५.६१	अर्द्धप्रविष्टाः संरब्धा	३.५५.४७	अलकस्य तु दाय्यादः	१.३२.३६	अवतीर्य स ताक्ष्यत्तु	२.६४.५१	अवप्लुते ततो रामे कृष्णः	२.४२.८१
अर्कद्वीपे निवसतो द्विगुणं	२.८२.३०	अर्द्ध राकानां सिरसो	१.१४.१६	अलको राजपुत्रस्तु	१.३२.२६	अवधीत्स हिरण्याक्षं दिव्य	२.७१.३२	अवभ्रशंमनुप्राप्ता योग	१.१६.२
अर्घमादाय वरुणः केशवं	२.१२७.६६	अर्द्धरात्रे स्थितं गर्भं	२.४.३	अलावुं वर्जयेन्नारी तथैवो	२.७६.५६	अवध्यत्वं स देवेभ्यो वज्रे	२.६१.७	अवमानः स च मया	२.७०.३८
अर्घमासाश्च मासाश्च	३.१६.४५	अर्द्धाक्षिणापि हि तावन्मां	२.६६.३७	अलिमिन्दीवरश्यामे	२.६६.३८	अवध्यममरेन्द्राणां	३.४१.३८	अवलम्ब्यः पराः कण्ठे	२.८८.२६
अर्घादिसमुदाचारं	३.६२.३	अर्घमासाश्च मासाश्च	३.६६.४१	अलोमाच्छिद्यते सद्यो	३.१६.४८	अवध्यमालां प्रभया	३.४१.७७	अवश्यं त्रिदशास्तेन प्राप्त	१.४१.६३
अर्घोद्यतभुजं दृष्ट्वा	२.५५.४१	अर्घेन नारी तस्यां	१.१.४३	अल्पत्वादभिभूतास्तु	२.३६.३६	अवध्यः सर्वभूतानां	२.६३.३७	अवश्यं गिरिकूटाभं	२.११०.३३
अर्घ्यमाचमनं दत्त्वा स	२.४७.४४	अर्हेति पुत्रमातेति ज्येष्ठेति	२.६५.४८	अल्पदपर्वलो दैत्यस्थित	१.४८.२४	अवध्यस्ते सुतो देविदाक्षा	२.८६.७	अवश्यं त्रिदशास्तेन	३.४१.२५
अर्घ्यमाचमनं दत्त्वा	२.४६.२३	अलक्ष्मीभयभीतोऽहं	३.७१.३७	अल्पवाचो गतमदा ये	२.१६.४६	अवध्यस्त्रिषु लोकेषु	२.४८.१७	अवश्यं पारिजातं ते	२.७१.४२
अर्घ्यमाचमनीयं च पाद्यं	२.५४.४३	अलंकारः शक्तिरश्च रत्न	२.७६.२३	अल्पेन खलु कालेन विविक्तं	२.४१.६२	अवध्यस्त्वमजेयश्च	२.७४.३८	अवश्यं भाविनं ज्ञात्वा	१.१८.३६
अर्चयेत् यथान्याय	३.१३२.७६	अलंकारं प्रदद्याच्च	३.१३५.६	अवकाशे त्वया दत्ते	२.५८.३७	अवध्याः किल ते	२.७६.३४	अवश्यं मनसा ध्यात	३.६८.३२
अर्चिता तु त्रिभिर्मर्ति	२.३.३०	अलंकृतं पुष्पमेतत्सं	२.६५.१६	अवगाहः पृथुः कङ्कशत	२.३५.१०६	अवध्या दानवाः सर्वे	३.१३३.२४	अवश्यं हि मया रक्षया	३.६५.११
अर्चिताः स्म यथान्यायं	२.८३.४८	अलभन्ती तु सा त्राणं	१.५.४६	अवगीतमिदं सर्वमावाम्यां	२.८.६	अवध्या देवतानां च	१.३.६५	अवश्यमेव वक्तव्यं हितं	२.७०.२
अर्चितो देवराजेन रत्नैश्च	२.६४.५३	अलं खेदेन राजेन्द्र	२.२२.१६	अवगुण्ठ्य यदा	२.६६.१२	अवध्या देव देवानां	२.७४.४५	अवष्टम्य मुहूर्तं हरिः	२.६०.४५
अर्चितो मुनिभिः सर्वैः	३.८४.३	अलं चक्रे समन्ताद्वै	२.६८.८	अवघुष्टे समाजे तु	२.३०.११	अवध्याश्च स्त्रियः	१.५.५५	अवस्कन्तं शरस्तम्बे	१.३२.७३
अर्चिष्मास्तुम्बुरुश्चैव	२.६६.६	अलं द्रव्यामि ते	३.६६.२२	अवज्ञाय तदा रूपं	२.१२७.४५	अवध्यास्ते तु देवानां	२.६१.५१	अवस्थाप्य च तत्सैन्यं	२.६०.७
अर्जुनं विद्धि मां कृष्ण	२.१६.८४	अलं संरक्षणं तेषां	१.३२.६७	अवञ्चयद्भूगं दैत्यो	३.५५.१३३	अवध्याः स्याम भगवन्दैव	२.२.१७	अवस्थितानि दृश्यन्ते	२.१२७.१२१
अर्जुनः सात्यकिश्चैव	३.१२५.२५	अलं हि मृगयास्माकं	३.१०६.६	अवतीर्णो भवायेह प्रथमं	२.२५.२७	अवध्यो दूततां प्राप्तो	३.११६.८	अवह प्रवहश्चैव	३.४६.५
अर्जुनार्थं च तान्सर्वान्	२.१६.१००	अलमेतेन सर्वत्र	३.८३.१०	अवतीर्य गृहद्वारि	२.६६.१७	अवध्योऽसौ कृतोऽस्माकं	२.५५.६८	अवाकिरन्दैत्यगणा	३.५५.११८
अर्थवादः परं ब्रह्म	३.४.४६	अलम्बुषा मिश्रकेशी	३.३६.४५	अवतीर्य नभोभागात्	३.६२.२	अवध्योऽस्मीति लोकान्स	२.८६.१२	अवाग्दुष्टाः शीचयुक्ता	२.७८.८

अवाप यो ब्राह्मण राज्य	२.६५.३०	अव्यक्तो व्यक्तिमापन्नः	३.१६.१५	अश्लाघ्या वृणायः	२.२३.५	अष्टादशभुजा देवी	२.१२०.३२	असतश्च सतश्चैव	३.१६.७
अवाप्य तपसो वीर्यं	२.१०२.२१	तानामिव रणे	२.१२६.१२४	अश्लाघ्यो मे मतः पुत्र	२.२३.३	अष्टारथो नाम नृपः सुतो	१.३२.३१	असतीं वपुष्टमामतां	३.५.२१
अविज्ञानान्ममा कृष्ण	२.१६.३६	अशक्ता वै धारयितुमधः	३.३४.१५	अश्वत्थो वृक्षजातीना	३.८८.५६	अष्टौ तान् जाह्नवी	१.५३.४४	असत्यहं नदीमध्ये	२.४६.४५
अविदूरे च विन्यस्तं	२.६३.५२	अशनीश्च महोघोरान्	३.१३३.५६	अश्वमेधः क्रतुः श्रेष्ठः	३.२.२८	अष्टौ महिष्यः पुत्रिण्य	२.१०३.२	असदेतत्त्वया दूत भाषितं	१.५४.४०
अविद्यमाने मांसे तु	१.१३.१४	अशरीरां शरीरस्थः	३.३०.२०	अश्वमेधसहस्रेण	३.१३२.६६	अष्टौ ये लोकपालास्ते	२.५०.६८	असद्वाहगृहीताश्च	३.१०७.२७
अविद्यो दुर्बलः श्रीमान्	२.६१.३२	अशरीरां शुभाषाणीं	३.६४.२२	अश्ववृन्देषु नागेषु	३.५६.२६	अष्टौ रथसहस्राणि	२.६८.२६	असंप्राप्ते च नगरीं मथुरां	२.५५.४
अविध्यन्ति शितैर्वर्णैः	३.१२५.३	अशाम्यं वैरमुत्पन्नं मम	२.२२.८४	अश्वानां कुञ्जराणां	३.५६.७	अष्टौ वर्षसहस्राणि	३.६३.६	आसाधुमद्विर्वर्क्यैश्च त्वया	२.२३.१०
अविन्ध्या नाम देशे	२.७४.४२	अशास्त्र विदुषां	३.३.३२	अश्वानूक्षसवर्णां	३.५५.१०	अष्टौ वर्षसहस्राणि	३.२८.६	असाध्यमिदमारब्धं	२.११८.१६
अविलम्बमनायस्तमद्भुतं	३.१३२.२१	अशमक्यां जनयामास	१.३४.१७	अश्वाश्च वेगिनः	३.६२.१४	अष्टौ शतसहस्राणि	२.६३.८८	आसिक्रीमावहत्पत्नी वीर	१.३.६
अविषह्यं ततो मत्वा	२.१४.१७	अशमक्यां प्राप्तवान् पुत्र	१.३४.३२	अश्विनो वासवश्चैव	२.१२०.२८	असंशयं पुत्र महद्	१.६.३०	असि चक्रगदा बाण	२.१२२.५
अविषह्यमिमं भारं	२.१२५.१४	अशमयन्त्राणि युज्यन्तां	२.३५.३४	अश्विभ्यां देववैद्याभ्यां	१.५३.५	असंस्कृताम्बुपरिरवा	२.३८.५८	असिचर्मधरो वीरः	२.११६.१४१
अवेक्ष्य रुक्मिणी	२.३६.७	अशमयन्त्राणि युज्यन्तां	२.४२.२१	अश्विभ्यां साधु जानामि	२.१६.६६	असकृज्जीयमानस्तु	२.६१.३०	असिजिह्वश्चक्रहस्त	३.५७.१३
अवैरमेवं यदयं सर्वैरं	२.३०.२३	अशमवृष्टिरिवाकाशे	३.५५.१६४	अश्वैरनेकसाहस्रैर्ग	३.६३.७	असकृद्देव सहितः	२.११८.८	असितस्यैकपर्णां तु	१.१८.२३
अवोचदीदृशं वाक्यं	३.६६.२	अश्रद्धाता पुरुषा	३.४०.१२	अश्वोष्टशकृतां राशे	२.५७.२४	असकृन्निजिता देवाः	२.११६.२६	असिता च सुबाहुश्च	३.३६.४६
अव्यक्तं कारणं यत्	१.१.२१	अश्रद्धया च यद्दानं	३.७२.४६	अष्टचक्रेण या नेन	३.४७.३७	असंख्यातगतिं चैव	२.१२७.१७	असिता च सुबाहुश्च	३.६६.१८
अव्यक्तं कारणं	३.१६.३	अश्राव्यमीदृशं व्योरं	३.१०८.६	अष्टदंष्टश्चतुर्वक्त्रो	३.४६.६	असंख्यैश्च महाकायैः	२.११६.६	असिताम्बरसंवीतं बाण्डुरं	२.२६.५०
अव्यक्तं धीवनं कृष्ण	२.२५.१६	अश्राव्यमीदृशं घोरं	३.१०८.१६	अष्टधा त्वं पुनश्चैव	१.२६.२०	असंगो युयुधानस्य	२.१०३.३१	असिना वाय दास्यामि	३.११६.३
अव्यक्तादव्यक्तिमापन्नं	३.१८.२८	अश्रुतं श्रुतसेनायै	२.१०३.१५	अष्टमस्य तु मासस्य	२.२.३७	असंग्रामहतः कंस	२.३०.८७	असिभिर्मुं शूलैः शूलैः	२.११६.१५६
अव्याक्ता व्यक्तमापन्ता	३.२२.१६	अश्रुपूर्णमुखा दीनाः	२.४४.३६	अष्टमार्गमहारथ्यां	२.६८.२८	असंग्रामेण यो वीरो	१.३४.३६	असिलोमा च केशी	१.३.८६
अव्यक्तौ व्यक्तलिङ्गस्थौ	१.४२.३	अश्रोत्रियं श्राद्धमधीत	३.७२.४७	अष्टयोजनविस्तीर्णं	२.६८.२७	असञ्च सदसञ्चैव	१.१.२	असिलोमा तुबलिना	३.५३.१५

असिलोमा पुलोमा	१.४१.८८	अस्त्रं ब्रह्मशिरस्तेन	२.१२६.१२	अस्मात्संकीर्तनाच्छिव	३.८३.१४	अस्यैव दुःखमूलस्य	३.७६.२८	अहं चैवागतो राज्ञां द्रष्टु	२.५१.३५
असिलोमा पुलोमा च	२.१२१.४२	अस्त्रं ब्रह्मशिरो नाम	२.१२६.८	अस्माद्धि मे भयं कंसा	२.५.६	अस्यैव देवस्य	३.८२.५	अहं जानामि वं कृष्णमादि	२.४६.२६
असिलोमश्च हन्ता च	२.१२१.१२१	अस्त्रमभ्यस्यतां तेषां	१.४७.४	अस्माभिरेवमुक्तस्तु दुर्वासा	२.६०.७१	अस्यैव राज्ञः कन्या	१.१८.४४	अहं ज्योतिरहं वायुरहं	३.१०.५६
असीनां पात्यमानानां	२.५६.८०	अस्तवीर्यं बलं चैव	३.६६.८	अस्माभिर्बलं संपन्नै	३.१३३.४६	अहंकारं गृहीताश्च	३.८.१७	अहं तमोक्षनीभूतमहमेव	२.११४.१४
असुरगणपतिर्गजेन्द्र	३.५१.४६	अस्त्रवेगेन हृत्वैव	३.५८.१५	अस्माभिश्च कृतः पूर्वं	३.११३.१६	अहंकारपरो नित्यमजिता	२.३६.५३	अहं तव विधेयात्मा	१.५३.२६
असुरगणसहस्रसंवृतस्त्वं	३.४६.२६	अस्त्राणि न प्रयोज्यानि	१.२०.६२	अस्माभिश्चापि तद्युद्धं	२.१२१.८४	अहंकाराप्रभो देव	३.८८.२२	अहं तावत्सहाय्येण मुहूर्ते	२.३६.६
असुरः सोऽदितो राजन्	२.६०.२६	अस्त्रैः प्रज्वलितैः	३.४४.१७	अस्माभिस्सं पतद्भिश्च	२.६.१६	अहङ्कास्तु महतस्त	१.१.२३	अहं तु तव पुत्रस्य तव	१.४५.६८
असुरास्तु महाबाहो निःशेषा	२.८४.६०	अस्त्रैरन्ये विनिभिन्नारक्तं	१.४७.३४	अस्मिन्नः समरे सर्वे	१.४८.६८	अहत्वा युधि गोविन्द	२.६०.२	अहं तु दुष्टभावना	१.४८.८१
असुराणां स्त्रियो वृद्धाः	२.६२.३५	अस्त्रैस्त्राणि संवार्य	२.६०.२२	अस्मिन् स्थाने च	२.७.३३	अहन्ता क्रोधहन्ता	३.४२.११	अहं ते जनको वत्स	३.१०.४१
असुराभवतावध्यां देवानां	२.८२.२०	अस्त्रैस्त्राण्यबाधन्त	३.१३३.५८	अस्माभिर्भिद्यमानं हिमर्यादा	२.६६.४६	अहं कंसस्य वासांसि	२.२७.१२	अहं ते जननी पुत्र किमर्थं	२.३१.५५
असुराश्च रणे मत्ताः	२.६६.४७	अस्त्रैश्चतुर्भिश्चत्वारि	२.१२४.४७	अस्य कुर्मो महाराज	२.३१.४६	अहं कदम्बमालीना मेघकाले	२.४१.२०	अहं ते पर्वताः सप्त ये	२.११४.१३
असुरैः श्रूयते चापि	१.६.२६	अस्त्रैश्च निशितैर्बाणैः	३.५८.३३	अस्य चक्रं भगवन्स्ता	२.११६.४१	अहं कदाचिद्गंगायास्तीरे	२.११०.३२	अहं त्वभिजितो योगे	२.२.३६
असुरेतां महीपाल	३.१०४.१४	अस्थीन्यत्र कपालानि	३.५४.१५	अस्य च्छायां समासाद्य	१.४८.११	अहं कर्म क्रिया जीवः	३.१०.५५	अहं त्वं सर्वगो देव	३.८८.६०
असृः बुद्धदफेनादयं	२.८५.१२	अस्मत्समयबद्धाश्च	२.३७.६६	अस्य देवान्धकारस्य	१.४६.११	अहं किलेन्द्रो देवानां त्वं	२.१६.५४	अहं त्वस्याद्य वसति	२.२५.३६
असृजञ्छरवर्षाणि वृष्टि	३.६३.७६	अस्मदर्थे सुविहितं	२.५८.१४	अस्य देवाः शरीरस्य	३.४३.६	अहं कैलास निलय	३.८०.२८	अहं त्वां दैत्यं पश्यामि	१.४८.२६
असृजत्सविता व्यग्निर	२.१६.३२	अस्माकं चापि यत्कार्यं	२.१२१.५७	कस्येदं शासने सर्वं	२.२५.३०	अहं क्रोधश्च कामश्च	१.४१.५४	अहं त्विति स होवाच	३.१६.१२
अस्तं याते दिनकरे नानु	२.३६.३३	अस्माकं त्वमनाथानां	२.३१.१६	अस्यापत्यस्य ते विप्र	१.४५.५६	अहं चक्रीति गर्वो	३.६१.५	अहं नदीं गता सौम्य	२.६.१७
अस्तं गच्छन्तमादित्यं	३.५५.५०	अस्माकं शंकितास्सर्वे	२.४७.१८	अस्याः सर्वमशेषेण	२.११८.४६	अहं च दरदश्चैव वीर्यं	२.३५.४८	अहं नारायणो ब्रह्मा	३.१०.४६
अस्ति चास्य ध्वजं	२.१०४.३७	अस्माकमपि मल्लौ द्वौ	२.२२.८६	अस्यास्तु देव गंगाया	१.५३.३५	अहं च दरदश्चैव चेदिराज	२.४२.३७	अहं पुराणरमं तथैवेह	३.१०.६१
अस्तु वन्मुनयस्सर्वे	२.१६.६५	अस्माकमिन्द्रः प्रह्लादो	१.२८.१६	अस्या हि पीडने दोषो	१.५१.२५	अहं चन्द्रादपि गुरुं सहस्र	२.४१.२७	अहं पितृप्रसादाद्दीर्घा	१.१७.३

अहं पितृष्वसुभर्ता तव	२.४३.८०	अहं हि खट्वाङ्गवने नारदेन	२.२२.४८	अहो कालो महावीर्यो	२.३१.१२	अहो मे सफलं जन्म	२.१२६.७४	मानुषो भावो	२.१४.३५	अहोऽहं	
अहं बालो महानघे	२.३०.१६	अहमप्यात्मनो वृत्ति	२.३.३३	अहो क्षिप्रमहश्येन	२.३१.२५	अहो मे सुप्रिय कृष्ण	२.१६.१८	अहोऽस्य बलिनो	३.६५.३२		
अहं ब्रवीमि तपसा मदौयेन	२.८१.३७	अहमसुरकुलप्रमाथिनां	२.१२३.३२	अहो खल्वीदृशं युद्धं	३.१२४.२०	अहो यज्ञोऽसुरेशस्य	३.७१.१	अहोऽस्य स्नेह कारुण्यं	३.८३.६		
अहं ब्रह्मा कपिलो	२.७४.३४	अहमस्य तु देशस्य	३.८०.१६	अहो तात कृतं कर्म	२.२४.५४	अहो युद्धाभिसंतप्तो देश	२.४३.८६	आ			
अहं भूतपतिः कृष्ण	२.१६.३७	अहमादौ पुराणस्य संक्षिप्त	१.५२.२१	अहो दानव दुष्टात्मा	२.१०४.३५	अहोरात्रप्रमाणां च	३.१६.४६	आकच ग्रहणाद्देवि	१.६.१४		
अहं महर्षयश्चैव तत्र	१.४८.६३	अहमिज्यश्च यष्टा	१.५.७	अहो द्यौर्विमलाभानां	२.४१.५३	अहोरात्रं भजेत्सूर्यो	१.८.२	आकारं विकरं भिन्नं	३.१२५.१८		
अहं यवीयान् देवस्य	२.६८.३३	अहमिष्टा मया सार्द्धं जले	२.८८.१४	अहो धन्य तरास्मीति	२.१०८.३१	अहोरात्रमिति प्राहुश्च	१.८.४	आकर्णं चूर्णमाकृष्य	३.६५.२३		
अहं यशोदां याग्यामि	२.२.३८	अहमिष्टाहमिष्टेति स्निग्धे	२.८८.१६	अहो धिक्किमिदं नाथ	२.१२१.२	अहोरात्राः पञ्चदश	१.८.५	आकर्णपूर्णमाकृष्य	३.६६.१२		
अहं यस्य भवानेव	२.१४.४८	अहमेको ज्वरस्तात	२.१२३.१६	अहो धिग्ब्रह्मा सदनं मयि	२.७२.१३	अहोरात्रेक्षणो दिव्यो	१.४१.३०	आकर्ण्य तमम्बानं	२.१२१.६२		
अहं यास्यामि भद्रं	१.६.१२	अहमेको भविष्यामि	३.१००.२८	अहो नारायणस्यैव दिव्या	२.१०८.२०	अहोरात्रेण ते सर्वे	३.११०.१५	आकर्ण्य वचनं वीरः	३.६५.३४		
अहं युद्धोत्सुकस्तात	२.२४.६१	अहमेक त्वया विप्र	३.११८.२५	अहो नास्ति भयं नूनं	२.१२१.५	अहो रूपमिदं चित्रं	३.४३.३	आकाशगङ्गा जलवादनज्ञाः	२.८६.४५		
अहं वः प्रथमो देवस्सर्वं	२.१७.२८	अहमेव सदा धर्मो	३.११४.५	अहो निष्करुणा यात्रा	२.३१.२३	अहो वां जीवितं त्यक्तं	२.२७.१४	आकाशगङ्गातोयेन शीतेन	२.६०.४७		
अहं वा शाश्वतः कृष्ण	२.१४.४७	अहमेव हनिष्ये त्वां	३.१२६.३१	अहो नीचेन वपुषाच्छाद	२.२२.३५	अहो वीर कथं शेषे	२.३१.३५	आकाशश्च तपश्चैव	२.१२१.१२५		
अहं वा स्वजनश्लाघ्य	२.२२.६७	अहमेवाक्षरो मन्त्रस्त्र्यक्षर	३.१०.६६	अहो नृपरथोदग्रा विमला	२.३५.५	अहो वीराल्पभाग्यायाः	२.३१.५६	आकाशात्पुष्प वृष्टि च	२.४.१६		
अहं विशिष्टो देवनामित्यु	२.७०.३२	अहमर्न्ने पदे शक्र	३.१०.५०	अहो नृपरथोदग्रा विमला	२.४१.५२	अहो वीर्यमथानेस्तु	२.१२२.२१	आकाशादप्यसंचार्य	२.११.४६		
अहं स एव गोमय्ये गोपः	२.३२.५०	अहर्निशं च वृत्तान्तं	२.६४.२६	अहो नो दुष्कृतं	२.७६.१४	अहो वीर्यमहो धैर्यमस्य	३.१०१.१८	आकाशे तु स्थितो विष्णुः	१.४२.३१		
अहं सर्वाणि सत्त्वानि	३.१०.५१	अहस्तावत्प्रेदोषो वा	२.११६.३७	अहो बत न शोभेतां	२.७.३०	अहो वीर्यमहो धैर्यमहो	२.११६.८३	आकाशे दिक्षु सर्वासु	२.६६.४३		
अहं सहस्र शीर्षाधैर्यः	३.१०.५२	अहिर्बुध्न्यश्च भगवान्	३.१४.४१	अहो बत मृधे वीर्यं	१.३३.३७	अहो वीर्यमहो धैर्यमेत्तयो	३.६७.२२	आकाशेऽधिष्ठितो	२.१०६.४५		
अहं सांख्यमहं	३.१०.५८	अहिस्त्रः सर्वभूतेषु धर्मात्मा	१.२५.३	अहो बलविहीनास्मर	२.३१.१७	अहो सुबलवद्दैवशक्यं	२.५२.३६	आकाशेन पुरीं यातुं	२.६७.३७		
अहं हयशिरो देवः	३.१०.५७	अहो कण्ठमहो कण्ठं	३.११५.३७	अहो मयाति बाल्येन रोषा	२.३२.४	अहोऽस्य तपसो वीर्यं	१.२.१३	आकाशेशब्द आतीत्तु	६.६६.८		

श्रीहृषिवंशपुराणम् ॥ श्लोकानुक्रमणी

१४

आकाशे शस्त्रसंकाशे हंसेषु २.१६.५४	आगता मत्प्रियाय २.१२७.१२६	आचार्यः समरेऽतिष्ठ ३.५७.५	आज्ञा च दया मल्लानां २.२८.१५	आत्मन्यात्मानमाधाय ३.२८.३
आकाशेश्वर्यभूतेन ३.१६.१०	आगतिं त्वं गति ३.१६.४०	आचालयेयुर्गैलान् १.५३.७६	आज्ञापय विभो कार्यमस्माकं २.८६.१७	आत्मप्रभाभिश्च ३.५२.५५
आकाशो विष्णुरित्येव ३.१११.४८	अगतो गरुडेनेह छद्मप्राकाश्य २.४६.२१	आजगाम पुनः स्वर्गं २.८६.४४	आज्ञापयामास ततः समुद्रं २.८६.३३	आत्मरूपप्रकाशेन ३.१०.३
आकृष्य मांसयूथानि ३.६८.२५	आगतोऽहं महाशीला २.८०.२६	आजगाम महातेजा ३.१४.४	आज्ञापयायास ततः स तस्यां २.८६.६७	आत्मरूपोपमं तत्र ३.३५.३३
आकृष्य लांगलाग्रेण २.१२२.६६	आगन्तव्यं जालपादाः स्व २.६२.७	आजग्मतुस्तौ सहितौ २.१३.२	आज्ञाप्यतां हयः केशी २.१.२६	आत्मा देवेन विभुना ३.६७.५
आकृष्यमाणं तत्तेन २.२७.५७	आगमत्पुण्डरीकाक्षो ३.१२६.१४	आजग्मुर्यादिवपुरीं गोविन्द २.११०.१०	आज्जिको नरकश्चैवकाल १.३०.१००	आत्मानं कृष्णयोनिस्थं २.१२५.२०
आकृष्य शार्ङ्गं बलवान् ३.१०१.५	आगमं तस्य विज्ञाय नागा ३.७२.८८	आजघान निकुम्भस्तु गदया २.६०.४३	आतिथ्यं करणोऽस्माकं स्व २.५१.४५	आत्मानं चैव वीर्यं ३.६०.५५
आक्रम्यमाणस्ताक्षरेण २.७३.६६	आगमिष्यन्ति वै देवि २.४.५४	आजघानाथ संक्रुद्धो ३.५८.५७	आतिथ्यं क्रियतां चैव २.८३.४४	आत्मानं दर्शयामास ३.१०४.८
अक्रीडगरुडच्छन्दाश्चित्रा २.८८.६१	आगम्य ते मृगेन्द्रस्य ३.४७.२	आजघ्ने गदया क्रूरं ३.६६.७	आतिथ्यं क्रियतामेषां बहु २.६३.२	आत्मानं वात्र संत्यक्ष्ये ३.१०८.१६
अक्रीडभूमिं दिव्यानामा २.४३.४२	आगन्धारग्रामरागं २.६३.२४	आजघ्ने डिभको ३.१२५.७	आतिथ्यं चक्रिरे ते ३.७७.२०	आत्मानं सुसमाधाय १.६.३५
आगच्छत द्रुतं १.३.५८	आग्नीध्रश्चाग्निवाहुश्च १.७.१०	आजहार सदा सायं १.२०.६३	आत्मजं ते वपुर्व्योम्न २.१४.४२	आत्मानमात्मना १.५५.४२
आगच्छ त्वरितं कृष्ण ३.११३.२३	आग्नेयं तु महाघोर १.१४.१०	आजह्ने पितृदायाद्यं १.३२.३०	आत्मतेजोद्भवाः पुण्या ३.११.६	आत्मानश्च दुराचारा ३.३.२८
आगच्छध्वं नृप श्रेष्ठा न २.५०.३६	आग्नेयं प्रशमं यातमस्त्रं २.१२४.४४	आजानुवाहुर्विकृतः ३.५१.२५	आत्मत्यागे मनः कुर्वन् ३.१२६.११	आत्मार्थं चासृजत्पुत्रां ३.१४.२६
आगच्छ प्रविशास्यं ३.१२६.२३	आग्नेयं रथमास्थाय २.१२२.३४	आजानु बाहुस्ताम्रास्य २.१२१.१३८	आत्मनः शापमोक्षार्थं १.२६.१४	आत्मा वायुस्तव ३.६२.३०
आगतः पौण्ड्रको ३.६३.२०	आग्नेयं वैष्णवं सौम्यं २.१२७.७७	अजीवो यः परस्तेषां २.१८.४	आत्मनः शोभनी कणां २.८०.१४	आत्मौपम्येनजानामि १.२०.११८
आगतं चाप्रमेयात्मा २.६५.१३	आग्नेय मस्त्रं लब्ध्वा १.१३.३३	आज्यगन्धप्रतिवहो ३.५६.२७	आत्मनो गतयश्चैव ३.१६.४१	आथागमत्ततः कृष्णो २.१२२.४१
आगतश्शक्रसदनात्स वै २.८८.४३	आग्नेय मस्त्रं संयोज्य ३.१२७.३५	आज्यधूमं समाधाय १.४६.१७	आत्मनोऽपि निषेक्तव्यं २.७८.२२	आददान इव क्रोधात् २.१२२.३७
आगताः कुण्डिनगरे कन्या २.५०.३१	आग्नेयास्त्रं मुमोचाथ २.१०६.१४	आज्यनासः स्रुवस्तुण्डः ३.३४.३६	आत्मनो भावनिवृत्ते ३.२१.२२	आदशन्दशनैस्तीक्ष्णं २.१२.१४
आगतानां नरेन्द्राणामन २.५१.१०	आचन्द्रार्कग्रहा भूमि ३.१.१८	आज्यभागाः प्रवर्त्तन्ता १.४८.७२	आत्मनो विपुलं वंशं १.३८.१०	आदानाद्बध्यते जन्तु ३.१७.६८
आगतान्नेच्छसे देवि सदृशा २.६२.१६	आचारवांश्चैव ३.५०.२१	आज्यसंघर्षणोद्भूतं ३.११.१०	आत्मन्यवस्थितं ३.८१.२	आदाय च महाचापे ३.१०६.१६

आदाय मुशलं रामो जरा	२.३५.६३	आदित्या वसवो रुद्रा	३.२८.६८	आद्यं पुरुषमीशानं	१.१.१	आपतन्तं महानाग	३.५६.५५	आपलुत्य सहसा क्रुद्धो	२.१२६.१५७
आदायरुक्मिणीं कृष्णो	२.५६.४७	आदित्या वामनः श्रीमान्	३.६८.७	आद्यं स्वायंभुव रूपं	२.५१.५२	आपतन्तं सुदुष्पारं	३.५७.३	आब्रह्मभुवनान्चापि यशः	१.३६.४२
आदाय शस्त्राणि	३.६३.२५	आदित्याश्च ततो रुद्रा	१.४१.६६	आद्याः प्रभूता ऋभवः	१.७.३२	आपतन्तं हि वेगेन जरा	२.५६.५५	आभाषितां किञ्चिदेवोपलक्ष्य	२.८६.२७
आदाय सुहृदं चापं	३.१२०.५	आदित्येन समादत्ता	३.२८.५४	आद्यो लोकगुरुर्विष्णु	३.११०.८	आपतन्ती च सा शक्ति	३.५४.४८	आमन्त्रयित्वा हितरी	२.७६.३०
आदित्य पथगं यत्तु मेरोः	२.६८.६१	आदित्यैर्वसुभिः साध्यै	१.४१.४४	आधिपत्य मिवान्येषां	२.११.२२	आपतन्तीं शिलां	३.६०.४१	आमन्त्र्य पितरं तात	१.२३.३१
आदित्यवर्णं विरजं	३.५२.११	आदित्यैर्वसुभिः साध्यै	३.४१.६	आध्मातस्तेन हरिणा	३.१२०.१३	आपपात महाबाहुर्हंस	३.१२४.११	आमन्त्र्य पौरान् प्रीता	१.२३.१०
आदित्य विभोः	३.३७.२२	आदित्यैर्वसुभिश्चैव	३.३०.२१	आनकानां च संह्लादः	१.३४.१६	आपवः स विभुभूत्वा	३.११.१	आमुक्तंकवचो वीरावज्ययो	३.१०५.१६
आदित्यस्य सरस्वत्यां	३.१४.५६	आदिदेव जगन्नाथ	३.८७.६	आनन्दजननो घोषोमहा	२.१७.१६	आपश्च सहसा कुद्धा	३.४६.४२	आमुच्यमालाश्च	३.५२.४३
आदित्यस्य हि तद्रूपं	१.६.४	आदिदेवः पुरवाणात्मा	३.७६.२६	आनन्दपरिपूर्णाभ्यां हृद	२.५५.८४	आपस्तस्तम्भरे चास्य	१.५.३१	आमुच्य वमथि	३.५२.१५
आदित्याद्याः सुताः सर्वा	२.७७.१२	आदिदेवः पुराणात्मा	३.६२.२२	आनन्दिनी पर्यचरत्स्वेषु	२.६६.१५	आपस्तु वारुणास्तत्र	२.१२७.७०	आमूलमसकृद्विष्णु	३.११४.२६
आदित्या द्वादशैवेह संभूता	१.६.४७	आदिदेवमजं विष्णुं	३.८०.२२	आनतं नाम तद्राष्ट्रं	२.३७.३६	आपस्य पुत्रो वैतण्ड्यः	१.३.३६	आमोदश्च प्रमोदश्च	२.१०६.४६
आदित्याविमुखावीराः	२.८२.६	आदिपद्मं च पद्मांकं	२.४१.२४	आनतं विषयश्चासीत्	१.१०.३३	आपवस्य महिम्ना	१.२.२	आयताश्च तुरस्त्राश्च	२.८८.५८
आदित्याभासिभिः	३.२७.१४	आदिराजो नमस्कार्यः	१.६.५०	आनतंस्तु विभो पुत्र	१.३२.३८	आपृच्छ्य तं महाभागा	२.१२७.१४४	आयान्तमथ तं दृष्ट्वा	२.१२६.३८
आदित्या रश्मयो	३.२६.५१	आदिस्त्वं सर्वभूतानां	३.८८.५६	आनिनाय गुरोः पुत्रं चिरं	२.३३.२१	आपो देव्य ऋषीणां	२.७६.६	आयुधप्रग्रहो वीरो तावन्यो	२.४३.१७
आदित्या वसवश्चैवः	३.३२.४०	आदीप्यतं तु शैलेन्द्र	२.४२.७०	आनीतः सहदेवश्च प्रेषित	२.६०.७७	आपो ध्रुवश्च सोमश्च	१.३.३८	आयुधंस्पन्दनो वापि	३.५८.८६
आदित्या वसवो रुद्रा	१.४४.२	आदीप्यमानशिखरादवप्लुत्य	२.५३.३७	आनृण्यं लौकिकं कृष्ण	२.३२.२६	आपो नारा इति प्रोक्ता	१.१.२८	आयुधानि प्रशस्तानि	२.१०६.१०२
आदित्या वसवो रुद्रा	२.११८.४०	आदो तु वाचकं चैव	३.१३२.५६	आनृण्यार्थं सुरेशस्य	३.६६.५१	आप्यायिताश्च ते	१.१६.४२	आयुधावाप्तिरत्रैव वपुषो	२.३६.८०
आदित्या वसवो रुद्रा	२.१२७.१०३	आदो दधारैकभुजेन	३.८२.६	आन्त्रवेष्टिसर्वाङ्गी	३.७६.३	आप्राप्तामन्तरे सोऽथ	३.६०.६६	आयुर्वर्षसहस्राणि तथा	१.४१.१४७
आदित्या वसवो रुद्रा	२.१२८.२६	आद्यन्तवन्तः कवयः	२.१२३.३७	आपतन्तं गजानीकं	३.५६.४६	आप्लुतं सर्वतीर्थेषु	२.१.१०	आयुर्वेदं भरद्वाजाप्राप्येह	१.२६.२७
आदित्या वसवो रुद्रा	३.२२.१६	आद्यं देव गुहं दिव्य	३.६६.८	आपतन्तं ददर्शयि	२.११६.१४२	आप्लुतोऽयं गिरिः पक्षी	२.१८.३७	आयुर्हन्त्या बलग्लानिर्बल	३.४.४

श्रीहरिवंशपुराणः :: स्त्रोकोनक्रमणी

१६

आयुष्कामैर्यशः कामै	३.४०.२३	आर्जवात्स तु तं वत्सं	१.२१.१५	आवयोर्यत्कृतं कार्यं	२.५०.१३	आशिभिरनुकूलाभिः	२.६४.५८	आसनं कुशसंयुक्तं	३.८०.५७
आयुष्मान्कीर्तिमान	१.१.४६	आर्तस्तन्तिसंनदे वधिरा	२.४३.४६	आवयोस्त्वं महाभागे	१.१०.१४	आशीस्तु पुरुषं दृष्ट्वा	३.४.५१	आसनं चाग्निवर्णाभं	२.१.६
आयुस्तत्र च मर्त्यानां	३.४.४०	आर्तानां कूजमानानां	२.४३.४५	आवर्त इव संजले	३.६०.४	आशुः शिशानं वृषभं	२.७२.३७	आसनं तत्र परमं	३.३५.११
आयोगभूतं कंसस्थ	२.२७.४४	आर्ता वक्ष्यन्ति नः सर्वे	२.३८.६४	आवर्तयत्तदा राजा	१.३३.३१	आश्चर्यं खलु देवानामेक-	२.११०.२२	आसनं महदास्थाय	३.७४.३
आयोः पुत्रास्तथा	१.२८.१	आर्ति जग्मुः खगगणा	२.१८.४२	आवर्तया जले स्नात्वा	२.८४.३	आश्चर्यं खलु पश्यन्	३.८५.८	आसनानि यथा योगं	३.१११.२२
आरक्तनेत्रा जलमुक्तिसक्ताः	२.८६.५१	आर्यं तिष्ठाव सहितावनु	२.३५.७	आवाभ्यां कृतमातिथ्यं	२.५१.१८	याश्चर्यं खलु लोकानां	२.११०.४५	आसन्नः सन्नतरः	२.७२.५२
आरण्यके मूलफलैः	३.१३२.५६	आर्यं तिष्ठाव सहितौ न	२.४१.५६	आवाभ्यां मुह्यते लोके	३.१३.१६	आश्चर्यं चापि भूतेषु	२.११०.५१	आसन् पूर्वयुगे तात	१.१६.१
आरण्यैः सह संसृष्टा	३.४६.२०	आर्या कात्यायनी देवी	२.३.३	आवां तेऽद्य महाराज	३.११३.५	आश्चर्यं चैव नान्यद्वै	२.१२८.२७	आसन्नं विप्रकृष्टं	३.३.१
आरदथ बलेस्तस्य	३.६६.६५	आर्या कुहः सिनीवाली	२.१०६.५१	आवामिदं जगत्सर्वं	३.११६.६	आश्चर्यं परमं विष्णुः	१.४०.६५	आसन्नमुक्तयः केचित	३.७७.५
आरुजन्पर्वताग्राणि	२.६४.४६	आर्यान्पवरवैदः	२.६६.३५	आवासश्च ततो दत्तः	२.६३.१७	आश्चर्यं परमं वेदा	२.११०.६६	आससाद स तद्धर्मं	३.१४.१६
आरुरोह रथं दिव्यं	३.५१.४६	आर्याः बुद्धिः समास्थाय	३.५७.२४	आविकानि च सूक्ष्माणि	२.६४.१५	आश्चर्यमन्यतलोके	२.११०.७६	असिक्पनहस्ताश्च	३.७२.१७
आरुह्य गरुडं विष्णुर्ययी	३.८४.४	आर्यास्तवः पुनः कृष्णे	३.१३४.६	आविद्धपुच्छो हृषितो	२.१३.१६	आश्चर्यमिति ते सर्वे	२.६.२१	आसीच्चैव रथिर्वीरो	१.३६.४
आरुह्य गरुडं सर्वे	२.१२७.४३	आर्यास्तव प्रवक्ष्यामि	२.३.१	आविध्य सहसा मुक्तं	२.६३.११८	आश्चर्यमित्यभिहितं	२.११०.२६	आसीच्चात्वेषु राजेन्द्र	३.१०४.१
आरुह्य भगवान्विष्णु	३.६०.३६	आलपन्तः सुमधुरं	२.६२.५	आविध्य सहसामुञ्चच्छिलां	२.६३.७३	आश्चर्यं शब्दो नास्मासु	२.११०.७६	आसीत्पञ्चजनः पुत्रः	१.३२.७७
आरुह्य मूर्ध्नि मद्रूपं	२.७४.५१	आलोक्य धन्वी	३.५६.१६	आविध्य भूतले चैनं	२.१२३.१०	आश्चर्याणि च दृश्यन्ते	२.११०.५५	आसीत्सर्वासमाकीर्णं	३.५५.१६८
आरुढरथसहस्रा	३.११६.१२	आवन्तश्च दशार्हश्च	१.३६.२४	आविधमाने तस्मिस्तु	२.१२३.११	आश्रमाश्च तथा	३.६.१२	आसीत्सुधर्मणः पुत्रः	१.२०.३६
आरुढवन्तौ गरुडं	२.१२७.४०	आवयोः पुरतः स्थातुं	३.१०७.८	अविष्टेयं मया बाला	२.६४.१	आश्रमेषु महाभागान्	१.४१.६६	आसीदियं समुद्रान्ता	१.६.४५
आरुढः स तु बाणश्च	३.१२६.६१	आवयोः पुरतः स्थातुं	३.११३.१६	आवृण्वन्भ्ययाद्वीरस्तं	२.३६.११	आश्रमेषु मुनीन्सर्वान्	३.४१.२८	आसीद्धर्मस्य गोप्ता वै	१.५.१
आरोपयामास बला	२.२७.४७	आवयोर्भगवन्युद्धेको	१.२८.५	आशात्वं मानुषाणां	२.३.२१	आश्रित्य शम्बरीं मायां	२.८४.५४	आसीद्राजा मनोर्वशे	२.३७.१२
आरोप्यैकरथे देवः	२.७३.२	आवयोर्गमनं श्रुत्वा जित	३.३६.१२	आशिविषा इव क्रुद्धा	३.५५.४६	आश्वसेत्यथ तं	२.६७.१०	आसी नारदे शक्रौ	३.६६.३६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१७

आसीन्मरुतः पुत्रः	१.३६.२६	आह मां सत्यभामा	२.१२७.४८	इक्ष्वाकुवंश प्रभवाः प्राधान्ये	१.१५.३६	इति तीर्थप्रसंगेन पृथिवी	३.१०.१४	इति संक्षेपतः स्तुत्वा	२.५१.६४
आसीन्मे साध्वसं दृष्ट्वा	२.७३.५३	आहारः फलमूलानि	१.६.१८	इक्ष्वाकुवंशप्रभवो रेणु	१.२७.३८	इति ते देवगन्धर्वा	३.१२५.२७	इति संचिन्त्य मनसा बला	२.४६.५६
आसुरं दर्पमाश्रित्य	२.१२६.१२१	आहारमेकपर्णेन एकपर्णा	१.१८.१७	इक्ष्वाकुस्तु विकुक्षिर्वे	१.११.१६	इति ते प्रेषिताः	३.६३.२१	इति संचिन्त्य मनसा	३.७८.१५
आसेदुस्ते पुरीं रम्यां	२.२७.२	आहिकं चित्रकं क्षिप्तं	३.१२५.१६	इगितज्ञोऽग्रतः स्थित्वा	३.६१.२७	इति ते मुनयः सर्वे	३.८७.११	इति संचिन्त्यमानस्तु	२.५०.१८
आस्तां मां समुदीक्षन्तौ	२.२६.४६	आहिच्छत्रं एकाम्पित्य	१.२०.७३	इच्छतः सदृशीं भार्या	२.७२.२२	इति पारीक्षितो राजा	२.१२८.४०	इति संचोदितो विप्रो	३.११३.२५
आस्ते सुखं महायोगी	३.८०.८६	आहुकं प्राह कृष्णस्तु	२.१२१.३४	इच्छंतोऽपचितिं गन्तुं	२.८२.१२	इति पुरुषवरस्य लांगले	२.६२.२०	इति संचोद्य स्वस्थोऽसौ	२.५०.३५
आस्ते सुखं यदा विप्रः	३.११७.८	आहुकश्चाहुकी चैव	१.३७.२०	इच्छन् दहेयं पृथिवीं	१.५.१४	इति प्रकारान्द्वान्निश	२.११६.१२३	इति संजल्पमानानां	२.५५.७१
आस्थायतं भास्कर	३.५२.१४	आहुकश्चैव नो राजा	२.१२१.२६	इच्छन्तेव हरिदेव काश्यपत्व	२.७१.२५	इति प्रकारान् द्वान्निशः	३.१२५.२१	इति संदिश्य भगवान्	२.७३.५
आस्थाय परमं दिव्यं	३.५६.३३	आहुकीं चाप्यवन्ति	१.३७.२६	इच्छन्तेव हरिदेव काश्यपत्व	२.७१.२५	इति प्रवाच्यो यदि साम	२.६८.४०	इति संदिश्य भगवान्	२.६७.३८
आस्थाय वै वाजिनं	२.७१.६	आहु विश्वेश्वरशान्तं	३.८५.२०	इच्छेद स्त्री दुहितरं	२.७६.४७	इति प्राश्वास्य राजानं	२.५५.८३	इति संबोधयन्कृष्ण	२.१०१.७२
आस्थाय स रथं वीरः	२.६०.३	आहु वेदविदो विप्रा यं	१.४१.१०	इच्छेदोष्ठी चारुपौ या	२.८०.२१	इति ब्रुवन् पुराणात्मा	३.७७.१७	इति स्तुत्वा जगन्नाथ	३.६०.२६
आस्थितो गरुडं देवस्तस्य	२.११.१४२	आहुतो बलदेवस्तु	२.६१.२५	इच्छेहं तत्त्वता	३.१०.४७	इति ब्रुवंस्तथा रक्षो	३.१२६.२६	इति हरवचनं निशम्य	२.७२.६६
आस्यं देवानामन्तकं	२.७२.४६	आहुतो वरुणेनाय	३.२.१७	इतश्चेतश्च राजानो	३.६३.२२	इति मां नामभिर्नित्यं	३.८१.६	इतिहास पुराणज्ञैः	३.७३.४४
आस्वेदं विष्टरं पूर्वं	३.११५.८	आहुत्य शम्बरेण	२.१०६.४८	इतः सुवृष्टचा सस्यैस्ते	२.६६.६६	इति मे भाषितं नित्यं	२.६२.४१	इतिहासमिमं श्रुत्वा	३.१३२.११
आहतः स तु तेनायु	३.१०२.३	आहोस्विद्वासुदेवस्तु	३.६७.२०	इतस्ततश्च धावन्तो	३.१११.५६	इति श्रुतं नृपश्रेष्ठ	३.११३.१७	इति होवाच भगवान्देवो	२.८५.६०
आहतस्तलघातेन	३.१२६.४०	आह्वतुः कौशिकश्चैव	१.३६.२२	इति कुम्भाण्डवचनश्चोदितः	२.११६.५०	इति श्रुत्वा तदा देवी	२.११७.५०	इतीदमुक्त्वा पुनरेव शोभना	२.६६.५५
आहतानि व्यशीर्यन्ते	३.५५.१०६	आह्वये तं वनं यस्य	२.८७.२३	इति चत्वररथ्यासु	२.१००.८	इति श्रुत्वा वचस्तथ्य	२.६१.४५	इतीदमुक्त्वा भगवान्समुद्रं	२.८६.३६
आहत्य दुन्दुभीन्सर्वे	२.५६.१७	आह्वानं तत्र स चक्रे	२.२८.१७	इति चरितनिबं महात्मना	३.६.१३	इति संस्तूय गोविन्दं	२.१०२.४२	इतो गच्छत राजानी	३.१०६.४
आह त्वां भगवान् ब्रह्मा	२.१६.४०	इ		इति तद्वचनस्यान्ते गमिष्येति	२.५५.६	इति संस्तूयमानस्तु	२.७२.६१	इतो द्वारवती गत्वा रथ	२.७३.१०२
आह भूयो हृषीकेशो	३.१११.२३	इक्ष्वाकु कुलसंज्ञितो रामो	२.४८.२२	इति तं पर्वतं कृष्णो	२.७४.५३	इति संस्तूयमानस्तु	२.७४.३५	इतो वयं गमिष्यामो	१.२४.२६
		इक्ष्वाकुणा परित्यक्तो	१.११.१८						

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१८

इत्युग्रवन्तूपा राजन्	३.१२१.१६	इत्युक्ता मुनिमुख्येन सत्य	२.६७.४६	इत्युक्त्वा विररामैव	३.७५.२४	इत्येवमाश्वासयतो	३.५.१	इत्येवमुक्त्वा बाणं	२.१२६.५२
इत्यमेव मुक्तः प्रहसन्	१.११६.३८	इत्युक्तो देवदेवेन	३.८०.३२	इत्युक्त्वा विररामैव	३.६३.६	इत्येवसाह्वयामास रुक्मिणं	२.६१.३८	इत्येवमुक्त्वा स च	३.४३.१७
इत्यर्थं प्रेषितस्ताभ्यां	३.११५.२६	इत्युक्तो देवदेवेशः	३.७३.२६	इत्युक्त्वा विस्तरं	३.८२.४२	इत्येवमुक्तः कुम्भाण्डः	२.११६.५६	इत्येवमुक्त्वा सरथः	१.११६.१७०
इत्यर्थे संस्थितो	३.१११.५५	इत्युक्तो शिशुपालस्तु राजा	२.८४.५५	इत्युक्त्वा सशरं चापं	३.१२७.३१	इत्येवमुक्तः कृष्णस्तु	२.१२७.८६	इत्येवमूचुस्तेऽन्योन्यं	२.१२१.१५
इत्यादिनामभिर्नित्यं	३.१०५.७	इत्युक्तोऽहं भगवता	१.१८.१	इत्युक्त्वा सात्याकिर्वीरः	३.६५.३३	इत्येवमुक्तः कृष्णोऽन	२.१२७.८७	इत्येष विधिरुद्दिष्टो	३.१३२.८६
इत्यादिभिर्महादेवं	३.१०५.२२	इत्युक्त्वा चैव गरुडः	२.१२७.५२	इत्युक्त्वासुरसंधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्तः प्रहसन	२.११६.३२	इदं कर्म त्वया कृष्ण	२.१२१.४५
इत्यादिशब्दः सुमहान्	३.१०६.७	इत्युक्त्वा जामदग्न्यस्तु	२.४०.४८	इत्युम्बुपतिना प्रोक्तो	१.५५.३२	इत्येवमुक्तं त्रिदिवेश्वरस्य	३.५२.६३	इदं कित्विति संव्रस्ताः	२.६.२६
इत्युक्तः पुण्डरीकाक्षो देव	२.६३.३८	इत्युक्त्वा त्वरमाणा	२.११६.६२	इत्युवाच पुरा व्यासस्तपो	२.१०२.४१	इत्येव मुक्तां रुदतीं	२.११८.२६	इदं कुण्डिनपुरं कृष्णो	२.४६.१७
इत्युक्तवति देवेशे	३.११५.३६	इत्युक्त्वाथ महादेवो	२.८२.३४	इत्येत दाख्यानमुदाहृतं	३.६.१२	इत्येवमुक्ते कृष्णोऽन	२.१२१.३३	इदं च जाने विप्रेन्द्र	३.११६.६
इत्युक्तवति विप्रेन्द्रे	३.११५.२६	इत्युक्त्वाथासिमादाय	२.६६.३६	इत्येतद्वचनं श्रुत्वा	३.७१.२२	इत्येवमुक्ते वचने	२.४६.१	इदं चैवामृतप्रख्यं होम	२.३६.८३
इत्युक्तवति हंसे च	३.११८.१	इत्युक्त्वा देवदेवेशं	३.८६.१	इत्येताह्युशनोगीता	१.२०.१३७	इत्येवमुक्ते वचने	२.११८.३५	इदं तु कुण्डिनपुरमासाद्य	२.४८.४८
इत्युक्तं कंसं सा देवकी	२.४.५७	इत्युक्त्वा नारदेनैव सहितः	२.७२.८	इत्येते दानवेन्द्रेण	२.६२.३१	इत्येवमुक्ते वचने	२.११८.४५	इदं तु यत्कार्यतमं	२.११८.४४
इत्युक्तवन्तं तमहं	१.१६.३१	इत्युक्त्वा नारदे यातो	२.१.२१	इत्येते नामतोऽजीता मनवः	१.७.८६	इत्येवमुक्ते वचने	२.१२१.४६	इदं तु सुमहत्कण्ठं	२.१२१.३१
इत्युक्तवन्तं तमहं	१.१७.१६	इत्युक्त्वान्तर्हितो देवः	३.४०.१४	इत्येते पार्थिवाः सर्वे	३.१८.२२	इत्येवमुक्ते वचने	२.१२१.६१	इदं ते सदृशं सौम्य	२.३१.७
इत्युक्तः सत्यको	२.७५.४६	इत्युक्त्वा परिघेराशु	२.१०५.७८	इत्येवं चिन्तयित्वा	३.१००.७	इत्येवमुक्ते वचने	२.१२१.७७	इदं दुःखतरं मन्ये	३.११४.१६
इत्युक्तः स निराक्रामन्	१.१२.१७	इत्युक्त्वा पार्वतो देवी	२.१०६.४१	इत्येवं ता वदन्त्यश्च	२.१२१.६	इत्येवमुक्ते वचने	२.१२१.८०	इदं पुंसवनं प्रोक्तं गर्भा	२.८५.७७
इत्युक्तस्तु तु कृष्णेन	२.५७.६४	इत्युक्त्वा बाह्याणं कृष्णः	३.११७.१	इत्येवं नरपति भास्कर	२.५३.५७	इत्येवमुक्ते वचने	२.१२१.८६	इदं पुराणं परमं पुण्यं	३.३३.८
इत्युक्तः सस्मितं कृत्वा	२.१११.१५	इत्युक्त्वा भगवान्देवस्तत्रै	१.१६.२०	इत्येवं पुरुषः सर्वान्	१.४०.६२	इत्येवमुक्ते वचने	२.१२३.१३	इदं प्रकृतिर्जर्दोषै	२.१२७.८३
इत्युक्ता त्वरमाणा	२.११६.७४	इत्युक्त्वा भगवान्	३.८३.३०	इत्येवं बाष्पूणाक्षी	२.११८.१६	इत्येवमुक्ते भगवान्	२.११६.१६	इदं भक्त्वा मदीयं च	२.७०.३७
इत्युक्तं पितृभिः सा	१.१८.३८	इत्युक्त्वा भगवान्	३.६०.३३	इत्येवं मम वृत्तान्तः	३.८०.१२	इत्येवमुक्त्वा प्रहसन	२.१२२.७६	इदं मया ते परिकीर्तितं	३.१३५.१७

इदं महाकाव्यमृषेर्महात्मनः	३.६५	इन्द्रत्वं चामरत्वं	३.६३.६	इन्द्रो मरुद्गणयुतो	२.१२७.३८	इमां च मायां गृह्णीष्व	१.४५.७१	इयं च माधुरी भूमिरल्पा	२.५६.५
इदं यत्स्यान्मुद्दिष्टं यत्रा	२.४०.३४	इन्द्रश्चुप्तो हतः कोपाद्यवन	२.१०२.६	इन्द्रो वा धनदो	३.८०.८	इमां चोदाहृतां दिव्यां	३.३२.६०	इयं च राजकन्या हि	२.११७.६४
इदं सत्यं वचो हंस	३.११८.३१	इन्द्रध्वज इवोत्तिष्ठन्	३.२६.१५	इन्द्रो विवस्वान् पूषा च	१.६.४८	इमां मिथ्याऽमिश्रिं यः	१.३८.५८	इयं च सा मया मौलिः	२.४१.३१
इदं समुत्थितं घोरं	१.५७.२६	इन्द्रपोक्तानि सामानि	३.२३.२६	इन्द्रो विवस्वान् पूषा	३.४८.१२	इमां यात्रां विजनीष्वं	२.४६.२२	इयं चैव कुलश्लाघ्या	२.१२८.११
इदमत्यद्भुतं कर्म रामस्य	२.६२.७६	इन्द्र सुतो निहन्ता	१.३.१२७	इन्द्रोऽसि तात देवानां	१.२८.२०	इमां विद्यां समास्थाय	३.२७.४०	इयं द्वावती नाम पृथिव्यां	२.५८.६
इदमद्यक्षमं विप्रा	३.११०.१०	इन्द्रश्च त्रिदशैस्सार्द्धं	२.४.२१	इमं कृष्णस्य विजयं यः	२.६०.७८	इमां विसृष्टिं दक्षस्य	१.२.५७	इरावत्यां महाभोजावग्नि	२.१०२.६
इदमन्तरमित्येव ततः स	१.२४.१६	इन्द्रस्य चारुदृष्टिस्त्वं	२.३.१६	इमं च वाक्यं संदर्भं	१.२२.११	इमां विसृष्टिं विज्ञाय	१.३६.३१	इरा वृक्षलता वल्लीस्तृणा	१.३.११८
इदयन्यत्कृतं देव	३.१११.६०	इन्द्रस्यापि सदा विप्र	३.६२.१६	इमं ते पितरं वृद्धं कृष्णस्य	२.३१.५४	इमामवस्थां पश्यन्त्यः	२.३१.४	इषवस्तु सखास्तत्र	३.५४.१८
इदममरवरस्य भारते	२.८५.७८	इन्द्रस्यार्थे पराक्रम्य	३.६१.३६	इमं देशं समागम्य	२.११६.२७	इमास्ते किं करिष्यन्ति	२.३१.५३	इषुसाह्वा निकुम्भाश्च	२.१६.३६
इदमश्रुतपूर्वं मे मत्तो	३.११५.३२	इन्द्राणीमर्चयिष्यन्ती	२.५६.३४	इमं यः षट्पुत्रवरधं	विजयं २.८५.७५	इमे चैवाष्ट कलशा निधीना	२.५०.३२	इष्टपुत्रे प्रहर्तव्यं कथं	२.८६.१८
इदमस्त्रं महाघोरं	२.१२७.६७	इन्द्राणी व्रतकं चक्रे	२.८१.२४	इमं यस्मुत्तवं दिव्य	२.३.२८	इमे ते पृथिवीपालाः	२.३५.१०	इष्टवादस्तपो नाम	३.४.५०
इदमासनमास्वेति	२.५०.२७	इन्द्रायाग्निरयं प्रादात	३.२६.११	इमं श्लोकं महार्थं त्वं	१.२३.३४	इमे ते पृथिवीपालाः	२.४१.५६	इष्टः स वृक्षः सततं	२.६७.५६
इदमासनमित्येवं	३.१११.१६	इन्द्राशतिरिवेन्द्रेण	२.६३.५४	इमं स्तवं यो रुद्रस्य	२.१२५.५८	इसे ते श्रवणे शून्ये न	२.३१.८	इष्ट स्तत्र जनानां च	२.७०.४०
इदमासनमित्येवं	३.१११.२०	इन्द्राशतिरिवेन्द्रेण	३.५४.६३	इमं स्तवमनन्तस्य	३.७२.६८	इमे त्वां ब्रह्मविद्वासां	१.५०.३६	इह च प्रेत्य ते सर्वे	२.१२१.१३१
इदमिच्छसि चेन्मूढ	३.११८.४८	इन्द्राशतिसमस्पर्शं	३.५८.१७	इमं हत्वा मनुष्येणोन्द्र	३.७६.२६	इमे त्वां सप्त मुनयः	१.५०.४१	इह त्वं जातसंवृद्धो मम	२.२२.७६
इदमेकमिदं तत्त्वमिति	३.७३.४३	इन्द्रियै रतिमूढात्मा	३.१६.३६	इममद्य समुद्धृतं	३.५६.५४	इमे नो बान्धवास्तात	२.१२.३१	इह त्वां नाभिजानाति	२.१०४.२६
इदमेवंविधं कृत्वा	२.१२१.७	इन्द्रियैर्व्यतिरिक्तो	३.१६.३८	इममप्यायतापाङ्गी गङ्गा	१.५३.२७	इमो च बालको मह्यं	१.६.१३	इह त्वास्ते त्रिनयनः	२.२१६.७८
इदानीं च महाराज	३.११८.२३	इन्द्रेण सह संग्रामं	२.३१.२७	इमानि चैव वाक्यानि	२.८१.३१	इमो रथवरोदग्री युवयोः	२.४३.८६	इह धर्मार्थं कामानां	३.४१.५२
इहमाः परिधयस्तत्र	३.५४.१६	इन्द्रोपेन्द्रो महात्मानो	२.७२.६३	इमानि मणिरत्नानि	२.६४.११	इयं च ते सरिच्छ्रेष्ठा	१.५३.४०	इह मासान्त पक्षान्तौ च	२.८२.२८
इन्द्रजित्सत्यजिच्चैव	१.३.८३	इन्द्रोपेन्द्रो महात्मानो	२.६७.२४	इमान्प्राणो श्वरान्गृह्य	२.२.२८	इयं च देवदेवस्य	३.१३१.१२	इह ये चैव वत्स्यन्ति ताप	२.८२.२७

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

२०

इहस्थो पोषितो विद्वान्	२.७४.४१	ईश्वरोऽहं सदा राजा	३.१२७.३०	उग्रसेनस्ततो धीमान्	२.५५.७३	उत्क्रम्य हि स्थितिं देवीं	२.६६.४६	उत्तिष्ठ नरशार्दूल दीर्घं	२.३१.५८
इहापि तात त्रिदिवे मम यः	२.६६.५२	ईष ऊर्जस्तूजश्च मधु	१.७.१६	उग्रसेनस्तु कृष्णस्य	२.३२.१	उत्क्षिप्योत्क्षिप्य चाकाशं	२.८८.४६	उत्तिष्ठमानश्शुभे	२.६.१४
इहावयोगतं बाल्यमिह	२.४६.१८	ईषत्संक्षोभयामांस	३.११.४	उग्रसेनस्त्वयं शोच्यो	२.२३.७	उत्तं कस्तु वरं प्रादात्	१.११.५६	उत्तिष्ठ शतपत्राक्षपद्मनाभ	१.५०.४२
इहाहं चौद्यते भूपैः	२.५२.३५	उ		अग्रसेनस्य रूपं वै कृत्वा	२.२८.६१	उत्तमं जवमास्थाय	३.५५.६४	उत्तिष्ठोत्तिष्ठ बाहूनाम	२.११६.३४
ई		उक्त एवं ह्याचिन्त्या	३.६६.७३	उग्रसेनो नरपतिर्वसुदेव	२.८८.५	उत्तमागारिकाश्चैव सूक्ष्म	२.२६.१३	उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रं ते	२.११८.७
ईजेक्रतुशतैः पुण्यै	१.४१.१५४	उक्तश्च परया भक्त्या	३.६७.१७	उग्रायुधः कस्य सुतः	१.२०.३६	उत्तमाङ्गतास्तस्य मेघाः	२.१८.५०	उत्तुगांसो महोरस्को	३.१२६.७
ईतयः प्रशमं जग्मुर्निर्वैर-	२.१६.६७	उक्तश्चैव मया राजा	२.४३.८१	उग्रायुधधरा देवाः	३.३८.११	उत्तमा च पृथिव्यां वै	२.५८.२६	उत्थाप्य तं परिष्वज्य	२.१०८.३४
ईदृशः कामसंकाशो	२.१०८.१५	उक्तश्चैव महाबाहुवः	३.१४.५१	उग्रायुधस्य दायदः	१.२०.४६	उत्तमाभिजनाशूरो	३.५४.७३	उत्थायापश्यत तदा	२.१२६.७३
ईदृशं लोकविद्विष्टं	३.१०६.१५	उक्ता च तत्र ताभिश्च	२.११७.२३	उग्रायुधस्य राजेन्द्र	१.२०.५०	उत्तमौजाश्च शल्यश्च	२.३५.४६	उत्थिता घोररक्ताक्षा	३.५८.४४
ईदृशाद्वाचकाद् राजन्	३.१३२.२४	उक्तो मया वासुदेवो	२.७०.३	उग्रायुधो मदोत्सिक्तो	१.२०.३५	उत्तमौजास्तथा शाल्वः	२.४२.३५	उत्पतन्ती महाघोरां	३.६८.१३
ईदृशान्यपि पुष्पाणि	२.६७.६४	उक्तोऽयं हरिवंशस्ते	३.२.१	उचितं यदि ते राजन्	२.११६.१६२	उत्तरं च श्रुतार्थेन	२.३६.३५	उत्पत्तिश्च निरोधश्च	१.२.५४
ईदृशीयमवस्था नो	३.१११.५६	उक्त्यो नाम स धर्मात्मा	१.१५.३१	उच्चकर्ततुरन्योन्यवर्मणी	२.७३.६७	उत्तरं नगरद्वारमेते दुर्ग	२.३५.४४	उत्पत्य निपतन्त्यन्ये	३.५६.३
ईदृशेष्वथ भृत्येषु	३.११८.४३	उग्ररूपै विरूपैश्च	३.१६.३५	उच्चावचानि भूतानि	१.१.४१	उत्तरस्यां दिशि तथा	१.७.६	उत्पत्योत्पत्य गगनात्पुनः	२.४२.६५
ईदृशो न हि राजेन्द्र	१.११.३१	उग्रसेन च राजानं	२.१००.५	उच्चैःश्रवा हयः श्रीमान्	२.१०६.६६	उत्तरां दिशमत्यर्थं	२.६८.१६	उत्पत्स्यति पुमान्नीचः	२.२८.१०८
ईप्सितं गीतनृत्यं च	२.६७.६०	उग्रसेनं तु गोविन्दः	२.४७.१६	उच्छ्रितेनाग्रहस्तेन दक्षिणेन	१.४६.५७	उत्तरान्ते समुद्रस्य क्षीरो	१.४०.२४	उत्पत्स्यन्ति गुणैः	२.६६.१६
ईप्सितं तस्य विज्ञाय	२.११६.५३	उग्रसेनं नरपतिं काश्यं	२.५८.८०	उच्यते विविधैर्मा वैस्त	३.७.२१	उत्तरान्स कुरुप्राप्य	१.२६.७	उत्पन्नः कलशात्पूर्वं	१.२६.१३
ईरिणं तद्वनं सर्वं	२.२४.१२	उग्रसेनं नवत्याशु	३.६४.३०	उत्कर्णं पर्वता कारं	३.५०.२	उत्तरापथगामिन्यः सलिलै	२.१०६.२५	उत्पन्नदोष प्रभव	२.११६.७६
ईलिनीभूप यस्याऽसीत्कन्या	१.३२.६	उग्रसेनं महाबुद्धिमुद्धवं	३.७४.४	उत्कलस्योत्कला राज	१.१०.१६	उत्तान पादं जग्राह	१.२.७	उत्पन्नं कुमुद चैव	२.१०३.१७
ईशस्त्वं सर्वभूतानामी	३.८८.५४	उग्रसेनसुतः कंस	२.१०१.२६	उत्कानिर्घातिनादेन पपात	२.२३.३०	उत्तानशायो शिशुरूप	३.८२.२०	उत्पन्नमात्रश्चोवाच	१.४५.५१
ईश्वरत्वं च तस्येवं	१.४२.२	उग्रसेन सुतायाथ यान	२.४.२८	उत्कृत्तशिरसो विष्णोः पुरा	२.७०.३१	उत्तिष्ठ गच्छ दुर्भे	२.७.२४	उत्पतन्न सकृत्पादैश्शक्रमुत्रं	२.२४.४०

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

२१

उत्पन्नस्य पृथिव्यां	१.१८.४०	उदयास्तमयं चक्रे मेरु	१.४४.२२	उद्भूतो देवदैत्यौघः	३.५८.८७	उपभोगा मनुष्याणां विहिता	२.६६.५१	उपस्पृश्य ततो भूमौ	२.६४.१२
उत्पन्नाः पितृकन्यायां	१.३०.१	उदरात्प्रतिहर्तारं	३.१०.८	उद्यच्छन्नेव सहसा शिलायां	२.४.३६	उपयुज्य च गां सर्वे	१.२१.१४	उपांशुव्रतमास्थाय	१.१३.३
उत्पन्ना ये कृतयुगे	३.४.२१	उदवासगतोष्ठीमान्पिता	२.७०.२१	उद्यद्भास्करवर्णाभस्तयो	२.६८.४६	उपर्युपरि तत्रापि	२.१६.३१	उपाकर्मोष्ठ रुचक	३.३४.४०
उत्पोत तदा व्योम्नि	३.५८.३८	उदितो भगवान्सूर्य	३.६६.१५	उद्यन्तं द्विषतां हेतोर्द्वितीय	१.४३.१२	उपर्युपरि सर्वेषां सोम	२.६६.५	उपात्तयज्ञो देवेषु	३.२.३६
उत्पपात शिरस्तस्य भूमौ	२.८५.६३	उदीच्यां दिशिदुर्द्धर्षं	१.४.२२	उद्यम्य दिवमाणेयं	३.६२.११	उपलभ्येते चक्षुर्मया	३.१८.३०	उपाध्यायस्तु देवानां	१.३२.१०६
उत्पाद्य वृक्षं दैत्येशः	३.१२३.१८	उदीच्यैश्च महावीर्यं	२.३५.१०५	उद्यानवनसंपन्ना सुसीमा	१.५४.५८	उपलेपनं च धर्मज्ञे	२.८०.५१	उपायतः समारब्धा	१.५.५१
उत्पाद्यारोपयामास विष्णु	२.६४.६८	उद्गात च मयः श्रीमान्	३.५४.८	उद्यानशतसंबाधां	२.६८.५	उपवास महोरात्रं	२.७६.५	उपाय पश्य येन	१.६.६
उत्पाता ह्यत्र इश्यन्ते	२.११६.७०	उद्गात्रान्तो होमलिङ्ग	१.४१.३२	उद्यानानि गुहाः शैलाः	२.१२१.६४	उपवासावसानं हि रुक्मिण्या	२.६५.५	उपायश्चिन्त्यतां भीरु	२.११८.७७
उत्पादयामास ततः पुत्र	१.२५.४६	उद्गीयमानयशसं माधव	३.११५.५	उद्यानानि सभावृक्षा	२.८८.६६	उपवासावसानेऽथ भगवान्	२.६५.११	उपायः सृजतां हंसि	२.६२.५५
उत्पाद्य त्वं वसून	१.५३.४५	उद्दालकः क्षीर पाणि	२.१०६.६३	उद्वर्तं इव भूतानां	३.५८.७६	उपवासेषु कर्तव्यमेताद्वि	२.७८.२३	उपाया मम सख्यास्तु	२.११६.३८
उत्पेतुश्च कबन्धानि	३.५८.७३	उद्दिश्य दक्षिणां वीरो	२.६४.१५	उद्वर्तयिष्यन् त्रिदशेन्द्र	३.५१.६१	उपविष्टं तदा रामं पप्रच्छ	२.४६.५८	उपायोऽयं मया प्रोक्तो	३.८६.१५
उत्प्लुत्य स रथात्तस्माद्	३.१२८.२	उद्दिश्योद्दिश्य राजानं	२.४४.६४	उद्वर्तयिष्यन्त्यदुः	२.१२४.५४	उपविष्टं मुनिं ज्ञात्वा	२.६६.१	उपावृत्तासु वै गोषु	२.२५.६
उत्सवे युद्ध शौण्डानां	२.८५.८	उद्देशतो धर्मशीलः	३.४.६	उन्मत्तोऽयं विरुपोऽयमथवा	३.१०७.२४	उपविष्टश्च तान्द्रुष्टुं सह	२.६३.२०	उपासगर्वं लेभे तनयं	१.३५.११
उत्साहः सर्वदा कार्यो	३.७५.२६	उद्धवोऽथ महाबुद्धि	२.६४.४	उन्मथ्य सलिलादस्माद्	२.३३.१६	उपविष्टः सुरपतिरथोवाच	२.६६.४०	उपासंगस्तथा मंगुर्मदुर	१.३४.१२
उत्सृज्य ते गदाशक्ति	३.५७.५६	उद्धवोऽपि बली साक्षाद्	३.६५.१७	उन्मुखो नित्यं विव्रस्त	१.२१.२५	उपविष्टेषु सर्वेषु	२.६१.५	उपासंगस्तथा मंगुर्मदुर	१.३८.५२
उत्सृष्टावुरणी दृष्ट्वा	१.२६.३०	उद्धतानीह सर्वेषां यदूनां	२.२३.२२	उन्मूलयंस्तरुणान्	२.१२७.४१	उपसर्गं च योगं	३.१८.१	उपासतस्तं देवेश वर्षा	१.१६.२१
उदकं च गृहायाथ	२.७४.१६	उद्धृतैश्च महावर्तैः	१.५३.३२	उन्मूलानथ तान्कृत्वा	१.२.३८	उपस्थाय च गोविन्दं	२.११३.१६	उपासते च तत्रैनं	३.६६.३३
उदयन्तं निरीक्षन्तो	२.४१.४	उद्धृता पृथिवी देवी	३.१७.७	उपगम्य तथा शेषान	२.१००.११	उपस्थितश्च श्राद्धेऽद्य	१.१६.४६	उपास्यमानो यवनैरात्म	२.५३.५
उदयन्नेव भगवान्	३.३६.५७	उद्धृत्य गिरिपादेभ्यो	३.३०.१५	उपदानवी सुतांल्लेभे	१.३२.८	उपस्थितेऽतियशसि	१.३.५७	उपेक्षसे दानवेन्द्र	२.११६.१६५
उदयश्चैव राजेन्द्र	३.४६.५२	उद्धृत्य सोऽवनि	३.१६.२४	उपप्लुतेक्षणां दीनां नित्यं	२.२६.१०	उपस्पृश्य ततस्तृप्तः प्रददौ	२.६७.४३	उपेक्षित इव व्याधि	२.१०५.३७

उपेक्षित इव व्याधिः	२.२२.२३	उभौ मदकटोदग्री	३.१३.४	उलूकः केतवश्चैव वीर	२.३५.४५	उवाचाहूय तां भर्ता	१.२७.१६	उष्णमे तोय पूर्णस्य	३.६७.११
उपेन्द्र द्वारकां गच्छ	२.७५.३८	उमया पुण्यकविधि	२.७७.२	उलूकः कैतवेयश्च वीर	२.४२.३४	उवाचैतत्समुद्दिश्य	२.१२५.२४	उष्णभाश्चन्द्रमाश्चासी	२.८७.२६
उपेन्द्र न महेन्द्रोऽथ	२.७५.६	उमया यत्र सहितः	३.८४.१०	उल्का च बाणसैन्यस्य	२.१२४.३४	उवास पुष्काराम्याशे	२.७४.१०	उष्णीषिणो मुकुटिन	३.७२.२५
उपेन्द्र मुत्तीरामथाशु	२.८६.५५	उमया सार्द्धमीशानो	३.८८.१६	उल्कापात सहस्राणि	२.१०५.२७	उवाह सर्वगन्धाढ्यं स्वच्छं	२.८८.२३	उष्णे शीतानि तोयानि	३.४१.५६
उपेन्द्रमूर्ध्नि सा मौलि	२.४१.४५	उमा तासां प्रियार्थं	२.७७.२५	उवाच किं मया कार्यं	१.६.११	उशनास्तस्य जग्राह	१.२५.३२	ऊ	
उपेन्द्रस्त्वं महाबाहो	२.५०.१२	उमा तासां वरिष्ठा	१.१८.२२	उवाच चामेयपराक्रमोऽथ	२.८६.३१	उशीनरस्य पत्न्यस्तु	१.३१.२४	ऊचतुस्ती महाभागी	२.५०.१०
उपेन्द्रस्य महेन्द्राय भ्रातु	२.७०.१०	उमा त्वरुन्धती	२.७७.२७	उवाच च यतिं दृष्ट्वा	३.१०८.८	उशीनरस्य पुत्रास्तु	१.३१.२५	ऊचुर्मां सान्त्वयुक्तानि	२.११०.५८
उपेन्द्रोऽहं महेन्द्रेण लाल	२.७०.५	उमा देववरस्येष्ठा	२.६५.३३	उवाच चैनं दैवेश	२.७२.६२	उशीर बीजश्च गिरी	३.४६.७२	ऊचुश्च सहिताः	३.३०.६
उपे यदुक्ता देव्यासि	२.११८.२८	उमापते नमस्तुभ्यं	३.८७.२७	उवाच चोग्रसेनस्य	२.१.७	उषा ते पतते मूर्ध्ना	२.११६.४४	ऊचुश्चैनं नृवीरास्ते	२.१०१.५
उभयोरपि तत्रासीन	२.१२१.८३	उमाव्रतेषु सर्वेषु वृष दानं	२.८१.४०	उवाच दृष्ट्वा युध्यध्वं	३.६१.२७	उषा नाम सुता तस्य	२.१२१.८२	ऊचुस्ते पितरः कन्यां	१.१८.३५
उभयोर्विन्ध्ययोः पादे	२.३८.२०	उमास्तनद्वन्द्वसमपिता	३.८५.१३	उवाच नयसंपन्नं	२.५२.११	उषापि च महाभागा	२.१२८.३	ऊचुस्सर्वे च संप्रीता	२.१२.४५
उभयोः सेनयो राजन्	३.५४.१	उरगाधिपतिस्साक्षात्	२.११.५०	उवाच यवनेन्द्रस्य मंत्री	२.५३.१३	उषाया दर्शयच्चैनं	३.११६.५७	ऊरावेवोपवेश्येनां	२.६४.१७
उभयोस्सेनयो राजन्मांस	२.३६.६	उरश्छदैः सध्वजकिङ्किणी	३.५२.५०	उवाच राजा गोविन्द	२.५७.५६	उषाया धर्षितायां हि	२.११६.२	ऊरुः पुरुः शतद्युम्न	१.२.१८
उभाम्यां देवदैत्याभ्या	३.६४.१५	उरस्तस्योरसा हन्तु	२.२४.३५	उवाच राजा चेदीनां देवानां	२.४२.४२	उषाया वचनं श्रुत्वा	२.११८.४७	ऊरु रुद्रो महादेवो	३.७१.५२
उभे सेने महाराज्ञो	३.६७.१६	उरांस्युरसिजाश्चैव शिरो	२.४४.४१	उवाच वचनं देवी	२.१०७.१४	उषाया वचनं श्रुत्वा	२.११८.८०	ऊरु वक्षो भुजौ तुल्यौ	२.१०८.१६
उभौ गृहीत्वा हस्ताभ्यां	२.७५.२४	उरुक्रमं विश्वकर्माणमीशं	२.७२.२६	उवाच वचनं राजन्	३.१२६.६	उषायै दर्शमामास	२.११८.६४	ऊरुवेग प्रतिक्षिप्तैः शैल	१.४७.४३
उभौ तो परमाचार्यौ लोके	२.३६.१५	उरुबिन्दुः सुबिन्दुश्च	१.२३.२	उवाच वचनं विष्णुं	३.१११.३१	उषा सखीनां तद्वाक्यं	२.११७.२५	ऊर्णायुश्चित्रसेनश्च	२.६६.१४
उभौ तो बाहुबलिनावुभौ	३.२६.१७	उर्वश्यां जज्ञिरे यस्य	१.२५.४७	उवाच वचनं सम्यम्	३.६८.३	उषितश्च तथा सार्द्धं	१.२६.३६	ऊर्ध्वकेशयः कृष्णकेश्य	२.१०६.५८
उभौ तो सहसा राज	२.७३.८६	उर्वशी ताः सखी प्राह	१.२६.३४	उवाच वचनं हंस	२.१२७.२७	उषे त्वं शीघ्रमप्येवं	२.११७.१६	ऊर्ध्वगौ भीमवेगश्च	३.४७.११
उभौ तो हंसडिम्भको	३.१२७.१	उर्वशी विप्रचित्तिश्च	२.६६.१५	उवाच श्लक्ष्णया वाचा	२.५३.१७	उषे मा भैः किमेवं	२.११८.५	ऊर्ध्वं चाधश्च गच्छति	३.६२.३१
								ऊर्ध्वं ज्योतिरवेक्षश्च	३.१६.३०

ऊर्ध्वं प्रक्षेपणाथयि	२.४२.२२	ऋतवः कालयोगाश्चप्रमाणं	१.४०.३३	ऋषिभिर्ज्वलनप्रख्ये.	३.१३३.१०	एक एव महानग्नि	३.२३.६	एकभावशरीरज्ञ एकदेहो	२.१२.२६
ऊर्ध्वोऽहं स्थातुमिच्छामि	३.१६.२१	ऋतवः कालयोगाश्चप्रमाणं	१.४०.३४	ऋषिभिर्देवगंधर्वै	२.१२७.६०	एक एवाग्निमाधाय	३.२३.४	एकं वंशधरं त्वेका	१.१५.५
ऊर्मिमन्तं समुद्रं च अपार	२.३६.६८	ऋतुपर्णसुतस्त्वासी	१.१५.२०	ऋषिभिर्द्रवतैश्चैच	२.१२०.५	एक कार्यान्तरगतवेकदेहो	२.७.४	एकं वंशधरं त्वेका तथे	१.१५.६
ऊर्मिवन्तः स्वरालाघ्रा	२.८०.५	ऋतुपर्यायशिशिलैर्वृन्त	२.१६.२५	ऋषिभिस्तौ नियुक्तौ च	१.५.३८	एकः कैलाससंकाश एको	२.२७.६०	एममेव सदा दुःखं	३.१३०.१४
ऊर्वंस्तु तपसाविष्टो	१.४५.४८	ऋते तु पृथिवीं लोके	२.११०.४६	ऋषि त्वीज्जरसं	३.२०.१५	चक्रं चक्रस्तु तत्रैव	३.५१.३०	एकलव्यस्य पुत्रं च	२.५६.५
ऊर्वस्योरुं विनिर्मिद्य	१.४५.५०	ऋते देवमनुष्याणां	२.१२३.२६	ऋषियो वध्यमानास्तुं	२.८६.३१	एक चक्रस्तु दितिज	३.५३.१७	एकलव्यो निषादेशः	३.६८.७
ऊषतुर्द्वारमक्रम्य षट्	२.६०.३०	ऋते पाण्डुसुतान	२.८३.४६	ऋषिर्ततोऽत्रिष्वशे तु	१.३१.१२	एक चक्रैरथे तिष्ठन्तपश्य	३.५८.१८	एकलव्यो यदुवृषान्	३.६४.३२
ऊषिभिर्ज्वलमप्रख्यैस्तपसा	३.२८.६२	ऋते वामीदूशं वाक्यं	३.१०८.१२	ऋषिवै कालंवृक्षी	२.१०६.८६	एक चक्रो गदापाणि	३.५८.२३	एकलिङ्गा पृथग्धर्मा	३.२१.१२
ऋ		ऋत्विक्पुरोहिताचार्या	३.२.६	ऋषिष्वथ प्रयातेषु	२.८६.४१	एक चक्रो महाबाहुस्ता	१.३.८४	एकवक्त्रो महावक्त्रो	३.७२.६
ऋक्सामयजुषां घोषो	१.४१.१५२	ऋत्विजश्चाब्रवीत्क्रुद्धः	३.५.१८	ऋषिष्वप्यथ तिष्ठत्सु	३.७६.३२	एकतः समधीयन्ति	३.३२.२	एकस्त्वमनपत्यश्च गोत्रं	१.४५.२७
ऋक्सामयजुषां सत्यं	२.११०.६७	ऋद्यानुरूपयां युक्तं	२.८३.८	ऋषीणां च ततो ज्ञानं	२.१२६.१०३	एकतः सूर्यसंकाश	३.३५.१७	एकस्त्वमपि देवानां	२.१६.२१
ऋक्षं संजनयामास	१.३२.८५	ऋषभाक्षा सुरगणाश्च	३.५४.३७	ऋषीणां च हितार्थाय	३.६६.४६	एकत्र ते मुनिगणा	३.८६.१३	एकस्त्वमसि संभूतः	३.२६.४५
ऋक्षवन्तं गिरिवरं विन्ध्यं	१.३८.३२	ऋषयश्च महात्मानो	२.१२७.१४५	ऋषीणां नारदः श्रेष्ठो	२.११६.१६७	एकत्वं च पृथक्त्वं	३.२०.२३	एकस्मिन्यत्र निधनं	१.६.३
ऋक्षवन्तं समभितस्तीरे	२.३८.२२	ऋषतश्च महाभागा	३.३१.८	ऋषीणामिव वो वृत्तं	२.२२.१८	एवनिर्माणनिमुक्तावेक	२.७.३	एकस्मै ज्ञानवृद्धाय	२.७६.४६
ऋक्षेण निहतो दृष्टः	१.३८.३४	ऋषयोऽत्र मया प्रोक्ता	१.७.१८	ऋषेर्नारायणस्यायं	३.१२.१५	एकनिश्चयकार्याश्च	३.५४.२७	एकस्यापि नृपस्याग्रे	२.५१.६
ऋद्धमयाश्चतुरो वेदान्पादै	३.२८.६१	ऋषयो देवता यज्ञा	२.११४.२०	ऋष्टि शक्तिगदास्तीक्ष्णा	३.५४.३३	एकपादा द्विपादाश्च	२.१०६.७२	एकस्यार्थाय यो हन्या	१.६.१
ऋचेयुः प्रथमस्तेषां	१.३१.६	ऋषयो न्यस्तदण्डाश्च	३.३२.४२	ऋष्यन्तरविवाह्याश्च	१.२७.५३	एकप्रमाणो लोकानां देव	२.७.५	एकहस्ता एक पादा	२.१०६.५६
ऋचेयोस्तु महाराज रौद्रा	१.३१.६१	ऋषयो वा न मां शापैः	१.४१.५०	ऋष्यन्तरविवाह्याश्च	१.३३.५६	एकप्रहाराभिहतान	३.५६.५७	एकाक्ष एकापान्मुण्डो	३.४६.५
ऋचो यजूंषि सामानि	१.१.३६	ऋषिपत्नीगणानां च	२.१२०.२३	एक एव जगन्नाथ	३.६६.६	एकभक्तेन धर्मज्ञे	२.७६.५५	एकाक्षश्चन्द्रहा राहुः	१.४१.८६
ऋचो यजूंषि सामानि	२.१०६.७	ऋषिभिः पूजितस्तैस्तु	१.५०.१	एक एव ज्वरो लोके	२.१२३.१८	एजभर्तुं व्रतमिदं मम	२.२८.६५	एका चन्द्रवती नाम्ना	२.६४.३४
ऋजुस्वभावां भक्तां च	२.६६.५१								

एका तत्र निराहारा	१.१८.१८	एकैकस्य समा रूपे	२.६२.६२	एतत्तच्छोणितपुरं कृष्ण	२.१२२.४२	एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं	१.३०.६	एतद्वो जन्मनः	३.८६.४
एकादशेऽथ पर्यायि	१.७.६	एको विद्यासहायस्त्वं	३.७२.६६	एतत्तु सर्वमाख्यातं निकुम्भ	२.८५.४३	एतदिच्छाम्यहं श्रोतं	३.१.२	एतद्वतकरो ह्येव देवे	२.७६.३७
एकानंशां नमस्यामि	२.१०७.१२	एको वेदश्चतुर्धा तु कृत	१.४१.१६२	एतत्ते कथयिष्यामि	३.२१.३	एतदुद्देशमात्रेण प्रादुर्भावं	१.४१.१७१	एतन्नीलाम्बुदश्यामं	२.१०.२४
एकानंशेति यामाहुः	२.१०१.१४	एको रातिश्चैव भूतं भविष्य	२.७२.४१	एतत्ते कथयिष्यामि	३.३३.५	एतदुन्मथ्य पातिष्ये	२.१०४.३८	एतन्मम मतं कृष्ण	२.३८.६५
एकान्तं शत्रुरस्माकं	३.७४.१७	एतच्चमे समाख्यातं	२.१२७.६३	एतत्ते कृष्ण विज्ञाप्य	२.३२.३०	एतदेव परं वस्तु	३.८६.२	एतन्मे कृष्ण कात्स्न्येन	२.१६.६१
एकार्णवजलं सर्वं	३.१३.३	एतच्च सर्वं कर्तव्यमन्यच्च	२.६१.५३	एतत्ते सर्वमाख्यातं	२.६१.५८	एतदेव प्रशंसन्ति	३.८६.६	एतन्मे संशयत्वेन	३.३३.४
एकार्णवजले ह्यासीद्योगी	३.६.१६	एतच्छ्रुतं च दृष्टं च	२.११४.२५	एतत्ते सर्वमाख्यातं	२.१२८.२१	एतदेव प्रशंसन्ति	३.८६.७	एतमिव विजानीत नात्र	३.८६.८
एकार्णविधिः कोऽयं	३.६.२०	एतच्छ्रुत्वां कुरुश्रेष्ठो	२.११४.२६	एतत्पवित्रं परममेतद्	३.१३२.६७	एतदेव भगाधानं धर्मिष्ठे	२.६५.२५	एतयोश्च हि को युद्धं	२.११६.८५
एकार्णितमनोदृष्ट्युचोनेर्ष्या	२.८८.२०	एतच्छ्रुत्वा च वचनं	३.३०.२४	एतत्पूर्वमनुध्याय	३.१६.१८	एतदेव सदा विप्रा	३.८६.३	एतस्माच्च जगत्सर्वं	२.१२८.३२
एकीभूता यदा सर्वे	३.२३.४५	एतच्छ्रुत्वा तु गरुडो	२.१२२.१७	एतत्प्रकरणं वीरा	२.६३.३१	एतदेवोत्तमं स्त्रीणां	२.७६.३६	एतस्मिन्नन्तरे राजन्	३.१२७.१५
एकैकमश्वं दशभि	२.७५.७	एतच्छ्रुत्वा तु भगवान्मणि	१.३८.१६	एतत्सर्वमशेषेण	३.११०.११	एतदुत्त्वा सर्वकामानाप्नोति	२.७६.३२	एतस्मात्कारणात्तज्ज्ञैः	३.१२.१६
एकेनाक्षणा ह्लादयंत	३.१११.१२	एतच्छ्रुत्वा तु वचनं नोत्तरं	२.३२.५४	एतदत्तद्भुतं हृष्ट्वा	३.४०.१५	एतद्दैवैरसंभाव्यं दिव्येन	२.१८.५४	एतस्मिन्नन्तरे देवा	३.३०.५
एकेनामलपत्रेण कण्ठसूत्रा	२.११.१०	एतच्छ्रुत्वा तु वचनं	३.७१.८	एतदन्तरमासाद्य प्रद्युम्न	२.६०.२५	एतद्वितमिति प्रोक्तं	३.१७.१८	एतस्मिन्नन्तरे क्रुद्धः	१.४७.३७
एकैकं तत्र चोद्यानं	२.१२१.३८	एतच्छ्रुत्वा वितुर्वकियं	२.३६.४	एतदर्थं च वासोऽयं व्रजे	२.११.५८	एतदबाहुद्वयं यत्ते मृधे	१.४१.१०६	एतस्मिन्नन्तरे क्रुद्ध	३.६८.१
एकैकं नृपतेर्भागं	२.५५.१५	एतच्छ्रुत्वा ब्रवीदेवी	१.३६.१८	एतदर्थं समायाता	३.८६.१६	एतद्यदनु रूपं वो ममाभि	२.५६.८	एतस्मिन्नन्तरे गोभि	२.६.१२
एकैकं पंचभिः क्रुद्ध	२.१०५.४	एतच्छ्रुत्वा ब्रह्मदत्तस्तानु	२.८३.१३	एतदाख्याहि निखिलं	३.७.२	एतद्युष्मत्प्रवृत्तेन दैवेन	१.५२.५८	एतस्मिन्नन्तरे चैव	२.१२६.३०
एकैकं सप्तधा चक्रे	१.३.१३५	एतच्छ्रुत्वा वचस्तस्य	२.३२.३१	एतदाश्चर्यं भूतं हि	२.७.३७	एतद्वः कथितं सर्वं कर्णं	१.३१.५६	एतस्मिन्नन्तरे तत्र देवानां	२.३५.८२
एकैकस्तनयो राजत्नेकैका	२.८३.३६	एतच्छ्रुत्वा सुराः सर्वे	१.४१.६४	एतनाश्चर्यं भूतस्य विष्णो	१.४२.८	एतद्वचनमाकर्ण्य	३.१००.३५	एतस्मिन्नन्तरे तात	१.२०.७२
एकैकस्तु द्विधाच्छिन्नो	२.६०.६०	एतच्छ्रुत्वा सुराः सर्वे	३.४१.२६	एतदाश्चर्यमभवत्संग्रामे	१.४८.८४	एतद्वचो निशम्याथ	३.१४.१४	एतस्मिन्नन्तरे तात	२.१२७.२३
एकैकस्य प्रदातव्यं व्रतकं	२.७६.३६	एतत्कृतयुगे वृत्तं	३.८.५	एतदाश्चर्यमाख्यातं कथ	१.४०.६६	एतद्वि परमं ब्रह्म	३.१६.१५	एतस्मिन्नन्तरे तेषामन्यो	३.५३.५

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

२५

एतस्मिन्नन्तरे भूत्वा	३.५५.१४८	एतस्मिन्नन्तेव काले तु	१.३६.२४	एतान्पञ्च सुतान् राजा	२.३८.३	एतासु ते सुता पञ्च	२.३७.६८	एते दिव्या वरास्तात	१.४१.५६
एतस्मिन्नन्तरे दीना	२.३१.३८	एतस्मिन्नेव काले तु	२.४७.४३	एतान्परिष्वज्य तदा	२.१२७.१३६	एतास्तुयोगेश्वरयोग	१.४१.१७४	एते दिव्या वरास्तात	३.४१.१६
एतस्मिन्नन्तरेः दूता संप्राप्ताः	२.४६.६७	एतस्मिन्नेव काले तु	२.५०.८६	एतान्मच्छीतनिदग्धान्	१.४६.१२	एतेडङ्गवर्गजाः सर्वे	१.३१.६०	एते देवगणानां च	३.१२.७
एतस्मिन्नन्तरे दृष्ट्वा	३.१२६.२८	एतस्मिन्नेव काले तु	२.५३.६	एतान्यंबुप्रहृष्टानि	२.१०.२७	एते खलु मृगाः सार्द्धं	३.१०.६५	एते वैद्या दुरात्मानो	२.७४.४४
एतस्मिन्नन्तरे देवो	२.६६.१०	एतस्मिन्नेव काले तु	२.५५.८६	एतान्यस्त्राणि सर्वाणि	३.४४.१६	एते चक्रधराश्चैव	२.१२७.१२६	एते वैद्या विनिहतास्त्वया	१.५४.७८
एतस्मिन्नन्तरे प्राप्ता	२.६.७	एतस्मिन्नेव काले तु	२.५६.१	एतान्युक्तानि कौरव्य	१.७.४२	एते ग्रहाश्च सततं	२.१०६.७४	एतेन च बलेनाजौ	३.६३.१०
एतस्मिन्नन्तरे प्राप्ता	२.४७.१	एतस्मिन्नेव काले तु	२.८३.१	एतान्स यादवान्सर्वाणां	२.२२.११	एते चान्ये च ऋषयो	२.१०६.६४	एतेन बहवो मल्ला	२.३०.२५
एतस्मिन्नन्तरे प्राप्ता	२.८३.२५	एतस्मिन्नेव काले तु	३.६१.१	एताः पञ्च वरिष्ठा	३.१४.३५	एते चान्ये च बहवस्तत्र	३.४१.७४	एतेन मुमुक्षुः	२.१०१.६७
एतस्मिन्नन्तरे ब्रह्मा सर्वं	१.४५.५३	एतस्य कर्मणः पाक	३.८१.६	एतावच्छतशोऽप्येवं	२.३२.५१	एते चान्ये च बहवो	१.३८.६	एते नागा महात्मानस्त	२.६६.२८
एतस्मिन्नन्तरे भीता	२.१२.१५	एतानचित्तयित्वा तु	२.१०५.२८	एतावत्क्रियतां वाक्यं	३.४०.१३	एते चान्ये च बहवो	१.४१.१७०	एतेनाहं बलेनाजौ	३.६२.१५
एतस्मिन्नन्तरे भूत्वा	३.५५.१४८	एताननुविधीयन्ते	२.६६.१०	एतावत्खुलपयिष्यंते	२.६६.५२	एते चान्ये च बहवो	३.४२.१५	एतेनैव प्रयत्नेन वृद्धा	२.२६.२१
एतस्मिन्नन्तरे मेघा	१.४२.१३	एतानपि हनिष्यामि	२.२८.११७	एतावदुक्त्वा ते सर्वे	१.२३.३६	एते चान्ये च बहवो	३.४६.१६	एते पुत्रा महात्मानः	१.१८.४८
एतस्मिन्नन्तरे राजन्	३.१२२.१६	एतानि कृत्वा कर्माणि	१.४१.१४१	एतावदुक्त्वा भगवान्	२.१२६.१६४	एते चान्ये च बहवो	३.६६.३७	एते प्रोक्ता भूशं युद्धे	३.११६.१०
एतस्मिन्नन्तरे राजन्	३.१२३.१	एतानि चान्यानि च	२.८६.१५	एतावदुक्त्वा राजेन्द्र	१.५१.३३	एते चान्ये च बहवो	३.५३.३२	एतेभ्योऽपि पिशाचोभ्यो	३.८१.१६
एतस्मिन्नन्तरे वायुर्वन	२.२८.६२	एतानि नूनं समरे पाथिवै	२.४१.५४	एतावदुक्त्वा शुक्रस्तु	३.४६.३१	एते चैव प्रवर्षन्ति	२.१२५.३८	एते महर्षयस्तात वायु	१.७.१३
एतस्मिन्नन्तरे वायुर्वनो	२.११०.१७	एतानि विजिगीषूणां शशि	२.४१.५१	एतावनिह वासश्च कथितो	२.५७.२८	एते तपसि तिष्ठन्तो	१.४५.३६	एतेऽमृतं संप्राप्ता	१.३७.१५
एतस्मिन्नन्तरे शूर	३.६४.२६	एतानि शशिकल्पानि	२.३५.४	एतावन्तमसौ कालमकारण	३.६.२१	एते ते क्षत्रियाः सर्वे	२.४२.७७	एते ययातिपुत्राणां	१.३३.५८
एतस्मिन्नेव काले तु	१.५.३३	एतानुत्पाद्य धर्मात्मा	१.१८.५४	एतावैव रणे शक्तो	३.१२५.२४	एते त्वङ्गिरसः पुत्रा	१.२६.८३	एते युगसहस्रान्ते	१.३.६६
एतस्मिन्नेव काले तु	१.२६.३०	एतानुत्पाद्य पुत्रांस्त्वं	१.१८.४३	एताश्चैताः प्रजा	३.२२.१८	एते त्वङ्गिरसः पुत्रा	१.३२.४०		
एतस्मिन्नेव काले तु	१.२६.३७	एतान्तिहनुमिच्छामि	३.५६.४						

एतेषु वनमुख्येषु	१ २६.८	एते स्युः पितरस्तात	१.१८.११	एवं कथयतस्तस्य वासुदेव	२.८.३०	एवं चिन्तयमानस्य	२.१२१.५५	एवं द्वारवती चैव पुरी	२.५६.३४
एते रुद्रास्तथादित्या	२.१२७.१२३	एते बभूवुश्च महर्षि	३.५३.३६	एवं कथयतोस्तत्र	२.११६.५७	एवं जगति वर्त्तन्ते	१.५१.३०	एवं वर्मो च ते बुद्धि	१.१६.६
एते लोकहितार्थाय	१.४१.१६३	एते हि यतयः शुद्धा	३.१०८.११	एवं कथयमानं तं शाल्व	२.५४.१	एवं तद्दानवं सैन्यं सर्वं	१.४३.३०	एवं नारायणो नोक्तो नारदो	२.६८.११
एते वत्सविशेषाश्च	१.६.५४	एतं परिवृतो मातृयुयुत्सु	२.१०५.१६	एवं कथयमानानां नृपाणां	२.४६.३६	एवं तां स समादिश्य	२.३.३४	एवं निधिपतिश्श्रीमान्देव	२.५५.१७
एते वृन्दावनगता दामोदर	२.१८.३	एतैर्विकारैः संवृत्तैर्निरुद्धै	२.१६.३१	एवं कालं प्रतीक्षाणां	२.६४.२५	एवं तावेकनिर्माणी मथुरायां	२.४५.१६	एवं नियुज्य तन्यान्त	३.३७.३१
एते वै दानवा श्रेष्ठा	१.३.१०३	एतैश्च कारणं श्रीमान्	२.१२८.२४	एवं कुम्भाण्ड वाक्यं	२.१२४.१४	एवं ते कुर्वतः कृष्ण	२.२६.२५	एवं पुत्रसहस्राणि	३.३६.५८
एते वै योगविभ्रष्टा	१.१८.	एतैर्विकारैः संवृत्तैर्निरुद्धैश्च	३.१६.१२	एवं कृते तु कृष्णेन	२.१२६.२६	एवं ते विस्मितास्सर्वे	२.१२.४६	एवं पुराणपुरुषो विष्णुः	२.७१.२०
एते वै सैनिका ब्रूयुः	३.६७.२४	एतैर्विकारैः संवृत्तैर्निरुद्धैश्च	३.१६.४१	एवं कृते बाहुवीर्यं	२.११.६०	एवं तेषां महाराज कुर्वतां	३.६४.१६	एवं प्रभावो राजासी	१.२६.४८
एतेषां कातितानां तु	१.७.३८	एतैश्च रथयुक्ता	२.८४.१४	एवं कृते विद्यास्यामि	२.८८.४३	एवं तौ तत्र संग्रामे	२.३६.२३	एवं प्रवर्तिते गर्भे	१.४०.५५
एतेषां कल्य ऊत्थाय	१.७.८५	एतौ जये वा युद्धे वा	२.१०१.४६	एवं कृत्वा ततो विप्रं	२.८१.३५	एवं तौ वाल्यमुत्तीर्णौ	२.८.१	एवं प्रावृ गुणान्सर्वान्	२.१०.४२
एतेषां छेदनं त्वद्य	२.१२६.१२०	एतौ पक्षौ भविष्यन्ति	१.५३.६४	एवं कृत्वा तथा रूपं	३.२६.५३	एवं तौ योधमुख्यौ तु	२.३६.२५	एवं बहुविधं कृष्णं	२.२५.३६
एतेषां मानसी कन्या	१.१८.१३	एतौ युद्ध विदौ रंगे	२.२२.८८	एवं कृत्वा तु संकल्पं	२.५५.११७	एवं त्रीण्यस्य शंकूनि	१.१३.१६	एवं बहुविधं वाक्यं	१.५५.६
एतेषां मानसी कन्या	१.१८.४६	एतौ रंगगती युद्धे	२.२८.२३	एवं कृत्वा पुरानन्दमुग्रसेनो	२.५५.२६	एवं त्वं बहुरूपेण	२.१२३.२८	एवं बहुविधा घोराः	३.८६.१०
एतेषां यदपत्यं तु	१.३.६०	एतौ हि वसुदेवस्य	३.१०१.४५	एवं गतेऽ निरुद्धस्य	२.१२८.२	एवं दत्तास्मि मनवे	१.५२.५५	एवं बहुविधैर्भूतैः	३.८७.१
एतेषामात्मभूतानां	१.५०.४०	एनं कदम्बमारुह्य	२.११.५६	एवं गार्गस्य तनयः श्रीमान्	२.५२.२६	एवं दिवा च रात्रौ	३.३२.३१	एवं ब्रूवति गोविन्दे	२.३२.१६
एतेषामितरो देशो	३.१२.८	एनं बाणेन सच्छिन्धि	३.१०६.४	एवं ग्रहाय तं वीर मग	२.६०.५८	एवं दिव्यैश्च भोगैश्च	२.५८.७८	एवं ब्रूवति तद्वाक्यं	१.४८.२८
एते सप्त महात्मानो	१.७.४६	एनं संपरिशृङ्खलीष्व पात	२.६१.३७	एवं चतुर्विधैस्सैन्यैः	२.४२.६	एवं दुःखं न ते देव	२.६८.२६	एवं ब्रूवन्तस्तोन्योन्यं	२.१२२.६४
एते सर्वे दनोः पुत्रा	१.३.८६	एने खड्ग विदां श्रेष्ठा	३.१२५.१६	एवं च देव दैत्यानां	२.१०२.३०	एवं दूतस्य वचनं यथोक्तं	२.५०.२४	एवं भगवता पद्मे	३.१२.१७
एते सर्वे महाभागा	१.३२.१०२	एभिर्विकारैः संयुक्ता	३.२६.१७	एवं च ब्रूवतां तेषां	२.१२१.७१	एवं दूष्ट्वा महोत्पातान्	२.१०७.४	एवं भवतु भद्रं तेन	२.१२६.१५६
एतेऽस्त्रविदुषः सर्वे	१.४७.८	एलापत्रश्च कालीयो	३.४६.३६	एवं चिन्तयतां तेषां	२.१२१.६६	एवं द्वादशसाहस्र	३.८.१६	एवं भवतु युक्तेषु	२.२२.२०
		एलापत्रस्तथा शंखः	१.३.११३						

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

एवं भविष्य तीत्याह	२.१२६.१५६	एवं विघ्नप्रभावं त्वं कृष्णं	२.७१.४६	एवं संवत्सरं कृत्वा	२.७६.५६	एवं स विलतन्नेव	२.१.३२	एवमस्त्विति सप्रोक्तो	३.६१.३३
एवं भविष्यन्ति	३.४.३६	एवं विधेयुः प्रिगसगमेषु	२.६५.१२	एवं स कृष्णो गोपीनां	२.२०.३५	एवं स विश्वावसुनानुनीतः	३.६.१	एवमस्त्विति सोऽप्यग्नि	१.४५.६४
एवं भानुमतीं वीर	२.६०.७५	एवं विभज्य राज्यानि	३.३६.२५	एवं संचित्यं मनसा	२.१०४.१३	एवं साभिहिता सख्या	२.११८.१०	एवमाज्ञापयानं तं कंसं	२.३०.७०
एवं भूयोऽपरान्धोरा	३.४५.६	एवं विमथिता सर्वा नरा	२.६३.१०६	एवं संचिन्तयामासुनः	२.५०.४२	एवं सोमस्य वै जन्म	१.२५.५०	एवमाज्ञापयामास सर्वान्	२.१८.७
एवं मयि निरालम्बे	१.५३.३४	एवं विलुलिते लोके	३.४.१	एवं स चिन्तयित्वा तु	२.१८.३०	एवं स्तुत्वा तदा देवं	२.१२६.७६	एवमाज्ञापितं पूर्वं ब्रह्मणा	१.१७.४१
एवं महात्मना तेन	३.४७.३८	एवं विविधरूपाणि	२.११६.६८	एवं संजल्पतामेव ताभ्यां	२.३०.३१	एवं स्तुत्वा महादेवं	२.५१.६१	एवमाज्ञाप्य राजा स	२.२८.१६
एवं तिष्ठ्याभिषत्तेन	१.३८.४४	एवं विवृद्धिमगमन्	३.१४.६५	एवं सतुमुलं युद्धं	३.५८.१०१	एवं हि ब्रुवतां तेषां	३.४३.४	एवमाज्ञां सुरेशस्य श्रुत्वा	२.५०.५७
एवं यज्ञवराहेण भूत्वा	१.४१.३८	एवं वृकांश्च तान्दृष्ट्वा	२.६.१	एवं स तु विनिश्चित्य	१.२६.५६	एवमक्रूरवचनैश्चोदितो	२.१२१.५८	एवमात्मानमात्मा मे	१.४५.४७
एवं यत्तातेः शापेन जरा	१.३२.१२१	एवं वृकैश्चदीर्णैस्तु व्याघ्र	२.८.३८	एवं स निश्चयं कृत्वा	२.८५.२०	एवमक्षत चारित्रैः	२.२२.१७	एवमादि क्रिया कार्या	३.७४.२७
एवं यद्यपराद्धोऽहं कारणं	१.५३.३३	एवं वृकैश्चदीर्णैस्तु व्याघ्र	२.८.३८	एवं सन्दिश्य सर्वास्तान	२.५२.४६	एवमद्भुतवीर्योऽजा	३.५६.१०३	एवमादि जगन्नाथः	३.७७.१६
एवं राजा विचिन्त्याथ	२.२८.५	एवं वै सहिता राजन्	३.१२७.१०	एवं सन्धिषिता साध्वी	२.११८.११	एवमन्योन्यसंजल्पं श्रुत्वा	२.५५.६४	एवमादिमहागर्वस्तस्य	३.६१.६
एवं राज्यं च ते स्फीतं	१.२०.५१	एवं व्यतीता रजनी	२.६६.६८	एवं संधानतः कृत्वा कृष्णे	२.४६.२४	एवमस्त्विति कृष्णेन	२.७५.४०	एवमादि विलप्यन्तं	३.१३०.१५
एवं लालप्यमानं तु	२.५२.१८	एवं अतानि देविभिः	२.८१.३६	एवं स मणिमाहृत्य	१.३८.४३	एवमस्त्विति तं देवो	२.७६.१८	एवमादिश्य तान् ब्रह्मा	१.५३.७७
एवं वत्सान्पालयन्तो	२.८.७	एवं शपति विप्रणो	२.११२.२३	एवं संपूजयामास त्वष्टा	१.६.५०	एवमस्त्विति तं शक्र	२.५७.४६	एवमादिश्य देवेशो	२.१०४.६२
एवं वरान्वहून्प्राप्य	२.१२७.१	एवं शप्ता सुतान्सर्वान्	१.३०.३२	एवं संपूज्य ते तत्र	१.२६.५१	एवमस्त्विति तानुचुः	२.८३.५१	एवमादीनि वै विष्णो	२.४६.३७
एवं वर्षं जगन्नाथ	३.८८.३८	एवं शान्तमनाः कृष्ण	२.१६.३६	एवं संपूज्य राजानं	२.५५.५३	एवमस्त्विति तान्सर्वान्	१.४६.२६	एवमादीनि सूक्तानि	१.२६.३६
एवं वाग्विषमत्सृज्य	२.२८.२६	एवं शुश्रूषवो दाने	३.४.४४	एवं सम्यक् प्रवृत्तेषु	१.५१.१६	एवमस्त्विति तां गृह्य	१.४५.७३	एवमाभाषते क्रोधा	३.१०.४०
एवं वादिनामात्मेष्टं	२.६६.४६	एवं शूद्रा विसर्पन्तो	३.२१.१७	एवं सं यतवान्कंसो	२.२.८	एवमस्त्विति देवेशः	३.८३.२६	एवमाभाष्य तान्सर्वानि	२.५४.७
एवं वाराणसी शप्ता	१.२६.६६	एवं शौनक संक्षेपाद	२.१२८.४१	एवं सर्वाणि सैन्यानि	२.१०५.६०	एवमस्त्विति दैत्येशो	३.७१.२३	एवमाभाष्य राजानं	२.५४.७
एवं विज्ञाप्य देवेशं	२.५५.११	एवं श्रुत्वा प्रयत्नं वै	२.२.६	एवं सर्वेन्द्रियारम्भान	३.२४.१५	एवमस्त्विति संहृष्टः	१.४६.१	एवमातं कलत्रस्य	२.३१.२०

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

२८

एवमालोकयानः स द्वारकाः	२.६६.१	एवमुक्ता दैत्यसुता	२.११७.२०	एवमुक्तो विनिश्चित्य	१.२६.२५	एवमुक्त्वा पतिं भोजं	२.३१.५२	एवमेकाण्वीभूते	३.१०.१
एवमावामनुप्राप्ता मुनि	३.३६.४३	एवमुक्तानिरुद्धेन उषा	२.११६.२०३	एवमुक्तोऽस्मि कृष्णेन	२.११४.२४	एवमुक्त्वा पुनस्तांस्तु	२.११६.८४	एवमेकाण्वे लोके	३.७.६
एवमिक्ष्वाकुवंशात्	२.३८.३५	एवमुक्ता निवृत्तास्ते	२.८५.७	एवमुक्तो स्थितौ वीरौ	२.७३.८१	एवमुक्त्वा प्रदुद्रावतदा	१.२०.१३६	एवमेकैकशः सर्वे	३.६४.३१
एवमीष्यविशं प्राप्तां देवीं	२.६७.२७	एवमुक्ता महाभागा भर्त्रा	१.२७.३०	एवमुक्तौ स्थितौ वीरौ	२.७३.८३	एवमुक्त्वा महत्सैन्यं	३.५६.६१	एवमेतत्पयो दुग्धं	२.१५.१८
एवमुक्तः स दूतस्तु ययौ	१.५४.४५	एवमुक्तास्ततः सर्वे	३.६८.१७	एवमुक्त्वा गता हंसा	२.६६.१८	एवमुक्त्वा महादेव	२.७४.४६	एवमेतत्पुराणेषु वेदान्ते	३.१०.६७
एवमुक्तः स शुक्रेण	३.७१.१५	एवमुक्तास्तु ताः साध्व्यो	२.८१.१८	एवमुक्त्वा गिरेः शृङ्ग	२.८७.१५	एवमुक्त्वा महादेवं	२.१२६.१४१	एवमेतत्पुरावृत्तं मम	१.२४.३३
एवमुक्तस्ततः कृष्णः	२.५८.३५	एवमुक्तास्तु ते गोपा	२.२०.१४	एवमुक्त्वा गिरेःशृङ्गां	२.४२.७८	एवमुक्त्वा महानादं	२.६७.१२	एवमेतन्मया पूर्वं हितायं	१.५३.४६
एवमुक्तस्ततः प्राह	२.५८.३१	एवमुक्ते तदा देव्या	२.११७.१७	एवमुक्त्वा ततः कृष्ण	२.३५.८	एवमुक्त्वा महाबाहुर्वैन	२.४७.४०	एवमेत्पुरा गीतं मार्कण्डेयेन	१.२४.३७
एवमुक्तस्ततो वाणः	२.११६.३५	एवमुक्ते तु नृपतिर्दरदो	२.४३.५५	एवमुक्त्वा ततः कृष्ण	२.४१.५७	एवमुक्त्वा महाराज	१.२०.११३	एवमेतानि कर्माणि	२.१०२.४०
एवमुक्तस्तदा तेन	३.७१.३४	एवमुक्ते तु यदवो गृह	२.५८.११	एवमुक्त्वा तु तां भार्या	१.२७.२२	एवमुक्त्वा यदुं तात	१.३०.२६	एवमेतासु नारीषु	२.१२०.२४
एवमुक्तस्तदा देवविष्णु	३.६६.५३	एवमुक्ते तु वचने	२.११६.२०	एवमुक्त्वा तु ते सर्वे	१.३.५६	एवमुक्त्वा वचो घोरं	२.४.४५	एवमेते त्रयो लोके	३.१७.१६
एवमुक्तस्तु कृष्णेन	२.१२३.३८	एवमुक्ते तु वचने	२.१२३.१६	एवमुक्त्वा तु तौ वीरौ	२.३६.१६	एवमुक्त्वा स भगवान्	१.४१.७५	एवमेव कुवेरस्य	३.६०.२०
एवमुक्तस्तु मां क्षुब्ध	१.५३.२८	एवमुक्ते तु वचने	३.६८.१५	एवमुक्त्वा तु भगवान्	१.४१.५७	एवमुक्त्वा स भगवान्	३.४१.२०	एवमेव च भूयिष्ठो	२.७४.१६
एवमुक्तस्तु कृष्णेन	२.७२.१७	एवमुक्ते त्वन्धकेन	२.८७.२४	एवमुक्त्वा तु भगवान्साद्ध	३.६६.३१	एवमुक्त्वा स भगवान्	३.४७.३४	एवमेव च विस्तारं	३.१७.६
एवमुक्तस्तु दैत्येन स्वयं	१.४१.५५	एवमुक्ते बद्धो	२.१२१.१०२	एवमुक्त्वा तु राजानं	२.५१.५०	एवमुक्त्वा स राजर्षि	१.३०.४५	एवमेव महं भीरु त्वत्	२.११६.७२
एवमुक्तः स्मितं कृत्वा	२.११०.२३	एवमुक्तेवज्रनाभः	२.६१.२०	एवमुक्त्वा तु राजा स	२.५२.१३	एवमुक्त्वा सुरगणान्	१.४८.८३	एवमेवेति तं विप्राः	३.८६.१८
एवमुक्ता ततो गंगा	२.११०.४१	एवमुक्ते जयन्तश्च	२.७३.५६	एवमुक्त्वा तु वै कृष्णो	२.४७.२५	एवमुक्त्वा सुरश्रेष्ठं	२.५०.२३	एवमेवेब्रुवाणं तं कृष्णं	२.५१.१६
एवमुक्ता तया बाला	२.११८.३२	एवमुक्तो देवसंक्षीर्णरसिहो	३.४७.१६	एवमुक्त्वा तु स तदा	२.२४.७५	एवमुच्चरितं वाक्यं	२.१२४.१०	एवमेवैष भगवान्	३.१०.१०
एवमुक्ता तु दाशेयी	१.१८.४५	एवमुक्तो भगवता ब्रह्मणा	१.४८.६६	एवमुक्त्वा दानवेन्द्रो	२.२८.६	एवमुत्तमरत्नानि	२.६३.११	एवमेष गिरिः क्षिप्रं	२.४२.३८
एवमुक्ता तु हरिणा	२.६७.३३	एवमुक्तो मृनिश्रेष्ठ	२.११०.२४	एवमुक्त्वा नरेद्रास्ताना	२.५०.८८	एवमुजितवीर्यस्य मम	२.३१.४५	एवमेष दशहरीणां	२.१०२.३६

एवमेष निकृत्या वै तत्त	२.२२.४५	एष ते द्रुपदस्यादौ	१.२०.७६	एष नारायणस्यायं	३.४०.२०	एष वामुभयोरस्तु	२.१०३.१६	एषोऽग्निरन्तकाले तु	१.४५.६३
एवमेष महाबाहुरिक्ष्वाकु	१.४१.१५५	एष ते पातयिष्यामि	३.६६.४	एष नारायणश्श्रीमान्	२.५५.६०	एष विष्णुः प्रभुर्देवो	२.५०.४८	एषोऽनन्तः पुरा भूत्वा	१.४८.१८
एवमेष महाबाहुः	२.१०२.२८	एष ते पादयोर्मूर्ध्ना पुत्र	२.४.५६	एष नारायणो भूत्वा	१.४२.४	एष विष्णोः सुरेशस्य	१.४१.१२०	एषोऽहमस्य विदधे	२.११६.१६६
एवमेष महाबाहुः शम्बरं	२.१०४.६४	एष ते पौरवोर्वशो	१.३२.११६	एष नो वृत्तिदाता च	३.३०.४	एष वै पितृभक्तश्च	१.१६.४६	एहि केशव तातेति	२.२५.१८
एवमेषाऽपि गौर्वर्म	२.२१.१२	एष ते प्रथमः कृष्ण	२.१६.७१	एष पौष्करको नाम	१.४१.२७	एष वो मोक्षदाता च	३.८६.५	एह्यागच्छ नरश्रेष्ठ	२.३७.१६
एवमेषा पुरीं श्रिप्रं	२.३५.४६	एष ते प्रथमः कृष्ण	२.३६.७६	एष बाणं रणे जित्वा	२.१२७.१३६	एष शक्रस्य संदेशः	२.५०.३४	एह्यावयोर्बहुयुद्धं	३.१३.११
एवमेषा हितार्थाय	१.५०.३४	एष ते यदि वृत्तान्त	२.१२१.७६	एष बाण स्थितो युद्धे	२.१२४.१३	एष शब्दो महानादः	३.१६.१६	एह्ये जय मां बाण	२.१२६.५१
एवमेषोऽवतीर्णो वै	२.१२८.२३	एष ते स्वस्य वंशस्य	२.३८.५२	एष ब्रह्मनयो यज्ञो	३.२०.२२	एष श्रेयः पथो विप्र	३.१०८.७	एह्यो हि राजञ्छुद्धात्मन	२.३१.४८
एव वै वामनो नाम	२.७२.१०३	एष तेऽहं शिरः कायात	३.६६.७	एष ब्रह्मविदां मध्ये	१.५०.४८	एष संवर्तकं कर्तुं मृद्यतः	२.२४.५७	ऐ	
एवस्मिन्नेव काले तु	२.२१.१२	एष ते वामनो नाम	१.४१.१०३	एष भूमिधरोऽद्यैव	२.४२.४०	एष संसारविभव	३.८६.१२	ऐक्यनानात्व संयोग	३.६६.३०
एष कंसस्य सहजः	२.२४.२२	एष ते वैष्णवैः श्रीमान्	१.४१.१११	एष मानुष्यको यत्नो	२.२.६	एष सप्तविकोद्देशो	१.७.५८	ऐक्ष्वाकी चाभवद्भार्या	१.३६.३०
एष कृष्ण इति ख्यातो	२.२२.२१	एष ते सुभ्रुसदेशः	२.४६.५१	एष मे कृष्ण संदेशः	२.२४.७३	एषां गच्छाम्यहं भीरु	२.११८.६४	ऐच्छेतां तो तदा द्रष्टुं	३.१०६.१५
एष कौरव्य तत्त्वेन	३.४०.२५	एष त्रेतायुगविधिर्विहतो	३.८.६	एष मे गात्रमासाद्य	२.१०७.१८	एषा ते स्वस्थ वंशस्य	१.४५.७२	ऐन्द्रं पाशुपतं ब्राह्म	३.४५.७
एष घोरी गृहः स्वाति	२.२३.२५	एष देवान् परिभवल्लोकां	१.४८.६०	एष मे निश्चिता बुद्धि	२.५२.३६	एषा द्वादशसाहस्री	१.८.१६	ऐन्द्रं वैष्णवमस्यैव मुने	२.७०.३४
एष चैकशतं हत्वा	२.१०२.१६	एष घन्यो हि घन्यानां	२.१२८.२८	एष मे विभवस्तात	२.३७.३५	एषा नृश्रेयसी यात्रा	२.३६.१४	ऐन्द्रिस्तं पतितं भूमौ	२.८५.१६
एष तं सगणं दैत्यं	१.४१.७४	एष धर्मो नरेन्द्राणामिति	२.५१.७	एष मे संशयो ब्रह्मन्नेवं	१.४०.६३	एषा च परदारारणामभवद्	३.१३३.२७	ऐन्द्रेण पयसा तित्त	२.१०.१२
एष त विफल यत्नं	१.२७.७	एष धर्मो नृलोकेऽस्मिन्	२.५०.८७	एष मे हृदयाश्वासो	२.६६.३८	एषां तु तुमुलः शब्दः	२.४२.१६	ऐरावतगतः शक्रः सर्वैर्देव	२.६०.३८
एष ते गर्वमखिलं	३.१००.२१	एष धर्मो हि धर्माणां	३.२८.८३	एष मोहं गतः कृष्णो	१.१२.१६	एषां धूम्राणामङ्गानां	२.६.४	ऐरावतगतश्चाहं स्वयं	२.१८.५
एष ते त्रिपु लोकेषु	१.३२.४६	एष घाता विधाता च	२.१२८.३०	एष लोकमयो देवो	१.४६.६	एषां ह्यन्तर्हिता माया	२.३२.४०	ऐलपुत्रावभूवुस्ते सर्वे	१.२७.१
एष ते दर्पशमनं करोमि	२.१३६.६७	एष नः परमो राजा	३.३०.३	एष वां भक्षयिष्यामि	३.१२६.२२	एषोकमस्त्रमैन्द्रं च	३.४४.१०	ऐश्वर्यगुणसंपन्तो	३.५१.५२

ऐश्वर्यभूतो भूतात्मा	३.१६.१३	कंसराजवधार्थयि	२.४६.३१	कंकवायसगृध्राणां	२.१०६.५५	कथं चाल्पेन कालेन	२.११४.७	कथमस्यमया कार्यं	२.१४.३३
ऐश्वर्यं प्रतिपन्ताः	३.४०.७	कंसराजस्य च सभां	२.५५.२०	कच्चित्तव महाबाहो	२.११६.६७	कथं तव सुतस्तेषामग्रतो	२.५१.८	कथमस्य स्तनं दास्ये	२.१०४.१ २
ऐश्वर्येणाश्वमाविश्य ओ	३.५.३६	कंसस्तु पितरं वदध्वा	२.१०१.५३	कच्चिदिन्द्रस्तव भयात	२.११६.४२	कथं तस्यासतस्तत्र	१.४६.४	कथमात्मा विभज्यः	३.३६.७
ॐ नमः कात्यायन्यै	२.१०७.६	कंसस्य निघ्नं चापि	३.१३४.१६	कच्चिदीश्वरतोषेण	२.११६.४६	कथं घन्वन्तरिर्देवो	१.२६.११	कथमासीज्जगद्धेतो	३.१०३.४
ॐ नमो स्त्वनन्तपतये	३.७२.६४	कंसस्य पुरतो न्यस्ता	२.४.३५	कच्चिद् त्रिभिः क्रमैः	२.११६.४६	कथं धारयिता चासि	१.५.५०	कथं मुक्तं नारदेन	२.२८.३६
ओंकार ये त्वधीयन्ते	३.१६.१४	कंसस्य भयसंत्रस्तं	२.२६.७	कच्चिद् वृषध्वजस्तात	२.११६.४८	कथं प्राचेतसत्वं	१.२.५३	कथमेकपदे त्यक्त्वा	२.४४.४७
ओषधीशः त्रिकयायोनि ओ	१.४६.८	कंसस्य हि वधश्चेयान्	२.३२.७	कच्छपश्चापहर्ता च	३.६६.२७	कथं बहुयुगे काले	१.११.१	कथाभिः पूर्ववृत्तभिः	१.५३.१६
ओग्रसेनिः समालोक्य	२.३०.४	कंसादीश्चापि तान्	१.५५.१३	कच्चिद द्वीपान्तरं	३.१०२.७	कथं विनाशिताः पुत्रा	१.३.१५	कथितं भवता पुण्यं	१.१.८
ओत्पातिकमिदं घोषैः	२.७.३२	कंसेनापि समाजप्तं	२.३०.६	कटाक्षैरिगितैर्हास्यैः	२.८८.४८	कथं विरोधं यदुभि	२.८३.३२	कथितानि क्व ते तांत	२.१२६.६५
ओर्वस्नाभ्यां वरं	१.१५.४	कंसे विनिहते कृष्ण	२.१६.८६	कटाभौ विकटाभश्च	३.४२.१३	कथं वै क्रोधमागच्छेद	२.१०४.३६	कथितो विष्णुरित्येवं	३.६६.२२
ओर्वस्तु जातकर्मादि	१.१४.६	कंसो नाम विशालाक्षो	१.५४.६५	कट्वाङ्गशूलैरपि	२.८६.६२	कथं वै श्राद्धदेवत्व	१.१६.१	कदम्बकोटरे जाता	२.४१.१३
ओर्वस्यवैमृचकिस्य	१.२७.४१	क आश्रयस्तवान्यो	१.३०.२८	कण्टकीभिः प्रवृद्धभिस्तथा	२.६.२२	कथं सत्रे सोमपानं	२.८३.१४	कदम्बनीपार्जुन केतकाना	२.६५.१७
ओर्वा वसिष्ठपुत्रश्च	३.६६.४	क इति ब्रह्मणो नाम	३.८८.४८	कण्डरीकोऽपि धर्मात्मा	१.२४.३१	कथं स नाथोऽयं	३.७१.१६	कदम्बाश्चैव मव्याश्च	३.४१.७१
ओर्वो वसिष्ठपुत्रश्च क	१.७.१२	ककुत्स्थकन्यां गां नाम	१.३०.३	कण्डूयमानः सततं	२.१.३१	कथं समुद्रः सतब्धोदः	२.११४.४	कदाचिच्चतया सार्द्धं	३.७३.१६
कंस कंसात्मनाशाय	२.४.४३	ककुदोदग्रनिर्माणः	२.२१.४	कथनं सर्वकार्यं हि	३.१००.४२	कथं स सगरो जातो	१.१४.१	कदाचिच्चारयन्नेव	२.११.२८
कंस नारी विलापाश्च	२.३२.३	ककुक्षिनि हतेऽरिष्टे	२.२२.४	कथं कार्यं मिदं कार्यं	२.११६.३३	कथं स्वपिति धर्मान्ति	१.४६.५	कदाचित्तु तदा कृष्णो	२.११.१
कंसः पापपरश्चैव	२.३२.६	कक्षेऽग्निरिवः संवृद्ध	२.१२४.४	कथं कालस्य महतो	३.३१.३	कथं ह्यकीर्त्या	३.२.३७	कदाचित्काशिराजस्य	१.३४.५
कंसमाता ततो राजन्	२.५५.७८	कक्षे महति संवृद्धो	१.४६.५१	कथं च भगवान्विष्णुः	१.४०.८	कथमंशावतरणं कुर्मः	१.५३.६	कदाचित्तु सपक्षास्ते	३.३८.१
		कक्षे योस्तनयाश्चासन्	१.३१.१८	कथं च शक्तास्ते दातुं	१.१६.१५	कथमन्येन जातस्त्व	२.२८.४०	कदाचिद् द्वारकां सर्वा	२.७५.६६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

३१

कदाचिदिह पुंश्चल्या	२.१२१.५४	कन्याहेतोर्महातेजा	२.४८.७	करं गजकराकार	३.५५.७०	कर्णधारैर्गृहीतास्ता	२.८८.६२	कर्मप्राप्तैश्च पशुभिः	३.२३.१६
कदाचिद्वृहदत्तस्तु	१.२४.२	कन्याहेतोस्सुतं ज्येष्ठं	२.४६.४४	करवीरपुरं कृष्ण	२.४३.८५	कर्णनालीकनाराचा	३.५४.१४	कर्मभिः कुत्सितरन्यैः	३.१७.४३
कदाचिन्मृगयां यातः	१.३८.२७	क पद्मे पुनः सव्ये	२.६६.६	करवीरपुरं चैव रम्य	२.३६.११	कर्णपर्वण्यपि तथा	३.१३२.६४	कर्मभिः पूर्वजं पूर्वं	३.१३३.५२
कद्रुपुत्र सहस्रस्य	२.१२०.२२	कपित्थवृक्षमाश्रित्य	२.८२.८	करवीरेश्वरश्शूरं	२.४६.४६	कर्णस्रोतोद्भवी तो	१.५२.२२	कर्मभिश्च तपोयुक्तैः	३.२३.२५
कनकमणिविचित्र	३.४२.२०	कपिलश्च महीपुत्रो	३.४६.७५	कराभ्यां कारमाहत्य	३.६७.१६	कर्णार्कणि ततो देव्यः	२.६५.४७	कर्मभिस्त्वमरो विद्यो	२.४२.४६
कनकरजतभक्ति चित्र	३.४६.३१	कः प्रभुस्तस्य वृक्षस्य	२.८६.४६	कराभ्यां राजपुत्रस्य	१.२०.११४	कर्तव्यानां च कर्तारो	२.२२.१३	कर्म भूमिर्यनुष्याणां	१.५१.२४
कनीयसी तु या तस्य	१.१५.३	कफवर्गो भवेच्छुक्रं	१.४०.५२	करार्थं यदुमुख्येभ्ये	३.११५.२६	कर्ता चैव विकर्ता	३.३३.३५	कर्मेन्द्रियाणि चान्यानि	३.८८.२५
कन्या त्रिगर्तराजस्य	१.३५.१२	कमण्डलुं तदा राजन्	३.११०.१३	करालाय च मुण्डाय	३.८७.२४	कर्ता त्वं भूतभव्येश	३.१११.४६	कर्षणायुधकृष्ठास्मि	२.४६.४८
कन्यापुरे कुमारोऽसौ	२.१२७.६	कम्पयन्ताविव हरि	३.१३.७	करिष्यामि वचस्तुम्य	३.७५.५	कर्ता समस्तस्य	३.८०.३८	कर्षणेनास्य गर्भस्य	२.४.६
कन्यापुरे महानादः	२.६०.६	कम्पयन्तौ भुवः वीरो	२.४३.६२	करिष्यामि विधानं	२.६६.६५	कर्तुं कारणकर्तारो	२.१२५.३७	कर्षणे वृक्षयोश्चैव	२.२२.५
कन्या भवन्ति तनया	२.८३.३७	कम्बलाजिनवाससि	२.६७.२८	करिष्याम्यहमप्येतन	३.२७.३२	कर्तारो चापहतारो	२.१२५.३६	कर्षन्तो शवयुथानि	३.७६.४
कन्याभावाच्च सुद्युम्नो	१.१०.२२	कम्बलाश्वतरां नागौ	२.२६.५५	करिष्ये देवताः सर्वा	३.६८.१२	कर्ता शिल्पसहस्राणां	१.३.४७	कर्षुकाणां कृषिवृत्तिः	२.१६.३
कन्या च वासुदेवाय	१.२६.३४	करकानपि दद्याच्च	२.७६.५१	करिष्ये वचनं तेषां	२.५४.५	कर्म कर्तेति राजेन्द्र	३.१८.२६	कर्षुकान्पुङ्गवैर्वाह्यैः	२.१६.४२
कन्या भानुमती नाम	२.६०.२	कर चान्डुहस्तपिर्महिषां	२.२६.२६	करिष्ये विबुधश्रेण्याः	३.६८.१३	कर्मक्षयाद्विमुच्यन्ते	३.१८.२३	कलत्ररक्षणं कार्यं	२.६६.६४
कन्यार्थं न च कृष्णो	२.६०.१५	करजद्विजचिह्नानि	२.८८.१७	करीषपांशुदिग्धांग	२.२०.३०	कर्म चासार्यते तत्र	२.८३.२४	कलाकाष्ठासुहृताणां	३.३७.१८
कन्यार्थं रत्नलुब्धास्तु	२.८४.५६	करजाग्रावलीढं तु	२.६६.७	करीषेषु प्रकल्पतेषु	२.२५.८	कर्मणः कर्मयोगज्ञो	३.१८.३३	कलामापाकरम्येषु	२.१६.२७
कन्यार्थं चागतः कृष्ण	२.५०.२	करञ्जे दीपकं दद्यात्	२.८१.३	करुषाधिपतिर्वीरो	१.३४.२७	कर्मणा चैव कर्ता च	३.३२.४६	कलिङ्गराजस्तच्छ्रुत्वा	२.६१.३३
कन्यार्थं यततानेन	२.४८.११	करदः कृष्ण इत्येवं	३.११५.३७	करुषेषु प्रसूतोऽयं	२.३०.२४	कर्मणा तेन महता	३.६१.४०	कलिङ्गाधिपतिश्चैव	२.३४.१४
कन्या विघ्नं च कुर्वाणो	२.५१.१५	करदो वासुदेवो हि	३.११५.३५	करेण बिभ्रत्सह	३.८५.११	कर्मणा मनसा वाचा	२.७८.१७	कलिर्वर्षसहस्रं च	१.८.१५
कन्या हि मम या देया	२.८३.१५	करन्धमस्तु त्रैसानो	१.३२.११८	करेणाघः प्रदेष्टे तां	२.६४.७	कर्मणामानुपुण्याच्च	१.४०.७	कलुषं तस्य यच्चितं	३.८०.७५

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

३२

कलुषो नाम राजेन्द्र	२.५१.४३	कश्यपाद्याश्चमुनयः	२.१०६.१२	कस्यचित्त्वथ कालस्य	२.१०१.५	कांचनस्तम्भनि व्यूहं	३.१३२.३८	कान्त्यजन्तिस्मलोका	१.१६.३७
कल्की विष्णुयशानाम	१.४१.१६४	कषायोपल्पवे लोके	३.४.१४	कस्यचित्त्वथ कालस्य	३.५.११	कांचनाग्राणि भास्वन्ति	२.६८.३३	कामगेन रथेनाशु	२.२८.६७
कल्पक्षये महाराज	३.६६.६	कः समुत्सहते ज्ञातु	३.७.१५	कस्यचित्सूर्य संकाशान	३.३७.२६	काञ्चनापीडजघना	३.२८.५७	कामपत्नी न कान्तैषा	२.१०८.२६
कल्पयामि यथाबुद्ध्या	२.६३.५८	कस्तपोघोरशिरसो	३.१०.३६	कस्य त्वमिति यच्चाहं	२.२८.१०३	काण्डे स्पृष्टाः श्रोत्रियाश्च	३.३.७	कामपत्नी प्रणम्याथ	२.१०४.६३
कल्पान्तरसहस्रेषु	२.७८.१३	कस्ताघर्षयितुं शक्तो	१.५५.२६	कस्य पक्षपरिक्षेपैः	२.१२१.६८	कात्यायनी स्तूयसे	२.१२०.३३	कामपालं पुनर्विष्णु	३.७५.२६
कल्पान्ते वारिधाराभिः	२.४२.८४	कस्त्वं कश्चोद्भवस्तुभ्यं	३.१३.१२	कस्य पुत्री समुत्पन्नी	३.१०३.८	कादम्बरीपानकलो	२.८८.१२	कामपालं महाबाहु	३.७५.२५
कल्पितेयं मया भूमिः	२.५८.५	कस्त्वं पुरुषमध्यस्थ	३.१३.१०	कस्य मुक्तिः समायाता	३.७८.२६	कादम्बरीपानमदोत्कटस्तु	२.८६.१६	कामपालं शरेणाशु	३.६८.५
कल्माषदण्डविमला	३.५४.१३	कस्त्वं भवसिरुद्राणां	२.२०.५	कस्यशंखरवै प्राणान्	२.१२१.१०१	कादम्बरीमदकलं	२.४१.१४	कामं कामोऽस्तु तस्यैव	२.६७.१४
कल्माषपादस्य सुतः	१.१५.२२	कस्मादिदं समुत्पन्नं	२.११७.३६	कस्यासि ब्राह्मण	३.७१.६	कादम्बरीमदक्षीवो	२.४२.७६	कामं तस्य गतिः सूक्ष्मा	१.४६.८
कल्माषी च रथोष्मा	२.१०६.२३	कस्मादेषो निरुद्धस्य	२.१२१.१४	कस्यैष विस्तृतो	३.७८.२५	काद्रवेयाश्च बलिनः	१.३.१११	क मं प्रियाणि राजानो	२.७१.२
कल्याण गुणसंपन्ने	२.६५.२०	कस्मिं देशे नृपो जज्ञे	२.५६.६	कहिचिदस्त्रिमणापुत्रा	२.१०६.४	काननैर्नन्दनप्रख्यै स्तथा	२.६८.१३	कामं वद नृप त्वं	३.१००.३६
कल्याणनामगोत्राणां	२.६५.६	कस्य किं वा वरं देवा	३.६७.१५	काश्चित्केशेषु जग्राह	१.४८.५२	कानिचिच्छिथिलानीव	२.१८.३६	काममेतन्न वक्तव्यं	२.७०.२६
कल्याण भाजनं ये तु	१.१६.१६	कस्यचित्त्वथ कालस्य	२.६.२२	काकपक्षधरः श्रीमान्	२.११.२	कानिच्छतो द्रुतं	३.१३.२५	काममेवंविध पौत्रो	१.२७.३३
कवचासिगदाप्रास खड्गं	२.१२४.८	कस्यचित्त्वथ कालस्य	२.२१.१०	वाकपक्षधरैर्बालैर्गो	२.५.२७	कानीनं चापिजानामि	२.१६.६७	काम सन्तापसन्तप्तः	२.११६.५१
कव्यं पितृणामु चित्तं	३.६६.५०	कस्यचित्त्वथ कालस्य	२.३३.३	काकी काकनजनय	१.३.१०७	का नु वाक् स्तुतिरूपा	३.८७.३६	कामस्य वशमापन्नो मनो	२.२८.८४
कश्च कृष्णः पुरः	३.११३.२०	कस्यचित्त्वथ कालस्य	२.३४.३	का च धारयितुं शक्ता	१.५५.४८	कान्तनारीनरगणा	२.५८.४६	कामोप भोगतुल्या हि	२.६२.१६
कश्यपश्चादितिश्चैव	२.७५.३४	कस्यचित्त्वथ कालस्य	२.३७.३	काचिच्छकुन्तिका राजन्	१.२०.८१	कान्तं पद्मपलाशाक्षं	२.११८.५४	कामोऽयं पूर्वदेहे	२.१०४.५५
कश्यपस्तत्र भगवान्	३.६७.२६	कस्यचित्त्वथ कालस्य	२.४६.१	कांचनं चित्र सन्नाहं	२.१०५.१७	कान्तारेण्ववसन्नानां	२.२.५४	काम्पिल्ये नगरे ते तु	१.२३.१६
कश्यपस्य मनोश्चैव	३.३६.३०	कस्यचित्त्वथ कालस्य	२.५६.१	काञ्चनं चैव दातव्यं	२.८०.३६	कान्तैक कृण्डलधर	२.४२.८०	काम्या नाम महाबाहो	१.२.६
कश्यपस्यौरसः पुत्रः	३.३७.२३	कस्यचित्त्वथ कालस्य	२.१०१.४५	काञ्चनं शक्तितो दद्यात्	२.७६.७२	कान्त्या लक्ष्म्या प्रसादेन	२.१७.८	कारणवाकुण्डलिनीं	२.११.३७

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

३३

कारयस्वाधिवासं च तत्र	२.५५.१११	कालस्तु बलवन्नाजन्दु	२.३२.४६	काशः शलश्च द्वावेतौ	१.२६.७	किञ्चिदाकुलिताग्रेण चरणेन	२.६६.८	किं तद्भूतं समुद्भूत	२.२२.२५
कारयिष्यामि गोयज्ञं	२.१६.४४	कालस्त्वं हि विनाशाय	२.२२.७०	काशस्य काशयो राज	१.२६.६	किञ्चिदभ्युद्यते सोमे-	२.२५.६	किं तस्या व्रतकः कार्यं	२.८१.७
कारुण्यं खलु नारीषु	२.२२.५	कालस्य परिणामेन	१.१६.१६	काशिकश्च महासत्त्वस्तथा	१.३२.२०	किञ्चित्सव्यापवृत्तेन	२.२६.५२	किं तु कर्म विशेषेण	३.३६.१६
कार्तवीर्यस्य तनया वीर्यं	१.३३.५०	कालायाः कालकल्पस्तु	३.३६.४०	काशिकस्य तु काशयो	१.३२.२१	किंतु कर्तुं यथा शक्यं	२.११८.५७	किं त्वनुस्मरणार्थेऽहं	२.४६.५
कामुर्कोर्मितरङ्गौर्ध्वग्रीणा	३.५७.१६	कालिन्दी गोमती पुण्या	२.१०६.२८	काश्चनाः पर्वताः	३.२७.७	किंतु लोकाहिताथार्यं	२.३२.४६	किं त्विदं स्यादिति	२.६६.२०
कार्या कार्ये समुत्पन्ने	२.७१.४	कालिन्दीं मित्र विन्दां च	२.६०.४१	काश्चनीभिः शिलाभिश्च	३.३५.२६	किंतु वक्ष्यति ते पुत्रा	२.६.१०	किं नु गुणेन मे प्रेम्णा	२.६७.२४
काल एव नृणां शत्रुः	२.४.५३	कालियं चापि जानामि	१.५५.७	काश्चित्काष्ठमयस्तेरुः	२.८८.२७	किं त्वद्भूतमिदं लोके	२.५५.६७	किं नु ते कारणं वीर	२.३१.२२
काल कल्पैश्च मुसलैः	१.४७.११	काली विचित्रवीर्यं तु	१.३२.११२	काश्चित्प्रमुदितास्तत्र	२.१२८.८	किन्तु युद्धयत वै शूरा	२.४३.५३	किं भयेनास्य नस्तर्वे	२.४६.२६
कालः कालं स्वपयति	३.७.२०	काले खलु नृपः प्राप्तो	२.३५.६	काश्चित्प्राणान जहूः	२.१८.२३	किन्तुरोगयक्षाणां	२.११८.६५	किं मया देव कर्तव्यं	२.५८.६६
कालकूटं विषं तद्धि	३.२८.३४	काले खलु नृपः प्राप्तो	२.४१.५५	काश्चिदाक्रम्य क्रोडेन	२.१८.२४	किन्तुर्यो यक्षकन्याश्च	२.११७.२२	किं मां क्षिपसि रोषेण	२.२८.६६
कालचक्रं च यद्विव्यमनित्यं	३.६६.४२	काले गच्छति तौ सौम्यौ	२.७.१	काश्यां सुपार्ष्वं तनय	२.१०३.२८	किन्तु वक्तुं तथा	३.६२.१८	किं मां पिता वा माता	२.७०.३३
कालज्ञः कालमेधामः	१.४६.३१	कालेन चैव निर्मुक्तो	३.८१.२०	काश्या शारद्वती	३.३६.४७	किं कर्मणः किमीहन्तः	३.४.२	किं मां वक्ष्यन्ति रुषिता	२.२८.६६
कालदेशानुरूपं च देयं	२.७६.२६	कालेनाभिहतः कंसः पूर्व	३.३२.४१	किंस्विदित्येकमनसस्रभायां	२.५३.७	किं करिष्यत्यसौ क्रुद्ध	३.१११.१८	किं मे स्तानेन दुस्स्तानं	२.६.११
कालपाशं सप्ताविध्यं	१.४४.१३	कालेन विपरीतास्ते	३.२.२४	किंङ्कराणां सहस्राणि	२.६४.३८	किं करिष्यामहे सर्वे	२.२२.८१	किमकार्षमहं देवि विप्रियं	२.६६.४०
कालप्रह्लादयोर्युद्धम	२.५६.१०२	कालो नयः संततिश्च	२.१०६.४५	किंङ्कणीजाल निर्धोषं	१.४३.३	किं करिष्यामि मदात्मा	३.१११.६४	किमकार्षमहं मोहादीश्वर	२.६७.१८
कालभूतमिदं सर्वं हेतु	२.४.६१	कालोऽयं समनुप्राप्तो	२.११२.८	किंङ्कणीजाल निर्धोषं	३.४६.४२	किं कुर्मः किं नु नः	३.७७.१५	किमत्र विहितो दोषो	२.४६.११
कालयुक्तमिदं तात	२.३२.३२	कालो यास्यत्यविरसं	२.१२७.१४२	किंकिणी शतनिर्धोषं	२.११६.१३८	किं खल्व कुशलं लोके	१.५०.४७	किमर्थं कौंकुमं वासो	२.६६.२६
कालरात्रि कामगमां	२.१२०.११	का व्यथा किं शरीरं	२.११७.३५	किङ्कणीशतधुष्ट	३.५१.२७	किं च त्वं साधु	२.२२.७५	किमर्थं गोपवेषेण रमसे	२.२०.७
कालरात्रि नमस्तुभ्यं	२.१०७.८	का व्यथेति मुखे चेदं	२.११७.४१	किञ्चानाभरणं गात्रं	२.६६.३१	किं चाहं त्व दास्यामि	१.४८.६४	किमर्थं च परित्यज्य	२.५७.२
कालसर्पोपमः कृष्ण	२.५७.३५	काव्यः पृथस्तथैवाग्नि	१.७.२१	किञ्चित्कायं पुरस्कृत्य	२.६६.२१	किं जनेन निरस्तेन त्वं	२.४४.२१	किमर्थं चाम्बुदश्यामः	२.१०८.१६

किमर्थं तेन ते बालास्तदा २.११४.६	किमेतन्नाभजानीमो २.११०.२७	कीर्णं सुरगणैः कान्तैर्मना २.४०.१०	कुञ्जराल्लाङ्गलोक्षितान् २.३५.७१	कुबेरः स धनुष्पाणि ३.६०.३८
किमर्थं ब्रह्मदत्तस्य १.२०.७७	किमेते प्राकृतज्ञाना ३.१०७.२५	कीर्णा क्षत्रियकोटभीः १.४१.११५	कुञ्जराल्लाङ्ग लोक्षितान् २.४३.२१	कुबेरस्ते शरैर्भिनः ३.६०.६७
किमर्थं भगवन्ते ते ३.४६.२७	किमेवं चिन्तयाविष्टा २.१२१.७६	कीर्णा भूतगणैर्धर्मैरन्ति २.२.४६	कुञ्जैश्च नागपुष्पैश्च २.४०.१७	कुबेरेणादित सैन्य ३.६०.३६
किमर्थं भगवान्विष्णु ३.७३.१	किमेवं बलमत्तोऽसि २.१२२.७५	कीर्त्तनं कृष्णसंभूते ३.१३४.६	कुठारैः कुन्तलैश्चैव ३.६५.४	कुब्जा यथा गन्धकपीषिका २.८६.१२
किमर्थमिह संप्राप्ता १.१२२.२५	किमता चैव कालेन ३.७.४	कीर्त्तनीयाः सतीनां हि २.८१.१५	कुठारेः सर्वतश्चैव ३.६५.७	कुमारकोट्यो याश्चेमा २.५६.६
किमर्थं चादि देवेन १.४६.२	किवां ते प्रार्थितं भूयो १.१६.३०	कीर्त्ति कीर्त्ति मतां श्रेष्ठो २.५२.१५	कुण्डा वृषानैकृतिकाः ३.३.३५	कुमारं तं परित्यज्य ३.१.१०
किमसाध्यं भवेदस्य २.५३.२४	किं वा शक्यामहे वक्तुं २.५५.६५	कीर्त्ति त एते विपुला २.११२.२७	कुण्डोदरं विरुपाक्षं ३.१०५.१६	कुमारस्स्कन्धवाह्यायां २.५.१५
किमस्ति तव कल्याणि २.११७.५२	किवीर्यं कालयवनः २.५७.६	कीर्त्तितं बलदेवेन २.१०६.३	कुण्डोदरो महाप्रीव ३.८६.३	कुमाराः प्रययुस्तत्र २.६५.६
किमात्मको वराहः सका १.४०.३	किसंज्ञः कश्च भगवाँल्लोके ३.१०.४८	कीर्त्तिता मनवस्तात १.७.७	कुतः पद्मपलाशाक्षः ३.७६.६	कुमारो वृकदीप्तिश्च २.१०३.१३
किमात्मको वराहोऽसौका ३.३३.३	किरन्ति पीराः सर्वास्तां २.१२७.१३३	कीर्त्तिमान् स महाभाग १.१५.१६	कुतः पीण्डक इत्येवं ३.६४.८	कुमित्रे सौहृदं नास्ति १.२०.१२०
किमाहुर्महोपालो ३.११५.१२	किरातीं चीर वसनां २.१२०.१६	कीर्त्तिमांश्च महातेजा १.३७.१६	कुतश्चागम्यते सौम्य २.२७.३०	कुमुदोत्पलकिञ्जल्क १.२०.८५
किमाह पुरुषश्रेष्ठः शीघ्र २.६६.२३	किरीट मूर्द्धा सौम्यास्याः २.४२.८५	कीलवज्र निपातैश्च २.३०.३४	कुतस्त्वं कोऽसि ३.६६.६६	कुमुदोत्फुल्लमुदकं तारा २.१६.२०
किमिदं चिन्तयाविष्ट २.१२१.२०	किरीटलाञ्छनेनापि २.५२.२२	कीलैरारोप्यमाणैश्च २.६.२४	कुतूहलं ममाप्यस्ति सर्वथा २.६२.५२	कुम्भकर्णो यथा राजन् ३.१२६.१४
किमिदं तव गोविन्द ३.७५.१४	किरीटिनो लम्बशिखा १.४१.६७	कुक्रुरस्य सुतो घृष्णु १.३७.१८	कुतोऽयं सात्यकि वीरः ३.६३.२४	कुम्भकेतुः सुदष्टश्च २.१०४.४६
किमिदं प्राह विप्रर्व ३.६३.२	किरीटी श्रीपतिः कृष्णो ३.१११.२	कुक्रुराधिपतिं चैवं २.७५.६१	कुतो भ्रातरितो गच्छेः ३.१२६.१०	कुम्भनाभो गर्दभाक्षः १.३.७६
किमिदं रुद्यते भीरु या २.११६.२०१	किरीटेनार्कतुत्येन २.१६.१०	कुक्कुटैश्च्छागलैर्मपै २.३.८	कुतो वो विग्रहो देवाः १.५०.४६	कुम्भाण्डद्रुहिता रामा २.१२८.४
किमिदं लोकविख्यातं २.११६.१११	किशोरस्त्वति संहर्षा १.४३.२०	कुजम्भस्तु महातेजा ३.५३.१४	कुत्र चास्य निवासो वै १.४५.४६	कुम्भाण्ड मन्त्रिणां श्रेष्ठ २.१२७.२६
किमिः देवदेवेश ३.८८.३	कीटमूषकसर्पाश्च ३.४.२७	कुजम्भस्य च मार्गेषु ३.५६.५८	कुन्तान्कुन्तैः समाजघ्नु ३.६४.१८	कुम्भाण्डवचनैरेवं २.११६.१६८
किमुच्यते मयादेव ३.८८.६६	कीर्णं पन्नगवयौ घैस्समुद्रो २.३७.५५	कुजम्भस्य च येऽमात्या ३.५६.५१	कुन्ती च पाण्डोर्महिषी २.३८.५१	कुम्भाण्डश्चिन्तयाविष्टो २.११६.७५
किमेतदिति तेऽन्योन्यं २.१२१.१७	कीर्णं शंख कुलैश्शुभ्रं २.३७.५४	कुजम्भो दानवश्रेष्ठो ३.५६.४१	कुबेरं प्राप्य ते बाणा ३.६०.१६	कुम्भाण्ड संगृहीतं २.११६.१३३

श्रीहरिवंशपुराणम् ॥ श्लोकानुक्रमणी

३५

कुम्भाड संगृहीसीते तु	२.१२६.२	कुलेषु च्छिन्नमूलेषु तषु	१.४५.२६	कुहरः ष्वदंष्टश्च दुमुखः	१.३.११४	कृतस्सैन्यक्षयश्चापि	२.५६.११	कृत्वा द्विबाहुं तं बाणं	२.१२६.१३१
कुम्भाण्डे नैवमाख्याते	२.१२७.३६	कुलोप क्रोशनकरी	२.११८.१५	कूजद्विश्चाण्डज गणैः	२.४०.८	कृतां द्वारवतीं नाम्ना	१.१०.३६	कृत्वा निः क्षत्रियां चैव	१.४१.११६
कुम्भाण्डे वचनं प्राहं	२.१२७.३४	कुवलाश्वः सुतस्तस्य	१.११.२३	कूर्मकुक्कुटवक्त्राश्च	३.७२.१८	कृतानि दिव्यरूपाणि	२.४८.३०	कृत्वानुयात्रां भूतैस्त्वं	२.२.५२
कुभाण्डो नाम बाणस्य	२.१२४.१२	कुवलाश्वस्तु पुत्राणां	१.११.४४	कूर्मेणाभिहितं पूर्वं	२.११०.८५	कृताप्रियं च कृष्णेन	२.५६.६	कृत्वा प्राचीविभागं	३.१५.१६
कुम्भस्तु स्नाप्यमानेन	२.७६.८	कुवलाश्वस्य पुत्राणां	१.११.२५	कूर्मो रुध्यमयो दद्याद्वाह्य	२.८०.४६	कृताभिषेका वरदा भूत	२.२२.५३	कृत्वाऽभिसन्धिं तपसा	१.२३.१३
कुरुक्षेत्रं समासाद्य	३.८२.१६	कुशपुत्रा बभूवुहि	१.२७.१२	कृतकार्ये गते काले	१.५४.१	कृतयिः सर्वथाः चाहं	३.११४.२६	कृत्वाभ्यधावत्सहसा	२.१०५.५०
कुरुन्यात्युन्तरान्वीर काला	२.६२.४६	कुशल पृष्ठवान् भूयो	३.७७.१८	कृतकार्यो हि गास्तास्तु	१.५५.२४	कृताशौचः शरी चापि	१.२०.६६	कृत्वा राज्यं स राजर्षि	१.१३.३७
कुरुवंशे च ते देवाः	१.५३.७४	कुशलं पृष्ठवान्भूयो	३.६२.४	कृतकृत्ये तु संप्राप्ते	२.१२६.१३२	कृतास्त्रो तावुभौ वीरो	२.३३.२८	कृत्वा वेदमयं रूपं	३.२६.५०
कुरुष्व वैनतेय त्वं	२.१२२.१६	कुशलं ब्रह्मदत्तस्य	३.११५.११	कृतं त्रेता द्वापरं च	१.८.१७	कृतिरेषा हि भद्रं ते	२.६५.३२	कृत्वा संबन्धकं चापि	१.२०.१३३
कुरुस्तथोत्तरान्पापो द्राव	२.८६.२६	कुशलं मे वरारोहे	२.११६.७०	कृतत्रेतानि वद्वानि	१.८.२४	कृते गर्भविधाने तु देवकी	२.४.१	कृत्वा सर्वं समुद्योगं	२.३४.११
कुरोः पुत्रस्य राजेन्द्र	१.३०.६	कुशलं वासुदेवस्य	३.११७.१२	कृत प्रतिकृतं युद्धे चक्र	२.७३.२८	कृते तु देवताकार्ये	२.५६.४४	कृत्वा सिंहासने कृष्णः	२.११०.१४
कुरोश्च पुत्राश्चत्वारः	१.३२.८८	कुशलाते विशालाक्षि	२.११८.४८	कृताप्रतिकृतैश्चित्रैर्बहुभिश्च	२.३०.३२	कृतो यज्ञ विभागो हि	१.२६.१६	कृत्वा सुबहु शो घोरं	३.८३.२१
कुर्वतः किं फलं देव	३.१११.३६	कुशस्थलीं द्वारवतीं	१.३५.२२	कृतं दूतेन यत्कार्यं	१.५४.४३	कृती च युद्धकुशले	२.६१.५६	कृत्वा ह्यशिरोरूपं	३.७२.७७
कुर्वस्तु कथास्तास्ताः	१.५३.१७	कुशाग्रकुसुमानां त्र कर्ण	२.१४.६	कृतं देव महत्कर्म	१.४८.५८	कृतोत्तमाङ्गा स्कन्धेषु	३.५६.५४	कृत्वेन्द्रं दानवाः	३.४८.२४
कुलजा रूपसम्पन्ना	२.११८.२५	कुशाग्रस्यात्मजो विद्वान्	१.३२.६४	कृतं वृन्दावनं क्षेमं	२.२४.५५	कृत्यकाले उपस्थास्य	२.१००.४	कृत्स्नं बाहुसहस्रं च	१.४१.११४
कुलशील समोऽस्माकं	२.८८.३४	कुशिकस्तु तपस्तेपे	१.३२.५१	कृतवन्तस्तथा घोरं	२.४६.५६	कृत्वा केसरिणो रूपं	२.२२.३७	कृत्स्नं वा हिमवत्पाश्वं	३.४.३२
कुलजे सत्त्वसंपन्ने भर्मा	२.५१.३६	कुशीलानार्थभूयिष्ठं	३.३.२४	कृतवर्मा तृतीयस्तु	३.११८.३७	कृत्वा च निश्चय सर्वे	१.३५.२१	कृत्स्नां ददामि ते	३.७१.४१
कुले महति ते जन्म	२.३२.३४	कुशेशयाकोश विशालनेत्राः	३.८६.४६	कृतवीर्यः कृतीजाश्च	१.३३.८	कृत्वा च सेतं	३.८२.१८	कृत्स्नोऽयं यदि बाणस्य	२.११६.८६
कुले महति विख्यातः	२.२२.८०	कुसुमं पारिजातस्य	२.११७.३	कृतश्रमो महायुद्धे	३.१२५.२	कृत्वा चार्तस्वरं घोरं	२.११६.१२६	कृपः स्मृतः सर्वे तस्माद	१.३२.७४
कुले महति वै राज्ञां	२.४८.३५	कुसौहृदे क्व विश्वासः	१.२०.१२१	कृतस्वस्त्ययनो विप्रैर्हुत्वा	१.२०.६१	कृत्वात्मानं महाबाहु	१.४१.१२२	कृमिश्च क्रमाणश्चैव	१.३७.४

कृशो वा मलिनो व.पि	२.५८.६६	कृष्णः प्रत्यागतप्राणश्चक्र	२.६०.४६	कृष्णस्य भुजवीर्येण	२.४६.४२	कृष्णेन तत्र पतता क्षुभितो	२.१२.३	कृष्णोऽप्यन्वगमच्चैनं	२.७३.६३
कृष्णः कदम्बशिखरा	२.१२.२	कृष्णः कमलपत्राक्ष	२.५७.१७	कृष्णस्यागमनं चैव नृपाणां	२.४८.५१	कृष्णेन परमस्नेहात्ततो	२.१२२.८५	कृष्णो भोगवतीं रम्या	२.१०२.३२
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.१२.३०	कृष्णं गौरं प्रभुं शम्भु	१.१८.५३	कृष्णस्यानुप्रविष्टास्तु	२.८५.४८	कृष्णेन लोकनाथेन	३.१२८.१३	कृष्णो वा बलदेवो वा	२.५२.३८
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.१६.१३	कृष्णं चैवाब्रवीत्प्रीत्या	२.२६.२	कृष्णस्यापि निमित्तानि	२.२४.४	कृष्णेन सह योद्धव्यं	२.८५.११	कृष्णो हि सुरकार्येषु	२.६८.७
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.४७.२०	कृष्णं न सहते नित्यं	२.४६.४१	कृष्णस्यैकस्य तद्रूपं	२.१३६.११०	कृष्णेन सहितं विप्रं	२.७७.५	कृष्यते सातिवेगेन	२.४६.४१
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.५५.१२१	कृष्णं पद्मपलाशाक्षं	२.५५.७०	कृष्णस्सुविदितार्थो वै	२.२६.२६	कृष्णेन ह्रियमाणां तां	२.६०.१	कृष्णमारास कृष्णेन	२.३०.८३
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.१२२.५५	कृष्णप्रभावते वाक्यं	२.१२६.२१६	कृष्णाजिनं च सुभगे	२.७६.३१	कृष्णेङ्गितला जलयुद्ध	२.८६.५३	केचिच्चक्राग्निनिर्दग्धा	२.६३.७८
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.१२२.६१	कृष्णः प्रहरतां श्रेष्ठः	२.१२२.८६	कृष्णाजिनं तिलैःपूर्णं	२.७६.१३	कृष्णो गरुडमास्थाय	२.१२४.२७	केचिच्छन्नभुजाश्चैव	२.६३.१०७
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.१२३.१२	कृष्णं व्रजगतं श्रुत्वा	२.२२.१	कृष्णाजिनोत्तरासङ्गो	१.५४.६	कृष्णोऽथ रौहिणेयश्च	२.२६.३६	केचित्कंसवधाच्चापि	२.५७.३०
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.१२६.१३५	कृष्ण यास्याम्यहं तात	२.४०.३२	कृष्णाजिनोत्तरीयेण	२.२८.४४	कृष्णोऽनुगम्यमानश्च	२.५७.४६	केचित्कवचिनः सज्जा	३.३८.६
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.१२७.२४	कृष्णलीलानुकारिण्यः कृष्ण	२.२०.२६	कृष्णाज्ञया सातिशयानि	२.८६.२८	कृष्णोऽपि कालयवनं	२.५६.३५	केचित्क्षितिस्याः प्राक्रोश	२.११६.११७
कृष्णः कृष्णोऽम्बुदाकारः	२.६३.१०४	कृष्णश्चीदामसहितः	२.१४.१६	कृष्णात्कमलपत्राक्षाद्देवदेवा	२.५०.७	कृष्णोऽपि तद्यथायोग	३.७७.१६	केचित्कुठारैराजघ्नः	३.६८.८०
कृष्णजर्जरितांगस्य	२.२६.३६	कृष्णसंकर्षणी चैव	२.२२.८७	कृष्णात्मजा ये त्वथ	२.८६.४१	कृष्णोऽपि तं गिरिश्रेष्ठं	२.१८.६६	केचित् खरोष्ट्यातारः	१.४३.२४
कृष्णज्वरभुजाघातैः	२.१२२.६२	कृष्णस्तमृषिशार्दूल	२.३६.२७	कृष्णानुज महाभाग	२.१०६.५	कृष्णोऽपि तेषां प्रीत्यर्थं	२.८८.५०	केचित्त्रैव शोचन्तस्सम	२.४४.३२
कृष्ण तात न खल्वेष	२.२४.२१	कृष्णस्तु कुब्जां कामार्त्ता	२.२७.३६	कृष्णायासमप्रख्यौ वर्षे	१.३५.१३	कृष्णोऽपि बलवानेष	२.५२.३०	केचित्प्रदीप्तैरुभयैः	३.६२.२२
कृष्ण तृष्णो हृषीकेश	३.७७.१३	कृष्णस्तु गरुडं भूयो	३.१००.१३	कृष्णापितमनोदृष्ट्य	२.८८.१६	कृष्णोऽपि मूले शैलस्य	२.१८.६०	केचित्प्रदीप्तैर्मुकुटैः	३.६२.२१
कृष्ण दर्शनजातेन	२.३०.५६	कृष्णस्तु तेन नागेन	२.२६.३३	कृष्णा वेणी मुक्तिमती	२.१०६.२६	कृष्णोऽपि यदुभिस्सार्द्धं	२.५५.१२	केचित्प्रविश्य नगर	२.४४.३१
कृष्णद्वैपायनमतं	३.४०.२१	कृष्णस्तु यौवनन्दृष्ट्वा	२.२०.१५	कृष्णाष्टमी या क्षिपति	२.८०.२	कृष्णोऽपि रामसहितो	२.५५.११८	केचित्सिंहमुखास्तत्र	२.१२४.२०
कृष्णद्वैपायनश्चैव क्षेत्रे	१.३२.१३३	कृष्णस्य कृष्णवदना	२.८.३५	कृष्णे च भवतो द्वेष्ट्ये	२.२३.२३	कृष्णोऽपि सुमहावीर्यो	२.५०.१६	केचिदश्रूणि मुमुक्षुः	३.५.४
कृष्णपक्षस्त्वहस्तेषां	१.८.८	कृष्णस्य पादयोर्मूर्ध्ना	२.१२३.१४	कृष्णेच्छया च त्रिदिवानृदेव	२.८६.७४	कृष्णोऽपि सेनया सार्द्धं	२.८३.५३	केचिदारुहृव्याघ्रान्	३.५२.६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१७

केचिदष्टांस्तथा	३.३८.७	केनोपायेन किं कुर्मौ	२.२८.८६	केशी चाप्युन्नतग्रीवः	२.२४.१८	कोटिशश्चापि बहुशो	२.१२२.५०	कौतूहलसमाविष्टो	२.११०.५०
केचिदुष्टग्रस्ता समापेतः	३.६४.२२	के प्रजापतयस्तात	३.७.५	केशी तु दानवश्रेष्ठः	३.५३.२०	कोटिशो वरलब्धं तमसुराः	२.६१.११	कौतूहल हतानां तु	२.७८.१६
केचिद्विधाकृताः शक्त्या	२.६३.१०८	केयूरकुण्डाकुर्मौ	२.१०५.६२	केशी दानवमुख्यस्तु	३.५१.६१	कोट्यश्चतस्रो ग्रामाणां	२.६७.२७	कौतूहलादिदं वाक्यं कृष्णः	२.१५.३
केचिद्बहुत्वेन वदन्ति	३.८०.४६	केयूरयुक्ताङ्गदनद्धबाहुः	३.५१.७१	केशीवक्र विलग्नस्तु कृष्ण	२.२४.४१	को नः कोपपरीतांगी रति	२.३१.६	कौपीनं बहुधाच्छिन्नं	३.१११.६२
केचिद्भीता दिशः	३.१२६.१३	केयूरी चांगदी चैव	३.८३.१८	केसराणां नवैर्गन्धैर्मदनि	२.११.१६	को नाम ईदृशं कर्म	३.६५.३०	कौपीनवसानाः केचित	३.८६.१२
केचिद् भूमिं समालिङ्ग्य	३.१२२.२४	केवलं त्वं तु दर्पेण वृद्धा	२.२३.१४	केसराः पुष्पवर्षैश्च	२.२८.६४	को नाम जीवितं कांक्षे	३.११८.३५	कौ भवन्ती क्वनुयवां	३.८०.१७
केचिदथास्समृदिताः	२.४३.४३	केशवः पुनरेवाह यादवा	२.५६.१४	कैलासं च समुद्दिश्य	३.१२७.२५	को नाम वक्तुमेवेदं	३.६२.२०	कौ मृद्यामथपा पठ्य	२.८०.४६
कचिद्रवतकं गत्वा	२.८८.५२	केशवः सहस्रकिमण्या	२.६१.१४	कैलासमन्दरच्छन्दा मेरु	२.८८.५६	को नामासौ महाभूतः	३.१०७.२१	कौमोदकीं समुद्यम्य गदा	२.६०.३७
केचिद्वरासिना रुग्णा	३.५६.३३	केशवस्त्वरितं दृष्ट्वा	२.६०.२०	कैलासयात्रा कृष्णस्य	३.१३४.२६	को नु नाम जगन्नाथ	३.८३.२२	कौरव्यौ मालवश्चैव	२.३५.४३
केचिद्विनिहिता भूमौ	३.६०.३४	केशवस्य च माहात्म्यं	२.१२८.३५	कैलासवपुषस्तस्य	३.४५.५	कोऽन्वत्र समयो भूयादिति	३.८५.६	कौशल्यः काशिराजश्च	२.३४.१७
केचिन्मुमुचिरे तत्र	२.१२४.३१	केशवस्य वचः श्रुत्वा	२.१२१.३५	कैलासशिखरप्रख्यं	२.१२७.१०५	कोपं यच्छत राजान	१.२.४०	कौशिकस्य सुतास्तात	१.२१.६
केचित्त्वज्जासमायुक्ता	३.६१.१७	केशवायसधूमेन रोषनि	२.३०.६२	कैलासशिखराकारं प्रसन्त	२.८५.३०	कोऽप्ययं दारुरित्याहुः	२.६७.७१	कौशिक्यां श्रुतसोमायां	२.१०३.२०
केतकाशोकसरला	३.४१.६४	केशवेन पुरा विप्र	३.७३.३	कैलासशिखराकारमष्ट	३.५१.५६	को भगवान्कस्य वा	३.८०.४	कौशेयानि च नीलानि	२.४१.३३
केतुना धूमकेतोस्तु	२.२३.२७	केशवेन मतिस्तत्र पुण्यं	२.५६.३०	कैलासशिखराकारैः	२.११८.६८	को मां नाम्ना कीर्तयते	३.१०.३७	क्रतवः श्लाघितः शांताः	२.१०६.६५
केतुना वंशजातेन राज	१.४४.६	केशवेनैव मुक्तस्तु	३.११५.१६	कैलासशिखराकारो	३.५५.१४६	को मोहः किमिदं मौनं	२.११७.४८	क्रतवः संप्रवर्तन्तां दीक्षणी	१.४८.७५
केतुमन्तं महात्मानं	१.४.२१	केशवैवलसंछन्नां	२.१०५.६३	कैलासशृङ्ग प्रतिमो	३.५२.३७	कोऽयं यस्य भयत्रस्ता	२.११६.११२	क्रतुना वाजिमेधेन	३.६६.५२
केतुमाली शरवार्त	२.१०५.४६	केशिदन्तक्षतस्यापि कृष्ण	२.२४.५०	कैशिकः पञ्चभिश्चापि	२.३५.८८	कोऽयं विघ्नं जानामि	२.६.३२	क्रतुभिः परमप्राप्तैः	३.२५.६
केनचिद्यादि कार्येण	२.२०.६	केशिनस्तु तमभ्याशे	२.२४.२०	कैशिकश्च महाबाहु	२.५०.७०	को वान्यः पात्रभूतो	३.७१.२०	क्रतुभिर्यजमानांश्च	३.१०.२७
केनवायमिहानीत	२.११६.१८१	केशी च कृष्णसंसक्त	२.२४.४२	कोकामुखं पुण्यतमं	२.१०६.४०	को वै पिपीलिकरुतं	१.२४.८	क्रतुर्वसिष्ठः पुलह	१.१७.१५
केन सुप्तप्रहारोऽयं	२.३१.३६	केशी चापमहावीर्यो	२.४६.५१	कोटि कोटि शत गुणै	३.१७.११	कोटीर्यां मदिरां चंडामिला	२.१२०.१६	क्रथकैशिकभर्ता तान्प्रति	२.५६.३२

क्रथकैशिकमुखास्तु	२.५६.११	क्रीडन्तिव महातेजा	२.१०५.६	क्रोधाद्विगुणरक्ताक्ष	३.६०.४०	क्व दाराः क्वच संयोगः	१.४५.४२	क्षमस्व भगवन्देव	३.८७.३७
क्रथकैशिकौ च वीरो	२.५०.७८	क्रीडां च सागरे दिव्यां	२.६१.२	क्रोधाद्विगुणरक्ताक्षो	२.६३.५०	क्व नः संग्राम इत्येवं	३.११८.४५	क्षमा त्वत्तः प्रभूता च	२.११०.५२
क्रमं प्रणीय पाञ्चाल्यः	१.२४.३२	क्रीडा विहारेनारिभिः	२.११६.२७	क्रोधानिलसमुद्धूत चक्र	२.५३.३६	क्व नु क्व वा नन्दसूनु	३.११६.३	क्षमादयश्च मेदिन्यां	२.६६.४४
क्रममाणं हृषीकेशमुपा	३.७२.२७	क्रीडा विहारे मिलिताः	२.११७.५७	क्रोधान्तिः श्वसतस्तस्य	१.४७.३६	क्षणं चिन्तयतामत्र	२.१२२.४४	क्षमा मोक्षकरी नित्यं	३.११२.१८
क्रमाद्यो वेदसंस्कारं	३.२४.६	क्रीडा विह.रोपगतः	२.११७.१	क्रोधेन ज्वलतस्तस्य	२.१२.८	क्षणा लवाश्च काष्ठाश्च	१.४०.३३	क्षमा स्वर्गस्य सोपानमिति	३.११२.१६
क्रमेण प्राणानुन्मुच्य	३.८१.२१	क्रीडाविहारोपगतः	३.१११.३	क्रोशमात्रमुपपन्नज्य	२.५१.७१	क्षणेन तद्रजस्थानमीरणं	२.६.१६	क्षयवृद्धा तवाव्यक्ते सागर	१.४६.४
क्रमेण सप्तस्कन्धान्स	२.६३.४०	क्रीडावृक्षः स शच्येति	२.६८.१७	क्रोष्टुहि वंशं श्रुत्वेमं	१.३३.६२	क्षणेन भस्मसानीता	२.१२.११	क्षरज्जलानां शैलानां	२.१०.२८
क्रव्यादानि च भूतानि	२.१२६.१२६	क्रुत्राय पुष्पजातिर्वा	२.८६.४८	क्रोष्टोरेवाभवत्पुत्रो	१.३६.१	क्षणेन समनुप्राप्तो द्विजेना	२.६३.४५	क्षान्तमेव तवानेन वसुदेवेन	२.२३.३६
क्रव्यादाः सर्व एवाशु	३.६६.१	क्रुद्धः शरसहस्रेण	२.१०५.३२	क्रोष्टोस्तु शृणु राजेन्द्र	१.३३.६१	क्षणैव प्रमाणं स	१.१७.११	क्षान्तेषु गुणवाहुल्यं	२.५१.३८
क्रव्यादैरनुयातानि मूर्ति	२.३५.५८	क्रुद्ध स्ततो दैत्यबलं	३.६०.१३	क्लृप्ततरत्नसमाकीर्णा	१.५२.६	क्षतजादिग्धवस्त्रा वं	२.१०५.८३	क्षान्तोऽयमिति मन्तव्यं	२.५१.४०
क्रियतेऽसार संसारे	३.१३२.६८	क्रुद्धस्त्वाशापयामास	२.१०४.४१	क्व इदानीं महाबुद्धि	३.६५.२७	क्षतजोक्षितवक्त्राश्च	२.१०५.५६	क्षिपन्ति सख्यो हृदये	२.११७.३४
क्रियन्त चैव कालं	३.७.३	क्रुद्धोऽथ बलभद्रस्तु	३.१२६.३५	क्व च द्रक्ष्यामि तौ	३.११८.१३	क्षत्रवृद्धात्मजस्तत्र	१.२६.६	क्षिपन्त्यस्त्राणि दिव्यानि	३.५५.१४३
क्रियन्तो वै पितृगणा	१.१८.३	क्रुद्धो हि स महाबाहु	२.११६.१४	क्वचिज्जानुभिरुघृष्टः	२.७.६	क्षत्रियाणां वपुर्भिश्च	१.५१.२०	क्षिप्तं तु वासुदेवेन	२.१२६.१२६
क्रियासत्र महाघोरा	३.३४.३७	क्रुद्धोऽथ सात्यकी	३.१००.१६	क्वचित्कदम्बहासाढ्यं	२.१०.११	क्षत्रियाणां च भगवान्	२.८५.६७	क्षिप्तमिः पवनेरद्भिः	१.५३.३१
क्रीडता वासुदेवेन	२.१०१.३६	क्रूरां च बुद्धिमतुलां	३.३८.४	क्वचिद्गायन्क्वचित्क्रीड	२.११.११	क्षत्रिया भरतश्रेष्ठ	१.११.८	क्षिप्ते पितरि चुक्रोध	२.३०.७१
क्रीडन्त बहुधा युद्धे	२.११६.१२४	क्रोधमूर्च्छित वक्त्रस्तु	३.५६.२	क्वचिद्दिनसंकाशैः	२.१५.१६	क्षत्रिया विकृति प्रज्ञाः	२.४७.१७	क्षिप्त्वा ये प्रपलायन्ते	२.८७.२०
क्रीडन्ति भैमाः प्रसवो	२.८६.८५	क्रोधरक्तान्मुखात्तस्य	२.३०.६४	क्वचिद्वसन्तावन्योन्यं	२.८.६	क्षत्रियाः सन्निविष्टास्ते	२.८३.५२	क्षिप्यमाणोऽसुरेन्द्रेण न	१.४८.२३
क्रीडन्ति वन्यरतयः	३.८४.८	क्रोधसंरक्तनयनः	३.५५.११५	क्वचिद्वसन्तावन्योन्यं	२.७.८	क्षन्तव्यं भवता विप्र	३.११२.१७	क्षिप्रं प्रसाध्यतां कंसः	२.१६.७२
क्रीडन्त्या रैवतोद्याने	२.६०.६८	क्रोधसंरम्भताम्राक्षो	३.५५.१२	क्वचिद् वृक्षे तमासकं	३.१३०.४	क्षन्तव्यं भवता सर्वं	३.११२.२	क्षिप्रं यदुवृषं हृष्ट्वा	२.२३.१
क्रीडन्तिव च युद्धेषु	२.११६.१८२	क्रोधात्मासि विरुपोऽसि	३.६०.७	क्व ते स मुकुटो वीर	२.३१.६	क्षन्तव्यमिति यत्प्रोक्तं	२.५१.३६	क्षिप्रं विशन्तु यूथानि	२.१८५.५५

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

३६

क्षिप्रं समभिवर्तन्तां मम	२.४३.२६	क्षुरैः क्षुरैर्प्रभल्लैश्च	३.५६.५२	खड्गो नन्दकनापासो	३.६१.११	गंगाद्वारं कनखलं	२.१०६.३७	गच्छमन्दमते विप्र	३.११८.२६
क्षिप्रमाज्ञापय विमोक्तय	१.५३.८	क्षुवतश्च मनोस्तात	१.११.१२	खड्गो प्रगृह्य चात्युग्रो	३.१२५.१४	गंगामुपागमत्तूष्णं	२.१२२.१८	गच्छ मास्तु देवेशमनु	२.५८.७१
क्षिप्रमेव वधिष्यामि	१.४८.१७	क्षेत्रज्ञा मानसे लोके	३.२२.२५	खमस्थिराणां विषयो	२.१६.३३	गङ्गायामुनयोर्मध्ये	३.३१.५	गच्छ सोम सहायत्वं	१.४६.२
क्षीण प्रहरणाः केचिन	३.६०.५६	क्षेपणाद्यस्य मुह्यन्ति	१.४८.४४	खर इत्युच्यते दैत्यो	१.५४.७५	गङ्गा यत्र सरिच्छ्रेष्ठा	३.७६.२२	गच्छाम ब्रह्मसदनं	३.६६.१६
क्षीणमस्य तपो वध्यो	२.६६.५७	क्षेमधन्वसुनस्त्वासी	१.१५.२६	खरस्तु विभरन् दपति	१.४३.१६	गङ्गायामुनयोर्मध्ये	१.४१.१६६	गच्छामो वयमन्यत्र	३.८०.५३
क्षीणाकारासु तारासु	२.२६.३४	क्षेमधन्वा दृढायुश्च	१.७.७३	खराः खरमुखाश्चैव	३.४५.१	गङ्गायाश्चोत्तरे तीरे	३.७८.२	गच्छहि लम्बे शीघ्रं	२.१२६.१०६
क्षीणां जवेन च हयाम	१.३६.१६	क्षेम्यप्रचार बहुलं हृष्ट	२.५.२५	खरोष्ट्रवदनाश्चैव वराह	१.४१.६३	गंगा वैकुण्ठकेदारं	२.१०६.४३	गजदन्तं कृतोल्लेखं सुभुजं	२.३०.२
क्षीणास्त्रां सायकाक्रान्ता	३.६१.४२	क्षेम्यस्य केतुमान्पुत्रो	१.३२.३७	खजुरा नालिकेशश्च	३.४१.७२	गंगा सरस्वती चैव	२.७७.१५	गजवाजिखेरोष्ट्राणां	२.५७.२२
क्षीणो कलियुगे तस्मिन्ततः	१.४१.१६६	क्ष्वेडयन्तो प्रगायन्तो	२.१४.३	खसांस्तुषारांश्चोलांश्च	१.१४.१०	गंगेयं निम्नगा धन्या	२.११०.३८	गजवाजिरथौघैश्चकाल	२.६३.६६
क्षीरवत्यस्त्वित्वा गावो	२.१५.१०	क्ष्वेडितास्फोटितरवं कृत्वा	२.२६.२८	खाण्डवे चार्जनरथं पुरा	२.७०.१५	गच्छ गच्छेति विप्रत्वं	३.११८.२८	गजाश्चान्यसंयुक्ताः	२.१८.१०
क्षीरसंकाशसलिलां	३.३५.२६	क्ष्वेडितास्फोटितरवं मेघ	२.३५.२३	खाद खादत मोदेत	३.७८.६	गच्छते परमं ब्रह्म	३.१७.६४	गजानीकैरिवाकीर्णं सलिलो	२.१०.३७
क्षीराद्यथा दधि भवेद्दध्न	१.४६.२१	क्ष्वेडितास्फोटितोत्क्रुष्टै	२.३५.६६	खुरैर्दारयते भूमिं वेगेना	२.२४.१०	गच्छतोः समितिं राजन्	३.१२१.१७	गजान्नागीः समाहत्य	३.१२६.८
क्षीराण्ये मध्यमाने	२.२८.८०	ख		खुरोद्धृतावसिक्तेन	२.२४.२६	गच्छत्युर्ध्वगतिं घोरो	३.५५.१३६	गजान्सिंहांश्च व्याघ्रांश्च	३.२०.११
क्षीरिण्यो द्विगुणं गावः	२.१६.३०	खड्ग ग्राह्य यत्नेन	३.८४.२२	खेवराश्च निशापुत्राः	३.४७.१०	गच्छ त्वं कामतो वीर	३.६५.३७	गजावैरावण सुतो	२.६७.३६
क्षीरोदधिक्षोभसमुच्छ्रितानि	३.५२.१६	खड्गचर्मधराः केचित्केचित	२.६३.६८	ख्याता चर्मण्वती चैव	२.१०६.२४	गच्छ त्वयं वसुमती स्वां	१.५३.६५	गजाश्चरथसंवाधा	२.४८.४१
क्षीरोदः सागरश्चाहं	३.१०.६०	खड्गचर्मबलोदग्ः पत्रिभि	२.४२.५	ख्याता वेत्रवती चैव	२.१०६.३१	गच्छ दानपते क्षिप्रं	२.२२.८५	गजाश्चोष्ट्रैर्क्षमाजिरसिह	२.१०६.६६
क्षीरोदस्योत्तरे कूले	३.६७.६	खड्गध्वजेन महता	३.५०.६	ग		गच्छ ध्वं मन्त्रियोगेन	२.१०५.३६	गजाः सिंहाश्च	३.२२.२२
क्षुधा च सर्वभूतानां	२.३.२०	खड्गमद्यम्य तान्सर्वास्त्रा	२.६१.४८	गगनालग्नशिखरं जल	२.४०.७	गच्छ ध्वं सहिताः सर्वे	२.११६.८१	गजेन गजमास्फाल्य	२.५३.३२
क्षुरकर्म ततो भतुं रात्मन	२.७६.६	खड्गेन चान्यांश्चिच्छेद	३.५६.३६	गंगया व्रतकं दत्तं	२.८१.२६	गच्छ नारद वक्तव्यः	२.७०.४२	गजेन गजवृन्दानि रथेन	२.४६.५४
क्षुरच्छिन्नैः शिरोभिश्च	२.६६.४६	खड्गैश्च मुशलैस्तीक्ष्णैः	३.५६.८४	गंगातीर्थं कुरुक्षेत्रं	२.१०६.३६	गच्छन्तु तपसा	३.४०.६	गजेनासाद्य कंकस्तु	२.५६.७०

गजेन्द्र इव संस्तम्भं	२.६१.४६	गतिः कालस्य सा येन	२.३२.४७	गत्वा स्नानं प्रशस्तं	२.७८.३४	गदाभ्युपिण्डस्ताश्च	३.७२.१६	गन्धर्वनगराकारस्त	३.५५.१४४
गजेन्द्रचर्मवसनास्तथा	१.४१.६६	गतिमेतामप्रमत्तो मार्कण्डेय	१.१८.७६	गत्वाहं रवे समास्थप्य	२.५५.१०२	गदाभिः पट्टिशैः शूलैः	३.६८.१८	गन्धर्वाः किन्नरा	३.२२.२०
गजेन्द्रभुजगाकीर्णामृक्षवान	२.५५.६	गते ऋषीणां प्रवरे	२.११६.१६८	गदं कार्ष्णिस्तदोवाच	२.६६.५६	गदाभिरसिभिः प्रासैर्भल्लैः	३.५६.८	गन्धर्वाः किन्नराश्चैव	३.२६.६
गजेन्द्रान्भिन्नवदनान	२.१०६.१६	गते कृष्णे ततो नन्दी	२.१२६.१४२	गदया च जघानाश्वा	२.३५.६२	गदाभिश्चैव गुर्वीभिः	२.४३.३४	गन्धर्वाः किन्नराश्चैव	३.२८.६६
गजैर्गजा हयैरश्वाः	२.३६.५	गतेऽथ गहडे विष्णू	२.१००.१६	गदयाभिहतः सोऽश्वस्त्य	३.५७.६८	गदां गृह्य महाघोरा	३.१०२.४	गन्धर्वागमनं श्रुत्वा	१.२६.२४
गजैर्गजा हिंसक्रुद्धा	२.५६.७८	गतेऽथ गहडे विष्णू	३.१००.१६	गदयैव जघानाशु	३.६६.११	गदां गृह्य महाघोरां	३.१२३.६	गन्धर्वाणिमधिपतिस्तथा	३.३७.१२
गणः क्रोधवशो नाम	३.४७.८	गते भूतपती सर्वे नृपा	२.६६.१७	गदश्च धीमानथ सारण	२.८६.१६	गदां सघण्टामन्येन	३.३२.३७	गन्धर्वाणां च याः कन्या	२.६३.१२
गणः प्रजज्ञे क्रोधायाः	३.३६.३८	गतेऽर्द्धरात्रसमये	२.११२.७	गदः सुनामभवधीद्यतमानं	२.६७.१६	गदावेगं च ते वीर	२.१२१.६६	गन्धर्वाणामधिपति	१.४.१०
गणानां कालकेयानां	३.३७.१५	गते शक्रं ततः कृष्णः	२.२०.१	गदाकृत समाचारं	३.८७.४	गदिनः खड्गिनश्चैव	२.६८.१७	गन्धर्वाधिपतिः श्रीमांस्तत्र	२.६६.१३
गणास्तथा परे रौद्रा	३.४६.७६	गतेषु तेषु गोपेषु	२.६.३१	गदा कौमोदकी नाम	३.६०.१०	गदिने खड्गिने तुभ्यं	३.६०.२४	गन्धर्वाप्सरश्चैव रुद्रा	१.५३.६६
गणास्तान्युपभुञ्जन्ति	२.६८.२३	गते स्वभावसंस्थानं	३.३३.२७	गदा तोमरनिस्त्रिं	३.५७.४८	गदिनो ये गदाभिस्ते	२.३५.५०	गन्धर्वाप्सरसश्चैव	२.१०५.५५
गणिकानां पृथङ्मञ्चाश्च	२.२६.६	गतो यत्र महातेजा	३.५५.१४७	गदानिपातविहता लांगलेन	२.४३.३७	गदिनो वै गदाभिश्च	२.४२.३६	गन्धर्वाप्सरसश्चैव	२.१२७.१०२
गणिकानां सहस्राणि	२.८८.७	गतो वैवस्वतवश	२.११५.२२	गदानिपातैर्भग्नाङ्गा वाणै	१.४७.२८	गदी शरो महावीर्यः	३.६५.१६	गन्धर्वाप्सरसां चैव	१.४.१५
गणितस्याथ योगस्य	१.४.१७	गतोऽहं देवसदनं सौवर्णं	२.२८.४६	गदानिपातो रामस्य शुश्रुवे	२.३६.२०	गदे गृहीत्वा विक्रान्तो	२.३६.१३	गन्धर्वा मुनयश्चैव	२.५०.६४
गण्डशैलेश्च परिघैश्चोत्त	१.४३.२६	गत्वा च दूरमध्वानं	२.१२७.११६	गदानिपातो रामस्य शुश्रुवे	२.४३.६६	गदेन चेदिराज्य	२.३६.३	गन्धर्वेभ्यो वरं लब्ध्वा	१.२६.४७
गण्डशैलेश्च विविधै	३.३८.१६	गत्वा च प्रोचतुरुभो	३.१०७.३०	गदापरिधीनस्त्रिशैः	३.५०.३	गदेन सह धर्मात्मा	२.८४.४६	गन्धर्वैर्गीत कुशलं	३.१३२.४३
गण्डूषाय त्वपुत्राय	१.३४.३५	गत्वा तु सा सखीमध्ये	२.५२.५१	गदापरिघनिस्त्रिशै	३.५६.४३	गन्तव्यं तत्र युष्माभि	३.१०७.५	गन्धानां चैव सर्वेषां	३.३७.७
गत इत्येवमस्माभि	३.६५.४१	गत्वा तु हिमवत्पार्श्वं	३.१०५.२	गदापरिघयुद्धेषु सर्वास्त्रेषु	२.३३.२५	गन्तुं हि भरतश्रेष्ठ	२.११५.५	गन्धैर्माल्यैश्च ता दिव्यै	२.८८.४७
गतः सूर्यसखं तात	२.१.६	गत्वाऽऽप्रवेश्यमन्येषां	२.६१.४०	गदापरिघसंपूर्णं मूर्ति	१.४३.५	गन्धवत्यः शुभ्रास्तत्र	३.४१.६३	गन्धैश्च धूपमाल्यैश्च	१.२६.५०
गतासु तासु सर्वासु	२.१२८.१८	गत्वा यूयं विदर्भायां	२.५०.५२	गदापर्वण्यपि तथा	३.१३२.६६	गन्धर्व इव गायस्तु	३.८३.१६	गमनागमनं चैव दिवि	२.६७.३४

श्रीहरिवंशपुराणम् ॥ श्लोकानुक्रमणी

गमनाय च ते सज्जा	२.२६.२८	गर्जितेन च मेघानां पर्जन्य	२.१८.१६	गाता चतुर्णां वेदानां	२.२८.४५	गालवोत्पत्तिरिक्ष्वाकुवंश	३.१३४.३	गिरीणां पात्यमानानां	३.१२८.५
गम्यतां तत्र धर्मज्ञ	२.७२.६५	गर्दभारुणसंस्थानै	२.७५.१७	गाथा अण्यत्र गायन्ति	१.४१.१४६	गावः क्षीरप्रदानेन	२.२६.३०	गीतनृत्य विधिज्ञानां तासां	२.८८.३६
गरिष्ठश्च वरिष्ठश्च	१.४१.८७	गर्भकाले त्वसंपूर्णे	२.४.११	गाथाभिस्तत्प्रदंष्टाभिर्वै	१.५०.१६	गावः पशुगणैः	३.२२.२१	गीतनृत्य विधिज्ञानां तासां	२.८८.३७
गरुडः कश्यपसुत	३.८४.२०	गर्भकृन्तनमेतन्मे सहनीयं	२.४.५६	गाथा रचाप्युशनोगीता	१.२०.११६	गावश्च मत्प्रिययार्थं वै	२.१२७.१२८	गुणको नाम तत्रासी	२.२७.१६
गरुडं पक्षिराजनमयत्ने	२.७३.१०	गर्भवासे पतन्तश्च	३.१५.६	गाविः सदारस्तु तदा	१.२७.२३	गावस्तैनेव मार्गेण	२.१८.६५	गुणत्रैकाल्यं यस्य देवस्य	२.७२.५७
गरुडं पतगश्रेष्ठं मूर्ति	२.६४.२०	गर्भस्थानामपि गतिविज्ञेया	२.१.२८	गाधेः कन्या महाभागा	१.२७.१७	गावो नक्षत्रवंशाश्च	२.१२०.२६	गुणबुद्ध्या तु भगवान्	१.१३.६
गरुडस्थेन चोत्सिक्तः	१.४०.२३	गर्भस्थेन तु देवेन	३.६८.२०	गान प्रभाषं संचक्रे	३.२०.६	गावो वर्षभयात्तीर्णा	२.२०.३	गुणास्तासां मया ख्याता	२.६६.२८
गरुडस्य च संग्रामो	२.१२६.७८	गर्भचित्स्त्रवतेतोयं	३.१२.६	गान्धर्वजातिश्च तथा	२.८६.७६	गावो हि पूज्यास्तततं	२.१६.४५	गुणान्देवावृषस्याथ	१.३७.१३
गरुडस्योपरि श्रीमाञ्छङ्ग	२.६३.४७	गर्भविकर्तनादीनि दुःखानि	२.२६.२३	गान्धर्वी चोर्वशी देवी	१.२६.१२	गाश्च ते रक्षतो विष्णो	१.५५.४३	गुणान्स रुद्राक्षकृतान्स	३.८५.१२
गरुडादवरुह्याथ दीपिकादी	२.७६.३६	गर्भे तु नियतो मृत्यु	२.४.६०	गान्धर्वेण विवाहेन	२.६४.११	गाश्च दत्त्वाथ विप्रेभ्यो	३.७४.२	गुणोत्तरानुत्तरस्यां	३.३५.३६
गरुडाभितः पूर्वं नाति कल्पो	२.७४.८	गर्वहन्तृ सदा तस्य	३.६१.८	गान्धारदेशजाश्चैव	१.३२.१२७	गाश्च सूर्यो रसान्सोमो	१.४८.७६	गुणो मंहास्तोयदकालजो	२.६५.२४
गरुडाभिहतास्सर्वे	२.४७.३०	गर्हता वसुदेवं च यदुवंशं	२.२३.१८	गान्धारराजस्सुबलो नग्न	२.३४.२०	गाश्च हत्वा महगर्वस्तव	३.१००.३३	गुरुत्वान्मेरुतुल्यस्त्वं	२.१२१.१११
गरुडा हृतकाष्ठं तु	३.८७.३	गवां तत्कदनं दृष्ट्वा	२.१८.२६	गान्धारी चैव माद्री	१.३४.१	गिरयश्चाभिषोभन्ते	३.२७.३	गुरुभावेन वाक्येन	३.१७.३१
गरुडे सम्प्रयातेऽभून्	२.१२७.४२	गवारोहेषु चपलस्तरुघाता	२.२१.६	गान्धारी जनयामास	१.३८.११	गिरयः सागरा नद्यस्तथैव	३.१३२.८	गुरु सान्दीपनि कृष्णः	२.३३.१०
गरुत्मानिव चाकाशे	३.५५.१२५	गवेषणस्तु चैद्यं तु	२.५६.५८	गायद्गान्धर्वमुख्यैश्च	३.११५.४	गिरिणा कम्पमानेन	२.१८.४०	गुरोरनवलित्तस्य मान्य	२.२३.११
गरुत्मान्विततैः पक्षैः	३.२८.३८	गव्यूतिमात्रं चिक्षेप	३.१२६.४३	गायनो लक्ष्यवीथीं स	२.२८.११२	गिरिः पुष्पितकश्चैव	३.४६.५६	गुर्वथं मे प्रयच्छस्व	२.७१.११
गर्जतस्तस्य वाक्यौघा	२.१२६.४५	गाङ्गदेवव्रतं नाम पुत्रं	१.३२.१११	गायन्ति त्वां च मुनयो	३.४७.१८	गिरि च शिखरं चैव	२.३५.४५	गुल्फदघ्नं जानुदघ्नं	२.८८.२४
गर्जित्वा तु यथाकामं	३.४५.१६	गाढमालिङ्ग्य तो प्रीतो	३.१३०.१८	गाखुडेनापि चास्त्रेण	३.६१.३१	गिरियज्ञप्रवृत्तेन नाम	२.१७.३६	गुहः प्रज्ज्वाल रणे	२.१२६.१४
गर्जन्ति पुरुषं मेघा	२.१०५.२२	गाणपत्य मवाप्याथ	३.८४.७	गार्ग्यः पृथुस्तथैवान्यो	३.६६.६	गिरिशृङ्ग प्रहन्तारिः सर्वे	१.५३.७३	गुहश्च बाणगुप्त्यर्थं	२.१२२.४३
गर्जन्तो विनदन्तश्च	३.५६.४४	गांडीवं चाग्निन तत्तं	२.११५.१७	गार्ग्यस्य हि सुतं बालं	१.३०.१०	गिरिशृङ्गमिवोत्पाद्य	३.६०.७१	गुह्यकानां च सर्वेषां	३.८८.५८

धीहरिवंशपुराणम् ॥ श्लोकानुक्रमणी

४२

गुह्यकाश्च सगन्धर्वा	३.१३२.७	गृहीत्वा शासनं मूर्ध्ना	२.५८.६४	गोपायसि यथा तात	२.५.७	गोयानमुष्ट्रयानं च	२.७८.३२	गोहत्यायाः प्रमुच्येत	३.७२.६६
गह्यं भागवतं देवं	२.२६.४३	गृहीत्वा स गदां भीमां	२.५३.४७	गोपाल इव दण्डेन	३.५६.६२	गोरेषा तु यतो वारणी	३.८८.५०	गौतमस्यात्मजश्चैव	१.७.४८
गूढ गुल्फशिरौ पादा	२.८०.४३	गृहेषु भवतां भुवतं गावश्च	२.४६.१६	गोपालवेषमास्थाय	२.१४.१३	गोलक्रीडां सुधर्मायां	३.१११.४	गौतमी कंसभयदा	२.१२०.७
गृध्रचक्राकुलं व्योम	२.१०७.३	गृह्णीत तदिमां विद्यां	२.६४.४७	गोपालांश्च बलोदग्रान्योध	२.२०.१७	गोलक्रीडां समासकतं	३.१११.११	गौरमग्निशिखाकारं तेजसा	२.३६.२२
गृध्रहंससमाकीर्णा	३.६०.६	गृह्यतां तामसी विद्यां	२.११६.१६	गोपालास्त्वपरे गाश्च	२.१७.३७	गोवर्धनधरश्चैव	२.१२१.११६	गौरिकः पर्वतेष्वेव	२.१२३.२७
गृहमेधं परित्यज्य	३.१०८.२	गृह्यन्तां वसुमुख्यानि	३.६५.६	गोपाली त्वप्सरस्तत्र	२.५७.१४	गोवर्धनस्यानुचरौ	२.७०.१६	गौरी सिद्धेति व्याख्याता	३.२७.४२
गृहस्थ एव धर्मात्मा	३.१०७.२२	गृह्यन्तां वेश्मवास्तूनि	२.५८.६	गोपालैर्देशकालज्ञैरुपानी	२.४६.२२	गोवर्धनस्योत्तरतो यमुना	२.१४.७	गौर्वाथ काञ्चनवापि	२.७६.४८
गृहस्थधर्मनिरता	३.२४.५	गृह्यन्तामाशु वध्यन्तामिति	२.६६.२७	गापिभिरास्वाद्यसुखं	३.८२.२८	गोवर्धनस्योत्तरतो यमुना	२.१३.३	ग्रथितां सविशेषां तां	२.८६.४५
गृहस्थश्च सदा माता	३.१०७.२३	गृह्य मूर्ध्ना तु चरणौ	२.१२.४३	गोपीनां गर्गरीभिश्च	२.६.१५	गोवर्धनेऽथविश्रम्य	३.१२६.१५	ग्रसमानमनीकानि	३.५५.११८
गृहस्थानभिवाक्येन	३.१७.३३	गोकर्णस्यो परिष्ठात्तु	२.६०.२३	गौपीनां स्तनमध्ये	३.८२.२७	गोवाटेष्वपि ये वृक्षा	२.८.११	ग्रस्तः स्वभानुना सूर्यो	२.२३.३१
गृहाण दैवि उत्तिष्ठ	२.११७.४५	गोकुलेऽम्बुधरस्याम	२.११.१३	गोपीषु च यथाकामं	२.८.३३	गोवालरज्जुसुकृतं चामरं	२.८०.४	ग्रहनक्षत्ररचितं सार्कचन्द्र	३.६१.६४
गृहाण मे जगन्नाथ	३.८३.४	गोत्रमुद्दिश्य कृष्णस्य	२.८८.१८	गोपोऽहं सर्वदा राजन्	३.१००.४१	गोविन्दमरविन्दाक्षं	२.२४.२८	ग्रहाः प्रकृतिमापेदुरुहर्नद्यो	२.८७.३७
गृहाण वैष्णवं चास्त्रं	२.१०६.४५	गोघाशल्यकवक्त्राश्च	१.४१.६५	गोभिश्च समकीर्णामि	२.२६.३६	गोविन्दरामौ संप्राप्तौ	२.३३.३४	ग्रहाय व्यजनं चैव स्थित्वा	२.६६.१४
गृहाण शम्बरं त्वं	२.१०६.३८	गोपकन्यामुपादाय	१.३५.१४	गोमन्तं पर्वतं द्रष्टुं	२.४०.२	गोविन्दरामौ संप्राप्तौ	२.४५.८	ग्रामणीश्चैव गोपालो	२.१०६.७५
गृहाण शस्त्रमात्मानं	२.६६.३५	गोपलास्त्वपरेद्वन्द्व	२.१४.२०	गोमन्तस्य गिरेर्दाह	३.१३४.१६	गोविन्दस्याभिषेकं	३.१३४.१३	ग्रामणीः सर्वभूताना	३.३३.४४
गृहीतदीपिकाः सर्वे	३.६४.३	गोपवृद्धस्य वचनं श्रुत्वा	२.१६.१	गोमन्ते युद्धमार्गेण	२.४४.१७	गोविन्देन हतं दृष्ट्वा	२.२१.२३	ग्राम्यारण्यातां त्वं	२.७४.२३
गृहीतानि विमुक्तानि	३.१३३.२६	गोपवेणुं सुमधुरं	२.११.१२	गोमन्ते सुमहद्युद्धं	२.४६.५३	गोव्रजं गोस्तं रम्यं	२.५.२२	ग्राहुरूपेण यो नीत आनीतो	२.४१.४६
गृहीतो राहुणा चन्द्र	३.४६.१५	गोपानां तद्वचश्श्रुत्वा	२.२४.२४	गोमायुः सूर्यवचश्चि	३.६६.११	गोशृगं दक्षिणं सिच्य	२.७८.२१	ग्राह्या लालयितव्याश्च	३.५.४०
गृहीत्वा निर्ययुहं ष्टा	२.१०४.४७	गोपानां वचनं श्रुत्वा	२.२०.१०	गोमुखाडम्बराणां च	३.५४.२	गोषु चापि भवेत्कामो	२.६४.१४	ग्रीवादितिर्महादेवी तालुः	३.७१.४६
गृहीत्वा वासुदेवाय	३.१०१.१०	गोपयन् यः कुरुते	१.४०.१२	गोमूत्रं च तदा प्राश्येच्छिर	२.८०.७	गोषु चैव प्रहृष्टासु	२.१६.५३	ग्रीवा बाह्वन्तरं चैव	३.१७.५१

ग्रीवा निगृह्य पृष्ठं	३.१७.३५	चकर्ष च महारङ्गे	२.३०.८२	चक्रलांगलपातैश्च	२.१२४.३	चक्षुर्ध्यानां तथा स्पर्शो	३.८८.२४	चतुर्थं वाजपेयस्य	३.१३२.३०
ग्रीष्मान्ते वायुसंमूढा	३.२७.१७	चकार गमने बुद्धि	२.१२७.३३	चक्रवर्ती सुतो यज्ञे	१.३२.१०	चक्षुर्दत्त्वा सविज्ञानं देवानां	१.१८.८१	चतुर्थस्य तु सावर्णे	१.७.७४
घ		चकार च नमस्कार	३.३४.४५	चक्रवाकस्तनतटाः	२.१६.१६	चक्षुषा रूपसंपन्ना	३.२०.३	चतुर्थं दिवसे वापि पुण्य	२.८१.२५
घटाः किं बहवो मातर-	३.१३०.१०	चकार तस्य शृङ्गेणु	३.३५.४४	चक्रवाकस्तनतटीं तीर	२.११.३६	चक्षुषी तस्य निर्भिन्ने	१.२०.३०	चतुर्थो यस्तृतीयस्य	२.१२३.२३
घण्टाकर्णोऽस्मि नाम्नाहं	३.८०.२३	चकार त्वरया युक्तो	३.५६.२६	चक्राक्षयुगशस्त्रैश्च	३.५८.७२	चक्षुषी मानुषे राजन	३.३२.३२	चतुर्दशतपस्तप्त्वा	१.४१.१३०
घण्टाय घण्टभूषाय	३.८७.३३	चकार निन्दं घोरमम्बरे	३.५८.४१	चक्रानलज्वालहतास्सादिन	२.४३.४०	चक्षुषो रूपसंपन्नाः	३.२०.८	चतुर्दशभिरत्युग्मो	३.५५.४८
घनाव्यक्ष मनुह्लादः	३.६०.१	चकार महतीं पूजां	२.५५.१८	चक्रानलविनिर्दग्धा	२.४६.३३	चचार पृथिवीं सर्वा	१.२६.३१	चतुर्दश शिलाघोतान्त्साय	३.५५.४५
घनी भूतानि यान्यासन्	२.८.१०	चकार वायोराह्वानं भूयश्च	२.५८.६७	चक्रायुधात्मजः क्रुद्ध	२.१०४.३४	चचार रुचिरं कृष्णो	२.११.४१	चतुर्दशश्चर्वाहुः	२.१२१.१३६
घनीर्घैर्वर्षमाणास्तु संप्राप्तः	२.५५.७४	चकार विधिवत्सर्वा	३.१०४.१५	चक्रायुधो मोक्षयिता	२.१२०.४१	चचारोमा व्रतं देवी	२.७७.११	चतुर्दश सहस्राणि	२.६३.१३
घर्मदोषपरित्यक्तं मेघतो	२.१०.४१	चकोराः शतपत्राश्च	३.४१.७५	चक्राशनीस्तथाखड्गान	३.३८.५	चञ्चद्विद्युदणाविद्धा घोरा	१.४२.१४	चतुर्दशेऽथ पययि	१.७.८३
घृतपूर्णेषु कुम्भेषु	१.१५.६	चक्रक्षुर निकृन्तानि	२.४३.३८	चक्रीभव गदी राजञ्छाङ्गी	३.१००.३७	चण्डीं कात्यायनीं	२.१२०.४	चतुर्द्विगुणपीनांसं	१.४२.२३
घृतं च नित्यं विप्रेभ्यो	२.८०.५०	चक्रताडनजा घोरा रुजा	२.१२६.१५५	चक्रुः परिचयं ते च देव	२.६२.६	चतस्रो जज्ञिरे तेषां	२.१०३.६	चतुर्धा तेजसो भागं	२.२२.४४
घृतीदनं पुरस्ताच्च	३.१३२.६७	चक्रतुयुद्धमतुलं	३.१२७.१६	चक्रुर्हंसन्त्यश्च तथैव रासं	२.८६.७	चतुरङ्गं बलं सर्वं	३.२६.२०	चतुर्भिः पार्श्वविस्तारं	३.१७.१०
घोरं वैष्णवमत्युग्रं	२.१२३.७	चक्रदेवी दन्तवक्त्रं विभेदो	२.५६.६४	चक्रुस्तस्य सुरेशस्य	३.६६.२३	चतुरङ्गं बलैर्व्यूह	२.३५.५२	चतुर्भिर्वदनैस्तस्य	३.१७.२८
घोस्माशीविषं कृष्णः कृष्णः	२.५७.३३	चक्रपाणिस्तदा शंखी	३.१२०.६	चक्रुस्ताम्यां महायुद्धं	३.१२७.११	चतुरङ्गस्य पुत्रस्तु	१.३१.४८	चतुर्भिर्व्यतिरिक्ता	३.२६.३१
घोराश्चिन्तयतस्तस्य	२.८.३१	चक्रं च तिलशः कृत्वा	३.६६.२८	चक्रुस्तैथवाभिनयेन लब्धं	२.८६.६	चतुरङ्गा धरां कृत्वा	३.३५.४	चतुर्भिः सचिवैः साद्धं	२.१०५.१८
घोषवासिषु सुप्तेषु	२.२५.३	चक्रमादाय चिक्षेप	२.१०५.५२	चक्रश्चतुर्भिः संयुक्त	३.४६.४३	चतुराश्रमवर्णेषु	३.३३.४५	चतुर्भिः सागरैर्गुप्तो	१.४४.१२
घोषेणपरमर्षीणां	३.६६.२३	चक्रमुद्यम्य समरे	२.१२६.१२७	चक्रोचितेन हस्तेन	२.४४.३४	चतुरो नियतान्वणान्	१.३१.३८	चतुर्भुजं बलाक्रान्तं	३.११८.२२
च		चक्रराजोऽथ पुष्पाणि	३.८४.२१	चक्रोत्कृन्तिगात्रोऽसौ	२.६३.१२३	चतुर्णां तु पिता योऽसौ	१.२४.१५	चतुर्भुजस्तुर्मूर्ति	२.१२१.११६
चक्रम्पे वसुधा कृत्स्ना	२.७५.११	चक्रलाङ्गलानिर्दग्धं	२.४३.४१	चक्रोद्यतकरं दृष्ट्वा त्वां	२.४०.३६	चतुर्थं ते वरं दधि	२.१२६.१५७	चतुर्भुजादिसंख्यान्ते	३.११.१२
चकर्त च धनुश्चित्रं	२.७३.६५								

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

४४

चतुर्गुणादिसंभूतो	३.१३.१	चन्दना गरुकाष्ठानि तथा	२.६४.१६	चन्द्रादित्यावहोरात्रं	२.११४.२१	चरुद्वयं गृहीत्वा तदूपे	१.२७.२४	चाल्यतां वाहिनी घोरा	३.११६.१३
चतुर्गुणान्तर्पयिषि लोकानां	१.४२.१७	चन्दनागरुवृक्षादयं सरल	२.८७.४	चन्द्रादित्यो पुण्यसाक्षी	२.७६.१७	चर्मण्वती च सिन्धुश्च	३.४६.४४	चिक्षेप सुमहाशक्ति	२.६३.५१
चतुर्विंशे युगे चापि	१.४१.१२१	चन्दनानि च दिव्यानि	२.६३.३५	चन्द्रादित्यो महाशैला	२.११४.१५	चलत्प्रस्रवणः पार्श्वमधो	२.१८.३४	चिक्षेप शंवरस्याथ	२.१०७.२६
चतुर्विंशक्त मूर्ति	३.४७.२३	चन्दनोद्ग्रेण पीतेन वनमाला	२.४६.२६	चन्द्रापीडस्य पुत्राणां	३.१.४	चाक्रं मौशलमित्येवं	२.४३.६४	चिक्षेप समरे क्रुद्धो	२.११६.१४८
चतुर्विंशणा नागेन्द्रा	३.२२.२३	चन्द्रप्रभाभिर्विमलं युद्धाय	१.४४.५०	चन्द्रार्ककिरणोद्योतं गिरि	१.४२.२४	चालितो गुरुपुत्रेण भार्गवो	२.२२.३६	चिक्षेपाथ महावीर्यः	३.१०१.१६
चतुर्षु युक्ताश्चत्वारो	१.४४.२०	चन्द्रभास्कर विम्बानि कृत्वा	२.५३.१०	चन्द्रोदय निभं रम्यं	३.१३२.३५	चाक्षुषस्यान्तरे पूर्वं	१.३.६२	चिक्षेपैनं महद्भस्म	२.१२२.८८
चतुः शीर्षाः पञ्चशीर्षा	३.४६.३८	चन्द्रमाः सह नक्षत्रैरादित्या	३.४३.१०	चपलो समवेतालस्तामसः	२.१०६.८१	आरुन्ध्री विनिष्पिष्य	२.११०.६४	चिच्छेद कवचं काया	२.१२६.७०
चतुश्चक्रेण यानेन	३.५१.२	चन्द्रमाः सह नक्षत्रैर्ग्रहै	३.४३.१४	चम्पस्य तु पुरी चम्पा	१.३१.४६	चाणूरेण चिरं कालं	२.३०.४२	चिच्छेद बहुधा राजन्	२.१०४.४०
चतुश्चरणसुश्लिष्टं किलन्नं	२.११०.३४	चन्द्रमा हरिरित्येवं	३.१११.५२	चयाट्टालककेयूरा प्रासाद	१.५४.५६	चातुर्वर्ण्यं मृत्प्रसृतं	२.११४.१६	चिच्छेद बहुधा वीरो	२.१०५.५८
चतुष्पदानां सर्वेषां	३.३७.१३	चन्द्रं मृत्युमिवायान्तं	३.५५.१५६	चरतस्तत्र संग्रामे	२.१२२.७७	चातुर्विद्यस्य यो वेत्ता	१.४०.३६	चिच्छेद वाराणस्त्वष्टा	३.५५.३३
चतुष्पदानि सर्वाणि	३.३३.१३	चन्द्रवत्यापि निस्त्रिंशं	२.६६.४१	चरद्भिः पक्षिवत्लोके	३.१८.३१	चापत्यमिदमेवैतन्तव	३.११८.२४	चिच्छेद वाहुंश्चक्रेण	२.१२६.१२८
चतुष्पादं धनुर्वेदं शास्त्रग्रामं	२.३३.७	चन्द्रशीतलगात्री सा	२.७६.६८	चरन्तो ब्रह्मचर्यं च	३.२४.८	चामरं व्यजनं छत्रं ध्वजं	२.५०.११	चिच्छेद संशयं भीष्म	१.१७.२१
चतुष्पादे स्थिते धर्मे	३.६५.६	चन्द्रसूर्यप्रभाहीनां ज्वलन्ती	२.८५.४६	चराचरगुरुः श्रीमान्	१.४१.४७	चामरं व्यजनं छत्रं ध्वजं	२.५५.४७	चिच्छेद दाथ हरिः संख्ये	३.३०.३१
चतुस्सागरभोगस्त्वं	२.१४.४५	चन्द्रसूर्यमयं ज्योतिर्योगीशः	१.४०.४०	चराचरगुरुः श्रीमान्वृतो	३.४१.६	चापपाणिस्सुतीक्ष्णेषुः	२.४४.८	चिच्छेद दाशु शिरस्तस्य	२.१०५.७
चत्वार आश्रमाःपूर्वं	३.१०८.१३	चन्द्रसूर्यात्मकं दिव्यं	३.१६.४४	चराचरस्य सर्वस्य प्रतिष्ठा	१.६.४४	चारित्रं येन मे लोके	२.११६.१७६	चित्रकं पंचवर्णं	२.६८.१७
चत्वारिंशदथाष्टौ च	१.११.१५	चन्द्रसूर्यात्मकं नित्यं	३.२६.३२	चरां कुमारप्रभवां	२.१२०.२१	चारु च बलिनां श्रेष्ठं	२.६०.३६	चित्रकश्च श्वफल्कश्च	२.५६.७१
चत्वार्याहुः सहस्राणि	३.८.१	चन्द्रहन्ता क्रोधहन्ता	१.४१.८६	चराम्यहं यामरथं हिमं	२.८१.३२	चारु बाहुः कनीयाश्च	२.१०३.७	चित्रकस्याभवनपुत्राः	१.३४.१५
चत्वार्येतानि तेजांसि	२.३५.६१	चन्द्रांशुविमलप्रख्यो	३.१७.४७	चरितं तस्य विपेन्द्र दिव्यं	१.४६.६	चारुभद्रश्चारुर्गर्भ	२.१०३.६	चित्रकस्याभवनपुत्राः	१.३८.५६
चत्वार्येतानि तेजांसि विष्णु	२.४३.१०	चन्द्रांशुशुक्ले वसने	१.५४.८	चीरत्वा तेषु सा राज	१.२०.८६	चालयामास शीतांशु	१.४७.५३		
चत्वार्येव सहस्राणि	१.८.१२	चन्द्रांशुसमरूपेषु हर्म्यं	२.८८.७०	चरित्वा विविधान्देशा	१.२०.८८				

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

४५

चित्रग्रन्थीश्च मनसाः	३.१६.४२	चिन्तयानो नरेन्द्रस्तु	२.४६.६०	चेलुश्च गिरयस्तत्र काले	२.८७.२८	छायापत्नीसहायो	३.३४.४१	ज	
चित्रधनी चेन्दुमाला	२.१०६.३२	चिन्तयाभिपरीता सा	१.३७.८	चैत्यवृक्षेषु सहसाधाराः	२.११६.६२	छालिक्यगान्धर्वगुणोदयेषु	२.८६.८३	जगज्जालं विततं यत्र	२.७२.३४
चित्रपट्टं मयादत्तं	२.११६.४३	चिन्तां कर्तुं वृथा देव	२.१२१.२४	चैद्यस्यार्थे सुनीथस्य	२.५६.१६	छालिक्यगान्धर्वमुदार	२.८६.७५	जगतः प्रथमं भागं	१.४४.२७
चित्रपट्टं गतान् मुख्यानां	२.११६.६३	चिन्ता मणिनु दाराश्च	२.६३.३६	चैद्योपरिचरं वीरं वसुं	१.३२.६१	छालिक्यगान्धर्वमुदार	२.८६.७८	जगतश्चक्षुषि ततो	२.६७.१
चित्रलेखा च सुश्रोणी	२.११६.१७	चिरनष्टेन पुत्रेण	२.३३.२७	चोराश्चौरस्य हतारो	३.४.२३	छित्त्वा तं चापि खड्गेन	३.१२३.१६	जगतः सारमुद्धृत्य पुत्रः	२.६२.२४
चित्रलेखान्नवीद्वाक्य	२.११६.५५	चिरप्रणष्टपुत्रस्य	२.१०८.३२	चोरोऽयं सर्वथा राजा	३.६५.३१	छित्त्वा ननाद शैनेयः	३.१२५.१३	जगती जलात्तु संभूता	३.१८.२६
चित्रलेखान्नवीद्वाक्य	२.११६.६३	चिरं च भवता कालो	२.२६.६७	च्यवनात्कृत यज्ञस्तु इष्ट्वा	१.३२.६०	छित्त्वा बाहुसहस्रं ते	१.३३.४५	जगत्यर्थे कृतो योऽयमंशो	१.५५.१५
चित्रलेखां परिष्वज्य	२.११६.६०	चीरं पर्या च बहुलं	३.४.३५	छ		छित्त्वा वनं तत्सौमित्रि	१.५४.५५	जगत्यां विप्रकीर्णस्य	२.१४.५३
चित्रलेखा वच श्रुत्वा	२.११६.४८	चिरवादिषु विरुपाक्षः	३.१२६.१७	छत्रमेकेन बाणेन रथेषां	२.६३.६६	छित्त्वा शिरस्तु तस्यास्य	३.६५.२६	जगत्स्रष्टुमना देव	३.३६.१
चित्रलेखे वदस्वैनं	२.११६.७१	चिरात्प्रभृति कुम्भाण्ड	२.११६.५१	छत्रेण ध्रियमाणेन	२.१२७.६१	छित्त्वा शूलेन तान्सर्वा	३.५८.१४	जगदण्डमिदं पूर्वमासीत्सर्वं	३.३४.१
चित्रसेनः सुदेवायाश्चित्रा	२.१०३.१८	चिरोपिता गृहे चापि	१.२०.७८	छन्दोभिरेव त्वष्टा	३.२६.१२	छिद्रं दर्शो सुनेत्रश्च तथा	१.२३.१६	जगद्योनिर्जगद्बीजो जगद्गुरु	१.४४.३७
चित्रसेनस्तु संसवतं दृष्ट्वा	२.३५.६४	चुकूज बहुमानेन कृष्णस्य	२.७३.१००	छन्दोभिर्वृत्त सञ्जातः	३.१५.२	छिद्रेषु प्रहरन्त्येते	१.४८.८०	जगज्जं च महामोषो	३.५६.२०
चित्रा कनकशक्तिस्तु	२.१२६.२४	चुक्षुभश्च महानद्यस्ता	३.२५.१४	छन्दमानो वरेणाथ वरं	१.१३.२१	छिन्नपृष्ठा हतारोहा	३.५६.३४	जग्मतुः सहितो राजन्	३.१२७.४
चित्रां नाम कुमारीं च	१.३५.६	चूर्णीकृत महाविचिक्शीरो	१.३३.३०	छन्नो हि तमसा सोमो	३.४.४८	छिन्नं ताम्यं समादाय	३.११०.१२	जग्मुदिशोऽग्निदाहाश्च	२.८७.२७
चित्रायुधसमाकीर्णः	३.१३३.११	चेतनं पुष्करं कोशः क्षुधा	२.१०.४०	छागमाजिरवक्त्राश्च	२.१२४.२२	छिन्नं परशुनैकेन स्मरता	२.३६.३२	जगाम च पुरीं दीनां	२.८८.११०
चिन्तयद्गगवान रुद्रो	२.१२६.८५	चेतसस्तूपजम्भं हि	३.१७.५७	छागलिः पुरमित्रश्च	२.४२.३२	छिन्नं बाहुसहस्रं च	१.४१.१५६	जगाम च विविकते शीतला	२.५.१६
चिन्तयन्निति विप्रेन्द्रो	३.११४.४२	चेदिनाथ सनाथो स्वस्संवृत्तो	२.४३.६१	छादयित्वात्मनात्मान	१.५५.४०	छिन्नमूलास्म संवृत्ता	२.३१.५	जगाम त्वरितश्चैव सत्य	२.६६.२
चिन्तयध्वं महाभागा	१.२६.१६	चेदिराजस्य तु वसोरासी	२.५६.२०	छादयेतां शरैश्चन्द्र	३.५५.१६०	छिन्नमूलो ह्ययं वंशो	२.२३.३८	जगाम मथुरां कृष्णो	२.५१.६६
		चेदिराजस्य वचनं महार्थं	२.५३.२८	छादितो वसुदेवेन यदि	२.२३.१७	छिन्नाशस्त्वं वृथावृद्धो	२.२२.७६	जगाम शिविरं रामः	२.६१.५१
		चेरतुनंगशृङ्गेषु कन्दरेषु	२.२८.७१	छान्दसीभिरुदाराभिः	३.३३.७			जगामाकाशगमनो यत्र	२.६३.४
		चेरतुस्सुमहात्मानो यादवैः	२.२३.४४					जगामाथ ततो विष्णुः	२.२.२४
		चेलुगिरिवराश्चैव	२.७५.१२						

जग्राह कामुकं वीरः	२.६३.११२	जघान : सचिवैसाद्ध	१.४१.१३७	जनार्दनं पुरस्कृत्य कर्म	२.६४.५७	जम्बूमागं गमिष्यामि	२.८२.३५	जया च विजया चैव	२.३.४
जग्राह कृष्णस्त्वरितो	२.१२६.१०१	जघानाचलसंकाशो	३.५६.४२	जनार्दनं विसृज्याशु	३.११७.५	जय चक्रगदापाणे	३.८७.१०	जयाय शीघ्रं सहिता बली	२.४७.११
जग्राह प्रथमं रामो ललाम	२.३५.६२	जघनतुश्च दरेस्तीक्ष्णै	३.१२७.१३	जनार्दनं मुवाचेदं दुर्वासा	३.१०६.१८	जयति पराशरसूनुः	१.१.३	जयाशीर्वचनैस्त्वैते	१.५५.४१
जग्राह प्रथमं रामो ललाम	२.४३.११	जघने च दनवान्मुख्यान्	२.७१.३७	जनार्दनश्च धर्मिमा	३.१०७.१	जयदेव जगन्नाथ	३.७६.१३	जये तयोर्विप्रवर्य	३.११२.६
जग्राह वारुणं सोऽस्त्रं	२.१२४.४३	जजत्पुस्ते यथायामं	२.७.२८	जनार्दनस्तु धर्मिमा	३.११३.२६	जयद्रथस्तु राजेन्द्र	१.३१.५६	जये दशशताक्षस्य मयस्य	१.४६.४०
जग्राह वीणामथ नारदस्तु	२.८६.६८	जजिरे गात्रवत्या च	२.१०३.१४	जनार्दनस्तु विप्रेन्द्रो	३.११३.७	जयन्तः प्रवरश्चैव	२.७३.८०	जरां न यास्यति वधूर्यावित्थं	२.६४.६३
जग्राह शिरसिक्षितुण्डे	२.१२६.८०	जज्ञे चैकादश सुतान्	३.१४.३८	जनार्दन हरे विष्णो	३.८१.५	जयन्तं रौक्मिण्यस्य	२.६६.५४	जरां मे प्रतिगृह्णीष्व	१.३०.२३
जग्राहथ करं तस्या	२.६४.१३	जज्ञेऽथ स्वमकवचात्	१.३६.११	जनार्दनेन राजानौ	३.१०७.२६	जयन्तेन च वीरेण	२.७६.३३	जरायां बहवो दोषाः	१.३०.२५
जघान कंसं रिपुपक्ष	३.८२.३५	जज्ञे पुनर्वसुस्तस्माद	१.३७.१६	जनार्दनेन सहितौ	३.१०६.१२	जयन्तो जयतां श्रेष्ठौ	२.७३.२५	जरासंधं तु ते जित्वा	२.३६.३६
जगान कृष्णं ग्रीवायां	२.१२२.६०	जज्ञे श्रावस्तको राजा	१.११.२२	जनार्दनोऽपि धर्मिमा	३.१०५.२४	जयप्राप्त्यासुराश्चैव	३.१३३.४५	जरासंधं पुरस्कृत्य वृष्णि	२.५६.२५
जघान गदया राजन्	३.६६.६	जज्ञे सत्यधृतेः पुत्रो	१.२०.३८	जनार्दनोऽपि सहितो	२.११०.८८	जय बाणं महाबाहो	२.१२१.१४३	जरासंध वचश्श्रुत्वा	२.४२.४१
जघान च तथा दैत्यं	३.१२३.१२	जटी कृष्णाजिनी दण्डी	२.७१.४०	जन्मनो मरणाच्चैव	३.६६.३८	जय बाणं महाबाहो	३.१२६.७५	जरासंधश्च नो राजा	२.५७.२६
जघान चतुरः सोऽश्वान	२.१०५.४५	जनमेजय कृष्णस्य	२.६५.३	जन्मप्रभृति कर्मैतद्देवैर	२.१७.५	जय विष्णो हृषीकेश	३.८७.८	जरासंधः सुनीथश्च	२.५०.५६
जघान तान्पारिषदान्त्समरे	३.५८.४६	जनमेजयस्तु स नृपः	३.२.४	जन्मप्रभृति चाप्येतौ	२.१०१.४६	जय शब्दं ततश्चक्रुर	३.४८.२३	जरासन्धस्ततः प्राप्तौ	२.४२.१
जघान तुरगांश्चाजौ यत	२.३५.८४	जनमेजयस्य के पुत्राः	३.१.१	जन्मप्रभृति चैवावां	३.३६.३७	जयशब्दरवाश्चैव देवानां	३.६४.३२	जरासंधस्तु तच्छ्रुत्वा	२.३६.३०
जघान दानवस्तेन	३.५६.१७	जनमेजयस्यदायादास्त्रय	१.३२.१०१	जन्मेदमीदृशं घोरं	३.८०.६१	जयशब्दैश्च विविधै	२.१२७.११०	जरासंधस्तु तच्छ्रुत्वा	२.४३.७४
जघान निशितैर्बाणैः	३.१२५.१०	जनमेजयस्य राजर्षे	१.३१.२१	जपैश्च मन्त्रैश्च	३.५१.८८	जयश्रिया सेव्यमानो	३.५५.४३	जरासन्धस्तु धर्मिमा	३.११३.२१
जघान पश्यतां राज्ञां	२.१०५.४४	जनमेजयेन यत्पृष्ठः	१.१.१०	जपैश्च हीमैश्च	२.१२४.५१	जयश्रिया सेव्यमानो	३.५७.४३	जरासन्धस्तु बलवान्नृपाणां	२.३८.५६
जघार वक्षोदेशे तु	३.१२६.३८	जनयामास पुत्रं तु तपो	१.२७.४३	जम्बुद्वीपं रत्नवन्तं	३.४६.४७	जयस्थानं ततः कृत्वा	२.१२१.१३२	जरासन्धस्य कल्याण्यौ	२.३४.६
जघान वीर्याद्वलिनं	३.८२.१५	जनार्दन नरेन्द्राणां	२.४७.४	जम्बूजम्बूल वृक्षादयं	२.४०.१६	जयस्व कृष्ण चाणूरं	२.३०.४१	जरासन्धस्य निघनं ये	२.४३.६२

जरासन्धस्य निधने	२.११५.१५	जहार कन्यां कामात	१.१२.१४	जातोऽयं जगतां बाधो	२.५३.२६	जामदग्न्यस्नृतीयस्ते	२.४०.३	जित्वा रिरिणसंघांश्च	२.५५.४६
जरासन्धस्य नृपते	२.३६.६	जहि देव दितेः पुत्रं	३.४७.३	जातोऽप्य जाततां याति	२.४.६२	जामदग्न्यस्य रामस्य	२.७३.३६	जिह्वाभिल्ले लिहानाभि	३.२८.३३
जरासन्धेन सहित	३.११३.१३	जहीहि निद्रां सहजां	१.५०.३८	जात्यन्तरेषु सर्वेषु	१.२०.१४	जत्मदग्न्यात्तथा रामा	२.५६.१५	जिह्वा रसश्च क्लेदश्च	३.६.७
जरासन्धो दन्तवक्रः	२.८३.२६	जहुः प्राणान्महं साध्य	१.२१.२८	जात्यां हि यादवः कृष्ण	२.२३.२१	जामदग्न्ये गते रामे तो	२.४१.१	जिह्वा वैश्वानरो देवः	३.२६.५२
जरासन्धोऽपि नृपति	२.३६.३५	जहृषु देव गन्धर्वा	२.१०७.२६	जानन्त्या ते महाराज	१.२४.२८	जामदग्न्येन रामेण	१.५२.४६	जीमूतघनसंकाशो	१.४१.७७
जलक्रीडा तवाङ्कस्था	२.६७.२१	जह्नुस्तु दयितं पुत्रं	१.२७.१०	जानन्धर्म वसिष्ठ	१.१३.८	जमाता त्वभक्तस्य	२.५६.२६	जीमूतघनसंकाशो	३.४७.१२
जलक्रीडां गतातत्र	२.११७.५३	जह्नुस्तु दयितः पुत्रस्त्व	१.३२.४६	जानन्नपि महातेजा	३.६६.४३	जाम्बूनद इवादीप्तः	२.६८.४७	जीमूतपुत्रो बृहतिस्तस्य	१.३६.२५
जलक्रीडारुचिस्तस्माद	३.३४.२६	जागर्ति कोऽत्र कः शेते	१.५०.१७	जानामि कंसं संभूत	१.५५.४	जाम्बूनदमयं दिव्यं	२.६८.६२	जीर्यन्ति जीर्यतः केशा	१.३०.४३
जलक्रीडा विहारान्च	२.११७.४७	जाग्रतीवा यथा चाहं	२.११८.१४	जानामि तौ दुरात्मानो	३.११२.६	जाम्बूनदमयं शुभ्रं रचितं	२.५०.२६	जीवन्तौ तौ यदि	३.१११.६५
जलजानि च रत्नानि	२.३८.३२	जालमात्रः स भगवान्	१.२५.४०	जानामि त्वां महादेवं	३.१११.३२	जाम्बूनदमयान्यस्य	२.६४.४	जीर्णो भगक्तस्तस्य	३.१०.१३
जलजैः प्राणिभिः कीर्णै	२.११.३२	जातमात्रे ततः कृष्ण	२.११०.३	जानामि भवतो भावं	२.१६.६४	जाम्बूनद विचित्राङ्गा	३.५०.२०	जीवतां देव बाणोऽय-	२.१२६.१३६
जलं मां रक्षतां नित्यं	२.८०.७१	जातमात्रोऽथ भगवान्	३.३७.३	जानाम्यहं जगन्नाय	३.७५.१५	जायस्व शीघ्रं भद्रं	१.३४.६	जीवन्नाहं प्रदास्यामि	२.१२७.६२
जलं स्तम्भय साधो	२.११३.११	जातरूपं तदभवत्तत्सर्व	३.३४.८	जानाम्यहं महाबाहो	२.५३.१६	जायमानो हि भगवान्	२.४.१८	जीवितस्य हि संदेह	२.११८.६०
जलशैवल शृंगा ग्रैहन	२.४०.२३	जातरूपमयं चैकं कुण्डलं	२.४१.३२	जानीष्वमेषा मे वृत्तिः	२.५१.४४	जारुष्यामाहवृत्तिः काथः	२.१०२.५	जुहुवुर्मन्त्र विधिता	३.२६.३
जलाकुलोपलस्तत्र प्रश्रुतो	२.४२.८३	जातरूपमयैः शृङ्गाः	३.३५.२२	जानीवस्त्वां विश्व योनि	३.१३.२२	जिगाय जगतीं चैव	२.७१.३५	जुजोष भगदेव	२.६६.१६
जलाप्लुतानीक्ष्य	२.६५.१३	जातरूपमयैः शृङ्गैस्तरुणा	३.३५.६	जानुभिरचाश्मनिर्घोषे	१.३०.३५	जिघांमुहि यद्वक्रुद्ध	२.३४.५	जुहुवुः समरे प्राणान्नि	३.५७.३१
जलावलम्बाम्बुद	२.६५.२१	जाता शिवजला सर्वा	२.१२.४७	जानुभ्यां पतितो भूमी	३.२८.२३	जितमित्येव हृष्टोऽथ	२.६१.३१	जुहोति भगवान्विष्णु	३.८४.२४
जले निमग्नां घरणौ	३.३४.२८	जार्ति देशं च सत्यं	३.१३२.५४	जानुभ्यां मुष्टिभिरचैव	३.६७.१५	जिता च पृथिवी	३.६१.३	जुह्वन्नग्निं समास्थाय	३.८४.२८
जलेषु जलजैश्छन्न स्थलेषु	२.४०.१५	जातेष्वेतेषु गर्भेषु नीतेषु	२.३.२६	जाने त्वां कृष्ण गोप्तारं	२.३६.४८	जित्वा गोयालदोयादं	३.११८.२७	जृम्भणं च तथा स्वापो	२.११७.३३
जलैर्वलाहकोत्सृष्टै	२.१०.१०	जातो जातो महाबाहो	२.१११.११	जाने त्वां सर्वभूताना	२.१२६.११५	जित्वा मां गच्छ राजेन्द्र	३.१००.२०	जृम्भणं नाम सोऽप्यस्त्र	२.१२५.४

जृम्भणं प्रापणं चैव	३.४४.१३	ज्योतिश्चक्षुषि संबद्धं	३.१७.४०	ज्ञातियोधान्समानीय	२.६६.६	तं कृष्णो रौक्मिण्यश्च	२.६०.२०	तं जयाय सुरेन्द्राणां	१.४८.३८
जृम्भते श्वसते	२.१२३.४	ज्योतिषामीश्वरं व्योम्नि	१.४४.२६	ज्ञातेस्समानवंशस्य	२.५६.२४	तं क्रीडमानं गोपालाः	२.११.२५	तं जिगाय ततो रुक्मी	२.६१.२६
जृम्भमाणेव गगने	२.१२६.१७	ज्योतीषि घनमुक्तानि	२.१६.३१	ज्ञात्वा तु वरदानं	२.५७.१८	तं गतासु गतश्रीकं पतितं	२.१३.२१	तं तथा पतितं दृष्ट्वा	२.११६.५८
जृम्भमैरावणं चापि	२.१०२.२५	ज्योतीषि चैव संवृता	३.१६.४३	ज्ञात्वा प्रमाणं पृथ्वाश्च	१.३.२३	तं गत्वा यज्ञवाटं	३.६६.५८	तं तपन्तमिवादित्यं	१.४५.२४
जेता क्षत्रस्य सर्वस्य	१.१३.२६	ज्योतीषि शतशः पेतुः	२.७५.१६	ज्ञात्वा विष्णुं क्षितिगतं	२.१.१	तं गर्भं विधिना हृष्टा	१.२५.७	तं तु कृष्णश्चगोपाश्च	२.१४.५६
जेता जेयो जय श्रीमान्	३.६४.२८	ज्योतिष्टोमविभागो च	२.१२२.३३	ज्ञानध्यानतपः पूजावेद	१.२३.१७	तं गृहीत्वा रणमुखे	३.५४.५१	तं तु गर्भं प्रयत्नेन	२.४.६
जेपुमुनिगणां मंत्रान्	२.७५.१६	ज्वरः कृष्णविसृष्टस्तु	२.१२३.८	ज्ञानं यदाप्त भवता	३.१०८.१७	तं गृह्य वाहुना कृष्णो	३.१२३.१७	तं तु पञ्चत्वमापन्नं	१.२०.६६
जेपुमुनिगणास्तत्र कृष्णस्य	२.८५.५६	ज्वरस्य तु महायुद्धे	२.१२२.६१	ज्ञानलेशाद्विहीनात्मन्	३.१०८.१	तं गोपाः पर्वताकारं	२.१७.२४	तं तु बद्धं गले दृष्ट्वा	१.१२.२२
जेष्मामि तौ रणे विप्र	३.११२.३	ज्वरस्य वचनं श्रुत्वा	२.१२३.३४	ज्ञानवान् दृष्टविश्वात्मा	३.१०.५४	तं घटैः काञ्चनैर्दिव्यैः	२.२६.५७	तं तु रैवतकेऽद्राक्षं तदासीन	२.६६.२५
जैगीषव्याय तु तथा	१.१८.२४	ज्वराभिभूतमात्मान	२.१२३.६	ज्ञानविज्ञानसंपन्नो	३.१२६.२	तं च दिव्यं द्रुमश्रेष्ठं	२.६६.२३	तं त्यजाव महाराज	२.३७.२३
जोतिष्मान् भार्गवश्चैव	१.७.६१	ज्वलनादित्यसंकाशां	२.११६.१६१			तं च देशं व्यवसितः	१.५३.२१	तं दिव्यं कुसुमं वृक्षं	२.७५.५४
ज्याघाततलनिर्घोषो धनुषां	१.४७.२५	ज्वलद्भिरिव विप्रैस्तै	३.२३.२८	डिण्डिमैर बृहासंश्च	३.८६.६	तं च नेतुं समायाता	२.११६.६	तं दृष्ट्वा चित्रलेखा तु	२.११६.३
ज्यां विकूजन्महाशब्दः	२.६३.४६	ज्वलद्भिरिव संयुक्तं	२.१२६.५४	डिम्भकः शक्तिभृच्छः	३.१२५.२६	तं च वृद्धं प्रियसुतं	२.२६.१८	तं दृष्ट्वा दानवा देवमभि	२.८४.३४
ज्यामघस्याभवंद्भार्या शैव्या	१.३६.१६	ज्वलद्भिर्निशितैर्वर्णै	१.५.४८	डिम्भको वीर्यसम्पन्नो	३.१२६.२	तं च शक्रस्यदयितं	२.६६.१६	तं दृष्ट्वा दुद्रुवुर्गोपाः	२.२४.१६
ज्येष्ठः पुत्रशतस्या	१.१०.३४	ज्वलन्निव च तेजस्वी	३.१४.२	त		तं च श्रुत्वा महानादं	२.१२२.२७	तं दृष्ट्वा निर्ययौ हृष्टरस	२.५७.४१
ज्येष्ठाषाढौ शुभौ मासौ	२.७६.४३	ज्वलिताग्निप्रतीकाशौ	१.५४.७	त ऊचुः सर्वदेवानाम	२.८२.१७	तं चापि दशभिर्वीरो	३.६८.१०	तं दृष्ट्वा भगवानकृष्ण	२.६७.१४
ज्येष्ठ्यं कानिष्ठ्य मध्येषां	१.२.५६	ज्वालाशतसहस्राढ्यं	२.५३.२६	त एते पितरो देवा	१.१७.४२	तं चाश्वमेधिकं सोऽश्वं	१.१४.३०	तं दृष्ट्वा मूर्च्छितं	२.१२६.७२
ज्येष्ठ्यं मेतेन देवेन	२.७१.५३	ज्ञाति कार्यं चिकीर्षुस्त	२.१०१.२८	तं कालनेमि समरे	१.४६.५८	तं जघान महाघोरं	२.६३.८६	तं दृष्ट्वा विस्मयं तत्र	२.१२२.२४
ज्योतिर्भूतो ज्योतिषां	३.३२.२६	ज्ञाति कार्यार्थसिद्ध्यर्थ	२.३४.८	तं कृच्छ्रगतमाज्ञाय	२.६०.१०	तं जयन्तो नियत्याथ पतितं	२.७३.७६	तं दृष्ट्वा समनुप्राप्तं	२.५५.६३
ज्योतिश्चक्षुश्च	१.४०.६१	ज्ञातिभेद मयात्कृष्णस्त	१.३६.३१	तं कृष्णलक्षणाया वाचा	२.७७.२०				

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

तं दृष्ट्वा ऋषयः प्राहुः	१.२.२२	तं ब्रह्मादिनां क्षान्तं	१.२६.४	तं वै प्रह्लादवचनाल्लक्षण	३.२६.२	तं सोऽम्बुजदलश्यामं	२.१६.५	तच्छ्रुत्वा तस्य पत्न्येका	२.६६.३१
तं देवापि महात्मानं	३.६७.७	तं ब्रह्मादिनां श्रेष्ठं	३.६६.११	तं वै विद्धि महाराज	१.१.२२	तं स्म वीक्षन्ति भूतानि	१.४६.५६	तच्छ्रुत्वा त्वरितः कंसो	२.४.२६
तं न विद्मोयथाकामं	३.८४.६	तं मन्ये केशवं विष्णुं	२.४८.३१	तं वै स्वयं भूर्भगवान्न	१.४१.४३	त हतं केशिनं दृष्ट्वा	२.२४.५२	तच्छ्रुत्वा दानवाः	३.४४.३
तं निवारितवान्मन्त्री	२.१२१.८६	तं महाभ्रप्रतिच्छन्नं	२.८७.३	तं व्रजन्तं सुपर्णं	१.५२.५	तं हतं परिदेवन्त्यो भार्या	२.२७.१७	तच्छ्रुत्वा नन्दगोपस्य	२.६.१२
तं निमृष्टद्रुमेणाजौ वज्र	२.५६.७२	तं महीशयने सुप्तं	२.३१.२	तं शयानं महात्मानं	१.५०.१०	तं हत्वा केशिनं युद्धे	२.२४.५१	तच्छ्रुत्वा नन्दिवाक्यं	२.१२६.१४३
तं निहत्य प्रलम्बं तु	२.१४.५५	तं मातलिमुतं चैव	२.६६.५६	तं शरत्कुसुमापीडा	२.१६.१२	तं हत्वा पुण्डरीकाक्षः	२.३०.६८	तच्छ्रुत्वा नारदस्तस्य	२.१२६.४७
तं पक्षपुटवेगेन चिक्षेप	२.७३.७५	तं मारय महाकायं	१.११.३७	त शशाप ततः क्रोधा	१.६.२३	तं हत्वा पुण्डरीकाक्षो	२.२६.४४	तच्छ्रुत्वा भगवाञ्छक्रः	२.८६.१६
तं पाञ्चजन्यशब्देन	२.६७.१५	तं मुक्त्वा गरुडेनाथ	२.७३.१०१	तं शैलं सर्वगात्राणि	३.२३.४१	तं हत्वा रथमारुह्य	२.५६.७३	तच्छ्रुत्वा भगवान्विष्णु	३.८३.५
तं पारिजात कुसुमैः	२.७४.२१	तं मूर्ध्नि धातुभिर्नदं	३.१८.२०	तं श्रुत्वा निनदं घोरमपूर्वं	२.१२१.१३	तं हि पस्पर्श हस्तेन	२.७३.७८	तच्छ्रुत्वा भाषितं तस्य	२.१०४.५४
तं पावका लोकगुरुं	३.५३.३८	तं युद्धे जितवान्भीष्म	३.११३.११	तं श्रुत्वाभ्यागतस्तत्र	२.६७.४	तक्रानिस्त्रावमलिनं	२.५.२६	तच्छ्रुत्वा मनुयः सर्वे	३.८४.२
तं पुनः शर वर्षेण	२.११६.१५८	तं रथस्थं प्रमाणस्थं	२.४४.२८	तं श्रुत्वा शंखशब्दं	३.३१.१८	तच्च कण्ठेसमासज्य	२.८६.४६	तच्छ्रुत्वा मोहमगमद्	१.२४.२२
तं प्रत्यविध्यन्नारचैर्हंसः	३.१२४.२	तं लोकपालं पितरो	३.५२.३१	तं श्रुत्वा संहितास्सर्वे	२.३७.८	तच्चक्रेण निहत्यास्त्रं	२.१२६.६३	तच्छ्रुत्वा यमुना भूयः	३.१२६.८
तं प्रविष्टो हृषीकेशो	२.११३.२६	तं वरेण मुनिश्रेष्ठ	२.६१.२७	तं सज्जायित्वा कंसस्य	२.२६.३०	तच्च पद्मं पुराणज्ञाः	३.१२.३	तच्छ्रुत्वा रोहिण्यस्य	२.१२.३२
तं प्रस्थितं तर्ह दृष्ट्वा	२.७३.१२	तं वासुदेवः श्रीमन्त	२.५७.५६	तं सप्तरात्रे संपूर्णं निशीथे	२.१०४.३	तच्च मांसं स्वयं चैव	१.१३.१६	तच्छ्रुत्वा वचनं तेषां	३.४०.५
तं प्रस्थितमभिप्रेक्ष्य	२.११०.२५	तं विकलवमिव ज्ञात्वा	२.७३.७४	तं समुद्राश्च नद्यश्च	१.५.२६	तच्च वक्रशतं घोर	१.४८.४७	तच्छ्रुत्वा वचनं देवो	३.८७.६
तं प्राङ्मुखं वीरं मायावी	२.६०.३५	तं विजेतानूलोकेऽस्मिन्	२.५२.२४	तं सर्वे यादवा मुख्या	२.३२.५६	तच्च श्रुत्वा सुनिखिलं	२.६५.४६	तच्छ्रुत्वा वासुदेवस्य	२.१०१.४
तं बलीघमपर्यन्तं	३.५७.२	तं वितत्य महापक्षौ वायो	१.४८.४६	तं सा मायावती कांतं	२.१०४.१७	तच्च सर्वं हृषीकेशः	२.६४.१८	तच्छ्रुत्वा विष्णुगदितं ब्रह्मा	१.५१.१
तं बाणं त्रिविधं वीर्यात	३.१३३.७६	तं विविक्त वनगतं लोक	२.१६.८	तं सिनिश्च कुहूश्चैव	१.२५.२७	तच्छ्रुत्वा सुमहद्गङ्गा	३.५८.४	तच्छ्रुत्वा दोदरां कान्तां	२.११.३४
तं बाणैः पुनरेवाथ वीरो	२.६०.२१	तं व्रीडितमुखं दृष्ट्वा	२.१०८.७	तं सुराद्यः प्रतिरथं सुबाहु	१.३२.३	तच्छ्रुत्वा युधि शक्रेण	३.६६.१४	तडागेषु च कान्तेषु	२.१६.५५
तं विभेदाष्टभिः क्रुद्धो	२.५६.७६	तं वीक्ष्य बालं महता	२.१६.४	तंभोः सुरोर्धो राजर्षि	१.३२.७	तच्छ्रुत्वा कश्यपः क्रुद्धो	२.७२.२१	तडिदगणाकं सदृशो	३.५४.६७

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

५०

तडिद्वृष्टि सुविपुला	३.७१.४६	ततक्ष बहुलं गात्रं	२.८५.१८	ततः कृष्णस्य वचना	१.३६.३८	ततः क्रुद्धो महाराज	३.११६.१	ततः पीता महात्मानो	१.३२.४७
तज्जलं वज्रनिष्पेषैः	२.१५.१५	तत क्षुब्धन्निव प्राणां	३.५५.३२	ततः कृष्णस्य वचना	२.८४.७	ततः क्रुद्धो महाराज	३.१२४.६	ततः पुनर्महात्मानः	१.५.२१
तज्जह्नु रसुराः पूर्वमाक्रान्ता	३.३०.२८	ततः क्षीरनिकाशेन	३.६.१५	ततः कृष्णोऽथ रुद्रश्च	२.१२५.२२	ततः क्रुद्धोऽहंभवं	३.८८.१०	ततः पुरुषसिंहैर्या यदुभिः	२.१००.१६
तत इन्द्रः स्वयं तत्र	३.८५.१	ततः कालः सुनिर्यातो	३.५६.७४	ततः कृष्णो भोजयित्वा	२.११४.१	ततः क्रुद्धो हली विद्धस्तेन	३.१२४.५	ततः पीण्डो महावीर्यो	३.६५.३
तत उत्सारयामास	१.६.११	ततः काले च संप्राप्ते	२.७६.३	ततः कृष्णोऽम्बुदाकार	२.४३.३५	ततः क्रुद्धो हृषीकेशः	३.१२३.७	ततः प्रकृति मापन्नाः	३.४०.२
तत एवाभ्यनुजां सा	२.८१.१०	ततः काले व्यतीते तु	२.६१.१	ततः कृष्णो हृषीकेशो	३.१३०.१६	ततः क्रोधाभिताम्राक्षः	२.३०.७	ततः प्रक्षायमाणस्तानु	३.५८.१०
तत उत्थाय धर्मात्मा	३.१०६.७	ततः काले शिवे पुण्ये	२.३३.३६	ततः कैलाश शिखरा	३.६२.१	ततः खान्निपतन्ति	२.२५.५७	ततः प्रचक्रुर्जलवादितानि	२.८६.४४
तत उत्पाद्य रामस्तु	३.१२६.४१	ततः काले शिवे पुण्ये	२.४५.१३	ततः क्रमितुमोरेभे	३.३१.१२	ततः स्थितमथालक्ष्य	३.५४.५२	ततः प्रजविताश्वेन	२.५६.५
तत उत्सृज्य राजा तु	३.६७.११	ततः काष्ठस्तृणैर्विशेषशुष्क	२.४२.५३	तत क्रमेण घोषस्य	२.६.२०	ततः प्रभुमिताः सर्वे	३.४६.३	ततः प्रज्वलितः क्रोधात्	३.४६.२
ततः कंसो महातेजा	२.१०१.५६	ततः किकरसैन्यं तु	२.११६.८०	ततः क्रमेण सर्वास्तान्	२.११८.६८	ततः पंकजपत्राक्षो यादवा	२.५८.४	ततः प्रज्वलितां शक्तिं	३.३६.१७
ततः कण्ठे परिष्वज्य	२.१२१.१३३	ततः किञ्चिदिवासीन	३.१११.२१	ततः क्रमेण सर्वास्ता	२.१२८.२०	ततः परं महच्चापं	३.६८.४	ततः प्रणम्य ते वीराः	३.६६.१३
ततः कथान्ते नृपति	३.२.१०	ततः किलकिलाशब्द	२.३०.१८	ततः क्रीडाविहारं तमनुभूय	२.११७.२६	ततः परं महत्प्रायं	३.६६.२६	ततः प्रचलिता भूमिर्नैव	२.२७.५८
ततः कदाचित्तौ वीरो	३.१०६.१	ततः किलकिलाशब्दः	२.६३.२६	ततः क्रुद्धः पुनस्तत्र	३.६४.१६	ततः पर्जन्यघोषेण	२.१०२.४	ततः प्रतिगृहीता सा	२.१२८.१२
ततः कदाचित्पश्यामि	१.१७.५	ततः किलकिलाशब्दः	२.१२७.१४७	ततः क्रुद्धा महादैत्या	२.१०५.२	ततः पर्वतजालानि	२.११३.१	ततः प्रत्यागतप्राणो	२.८५.५७
ततः कदाचिदथ वै	३.१०.३०	ततः किलकिलाशब्दो	२.१८.५८	ततः क्रुद्धो गदापाणि	३.६७.१	ततः पश्चाद्विधासग्रामो	३.११३.१८	ततः प्रत्युद्युगतास्सर्वे	२.४५.३
ततः कदाचिद्दुःखेन	२.११३.२१	ततः कुशलहस्तत्वाद्	२.११८.६२	ततः क्रुद्धोऽथ दुर्वासा	३.१०६.१	ततः पार्थिवमैश्वर्यं	३.१६.५०	ततः प्रत्युद्युस्सर्वे यादवा	२.२३.२६
ततः कदाचिद्धर्मात्मा	२.१११.७	ततः कुशे स्थिते राज्ये	२.३८.४३	ततः क्रुद्धो निषादेशो	३.१०२.२	ततः पावक संकाशः	३.६१.३६	ततः प्रथममैश्वर्यं	३.१६.७
ततः कथान्ते तत्राहं	२.११४.३	ततः कृष्णः शरैस्तीक्ष्णै	२.७३.१६	ततः क्रुद्धो महदैत्य	३.५५.३६	ततः पाशसहस्राणि	२.८४.५७	ततः प्रध्माय जलजं	२.१२७.६४
ततः कनकपुखानां	३.५५.६३	ततः कृष्णः सुपुण्ड्रं	२.६६.१६	ततः क्रुद्धो महाराज	३.६३.१	ततः पिता मे सुप्रीतो	१.१६.२२	ततः प्रभज्जनो वायु	१.५२.१२
ततः कश्यपमाभाष्य	३.२५.५	ततः कृष्णस्य वचनं	२.५८.३८	ततः क्रुद्धो महाराज	३.६६.१	ततः पिपीलिकरुतं स	१.२४.३	ततः प्रभाते विमले	२.२६.३२

ततः प्रभाते विमले	२५८.१	ततः प्रविष्टास्ते सर्वे	२.१२७.८	ततः प्राप्ता नराग्रयो	२.१०१.११	ततः शमदमाभ्यां	३.४१.४	ततश्चन्दनपूर्णैश्च	२.१२१.६०
ततः प्रभाते विमले	२.१२१.७२	ततः प्रवृत्तं युद्धं तुमुलं	२.१०४.४६	ततः प्राप्तो महादेव	२.७४.२०	ततः शयानं श्रीमन्तं	३.१३.२१	ततश्चन्दप्रतीकाशम	३.३६.३
ततः प्रभाते विमले	३.१००.१	ततः प्रवृत्तोऽसुरदेव	३.५३.१	ततः प्रायाद्वारि विष्णुं	३.११४.१	ततः शरं समादाय	३.१०१.१	ततश्च यादवाः सर्वे	३.६४.१
ततः प्रभाते विमले	३.१२०.२	ततः प्रवृद्धं युद्धं तु	२.१०५.१	ततः प्रावर्तत द्यूतं तेषां	२.६१.२७	ततः शरशतैरुग्रैस्तान	२.१२६.३	ततश्च योग प्राप्स्यन्ति	१.१६.८
ततः प्रभावती हंसीमुवाच	२.६३.५४	ततः प्रवृद्धावन्योऽन्यं	१.४६.३३	ततः प्रावृडनुप्राप्ता मनसः	२.१०.३	ततः शरीरयोगाद्धि	२.१२५.१८	ततश्चरन्तीं सुश्रोणीं	२.२८.७७
ततः प्रभावती हृष्टा	२.६३.४२	ततः प्रवेशे संरुद्धौ	२.१०१.६३	ततः प्राह महातेजा	२.३७.६	ततः शरीरैर्विमलैर्वरुणः	२.१२७.६५	ततश्चारास्तु व्यादिष्टाः	२.१२१.३६
ततः प्रभृति देवेश	३.८८.१२	ततः प्रशान्ते दहने	२.१२२.२३	ततः प्रीतः प्रसन्नात्मा	३.८७.६	ततः शस्त्राणि शूलानि	३.५८.१३	ततश्चिक्षेप तं वृक्षं	३.५६.१५
ततः प्रभृति राजेन्द्र	१.२.५०	ततः प्रसन्न वदनो	३.१०.४५	ततः प्रीतोऽभवच्छर्वस्ताभ्यां	३.१०५.६	ततः शाङ्गं विनिर्मुक्तैर्नाना	२.६३.७६	ततश्चिन्तयतः कार्यं	३.३३.३४
ततः प्रभृति राजेन्द्र	२.६२.१५	ततः प्रसन्नो भगवान्	३.७२.८६	ततः प्रोवाच भर्तारि	२.६७.४	ततः शाङ्गं युधः शाङ्गं	२.८४.३३	ततश्चिन्तयते भूयः	३.३३.३३
ततः प्रमुदिता देवा	३.४७.१६	ततः प्रसन्नो मामाह	३.८०.२६	ततः प्रोष्य पुनर्यान्ति	२.६७.४२	ततः शिलां समादाय	३.१०१.१६	ततश्चिन्तितमात्रस्तु	२.४७.२८
ततः प्रयातं युद्धार्थं	२.७४.४	ततः प्रसभमा लुत्य	३.३२.४७	ततः वै विहिताः साक्षात्	२.६८.३०	ततः श्रृंगाग्रसंभूतं	३.३२.३८	ततश्चक्रोष्ण बलवान्	२.४६.३२
ततः प्रयाते वसुदेव पुत्रे	२.५२.१	ततः प्रसारमकरोत्स	१.२७.३४	ततः शकान्स्यवतान्	१.१४.१२	ततश्चकम्पे वसुधा	२.११६.५६	ततश्चैद्यमुधादाय	२.५६.२८
ततः प्रयान्तं त्रिदशेन्द्र	३.६३.१०	ततः प्रहरणैर्छौरैर्भिपेतुः	३.५८.३६	ततः शकुनयो दीप्ता	२.११२.३	ततश्चकाणि दिव्यानि	३.४५.८	ततश्चोद्वाहधर्मण	२.११६.७५
ततः प्रलम्बं दुर्वृत्तं	२.१४.५१	ततः प्रहसितः कृष्णस्त्रास्य	२.२६.२५	ततः शक्ति समादाय	३.६८.११	ततश्चक्रेण गोविन्दः	२.११३.२३	ततश्च्युता गमिष्याम	२.३६.६४
ततः प्रवत्स्यते पुण्या	२.१६.५८	ततः प्रहसिताः सर्वे	२.१२७.२२	ततः शक्रस्य कौरव्य	२.७५.३२	ततश्च गच्छन्बलवान्	३.८२.३०	ततश्चालिक्व गांधर्व	३.१३४.२६
ततः प्रवृत्ते युद्ध	१.३६.१२	ततः प्रहसितो विष्णुर्नन्दी	३.३२.५३	ततः शक्रस्य वचनान्तरदः	२.१२७.१८	ततश्चचाल तेनाजौ	३.६६.२३	ततः श्रुत्वा जरासन्धो	३.१२१.१६
ततः प्रविशिशुर्मल्ला रङ्ग	२.२६.२०	ततः प्रहस्य नमुचिधरस्य	३.५५.५	ततः शक्रो जयन्तोऽथ	२.७५.३	ततश्चचाल वसुधा	२.३०.४३	ततश्शक्रस्तु तान्गृह्य	२.१६.६१
ततः प्रविश्य धर्मात्मा	३.११७.७	ततः प्रहस्य सुचिरं	२.१०१.४	ततः शंखमुपाध्मासीद	३.३१.१७	ततश्च दाम्ना सुदृढेन	३.८२.२२	ततश्शरदि युक्तायां	२.१६.५१
ततः प्रविश्य रम्यां	२.७५.६०	ततः पट्टष्टो राजर्षि	२.५१.५१	ततः शंखमुपाध्याय	३.५७.४६	ततश्चदेवकीमुनुः	३.१००.११	ततश्शरसहस्राणि	२.४३.३३
ततः प्रविष्टास्ते सर्वे	२.१३.२५	ततः प्राध्मापयच्छ	३.५५.६	ततः शमदमाभ्यां च	१.४१.४२	ततश्च नारदं दृष्ट्वा	२.११६.६६	ततश्शिनिरनाघृष्टि	२.३५.१०३

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

५२

ततश्शुश्राव तं राजा	२.५७.१२	ततः स निवसन्बाणः	२.११६.२०	ततः स रैवतो ज्ञात्वा	१.१०.३७	ततः सैन्यं समाज्जप्तम्	२.६६.२६	ततस्तस्मिंस्तु विषये	१.१२.१६
ततः षष्ट्या रथेषूणां	२.७३.३५	ततः स पितरं गत्वा	२.६१.१८	ततः सर्वाणि दिव्यानि	२.१००.१२	ततः सोऽप्यब्रवीद्वाक्यं	३.१४.१६	ततस्तस्मै ददौ राज्यं	१.२५.२०
ततः संरक्तनयनो	३.३६.१२	ततः स पुनराश्वस्य	३.५६.१७	ततः सर्वाणि सैन्यानि	३.५७.१	ततः सोमस्य वचना	१.२.४५	ततस्तस्मा भवद्रूपं	३.८३.१६
ततः संवत्सरे पूर्णो	३.३६.१२	ततः स पुरुषो देवं	३.३६.२	ततः सर्वाण्यनीकानि	२.१२४.१	ततः सोऽसि समुद्यम्य	३.५६.३०	ततस्तस्यां प्रभातायां	२.७५.३७
ततः संवत्सरे पूर्णो	२.८०.१६	ततः स पौण्ड्रको राजा	३.६६.१८	ततः सर्वासु मायासु	३.४६.१	ततस्ततो व्यशीर्यन्त	३.५५.१५७	ततस्तस्या सुरेन्द्रस्य	३.५६.१६
ततः संवत्सरे पूर्णो	२.८०.१५	ततः स पौण्ड्रको राजा	३.१०१.२५	ततः सर्वेषु यातेषु सुखा	२.६६.१८	ततस्तत्र द्विजातीनां कामां	२.६५.८	ततस्तस्या हयायास्तु	१.३६.१७
ततः संवत्सरे पूर्णो	२.८०.३४	ततः स भगदत्तं च शिशु	२.८४.६१	ततः स लघुभिश्चित्रै	३.५८.८	ततस्तस्मिन्महत्सैन्यं	२.११६.११८	ततस्तानब्रवीद्देवी यूयं	१.१७.३०
ततः संवत्सरे पूर्णो	२.८०.३८	ततः स भगवान रुद्रो	३.६०.१	ततः सह तथा रेमे	२.६०.३५	ततस्तद्दीप्यमानं तु पपात	२.७३.४७	ततस्तानब्रवीद्विष्णु	३.६८.१०
ततः संवत्सरे पूर्णो	२.८१.२	ततः स भगवान्विष्णु	३.७८.१	ततः सह मया भुक्त्वा	२.११४.२	ततस्तद्धनमक्षय्यं	२.१००.१३	ततस्तान्परिविश्रान्तान	२.६३.१६
ततः संसर्गमागम्य बलेना	१.२०.७०	ततः स भगवान्विष्णु	३.७८.२४	ततः सहैव शक्रेण शङ्ख	२.६३.३६	ततस्तद्वसु गोविन्दो	३.१०२.४३	ततस्तामगमद्बह्मा	३.१४.३७
ततः संहृष्टरोमाणः	३.५७.४७	ततः स भगवान्विष्णु	३.८०.१	ततः सात्राजितीं देवी	२.६७.४४	ततस्तद्वारुणं छत्रं स्वय	२.६४.१६	ततस्ताक्ष्यंगतो	२.६७.७
ततः स कथयथा सांद्धं	२.६०.१६	ततः स भगवान् विष्णु	३.८१.१	ततः सान्दीपनि पूर्वं	२.१००.६	ततस्तं कामसंकाशं	२.१०८.६	ततस्तावूच तुस्तत्र	३.१३.६
ततः सखीभिर्हस्यन्तीं	२.११७.२१	ततः स भगवान्विष्णु	३.८४.१	ततः सा विस्मयाविष्टा	२.११८.५२	ततस्तं चक्रवाकी	१.२२.१	ततस्ताः सान्त्वयामास	२.६४.३६
ततः संकल्पये एव	२.६३.६१	ततः स भगवांस्ताक्ष्यो	३.७६.२	ततः सा संनतिर्दीना	१.२४.५	ततस्तं पीडयामास	२.४२.८२	ततस्तु काश्यपी देवीं	२.१२५.१५
ततः संचिन्त्य तु पुनः	१.३.५	ततः स भगवांस्ताक्ष्यो	३.७६.२	ततः सिद्धगणैर्जुष्टः	३.२८.८१	ततस्तमः संह्रियते	१.४२.३४	ततस्तु जृम्भमाणस्य	२.१२५.११
ततः सचिन्तयामास	७.३५.२	ततः संमर्दितो बाणैर्वलो	३.५४.६१	ततः सुखं प्रकीर्णसु	२.१३.२६	ततस्तमार्ज्जवप्राप्तं	१.३६.३६	ततस्तु तुमूलं युद्धं	३.६०.३२
ततः संचिन्तयामास	३.७६.१	ततः समानयामास	२.१००.१४	ततः सुधारं ज्वलितं	३.५५.२१	ततस्तयोर्विचित्रार्थाः	२.४६.६०	ततस्तु दानवास्तत्र	३.६१.३५
ततः सत्यवती पुत्रं	१.२७.३५	ततः सम्पूज्य गरुडं	२.१००.१	ततः सुभद्राहरणं जयं च	२.८६.१४	ततस्तयोस्तदा रौद्रः संग्रामे	२.७३.४१	ततस्तु देवगान्धारं	२.६३.२३
ततः सदुःखसंतप्तो	१.३०.१२	ततः सर्वदशार्हाणामाहु	२.१०१.७	ततः सुविपुलां दीप्तां	३.५५.३७	ततस्तं परमक्रुद्धो	२.१२३.६	ततस्तु घरणी देवी	२.१२५.१२
ततः स ननुते तत्रवरदत्तो	२.६३.५	ततः स राजा कौरव्य	१.११.५३	ततः सृजन्तं बाणौघान	३.६०.१२	ततस्तस्मिन्महातोये	३.११.१५	ततस्तु पर्वताः सप्त	२.११३.१४

ततस्तु प्रवरो नाम देव दूतो २.७३.३०	ततस्ते दीनमनसः २.१२१.६७	ततस्तौ वीर्यसंपन्नी ३.१०५.१८	ततः स्वांभूर्भगवान् ३.४१.५	ततो ग्रामस्य मध्ये २.११२.२
ततस्तु भगवान् ब्रह्मा २.१२७.३७	ततस्तेन तु शापेन शून्या १.२६.६१	ततस्तौ हंसडिम्भकौ ३.११०.१	ततः स्वान्याधिपत्यानि ३.४०.१६	तथोऽग्लपयदात्मानं २.११६.१४
ततस्तु रुदतीं हृष्ट्वा २.११६.८७	ततस्ते पन्नगाः सर्वे ३.६१.२८	ततस्तौ हंसहलिनौ ३.१२४.१३	ततस्संचिन्त्य मनसा रामः २.४६.५४	ततो धनं समुपिरं २.६३.२२
ततस्तु रुचिरीघेण ३.५८.६४	ततस्ते पुनरागम्य १.१७.३३	ततस्त्रिशीर्षेभुंजगौ ३.५२.३५	ततस्समन्त्रयामासु २.५६.१०	ततोऽङ्गानि विमृजति १.४०.५६
ततस्तु वसुदेवस्य पादौ २.४५.१७	ततस्ते प्रद्रुता यान्ति २.१२७.५६	ततस्त्वया सहानंगो २.१०४.६१	ततस्सव्यं दक्षिणं च २.२४.२५	ततो जनाः सरः सर्वे ३.१०६.११
ततस्तु वारुणं सैन्यं २.१२७.५४	ततस्ते बाष्पपूर्णाक्षा २.१२१.१८	ततस्त्वरितमागम्य १.३६.६	ततस्सह्यवनेष्वेव राजा २.३६.१३	ततोऽजपाश्वर्यं इति ३.१.१४
ततस्तुष्टः स भगवानब्जः १.२६.२४	ततस्ते ब्राह्मणगणा ३.२३.४२	ततस्त्वस्तं गतः सूर्यः २.७४.६	ततस्सह्यचलयुतं सहाय्येणा २.३६.१०	ततो जरसंधवलं २.५६.१३
ततस्तूर्यनिनादेन क्ष्वेडिता २.२६.२१	ततस्ते यादवाः सर्वे २.१०१.२०	ततस्त्वां गृह्य चरणे २.२.३६	ततस्सा निर्मिता कान्ता २.५८.४४	ततो जलदगम्भीर स्व रेणा २.५३.४८
ततस्तूर्यनिनादेन ३.३८.१२	ततस्ते युद्धमार्गज्ञास्त्र २.१२६.५	ततस्त्वां घोरशिरसं ३.१०.४३	ततस्सान्दीपनेः पुत्रं २.३३.२६	ततो जिगमिषुं तत्र २.६८.१
ततस्तूर्यनिनादैश्च २.१२२.१	ततस्ते योगविभ्रष्टा १.१६.४	ततस्त्वावश्यकं कृत्वा २.६७.४८	ततस्सायकजालानि शृगालः २.४४.२४	ततो ज्वरं कनकविचित्र २.१२२.६३
ततस्तूर्यप्रणादैश्च २.६६.१२	ततस्तेषां स्वनं श्रुत्वा २.११६.६७	ततः स्थैर्यं समालंब्य २.१२३.५	ततस्सुदर्शनं चक्रं पुनराया २.४४.२६	ततो ज्ञातीन्समानाभ्य २.२२.७
ततस्तूर्य प्रणादैस्ता २.१२८.१५	ततस्ते सचिवाः क्रुद्धा २.१०५.३८	ततः स्नातो जगन्नाथः २.६७.३७	ततस्सैन्येन महता जरा २.३५.६६	ततोऽथ वितथो नाम १.३२.१७
ततस्ते कुण्डले दिव्ये २.६४.५६	ततस्ते सचिवाः क्रुद्धाः २.१०५.४२	ततस्म तप ग्रास्थाय २.५७.६७	ततस्तस्यैव मनसः ३.३६.१२	ततो दक्षस्तु तां प्रादात् १.३.१४
ततस्ते क्षत्रियास्सर्वे २.३५.७७	ततस्ते सर्वदाशार्हाः २.६६.१३	ततः स्म द्वारकां प्राप्ता २.११३.३१	ततस्स्वपुरक्षार्थं प्रजानां २.३६.४१	ततो ददर्श पृथिवीमावृतां २.५७.६५
ततस्ते क्षत्रियास्सर्वे २.४३.२७	ततस्ते शार्ङ्ग निमुक्तेनाना २.६३.७५	ततः स्पृग्मन्तकर्मणि १.३८.२२	ततस्स्ववीर्यमाश्रित्य निहतो २.४६.१०	ततो ददर्श बलानि ३.६३.१४
ततस्ते जलदाः कृष्ण २.१८.८	ततस्तेऽश्चारपुरुषैः २.११६.७६	ततः स्वपिति धर्मात्मा ३.३३.३१	ततो गणसहस्रस्तु २.१२४.१६	ततो दध्मो महाशंखं ३.१२३.८
ततस्तेजः प्रज्वलितमपश्य २.११३.२५	ततस्ते संक्रमः सर्वः १.२०.६५	ततः स्वपुरवासीनामसुराणां २.६३.१	ततो गतो देवराजो २.६१.२४	ततो दशसु-मासेषु १.१५.१०
ततस्ते तत्सरः स्मृत्वा १.२४.२५	ततस्तौ क्रोध रक्ताक्षा ३.६०.२५	ततः स्वभवनं गत्वा ३.१०५.२३	ततो गन्धैश्च माल्यैश्च ३.१३२.८३	ततोऽदित्या सह सुराः ३.६६.१७
ततस्ते त्वरिताः सर्वे १.१२४.१	ततस्तौ तारेणांगानि २.२६.४०	ततः स्वभवनं विष्णुः ३.११२.२२	ततोऽग्निदितिजान्त्सर्वा ३.६२.२०	ततो दिव्येन चास्त्रेण २.६३.६३
ततस्ते ददृशुः सर्वे २.८५.२६	ततस्तौ पतितौ दृष्ट्वा २.२८.३४	ततः स्वयंभूर्भगवान् १.१.२७	ततोऽप्रतः पारिजातमारोप्य २.७५.५०	ततो दीक्षितमासीनस् २.१११.८

ततो दूतस्य वचनात्	१.५४.४७	ततोऽन्तरमेतस्माद	२.६०.३१	ततो नीराजनार्थं हे	२.१७.३२	ततो बृहस्पतिर्धीमान्	३.६६.५६	ततोऽभ्युपगमाद्राज्ञ	१.६.४६
ततो दृष्टैव गरुडं	२.१२७.६	ततोऽन्तर मागोण	३.२.१६	ततोऽनुजग्मुः शतशः	३.१२१.४	ततो बृहस्पतेः शक्रः	२.७२.१२	ततो मकरकेतु च	२.१२७.१५
ततो दृष्ट्वा महाबाहुं	३.४३.१	ततो नागा रथाश्चैव	३.५४.३२	ततो नु भूतसंघाश्च	३.७८.१८	ततोऽब्रवीन्महादेवो	२.१२६.१६३	ततो मदार्वजितचार देहः	२.८६.४०
ततो देवगणाः सर्वे	२.८७.३४	ततो नातिचिरात्कालाज्ज	२.३४.४	ततोऽन्तः पुरमध्ये	२.६६.२२	ततो ब्रह्मा भुवं नाम	३.१४.१५	ततो म-पुरं राजा	२.३७.२६
ततो देवाश्च नागाश्च	३.४१.२१	ततो नादः समुत्सृष्टो	२.७३.६१	ततोऽन्तरिक्षे वागासीः	२.३६.२८	ततो ब्रह्मा महातेजाः	२.७५.२०	ततो मध्ये दिध्यशब्दः	३.१३३.६२
ततो देवाश्च नागाश्च	१.४१.५८	ततो नादेन विव्रस्ता	३.१३३.७३	ततोऽन्तरिक्षे वागासीः	२.४३.७२	ततो भगवता तत्र	३.६.६	ततो मनांसि गोपीनां	२.१०१.४८
ततो देवाः सगन्धर्वा	२.१०४.५०	ततो नाराचमादाय	३.६६.१५	ततोऽन्यत्स तु जग्राह	२.७३.६३	ततोऽभयं विष्णुमयं श्रुत्वा	१.४३.१	ततो मन्वन्तरेऽतीते	१.४.२४
ततो देवाः सगन्धर्वा	२.१०७.२२	ततो नार्हति सत्कारं	१.२६.५८	ततोऽन्यां धारणां	३.२०.१	ततोऽभवन्महातेजा	१.३२.३६	ततो मरीचिमित्रं च	३.३६.१५
ततो देवाः सगन्धर्वा	३.७६.१२	ततो निकुम्भः समरे	२.८४.२३	ततोऽन्ये तपसा युक्ताः	१.७.४१	ततो भानुमतीं भानुदंदौ	२.६०.७६	ततो महति वृत्तान्ते	३.३२.१
ततो देवास्सगन्धवा	२.३६.१६	ततो निमेषमात्रेण संप्राप्तो	२.११६.६४	ततोऽन्ये दक्षपुत्राश्च	३.२१.१८	ततोऽभिसन्धि चक्रुस्ते	१.३.१३	ततो महात्माऽतिबलो	३.११.२
ततो देवाः सगन्धर्वा	२.४३.६५	ततो निरुत्तरान्दृष्ट्वा	३.६६.६७	ततोऽन्त्रकस्तदा दृष्ट्वा	२.८७.२२	ततोऽभ्युपगमद्वित्यां गर्भं	१.३.१२६	ततो महात्मा मनसा	३.३४.२७
ततो देवेषु नर्दत्सु	२.१२६.२१	ततोऽनिरुद्धः पुनरेव	२.१२०.४२	ततोऽन्धकोऽतिरुषितो	२.८७.१३	ततोऽभ्युपगमात्त्वष्टा	१.६.४४	ततो महान समभवत्	३.६४.१०
ततो देव्या सुरुपेण	२.११७.१०	ततोऽनिरुद्ध सहिता	२.१२७.२०	ततोऽपरं महत्खड्गं	३.६८.६	ततो भग चतुः षष्ट्या	३.५५.१२७	ततो महाबलं देवं	२.१२७.१३
ततो देशान्महाराज	३.१०७.११	ततोऽनिरुद्धस्य गृहे	२.१२१.१	ततोऽपर महावीर्या दान	१.३.६७	ततो भगवतादिष्टौ रणे	१.४६.३२	ततो मागधराद् श्रीमांश्च	२.३७.५
ततो दैत्यद्रवकारं	३.३६.१०	ततो निर्माणसंभूताः	३.२१.१५	ततोऽपसृत्य संक्रुद्धः	२.६१.४७	ततो भग्नं बलं दृष्ट्वा	२.१२७.५६	ततो मां प्राह भगवान्	२.११०.६५
ततो द्वादशवर्षाणि	२.५७.१०	ततो निर्मासितं रूपं	१.६.४५	ततो बलेन महता गजानी	२.३५.६५	ततोऽभिराद्य चरणी	२.१०८.३३	ततो मां वरुणोऽभ्येत्य	१.५५.२३
ततो द्वारवतीं गत्वा	२.११२.१६	ततो निवार्योशनसं रुद्रं	१.२५.३७	ततो बहुतिथे काले	१.२८.२४	ततोऽभिराद्य पितरं	२.७५.४१	ततो मां वीडितं मत्वा	२.१११.१६
ततो द्वारवती मध्ये	२.११६.२२	ततो निश्चक्रमुः सर्वे	२.५६.१५	ततो बहून्पश्येतां	२.८८.७०	ततोऽभिराद्य पितरं	२.६७.२६	ततो मामाह गोविन्दो	२.१११.१३
ततो द्विजं शुचि दान्तं	२.७६.२१	ततो निः श्रेयसप्राप्ति	३.८६.१०	ततो बाणः स बाणौ	२.११६.१५२	ततो भूतानि रोहन्ति	३.१७.२७	ततो मामुक्तवाक्वीरो	२.६६.३३
ततो नदत्सु तयोर्बु	३.४७.३५	ततो निष्प्रभतां याते	२.१२६.१३	ततो बाण सहस्राणि	२.११६.१५०	ततोऽभ्यगच्छत्वारितो	२.११६.६२	ततो मासद्वये पूर्णे मासे	२.७६.४४

ततो मासान्तशुक्लस्य	२.७६.४	ततो युद्धेन हत्वाजी	२.१०४.३६	ततो वर्षसहस्रान्ते	३.३४.२	ततो वैज्यं महाराज प्रजाः	१.५.४४	ततोऽस्त्रैश्च शिलाभिश्च	३.६१.३८
ततो मुख्यतमाससर्वे	२.५६.२०	ततो युध्यस्व कृष्णं	२.१२६.६०	ततो वर्षसहस्रे तु	३.३३.३२	ततो वैभाण्डकिस्तस्य	१.३१.५०	ततोऽस्माभिस्तदा तात	२.११२.११
ततो मुनिगणा दृष्ट्वा	३.७७.१	ततो योद्धुम पोढानां	२.११६.६३	ततो विक्षिप्य गहडः	३.७२.८७	ततो वैवस्वतपुरं जगाम	२.३२.१८	ततोऽस्य विज्ञाय	३.२.७
ततो मुहूर्तमासित्व नारदः	२.६७.५०	ततो रजि महावीर्यं	१.२८.६	ततो विग्रहवन्तं तं	१.३८.२०	ततो वैवस्वतं घोरं	२.३३.२०	ततोऽस्याश्च पपी	२.६४.१८
ततो मूर्तिधरा देवी	३.१६.२२	ततो रथवरं कृष्णः	२.७५.१	ततो वितिमिरे लोके	२.१२६.६४	ततो वैश्रवणो राजा	२.६०.१८	ततो हंसान् चार्तराष्ट्रान्	२.६१.३६
ततो मूलफलप्रायं	३.१३२.५७	ततो रथस्ययोर्युद्धं	२.७५.४	ततो वितिमिरो देशो	३.६४.६	ततो व्रजस्य भाण्डानि	२.१८.६१	ततो हंसी प्रभावत्या	२.६३.३८
ततो मृगसहस्राणि	३.७८.२१	ततो रथैः प्रजविभिर्वाहि	१.४५.४	ततो विधास्ये तत्त्वजः	३.२१.२०	ततो ब्रणामुखैश्चैव	३.२६.२०	ततो हंसी बभार्ध	३.१०७.४
ततो मृगाः समाघावन्यत्र	३.७८.१६	ततो रथैः सतुरगैर्विमानै	१.४७.२६	ततोऽविध्यन्महेन्द्रस्तं	३.६४.१८	ततोऽंशुमन्तं गोविन्दो	२.६०.१२	ततोऽहनद्रणे विष्णु	२.७५.५
ततोऽमृतात्सुमुत्तस्थौ देवी	२.२८.८१	ततो रैवत उत्पन्नः पर्वत	२.३८.४५	ततो विनिर्गता देवी	२.६७.४६	ततोऽश्मवर्षं निहते	३.४५.२१	ततोऽहनि गते तस्मिन्वाणे	३.८.२१
ततो मेघनिनादेन स्वरेणा	२.४४.३३	ततोऽर्ककिरणकारान	३.५४.५३	ततो विभुः प्रवरवराहरूप	३.३४.४८	ततोऽश्मवर्षं दैत्येन्द्रा	३.४५.१७	ततोऽहं तस्य दुर्बुद्धो	१.२०.५५
ततोऽम्बरतलाद्भूयः पतन्ति	२.४३.४	ततोऽर्धमुदविः साक्षात्	२.११३.२	ततो विभ्राजितं तेन	१.२३.१४	ततोऽसिलोमा संक्रुद्धः	३.५७.३७	ततोऽहं तस्य वचना	१.१७.१
ततोऽम्बरस्थास्ते दिव्याः	२.५०.७२	ततोऽर्जुनेन तरसा	१.२०.७४	ततो विरोधे देवानां	१.३.१३३	ततोऽसुरगणाः	३.३६.१५	ततोऽहं तात धमिष्ठा	१.२१.४
ततो यक्षमाभिभूतस्तु	१.२५.४८	ततोऽर्णवं समुत्तीर्य	२.११३.१३	ततो विवाहवत्सनानं विहितं	२.७६.७	ततोऽसृजत्पुनर्ब्रह्मा	१.१.३५	ततोऽहं तानपश्यं वै	१.२०.२
ततो यदुरदीनात्मा प्रजा	२.३७.४६	ततोऽर्द्धरात्रसमये पूतना	२.६.२४	ततो विश्वावसुर्नाम	१.२६.२०	ततोऽसृजद्वै त्रिपदां	३.१४.२५	ततोऽहं देवदेवेन	२.११६.५३
ततो यमस्तु भगवानाह्व	३.८५.२	ततो लेभे सुरैश्चर्यमिन्द्र	१.२८.३६	ततो विसृज्य गोविन्दस्त	३.८३.३१	ततोऽस्त्रं बलवेगेन	२.१२६.६१	ततोऽहं परमप्रीतो	२.११६.५५
ततो ययुर्विमानस्तु	२.७५.३३	ततो वज्रायुधो वज्र	२.७३.६६	ततो वृत्रः सुसंक्रुद्धस्तै	३.५७.५७	ततोऽस्त्रं बलवेगेन	३.३८.१४	ततोऽहं वृष्णिर्नैवेन	२.१११.१८
ततो यशोदा संक्रुद्धा	२.७.१३	ततोऽवधुष्यत तदा घोषे	२.६.१०	ततो वृषध्वजो देवः	३.८८.१	ततोऽस्त्रं परमं दिव्यं	२.१२६.५७	ततोऽहमेतमर्थं वै तमपृच्छं	१.१७.२०
ततो याते महादेवे	२.७४.४७	ततो वनान्त रगतो रेमे	२.४६.२१	ततो वृष्ण्यन्धकाः कृष्णं	१.३५.२०	ततोऽस्त्रं वरुणो देवो	२.१२७.६८	ततो हर्म्यतलस्था सा	१.१२८.१६
ततो युगान्ते भूतानामेष	१.४५.६२	ततो वयं पुनः सर्वैः	२.११३.३०	ततो वृष्ण्यन्धकाः कृष्णं	१.३८.२६	ततोऽस्त्रं वैष्णवं	२.१२७.६६	ततो हलधरो भग्न	२.१२२.८२
ततो युद्धानि वृष्णीनां	२.३६.१	ततो वर्णत्वमापन्ना	३.२१.११	ततो वैज्यभयत्रस्ता गोभूत्वा	१.५.४६	ततोऽस्त्रं सुमहावेगं	२.१२६.६३	ततो हाहाकृतास्सर्वा	२.४.३१

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

५६

ततो हाहाकृता	३.५७.४१	तत्तेहं संप्रवक्ष्यामि	३.७.१४	तत्र गन्धान्स्त्रवत्यन्ये	२.८६.५८	तत्र त्वां शतहृक् शक्रो	२.२.४७	तत्र यत्क्रियते कर्म इह	२.६६.६१
ततो हि भरणं कार्यं	३.१३२.८८	तत्त्वं शुचिमुखि ब्रूहि	२.६२.४४	तत्र गाथा महाराज	१.३०.३७	तत्र दामोदरो वाक्यं	२.१३.७	तत्र यो देवकीगर्भो	२.२८.५१
ततो हिमकरोत्सृष्टा	१.४६.१३	तत्त्वं हितं च देवेश	२.७०.१७	तत्र गोवर्द्धनं चैव	२.८.२८	तत्र दिव्याम्बर धरा	१.१०.७	मत्र रुक्मिसुतः श्रीमान्	२.१०५.६८
ततो हिरण्यकशिपुः	३.४१.११	तत्त्वमिच्छाम्यहं देवि	२.१०४.२०	तत्र गोवर्द्धनो नाम	२.८.२५	तत्र देवाः सगन्धर्वा	३.४२.४	दत्र रैवतको नाम पर्वतो	२.५६.२७
ततो हृष्टमनाः कृष्णो	२.३५.२	तत्परस्तन्मनाश्चास्मि	२.१२१.५२	तत्र चक्रं हलं चैव	२.३६.७३	तत्र देवाः समायाता	३.१०२.१२	तत्र वंशा विभज्यन्तां	१.५३.५३
तत्कथ्यमानममितमितिहासः	३.२.२	तत्पात रहोत्सृष्टमन्ध	२.८७.३३	तत्र चामरहारैश्च	२.२६.८	तत्र देवासुरसमे युद्धे	२.१२६.६६	तत्र विघ्नं चरन्ति	२.६३.४
तत्कालजीविनो वृद्धा	२.६३.६	तत्पारिजात कुसुमं	२.६७.२६	तत्र जन्म कुरुणां वै	१.१.६	तत्र धर्मश्चतुष्पादो	३.८.२	तत्र विष्णुश्च शक्रश्च	१.३.६०
तत्कालफेनमुत्क्षिप्य	३.२८.१३	तत्पितामहाराज्यं त्वं	३.४८.२७	तत्र जाम्बवती देवी	२.७७.६	तत्र नोत्सहते चान्यो	३.१०.४४	तत्र वृद्धतमस्त्वेका गोपो	२.१५.४
तत्कालमेव कृष्णोऽपि	२.६०.४४	तत्प्रद्युम्नो महावेगं	२.७३.५७	तत्र तत्र प्रभासद्विचित्र	२.६६.३	वत्र पाण्डोः श्रिया	१.५३.५१	तत्र वृष्ण्यन्धकाः सर्वे	२.६३.२४
तत्तदेव हि ताश्चक्रमुदा	२.८८.३१	तत्प्रवर्त्तस्व वंशाय	१.४५.३०	तत्र तत्र च विप्रेन्द्रान्नि	३.६६.३१	तत्र पुण्या ववुर्वाताह	२.६४.२१	तत्र वै क्रियतां यत्रः	२.१०६.५८
तत्तमो नाशयेद्रात्रौ	३.२८.२१	तत्प्रसेनजितं दिव्यं	१.३८.२४	तत्र तत्र च हन्ताहं	३.११२.१०	तत्र प्रक्षुभितस्येव सागर	२.३५.६७	तत्र वैदूर्यरत्नानि ददशं	२.६४.२२
तत्तत्तमभुवि राजेन्द्र	३.२८.१६	तत्फलं समवाप्नोति	३.१३५.४	तत्र तद्युद्धमभवत्प्रख्यातं	१.२५.३५	तत्र प्रविश्य भगवान्	२.८५.४७	तत्र वै पार्वती नाम	१.५५.५०
तत्तस्यकर्षतो बद्धं तिर्यग्ग	२.७.१७	तत्र दूतगुणं तावत्पश्यामस्तु	२.६८.१०	तत्र तस्यासतः कालः	२.६.१	तत्र प्रविष्ट मात्रस्तु	१.१०.२६	तत्र शक्तो हि गान्धर्व	३.२६.६
तत्तस्य वैदूर्यसुवर्णं	३.५१.६८	तत्र दूती गामिष्यामि तवाहं	२.६२.३६	तत्र ता वरहेमाभा ददशं	२.६४.४	तत्रः प्रापय मां शीघ्रं	२.१२१.१०५	तत्र शक्रस्त्वया कृष्ण	२.१२१.४६
तत्तस्या वचन श्रुत्वा	१.२४.११	तत्र कालं मनो वाचं	१.१.३२	तत्र तूर्यसहस्राणि	३.५६.४५	तत्र प्रासादमुख्यो वै	२.६८.५५	तत्र शब्दगतिर्भूत्वा	३.११.५
तत्तान्यदिव्या मणि	३.५२.२०	तत्र गत्वा महादेवं	३.७३.३६	तत्र ते कृष्ण संग्रामे	२.३६.७६	तत्र मचसहस्राणि	२.१०१.५७	तत्र शिष्टास्तु ये देवा	१.२५.३६
तत्तु तालवनं नृणामसेव्यं	२.१३.११	तत्र गत्वा महाराज	३.१००.१७	तत्र तेषां नृवीराणामति	२.१६.६०	तत्र मन्त्रयतामेवं देवतानां	२.१.१५	तत्र शुम्भनिशुम्भौ द्वौ	२.२.५१
तत्तु धेन्वाः पयः पीत्वः	२.४०.१	तत्र गत्वा यथायोगं	३.६०.३८	तत्र तौ दारको गत्वा	२.५.३	तत्र मन्त्रयतामेवं देवतानां	२.२८.५०	तत्र शूराः समाख्याता	१.१.१३
तत्तुल्यं मम चक्रं तु	३.१००.४०	तत्र गत्वा स्थिताः सर्वे	३.६५.१८	तत्र त्वं शिशुरेवादी	१.५५.३६	तत्र तल्लाः समाजग्मुः	२.१०१.५५	तत्र शैलगतौ दृष्ट्वा	२.३६.७०
तत्तेनुपूर्व्या वक्ष्यामि	१.१६.८	तत्र गत्वा स्थिताः सर्वे	३.६५.२५	तत्र त्वमात्मनः क्वांत	२.१०४.६०	तत्र यज्ञे वर्तमाने सुनाट	२.६१.२६	तत्र षष्टिसहस्राणि	१.१५.८

श्रीहरिवंशपुराणम् :: लोकानुक्रमणी

५७

तत्र संवत्तं सत्रिः सकलै	१.८.३२	तत्रानिरुद्धहरणं कृतं	२.१२१.४८	तत्राहूता हि राजानो	२.६१.२	तत्रोर्ध्वस्तेसस्तस्य स्थित	१.२५.५	तथा च भग्नो यमलार्जुनौ	२.८६.१०
तत्र संशोषयामास	३.११.८	तत्रापि गतमस्माभिर्हन्तुं	२.४६.१३	तत्रे वृत्ते करिष्यामि यथा	२.६१.१६	तत्रोषां विस्मितां हृष्ट्वा	२.११६.५८	तथा च तपसाहृष्टो	३.७.१३
तत्र संज्ञां विमुंचन्ति	३.१३३.४२	तत्रापि सहजां लीलां	१.५३.२५	तत्रैकलव्यसंवासो द्रोणे	२.५६.२८	तत्सत्रं ब्रह्मदत्तस्य	२.८३.६	तथा च सात्यकिर्वीरः	३.११३.१५
तत्र सौम्यं महात्मान	२.७२.२७	तत्राप्यर्थपरा विप्रा	३.८.११	तत्रैकस्तु महाबाहुरसि	३.५७.६१	तत्सवालो महच्चापं	२.२७.५६	तथा चानागतं सर्वमस्त्राणि	२.६६.१७
तत्र स्थानानि भूतानां	३.२०.२१	तत्रायं कल्प्यतां घोष	२.८.२६	तत्रैकार्णवंसकाशे	३.४६.३५	तत्सर्वक्रमयोगेन	१.८.४१	तथा चान्ये व्यराजन	३.४१.६६
तत्रस्थाः परमा नार्यश्चित्रेण	२.११८.१	तत्रायं च गदी खड्गी	२.६१.१२	तत्रैव गजजयूथानि	२.६८.७४	तत्सर्वं न करिष्यन्ति	२.६६.६५	तथाचाप्रतिमां शक्तिं	३.४४.११
तत्र स्थित्वा च शैनेयः	३.६५.२६	तत्रायुधबलं चैव रूपं	२.४०.३८	तत्रैव गुरुकं भाण्डं	२.२६.३८	तत्सर्वं नाशमायाति	३.१३५.३	तथा चैव करिष्यामि	२.६२.४०
तत्र स्पन्दोलिकाभिश्च	२.१४.१०	तत्रायुधानि संन्यस्य गृहे	२.४५.१६	तत्रैव तु महायुद्धे	३.५८.१	तत्सर्वं वासुदेवाय नारदेन	२.५७.४८	तथा जाम्बवती चक्रे पुरो	२.८१.४१
तत्र हत्वा पञ्चमेध्यान्वित	२.१६.११	तत्रावशिष्टान्मनुजान्मुप्ता	१.५३.५७	तत्रैव त्वां भगिन्यर्थे	२.२.४८	तत्सुभीमं महद्युद्धं	३.६०.३६	तथा तथा गुणा वाच्याः	२.६१.४८
तत्राजगामप्रद्युम्नः कुमारै	२.६१.३	तत्राश्चर्यं मया दृष्टं	२.२६.६६	तत्रैव परतः वान्ते देशे	२.३८.६	तत्सुरासुरयुक्तं	१.४५.३	तथा तथा प्रयत्नश्च	२.८८.६
तत्रात्रिः सर्वभूतानां	१.२५.२	तत्रासनानि ख्यातानि	२.२६.७	तत्रैव ब्रह्मसदने समे	३.२४.३	तत्सैन्यं महदायाद्वै श्रुत्वा	२.५७.२५	तथा तदभवत्तस्य	२.६१.१०
तत्रादिति कश्यपं	२.७६.२७	तत्रासनानि ख्यातानि	२.२६.१०	तत्रैव युध्यते रुद्रो	३.५८.५४	तथा कर्तुं महादेवः	१.२६.४३	तथा तातकरिष्यामि	१.२८.२६
तत्रादितिमुपास्यन्ती	२.६४.५५	तत्रासनदानवा घोराः सर्वे	१.४२.११	तत्रैवान्तहिताः सर्वे	२.११३.१६	तथा कर्तव्यमेतद्धि यथा	२.२२.६६	तथा तां मन्यसे	३.२७.४७
तत्रादित्या महात्मानो व	२.६६.२	तत्रासीनं महाबाहु	३.४२.६	तत्रैषा देवकी या ते	२.१.१६	तथा कर्म महत्कृत्वा	२.६४.७३	तथा दत्त्वा वरं तस्य	२.७४.१७
तत्रादित्याश्च नाध्याश्च	३.४७.१	तत्रासीनेषु सर्वेषु	२.६३.२५	तत्रैषा देवकी या ते	२.१.१६	तथा कुवरोऽश्वहस्रयुक्तं	३.५२.२७	तथा नखाङ्कुशैस्तीक्ष्णै	२.७३.८८
तत्राद्भुतमिदं भूयो	३.५५.११३	तत्रासीनोऽभ्यलंकृत्वा	२.६३.३१	तत्रैषा देवकी या ते	२.१.१६	तथा क्षणमुहं ताभ्यां	२.१०१.१२	तथा नागपतिं तोये	२.१०२.२६
तत्राद्य देवमीशानं नमस्कृत्य	२.६७.५१	तत्रासुरेभ्यः शंसन्त	३.३८.३	तत्रैषा देवकी या ते	२.१.१६	तथाक्षत महावृष्ट्या	२.१०१.१६	तथा नागाः सुपर्वाणो	२.१२०.३०
तत्राधर्मश्चतुष्पादः	३.८.१५	तत्रासौ गोषु निरतः	१.५५.३७	तत्रैषा देवकी या ते	२.१.१६	तथा गच्छगमिष्यामः	२.२६.७१	तथा नु ब्रुवते त्वां	३.१००.३६
तत्रानिरुद्धं हृष्ट्वां	२.११८.६६	तत्राहं युद्धयमानस्तु	२.५३.४२	तत्रैषा देवकी या ते	२.१.१६	तथागतौ तु हृष्ट्वा तौ	२.६०.३६	तथान्ये च महावीर्या	३.१३३.१७
तत्रानिरुद्धं सापश्यच	२.११६.२६	तत्राहं सबलो याता	३.११६.७	तत्रैषा देवकी या ते	२.१.१६	तथागाण्डीवधन्वानं	२.१०२.१७	तथा परिवहः श्रीमान	३.४६.६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

५८

तथापि न करोम्यन्तं	३.१०६.१२	तथास्त्विति वलिः	३.७१.४२	तथेत्युक्त्वा हृषीकेस्तथा	२.७६.१४	तथैवाङ्गिरसस्तत्र भृगु	१.२५.१३	तदप्रतिहतं युद्धे दान	१.६.६३
तथापि मित्राभावात्तु	३.११४.२०	तथास्त्विति वरो दत्तो	२.६८.१६	ततेत्येवाब्रवीत्कृष्णो	३.३३.१३	तथैवाध्वन्यवेपेण	२.४६.५६	तदरण्यं श्मशानाभं	२.२४.६
तथा प्रतिहतं चक्रं	२.१०६.६८	तथास्त्विति सुराः सर्वे	३.६७.२०	तथेन्द्रविष्णुसहिताः	३.३१.१५	तथैवान्ध्राश्च पुङ्खाश्च	३.४६.५५	तदचिष इवाग्नेया	३.१६.४२
तथा प्रलयमापन्न	३.१८.३६	तथा हि परिपूर्णा क्षमा	२.१००.१०	तथैव च श्रुतवर्णि	२.६०.१४	तथैवाभयदस्यासीत्	१.३१.७	तदर्थस्तेन संग्रामः कृतो	२.४१.४०
तथा प्रवर्तिते तेषां	३.५४.४४	तथा हि वर्तमानं तमूर्ध्वं	२.५७.८	तथैव ज्ञातिलुब्धस्य मम	२.३१.४६	तथैव वामपाश्वरे तु	२.५०.७६	तदर्थं यादवान्वीर	२.८३.४२
तथाभूतिमुवाचेदं मातुलं	२.८४.५१	तथेति कश्यपश्चोक्त्वा	२.७२.२६	तथैव तं जघानाशु	३.६८.१४	तथैवासीनमृत्सङ्गे सहस्रा	२.२६.६४	तदद्धेनापि दातव्या	३.१३२.७२
तथा यक्षगणाश्चैव	३.१४.६३	तथेति कृष्णं स हरिः	२.७६.३५	तथैव तु महायुद्धे	३.५७.४४	तथैवासुरमुख्योऽपि गदां	२.६०.४१	तदश्मवर्षं सिंहस्य	३.४५.१८
तथा यज्ञफलानां	३.२.३२	नथेति प्राह तां कामः	२.६३.४८	तथैव त्रिदिवं देवाः	३.४१.३७	तथोक्षदुष्टोऽतिबलो	२.१०१.३६	तदश्मौषैदिति सुतास्तदा	३.४५.१८
तथारत्नालांश्च बहुप्रकारा	२.८६.६५	तथेति स समाभाष्य	२.२४.७६	तथैव नाम्ना तेनेह	१.१८.२०	तथ्यं चोक्तं नारदेन	२.२८.११३	तदस्त्रप्रतिधातार्थं देवीं	२.१०६.५७
तथा वरे दीयमाने	२.८३.३३	तथेति सात्यकिः प्राह	३.११७.१३	तथैव पश्चाच्चकमे	२.६५.३२	तदक्षरं विविधमथाश्रितो	३.१०.६६	तदस्त्रं वारयामास	३.१२७.४२
तथा वर्षसहस्रं	३.८.१४	तथेत्यभिहतो भर्ता तथा	१.३.१२८	तथैव पुत्रो भगवान्	१.७.३५	तदत्र तथ्यं तद् ब्रूहि	१.२५.४३	तदस्त्रमभवत्तस्य प्रदिग्धं	३.५५.१५४
तथा वर्षसहस्रं द्वे	१.८.१४	तथेत्याह च कुम्भाण्डं	२.११६.१६५	तथैव प्राह तां सर्वस्तथैव	२.४६.५	तदद्भुतं दैत्य सहस्र	१.४३.३१	तदस्त्रशस्त्रग्रथितं क्षिप्तो	१.४७.३५
तथा व्रजगतः गोरिहृष्ट्वा	२.१०१.४३	तथेत्युक्तेति कृष्णेन तुतोष	२.६७.३६	तथैव भगवान्हंसो	३.१०.३५	तदद्भुतं महददृष्ट्वा विस्मयं	२.७५.६	तदस्माकं गुरुत्वं हि	२.१६.४३
तथापि शृणु देवेश	३.११५.२४	तथेत्युक्त्वा च तस्या	१.२२.२	तथैव भ्रातरं चास्य	२.३२.६०	तदद्य रुचिरश्रोणि	२.६३.४१	तदस्य मूलं युद्धस्य	३.२.२०
तथा शतभिषा चैव	२.७७.१४	तथेत्युक्त्वा च ते सर्वे	१.२१.१३	तथैव मेरुसावर्णाश्च	१.७.६	तदव्यात्मविदां चिन्त्यं	३.७.१७	तदस्य सर्पराजस्य कर्त्तव्यो	२.११.५६
तथाश्रमनिवासे तु	३.१३२.६६	तथेत्युक्त्वा च तौ	२.७५.२७	तथैव रामोऽतिबलः	२.१०१.१७	तदनेन तवोग्रेण परितुष्टो	१.४८.६१	तदस्यानृण्यहेतोर्हिनगस्य	२.४२.७६
तथा सति न मे दोषो	३.११४.२२	तथेत्युक्त्वा तु धर्मात्मा	२.७३.१०४	तथैव वसुधां जित्वा	२.२५.३३	तदपम्रघनुषं भग्न	१.४६.२६	तदस्याः श्रुतवन्तः स्म	१.५१.२७
तथासुरवरो दैत्यो	३.५७.२२	तथेत्युक्त्वा नमस्कृत्वा	२.८५.६१	तथैव सूद्रेः शुचिभिस्त्रि	१.६.५३	तदपूर्वमहष्टवैव गन्धं	२.६६.१६	तदहं त्वरया विष्णो प्राप्तः	१.५४.१६
तथास्तु प्रथमः कल्प इति	२.६७.३५	तथेत्युक्त्वा वरं वक्त्रे	१.२६.४१	तथैव सर्वगन्धाना रसानां	२.७६.२६	तदप्यतिबलो विष्णुर्दोभ्यां	२.६४.४३	तदहं श्रोतुमिच्छामि	२.११६.३
तथास्त्विति च स	३.६७.१८	तथेत्युक्त्वा स तद्युद्धं	२.१२२.२६	तथैव सर्वे महतोतिवीर्या	२.५५.५८	तदप्य वसितं कार्यं	२.१२७.१४१	तदहं समनुप्राप्तो गवां	२.१६.३६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

५६

तदा क्रुद्धेन दैत्येन	३.४६.४१	तदाप्रभृति हास्यन्ति	३.२.४३	तदिन्द्रहस्तादमृतं जहार	३.३०.३२	तदच्छ त्रिविधं शक्र	२.१६.६६	तद्भयं पृष्ठतः कृत्वा	३.५६.६०
तदागच्छ महाभाग	१.५१.३२	तदा भुत्तुमूलं युद्धं वर्षं	१.५२.३३	तदिमां संत्यजाशु त्वं महीं	२.४३.८४	तदगच्छ त्वं सहानेन	१.४६.१०	तद्भवद्भिर्गुणा वाच्याः	२.६१.४४
तदागच्छस्व भद्रं ते गच्छाम	१.४८.६२	तदायान्तं तदानीकं	३.५६.७६	तदियं पूः प्रकाशार्थं	२.५८.२८	तदगच्छ शम्बरगृहं	२.१०४.५६	तद्भवविषमहं मध्ये काल	२.३७.३३
तदागच्छ स्वयं विष्णो	१.५४.८३	तदायुतसहस्राणि	२.६०.५५	तदिष्टां भजतां शक्रो	१.४८.७०	तदगच्छाम महाराजं	२.४३.६६	तद्भस्म वक्षसस्तस्य	२.१२२.७६
तदागताभिर्नृवराहतास्तु	२.८६.७३	तवारोह रथं शीघ्रं	१.३६.११	तद्रूपसृत्य तपसा युक्ताः	१.२.३७	तदगमिष्यामि मध्येऽस्य	२.७२.२४	तद्यथा शारदं वर्षं	३.६०.१६
तदाचक्ष्वोपभोक्ष्यामि	२.८७.११	तदा विचलिते घर्मे	३.४.११	त हष्ट्वाः परमप्रीताः प्रजा	१.५.४३	तद्दानवमहोमेघं	१.४७.३६	तद्यथा सुमहद्युद्धं	३.५८.५५
तदाज्ञापय किं कुर्यां सदा	२.१२.३७	तदाश्चर्यपश्यन्त	३.५७.४	तदेतदखिलं सर्वं	३.१०.६४	तद्दिनतलं भित्वा	२.११०.१८	तद्यानपात्रं ववृधे तदानीं	२.८६.२१
वदा तत्सुचिरं कालं	३.५५.१२८	तदासुराणां निलयं	३.३८.२	तदेतद्वायुसंभूतं	३.१६.१८	तद्दृष्ट्वा कदनं घोरं भैमानां	२.८४.३१	तद्युगे तत्कुलीनश्च	३.२.४१
तदा तां शप्तुमारब्ध	१.२५.४२	तदा सूक्ष्मो महौदको	३.२.४४	तदेव चाथ प्रवरं षट्	२.८५.६६	तद् दृष्ट्वा कर्म विपुलं	२.१०५.५४	तद्युद्धं देवदैत्यानां	३.५३.३३
तदा त्व तमसाकृष्टस्तदा	३.८८.२८	तदासृजन्महामायां भयस्तां	१.४५.१८	तदेव व्रतकं दत्तं सावित्र्या	२.८१.२१	तद्दृष्ट्वा तस्य पत्न्यस्तु	२.६६.२७	तद्युद्धमभवत्तत्र तयोस्तेषां	२.४३.३२
तदात्वमात्रे श्रद्धेयाः	३.४.१०	तदद स्कन्धे समाधाय	३.४.३०	तदेवाक्षरमित्या हुष्यत्तद्	३.१७.६५	तद्दृष्ट्वा संप्रवृत्तान्तु	२.८३.१८	तद्युद्धमभवताभ्यां रामस्य	२.४३.५७
तदा त्वाकाशमैश्वर्यं	३.१६.८	तदास्ते मूढवत्त्वं किं	१.१४.४६	तदेव निर्णयः श्रेष्ठः	१.५३.६२	तद्देवयक्षागंधर्वं महर्षि	२.३६.१७	तद्युद्धमभवद्धोरं घोररूपेण	२.६३.१०६
तदा दाक्षिण्ययुक्तं तं	२.८८.३५	तदा हैमवती वाक्यं	२.११७.१८	तदेव नूनं विष्णुर्वा	२.२२.४६	तद्देवयक्षागंधर्वं महर्षि	२.४३.६६	तद्युद्धमभवद्धोरं तयोस्तस्य	१.५२.३२
तदादित्याश्च साध्याश्च	३.४१.३१	तदा ह्यल्पेन तपसा	३.२.४५	तदेव वै वेदमयः	३.१०.११	तद् द्विधा जगतां नाथ	३.१०१.११	तद्युद्धमभवद्धोरं तेषां देवा	२.५६.७७
तदा देवीं कोटवतीं	२.१२०.२	तदिच्छावो वरं दत्तं	३.१३.२४	तदेव शन्तनोर्वंशः पृथिव्यां	१.५३.४७	तद्धनीभूदैत्यानामन्वकार	१.४५.१७	तद्युद्धमभवद्धोरं देवदान	१.४७.२१
तदा द्विहायना दम्प्यास्तथा	३.३.१८	तदितः शोणितपुरं	२.१२१.६३	तदेव संहृत्य जगत्कृत्वा	३.३३.४६	तद्धविस्तव पुत्रस्य विसृजा	१.४५.६१	तद्युद्धमभवद्धोरं सौमित्रे	१.५४.४८
तदान्तरिक्षं संप्राप्तं	३.१६.६	तदितो दशरात्रेण	२.७६.६२	तदेव सान्त्वयतां सर्वशोकार्तं	३.३२.१५	तद्वलं तु समासाद्य	२.१२२.५४	तद्युद्धमभवद्धोरं हि कर्तव्यं	२.२७.६
तदाप्रभृति तस्याद्यो	३.३६.६	तदिदं प्रस्तुतं रङ्गे	२.३०.१७	तदेवोऽद्य मया त्यक्तो मम	२.४३.८२	तद्वलं पृथिवीशानां हृष्ट	२.४२.६	तद्वधार्थं महाबाहुः शङ्ख	२.६३.२०
तदा प्रभृति यत्तोभूद्रक्षां	२.१०१.६१	तदिदं वार्षिकं चक्रं	१.५०.२६	तदगच्छ कृष्ण शैलेन्द्रं	२.३६.८२	तद्वत्तद्वा इन्द्रिययुक्तं	३.२६.२५	तद्वः पृच्छस्व पितरं	३.६६.६
तदाप्रभृति वै आता	१.३.२६	तदिदानीं गतं दुःख	२.५६.३	तदगच्छ गजमारुह्य	२.२८.११८	तद्वद्वा हि यदि विद्येत	३.१११.२८	तद्वद्भव मुहूर्तेन	३.५६.३४

तद्विष्णुर्णितमालक्ष्य पुरं	२.६२.१३	तन्मां पश्य समापन्नं	१.४५.६६	तपसे धृतचित्तस्तु	३.८४.१६	तमतिक्रान्तमर्यादं	१.५.८	तमहं श्लक्ष्णया वाचा	१.५३.३६
तद्वृक्षराजकुसुमं रुक्मिण्या	२.६५.१५	तन्मुमोचाच्युत सुतस्तस्य	२.६७.१७	तपसोग्रेण महता पुत्रार्थी	२.५३.५२	तमदृष्ट्वैव राजानं	२.३६.६३	तमहं स्तोतुमिच्छामि	२.५५.३७
तद्वै तस्य महाभागो वर्षा	१.३२.८६	तन्मे त्वमुपपन्नाय	३.७.६	वपसोग्रेण योगज्ञाः	३.१३३.२६	तमद्भुतमचिन्त्यं च	२.७५.५५	तमागतं नरपते सतां गति	२.६७.३६
तद्वैश्रवणमश्लिष्टं वैवस्वत	१.४४.४६	तन्मे मनसि वाष्पण्ये	२.१०४.३२	तपसोऽन्ते सुमहतो	१.२६.१०	तमधीत्य स्तवं दिव्यं	३.७२.६३	तमागतमृषिं दृष्ट्वा	२.२८.४६
तद्वज्रस्थानमधिकं शुशुभे	२.६.३०	तपः कामः स यक्षस्तु	२.२८.२६	तपस्विभिस्तपोयुक्तै	३.८०.१४	तमन्तकमिवायान्तमजेयं	३.६०.७२	तमागस्कारिणं घोरं	१.४१.१३८
तनुत्रं चैव चिच्छेद शरेण	२.६३.११६	तपनस्यैव तद्रूपं	३.१६.३४	तपितकनकविन्दु	३.५१.२६	तमतन्तरे गृहीत्वाशु	३.६६.३७	तमात्मज्जो वै पुलहः	३.५३.३७
तनुत्रैः सतलत्रैश्च	३.५५.८१	तपनीयेन महता कवचेन	३.५०.२५	तपोबलाद्गार्ग्यमुनेर्महात्मनो	२.५३.५४	तमन्तरे पटवीरो	३.६८.८	तमापतन्तं ददृशे	२.११६.१४०
तनुरु हैर्यथा जातैः	३.४.३८	तपन्तं तमिवादित्यं	३.६१.३४	तपोबलेन वा राजन्विद्यया	१.२४.६	तमन्या भावविकर्चनेत्रैः	२.२०.३१	तमादिपुरुषं देवं	१.१४.२४
तन्त्र मन्त्रयतामेवं देवतानां	२.१.१४	तपन्तमिव तेजोभि	३.१०.२३	तपोयज्ञफलानां च	३.३.१४	तमन्वयुर्देवगणा मुनयश्च	१.४४.४८	तमापतन्तं धनदो	३.६०.४६
तन्त्रीभिः सुप्रयुक्ताभि	३.२६.७	तपः शरीरास्ताः सर्वा	१.१८.२१	तपोरतिरकल्माषस्तन्वी	१.७.२४	तमन्वयुर्देवगणा	३.५२.२३	तमापतन्तं प्रमुखे प्रति	२.२१.१७
तन्द्रिजस्तन्द्रिपालश्च	१.३४.३८	तपः शांता ब्रह्मपराः	३.२३.३०	तपोविशेषैराराध्य हरं	२.८६.५५	तमन्वयून्पाश्चैव दक्षिणा	२.६०.४	तमापतन्तं वेगेन	३.५५.८
तन्नरेन्द्रैः परिव्यक्तं	२.४३.७७	तपश्चरत्सु पृथिवीं	१.२.३५	तपोवीर्यतिसमुत्पन्नं	१.१७.६	तमपि प्रस्थितं भूयो	१.३८.२१	तमापतन्तं श्रीमन्तं मूर्ति	२.४४.१२
तन्निकुम्भस्य चिच्छेद	२.८५.६२	तपश्चरन्त्यः सुमहद्दुश्चर	१.१८.१६	तप्यते हृदयं तस्या	२.११७.३२	तमप्याहुर्मनुष्येन्द्रं	१.४१.१२४	ममापतन्तं संप्रेक्ष्य केशिनं	२.२४.१६
तन्निकुम्भस्य चिच्छेद	२.८५.६२	तपश्चरन्त्यः सुमहद्दुश्चर	१.१८.१६	तप्यमानास्तपस्तीव्रं	२.२.१४	तमप्रतिमकर्माणं समानं	१.४८.४५	तमापतन्तं संप्रेक्ष्य कृष्णः	२.७३.३३
तन्निकुम्भस्य चिच्छेद	२.८५.६२	तपश्चरन्त्यः सुमहद्दुश्चर	१.१८.१६	तप्यमानो मृगैः सार्द्धं	३.२२.६	तमप्रतिहतं युद्धे	२.१०६.३७	तमापतन्तं संप्रेक्ष्य	२.११६.६८
तन्निकुम्भस्य चिच्छेद	२.८५.६२	तपश्चरन्त्यः सुमहद्दुश्चर	१.१८.१६	तं दृष्ट्वा रुक्मशैलाभं	३.४३.६	तमवध्यं तु विज्ञाय	३.६०.५३	तमापतन्तं संप्रेक्ष्य	३.५७.६२
तन्निकुम्भस्य चिच्छेद	२.८५.६२	तपश्चरन्त्यः सुमहद्दुश्चर	१.१८.१६	तं दृष्ट्वैरावतस्कन्ध-	२.८५.२१	तमश्च नाशयामास	२.६६.६६	तमायान्तमभिप्रेक्ष्य	३.५६.१३
तन्निकुम्भस्य चिच्छेद	२.८५.६२	तपश्चरन्त्यः सुमहद्दुश्चर	१.१८.१६	तं श्रुत्वाभ्यागतस्तत्र	२.६७.४	तमसा निष्प्रभं सर्वं न	१.४२.१८	तमारुह्य महाशैलं	३.८४.१४
तन्निकुम्भस्य चिच्छेद	२.८५.६२	तपश्चरन्त्यः सुमहद्दुश्चर	१.१८.१६	तमंशुमान्महा बाहुर्विव्याध	२.६०.११	तमसा संवृते लोके	३.४५.३१	तमारुह्य रथं कृष्णः	२.७४.१
तन्निकुम्भस्य चिच्छेद	२.८५.६२	तपश्चरन्त्यः सुमहद्दुश्चर	१.१८.१६	तमग्निमात्मसंसृष्टं	२.२८.७६	तमस्तच्च कथं घोरं	२.११४.५	तमालैलावनयुतं मरीचक्षु	२.४०.१२

तमालोक्य तथाभूतं	३.६०.७३	तमुवाच हृषीकेशश्शंखं	२.५८.६२	तयोः कथयतोरवे कृष्ण	२.८५.४४	तयोः स्तवैस्तैः सुप्रीतः	१.५.४२	तव पारान्महाप्राज	१.६.३२
तमाविशत्तदा विष्णु	१.११.४५	तमुवाचाथ धर्मत्मा गता	२.७२.१८	तयोः कथयतोरवेवमब्रुवन्	२.६.१८	तयोस्ते सलिलं दत्त्वा	२.३२.६४	तव पुत्रेण चाकृष्य	१.२०.११०
तमासीनं नृपं तत्र परमे	२.३७.५६	तमुवाचाथ वै कृष्णो	२.३३.१६	तयोक्तस्त्वत्सम	२.७१.२२	तरङ्गपाङ्गकुटिलां	२.११.२६	तव प्रसादाद् गोविन्द	२.३२.२७
तमाह कृष्णस्सहृष्टो	२.२६.४७	तमुवाचादितिर्माता	२.७६.२८	तयोः पुत्र सहस्राणि	१.३.६३	तरङ्गविषमापीडा चक्रवाकोर	२.४६.३८	तव योगप्रभावेण	२.११.८.८६
तमाह केशवो हृष्टः	२.२६.६६	तमूचुर्ब्रह्मकृपयो वचनं	१.४५.२६	तयोः प्रभावं स ज्ञात्वा	२.३३.११	तरुणास्तव रूपेण चरेयं	१.३०.३३	तव वक्त्राज्जागन्ताथ	३.८८.३६
तमाह सस्मितं कृष्ण	२.१४.३४	तमूचुर्विस्मिता गोपा	२.१७.२६	तयोः प्रयुद्धयतोस्संख्ये	२.३५.५६	तरुणादित्यसंकाशो	२.४६.६७	तव विश्रामहेतोर्हि	२.५०.१६
तमिन्द्रः पूज्यामास	२.६६.१६	तमूचुः स्थविरा गोपाः	२.४६.६	तयोः प्रवृत्तयोरेवं कृष्ण	२.१५.१	तर्ज्यन्तं सुरगरान्	१.४६.५५	तव वेगसमो नास्ति	२.१२१.१०८
तमिन्द्र स्तोयदैः	३.४५.२६	तमूक्षयोगानुगतं शिशिरांशु	१.४४.२५	तयोः प्रेक्ष्यन्त संरम्भं	३.५५.१५	तद्धर्म्यपृष्ठं प्रभया	२.६४.४	तव सत्ये निविष्टस्य	२.११०.४३
तमुचूयदिवास्सर्वे	२.५६.६	तमूक्षवन्ते नगरे	२.१०८.२	तयो रमयतोरेवं तल्लिप्सुर	२.१४.१२	तर्पणानि च मुख्यानि	३.१३२.६०	तव सरक्षणार्थाय	२.१०६.५१
तमुद्यन्तं तदा दृष्ट्वा	२.३६.२७	तमेवार्थमनुध्यान्तो जाति	१.२१.२६	तयो रागमनं लिप्सुरास्तु	३.१२०.१६	तर्पयित्वा द्विजान	२.६५.१०	तवांगं तिलशः कृत्वा	३.६६.११
तमुपायं चिन्तयामः शर्वो	२.८६.३४	तमेवार्थमनुध्यातो नष्ट	१.१६.३	तयोरागमने प्रीतिः	२.२२.६५	तर्पिताश्चापि विप्रा ग्या	२.१७.२२	तवाधः पर्वतश्चेष्ट	२.७४.४८
तमुवाच ततः कृष्णः	२.५५.६५	तमेवार्थं महात्मानं	२.७२.३	तयोरेकस्तु पद्माक्षश्याम	२.२७.५५	तलशब्दो हासशब्दो	३.११५.३८	तवाननाभो वरगात्रि	२.६५.२
तमुवाच ततः कृष्णः	२.८५.३५	तया चाभ्यर्थितो भर्ता देव	२.६६.३२	तयोगृहीत्वा धनुषी	३.१२६.२०	तलेन वासुदेवोऽपि	३.६७.१४	तवानुकूल्याद्राजेन्द्र	१.४.२५
तमुवाच ततः कृष्णो	२.२७.७	तया जघानातिरथस्त्वष्टु	३.५५.३८	तयोर्वर्तति संग्रामे गरुड	२.७३.२३	तलेनाशनिकल्पेन स तं	२.२७.१६	तवापि पुत्रं कल्याणि	१.२७.२१
तमुवाच ततः कृष्णो	२.५८.७०	तया पुनरहं गृह्य	२.१०८.१२	तयोः शकलयोर्मध्ये आकाश	१.१.३१	तल्लोककर्त्रा सत्कृत्य दत्तं	२.६७.४२	तवाभिप्रायं विज्ञाय ब्रवीमि	२.५५.४४
तमुवाच ततः शक्रो	२.७३.१७	तयाभिनीते वरगात्रयष्ट्या	२.८६.७०	तयोः शराः प्रकाशन्ते	३.५५.१६	तव चक्रपहारेण	३.८०.६२	तवावतरणे विष्णो कंस	१.५४.८५
तमुवाच ततो ब्रह्मा	१.४५.५५	तया ललाटेऽभिहतः	२.६७.१३	तयोश्चटचटाशब्दः	३.१२६.३७	तव चागमनं दृष्ट्वा	२.४६.१६	तवास्मिन्यमुनातोये नैव	२.१२.३६
तमुवाच महादेवो	२.८५.३८	तया सह ततस्तत्र	३.१४.२४	तयोश्च तुमुलः शब्दः	३.६६.१२	तव चेच्छृणुयाद्वीर सङ्भूतं	२.६२.५४	तवैव तेजसा क्रान्तां	१.५२.१८
तमुवाच मुनिश्चेष्टः	२.८६.५०	तया सहावसद्राजा	१.२६.५	तयोश्चम्बोस्तदा तत्र बभूव	१.४७.२०	तव तातो महावीरो	२.११७.३८	तवैव तेजसा क्रान्तां	३.३४.२३
तमुवाच मृगं ब्रह्मा	३.३२.२६	तयैते माययाद्यापि	१.६.३१	तयोस्तद्वचनं श्रुत्वा	३.१४.८	तव निद्राकरः कालस्तव	२.१०.२३	तवैव देवकल्पस्य दृष्टवीर्यं	२.३१.३१

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

६२

तवैषा बाल महती गोपानां	२.१७.२	तस्माद्गृहाण भगवन	३.८३.७	तस्मिन्निपतिते देवाः	१.२५.१२	तस्मिन् विमर्छे निवृत्ते	१.४८.५६	तस्मै चुकोप वै कृष्णो	२.२७.१५
तवौजसा महातेजा	२.६०.३३	तस्माद्यदेव वां	३.१३.२६	तस्मिन्निपतिते भूमी	२.११०.२०	तस्मिन्विमर्दे योधानां	२.३६.१०	तस्मै दत्तो वरान् प्रादाः	१.३३.११
तस्माच्छाद्धानि देयानि	१.१८.१२	तस्माद्वनगताद्गर्भं यादवी	३.१.७	तस्मिन्निपतिते राजन्	३.१३३.६४	तस्मिन्विमाने पर्यङ्के	१.१७.६	तस्मै देव जगन्नाथ	३.६०.१२
तस्मात्कल्पाय ते कल्पः	१.१.२६	तस्माद्वनं नवतुणं गच्छन्तु	२.८.१६	तस्मिन्नीडे पुरा ह्येकं	१.२०.६०	तस्मिन् शतसहस्राणि	३.५६.४०	तस्मै देवाधिदेवाय केशवाय	२.५०.५०
तस्मात्तत्तेज आदत्ते	३.२६.३६	तस्माद्वयं पयोमध्ये	३.३०.११	तस्मिन्नेव ततः काले	२.५८.२२	तस्मिंश्छे तथाध्माते	३.१२०.१४	तस्मै ब्रह्मा ददौ प्रीतः	१.२.११
तस्मात्तवान्तकालेऽहं	२.४.४४	तस्मिच्छा सतिदेवेशे	३.१०२.२४	तस्मिन्नेव निशीथे तु	२.२२.१०३	तस्मिंश्चैवान्तरे राजा	२.५६.१२	तस्मै शक्रो ददौ प्रीतो	१.३०.६
तस्मात्तवाहं सुप्रीतः	१.१६.२८	तस्मिन्कृते संविधाने	२.६३.४६	तस्मिन्नेव महायज्ञे जज्ञे	१.५.३४	तस्मिन् सुप्ते न वर्तन्ते	१.५०.२५	तस्य कर्मण्यहं विप्र	२.६२.३
तस्मात्तु महती	३.८८.२१	तस्मिन् क्रुद्धे तु	३.४६.४	तस्मिन्नेव समे देशे	३.८०.५५	तस्मिन्सुविहिताः सर्वे	२.६८.५७	तस्य कारण माहुस्त्वां	३.८८.२०
तस्मात्ते दुष्करं कर्म	१.३३.४४	तस्मिन् गते स दैत्येन्द्रो	३.४६.३२	तस्मिन्प्रयाते दुधर्षे	१.११.४६	तस्मिन्सेते समाप्तेऽथ	३.२.५	तस्य काञ्चदचित्राङ्ग	३.५८.५८
तस्मात्त्वं जहि तौ वीरो	३.१११.६६	तस्मिन्गार्हभदैत्ये तु	२.१३.२३	तस्मिन्प्रविष्टेऽथ	३.१२६.४६	तस्मिस्तत्रावपतिते	२.१०८.५	तस्य कृष्णभु जोद्भूताः	२.२४.४३
तस्मात्त्वष्टुः स वै वाक्यं	१.६.४३	तस्मिन्गान्धारराजस्य	२.६८.४८	तस्मिन्मधुवनस्थाने मथुरा	१.५४.५६	तस्मिस्तथा वर्तमाने	३.५६.४०	तस्य कृष्णाभिपन्नस्य	२.३०.५१
तस्मात्त्वं काञ्चनैः	२.१६.४४	तस्मिन् जाते तु देवेशे	३.६८.२१	तस्मिन्मधुवने स्थाने पुरीं	२.३८.४०	तस्मिस्तथा वर्तमाने	३.५७.७	तस्य क्रोधाग्निपूर्णम्यो	२.१२.६
तस्मात्प्रार्थयमानस्स	३.८०.३३	तस्मिन् जातेऽथ भूतानि	१.५.२४	तस्मिन् महति संक्रन्दे	१.४८.६६	तस्मिस्तु दैत्यनगरे	३.१३३.५५	तस्य गर्भस्य मार्गेण	२.४.८
तस्मात्शलष्टिं च भव्यं	१.२.१४	तस्मिन्नन्तर्हिते देव	१.२०.१	तस्मिन्महाभीषणके	२.४३.४८	तस्मिस्तु मध्यमाने	१.५.११७	तस्य गेहे समुत्पन्नो	१.२६.२६
तस्मात्संहर दिव्यं	२.१२६.१३७	तस्मिन्निपतिते दैत्ये देवाः	१.४८.५१	तस्मिन्महाहवे रौद्रे	३.५६.१	तस्मिन्स्तमितनिश्शब्दे	२.४२.१६	तस्य चक्रं करे यातं	२.६७.१६
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन	३.८०.७८	तस्मिन्नपरितोषो यः	१.१३.१०	तस्मिन्मातामहे यज्ञं	३.३२.४	तस्मिस्तु देवसदृशे	१.२८.२२	तस्य चक्षुः समुत्थेन	१.१४.२५
तस्मात्सर्वं त्वमेवासि	३.१११.५४	तस्मिन्नपि गते पुत्रं	३.१४.१८	तस्मिन्मुहूर्ते नगरी मथुरा	२.५५.८५	तस्मिस्तु व्युत्थिते	१.४५.७५	तस्य चारयनः सोऽश्वः	१.१४.२२
तस्मादन्त्यद्वनं यामः	२.८.१८	तस्मिन्नहनि निवृत्ते	२.२६.१	तस्मिन् यज्ञे वर्तमाने	२.६१.२५	तस्मिन्हते महावीर्ये	२.६१.५५	तस्य चन्द्रोपमं वक्त्रं	२.६४.३२
तस्मादेवं गृहीत्वां	३.६७.१६	तस्मिन्नहनि संप्राप्ते	३.३३.१६	तस्मिन् यज्ञे महादाने	१.४१.११७	तस्मिन् हिरण्मये	३.१२.४	तस्य चापि महत्कर्म	३.६०.७४
तस्माद्गत्वा च	३.८०.३१	तस्मिन्नानाजनाकीर्णे	२.२६.१६	तस्मिन्विकारे जनिते	३.५.१४	तस्मिन् हृदे महाघोरे	३.१२८.४	तस्य चासीद्दशरथः	१.३६.२६

तस्य चिच्छेद भल्लेन	२.७३.७२	तस्य ते तनयाः सर्वे	१.३१.३६	तस्य निःश्वासवातिन	१.११.३५	तस्य पृष्ठे सुविस्तीर्णो	३.१७.३	तस्य रश्मीन्प्रत्यगृह्णात	१.२४.१८
तस्य चिन्तयतस्तत्र	३.११.३	तस्य तेनानिलोघेन	२.४१.७	तस्य निष्पतमानस्य	३.५८.६१	तस्य प्रस्फुरितोष्ठस्य	२.३०.६३	तस्य राज्ञो मतायोगी	३.१०.४.५
तस्य चिन्तयतस्त्वेवं	२.२.११	तस्य ते युध्यतः कृष्ण	२.१६.८८	तस्य पक्षनिपातेन पवनो	२.४७.२६	तस्य प्रावृषि फुल्लस्य	२.४१.१०	तस्य राज्ञो वचश्श्रुत्वा	२.५५.१२५
तस्य चैत्ररथी भार्या	१.१२.७	तस्य त्वाधावमानस्य	३.५६.१३	तस्य पत्नी गले	१.१२.२१	तस्य बाहुं समादाय	३.१०.६.८	तस्य रूपं बलस्यासीन	२.३५.३१
तस्य चैवोद्यमानस्य	२.१५.१४	तस्य दत्तं मणिमयं जलजं	२.३७.५८	तस्य पत्नीद्वयं चासी	१.३१.५५	तस्य बाहुसहस्रं तु युध्यतः	१.३३.१४	तस्य रूपं बलस्यासीन्निशब्द	२.४२.१८
तस्य ज्ञानमयं पुण्यं	३.१७.२६	तस्य दर्पं बलं हत्वा	२.२१.२०	तस्य पद्म्यामथाक्रम्य	२.१२.३३	तस्य बाहुसहस्रेण	१.३३.२६	तस्य राज्ञो वचः श्रुत्वा	२.४७.२४
तस्य तत्राभवन्कन्या	३.३६.२१	तस्य दारारथिर्वीरश्चतु	१.३१.४७	तस्य पद्मावती नाम महिषि	२.४४.४८	तस्य बाहुसहस्रस्य	२.१२६.१३०	तस्य लक्ष्म्याधिकं	३.३५.४१
तस्य तत्तापशमनं चकारात्रि	१.२५.४६	तस्य दाशा जले मग्ना	२.३८.३०	तस्य पर्वतराजस्यश्रृंगं	२.६४.३६	तस्य बुद्धिः समुत्पन्ना	२.११६.१३	तस्य वंशमहं राजन्	१.२०.१५
तस्य तत्र महच्चासीन्	१.५४.२३	तस्य दूतस्य तच्छ्रुत्वा	१.५४.३६	तस्य पारं न पश्यन्ति	१.४६.१०	तस्य भग्नोत्तमांगस्य	२.१४.५४	तस्य वंशे महाराज	१.३०.४७
तस्य तत्प्राप्य दुष्प्राप्य	१.२५.२६	तस्य देवमयं रूपं	३.७१.५६	तस्य पारिषदस्त्वेकः	३.५८.५६	तस्य भस्म तदा क्षिप्तं	२.१२२.७८	तस्य वर्षसहस्राणि	१.५०.३६
तस्य तद्रूपमालोक्य	३.६१.२६	तस्य देहं विदायांशु	३.१०१.२४	तस्य पुत्रत्वमापन्नो	१.५४.६४	तस्य भार्ये महीपाल	३.१०४.३	तस्य वाजिसहस्रं तु रथे	२.११६.१३६
तस्य तद्वदनं श्यामं	२.३०.८६	तस्य देहे प्रकाशन्ते	२.३०.८८	तस्य पुत्रशतस्यासन्	१.३३.४८	तस्य भ्रातृशतं चासी	१.११.५	तस्य वारिमयं वेगमा पीन	१.११.५४
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	२.४६.२५	तस्य दैत्यपतेर्मन्दं	३.४२.३	तस्य पुत्रः स धर्मात्मा	१.३२.६६	तस्य मण्डलमध्यात्	३.१६.२८	तस्य विक्रमतो भूमि	१.४१.१००
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	२.११६.५२	तस्य दैत्यस्य संक्रुद्धो	३.६०.४७	तस्य पुत्रा वञ्च्युत्से	१.२६.१०	तस्य मत्तस्य वदनं	२.४१.१२	तस्य विक्रमतो भूमि	३.७२.२६
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	२.१२१.६५	तस्य दोषस्य शान्त्यर्थं	२.७२.२३	तस्य पुत्रा बभूवुहि	१.३८.५	तस्य मध्ये सहस्रास्यं	२.२६.४६	तस्य विज्ञाय चित्तं तु	२.१०६.४२
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	३.४६.२	तस्य नादेन महता	२.१२६.१३४	तस्य पुत्रा शतं ख्याता	१.३३.५१	तस्य मोक्षार्थं माहूतो	२.१२१.१०४	तस्य विशुच्चलापीडाः	१.४७.३८
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	२.४७.१६	तस्य नादेन रौद्रेण	३.५६.४६	तस्य पुत्रास्त्रयः शिष्टा	१.१२.१	तस्य यः सोद्यतः पाणिः	३.२८.४७	तस्य वृद्धाभिनन्दन्ति	२.२०.२
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	२.५५.१२०	तस्य नाहं गतिं जाने	२.२२.२४	तस्य पुत्रैः स्वनिद्रिस्तु	१.११.५०	तस्य यज्ञसकाशं मां	३.६६.५४	तस्य शार्गविनिमुक्तैः	२.१२६.६६
तस्य तिसृषु भायासु दिव्य	२.३८.४७	तस्य निर्गच्छतस्तस्माद	२.६०.३२	तस्य पुत्रोऽभवद्वेनी	१.५.२	तस्य यज्ञे पुरा गीता	१.१८.६२	तस्य संकल्प आसीच्च	१.२३.१२
तस्य तुष्टो महातेजा ब्रह्म	२.६१.६	तस्य निर्मथितस्त्वंसो	३.५४.५६	तस्य पुत्रो महानीसा	१.५४.२४	तस्य यत् च्यावितं तेजः	१.२५.१६	तस्य संस्तूयमानस्य	१.२५.१४

श्रीहरिवंशपुराणम् १: श्लोकानुक्रमणी

६४

तस्य संस्थाकृतमिदं	३.२.३१	तस्यापि राजन्विप्रस्य	३.१११.२६	तस्यामेव सुरम्यां	३.१४.४२	तस्यास्तु विधिवन्नाम	२.५६.३३	तस्योपरि गवां लोकसाध्या	२.१६.३०
तस्य सत्यरथानाम	१.१३.३४	तस्याः पुत्रो महानासी	१.१२.६	तस्यायं प्रथमः कल्पः	२.४०.३७	तस्यास्त्रचरितं मार्गं	२.१६.८०	तस्योपरि जलोवस्य	३.३५.१
तस्य सत्यव्रतो नाम	१.१२.१२	तस्या पुया महावीर्यो	१.५४.६३	तस्यारसितशब्देन रथने	२.४४.११	तस्यास्ये वितता ह्यायो	२.१२७.६६	तस्योपविष्टस्य मुखं	२.१६.७
तस्य सम्यक्प्रचारेण	२.३७.४२	तस्याः प्रपातं दक्ष्याम	२.३६.६०	तस्यारुरोह सहसा मध्यमं	२.१२.३४	तस्यास्त्रं लोक्यसुन्दर्या	२.४७.८	तस्योरसि सुदुःखार्ता	२.४४.४२
तस्य सम्यक् प्रवृत्तस्य	२.३७.२५	तस्याः प्रीतोऽभवद्भर्ता	१.२७.१८	तस्यार्चं विस्फुलिङ्गानां	३.१८.१२	तस्यास्त्वं नवमो गर्भः	२.२.३५	तस्योहं सहसा भित्वा	१.४५.४६
तस्य सुप्तस्य शुशुभे	१.५०.११	तस्याभिपततः खड्गं	२.६०.२४	तस्याजुं न कदम्बाद्या	२.११.८	तस्याहं समनुप्राप्तो	३.६६.५५	तांश्च राज्ञः शेरैः सर्वा	२.६०.२६
तस्यसिंहासनस्थस्य	२.२६.१६	तस्याभ्याशगतो भाति	२.२६.५६	तस्याव्यक्तस्य योव्यक्तो	२.७१.१४	तस्येच्छया वाति वायुरा-	२.८६.२६	तांश्च हत्वा विविशतुमंध्यं	२.२६.४१
तस्य सैन्यस्य निनदं	२.११६.६०	तस्यांगतायां कंसस्तु	२.४.४६	तस्या शक्त्या प्रभावेण	३.३६.१८	तस्येष्ट करसंक्षेपो	३.११८.३४	तांश्चापि नष्टान्विज्ञाय	१.३.२७
तस्य हैमवती कन्या सतां	१.१२.४	तस्यां जनिष्यते पुत्रो	१.२७.२०	तस्याश्चैवान्तरप्रेप्सुर	१.३.१३१	तस्यैव च सहायोऽन्यो	३.१३.२	तांश्चासुरान्समुत्पाठ्य	१.५५.२०
तस्य ह्येका महाराज	१.४१.१८	तस्यां जज्ञे महाबाहुः	१.३८.५१	तस्याश्रमे च तं गर्भं	१.१४.८	तस्यैव च सुवृत्तस्य	२.३७.४४	तांस्तदाब्रुवतः सर्वान्महर्षी	१.५.११
तस्याग्नेर्विस्फुलिङ्गानां	३.२८.७५	तस्यां तु शप्तमात्रायां	१.२६.३२	तस्या सभायां दैत्येन्द्रो	३.४२.१	तस्यैव तु प्रसादेन	३.६७.८	तांस्तु दृष्ट्वा महाभागान्	१.३.८
तस्याग्रे समपद्यन्त	३.८६.१	तस्यां देवपुराभायां	२.६३.२३	तस्यासीद्दयिता भार्या	२.३७.१३	तस्योत्तमांग स्वे काये	२.१४.५२	तांस्तु विद्वततो	३.६०.५४
तस्याज्ञया वधिष्यामो	२.८६.८२	तस्यां प्रणस्य यातायां	२.६४.१६	तस्यासीद्विजयो युद्धे तत्र	१.३६.१७	तस्योत्तमे महाशृङ्गे	२.३६.६७	ताः कन्या प्रददौ	३.२२.६
तस्यातिमात्रामृद्धिं च	१.२.१२	तस्यां प्रतिहतायां	३.४५.३०	तस्याः सुस्त्राव नेत्राम्यां	२.६६.२४	तस्योत्तरं नृपश्रेष्ठ	३.१२७.५	ताः कन्या भैममुख्यानां	२.८३.४१
तस्याथ पुरुषेन्द्रस्य	२.६३.२१	तस्यां स देव्या राजर्षि	१.३२.२	तस्यास्तद्वचनं श्रुत्वा	२.४४.५३	तस्योत्पन्नं भयं	३.१०.१८	ता गावः प्रद्रुता हृष्टा	२.१७.३३
तस्यान्ववाये जज्ञेऽसौ	२.५६.२१	तस्यां सभायां दिव्या	३.४२.१६	तस्यास्तद्वचनं श्रुत्वा	२.११६.६८	तस्योत्पन्नमिदं लोके	२.१२१.४	ता जले स्थलवत्स्थित्वा	२.८८.४६
तस्यान्ववाये भीमस्य	२.५६.१२	तस्यां सभाया नास्ते	३.६६.३२	तस्या स्तनं पपी कृष्णः	२.६.२६	तस्योत्संगे घनश्यामं	२.२६.५८	ताड्यतामत्र भेरी	३.६३.१६
तस्यान्ववाये महति	१.२०.४०	तस्यामाधत्त गर्भं च	१.३७.११	तस्यास्तनुस्तमौद्वारा	१.५०.२८	तस्योत्सिक्तस्य बलवान्	२.२४.३६	तात मातर्त्रजे गोष्ठे	३.१३०.६
तस्मिन्विशसते घोरे चक्र	२.४३.४१	तस्यामुत्पादयामास पुत्रा	२.६०.३७	तस्यास्तं समयं सर्वं	१.२६.१७	तस्योद्यतस्तदा दक्षो	१.३.१२	तात युक्तास्म वयसा	२.३८.५
तस्यापरे दाशजनाः प्रवाला	२.३८.३१	तस्यामुपरि मेदिन्यां	२.४६.३३	तस्यास्ति कन्यारत्नं हि	२.६१.४१	तस्योपतिष्ठः सूर्य	१.३८.१६	तादृक् स्वप्नो मयो दृष्टो	२.१०८.६

तादृशं समालोक्य बलदेवं	२.५३.४६	तान्कविः खसृमश्चैव	१.२१.६	तापनीयैर्वरेनिष्कैर	३.४६.२५	ताभ्यामेव स जग्राह पद्म्यां	२.१३.१६	तां दीप्यमानां महतीं	२.१२४.६
तादृशं रंगमतुलं	२.५१.६	तान्क्षत्रियगणांस्ततः	१.१८.६०	ताः पृष्ठास्त्वप्रभाषन्त्यो	२.६६.१८	तां कश्यपः प्रसन्नात्मा	१.३.१२४	तां दृष्ट्वा मोहिनीं नाम	२.१०६.२३
तानन्तरिक्षे नाराचान्	३.५५.१२६	तान् गृहीत्वा सुतांस्तस्य	३.१४.२०	ताः प्रोवाचाप्रमेयात्मा	२.८८.४०	तां कापुरुषं दुस्तारा	३.६०.१०	तां दृष्ट्वा ववृधे कामः	२.५६.४२
तानप्राप्तान् शरान्सौष्ठ्य	२.१०६.७	तान्धनौघान् सतिमिरान्दो	१.४२.२०	ताभिः प्रविष्टात्राभिर्घो	२.८८.४५	तां क्रीडन्ती ततो दृष्ट्वा	२.२६.३३	तां नारदस्तथोवाच मुनि	२.६५.१८
तानाकाशगतानैन्द्रिजयन्तः	२.८४.४२	तान् दृष्ट्वा धावतः	२.१०५.३६	ताभिर्द्वार्यास्त्रयो लोका	१.२५.१७	तां गदां गृह्य सहसा	२.१०५.८०	तां प्रगृह्य महाभीमामयः	३.५७.६४
तानागतान्महात्मानो	३.१०७.२	तान्दृष्ट्वा नारदः श्रीमान्	२.८३.२६	ताभिर्विद्धो रणे वीरः	३.६६.३८	तां च कुब्जां स्थगोर्मध्ये	२.२७.३५	तां प्रदीप्तां महोल्काभां	२.१२६.१५
तानागतान्विदित्वाथ	२.४४.१	तान्दृष्ट्वा निकुम्भरस्तु	२.८५.१३	ताभिः शुश्रूषितो धीमान्	३.८३.३५	तां च तत्रोपसंगम्य	२.१०१.१६	तां प्रविश्य ततः सर्वे	२.६१.२४
तानि चक्राणि वदनं	३.४५.१०	तान्पाशहस्तग्रथितां	१.४६.२१	ताभिस्तु सह चिक्रीड सर्वा	२.८८.२२	तां च दृष्ट्वा स्थितां देवो	२.१२६.२८	तां भजस्व गदां कृष्ण	२.३६.७७
तानि चक्राणि सर्वाणि	३.४५.११	तान् प्रत्यगुल्लिखन् रब्धा	२.५६.५४	ताभ्यां कुरु नमस्कारं	३.१२१.२५	तां च द्रक्ष्यसि गोविन्द	२.२६.८	तां रेवतीं चाप्यथ वापि	२.८६.५
तानि त्वामाहुरोशनं	३.८८.२३	तानप्राप्तान् शरान्	२.१०५.४३	ताभ्यां कुरु नमस्कारं	३.१२१.२५	तां चोवाच ततो निद्रां	२.२.२७	तां वै क्रौधाच्च मोहाच्च	१.१३.१५
तानि रत्नौघकल्पानि	२.२६.७	तागमज्जमानानेकस्त्वं	२.१२१.२३	ताभ्यां ते सलिलं चक्रवृष्य	२.३२.६१	तां छायामक्षिपन्त्सोमा	३.२८.४६	तां वै सर्वे सुमवसः	२.४.४८
तानि वैदर्यवर्णानि	३.१३३.८१	तान्मृत्युं वंशमापन्ना	३.५६.७	ताभ्यां प्रीतो ददौ माल्यं	२.२७.२१	तां तथा रुदतीं दृष्ट्वा	२.११८.४	तां श्रुत्वा माघवीं लक्ष्मी	२.११०.६
तानि शीतानि तोयानि	३.४१.५६	तान्यजस्व महाभाग	१.१६.४३	ताभ्यां बलाभ्यां संजज्ञे	१.४५.१	तां तथावादिनीं साध्वी	१.१०.१२	तां सभां मणिरत्नाद्यां	३.१०२.८
तानि सर्वाणि वाणौघैः	२.७३.६०	तान् यजन्ति स्म वै	१.१६.४१	ताभ्यां बलाभ्यां संहृष्टा	१.४७.२३	तां तथेत्युचतुर्हृष्टे	२.६४.४३	तां समन्तात्समालोक्य	२.५५.१०
तानुवाच जरासंधः	२.३५.७३	तान्येवास्याः कारयिष्ये	२.५८.७	ताभ्यां मृधे प्रविष्टाभ्यां	२.४३.३	तां तदा द्वारकां दृष्ट्वा	२.६८.६	तां समीपमनुप्राप्तां	२.१२६.१६
तानुवाच जरासन्धः	२.४३.२३	तान् वृणुष्व महाराज	१.२६.४०	ताभ्यां युधि निरस्ताभ्यां	२.२८.२५	तां तु तूष्णीमभूतात्मा	२.४१.११	तां सूर्यसदनप्राद्यां	२.१०२.३४
तानुवाच ततः कृष्णः	२.११०.२८	तान्वै देवगणाः सर्वे	१.१८.४७	ताभ्यां वल्लिः स मायाभ्यां	३.६२.२७	तां तु सर्वानिवद्यांती	३.५.१३	तां सृजामि महामाया	२.१०६.३०
तानुवाच ततो ब्रह्मा	२.२.१६	तान्समीक्ष्य महोत्पातान्	२.११२.५	ताभ्यां समाहतो विष्णु	३.१२७.२३	तां त्वष्टुर्भुजनिर्मुक्ता	२.५५.३१	तां हृष्टमनसः सर्वे यथा	१.५२.१०
तानुवाच हरिर्देवो निद्रा	१.५०.४५	तान्सर्वान्योधमायास	२.६०.१३	ताभ्यां स विद्धो दश	२.५६.६५	तां ददर्श तदा कृष्णो	२.५६.३५	तामन्तः प्रसवां दृष्ट्वा	१.२५.३८
तानुवाचः हृषीकेश	२.११३.१७	ताः पति पतितं भूमी	२.४४.४४	ताभ्यामुभाभ्यां संजापे	२.४१.३७	तां ददौ नच कृष्णाय	२.५६.१८	तामप्सरसमानाय	२.११८.५०

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

६६

तामस्तौषीत्समक्षं ते प्रियां २.६७.१०	तारका निष्प्रभा राजं ३.६६.१४	तावन्योन्यं जिघांसन्तो ३.५५.१७	तावुभौ हंसडिम्भको ३.१२७.१२	तासां रुदितशब्देन गोपानां २.२४.१७
तामस्या छादयामास २.११६.३४	तारकामययुद्धं च ३.१३४.७	तावन्योन्यं प्रजह्नुते २.४३.६८	तावूचतुस्तदा सर्वास्तान् १.५.३६	तासां हर्म्यतलस्थाना २.१२१.१२
ता मां समभिषिचन्तु २.१०६.३४	तारांसहस्रैः खचितं ३.५२.१३	तावन्योन्प्रावरुद्धांगौ युद्धे २.२१.१६	तावूचुर्ऋषयः सर्वे १.५.३५	तासामसुरसेनानामुद्यतानां २.८४.१६
तामापतन्तीं मायां २.१०६.२०	ताराचित्रपितृदांगं स्वर्णं २.१०५.१४	तावप्युभौ सुवसन्तो २.२७.१८	तावेतावसिनां युद्धं ३.१२५.१७	तासु देवाः खगा नागा १.२.४६
तामापतन्तीं संप्रेक्ष्य २.११६.१६२	तारायां कपिलो जजे २.१०३.२६	तावर्जुनो कृष्यमाणो तेन २.७.१८	तावेवं मानुषी दीक्षां २.१४.८	तास्तदा प्रतिजग्राह १.३.२८
तामापतन्तीं संप्रेक्ष्य ३.४५.१३	तार्क्ष्यभारह्य गच्छेति २.६७.५	तावागतां समालोक्य ब्रह्मा १.५२.२७	नावेवं क्षमो युद्धे ३.११८.४१	तास्तं निपतितं दृष्ट्वा २.४४.४०
तामावसत्पुरीं कृष्णस्सर्वे २.५८.४५	तार्क्ष्यश्चारिष्टनेमिश्च २.३६.४३	तावापतन्तो त्वरितौ प्रति २.२६.२३	तावेव विपुलो बाहू ३.१२३.१५	तास्तं पयोधरोत्तुङ्गरो २.२०.२३
तामासनवतीं रम्यां २.१००.१५	तालध्वजेन दीप्तेन ३.५०.१८	तावापेततुन्वाथ स्वयं चाप २.८४.६	ताश्च गावस्सघाष २.६.३५	तास्तस्य नृत्यं गीतं च २.२०.२८
तामाह कृष्णः कुञ्जेति २.२७.२६	तालपुन्नागवकुलद्राक्षा २.५६.२२	ता वार्यमाणा पतिभिर्भ्रातृ २.२०.२४	ताश्च प्राग्ज्योतिषपति २.६३.१५	तास्तस्य वदनं कान्तं २.२०.१६
तामाह निद्रा संविना २.४.५	तालमात्राणि चापानि ३.५६.७०	ता वामुदेवेऽप्यनुरक्तविन्ताः २.८६.७२	तासां ग्रथितसीमन्ताः रति २.२०.३४	तास्तु कामन्दुघा गावस्सर्व २.६.३१
तामिलेत्येव होवाच १.१०.८	तालशब्दं स तं श्रुत्वा २.१३.१४	तावाह वरवर्णाभौ भीतो २.२७.४	तासां ददौ सन्नियोगमेकैकं २.७६.२०	तास्तु पङ्क्तीकृतास्सर्वा २.२०.२५
तामुत्थाप्य परिष्वज्य २.६०.२८	तालानां तमधोदृष्ट्वा स २.१३.१७	तावाह्य वधार्थेन उभौ २.४६.६	तासां परमकूलानि २.६८.६८	तास्तु संभ्रान्तवदना यशोदा २.७.२१
तामुवाच हसन्ती तु कृष्णः २.२७.३१	तालैस्तैर्विपुलस्कन्धै २.१३.६	तावित्थं हंसडिम्भकी ३.११६.२	तासां परमानरोणामृषभाक्षं २.६४.३१	ता हासयामास सुधैर्ययुक्ता २.८६.२६
तामृचीकस्ततो दृष्ट्वा १.२७.२७	तावतुण्डः सोमहरः ३.७६.४	तावुद्यतांशुपाशौ द्वौ १.४६.६७	नासां पुरवरं भौमोऽकारय २.६३.१४	तिमिरीघहृताकं तु ३.५६.५५
तामेकभावसंपन्नां लेभे १.२३.२६	तावद्यत्नश्च कर्तव्यः २.६१.५०	तावुभाव नुलिप्तांगौ २.२७.३४	तासां बाष्पाम्बुपूर्णाणि २.१२१.१०	तिर्यगायतरक्ताक्षं मन्दरो १.४६.५४
तामेव प्रकृति यान्ति ३.१८.२४	तावन्तमिति कालस्य १.८.३३	तोवुभावपि संश्लिष्टौ यथा २.३०.३३	तासां बाष्पाम्बुपूर्णाणि २.४४.४३	तिर्यंगूध्वं च गगने १.४७.४०
तामेव मनसा कांता २.६४.२१	तावन्तेव सहस्राणि १.३७.२५	तावुभौ जलगर्भस्थौ १.५२.२६	तासां मतेन साध्वीनां २.७७.२४	तिर्यंग्योनी गताश्चैव ३.१६.४५
ताम्बुलं रोचते पूर्वं २.११७.४४	तावन्मेऽस्ति भयं भूमौ १.५२.२०	तावुभौ परमाचार्यौ लोके २.४३.६४	तासां मरालपद्माणि २.१२१.११	तिलपात्रं प्रदातव्यं न देयं २.७६.३०
ताम्यामाप्लावित सैन्यं १.४६.१६	तावन्मेऽस्ति भयं ३.३४.२५	तावुभौ मोहमापन्नौ २.८५.५५	तासां यथाहंहर्म्याणि २.६६.२८	तिलरत्नमयं दत्त्वा २.७७.२१
ताम्यामुद्भ्रान्तवेगाभ्यां १.४६.३४	तावन्योन्यगती वाली २.७.२	तावुभौ व्रजसंवृद्धौ २.२७.४०	तासां रुदितशब्देन गवां २.६.६	तिलशश्चक्रुरतुलं ३.१२२.६

तिलोत्तमा चाप्यथ मेनका	२.८६.७१	तुरङ्गमाणां तु शतं	३.५८.६	तृषितेन कदाचित्स भिक्षिता	१.३३.३८	ते च सर्वे यथावेरम	२.२४.२	ते ज्ञातिवधसंतप्ताश्च	२.८२.५
तिष्ठ किं प्राकृतैरेभिः	२.१०५.७२	तुर्यां समभवद्द्विरो	२.१०३.२७	तृष्णा चैनं विवेशाशु	२.४१.८	ते चाध्वविधिना सर्वे	२.४०.४	ते तत्त्वहस्पतिकृतं	१.२८.३२
तिष्ठ तिष्ठ न मेऽद्य	२.१२६.४०	तुल्यसामर्थ्यां वाचा	२.४७.३७	ते कथं भवताः नेत्रा	३.२.२३	ते चाराः सर्वतः सर्वे	३.१२१.६३	ते तत्र पक्षिणः सर्वे	१.२१.३२
तिष्ठते दानवश्रेष्ठः	३.५७.१४	तुल्येष्वभ्यधिकः स्नेहः	१.६.३४	ते कृताञ्जलयः सर्वे देवाः	१.४२.२६	ते चिरेणैव संप्राप्ताः	३.६७.२१	ते तत्र रमणीयेषु विषयेषु	२.५६.२३
तिष्ठध्वमग्नयः सर्वे	२.१२२.३६	तुल्योऽसि दैवतैर्वाण	२.१२६.१५१	ते कृष्णमागतं दृष्ट्वा	२.४८.१	ते जग्मुर्कं ज्वलनेन्द्र	३.४६.२०	ते तत्र समनुप्राप्य	३.६६.२६
तिष्ठध्वमिति चुक्रोश	२.११६.१०६	तुष्टगोपजनाकीर्णो गोप	२.१७.१६	ते कृष्णस्य वच श्रुत्वा	२.११३.१८	ते जघ्नुः शतसाहस्राः	३.५५.८५	ते तथेति महाबाहुमुक्त्वा	२.५८.१५
तिष्ठ यत्नेन रक्षस्व	३.७५.२	तुष्टस्य स्तुतिना किं ते	२.५५.३६	ते क्रुद्धाः शरवर्षेण सुनीयं	२.५६.६३	तेजः संभृत्य दुर्धर्षमव	१.३.१३०	ते तथोक्ताः शकुनयो वज्र	२.६२.८
तिष्ठेदानीं न मेऽद्य	२.१२६.६८	तुष्टाव च तमीशानं मारिचः	२.७२.२८	ते क्षिपन्ति पयो भूमा	३.२८.१४	तेजसा ज्वलनाकारं	२.१.५	ते तन्वानास्तनूस्तत्र	१.४२.८
तिष्ठेदानीं यथाकामं स्थितो	२.४४.१६	तुष्टिं तु परमां जग्मु	१.१०.६	तेऽङ्गुष्ठामात्रा मुनय	३.२१.४	तेजसा तेन ज्योतीषि	३.२८.५	ते तमासाद्य गोमन्तं रम्यं	२.४०.२८
तिष्ठेस्वेह महाबाहो	१.३६.१८	तुष्टुदुर्देवगन्धर्वा	३.७६.१८	ते गता असुरा राज	२.८२.२३	तेजसा भास्कराकारः	३.४१.४४	ते तस्य सत्यसंघस्य	१.४२.३३
तिस्रः कन्यास्तु मेनायां	१.१८.१५	तुष्टुवुस्ती महाराज	३.१२५.२३	ते गत्वा दूरमध्वानं सरितं	२.६०.६	तेजसा मूर्ध्नि चाधाय	३.१८.६	ते ताततातं संत्यज्य	२.२.१३
तिस्रः कोट्यः सुतास्तेषां	१.३.१०५	तुष्टैस्तैरसुरा ह्युक्ता	२.८३.४७	ते गदाचक्रनिर्दग्धा गत	१.४८.५४	तेजसा यादवाश्चास्य	२.२५.२६	ते तामपश्यन्पत्तितां	२.६.२८
तीक्ष्णयन्त्रशतघ्नीभिः	२.६८.२५	तूणीरशरसंपूर्णं	३.४६.४५	ते गदापरिधैर्यैर्धनुं	१.४३.२७	तेजसा युगपदव्याप्तं	३.३५.१८	तेऽतीत्य सागरान्सर्वा	३.६७.२२
तीक्ष्णरश्मिर्वादित्यः	३.५७.५४	तूणीभूता एकाचित्ता	३.६६.२७	ते गदाभिश्च गुर्वीभि	१.४७.६	तेजसो रूपमैश्वर्यं	३.१६.३४	ते तुं गोत्रकरा राजन्	१.३१.१७
तीक्ष्णैः परशुनिस्त्रिं	३.३८.१३	तूणीभूतेषु सर्वेषु	२.१२१.१६	ते गदाभिः सुभीमाभि	३.६०.२६	तेजस्त्वभ्यधिकं तात	१.६.६	ते तु तद्वचनं श्रुत्वा	१.३.१८
तीर्त्वा वेणामिमां पुण्यां	२.३६.५६	तृतीयं त्वमथो वारण	२.१२६.१५४	ते गदां मुशलं चक्र	२.१०५.५६	तेजस्विनां सुरारीणां	३.४८.१६	ते तु तस्योत्तरं शृंग	२.४०.३०
तीर्थान्येतानि पुण्यानि	२.१०६.४१	तृतीयं पारणं प्राप्य	३.१३२.२६	ते ग्राम्यधर्माभिरता	१.२३.२३	तेजस्वी सवलश्चैव	१.७.८८	ते तु नन्दनगोप्ताः	२.७३.१३
तुमुलस्सुमहानासीन्महामेघ	२.५१.६६	तृतीयं वायुविषयं	३.१३३.७२	ते चक्रिरे महत्कर्म	३.१३३.५७	ते जातवेदसः सर्वे	२.१२२.३०	ते तु नालीक नाराचै	३.६१.२६
तुम्बुरुमुखान्तसर्वा	३.२०.४	तृतीयोयश्च ते भागो	२.१२३.२२	ते च गोपास्समागम्य	२.२६.२७	तेजोमण्डलिनं देवं	१.३८.१८	ते तु प्राप्य स्मृति	१.१८.१०
तुरङ्गभीरवप्रश्च तरस्वानुग्र	१.७.८७	तृप्ताः प्रवृत्ताः पुनरेव वीरा	२.८६.६६	ते च विंशतिसाहस्रा	२.६४.१३	तेजोमूर्ति धरेरूपैर्नच	३.२३.२२	ते तु वैतस्तिकैर्बाणै	२.६०.१८

ते तु ब्रह्मर्षयः सर्वे	१.५०.१६	तेन त्रैलोक्य मुख्येन	३.६५.१४	तेन शब्देन वित्रस्ता	२.६.२७	ते निषेदुर्यथोक्तेषु विमाने	१.५२.११	ते प्राद्रवस्त वित्रस्ता	३.५६.२२
ते तु सर्वे समानार्यो	२.२.१६	तेन त्वामर्चये राजन्विशेषेण	२.५३.२०	तेन शब्देन संक्षुब्धं	२.१२.४	ते नृपाश्चोदितैर्नागैस्स्यन्दनै	२.४३.७६	तेऽपि सर्वे महीपाला	२.५२.४८
ते त्रिरात्रोषिताः प्राप्ताः	२.४३.६८	तेन त्विदानीं वहता	१.१३.११	तेन शक्रः सहस्राक्षः	१.४७.४७	तेनेदं निमित्तं पूर्वं	१.२०.१७	ते प्राप्तवयसस्सव स्थिताः	२.३८.४
ते ददुर्वस्त्रमुख्यानि	२.६३.३३	तेन दक्षस्य पुत्रा वै	१.३.११	तेन संचोदिता मेघास्तस्य	२.१५.६	तेनेयं गौर्ममहाराज दुग्धा	१.२.२५	ते प्रीते प्रीतियुक्तेन	३.१०.२.१६
ते दानवशरा घोरा	३.४५.७	तेन दुष्टप्रचारेण दूषितं	२.२४.१३	तेन सत्येन बाणेन	२.१०७.२५	तेनेयं पृथिवी सर्वा सप्त	१.३३.१५	ते ब्राह्मास्तस्य गात्रेषु परिवे	२.८५.३२
ते दानवाः पाशगृहीत	३.४४.२२	तेन नष्टेषु वेदेषु	१.४१.१०५	तेन सप्तसु द्वीपेषु	१.३३.१६	ते नेषुस्तत्र केचित्तु	२.८२.१५	ते ब्रह्मचारिणः सर्वे	१.२१.४०
ते दिशो विदिशश्चैव	३.५८.११	तेन बाणप्रहारेण	३.५७.४०	तेन संपादितं सत्यं	२.१५.८	तेनैव गजदन्तेन	२.२६.३८	ते ब्रह्मविद्भिश्च	३.५२.५३
ते दीर्घिकासु रम्यासु	२.६२.२	तेन बाणेन तान्बाणांश्चि	२.६३.६८	तेन सा जानि पुष्पाभान्दन्ता	२.८०.२६	तेनैव त्वं शरीरेण	१.२६.१६	ते भवन्तं पुरस्कृत्य	२.६१.२२
ते दृष्ट्वा नारसिंहेन	३.४८.१७	तेन ब्रह्मशिरो नाम	१.२५.३४	तेन स्नेहेन भगवान्	१.२५.३३	तेनोक्तं भुवने नास्ति	२.७१.२३	तेऽभिजाताः कुक्षेत्रे	१.२४.२१
ते देवदानवाः प्रीता	१.२८.८	तेन ब्राह्मणशब्देन	३.२३.१६	तेन स्यन्दनमुख्येन	२.४४.७	तेनोत्पाताम्बुवर्षेण	२.१८.२१	ते भिन्न वर्मास्थिभुजा	३.५५.७४
ते देवराजस्य	३.५२.२४	तेन ब्राह्मणेन वपुषा	३.१७.१४	तेन हृष्टेन कालश्च	२.६३.४०	तेन्योऽन्यमभिसंपेतुः	१.४७.२६	ते भीता भयसंत्रस्ता	१.४७.३
ते दैत्यास्तेन गन्धेन	३.३०.८	तेन योगेन राजेन्द्र	३.३२.६	तेन हैहयराजस्य	१.४१.१०८	तेऽन्योन्यं ददृशुर्वीरा	२.६६.२०	ते भीममायाः सुसमृद्ध कायाः	३.५१.३५
ते धर्मचारिणो नित्यं	१.१६.७	तेन वित्रासिता देवाः	१.४७.४६	तेनान्तेन प्रजास्तात	१.६.२०	तेऽन्योन्यं नावबुभुमन्त	१.४५.१४	ते भीमसंगा दितिजा	३.६०.३१
तेन क्षीरेण यक्षाश्च	१.६.३७	तेन वित्रासिता देवा	३.५७.५८	तेनाम्भसा प्लुताः	३.३४.११	तेऽन्योन्यं वपुषा वद्धा	१.१८.११	ते भूयः प्रणताः	१.१७.२४
तेन खल्वाकराः सर्वे	२.११०.५७	तेन विद्धोऽथ भगवान्	३.१२३.६	तेनायं मागधश्श्रीमान्	२.४८.४२	ते परावरदृष्टार्था	१.५१.१२	ते मुक्ता रौक्मिणेयेन	२.८५.५०
तेन खल्वसि देवानां	२.११०.६४	तेन वेदत्वमापन्ना	३.१७.४६	तेनास्त्रेण रथौ दग्धः	२.७३.४८	तेऽपि खल्वग्नयस्तृति	१.११०.७७	ते मुहूर्तेन संप्राप्ता	३.६६.१८
ते नगा जलसंछन्नाः	३.६.१६	तेन वैर त्वया साद्धं	२.१२१.४७	तेनाहं नोदयिष्यामि	२.५०.३६	तेऽपि गोवृत्तयस्मर्वे कृष्णं	२.२१.२५	त यदा तु सुसंमूढा	१.२८.३५
तेन चित्ररथेनाथ तदा	१.३१.४५	तेन शक्रः सहसाक्षः	३.३८.३३	तेनाहं वः प्रवक्ष्यामि	२.५१.३०	तेऽपि तेनैव मार्गेण	१.३.२४	तेय मग्नश्चतुर्थोऽमाश्रमो	३.१०८.१४
तेन ताक्ष्यगतेनैव	२.६७.८	तेन शंखनिनादेन	३.५६.४७	तेनाहं वः प्रवक्ष्यामि	२.५३.५१	ते प्रजानां शुभकराः	१.५१.६	ते युद्धरागा रथिनो	२.३५.८१
तेन ते कथयिष्यामि	२.११४.१६	तेन शब्देन महता	२.१०५.३०	तेनाहं सह संगम्य	१.४५.७७	ते प्रविष्टाः सभां दिव्यां	३.६६.४३	ते युद्ध शोण्डाः सुभुजास्त्र	३.५२.६०

ते योगधर्मेनिरताः	१.२३.१	ते विहाय गुहामध्ये	३.२६.१६	तेषां छिन्नानि गात्राणि	३.५८.१६	तेषां भूयः प्रविष्टानां	३.३३.२०	तेषां वै मानसी कन्या	१.१८.६६
ते रक्तसूर्यदिवसे तत्र	२.५६.३१	ते वै क्रूरतया हिंसा	१.२१.१६	तेषां जनपदाः पञ्च अंगा	१.३१.४२	तेषां मतमथाज्ञाय गन्तुं	२.६.७	तेषां शृणु त्वं श्राद्धानि	३.१३२.१२
ते रक्तः विस्मयं नेदुर-सुराः	२.६३.११	ते वै नदन्तो मधुरं	२.६२.३	तेषां जनपदाः स्फीताः	१.३१.३०	तेषां मध्यगतो वारणः	३.४६.२६	तेषां श्रुतिठष्ठानां	३.१३२.१०
ते रथैर्विविधाकारैस्स	२.५६.४६	ते वै संदीप्तमनसः प्रगृहीतो	१.४७.१४	तेषां ज्वलितकीर्तिनाम	१.५१.१७	तेषां मध्ये महाबाहु	२.४८.४	तेषां श्रेष्ठस्तु राजासीत्पुरे	३.१.५
तैर वै च तदा युद्धे तान्	२.१६.१२१	ते शक्रसदनं प्राप्ता	२.७५.३५	तेषां तत्र विहङ्गानां	१.२१.४१	तेषां मनोऽभिलषितं	३.३०.१६	तेषां संवित्तथोत्पन्ना	१.२३.३०
ते रश्मयः प्रभानेत्रैः	३.२८.२५	ते शप्ता ब्रह्मणा	१.१७.२३	तेषां तदभवद्युद्धं	३.५६.११	तेषां यथातिः पश्चानां	१.३०.४	तेषां सकञ्चुकोष्णीषास्थ	२.३५.३०
ते रुदन्तो द्रवन्तश्च	३.१४.३६	ते शुभां काञ्चनस्तम्भां	२.६१.२३	तेषां तु तपसा तेन	१.२१.३८	तेषां यवीयान्पृषतो द्रुपद	१.३२.८०	तेषां सकञ्चुकोष्णीषास्थ	२.४२.१७
ते लोहिताक्षाः परिवार्यं	३.५२.२६	ते शूरसेनानाविश्य प्रभू	२.३४.२२	तेषां तु दिवि दैत्यानां	१.४६.२०	तेषां युद्धं महाघोरं	३.५८.८४	तेषां स गायतामेव	२.११.२७
ते वज्रनगरस्याथ शाखानगर	२.६२.६३	ते शूलहस्ता गगने	३.५१.२२	तेषां तु वायुप्रतिमौजसां	३.४४.२४	तेषां रथानां तुमुलः	१.४७.३१	तेषां संघर्षजोद्भूतः	३.६.१०
ते वध्यमानः विबुधाः	३.१३३.६०	ते शैलास्त्वचिषा दग्धाः	३.२८.८७	तेषां तुष्टः प्रजाकर्ता	२.८२.१०	तेषां रुदितशब्देन पौराणां	२.४४.३६	तेषां सप्त महावंशा	१.१.३७
ते वध्यमानाः कृष्णेन	२.८४.४१	ते श्रुत्वा पृथिवीवाक्यं	१.५३.१	तेषां नारायणं तेजः	१.५१.१२	तेषां रूपैस्तथा गात्रैस्तैः	३.२२.२४	तेषां संपश्यतामेव पारिजातं	२.७३.६
ते वध्यमाना बलिभिः	१.४५.८	तेषां पथि क्षुधातानां	१.२१.८	तेषां निरवशेषेण बबन्ध	२.८४.६४	तेषां लब्धानुमानानां	३.४.४५	तेषां सुतुमुलः शब्दश्शुश्रुवे	२.३५.२६
ते वध्यमाना रामेण रणे	२.३५.७२	तेषां कर्माविदातानि	१.१.१४	तेषां पात्रविवशेषाश्च	१.४.२६	तेषां लोकविसर्गं च	१.१८.५	तेषां मथाम्युपगमान	१.१८.७०
ते वध्यमाना रामेण समरे	२.४३.२२	तेषां किं हेतुना कोपः	२.५०.८६	तेषां पितृप्रसादेन	१.१६.६	तेषां वंशकरो राजा	१.२०.२४	तेषां मधोगतं यत्र दुदकेत्या	३.१२.१३
ते वध्यमाना विमुखाः	१.४२.१२	तेषां क्रीडाप्रसक्तानां यद्वनां	२.६०.१	तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च	१.३.७१	तेषां वधार्थमात्रेण	२.१२२.५६	तेषां मनु महाघोरी	३.७६.१
ते वध्यमाना वीरेण	१.१४.१३	तेषां च बुद्धिसंमोहम	१.२८.३०	तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च	१.३.१२०	तेषां विकृतिर्ज्येष्ठस्तु	१.११.१३	तेषां मपि च राजेन्द्र	१.३.६७
ते वयं नारद सर्वे प्रयामः	२.८६.३७	तेषां च बुद्धिसंमोहम	१.२८.३०	तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च	३.१.१६	तेषां विदारितैर्देहदैर्निवानां	३.५५.७५	तेषां मापततां संख्ये	२.१२७.५५
ते वयं सामपूर्वं वैदानं	१.२०.६०	तेषां चरणपातेन	३.५८.७	तेषां प्रधानाः सततः	१.३.११२	तेषां विदार्य तेजांसि	३.५५.७३	तेषां मेव प्रभावेण शिवं	१.५१.१३
ते वासववचः श्रुत्वा हंसा	२.६२.१	तेषां च सुरुचिस्त्वासी	१.६.३६	तेषां प्रसादं ते चक्रुर यतान्	१.२२.७	तेषां विमर्दं दायान्ते	१.५३.४४	तेषां मेव प्रवृद्धानां भूतानां	१.३.१३७
ते वाह्यन्तस्त्वन्योन्यं	२.१४.२२	तेषां चैव वेधोपायं	३.१३३.२२	तेषां प्रीतः प्रसन्नात्मा	३.६०.३१	तेषां वै मानसी कन्या	१.१८.५८	तेषां मेव रावतोदोग्धा धृत	१.६.२७
		तेषां चैवान्वयोत्पन्ना	१.७.५६	तेषां बृहस्पतिर्मध्ये	२.८६.३२				

श्रीहरिवंशपुराणम् १: श्लोकानुक्रमणी

७०

तेषु तेषु च पात्रेषु	१.२.२७	तेऽस्त्रजालैः प्रथयिताः	१.४५.६	तैर्हि वज्रपुरं हंसैः	२.६४.२८	तो जातहासावन्योन्यं	२.२७.३८	तो पाशशुक्लांशुधरो	१.४६.१४
तेषु तेष्ववकाशेषु	२.४०.२६	ते हंसा वज्रनाभेन कार्यहेतोः	२.६२.५६	तैः सपर्वतजालौघैर्बहुयोजन	३.३४.१३	तो जितारी जितक्रोधी	२.३०.६३	तो प्राप्तावू चतुस्तत्र	३.१४.६
तेषु प्रभवमानेषु	३.४.२०	ते हन्यमाना गदया	३.५६.६४	तैस्तु क्रतुशतैरिष्टं	३.५६.६४	तो तत्र कीतुहलिनौ	२.७.११	तो युद्धरङ्गा पतितौ	२.४३.३१
तेषु सर्वेषु दैत्येषु	१.४८.५५	ते हन्यमाना रौद्रेण	२.११६.१०४	तैस्तु मर्मयु विव्याध	३.५७.३८	तो तत्र गत्वा वेण्याया	२.३६.२०	तो विरेजतुरायत्तौ	३.५६.६३
तेष्वात्ययिकशंसीषु लोक	२.४७.२	ते हया रुधिराक्तांगा	३.६६.१६	तैः स्तूयमानो गोविन्दः	२.६६.२१	तो तान्निपतितान्दृष्ट्वा	२.५५.६१	तो विवेश स्वयं वायु	१.५२.२३
ते संगताः शुद्धसंगाः	१.८.४०	ते हयैः काञ्चनापीडैः	२.३५.७८	तैस्सयानगतैर्द्रव्यैर्वणिजो	२.३८.३४	तो तालपणंप्रतते रम्ये	२.१३.४	तो वृषाविव नन्दतौ	३.५५.३३
ते समुच्छ्रिताः सर्वे	१.२३.३३	ते स्यैः काञ्चनापीडैः	२.४३.२८	तोयगम्भीर लम्बेषु स्रवत्सु	२.१०.१६	तो तु पूर्वमतिक्रम्य	२.१०.१६	तो व्युपारमतां युद्धे वृष्ण	२.३६.३१
ते समेत्य महादेवमृषयो	३.१३.१२	ते हृष्टमनसः सर्वे	१.२८.१०	तोयजैः श्वापदैस्त्यक्तं	२.११.४३	तो तु भाण्डोरमाश्रित्य	२.१४.६	तो शरैः साधुनिशितैरन्यो	१.५४.४६
ते समेत्य यथायोगं	३.६५.२१	तैः तिस्रवोऽभवद्राजा	१.३१.३१	तोयमुन्तारयन्तीभिः प्रेक्षन्ती	२.६.२८	तो तु मल्ली महावीर्यौ	२.२८.१८	तो शैलधातुदिग्धाङ्गौ	२.४१.३
ते समेत्य सभां राजन्	२.४८.२	तैः प्रक्षिपद्भिर्ज्वलतान	३.४४.२५	तो याति भाराम्बुद	२.६५.१६	तो तु मार्गगत दृष्ट्वा	२.२७.१०	तो सप्रहरणी वीरौ	२.३५.६६
ते सर्वे बाणवर्षैश्च	२.११६.१००	तैः प्रमुक्तान्महाकायैः	३.५७.४६	तोये तु पतितै हस्ते	३.७१.४३	तो तु याजयितारौ	३.११५.३४	तो सप्रहरणी वीरौ	२.४३.१६
ते सर्वे शुभकर्माणिः	१.२१.२७	तैरयं यादवो वंशः पार्थिवै	२.३८.४६	तोरणं गोपुरं चैव सुधा	२.५५.२१	तो तु राष्ट्राणि शतशः	२.३६.१७	तो समीपगता दृष्ट्वा	२.२८.१६
ते सर्वे सहसा देहात्तस्य	२.१२७.१०	तैः राससक्तैरतिकूर्दमानै	२.८६.२२	तोषयित्वा महादेवं	३.१०२.१६	तो तु वृन्दावनं प्राप्तौ	२.१०.१	तो सुतो वीर्यसंपन्नौ	३.१०३.६
तेऽसिचर्मगदाभिश्च	३.५७.५६	तैरासीद्गगनं चक्रैः	३.४५.६	तोषयिष्यामि राजानं	३.५६.५७	तो तु स्वभवनं वीरौ	२.२७.३	तो हतौ चाप्लुतौ तीये	१.५२.३८
तेऽसिचर्मगदाशक्ति	३.५६.२६	तैस्सक्ता सा तु मा	१.१८.३४	तो कुमारवयं चैव त्रयः	३.१०४.१७	तो तु स्वल्पेन कालेन	२.४५.१	तो पि देवौ महादेवा	३.७३.५
तेऽसुराः सन्निवृत्ताश्च	३.६०.५८	तैरुत्थितैः काञ्चनवे	३.५२.६२	तो च गत्वा समुद्देशं	३.८०.३	तो दृष्ट्वा भोजराजस्तु	२.२६.४३	त्यक्त्वा प्राणानतिक्रम्य	३.५५.६३
ते वृष्टाः प्राणिनो	१.५०.१४	तैरेवमुषितैस्तात हिंसा	१.२१.२२	तो च श्रुतिधरो वीर यथा	२.३३.६	तो दैत्यकालजलदौ	३.५६.६१	त्यक्त्वा मेघमयं वासः	२.१६.२६
ते स्म पश्यन्ति पतितं	२.४४.३७	तैर्दागाहैर्महाभागैर्बभासे	२.६८.३७	तो च स्वल्पेन कालेन	२.३६.१६	तो दैत्यौ कृतनामानौ	१.५२.२६	त्यक्त्वा युधानि सर्वाणि	३.६२.२३
ते स्म नानालताचित्रं	२.५६.२१	तैर्हन्यमानं दैत्यानामनीकं	२.१२२.७०	तो चोपविष्टावभितः	३.२.६	तो नगादाप्लुतौ दृष्ट्वा	२.४३.१	त्यज गर्भकृतां चिन्तां	२.४.५२
ते स्यन्दन गतास्सर्वे	२.४३.६७	तैर्हन्यमानोऽपि	३.४४.२६	तो च्छादयन्ता वन्योन्यं	३.५५.१६	तो नृपौ स च विप्रेन्द्रः	३.१०७.३	त्यज शोकं विशालाक्षि	२.११८.२७

त्यजस्व मनसस्तापं	२.५५.८२	त्रासमुत्पूज्य चैकस्था	२.११६.११०	त्रिधा प्रणीतो ज्वलनो	३.२३.५	त्रिवर्गोणाभिसंपन्न	३.१५.३	त्रेतायां विकृति यान्ति	३.८.८
त्यज्यमानो महासानुविहगैः	२.४२.६८	त्रासमुद्वेगकरणं युगान्तं	३.३.३	त्रिधा प्रभिन्ना सा सेना	२.४६.६४	त्रिविक्रमं त्रिलोकेशं	२.४८.३४	त्रेतायुगे प्रसुप्तोऽसि	२.५७.६२
त्रत्यां चैव न सन्देहो	३.८.२०	त्राहि मां त्वं त्रिशालाक्षि	२.१२०.४६	त्रिधा भूतं जमद्योतिं	३.८८.१६	त्रिविक्रमायामितविक्रमाय	३.३४.१८	त्रैलोक्यस्य च यत्प्राण	२.१२६.१०५
त्रय एते गणाः प्रोक्ता	१.१८.६७	त्रिशच्छन्तसहस्राणि	३.५०.२६	त्रिधा विभज्य चात्मानं	२.१२३.२१	त्रिविष्टपममे देशे	२.६४.२६	त्रैलोक्यचारिणी सा त्वं	२.२.५०
त्रयः पितृगणा नित्यं	३.२६.३४	त्रिशता प्रत्यविध्यन्तं	२.५६.६७	त्रिपादभस्मप्रहरणः	२.१२३.३६	त्रिविष्टपादापतितो मथुरो	२.१.२	त्रैलोक्यज्ञापिकां वाच	२.५८.१५
त्रयस्तु पितरो नित्यं	३.२६.३३	त्रिंशद्भारसमायुक्त	३.१०१.१२	त्रिपुङ्गुकलनाटान्ती	३.१२१.३	त्रिविष्टपे नितवरता भवन्त	२.६२.६	त्रैलोक्यदर्शनं चैव	१.३१.३७
त्रयाणां ब्रह्मवेदानां	३.२३.३	त्रिंशद्विशतिवद्वाश्च	२.८.३४	त्रिपुरं पुरुषव्याघ्र	३.१३३.४	त्रिशंक्वगस्त्यचरितामाशां	२.१६.५०	त्रैलोक्यरत्नसर्वस्वददा	२.६५.४३
त्रयाणामपि लोकानां	३.३७.१	त्रिगतां न्मालवांश्चैव	२.८४.५०	त्रिपुरं योधयन्व्यक्ष	३.१३३.३८	त्रिशखं सवदा दृश्यं सर्वं	२.६७.६३	त्रैलोक्यराज्यं शक्रस्तु	१.२८.३४
त्रयाणां वर्णजातानां	३.२१.१३	त्रिदशाज्ञापकः शक्र	३.५२.६	त्रिपुरान्तकमुह्यन्त ज्ञात्वा	२.१२४.३६	त्रिशिखं शूलमुद्यम्य	२.२.४१	त्रैलोक्यरूपसर्वस्वं नारायण	२.६५.१७
त्रयोदशस्य पुत्रास्ते	१.७.८१	त्रिदशाज्ञापनार्थेन मेघ	२.१६.१२	त्रिपुरे निहते वीरे	२.८२.३	त्रिशिखां भ्रुकुटिं कृत्वा	२.११६.१६०	त्रैलोक्यन्वजयं कर्तुमुद्यतः	२.८६.१५
त्रयोदशः शालिशिराः	३.६६.१२	त्रिदशा दानवान्त्सर्वे	३.६०.२६	त्रिबाहुः पञ्चबाहुश्च	३.८६.४	त्रिशिखां भ्रुकुटीं चास्य	३.४५.३२	त्रैलोक्यसुन्दरीं वेदि	२.६२.१४
त्रयोदशेऽथ पर्यायि	१.७.७८	त्रिदशा दानवाश्चैव	३.६०.११	त्रिबाहुस्तु गबाहुश्च	३.१२५.२०	त्रिशूलपट्टिधरं व्याघ्र	२.१२५.२७	त्रैलोक्यस्य हिताथयि	१.५५.२
त्रयो लोकाः पुरा सृष्टा	१.४०.३६	त्रिदशानां तु सैन्यस्य	३.५४.२२	त्रिभिः किं तव विप्रेन्द्र	३.७१.१२	त्रिशूलिनीं नमस्यामि	२.१०७.११	त्रैलोक्यहरणे सृष्टा	३.५४.२६
त्रयोवर्णस्त्रियोलोकास्त्रै	१.४०.३५	त्रिदशानां वयं मान्या	२.४६.१०	त्रिभिर्माल्योपहारैश्च	३.१६.२१	त्रिशूली पट्टिदशधरा सूर्य	२.३.६	त्रैलोक्याधिपतिशक्रः	२.५०.४४
त्रातव्याः प्रथमं गाव-	१.५५.३१	त्रिदशानां शरीरैस्तु	३.६०.५	त्रिभिर्मसैः कांक्षितं	२.३.२६	त्रिषष्टिवर्णं संयुक्त	३.१३२.२२	त्रैलोक्यान्तर्गतं तं तु हृष्टवा	१.४७.२
त्रायस्व जहि दैत्येन्द्रं	३.४१.३६	त्रिदशा वरुणश्चैव	३.६१.१६	त्रियक्षः शंकरः शर्वः	३.१०५.१०	त्रीणि वर्षसहस्राणि त्रेता	१.८.१३	त्रैलोक्ये यस्य रूपेण	२.६२.२०
त्रायस्व त्रिदशश्रेष्ठ शरण्यः	३.६४.७	त्रिदशाश्वगजानां हि	३.५५.२०	त्रियज्ञशतयज्वानं	३.५.२५	त्रीणि वर्षसहस्राणि	३.८.६	व्यक्षाद्वधमहं ब्रह्मन्	३.१३३.१
त्रायस्व नोऽय देवेश	१.४१.७१	त्रिदशैश्चाभवद्भूमी	३.५८.५२	त्रिरित्येव त्रयो वेदाः	३.८८.५१	त्रीण्यपत्यानि कौरव्य	१.६.७	व्यम्बकं पुष्टिदं वो	२.७२.४५
त्रायस्व समरे देवान्	३.६२.४०	त्रिदिधारोहिभिर्ज्वालै	३.६२.१७	त्रिलोकेश त्रिधामासि	३.११२.१३	त्रीण्यपश्यद्विमानानि	१.२८.३२	व्यम्केणाभिगुप्तश्च	२.११६.२४
त्रासनस्सर्वभूतानां	२.२४.२३	त्रिदिवारोहिभिर्ज्वालैर्जुम्भ	१.४५.५२	त्रिवर्गविदितः प्राज्ञष्ण्डगुण	२.५३.२	त्रीश्च लोकान्प्रपद्येयं	३.२७.३३	त्वच्छरीरगतं कृष्ण	२.१६.२३

त्वच्छासनाद्धि भगवन्	३.४०.४	त्वद्भक्ताः पुण्डरीकाक्ष	१.५५.४५	त्वया व्याप्तमिदं सर्वं	२.३.२५	त्वरते खलु कंसोऽयं	२.२६.२६	त्वं च कर्कशशीलश्च	२.२२.७४
त्वत्कथाद्वेषिणः सर्वे	१.५४.७६	त्वद्विघेपापि सिद्धेन	१.१८.८०	त्वया सनाथा देवांशास्त्व	१.५४.१८	त्वरते खलु कार्यार्थो	२.४१.४७	त्वं च दत्तो यथा शच्या	२.६६.३०
त्वत्तः श्रुतवतां श्रेष्ठ	२.११६.२	त्वद्विस्तारो यतो	३.८८.६३	त्वया सागरमक्षोभ्यं	२.३१.२८	त्वरितास्तत्र गच्छन्ति	२.४७.५	त्वं च शक्ता विशालाक्षि	२.११८.६२
त्वत्तस्ते विभ्यति दिवि	१.५४.८०	त्वपि सर्वस्य दातृत्वं	३.७३.२३	त्वया सायकवेगेन क्षिप्तो	२.३६.२६	त्वष्टा त्वष्टादशहयं	१.४३.१७	त्वं चापि स्वजनद्वेषी	२.२३.३४
त्वत्तोऽश्मभिश्च प्रतिमां	२.७४.५२	त्वया च नित्यं संरक्ष्य	२.१६.८३	त्वया स्वर्गप्रतिच्छन्दैः	२.३१.१८	त्वष्टा भर्गोऽशुः	३.३६.३१	त्वं चास्य धाता गर्भस्य	१.३२.१३
त्वपुत्रोऽगाश्च रक्षन्तुं	२.१११.१७	त्वया च भरतश्रेष्ठ	१.१६.२७	त्वयाहं सहिता वासे	२.६३.४३	त्वष्टारं विश्वं कृत्वा	३.५५.५३	त्वं तु नो क्षरसे नित्यं	३.१११.६३
त्वत्प्रलापेष्वकुशलां त्वया	२.२६.१२	त्वया चाराध्यमानास्ते	१.१६.४४	त्वया हि पृथिवी	१.११.२६	त्वष्टर्दुहितरं भीमः कशेरु	२.६३.७	त्वं तु भारावतरणं कर्तुं	२.६६.४३
त्वत्प्रसादाच्च भगवन्	२.११६.१३	त्वया चैव गजेन्द्रेण	२.२८.३३	त्वया हि मद्बधोपायस्त	२.२२.८३	त्वष्ट्रां कृतं भास्कर	३.५२.१६	त्वं तु शक्रसमः पुत्रो	२.२६.१५
त्वत्प्रसादादविघ्नेन	२.१२०.२६	त्वयात्मना धार्यते	३.३४.१६	त्वया ह्यनुगृहीतस्स तव	२.१६.७४	त्वस्व कृष्ण युद्धाय दान	२.४०.४५	त्वं त्विदानीं प्रनष्टेऽस्मिन्	२.३८.५३
त्वत्प्रसादाद्भवत्येषा	२.१२१.१०६	त्वया त्विदमहं पृष्टो	३.२.२६	त्वयि कार्यान्तरगते नरा	२.२४.६७	त्व हि नः परमो धाता	३.४१.३४	त्वं पद्मामलपत्राक्ष	३.४१.३५
त्वत्प्रसादेन भगवन्	३.४०.३	त्वया दायादवानस्मि	१.१६.२३	त्वयि तीर्णप्रतिज्ञे हि पुनः	२.६६.४४	त्वां च सत्यमयं ज्ञात्वा	२.१६.८६	त्वं प्रभुर्लोककृत्कृत्स्न	२.७५.२८
त्वत्प्रियार्थं मया मुक्ता	२.१२७.६८	त्वया धार्या त्वंह देव	१.५२.१४	त्वयि मे हृदयं देवि	२.३.२७	त्वां चाप्रतिमकर्माणि	२.२४.७१	त्वं भारते कार्यगुरुस्त्वं	१.५४.८६
त्वत्सनाथा वयं तात	२.४७.२२	त्वया धृतं धारयामि	१.५२.१६	त्वयि योद्धुं गते विष्णो	१.४६.२७	त्वां तु स्तोष्यन्ति ये	२.२.५५	त्वं वृष्णि वंशजातोऽसि	२.१०६.४७
त्वत्सनाथावयं तात	२.५५.१२३	त्वया धृतं धारयामि	३.३४.२१	त्वयि राजासनस्थे हि	२.२४.७२	त्वां द्रष्टुमथ संप्राप्तो	३.१००.२७	त्वं व्यक्तश्च तथाव्यक्तः	३.४७.२२
त्वदनुसर्षणं जन्तो	३.१३१.७	त्वया नीतेऽनिरुद्धे तु	२.११६.१७	त्वयि सन्निहितश्चाहं	२.७४.५०	त्वां निहत्याद्य बाणेन	१.६.५	त्वं हि चक्षुष्मतां चक्षुः	१.५४.१६
त्वदीयोऽहं यदा देवि	२.६६.३६	त्वया पौरजनस्यार्थे मन्दं	२.३१.२६	त्वयैव स्थापितं पूर्वं	२.६७.५	त्वामेवान्तर्हितं श्रुत्वा	२.४१.१८	त्वं हि तस्य वधायैकः	१.११.३८
त्वदुपासा जगन्नाथ	३.८८.६२	त्वया लोकानिमाञ्जित्वा	२.१६.८५	त्वयैव स्थापितः	२.११३.५	त्वं कान्तिः कान्तवपुषां त्वं	१.४६.६	त्वं हि नः परमो देवस्त्वं	१.४१.७२
त्वद्गतो यो हि नस्त्रे	२.२३.३६	त्वया विहिनास्सर्वे स्म	२.४७.२१	त्वय्येव जगतः स्तम्भे	२.१४.४४	त्वं गच्छ भारते वंशे	१.५३.३८	त्वं हि योद्धा बलिर्ज्ञाता	३.७५.४
त्वद्दर्शनपरां नित्यं	२.२६.११	त्वया विहीनास्सर्वे स्म	२.५५.१२२	त्वय्येव भक्तिश्चला	३.८०.८०	त्व गतिस्त्वं रतिश्चैव	१.१७.४	त्वं हि सर्वस्य जगतः	३.७५.१६
त्वद्दर्शनपरासौम्य	२.११६.४०	त्वया वृत्तं कर्तुं	३.२.३५	त्वरता चैव कर्त्तव्यं	१.५३.४२	त्वं गुरुः सर्वलोकानां	३.४७.५	त्वं हि सिद्धिर्धृतिः कीर्तिः	२.३.२

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

त्वं ह्येषामन्तकृन्तान्यो	३.४७.४	त्वमोँकारो वपट्कारस्त्वं	३.१३१.८	दक्षिणार्थं स्म वै दत्ता	१.३२.१२०	ददर्श तन्महच्छत्रं वर्षं	२.६४.६	ददृशाते तु ते तत्र	२.६४.३५
त्वमग्ने हव्यवाडेकस्त्वमेव	३.६२.३३	द		दक्षिणास्तस्व यज्ञस्य	३.५४.२१	ददर्श तत्र भगवान्देव	२.७३.८	ददृशुर्न हि तं सर्वे रज्ज्	२.३०.७४
त्वमन्तं प्राणिनां	३.६२.३४	दंष्ट्रा यः समुद्धृत्य	१.४१.३७	दक्षिणाहृदयो योगी महासत्र	१.४१.३४	ददर्श दशंते राजा देवं	१.२४.१३	ददृशुः सर्वभूतानि	२.६६.६७
त्वमप्रतिमवीर्यश्च ज्योति	१.४६.३	दंष्ट्रा करालः सुमहान्	३.८२.८	दक्षिणे चैव सव्ये च पार्श्वे	२.७३.८२	ददर्श पृथुलश्रोणीः संरुद्धा	२.६४.२५	ददृशुस्ताः स्त्रियो मध्ये	२.१०१.१८
त्वमस्य यज्ञपूतस्य पात्रं	१.४६.२६	दक्षपुत्रस्य पुत्रास्ते रोहित	१.७.६३	दक्षो दत्त्वाथ ताः	३.२२.८	ददर्श भवनं यत्र	२.११६.२५	ददृशे द्वारका चारुमैधं	२.६८.३८
त्वमादित्यपथादूर्ध्वं	१.४६.६	दक्षः पुरुषरूपेण	३.२२.५	दण्डं कृष्णाजिनधरो	२.११६.१०३	ददर्श भोगिनां नाथं	२.२६.५४	ददौ कंसं समुद्दिश्य ब्राह्मणे	२.३२.६३
त्वमेव कुरुषे देव नारायण	१.५२.१७	दक्षः प्राचेतसस्तस्यां	३.२२.४	दण्डं महास्रं परिगृह्य	३.५२.३२	ददर्श महतीं सेना	३.५६.७५	ददौ कृष्णाय पौलोमी	२.७५.४२
त्वमेव च महामेघो	२.१२२.१२६	दक्षं प्रजापतीनां	३.३७.६	दण्डसेनात्मजः शूरो	१.२०.३३	ददर्श योगमास्थाय स्वां	१.६.५२	ददौ तभ्यस्तदा	३.११२.२४
त्वमेव चिन्तय सखि	२.११८.४६	दक्षं मरीचिमत्रि च	३.१४.२८	दण्डान्पात्रविशेषांश्च	३.११०.२	ददर्श विष्णुं देवेशं	३.८७.२	ददौ तं वासुदेवस्य	२.१०४.७
त्वमेव पञ्च तान्धर्मा	३.२६.३५	दक्षयज्ञ विनाशाय	२.१२५.५२	दण्डिनः कुण्डिनः शूरा	२.१०६.६७	ददर्श समनुप्राप्तं दिव्य	२.५५.६२	ददौ शतभिषा चैव	२.८१.४४
त्वमेव पुरुषो वीर	३.३४.२२	दक्षस्तु पुनरालम्ब्य	३.२२.२	दण्डी चर्मी शरी खड्गी	३.२३.८	ददर्श महात्मानौ	२.३६.१४	ददौ शिष्यं तदात्मानं	२.६२.१४
त्वमेव वसुधायुक्तो	३.२६.४४	दक्षस्य पुत्रा ह्यंश्वा	१.३.१६	दत्तगुल्माप्रतिसरं कृत्वा तं	२.८३.५६	ददर्शानि निकुम्भस्तु केशवं	२.८५.२४	ददौ स दश धर्माय	१.२.४८
त्वमेव विविधं धर्मं	३.२६.४२	दक्षस्यैता दुहितरः	३.१४.३१	दत्तः प्रहारः कुलिशेन	२.७४.३१	ददर्शानि पुरी कृष्णो	२.६८.१	ददौ स दश धर्माय	१.३.२६
त्वमेव वेद सर्वस्व	२.१२७.८६	दक्षिणं पक्षमासेदुश्शत्रुसैन्य	२.३५.१०४	दत्तस्त्वयैव गोविन्द त्वयैव	२.६३.१२५	ददामि ते महाभाग	३.७२.३५	दधाद् द्वि गुणमौत्सुक्य	२.६३.५६
त्वमेवान्ते सर्वमसि	३.६२.३२	दक्षिणं वासुदेवस्तु	३.६७.४	दत्तात्रेयप्रसादेन मत्तो	२.४८.२०	ददामि रत्नानि यथेप्सिता	२.६६.७३	दधारयो गोधरमुग्रपोरुषा	३.८२.२६
त्वमेवात्र विशालाक्षि	२.११८.७५	दक्षिणस्यां लताविष्टः	२.६८.१५	दत्ते दाने पुनः स्वर्गं	२.६८.८	ददाह पावकस्तं तु शुष्कं	२.५७.५५	दधारः यो भूतपति	३.८०.४७
त्वमेवाहं जगन्नाथ	३.११८.७५	दक्षिणा चात्र देया	३.१३५.७	दत्त्वा च वरमव्यग्रो	१.३.१२६	ददाह भगवान्वह्निः	३.६२.१२	दधार वेदान् सर्वाश्च	३.६०.६
त्वमेवाहं जगन्नाथ	३.११२.१६	दक्षिणापथवाहिन्यः	२.१०६.२६	दत्त्वा जगाम शिखरं	१.१०.३८	ददुर्वस्त्राणि तुष्टाश्च	२.६३.१२	दधारायुधजालानि शांती	१.४४.४०
त्वमेवेदं जगत्सर्वं	३.८८.३५	दक्षिणां दिशमास्थाय	२.११६.६४	दत्त्वाधं परया पीत्या	२.१२१.१३४	ददुस्ते सर्वतस्तूर्णं पावकं	२.४२.५४	दध्मो पद्मपलाशाक्षः	३.१२७.२१
त्वमेवेदं जगत्सर्वं	३.११५.१६	दक्षिणामददात्सोमस्त्रीं	१.२५.२६	ददर्श च महात्मानाबुभौ	२.३३.६	ददृशुस्तौ सहिवा	३.३६.२५	दध्यत्तुर्गदध्माम्बो च	२.६४.४८

दधौ च नारदं देवः	२.६७.३८	दर्शनीयं ललाटं या	२.८०.६	दहन्तीव ममाङ्गानि शोकः	२.६७.२	दानवानां सहस्राणि	२.१२४.५	दानवैः संवृतः केशी	३.५८.७६
दनं कद्रुं च दुहितृः	३.३६.२३	दर्शयध्वं गुणासन्सर्वान्	२.८८.४२	दह्यति मेऽङ्गानि मुखं	२.६३.५५	दानवानां सुराणां च	२.५४.३५	दानवो भूषणैर्भाति	३.६१.११
दनुस्तु दानवान्	३.१४.६०	दर्शयिष्यन्ति संग्रामे	२.३६.७४	दह्यतेऽयं गिरिस्तात	२.४२.७३	दानवान्नाश्यत्तत्र	२.१२५.१०	दाने यश्चापि संयोगः	३.१५.१०
दनोः पुत्रास्तु बहवो	३.३६.३७	दवतार्थं च मे यत्नो	२.१२१.५१	दह्यमानास्ततस्यस्य	३.३३.१६	दानवाभ्यां हुता	३.७२.७६	दानोपवासपुण्यानि	२.७८.५
दन्तकाष्ठं शिरः स्नान	२.७८.२६	दवानामपि यो देवः	२.११६.६०	दह्यमाने नगश्रेष्ठे सीदमानं	२.४२.७१	दानवा मानिनः सर्वे	३.५६.७२	दामनीदामभारैश्च	२.६.१७
दन्तवक्त्रस्य तनयं	२.५६.३	दश चाण्टी च संग्राम	२.३६.३७	दह्यामि सर्वतस्तात	२.१२२.८३	दानवा राज्यमिच्छन्ति	३.३१.२	दामभिर्दम्यमानेषु वत्सेषु	२.२६.३७
दन्तवक्त्रो जरासधः	२.५६.५२	दश पञ्च त्विमे	३.६६.१३	दाक्षिण्यादुरोधाच्चदत्त	२.६७.३०	दानवाश्चापि पिप्रीषुः	१.४७.१	दामोदरं तु श्रीमन्तं यथा	२.२४.५३
दन्दह्यमाना ज्वलनेन	२.६५.५२	दशभिस्तद्धनुर्दिव्यं शरैः	३.६८.६	दाता यज्वा च धीरश्च	१.३४.११	दानवाश्चापि समरे मयता	१.४८.३०	दामोदरवचः श्रुत्वा	२.१३.१०
दमघोषस्य पुत्रास्तु	२.५६.२२	दशमं पारण प्राप्य	३.१३२.४१	दातारः प्रियवक्तारो	३.५६.६५	दानवास्त्रं प्रशान्तं	२.१२६.६५	दामोदरवचः श्रुत्वा	२.१७.१
दमघोषेण संगम्य	२.४५.२	दशमश्चोद्धवो धीमान्	३.११८.३६	दातुमिच्छत्तदा खण्ड	३.८३.८	दानवास्तत्र संक्रुद्धा	३.५८.६२	दाम्ना चैवोदरे बद्धा	२.७.१४
दमिते सर्पराजे तु कृष्णेन	२.१३.१	दशमे त्वथ पर्यायि	१.७.६५	दानमानगृहीतानि तृप्ता	२.३१.५७	दानवास्त्वथ संक्रुद्धा	३.६०.२७	दायादस्तस्य कर्णस्तु	१.३१.५४
दरदस्य वधश्चैव जरासध	२.४६.१३	दशमो भाग्यसंपन्नो	१.४१.१६५	दानमानप्रवीराश्च	३.२२.१२	दानवा हतशिष्टा ये	२.६४.१०	दारको कृतनामानो ववृधाते	२.६.२
दर्पं वा लोकत्रिख्यातः	३.१०६.६	दश वर्षसहस्राणि शतानि	१.४१.४१	दानवं समरे रुद्रो	३.५८.६४	दानवेन्द्रकुले जाता सुश्रोणी	२.३७.१५	दारास्तु तस्य विषये	१.१२.२०
दर्पित्तान्निनन्दन्देत्यान्	३.१३३.४८	दश वर्षसहस्राणि दशवर्ष	१.४१.१५१	दानवः सूदयामास	३.५८.५१	दानवेन्द्रवचः श्रुत्वा शाखा	२.६३.१६	दारिद्र्यमनपाकृत्य पुत्रा	१.२३.३२
दर्पोत्सिक्तश्च बलवान्-	२.२६.२०	दश वर्षसहस्राणि स कृत्वा	२.३७.४८	दानवा गिरिशृंगाभा	२.११६.१२६	दानवेन्द्रश्च तां हंसी	२.६२.४३	दारिका तु प्रजातेति	२.४.३२
दर्पोत्सेकात्तु नाशाय	२.११६.८३	दश वर्षसहस्राणि शतानि	३.४१.३	दानवा दर्पपूर्णास्तु	१.२८.१५	दानवेन्द्रादयो ह्येते	२.६६.३३	दारिका या त्वया रात्रौ	२.२२.५०
दर्शनीं पूरणीं माया	२.१२०.६	दश सप्त च संग्रामान्	२.३७.४	दानवा दैवतैः साद्धं	१.४५.२	दानवेश्वर मा दास्त्वं	३.७१.३२	दारिकेयं हतैर्वेषा पश्यस्व	२.४.३३
दर्शनीयं च लोकेषु चक्र	२.४३.१३	दशांशश्चात्र होमो	३.१३५.१३	दानवाधियतेस्तस्य	३.६६.६०	दानवैः पीड्यमानाहं	१.५२.१६	दारुकं पञ्चविंशत्या	३.१०१.३
दर्शनीयं च लोकेषु घनु	२.३५.६४	दशार्णयुर्जलेयुश्च स्थले	१.३१.१०	दानवानां परेषां च	३.५४.३१	दानवैः पीड्यमानाहं	३.३४.२४	दारुकं पृष्ठवाहं तं	३.१२७.३३
दर्शनीयं च लोकेषु घनु	२.४३.१४	दहत्याग्निं न खल्ववगिरुद्ध	२.७३.४६	दानवानां भवान्दत्यः	३.८८.५७	तानवैर्नरशार्दूल	३.३३३.१६	दारुके पुनराहेदं	३.१००.१४

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

दारुणाभिनिवेशेन	१.५४.६७	दिदक्षन्तो महत्तत्र	२.२७.४२	दिव्यकुण्डलपूणाभ्यां श्रवणा	२.२४.३३	दिव्याः पुत्रद्वयं जज्ञे	३.३६.३२	दिशागजेन्द्रमारुढो	३.५५.१३६
दारुणे च पिता पुत्रे	२.२३.१६	दिदक्षबस्ते ब्रह्माणं	३.६६.१६	दिव्यकाञ्चनरत्नौघैर्दिव्य	२.५०.७३	दिव्याभरणमाल्यैश्च	२.५५.५४	दिशापालं सुघन्वानं राजानं	१.४.१६
दारुणीं मदिरावासां	२.१२०.१७	दिदेश मातलिमुतं	२.६६.५३	दिव्यध्वजपताकाद्यान्देव	२.५५.११६	दिव्या भरणसंयुक्तं	२.५१.५४	दिशापालानथ ततः	१.४.१८
दारुणो धेनुको नाम	२.१३.१२	दिघक्षन्तो दिशः सर्वा	३.११६.२	दिव्य नारीगणाकीर्णा	३.१३२.४८	दिव्यां तीर्थशतोपेतां	३.३५.२७	दिशाभिर्विदिशाभिश्च	१.४१.४५
दार्यतां चैव टङ्काद्यैः	२.३५.३५	दिघक्षन्निव लोकांस्त्रीन्	३.१११.३०	दिव्यभृङ्गारुचमरैरा-	२.२२.५७	दिव्यांलोककान्प्रचरति	३.१३२.४५	दिशो दश क्षितिमूषयो	३.३६.६०
दार्यतामेष टङ्कोघैः	२.४२.२४	दिने दिने क्षणं चित्तं	३.८०.६६	दिव्यं स्यमन्तकं नाम	१.३८.१४	दिव्याम्बरधरा दैत्या	३.४६.१७	दिशो विद्रावयामास	३.५६.२१
दावाग्निं ज्वलितप्रख्यैः	२.६८.३६	दिने निपण्णो भवति	२.२८.४६	दिव्यमब्दं दशगुणमहोरात्रं	१.८.१०	दिव्याम्बरपताकाद्या	२.५०.६२	दिष्ट्या ते निहता मल्लाः	२.४६.११
दावाग्निमुखमाविश्य	२.४६.१५	दिलीपस्य तु दायादो	१.१५.१५	दिव्यमभ्यर्चितं देवैः	२.६४.६६	दिव्याम्बरविचित्रैश्च	२.५०.७५	दिष्ट्या सहस्राक्षमहं	२.११६.३३
दाशार्ह इति विख्यातो	२.१२१.१२४	दिवसः को विना सूर्यं	२.१२.२७	दिव्यमाल्याम्बरधरं	२.११६.४५	दिव्यायुधधरा दैत्या	३.४६.१८	दिष्ट्यां स्वप्नगतश्चौरो	२.११६.६६
दाशार्हगणमव्येऽहं	२.१२१.२७	दिवसे सप्तमे बालो	२.१०४.२५	दिव्यमाल्याम्बरधरो	२.११६.७८	दिव्यास्त्रधूमः सुभुजो	३.६३.१६	दिष्ट्येदानीं समक्षं मे	१.४८.१५
दासीभावं गता माता	२.१२१.१०६	दिवाकरनिभे रम्ये	३.४२.२२	दिव्यमाल्याम्बरधरो	३.१३२.२८	दिव्यास्त्रेण शिलां विष्णुः	२.६३.७४	दीक्षामयं संकवचं रक्षार्थं	१.३६.२५
दासीभिः कीर्तितं तत्र	२.११७.४६	दिवाकराकार निभानि	३.५२.४१	दिव्यमाल्याम्बरधरो	३.१३२.४०	दिव्येन चक्षुषा तेन	१.२१.५	दीक्षिताः कामदं दिव्यं	३.६७.२४
दास्यन्ति मे करं सर्वे	३.६१.४	दिवादोदासस्य पुत्रस्तु	१.३२.२८	दिव्यरत्नप्राभाकीर्णं दिव्य	२.५३.६	दिव्येनास्त्रेण समरे	२.६३.११३	दीनानुग्रहकर्तारो	३.३७.३०
दास्यामि करसर्वस्व	३.११८.३२	दिवापि रौक्मिण्यस्तु	२.६४.२६	दिव्यरूपैश्च पुरुषैश्छिद्यते	३.१६.५५	दिव्यैर्मल्यैश्च तं	१.११.४७	दीपिकादीपिते देशे	३.६५.१५
दिक्षु सर्वसु रुद्युस्तान	२.७३.५८	दिवा या सूर्यपूतेन वर्तयेत्	२.७६.६२	दिव्यसम्भशताकीर्णान्-	२.५५.११५	दिव्यो दिव्येन वपुषा	३.१६.४	दीपिकासु प्रशान्तासु	३.६५.२
दिग्भिश्चाथ विदिग्भिश्च	३.४१.७	दिवि देवा महीपाल	३.१३२.४	दिव्यस्रग्दामधारीणि	२.३५.५६	दिशः प्रतस्थुस्तु वीरा	२.८५.२	दीप्तजिह्वो हरिश्मश्रु	३.५१.२४
दिग्वासा देववचनात्	२.१२६.२३	दिवि सूर्यसहस्रस्थ	३.६६.३४	दिव्यस्रग्दामधारीणि	२.४३.८	दिशं जिगमिषुर्दिव्यामुत्तरां	३.२८.१	दीप्ततोयाशनीपातैर्वज्र	१.४२.१५
दितिं शुश्रूषति त्वेकोदेहो	२.८५.४२	दिवोदासप्रतिष्ठां च	३.१३४.५	दिव्याः काञ्चनरत्नाद्या	२.५०.३३	दिशश्च विदिशश्चैव	२.१२७.१२७	दीप्तपीताम्बरधरं	१.४२.२२
दितिर्हन्तेषु पुत्रेषु विष्णु	२.८६.३	दिवोदासस्तु राजर्षि	१.२६.३६	दिव्यानां सर्वरत्नानां	२.७५.४३	दिशः सर्वाः प्राद्वन्त	२.१२४.४६	दीप्यते नाकपृष्ठस्था	३.४१.५४
दित्या जातो हि बलवान्	३.४८.१३	दिवोदासादपदवत्यां वीरो	१.२६.७२	दिव्याः पुत्रद्वयं जज्ञे	१.३.६६	दिशागजसुतान्नागान-	२.६७.३५	दीप्यमानं ततः	३.५७.६५

दीप्यमानं स्ववपुषा	२.५५.५६	दुर्जयं दुर्धरं दृप्तं शार्दूल	१.५१.१३६	दुः सहानांयथाध्वंसो	३.२.१५	दृष्टं वा ह्यथवा	३.१११.२४	दृष्ट्वा वामनरूपेण	३.७१.३६
दीप्यमानस्तपोवीयत्	२.२८.१११	दुर्जयस्त्रिषु लोकेषु सुरासुर	२.५४.३	दुस्तरं प्रतिकूलं हि	३.५.३७	दृष्टवन्तो हरि विष्णुं	३.१२१.२४	दृष्ट्वा शशांकमायान्तं	३.५५.१५६
दीयतां करसर्वस्वं	३.११३.२२	दुर्दमस्य सुतो घीमान्	१.३३.७	दुहितृत्वं च मे गच्छ	१.६.७	दृष्टः स्पृष्टश्च	२.१२७.११	दृष्ट्वाश्चर्यं हि नः सर्वा	२.५०.५
दीर्घकालगतः प्रेतः	२.३३.२२	दुर्दशा दुर्विगाह्या च	३.५८.७०	दुहितृभ्यां जरासंधः	२.३४.१०	दृष्टपन्थानमासाद्य उग्रसेनो	२.५५.३०	दृष्ट्वाश्चर्यं हि नस्सर्वा	२.५०.३८
दीर्घकालं महाराज	२.३६.३२	दुर्द्धरं पंचविशत्या	२.१०५.४०	दूतमासाद्य कार्याणां	२.११८.८८	दृष्टिपातः कृतस्ताभिस्तेन	२.११७.५८	दृष्ट्वा स राजा राजेन्द्र	२.५१.५५
दीर्घकालं महाराज	२.४३.७५	दुर्योधनं भ्रातृशतं	२.८४.१६	दूतैस्तैः कृतसन्धानाः	२.११०.७	दृष्ट्वा च तस्मैप्रभवे	३.११०.७	दृष्ट्वा स राजा राजेन्द्र	२.५५.३४
दीर्घजिह्वोऽर्कनयनो	१.४१.८५	दुर्योधनमुखाः सर्वे	२.११०.८	दूतोऽयं सात्यकिः	३.११७.६	दृष्ट्वा जवेन गारुडं	२.१२७.५३	दृष्ट्वासीनं रथे रम्ये दिव्य	२.५५.३१
दीर्घबाहुदिलीपस्य रघु	१.१५.२५	दुर्योधनस्य कन्यां तु	२.६२.८	दूतोऽसि सर्वथा विप्र	३.११५.१४	दृष्ट्वा तत्कर्म देवस्य	३.१२७.२६	देवैर्ब्रह्मर्षिभिः साद्वं	३.४१.८
दीर्घं योजनविस्तारं	२.११.४२	दुर्लभां दुर्जयां दुर्गा	२.१२०.१८	दूतोऽस्मि देवदेवेश	३.११५.७	दृष्ट्वा ततः कुमारस्य	२.११६.१२	देयं कुम्भसहस्रं तु गङ्गाया	२.८१.२६
दीर्घरोमा दीर्घभुजो	३.८६.२	दुर्वाससं महाबुद्धि	३.१०७.१८	दूराददर्शं नृपतिर्देवीं	२.२८.७६	दृष्ट्वा त तत्र निष्कुम्भं	३.५६.८	देयं समाप्ते भगवन्	३.१३२.२
दुःखितं बत पश्यामो	२.१२.२५	दुर्वाससा वरो दत्ता	२.६६.३७	दूषकास्त्वाश्रमाणां च	३.८.१८	दृष्ट्वा तु तान्सुरान्	३.६६.४७	देवकश्चोग्रसेनश्च	१.३७.२७
दुःखोपसर्प्य तीरेषु	२.११.४४	दुर्वाससा सदोपास्य	३.१०७.१६	दृढचापप्रमुक्तास्ते	३.५४.५५	दृष्ट्वा तु भगवान्ब्रह्मा	२.१२५.१६	देवकी च गृहे गुप्ता	२.२.३
दुग्धा वाराणसी चैव	२.१०२.११	दुर्वासास्त्वथ तत्रैव	३.११३.१	दृढप्रहारिणी वीरावन्योन्यं	३.२६.१८	दृष्ट्वा ते परमं सत्त्व	३.६५.११	देकीनन्दन वचः शृणु	२.६३.३३
दुतोह पुष्पितः सालो	१.६.४३	दुर्वृत्तस्य हतस्यापि त्वया	१.५४.८१	दृढाय दृढरूपाय	३.६०.१०	दृष्ट्वा त्वष्टा हतं	३.५५.४१	देकी रोहिणी चेमे	१.५५.३८
दुतोह सवितुगां वै शक्रो	२.१५.१२	दुष्करं कर्म संस्मृत्य	२.४६.४८	दृदृशे वासुदेवस्य	२.६८.३६	दृष्ट्वा देवान्हृषीकेशा	२.६०.३६	देवकी रोहिणी चैव	२.१२८.१३
दुद्रुवतुमंहाराज	३.१२७.२२	दुष्टेन मनसा देवि शुभं	२.११८.१८	दृश्यतां मत्प्रभावेण	२.६४.३८	दृष्ट्वा दैत्यविनाशाय	१.४८.५	देवकी वसुदेवश्च रोहिणी	२.५५.७७
दुद्रुवर्भयसंत्रस्ता भग्ना	२.६३.६५	दुष्प्रेक्ष्यां दुर्गमा रौद्रां	२.१०५.६५	दृश्यन्ते गाव एतास्ता	२.१२७.५१	दृष्ट्वा धर्मपरं नित्यं	३.४८.१८	देवकी शान्तिदेवा च	१.३७.२६
दुन्दुभीनां च निर्घोषः	३.५६.४६	दुष्यन्तं प्रति राजानं	१.३२.११	दृश्यन्ते विविधोत्पाता	३.४६.३३	दृष्ट्वा बाणं तु निर्याति	२.१२६.३७	देवकी सप्तमा देव्यो	२.१०१.८
दुरारोहश्च शिखरे	२.४२.४३	दुष्यन्तस्य तु दायादः	१.३२.१२२	दृष्टतीमुतश्चापि	१.३२.६२	दृष्ट्वा भूतानि भगवान्	३.११.११	देवक्यजनयद्विष्णुं यशोदा	२.४.१४
दुरासदः सुसंजज्ञे	३.६१.१५	दुष्यन्तस्य तु दायादो	१.२३.६	दृष्टं मे ब्रह्मसदनं ब्रह्मर्षि	२.१.१२	दृष्ट्वायान्तं हिरण्याक्षं	३.३८.२२	देवक्षत्रोऽभवत्तस्य दैव	१.३६.२७

देवगन्धर्वयक्षोर्ध्वरनु	१.४४.५	देव देव नमस्तुभ्यमनादिनि	२.५१.५६	देव यामनगरीं नगरीं रैवत	२.५५.७	देवश्रवाः कनिश्चैव	१.२७.४६	देवानां दानवानां च	१.३.१
देवगन्धर्वगेयानि नृत्यानि	२.६२.५०	देव देवप्रासादात्तु	२.११६.७३	देवराजप्रतीहारो गन्धर्व	२.१०४.५२	देवश्रवाः कतिश्चैव	१.३२.५५	देवानां मुख्यं वैकुण्ठं विष्णो	२.४०.३५
देवताचर्याश्च पूज्यन्ते	३.२४.२	देवदेव नमस्कृत्य गतोऽहं	२.५५.१०१	देवराजवचः श्रुत्वा नारदः	२.७०.१	देवसैन्यसहस्राणि	३.५६.४३	देवानां रुधिरं संख्ये	३.५४.२३
देवतानां गणौ द्वौ तौ	१.७.६७	देव देव महाबाहो	२.१२५.१३	देवराजाम्यनुजातो रत्नैश्च	२.६४.६४	देवसैन्यस्य सर्वस्यार्धं	३.५७.८	देवानां विप्रिये नित्यं	२.६३.३५
देवतानां च सर्वेषां	३.८.२२	देव देव महाभाग	३.७२.४५	देवरातादयः भक्त	१.२७.५७	देवस्थानानि तान्येव	१.८.३६	देवानां शरधारामिः	३.५४.६५
देवतानामपि चमू रुरुचे	१.४७.१६	देवदेवमृते रुद्रं तस्य न	२.८६.८	देवविभित्तपोवृद्धैः सिद्धैः	१.४१.४६	देवांस्त्रिभुवनस्थांश्च	३.४१.२६	देवानां स तु सर्वस्वं	२.१.१७
देवतानामृषीणां	१.४१.१४८	देवदेव सदा युद्धे जेता	२.१२७.१२	देवविभिः स्तुतावेतो	३.१४.५	देवांस्त्रिभुवनस्थांस्तु	१.४१.६७	देवानां स तु सर्वस्वं	२.२८.५२
देवतानां हि पितरः पूर्वं	१.१८.७६	देवदेवस्य युद्धेषु	३.११८.४०	देवविभित्तं तं दिव्यं	२.११६.५	देवा अपि च यं द्रष्टुं	३.१०७.१६	देवानां सुमहत्कार्यं	२.१०१.७०
देवताश्चापि ते सर्वाः	३.७२.४१	देवपक्षे प्रमुदिते दैत्य	१.४६.४४	देवविभिर्मुनिश्रेष्ठैः संबृतः	२.६६.६	देवा अपि पितृन् स्वर्गं	१.१६.१६	देवानामजयो घोरो	२.५३.३०
देवतास्त्वशनीर्घोराः परिघां	१.४७.२७	देवपन्नयस्तर्तवान्या देवाश्च	२.६५.३५	देवविषयक्षगन्धर्वाः	१.८.३७	देवा इवात्र मोदन्तु	२.५८.८	देवानामपि कर्तृसौ लोकानां	२.४६.१६
देवदानवगन्धर्वा	३.७२.७८	देवपुत्रो द्विजौ वीरावप्रमेय	२.६६.५५	देवविषीणां ब्रह्मविषीणां	३.८.२३	देवाक्रौडं परिक्रामन्पूज्य	२.६४.६५	देवानामस्ति कर्तव्यं कार्यं	२.६१.३८
देवदानवनिमुक्तैः	३.५५.७६	देवपुत्रौ वरयतां	२.६४.४२	देवविषीणां ब्रह्मविषीणां	३.८.२३	देवाज्ञया पार्सदा ये	१.२६.३८	देवानामीश्वरश्शक्रो	२.१५.५
देवदानवयक्षाणां	२.११८.५८	देवभागस्ततो यज्ञे तथा	१.३४.२१	देवविषीणां ब्रह्मविषीणां	३.८.२३	देवाति देवो भगवान्	२.६५.३४	देवानुयाननिर्घोषं	२.१२७.१०७
देवदानवयक्षाणां यं	२.६४.४६	देवभागान् गतान् दृष्ट्वा	१.५४.१७	देवविषीणां ब्रह्मविषीणां	३.८.२३	देवा धर्मरता नित्यं	२.६४.४०	देवानिघ्नस्तथा राजन्	३.१२१.७
देवदानवयोः संख्ये	३.५७.२५	देवं देवानां पावनं पावनानां	२.७२.४६	देवविषीणां ब्रह्मविषीणां	३.८.२३	देवानचोदयद्ब्रह्मा निग्रहार्थं	१.५३.६७	देवाः प्रथमतो भूयः	१.२८.१३
देवदानवसंघानां यः	२.११६.८१	देवं द्रष्टुं जगद्योनि	३.११३.२७	देवविषीणां ब्रह्मविषीणां	३.८.२३	देवानसृजत ब्रह्मा मां	१.१७.२२	देवारिदित्तजो दृप्तो	३.४७.१३
देवदानवसंभूतामाक्राम	२.७१.३५	देवं पुरुषकारेण न शक्य	२.२८.४	देवविषीणां ब्रह्मविषीणां	३.८.२३	देवानाप्यायन्ते तु ये यज्ञे	२.८६.२४	देवावृत्पवन्तश्चैव	३.४६.७३
देवदानवेदहस्तु दुस्तरा	३.५८.५६	देवं विजृम्भितं दृष्ट्वा	२.१२५.८	देवविषीणां ब्रह्मविषीणां	३.८.२३	देवानां च तथा तत्र	३.५८.६८	देवाश्च बलिहोमेन	१.४८.७३
देवदुन्दुभयश्चापि प्रणेदुर्वा	२.८५.२३	देवं संकीडितं दृष्ट्वा	२.११७.१२	देवविषीणां ब्रह्मविषीणां	३.८.२३	देवानां दानवानां च	१.१.६	देवाश्च भूतरजसस्तथा	१.७.२७
देवदुन्दुभयो नेदुः पुष्प	२.८७.३५	देवमातुस्तथादित्या	३.६८.१४	देवविषीणां ब्रह्मविषीणां	३.८.२३	देवानां दानवानां च	१.२.५१		
		देवमानुषयोर्नेता यो भुवः	१.४०.१०	देवविषीणां ब्रह्मविषीणां	३.८.२३				

देवाश्च मुनयश्चैव	२.७३.२६	देवेष्वपि दधारैनां नान्यो	१.५०.३२	देशे पुण्यत्तमे चैव	१.२६.६	दैत्येन्द्राणां विनाशाय	३.४६.३४	द्रक्ष्याम्यहं जगन्नाथ	३.११४.२३
देवासत्ये रता नित्यमनूते	२.६४.४१	देवैर्दत्तः शुनः शेफो	१.२७.५६	देशोऽयं संविधातव्यो	३.११६.५	दैत्येभ्यस्त्यज्यतां भीश्च	१.४८.७८	द्रवत्सु रथमुख्येषु चेदिराजो	२.४३.७८
देवाः सप्तर्षयश्चैव	१.४१.२२	देवैर्न दृष्टश्चान्तस्ते	२.१४.४३	देहस्य मध्येहृदयं	१.४०.५३	दैत्येषु मखशोभाश्च	३.६५.४	द्रवं यत्सलिलं तस्य	३.१६.३१
देवासुरगणानां हि यक्ष	१.४१.१३४	देवैर्निगदितार्थस्य गदा	२.३५.६५	देहीति याचते यो	३.७१.३५	दैवयुक्तेन वा युक्ताः	३.२४.७	द्रष्टव्यश्च यथाहं वै त्वया	२.१६.८२
देवासुरचमूमुख्यैः	३.१०५.१२	देवैर्निगदितार्थस्य गदा	२.४३.१५	देहेन तस्य मल्लस्य	२.३०.४७	दैवीं मायां समाश्रित्य	२.६२.५८	द्रष्टव्यौ च मयावश्यं	२.२२.६०
देवासुराणां सर्वेषाम	२.६४.२४	देवो गृहीत्वा समेर	३.५५.३०	देहे समवकीर्यन्त	३.५५.६७	दोग्धा रजतनाभस्तु	१.६.३६	द्रष्टा हि तां भवानद्य	१.६.३६
देवासुरे नृपश्रेष्ठ	२.७७.४	देवोऽतिथिस्तत्र च नारदोऽथ	२.८६.२३	दैतेयाश्चाप्यदैतेयाः	३.२५.८	दोभिश्चायत्तपीनांसै	१.४७.१२	द्रष्टुमभ्युद्यता विष्णु	३.११०.१७
देवासुरेषु प्राप्तेषु संग्रामेषु	२.७०.१८	देवोदवो जगन्नाथो	३.१२८.६	दैत्यदानवसंयोगा	१.३.६८	दोभ्यां चिक्षिपत्तश्चापं	३.५५.१२६	द्रुमः किंपुरुषश्चैव	२.३५.४०
देवा हुताशनप्राणाः प्राणो	१.४०.४८	देवो वा दानवो वा त्वं	२.२०.८	दैत्यदानवहन्तारः संभूताः	१.५३.७१	दोभ्यां कमलपत्राक्षः	२.२७.४६	द्रुमः किंपुरुषश्चैव पार्वती	२.४२.२६
देवीनां च तथान्यासां	२.६५.४५	देवी तत्र जगन्नाथी	३.७३.४	दैत्यं सोऽतिबलं दीप्तं	१.४१.७८	दोभ्यामानभ्य कृष्णस्तु	२.३०.४४	द्रुमक्षयमथो बुद्धा	१.२.३६
देवीभिर्धर्मनित्याभि	२.६८.६	देवी तस्यामजायेता	१.६.५५	दैत्यमांसप्रदिग्धागं	३.१०१.२१	दोभ्यामुत्क्षिप्य तस्यैव	२.१०५.७६	द्रुमवर्षं मुमोचाथ	२.१०६.१३
देवीं सस्मार मनसा	२.१०७.५	देवी हरिहरो स्तोष्ये	२.१२५.४०	दैत्ययोर्मदसाच्छन्ना	१.५२.४०	दोभ्यामुत्पाटयामास कृष्णो	२.१८.३१	द्रुमशीलप्रहरणा	३.५८.८३
देवेन्द्रकृष्णछन्देन सरस्वत्या	२.६१.२८	देव्यश्च नृप कृष्णस्य	२.७७.७	दैत्यः संक्रोघताम्राक्षस्तं	३.६०.४८	दोषोऽयमेकः सलिलागमस्य	२.६५.२५	द्रुमान्वहुविधास्तत्र	३.४१.५८
देवेन्द्रभवनाकारै	३.१३३.१२	देव्यः सत्यस्तथैवान्या	२.७७.२०	दैत्यस्य चोद्धतं	३.५५.१३२	दोर्गन्ध्यं वा सुघोरा	२.६६.६८	द्रुमिलस्त्वैवमुक्तस्तु	२.२८.१०६
देवेन्द्रवचनं श्रुत्वा कश्यपो	२.८६.१६	देव्याः स्तवमिमं	२.१२०.३१	दैत्याधिवासं निजित्य	२.८८.८	दोः शासननिर्माभाग	३.१२५.१५	द्रुमैस्सर्जरसानां च सर्वतः	२.४०.१३
देवेमां प्रतिगृह्णीष्व	२.४१.३४	देव्यास्तु वचनं स्मृत्वा	२.११७.२६	दैत्यानां च महातेजा	३.३७.१४	द्यावापृथिव्योस्संसर्ग	२.१०.३२	द्रुह्योश्च तनयो राजन्	१.३२.१२४
देवे वर्षति लोकेऽस्मिंस्त	२.१५.६	देव्यास्ते प्रीतिमाज्ञाय	२.११६.७३	दैत्याः पिशाचा नागाश्च	३.३३.१२	द्यौश्चाल तदा राजन्	२.७३.४२	द्रोणं पर्वणि विप्रेभ्यो	३.१३२.६३
देवेश्वरो दवगणैः	२.६६.५०	देशकालं समालोक्य	२.५५.७६	दैत्या रक्षांसि राजेन्द्र	३.१२२.७	द्यां चैव सर्वं ऋक्षाणां	३.२६.१४	द्रोणं द्रोणि कृपं कर्णं	२.१०२.१८
देवेषु दवः सुश्रोणि दान	२.६२.२१	देशकालविशिष्टस्य हितस्य	२.४३.६०	दैत्येन सहितो तौ हि	३.१२१.१५	द्रक्ष्यामस्तत्र तान्विप्रां	३.३६.६१	द्वादशाक्षीहिणीर्हत्वा	२.५३.४३
देवेषु वत्तंते यद्वै तद्वि	१.४६.१६	देशान्राष्ट्राणि चित्राणि	३.१०.१५	दैत्येन्द्रतनयां प्राप्त	२.६४.२	द्रक्ष्यामि चक्रिणो	३.११४.११	द्वादशाब्दं तपश्चतु	३.८४.१७

द्वादशया शुक्लपक्षस्य	२.११८.२	द्वावत्यास्तु सा मध्ये	२.५८.७७	द्वितीयो नो विरुपाक्ष	३.१०५.१३	द्वौ मेघौ शयनाभ्याशे	१.२६.१५	धनुर्विद्युदगणश्चापो	३.५७.१५
द्वादश्यां शुक्लपक्षस्य	२.११८.२६	द्वावन्थौ स लभते प्रेत्य	२.१६.५	द्विधाकृत्य महाघोरं	३.८३.२	ध		धनुर्वेदचिकीर्षार्थमुभौ	२.३३.४
द्वापरं द्वे सहस्रं तु	३.८.१०	द्वावम्बुनाथौ समरे तो	१.४६.१५	द्विधा कृत्वा महागुर्वी	३.६७.१०	धनदश्च धनाध्यक्षो	३.४१.१८	धनुर्वेदपराः सर्वे सर्वे	१.५१.६
द्वापरस्य युगस्यांते	१.५३.५६	द्वावेव हि नृप श्रेष्ठ	२.१२१.२३	द्विधा छिन्नं क्षुरप्रेण कृष्णे	२.६३.११६	धनदस्यानुगन्ताह	३.८०.२४	धनुर्वेदे तथास्त्रे	३.१०४.१८
द्वाभ्यामधर्मः पादाभ्यां	३.८.७	द्वाःस्थने वास्तिः पूर्वं	३.१११.६	द्विधाभूतं वपुः कृत्वा	१.४८.१६	धनदस्योपदेशेन	३.८१.४	धनुः शालां गतो तत्र	२.२७.४१
द्वाभ्यां धर्मः स्थितः	३.८.१२	द्विगुणं दीप्तेदेहस्तु रोषेण	२.१२५.२	द्विधाभूतमभूमध्ये	२.२७.४८	धनं धान्यं च यत्किंचिद्	२.३२.२३	धनुश्चिच्छेद चाप्यस्य	२.५६.६६
द्वारकां च समासाद्य	२.५७.५	द्विजानां वीरुधां चैव	१.४.२	द्विपञ्चाशत्सहस्राणि	३.५१.६६	धनप्रदेशेषु बलाक	२.६५.४	धनुश्चिच्छेद भूयस्तु	३.१२५.६
द्वारकां चापि संप्राप्ते	२.६०.३४	द्विजानां वृत्तयस्तिस्रो ये	१.४५.३४	द्विपादपृष्ठपुच्छाद्धे श्रवणे	२.२४.४६	धनरत्ने विरहिताः	२.६३.३७	धनुषा तेन राजेन्द्र	३.१२५.१२
द्वारकां प्राप्य कृष्णस्तु	२.१२७.१४८	द्वितीयं द्वापरं प्राप्य	१.२६.२१	द्विमूर्द्धा शकुनिश्चैव	१.३.८१	धनानि श्लाघनीयानि	३.३.१०	धनुः सशरमादाय	३.३२.२२
द्वारकां प्रस्थितः शौरि	२.१२७.१०१	द्वितीयं पारणं प्राप्य	३.१३२.२७	द्विरेफणसंकीर्णं शिला	२.४०.६	धनान्नदन्त प्रतिनर्दमानान	२.६५.७	धनुस्त्रिवर्णं वरगात्रि	२.६५.६
द्वारकां विष्णु निलया	३.६२.१३	द्वितीयमेतत्कथितं तव	१.७.१६	द्विरेफाभरणाश्चैव	२.२८.६३	धनुः पञ्चशतायाममिषु	२.३६.३०	धनूषि च विचित्राणि	३.५६.८०
द्वाद्वारकायां ततः कृष्णो	२.१२८.२२	द्वितीयः स बभौ राजा	१.३२.१०४	द्विषत्सु प्रतिकुर्वाणो परा	२.३५.६८	धनुः प्रवरमत्युग्रं	३.८४.२३	धनूषि वज्रायुधसप्रभारिण	३.५१.८०
द्वास्कायां निवसतः कृत	२.६५.२	द्वितीया चास्य शयने	१.४१.१६	द्वे चैव भृगुपुत्राय	१.३.३०	धनुरादाय गच्छ त्वं	३.११७.३	धनौघैरभिवर्षणं चक्रुः	२.५८.६५
द्वास्कावासिनः सर्वे	२.१२७.१३४	द्वितीयामापवस्यैत	१.१.४५	द्वे भार्ये सगरस्यास्तां	१.१५.२	धनुरादाय शनैर्यस्ततोऽन्यत्	२.७३.६६	धन्यः प्रजावानायुष्मान्	१.३०.४६
द्वास्कावासिनां वाचः	२.१२७.११५	द्वितीयायां तु संज्ञायां	१.६.१८	द्वेषी चैवाभिमानी च	२.४६.४३	धनुर्ज्यातिन्निमधुरं	३.६०.३७	धन्यं यशस्यं शत्रुघ्नं	१.१.२५
द्वास्पालाश्च चत्वारस्त	२.६३.१८	द्वितीयायां तु संभूत्यां	१.२६.१८	द्वे सेने संगते राजन्	३.१२७.१	धनुर्धरश्चक्रधरो भवान्	२.१२१.११७	धन्यमारोग्यमायुष्यं पुण्यं	१.२५.५१
द्वावत्यां जगन्ताथो	३.७३.१८	द्वितीयायां स सृष्ट्यायां	१.५३.४६	द्वे धीभूताः काश्यपेया	३.२६.५	धनुर्भंगस्य पृषत्कांश्च	१.३०.२१	धन्या खलु महाभागा	२.५२.१६
द्वावत्यां निवसता	२.११५.७	द्वितीये त्वय पययि	३.८४.२६	द्वे पायनीस्थ भगवान्यथा	३.७३.११	धनुर्भंगस्य कथनं	३.१३४.१५	धन्या देवीमहाभागा	२.५५.६६
द्वावत्यां निवसतो विष्णो	२.८८.४	द्वितीये द्वापरे प्राप्ते	१.२६.२२	द्वे पायनीष्टपुटनिः सृतम	१.१.२	धनुर्महत्तादाय	३.६५.१३	धन्या भवन्तः पुण्याश्च	२.११०.७०
द्वावत्या विशेषेण	३.१३४.२३	द्वितीयो यः सुतस्तस्य	१.६.६५						

धन्या भवन्तो दृश्यन्ते	२.११०.५६	धर्मभृद्यतिधर्मा च	१.३८.५३	धातुभिर्मोक्षकाले च	३.१६.२४	धिक् त्वामीदृशमक्षान्तं	२.२८.६७	धैर्यान्मनः सन्निधाय	२.६१.३६
धन्यास्यनुगृहीतासि	२.११८.४३	धर्मं कुतोचितं क्रुद्धो	१.१४.२	धात्री कपिलरूपेण	३.२७.२५	धिक् स्त्रियः सर्वथा विप्र	२.७०.२३	धौन्धुमारिदृढाश्वस्तु	१.१२.२
धन्यास्यनुगृहीतासि	२.११८.७४	धर्ममर्थं च कामं च क्रमेण	२.६६.५७	धात्वर्थं सर्वभूतानां	३.२७.१५	धिगिमं गहितं वासं	२.३७.२४	ध्याता ध्यानमयो	३.७५.१७
धन्या हि भर्तृसहिता	२.११७.१४	धर्ममूर्तिधरास्तेषां	१.१८.६	धात्र्याः सकाशात्स	२.१०४.१४	धिग्गर्जनं वृथानादं	२.११२.२२	ध्यात्वा म सर्वयत्नेन	३.८६.१४
धन्योऽस्म्यनुगृहीतो	१.४५.७०	धर्मवागीश्वरो नित्यं	२.१२७.६०	धाम्नो यस्य हरिरग्रीऽथ	२.७२.५८	धुन्धोर्वधमहं ब्रह्मन्	१.११.२४	ध्यायन्पठन जपन्वापि	३.८३.२३
धन्योऽस्म्यनुगृहीतो	२.५४.२	धर्मश्च बहुधा प्रोक्त	३.१५.७	धारतस्व महाभाग	२.५५.४८	धूपं पाश्वोभये चैव चन्दना	२.५५.२४	ध्येयं पुण्यात्मना	३.७३.१४
धन्योऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मि	२.१२१.११४	धर्मसत्यमयः श्रीमान्	१.४१.३१	धारयामासगायस्य गर्भं	१.३५.१५	धूम्रकेशं हरिश्मश्रुं	३.३८.१८	ध्येयं मुमुक्षुभिरमेयमनाद	३.११४.४१
धन्योऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मि	२.१२३.३३	धर्मस्य कन्या सुश्रोणी	१.२.८	धारयिष्याम्यहं पांसुं	३.११४.३०	धूम्रकेशो हरितुश्मश्रु	१.४६.५२	ध्रुवं च कीर्तिमन्त	१.२.६
धन्वन्तरेः संभवोऽयं	१.२६.१२	धर्मस्यांशस्तु कुन्त्यां वै	१.५३.६३	धाराणा सन्निपातेन	३.४५.२३	धूम्रवर्णा महाकाया	२.६३.६७	ध्रुवमैश्वर्यमापन्न	३.१६.५३
धन्वन्तरेस्तु तनयः	१.२६.२८	धर्मात्मानो वेदविदः	३.३६.४२	धारा दिवि च संसक्ता	३.४५.२४	धृतक्षीरं यवा व्रीहिः	३.२३.१०	ध्रुवः स्वयंभुवा सृष्टो	३.६०.२५
धन्वन्तरेस्तु तनयः केतु	१.३२.२२	धर्मार्थकामविषयो यशः	२.१०६.४४	धारानिर्मलनाराचं विद्युत-	२.१०.३५	धृतं गोवर्द्धनं दृष्ट्वा	२.१६.१	ध्रुवो वर्ष सहस्राणि	१.२.१०
धरण्यां मृदितः शिष्ये	२.३०.८५	धर्मात्लिङ्गभ्युद्भवः कामः	३.१४.४४	धार्तराष्ट्रश्च मे सर्वे	२.१६.६८	धृतराष्ट्रश्च गान्धार्या	१.३२.११४	ध्रुवाय तत्र न्यवसत्केशव	२.५६.३२
धरण्याश्रयभूताभ्यां चरणा	२.२५.२५	धर्मोऽरञ्जयामास	१.६.५८	धार्मिकास्सर्वभावज्ञाः	२.३२.३८	धृतराष्ट्रस्य राज्ञस्तु	१.५३.५२	ध्वजं चास्य ददौ प्रीतः	२.११६.२२
धरावरनिभाकारं	३.५०.६	धर्मो रति च सततं	१.११.५७	धाष्ट्यं हि तव मंदात्मन्	३.११८.३३	धृता रथे दैत्यवृषस्य	३.५१.८१	ध्वजं त्वष्टुरथ च्छित्त्वा	३.५५.४०
धर्मकामार्थसंयुक्तं	३.५.३	धर्मो वर्त्मनि संस्थाप्य	३.१०७.२८	धाष्ट्यं मे तत्तयोर्विप्र	३.११५.३१	धृतिमन्तं गरुत्मन्तं जगाद	२.४७.३६	ध्वजाकुन्ततरुच्छन्ना	२.८५.११
धर्मचक्रं महच्चक्रमजितं	३.४४.७	धाता चैव हि लोकानां	३.६७.४	धावत्येव तथा सूर्याशु	३.११४.३	धृतिमान्मुमना विद्वान्	१.२३.२६	ध्वजेन शिखिवर्हेण	२.२.४५
धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च	१.५.४०	धातार्यमा च मित्रश्च	२.६६.२१	धावत्येवं तदा राज्ञि	३.१०२.५	धृत्ते गोवर्धने शैले	२.२२.३	ध्वजशीर्षेऽपतद्गृध्रः	२.१०५.२३
धर्मदेवस्य तस्याथ	२.२६.४४	धातार्यमांशोऽथ भगो	३.५२.३६	धावन्तः प्रहरन्त्येतान्	३.६४.१३	धृतो गोवर्धनः शैलः	२.१०१.३८	ध्वजेनोष्ट्रेण महता	३.५१.६५
धर्मधृग्यतिधर्मा च गृध्र	१.३४.१३	धातुभिः पच्यमानैश्च	२.४२.५६	धावन्ति ह्येषामाणास्ते	३.१३३.८	धृष्णोस्तु धाष्टकं	१.१०.२६	ध्वाक्षो मूर्च्छि निपतितः	२.१०५.२६
धर्मनाशो भवेत्तस्य	३.१०६.१७	धात्री तस्य जगर्ह तां	१.२०.१००	धक्ते वृत्तं सुदुर्वृत्त यः	२.२८.१०५	धेनुकः स महाकायो	२.१०१.४०		

न चार्धिकारो देवानां	२.५०.५१	न जरा क्षुत्पिवासे वा न	१.११.३	न तं वसिष्ठो भगवान्	१.१३.१२	नक्षत्रमालापिहितं	२.१०५.१६	न च ते देवदेवस्य	३.७२.४०
न चापराधः शक्रस्य	३.२.३०	न जातु कामः कामाना	१.३०.३८	न तं वेद स्वयं	१.५०.१५	नक्षत्राख्यानि सोमाय	३.१४.३३	न च तौ पश्चते केचिद	२.१२५.२३
न चाप्युत्सवकं मातः	२.११७.६२	द जानतेऽस्य चरितं	३.३३.२	न तस्य ददृशे देहोमाया	२.८४.३०	नक्षत्राणि ग्रहाश्चैव	३.१०६.४८	न च देववचो मिथ्या	२.११६.८६
न चामुद्रः प्रवेष्टव्यो	३.७४.२२५	न जाने इति यद्व्रूषे	३.११८.३८	न तस्य दुर्लभं किंचिदिह	२.१२८.३८	नक्षत्राणि विद्योगीनि	३.३.३८	न च नारायणं देवं वर	२.४६.४५
न चायमुग्रसेनस्य	२.२८.५४	न जाने कारणं ब्रह्मन्	३.१११.२७	न तस्य वित्तनाशोऽस्ति	१.३३.५७	नक्षुत्पिपासा न ग्लानिः	२.८८.७५	न च पश्यन्ति ते	३.६२.२४
न चारुरोह भगवान्वैन	२.५५.२	न जाने तस्य चरितं न	१.४०.२	न तस्यासदिनिर्भिन्नं	३.५५.१३१	न क्षुत्पिपासे कालं वा	१.१६.२२	न च प्राप्नोति वैकल्पं	२.१०६.१०५
न चासन्ने निवस्तव्यं	१.२०.१३५	न ज्येष्ठता न राजत्वं	२.७०.२५	न तानि कार्यवन्तीह	३.८०.७६	न क्षुत्पिपासे न ग्लानि	३.४१.५२	न च भीष्मो न वा	३.१११.६७
न चासुरगणैः सर्वैः	२.६३.१६	नटवेशधरं कामं गत्वोवाच	२.६३.४७	नता निश्चल मूर्द्धनि	१.३३.३३	न क्षुद्राय न नीचाय	३.४७.२२	न च मे तृप्तिरस्तीह	१.१.१५
न चासुरैश्च सुताः	२.८४.६८	नटश्चैव मया दृष्टो मनि	२.६२.४८	न तु तत्र वनं काश्चिदच्छन्देन	२.८६.५२	न खल्वयं मृतोण्डस्थ	१.६.५	न च युद्ध महाबाहो	२.१२५.१७
न चास्ति ते परोक्षं	३.११५.१७	नटस्याय ददुर्द्वैत्या सत्कारं	२.६३.४	न तु त्वमागतां पुत्र	१.२०.१०४	न खल्वसुरसंधाना	३.६७.३	न च विन्देत मां	३.२७.३५
न चास्य मनसस्तुष्टि	२.११६.३०	नटानां नृत्यगेयानि वाद्यानि	२.५५.१६	न तु त्वां पौरमात्रेण शक्ता	२.३८.५४	नगरान्निस्सृतौ दृष्ट्वा	२.३५.५४	न च विद्वेषणेनाहं	२.४६.३
न चास्य विद्रा वे कर्म	१.५.३७	नटानां नृत्यगेयानि वाद्यानि	२.५५.२२	न तु रात्रौ प्रदृश्येत	३.३२.३३	नगरे शाणितपुरे बाणो	२.११६.७	न च वृन्दावने कार्यो	२.५.११
न चाहं मथुराकांक्षी न	२.५५.८०	नटो दत्तवरस्तस्य	२.६१.५२	न कश्चिदकविर्नाम	३.३.३४	रगस्य तस्य संपश्य	३.१७.३४	न च व्याख्या त्वया	३.७५.३
न चाहमुग्रसेनेन जातः	२.२८.३८	न तच्छ्रवणं मयाख्यातुं	३.१५.११	न कालमवि पश्यामि	२.६४.१०	नगेन्द्रे सहसागम्य	२.४६.४६	न च शक्तोऽनिरुद्धस्तं	२.११६.११
न चाहमेकं सबलो युक्त	२.४४.२०	न तत्र कश्चिद्दीनो वा	२.३३.३५	न किंचिदन्यत्पश्यामि	२.११०.६२	नगनाथ नग्नरूपाय	३.८७.३४	न च शक्यमविज्ञातैः	२.११८.८५
न चिन्तयति राजंस्त्वा	२.११६.१६१	न तत्र कश्चिद्दीनो वा	२.४५.६	न कुर्वतां देवताज्ञामुग्रो	२.६१.३६	न चक्रम्पे तदा विष्णुः	३.३२.४४	न च शत्रोः परिभ्रष्टा	२.३६.१५
न चेयमेकाहमपि पुरी	२.३८.५७	ग तत्र वत्सास्तीदन्ति	२.६.३४	न कुलेन न वर्णेन	२.११८.५६	न च तं चालयामासु	३.४५.२०	न च शेषं प्रकुर्वन्ति	१.२०.१३०
न चैतो द्रष्टुमिच्छामि	२.३०.६६	न तत्र विषयो वायोर्न	१.५०.६	न कूटकृद्यस्य नृपोऽस्ति	२.६५.३७	न च तस्य मनस्तत्र	२.११६.२६	न च संग्रामहेतोर्हि	२.४६.३८
न चैनं पतितं हन्ति	३.२६.१४	न तत्र सूर्यभाः कृष्ण	२.६८.१६	नक्तंचराः केसरिणो	२.१०६.६५	न च तां शक्यसे	२.५१.३३	न च सा मनुजेन्द्राणां	२.५१.३२
न चेवा तस्य कौमारे	२.१०८.२७	न तत्र सूर्यः सोमोऽय	२.८६.५७	नक्तंचराः सुखोदकाः	२.१०६.६२	न च ते दृश्यते भीरु	२.११८.२२	न चात्मनो गुणांस्तात	२.२३.८

न ते धर्मं करिष्यन्ति	३.३.२०	नदी वंतरणी पुण्या	२.१०६.२७	न नूनं तादृशं रूपमासीत्	३.८३.२०	नन्दीश्वरसमायुक्तं	२.१२४.१७	न भेतव्यं द्विजश्रेष्ठ	२.१११.१०
न ते प्रभाविता मृत्यु	१.१६.२६	न दृष्टपूर्वो हि मया	२.६३.५७	न नृतुहंष्टमनसो जगत	२.१०७.३०	न पितृणां न सिद्धानां	३.६६.७२	नभो नभस्येथ निरीक्ष्यं	२.६५.१
न ते वर्णयितुं शक्या गुणा	२.८६.६१	न दृष्टं कश्यपकुले	२.७०.२४	न नृतुस्तस्य पुरतो	३.८६.१५	न पूर्णचन्द्रेण मुखं नयने	२.६२.२३	नमः कपालहस्ताय	३.८७.२८
न तेषां दर्शयद्देवी	३.२१.२१	न दृष्टिगोचरो ती तु	२.६०.८	नन्दगोप गता रात्रि	२.५.१३	न प्रकाशन्ति च दिशो	३.४६.२२	नमः कुमारगुरवे	२.१२५.४४
न तेषां यज्ञ भागं	३.७२.६६	न देवा न च गन्धर्वा	२.११६.२३	नन्दगोपप्रसन्नो ते द्रुमामेवं	२.७.३१	न प्रद्युम्नो नानिरुद्धो	३.११२.२१	नमः कृष्णाय कृष्णाय	३.६०.२८
न त्वत्र निर्दयं बाणा	२.७३.३४	न देवगन्धर्वगणा न राक्षसा	२.६८.३८	नन्दगोपमुखा गोपास्ते	२.१२.२०	न प्रमातुं महाबाहुः	२.१०२.३८	तमः खट्वांगधाराय	२.१२५.४८
न त्वमर्हसि मां हन्तुं	१.५.५२	न देवगन्धर्वगणा न राक्षसा	२.७०.८	नन्दगोपश्च दुर्मोधाः	२.३०.६७	न प्रयच्छति पुत्रं हि	१.२६.५४	नमः परमसिंहाय	३.७६.१४
न त्वया राम वध्योऽयमलं	२.३६.२६	न देवा नासुराश्चापि	२.६०.२४	नन्दगोपसुता चैव देवानां	२.३.११	न प्राणिनां भयं चापि	१.४१.१४४	नमः पिनाकहस्ताय	३.८७.२०
न त्वयाविदितं किञ्चित	२.३६.४६	न देवा तोद्गुमिच्छन्ति	२.७३.४०	नन्दगोपसुतो योगं कृत्वा	२.२२.२८	न बुभुक्षा पिपासा वा	२.६६.६७	नमः प्रवणदेहाय	३.६०.२३
न त्वया स्तुतवानराजन्	२.५५.४०	न देवासुरगन्धर्वा न	१.४१.४६	नन्दगोपस्तु तच्छ्रुत्वा	२.१२.१८	न ब्रूयाश्चोत्तरं विप्र	३.११३.२४	न मया श्रुतपूर्वो वा दृष्टपूर्वः	२.४६.५७
न त्वहं तस्य जाने	१.२०.६८	न देवासुरगन्धर्वा न यक्षो	२.४६.५५	नन्दगोपस्तु सहसा	२.७.३४	नभः क्षिति पवनमथ	३.६.२३	नमः शत्रुविनाशिन्यै	२.१०७.७
न त्वानन्त परित्यक्ष्ये	२.४१.२३	न देवा सुरगन्धर्वा न	३.४१.७२	नन्दगोपस्य भार्यका	२.४.१३	न भयं विद्यते लोके	२.११८.६	नमश्चन्द्राय देवाय	३.८७.२३
नदतो विविधान्नादान	३.५७.५५	न देवेभ्यो नागेभ्यो	२.८४.६७	नन्दगोपाय वै क्षिप्रं	२.१२.१७	न भयश्चराणां नभसि	३.५५.६४	नमश्चर्म निवासाय	१.१२५.४७
न ददर्श तदा राजन्	३.१२६.५	नद्यश्च प्रतिलोमा	३.४६.२१	नन्दनच्छन्दयुक्तेषु	२.८८.६५	नभसः प्रच्युतश्चैव	३.४५.२७	नमः श्मशानवासाय	२.१२५.४६
न दातुमिच्छेत्कन्यां	२.५१.२५	ननन्द च जगत्कृत्स्नं मुनयश्च	२.८५.६६	नन्दिकेश्वर याहि त्वं	२.१२६.८६	नभसः प्रच्युता	३.४५.२२	नमः षडङ्गनेत्राय	२.१२५.४३
नदी जलं प्रसन्नवर्जं	२.७८.३३	ननन्द सत्या कौरव्य	२.७५.६७	नन्दितूर्याण्यवाद्यन्त	२.३३.३१	नमस्यारुणसंस्तीर्णं	२.२६.३३	नमः सर्वात्मने तुम्यं	३.८७.३५
नदीजालैर्बहुतरैराचितं	२.८७.१८	ननाद बलवच्चापि	२.१२६.१६	नन्दितूर्याण्यवाद्यन्त स्तूयेतां	२.४५.५	नमस्युत्पतितं चैव	३.३२.३०	नमः सर्वात्मने देव	३.६०.५
नदीपर्वत कुञ्जेषु	१.२०.८४	ननु नाम स्त्रियास्साध्यः	२.३१.११	नन्दिवाक्यप्रजवितं	२.१२६.१४८	नभस्येष नभश्चक्षुः	२.१०.३१	नमः सहस्रवक्त्राय	३.६०.१८
नदीं सर्वगुणोपेतामुत्तरस्यां	३.३५.४७	ननु मूर्द्धाभिषिक्तस्त्वं	१.२०.१०६	नन्दी पिनाकपाणिश्च	३.३२.१३	न भान्ति नद्यतो न सरांश्चि	२.६५.१४	नमः सहस्रशीर्षाय	२.१२५.५५
नदीं स्रोतांसिरोत्स्यति	३.४.३७	न नूनं कार्तवीर्यस्य	१.३३.२०	नन्दी पिनाकमुद्यम्य	३.३२.५२	न भूर्न द्यौर्न गगनं	२.७५.१८	नमः सुररिपुधनाय	२.१२५.५३

नमस्करोमि सर्वात्मिनं	३.८८.६७	नमस्तेऽस्तु गमिष्यामि	२.१२६.१४०	नमो विश्वसृजे देव	३.१३१.१०	न रथोऽसुरमुख्यस्य ददृशे	२.८४.२५	न त्रभिर्दशभिश्चैव शरैः	३.६६.१४
नमस्कुर्वन्ति च पुद्गुर्गुहं	३.६६.२८	नमस्त्रिशूलहस्ताय	२.१२५.४६	नमो विष्णो नमो	३.६०.२७	नरनागाश्वकलिलं पत्तिघ्नज	२.५३.४०	न त्रमे द्वापरे त्रिष्णु	१.४१.१६१
नमस्कृत्य तदा द्रुमो	३.११७.६	नमस्त्वनेकरूपाय	२.१२५.५०	नमोऽश्वशिरसे तुभ्यं	२.६०.२०	नरनारीप्रमुदिता सा पुरी	१.५४.६२	न वनार्त्तिकचिदाहंतुं	२.८.३७
नमस्कृत्य मुनीन	३.१००.२	नमस्त्वन्धकनाशाय	२.१२५.५४	नमोऽस्तु ते कामचरे	२.१२०.४३	नरमेषाश्वमेधाभ्यां	३.१३५.१५	न वं न भक्षयेत्किञ्चिन्नारी	२.७६.५४
नमस्तस्मै खगेन्द्राय	२.५१.६३	नमस्यश्चैव पूज्यश्च	१.६.४८	नमोऽस्तु ते जगन्नाथे	२.१२०.४५	न रराम ततो ब्रह्मा	३.१४.२२	न वं सुसंस्कृत्यं भक्ष्यं	३.८३.६
नमस्तुभ्यं जगन्नाथ	३.६०.१५	नमुचिश्चामुरश्रेष्ठो	३.५३.८	नमोऽस्तु ते महादेवि	२.१२०.३४	नरस्य कृत्वार्धतनुं	१.४१.७६	न ववर्षाविसिक्तानि	२.१०.६
नमस्तुष्ट्याय तुण्डाय	३.८७.१६	न मेघानां प्रवृष्टानां न	२.१८.३५	नमोऽस्तु सौम्यरूपाय	२.१२५.५१	न राजघर्माभिरतो	१.५४.६८	न वस्य नवराष्ट्रं तु	१.३१.२८
नमस्ते कर्मिणां कर्म	२.१२५.५७	न मे मिथ्या समुद्योगं	२.१२६.११८	नमोऽस्तु हरिकेशाय	२.८७.२५	न राज्यं न च यानानि	३.७१.१०	न वाङ्भात्रेण दुष्यन्ति	१.५४.४२
नमस्ते देवदेवाय	३.८७.२१	न मे युद्धं विना देव	२.११६.३०	नमो हराय विप्राय	३.८७.१७	नराधिपसहस्राधैरनुयातो	२.३५.१५	न वापतन्वै खगमा	२.१८.१४
नमस्ते देवदेवेति	३.१०५.४	न मे विप्रवधः कार्यः	३.११८.२६	न यष्टव्यं न होतव्यमिति	१.५.६	नरास्त्वां चैव मां चैव	२.१६.५६	न विग्रहं ग्रहाश्चक्रुः	१.४२.३६
नमस्ते देवदेवेश	३.६०.६	न मे वृद्धवधः कश्चि	२.२२.७८	नयित्वा चाययौ वीरः	२.६०.२६	नरिष्यतः शकाः पुत्रा	१.१०.२८	न विना शंकरं विष्णुं	२.१२५.४२
नमस्ते भगवान् विष्णो	२.१२५.५६	नमोऽघण्टाय घण्टाय	३.८७.१८	न युक्तं जानता देव त्वया	१.५४.१५	नरिष्यश्च तथा प्रांशुर्न	१.१०.२	न विव्यथे स भूतात्मा	२.११६.१७७
नमस्ते भगवान्विष्णो	३.६०.१४	नमो नमो हरे कृष्ण	३.८२.४३	न युक्तं नृपते स्तोतुं	२.५५.३८	नरेन्द्राश्च महाभागा	२.५१.४८	न विशेषोऽस्य रुद्रस्य	२.७१.१७
नमस्ते मीढुषे अस्तु	३.८७.१४	नमो ब्रह्माविदे तुभ्यं	३.६०.१७	न युक्तं वसतान्योन्यं	२.५०.४५	नर्मदाकूलमेकाकी नगरीं	१.३६.१५	न विश्वसेदविश्वस्ते	१.२०.१२३
नमस्ते वायुरूपाय	३.६०.१३	नमो भगवते तस्मै	३.८०.५६	न युक्तमासनं दातुं त्वया	२.५०.२८	नर्मदायामथोत्पन्नः संभूत	१.१२.१०	न वै माता न च दण्डा	३.६.२२
नमस्ते विश्वरूपाय	३.६०.११	नमो भगवते तुभ्यं	३.६०.२	न युद्धे प्रमुखे शक्र स्थातु	२.७२.१०	नलकूबरस्तु प्रद्युम्नः	२.६३.२६	न वैश्च कुम्भैः स्नातव्यं	२.७८.३५
नमस्ते विष्णवे देव	३.६०.४	नमो भगवते देव	३.६०.३	नरकं निहतं ज्ञात्वा मुरं	२.६४.२६	नलिनैः पुण्डरीकैश्च	३.४१.६०	न वोग्रसेनस्य सुतास्तेषां	१.३७.३०
नमस्ते शक्तियुक्ताय	३.८७.३०	नमो मयूरपिच्छाय नमः	२.१२५.४५	नरकश्च हतो भौमः	२.१०१.६८	नली द्वावेव विख्यातो	१.१५.३५	न व्रजन्ति विमानानि	२.८६.२७
नमस्ते शितिकण्ठाय	३.८७.१३	नमो यज्ञाय इज्याय	३.६०.२२	नरकाद्युषितः पन्था	२.२२.६६	नवनीतं च दधि च	३.१३०.२	न शक्नुस्ते समुद्धतुं	३.३०.१७
नमस्ते सर्वलोकेश	३.६०.२६	नमो विरूपरूपाय	३.८७.१६	नरकैश्चास्थिमज्जान्त्रैश्चाति	२.४३.४७	नवप्रावृषि कान्तानां	२.१०.८	न शक्यं यत्त्वया वक्तुं	३.११६.८

न शक्यमन्यथा कर्तुं	१.६.३१	न स्थातुं देवताः	३.५६.६	नहिसाधोर्विनाशोऽस्ति	३.१०६.२०	नागाः कनकसंभूतै	२.२७.१८	नादृश्यन्तः शरैश्छन्ता	२.१२४.४१
न शक्यमुपहोमा वै	१.२६.१७	न स्म कम्पयते रामं	२.३६.२१	नहुषः प्रथमं जज्ञे	१.२८.२	नागान्दिशागजसुतान्दिव्या	२.८६.२३	नाधिको विद्यते	३.७१.३८
न शक्यो विस्तरस्तात	१.७.३	न स्म कम्पयते रामं	२.४३.७०	नहुषं चार्हति चैव	३.१४.५६	नागा यक्षाश्च सिद्धाश्च	२.६६.३	नाव्यगच्छत तां नारीं	१.३७.६
न शर्म लेभिरे दैत्या	२.११६.१०६	न स्वर्गोऽप्यथ पाताले	३.४१.१५	नहुषः शखरोमा च	१.३.११५	नागायुतवलप्राणो भीमो	२.६२.७	नाव्यगच्छन्त च तदा	२.६.३०
न शस्त्रेण न चास्त्रेण	१.४१.५१	न स्वादु सोऽश्नाति	३.५.२३	न ह्यन्तीरक्षं न	३.५३.३१	नागायुतबलाः केचिद	१.५३.७२	नानधीताय वक्तव्यं	३.७३.१३
न शस्त्रेण न चारत्रेण	३.४१.१४	नहि पूर्वविसर्गो वै विषमे	१.६.१४	न ह्यल्पं विहितं द्रव्यं	३.२३.१२	नागाश्चरन्तो विषदिग्धि	२.६५.१८	नानदंभानं विविधैस्तूयै	२.८४.१५
न शेकुः प्रमुखे स्थातुं	२.८४.४०	न हतो वासुदेवेन यः पूर्वं	२.६१.५३	न ह्यल्पवीर्याय शुको	१.२०.८	नागाश्चोर्ध्वमुखास्तत्र	२.१२४.३०	नानाकवचिनः सर्वे	३.५२.८
न शेकुः सर्वभूतानि	२.५७.२१	न हन्तव्या मृगाश्चात्र	३.८०.१५	न ह्यल्पसाध्यो बलवान्	३.७४.१८	रार्गविचेष्टितं दृष्ट्वा	२.११६.२००	नानाछन्दोगति पथो गुह्यो	१.४१.३५
नष्टचन्द्रार्कं पवने	३.१०.२१	न हन्तव्याः सदा	३.८३.१२	न ह्यस्ति त्रिषुलोकेषु	२.११८.७३	नागैश्च श्रूयते दुग्धां	१.६.२६	नानादिदेशजाकीर्णा	२.५५.१०८
नष्टसूर्येन्दुसदृशैर्मर्धनं	२.१८.१५	नहि कश्चित्पुमानस्ति	३.२८.३०	न ह्यस्य कारणं	३.१७.५८	नागो बलाहकश्चैव	३.२८.६१	नानाद्रुमलतायुक्तं चित्रं	२.३६.५८
नष्टानलानिले लोके	३.७.७	न हि तद्वचनं मिथ्या	२.११८.३१	न ह्येषु समुदाचारो	३.१०.३८	नाग्निविक्रमते ह्यग्नी	२.१२७.७५	नानाद्विजगणस्तुष्टान्	२.२८.७३
नष्टार्ककिरणे लोके	३.३३.२४	नहि तस्य कुलं देवि	२.११८.३६	नाकपृष्ठमुपागम्य	२.११६.२८	नाचिन्तयत्तदा पूषा	३.५५.१०२	नातापुष्पकृतापीडा	२.१२४.२४
नष्टाविमाविति तदा	३.११०.४	नहि ते तृप्तिरस्तीह	३.१०३.२	नाकाले मियते कश्चित्	२.४६.३४	नाज्ञासिषमहं पूर्वमनित्यं	२.६६.४८	नानाप्रहरणा घोरा नाना	१.४१.६२
नष्टे शक्रे ततः स्वर्गा	३.८३.२५	नहि देव्या वचो मिथ्या	२.११७.२४	नाक्षुम्यत्सर्वभूतात्मा	२.११६.१०२	नाडिकान्तरमात्रेण पुन	२.७३.१०५	नानाप्रहरणा घोरा नाना	२.८६.५३
नष्टेषु शबलाश्चवेषु	१.३.२५	नहि धुन्धुर्महातेजा	१.११.४०	नागपाशेन बद्धस्य	२.१२०.३६	नाडिकान्तरमात्रेण पुन	२.७३.१०५	नानाप्रहरणाः सर्वे	३.४६.३८
न संरम्भान्न चारम्भान्न	३.२.२७	नहि मे तृप्तिरस्तीह	२.१११.२	नागबन्धनदुःखार्तं	२.७२.५८	नाड्वलेया महाराज	१.७.३३	नाना प्रहरणापेतं	२.१२६.४४
न सस्यानि न गोरक्षा	१.६.१५	नहि राज्येन मे कार्यं	२.३२.४८	नागं कुवलयापीडं चाणूरं	२.४८.२८	नातिदीर्घेण कालेन	१.५२.६	नानाभरणवेषाश्च नाना	२.१०६.५३
न सा बुबोधतत्त्वेन	२.६.६	नहि विरमति विप्रपूजनान	३.६.३	नागं कुवलयापीडं चाणूरं	१.४१.१५८	नातिशिष्ये रणे कार्पण्यैर्न्द्रि	२.७३.४३	नानामणितम्भसहस्र	३.५३.३५
न सेहिरेऽसुरा बाणान्ना	२.८४.३६	नहि शक्यो बलान्द्धे तु	३.२३.३४	नागं कुवलयापीड मल्ली	१.५५.५	नातृप्यत्प्रेक्षमाणो वै कृष्णं	२.७.३५	नानायुद्धविहस्तानां	२.५४.२८
न स्तब्धो न कृशो नार्तः	२.४६.२०	न हि श्वो वा परश्वो	३.११६.१६	नागराऽधिकर्णश्च	२.१०६.२०	नात्र शंका त्वया कार्या	३.११५.१५	नानायुधधरं घोर	३.४६.४४

श्रीहरिवंशपुराणम् १: श्लोकानुक्रमणी

८५

नानायुधोद्योतविदीपितांगा	३.५३.२	नाभिषिक्तस्स्वयं राज्ये न	२.५५.६३	नारदस्तुम्बुरुश्चैव	२.१०४.५१	नाराचेनाशु विव्याध	३.१२४.३	नारायणाद्विभेतव्यं कुर्वन्नि	२.८२.२२
नानारत्नविचित्रेषु काञ्चना	२.२८.७२	नाभेरभूदन्तरिक्षं तव	३.८८.४१	नारदस्त्वाशिषं दत्त्वा	२.११६.४	नाराचैः पञ्चसाहस्रं विव्याध	३.१२५.४	नारायणेन कौरव्य	१.११.४६
नानारत्नसमाकीर्णं	३.३५.२३	नाभेश्च यस्याविर	३.८०.४६	नारदस्य वचः श्रुत्वा	१.५५.१	नारायणपरं ज्ञानं	३.३३.३८	नारायणमं सिद्धार्थमुपायं	१.५५.१८
नानारत्नसहस्राणां	३.३५.६	नाभ्यारण्यां समुत्पन्न	१.४०.२१	नारदस्य च वाक्यानि	३.१३४.२४	नारायणपरा देवा	३.३३.३६	नारायणो महातेजाः	२.७१.१८
नानारूपं वपुः कृत्वा	२.११७.१३	नामगोत्रे ततः श्रुत्वा	३.१०.४६	नारदस्य वचः श्रुत्वा	२.१२७.२५	नारायणपरो धर्मो नारायण	१.४०.४२	नावयोः परमं लोके	३.१३.१४
नाऽनार्थसंकथासक्ता	१.१६.१४	नाम चास्याश्शुभं चक्रे	२.३८.१८	नारदाद्यंस्तपोवृद्धे	४.७३.२	नारायणपरो मोक्षो	१.४०.४३	नावेदविद्वान्नागच्छेनापि	३.२४.१०
नानावर्णान्कामगमान	३.३७.२७	नाम दामोदरेत्येवं गोप	२.२०.२२	नारदे तु गते स्वर्गं	२.११०.८७	नारायणपरो मोक्षो	३.३३.३७	नाव्याधितो नाप्यरुजो	३.३.४३
नानाविधाकार	३.५२.४६	नामनी तु तयोश्चक्रे	१.५२.२५	नारदेदं वद त्वं	३.६२.७	नारायणं चार्जुनं च भीमं	२.८५.२६	नाशंसन्त तदा योधा	३.५६.६५
नानाविधानि तूर्याणि	२.७५.५८	नामाङ्कुरकं सदृशैर्दिव्य	३.५५.१०८	नारदेनैवमुक्तं तु तथ्यं	२.६५.४४	नारायणं नमस्कृत्य नरं	१.१.१	नाशकञ्च यदा कंसो	२.१०१.५१
नानाविद्याः सुवीराश्च	२.८६.८	नामानि तव गोविन्द	३.८८.६१	नारदेनैवमुक्तस्तु सुव्यक्तं	२.७०.१२	नारायणं नमस्कृत्य	३.१३२.२३	नाशकन्मारुतो वातुं वृतं	१.२.३६
नानावेषधरा दैत्या	३.७२.२६	नामृष्यत यथा मत्तो	३.५५.५७	नारदेनैवमुक्तस्तु महेन्द्रो	२.७१.४५	नारायणं नमस्कृत्य	३.७.११	नाशयिष्यामि तत्सर्वं	३.१००.३०
नानाशास्त्रोद्यतकरा	२.११६.८५	नाम्ना जनादंनोऽस्मीति	३.११५.६	नारदोऽथ महातेजा महेन्द्र	२.६६.२०	नारायणशोभाने या	२.७४.१३	नाशुचेः क्षुद्रमनसः कुशिष्या	१.४.३२
नानास्थानगतः श्रीमानेकः	३.६६.४१	नाम्ना तच्छ्रोणितपुरं	२.११६.१६	नारदोऽथ महातेजा भानु	२.६६.१	नारायणश्च पुत्रेण	२.८६.४६	नाश्रूयन्ताशुभा वाचो	१.४१.१४२
नानाहतोऽश्मभिः	१.४६.२८	नाम्ना द्वारवती ज्ञेया त्रिषु	२.५५.११२	नारदोऽथ मुनिर्गत्वा	२.११६.१३२	नारायणश्चैवसनारदश्च	२.८६.४६	नासन्नमीभगन्तव्यं गरुड	२.७३.८१
नान्तं ददर्श कृष्णश्च	२.६०.५६	नायं देवैर्न गन्धर्वैर्न	२.१२१.५६	नारदो नृत्यति प्रीतो	३.४१.४५	नारायणः सत्यभामां	२.६७.१	नासस्या नासृणा भूमिर्न	२.१५.११
नान्तः शक्यः प्रभावस्य	२.१११.३	नायं वध कृतं दोषमर्हते	२.११६.१८३	नारसिंहेन वपुषा पारिण	३.४१.४२	नारायणस्तु भगवाञ्छुत्व	३.६८.१	नासामिच्छेललाटान्ता	२.८०.१६
नान्दि च वादयामास	२.६३.२६	नारदः पर्वतश्चैव	२.१०६.८५	नारसिंहमनाधृष्यं	३.४७.३६	नारायणाग्निस्तान्सर्वान	२.८४.३७	नासिकाग्रं समालोक्य	३.८०.८६
नान्द्यन्ते च तदा	२.६३.२७	नारदप्रमुखाश्चैव	३.२५.२	नारा आपः समाख्याता	३.८५.१५	नारायणाज्ञया वृक्षाः	२.८८.७२	नास्ति किञ्चिदवेद्यं	३.११५.२०
नान्यो जगति देवोऽस्ति	३.८६.६	नारदश्च महाभागः	२.१२७.१०४					नास्ति किञ्चिद्भयं विष्णो	१.५१.२
नापुत्रवान्नाशतदो	१.३७.२२							नास्तिक्यपरमाश्चापि	३.४.६
नाभागादिष्टपुत्रो	१.११.६								

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

८६

नास्ति भ्रातृसमो बन्धु	२.७०.२७	निकुम्भोऽपि हते वीरे	२.६७.२१	नित्यं प्रक्रीडते तत्र सोमः	२.८६.५४	निपेतुर्गुणवीर्यस्य	३.५८.६०	नियुद्धकुशलान्मल्लन्देवो	२.८५.७२
नास्ति योगं विना सिद्धि	१.४५.३६	निकुम्भोऽप्यतिमायावी	२.६०.५०	नित्यं भक्तासि मे	३.७३.२८	निपेतुर्गुण्यामाकाशे	३.५६.३५	नियोगपाशैरासक्तैर्गङ्गरी	२.६.२५
नास्तीति कृष्णश्चोवाच	१.३६.२१	निकृत्याचल संकाशौ	३.५४.७७	नित्यं सांनिध्यता चैव	२.११६.१०	निपेतुर्धारणीपृष्ठे	३.६८.२३	नियोगपाशैरासक्तैस्स्कन्धा	२.१४.४
नास्मि धन्या न चाश्चर्यं	२.११०.५४	निकृत्या विजिगीषवः	२.६१.२६	नित्तमेवास्तु मे प्रीतो	२.७६.१६	निपेतुर्बाह्विच्छिन्ना	२.८४.४४	निरस्तहपुराविष्टश्शोणिता	२.२४.३६
नास्य पापस्य दोषेण	२.४४.३५	निक्षिप्तकादायुद्धस्य	२.१२६.१००	नित्युक्तं विरूपाक्षं	३.१०७.१५	निपेतुः सर्वतो दिग्भयो	२.१४३.४६	निरानन्दं निरास्वादं	२.८.१५
नास्यान्तमधिगच्छन्ति	३.३३.४२	निक्षिप्याग्रिमरण्ये तु	१.२६.४३	नित्ययुक्ता महात्मानो	३.६४.७	निबध्य भ्रुकुटि वामां	२.६६.२३	निराहाराः क्षमावन्तः	२.१२६.१५३
नाहं त्वां कितवं धूर्तं	२.६७.२५	निगीर्य विश्वं जगदादिकाले	३.८०.४५	नित्योत्सवकरी देवे	३.१०५.२०	निर्वाहिते देवरिपौ	२.६७.२२	निरुपाता च वसुधा	१.५१.१४
नाहं भीषयितुं शक्यो	२.१.२३	निगीर्य विश्वं सकलं	३.८०.४३	निदर्शनार्थं गोपानां दिव्यं	२.७.१६	निबूदयामास बली	३.५८.२७	निर्द्व्यन्त इवाकाशे	३.१८.१०
नाहं वेष्टमि वत्स्यामि	१.२६.६४	निगृहीतः कन्धरायां	१.२०.६८	निदर्शनार्थं गोविन्दो	२.५७.३४	निमज्जत्यप्सु यत्रोर्वी	१.८.२२	निरोद्धारवष्टकारं	२.८६.२८
निर्ऋतिश्चैव सर्पश्च	३.१४.४०	निगृहीतश्च केरोषु गता	२.३०.७६	निद्रायमाणो भगवत्	२.६५.१६	निर्मन्त्रिता गणाः सव	२.७६.२२	निर्गन्ताः साम्प्रतं मर्त्यं	३.८०.३६
निकायेषु निकायेषु हरिः	१.३.१३८	निगृहीतस्तदाहं तैः	१.२०.५७	निघनेऽत्र प्रसूतस्त्वं	१.५.१०	निमन्त्रितोऽहं पूर्वेषुः	२.६७.५४	निर्गमिष्यन्ति तेनैव	२.७४.४६
निकुम्भं तत्त्वतश्चापि ददशं	२.६०.६१	निगृहीतेन्द्रियो भूत्वा	३.२८.२८	निधाय मनसा वैरं प्रियं	१.२०.१३४	निमित्तं भविता तत्र	३.२.३४	निर्गम्य त्वायुधागाराज	२.२७.५०
निकुम्भमपि गोविन्दः	२.८५.५३	निगृह्य तं महात्मानो	१.५.१६	निपत्योत्पत्य सहसा	२.१०५.५३	निमीलिताक्षौ व्यसृजद्वाणं	२.१२६.१२५	निर्घातावनती भूत्वा	२.३०.५०
निकुम्भस्तानथोवाच ऋषिते	२.८५.३	निग्रहे दुष्टवृत्तीनां कृतान्तः	२.३२.१२	निपपात पुनर्भूमौ	३.५८.४६	निमेषान्तरमात्रेण गत्वा	२.८३.२१	निघाताः शतशश्चान्ये	२.७५.१३
निकुम्भस्य हतं देहं	२.८८.२	निघ्नन्ता वै सगोपाला	२.२४.८	निपपात महावेगः	३.५८.४२	निमेषान्तरमात्रेण नन्दनं	२.७३.७	निर्जगाम ततो बाणो	२.१२४.५०
निकुम्भाद्याः समागम्य	२.८३.१०	निजघान हयाञ्छ्रेष्ठा	३.६०.२३	निपयात रथोपस्थात	२.१०५.४८	निमेषैः पञ्चदशभि काष्ठा	१.८.३	निर्जितः पावकश्चैव	२.११५.१३
निकुम्भाद्यास्तु ऋषिताः	२.८३.१७	निजघानासुरान्युद्धे	२.४८.२४	निपाते पृथिवीशानां	२.४३.५१	नियतं दोष एवायं	२.११६.८०	निर्जिते तु गते सर्पे	२.१२.४४
निकुम्भे निहते तस्मिन्देवो	२.८५.६४	निजघासो घसश्चैव	२.१०६.७७	निपुणोऽयं सदा धीर	३.११७.११	नियता गतिर्मर्त्यानामेष	२.५२.२०	निर्जगामासुरः कंसः	२.१.४
निकुम्भे पतिते भूमौ	२.६०.६५	निजघ्नुः सहसा रामं	३.६८.२१	निपेतुरसुराणां तु शिरांसि	२.८४.४३	नियुक्तः पुत्ररूपेण	३.८८.१३	निर्जगामासुरः दृशो	१.४७.४८
निकुम्भोऽथवाद्ब्रह्मिष्ठः	२.८३.४६	नित्यपुष्पफलोयेनैश्छा	३.३५.१५	निपेतुर्गुणवीर्यस्य	३.५८.८०	नियुक्ताः पर्वते दुर्गे	२.४२.४५	निर्बिभेद ततो बाणं	२.११६.१६३

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

८७

निर्भयाः समपद्यन्त	३.१००.१०	निवृत्तमस्मिन्काले यज्ज	२.२७.५२	निवृत्ता सा कथा हंसा	३.११८.१७	निशि बालान्हरद्भिश्च	२.८.३६	निष्पपातानिलगतिः	२.२७.६१
निर्भत्स्यैनमिमं शान्तं	३.७६.२७	निवृत्तशत्रौ विक्रान्ते	२.५६.४६	निवृत्ता सा तु तच्छ्रुत्वा	१.१०.१६	निशिस्तिमितमूकायां	३.६७.१८	निष्पूयत्ने सुरपती	३.३६.१
निर्भत्स्यमानोयैदृष्ट	२.२६.२२	निवृत्ते सप्तरात्रे तु	२.१८.६४	निवृत्ते नारदपश्ये	२.१२८.२५	निशुम्भशुम्भमथनी	२.१२०.२०	निष्पेतु रुद्रदयिता	३.५८.७८
निर्भत्स्यं सहसा भूयः	३.१००.२३	निर्वदादात्मसंबोधः	३.४.५	निवृत्ते भारते युद्धे	२.११५.१६	निशेव रूपिणी काली	१.४२.१६	निष्प्रयत्नेषु क्षेत्रेषु	३.६५.१
निर्भिन्नशिरसो	३.६०.४४	निर्वेष्टव्यं शरीरं यैर्व्रतकैः	२.८०.१	निवृत्ते मौशले युद्धे	२.६७.४१	निश्चक्रमुर्वलाभ्यां तु ताम्बा	१.४७.२२	निष्प्रयत्नेषु दैत्येषु	१.४६.३६
निर्मज्जा नीरसाः	३.७७.३	निर्वैरो निवृत्तिः शान्तो	१.२१.२१	निवृत्तेष्वथ सैन्येषु	३.६५.१	निश्चलेनैव मनसा	३.८०.८४	निः संज्ञं पातयामास	२.१२६.८२
निर्मथ्यारणिमाग्नियी	३.२३.११	निर्वैरो नैष संयाति	२.४३.८३	निवोदयामास ततो नरा	२.५७.७०	निश्चेष्टं वृष्णसैष्यं	३.१२६.१५	निः संपातः कृतः पन्था	२.२४.१४
निर्मथ्यारणिमानेयी	३.२३.२३	निलिल्ये तत्र शाल्ये	२.६३.५०	निवोदिताश्च सम्भ्रान्तं	२.६६.२४	निःश्वसन् जूम्भमाणश्च	२.१२२.७३	निः सारे क्षुभिते लोके	३.४.२४
निर्मनुष्ये द्वीपिवृते	३.८०.५	निलिल्ये शकटस्याक्षे	२.६.२५	निवेदिते सुरश्रेष्ठ	२.५०.७१	निषधस्य नलः पुत्रो	१.१५.२८	निसुन्दं पतितं दृष्ट्वा	२.६३.७२
निर्ममा निरहंकाराः	३.१०७.१३	निवर्तध्वं महावीर्याः	३.६०.५६	निवेशं कारयामासुर्यादवाः	३.१२०.१७	निषादास्तस्य राजेन्द्र	३.६८.१६	निसुन्दो बलिनां श्रेष्ठा	२.६३.५६
निर्ममो निरहंकारो	३.१०५.८	निवार्यमाणा ऋषिभिस्तपसा	३.२५.६	निवेश्य तं करैश्चैलं	२.१८.५३	निषदेशं ततो रामः	३.१०२.१	निस्पृहाश्च सदा	३.१११.२५
निर्माणं द्वारवत्यास्तु	३.१३४.२१	निवार्यमाणा युद्ध्यन्ते	३.२५.१०	निशठं पंचविशत्या	३.६४.२६	निष्कण्टकमिमं लोकं	३.७४.१४	निःस्पृहो निमर्मः क्षान्तो	१.२१.३१
निर्मितां स्वेन पुत्रेण	१.४६.२४	निवासनो वनस्तम्ब	२.१०३.१६	निशठं निपतितं	१.५२.१३	निष्कम्पसक्थिचरणा	२.१८.२२	निः स्वन्नं सर्वभूतानि	३.२८.६३
निर्यातयैतन्नैलोक्यं स्फीतं	१.४८.६५	निवार्य सात्यकिं कृष्णो	३.१००.२५	निशम्य तं निपतितं	२.३५.३२	निष्कल्मषा भविष्या	३.१३१.६	निः स्वाध्यायवषट्कार	१.५.५
निर्वाणाङ्गारमेघाभस्तीक्ष्ण	२.२१.२	निवासोऽसुरमुख्यानां	२.८२.२	निशम्य तं निपतितं	२.४४.३०	निष्काणां च सहस्राणि	२.६१.२८	निः स्वाध्यायवषट्कारा	३.४.१७
निर्विकारैः समायुक्ताः	३.२६.१०	निविष्टो यादवो दृष्ट्वा	२.४०.३१	निशम्य तेषां वचनं	३.४६.१	निष्क्रमित्वा प्रजाकारः	१.८.३६	निस्सृताः पृथुमूर्धनिः	२.१८.४१
निर्विघ्ना प्रार्थना	३.८०.६५	निवृत्तं सुमहद्युद्धं	२.१२१.८१	निशम्य ब्राह्मणाधस्तु	२.१२७.४६	निष्क्रमेण मया मुक्तः	२.६७.६८	निस्सृते साश्वरुधिरे	२.३०.४५
निर्विभेद महावीर्यो	३.५६.२०	निवृत्तशत्रुं कालिङ्गं	२.५६.७	निशाचराः पावकधूम	३.५२.२८	निष्क्रम्य तमसस्तस्माद	२.११३.३४	निहतां हस्तिमायां तु	२.१०६.२२
निर्विहारस्य भूतस्य	३.३.२३	निवृत्तावश्वमेधस्य	३.२.३३	निशायामथ चागम्य	१.२६.२३	निष्क्रान्तस्तस्य वदनाद	३.१०.१७	निहता बालभावेन प्रलम्बा	२.४८.२७
निर्विहङ्गरुतैर्वृक्षैर्निमंथुर	२.१८.४८	निवृत्तावश्वमेधस्य	३.२.३६	निशासु सुप्तचन्द्रासु	२.१०.३६	निष्पतन्ति स्म बहवो	२.८.३२	निहता वायुवेगेन	३.५५.७१

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

८८

निहताश्च नृपाः सर्वे	२.११५.२३	नीलपीताम्बरधरा	२.४.३६	नूनमात्मेच्छया कृष्णस्तथा	२.६०.४८	नृसिंह एष कथितो	१.४१.७६	नैकधा तं प्रचिच्छेद	२.६३.८४
निहते दैत्यसंघाते	३.३१.१	नीलपीताम्बराधरी	२.८.२	नृगायास्तु नृगः पुत्रः	१.३१.२६	नृसिंह एष कथितो	३.४८.१	नैतन्नगरमायासीः	३.६६.१०
निहत्य गदया मर्वास्ता	३.५८.२४	नीलपीताम्बरधौ पीत	२.२७.५३	नृणामिन्द्रियपूर्वेण योगेन	१.४०.३७	नृहस्तनागहस्तःभ्यां	२.१८.१२	नैतया कश्चिदाविष्टो	१.५०.२६
निहत्य तं महाकायं	१.११.२५	नीलपीतारुणस्तासां वस्त्रं	२.६.१६	नृत्यन्तः प्रहसन्तश्च	३.८६.५	नेच्छाम्यनशितं द्रष्टुं	२.५८.६३	नैतस्य प्रमुखे स्यातुं	२.२४.५८
निहत्य तान्माहाबाहुर्जरा	२.५६.७५	नीलपीतासितश्यामः	३.४१.४६	नृत्यन्ति नृत्यकुशला	३.८६.१४	नेजुर्यज्ञं स्त्रयो वर्णास्ते	२.८६.२५	नैधनस्य विधानेन	२.४४.६३
निहत्य नरकं भीमं वास	६.६४.१	नीलमेघनिभ्रं कान्तं	३.८१.१३	नृत्यन्ति स्म तदा	३.६६.३	नेता च यदुवृष्णीनां	३.७४.५	नैतवैद्रष्टुमिच्छामि	२.१०४.४२
निहत्य नरकं भीममाहत्य	२.१०२.२६	नीलमेघप्रतीकाशं	३.३४.३१	नृत्यन्त्यप्सरसश्चैव	२.१२७.३१	ने तु युङ्क्त्वा रथवरं	२.२७.१	नैमिषारण्ये कुलपतिः	१.१.४
निहत्य रुक्मकवचः शतं	१.३६.१०	नीलमेघान्तरगता	२.२८.८२	नृत्यव्यापारकालश्च	२.१०.७	नेत्रं समुद्धरन् भीमं	३.१६.३६	नराश्येन कृतो यत्न	२.४.५१
निहतेद्गोपवेपेण क्रीडमानो	२.४८.२६	नीललोहितपीताभिः	१.४४.४६	नृत्यावसाने भगवानुपेन्द्र	२.८६.५४	नेत्रयोराकुलत्वं च	२.१२२.८१	नैवं गच्छेत् दुःस्थान	३.२४.११
नीडस्थेषु विहङ्गेषु	२.२५.२	नीलांशुमेघप्रतिभानि	३.५२.४२	नृपः कुशाग्रैः पुनरेव	२.६५.३३	नेत्रवक्रप्रसादश्च कर्तव्य	२.६१.४७	नैव च प्रायशः स्थातुं	३.१११.६८
निडात्तमाकृष्य तदा पूजनी	१.२०.६७	नीलांजनचयप्रख्यं	२.१२२.५१	नृपं जयाद्बहुरथ इत्येते	१.२०.४७	नेत्राणि बहुधा तस्य	३.२८.२४	नैव चेच्छोषयति प्रोक्तं	२.७१.४४
निपस्यैकशतं तात पुत्रा	१.२०.२३	नीलाम्बरधरः	३.४६.३४	नृपतेस्तेहसंयुक्ता	२.२८.२६	नेत्रे ते देवदेवस्य	३.११४.६	नैव त्वां मदनो जह्या	२.६६.४३
नीपाजुनकदम्बानां	२.१०.३३	नीलाम्बुदाभे वसने	२.८६.२	नृपः प्रयातो बलवान्	२.३५.२०	नेत्रोत्थितमहावह्नि	३.१११.१७	नैव युद्धं महाघोर मासीद	३.६७.२३
नियमाने तु तत्रासीद	२.६८.६५	नीलाश्मचयसंघातैर्बहुवर्णं	२.४०.६	नृपाणां भेदमालोक्य भीष्म	२.४६.६५	नेत्रोत्सवः कान्तसमागतानां	२.६५.२८	नैव राज्ञः कुबेरस्य न	२.६४.८
नीराजयित्वा सैन्यानि	२.१६.३३	नीले वसाने वसने	२.४६.२७	नृपासनपरिक्षिप्तं संचार	२.२८.६	नेदुरत्यर्थमतुलं धमन्ति	३.१२०.१५	नैव वाताः प्रवायन्ति	१.१२६.६२
नीलकण्ठः परां प्रीति	२.११६.१५	नूनं कान्ततरा कान्त	२.३१.२१	नृपण तेन गोविन्द	२.३६.५२	नेदृशाः सन्ति देवानः	३.६६.७१	नैव शक्यस्त्वया जेतुं	२.६६.६
नीलकौशेयसंवीता पीतेनो	२.२.४२	नूनं जन्मान्तरे पूर्वं	३.८२.४०	नृपेण सह तिष्ठन्ति	२.५५.५२	नेमस्तुं मुनयः सर्वे	३.६०.३४	नैशाकरीं वारुणी च	१.४६.२६
नीलगर्भसुकेशान्ता	३.२८.५८	नूतं त्रिदशभूयिष्ठं मेघ	२.१६.३८	नृपेष्वथ प्रणष्टेभु तदा	१.४१.१६७	नेषुर्व्यं सुदुरात्मानस्ता	२.८२.१६	नैव शून्या न च शून्या	३.४.३३
नीलचित्रांगवर्णश्च	२.११.२०	नूनं त्रिभिः क्रमैर्जित्वा	२.२५.३२	नृशंसोऽयं पिशाचोऽयं	३.८०.६७	नेष्यामि मथुरेशस्य सभां	२.५५.७६	नैवोपवासकृतश्चिन्न	३.८.१६
नीलपीताम्बरधरं	३.३८.१६	नूनं योगविहीनोऽहंकार	२.५२.३७	नृशब्दानुसरः क्रुद्धः	२.२४.१५	नैऋतो नरको नाम	२.६३.३४	नैव कल्पे विधिर्दृष्ट	१.१६.२१

नैष संकल्पितः कामो	१.२७.३१	न्यायाद्धर्मो गुह्य न	३.१७.३२	पञ्चपञ्चशैरस्तेषु एकं	२.६३.६४	पञ्चेन्द्रियस्य ग्रामस्य	३.१८.५	पतितो देवकीगर्भस्य	२.२.३३
नैषामविदितं किञ्चित्	१.५१.११	प		पञ्च पुत्रशतान्यस्य	१.२८.२३	पटुना मेघनादेन नवतोया	२.१६.१६	पतिना सानिरुद्धेन	२.११६.७६
नोद्वेजनीया भूतानां	१.५१.८	पक्षप्रहारनिहता नख	२.१२२.६४	पञ्चभिः पञ्चभिश्चैव	२.३५.८६	पट्टिशासिगदागूल	२.११६.१३४	पतिं प्राप्ताः सुदैतेयं	३.६५.१८
नोपभोगरता नित्यं	१.१६.१३	पक्षवन्तः सशिखरा	३.२७.६	पञ्चभिश्चापि विव्याध	२.५६.६६	पट्टिशैभिर्दिपालैश्च परिघै	१.४७.१०	पतिं संकल्पयित्वा सा	२.८१.६
नोपलभ्यति मूढानां	३.१७.३६	पक्षवातेन पृथिवीं चालयन्तं	२.४७.३२	पञ्चमः पाञ्चिकस्तत्र	१.२१.३७	पठन्तो देववाक्यानि	३.८६.११	पतिमभिलभतै च	३.६.२
नोपालभ्यन्त चक्षुर्मयिपि	३.१३३.४३	पक्षवातोद्धतो रेणुश्चूर्णोः	३.२७.४	पञ्चमः पाञ्चिकस्तत्र	१.२३.२७	पठन्सम्यगिमां सृष्टि	१.१५.३७	पतिलोकं च गच्छेयं	२.८१.३४
नोपासिता मवद्भ्यां	३.१०८.१५	पक्षसंघावमा वास्यां	३.२६.३८	पञ्चमः पाञ्चिकस्तत्र	३.६७.२६	परावाद्यं श्रुतिमुखं	२.८.३	पतिलोभेन यं गङ्गा	१.२७.५
नोवाच स तदा कृष्णः	२.६१.५२	पक्षाणां च क्षपाणां	१.४.१६	पञ्चमः सात्यकि पौण्ड्रः	२.१२.३८	पण्डितासि वदोपायं	२.६२.३८	पतिलोभेन यं गङ्गा	१.३२.४४
नोभिर्गृहप्रकाराभि	२.८८.५७	पक्षानिलहतो वायुः	२.६३.४४	पञ्चमूर्द्धानतं दृष्ट्वा	३.१०४.२	पतगैः पर्वतैश्चापि	१.५३.७	पतिव्रता च ज्येष्ठा	१.१२.८
न्यग्रोधं पर्वताग्रामं	२.११.२३	पक्षाभ्यां चारुपत्रा	१.४४.४५	पञ्चयज्ञपरो नित्यं	३.१०८.६	पतता मेघवर्षेण यथा	२.१०.१६	पतिश्च मे स्तात्सुमुखो	२.७६.११३
न्यकुभिश्च वराहैश्च	२.६४.४१	पक्षाभ्यां त्वां परिष्वज्य	१.२०.१०६	पञ्चयज्ञानि स मुत्थानि	२.५०.६६	पततां पात्यमानानां	३.५५.१०७	पतीन्सुप्तान्वञ्चयित्वा	३.३.४२
न्यपतन्त विदेहास्ते	३.१३३.३६	पक्षाणां चैव सर्वेषां	३.३७.१६	पञ्चवर्णं सुवर्णंश्च	२.६८.३५	पतस्तमपि तं शक्रो न	२.७३.६२	पतयश्चापरे दैत्या	१.४३.२५
न्ययतन्दैत्यसंघाता	३.१३३.४०	पक्षिस्वतैः सुमधुरैर्नदन्त	२.८७.६	पञ्चवर्णं जगन्नाथ	३.१०४.१५	पताका यानपात्राणां सर्वाः	२.८८.७१	पतिनो भुवि चैकस्य गोप	२.४३.२५
न्यमज्जयत समरे	३.५७.१८	पक्षो दशगुणो मासो मासै	१.८.११	पञ्च सिद्धिगुणां	३.१८.३	पतितं शत्रूहन्तारं	२.१०५.७१	पत्नी तु यादवी तस्य	१.१४.६
न्यवारयद्यथाशक्ति	३.१०६.१०	पङ्कजानि च ताम्राणि	२.१६.२३	पञ्चस्तवकलम्बेन	२.१४.२६	पतितं सौममालोक्य	१.२५.१०	पत्नी सा विश्वमहत्तः	१.१८.६१
न्यस्तदण्डं तपोयुक्तं	३.६६.६	पञ्चयते हृदयं नीलं	१.१६.४३	पञ्चस्तवकलम्बेन	२.१६.११	पतितानि स्म दृश्यन्ते	३.५५.१६५	पत्येषा मम पुत्रस्य	२.१०८.२८
न्यस्तशस्त्रावुभौ वीरौ	२.५५.८८	पञ्चक्रोशप्रमाणेन	२.१८.५७	पञ्चाचूडां ततः कृष्ण	२.८८.३६	पतितानुगंत मां गं निषेवत्य	२.२२.६५	पदं विष्णुरजो ब्रह्मा	३.२३.३३
न्यस्तशस्त्रौ च तौ	२.७५.२३	पञ्च चैव सहस्राणि	३.११०.१४	पञ्चाक्षीतिसहस्राणि	१.३३.२३	पतितेनाम्भसा ह्येते	२.१०.२६	पदसंधौ ब्रह्मलोकं	३.१७.८
न्यस्तसंकुचिताधानं काले	२.३६.२३	पञ्च तं नाम्यवर्तन्त	१.४८.१	पञ्चास्यः पावकोष्वास	२.१२.६	पतितैरपि विद्वैश्च	३.५५.८२	पदहेतोः क्रिया सर्वा	३.१६.२०
न्यहनत्सारथि चास्य	२.५६.६८	पञ्च तस्य महावीर्या	३.४६.२६	पञ्चैते रक्षणायालं	१.३२.६६	पतितैर्निष्पतद्भिश्च	३.५६.६६	पदातयः पदातींश्च	२.५६.७६

पदातिनो महाराज	३.१०६.१७	पद्मावतं जनपदं करवीरं	२.३८.२६	परपीडा न मत्तोऽस्तु	३.८०.६८	परस्परविवृद्धेन हिंसायुक्तेन	३.२८.३६	परिधेण हतः संख्ये	३.६१.२२
पदातिप्रो महावीर्यो वसुदेव	२.४८.६	पद्मे चाधोमुखे कृत्वा	२.८०.४७	परपुष्टस्वनोन्मिश्रं	२.६७.२०	परस्परव्यतीकारो रण	३.६४.१२	परिधेणाहतः कृष्णो	२.८५.५४
पदातिः पुरुषव्याघ्रो	२.५७.४०	पद्मेन शतपत्रेण	३.२०.६	परं गुणोभ्यः पृश्निगर्भं	२.७२.३६	परस्परसमावेशाज्जगतः	३.७३.६	परिधीः पट्टिर्भल्ले	३.६०.३३
पदातिमनिः सुमहान्	३.५७.१७	पद्मे फुल्ले तु विन्यस्य	२.८०.२६	परं च सत्यं परमं	३.४७.२८	परस्परहृत्तस्वाश्च	१.४१.१६८	परिधीर्भिन्दिपालैश्च	३.५१.५
पदात्योयुं व्यतीस्तत्र	२.४८.४३	पद्मोद्यतकरां देवी	३.६५.६	परं परस्यापि परं	३.४७.३०	परांश्च विनिघ्नन्तः	३.५५.६३	परिचक्राम तं देशं दुर्गं	२.५८.२
पदानि त्रीणि दैत्येन्द्र	३.७१.२१	पद्म्यां पार्श्वाभि	२.१२६.८१	परं परस्यापि परं	३.४७.३१	पराक्रान्तं पराक्रम्य	३.५५.२७	परिच्छदस्यानुरूपं यानपात्रं	२.८८.७८
पदानि यो लोकमयानि	१.४०.२६	पद्म्यां सृजति भूतानि	३.२०.१०	परं परस्यापि परं	३.४७.३२	पराक्रान्तस्य समरे विरषस्य	२.४३.२४	परितुष्टः कश्यपस्तु तामुवाच	२.८६.५
पद्महा चक्षुषोर्मध्ये	३.१८.१८	पद्म्यां मुभाभ्यां च पुनः	२.१३.१८	परं परस्यापि परं	२.४७.३३	पराजयं तु देवानां	३.६२.१	परितुष्टेन दत्ता मे	२.६४.४५
पद्मकिं जलकनयनः	३.११६.२०	पद्म्यामेव ततो गत्वा	१.३६.१६	परं परहस्यं धर्मस्य	३.६४.२६	पराजिताः सुरा दैत्यै	३.६६.१	परिदेवितमात्रेण शोकः	२.३२.६
पद्मकूल इतिख्यातं	२.६८.४६	पद्मसाश्च तमालाश्च	३.४१.७३	परं प्रक्रममाणस्य	१.४१.१०१	पराजितेषु दैत्येषु	३.६३.३	परिधानानि चर्मणि	३.१३३.२८
पद्म खंडाकुलाभिश्च	२.६८.११	पद्म्यां देवगमनं	३.१३३.१८	परं शरीरं परमं च	३.४७.२६	पराजित्यं तु संग्रामे	३.५७.६६	परिजायां प्रविशति	३.७३.३१
पद्मखंडजलोपेतं	२.६८.६७	पद्म्यां शोषिता व्योम्नि	२.२४.६६	परमं तर्कशास्त्राणामसतां	१.२८.३१	पराजित्यं स सावित्रं	३.५४.५७	परिवर्तुर्मुहावाहुमेकवेणी	२.६४.२७
पद्मनाभं हृषीकेशं	२.१२६.११६	पद्मगातां सुधोराणां	३.५.८	परमं शृणु मे वाक्यं	२.११८.५३	परां च सिद्धिं परमं	३.४७.२७	परिवर्तं कृते ताम्यां	२.४.२७
पद्मनाभ महाबाहो	२.१२१.६७	पपात पुष्पवृष्टिश्च शक्र	२.८५.६५	परमेष्ठिसुतास्तात मेरु	१.७.४४	पराध्यंस्त्राभरणाः कामैः	२.६०.४४	परिवारं तु समरे	३.५७.४२
पद्मपत्रविवृद्धासु कारण्ड	२.३३.४५	पपात भूमी जानुभ्यां	२.२६.३२	परमेष्ठिप्रग्रहे युक्तं यथैवेह	२.३६.३४	परावर गृहीतार्थं	३.४८.१६	परिवार्यं गरुत्मन्तं सर्वं	२.६३.१०२
पद्मपात्रे पुनर्दग्धा गन्धर्वैः	१.६.३८	पपात सतु रंगस्य मध्ये	२.३०.४६	परश्चैवापरस्तेषां स्वयं	२.१.१८	परावरजः सर्वज्ञः	२.१२७.८४	परिवार्यं समन्तात्तु	३.४४.२१
पद्मं नाम्युदभवं चैक	३.११.१६	पयः पानं तथा कुर्वन्	३.८२.२१	परस्तवेन किं कार्यं	२.४६.२७	परावृत्तस्य समरे विरथस्य	२.३५.७४	परिवार्यं हिरण्याक्षं	३.३८.८
पद्ममालाव्रतोरस्को	३.१२०.१०	पयस्सर्पिषश्चैव दध्नो	२.२२.६३	परस्परकृतोत्साहे	३.१२२.३	परासनगतं तत्र यथा	२.११६.२८	परिहासं बहुविधं	२.७६.११
पद्मवर्णोऽपि राजर्षिस्तस्य	२.३८.२४	पथसा च तथाश्रीयाद्या	२.८०.१०	परस्परकृतोत्साहौ	३.१२४.२१	परिक्षिप्तं च बहुधा	३.१३२.३३	परीक्षितस्य काश्यायां	३.१.३
पद्मस्यान्ते कुशं	३.१२.१४	परदारापहरणं पररत्न-	२.८६.१४	परस्परं समाश्रित्य	३.६४.२४	परिग्रहाश्च विषया	३.२३.३५	परीवादाज्जगन्नाथ	३.८०.७६

परुषाभिस्ततो वाग्भिन्नयो ३.२६.१६	पर्वतानां सहस्रं च २.१०२.७	पश्यतां दीप्तवपुषं ३.१३.८	पाणिनो बभ्रवश्चैव १.३२.५७	पातालवासमुत्सृज्य २.११६.४३
परेण तेजसोपेतो सुरेन्द्रा २.३३.४२	पर्वतास्तरसं सिद्धे ३.२३.२	पश्यतां देवदैत्यानां २.१२६.८४	पाणिप्रहारेणैकेन सभृत्य १.४१.५२	पातितं दानवेन्द्रस्य ३.३६.२१
परोक्षं यदि किञ्चित्स्यात्तव ३.१११.४४	पर्वताश्चलिताः सर्वे २.१०७.२	पश्यतां सर्वभूतानां ३.२५.११	पाणिभ्यामथ चाग्नीध्रं ३.१०.६	पातितायां महाशक्त्यां ३.१२६.२०
पणभारैश्च विकर्चैर्विस्तरिण ३.२८.३६	पर्वतास्तु शिलाशृङ्गा १.४४.३४	पश्यन्ति च सुघोरां ३.६७.२३	पाणिं जगृहुतुवीरी २.६४.५०	पात्यमाने तदा तस्मिन् ३.६१.२०
पर्णाहारां कृशां दीना १.६.४०	पर्वतो नारदश्चैव ३.८५.७	पश्यंस्तो च दुरात्मानो ३.१०६.२	पाणीं गृहीते वैदम्यास्त्व २.६१.१७	पात्रमासाद्य वै राजन्यथा २.५०.८
पर्यदेवन्न विधवा नानर्था १.४१.१४३	पर्वतोपवने न्यस्य रथं २.२८.६६	पश्य राजन्महावीर्ये २.११६.१८७	पाण्डवस्य धनुः केचित २.६०.५७	पात्राणि दक्षिणा दीक्षा १.४०.२७
पर्यये चैव रामस्य भरतस्य २.३८.४१	पर्वभिः पर्वतत्वं ३.१७.२	पश्यामि च हरेर्वक्त्रं ३.११४.३२	पाण्डवाश्चानयामन्स २.७६.२३	पात्रेभ्यो दायतां कन्या २.५१.१४
पर्यश्नातु च सा कञ्चिदपि २.८०.५२	पलायनपरान्सर्वा निदं ३.११०.५	पश्येदं निशितं घोरं ३.१०१.१३	पाण्डवानां तु दग्धानां १.३६.८	पादक्षेपं नृपस्तस्माः ३.१२८.७
पर्यस्तां पृथिवीं कृत्स्न २.१०२.२०	पलायित्वा गृहं गत्वा २.८५.६	पस्परं विहिंसन्तः ३.७६.२३	पाण्डुरोद्धूतवसनः प्रवाल १.४४.१४	पादपर्वणबहुलं ध्रियते च ३.२७.२१
पर्यस्तेर्धूर्णमानैश्च २.१८.४६	पलाशपत्राद्विमपि त्वया २.७०.४६	पस्पशङ्गिं तदा विष्णुः ३.८३.१५	पाण्डुरोद्धूतवसनः प्रवाल १.४४.१४	पादां गुष्ठेन शकटं २.१०१.३४
पर्याप्नुवंतु क्षिप्रं मां २.१७.३१	पल्लवांकृतिहस्तेन २.११७.५१	पल्लवैः सह संवृद्धौ १.२७.१३	पाण्डुर्धनं जयः पुत्रः १.३२.११५	पादा धर्मस्य चत्वारो ३.१७.३०
पर्वण्येषु तु सर्वासु २.६१.३५	पवनसमगतिविशालवक्षा ३.५१.४२	पाकशासनकल्पस्य २.१०४.२७	पाण्ड्यं पौण्ड्रं कर्लिंगं २.१०२.१५	पादितान्यसुरेन्द्राणां ३.४७.७
पर्वतं वरिधाराभिः २.१०५.५१	पवनाधिकसंपातं गगन १.४४.४१	पांचजन्यं मुखे न्यस्य ३.१२०.१२	पाण्ड्यश्च नृपतिः श्रीमान २.६१.२०	पादुकाथं तृणैः कार्यं २.७८.२७
पर्वतं वारिधाराभिः ३.५५.६८	पश्चाद्देवांस्तदा दातुमुद्यता ३.३०.३०	पाञ्चजन्यस्य तिनदं २.५५.२८	पाण्ड्याश्च नृपतिः श्रीमान २.६१.२०	पादेन नैव पादौ तु २.८०.४५
पर्वतं वारिधाराभिर्यथा ३.५५.६६	पश्चिमां तु दिशं ३.७२.५३	पांचजन्यस्य निर्घोषं २.६६.१०	पाण्ड्याश्च नृपतिः श्रीमान २.६१.२०	पादोद्धारेण नृत्येन २.६३.३२
पर्वतं वारिधाभिश्छाद्य ३.५५.१००	पश्चिमे तु ततो रुक्षे २.६.३३	पाञ्चजन्यस्य निर्घोषं २.१२७.१०६	पाण्ड्याश्च नृपतिः श्रीमान २.६१.२०	पादौ प्रक्षालयांचक्रे मुने २.६७.४०
पर्वताकारवर्णां च ३.१२६.६	पश्चिमेनाग्निदीप्तेन पूर्व २.२५.१२	पाञ्चालाधिपतिश्चैव २.४२.३१	पाण्ड्याश्च नृपतिः श्रीमान २.६१.२०	पानीयैरभिषेकेण परा २.११७.५६
पर्वताग्रेषु घोरेषु नदीषु २.३.६	पश्य कृष्ण घनान् कृष्णा २.१०.२२	पाञ्चालो बहुवृचस्त्वासी १.२३.२१	पाण्ड्याश्च नृपतिः श्रीमान २.६१.२०	पापानि बहुरूपाणि ३.७६.२४
पर्वतानपि भिन्दन्ति मम २.८५.३४	पश्य कृष्ण जलोदग्रैः २.१०.२५	पाणिग्रहणमन्त्राणां १.१३.७	पाण्ड्याश्च नृपतिः श्रीमान २.६१.२०	पायसं तत्र दातव्यं २.७६.४०
पर्वतानां नदीनां च ३.८.२४	पश्य कृष्णानलोष्णानां २.४२.७४	पाणिनो बभ्रवश्चैव १.२७.४६	पाण्ड्याश्च नृपतिः श्रीमान २.६१.२०	

पारण प्रथमं प्राग्य	३.१३२.२५	पार्थिवे भारते वंशे पूर्व	१.५३.१४	पितर्युपरते मह्यं श्रावया	१.२०.४६	पितृभिः श्रूयते चापि	१.६.२४	पिवन्तं स्तनमालक्ष्य पुत्रं	२.६.१५
पारणोपारणो राजन्	३.१३२.७७	पार्थिवेषूपविष्टेषु स्वेपु	२.५०.१७	पिता ते स्वर्गंति प्राप्तः	२.३७.६०	पितृवर्ती तु यस्तेषां	१.२१.१०	पिवन्तो रुधिरं घोरं	३.८६.७
पारदा मुक्तकेशाश्च	१.१४.१७	पार्थिवैर्बहुभिस्सार्द्धं समग्र	२.५३.२७	पिता त्वेनमथोवाच श्वपाकैः	१.१२.१६	पितृष्वमरि जातस्ते ममांशो	२.१६.७३	पिवन्निव तदाकाशं	२.१२४.१८
पारमेष्ठ्येन वाक्येन	२.११०.६८	पार्वत्यां परितुष्टायां	२.१०६.५६	पिता बुधस्योत्तरवीर्यकर्मा	२.६५.३१	पितृष्वसुः प्रियार्थं च	२.२६.३१	पिशाचो भगवद्भुवतः	३.८०.८३
पारमेष्ठचे स्थितः स्थाने	१.४७.५६	पार्श्वस्था यादवास्तस्य	३.१११.६	पितामहं तु हत्वा	३.४८.२६	पितृष्वसृपतेर्वर्क्यं श्रुत्वा	२.४३.८२	पिशिताशो जगन्नाथं	३.८२.१
पाराक्षितस्तु नृपतिदृष्ट्वा	३.२.८	पार्श्वानिचान्ये शकलानि	२.८६.६०	पितामहं पुरस्कृत्य	३.२३.१	पितृणां कारणं श्राद्धे	१.१६.४०	पीठं तथा महाबाहुः	२.१०२.२४
पाराक्षरस्य दायादं श्वं	१.१८.४१	पार्श्वे तिष्ठन्तमाहूय	१.२६.४५	पितामहमुखोद्भूता रोद्रा	२.१०६.६३	पितृणामादिसर्गं च	१.१६.६	पीड्याऽयथ धर्मस्य	१.२१.३
पारिजातकपुष्पाणि	२.६७.३१	पार्श्वरूपलकल्पायैः	२.४०.२४	पितामहश्च भगवान्	१.५.२७	पितृणामादिसर्गेण सर्वेषां	१.१८.७१	पीड्यमानोऽतिबलिभि	३.३६.१६
पारिजातगुणान्मर्त्या	२.६६.६०	पालने हि महान् धर्मः	१.११.३०	पितामहाच्च प्रवदन्ति	१.१.८	पितृणामाधिपत्यं च	१.६.५६	पीत कौशेयवसनं	३.११४.१३
पारिजाततरोः पुष्पं तस्य	२.६६.२६	पालयिष्यसि कृत्स्नां	१.४१.११०	पितामहो लोकपालाश्चन्द्रा	१.४१.२१	पितृनाज्ञापयिष्यन्ति	३.४.२५	पीत कौशेयवसनं	३.११४.३६
पारिजातं ततोऽस्त्राक्षीद	२.६७.६२	पालयन्तं शुभं राष्ट्रं	२.३७.३०	पिता सोमस्य वै राजन्	१.२५.१	पितृन्पुत्रा नियोष्यन्ति	३.३.३६	पीतमाल्याम्बरधरो	३.५१.४४
पारिजातं महापृष्ठे दृष्ट्वा	२.६६.५६	पालितोऽपि हि दैतेयेः	३.६६.६१	पिता हि मे परित्यक्तो	२.२८.३७	पितृन् प्रीणाति यो भक्तया	१.१८.७४	पीतवासा लोहिताक्षः	३.३३.२८
पारिजातश्च तत्रैव	२.६८.६४	पावनः सर्वभूतानां	३.६२.६	पितुः पितामहं चैव त्रिषु	१.१६.१४	पितृंश्च सर्वभूतानां	३.३६.१६	पीते प्रीतिकरे नृणां	२.११.४
पारिजानमिहानीतं	२.७५.४७	पाषाणैः कर्षणीयैश्च	३.७४.२३	पितुर्मै दयितस्त्वं	२.३७.२१	पित्तो धर्मकामस्य	१.१६.११	पीते वसानो वसने	१.५२.४
पारिजातादबहुगुणं फल	२.६८.२४	पाषाणैः प्रतिमां तात	२.७४.५४	पितृश्चापरितोषेण	१.१३.१८	पित्रा तु तं तदा	१.१३.६	पीत्वार्णवांश्च सवन्ति	३.६.२
पारिजाते निवध्याथ मम	२.८१.२०	पिठरः पतगः स्वर्गाः	१.१२२.३२	पितुः समीपगा सा तु	१.६.१६	पित्राऽपरञ्जितास्तस्य	१.५.३०	पीनोन्नतकटीदेशं	३.३४.३३
पारिजातो वंसस्तत्र	२.७६.२१	पितरं किं नु वक्ष्यामि	२.११८.१२	पितृकृत्येषु देवानां संन्यासं	२.६६.१२	पित्रा प्रोक्ता महात्मनो	३.२१.१६	पुंडरीकशतैर्जुष्टं विमानैश्च	२.६८.६६
पारिजातो विष्णुपद्याः	२.६७.७०	पितरं तस्य तत्रैव	२.३६.३६	पितृनुद्धरते सर्वान्	३.१३५.१२	पिनद्धं काञ्चनैः	३.६१.८	पुण्डरी कसहस्रस्य	३.३३.३०
परियात्रो गिरिश्रेष्ठो	२.७४.२	पितरं वसुदेवं च सततं	२.२६.५	पितृपैतामहे राज्ये तव	२.४४.५७	पिपासा वा बुभुक्षा वा	२.८६.६०	पुण्डरीका सुगन्धा च	३.६६.१६
पार्थिवं देहमाहुस्तं	१.४०.६०	पितर्युपरते घोरे शोक	२.४४.६५	पितृभिर्दानवैश्चैव	१.२.२६	पिपीलिकानां चण्डानां	२.५७.३६	पुण्यकानां समोत्पत्ति	२.७७.१

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

६३

पुण्यकानां विधिं कृत्स्नं	२.७७.२८	पुत्रं शङ्खपदं नाम राजानं	१.४.२०	पुत्रो दिविरथस्यासौ	१.३१.४४	पुनर्द्वारवतीं प्राप्ते तस्मिन्	१.३६.३३	पुरा एकार्णवै घोरे श्रुयते	२.४८.१३
पुण्यकानां विधि	२.७८.१८	पुत्रं समभिवीक्षन्ति	२.३१.४०	पुत्रो निर्यापितः क्रोधान्तीतो	२.३२.१८	पुनर्भंगनाः प्राद्वन्त	२.११६.१२५	पुरा कमलनाभस्यस्वपतः	१.४१.२६
पुण्यकानि च सर्वाणि	२.७८.३	पुत्रं समुद्रं च बिभुः	१.१४.२४	पुत्रोऽभूद्राजशार्दूल सर्व	१.२०.८६	पुनर्देवगणैः सर्वैः पुरन्दर	१.६.२२	पुरा कल्पे हि वारणेन	१.३.७७
पुण्यकार्यं कथास्तासामासं	२.७७.२३	पुत्रं सर्वगुणोपेतं बभ्रुं	१.३७.१२	पुत्रो मेऽपहृतो राज	१.२६.२७	पुनर्नैर्बोपभुजंति	३.५.२४	पुरा कृतयुगे राजन्सुरारि	१.४१.४०
पुण्यके सत्यया	२.७५.३६	पुत्रमिन्द्रवधार्थाय समर्थं	१.३.१२५	पुत्रो मे बालभावेन	२.५१.१	पुनः शरसहस्रेण	२.१०६.८	पुरा कृतयुगे राजन्	३.४१.२
पुण्यतीर्थं गुणोपेतं	३.३५.३२	पुत्रमेकं ददौ तस्मै	३.१०४.१२	पुत्रोऽयमिति जानीहि	२.११७.४०	पुनश्च क्रोधरक्ताक्षो	२.६३.८१	पुरा कृतयुगे विष्णुस्संग्रामे	२.४८.२३
पुण्यं त्रिशिखरं चैव	३.१२.६	पुत्रं शूरव्रते युक्तं ज्ञातीनां	२.३१.४१	पुत्रो रुक्मरथस्यापि	१.२०.४१	पुनश्चोद्भवते सूक्ष्मं	३.२६.२६	पुरा गत्वोत्तरकुलंस्तपश्चक्रे	२.८५.३६
पुण्यः प्रभुप्राणपति	३.५२.३०	पुत्रशोकेन शुण्यतीं त्व	२.२६.६	पुत्रो विश्वजितश्चापि	१.२०.२०	पुनः संपूज्य परमं	३.६६.२६	पुराणं तत्र विन्यस्य	१.५५.५१
पुण्यं कर्तुं तदा सृष्टः	३.६७.५७	पुत्रश्च भीमकस्यापि	३.३४.१५	पुदस्त्राणात्ततः पुत्रमिहेच्छति	३.७३.३०	पुनः सिद्धयया युक्तः	१.८.३५	पुराणं पौष्करे चैव	३.१४.६६
पुण्यं च रमणीयं	१.३२.८७	पुत्रसंक्रामितश्रीस्तु	१.११.२७	पुनः पुनर्मया वास्य हेतवो	२.७०.६	पुन्याम्नो नरकात्पुत्रो	२.२३.३०	पुराणमितिहासश्च	२.१०६.८
पुण्यं सद्रोषितं यच्च	३.७२.४८	पुत्रः सत्यधृतिर्नाम	१.३२.७२	पुनः पुनस्स च बली	२.२४.३२	पुनो तस्यां तु रथ्याश्च	२.६८.७५	पुराणमेतच्चरितं	३.६.११
पुण्यापरावती दुर्गा	१.५४.६१	पुत्रस्य चेष्टामालोक्य	१.५२.१४	पुनः प्रवाच्यो भगवंस्त्वसा	२.७०.५०	पुरत्रयस्य संद्वार	३.१३४.३०	पुराणमेतदखिलं सांख्यं	३.३३.६
पुण्यार्थं दानधर्मार्थं	२.६८.७	पुत्रानपुत्रो लभते	३.६.८	पुनरन्याश्चतुःपट्या	२.६०.१७	पुरद्वारं समासाह	३.६३.१८	पुराणवेदसंबद्धः शिव	२.४०.२४
पुत्र एकोऽपि मे जातस्स	२.३२.१२	पुत्रानुत्पादयामास सोम	१.२.४७	पुनरुत्थाय शयनात्पतन्तीं	२.६६.११	पुरंदरपुरे रम्ये शक्रेण	३.१३२.४७	पुराणि ग्रामघोषांश्च	१.३३.३६
पुत्रः कन्या सुकन्या	१.१०.३२	पुत्राश्च रूपसंपन्नाः	२.८३.४०	पुनरेव तदा भूत्वा	३.१६.३७	पुरंदरं सुरश्रेष्ठं न	३.६४.२३	पुराणि दानवेन्द्राणां	२.६१.३४
पुत्रदारसहस्रं हि भ्रातानघ	२.७०.२६	पुत्रांश्चैव प्रवक्ष्यामि	१.७.२३	पुनरेव तु तत्रासीन	३.५५.१	पुरंदरे दिवं याते	२.१२७.१४६	पुराणि कथितास्तात	१.७.२२
पुत्रपीडोद्भवश्चापि	१.२०.११७	पुत्रेण लोकान् जयति	३.७३.२६	पुनरेव निकुम्भस्तु कृत	२.८४.२८	पुरं प्रविविधुष्टाः	२.११७.३८	पुराणे नागराजोऽसौ	२.६२.४
पुत्रपौत्रा विवदन्ते	२.६७.४४	पुत्रोऽगुह्यस्य राजर्षि	१.२०.२८	पुनरेवाब्रवीत्ते तु	२.६४.३६	पुरमासादयामास युद्धं	२.६३.६०	पुराणे पौष्करे चैव	३.३२.६२
पुत्रः प्रतिरथस्यासीत्कण्वः	१.३२.५	पुत्रो ग्रहाणामधिप	३.३६.२८	पुनरेवाब्रवीद्राजा सोमस्य	२.५२.४४	पुरवास्तु विचिन्वन्त्यः	१.५६.२४	पुराण्याकाशगानीव	२.८८.६४
पुत्रं चास्य पुरस्कृत्य बाल	२.४४.४५	पुत्रो दत्तो मथा देव	३.८८.५	पुनर्जातोऽयमित्याहुः	२.१०१.३३	पुरस्सरमहाभूतो	३.१२१.२	पुरादित्या महातेजास्तो	२.६७.५८

पुरातनानां देवानां ब्रह्मणः २.१४.३७	पुर्याः प्रियकरी सा वै २.५८.२०	पूजनीयापि तत्काले १.२०.१०१	पूर्णचन्द्रसपत्नेन २.६६.३६	पूर्वं पश्चिमजांश्चैव उत्तरा २.५२.५
पुरा ब्रह्मविजः शक्र १.४५.२३	पुनस्त्यपुत्रो द्युतिमान ३.३७.२४	पूजयामास तां वीरः २.१२०.३८	पूर्णचन्द्रानना दिव्या ३.३६.२६	पूर्वं नगरनिर्व्यूहमेते २.३५.४७
पुराविदोऽथ विश्वेश ३.१११.३६	पुत्रोऽस्य विरथो नाम ३.३७.२१	पूजयित्वा यथान्यायं २.८६.३६	पूर्णं युगसहस्रं तु १.७.६०	पूर्वं पक्षं सहस्राक्षः १.४४.१६
पुरा श्रुतार्थो दैत्येन्द्रः २.६३.१५	पुलिन श्रोणिबिम्बोष्ठी २.४६.३७	पूजां तु विपुलां कृत्वा १.२६.५३	पूर्णस्तु धर्मसमयस्त २.१०.२	पूर्वं यत्र तु ब्रह्मर्षी १.३.१२२
पुराहं द्वारकां यातः २.१११.६	पुलोमा कालिका चैव १.३.६२	पूजार्थमथ संसारान् २.१२७.१३१	पूर्णं युगसहस्रान्ते ३.२१.७	पूर्वं स हि समुत्पन्नो १.३.१०
पुरा हि कश्यपो विष्णो १.५५.२१	पुलोमा तु महादैत्यस्ति ३.५०.१	पूजितः स निकुम्भेन दान २.८३.३१	पूर्णं युगसहस्रान्ते ३.३३.१४	पूर्वं हि या त्वया सृष्टा २.१२७.७६
पुरिकां नाम धर्मात्मा २.३८.२१	पुलोमा तु महादैत्यो ३.५३.६	पूज्यमानं तदा नागै २.१०१.३७	पूर्णं युगसहस्रान्ते ३.३३.२१	पूर्वमन्वन्तरे श्रेष्ठा १.३.५६
पुरी द्वारवती नाम ३.८०.३४	पुष्करस्थो महाराज ३.१२५.२२	पूज्यमानो महाबाहुः २.१०१.२१	पूर्णं युगसहस्रे तु १.८.२६	पूर्वमभ्यर्चिताश्चैव २.६६.२६
पुरीद्वारे तु विज्ञाप्य १.२६.४६	पुष्करं पुण्डरीकाक्षो ३.१२१.२१	पूज्यश्च सततं ३.१२८.३३	पूर्णं वर्षसहस्रे तु ३.६८.१६	पूर्वमभ्यागतं द्वारं केशवं २.७३.१५
पुरी पृथिव्या मुदिता मथुरा १.५४.२१	पुष्कतं पुण्डरीकाक्षो ३.१२१.२२	पूज्यो देवैः पूज्यसे २.७४.२७	पूर्णं वर्षसहस्रे वै तं तु १.२७.१४	पूर्वमाडीवके युद्धे १.११.२०
पुरीं प्रविब्रिष्टुर्हृष्टाः २.३६.३४	पुष्करिण्यस्तडागानि २.१६.२२	पूतना नाम शकुनी २.६.२३	पूर्णं संवत्सरे दद्यात्सौवर्णं २.७६.६४	पूर्वमेव तु कृष्णाय कारितं २.४७.४५
पुरुकुत्सं च धर्मज्ञं १.१२.६	पुष्करे रमते विष्णुविष्णुरेव ३.२८.७२	पूतनानिधनादीनि कर्माणि २.२४.६२	पूर्णं संवत्सरे दद्यादेकैकं २.७६.६०	पूर्वमेव तु कृष्णेन गवां २.६.३२
पुरुजातिः सुशान्तेस्तु १.३२.६४	पुष्करैः शतपत्रैश्च ३.८४.१२	पूतनायां हतायां च कालिये २.२२.२	पूर्णं संवत्सरे देवि २.६५.३१	पूर्वमेव मयाख्यातं २.५१.३७
पुरुषं दिव्यरूपाभं ३.१७.५०	पुष्टिकामेन धर्मज्ञं १.१६.६	पूतनाया वधो भंगो ३.१३४.१०	पूर्यन्तां पयसा नद्यो द्रोण्यश्च २.१७.१३	पूर्वमेवावनिगते भागे १.५४.३
पुरुषो यज्ञ इत्येवं ३.१०.४	पुष्पदामावसज्याथ २.७६.५	पूतना शकुनी बाल्ये २.२२.२६	पूर्वजस्य मनोस्तात १.६.१६	पूर्वस्यां दिशि नागानां १.३७.२३
पुरुहूतस्तु पुरतो लोक १.४४.३	पुष्पमात्रस्य यद्वीर्यं ३.३०.७	पूरयामासतुर्वीरो ३.१२६.१८	पूर्वजातिषु यद्ब्रह्म श्रुतं १.२१.३६	पूषा नस्य रथाम्याशात् ३.५५.११२
पुरे पुरे नरपतिः कोटि १.५१.२१	पुष्पाकुलजलोपेता २.६८.७२	पूरयित्वा हृद सर्वं भोगे २.१२.७	पूर्वजैस्तव गोविन्द पूर्वं २.३६.५०	पूषा मित्रश्च वरदो ३.१४.५८
पुरेऽस्मिन्नृपतिः कृष्ण २.३६.५१	पुष्पोच्चर्यैर्वसितशीत २.८६.३८	पूरावैशमहं ब्रह्मन् १.३१.१	पूर्वदेवभयं श्रुत्वा मारुता १.४६.४८	पृच्छतस्तात यज्ञेस्मिन् २.१२८.३६
पुरोहिताः शत्रुवधं २.१२६.६५	पुंस्वचक्रानुलिप्तेषु केसरेषु २.४१.१६	पुरोः पुत्रो महावीर्यो १.३१.५	पूर्वद्वारे महाराज ३.६५.६	पृथक्त्वं गमितं ३.१६.१६
पुर्याः क्षिप्रं निवेशार्थं २.५८.१६	पूजनीया चकारासौ किं १.२०.७६	पूर्णकुम्भेश्च लाजैश्च २.१२७.१०८	पूर्वपर्वतनिर्व्यूसमेतेष्वायत २.४२.३६	पृथक्पृथक् निवासाश्च २.८८.८०

पृथग्गर्भेषु दत्तेषु लोकेस्ते	२.६३.१३	पृथुश्रवा पृथुयशा	१.३६.५	पोण्ड्रस्य वासुदेवस्यै	२.५६.४	प्रकीर्णदामनीकेषु गास्तथै	२.२५.७	प्रजमुहप्रायुध चापहस्ता	३.५२.५१
पृथग्बलः पृथग्धीमांल्लोक	२.८८.६	पृथुः श्रवा भूरिधामा	१.७.६४	पोण्ड्रस्य शिनिनप्ता	३.१००.२२	प्रकृतयोऽनुयास्यन्ति	२.३२.२१	प्रजज्वाल जल चैव	२.७५.१५
पृथग्यथेन कौरव्य प्रद्युम्नः	२.७३.६	पृथुस्तस्मात्समुत्त	१.५.२२	पोण्ड्रेण सुचिरं काल	३.१०१.२०	प्रकृतिर्या विकारेषु	२.१२७.८१	प्रजज्वाल स तेजस्वी	२.६४.१४
पृथिवि वायुराकाशमापो	१.४०.५६	पृथोर्वैत्यस्य चारुयानं	३.१३४.२	पोण्ड्रोऽथ वासुदेवस्तु	३.१०१.१८	प्रकृतिः सा मम परा	२.११४.१०	प्रजनाच्च मनुष्यान्वै	१.१.४०
पृथिवी चान्तरिक्षं	३.६६.१०	पृथोस्तु सुकृतो नाम	१.२०.२६	पोण्ड्रोऽथ वासुदेवस्तु	३.१०१.२	प्रकृत्याः प्रथमो भाग	२.७१.१५	प्रजानां पतयः सन्त	३.७०.१
पृथिवी चोद्धृता लाजा	२.१०६.६६	पृथ्वीवाक्यं च देवानाम	३.१३४.८	पोण्ड्रो वीर्यवता नेता	३.७४.१५	प्रकृत्या शीतलो वायुः	२.६३.६०	प्रजापतिकृतं मार्गमपास्य	२.६६.४८
पृथिवी निखिला राजन्	३.३४.६	पृष्ठ एव भविष्यस्य	३.३.४	पौरवी रोहिणी नाम	१.३५.४	प्रक्रीडिताश्च ते सर्वे	२.१४.१५	प्रजापतिश्चात्र	३.४३.१५
पृथिवीप्रविभागाय	३.३४.४६	पृष्ठतः सत्यभामा च	२.६४.६६	पौरवी वेणुदारिश्च वैदर्भं	२.३५.४१	प्रक्लिन्न पक्षास्त	२.६५.६	प्रजापतिस्तु भगवान्	३.३६.५६
पृथिवीप्रविभागाय	३.३४.४७	पृष्ठतोऽप्यनुगच्छन्ति	३.१११.१५	पौरवी वेणुदारिश्च वैदर्भं	२.४२.३०	प्रस्वेडमाना बहवः स्फोट	१.४३.२६	प्रजापतीनां दक्षं	१.४.५
पृथिवीं विशतीं दृष्ट्वा	३.३४.१६	पृष्ठवक्त्राः सुसंविग्नाः	३.५६.२३	पौराणान्युमया देव्या	२.८१.३८	प्रगृह्य शूलांश्च	३.५२.२६	प्रजापतेस्तु संकल्पात्संभूता	३.३६.५०
पृथिवी वायुराकाशमापो	२.१०६.६	पृष्ठेऽस्य वसवो देवा	३.७१.५१	पौरुषेण समायुक्तः	२.११६.१७२	प्रगृह्य तु गदां भूयो	३.६०.७०	प्रजारक्षणयुक्तेषु	१.४६.४६
पृथिवी विष्णुरित्येतत्	३.१११.४६	पेतुरार्ता वेपमाना गावो	२.१८.२५	पौरोगवोक्त्या विधिना	२.८६.५६	प्रगृह्य रुचिरं वज्रं	३.६४.१३	प्रजार्थमृषयो यस्य	१.२.२१
पृथिव्यां पृथुराष्ट्रायां	२.१६.५७	पेतुरुल्का सहस्राणि	१.४२.१६	पोर्णमास्यां तु सततं प्राप्ते	२.७६.६६	प्रगृह्य हस्ते संभ्रान्तो	३.७१.१६	प्रजावानेति सायुज्य	१.१५.३८
पृथिव्यां पृथुराष्ट्रायां	२.५८.५१	पेतुरुल्का सहस्राणि	१.४२.१६	पोलस्त्य प्रामतिः श्चैव	१.७.६६	प्रचकम्पे ततः कृत्स्नं	२.८७.२६	प्रजासंहरणे घोराः	३.५५.६६
पृथिव्यां यत्कृतं	३.१७.१	पेतुर्गतासवः केचिद	३.६४.२५	पोलहः सन्त इत्येते	१.७.६२	प्रचिन्वतः प्रवीरोऽभून्मन	१.३१.६	प्रजाः सृजेति व्यादिष्टः	१.३.२
पृथिव्यां यदुर्वंशोऽयं	२.२३.६	पैतामहं तथा चक्रं	३.४४.८	पोलहस्तत्त्वदर्शी च	१.७.७६	प्रचेता हंसमारुह्य	३.८५.३	प्रजया तेजसा योगात्त	३.२१.१४
पृथिव्युद्धरणार्थाय	३.३४.३४	पैशाचं राक्षसं रोद्रं	२.१२४.४५	प्रकाशं स्म कथास्तत्र	२.४७.६	प्रच्छन्ती मायया वीरो	२.६४.४६	प्रजां दक्षां शिवां सौम्यां	२.१२०.८
पृथुपुत्रो तु धर्मज्ञो	१.२.२८	पैशाचमस्त्रममितं	३.४४.१२	प्रकाशमद्य सौभाग्य	२.६५.३८	प्रच्छादयन्त वाणीद्यैर्वृत्रं	३.५७.५३	प्रणतार्तिहरः कृष्णः	२.५०.४६
पृथुरवे नमस्कार्यो	१.६.४६	पोथयद्रथवृन्दाति	३.५५.१५०	प्रकाशितं वै सहसा	१.२६.२६	प्रच्छाद्य रथपन्थान्मुत्	३.५८.२	प्रणम्य गरुडस्योऽथ	२.७३.१६
पृथुर्वैत्यस्तदा राजा	१.६.१२	पोन्ड्रोको वासुदेवस्तु	३.१०१.८	प्रकीर्णकेशी मृत्युश्च	२.२.१२	प्रजगुर्देवगन्धर्वा ननृतुश्चा	२.८७.३६	प्रणम्य शिरसा देवी	२.१०७.१६

प्रणम्य शिरसा पादौ	३.६७.१६	प्रतिगृह्य महादेवः	३.३२.२३	प्रतीच्या मुत्तरस्यां	१.३०.१८	प्रत्युवाच यशोदा	२.६.१६	प्रदोषाद्धं कदाचित्तु कृष्णे	२.२१.१
प्रणम्याथ वचः प्राह	२.१२१.६६	प्रतिगृह्य स तां पूजां	२.११३.३	प्रतीच्छ देहि किं	३.७१.१७	प्रत्युवाच स तं कृष्ण	२.२६.६८	प्रद्युम्नः प्रथमं जज्ञे	२.१०३.५
प्रणयस्य रसं दत्त्वा	२.६७.१२	प्रतिजग्मुर्दशार्हस्तं व्यूढा	२.३५.५३	प्रतीच्छेमाः स्वधर्मेण	२.३७.६४	प्रत्युवाचाथ सा कृष्ण	२.२७.३३	प्रद्युम्नं नायकं कृत्वा	२.६२.५६
प्रणयाच्चापि कृष्णं सा	२.२७.३७	प्रतिज्ञातं मया कृष्ण	२.१६.७७	प्रतीपमाहरन्नागानश्वांश्च	३.५६.३६	प्रत्युचुस्ते ततो वाक्यं	२.११०.७२	प्रद्युम्नमग्रे सैन्यस्स	२.८४.४
प्रणवं वाचकं मत्वा	३.८०.८७	प्रतिज्ञाय तु यो विप्रे	३.७१.३६	प्रतीपस्य तु राजर्षेस्तु	१.२०.११	प्रत्युषस्य विदुः पुत्र मृष्टि	१.३.४४	प्रद्युम्नमथ कंसघ्नो वारयेति	२.७३.२४
प्रणाष्टचेतना मर्त्या	३.३.११	प्रतितस्तम्भिरेऽन्योन्य	३.५४.४१	प्रतीपो भीमसेनस्य	१.३२.१०६	प्रत्येत्य द्वारकां विष्णु	२.६३.१	प्रद्युम्नविहितं रम्यं विमानं	२.६२.६१
प्रणाष्टशोका रस्यामः	२.१२७.१४३	प्रतिपालय मां सौम्य	२.७३.४	प्रत्यक्ष ज्ञानसंयुक्ता	३.११२.२०	प्रथमः पक्ष इत्येव	२.७६.१०	प्रद्युम्नः शरजालैस्तान्	२.१२२.६७
प्रणोदुः सर्वभूतानि	३.५६.४४	प्रतिप्रास्थानिकं कर्म	३.५४.१६	प्रत्यक्षं शूरसेनानां	२.१०१.३०	प्रथमादेव हन्तव्या	२.२.२	प्रद्युम्नशरपातेन	२.१०५.३४
प्रणोमतुः सुसंहृष्टौ	३.१३०.५	प्रतियातस्ततो ब्रह्मा ते	१.४५.६५	प्रत्यक्षमनुमानं च	३.४.७	प्रथमे मेरुसावर्णे	१.७.६०	प्रद्युम्नश्च जयन्तश्च	२.६६.५८
प्रतप्तजाम्बू नद चित्र	३.६३.१२	प्रतियोदुं न मां कश्चिद्	२.८७.१०	प्रत्यक्षमपि यद्रूपं	३.१११.३७	प्रदक्षिणावर्तशिखः	३.६२.७	प्रद्युम्नश्च मया दृष्टो	२.६३.२६
प्रतप्तो दह्यमानस्तु स शैलः	७.४२.६०	प्रतिविद्याध तांश्चैव	२.५६.५६	प्रत्यग्रमणीयानि पुष्पाणि	२.४६.२४	प्रददौ दश धर्माय	३.२२.७	प्रद्युम्नश्च महातेजा	२.६०.१२
प्रतर्दनस्य पुत्रौ द्वौ वत्स	१.२६.७३	प्रतिषिद्धममुं लोकं	३.१६.३६	प्रत्यंगि रसजा श्रेष्ठा	१.३.६५	प्रददौ ब्राह्मणायाथ	२.११३.२८	प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च	२.१२७.१२०
प्रतापावनतास्सर्वे तव	२.३१.३०	प्रतिषिद्धे मम महे मयेयं	२.१६.१६	प्रत्यपद्यत रत्नानि विविधानि	२.६३.३	प्रददौ वामुदेवाय प्रीत्या	१.३०.१६	प्रद्युम्नश्चापि नो बालः	२.१२१.३०
प्रतापेन च तीक्ष्णेन	२.१७.७	प्रतिषिद्धेषु तूयेषु मृदङ्ग	२.३०.३८	प्रत्यागतिर्गुरुकुलादथोक्ता	३.१३४.१७	प्रदर्पितमसंहार्यं दृष्ट्वा	३.५५.७२	प्रद्युम्नः समराकांक्षी	२.१०५.१०
प्रतिक्षुत्रसुतश्चापि सृञ्जयो	१.२६.२	प्रतिष्ठा धर्मराजस्य	१.१०.२३	प्रत्यानयस्व भद्रं ते	३.४८.२८	प्रदिशो विदिशश्चैव	२.१०६.६	प्रद्युम्नः सात्यकिश्चापि	२.७४.५
प्रनिगृह्य च तद्वाक्यं	३.२३.४६	प्रतिष्ठा सर्वभूतानां	३.४७.२४	प्रत्युक्तोऽहमनेनाद्य	२.११०.८३	प्रदीप्तमिव तेजोभी	३.१३३.१४	प्रद्युम्नस्तं तु वायव्यैः	२.१०६.१५
प्रतिगृह्य ततो द्रोण	१.२०.७५	प्रतिष्ठितायां मेदिन्यां	२.३२.२५	प्रत्युदगतो गोपवृद्धैस्स्त्री	२.५.३१	प्रदीप्तानीव दृश्यन्ते	२.१२४.३२	प्रद्युम्नस्तु महातेजा	२.१०७.१६
प्रतिगृह्य तु तत्पुष्पं	२.६५.१६	प्रतीक्षन्तस्तदा वाक्य	२.६४.२२	प्रत्युदगम्याध्वमादाय	२.५३.१४	प्रदीप्तेन रथाङ्गेण	२.६२.३०	प्रद्युम्नस्तु महाबाहू	२.१०४.४८
प्रतिक्ष्य तु तत्सर्वं	२.७६.८	प्रतीक्षन्तो महात्मानो	२.६४.२३	प्रत्युवाच ततो रामस्सर्वा	२.४६.१७	प्रदीप्ते ब्रह्मशिरसि	२.१२६.६३	प्रद्युम्नस्त्रिशता राजन्	३.१२७.६
प्रतिगृह्य तु तां पूजां	२.७७.२२	प्रतीक्षमाणस्तिष्ठस्व	२.२८.८८	प्रत्युवाच ततो रामो	२.४६.५६	प्रदृश्यते भीरु यदा	२.६५.२६	प्रद्युम्नस्य च कण्ठे तु	२.१०७.२१

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

प्रद्युम्नस्य चतुर्भागा	२.६७.२६	प्रफुल्लस्य कदम्बस्य	२.४१.६	प्रभासस्य च सा भार्या	१.३.४६	प्रमाथगण शेषं तु	२.१२४.११	प्रवक्तुर्न्यायिरहितं तन्मतं	१.२८.३३
प्रद्युम्नस्य पुनस्तस्मादा	२.६१.४६	प्रबन्धः कर्मणामेवं तस्य	२.२२.३२	प्रभोपमर्दं मा कार्षीः	२.६४.६	प्रमुखे वासुदेवस्य	२.१२६.११२	प्रवरस्तु प्रहस्यैतमुवाच	२.७३.३८
प्रद्युम्नस्य रथोपस्थे	२.१०६.११	प्रबोधोत्तरसां माता	३.१४.६२	प्रभुर्महाभूतपतिर्महातेजा	३.७.८	प्रयच्छ ह्यभयं बाणे	२.१२६.११७	प्रवरस्यापि बाणेन शितेन	२.७३.६२
प्रद्युम्नस्य सुतो जज्ञे	२.१०३.२३	प्रभवं सर्वभूतानां धर्माणां	१.५.१३	प्रभुर्वाव्युत्थितो ब्रह्मन्	१.५५.२७	प्रयतिष्यामि देवेन्द्र	१.२८.२८	प्रवरो विश्वकर्माणी	३.५५.२५
प्रद्युम्नः स्याद्यथा भर्ता	२.६२.३४	प्रभवः सह सर्वेषां	३.६७.६	प्रभुलोकहिताय	३.३४.४३	प्रयत्नं कुरु शिक्षाणां यत्न	२.७३.५२	प्रववर्षोपरि गतो	२.१२२.१६
प्रद्युम्नेन तु सा माया	२.१०६.१८	प्रभातकाले नृपसत्तमो	३.१२६.४७	प्रभूतरथहस्त्यश्ववर्मशस्त्र	२.५७.६६	प्रयत्नो युज्यते	२.११८.६१	प्रवाति धारान्तर	२.६५.१०
प्रद्युम्नेनानिरुद्धेन	२.१२७.५८	प्रभातायां तु शर्वर्या	३.७४.१	प्रमथानां गणैर्धर्मान्वृतो	२.८७.२५	प्रयथौ त्वरया युक्तो	२.१२२.५७	प्रवादयद्भिर्गन्धर्वैः	३.२७.१२
प्रद्युम्नेनैवमुक्ते तु तन्ननाश	२.६०.५४	प्रभातायां रजन्यां तु	२.४६.६१	प्रमथ्य तरसा कर्णं यतन्तं	२.८४.४६	प्रयातस्य तु संग्रामे	२.१०५.२१	प्रवालजाम्बूनदचित्र	३.५१.७०
प्रद्युम्नोत्तरमेतत्ते	२.६७.४३	प्रभाते पूर्णचन्द्रस्य	२.६६.२८	प्रमथ्य तरसा कर्णं यतन्तं	२.८४.४७	प्रयातः स्वेन सैन्येन	३.५५.२४	प्रवालजाम्बूनदभक्ति	३.५१.१२
प्रद्युम्नो दक्षिणे पार्श्वे	२.७३.७६	प्रभा धृतिः क्षमा	३.६५.१६	प्रमथ्य तां वरारोहां नरको	२.६३.८	प्रयाताः प्राग्दिशं दिव्यं	३.६८.१७	प्रवासे राजबन्धे च	२.३.२६
प्रद्युम्नो धनुरादाय	२.१०५.३३	प्रभाया नहुषः पुत्र	१.३.६६	प्रमथ्य सर्वान्दैतेयान्	१.४१.६६	प्रयाते पुण्डरीकाक्षे	२.६०.३०	प्रविचाल्य महावीर्यः पादवे	२.५३.३५
प्रद्युम्नो नीयमानं	२.६३.४६	प्रभावकाले संप्राप्ते	१.४५.५८	प्रमदो मयश्च कुपथो	१.३.८७	प्रयाह्युतिष्ठ गच्छाम.	२.६.१३	प्रविवेश ततो रामो	१.३६.२३
प्रद्युम्नोऽप्यथ मायावी	२.६०.५३	प्रभावज्ञास्तु ते वीराः	२.८८.५१	प्रममाथ तलेनाशु	३.५८.६१	प्रयुक्ते ब्रह्मशिरसि	२.१२६.६	प्रविवेश पुरं कृष्णो	२.१२२.४८
प्रधानं पुरुषो देवोऽहमाद्यस्त्व	३.१०.५६	प्रभावती तदा पुत्रं	१.६६.१६	प्रमाणं यद्वि कुस्ते	१.१६.२६	प्रयुष्येतां ध्वजौ तत्र	२.१२६.७७	प्रविवेश स संरब्धो	२.४.६५
प्रधानात्मा पुरा ह्येष	१.४२.७	प्रभावती भास्वरा	३.४१.५१	प्रमाणैर्विषि वीर्येण तेजसा	२.२८.११४	प्रलम्बनिघ्नं चैव	३.१३४.१२	प्रविवेशान्धको नाम घोर	२.६८.८७
प्रधमापयामास तदा	२.१२५.७	प्रभावतीमथोवाच प्रद्युम्नो	२.६६.३०	प्रमाथगणभूयिष्ठं	२.११६.११५	प्रलम्बं मुष्टिर्नैकेन यज्ज	२.६२.१७	प्रविशन्तं तु वेगेन मारुता	२.३०.१
प्रपद्ये देवतां तां तु	१.२६.२३	प्रभावती रुदन्ती तु	२.६६.३४	प्रमाथगणभूयिष्ठं	२.१२२.५८	प्रलम्बं यं मृधे देवा	२.२२.२६	प्रविशन्तं पुरीं रम्यां	२.४५.१४
प्रपातप्रभवाभिश्च सरिद्धि	२.४०.२२	प्रभावत्यास्तु तं दृष्ट्वा	२.६४.५	प्रमाथगणभूयिष्ठे सैन्ये	२.१२६.३३	प्रलम्बश्च महाबाहो	२.१०१.४४	प्रविशन्नेव पप्रच्छ	२.२५.१४
प्रपातप्रसन्नवोत्क्षिप्तो धूम	२.४२.६३	प्रभावं पद्मनाभस्य	३.७.१	प्रमाथगणमुख्याश्च	२.१२२.५२	प्रलम्बे निहते दैत्ये	१.१४.५६	प्रविश्य ध्वजिनीं	३.५६.७७
प्रपावापप्रिसन्नोदा उद्यानै	२.५८.४७	प्रभावहीनास्तथौषधयो	२.१२४.३५	प्रमाथगणवंश्यस्य	२.१२६.१५८	प्रवक्तारस्सुनियतां नेतारो	२.२२.१६	प्रविश्य योगं योयात्मा	२.१२५.१६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

६८

प्रविश्य स पुरं विष्णोः	३.११०.१	प्रवेशितं च तन्माल्यं	२.६३.५१	प्रसिद्धां महतीं देवीं	३.७३.४५	प्रहरन्ती ततोऽन्योन्यं	२.३६.१६	प्रह्लादस्य च तच्छ्रुत्वा	३.४४.१
प्रविश्य सुचिरं देशं	३.७७.३	प्रवेशितश्च तैस्सर्वैस्स	२.१२.१३	प्रसिद्धां सदा विष्णुरयुक्तं	३.११४.३३	प्रहरस्व महाबाहो प्रथमं	२.७३.१८	प्रह्लादस्य त्रयः पुत्रा	३.३६.३५
प्रविश्य हृदयं क्षिप्रं	३.१७.४५	प्रशान्तकलुषे लोके शान्ते	१.४६.४७	दसीद देवलोकेश पाहि मां	२.५१.२०	प्रहर्तव्यो न राजाय-	२.५३.४६	प्रह्लादस्स च बाणोर्ध्वं	३.५६.६६
प्रविष्टा वरदा सौम्या	३.६५.१५	प्रशान्तः स वनस्थस्तु	१.३६.१४	प्रसीद धर्मलोपश्च	२.१२७.६१	प्रहर्तुकामो विश्वस्ते	२.२२.७७	प्रह्लादस्य शुभे मूर्धन्या	३.५६.२८
प्रविष्टे तु बिलं कृष्णे	१.३८.४०	प्रशान्तं स्येव दीपस्य	३.३६.४	प्रसीद नाथ भीतास्मि	२.४६.४४	प्रहर्षमतुलं प्राप्ता	२.१२७.११४	प्रह्लादेन स्तुति शतैः	३.६४.१६
प्रविष्टे तु मनो तात	१.१०.२०	प्रश्नभारो महांस्तात	१.४१.१	प्रसीद नाथ भीतास्मि	२.३१.३४	प्रहर्षमतुलं लेभे	२.११७.११	प्रह्लादोऽश्वशिराः कुम्भः	३.७२.४
प्रविष्टो तौ महावीर्यौ	२.५५.६७	प्रसन्नः कल्पयामास	३.३२.५६	प्रसुप्तं बोधयेद्यो मां	२.५७.४५	प्रहर्षमतुलं लेभे	२.११६.१४३	प्रह्लादस्तु महाप्राज्ञः	३.५०.१३
प्रवृत्तचक्रः पापोऽसौ	१.२०.५६	प्रसभं दैवमयोगाद्यदि	२.११८.१६	प्रसुप्तश्चातिविवृते किं	२.३१.४३	प्रहर्षात्फुल्लनयना	२.११६.५६	प्रह्लादस्तु महावीर्यो	३.५३.२२
प्रवृत्तधर्माः संवृत्ता	१.४२.३६	प्रसादजं ह्यस्य विभोर	१.४२.६	प्रसूतस्यासुरेन्द्रस्य	३.६५.१२	प्रहसन्वारयामास	२.१२६.६८	प्रांशुभिश्चैव काण्डैश्च	३.६०.६०
प्रवृत्तं तस्य तच्चक्रम	१.२०.६७	प्रसादनार्थं लोकस्य	१.४१.१२३	प्रसूतिरुभयोर्न प्रसूतश्च	२.७२.५१	प्रहस्य वचनं प्राह	२.१२२.८४	प्रांशोरेकोऽभवत्पुत्रः	१.१०.३१
प्रवृत्तिः पुण्डरीकाक्षे	२.११६.१०	प्रसादं कांक्षमाणाश्च	३.१६.४०	प्रसूतो देवदेवेशो	३.४८.८	प्रहृते प्रहरिष्यामि यथा	२.७०.४५	प्रांशोरेकोऽभवेत्पुत्रः	१.११.१०
प्रवृत्ते चाप्रवृत्ते च	३.२१.५	प्रसादं कुरु मे वीर याचे	२.४६.४७	प्रसूतश्चन्दनरसः कपोल	२.६६.३४	प्रहृष्टमुदितं सर्वमन्तः	२.३३.३२	प्राकारद्वारि संप्राप्तावर्चया	२.५५.७२
प्रवृत्तो युद्धयज्ञस्तु	३.५४.३	प्रसादं ते करिष्यामि	२.२.३०	प्रसूतस्त्रोतचरणां पुञ्जिन	२.११.३३	प्रहृष्टवदनाः सौम्याः	३.१३३.५४	प्राकारपरिखोपेतां गोपुरा	२.५५.१०६
प्रवृत्त्यन्निव शैलेन्द्रस्तोय	२.५३.३६	प्रसादं सागरा जग्मुः	२.१६.६६	प्रसूतमंधुरैर्विक्रियं	२.१२७.६७	प्रहृष्टैश्चैव भीतश्च	२.६.२०	प्राकारवप्रे विन्यस्य	२.६२.१२
प्रवृद्धचक्रो वलवान्	१.२०.४८	प्रसादश्चन्द्रमाश्चैव	३.७१.४८	प्रसृष्टवैरगाधोऽयं प्रश्नैश्च	२.२५.३४	प्रहृष्टे राजसिंहैस्तरवधार्यो	२.५४.४	प्राकारेणा प्रवृद्धेन	३.१३३.५
प्रवृद्धनक्षत्रगणा शारदा	३.३८.२४	प्रसादस्तव गोविन्द	३.७५.७	प्रसेनश्चाथ सत्राजिच्छ	१.३८.१३	प्रहृष्टो ब्राह्मणस्तत्र	२.११३.२६	प्राकारेणार्कवर्णन	२.५८.५३
प्रवृद्धशाखाविटपं	३.६०.२२	प्रसादे ते ध्रुवा लक्ष्मीः	२.१२१.१४४	प्रस्फुरत्परिधास्त्रेण	३.६१.१२	प्रह्लादबलमत्युग्रं	३.५६.७८	प्राकारेणार्कवर्णन	२.६८.१२
प्रवेशयामास ततो जठरं	३.१०.६८	प्रसाद्य तु ततो रामो	१.३६.२६	प्रस्रवन्ति घना रक्तं	२.२३.३२	प्रह्लादम्या तिवीर्यस्य	३.५६.२६	प्राक्संख्या परिघग्रस्ता	२.२३.२८
प्रवेशयैनां भवनं पूज्यां	२.१०८.२६	प्रसाद्यमाना भर्त्रा सा	१.२४.६	प्रस्रवन्ती रणे रक्तं	३.५५.७६	प्रह्लादशम्बरमयैरनु	३.६५.३	प्रागेव च नरेन्द्रेण माथुरे	२.२४.५
प्रवेशस्तत्र देवानां नास्ति	२.६१.५४	प्रसिद्धाकाश गमनः शक्रु	२.६१.३०	प्रस्वापनं प्रमथनं	३.४४.१५	प्रह्लादस्तु महावीर्यः	३.५६.५१	प्रागेव वसुदेवस्तु व्रजे	२.५.१

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

६६

प्राग्ज्योतिषपुरं चैव	३.४६.६५	प्राणीः प्रियतरो नित्यं	२.११६.८२	प्रादुर्भावेषु सर्वेषु भार्या	२.८१.१६	प्राप्ते दिनव्युपरमे	२.२५.१०	प्रावृट्प्रवृतिं संदश्य	२.१०.२१
प्राग्वंशकायो द्युति	३.३४.३६	प्राणोऽपानः समानश्च	१.४०.५७	प्रादुश्चक्रे महारोद्रमस्त्रं	२.१२६.६२	प्राप्ते राजसमाजे तु	२.४७.२६	प्रावृषो वर्णनंचापि	३.१३४.११
प्राग्वंशं श्रोतुमिच्छामि	३.१६.१	प्रातः प्रविश्य राजेन्द्र	३.११०.१६	प्राद्युस्मिन्व्यहनच्चापि	२.११६.१०७	प्राप्तोऽन्तकालो लोकानां	२.१८.२०	प्रासादं चैव हेमामं	२.६८.४१
प्राङ्मुखश्चापि दैत्येशस्त	३.६१.२५	प्रातरेव जगामाशु	३.११३.२८	प्राद्युस्मिन् वचनं प्राह	२.११६.३५	प्राप्तोऽयं पुण्डरीकाक्षो	२.१२७.११८	प्रासादवरसंपन्नैर्युक्तं	२.६८.४०
प्राङ्मुखश्चारुनिर्मुक्तो मेरु	२.२६.१४	प्रादाच्च तस्मै भगवान्	१.१४.२७	प्राप्ते सलिलसंयुक्ता	२.११८.८३	प्राप्नुवन्ति नरा योगं	१.१६.१५	प्रासैः पार्श्वे खड्गैश्च	१.४३.२८
प्राङ्मुखैश्चारुनिर्मुक्तैर्मलिय	२.२६.३	प्रादात्कन्यां शुक्रस्तस्मै	१.२३.६	प्रापयिष्यामि तत्सर्वं	२.६४.१७	प्राप्यते यदिहास्माभि-	२.१२७.१३२	प्रासैः पार्श्वे वितर्त	१.४३.११
प्राङ्मुखैस्सिच्यमानैश्च	२.६.२७	प्रादाय कुण्डले दिव्ये	२.६४.५२	प्राप्तमालोक्य पात्रोऽयमिति	२.५०.२६	प्राप्य पुण्यतमाल्लोका	२.६४.५०	प्रासैः पार्श्वे तथा	३.४४.१६
प्राचीनवर्हिर्भगवान्	१.२.३०	प्रादुरासन्सहस्राणि	२.१२६.५६	प्राप्तयौवनदेहस्तु युक्तो	२.३३.२	प्राप्य संजां ततो दैत्यः	२.१२३.१३	प्राहं वाक्यं स वाक्यज्ञो	२.१२१.२५
प्राचीनाग्राः कुशास्तस्य	१.२.३१	प्रादुरासीन्महाधोरा	३.५५.१०५	प्राप्तयौवनदेहस्तु युक्तो	२.३४.२	प्राप्यादित्यालयं शक्रः	३.६६.३	प्राहिणोत्सहसा तस्य	३.५७.३४
प्राचीनामलका लोघ्रा	३.४१.६६	प्रादुर्भावं क्षयं चैव	३.१८.३२	प्राप्तयौवनदेहस्तु युक्तो	२.३७.२	प्राप्यावभृथमव्यग्रः सर्वं	१.२५.२८	प्रियकैः पुष्पितैर्गौरं	२.१६.१४
प्राचीं दिशमथो गत्वा	३.३५.५	प्रादुर्भवति संजाते	३.१६.५४	प्राप्तदारो महातेजा	२.६५.४	प्रायश्चित्तार्थतत्त्वज्ञा	१.१७.२८	प्रियङ्गुपाटलीवृक्षाः	३.४१.६५
प्राचेतसं ततो दक्षं	३.३२.३	प्रादुर्भावः पुराणेषु	३.३३.१	प्राप्तयौवनदेहस्तु	२.१०६.२८	प्रायश्चित्तक्रियार्थं ते	१.१७.२६	प्रियं प्रोवाच वचनं	२.१०४.२३
प्राच्छादयेतामन्योन्यं	३.५५.१२०	प्रादुर्भावं गतो देवो जगतो	२.७१.२६	प्राप्तवन्तश्च दृश्यन्ते	३.५५.६१	प्रायश्चित्तं चरध्वं	१.१७.२५	प्रिय मिच्छसि चेत्कतुं	२.६८.४
प्राच्यैश्च दाक्षिणात्यैश्च	२.३५.१०८	प्रादुर्भावं पुरस्कृत्य	३.७.१०	प्राप्तवानस्मि यां प्रीति	२.४०.३३	प्रायश्चित्तानि घर्मज्ञा	१.१७.२७	प्रिय संगमनं नाम तं	२.७५.३१
प्राज्ञानां वचनं काले	१.२०.६४	प्रादुर्भावसहस्राणि	१.४१.११	प्राप्ता किलेयं हि गवां	२.१६.१३	प्रायेण जितमित्येव	३.८१.१८	प्रियहास्याः प्रियक्रोधाः	२.१०६.६१
प्राणयोनिस्तु भूताना	२.५८.६८	प्रादुर्भावान्पुराणेषु	१.४०.१	प्राप्ता निमेषमात्रेण	२.१२२.४६	प्रावततं नदी घोरा	३.५६.६	प्रियाभिः सह मोदन्ते	३.८४.१३
प्राणस्त्वं सर्वभूतानां	३.१३१.६	प्रादुर्भावैश्च वक्ष्यामि	१.४१.१५	प्राप्ता मां सागरे पूर्वं	२.४६.४६	प्रावततं युधि श्रीमान्	३.५७.१६	प्रियार्थं वासुदेवस्य	२.७४.३
प्राणानपि तयो राजा	३.११२.८	प्रादुर्भावे मुनिश्रेष्ठ मायुरे	२.६५.१	प्राप्ता रिष्टमिवात्मानं	२.२२.६	प्रावततं यश्च संग्रामं	२.१२२.२६	प्रियार्थं मुमया साक्षात्परि	२.६८.१८
प्राणिनामुपभोगार्थं मंतः	३.८८.३०	प्रादुर्भावेषु तं भूतं	३.३३.४३	प्राप्ता वयं तत्कालमनया	३.३.२	प्रावततं यन्ति ते वर्णानाश्रमां	१.७.५५	प्रीतः शंखमुपाध्मासीध	२.६६.६
प्राणिप्रहारेणैकेन	३.४१.१६	प्रादुर्भावेषु सर्वेषु स्वशरीर	२.७०.३६	प्राप्तास्मो विधवाशब्दं	२.३१.३२	प्राविशन्त ततो गावो	२.१८.५६	प्रीतः सुमनसा कृष्णो	२.२७.२२

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

१००

प्रीताऽऽत्मा दास्यति	१.२२.३५	प्रेषितं देवराजेन दिव्या	२.५५.५०	फ	बद्धेन्द्रं सहसा मध्ये	३.२६.३	बभूवः परमोपेता	२.६६.६	
प्रीताश्च पितरो ये स्म	१.१६.५	प्रेषितं वज्रनाभस्य शाखा	२.६३.१४	फलत्वात्सीं दमाना च	३.१६.२०	वन्दिभिः स्तूयमानं च	२.५५.५७	बभूवुर्वार्मिकाः सर्वे	१.११.२६
प्रीताश्चैव वयं वीर यस्वं	२.४६.८	प्रेषितो बहुभिस्सार्द्धं जरा	२.५३.१८	फलं जित्वेह भोक्तव्यं	२.८५.५	बन्धनस्थो विमुच्येयं	२.१२०.३५	बभूवुस्तु यदोः पुत्रा	१.३३.१
प्रीतास्मि तव भद्रं	३.६५.१०	प्रेषयन्तां शिल्पमुख्यानां	२.५८.१०	फलानां चैव सर्वेषां	२.७६.२७	बन्धुजीवाभिताम्रासु	२.१६.३४	बभो वल्गुजनाकीर्णं	३.१३३.१५
प्रीतिप्रमाणानि हि	२.८६.८७	प्रेष्याजनं स संज्ञाय	२.६६.१३	फलानि तैः प्रयुक्तानि	३.२३.१३	वबन्ध हरदत्तैः पाशै	२.८४.६२	बभो तस्य निविष्टस्य	२.४२.१३
प्रीतिमानभवद्राजा यया	१.३०.२२	प्रोक्षितान्खल्विमागमन्ये	२.३५.११	फलानि वाथ पुष्पाणि	२.७६.६५	वभञ्ज कानते वृक्षान	२.८६.२२	बभो तस्य निविष्टस्य	२.३५.२६
प्रीतिमानस्तु मे विष्णु	३.११४.२८	प्रोक्षितान्खल्विमान्मयेमृत्यु	२.४१.६०	फले फलान्य जायन्त	३.४६.१८	वभञ्जर्वाहुभिर्गह्विन्द्रन्द-	३.३८.२५	बभो दैत्यो महाबाहु	३.५७.३६
प्रीतिवाक्यानि हृद्यानि	२.६६.२२	प्रोचुर्विश्वेश्वरं विष्णु	३.१३१.३	फलैः परिणतैः सौम्यै	२.८०.१३	वभञ्जार्जुनवृक्षौ द्वौ	२.१०१.३५	बभोरैवतक शैलो	२.६८.१४
प्रीतिसंघानकालोऽयमिति	२.५०.५३	प्रोद्यद्भास्करवर्णमिं	३.११४.३५	फलैः प्रवालेश्च वनमिद्र	२.१६.४०	वभञ्जिरे च युपाग्रान्	३.३२.१८	बभ्राजुरधिकं गोपाः	२.१७.३६
प्रीतो वरान्वै शतशो	१.२६.५६	प्रोवाच देवी वाणोऽयं	२.१२६.१२२	फेनात्तु सुतपा जज्ञे	१.३१.३२	वभञ्जिरे रथान् केचित्	१.४७.३२	बभ्रु दानपतिं चैव कृत	२.२२.१०
प्रीतोऽस्मि तव भक्तस्य	१.४१.४८	प्रोवाच परमक्रुद्धो	२.१२२.८६	ब		वभाषे स तु ताम्राक्ष	२.४३.५६	बभ्रु वक्त्रश्चक्षुर्हीनो	१.२०.६१
प्रीतोऽस्मि तव भक्तस्य	३.४१.१०	प्रोवाच प्रणयात्कान्तिर्बद्धा	२.४१.२६	बदरी चैव विख्याता	२.१०६.३८	वभासे नभसो मध्ये	३.१३३.६	बभ्रु श्रेष्ठौ मनुष्याणां	१.३७.१४
प्रीतोऽस्मि दर्शनादेव	२.१६.६३	प्रोवाच बाणं समरे	२.१२६.१२३	बदरीफलमात्र वै	१.२८.२५	वभूक्तुरभिक्रुद्धौ	३.५६.६२	बभ्रोश्च प्रियमन्विच्छन्	२.१०२.१६
प्रीतोऽस्मि वः सुरश्रेष्ठाः	३.६८.४	प्रोवाच भगवानरुद्रः	३.८८.२	बदरीफलसंपूर्णा	३.७३.४१	वभूव तुसुलः शब्दः	३.५६.८७	वर्षाणां स सहस्र तु	२.८२.२६
प्रीती स्वस्तव युद्धेन	१.५२.२५	प्रोवाच वचनं काले	२.७३.२७	बद्धगोधाङ्गुलित्राणा	२.८४.२	वभूव माधवसुतस्सत्त्वतो	२.३८.३७	वर्हेकेतुः सुकेतुश्च	१.१४.२६
प्रीत्या विसृज्य गोविन्दं	२.५७.६६	प्रोवाच वचनं किञ्चित	२.१२३.३०	बद्धगोधाङ्गुलित्रैश्च	२.११६.१३५	वभूव मृगयाशीलः	१.३२.५०	वर्हिणः सुकेतुश्च	२.११६.२४
प्रीयते पठतश्चास्य	३.७२.१०७	प्लक्षतीर्थे पुष्कारिण्यां	१.२६.३२	बद्धा च रौक्मिणोऽथ	२.८४.६३	वभूव येन विक्रम्य	१.२०.४५	वर्हिणां चैव विरुतं	२.२८.६१
प्रीयन्ते पितरस्तस्य	१.४१.१७३	प्लवंगम षोडशपक्षशायी	२.६५.२३	बद्धा तथा दानवमुग्र पौरुषं	३.८२.७	वभूव राजाथ वमुश्च	२.६६.३५	वलतश्च क्रियातश्च	२.३०.१६
प्रेक्षागारस्स कंसस्य	२.२६.१५	प्लवमानानि विप्राय ततो	२.८०.२०	बद्ध्वा बलि महावीर्यं	२.५५.६१	वभूव सुमहानादः	३.५८.८२	वलदेवं ततो रुक्मी मया	२.६१.४१
प्रेतभक्षाः प्रेतवाहा	३.८६.६	प्लुतवल्गित पादस्तु	२.२४.३०	बद्ध्वा ललाटे हिमचन्द्र-	२.६५.५३	वभूवादार्शनस्सूर्यो भूमि	२.१०.४	वलदेवस्तु धमतिमा	३.१२४.१

बलदेवस्य तं क्रोधवर्धयन्ती	२.६१.४३	बलश्च बलकश्चैव	३.५४.१२	बलिर्होमाश्च बद्धन्ते	३.२४.१	बहवः क्षत्रियाः शूरा मां	१.५२.५६	बहुवर्णधराश्चित्रा	३.३४.७
बलदेवस्य माहात्म्यमेतत्तो	२.६२.१६	बलश्चाप्यसुरश्रेष्ठः	३.५४.५८	बलिस्तानभिषिच्येह	१.३१.४०	बहवश्चैव राजानः	२.६२.६	बहूनां स्त्रीसहस्राणामष्टौ	२.१०३.१
बलदेवाह्निकं पुण्यं	३.१३४.२२	बलश्चायं हलं घोरं	२.३६.७८	बलिस्तु राजा द्युतिमान्	३.५४.६	बहवो ज्ञातयश्चैव यदूनां	२.५७.३१	बहूनि चापि दामानि	३.१३०.८
बलदेवेति नामास्य देवै	२.१४.५८	बलस्तु मधुपिङ्गक्षो	३.५३.१८	बलिस्तु सह शक्रेण	३.५३.२५	बहवो व्याधयो युद्धे	३.५६.८१	बहूनि प्रतिलोमानि पुरा	२.७०.१४
बलदेवेन धर्मेण नेत्यु	२.६१.४०	बलाकमाला कुलमाल्य-	२.६५.२०	बलेन चतुरङ्गेण	३.२६.१८	बहिः प्रक्षालनं कुर्वन्	३.८०.७७	बहूनि विप्रगोत्राणि मुनीनां	१.४५.२८
बलदेवेन रक्षार्थं	२.१०६.२	बलाग्रेण नियुक्तेन	२.४७.१४	बलेन च पराध्वेनयशसा	२.१७.६	बहुजन्मनिरुद्धात्मा	३.११.१३	बहून्याश्चर्यभूतानि	२.११५.४
बलदेवो धनुश्चास्य	२.३५.८६	बलान्यथ विचक्रस्य	३.१०३.६	बलेन व्रपुषा चैव बाल्येन	२.१७.६	बहुतापः पुनर्भूत्वा	३.२८.२७	बह्व्यसन्त्यस्य कन्याश्च	२.८३.११
बलदेवो धनुश्चास्य	२.३५.६०	बलासूर्यमुखाश्चैव	३.४५.२	बलेनायं हतो दैत्यो	२.१४.५७	बहुत्वादूढपादश्च	३.१४.७	बाठं सुतो मे प्रवरी	३.१३.२८
बलदेवोऽपि धमात्मर्मा	२.३०.६२	बलाहकाञ्जननिभं	१.४२.२१	बलेः पुत्रशतं त्वासी	१.३.७५	बहुत्वाद्विप्रभावानां	३.१७.१६	बाढमित्येव सह तद्दुर्दिना-	१.५२.१
बलधान्त्स तु दैतेयो	३.२६.१	बलिनं रूपसंपन्नं	३.७३.२१	बले पुत्रेण बाणेन	२.१२१.१०३	बहुनात्र किमुक्तेन	१.७०.१६	बाढमित्येव हूर्यश्वः प्रति	२.३७.३७
बलभद्रस्तथा मत्तः	३.११३.१४	बलिनस्सन्निक्नुष्टे तु न	२.३६.८	बलेः पुत्रो महावीरो	२.११७.३६	बहुनात्र किमुक्तेन	३.१११.७०	बाढमेवं प्रवक्ष्यामि	२.६८.१२
बलभद्रोऽथ हंसेन	३.१२३.२	बलिना कालकल्पेन	३.५५.५६	बलेर्बलवतो पुत्रो	२.११६.५	बहुभिः शस्त्रनिस्त्रिशं	३.३८.३१	बाण किं गर्ज्जसं	२.१२६.४६
बलं च बाल्ये क्रीडा	२.२०.६	बलिना तु सुराः	३.६४.१	बलेर्बलवतो यज्ञे बलिना	१.४१.८०	बहुभिः सह गन्धर्वैः	३.६६.१०	बाणः क्रोधात्प्रजज्वाल	२.११६.१३१
बलं चापूजयद्देवः	२.१२७.१००	बलिना दैत्यमुख्येन	३.६६.४७	बलेर्बलवतो यज्ञे	३.४८.२	बहुमानो पमान्यासु	२.६६.४२	बाणखङ्गधनुष्पाणिः	३.५७.४५
बलं जयस्व दैत्यानां	२.४१.१७	बलिपुत्रो रणश्लाघी	२.११६.६	बलेः सुतो ब्राह्मणेभ्य	२.१२४.५२	बहुयाचनको लोको	३.३.२६	बाणं त्रायस्व देव त्वं	२.१२६.१०८
बलं तदवशेषं तु	३.५८.५०	बलिं वैरोचनिं चैव बद्धा	२.४६.३६	बलेः सुतो महावीर्यो	२.११५.१२	बहुयोजनविस्तीर्णं समुद्रं	२.८८.७७	बाणः प्रीतमनास्त्वेवं	२.११६.७४
बलं संमर्दभग्नं च कृष्य	२.३८.६१	बलिद्विजेभ्यः प्रयतः	३.५१.८६	बलेस्तु वचनं श्रुत्वा	३.७२.६४	बहुरत्नं समाकीर्णा	२.१०२.३३	बाण बाण प्रनृत्यस्वं	२.१२६.१४५
बलं हि रागद्वेषाभ्यां	३.२३.४६	बलिर्विरोचन सुतो बाण	३.३६.३६	बलोन्मत्तोऽथ बाणोऽसौ	२.१२५.६	बहुरूपा विरूपा च अनेक	२.३.५	बाणसंरक्षणपरा हन्मि	२.१२६.११४
बलयश्चोपकल्पयन्तां	२.२८.१४	बलिर्विष्णुपराक्रान्तो	२.११६.४४	बल्लवौ वस्त्रसंवीतो	२.२६.२२	बहुलानि च सैन्यानि हन्तुं	२.५५.६६	बाण संरक्षणं कर्तुं	२.१२४.१६
बलवान्मदलोलःक्षश्चपलः	२.२८.३१	बलिर्वैरोचनस्तत्र	३.४२.१०	बस्ति शीघ्रं कटीदेशं	३.१७.५२	बहुवर्णैः सुधूमौघैरिन्द्रा	३.१८.६	बाणः समरसविग्न	२.१२६.८३

वाणस्य चेन्द्रदमनो	१.३.७८	बालाविभौ सुचपला	२.२८.२४	बाहुयुद्धमिदं रङ्गे	२.३०.१२	बुधस्य तु महाराज	१.२६.१	ब्रह्म च ब्रह्मणाश्चैव	२.११४.१८
वाणस्य ब्रुवतः क्रोधाद्ध	२.११६.१४६	बालिशा बत यूयं वै	१.३.१७	बाहूनामुत्तमाङ्गानां	३.५६.६	बुधेन तात दान्तेम नित्य	२.२३.१३	ब्रह्मचर्याद्ब्राह्मणस्य	१.४५.३७
वाणस्यास्याभयं दत्तं	२.१२६.१३८	बालेया ब्राह्मणाश्चैव	१.३१.३५	बाहोर्व्यसनिनस्तात	१.१४.३	बुधेन पश्चिमा संध्या	२.२३.२६	ब्रह्मचर्येण मौनेन	३.६७.२५
वाणस्योत्तमशर्वस्य	२.१२७.७	बालोऽयं मम पुत्रेति	२.७०.३६	बाह्यतो ववूषे	३.४५.२५	बुभुक्षा वा पिपासा वा	२.६५.२६	ब्रह्मचर्ये स्थितं धैर्यं	१.४५.३८
वाणानीकानि सहसा	२.१२२.४६	बालो वा यदि वा वृद्धो	२.३०.१५	बाह्लिकस्य सुतश्चैव	१.३२.१०८	बुभुक्षितः श्रमार्तश्च	३.१२६.२४	ब्रह्मणस्तदहः प्रोक्तं	१.८.२१
वाणेन मायामास्थाय	२.१२१.८५	बाल्यात्प्रभृति यो	३.७४.८	विधिविहितमशक्य	३.६.४	बृद्धर्भः सुतस्तस्य	१.३१.५२	ब्रह्मणस्तु सुता देवा	१.७.७२
वाणेनमायामास्थाय	२.१२१.८७	बाल्यात् प्रभृति रामेण	२.११०.२	विभर्ति हृदये या	२.११६.३६	बृहति चारुसर्वाङ्गी तन्वी	२.५६.३६	ब्रह्मणा देवदेवेन साद्धं	१.४६.१
वाणेन सार्धं समयो	२.१२७.८८	बाल्याद्वा यदि वा	१.६.२७	विभिदुश्चैव बाणैस्ते	३.३२.१६	बृहत्कीर्तिर्महाजिह्वः	१.४१.८३	ब्रह्मणा विहितं दिव्यं	२.१२६.५८
वाणे संयोजयाशु	२.१२६.८७	बाल्ये केलिकिलस्सर्वो	२.५.१०	विभृस्व च त्वं कमलो	२.८६.३६	बृहत्क्षत्रस्य दायादः	१.२०.१६	ब्रह्मणा वेदविद्वांसः	३.१७.४१
बाणैर्बाणाश्च चिच्छेद	२.६०.१६	बाह्वो विदिशश्चास्य	३.७१.४७	विभेद केशिनं शक्त्या	३.५८.७७	बृहत्त्वाद्वृहणात्वाच्च	३.८८.४६	ब्रह्मणश्चिन्तयानस्य	३.१८.४
बाणैश्च भिन्नममणो	३.१३३.४१	बाहुघ्राणेन शूराणां	२.३०.३६	विल्वा मृतफलैर्नित्यं	२.७८.३०	बृहद्गुंस्य भल्लेन	२.५६.६०	ब्रह्मणा सह पुत्रेण सपौत्रेण	२.६६.४७
बाणो ध्वजं समाश्रित्य	२.११६.१७८	बाहुदण्डेन कृष्णस्य	२.१८.४६	विल्वोदकेश्वरं देवं	२.८४.५६	बृहद्धर्मति विख्यातो	१.२०.१६	ब्रह्मणोक्तस्तदा भूयः	३.१४.१२
बाधन्ते वृषभा गाश्च	२.८७.३१	बाहुना कृत्तदेहस्य केशिनो	२.२४.४८	विल्वोदकेश्वरस्याथ	२.८५.७१	बृहद्धर्मति महात्मानं	२.७२.१७	ब्रह्मणो नियतं कर्म	३.१७.१७
बान्धवानामपि तथा भेद	२.२२.६६	बाहुप्रहरणी तौ तु चेतुस्तत्र	२.४३.२	विल्वोदकेश्वरेणाहमाज्ञप्तः	२.८४.५३	बृहत्स्पतिरुत्तमश्च	२.१०६.८७	ब्रह्मणोऽपि गरीयांसं	३.६१.३०
बान्धवानसगुणानिच्छेदे	२.८१.१	बाहुभिः परिघाकारै	३.५८.६६	विल्वोदकेश्वरो देवः प्राह	२.८४.५८	बृहत्स्पतिर्महातेजाः पात्रं	१.६.२१	ब्रह्मणो वरदानेन	३.६६.४६
बान्धवा निहता येषां	२.५६.५३	बाहुभिर्बहुधा वीरान्समन्ता	२.३५.८७	विल्वोदकेश्वरो नाम	२.७४.४०	बृहत्स्पतिवचः श्रुत्वा सर्वे	२.८६.३८	ब्रह्मणोऽहस्तु विस्तारं	३.१५.१२
बाराहः पर्वतो नाम	३.३६.२	बाहुभिर्मुष्टिभिश्चैव	३.५७.२८	बीजानामा कृति	३.४.३६	बृहत्स्पतिस्त्वेवमुक्त्वा	२.७२.२०	ब्रह्मण्यदेवः सर्वात्मा	२.७१.२८
बाल भावेन पुत्रेण चालितं	२.५१.४	बाहुभिः शस्त्रनिस्त्रिशी	१.४७.४४	बुद्धिप्रियाय बुद्धाय	३.६०.२५	बृहत्स्पतेः स वै भार्या	१.२५.३०	ब्रह्मतीर्थं रामतीर्थं	२.१०६.४२
बाला मतिमतां	३.६६.७०	बाहुभिः समसज्जेतामायसैः	३.५४.७८	बुद्ध्या प्रत्यक्षधर्माणो	१.७.५४	बृहत्स्पतेस्तु भगिनी	१.३.४५	ब्रह्मतेजोमय दिव्यं	२.११४.६
बालां व्रतवतीं कन्या	२.६०.७०	बाहुभिस्तुलयन् व्योम	१.४६.५३	बुध इत्यकरोन्नाम	१.२५.४५	ब्रह्मघोषेण महता	३.२३.२६	ब्रह्मतेजोमयो युक्तः	३.१७.४६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१०३

ब्रह्मदण्डी इति ख्यातो	३.२६.५	ब्रह्मसूत्रोद्यतकारः स्वपन्नेव	१.५०.१२	ब्रह्माणमम्यधावन्त	३.१३३.२०	ब्राह्मणैर्म्यो ददौ वित्तं	२.५४.८	भक्तौदवेन्धनैः क्षीणाः	२.४२.४७
ब्रह्मदत्त प्रभाते त्वं	१.२४.१४	ब्रह्मयज्ञं तु यजते	३.१६.६	ब्रह्माण्डक्षोभणो राजन्	३.६६.१३	ब्राह्मणैर्ब्रह्मविद्भिश्च	३.१६.२३	भक्षयन्तः प्रवर्तन्ते	३.६६.४
ब्रह्मदत्तं महीपालं	३.११३.३	ब्रह्मयोगेन योगज्ञः	३.२०.५	ब्रह्मा ततो जगामाथ	२.७४.११	ब्राह्मणैश्च महाभागै	३.६६.२१	भक्षयन्तोऽथ पिशितं	३.७८.१६
ब्रह्मदत्तसुतार्थं च रत्नानि	२.८३.४३	ब्रह्मयोनी प्रसूतस्य	१.४५.३३	ब्रह्मा त्वं सृष्टिकाले	२.८८.३१	ब्राह्मणो नाभिहन्त	२.७३.३७	भक्षयन्नपरान्वृणोन्	३.१२६.११
ब्रह्मदत्तस्य तनयः स	१.२४.१	ब्रह्मरूपं शुभं शांतमक्षरं	३.१०७.१४	ब्रह्मा देवगणाश्चान्ये	२.७१.१६	ब्राह्मणो ब्राह्मणत्वाच्च	३.१०.७	भक्षयन्मांसपिटकं	३.८१.७
ब्रह्मदत्तस्य भार्या तु	१.२३.२५	ब्रह्मर्षयश्चैव नहर्षयश्च	३.५२.२५	ब्रह्मासृज्यो भुवन्तोत्तमोत्तमं	२.७२.४३	ब्राह्मणोर्तस्वरं कृत्वा	२.११२.१२	भक्षयामास सहसा	३.१२६.१०
ब्रह्मदत्तस्य राजेन्द्र	१.२०.१४०	ब्रह्मवादिन्यथो दीक्षा	२.३.१६	ब्रह्मास्त्रमथ कौवेरमासुरं	३.१२७.४४	ब्राह्मण्यभावा नश्यन्ति	३.८.१३	भक्षयित्वा ततो देशात्	३.११०.३
ब्रह्मदत्तेति विख्यातो विप्रो	२.८३.२	ब्रह्मवादी पराक्रान्तः	१.२६.२	ब्राह्मणं चक्षुषा पश्यन्	३.१०६.३	ब्राह्मण्याः सूतिकालोऽद्य	२.१११.१२	भक्ष्यं भोज्यं च पेयं च	२.८६.५६
ब्रह्मदत्तेन यत्प्राप्तं	१.२१.२	ब्रह्मवृद्धो वयोवृद्ध	३.२३.२०	ब्राह्मणः सर्वथा पूज्यो	३.८३.११	ब्राह्मीं मूर्ति समाधाय	३.२८.१५	भक्ष्यभोज्यानि पेयानि	२.८८.५५
ब्रह्मदत्तो नरपतिः किवीर्यः	१.२०.७	ब्रह्मशापाभिभूता सा	१.२६.१३	ब्राह्मणस्तपसा सिद्धो	२.७३.३२	ब्राह्मेण विप्रान्वसति	३.२६.२६	भक्ष्यमाणाः किलाङ्गेषु	२.५७.३७
ब्रह्मदत्तोऽभवद्राजा	१.२०.३	ब्रह्मसम्बन्ध संबद्ध	३.१६.२	ब्राह्मणस्यापि दानव्यं	२.७६.२२	ब्राह्मे तपसि युक्तानां	२.१६.३४	भक्ष्यमांसैश्च पेयैश्च	३.१३२.८०
ब्रह्मदत्तो महाभागो	१.२०.१२	ब्रह्मसूत्रपदां वाणीं	३.११८.१५	ब्राह्मणाः क्षत्रियाश्चैव	१.२६.८	ब्राह्मे दिवसपर्यन्ते कल्पो	१.८.२३	भगदत्तो महासेन	२.५६.८
ब्रह्मदत्तो महीपालो	३.१२७.२८	ब्रह्महत्याविनाशार्थं	३.७६.२३	ब्राह्मणानां प्रभावैश्च	३.१५.४	ब्रुवतां वश्रुत वाक्य हेतु	२.३६.५	भगः प्रस्फुरमाणोऽष्ट	२.५५.११७
ब्रह्मदेवः पशुपति	३.४३.१२	ब्रह्महा भ्रूणहा गोघ्नः	३.१३५.१६	ब्राह्मणानां विनीतानां	३.१७.६६	ब्रुवत्येवं यथातत्त्वं गोप	२.४६.२०	भगवन्किं मया कार्यं	२.५८.६१
ब्रह्मन्कृशोऽहं विमना	१.२८.२६	ब्रह्माणं कपिलं चैव	३.३६.१४	ब्राह्मणार्थं मदर्थं च कुरु	२.११३.७	ब्रूहि नारद तत्त्वार्थं	२.११०.२६	भगवन्केन विधिना	३.१३२.१
ब्रह्मन् खिले वर्तमाने	३.३०.१	ब्रह्माणं चाब्रवीद्रुद्रो	२.१२५.२१	ब्राह्मणा वेदविद्वांसो	३.३१.६	ब्रूहि मर्त्यं यथातत्त्वं	३.८०.६	भगवञ्छ्रोतुमिच्छामि	२.५७.१
ब्रह्म पर्यन्चरत्क्षत्रं विशः	१.४१.१४५	ब्रह्माणं परमं वक्त्राद्	३.१०.६	ब्राह्मणाः शुचयो दांता	३.१६.१६	भक्तप्रियाय भक्ताय	३.८७.२२	भगवन् जामदग्निं त्वाम	२.३६.२८
ब्रह्मभावे च तं विद्धि	३.१६.११	ब्रह्माणं वीक्ष्य ते सर्वे	३.६६.४५	ब्राह्मणाः स्तोत्रसंसिद्धा	३.२२.१३	भक्तिनम्रो महात्मानो	३.१०२.१५	भगवन् ह्रियतामस्या	१.५३.२
ब्रह्मभ्यां सहितः सोऽथ	३.१४.१७	ब्रह्माणमग्रतः कृत्वा	१.८.३०	ब्राह्मणीन्द्राणि रुद्राणि	२.१२०.४४	भक्तिनमनां वयं विष्णो	३.८३.५	भगवन्नद्भुतमिदं निवृत्तं	१.४५.६७
ब्रह्मलोके च किं स्थानं	१.४६.३	ब्रह्माणमग्रतः कृत्वा	३.३३.१८	ब्राह्मणेन विनीतेन	३.१७.६०	भक्त्या प्रीतोऽस्मि	३.८३.१३	भगवन्नयस्तशस्त्रो	१.११.४२

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१०४

भगवन् यदि तुष्टस्त्वं	१.२६.२५	भजमानस्य संजय्यो	१.३७.३	भर्ता तु मम यद्येष	२.११८.३४	भवनाकारवितपं लता पुष्प	२.११.२१	भवानपि च सर्वेषां	३.२२२
भगवन् श्रूयतां वाक्यं	२.११६.६	भजासनं द्विजश्रेष्ठ	२.६६.३८	भरापहं धर्मभरावहं च	२.८६.७७	भवनाशमयं देवः	३.८६.११	भवानिन्द्रश्च घाता च	३.६४.३
भगवन् सन्निकर्षं ते	२.११६.१२	भज्यमानेष्वनीकेषु	२.१२२.७१	भर्ता देवः सदा स्त्रीणां	२.७८.१५	भवन्तं शरणं प्राप्यं देवानां	२.५१.२२	भवानी तत्र मे देव	३.८८.७
भगवन् सर्वभूतेश	२.११४.१७	भद्रकारो भद्रविन्दः	२.१०३.११	भर्तारं पतितं हृष्ट्वा	२.३१.१	भवन्तं शरणं प्राप्य नाति	२.५१.२४	भवात्काम प्रदश्चैव	२.१२१.१२७
भगवन् सानुरक्ता च	२.११६.८८	भद्रप्रियाय भद्राथ	३.८७.३२	भर्तुराज्ञां समालभ्य तथा	२.६३.३	भवन्तमाश्रिताः कृष्ण	२.१२१.२१	भवान्प्रभवते तस्य	३.६६.४८
भगवंस्त्वत्प्रसादेन वेगात्	१.५३.३०	भद्रं ते संतरिष्यामो	२.३६.५६	भर्तुश्छन्देन कर्तव्यं	२.७८.१२	भवन्तमुपरुद्धानां देवत्वं	२.५०.८४	भवान्ब्रह्मा च रुद्रश्च	३.४७.२६
भगवानपि गोविन्द	३.११३.२	भद्रश्रेष्ठस्य पुत्राणां	१.३२.२७	भर्तुश्छन्देन नारीणां	२.६६.५४	भवन्तस्सर्वकार्यज्ञा वेदेषु	२.२२.१२	भवान् सर्वत्र कुशलः	३.६२.५
भगवानपि गोविन्द	३.१२०.१८	भद्रश्रेष्ठस्य पुत्रेण	१.२६.७१	भर्तुरुपेण नातुष्यद्रूप	१.६.३	भवन्ति सुभगाश्चार्यास्त	२.७६.३४	भवान्सुरगणान् सर्वान्	२.१२१.११०
भगवानपि तेनैव रूपेणा	२.१७.२५	भद्रश्रेष्ठस्य पुत्री वै	१.२६.६६	भर्तुलोकान्नजत्येव	२.८१.११	भवन्तो भ्रातरोऽस्माकं	२.६१.३७	भविता बाण युद्धं वै	२.११६.३१
भगवान् सर्वभूतानां स्वयं	१.४१.६१	भद्रश्रेष्ठस्य पूर्वं तु पुरी	१.३२.२६	भवकाले भवत्येष लोकानां	१.५०.२२	भवन्तो हि यथाकामं	२.१.२६	भविता सर्वमेतत्ते	२.१२६.१६२
भगवान्सर्वभूतानां	३.४१.२३	भद्रश्रेष्ठस्य पूर्वं तु पुरी	१.२६.३३	भवतां पुण्यकीर्तिनां	२.१०१.१	भवन्तो निभयौ भूत्वा	३.११६.६	भविता सहितेभर्ता	२.११८.३०
भगवन् स्वयंभीर्ममप्रमेथं	३.५५.१२१	भयं त्यजध्वममराह्यभय	१.४१.७३	भवतां साधुवृत्तानामावाधं	२.५२.४०	भवन्तो मम विख्यातौ	२.२८.२०	भवित्री द्वापरं प्राप्य	१.१८.५०
भगिनि बलदेवस्य रजनी	२.३.१०	भयात्तस्यासुरेन्द्रस्य	३.५५.२३	भवता रक्षणं कार्यं	१.११.२८	भवं प्रसादयामास	२.११७.७	भविष्यति च वः	३.६७.२
भगिन्यौ पृच्छ भद्रं ते	२.६६.३२	भयात्तस्योरगपतेनयिं	२.११.५२	भवता रक्षितो गावो	२.१६.४१	भवस्य पार्वदा दिव्या	२.११७.८	भविष्यति च विस्तीर्णा	२.५८.३३
भगीरथसुतो राजा श्रुत	१.१५.१७	भयात्पतगराजस्य सुपर्ण	२.११.५१	भवतोरपि युद्धे तु प्रवृत्ते	२.३६.७१	भवस्य पेयोऽप्यथ चेष्ट पेयो	२.८६.३५	भविष्यति तदा तेषां	३.४.४१
भग्नं बलं ततो हृष्ट्वा	२.१२४.२५	भयाद्बुद्धस्य महतो	२.३२.३५	भवत्यभ्याचिते राज्ञां सर्वेषां	३.५३.२१	भवांश्च वंश कुशल	१.१.१६	भविष्यति नरेन्द्रौघैश्शतशो	२.३५.१४
भग्नमायतनं हृष्ट्वा	१.२६.६०	भयेष्वभयदं व्योम्नि देवा	१.४२.२८	भवत्यविधवा चैव सुभगा	२.८०.८	भवान् राजास्तु मान्यो मे	२.३२.५२	भविष्यति पुरी रम्या	२.५८.४२
भग्नमूर्द्धास्थिमस्तिष्को	३.७२.७५	भरताश्च सुता जाता	१.३३.५३	भवद्विरनुचिन्त्येदं क्रियतां	२.४८.३८	भवांश्च सहितोऽस्माभि	३.४३.१३	भविष्यति युगे तस्मिन्	१.१८.५१
भक्त्वा शूलं गदाग्रेण	३.५७.६६	भरद्वाजः स्थूलशिराः	२.१०६.६१	भवद्विर्न हि मे कार्यं	२.११६.११३	भवानक्षरमव्यक्त	३.४७.२०	भविष्यत्यफलो हर्षः	३.३३१
भजमानस्य पुत्रोऽथ	१.३८.१	भरस्व पुत्रं दुष्यन्त भाव	१.३२.१२	भवद्विश्चण्डवर्षेण चरता	२.१८.६	भवानग्निश्च वायुश्च	३.६३.४	भविष्यन्ति च कामानाम	३.४.४३

भविष्यन्ति नरा राजन्	३.१३५.६	भाण्डागारायुधा गारे	३.४६.२५	भार्याणां च सहस्राणि	२.७५.४४	भीताकस्मान्निवर्तव्यं	२.३५.७५	भुक्त्वा चावमृथे कृष्णः	२.१७.२३
भविष्यं चैव भूतं	३.६३.५	भाति चैत्ररथं चैव	२.६८.२०	भावनिस्पन्दमधुरं गायन्त्य	२.२०.२६	भीतोऽहं देव कंसस्य	२.४.२३	भुंक्ते य एको विभुर्जगतो	२.७२.३२
भविष्यं पुष्करं चैव	३.१३४.२८	भाति स्म सरथो राजन्	३.१३३.५१	भावः सद्धर्मशीला	३.४०.१०	भीमको ग्राहकश्चैव	२.१०६.८०	भुजाम्यामाददानस्य	३.५५.६०
भविष्यसि हरेर्वध्यो न	२.८५.३६	भानवस्तत्र देवाश्च	१.७.२०	भावी स्वयंवरस्तत्र तस्याः	२.४७.७	भीमगम्भीरनादेन	३.५१.३	भुजासक्तेन शुशुभे	२.३०.५
भविष्याश्चैव राजानः	२.५१.४६	भानुमत्पापहरणं विजयं	२.६१.१	भाव्यः सोऽनागते	१.६.६०	भीमघोषमहाघोषं	२.६८.३२	भुवनं वैनतेयस्य सुवर्णस्य	३.४६.५०
भवेदापत्सु यन्मित्रं	२.११८.७८	भानुमत्पापहरणे देहोऽस्यैको	२.८५.४१	भाषिता राजधर्माश्च	२.३६.३	भीमनक्रानुलिप्तङ्गी कूर्मं	२.११.३६	भूतपूर्वश्च मे मृत्युस्सततं	२.२२.३३
भवेद्वि मे पतिकुलं श्रेष्ठं	२.६२.३२	भानुमत्पाश्च हरणं निकुम्भ	२.८६.२	भासयामास सर्वाणि	३.५४.३६	भीमप्रहरणैर्धोरैर्त्येन्द्रैः	२.१२६.३४	भूतभव्य भवज्ञानं	१.७.५१
भवेद्यदि न नीतः स्यात्	२.१०८.१७	भानोरेव तथा रण्ये वसत्य	२.६०.५	भासामिषादानुसृतैः	२.५.२०	भीमवेगर वैश्चान्यै	३.५१.४८	भूतभव्योद्भवो नाथः	३.१६.६
भवेयमहमेवार्कः सोमो	३.४१.१७	भानोस्तु भानवस्तात	१.३.३३	भासुरो भस्मनाच्छाद्य	३.२८.४	भीमसेनास्त्रयो राजन	१.३२.१०५	भूतं भव्यं भविष्यं	३.४१.३३
भवेयमहमेवार्कः सोमो	१.४१.५३	भान्ति भिन्नाञ्जननिभाः	३.५१.६७	भास्करप्रतिमे दिव्ये दिव्या	२.५०.८०	भीमेनेयं पुरी तेन राज्य	२.३८.४२	भूतं यस्माज्जगदत्यन्त धीर	१.७४.२५
भस्मना गुण्ठितः पादो	२.१२१.३२	भाभिर्भूषणपङ्क्तीनां दीप्तो	२.४४.१०	भास्कराकारमुकुटः	१.४६.४६	भीमो विदर्भस्य सुतः	१.३६.२३	भूतयक्षगणाश्चैव	२.१२६.३२
भस्मप्रहरणो रौद्रः	२.१२२.७२	भारतं त्वयि चायत्तं	२.१६.७६	भित्त्वा तु पृथिवीमव्य	३.१६.२७	भीषणीं रिपुसंधानां	२.५५.१०६	भूतसर्गमिमं सम्यक्	१.३.१४०
भस्माङ्गरागैरनुलेपिताननो	३.८५.१४	भारते परमं पुण्यं	३.१३२.६२	भित्त्वा सहस्रशश्चैव	३.६.३	भीष्मकं वरयामास	२.५६.२७	भूतात्मा वै समे तस्मिन्	३.१६.३३
भस्मावयवभूतेषु प्रपतत्	१.४६.३७	भारतं शृणुयान्नित्यं	३.१३२.६१	भित्त्वा हृदि शरान्पञ्च	२.२८.८४	भीष्मकश्च महाबाहुः	२.५०.५६	भूतानां बहुरूपैश्च	३.१६.४६
भस्मीभूतांस्ततः	३.६.१३	भारत सर्वशास्त्राणामुत्तमं	३.१३२.६३	भिद्यते चैव बाणाग्रैः	३.१६.५२	भीष्मकस्य सुताश्चान्ये	२.६०.५	भूतानां भुवि भूतेश	३.२६.४१
भागार्थं मन्त्रविधिना	१.४०.३०	भारतेश्वरगो राजन्पारणे	३.१३२.६०	भिद्यन्तां प्राकारचयाः	३.६५.५	भीष्मकस्य सभां गत्वा	२.४८.३	भूतानां शतसाहस्रं	३.६१.१८
भागीयसां भागमतोऽन्तमि	२.७२.५५	भारतस्य च वंशस्य स	२.१६.७५	भिन्नग्रीवा महाराज	३.१२२.१४	भीष्मकस्सह पुत्रेण	२.५२.४६	भूतानि सुबहून्याजी	३.६४.२०
भागवत्तीर्णं धर्मस्य शक्रस्य	१.५४.२	भारद्वाजः कश्यपो	३.६६.२	भीत इन्द्रस्तदा देव	३.८८.८	भीष्मकेणाभिगुप्तश्च	२.३५.१०७	भूत्वा केसरिरास्सिंहा	२.१६.७
भागवत्तेषु गगनादवती	१.५४.६	भार्गवः कौशिकत्वं	१.३२.६१	भीतस्त्वत्तो महाबुद्धे	३.६३.३	भीष्मो हि बलवान्बुद्ध	३.११३.१०	भूत्वा नारायणो योगी	३.६.१
भाजनानि च मांसस्य	२.१७.१४	भार्गवः सप्तमस्तेषां	१.७.७६	भीतस्त्वरितमागम्य	२.६.१४	भुक्तवत्सु द्विजैर्द्वेषु	३.१३२.८६	भूत्वा सूर्यश्चक्षुषी	३.८.२६

भूधराः सत्यधमणि	२.१०६.२१	भूय कृत्वोद्यमंप्रायाद्यादवा	२.३६.४०	भूषयन्ती समुद्रं सा स्वर्गं	२.५८.४६	भागैकदेशेन शुभं	२.६५.१५	अमत्तूर्णमहावर्त्ता वर्षंप्राप्त	२.१०.१४
भूः पादौ द्यौः शिरः	३.७१.४४	भूयः क्रोधसमाविष्टो नोत्तरं	२.६१.४२	भृगुतुंगे तपस्तप्त्वा	१.३०.४६	भोगोत्करासने शुभ्रे स्वेन	२.२६.५१	अष्टाराज्याश्च शोकार्त्ताः	२.११५.१६
भूमावेव समुत्तिष्ठेदाकाशे	३.३२.३४	भूयः शृणु यथा विष्णु	१.५३.७८	भृगुरत्रिर्वसिष्ठश्च	३.६६.३४	भोजनं भोजयेद्विप्रान्	३.१३२.६२	आजमानमतीवाग्र्यं	२.६८.६३
भूमित्रयाणां देव यस्मात्	२.७४.२८	भूयश्चगदया हंसं	३.११४.१२	भृगूणामधिपं चैव	१.४.४	भोजनान्युपकल्प्यन्तां	२.१७.१२	आजमानोऽर्कसदृशं	३.४६.५३
भूमिदानं समादद्याद	३.१३५.१०	भूयश्च ते वचः कुतुं	२.१२३.३१	भृगोर्वंशे समुत्पन्नो	३.८२.१४	भोजं वंतरणं चैव विकद्रुं	२.२२.६	आतरश्चैव ते देवि	२.६६.३१
भूमिपानां सहस्रैश्च	१.५१.२२	भूयश्च प्राववीदेवं	३.७१.४०	भृगोश्चरुविपयसि रोद्र	१.२७.३६	भोजयामास तानसर्वान्	३.१२२.३३	आता जनिष्यते चापि	१.२७.२६
भूमि द्यां ववृधिरं दान	२.८४.१७	भूयश्च बुद्धिरभवत्कृष्णस्य	२.५८.५७	भृत्यवत्प्रचरिष्यामि	३.७५.६	भोजराजः श्रिया जुष्टं	२.१०१.५८	आता भर्ता च दाता	३.६८.६
भूमि सर्वाभिमां	३.८८.३४	भूयश्च सहस्रोत्थाय	२.२६.६५	भृशं विषण्णः शक्रोऽपि	२.१२६.१८	भोजश्च विजयश्चैव	१.३५.१०	आता शनैश्चरश्चास्य	१.६६.१
भूमिरापोनली वायुः	३.८५.२१	भूयश्चैव मया शप्तः	१.५३.२४	भेत्ता जगति गुह्यानां	१.५४.१०	भोजो वा यादवो वासि	२.२३.६	आतुर्हि वज्रनाभस्य तस्य	२.६०.४
भूमिरापोऽनलो वायुः	३.८८.३२	भूयः संधाय च शरं	३.५७.३६	भेरीभर्भरसंपूर्णे	३.१२२.२	भोज्यो द्विजातां सर्वेषां	२.६१.२६	आतृत्वमुपभ्यैव	२.७५.२६
भूमिर्वायुर्जलमाकाशमग्नि	२.६.१५	भूयस्त्वदानीं समरे संप्राप्ते	१.४८.२१	भेरीपटहनादेन शंखदुन्दुभि	२.५५.५५	भो न देयं कुतो दैत्य	३.७१.१८	आतृत्वान्मर्षयाम्येष स्वस्ति	१.३६.२२
भूमिष्ठाभ्यां रथाभ्यां	२.७५.१०	भूयोऽन्यत्तप आसेदुश्चरन्तो	३.२६.२१	भेरीमृदंगशंखानां	२.१०५.२६	भो बलाहकमातङ्गा	२.१८.२	आतृस्तेहाभिभूतस्त्वं न	२.७१.४३
भूमिस्तु पतितं पुत्रं	२.६३.१२४	भूयोऽप्यपश्यं सरसीरुहे	३.११८.८	भेरीशंखनिनादैश्च	३.५५.१६२	भो भो दानवशार्दूलास्त	२.२१५	आन्तमुद्भ्रान्तमाविद्ध	३.५६.३२
भूमिरुत्पाद्यमानस्यतस्य	२.१८.३२	भूयोऽप्यपश्यं सह	३.११८.७	भेरीशंखमृदंगानां वेणूनां	२.५६.८१	भो भो यादवदायाद	३.११८.३०	आमयामास संक्रुद्धो	३.६१.६
भूमैर्युगन्धरः पुत्रइति	१.३४.३१	भूयो भूतात्मको विष्णोः	१.४१.१०४	भेरोस्तटैर्वा ज्वलनप्रकाशं	३.५१.७६	भो यज्ञाः परमं तेजो	२.११०.७५	आमयित्वा दशगुणं	३.१२३.११
भूमौ प्रपेदिरे सर्वे	३.१३३.२५	भूयो वर्षसहस्रान्ते	३.३६.१८	भमोत्तमानां नरदेव दत्तां	२.८६.८४	भोशब्दमधिधास्यन्ति	३.३३.७	आमयित्वा स चिक्षेप	२.१०७.२०
भूय एव तु विप्रर्षे	२.६२.१	भूयोऽष्टधा विभेदाण्डं	३.३४.३	भोः कंसधनुषां पाल	२.२७.४३	भैभा हि वद्धनेपथ्या	२.६३.२१	म	
भूय एव द्विजश्रेष्ठ	३.१०३.१	भूयोऽहमद्राक्षमजं	३.११८.५	भोः केशव मदीयस्त्व	२.७६.६	भौमाश्च कुक्कुराश्चैव	२.३७.६५	भ्रुवोन्तराद्जनयद्योगा	३.२०.१६
भूय एव महाबाहो	२.१११.१	भूरिश्रवास्त्रिगर्तश्च बाण	२.४२.३३	भोक्षता राज्यस्य	३.६२.६	अशितस्त्वं च विप्राश्च	३.५.३१	मकराकृतिभिश्चान्या	२.८८.२६
भूय एव महाबाहो	२.११६.१	भूव एव द्विजश्रेष्ठ	२.११५.१	भोक्तव्या यतयो विप्र	३.११२.२१	अशितेनोत्तरीयेण सहसा	२.३०.८१	मकराञ्छिषुमारांश्च	२.८४.१३
								मखेयस्य प्रसादेन	३.३६.७

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

१०७

मखो ब्रह्ममुखोत्तीर्णो	३.२३.१७	मत्कृते विग्रहा लोके वृत्ता	१.५२.५७	मदिरानन्तरं कान्तिस्संकर्षण	२.४१.२५	मधोर्बलार्थं मधुनो	३.२६.८	मनः संकल्पजाश्चैव	३.३३.११
मग्नार्द्धकाया विविशुः	३.५७.३५	मत्तक्रौञ्चावघुष्टेषु	२.१६.२१	मदिरा रूपिणी भूत्वा	२.४१.१५	मधोर्मदोऽम्बुपूर्णा च	३.२६.५४	मनसा कर्मण वाचा न	२.६६.४१
मंगलाष्टशतं स्नातो	२.१०६.१०४	मत्तवर्हिणसंघैश्च	२.६८.७३	मदीयस्त्वमिति ह्यासी	२.६६.४७	मधोश्च मन आक्षिप्य	३.२६.१०	मनसा निमिता चेयं	२.५८.४१
मंगल्य मंगलं विष्णुं	१.१.३	मत्तवारणविक्रान्ताः	३.५६.६७	मद्दर्शनार्थं ते बाला	२.११४.८	मध्यदेशे तु चिच्छेद गदां	२.६३.५५	मनसा निमित्त योनिराघा	१.४५.४४
मच्छवीसदृशी कृष्णा	२.२.४०	मत्तान्तमुविहितान्	३.५८.१६	मद्भक्ता सर्वदा सन्तु	३.१३०.१७	मध्यंदिनगते सूर्ये	३.१२२.१७	मनसास्मर्यतां सैष	२.७३.५४
मज्जतो यमुनायां च	१.५५.४६	मत्तेज एव बलवत्समासाद्यं	३.३४.१७	मद्भक्त्या ते तपश्चीर्णं	१.१७.१८	मध्यंदिनगते सूर्ये	३.१२२.२३	मनस्तद्रक्षतां देव	३.८०.७४
मञ्चागारैः सुनिर्युक्तैर्युद्धाय	२.२६.४	मत्तोन्मत्तप्रमत्ताश्च	२.१०६.५७	मद्रः कलिगाधिपतिश्चे	२.३५.३६	मध्यंदिनं तथा सर्वैः	३.१०६.१४	मनस्येवं जगन्नार्थं	३.८१.१५
मणिकनकविचित्रपाणिपादौ	२.८५.७६	मत्पदानि च ते सर्प	२.१२.४२	मद्रः कलिङ्गाधिपति	२.४२.२८	मध्यदिने महाविष्णुः	३.१११.८	मनीषितानामर्थानां	२.७४.३६
मणिपर्वतयंत्राणि	२.६८.२	मत्वा वशगतं चैव	३.५६.१०१	मद्रराजश्च बलवान्	२.३४.१८	मध्यमश्च शूनः शोफः	१.२७.४२	मनीषितेन स तरुरल्पो	२.७५.६५
मणिपर्वतशृंगं च सभार्यं	२.६४.४४	मत्सरं च विभूतिं च	३.१४.४६	मद्रराजमुतां चापि	२.६०.४२	मध्यस्थं सलिलारम्भं	२.१६.५६	मनुः प्रलीयते यत्र	१.८.१६
मणिमुक्ताप्रवालानि	२.६४.३	मत्स्यमांसेन ते सर्वे	२.३८.३३	मद्रूपां प्रतिमां कृत्वा	१.२६.४८	मध्ये चास्य महाशाखो	२.८.२६	मनेरेवाभवन्नाम्ना	१.६.२०
मणिभिश्च प्रकाशद्भिः	३.२७.६	मथित्वाऽग्निं त्रिधा	१.२६.४६	मद्रूपां प्रतिमां कृत्वा	१.२६.४८	मध्ये तु तेजसस्तस्य	२.६३.२७	मनुर्वैवस्वतः पूर्वं	१.६.८
मणिमुक्ताप्रवालभिर्वज्र	२.५५.११४	मथुरायां प्रयागे वा	३.११८.४६	मद्रूपानि पतनं दृष्ट्वा	३.२७.१	मध्येन चास्य कालिन्दी	२.८.२७	मनुष्यलोकादूर्ध्वं तु खगानां	२.१६.२७
मणिस्तम्भसहस्राणाम	२.६६.२	मथुरायां प्रवेशश्च कीर्तनीय	२.४६.१५	मधुना दानवेन्द्रेण स	२.३७.२७	मध्ये पूरुं च राजान	१.३०.१६	मनुष्यलोके कृत्स्नेऽपि	१.३४.२०
मणिहेमनिभाश्चित्रा	२.६६.५	मथुरोपवने गत्वा निविष्टां	२.३५.१	मधुरं श्लक्ष्णया वाचा	१.१२१.५६	जध्ये लोहितगंस्य	२.६३.८७	मनुष्यलोकेन वाणेन	२.११६.८
मण्डयन्तीव देवेन्द्रो	२.१५.१७	मदनन्तरमीशस्त्वं जगतो	२.६६.४२	मधुरां वाचमिच्छन्ती	२.८०.४१	मध्ये व्यूहोदरस्थस्तु	३.५६.३६	मनुष्याणां च सर्वेषां	२.११८.६६
मण्डलानि बहून्याजौ	३.१२७.३४	मदनशिर विभन्ता	२.१०५.८४	मधुरैरभिधातैश्च	३.१६.३६	मनः प्रजापतिर्ज्ञेयः	१.४०.५४	मनुष्याणां मनोभूतस्तपोभूत	१.४०.४६
मण्डितं वनराजीभिः	२.४०.२५	मदं जहुः सितापांगा	२.१६.२४	मधुनमि महानासीद्दानवो	१.५४.२२	मनवे ब्रह्मपुत्राय	३.३६.२५	मनुष्यान्तसपुरो	३.१२६.६
मत्तश्चेत्करमिच्छेस्त्वं	३.१२७.३७	मदं प्रसूनुवुर्नागा	२.१६.६८	मधुनैर्वाद्यगीपैश्च	३.२७.१३	मनः बुद्धिर्भवेत्तस्य	३.८३.२८	मनुस्तस्याक्षमत्तत्तु	१.६.२२
मतिं लज्जां वसुं	३.३६.२७	मदमत्तो हली साक्षात्क्व	३.६४.३३	मधूनां वंशकृद्राजा	१.३६.२८	मनः संयमनं विप्राः	३.८६.१३	मनोनिर्माणचित्राढ्या	१.५२.८

मनोरजायन्त दश	१.२.१७	मन्दभाग्या वयं विष्णो	३.१११.५७	मन्वन्तरे व्यतिक्रान्ते	१.७.४७	ममायं प्रथमो गोलस्तव	२.१११.५	मयि भग्नप्रतिज्ञे वै	२.६८.३७
मनोरथकृतो भर्ता	२.११६.४७	मन्दं मन्दं समाश्वास्य	३.११०.६	मन्वन्तरेषु संहाराः	१.८.२६	ममारान्तर्जले राजन्	३.१२६.१३	मयि लोकाः स्थिता	१.५.५१
मनोरथं मम त्वं च	२.७६.२६	मन्दं मन्दमुवाचेदं	३.१०६.११	मन्वन्तरेषु सर्वेषु प्राग्दिशः	१.७.३६	ममाश्रमसमीपे हि	१.११.३२	मयि सर्वं समारोप्य	३.६५.१०
मनोरथशतैर्लब्ध	२.६४.८	मन्दरक्षोभचकिताश्रमृतोद्भव	१.३३.३२	ममता ह्यक्षया गावो	१.५५.२५	ममृषे न सपत्नयास्तु	२.६५.४६	मयूरचित्राङ्गदिनो भुजः	२.१७.३५
मनोरथोऽस्तु सफलो	२.६६.३५	मन्दरः पर्वतश्रेष्ठः	२.८७.३८	ममत्वं तत्र मे देवि हितं	२.६२.४२	ममैव चोमया दत्तः	२.७७.२६	मयूरध्वजभंगस्ते	२.११६.५४
मनोरथो यस्तु मम पश्येयं	१.२०.१०७	मन्दरं पर्वतश्रेष्ठं	२.६८.१३	मम पुत्रो मम भ्राता	२.६.५	ममैष परमः कायो युद्धं	२.११६.१८	मयूररवघुण्टासु मदनो	२.११.१४
मनोवैवस्वतस्यासन्पुत्रा	१.१०.१	मन्दरश्चोग्रशिखर	३.२७.१०	मम प्रज्वलितं चक्रं	१.२०.५२	ममोपरि यथेन्द्रस्त्वं	२.१६.४६	मयूरांगदकर्णो तु पल्लवापी	२.८.४
मनोवैवस्वतस्यैते	१.७.३७	मन्दरस्य गिरेः पार्श्वे	२.१२५.२५	मम ब्रह्मा शमीरस्थो	३.१०.६५	ममोरसि गदां मोक्तुद्यतो	२.७०.२०	मयेन विहितो दिव्यस्तस्य	३.५१.४७
मनो विपर्यये घोरे	३.८०.७३	मन्दारः कोविदारश्च	२.६७.७२	मम भर्ता हृत्रोऽसि	२.१०४.२६	मयश्च शम्बरश्चैव	३.६२.२६	मयोत्सृष्टेषु मेघेषु	२.१६.१४
मनोः स्वायंभुवेऽन्तरे	१.७.११	मन्दराचलकल्पेन चित्रा	२.४४.३	मम मात्रा कथं तस्य	२.२८.५६	मयस्तारो वराहश्च	१.४७.६	मरणान्तानि वैराणि	२.३१.५१
मनोपरगुणोपेतं	३.३५.४३	मन्दरात्पर्वतश्रेष्ठान्नयितु	२.६८.१४	मम मूर्धन्युपाध्याय	२.१०८.१३	मयस्तु काञ्चनमयं	१.४३.२	मरोचिगर्भास्तांल्लोका	१.१८.५६
मन्त्रग्रामे सुविहितैरौषधै	२.२.७	मन्दारादपि वृक्षाच्च सार	२.६७.६५	मम वंशकरोऽत्रैकः	२.६७.३३	मया तदनृतं कर्तुं कथं	२.६८.३६	मरोचिमय्रंगिरसं	१.१.३४
मन्त्रं यज्वहं बलि भागं	१.४१.६	मन्दरे पर्वतश्रेष्ठे	२.८६.५१	मम शत्रुस्त्वया दग्धो	२.५७.६३	मया तु तव जिज्ञासा	१.१६.२४	मरोचिमिव सोमस्य	२.५६.३७
मन्त्रयज्ञपरा विप्रास्सीता	२.१६.६	मन्यध्वं यदि वा युक्तां	२.५२.३१	मम स्थानमिद कार्यं	२.५८.३०	मया दत्तो ऋः पूर्वं	२.११३.१०	मरोचिरंगिरात्रिश्च	२.१०६.११
मन्त्रव्याकरणाश्च	१.७.५२	मन्यन्ते मां वथा सर्वे	२.२०.११	ममागमनमेवेह प्रायेण न	२.५१.१३	मयानुशिष्टास्तिष्ठन्तु	२.३५.३८	मरोचिरंगिराश्चैव	३.६६.३
मन्त्राश्च विविधाः पार्थ	२.११४.२२	मन्युरेष प्रमृष्टो हि	२.६७.३४	ममाग्रतो हता गर्भा ये	२.४.५८	मयानुसृष्टास्तिष्ठन्तु	२.४२.२७	मरोचिरत्रिभंगवानगिराः	१.७.८
मन्त्रैरेतैः पुराणोक्तै सर्वं	२.७६.१८	मन्ये वाणस्य नगरं	१.१२२.१३	ममातिसर्गाद्वाण त्वं	२.१२६.१६०	मया मुने प्रतिज्ञातं	२.६८.३५	मरोचिर्मधवांश्चैव इरा	१.३.८२
मन्त्रैः संचोदितो नागो	३.२८.६२	मन्वन्तरस्य सख्यानं	१.८.१	ममान्तमशनं देव	३.७२.४६	मया वै त्वं याच्यमानो	२.८७.१४	मरोचिशुचिकाश्चैव	३.६६.१७
मन्थरारोप्यमाणैश्च	२.६.२३	मन्वन्तराणि सर्वाणि	१.७.१	ममाप्येषैव संजाता	२.१२२.६२	मया सकल्लिख्यं तुभ्यं	१.२०.१३८	मरोचिः कश्यपः	३.१४.३२
मन्मयं विद्धि कौन्तेय	२.११४.२३	मन्वन्तरामात प्रोक्तं	१.८.१८	ममाभवद्यतो रक्षा	२.६७.१६	मया सह समागम्य	२.१२१.१०७	मरुतश्चैव विश्वे च	३.३२.४१

मरुतां पञ्चमो यस्तु	३.५३.६	महत्पूषाबिले वाणीं	१.३८.३५	महादेवंस हन्नाशं	३.८५.१८	महाभारतमाख्यानं	१.१.१२	महायुधधरः श्रीमान्	३.५६.३६
मरुतो देवगन्धर्वा	३.४३.११	महत्सु राजवंशेषु संभूताः	२.४६.२८	महादेवेन देवेश	२.७६.३१	महाभारतमाख्यानं	३.२.११	महायुद्धं महानादं	३.४.१५
मरुतो देवगन्धर्वा	१.४४.३२	महर्षयस्सस्सगन्धर्वा	२.४.२०	महादेवो महाबुद्धि	३.३६.४	महाभारतमाख्यानं	३.१३२.६४	महायोगित्वमायुश्च	१.३१.३६
मरुतो विश्वकर्मा	३.६६.३६	महर्षयो वीतशोका	१.४२.३८	महादेवो महायोगी	३.८५.२२	महाभिषस्य पुत्री द्वौ	१.१८.४२	महायोगी ततो गन्ता	१.१८.५५
मरुतोऽलभत ज्येष्ठं	१.३६.८	महर्षे कुशलं पृष्ट्वा	२.६६.४१	महाध्वजो वै तपनीय	३.५१.८६	महाभीमा महावीर्या	२.१०६.६४	महायोगी स तु बलिर्बभूव	१.३१.३३
मरुत्वत्यां मरुत्वन्तो	३.३६.५३	महर्षे धर्मतत्त्वज्ञ स्वर्गं	२.६८.२	महानदश्च लोहित्यः	३.४६.३८	महाभूतपतिर्देवः	३.८.२५	महारथं देवरथप्रकाशं	३.५१.७५
मरुद्भिः सह देवेन्द्रै	३.१७.१२	महाकटिः स्थूलमुखो	२.२१.५	महानदी कालनदी चैव	३.४६.४६	महाभूतानि भूतात्मा	१.४०.१३	महारथस्थास्त्रिदिवीक	३.५२.५७
मरुस्तु योगमास्थाय	१.१५.३४	महागजाविवासाद्य	३.५५.३६	महाननुग्रहो मे स्यात्कुलं	२.६२.३३	महाभूतान्यपि च तं	३.६.१७	महारथान्युच्छ्रितकामुं	२.१२४.५६
मर्त्येषु मर्त्यान्यद्वोऽतिवारी	२.८६.८६	महागदाः काञ्चनपट्ट	३.५३.४	महाननो महाग्रीवस्तु	२.१४.२७	महाभैरवरूपं हि	३.६४.६	महारथो मगधराट्	१.३२.६२
मर्त्येऽस्मिन्पुरुषेन्द्रोऽसौ न	२.४६.१८	महाग्रहनिभाकारः	३.५१.६२	महानयमसौ दुष्टो	३.१२६.३२	महामति महोत्साहं	२.५८.३५	महारवा दुन्दुभयश्च	३.५१.८५
मर्यादां स्थापयामास	१.५.४	महाघोरं महारौद्रं	३.६३.१५	महानदी द्वाखती	२.६८.२३	महामना नाम सुतो	१.३१.२२	महाराज महाबाहो	२.४३.७
मर्यादाश्चैव संचक्रे	२.५८.७६	महाच्छिरः संहननी	३.१३.५	महानाभाश्च विक्रान्त	१.३.८०	महामनास्तु पुत्री	१.३१.२३	महार्णवगतश्चैव	३.१६.२७
मर्त्यानां सर्वभूतानां	३.२८.२०	महाजटाभारधरास्त	३.६३.११	महापद्मो निकुम्भश्च	३.४६.३	महामात्रं ततः कंसो	२.२८.३०	महार्णवस्य क्षुब्धस्य	३.११.७
मल्लिकाक्षान्विरूपाक्षान्	३.५८.२६	महाजलदसंकाशो	३.५८.८१	महाप्रभावाः सतत	२.७१.४६	महामात्रोत्तमारुहः कल्पितै	२.३५.१७	महार्णवांश्च शैलांश्च	३.५२.४
महतः पर्वतस्याग्रे	३.३५.३७	महाजिनव्रतितं मेखलालं	२.७२.४८	महाप्रभावो नाल्पार्थ	२.७१.४८	महामुनिश्चायसचूर्णं	२.५३.५३	महार्णवो वीचितरङ्ग	३.५१.६२
महता चतुरङ्गेण	३.३८.१०	महाजिनव्रतितं मेखलालं	२.७२.४८	महाप्रस्थानिके तद्वत्	३.१३२.७०	महामेघ इव श्रीमान्	३.५५.१३७	महालाङ्गलनिभिन्नाः शङ्ख	२.६३.७७
महता च बलीधेन	३.६०.२	महा तालनिभं चाप तथा	३.५१.३६	महाबलः स रामेण	३.१२६.६६	महामेघगिरिश्चैव	३.४६.६४	महावातसमुद्भूतं	३.६४.२
महता रथवृन्देन	२.५१.६७	महातेजा महाबाहु	३.५५.६	महाबला दिव्यबलास्त्र	३.४६.१६	महामेघोपमं रौद्रमास	३.५५.१३	महाविष्णुः पुष्करं	३.१३१.१
महता सप्तशीर्षेण	३.५०.११	महात्मा कारणे नाल्पे	२.७१.५०	महाबलैश्च महिषैश्च	२.८७.७	महामेघः सकैलास	२.११३.१५	महावीर्यमदोत्सिक्तं	२.४६.४०
महतो रजसो मध्ये	३.१०.२	महादानानि देयानि	३.१३२.१३	महाबलो बद्धतलांगुलित्रो	३.५१.७२	महामेरोर्यथा रूपं	२.२७.३१	महावेगान्प्रशस्ताग्रा	२.५५.६६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

११०

महाशनिव्यग्रकरा	३.७२.१५	महेन्द्रचापसंकाशे -	३.४२.१८	महेष्वासा महावीर्या	२.३४.१३	मातापितृभ्यां सर्वेण जातेन	२.२६.२४	मानयिष्यंश्च तान्स्वमी	२.५६.३०
महाशनी द्वे च महाग्रहा	३.५२.१७	महेन्द्रपुत्र दिव्यं त्वं	२.७३.५१	महोत्पातभयं चैव न	२.११६.७७	मातापितृभ्यां सहितो	२.८५.७३	मानवानां च पतयः	१.५१.५
महाशिलाप्रहरणाः शूल	१.४१.६०	महेन्द्रभवनं गत्वा अद्य	२.७२.६	महोदधे महीपालस्तत्र	१.५३.३६	मातापित्रोस्तु कार्येण	२.४.६४	मानवेयो महाराज	१.१०.२७
महाश्मसंघातवती ऋक्षवन्त	२.३८.१६	महेन्द्रभवने यातो देवै	२.१०२.१४	महोल्कासदृशान्वाणान	२.७३.५६	माता व्यत्यस्य दैवेन	१.२७.२५	मानसा नाम ते लोका	१.१८.६८
महासुरा महावीर्या	३.५८.३	महेन्द्रमब्रवीद्गत्वा देवलोकं	२.६१.१४	महोजसः सर्वणुगोपपन्ना	२.५२.४६	मातुश्च शिरसा पादौ	२.३०.६०	मानसान्येव भूतानि	१.३.३
महासुरेन्द्रश्च महासुरैर्वृत्तो	३.५१.७३	महेन्द्रमाह्वयामास	२.७५.२	मह्यं तु कंस रोचते	२.२३.४०	मातृणां तात कोपेन	१.३२.१४	मानसैश्च क्रियामूर्तिर्ये	३.२३.२१
महास्मृतिमयाः पुण्या	३.३६.१०	महेन्द्रवचनं श्रुत्वा नारदो	२.७१.१	मांसमेदोस्थिदुर्गन्धा	१.५२.४८	मातृभावं व्यतिक्रम्य	२.१०४.१८	मानार्थं जीव्यते लोके	२.६७.१५
महाहवे तव मम च	२.१२३.३५	महेन्द्रविष्णुभगिनि	२.१२०.६	मांसराशिः प्रभूताढ्यः	२.१७.१८	मात्रा तथोक्ताऽवरदा	१.२६.४१	मानुषं मांसमश्नानः	२.२४.७
महाह्रद्रं महारोद्रं	३.१२८.३	महेन्द्रशिखराद्वारा	२.२८.२२	मांसलो मांसभक्षश्च	३.४६.६	मात्राऽसि वञ्चितता	१.२७.२८	मानुषाणां नृपा देवा	२.५०.४७
महिषी त्वजमीढस्य	१.३२.८२	महेन्द्र शिखरे चैव	२.१०३.८	मांसात्तु मेदभो जन्म	१.४०.४६	माथुराणामवध्योऽयं	२.५२.२८	मानुषेण तु मानेन यो	१.८.६
महिषी सप्त कल्याणी	२.६०.४०	महेन्द्र सहशं वेश्म	२.६६.८	मांसानि पक्वानि फलाम्ल	२.५६.५७	माथुरो वासुदेवोऽयं बलदेव	२.५३.५६	मानुषे पाथिवे लोके	१.५५.६
मही च लोकश्च	३.४७.१५	महेन्द्रस्य च शब्देन	२.७३.२२	माकरो रचितो व्यूहः	२.८४.८	मा ददस्व महाबाहो	३.७१.१३	मानुषेष्वभिभेदेन वस	२.१२३.२४
महीतलं पारिजातं	२.६६.५८	महेन्द्रस्येव वृत्रेण दारुणो	२.४३.६१	मा कार्षीः पुत्रजां	२.४.५५	मा देहीति न चाख्येयं	२.५१.२७	मानुष्यं मानुषे प्राप्तो	२.६६.५५
महीतले भूरिजलं	२.३४.१४	महेन्द्रेणामृतस्यार्थं वज्रेण	१.४४.४३	मा कृथाः साहसं रक्षो	३.१२६.३०	माद्रचाः पुत्रस्य जज्ञाते	१.३४.३	मानुष्यां गार्ग्यभार्यायां	२.५७.१५
महीधरेभ्यो नागेन्द्रा	३.४६.३७	महेन्द्रेन्द्रानुजं द्रष्टुं गतो	२.६६.२४	मागधस्य विरोधेण न	२.५०.४१	माद्रीपुत्रस्य जज्ञेऽथ	१.३८.४६	मानुष्ये कुण्डिनगरे भीष्म	२.५१.२६
मही नवतृणच्छन्ना	२.२८.६५	महे प्रतिहते शक्रस्सक्रोध	२.१८.१	मागधाश्च महाग्रामा	३.४६.४६	माद्री युधाजितं पुत्रं	१.३४.२	मानुष्ये मर्त्यलोकेऽस्मिन्	२.५०.२०
मही निरन्तरा चेयं बल	२.३५.१३	महेश्वरं कुमार च द्वौ	१.५३.६१	मा च ते शंबरस्येयं	२.१०८.२५	माधवं च महात्मां	२.१२७.१४	मानुष्ये मांसचक्षुष्ट्वा	२.५१.२१
मही सागरपर्यन्तां	१.४१.३६	महेश्वरांशेऽपसृते ततो	१.५३.५६	मा च शक्रस्य वचनं	३.७२.३६	माधवे किशुका राजन्	३.१२७.१४	मानेनानेन यो मासः	१.८.७
महीरुहैरुत्पतितैः सलीलो	२.१०.१७	महेश्वरेण वा ब्रह्मन्	१.५३.६	माज्जिज्जठरागवर्णा भैः	३.१८.७	माधवो मे महाबाहुर्ज्येष्ठ	२.३८.११	मान्याश्चैवाभिमन्याश्च	२.२३.१२
महेन्द्रकेतुप्रतिमा	३.५२.५६	महेश्वरोऽतिगूढात्मा	३.२८.८	मातङ्गमिव मातङ्गो	३.५५.११६	मानयन्ति च तं देवा	२.८६.३०		

मान्योऽमाकं त्वया राज	२.५१.४२	मायापाशविमुक्ताश्च	१.४५.१५	मा रोदीरिति तं शक्रं	१.३.१३४	मिश्रकेशी च रम्भा	३.४२.६	मुखैश्च चन्द्रसंकाशैस्त	३.५५.१६७
मा भैर्वरणि कल्याणि	३.३४.२६	मायां संचिन्तयामास	२.१०६.३३	मार्कण्डेयस्ततस्तस्य	३.१०.१६	मिश्रितं दैत्यसंवैश्च	३.१२१.१४	मुचुकुन्दं महाबाहुं पद्म	२.३८.२
मा भैर्वत्स न भेतव्य	३.१०.३६	मायामयीश्च कृत्वान्या	२.८३.२२	मार्कण्डेयेन कथितं	१.१६.७	मिषतां देवतानां च	१.१३.२३	मुचुकुन्दश्च राजर्षि	२.३८.१४
मा भैष्ट जीवमानेषु	२.६६.२६	मायामयीस्ततो हत्वा	२.८३.२३	मार्गमादिष्टमिच्छामि	२.४६.४६	मुकुटश्चापतत्तस्य कांचनो	२.३०.७७	मुचुकुन्दस्तु राजर्षिः	२.५७.५३
मां पुत्रकामः प्रथमं	३.१०.४२	मायाभाश्रित्य युद्धयस्व	२.११६.१६६	मार्गाश्चरति वै	३.५६.३८	मुकुटेन विचित्रेण केश	२.२.४४	मुञ्चन्तः शरवर्षाणि	२.६०.१५
मां प्रोक्षयित्वा धर्मेण	१.२२.१०	मायामौर्वी समासाद्य	१.४५.२०	माज्जार्गजवक्राश्च	१.४१.६४	मुकुटैर्नाकवर्णैर्न	३.१३२.४४	मुदा परमया युक्तं शक्र	२.५३.१५
मां समाश्रित्य पूर्वस्मिन्नृपा	२.५२.३४	माया युद्धं समाश्रित्य	२.१२५.६	मार्तण्डस्यात्मजावेता	१.६.५६	मुकुन्दमादिपुरुषमेकाकार	३.८०.८५	मुदिताश्चाथ गायन्ति	२.३३.३३
मां समाह्वयते ज्येष्ठं	२.७०.४७	मायावती तु संहृष्ट्वा	२.१०४.८	माल्यानि च स्वर्गं	२.८६.२६	मुक्तमात्रः स बाहुभ्यां	२.१२३.२	मुदितास्तत्र गायन्ति	२.४५.७
मां संब्रूत नृपाश्चैव	३.६१.१३	मायाविदग्धाः पुंश्चल्यो	२.१२१.६०	मा वासवं मा च	३.५.३५	मुक्तश्चेन्द्रियबन्धेन	३.१७.६६	मुद्गदर्जघ्नतुः क्रुद्धावन्यो	३.५४.७६
मामकं देवदेवेश	३.८०.८२	माया सा तिष्ठते तीव्रा	२.१०६.२६	मा विद्या च हरे	३.८८.४६	मुक्ताहारवृत्तोरस्का	३.५१.५७	मुद्गरं पुष्पभूतं तु	२.१०७.२३
मामुत्सृज्य वरो यस्माद्वृत्तो	२.२.२१	मायूरं रथमारुह्य	२.१२८.१०	मास मात्रेण सुषुप्ते	२.६६.२०	मुक्ताहारोमिबहुलां	२.१०५.६१	मुद्गरैः कूटपाशैश्च	३.४४.२०
मामुवाचः ततः शौरि	२.११२.३०	मायैषा वासवेनेह	३.५.२६	मासान्वे पुष्पमासादीन्	२.२.४	मुक्तिं प्रार्थयमानं	३.८०.३०	मुद्गरैः पट्टिश्चैव	३.५६.८५
मामेव तद्धनं तेजो	२.११४.१२	मारिषा नाम कन्येय	१.२.४२	मासि मास्युचितं ह्येतन्मा	२.६७.५२	मुक्त्वा वरशरान्	३.१३३.७८	मुद्गरैरर्हितो भीमेवृक्षाः	३.५८.४५
मामेव हि सदा ब्रुयुर्जनि-	३.१००.३२	मारिषायां ततस्ते वै	१.२.४६	महिष्मती नाम पुरी येन	१.३३.५	मुखजेनाग्निना क्रोधा	१.११.५१	मुद्गरैर्मुशलैः शूलैश्चस्तु	३.५४.४३
मा भैवं देवगन्धर्व	२.११०.४२	मारीचश्च सुबाहुश्च	१.४१.१२६	मित्रवान्मित्रविन्दश्च	२.१०३.१०	मुखं वैश्वानरश्चाप्य	३.७१.५०	मुद्गलः सृञ्जयश्चैव	१.३२.६५
मामैवं देवगन्धर्व	२.११०.४८	मारीचः सुन्दपुत्रश्च	१.३.१०२	मित्रविन्दा च कालिन्दी	२.१०२.४४	मुखमण्डो विडाली च	२.१०६.६०	मुनयो दीर्घतपसः	३.७७.२
मायया त्वां भ्रमयति	३.११८.१६	मारीचस्य सुरेशस्य	३.४८.१०	मित्रविन्दा च कालिन्दी	२.१०३.४	मुखमस्याब्जसंकाशं	२.२०.३२	मुनयो देवगन्धर्वाः	३.८८.१७
माययास्य प्रतिच्छाया	२.६४.३०	मारीचिर्जनयामास महता	१.३.६४	मित्राणि ज्ञातयश्चैव	२.३४.१२	मुखमुन्निद्रहेमान्जे	३.११४.७	मुनयो वालखिल्याश्च	३.३१.७
मायान्तकरणं नाम	२.१०६.३६	मारुतश्च यदुश्चैव मत्स्य	१.३२.६३	मित्रावरुणयोरंशे	१.१०.५	मुखे निर्वर्तितं रूपं तस्य	१.६.४६	मुनयो विप्रवर्षाश्च	३.८७.७
मायापाशात्किं कर्षंश्च	१.४५.१२	मारुतः सुमहावेगः	३.५४.४७	मित्रावरुणयोरंशे	१.१०.६	मुखे लम्बसेट चास्य	२.२४.२६	मुनयो वेदनिरता नारदा	३.७३.१५

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

११२

मुनिजुष्टं तपोवृद्धं	३.१२१.२०	मुमोच पक्षमेकैकं	२.७३.६८	मुहुर्तमपि ते सर्वे	३.६८.११	मृगयां चक्रतुस्तौ तु	३.१०२.१४	मृदन्त्येभ्यो रथिनो	३.५५.१५२
मुनिभिर्वेदतत्त्वार्थं	३.७३.४२	मुमोच पूर्वं सहसा	३.३४.४४	मुहुर्त्तमभवत्क्षोभ्य	३.६१.२३	मृगयेयं सुमहती	३.८०.२५	मृदुनैवाभ्युपायेन ह्यति	१.२६.४६
मुनिभिश्चैव प्रमथैः	३.८६.१६	मुमोच रुषितो रुदस्त	२.१२४.४०	मुहुर्त्तमेव राजा स सह	१.२४.२४	मृगराजसमाकीर्णमृगवृन्द	२.८७.८	मृदुराद्रः कृशो भूत्वा	१.२०.१२७
मुनिं तदा संस्मृतवान्स	२.७५.६६	मुमोच विशिखांस्तीक्ष्णं	२.११६.१७३	मुहुर्त्तदेव चाश्रीषं	२.११२.६	मृगव्याधः परित्यज्य	२.५८.४३	मृद्यमानस्स कृष्णेन	२.१२.३५
मुनिश्च नारदः कृत्स्नं	२.८१.१३	मुमोच सलिलोत्पीडांस्तीव्रं	२.४२.८७	मुहुर्त्तेन वयं ग्राम	२.११२.१	मृगव्याधं महात्मानं	३.५८.३१	मृष्टहस्ता घनाढ्या च	२.७६.३३
मुनीनां श्रोतुकामानां	३.८८.१५	मुमोच हंसमुद्दिश्य	३.१२७.४६	मुहुर्त्तम्युदिते सूर्ये	२.८४.१	मृगव्याधश्च सर्पश्च	१.३.५२	मेघकृष्णस्तु कृष्णो	२.६.३
मुनीश्च ब्रह्मचर्येण	३.१०२.२३	मुमोह दृष्ट्वा तं पुत्रं	१.२०.१०३	मुहुर्मुहुर्ज्याचपलं विक्षिप	२.४४.६	मृगाणामथ गार्दूलं	१.४.१२	मेघगम्भीरनिर्घोषं	३.११४.३२
मुनीश्च ब्रह्मवादीयान्स	२.८२.३३	मुरुः पुत्रसहस्रैश्च	२.६३.१६	मुहुर्मुहुहातेजाः	३.५४.६६	मृगाणामथ सर्वेषां	३.७८.१४	मेघगम्भीरनादेन स्वरेणा	२.५०.४३
मुने तद्यज्यते साधु	२.६८.३१	मुशलाक्षेपभग्नाश्च	२.४३.३६	मूढानामग्रणीरस्मि	३.११४.१८	मृगास्तु तस्य मोदन्ति	३.२२.१०	मेघप्रख्यं रथानीकैः	२.१०२.३
मुने धर्मभृतां श्रेष्ठ	२.७७.८	मुशलैः पट्टिशैश्चैव	२.१२६.५५	मूर्खः स्वाथपरा	३.४.१८	मृगेन्द्रो गृह्यतां	३.४४.२	मेघसंश्लिष्ट शिखराः	३.२७.५
मुनेज्ज्वलवधः श्राव्यः श्रुतो	२.८८.१	मुशलैः पट्टिशैश्चैव	२.१२६.६७	मूर्तस्तेजसि संभूतो	३.२६.४६	मृगैर्मत्स्यैर्विहंगैश्च	३.४.३४	मेघस्य पयसो दाता	२.१५.७
मुमुच पादपाश्चैव दाह	२.४२.६६	मुष्टिनैकेन तेजस्वी	२.३०.५३	मूर्तयो हि तवाव्यक्ता	१.५४.८४	मृतमित्यभिजाय ज्वरं	२.१२३.१	मेघाश्च दिवि युक्ता	२.१६.६३
मुमुचुः पुष्पसंघातं	३.२७.२०	मुष्टिभिर्निहताः केचित्	१.४७.४५	मूर्तिमन्तश्च ते वृक्षाः	२.६८.२५	मृतेन तेन दुर्बुद्धे	२.१०५.७४	मेघीभूताश्च मायाभिर्वर्षन्ति	३.२८.८६
मुमुचुश्चापरे युपान्पशवः	३.३२.१६	मुष्टिभिश्च तलैश्चैव	३.६०.६१	मूर्तिमान्सरहस्यात्मा जगतो	२.२५.२१	मृत्यवे त्वां निवेद्याद्य	३.१२७.४१	मेघैस्सशैलसंस्थानैर्नीलैः	२.१८.३६
मुमुदाते यदुवरौ वसुदेव	२.३३.४३	मुष्टिं कृत्वा महाघोरां	३.६७.१२	मूढं जेषु च जग्राह	१.६.३६	मृत्युनापहृते पूर्वं शेषो	२.४.६३	मेघोघनिष्प्रभाकारमदृश्य	२.१८.१६
मुमूर्षति मृतो वायमिति	२.६०.५१	मुष्टियुद्धं समभवन्नर	३.१२६.३६	मूर्ध्नि चैव महानग्नि	३.१८.११	मृत्युर्दण्डं पाशमापः	३.२६.६	मेदसा तज्जलं व्याप्तं	१.५२.३६
मुमोच ज्वलितां घोरां	१.४८.३३	मुहुर्त्तं भूतं देवस्य	१.१०.३५	मूर्ध्नि ब्रह्म समुत्क्षित्य	३.१७.३६	मृत्युस्त्वां सर्वथा	३.६६.३	मेदिनीत्येव शब्दश्च	३.२६.५५
मुमोच देत्यनगरे	३.१३३.७७	मुहुर्त्तं ध्यानमात्रेण दृष्टं	२.२८.६०	मूर्ध्न्यथैरावतं तार्क्ष्यस्ता	२.७३.६०	मृत्योर्भागे क्षितिगते	१.५४.४	मेदोमज्जापियाश्चैव	२.१०६.५४
मुमोच घनुरायम्य	२.१०६.१७	मुहुर्त्तं विह्वलो	३.६०.५१	मूलेन सुविशालेन	२.४०.७	मृत्योः स्वसः कृतो	२.४.५०	मेदोमज्जामहापङ्का	३.६२.१८
मुमोच निशितान्बाणान्	२.११६.१७१	मुहुर्त्तं सुमहानीत्संपातो	२.७३.८६	मृगया नात्र कर्तव्या	३.७४.२६	मृदंगवाद्यानपरांश्च	२.८६.६६	मेतका सहज्या च	३.३६.४८

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

११३

मेनका सहजन्या च	३.६६.२०	मोदगलस्य सुतो ज्येष्ठो	१.३२.६६	यक्षाणां राक्षसानां च	१.४.७	यजस्व विविधान्यज्ञान्	२.५५.८१	यतयो नियता भूत्वा	३.१०७.१२
मेरुकूटे पुरा देवैः कृत	२.५१.२८	मोयथा पुरुषाक्रान्ता	३.२५.१३	यक्षानुजो महातेजा त्रिशोर्षः	१.६.३४	यजेद्वहुसुवर्णेन राजसूयेन	३.३१.४	यतयोऽन्ये पलायन्ति	३.१०६.६
मेरुपृष्ठं तु रक्तेन	३.६०.६	य		यक्षाः पिशाचागन्धर्वा	२.१०६.४६	यज्वा देवावृषो राजा	१.३७.६	यतश्च पितृवाक्यार्यः	१.२१.३५
मेरुप्रतिमरूपाणि	३.३५.३१	यं इदं च्यावनं स्थाना	१.२८.३७	यक्षाविमाविति तदा स	२.२७.२४	यज्ञमूर्तिः पुराणात्मा	३.७६.३	यतश्चैवविधः कृष्णस्ततो	२.७१.४७
मेरुं गतस्य वा तस्य	१.११.२	य इदं जन्म देवाना	१.६.६६	यक्षैश्च श्रूयते तात	१.६.३२	यज्ञवाटस्याविदूरे देवो	२.८३.५५	यतस्व राज्ञां वचनप्रचोदितो	२.५३.५५
मेरुश्च पर्वतश्रेष्ठो	३.४६.६६	य इदं शृणुयान्नित्यं	१.६.५५	य गतिर्धर्मयुक्तानाम	१.४०.३८	यज्ञानां तपसां चैव	३.३७.५	यतस्व सह पुत्रेण	२.२७.१६
मेमोः शिखरविन्यस्ता	१.५२.७	य इमां दग्धभूयिष्ठां	१.२.४४	यच्च कामसुखं लोके	१.३०.४४	यज्ञानां हि गतिर्विष्णु	२.११०.८४	यतिभिः कर्मभिर्मुक्तं	३.२४.१४
मेरोरि वः गिरेः शृंग	२.६८.४२	य एको याति जगतां	२.७२.४२	यच्च चक्रधरेष्वस्ति	२.१२६.१०४	यज्ञार्थं समवेतानां मिषतां	१.४०.३	यतिर्ययातिः संयातिरायति	१.३०.२
मेरोः सानो नरपते तप	२.६१.५	य एको विश्वमध्यास्ते	२.७१.१३	यच्च ज्ञातिपरिज्ञानं	२.२५.३५	यज्ञार्थं समवेतानां मिषतां	१.४०.४	यतेर्वचनमाकर्ण्य	३.११२.१
मेषयोः पश्मन्विच्छन्	१.२६.२८	य एतच्छृणुयान्नित्यं	३.१३०.२०	यच्च ते पौरुषं सर्वं	२.१२२.८७	यज्ञार्थं च वयं सृष्टा	२.११०.७३	यतो बाणस्ततो गत्वा	२.१२६.८६
मैत्रायणस्ततः सोमो	१.३२.७६	य एव कपिलो मम	३.१४.११	यच्च वक्ष्यति मां	२.१६.१०१	यज्ञावसाने शैलेन्द्रं	३.२३.४०	यतो बाणस्ततो भीता	२.११६.१०८
मैथुनाय विचेष्टन्ती	१.६.५४	य एष भवता पूर्वं	२.१०४.१	यच्च वेद्यं भगवतो	३.३३.४१	यज्ञियानि च द्रव्याणि	१.४०.३१	यतोभूतानि जायन्ते	३.१३.२०
मैनाकं च महाशैलं	३.४५.२४	य ओमित्युच्यते शब्दो	३.१११.४३	यच्चाण्डमकरोत्पूर्वं	३.३४.१०	यज्ञे विवरमासाद्य	३.५.२७	यतो रजिष्ठातिस्तत्र	१.२८.७
मैवाकस्य सुतः श्रीमान्	१.१८.४१	यः क इत्युच्यते	३.१३.१३	यच्चास्य देवदेवस्य चरितं	१.५०.२१	यज्ञैर्जप्याह्निकैश्चैव नित्यं	२.६६.६४	यतो विश्वमिदं भूतं	३.१११.३५
मैरेयमाध्वीकसुरासवानां	२.८६.३७	यः कर्ता कारको	३.७.१६	यच्छिद्रमूध्वं माकाशं	३.३४.४	यत्रैर्मर्त्या न यक्ष्यति	२.६६.६३	यत्कर्तव्यं महेन्द्रेण	१.५३.३
मैवं पद्मपलाशाक्षि प्राणे	२.६७.२८	यः क्रीडते नागफणौ	३.८२.२४	यजता वज्रमेधेन	३.७१.३	यज्ञोषवीतं करकं दक्षिणां	२.७६.५३	यत्काक्षितं वै सर्वेषां	३.६६.४४
मोक्षयित्वा किरीटं तु	२.४१.४१	यक्षगन्धर्वपतिभिस्सिद्ध	२.२.१८	तजते पुष्करे ब्रह्मा	३.२३.६	यज्ञोपवीतं व्रतके दद्यान्नारी	२.७६.४६	यत्किञ्चित्पश्यसे चैव	३.१०.६२
मोक्षयित्वा रणे चैव	२.१२७.१३८	यक्षराक्षसगन्धर्वैर्नित्यं	३.४६.६६	यजनं विक्रमं चैव	३.१६.२२	यतन्ते श्रेयसे नैव	३.७६.१६	यत्किञ्चिन्निषु लोकेषु	२.६८.६
मोक्षितं बन्धनादगुप्तं	२.१०१.२	यक्षराक्षसवागानां नाकाशे	२.४८.१६	यजनान्ते तदन्नं तु	२.१७.२१	यतमानस्य चिच्छेद	२.६०.६	यत्कृतं यदुसिहेन	२.१०१.६५
मौज्जी यज्ञोपवीति	३.६६.५७	यक्षराक्षससैन्येन गुह्य	१.४४.१६	यजमानश्च यज्ञान्ते	२.२३.३२	यतयो दीर्घतपसः	३.१११.१०	यत्कृत्वा दुष्करं	२.१०१.६

श्रीहरिवंशपुराणम् ॥ श्लोकानुक्रमणी

११४

यत्तत्कारणमाहुस्तत्साख्याः	३.८८.१८	यत्र कृष्णो महाबाहुः	२.५०.६०	यत्र विश्वेश्वरः शम्भु	३.८४.६	यथार्थमूहुः सरितो नापि	१.४२.३७	यथा न मम पुत्रस्त्वं	२.१०४.३३
यत्तत्सत्राजिते कृष्णो	१.३६.१	यत्र तद्वर्त्तते युद्धं	२.१२२.२८	यत्र विश्वेश्वराः	३.८४.५	यथा कथितवान्विप्रो	२.२८.४२	यथा नागस्सुदुर्वृत्तो	२.२६.१६
यत्तद्ब्रह्ममयं ज्योतिराका	३.१६.२५	यत्र तन्मानसं नाम	३.८४.६	यत्र विष्णुकथा दिव्याः	३.१३२.६६	यथा क्रमेण सर्वेषां	२.१२७.१३०	यथा नारायणो ब्रह्मन्	१.४०.५
यत्तद्दरत्नं मणिवरं तव	१.३६.३६	यत्र ते लोकपालाश्च	३.८६.१७	यत्र विष्णुर्जगन्नाथ	३.७६.२१	यथा क्रुद्धस्य सिंहस्य	३.१२६.१६	यथा नारायणो राजन्	३.३३.६
यत्त्वमिच्छसि मु वीर त्वं	२.२७.२६	यत्र ते शकुना राजन्	१.२३.१५	यत्र शाल्वं च मैन्दं	१.४१.१५७	यथागतं जगन्नाथो	३.६०.३७	यथा निदाघसमये	३.११४.२
यत्त्वमेवंविधो ब्रूषे गते	२.३२.३३	यत्र त्वं च महाबाहो जातः	१.५५.१६	यत्र स्थितमिदं सर्वं	३.८२.१२	यथागता वयं सर्वे कृष्णो	२.४६.६	यथानुपूर्व्या च यथावयश्च	२.८६.५६
यत्त्वया दर्शितं लोके	२.१४.४०	यत्र देवापि मुह्यन्ति	१.४१.१७१	यत्र हत्वा रणे रामो	३.७६.२४	यथागती धूमसंघातो	३.२१.१६	यथान्यायं निर्भिमिरे	२.५८.१६
यत्त्वया धार्यते किञ्चित्	१.५२.१५	यत्र देवासुरे युद्धे	१.२८.४	यत्रापवस्तु तं क्रोधा	१.३३.४३	यथा चचार स तपो	३.७३.१०	यथान्यायमुत्राच वदतां	२.५०.८३
यत्त्वया धार्यते ष्कचित्	३.३४.२०	यत्र देवा हव्यपुष्टा न	३.२३.३६	यत्राहमिव विस्तीर्णाः	२.११०.४४	यथा चतुर्थं धर्मस्य	१.१६.२५	यथान्यायं पूजयित्वा ती	२.४५.१८
यत्त्वया पातितो देहो	२.२४.६४	यत्र देशे यथा जातो	१.५५.१७	यत्रैनं वीक्षितुं देवा न	१.५५.२३	यथा चतुर्थं धर्मस्य	२.११२.१६	यथापक्षं भवद्युद्धं	३.३२.५८
यत्त्वयाऽभिहितं वाक्यं	२.१७.१०	यत्र द्रव्यहोति वै प्रोक्तं	३.१७.१५	यत्रोत्थितो महासेनः	२.११६.१८	यथा च तेन निहतो बल	२.६२.३६	यथा पल्लपिण्डः स्याद्	२.७१.२७
यत्त्वया विहित देव	३.४७.१७	यत्र द्योगवतां श्रेष्ठं	३.१३.१८	यत्रोत्पन्नो महात्मा	१.८.४१	यथा च देवेदेवस्य	२.११६.११	यथा पूर्वं जगन्नाथो रथं	३.१२८.६
यत्त्वया सलिलं	३.७२.३८	यत्र धीः श्रीः स्थिता	२.१०१.७३	यत्सत्यं यदनृतमादिमक्षरं	३.७.२५	यथा च पितृभिर्दुग्धा	१.४.२७	यथा प्रदेशमद्यापि धर्मेण	१.४.२३
यत्त्वया स्त्रीकृते मोहात्	१.५४.३४	यत्र प्रसेनो मृगयामा	१.३८.३१	यत्सत्यमक्षरं ब्रह्म	३.१४.१३	यथा च वर्तमानास्ते	१.२०.१०	यथा प्रभावं तान्सर्वानि	२.११८.५६
यत्तन्श्च क्रियतां कंस	२.२८.५३	यत्र बाहुसहस्रेण	१.४१.११२	यत्स्यात्तापकरं पश्चादार	२.७१.११	यथा चैकार्णवजले	३.१०.३१	यथा प्राणं महाबाहू	३.१२४.१८
यत्परं योगयुक्तानाम	३.१३.१६	यत्र भूस्त्रजकं चैव	३.१४.६	यत्समासेन वक्ष्यामि	२.६३.११०	यथा जले जलं क्षिप्तं	२.१२५.३३	यथा प्राणं यथायोगं	३.१००.२४
यत्पारिजातकुसुम	२.६७.८	यत्र यज्ञाः पवर्तन्ते	३.७६.२६	यत्स शाणप्रमाणोऽस्य	२.७४.१४	यथा ते कथितं पूर्वं	१.२३.६	यथा बलं मनुष्याणां	३.२.४२
यत्पृच्छसि महाराज	१.४१.२२	यत्र यत्र जलं स्कन्नं	३.३४.१२	यत्सिद्धिं करमाशु	३.४१.४१	यथा ते कथितं पूर्वं	१.५३.७०	यथा भूतेन्द्रियावाप्तिविहिता	१.४६.२३
यत्पृथिव्यां द्विजेन्द्राणां	३.१०.५३	यत्र यत्र प्रयास्यामो वयं	२.४६.१६	यथ प्रदेशमद्यापि	१.३०.२०	यथा देवासुरे युद्धे	३.१२४.१५	यथा मनस्वी रिक्तश्च	३.६६.३२
यत्पृथिव्यां ब्रीहियवं	१.३०.३६	यत्र यत्र समं त्वस्या	१.६.१७	यथर्त्तवृत्तुलिङ्गानि	१.८.३८	यथा न बाधते राजा	३.७४.१६	यथा मैनाकमाश्रित्य	२.७४.३७

यथा यथा च मे भ्राता	२.६६.७०	यथाहमपि लोकानां तथा	२.१४.४६	यथौ ज्वलन्नथ तदा	२.१२४.३८	यदा न धारणे शक्ता	१.२५.६	यदि चेष्टतमः कश्चिदयं	२.११६.१६३
यथायं शाश्वतो धर्मो	१.४५.३२	यथाहं शोणितैर्दिग्धो	२.१२६.१५२	यदण्डमकरोत्पूर्वं	३.३४.५	यदा न शक्यते	१.५.१५	यदि तच्छक्यते	३.२.२६
यथायंसनिकृष्टो हि	२.३५.३	यथाऽहमेतज्जानीयां तथा	१.२४.१०	यदत्र कारणं कार्यं सुनयोपेत	२.४८.८	यदान्येऽभ्यो न बिभ्येत	१.३०.४१	यदि ते देवकी मान्या	२.२६.१७
यथा युगानां परिवर्तनानि	३.४.५३	यथा हानिः क्रमात्प्राप्ता	३.४.४६	यदत्र वः क्षमं कृष्ण	२.३८.६६	यदा बलिर्महादैत्यो	३.५४.२४	यदि ते निहतः सख्ये	१.५४.३८
यथाहितः पूजयित्वा	२.६४.३७	यथा हि पुङ्गवश्रेष्ठो ह्यग्रे	२.१६.२२	यदद्राक्षीद्धि मां रवश्रूबहु	२.६७.२३	यदा बाणपुरे वीरः	२.१२०.१	यदि ते मत्प्रियं कार्यं	२.३२.५३
यथाह्येण च संपूज्य	२.५२.६	यथा हि पुष्पप्रभवं	३.६.७	यदन्यत्संविधातव्यं	२.१२१.६६	यदा भावं न कुरुते	१.३०.४०	यदि त्वनुग्रहं भूयस्त्वत्तो	१.१६.३२
यथा वदति राजेन्द्र मगधा	२.५३.२५	यथा हि भगवान्	३.५६.६१	यदर्थमिहं संप्राप्ता	३.६७.१	यदा माता पिता चैव	१.२१.२३	यदि त्वं मे विजानासि	२.११८.८६
यथावदब्रवीच्चैव जनार्दन	२.६४.६०	यथा हि वायसो मूर्ध्नि	२.२२.६२	यदवोचमहं वाक्यं तत्तथा	२.६०.७२	यदा वरमदोन्मत्तश्चो	३.४१.३०	यदि त्ववश्यं श्रोतव्यं	२.२०.१२
यथा वदसि देवेश	३.८६.२०	यथा ह्यनागतमिदं	३.२.३८	यदस्नासि जगत्सर्वं	२.२६.३७	यदा वरमदोन्मत्तो न्यवसद्	१.४१.६८	यदि त्वहमनुग्राह्या	२.६६.५३
यथावदानुपूर्व्येण महेन्द्र	१.४८.७७	नथेदानी तथैव त्वं भव	२.६७.४५	यदस्माभिस्समेत्यैकया	२.४६.७	यदाऽवितृष्णः कामानां	१.३०.३६	यदि त्वां जनयित्वा सा	२.२६.१३
यथा बाणस्य नगरी	२.११८.८१	यथेन्द्रियैश्च भूतैश्च	१.४६.२२	यदहं धारयाम्येका जगत	१.५२.४५	यदासद्विर्त्तते यच्च	३.८८.६४	यदि त्वां प्रणमेतासौ	२.४४.५०
यथावास्तु तथा वास्तु	१.५५.२६	यथैव देवराजोऽग्रमजितो	२.६४.६१	यदा च सुदुराधर्ष	१.४८.८२	यदा संनह्य युध्येत् आरूढः	२.४८.४६	यदि दद्यां ततोऽद्याहं	१.३४.१०
यथावै दमितो नागः	२.४६.५०	यथैव मम मातुः स वरं	२.७१.५१	यदा चास्मै नापि सुता	२.४८.१२	यदा सा रक्तभावा च वज्र	२.६१.४५	यदिदं प्रस्तुतं कर्म त्वया	२.४०.३६
यथा वो बुद्धिरखिला	३.८६.१६	यथैव हि परा बुद्धिः	३.५.३४	यदा चैषां विकुर्वन्ति	२.१६.८	यदा सौरं वपुरिति	३.१११.५३	यदिदं लुप्तधर्मार्यं युष्मा	१.४५.४६
यथाशक्ति यथाप्रज्ञं	३.७३.१२	यथैवोक्तं मधवता तथैव	१.३.१३६	यदाज्यं वयमश्नीमो	२.११०.८०	यदास्य तास्तु मानस्यो	१.३.४	यदिदं दुष्करं कर्म कृतं	२.२४.६०
यथा शक्रध्वजतरोः	२.११६.७२	यथैवोपेन्द्रतां यातः स्वयं	२.७१.५२	यदा तस्य सुपर्णस्य	१.४८.३४	यदाहं भेदयिष्यामि	३.२३.४७	यदि देव्याः प्रसादस्ते	२.११६.६४
यथा शैलैः पिशाचैश्च	१.४.२८	यथोक्तं ब्रह्मणा	३.६३.६	यदा तु नैवापश्यंस्तं तदा	२.८५.२८	यदा हि प्रार्थयामास	१.३६.२	यदि दैत्यगणान्मवान्	१.२८.१२
यथा श्रमाणां प्रवरो	३.७१.७	यथोक्तविधिवर्णेण अभिषि-	२.५०.७४	यदा त्वं तेज इत्येवं	३.१११.५१	यदा हि स महातेजा	२.१०१.६०	यदि द्रष्टा दुरात्मानं	३.६५.२८
यथा सूर्यस्य गगने	१.३.६८	यथोत्पन्नस्तथैवाहं	१.१७.१७	यदा त्वं रजसा	३.८८.२७	यदि कुर्यादयं मूढस्त्वयि	२.४४.५१	यदि नाधिगते पूर्वं	२.१०१.६६
यथासौ देवदेवो मे शंकरश्च	२.५८.२४	यथोवाच महाभागो	१.२०.५	यदा त्विमौ नरश्रेष्ठो	२.१०१.४७	यदि चेन्निष्क्रमिष्येते	२.४२.५१	यदि प्रभवतां दण्डो लोके	१.५५.२८

श्रीहरिवंशपुराणम्:: श्लोकानुक्रमणी

११६

यदि प्रसन्नो भगवान्	३.६८.६	यदुर्नामाभवत्पुत्रो	२.३७.४६	यद्यवश्यं प्रहन्तव्या पितृ	१.२१.११	यन्ताथश्च हुताशश्च	३.६२.१३	यं वदंत्युत्तमं भूतं यं	१.४४.३०
यदि मायाप्रभावेण	३.११६.१८८	यदुवंशात्समुत्पन्नं वसुदेवा	२.५७.६१	यद्यस्ति तपसो वीर्यं	१.४५.४३	यन्त्रागलविचित्राढ्यां	२.५५.१०७	यं विदुर्भूततत्त्वज्ञं	३.८५.१७
यदि विष्णुपुरोगानां	२.११६.८४	यदुश्च राजा शशि	२.६५.३६	यद्यस्ति भारो यद्यवरो	१.५२.५६	यन्मया चाभिषिक्तस्त्वं	२.५५.४२	यं सदा देवि इष्ट्वा हि	२.६२.२२
यदि शक्तो हरे कृष्ण	३.१०१.१५	यदूनां प्रथमो बन्धुस्त्वं	२.४३.६३	यद्यस्ति मे यज्ञफलं	३.५.१६	यन्मयाभिहितो ह्येष	२.११०.८२	यमभार्या चकाराथ व्रतं	२.८१.३०
यदिष्टं वो यदुश्चेष्टाः	२.१०१.७१	यदूनां वृष्णिवीराणां	३.१००.६	यद्यस्ति सुकृतं किञ्चित्	१.२१.४४	यन्मयोक्तमशेषेण	३.११७.२	यमः सर्वहरस्तेन दण्ड	१.४७.५०
यदि सा नाम मानुष्यं	२.७८.१४	यदूनामन्तरं प्रेम्सुर्यदूनां	३.१०३.१०	यद्यहं सत्पथे मूढो	१.५४.४१	यन्मा भवन्तः पृच्छन्ति	२.११०.८६	यमस्तु तत्पितुः सर्वं	१.६.२४
यदि सा वरयेदन्यं राज्ञां	२.४८.४६	यदेतत्पार्थिवं क्षत्रं स्थितं	१.५४.१४	यद्यहं समनुग्राह्यो	२.११६.५०	यन्मां वदसि युद्धार्थे	१.४६.११	यमस्तु दण्डमुद्यम्य काल	१.४४.११
यदि सुप्ता सती साध्वी	२.११८.२३	यदेतदाहृतं स्वगतिवदर्थ	२.६७.५५	यद्यावयोस्तौ प्रमुखे	२.२८.२७	यः पठेत्प्रातस्तथाय	३.७२.१०२	यमस्माक्षीन्मुनिश्रेष्ठो भगवान्	२.६८.४
यदि स्थातत्र गच्छामो	३.१०७.१०	यदेतन्मम राज्यं वै सर्वं	२.३७.२८	यद्यावां प्रतियोत्स्येते	२.२८.२८	यः पुराणे पुराणात्मा	१.४०.१६	यमहं भारसंतप्ता संप्राप्ता	१.५२.६०
यदि स्म सन्तिकर्षस्था	२.१२२.१५	यदेव वर्णवैरुष्यं	१.१२२.२२	यद्येवं मे विशालाक्षि	२.११८.७६	यः पुराणे पुराणात्मा	३.४८.५	यमासाद्य जनः सर्वो	२.६४.६७
यदि स्यात्संवृतां भूमि	२.५५.११३	यदेव भगवान् प्रीतः	३.६८.५	यद्येवं चोदितः शक्रः	१.२८.२७	यः पुरा ह्यनलो भूत्वा	१.४०.१६	यमाहुरनेर्यन्तारं सर्वं	१.४४.२६
यदि स्युर्निर्वृता लोकाः	२.३२.११	यदोर्वंशं प्रवक्ष्यामि	१.३२.१२६	यद्येवं नाथ गन्तव्यं	२.३१.३३	य पुरा पुरुहूतार्थं त्रैलोक्य	१.४०.१७	यमाहुरग्र्यं पुरुषं	३.८५.१५
यदीच्छसि तदागच्छ सद्यः	२.७०.४३	यदोस्तु शृणु राजर्षे	१.३०.४८	यद्येवं पुत्र युष्माभिनं	३.६६.४	यः प्रभुर्भाति विश्वात्मा	२.१२१.१३६	यमाहुराद्यं विबुधा	३.८२.११
यदीच्छेत्सागरः किञ्चित्	२.५८.३४	यदबाहुवलमाश्रित्य वयं सर्वे	२.५३.२३	यद्ये वाहमनुग्राह्यो	२.१२७.६४	यः प्रभु सर्वभूतानां	३.३६.२०	यमाहुरेकं पुरुषं	३.८५.१६
यदुक्तं चैव युष्मा	१.१७.३५	यद्भूतमधिभूतं च यत्परं	३.७.१८	यद्येष समयो राजन	१.२६.१६	यः प्राणः सर्वभूतानां	१.४४.२८	यमुनाकर्षणं चैव	३.१३४.२०
यदुक्तं देवदेवेन नृपाणामग्रतः	२.५५.५	यद्भार्या भूमि समुत्पन्ना	२.८८.४२	यद्येषा प्रतिहन्तव्या	१.४५.७६	यं कश्यपः सुतवरं	१.३.६	यमुना चैव कावेरी	३.४६.४३
यदुक्तं देवदेवेन	३.१३३.३३	यद्यदिच्छसि वर्णं च	२.६५.२६	यद्येषामीदृशो गन्धो	२.१३.६	यं कालं तौ गतौ	३.१४.२१	यमुनातीरमार्गस्था गोप्यस्तं	२.७.२०
यदुक्तं मागधेनात्र सुनीथेन	२.४६.२	यद्यदेवात्मनोऽभीष्टं	३.१३२.८२	यद्वा चन्द्रमसा कार्यं	१.५३.४	यं परं प्राहुरपरं यः परः	१.४०.४१	यमुनातीरमार्गेण जल	२.५.३०
यदुनामन्तप्रेम्सुविचक्रो	२.११५.८	यद्यद् गृहे वरं किञ्चिद्	३.१३२.१६	यद्वाजपेयेन तू राजसूया	१.१.६	यं प्राहुरीड्यं वरदं	३.८०.५१	यमुनाप उपस्पृश्य	३.१२७.४८
यदुं च तुर्वसुं चैव	१.३०.५	यद्ययं भवतां श्लाघ्यो	२.२०.१३	यद्वेदितव्यं लोकेऽस्मिन्	२.१४.४१	यं लेभे वरुणः पुत्रं	१.३३.४२	यमुनाया हृदे नागः	२.२२.२७

यमुनाया हृदे ह्यस्मिन्स्तो	२.२६.४२	यवनानां बलोदग्रः स काल	२.५३.१	यश्चेह भूयो दृश्येत	२.१२.४०	यस्त्वया पातितो वीर	२.४४.४६	यस्य प्राप्तादाज्जगदेव	३.८०.३६
यमेन्द्रधनदैर्गुप्ता वरुणे	१.४७.१८	यवनाः पारदाश्चैव	१.१४.४	यश्चैत्पठते स्तोत्रं	२.३.३५	यस्त्वया प्रम पुत्रो वै	२.२८.१०७	यस्य बाहुसहस्रस्य बभूव	१.३३.३६
यमो वा वरुणो वापि	३.११२.४	यवनेन्द्रो यथाभ्येति नरेन्द्रा-	२.५२.४३	यश्चैनं कथयेन्नित्यं	१.४.३४	यस्त्वया हि कृतो यत्नः	२.२२.४६	यस्य बुद्धिः परिणता स	२.२२.७३
यमो वैवस्वतस्तेषामासी	१.६.२५	यवनेन्द्रो यथायाति यथा	२.५२.४५	यश्चैनं पठते नित्यं	२.१२५.३६	यस्त्विमं वामन	३.७२.१०४	यस्य बुद्धिश्चाद्विष्णु	३.७४.६
यमो भीमश्च राजा च	२.८५.६	यशः प्रदीपा लोकानां	२.२२.१५	यश्चैनमग्र्यं पुरुषं	३.३२.६३	यस्माच्च कारणात्पाणि	१.४.३०	यस्य भासा जगत्सर्व	३.८८.४०
ययानिवंशजस्याथ वसुदेव	१.५३.७६	यः शेते जलधौ	३.८२.१०	यश्चैव पत्रैतः प्रांशुर्मोरुपृष्ठे	३.२७.३८	यस्माच्च वरदाः सन्त	१.७.५७	यस्य यज्ञे जगो गाथां	१.३३.१६
यया हि देवदेवोऽसि	३.१११.३३	यशोदया च प्रथितं यशोऽथ	२.८६.६	यष्टा क्रतुसहस्राणां	३.५१.५१	यस्माज्जितैरभिषिक्तोऽसि	२.७४.२६	यस्य यस्य च वेपेण	२.६१.३१
ययुर्विविधशस्त्रो	३.६३.१२	यशोदा त्वन्नवीद्भीता	२.६.३३	यष्टारः क्रतुभिनित्यं	३.५६.६६	यस्मात्कामप्रधानस्त्वं	१.२२.३	यस्य यस्यान्वये ये	१.१.१७
ययुः ससैन्या युधि	३.५२.४८	यशोदा नन्दगोपश्च	३.१३०.१	य स देवो हृषीकेशः	१.४४.३५	यस्मात्त वैप चरणः	१.६.२८	यस्य शंखध्वनि श्रुत्वा	२.११६.२०२
ययु ससैन्यास्तपनीय	३.५२.४७	यशोदापि समाधत्त	२.४.१०	यः समाः सर्वधर्मज्ञ	१.४१.१२८	यस्मात्त्वया हतः केशी	२.२४.६५	यस्य स्मरणमात्रेण	३.१३५.१४
ययुः स्वानालयान् सर्वा	२.११७.२७	यशोदामनुगच्छन्त्य	२.१२.२६	यः सर्वासां विमानानि	१.३.४८	यस्मात्प्रसूयते लोकः	३.६६.३०	यस्या दुष्टमनः पूर्वं	२.११८.२४
ययो कैलासशिखरं	३.८५.४	यशोदायामजानन्त्यां	२.६.३४	यसु प्राप्तादमुख्योऽत्रं	२.६८.५३	यस्मात्प्रावृडियं कृष्ण	२.१५.१६	यस्या नैवंविधो भर्ता	२.११८.४२
ययो तस्य सहायार्थं	३.१२१.१२	यशोदायोस्त्वविज्ञातस्तत्र	२.४.२६	यस्तु बाहु सहस्रेण	१.३३.६	यस्मादीशो महातामीश्वर	२.७४.२४	यस्या यस्यास्तु यो	२.८८.३२
ययो नीति विचिन्वानः	३.६५.१८	यशो हर्षश्च कामस्य	३.३६.५६	यस्ते जनिष्यते पुत्रस्तस्य	१.३६.१६	यस्माद्भूतानां भूतिरन्तोऽथ	२.७२.५६	यस्यार्थे दारुणं कर्म कृतं	२.२८.३
ययो स्वमेव भवनं	२.११६.१६६	यश्च कर्ता विकर्ता च	३.६२.१५	यस्ते भर्ता यथारूपो	२.११८.६७	यस्मिन्न कश्चिन्मृत	३.१३.२७	यस्याष्टगुणमैश्वर्यं	३.६६.३७
यल्लिङ्गाङ्कं त्र्यम्बकः सर्व	२.७२.६०	यश्चकार महात्मा	१.१०.२५	यस्त्वं देवोपमं वृद्धं	२.२३.३५	यस्मिन्वसति वै देवः	१.२६.६७	यस्येच्छया सर्वमिदं	३.८२.१३
यल्लिङ्गाङ्कं यच्च लोके	२.७४.३२	यश्चक्रं वर्तयत्येको	१.४०.११	यस्त्वं महासुरं रौद्रं	१.११.३६	यस्मिन्विश्वमिदं	३.८०.५२	यस्येन्द्र प्रमुखा देवाः	२.१२१.३
य वत्पतति कायात्ते	३.६६.५	यश्च स्तवेन मां भक्त्या	२.७४.३६	यस्त्वेवं शृणुयान्नित्यं	१.३६.४१	यश्चेमां धारयेद्वाऽपि	१.१.२०	यस्येयं मृगशावाक्षी वना	२.२८.७८
यवनश्च हतः संख्ये	२.११५.२०	यश्चेदमग्र्यं प्रथमं	३.१४.६७	यस्त्वमेवमभेद्याभ्यां	२.११०.३६	यस्य चक्रप्रविष्टानि	३.३६.६	यस्यैते संप्रदृश्यन्ते	२.४६.२६
यवनाधिपतिश्चैव भगदत्त	२.३४.१६	यश्चेमं संगमं देव	३.८३.२७	यस्त्वया तात इत्युक्तः	१.५५.४७	यस्य नैव श्रुतं ब्रह्मन्त	३.२४.१३	यस्योदयाद्विश्वमिदं	३.८०.४०

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

११८

यस्योदरे देवमुनिः	३.८०.४४	यादवाश्चैव तान्सर्वान्यथा	२.३०.६१	यानि पद्मस्य पात्राणि	३.१२.११	या या ते वैष्णवी	२.१२७.७४	यास्यन्ति च ब्रजाः सर्वे	२.२६.३
यः स्रष्टा सर्वभूतानां	१.८.३१	यादवा धार्मिका ह्येते	२.५८.७२	यानि यानि च पुष्पाणि	२.६५.२४	या राजन्सोमपत्न्यस्तु	१.३.३६	यास्यामः पतगश्रेष्ठ भोज्य	२.५५.६६
यः स्रष्टा सर्वभूतानां	३.३३.२३	यादवानां कुलकरान्स्थ	२.५८.८१	यानि राजविनाशाय	२.२३.३३	या रूपाद्धमयी पत्नी	३.१४.३६	या ह्यक्षया सभा रम्या	२.५८.७३
यः स्रष्टा सर्वभूतानां	३.६६.७२	यादवानां विरोधेन ये	२.३८.६२	यानि लिङ्गानि लोकस्य	२.३३.३८	यावकं च बलिं दद्याद्दत्ता	२.७६.७०	या ह्येषा गङ्गारा माया	१.५०.२७
या आत्मदेवता गावो	१.५५.३०	यादवानामयं वंशस्त्वन्ना-	२.३७.६१	यानि लिङ्गानि लोकस्य	२.४५.१२	यावकं पयसा सिद्धं	२.८०.२८	युक्तं मनोजवैः शुभ्रैर्येन	१.३०.७
याः कथाश्चैव वर्तन्ते	३.७.२४	यादवानामियं भूमिर्मथुरा	२.५६.२	यानि वै माथुरे युद्धे प्राप्ता	२.४३.५	या वंचयति भर्तारं	२.७८.६	युक्तं महिषकौदिव्यं	३.५१.६४
या गति पुण्यकीर्तिनामगतिः	३.६६.३६	यादवाश्चापरे तत्र वासुदेवा	२.४७.१५	यानिष्ट्वा तु पितॄन्	१.१७.३६	यावन्तद्ब्रह्मविषयं	३.१६.३७	युक्तं माक्षसकोटिभिर्नीला	१.४१.१३५
याचन्ते न त्वयाच्यानि	१.१६.११	यादवास्ते बलोदग्रास्सर्वे	२.४७.१३	यान्यधः पद्मपत्राणि	३.१२.१२	यावत्स्थास्यति लोकोऽयं	२.४६.५२	युक्तं सहस्रेणदिते	३.५१.६४
या च स सुरभिर्नमि	१.५५.३४	यादवीं च श्रिय दृष्ट्वा	२.११०.४	यान्यहं विविधान्यस्य	२.११५.३	यावदेनं शशैर्हन्मि	२.१०६.२	युक्तं हयमहस्त्रेण	१.४३.१४
या चाक्षरूपानिच्छेत	२.८०.२४	यादवी नावमन्तव्यी	२.४२.४८	यान्यान्गुणान्पृथुश्रोणि	२.६२.२६	यावद्यादवसैन्येन षट्पुरं	२.८३.२०	युक्तं हयसहस्त्रेण	३.५०.२७
याचे त्वां पुत्रकामा	३.६८.८	यादवी स्वो मुनिश्रेष्ठ	२.३६.३६	यान्यान्मुषोच देवेन्द्र	२.७३.२१	यावद्विद्योषयामास	२.६६.६३	युक्त्वमश्वसहस्त्रेण रथं	२.६३.६४
याजयामास चेन्द्रो	१.३०.१३	या दुस्त्यजा दुर्मति	१.३०.४२	यान्येतानि तु पद्मस्य	३.१२.१०	यावन्तो मनवश्चैव	१.७.२	युक्तमृक्षसहस्त्रेण	१.४३.७
याजयिष्यामहे विप्राः	३.१०७.६	यादृशं युद्धमानानाम	२.११६.१२८	याः पत्न्यो वसुदेवस्य	१.३५.१	यावन्त्यो वर्षधारास्तु	३.१८.१३	युक्तमृक्षसहस्त्रेण	२.४६.३३
या तथास्तमिते सूर्ये	२.७६.६६	या नरेषु प्रसज्जन्ते	२.१०४.२१	या पश्यसि प्रियं पुत्रं	२.१२.२३	यावन्न संग्रामगतो जितो	२.७०.४६	युक्तमृक्षसहस्त्रेण	३.४६.४६
यातीव च पुरो भाति	३.११४.१५	या पुत्रभावमुत्सृज्य	२.१०४.१६	या प्रजा पूर्वमारूढा	३.३२.१५	यावन्तो दुष्कृतं	३.७६.१५	युक्तश्च शङ्खपद्माभ्यां	१.४४.१७
या तु पद्मासना	३.१२.४	यानर्चयन्ति सततं देवा	२.६६.७	या भावयति भूतानि	१.१८.६६	यावेतो मम संवृद्धौ ब्रजे	२.२८.२२	युततश्चैव तथाऽत्रेयः	१.७.८४
या तु सा नन्दगोपस्य	२.२.३४	यानि दानववीराणां	३.५६.३०	यां वै सर्वे सुमनसः	२.१०१.१५	या शेषभोजिनी नित्यं	२.८१.५	युक्ताहारविहाराश्च युक्त	१.१६.१२
याते भगवति व्यासे	३.५.७	यानिदुष्टास्त्रियो नास्ति	२.७८.११	यामाहुः पुण्यशीलानां	३.७६.२८	या साममृतकल्पं वै	२.१२७.३५	युक्तोकार स्वशिरसं चारु	२.७२.४०
या त्वमेवं महादेहः	२.११०.४०	यानि देवमनुष्येषु रत्नानि	२.६३.६	यामेव रजनीं कृष्णो	२.४.१२	यास्वेकपत्न्यश्श्रूयन्ते	२.२८.१०६	युगपत्पातयति स्म	२.१०५.३
यादवस्यास्य वंशस्य	२.३७.११	यानि द्रव्याणि कौरव्य	२.७५.६८	यायातमाप वंशस्ते	२.३७.३४	यास्माम्यपचिति दिष्ट्य	१.४८.१६	युगपत्सक्षिपन्ति स्म	२.१०५.५७

श्रीहरिवंशपुराणम् १: श्लोकानुक्रमणो

११६

युगं द्वादशसाहस्रं	३.१८.३४	युद्धाय तं यान्तमदीन	३.५२.३८	युवयोः शोणितं पीत्वा	३.१२६.२५	ये च तस्मिन्महारौद्रे	३.१५.६	ये चेमे यादवा मूर्खा	२.२८.३५
युगान्तकरणं घोरं	३.२५.१५	युद्धार्थमुद्यता वीरा निकुम्भार	२.८४.२२	युवयोः सर्वथा जीवः	३.१०६.१४	ये च तेषां गणाः प्रोक्ता	१.१६.४	ये चेमे वार्षिका मासाश्च	२.१६.४७
युगान्तकोपमः श्रीमान्	३.५५.१५५	युद्धाय समपद्यन्त	३.६४.६	युवनावथ सद्यस्तौ	२.६६.२२	ये च त्वां कीर्तयिष्यन्ति	३.१३०.१६	ये तत्र समनुप्राप्ता न	२.५५.१६
युगान्तसदृशं रूपः शैलो	१.५१.१६	युद्धोत्सुकधिया नित्यं	३.५६.६८	युवां कस्य वने जातौ	२.२७.१३	ये च त्वां मत्प्रभावज्ञाः	२.२.५३	ये तु केचित्स्वदोषेण राज्ञः	२.३०.३०
युगान्तसमये भीमं	३.३८.२१	युद्धयतः प्राङ्मुखस्यास्तु	२.१२२.६३	युवां विद्वेषयुक्तेन	३.११८.१२	ये च मामभिरोहेयुर्नरा	३.२७.३७	ये तु गोब्राह्मणा	३.२५.१
युगान्तार्कप्रभं चक्रं कालीं	२.४३.५२	युद्धयतां रणशोण्डा	३.५४.३८	युवां विहाययास्ये	३.१०८.१८	ये च यत्रपरा विप्रा	३.१०.५	ये तु तत्र मयस्यासन्	१.४७.५
युगान्तेष्वन्तको यश्च	१.४०.४४	युद्धयमाने हृषीकेशे	२.३०.३६	युवां हि किं बलौ युद्धे	३.११८.४२	ये च योगगतिं प्राप्ताः	३.२२.२७	ये तु तं ददृशुस्तत्र	२.२२.१०१
युगे युगे भवन्त्येते	१.२.५५	युधि प्रवृद्धौ बलिनी	३.५८.५३	युवा रूपेण संपन्न	१.३२.३४	ये च विज्ञानतृप्तास्तु	३.१११.४०	ये तु सिद्धा महात्मानः	३.५२.५
युगेयैर्नैश्च निर्मुक्तै	३.३८.१७	युधिष्ठिरं च जानामि	२.१६.६५	युष्माकं तेजसोऽर्द्धेन	१.२.४३	ये च विष्णुमधीयन्ते	३.२७.३६	ये तु हस्तान्निखादन्ति	३.२०.१२
पुज्यतीति ततोवाच	२.६६.२१	युध्यते दैवतैः सार्द्धं	३.५७.११	युष्माभिर्दर्शने युक्तमद्भुतं	२.५०.३७	ये च संप्रेक्षका गोप	२.३०.५७	ये त्वन्वचक्षुषः सर्वे	२.७५.५६
युद्धकामा नृपतयस्त्रिदिवा	२.४०.४२	युध्यतो रौहिणेयस्य	२.१२२.६५	पृथस्याद्यां महाभागां	२.१२०.१२	ये च हैमवतो वृक्षा	२.६८.६६	ये त्वन्ये ख्यातिमन्तो	१.३.३७
युद्ध चक्रतुरत्यर्थं	३.१२५.१	युध्यमानौ महावीरौ	३.६७.२१	यूपं समित्कुशं देवी	१.४१.७	ये चान्ये तपसा सिद्धा	३.२२.२६	ये त्वन्ये नृप वाष्ण्या	२.७५.५२
युद्धं नो रिपुभिः सार्द्धं	२.८३.५०	युयुधानपुरोगाश्च	२.११२.६	यूपमुत्क्षिप्य धावन्ति	३.३२.१४	ये चान्ये धारयिष्यन्ति	१.२४.३४	ये त्वन्ये ब्रह्मणः	१.१७.१४
युद्धमार्गंश्च विविधै	२.१४.११	युयुधे मायया दैत्यः शीघ्र	२.८५.२७	यूपाङ्किता वसुमती	१.१०.२१	ये चान्ये विन्ध्य	१.५.२०	ये त्वया निहता दैत्याः	१.५४.२०
युद्धमासीद्धि सैन्यानां	२.३६.४	युयुधे वासुदेवस्तु	१.३८.३६	यूयं वै पितरोऽस्माकं	१.१७.३४	ये चापि पुत्रिणो न	३.२४.२२	ये त्विमे मानुषा देवा	२.६६.११
युद्धयज्ञस्यनेताभूत्प्रह्लादो	३.५४.४	युवतीर्गोपकन्याश्च रात्रौ	२.२०.१८	यूयं शरीरकर्तारस्तेषां	१.१७.३१	ये चावयोः स्थिरे वृत्ते	२.१६.६०	मे दह्यमाना ह्यौर्वेण	१.४५.२१
युद्ध युद्धानि वचनैः	२.१२६.५०	युवनाश्वस्य पुत्रीं तु	१.२७.६	ये केचिद् राक्षसास्तत्र	३.१२६.४४	ये चासां रक्षिणो वृद्धा	२.६४.३०	येन चार्णवमध्यस्थौ नष्टे	१.४१.२४
युद्धव्यतिक्रमः कश्चिन्	२.३०.२०	युवनाश्वस्य पुत्रीं तु	१.३२.४८	ये गदं चैव साम्बं	२.६६.५१	ये चेन्द्रियगणाः सर्वे	३.६.६	येन तन्तुरिवाच्छन्नो	३.१८.२५
युद्धाभिकामो नृपतिः	२.५७.१७	युवमिस्स्थविरैश्चैव गोपै	२.६.२६	ये गोशतं कनक शृङ्गमयं	१.१.४	ये चेमे प्रथिमा गोपा	२.१७.३०	येन ते निहता दैत्याः	१.४०.२२
युद्धाभिलाषः सुमहान्	२.११६.५२	युवयोर्हि कृते वृद्धः	२.२७.५	ये ग्रहाः सर्वलोकस्य	३.४६.७	ये चेमे प्राकृता गोपा	२.३०.६६	येन तौ निहतौ युद्धे	३.१३१.४

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणा

१२०

येन त्वमसितापांगि	२.११८.३८	यैः क्रियन्ते हि कर्माणि	१.१८.३६	योधप्राण हरे रौद्रे	३.५७.२६	योऽस्मान्कारयते	६.७.२२	रक्ष त्वं सर्वदा	३.७५.२८
येन दृष्टो हरिः साक्षात्तय	३.८२.३६	यैराब्धो देहिनां भौति कोऽयं	२.७६.१६	योधयामास तेजस्वी	२.६३.१११	योऽहं दोर्म्यामुदाराभ्यां	२.१.२४	रक्ष देव जगन्नाथ	३.८७.३८
येन भार्याऽऽहता पूर्वं	१.१२.१३	यैर्दीक्षिताः स्थ मुनिभिः	२.८२.२६	योधयामास रक्ताक्षो	३.५६.२५	योऽहमेकस्य पुत्रस्य	२.५.५	रक्ष मां देवि सततं	२.१०७.१३
येन भुक्तं हि निखिलं	३.६५.१३	यैषा मायावती नाम	२.१०६.५०	योधयामास समरे	२.१२६.५६	यो हरिवंशं लेखयति	१.१.७	रक्ष मां रक्षणीयो	२.१२७.७६
येन लोकान् कर्मजित्वा	१.४०.१४	यो गतिर्देवदैत्यानां	३.३६.८	यो धेनुकं तालवने	३.८२.२५	यो हि द्वारवतीं प्राप्य	३.१२१.८	रक्षाधिकारो भवतः	२.१११.६
येन वृत्तेन जीवेयुः	३.२८.४०	योगधर्माद्धि धर्मज्ञ न	१.१६.१८	योऽन्तकाले जगत्पीत्वा	१.४०.१५	यो हि योद्धा रणं याति	१.६.५१	रक्षां कृत्वा स्थितं	३.२८.७८
येन वेद्य विदुर्मर्त्या	३.१७.५६	योगपट्टमुपाश्रित्य	२.१२६.४८	योऽप्यसौ ह्यविक्रांती	१.५४.७०	यो ह्यास्य जेता भगवांस्तं	३.६४.२५	रक्षिता चैव गोपना च	२.१२७.११७
येन संहं वपुं कृत्वा	१.४०.१८	योगाचार्यो महावीर्यो	२.६२.५	योऽभिगुप्तः स्वयं ब्रह्मन्	२.११६.४	यो तावजुं नवक्षौ तु व्रजे	२.७.२२	रक्षितारो महाभूतो	३.११६.६
येन स्वर्गादिहागत्य	१.१५.१४	योगात्मा धारयन्नुर्वी	३.२६.२८	योऽयं करीषधर्मश्च	२.३०.२१	यो तौ मयश्च तारश्च	१.५४.१७	रक्षितासि सदा विष्णु	३.११५.२१
येनांशेन हृता गावः	१.५५.३३	योगारम्भं कर्मसाध्यं	३.१७.५४	यो यं संकल्पयामास	२.७५.५६	योवनाश्वेन समरे	१.३२.१२५	रक्षिष्यामीति चोक्तं ते	२.११२.१४
येनाह दूषिता पूर्वं	२.११८.७०	योगेश्वराः षट् च	३.५३.४०	यो यस्य भवतो	३.४०.६	र		रक्षिष्यामीति चोक्तं ते	२.११२.१७
येनोद्धृतास्त्रैः पुरा मायिनी	२.७२.५४	योगो हि दुर्लभो नित्य	१.१६.१०	योऽयं हतस्त्वया विष्णो	१.४८.५६	रंस्यावस्तत्र सहितो राज्य	२.३७.२२	रक्ष्यतामिति चोक्तवैव	२.११६.१६४
ये यजन्ति मखैः	३.३७.२६	योग्यानि यानि मर्त्यानां	२.६६.७३	यो वक्ता यश्च वक्तव्य	३.७.२३	रक्तकौपीनवसनो	३.१०७.२०	रघोरथ कुले जातो	३.८२.१७
ये यजन्ति मखं	३.४०.२६	योजयामासभूतात्मा	३.१२७.४६	यो वरं दत्तावान् रुद्रो	३.११६.४	रक्तचन्दनदिग्धाङ्गं दीर्घं	२.२६.५३	रंगमध्यादुत्पपात कृष्णः	२.३०.७३
ये विसृष्टास्तु राजानो	२.४६.६२	योजयाश्चानिति तदा	२.११२.२६	यो विष्णुः सतु वै रुद्रो	२.१२५.३१	रक्तचित्राम्बरधरा	३.५१.५८	रंगवाटे करीषस्य	२.१८.१२
येषां भासो विभान्त्यग्रे	३.३७.२८	योजयित्वा ततस्स्कन्धे	२.४३.५८	यो वैकुण्ठः सुरेंद्राणां	३.३६.६	रक्ततोयो भीमवेगो	३.४६.५१	रंगवाटे गजं मत्त	२.१०१.५६
येषामर्थयि संग्रामे	१.२८.६	यो देवानामधिपः पापहर्ता	२.७२.३०	योऽसौ कृष्ण इति ख्यातो	२.४८.६	रक्तपीतारुणश्यामा	२.६८.७०	रजकः स तु तौ प्राह	२.२७.११
येषामिह च सान्निध्यं	३.२७.४६	योद्धुकामौ सुदुर्धर्षौ	१.४१.२५	योऽसौ चापं समादाय	३.८२.३२	रक्तपीतारुणास्तत्र	३.४१.७६	रजन्यां तु निवृत्तायां तत	२.३२.५७
ये स्वस्थास्त्वसुरास्तत्र	२.८७.२१	योद्धुं वितरते ह्यद्य	१.१२६.८८	योऽसौ पृथ्वीं दधारारु	३.८२.६	रक्तश्च मोक्षविषये	३.१६.५	रजः प्रच्छादयामास	३.५४.४०
ये हि देवैर्विरुध्यन्ते	२.११६.८८	योऽद्य गोपकतामासौ	३.६२.१०	योऽसौ हत्वा महामल्लं	३.८२.३४	रक्षणातव देवेश सदा	१.१३०.१३	रजस्तमोमयावावां यतीनां	३.१३.१५

रजिः पुत्रशतानीह जनया	१.२८.३	रत्नानि च ब्रह्मदत्तो	२.८३.१२	रथस्थं पार्थिवं रामः	१.४१.११३	रथेनमिस्वनैर्घोरैस्तुमुलः	३.५४.२६	रम्यां निवेशयामास	१.२६.७७
रणपटुरतिवीर्यसत्त्व	३.५१.१८	रत्नानि चैव पूर्णानि	२.८०.४०	रथस्थौर्दशितौ चैव	२.३५.५५	रथेन हरियुक्तेन तेन	२.४४.६०	रयामः शमीको गण्डूषः	१.३४.२२
रणप्रवेश सदृशं कर्म	३.५६.३१	रत्नानि तु प्रयच्छामि	२.८३.१६	रथहस्त्यश्वयोधाश्च	३.६४.५	रथेनादित्यवर्णेन भास्वता	२.४४.२	ररक्षपृथिवीं चैव	३.१७.१३
रणमध्ये स्थितः कार्णिणः	२.१०५.३१	रत्नानि यानि त्रैलोक्ये	२.८८.७६	रथांश्च नागांश्च	३.५२.४५	रथे श्वेतहयेनेह	३.५५.५५	रराज ब्रह्मयोगेन	३.१७.३८
रणान्निज्वलितो घोरौ	३.५४.१०	रत्नैश्चाभरणैर्मुक्ता तव	२.६६.३५	रथाङ्गेनाथ शाङ्गेण	२.७०.४४	रथेष्वतिरथो यन्ता दारुकः	२.५८.८२	रराज भगनासा	३.४५.१४
रणाद्विचलितं घोरं	२.५८.१२	रथनागाश्ववृन्देषु	३.५६.३१	रथाद्रथिवर श्रेष्ठस्तौ	३.१२७.२४	रथैः पवनसंपातैर्गजैश्च	२.४२.१०	रराज शंखचक्राम्यां	३.३६.१४
रणोऽतिष्ठत दैत्येन्द्रो	३.५८.३०	रथन्तरेण साम्नाथ	३.१३३.६८	रथानां मेघघोषाणां	१.३७.२४	रथैस्तु बहुसाहस्रै	३.५१.४१	रराज सुमहाशृङ्गैर्गगन	३.४६.६०
रणे योधायितुं शक्तस्तव	२.५२.२२	रथं त्यक्त्वा महातेजाः	३.५६.१४	रथानां वाजियुक्तानां	२.८५.६८	रथैस्ताग्रामिकैर्युक्तरसङ्ग	२.३५.१६	रराज त्रिपुरं राजन्	३.१३३.१६
रणे विजयमानस्य कीर्ति	२.३०.२७	रथं त्यक्त्वा महाभागो	३.५५.१४६	रथान् मजान् समारुह्य	३.६५.१६	रथोपस्थे पपाताशु	३.६६.२४	रराम सह रुक्मिण्या जले	२.८८.३०
रणे वैश्रवणस्तेन परिघं	१.४७.४६	रथं महान्तमारुह्य	३.६३.१३	रथान् सारथिभिः सार्द्धं	२.१०५.५६	रथो मायामयो दग्धस्त्वया	२.७३.५५	रराज सूर्यरश्मिभिर्य	३.२८.५३
रणे व्यतिष्ठदैत्येन्द्रो	३.५५.५४	रथं महान्तमारुह्य	३.६५.१२	रथा बहुविधाकाराः	३.५४.३४	रथोऽयं भगवन्देव	३.१००.१५	रश्मिजालैरिवार्कस्य	३.५५.५८
रणेह्यभयस्सिद्धिर्हतस्येह	२.३०.२८	रथं राज्ञः समाहृत्य	३.१०१.७	रथा रथैः समायुक्ता	३.६४.११	रथो व्याघ्रसहस्रेण	३.४६.३६	रश्मिभिः पुनरुत्तीर्णा	३.२८.५५
रतमिन्द्रेण रम्भायां	३.५.३०	रथं संचोदयामास	२.१०६.३	रथा रथैः समाजग्मु	३.१२२.१०	रदेतेः पन्नगरिपुं करेण	२.७३.८७	रश्मिवन्तभिवोद्यन्तं	३.५८.३४
रतिश्रमश्चेदविना	२.६५.११	रथं समांरुह्य सुवर्णं	३.५२.४४	रथाश्वनरनागानां	२.५१.११	रमते तत्र वै देवो रममाणौ	१.२६.६३	रश्मीन् योक्त्राणि	३.५५.११०
रतेः संपादनार्थाय	२.१०६.५२	रथमघ्नगतो वीरस्ससंघ	२.६३.६५	रथाश्वनरनागेन नास्माभिः	२.४६.१४	रममाणानिरुद्धेन	२.११६.७७	रसवन्तः प्रभूताश्च	३.४१.५५
रतजालानि दिव्यानि	२.६८.५८	रथमारुह्य दैत्येन्द्रो	३.५१.११	रथिनस्सादिनश्चैव	२.३५.१०१	रम्भानामापसरा	३.५.२६	रसश्च तन्मयो जज्ञे	३.१८.२७
रतभूता च कन्येयं	१.२.४१	रथमारुह्य युद्धाय	३.१००.४४	रथी त्वमनुगच्छेति सादश्य	२.६०.१०	रम्भाभिसारं कीवेरं	२.६३.२८	रसांश्च विविधान्योग	३.१६.३३
रत वेदिकमंकाशं	२.१३२.४२	रथमुद्रसहस्रेण	३.५०.४	रथेष्वजे तथा चापे	३.१२४.८	रम्भोऽनपत्यस्त्रासीद	१.२६.१	रसातलं नाकपृष्ठं	२.११२.२५
रतनातिशयदानेन तस्याम	२.६७.६	रथशक्तिभिरन्योन्यं	३.५४.७४	रथेद खरयुक्तेन	३.५१.४०	रम्यं मधुवनं नाम काम	२.३७.२०	रसात्मकं तदैश्वर्यं	३.१६.२५
रतानां चैव सर्वेषां	३.३७.१०	रथस्थ एव रथिनं काम	२.७३.२६	रथेन न मया गन्तुं युक्त	२.५५.३५	रम्यं यज्ञगिरिं नाम सहस्र	२.३६.५७	रसात्मकं तदैश्वर्यं	३.१६.३२

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

१२२

रसोऽयं देवइत्येव	३.१११.५०	राजर्षेयादिवस्यासी	२.५६.१०	राजापि हास्तिनपुरं	३.५.१०	रात्रावहनि दुर्गेषु	२.१०६.८४	रामायणं महाकाव्यमुद्देश्यं	२.६३.६
रहस्य वसुदेवेन सोऽनुज्ञातो	२.५.१४	राजलक्षणसंपूर्णमासन्ता	२.५५.३३	राजा प्रमादी दुर्बुद्धिर्जित	२.११६.७६	रात्रि युगसहस्रान्तां कृत्वा	१.८.४२	रामाहुकगदाक्रूर	२.६६.१८
राक्षसाश्च पिशाचाश्च	२.१२५.६३	राजवृत्तिस्थिताश्चारौ	३.३.६	राजा विभ्राजमानस्तु	१.२३.३	रात्रिमध्यमनुप्राप्तं	३.८०.५४	रामेण निहते तस्मिन्	२.४३.६०
राक्षसाश्च पिशाचाश्च	३.६६.२	राजसूयं महायज्ञं	३.११३.४	राजा षाड्व्यवक्ता वैराजा	२.३६.२	रात्रौ प्रादुरभूच्छब्दः	३.६४.२१	रामेण सह गोविन्दः	२.१००.१७
राक्षसाश्च महाघोरा	३.१२२.१८	राजसूयं महायज्ञं	३.११८.४७	राजेन्द्रत्वमनुप्राप्य युक्तं	२.५५.७५	रात्रौ व्यावर्तितवेतौ गर्भौ	२.२२.५१	रामेण सह निश्चित्य	२.५६.४३
राक्षसी निहता रौद्रा	२.१०१.३१	राजसूयस्तु सोमेन	३.२.१६	राज्यं च ते माया दत्तं	२.१२७.२७	रामकृष्णौ च राजा स	२.६३.२८	रामेण सह संमन्य	२.५५.२७
राक्षसैश्च पिशाचैश्च	१.६.३५	राजसूयाभिषिक्ता	१.२.२४	राज्यं स कारयामास	१.२६.४६	रामकृष्णौ समाश्रित्य हते	२.३४.६	रामेणोदाहृतं पूर्वमायुः	२.१०६.१०३
राक्षसैस्तस्य रत्नानि	२.३३.२४	राजसूयेन यज्ञेन	३.११५.२५	राज्यान्निरस्तो विश्वस्तः	२.३७.१७	रामत्वमपि चावाप्य	२.७१.३८	रामोव्यासस्तथात्रेयो	१.७.४७
राजंश्चिरप्रसुप्तोऽसि	२.५७.५७	राजसूयो ह्यसंहार्यो	३.२.२१	राज्ये स्थिते नृपे तस्मिन्	२.३८.३६	रामप्रेणतामुनिराजपुत्र	२.८६.२४	रावणं निजधानाशु रामो	१.४१.१३६
राजचौराग्निदण्डार्तो	३.३.२६	राजसेनापि संयत्ता चेदि	२.८४.१८	राज्ञस्तु महिषी श्रेष्ठा	१.२६.५२	रामलक्ष्मणशत्रुघ्ना भरत	२.६३.८	रावणेन पुरा गीतश्लोको	२.३१.४४
राजताः काञ्चनाश्चैव	३.३५.३४	राजसेविषु विश्वासं गर्भं	१.२०.१२४	राज्ञस्तानगृह्यामितद्	२.२७.२८	रामश्च डिम्भकश्चैव	३.१२७.१६	राष्ट्रपालोऽथ सुतनुररणाष्ट्र	१.३७.३१
राजद्वारेषु तीर्थेषु	२.३.१७	राजा कुलयापीडस्समाज	२.२६.१७	राज्ञा तेन तदा राज	१.२०.८६	रामस्तस्य तु मोक्षार्थं	२.६२.१०	राष्ट्रस्येच्छसि चेत्स्वस्ति	१.२०.५३
राजन्यस्तु तथा	३.८८.३७	राजा कृत्स्नस्य जगतः	२.६६.५	राज्ञां तत्र समेतानां हस्त्य	२.४७.६	रामस्तु यमुनामाह	२.४६.३०	रासावसाने त्वथ गृह्य हस्ते	२.८६.३०
राजन्वक्ष्याम्यहं	२.११६.१८०	राजा त्वं भविता तात	१.२२.४	राज्ञां तत्र समेतानां हस्त्य	२.४७.३६	रामस्य तनयो जज्ञे	१.१५.२७	राहुरग्नसदादित्यं	२.११६.६३
राजपति गतो रोषस्सहानेन	२.४४.५४	राजाधिदेवस्य सुता जज्ञिरे	१.३८.२	राज्ञां निधनदृष्टार्था	२.४०.४३	रामस्य तु गदावेगं	२.३६.२२	राहुर्ज्येष्ठस्तु तेषां	१.३.१०१
राजपुत्र्यां तु विद्वांसौ	१.३६.२०	राजाधिदेवी च तथा	१.३४.२३	राज्ञां पराजय युद्धे गोमन्ते	२.४३.६५	रामस्य तु गदावेगं	२.४३.७१	राहुस्तु विकृताकारः	३.५३.१६
राजभिः सर्वतो रुद्धो	२.६२.६	राजाधिदेवे मृदुरे प्रसेने	२.५६.५०	राज्ञां भयंकरो घोरः	१.५४.६६	राम रामाभिरामस्त्वं	२.४१.३०	रिपुं रिपुंजयं पुण्यं	१.२.१५
राजमार्गेषु राजेन्द्र	२.५५.२३	राजानश्चापरे वीरा	२.८३.२८	राज्ञां मध्ये महाराज	२.१११.५	रामात्ततोऽस्य मृत्युर्वै	१.३३.४७	रिपुस्तवसुसंपन्नैर्ननुबन्धः	३.१५.५
राजर्षिणा ततः पीतां	१.२७.८	राजानो वीर मुञ्चेति पुनः	२.८५.५१	राज्ञा राज्यव्रत स्थेन	१.५४.२६	रामादनन्तरं कृष्णः प्रगृह्या	२.५३.३४	रिपूणां त्रासजननं मित्राणां	२.५३.११
		राजा पञ्चजनो नाम	१.१५.७	राज्ञां स्वयंवरो नाम	२.४८.४७	रामादनन्तरं कृष्णः प्लुतो	२.४२.८६	रिपून् बाधयितुं शक्तो	२.५२.२२

रिष्टो नाम दितेः पुत्रो	१.५४.७३	रुक्मेपुरभवद्राजा पृथु	१.३६.१३	रुद्रस्य परमो विष्णु	२.१२५.४१	रूपं कान्ति मति चैव	२.११६.४६	रेवतस्याथ कन्यां च	२.५८.८४
रुक्मघातु प्रतिच्छन्न	३.३५.४०	रुक्मेषुः पृथुरुक्मश्च	१.३६.१२	रुद्रस्यैव हि तद्रूपं	३.३२.५	रूपं कृत्वा महाकायं	३.७२.२८	रेवती रुक्मिणी चैव	२.१२८.१४
रुक्मपुंखाः प्रकाशन्त	३.५५.६०	रुचिरग्नौ यथा दिव्या	२.६६.४५	रुद्राक्षापितसर्वांगौ	३.१०५.२१	रूपं ते सौम्य पश्यति	२.१०४.३१	रेवत्या चैकया सार्धं	२.८८.११
रुक्मपुंखान्प्रदीप्ता	३.५४.५४	रुचिरः श्वेतकेतुश्च	१.२०.२१	रुद्राणी भद्रकाली च	२.१०६.५०	रूपं विलासं गंधं च	२.६४.३२	रेवत्यां बलदेवस्य	२.१०३.२४
रुक्मपुंखैस्ततस्तस्य	३.५५.६२	रुचिरस्य तु दायादः	१.२०.२२	रुद्रादुग्रं भयं स्याद्येन	२.८२.१६	रूपं विवस्वतश्चासी	१.६.४२	रेसुरारोषितास्सिंहासजला	२.१८.४३
रुक्मिणं निष्कृतिप्रज्ञं	२.६१.५०	रुचिराग्रकरश्चास्य	२.२५.२६	रुद्रा शूद्रा च भद्रा च	१.३१.११	रूपयौवनसंपन्ना	२.६५.५०	रैवतं च गिरि देवो गत्वा	२.७३.३
रुक्मिणस्तद्वचः श्रुत्वा	२.६१.३४	रुचिरोत्पलरक्तोष्ठीं	२.११.३५	रुद्राश्च काश्यपा देव	२.६६.८	रूपवानसि विक्रांत्रस्त्वं	२.१०४.२४	रैवतं च गिरिश्रेष्ठं कुरु	२.५५.११०
रुक्मिणा वासुदेवस्य भीष्म	२.३६.२	रुचेः प्रजापतेः पुत्रा	१.७.४५	रुद्राश्चैकादश भोक्ता	२.१०६.१३	रूपवान्सुभगो दान्तः	३.१३२.२०	रैवतस्यात्मजो राजा	२.३८.४६
रुक्मिणी च महाभागा	२.६१.५७	रुच्या वह्निप्रतीकाशः	२.६२.२७	रुद्राश्चैव तथा राजन्द्रष्टुं	३.८५.५	रूपिणी यस्य पार्श्वस्था	१.४१.१२६	रोचते मे सुरश्रेष्ठा	१.५३.१२
रुक्मिणी चैव तं दृष्ट्वा	२.१०८.८	रुच्या सा स्त्री भवेद्	२.८१.४	रुद्रो देवस्त्वं रुद्रनाद-	२.७४.२२	रूपेणानेव दैत्येन्द्र	३.७१.३३	रोदसी पूरयामास	३.१००.८
रुक्मिणी त्वभवद्राजन्	२.५६.१६	रुते युगसहस्रान्ते	३.३६.१७	रुधिराद्रास्तु बहव	३.६०.६३	रेणुकायां तु कामत्यां	१.२७.३६	रोषपर्याकुले चैव नेत्रे	२.१२६.४६
रुक्मिणी नाम ते कन्या	२.५१.३१	रुदतीनां भृशातीनां	२.३१.५६	रुधिराद्रै महावक्त्रैः	२.१२४.२५	रेणुना सूर्यमार्गं तु	१.५७.२३	रोषमाहारयामास	२.६१.३५
रुक्मिणी व्रतकं चक्रे दृष्ट्वा	२.८१.३६	रुदितानुद्धशयो नार्या	२.३१.३७	रुधिरौघप्लुतैर्गात्रै	२.११६.१५५	रेमिरेवृष्णायस्त्र पूज्य	२.६१.१८	रोषितः शरवर्षेण	३.६०.२१
रुक्मिणी सत्यभामा	२.१०३.३	रुद्धे वाणपुरे वीरं	२.१२०.४०	रुधिरौघप्लुतैर्गात्रै	२.१२२.३६	रेमिरेऽसुरकन्याभिः	२.६४.५१	रोषितस्तालशब्देन	२.२१.१५
रुक्मिणोद्वासितां रम्यां शैलो	२.५५.८	रुद्धेषु भूमिपालेषु सानुगेषु	२.८५.१	रुन्धन्ति बाहुभिः	३.२५.१२	रेमे च सह पार्थेन	२.७६.२५	रोषो मे विगतस्साध्व	२.४४.५५
रुक्मिण्या भ्रातरं ज्येष्ठं	२.६१.४६	रुद्रप्रिये महाभागे	२.१२०.४७	रुक्कस्य वृकः पुत्रो	१.१३.३०	रेमे बलश्चन्दनपङ्कदिग्धः	२.८६.१	रोहिणी च महाभागा	२.७७.१३
रुक्मिण्यां वासुदेवस्य	२.१०४.२	रुद्रमग्निमयं विद्धाद्विष्णु	२.१२५.३५	रुद्रुस्ते गिरिवरं	२.४०.२६	रेमे समेत्य कालज्ञ	२.३७.१८	रोहिणीप्रमुखाः कन्या	३.३६.२६
रुक्मिण्याद्या स्त्रियस्तस्या	२.७१.१६	रुद्रमाराधयामास द्वादशा	२.५२.२७	रुद्रोद तद्बलं दृष्ट्वा	२.११६.८६	रेमे सह तथा वीरो	२.६१.६	रोहिण्यो गो हते तस्मिन्	२.३०.४८
रुक्मो चैवावहृतिश्चैव	२.८३.२७	रुद्रः शरेणाम्यहनत्	३.३२.४३	रुद्रो घ मार्गं योधानां	३.५८.६६	रेमे सह प्रभावत्या	२.६४.२७	रोहिण्याथ च फाल्गुन्या	२.८१.४३
रुक्मी तस्याभवत्पुत्रो	२.५६.१४	रुद्रस्तस्मै वरं प्रादात्समर्थं	२.५७.११	रुषिणा मिव तां देवीं	२.६६.४	रेमे सोमश्च भगवान्	२.८७.३६	रोहिण्यामहनि श्रेष्ठे	२.५८.३

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१२४

रोहितो लोहितग्रीवो	३.६२.३	लतावेष्टितपर्यन्तं	२.६८.१८	ललाटे च पुनर्विष्णु	२.१२३.१०	लेभे ज्येष्ठं सुतं रामं	१.३५.५	लोकाः सोमपदा नाम	१.१८.२५
रौक्मिण्यस्ततः सृष्ट्वा	२.८४.४५	लपन्तः कोकिलाञ्छितां	२.७५.५७	ललाटे चिक्षिपे हंसो	३.१२७.३२	लेभे प्रसेनजिद्धार्यां	१.१२.५	लोके पतितवृत्तस्य परुष	२.३२.८
रौक्मिण्येयोऽपि कृष्णेन	२.६०.२८	लब्ध प्रशमनं चैव	२.६७.२३	ललाटे सुहृदं वीरो	३.६६.१७	लेलिहानस्य निषेधं	२.२१.३	लाकेऽप्रतिरथो वीरः शक्र	१.३४.२६
रौद्रं तदुग्रं शूलं	३.४४.६	लब्धमात्रे वरे चापि सर्वाः	१.४१.६५	लवणजलगमा महानदी	२.६२.१८	लेलिहानानि दिव्यानि	२.४३.६	लोकेश्वरेश्वरः श्रीमान्	३.६६.५६
रौद्रः शकटचक्राक्षो	३.५१.२०	लब्धमात्रे वरे तस्मिन्सर्वाः	३.४१.२७	लवणप्रतिमां दद्यान्नवनीत	२.७६.२५	लोकच्छायामयं लक्ष्म	१.४६.५	लोकैषु दिवि वर्तन्ते	१.१८.६५
रौद्रेण तत्ततो हंसो	३.१२७.४३	लब्ध्वा च दामानि	३.८२.३१	लवणानि बहून्याशु	३.११४.१६	लोकपालसमास्तात महेन्द्र	२.३२.३७	लोकेऽस्मिन्वासुदेवोऽहं	२.४४.२२
रौद्रेण तेजसा जुष्टा	२.६८.२६	लब्ध्वा पञ्चशतं कन्या	२.८३.४५	लवणानि बहून्याशु	३.११५.२८	लोकपालास्तदा विष्णु	३.६०.३५	लोपामुद्राप्रसादेन परमायु	१.२६.७६
रौहिणेयेन संगम्य	२.१०१.४२	लब्ध्वा स तु पुनः	३.६०.६८	लवणेन समायुक्तस्त्वमिमं	२.३७.३६	लोकपालेषु सर्वेषु दिक्षु	१.४६.४३	लोमपादं तृतीयं तु पुत्रं	१.३६.२१
रौहितो दीप्तिमाश्चैव	२.१०३.८	लब्ध्वा हंसः स संज्ञा	२.१२४.४	लाघवं समुपागम्य	२.१२४.७	लोकवृद्धिकरः श्रीमान्	३.७६.२०	लोमपादो दशरथ ऋष्य	२.६३.७
रौहिणेयं च पुत्रं मे परिरक्ष	२.५.४	लभेत्पञ्च वराश्चैव	१.३३.६०	लाङ्गलादिष्टमार्गा त्वमिम	२.४६.५०	लोकसाक्षी द्विजहुतः	३.६२.५	लोहचक्राष्टसंयुक्तं त्रिनल्व	२.६३.६२
ल		लम्बकेशौ विरुपाक्षौ	३.७६.२	लाङ्गलादिष्टवर्त्मा सा	२.४६.३६	लोकस्त्वधो दुष्कृतिनां	२.१६.३२	लोहजालेन महता	१.४३.१०
लक्ष्मीः कीर्तिस्तथा	३.१४.३४	लम्बा घोषं विजज्ञेऽथ	३.३६.५४	लांगली मुसली चक्री	२.१२१.११८	लोकांश्चेमान्सदा मूढ	३.१०८.३	लोहिताक्षो महाबाहुः	३.५०.२३
लक्ष्मीर्मधा धृतिः	३.७१.५३	लम्बां द्वितीयां तिष्ठन्तीं	२.१२६.११३	लाङ्गलेनावसिक्तेन भुजंगा	२.४६.२८	लोकानां त्वं गतिर्देव	२.१२६.१३६	लोहिता यामद्वताश्च	१.२७.५०
लक्ष्यं मामकरोत्तत्र	३.८८.६	लम्बायाश्चैव घोषोऽथ	१.३.३४	लांगूलं चास्य वेगेन	२.२६.३७	लोकानां प्रभवः पाता	३.८०.३७	लोहिताविष्टगात्रस्तु	३.१२४.६
लग्नाः परिपतन्ति	२.१२४.२३	लम्बुस्तु लम्बमेघाभः	१.४३.२१	लांगलोत्लिखितापाङ्गी	२.४६.४०	लोकानामथ पातास्मि	३.८०.११	लोहिताश्वं वायुचक्रं	३.६२.१०
लघुत्वाच्च महाबाहू	३.५६.६८	लम्बोदराश्च बलिनः	२.१०६.४७	लालनीयो यवीयास्तु	२.६६.३४	लोकनामन्तकालज्ञा काली	१.५०.८	लोहित्या जनमाता च	२.१०६.५२
लज्जावंती महाभागा	२.११७.६१	लम्बोदरो विरुपाक्षः	३.१२६.५	लिप्सां चक्रे प्रसेनात्तु	१.३८.२६	लोकांसाध्वीनामुत्तमानां	२.७६.१४	लोष्टैरिष्टैः शिलाभिश्च	१.४८.३५
लटाटमध्यादसृजन्नारदं	३.२०.१७	लम्बो नामेति विख्यातो	१.५४.७४	लीलायमानास्तिष्ठन्ति	२.१२४.२६	लोका भरतशार्दूल कश्यप	१.३.५४	लोहित्या यामद्वताश्च	१.३२.५८
लताचारुविचित्रं च नाना	२.४०.५	लयतालसमं श्रुत्वा	२.६३.२५	लुण्ठिता क्रीडिता तेन	१.३३.२८	लोकायनाय त्रिदशायनाय	३.४०.२७	व	
लतावितान संछन्ता	३.४१.५७	ललाटं रूपसम्पन्नमाप्नोति	२.८०.११	लुब्धकस्यात्म जास्तात	१.२१.१७	लोकाः सनातना नाम	१.१८.७	वंशजस्तत्र ते राजाकृष्ण	२.३६.६२

वंशप्रतिष्ठा मनुलां	२.१२८.३४	वज्रनाभश्च तद्वाक्यं	२.६६.७	वज्रैः प्रहरणीयैश्च	१.४७.१३	वधाय सर्वे गृह्यन्तां	२.६६.२५	वनेषु च विराजन्ते पादपा	२.१६.३५
वंशवद्धाः काश्यपानां सर्वे	२.६२.१०	वज्रनाभस्य तत्काया	२.६७.१८	वज्रो नाम महाव्यूहो	३.६१.४	वधार्थं देवशत्रूणां	१.४१.१२५	वनेषु रुबुहृद्यं मधुरं	२.८८.६८
वंशे चास्मिन्तव विभो	२.३७.६२	वज्रनाभस्य तद्राज्यं	२.६७.२५	वञ्चनीया भविष्यामो	२.३८.६३	वधार्थं शम्बरस्य	२.१०६.४६	वने सतालहस्ताग्रैः	२.२०.२७
वंशे वधूस्त्वं कमलायताक्षि	२.६५.३८	वज्रनाभस्य तु भ्राता	२.६४.३३	वटमूले तथा चेरुस्तपः	२.८२.६	वधे ह्यस्य महान्दोषो	२.११६.१८५	वनेऽस्मिन्नलवणश्चायं	२.३७.२६
वक्तव्यं च व्रजे तस्मिन्समीपे	२.२२.६१	वज्रनाभोऽथ दुष्टात्मा वर	२.६१.१३	वडवामुखेऽस्य वसतिः	१.४५.६०	वध्यतामयमद्यैव न नः	२.११६.१६७	वन्यपुष्पावतसाभिर्गोप	२.५.२६
वक्तव्यं सर्वथा सद्भिरप्रियं	२.७१.६	वज्रनाभोऽयं तव्यः	२.६६.१२	वडवारुपमास्थाय वने	१.६.५१	वध्यमानाः शरैस्तीक्ष्णै	३.५८.६	वन्यैः कर्मफलैश्चैव	३.२४.६
वक्तव्यो बलभद्रश्च राजा	२.७३.१०३	वज्रनाभोऽपि निवृत्ते सत्रे	२.६६.२	वडवावपुषा राजंश्चरन्ती	१.६.५३	वनं गत्वा तु तो वीरो	३.१०६.२	वपुर्दक्ष्याम्यहं विष्णोः	३.११४.८
वक्त्रैश्चतुर्वेदधरैश्च	३.५३.४१	वज्रपाणिस्ततो गर्भं	१.३.१३३	वडवाः सुषुवुर्गाश्च गावो	२.८७.३०	वनं निविषयाकारं	२.११.५४	वपुर्वाग्निमास्थाय	२.२२.४३
वक्रणं चाभ्य घोरेण	२.२४.३३	वज्रपातनिभं वेगं पातयित्वा	२.५३.४४	वत्सं वैश्रवणं कृत्वा	१.६.३३	वनमालाकुलोरस्कः	२.६३.४८	वपुषा तेज आधत्ते	२.१२६.१०६
वक्रमंगारकश्चक्रे	२.११६.६६	वज्रं नगरमायान्तं निकुम्भं	२.६०.११	वत्समध्ये स्थितं कृष्णं	२.२५.१७	वनमालाकुलोरस्को	२.४१.२	वमञ्छोऽणि तमत्युष्ण	३.६६.१३
वक्त्रं ब्रह्मसमुद्भूतं	३.१७.६	वज्रं रथोरच्छदमिन्दुवरुणं	२.६३.६६	वत्सयूथानि कल्पन्तां	२.६.११	वनमालोरसं दिव्यं	२.५५.३२	वमन्तः पावकं घोरं	२.१२.१२
वक्षः स्थलं सदा विष्णोः	३.११४.१२	वज्रमिन्द्रस्तपोयोगाच्छत	३.२६.८	वत्सव्यापारयुक्ताभ्यां	२.११.५	वनवासप्रवृत्तेन यत्त्वया	१.५४.३५	वमन्तः शोणितं जग्मुः	२.११६.१२७
वद्यैश्चान्मिथुनं जज्ञे	१.३२.७०	वज्रविस्फूर्जिताकारमा-	२.६३.११४	वत्सस्तु मधवानासीद्दोषा	१.६.२३	वनवासीति विख्यातः	२.३८.२८	वयं च प्रथमं प्राप्ता	२.३६.३८
वचनं तस्य संश्रुत्य	२.११६.१३७	वज्रविस्फूर्जितोद्धतविद्यु	१.४४.६	वत्सस्तु हिमवानासी	१.६.४१	वनवासे स्थितो वीरो कंस	२.४६.८	वयं चान्ये च सचिवा	२.११६.७१
वचनं व्याहृतं श्रुत्वा	२.५२.१२	वज्राज्जज्ञे प्रतिरथः	२.१०३.२६	वत्सानां रोपितैः कीलै	२.५.२४	वनस्पतीनां सर्वेषां	२.१६.६४	वयं तु यतिधर्माः	१.१७.१६
वचनेन किमुक्तेन त्वया	२.५१.२६	वज्राशनिगदा खड्गै	२.१०२.२२	वत्साव्रते त्वपुत्राय	१.३४.३४	वनस्पत्योपधीश्चैव	३.२६.४०	वयं दीक्षां प्रवेक्ष्यामः	१.५.६
वचोभिर्मधुराभाषः	३.२५.३	वज्राशनिनिपातास्तान्सेहे	२.७३.६७	वदनादभिनीष्कान्तं	३.१७.५	वनान्तरगतो रामः पानं	२.४६.२३	वयं दुःखेष्वनुचितास्सुखे	२.३१.१३
वज्रध्वजेन महता	२.६३.६३	वज्रास्त्र पीडिता भ्रान्तो	३.५८.१००	वदन्तो कृष्ण कृष्णेति	३.७६.७	वनान्ता गिरयस्सर्वे सा	२.१६.६	वयं यक्षामहे पूर्वं पूर्वं	३.२५.७
वज्रनाभ निबोध त्वं	२.६६.३	वज्रेणास्त्रेण दिव्येन	३.५८.६६	वधं संकल्पयित्वा	३.४१.३६	वने चैत्ररथे रम्ये	१.२६.६	वयं वनचरा गोपास्सदा	२.१६.२
वज्रनाभवधं ह्युक्तं निकुम्भ	२.६१.३	वज्रोणेवावहृणानां नगानां	२.१०.१८	वधश्चैव शृगालस्य	२.४६.१४	वने यथा निरुत्पन्नस्तै-	३.६७.१७	वयं हि देशातिथयो मल्लाः	२.२७.३२

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१८६

वयमद्यैव सहितौ	३.१०७.७	वरं वरय धर्मज्ञ यस्ते	२.७६.१५	वर्णयित्वा यथान्यायं	३.६६.६३	ववन्दिरे तदा कृष्णं	२.१२७.१११	वसुदेवसुतो तौ च राजमार्गं	२.२७.२५
वयमभ्युपयास्याम	१.३६.५	वरं वरय भद्रं ते	३.८३.२६	वर्णभ्यां युज्यमानस्य	३.१८.१४	ववर्ष शरजालानि	२.११६.१४६	वसुदेवस्तत्र यातो देवक्या	२.८३.५
वयसोऽन्ते महाबाहुर्हत्वा	१.३२.३५	वरं वरय भद्रं वां	३.१०५.११	वर्त्ततां मम देवेश	३.८०.६४	ववृषुः शरजालानि	२.१०५.५	वसुदेवस्तु संगृह्य दारकं	२.४.२५
वयांसि साधुवाक्यानि	२.३३.३६	वरं वरय वत्स त्वममोघं	२.१०७.१५	वर्त्तते सांत्सवस्तत्र	२.१२८.६	ववौ मनोहरो वातो	२.८८.७३	वसुदेवस्तु संरक्ष्यः स्त्री	२.२.५
वयांसि साधुवाक्यानि	२.४५.१०	वरं वृणीष्व बाण त्वं	२.१२६.१४६	वर्त्तन्ते पितरः स्वर्गे	१.१६.१२	वसतस्तस्य कृष्णस्य सदा	२.६५.१२	वसुदेवस्य भवनं ततस्तौ	२.३३.४१
वयुष्मन्तः सुजघनाः	३.६६.१५	वराहः सरितं पुण्यां	३.३५.३८	वर्त्तमाने मखे येन जनक	१.४१.१२७	वसते परमप्रीता देवतैरपि	२.२२.५६	वसुदेवस्य भवनं पितुस्तौ	२.४५.१५
वयोभिर्वासिमुशतां बन्धु	२.२५.१३	वरिष्ठश्च गरिष्ठश्च	३.४६.१३	वर्त्तमाने महाघोरे	३.५८.६३	वसन्तकुसुमैश्चित्र सदा	२.६७.१६	वसुदेवस्य भवनं समीक्ष्य	२.५५.८६
वयोरूपगुणोपेता राजपुत्री	२.६१.७	वरीयांश्चावरीयांश्च	१.७.५६	वर्त्तमाने महाघोरे	३.५८.६६	वसवः प्रच्युताः स्वर्गात्-	१.५३.४३	वसुदेवस्य भार्यासु	१.३५.६
वरणं च्छन्दितो देवै	२.५७.४४	वरुणः पन्नगाश्चैव	३.६१.३७	वर्त्तयिष्यन्ति ये यज्ञा	३.७२.६५	वसिष्ठपुत्राः सप्तासन्वा	१.७.१७	वसुदेवाच्च देवक्यां	१.३५.७
वरणावत्सनाभाश्च	३.४१.६८	वरुणः पाशधृक् श्रीमान्	३.६१.२६	वर्त्तसे विविधां भूतिमादाय	३.८८.२६	वसिष्ठपुत्राः सप्तासन्वा-	३.६६.५	वसुदेवाहुकौ वीरौ दक्षितौ	२.६०.७
वरदानं वृथास्मासु	३.१३३.३२	वरुणः पाशभृन्मध्ये	१.४४.१५	वर्द्धनीया वयं वीरं त्वया	२.४६.६	वसिष्ठस्त्वथ तान्दृष्ट्वा	१.१४.१४	वसुदेवोऽग्रसेनौ च	३.१२६.१
वरदानेन सा लब्धा मात्रा	२.६१.४२	वरुणश्च भवान्ख्यातो	२.१२१.१२३	वर्द्धमानावुभावेतौ समान	२.५.६	वसिष्ठोः वामदेवश्च	३.७७.७	वसुदेवोऽग्रसेनौ च	३.१२६.२७
वरदाय वरेण्याय	३.८७.२६	वरुणश्चैव भगवान्	२.११५.१०	वर्द्धापयति तं देवं	२.१२७.१६	वसुदेव इति ख्यातो	१.५५.३६	वसुदेवो महाबाहुः पूर्वं	१.३४.१८
वरदा लोककर्तारो	२.१२५.३२	वरुणस्तु महातेजा	३.६१.६	वर्षाणां च सहस्राणि	३.२८.१७	वसुदेवकुले जातो	३.८२.१६	वसुर्वभ्रुस्सुषेणश्च	२.३८.४८
वरदो भव मे नित्यं	२.५१.६०	वरुणादाहतं पूर्वं नरके	२.६४.७	वर्षाणां शतसाहस्रयं	३.१०.२६	वसुदेव च देवाभं कङ्कं	२.२२.८	वसूनष्टौ भृशं सर्वान्	३.५२.३
वरं च वरदे याचे	२.१०७.१७	वरुणेनैवमुक्तस्तु	२.१२७.८५	वर्षाण्येकोनषष्टिस्तु	१.२६.१८	वसुदेवं च पुत्रार्थे यदिमं	२.२३.१५	वसोस्तु कुन्तिविषये वसुदेव	२.३८.५०
वरं चास्मै ददौ प्रीतस्त	२.३७.६७	वरुणेनैवमुक्तस्तु	२.१२७.६५	वर्षासु वाताः परुषा	३.३.२७	वसुदेवं महीपालं	३.१२६.२१	वस्त्रं चैव विचित्रं च	३.१३२.५२
वरं प्रदायाथ महासुराभ्यां	३.१३.२६	वरेणानेन भगवन्-	१.४१.६०	वल्गमानं यथा सिंहं	२.३०.३	वसुदेववचः श्रुत्वा रूपं	२.४.२४	वस्त्रैरामरणं दिव्यं	२.६६.२५
वरं वरयन्त्युक्तास्ते	२.८२.११	वरेणानेन भगवन्-	३.४१.२२	वल्गमाने तु गोविन्दे	२.३०.६	वसुदेव वृथा वृद्धयन्मया	२.२२.७२	वहत्यूर्ध्वगतिर्वातो	२.४२.६७
ववं लब्ध्वा ज्वरो	२.२३.२६	वर्जयित्वा महादेवौ	२.६८.२१	वल्गवैरपरैः साद्धं	३.१३०.३	वसुदेवश्च दुर्वृत्तो नित्यं	२.३०.६८	वह्निरिव शिखां दीप्तां	२.५६.३६

वह्निज्वालासमं तत्र	३.६१.५	वातप्रवृद्धस्तु तरंग	२.१२४.५५	वायुप्रोक्ता महाराज	१.७.२५	वारयनं महाबाहो	३.१२३.१६	वासोऽन्यदेव दद्याच्च	२.७६.२०
वह्निना चापि दीप्ताङ्गो	२.४२.६१	वातस्कन्धापविद्धेषु	१.४६.३८	वायुं पूर्वमथो दृष्ट्वा	३.१६.१७	वाराणसीं निकुम्भस्तु	१.२६.३५	वासं तं मित्रविन्दाया	२.६८.५२
वह्निर्वहुजटी भूत्वा	३.१८.१६	वातोद्धूतैरिव घनैर्विः	२.१२२.५६	वायुरेव यदा त्रिष्णुरिति	३.१११.४७	वाराणसी महातेजाः	१.२६.४४	वासुदेवं पुरस्कृत्य	२.६६.१४
वह्नेरिव बलं दीप्तं	३.२५.१६	वातोद्धूतैर्वनैः फुल्लैर्नृत्यन्त	२.८७.५	वायुर्गविष्ठो नेमुचिः	३.७२.८	वाराणस्यधिपो राजा	१.३३.६	वासं यत्र प्रकुर्वन्ति	३.२४.४
वाक्यमेतत्तु रुच्ये सबलानां	२.४२.५२	वादयन्ति पुरे यल	२.१२८.७	वायुर्मां रक्षतां	३.८०.७२	वाराह एष कथितो	३.४१.१	वासयत्यात्मवीर्येण निगृह्या	२.८६.१३
वाक्यार्णवं महागाधं नीति	२.४६.४	वाद्यमानानि शुश्राव	२.६३.१०१	वायुवेगवती सौम्या	१.४७.१७	वाराह एष कथितो	१.४१.३६	वासवस्योत्सवं भङ्क्त्वा	२.२२.३०
वाकशरैरर्दयिष्यन्ति	३.४.२६	वापीतडागकूपेषु समुद्रेषु	२.१०६.७३	वायुवेगसमुद्धूतो	२.१२२.४७	वाराहं रूपमास्थाय उद्धृता	२.४८.१४	वासवानुगता देवी	३.१४.४७
वाकशरैस्तर्जयिष्यन्ति	३.३.४०	वामनं रूपमास्थाय	३.७१.१४	वायुवेगसमैर्वेगैः	३.१३३.६	वाराहं वपुराश्रित्य जगतो	२.७१.३३	वासवो वासुदेवश्च	२.६४.५४
वाक्शाल्यैस्ताडयमानस्तु	२.२२.१००	वामना विकटाः कुब्जा	२.१०६.७०	वायुवेगेन हन्यन्ते	३.४६.२३	वाराहरूपिणं देवं	३.३६.१३	वासस्येते तवाभीष्टे	२.६६.३०
वाङ्मात्रमेव पश्यामि	२.६६.५०	वामनेत तु रूपेण कश्यप	२.४८.१८	वायुश्च बलवान्भूत्वा	३.६.५	वाराहश्च किशोरश्च	१.५४.७६	वासुकिर्वहुशीर्षस्तु	३.२८.३१
वाचकं पूजयेद्यस्तु	३.१३२.७६	वामनो ह्यासुरेन्द्रस्य	३.७१.२४	वायुश्चरतु मार्गस्थस्त्रिधा	१.४८.७४	वाराहस्तु श्रुतिमुखः	१.४१.२८	वासुदेवगृहं देवां	२.१२७.११६
वाचके परितुष्टे तु	३.१३२.८७	वामे च दक्षिणे चैव	३.४६.१२	वायोरनशनं प्राप्य गता	१.३.१६	वाराहेण पुरा भूत्वा	१.५२.४१	वासुदेवप्रभावेन जगत	२.८३.६
वाचको भरतश्रेष्ठ	३.१३२.८५	वामककणमिलकुण्डलश्रीः	२.८६.३	वाय्वीरिते तु मेघेषु	२.१५.१३	वारिणा मेधमुक्तेन	२.१८.१७	वासुदेवं तु तं मत्वा	२.५७.५२
वाचं चोवाच संक्रुद्धी	२.११६.१४५	वायव्यमथ सावित्रं	२.१२४.४६	वाय्वन्तरात्मा मन्त्रस्पृक	३.३४.३८	वारिणा सुखशीतेन	३.२८.८०	वासुदेवं स्थितं हृष्ट्वा	२.४४.१४
वाचा संपूज्य विप्रेन्द्र	३.११५.६	वायव्यास्त्रेण ते सर्वे	३.६५.२४	वारणानां च राजानं	१.४.११	वारितोऽपि स दुष्टात्मा	२.८६.२१	वासुदेवमुपालक्ष्य राजा	२.५७.५८
वाच्यं वाप्यथवावाच्यं	३.११५.१३	वायसानां सहस्राणि	१.३४.३७	वारणार्थं तदस्त्राणां	३.१२७.४५	वारिप्लवप्लवश्रीमां	२.११.३८	वासुदेववचः श्रुत्वा महेन्द्र	२.६६.३७
वाच्यश्च नन्दगोपो वै	२.२२.८६	वायुना स विसर्गं	३.२०.१३	वारणेन्द्रगतः शक्रो गरुड	२.६३.४१	व्रजस्योत्तरतस्तस्य क्रोश	२.११.४८	वासुदेवस्तु तं दृष्ट्वा योगं	२.५७.३८
वाजिनः पक्षसंयुक्ता	३.१३३.७	वायुना स्पन्दते चैन	३.१६.३२	वारमुख्या नदीः कृत्वा	२.६२.६०	वारुणानि च युद्धानि	२.१२७.५७	वासुदेवस्तु निजित्य	१.३८.४१
वाजिभिर्मघसंकाशैः	२.३५.१८	वायुः प्रधावितस्तत्र	१.४६.३६	वारमुख्याश्च तास्सर्वाः	२.३०.६०	वारुणास्तुरगाञ्छीघ्रान्	१.४१.११८	वासुदेवस्मितं कृत्वा	२.४४.१५
वाणीं परमसंस्कारां	३.६७.१२	वायु प्राणी तु ती गृह्य	१.५२.२४	वारयामास कृष्णो वै	२.३६.८	वार्ताकानि न खादेद्या	२.७६.५७	वासुदेवेति मां ब्रूत न तु	३.६१.१४

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

१२८

वासुदेवे समादिश्य	२.१२६.२६	विकल्परहितं चित्तं	३.८०.८८	विघ्नं चास्याकरोतत्र	२.६३.५	विजयाय यदुश्रेष्ठ यत्र	२.४७.२३	विदर्भनगरे कृष्णश्चावितो	२.५०.५४
वासुदेवो गदां गृह्य	३.६६.३५	विकारंपुरषोऽव्यक्तो	३.१६.८	विघ्नस्तत्र प्रवर्तते	३.८०.१८	विजयाय यदुश्रेष्ठ यत्र	२.५५.१२४	विदर्भनगरे चेपां राजेन्द्रत्वं	२.५०.२१
वासुदेवो जगत्यस्मिन्	३.६२.१२	विकारो वा विकाराणां	२.१२७.८२	विचक्रसु महाराज	३.१२१.५	विजराश्च जरां त्यक्त्वा	२.१२७.४६	विदर्भेषु निवासायार्थं निर्ममे	२.६०.३२
वासुदेवोऽपि धर्मात्मा	२.५७.६८	विकुञ्चितसटं तस्य	३.४३.२	विचक्रस्य कथं युद्धं	३.१०३.५	विजला विमला व्योम्नि	२.१६.१५	विदार्थमाणा दैत्यौघैस्त्रि	३.६०.२८
वासुदेवोऽपि धर्मात्मा	३.१२६.७	विकुण्डलाभ्यां कर्णाभ्यां	२.३०.८०	विचरन्तस्ततो हंसा ददृशु	२.६२.११	विजितश्च त्रिपर्वण	३.३२.२७	विदार्थं विविशुभूर्मि	३.५५.४६
वासुदेवोऽपि बहुधा	२.१२७.२	विकृतं मण्डलीभूतं	३.५५.१०३	विचरन्तो व्यराजन्त	३.५१.५५	विजितो युधि दुर्द्धपो	२.११५.२१	विदितं तव दैत्येन्द्र	३.४८.२५
वासुदेवो बलिर्वीरः	३.६७.७	विक्रान्तवपुषो दीप्तास्ते	२.२.१२	विचित्रनागविहगं	३.४६.५८	विजित्य च यमं संख्य	२.१०२.१२	विदितं तस्य कृष्णस्य	२.१०४.४
वासुदेवो रथे चापि	३.६६.२०	विक्रीडभूता बहुधा	३.३०.२५	विचित्रवीर्यं बालं च	१.२०.५६	विज्ञप्तुमर्हसे देवमन्धकस्य	२.८६.४०	विदितं वस्सुपर्णस्य स्वागत	२.४८.४४
वासोभिश्च प्रतिच्छन्नो	२.७६.२४	विक्रीडसि महादेव	२.१२७.८०	विचित्रा भरणोपेता	३.४२.१७	विज्ञातोऽसिमया चिह्नैः	२.१०८.१८	विदितं वो नृपाः सर्वे	२.५०.२५
वास्तुदैवतकर्माणि विधिना	२.५८.१३	विक्रीयमाणैः काण्ठैश्च	२.८.१६	विचित्राश्वध्वजयुगे	३.४६.२७	विज्ञानमेतद्धि परे यथावदुद्दे	२.८६.८०	विदिता देहिनो जाता	१.५५.३
वाहनं देवदेवस्य	३.७६.५	विक्रोशन्ति च गम्भीरं	३.४६.१६	विचिन्तयस्त्वहं चास्य	२.१२१.२६	विज्ञापितमिदं दोषं स्वयं	२.४८.५०	विदिता रुक्मणी साध्वी	२.५२.५०
वाहनानां हितं चैव	२.५६.२५	विक्षरन्तो महानागान	३.५८.२१	विचिन्त्य मनसा राजा	२.४६.६६	विज्ञापितो मयाऽत्यर्थं	१.२६.५७	विदितार्थं हि भगवानवश्यं	२.८६.३५
वाहनानि च देयानि	३.१३२.२५	विक्षरो दीर्घं बाहुश्च	३.४६.११	विचेतास्त्वभवत्प्राज्ञः	२.११६.६६	विज्ञाय तमभिप्रायसु	२.११७.१५	विदितार्थस्ततः कृष्ण	२.८३.१६
वाहनानि च नस्सन्ति	२.५६.४	विक्षिप्यमाणैर्मुशलैः संप्रेष्य	१.४५.६	विचेलुः पर्वताग्राणि	३.१३३.६५	वितत्यश्येनवत्पक्षौ	३.५६.२७	विदितो मे खरश्चैव	१.५५.६
वाहनेन मयूरेण	२.१२७.३६	विक्षिप्य विपुलं चक्रं गदा	२.५३.३८	विचेष्टमानं तं भूमौ	२.६०.२७	वितथं चाभिषिच्याथ	१.३२.१८	विदितो मे जरासन्धः	१.५५.८
वि कद्रुवाक्यं रामस्य	३.१३४.१८	विक्षोभ्य सागरं चैव	२.११५.१४	विचेष्टमाना रुदती देव्या	२.११८.३	वित्तेशं विह्वलं दृष्ट्वा	३.६०.५०	विदितो मे व्रजे वासस्तव	२.३६.४६
विकद्रोस्तु वचः श्रुत्वा	२.३६.१	विख्याता हृदया नाम	१.३६.१५	विजयति वसुधा	३.६.१०	वित्रासनार्थं भूपानां	२.४७.२७	विदित्वा देवमीशानं	२.५२.२५
विकर्षन्तौ वमन्तौ च	३.२६.१६	विगाह्येव गजानीकं	३.५६.५६	विजयस्य कृतिः पुत्रस्तस्य	१.२६.३	विदधाते महारंगे	३.१२४.१६	विदित्वा भगवानरुद्रश्च	२.८७.१७
विकर्षन्तु रथवृन्दानि	२.३५.७०	विग्रहं च जरासंधे विदित्वा	२.३६.४७	विजयस्य धृतिः पुत्रस्तस्य	१.३१.५७	विदर्भं नगराद्याते शक्र	२.५५.१	विदित्वा सर्वमात्मानं	२.२८.११५
विकर्षन्तु रथवृन्दानि	२.४३.२०	विग्रहो विग्रहार्हाणां जातं	१.४०.४७	विजयस्य प्रसिद्धेव	२.६७.३१	विदर्भनगरीं प्राप्ते वैन	२.५०.४		

विदिशस्ता दिशाः	३.३४.६	विद्युद्वाङ्मयतः श्रीमानायतः	२.४६.६१	विधिं च फलयोगं च	२.७७.६	विन्ध्यवासिनीं दुर्गन्तां	२.१०७.६	विप्रापत्यमचक्ष्णस्ततः	२.११२.२४
विद्धः समरमध्यस्थो	३.५६.२१	विद्युद्विस्पष्टवर्णाभा	२.४.४०	विधेयोऽस्मि प्रभावत्या	२.६४.३	विपरीतं जगद्दृष्ट्वा	२.८७.३२	विप्रेभ्यश्च ददौ वित्तं	३.१०२.२२
विद्धि चैनामथोत्पन्नं	२.४.४७	विद्युर्गमानस्त्रस्ताङ्गो	२.२४.४६	विनतायास्तु पुत्रतौ द्वावरुणो	१.३.१०६	विपाकमस्य कार्यस्य	२.७१.१२	विप्रोपघातं मोहाच्चेत्करि	२.८२.२१
विद्धि मां ब्रह्मणः	१.१७.१२	विद्योतयन्तो विदिशो	३.५२.५२	विनतायास्सुतश्चैव	२.५०.३	विपाटिताभ्यामोष्ठाभ्यां	२.२४.३८	विफलानस्त्रयुक्तास्तान्	२.८५.३३
विद्धोऽथ सात्याकिस्तेन	३.६६.३४	विद्राव्य तु रणे	३.४०.१	विनद्य च गुहां वरीरो	२.८४.४८	विपृथुः शिशुपालं तु शरं	२.५६.५७	विबभाज पुरा सर्वं	१.४०.३२
विद्यया तपसा युक्ताः	३.५६.३२	विद्राव्य दानवान्वीरः	२.११६.१०५	विनद्य सुमहानादं	३.५६.१६	विपृथोः सारथिश्चापि	२.५६.६२	विबभौ नभसो मध्ये	३.१३३.५०
विद्यया यो यया युक्त	२.१६.४	विद्राव्य विपुलं	३.६०.४५	विनर्दमाना दैत्यौघा	३.५१.४	विप्रचित्तिं तु राजनं	१.४.८	विभक्तं कुलिलशेनैव गिरेः	२.६३.१२२
विद्याधरगणैर्नित्यमनुकीर्णं	२.४०.१६	विद्रुतं स्वबलं दृष्ट्वा	२.६०.१८	विनश्यति स तु क्षिप्रं	२.६५.४०	विप्रचित्तिः शिविः	३.७२.२	विभजात्मानमित्युक्त्वा	३.३६.३
विद्याधरगणैः साद्धं	३.६१.१३	विद्रुतस्य तु राजेन्द्र	१.११.६	विना कृष्णं न यास्यामो	२.१२.२८	विप्रचित्तिः शिविः	१.४१.८१	विभज्यतामयं देशः कृतं	२.१८.५६
विद्युधरान्किपुरुषानृक्षवा	२.२८.७४	विद्रुतानीह सैन्यानि	३.६४.४	विना विना वारं पुरे	२.६५.२६	विप्रचित्सुतः श्वेतः	१.४३.१८	विभज्य योगं मनसा	३.२८.६६
विद्यानां ब्रह्माविद्या	२.३.२३	विद्वद्भिमीयसे नित्यं	३.११५.२२	विना वातं विना वर्षं	२.७.२६	विप्रचित्तिस्तु तत्रैव	३.५१.५०	भान्ति ते देववरा	३.५२.५६
विद्यामवाप्य सकलां	३.८२.३६	विद्वद्भिर्गाम्यसे विष्णो	३.११५.१८	विनिपेतुः पृथक्वेचित्तथान्ये	३.३८.२६	विप्रचित्तिस्तु दैतेयो	३.५३.२४	विभिन्न हृदयाः	३.६०.३५
विद्यालक्षणं संयोगान	३.२३.३७	विद्वान् ह्यास्तथा	३.६६.२१	विनयोगाद्गुरोस्तस्य	१.२१.७	विप्रचित्तिस्तु वरुणं	३.६१.१	विभुं विज्ञापयामासु	१.४१.५६
विद्युज्जिह्वास्त्रिशोर्षश्च	३.४५.४	विद्वेषो ह्यस्तु वां	३.१०६.१६	विनिर्भिन्नस्तु कृष्णेन	२.१२६.५३	विप्रचित्तिस्तु संक्रुद्धो	३.६१.३०	विभुस्तथैवाप्रतिमप्रभावः	३.१२.१८
विद्युज्ज्योतिर्निकाशेन	३.५०.२४	विधत्स्व भागं स्थानं	१.२६.१५	विनिर्ययुर्महासेन रामं	२.५५.२६	विप्राप्रियो विप्रहितो	२.१२१.१२०	विभूतिविस्तार करं	३.३.१२
विद्युतोऽशनमेघांश्च	१.१.३८	विधवा स्त्री तु या हि	२.८१.८	विनिश्चयो हि प्रागेव	१.५५.१६	विप्रभायां महाराज	३.१०४.१३	विभेति हि सदा त्वत्तो	३.५३२
विद्युत्संपातजननाश्शक्र	२.१८.६	विधानमेवं कृत्वाथ कृष्णः	२.५८.८३	विनिष्पत्य महासेनां मध्ये	२.५३.३०	विप्रमुक्तभयं शुभ्रं	२.१३.२४	विभ्राजः पुनरायातः	१.२०.२६
विद्युदग्निप्रतीकाशमादित्य	३.३४.३२	विधानविहितद्वारा प्राकार	२.५८.४५	तिनेदुर्बहिणस्तत्र तोक-	२.१८.१८	विप्रयोनौ यतो मोहान्	१.२१.३४	विभाजमानो वपुषा	१.२१.४३
विद्युदम्भोदताभ्राम्यां	३.१३.६	विधाय पात्रे सुशुभे	३.८३.३	विन्दानुविन्दावावन्त्यौ	२.३५.४२	विप्ररूपाणि रक्षांति	३.४.१६	विभ्राजस्य तु पुत्रोऽभूद	१.२०.२७
विद्युदग्रं यितमेघाभः प्रबभौ	२.६४.२३	विधिर्नैतेन कृत्स्नेन	२.७६.१	विन्ध्यक्ष्वन्तावभितो द्वे	२.३८.७	विप्राणां शाश्वती	३.४.१३	विमथ्य तु कुबेरस्य	३.६०.४३

श्रीहरिवंशपुराणम् १: श्लोकानुक्रमणी

१३०

विमनस्कामि मुह्यामि	२.६३.६२	विराजमसृजद्विष्णुः	१.१.४४	विललाप ततो राजा	३.१२६.६	विव्याध कुपितो बाणै	२.१२४.४८	विशेषेण तु कन्याथ	२.४८.३६
विमर्दो देवदैत्यानां	३.५५.८३	विमाजस्य द्विजश्रेष्ठ	१.१८.८	विलापसाक्षी प्रियहीनितानां	२.६५.२७	विव्याध गरुडं वज्री	२.७३.२०	विशेषेण नरेन्द्राणां	२.५०.८५
विमलरजतबिन्दु	३.४६.४८	विराटपर्वाणि तथा	३.१३२.६१	विलेखनं प्रमाणं	३.३५.३	विव्याध चैनमुरसि	२.१२६.७१	विश्रम्य सरसस्तीरे	३.१०६.१३
विमलस्फाटिकाभानि	३.४१.६२	विराटास्मिश्रता राजन्	३.१२७.८	विलोक्यां चक्रतुस्तौ	३.८०.२	विव्याध दशभिर्वाणैः	२.६३.६०	विश्रुता साम्बमहिषी	१.३८.५४
विमलादित्य वर्णाभि	२.६८.४४	विराधं च कबन्ध च	१.४१.१३१	विवर्णत्वं च भगवान्	३.४६.६	विव्याध दैत्य विशत्या	३.५५.६५	विश्लिष्टोपलसंघातः	२.४२.६२
विमला विमलोदा च	२.१०६.३३	विरामनियमे प्राप्ते	३.२८.६४	विवर्णं देवी महादेव	१.२६.४२	विव्याध सात्यकि	३.६६.१६	विश्वकर्मकृते तत्र	२.६३.४५
विमानं विबुधं साद्धं	३.१३२.३१	विरुतश्वापदै रम्यं	२.५.१८	विवर्द्धता बलवता तेन	३.११.६	विव्याध स्तनयोर्मध्ये	२.६३.८५	विश्वकर्मा च तां कृत्वा	२.५८.५६
विमानयानैश्श्रीमद्भिस्समन्ता	२.५०.६३	विरूढमभवत्सर्वमाकुलं	३.५७.२३	विवर्द्धयिषवस्ते तु शबलाश्वा	१.३.२१	विव्याध हंसडिम्भकौ	३.१२७.६	विश्वकर्मा ततः कृष्ण	२.५८.४०
विमानयोधो धनदो	१.४४.१८	विरोचनभयप्रस्ता	३.५६.२४	विवस्वानथ तच्छ्रुत्वा	१.६.३७	विशन्तं मथुरां रम्यां	२.३३.४०	विश्वकर्मा ततः प्रीत	२.५८.३६
विमानश्च ददृशुर्बुद्धं	३.१२७.१७	विरोचनश्च जम्भश्च	३.५४.१७	विवस्वान्कश्यपाज्जज्ञे	१.६.१	विशस्यन्तां च पशवो	२.१७.१५	विश्वकर्मा स्वमत्या वै	२.५८.२१
विमानानि विचित्राणि	२.६३.३४	विरोचनश्च प्राह्लादिस्तस्य	३.४८.१५	विवस्वान्सविता चैव	१.३.६१	विशालमाकाशतलं	२.११६.१३०	विश्वकृद्विश्वजिच्चैव तथा	१.३२.५३
विमानैर्विविधैरग्र्यै	३.४२.१६	विरोचनश्च बलवान्	३.५१.८	विवाहमकरोत्तस्य	२.१२७.२८	विशालमूलावनतं पवना	२.१६.४१	विश्वत्वं शृणु मे विष्णो	१.४२.१
विमिश्रं सर्वतो भाति	२.३५.२४	विरोचनस्तु तत्रैव	३.५६.१२	विविक्ते सा च वै देशे	२.११६.३६	विशालरथ्या दुर्धषा	२.४६.६३	विश्वं यदा प्रादुरासीद्	३.१११.४५
विमुखा दानवगणैः	३.४०.१७	विरोचनस्तु प्राह्लादिः	१.६.३०	विविधांश्च महास्कन्धा	३.३५.७	विशीर्णदन्ता बहवो	३.५६.५०	विश्वं सृष्टं मया पूर्वं	३.१०.६३
विमुखा याति देत्येन्द्रैः	३.६४.२	विरोचनस्तु बलवान्	३.५३.१३	विविशुर्योजनाख्यासु	२.११०.११	विशीर्णदन्ताश्च	३.५६.४६	विश्वरूपं मनोरूपं	३.१७.२०
विमृशन्ति स्म तं देवा	१.५०.१८	विरोचनस्तु बलवान्	३.५६.१८	विवृत्तात्तस्य वदनानि	१.५०.१३	विशीर्णैः पार्श्वविवरैः	३.२३.४८	विश्वरूपश्च रूपश्च	३.४२.१६
विरजं चैव शुक्रं च	३.१४.५५	विरोचनस्तु संक्रुद्धो	१.४३.१३	विवेश परमं प्रीतो मित्र	२.५३.१६	विशीर्यमाणं विवभावुल्का-	३.६१.१६	विश्ववक्त्रे नमो	३.६०.१६
विरजा शोकरहिता	२.६७.६१	विरोचनानुजश्चैव	३.५१.१३	विवेश पुण्डरीकाक्ष	३.७६.३५	विशुद्धभावः कृष्णस्य	२.५०.६	विश्वस्य जगतः कर्तुः	२.८३.१३
विरराजाचिभिर्दीप्तै	३.२८.७४	विलपन्ति स्म ते सर्वे	३.४४.३८	विवेश पुष्करं सा तु	२.२७.२४	विशुद्धं पर्वतश्चैव	३.४६.७१	विश्वाची सहजन्या च	३.४२.५
विरराजाचिभिर्दीप्तै	३.३२.१२	विलम्बन्त्यः सपुष्पाश्च	३.२७.१६	विवेश पटपुरं चैव ज्ञाती	२.६०.२७	विशेषतस्तु मृत्यानां	३.७३.२४	विश्वामित्रस्तु दाराणां	१.१३.२०

श्रीहचित्रंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१३१

विश्वामित्रस्तु घर्मात्मः	१.२७.४४	विषदिग्धं स्तनं रौद्रं	२.१०१.३२	विष्णुर्जिष्णुर्जगन्नाथः	३.८२.४	विश्वक्सेनस्य साध्यस्य	३.५६.२५	विहस्तमिव विज्ञाय	२.७३.७१
विश्वामित्रस्य तु सुता	१.२७.४५	विषमं तु तदा युद्धं	२.६६.५२	विष्णुर्नारायणो देवः	२.६४.३४	विश्वग्वाता ववुश्चैव	२.७५.१४	विहस्य विकृतं भूयः	३.८३.१
विश्वामित्रस्य तु सुता	१.३२.५४	विषमैश्च समीभूतैस्समै	२.१८.४४	विष्णुर्ब्रह्मसमो भूत्वा	३.३२.५४	विसर्गं भरतश्रेष्ठ	१.८.४४	विहाय सहजं धैर्यं	२.११०.५३
विश्वामित्रस्य पुत्रस्तु	१.२७.५५	विषयं समतिक्रम्य देवयो	२.६४.४७	विष्णुर्मधोनिहन्ता च	३.२७.२२	विसर्गस्य प्रजानां वै	१.८.२७	विहायसा कामगमो मनसो	२.२८.६८
विश्वामित्रात्मजानां तु	१.२७.५४	विषयस्याल्पतां ज्ञात्वा	२.३८.२५	विष्णुर्मानुषदेहस्तु	२.१०४.५६	विसर्पन्तो तु सर्वत्र	२.७.७	विहायसि गता रौद्रा	२.४.४२
विश्वामित्रो वसिष्ठश्च	२.१०६.८८	विषयासन्नभूतोऽस्मि	१.५४.२८	विष्णुर्मानुषलोकस्थः श्रुतः	२.६२.२८	विसृजच्छ्रवर्षाणि	२.६३.६६	विहायसीं कामगमां	३.४१.४७
विश्वामित्रश्चैव घर्मात्मा	१.२६.११	विषये मे न वस्तव्यं	३.५.१६	विष्णुर्मानुषलोकस्थः श्रुतः	२.६२.२८	विसृज्य तान्वै भगवान्	२.७५.६२	विहारभूमिस्तत्रैव तस्य	२.५६.२६
विश्वामित्रश्चैव घर्मात्मा	१.२७.२	विभेद्यभिभागच्छक्रस्तव	३.५.२८	विष्णुर्वामनरूपेण	३.३१.११	विसृज्य मथुरेशं तु महिषी	२.५५.८७	विहितश्च स्वभावेन	३.१७.४
विश्वामित्रं तृतीयं च	३.१४.४८	विषाणान्तरगो भूत्वा	२.२६.२६	विष्णुर्विष्णुत्वमाप्नोति	३.२८.७१	विसृज्य सशरं चापं	३.१२६.३३	विहितैरुद्यमैः सर्वदेत्या	३.२८.८६
विश्वामित्रसुपुत्राणी	३.१४.५२	विषादो न भवेदत्र चतुर	२.५१.१२	विष्णुचक्रधरः खड्गी	२.२६.७	विस्तरावयवं चैव	१.१.२४	विहितोऽस्यमया मृत्युस्य	२.४३.७३
विश्वेदेवान् देवमाता	३.१४.५३	विष्टराश्वः पृथो पुत्र	१.११.२१	विष्णुश्च धनुरानभ्य	३.३२.४५	विस्तरेण पृथोर्जन्म	१.४.२६	विह्वलः सर्वगोत्रेषु	३.६८.१५
विश्वेदेवा महात्मानः	३.६८.१६	विष्णु कृष्णस्तथा	३.१०१.२३	विष्णुः संग्रामसंभूतं	३.३२.३६	विस्तरेणैव कर्माणि सर्वाणि	१.४०.६	विह्वलास्तस्य पार्श्वेभ्य	२.४२.६४
विश्वेदेवाश्च जानुस्था	३.७१.४५	विष्णुना चैव राजेन्द्र	३.३२.५७	विष्णोर्देव हरे कृष्ण	३.११२.१४	विस्मर्द्धनपि कृष्णेन वरं	२.६१.१३	वीक्षमाणश्च तान्सर्वान्	२.३५.६
विश्वेदेवाश्च विश्वायाः	१.३.३२	विष्णुना लक्ष्मरूपेण गत्वेमां	२.५५.३६	विष्णो पद्मपलाशाक्ष	१.५५.४४	विस्फारयन्तः सहसा	३.५३.३	वीक्षमाणश्च तान्सर्वान्	२.४१.५८
विश्वेदेवाश्च साध्याश्च	३.६६.२६	विष्णुः परमधर्मात्मा	३.२८.२	विष्णोः प्रभावश्चरणौ	१.४१.२	विस्फारयन्महाचापं	३.५५.४२	वीचीकूचीति वाशन्ति	२.१०५.२४
विश्वेदेवास्तथा	३.३३.१०	विष्णु सोऽभ्यहनत्क्रुद्धो	३.२६.१२	विष्णोरमितवीर्यस्य	२.११५.६	विस्फार्य च महाचापं	३.५५.३	वीज्यन्ति बालव्य	३.५१.८२
विश्वेदेवास्तु विश्वायां	३.१४.५०	विष्णुमेवाग्रणी रुद्र	३.२६.४	विष्णोर्जिष्णोः सहिष्णोश्च	१.४४.५१	विस्फार्य सुमहच्चापं	३.५५.८६	वीतरात्रे ततः काले	२.३५.२७
विश्वेशं प्रथमं नाम	३.१४.२७	विष्णुरग्रस्थितो भाति	३.३२.३६	विष्णोः सर्वत्रगे देवे	३.६२.१६	विस्मयो मे नहान्	२.११६.३६	वीतरात्रे ततः काले	२.४२.१४
विश्वेषां मरुतां चैव	२.६४.४६	विष्णुरेव महायोगी	३.१३३.८३	विष्णोस्तु माधुरे कल्पे	२.१२८.२६	विस्मयो मे नहान्	२.१२५.२८	वीतशोकभया बाधा	२.१०१.६६
विषण्णः किञ्चिदास्थाय	३.६७.६	विष्णुरेवाग्रणीस्तेषां	३.३०.१३	विश्वक्सेनस्य पुत्रो	१.२०.३२	विस्मितश्चाभवद्राजा	२.११४.२७	वीतिहोत्राः सुजाताश्च	१.३३.५२

वीर नैवंविधानुप्रदानवा २.१०४.३०	वृत्ते वृत्रवधे तात वर्तमाने १.४२.१०	वृषभस्य तु दायादः १.३२.६५	वृष्णेस्त्रिविधमेतत् १.३४.३४	वेद विद्याव्रतस्नाता ३.७७.४
वीरभोग्यानि राज्यानि २.३१.५०	वृत्ते स्वयंवरे जग्मू २.६१.८	वृषभाविज गर्जन्तौ वृहतं २.६०.४२	वृष्ण्यन्धकाश्च भोजाश्च २.२६.४२	वेदविद्या व्रतस्नातै ३.२३.३८
वीरुद्धिः श्रूयते राजन् १.६.४२	वृत्रासुरभुजोत्सृष्टवैहुधा ३.५७.५१	वृषभाविज गर्जन्तो २.८५.५८	वृष्ण्यन्धकेषु चान्येषु २.५६.५१	वेदवेदाङ्गविद्भिश्च ३.२३.२७
वीरो वातपतिश्चैव १.३८.४६	वृथा त्वं स्पृष्टंसे २.११२.१५	वृषाकर्णिः सिन्धुपति ३.६२.३६	वृहत्कीर्तिर्महागर्भः ३.७२.७	वेदाध्यक्षः सुराध्यक्षः २.१२१.११५
वीरो कुमारी निशठोलमुको २.८६.२०	वृद्धस्त्रीजनसंघैश्च गायद्भि २.५५.२५	वृषार्चिश्चन्द्रसूर्याक्षं ३.६६.४२	वृहस्पतिस्तु धर्मात्मा २.७२.२५	वेदानवीत्य दोक्षाभिः १.५१.१०
वीर्यस्त्रे चैव नो ३.१०५.३	वृद्धाश्च ब्रह्माणास्तत्र ३.१३३.६६	वृषो वंशधर स्तत्र तस्य १.३३.५४	वृहस्पतेस्तु वचनं ३.६३.१	वेदानां मातरं चैव २.१२०.१५
वीर्योपपन्नाः कृतचारुचित् २.८६.४३	वृद्धौ तवाम्बापितरौ २.२६.१६	वृष्टिमानेव जीमूतौ ३.५८.४०	वेगवान् केतुमानुग्रः १.४१.८२	वेदिकाभिः सुचित्राभिः ३.२७.३०
वृकदेव्युपदेवी च देवकी १.३५.३	वृन्दावनस्य मध्येन सा २.४६.४२	वृष्णयः सर्व एवैते ३.७५.३०	वेगवान्केतुमानुग्रः ३.७२.३	वेदीस्कन्धो हरिगन्धो १.४१.३३
वृक्षमुत्पाद्य रामोऽपि २.५६.४५	वृन्दावननिवासाय तान् २.६.८	वृष्णयोऽपि जरासंधं २.६०.२६	वेगवान्भीमनिर्घोषो ३.१८.१५	वेदे रामायणं पुण्ये ३.१३२.६५
वृक्षमुत्पाद्य वेगेन प्रति २.६३.८२	वृन्दावने वसञ्छ्रीमान्केशवो २.४६.४७	वृष्णयोऽपि महाराज २.६१.५६	वेणुदारिश्च राजर्षिः २.५२.८	वेदेषु सपुराणेषु सर्वेषु १.८.२५
वृक्षवेगानिलाद्भूतः शुश्रुवे २.६३.८३	वृन्दावने वसन्विष्णु ३.८२.२३	वृष्णयो हतसंकल्पास्त २.११२.१३	वेणुदारिश्चतुर्वा च २.३४.१६	वेदेर्गीता सा हि तत्त्वं २.७४.३३
वृक्षेषु कीटरूपेण २.१२३.२५	वृषणात् वृष्णयः सर्वे १.३३.५५	वृष्णयः पुण्डरीकाक्षः ३.१११.१३	वेणुभेरीभृदङ्गानां शंखानां २.३५.६८	वेदेर्यग्दीयते तेजो ३.१११.४१
वृतः कारुषसंन्येन २.४३.७६	वृषध्वजं विरुपाक्षं ३.८७.१२	वृष्णिभिर्वादेवैश्चैव २.४८.१०	वेणुमन्तं लताविष्टं २.१२१.३७	वेदैश्चतुर्भिः सांगैश्च ३.५३.३४
वृतो दैत्यगणैः साद्ध २.६३.१००	वृषध्वज विरुपाक्ष ३.१०५.५	वृष्णिवंशकुले जातः २.१०५.७३	वेणुवीणामृदंगैश्च २.११७.४	वेदोदघौ विशदशास्त्र ३.११४.४०
वृतो दैत्यगणैर्हन्तैः ३.५१.३१	वृषपर्वा तु बलिना ३.५३.२१	वृष्णिवंशप्रसङ्गेन १.३१.२	वेणुशंखरवैश्चैव ३.५६.६६	वेद्यो यो वेदविदुषां १.४०.४५
वृतो दैत्यशतैर्वायू ३.५५.५६	वृषपर्वा तु दैत्येन्द्रो ३.५६.१	वृष्णिशत्रुस्सदा राजा ३.६१.२	वेणुहोत्रसुतश्चापि भर्गो १.२६.८२	वेमकस्य तु भार्या ३.१.१५
वृत्तो दैत्यसहस्रौघीगिरि ३.५१.२१	वृषपर्वा तु शैलाभं ३.५६.१०	वृणीनन्यान्सस्वजे च २.६३.३०	वेत्सि त्व हि यथावध्यो २.८७.६	वेमुः शोणितमन्योन्यं ३.५६.८६
वृतो मदबलोत्सिक्तै ३.५१.१४	वृषपर्वाणामासाद्य ३.५६.१८	वृष्णीनां च बलं सर्वं ३.६४.२८	वेदपादो यूपदंष्ट्रः १.४१.२६	वेश्मानि जहृषे दृष्ट्वा २.६८.३१
वृत्तान्तं शृणुयाद्यस्तु ३.१३४.३१	वृषपर्वा विरुपाक्षो २.७२.५	वृष्णीनामन्धकानां च २.५७.७	वेदयज्ञमयं ब्रह्म १.४१.७०	वेष्टितो बहुधा तस्य २.११६.१७४
वृत्तान्तश्चानुदिवसं प्रदेयो २.६१.४६	वृषपर्वासुरश्चैव श्रीमांश्च ३.५१.६६	वृष्णिवीरास्तु ते सर्वे ३.११३.१२	वेदयज्ञाग्निहोत्राणि ३.७२.८०	वैकुण्ठमजयं लोके चराचर २.४६.३०

चैत्रिष्वीयो द्वावेव	१.५३.५०	वैराजात्पुरुषाद्वीरं शत	१.२.५	वैष्णवे यज्ञमित्येवं	३.१७.५६	व्यभिचारान्तं दृष्यन्ति	२.२८.१००	व्यामिश्रं तद्वलं भाति	२.४२.११
चैडूर्यवज्रस्फटिकाग्र	३.५२.५४	वैरिकेलिकिलो विप्रो	१.५४.११	व्यंशः शल्यश्च बलिनो	१.३.६६	व्यभिचारेण ते देवि	२.११८.२०	व्यायच्छन्तौ चिरं कालं	२.३६.२४
चैडूर्यचामीकरचारु	३.५२.६१	वैरूप्य मंगज यन्मे	२.१२६.१६१	व्यक्तकिष्कुशतोत्सेधः	२.६६.७	व्यराजन्तं यदुश्रेष्ठ	२.११०.१३	व्यायतं बाहु साहस्रं	१.४३.१५
चैडूर्यतोरणैश्चित्राभि	२.८८.६०	वैरोचनेन सुप्तस्य मम	२.४१.४८	व्यक्तमन्यतमो भावो	३.१०.२०	व्यराजन्तान्तरिक्षस्था	३.५१.३३	व्यायतोदग्रतुर्गविस्पष्टा	२.४२.२
चैडूर्यपत्रैर्जलजस्तदा	२.६८.२१	वैलक्ष्यात्पुनरेवासौ राज	२.३७.६	व्यक्तमस्य हि तत्स्वप्नो	२.११६.३१	व्यवर्द्धत च वेगेन	१.४८.३६	व्यालयज्ञो पवीताश्च	२.१२४.२१
चैडूर्यमणिवर्णाभः प्रसादो	२.६८.५१	वैवस्वतं च पितृणां	१.४.६	व्यक्तमागतवान्पौण्ड्रो	३.१००.५	व्यवर्द्धत महातेजाः	३.३८.२६	व्यालानन्यान्मृगान	३.१०६.३
चैडूर्यमुक्तामणिभूषिता	३.५२.३६	वैवस्वतश्च कौरव्य	१.७.५	व्यक्तमायाति भगवान्	३.१००.६	व्यवसायं च सत्त्वं	३.५५.१०१	व्यालापीडाः कुण्डलिनो	२.१०६.६८
चैडूर्यवर्णसंकाशो	३.६४.६	वैवस्वते तु महति	१.३.१२१	व्यक्तमेव वयं गोपा वने	२.१२.४८	व्यवस्थितं तु निष्कुम्भं	३.५६.६	व्यावर्तमानं सुमहद्भुवद्भिः	२.२२.१६
चैतण्डी दीर्घतापाश्च	२.१०६.६२	वैवस्वतेऽन्तरे चास्मिन्	१.६.१६	व्यक्ताव्यक्तो महादेवो	१.८.४३	व्यसनेषु जघन्यस्य	१.५४.३२	व्याविध्यमाने चक्रे	२.१२६.२२
चैदिकैरप्रकाशश्चैव	३.६६.६६	वैशम्पायन धर्मज्ञ व्यास	२.८२.१	व्यग्रायां तु यशोदायां	२.७.१५	व्यसृजच्छरवर्षाणि	२.६३.१०५	व्याविध्यत्सुचिरं रामो	३.१२६.४३
चैधव्येनाभिभूतास्म	२.३१.१५	वैशाखं स्थानमास्थाय गुह	२.५३.४५	व्यचरन्मार्गमत्यर्थं	३.१२४.२२	व्यहनत्स रथं चास्य	२.६३.११५	व्यासक्तवैडूर्यसुवर्णजालं	३.५०.२८
चैनतेय प्रयाहि त्वं	२.१२७.४७	वैशाखी च तथा भद्रा	१.३५.२	व्यञ्जनोजनोऽथ विद्वान्	२.७२.४४	व्याक्रोशन्त गजास्तत्र	३.५६.२	व्यासं चैव सपत्नीकं	३.१३२.७५
चैनतेय प्रयोगेण विदित्वा	२.४१.४६	वैशाखे मासि हर्म्यस्थां	२.११७.१६	व्यतिक्रामति ते भीरु	२.६२.१५	व्यादितास्यः क्षुधार्तश्च	१.२०.१०५	व्यासेन वेदविदुषा	२.१२५.५६
चैनतेयश्च बलवान्	२.५०.७७	वैश्याचाराश्च राजन्या	३.३.२६	व्यतिरिक्तेन्द्रियो	३.१७.३७	व्यादितास्यस्य यो	२.१२१.६	व्यासोऽहं याज्ञवल्क्यश्च	२.८३.७
चैनतेयसखश्च्रीमान्यादवै	२.४७.४१	वैश्यैरपि च वित्ताढ्यैः	१.६.५२	व्यतिरिक्तेन्द्रियो	३.२१.८	व्यादितास्यो महारोद्रस्यो	२.२४.४७	व्युत्थितस्य च मेदिन्यां	१.५४.८२
चैनतेयस्य चाह्वानं वाहनं	२.४०.४१	वैश्यो धनसमृद्धः	२.१२८.३६	व्यदारयन्ततिक्रम्य	३.५८.६७	व्याघयो दानवैरवे	३.५६.८३	व्युत्थिताश्च महामेघाः	३.५३.२६
चैभ्राजा नाम ते लोका	१.१८.४६	वैष्णवं परमं तेज इति	३.१११.४२	व्यदारयेता मन्योन्यं	३.५५.१२३	व्याधितः पतितो वापि	२.७८.६	व्युपारमन्त युद्धानि प्रेक्ष्य	२.४३.६३
चैरमुत्सृज्य दम्भं च	२.८२.२५	वैष्णवं हस्तसंश्लेषं	२.४७.३३	व्यद्वन्त परिभ्रष्टा	३.५४.६४	व्याधिमृत्युभयं चैव	२.३.३२	व्यूहोरस्को महाबाहू	२.१०१.५०
चैरस्यान्तं महाराज	१.३२.३२	वैष्णवास्त्रे प्रयुक्तं	२.१२४.४८	व्यधमच्च तथा चर्म शितं	२.७३.७३	व्यानोदानः समानश्च	२.१०६.१०	व्यूहस्याद्धं समासेदुमूर्धुरे	२.३५.१११
चैरस्यान्तं विधित्संस्तु	२.५७.३६	वैष्णवे तु महावीर्ये	२.१२७.७१	व्यभजत्पञ्चधा राज	१.३०.१७	व्याप्य सर्वातिमाल्लोकान्	३.८८.४३	व्यूहानां विनियोगज्ञो	३.५१.६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

१३४

व्योममार्गेण यातव्यं यथा	२.५२.४१	शकुनिं चैव शल्यं च	२.८४.४६	शक्रस्य वचनं श्रुत्वा	३.५२.७	शंखस्तस्य सुतो विद्वान्	१.१५.३२	शतैर्धनुभिः सुमहातिवगा	३.४४.२८
व्रज पत्ररथश्रेष्ठ कैशिकस्य	२.४७.३८	शकुनिप्रमुखास्तस्य	१.११.१४	शक्र जयति देवेश त्वयि	१.५१.३	शंखहृदादुद्धरणं च वीर	२.८६.११	शत्रुः किल स दैत्यानां	२.६२.२६
व्रजमाजग्मतुस्तौ तु व्रजे	२.१५.२	शकुनीं पूतना त्वं च	२.३.२२	शक्रेण प्रेषितः क्षिप्रं	२.५८.२३	शंखानां निनदश्चात्र	३.६४.३१	शत्रुस्ते मागधो राजा	२.५०.१४
व्रजेषु च विशेषेण	२.१६.३७	शक्रन्मूत्रेषु तेष्वेव	२.८.२०	शक्रो बृहस्पतिचैव	३.६६.३८	शंखान्दध्मु पृथक्	३.१२७.२०	शत्रुहन्ता पुनः क्रुद्धो	२.१०५.६७
व्रजोपभोग्या च यथा	२.११.५७	शक्रन्मेदोमहापङ्का	३.६०.८	शक्रो यस्य पुरसरः	३.१२१.६	शंखी चक्री गदी	३.६२.८	शन्तनुस्त्वभवद्राजा	१.३२.११०
व्रतकस्यावसानेऽथ देयं	२.७६.३८	शकतश्चापि जरासंधं नृपं	२.३८.५५	शंकरस्तु तथेत्युक्त्वा	२.११६.१७	शची तु कश्यपं पत्न्या	२.७५.३६	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७
व्रतं हि देवदेवस्य भवस्य	२.८६.३६	शक्तिचित्रं हलोदग्रं	१.४२.२५	शंकरस्य गते भागे	१.५४.५	शचीव पुरुहूतस्य उताहो	२.२८.७६	शप्ताः खगास्त्रयस्ते	१.२२.६
व्रतानां चैव सर्वेषां	३.३७.६	शक्तितोमरनिखि	३.१६.५१	शकरायजगद्धात्रे	३.८४.११	शतक्रतोः कल्मषविप्रमोक्षणं	३.६.६	शप्ता हि सा मतिमता	१.२६.३१
व्रतोपवासतन्वग्यः काक्षं	२.६४.२८	शक्तितोमर संकीर्णं	३.६३.१४	शंकरेण वधं राजन्	३.१३३.३	शतघ्नं चक्राशनिशक्ति	३.५१.८४	शप्तोऽहमस्मि लोकेश	१.६.२६
व्रीडिता तेन दुःखेन	१.१८.२६	शक्तितो वयमप्यत्र	२.१२२.४५	शंखं चक्र गदातूण	३.७२.८५	शतद्वयं ब्राह्मणीनां राजन्	२.८३.३४	शप्त्वा चाऽनभिभाष्यास्तां	१.२२.५
व्रीडिता यान्ति सुश्रोणि	२.६२.१८	शक्तिं चिच्छेद तत्रासौ	२.६३.५३	शंखं चक्रं गदां पद्मं	३.७२.८४	शतप्रहरणोदग्रः शतबाहुः	१.४६.५०	शवरैर्बभूवैश्चैव पुलिन्दै	२.३.७
व्रीडिता विस्मिताश्चैव	२.१२.२१	शक्तिं बाणस्ततः क्रुद्धो	२.११६.१६०	शंखचक्रगदापाणि	२.६६.११	शतं त्वेवं समाख्यातं	१.३.५३	शब्दगोचर देवेश	३.११२.१५
शकटस्य त्वघः सुप्तं	२.६.४	शक्तिमंतो ह्युतिमंतो	२.१०६.८३	शखचक्रगदापाणिर्गर्वं	३.१०६.१३	शतयोजन विस्तारं	३.३५.८	शब्दनिर्वचनार्थज्ञैः	३.६६.२४
शकटानि सुगन्धीनि	१.१३०.६	शक्तिशूलगदाप्रासांस्तौ	२.६३.१०३	शंख चक्र गदापाणिः	३.११६.१८	शतवर्त्मा शतशिखो	३.५५.१४१	शब्दं शब्दमिदं	३.११५.२३
शकटावर्त्तपर्यन्तं चन्द्रा	२.६.२१	शक्त्यष्टिशूलपरिध	२.१०६.६६	शख चक्र गदाशांगं	३.११८.२०	शतसाहस्रिको भागो व	२.५५.४६	शब्दस्पर्शो च रूपं च	३.६६.३५
शकटावर्त्तविपुलं कण्ट	२.५.२३	शक्य एष गिरिस्तात देवै	२.४२.४६	शंखमस्तीति तद्वीर्यं	३.१००.३१	शताक्षः शतबाहुश्च	३.५१.६३	शब्दानुकारी संक्रुद्धो	२.१३.१५
शकले द्वे स वै जातो	१.३२.६७	शक्रगोपाह्वयामोदे	२.२५.४	शंखमुक्तामणिचितो	३.६१.२५	शतानि तत्रापसरसां	२.११७.२	शमः शान्तश्च निरतो	१.५.४१
शका यवनकाम्बोजाः	१.१४.१८	शक्रं चोवाच भगवान्वचनं	३.४०.८	शंखमुक्तामलतनुः प्रवाल	१.५३.१६	शतानि पञ्च भार्याणां	२.८३.३३	शमी च दण्डशर्मा च	१.३८.३
शकाशनिसमस्पर्श	३.५६.६४	शक्रवज्रप्रहारारणामनभिज्ञं	२.४०.२१	शंखवेषणुस्वनोन्मिश्रः	३.५८.६७	शतानीको निरामित्रो	१.७.६८	शमीजातं तु तं दृष्ट्वा	१.२६.४४
शकास्तुषारा दरदाः पार	२.५७.२०	शक्रस्य वचनं श्रुत्वा	२.१६.६२	शंखशब्दैः सुतुमुलै	३.५४.११	शताश्वमेधस्य यदत्र	१.१.५	शमीपुत्रः प्रतिशत्रुः	१.३८.४

श्रीहरिवंशपुराणम्:: श्लोकानुक्रमणी

१३५

शम्बरश्चिन्तयामास	२.१०६.२७	शरद्वेवं सुसस्यायां	२.१६.३६	शरैराशीविषप्रख्यै रत्न	२.७३.६५	शशास नृपतिः स्कीतः	२.३७.४१	शाद्वलच्छन्तमागसु	२.११.१५
शम्बरस्तत्र शामित्र	३.५४.२०	शरद्वतस्य दायामहल्या	१.३२.७१	शरैराशीविषप्रख्यै	.६६.४६	शशास पृथिवीं कृत्स्नां	३.१०२.२०	शान्तिपर्वण्यपि गते	३.१३२.६८
शम्बरस्तु ततः क्रुद्धः	२.१०६.१	शरनिभिन्नगात्राश्च	३.६०.३०	शरैरनिशितधाराग्नैः	३.१२३.४	शशिरश्मिप्रतीकाशं	२.१०८.१०	शान्तोऽसीतिमयोक्तस्त्वं	१.५३.२६
शम्बरस्तु ततः क्रुद्धो	२.१०६.२४	शरभः शलभश्चैव	१.४१.८४	शरैश्चतुर्भिरश्वाश्च	३.१२४.१०	शश्रुवुस्तेऽमरव्याघ्रा	३.६६.२२	शान्तिं भजत भद्रं वो	१.४२.३२
शम्बरस्तु ततः क्रुद्धो	२.१०७.१	शरभः शलभश्चैव	३.५३.१२	शरैश्च भोगिभोगाभैः	३.१२२.८	शस्त्रजालैर्बहुविधै	३.३८.३०	शान्तिं व्रज न भेतव्यं	१.५३.३७
शम्बरस्तु महादैत्या	३.५३.११	शरवर्षं विमुचन्तो	२.१०५.८	शरैः संछादयामास	२.६३.६७	शस्त्रपातमहाघातं नरकेण	२.६३.१२०	शान्तोऽसीत्युक्तमात्रस्तु	१.५३.२२
शम्बरस्तु महामायो	३.५०.२२	शरवर्षाणि दीप्तानि	३.५४.७१	शरैः सप्ततिमंख्या कैरः	३.६६.३०	शस्त्रपातांश्च विविधान्	३.५७.२६	शान्त्यर्थं सर्वभूतानामिह	३.१३३.६७
शम्बरस्य जघनाशु	२.१०५.६	शरशक्तिगदाभिस्ते	३.५६.५	शरीघरश्मिभिर्दीप्तैः	३.५७.१०	शस्त्रं गृहाण गोविन्द	३.१००.३४	शापश्च दत्तः क्रुद्धेन	२.६३.३०
शम्बरस्य वधश्चैव	३.१३४.२७	शरशक्त्यृष्टि खड्गांश्च	३.५६.७६	शरीघानस्त्रमायाभिः	२.१२६.७	शस्त्रसिद्धिस्तु योधानां	२.३०.२६	शापस्य परिहारेण त्वं च	१.६.३३
शम्बरस्य इतं पुत्रा	२.१०४.५३	शरसंवृतगात्रास्ते	२.१२६.४	शत्रुशेषमृणाच्छेषं शेषं	१.२०.१३१	शस्त्राणि यानि चान्यानि	२.४४.२५	शापाच्छूद्रत्वमापन्नो	१.११.११
शम्यातेस्तु रहस्याती	१.३१.८	शराग्निना न दग्धा	२.८२.४	शर्वः शत्रूणां शासनाद	२.७४.२६	शस्यचौरा भविष्यन्ति	३.४.२२	शापितासि मम प्राणे	२.६७.३
शयनानिमहार्हाणि तथा	२.६४.५	शरीरांशं समुत्पश्य	३.२६.१३	शलभा इव राजेन्द्र	३.६८.१६	शाकभक्षः कृतजपो	३.८४.१८	शापोऽयं विनिवर्तते	१.६.२५
शरघातप्रदीप्तानि	३.१३३.७६	शरीराणि महाराज	३.१२२.४	शल्यपर्वणि राजेन्द्र	३.१३२.६५	शाखानगरमुख्यानां संवाहानां	२.६१.६	शामयंश्च महेष्वासान	३.५४.७०
शरजालेन दिव्येन	३.५४.४५	शरीरादभिनिष्क्रम्य	३.१६.१२	शल्यश्च शकुनिश्चोभौ	२.८४.२०	शाखानगरमुख्येषु रम्येषु	२.६१.१२	शाम्यमाने तु समरे	३.६२.२८
शरजालेन महता	२.६३.६२	शरेण तीक्ष्णपुंखेन	३.१२५.११	शल्यश्च शकुनिश्चोभौ	२.८४.२१	शाखाविटंकैर्वृक्षाणां	२.६.२६	शारदं वर्षणं यद्वत्सेहे	२.८४.३८
शरणागतः क्षुधार्तश्च	१.२०.१११	शरेण निशितेनाजौ	३.११६.२१	शशकं मृगमांसं वा नित्य	२.७६.५८	शाङ्खिनं चक्रिणं विष्णु	३.८१.१२	शाङ्गं खड्गं तथा	३.६२.२३
शरण्यं शरणं विष्णु	३.४१.३२	शरेणाकर्णमाकृष्य	३.१२३.५	शशाको विमलश्चापि	३.३०.२६	शाणपाद इति ख्यातो	२.७४.१५	शाङ्गी चक्री गदी शंखी	३.१००.३८
शरण्यं सर्वभूतानां	३.६०.३०	शरेणाभिहतस्त्राणं	३.३२.२५	शशादस्य तु दायामास	१.११.१६	शातकुम्भस्य निचयं	२.५१.६२	शार्दूलचर्मसंविष्टं	२.१०५.१३
शरण्यं सर्वभूतेशं भक्त्या	१.२४.१२	शरैरनेकसाहस्रै	३.६४.२७	शशाप तानतिक्रुद्धो	१.३०.३१	शातकौम्भेन महता	३.५१.१७	शार्दूलशब्दाभिस्त	२.५.२१
शरतल्ये शयानेन	२.१११.४	शरैरनेकसाहस्रै	३.१२६.३	शशास चेमां वसुधा	२.३७.५०	शातोदरत्वमिच्छन्ती	२.८०.३३	शार्दूलचिह्नः शुशुभे	३.४६.४०

शालावत्या हिरण्याक्षाः	१.२७.५२	शनिर्वीरः शरी चापी	३.६५.२२	शिरो निर्वेष्टुकामा तु	२.८०.६	शिवा इमशानान्निष्क्रम्यं	२.२३.२६	शीतोष्णो चेप्सिते देवि	२.६५.२२
शालावृकान्यो यतिरूपो	२.७२.३१	शिनेयुर भवत्सूनुस्ततः	१.३६.७	शिशोभिः प्रपतद्भिस्तु	३.५६.५३	शिशिरप्रभवां चैव	३.३५.१३	शीतोष्णो ह्यन्तस्तत्र	२.६८.२०
शाल्वस्सोभपतिश्चैव	२.५२.७	शिनेर्नप्ता धनुस्तस्य	२.७३.३६	शिरोभिः स्पृश्य	३.६६.४६	शिशिरं च महाशैलं	३.३५.१२	शीतोष्णमिच्छतां तत्र	२.८८.७४
शाल्वोऽपि नृपतिश्चेष्ट	२.५२.४७	शिनेस्तु सत्यवाक्	२.१०३.३०	शिरोरुहेषु संगृह्य	३.५७.२७	शिशुना चटकेनाथ	१.२०.६६	शीर्णकुम्भस्तथा	३.५५.७८
शाल्वोऽपि भरतश्चेष्ट	२.५४.१०	शिविकायामथारोप्स	२.३२.५८	शिरो वहामि चेष्टत्वा	२.६७.६	शिशुपालश्च संपूर्णं	२.११५.११	शीर्षमाणस्य चूर्णानि	३.६१.२१
शावं स्तनं पिबत्साधु	३.१०६.६	शिविकायामथारोप्य	२.४४.६२	शिलाभिर्वहुचित्राभि	३.२७.१६	शिशपालो दशग्रीवो	२.५६.२३	शीर्षाणां वै सहस्रं तु	२.१२२.६
शासनं यदि वा श्रुत्वा	२.२२.६६	शिवेश्च पुत्राश्चत्वारो	१.३१.२६	शिलां प्रतिवृत्तिं चैव	२.७६.२८	शिशुलीलां ततः कुर्वन्स	२.६.५	शुकदेवोऽपि धर्मात्मा	२.४४.६१
शास्ता त्वं खलु	३.१२७.४०	शिरः खं ते जलं मूर्तिः	२.१४.३८	शिलासंघानतिक्रम्य	२.६३.५७	शिष्टाश्च दैत्या	३.३८.१५	शुकवर्णानृष्यवर्णा	३.५८.२५
शास्तास्म्यथो सतां	३.१२७.३६	क्षिरश्च पृथिवी भूतं	३.२७.२६	शिलोज्छ्वृतयः ख्याताः	३.२२.२८	शिष्यो हिरण्यनाभस्य	१.२०.४३	शुकस्य कन्या कृत्वी	१.२०.४
शास्त्रज्ञो नीतिमान्साक्षा	३.७४.१६	शिरश्चिच्छेद भल्लेन	२.६३.७१	शिल्पवन्तोऽनृतपरा	३.३.८	शीघ्रं तं मोक्षयिष्यामो	२.१२७.४	शुका नीलतमाः सुभ्रू	२.११७.३७
शास्त्रार्थकुशलाः सर्वे	२.६०.४५	शिरसाज्ञां तु ताः सर्वाः	२.८८.४४	शिवं चास्य जलस्यास्तु	२.१२.४१	शीघ्रं समभिवर्तन्तां	२.३५.३३	शुक्रं सोमात्मकं विद्या	१.४०.५१
शास्त्रोक्तस्याप्रवक्तारो	३.३.३३	शिरसोऽभ्यंजनं सौम्ये	२.७८.३१	शिवयोर्देवयोस्तत्र	३.७३.१६	शीघ्रं समभिवर्तन्तां	२.४२.२०	शुक्रस्तु सह पुत्रेण	३.३१.६
शिक्यं च दार वं पात्रं	३.१११.६१	शिरस्तः पार्श्वतश्चैव	३.६६.३१	शिवश्च वो भविष्यामि	२.१७.२६	शीघ्रमारुह भद्रं ते बलदेव	२.४३.८७	शुक्रादीनृत्वजश्चापि	३.६६.६४
शिक्षाक्षरसमेताया	३.२३.१५	शिरस्तिमिसमाकीर्णा	२.१०५.६४	शिवस्य भवने राजन्	३.१३२.४६	शीघ्रवातसमुद्भूताः	२.१०.२६	शुक्रादगर्भः समभवद्रसमूलेन	१.४०.५०
शिक्षितान् गजशिक्षाया	३.५८.२०	शिरस्ते पातयिष्यामि	३.६५.३८	शिवाय गावः पूज्यन्ता	२.१६.४३	शीतच्छायैश्च तरुभिर्लता	३.२८.५६	शुक्लदन्ता जिताक्षाश्च	३.३.१५
शिक्षरैर्घूर्णमानैश्च	२.१८.३३	शिरः स्थाने तु राजर्षे	२.५७.५०	शिवाय विष्णुरूपाय	२.१२५.२६	शीतवीर्याः प्रकृत्यैव	२.६३.५६	शुक्लमेव सदा वासः	२.७८.२६
शिखाभिस्तस्य मुक्ताभी	२.११.७	शिरस्यद्विप्रतीकाशे	३.५८.३७	शिवाश्च प्रववुवार्ताः	२.४.१६	शीतांशुजलनिर्दग्धाः	१.४६.१८	शुक्लवस्त्रा शुभाचारा	२.८०.३
शिखिभिर्जटिभिश्चैव	३.३२.८	शिरांसि गर्वितान्यूहुः सर्वा	२.८८.२१	शिवाश्च प्रववुर्वार्ता	२.४५.११	शीतांशुनिहतास्ते तु	१.४६.१६	शुक्लाः सुमनसः कन्याः	२.१०६.६७
शितिकण्ठप्रसादेन	२.११६.४०	शिरोषुषुषसदृशं	२.११७.४६	शिवाश्च वाताः प्रववुर्वि	२.३३.३७	शीताशुरशान्तकिरणो	२.२६.३५	शुचिः प्रयतवाक् भूत्वा	१.४१.१६
शितिकण्ठविसृष्टस्तु	२.११६.३६	शिरोधरायां जग्राह	१.५४.५२	शिवाश्चैवाशिवान्	२.१२४.३३	शीतेन व्यधमत्सर्वा	३.५५.१५३	शुचिं योगं शसनं शान्त	२.७२.३६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१३७

शुचिरोदकान्नक्षिगण	१.३.१०८	शुशुभे सा चमूर्दीप्ता	३.५६.७३	शूलोलूखलहस्ताश्च	१.४१.६१	शृणु राजन्सुपर्णेन कृत	२.५५.३	शेषां देवाश्च दंत्याश्च	३.५३.२६
शुचिः शीलान्विताचार	३.१३२.१६	शुशुभे दैत्यनगरं	३.१३३.१३	शृगालप्रहितैरस्त्रैः पावक	२.४४.२६	शृणु विस्तरत सर्वं	३.१३३.२	शेषां सेनां गुहाद्वारि	२.८४.५
शुद्धाक्षमैन्द्रं भल्लाटं	२.५८.१८	शुश्रूषवो भविष्यन्ति	३.४.४२	शृगालश्चापिसंरब्धस्यन्वने	२.४४.१३	शृणुः विस्तरतः	३.१८.२	शेषा यादवसेना तु व्यूह	२.८४.११
शुभं गर्भमद्यत्तेममदिति	१.४८.२०	शुश्रूषुश्चान्तरिक्षेऽथ	३.२६.२३	शृगालस्त्वब्रवीत्कृष्ण	२.४४.१६	शृणु विस्तरशः सर्वं	३.१६.२	शेषा विहंगमा ये वै	१.२३.२८
शुभाङ्गी नाम वैदर्भी	२.६१.४	शुश्रूषेऽतिमहाघोर	३.५८.८६	शृगालस्य वचश्श्रुत्वा	२.४४.२३	शृणु वैदर्भि धर्मज्ञे	२.७७.१०	शेषाश्च वसवः सर्वे	३.५४.६०
शुभाप्यया गुणिनी युक्त	२.७६.११	शुश्रूषे सुमहाशब्द	२.६३.६१	शृगं चास्य पुनस्तव्य-	२.२१.२१	शृणुष्वज्जर संदेशं	२.१२३.२०	शेषाश्च शेषं राजेन्द्र	३.१२३.३
शुभा देवसमा रम्या स्नान	२.५०.६१	शुश्रूष निरहंकाराबुभौ	२.३३.५	शृङ्ग पृथिव्यास्स्वालक्ष्यं	२.५७.३	शृणुष्व मम गोविन्द	२.१२३.१५	शेषास्ततोऽनयः	२.१२२.४०
शुभावहं वृद्धिकरं प्रशस्तं	२.८६.७६	शृष्काण्डैस्तृणैर्वेण्ड्य	२.४२.५०	शृङ्गप्रहरणो रौद्रः	२.२१.६	शृणुष्व वदनां वीर कृपणा	२.३२.२६	शेषस्तु भैमा हरिमभ्युपेता	२.८६.४२
शुभाश्च गिरिनन्दिन्यो	२.७७.१७	शृन्यां वर्षसहस्रं वै	१.३२.२५	शृङ्गस्थो तस्य शैलस्य	२.३६.६६	शृणुष्वदिपुरोगेभ्यो	३.७.१२	शेषेण चापि जञ्जाल	२.१२२.८०
शुभासनवतीं रम्यां	३.४१.४८	शूरः पुज्याय वृद्धाय	१.३४.२४	शृणु कृष्ण वचो मह्यं	२.१२१.४१	शृणुष्ववाहितो	३.७३.६	शेषोऽनन्तो महीपालो	३.४६.४०
शुभे तिथौ महाराज	२.६१.१६	शूरसेनश्च शूरश्च	१.३३.४६	शृणुद्वत वचो मह्यं	३.११५.३०	शृणुष्वैकमना राजन्	३.१६.१	शैनेयमपि मुह्यन्तं पतन्तं	२.७३.७७
शुभे देवसमै रम्ये स्नान	२.५०.७६	शूराणां युद्धयमानानां	२.४२.२३	शृणुध्वं राजशार्दूलाः	२.१०१.२५	शृणु सर्वं महाराज	१.२०.८०	शैनेयः सत्यकस्तस्माद्	१.३४.३०
शुभे देशे निवेश्याथ	३.१३२.७८	शूराश्च शूरवीराश्च	१.३३.५६	शृणु नामानि सर्वेषां	३.७२.१	शृणु हंस-वचो मह्यं	३.११३.८	शैनेयो बलभद्रश्च	३.१२७.३
शुभे देशे शरद्वीपे	१.२१.३०	शूरेणामिनर्वीर्येण	३.५०.१५	शृणु नारायणस्यादौ	१.४६.७	शृणोति श्रावयेद्वापि	३.१३५.११	शैनेयो वृष्णिवीरस्तु	३.६७.१३
शुभेन कर्मणा तेन जाता	१.२१.२४	शूरोऽप्रितबलश्चैव	२.५३.४	शृणु पुरोर्महाराज वंश	१.३१.३	शृण्वन्तश्चारुगीतानि	२.८८.३८	शैव्यस्य च सुतां तन्वीं	२.६०.४३
शुभ्रेमघप्रतीकाशैर्द्वारिस्तो	२.५८.५४	शूलशक्तिगदाखड्ग	३.५८.६५	शृणु मे ह्यपरं वाक्यं	२.१०६.५५	शृण्वन्ति श्रद्धया युक्ता	३.१३५.५	शैव्यादिह्ययुक्तेन	२.७५.५१
शुम्भश्चैव निशुम्भश्च	२.१०६.४०	शूलशक्तिगदापाणि	३.५७.६०	शृणु राजन् कथां दिव्यां	१.१.१६	शृण्वन्तथा रमन्वापि	३.१०३.३	शैव्याद्यानपि देवेन्द्रः	३.७५.८
शुशुभाते श्रिया जुष्टावान	२.७.१०	शूलशक्तिमहामत्स्या	३.५६.८६	शृणु राजन्कथां	३.४८.६	शेषं व्यापराः कालमनु	१.२१.२०	शैल प्राकारपरिखा	२.११८.८४
शुशुभे जातरूपश्च	३.३५.३०	शूलिना प्रेषितो युद्धे	१.१२७.१८	शृणु राजन् विधिमिमं	३.४६.२८	शेषश्च वासुकिश्चैव	२.१०६.१७	शैलवारुणसाविर्जैस्तान्स	२.१२६.६
शुशुभे दानवश्रेष्ठो	३.५८.४८	शूलैः प्रमथिताः	३.५६.८२			शेषः सत्यधृतिर्नागो	३.२८.३२	शैलानां च वनानां च	२.१०.३६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

१३८

शैलानां भूषणं घोषो	२.८.१७	श्रममभिविनिवर्तमानसं	३.६.२	श्रीवत्सकलिलं पुण्यं	३.३३.२६	श्रुति प्रीतिरिला कीर्तिः	३.६५.१७	श्रुत्वाभिषिक्तं राजेन्द्र	२.५५.१३
शैलानां हिमवन्त	१.४.६	श्रविष्ठायाश्च पुत्रो	३.१.१२	श्रीवत्सलक्षणं दृष्ट्वा	२.४.२२	श्रुतिमान्धर्मशीलश्च	२.५३.३	श्रुत्वाभिषिक्तं राजेन्द्र	२.५५.१४
शैलैश्च श्रूयते राजन्	१.६.४०	श्राद्ध कर्माणि चोद्दिष्ट	१.११.१७	श्रीवत्सेनोरसि श्रीमान्	३.६६.३३	श्रुतो मे स्वस्य वंशस्य	१.४०.६४	श्रुत्वा वाणीं तु तां	३.६६.२
शैलोत्करसमाकीर्णं	१.४३.६	श्राद्धकाले मम पितुर्मया	१.१६.१६	श्रीवृताः पावनाश्चैव	३.२१.६	श्रुतोऽर्थपटपुरवधो रम्यो	२.८६.१	श्रुत्वा विनीतं वचनं	२.५८.२६
शैवालनलिनैश्चापि वृक्षः	२.११.५५	श्राद्धस्य फलमुद्दिश्य नियतं	१.२०.१४२	श्रीश्च पद्मालया देवी	२.४१.२८	श्रुतोऽयमेवं शतशस्तथा	२.१०२.३६	श्रुत्वा शङ्खस्वनं घोरम	३.३६.११
शोणिताक्ताः स्म दृश्यन्ते	२.६३.८०	श्राद्धानि चैव कुर्वन्ति	१.१६.१२	श्रुतधर्मंति नामान	१.३२.१००	श्रुत्वा कार्मुकनिर्घोषं	३.५६.२३	श्रुत्वा सुतुमुलं नादं सर्वं	२.५०.६६
शोणितोदां रणे	३.६२.१६	श्राद्धानि पुष्टिकामाश्च	१.१७.३६	श्रुतं चापि तयोर्वीर्यं	३.११५.१०	श्रुत्वा कृष्णभिषेकं तु	२.४६.६३	श्रुत्वा सुरगणानां तु	१.२८.१४
शोषयाम्येष मार्गं तं	२.११३.६	श्राद्धे प्रतिष्ठितो लोकः	१.२१.१	श्रुतं नः परमं ब्रह्मन्	३.१५.१	श्रुत्वा कृष्णस्तु तत्सर्वं	२.७२.७	श्रुत्वा सौभपतेर्विक्रियं सर्वं	२.५२.३२
शोषितोषप्लुतैर्गात्रैः	२.१२६.१४६	श्राद्धे ये च प्रदास्यन्ति	१.१७.४०	श्रुतं ब्रह्मयुगं ब्रह्मन्युगानां	३.२१.१	श्रुत्वा च गदितं तस्या	३.१६.२३	श्रुत्वाहं तद्वचस्तस्य	२.२८.५५
शोचान्विता स सततं	२.८१.६	श्राद्धैः प्रीणाति हि	१.१६.१०	श्रुतं म विश्वदेवानां	३.७.१६	श्रुत्वा चेदमुपाख्यानं	१.२४.३५	श्रुत्वाहं तेन वाक्येन	२.५३.५०
शोण्डीर्यं मे मया	३.५.२२	श्राद्धैराप्यायितः सोमो	१.१७.३८	श्रुतमेतन्मया हंसिन	२.६२.५१	श्रुत्वा तं देवराजस्तु	२.६४.७०	श्रुत्वाहमेवं कृष्णस्य	२.१११.१४
शोरिणा पृथिवीपाला	२.१०२.२	श्राद्धैराप्यायिताश्चैव	१.१७.३७	श्रुतवर्णो जघानाश्वां	२.६०.१३	श्रुत्वा तमर्थमखिल	१.२६.४५	श्रुत्वंतत्केशवो वाक्यं	२.४७.१२
श्मशानरतये नित्यं	३.८७.३१	श्राम्यते व्यक्तमेवेयं	१.५१.२६	श्रुतवन्तोऽर्थवन्तश्च दातारः	२.३२.३६	श्रुत्वा तु वद्धं पीलस्त्यं	१.३३.३५	श्रुत्वंतद्भार्गवो रामस्तयो	२.३६.४४
श्यामपुत्रः शमीकस्तु	१.३४.३६	श्रीकोस्तुभोद्भवश्चि	३.११४.३६	श्रुतश्रवां च समुतां	२.७६.२४	श्रुत्वा तु याच्मानां तां	१.२४.४	श्रुत्वेतिहासं कात्स्न्येन	१.१.११
श्यामावदाता सा ह्यासी	२.५६.३८	श्रीदाममजयत् कृष्णः	२.१४.२१	श्रुत समागमः पूर्वमद्य	३.११७.१०	श्रुत्वा तु रामः कृष्णश्च	२.१०१.६२	श्रुत्वं वधुषो भंगकंसो	२.२७.६२
श्यामासुचारुकेशा स्त्री	२.१०८.११	श्रीफलं गोमयं दुन्दुभिः	२.१०६.१००	श्रुतसेनः सुषेणस्तु	२.१०४.४४	श्रुत्वा तु वचनं देवी	२.१०८.३०	श्रुत्वं वचनं तस्य	२.१२६.२६
श्यामो युवा लोहिताक्षो	१.४१.१०५	श्रीमत्स्वयं सदा पुण्य	२.१०६.१०६	श्रुतस्ते दैत्यसैन्यस्य	१.४४.१	श्रुत्वा तु वचनं तेषां	३.६६.१५	श्रूयतां कथयिष्यामि	२.३६.५५
अद्धानस्य राजेन्द्र	२.८८.३	श्री महेश देवदेवमर्चयति	२.११७.६	श्रुतस्ते दैत्यसैन्यस्य	३.५२.१	श्रुत्वा निहतमत्युग्रं	३.१२६.१	श्रूयतां त्रिदशाः सर्वे	१.४८.६७
अद्धानेन वै भाव्य	३.१३२.५०	श्रीमादग्लानिः समुत्पन्ना	२.११७.५४	श्रुतार्थः स्व विमानं तदा	२.६०.६	श्रुत्वा पञ्चविसर्गं तु	१.३३.५६	श्रूयतां भो नृपश्रेष्ठा	२.४८.५
अद्भया परया दत्तं	३.१३२.१७	श्रीमान् भीमस्य दायादो	१.२७.२	श्रुतार्थो देवगुह्यस्य	२.५८.२७	श्रुत्वा पितामहवचः सा	१.५३.६६	श्रूयतां भो नृपश्रेष्ठा	२.११०.३१

श्रोहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

१३६

श्रूयतामभिधास्यामि	३.८०.२१	श्लाघ्यश्च स हि ते	२.१.१६	श्वेतशैलप्रतीकाशः	३.५०.१०	षष्टिः पुत्रसहस्राणि	१.१५.११	संरब्धौ तावुभौ दृष्ट्वा	१.३६.१३
श्रूयतामित्यथामन्त्र्य दान	२.६२.४६	श्लोकं वा श्लोकपादं	३.१३२.७४	श्वेताः कैलाससंकाशाः	२.१०६.७१	षष्टि रथसहस्राणि	३.५०.५	संवत्सरपरं कालं कालज्ञे	२.६५.२१
श्रूयतामुत्तरं वाक्यं श्रुत्वा	२.३६.६	श्लोकोऽपि चात्र गीतोऽयं	३.१.१७	श्वेताम्बरधरा दैत्याः	३.५१.५६	षष्टि रथसहस्राणि	३.५६.६३	संवत्सरस्य पर्यन्ते	१.११.३४
श्रूयते चास्य चरितं देवे	१.५०.२०	श्वफल्कः काशिराजस्य	१.३४.७	श्वेतेन तव पादेन वाससा	२.६६.३२	षष्टिवर्षसहस्राणि	१.२६.७५	संवत्सरात्कुमारास्ते	१.२६.३७
श्रूयते हि पुरा विष्णु	२.२२.३६	श्वफल्कः काशिराजस्य	१.३८.५०	श्वेतेन परिवारेण किशोर	१.३७.२१	षष्टिवर्षसहस्राणि	१.३२.३३	संवत्सरे ततः पूर्णे	२.८०.३१
श्रूयते हि वनं रम्यं	२.८.२२	श्वफल्कस्तु महाराज	१.३४.४	श्वेतेन युक्ता नृप शोणितेन	२.८६.६३	षष्टिवर्षे गते काले	१.३६.३७	संवत्सरे ततः प्राप्ते	२.८०.३६
श्रूयन्ते पितरो देवा	१.१६.३५	श्वः प्रभातेयथा कामं	२.७४.६	श्वो भषविनि विवाहे च	२.५६.३३	षष्ट्या च युगचक्राक्ष	२.१०५.४६	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
श्रूयन्ते विविधानि	२.११५.२	श्वभ्रे प्रपद्यमानश्च	३.१६.२६	ष		षष्ठं ते संप्रवक्ष्यामि	१.७.३०	संवत् ऋण्यशृंगश्च	२.१०६.६०
श्रूयन्ते हि स्त्रियो	२.२८.१०१	श्वशुराम्यां च चरणी	२.७८.२०	षट्पदोदगद्वीतनिनदा	३.६६.२०	षष्ठी रथसहस्राणि	३.४६.३७	संवत्काम्बुदोपेतं नक्षत्र	१.५०.५
श्रेणीभूताः प्रकाशन्ते	३.५५.६५	श्वसन्तो दुद्रुवुः	२.५६.२२	षट्पुरं नाम नगरं	२.७४.४३	षष्ठी रथसहस्राणि	२.५६.४२	संवत्काम्बुदप्रख्यः	३.५५.१४०
श्रेण्यः प्रकृतयश्चैव	२.३३.३०	श्वापदप्रचुरत्वं च	३.३.१६	षट्पुरादपि निष्क्रान्ता दान	२.८४.१२	षष्ठेद्विगुण मस्तीति	३.१३२.३२	संवत्तनं मोहनं च	३.४४.१४
श्रेण्यः प्रकृतयश्चैव	२.४५.४	श्वापदोच्छिष्टसलिला	२.११.४०	षट् सुताः सुमहासत्त्वा	१.३.१०६	षोडशस्त्रीसहस्राणां मध्ये	२.६५.३६	संवत्तमानाः समरे विवर्त	१.४७.३०
श्रेयस्तेऽद्य विधास्यामि	१.१८.७८	श्वासान्मुचसि बाले त्वं	२.११७.४३	षडेव देवकीगर्भाः षड्गर्भा	२.२.२३	षोडश स्त्रीसहस्राणि	२.६५.७	संवत्ताग्निसमक्रुद्धः	३.६४.८
श्रेयो हि मरणं मह्यं	२.११८.१३	श्वेतः कृतयुगे देवो रक्त	२.७१.३१	षडग्रामरागेषु च तत्र कार्यं	२.८६.८२	षोडश स्त्रीसहस्राणि	२.७६.१६	संवत्सराशिनः केचित्के	३.७७.६
श्रेष्ठो धनुष्मतां पार्थः	२.६०.१७	श्वेतप्रहरणोऽवृष्य	२.१२२.७	षड्भिनिहत्य कारुषा	२.५६.७४	षोडश स्त्रीसहस्राणि	२.८८.१३	संविधानमथाज्ञाप्य	२.१२१.१४१
श्रेणीं विशालामन्विच्छेत्	२.८०.३७	श्वेतभानुहिमतनुज्योति	१.४६.७	षड्गर्भा इति योऽयं व	२.२.२२	स		संवृत्तः पवनः श्रीमान	३.५५.८४
श्रोतव्यं यदि मातुश्च	२.७५.२६	श्वेतमोदः कपाली च	२.१०६.७६	षड्गर्भा दत्त्वा स्वयं	२.२.२०	संयमः स्थिरता शौर्यं	२.३०.२२	संवृत्ता बहुरूपेण	३.५८.८८
श्रोतुकामा रहोवाक्यं स्थिता	२.५२.६	श्वेतलीहितकैवर्णः	३.२१.१०	षड्गर्भान्निस्सृतान् कंस	२.४.२	संयुक्ता जातयश्चैव	२.६१.१५	संवेद जननी धात्री	३.२१.२३
श्रोतुमिच्छामि तत्त्वेन	२.१२७.३	श्वेतलोहितपर्यन्तः	२.११६.६५	षण्णां ज्ञानाभिसंधीनाम	३.२७.४३	संयुज्यात्मानमेव	१.३७.७	सं शंक्यमानो धर्मात्मा	१.३८.३०
श्रोतव्यं स तथा बोधो	३.६५.३६	श्वेतबाह्वननामानं यश्च	२.८२.३१	षण्मासाषानुषितस्तत्र	२.६७.३६	संरब्धश्चैव युद्धार्थी	२.११६.७	संक्षोषयित्वा पीत्वा	३.६.१८
				षण्मासां श्वतुरो	३.२३.१४	संरब्धौ च महाबाहु	३.५५.१		

संसक्तश्च सुपर्णेन	१.४८.३२	स एक एव तस्यासीत्पुत्रः	२.३७.४७	सकरीषांगरागासु ब्रज	२.२०.१६	सकर्वण च कृष्ण च	२.३५.३७	सखी प्रियं चिकीर्षन्ती	२.११८.६७
संसक्तानां नित्यदा	२.७४.३०	स एव भगवान्विष्णुरालोक्य	२.४६.३५	सकाननदरीप्रस्थं श्वेता	२.४०.११	सकर्वणं तु स्कन्धेन	२.१४.२३	सखीभिः सहिता ह्यूषा	२.११८.६६
संसिक्तौ रुधिरौर्ध्वश्च	३.२६.२१	स एव भगवान्विश्वो देव्या	३.१७.२१	सकान्तैर्घातिराष्ट्रैश्च	३.४१.६१	सकर्वणस्तु सुचिरं	२.३०.५२	सखी सा ब्रह्मदत्तस्य	१.२०.८२
संस्कर्तव्यायुधागारा	२.३८.५६	स एवं चिन्तयाविष्टः	२.११६.८७	स कामुं कविनिर्मुक्तैः	३.५६.१५	सकर्वणस्य मत्तोक्तां भारतां	२.४६.३१	सख्या वै एवमुक्ता	२.११६.६५
संस्काराभिनयौ तेषां	२.६३.१०	स एवमुक्तो मुनिभिर्मुनि	१.४५.३१	स कालयवनो नाम जज्ञे	१.३५.१६	सकर्वणात्तु गभस्य	२.२.३२	सख्युर्मम बलाद्धन्ता	३.६१.१५
संस्तम्भितमिवाभाति	१.४५.११	स एवमुक्तो यदुना	१.३०.२७	स कालयवनो नाम	२.५२.२६	सकर्वणाधोक्षजनन्दनानि	२.८६.८	स गजान् गदया	३.५६.४८
संस्थानं प्रकृति चास्याः	२.११६.४५	स एवमुक्तो राजर्षि	१.११.४१	स कालस्सर्वभूतानां निग्रहा	२.३२.४३	संकल्पयित्वा वत्सं त मनुं	१.६.१६	स गतस्तत्र रम्याणि ददर्श	२.४६.२
संस्थाप्य धर्मान्मर्त्येषु	२.१०२.३१	स एवमुक्त्वा बहुधा	१.४८.२२	सकिंकिणीकं विमलं	३.५१.७६	संकल्पायास्तु कोरव्य	३.३६.५५	स गत्वा जयतां श्रेष्ठ	१.११.४८
संस्मारितस्तु कृष्णेन	२.१४.५०	स एव यज्ञपालोऽभूत्क्षेत्र	१.३३.२४	सकिंनरमहानागं	२.६८.६०	संकल्पायास्तु सर्वात्मा	१.३.३५	स गत्वा नारदस्तत्र	२.११६.१६६
संस्मृत्य स वरं शक्रा	२.५७.५४	स एष भगवान् ब्रह्मा	३.१७.२२	स कुक्षौ वृषभो दृष्टि	२.२१.१६	संकृतेरपि धर्मात्मा	१.२६.५	स गत्वा ब्रह्मणो लोकं	१.४६.१२
संस्मृत्या संस्मृत्य शिरः	२.६५.५४	स एष भगवान्विष्णु	३.१८.१६	सकूबरोपस्करबन्धु रेणं	३.५२.१२	संक्रुद्धोदैत्य सैन्यस्य	३.५५.२६	स गत्वा मथुरां रामौ	२.४६.५५
संहताश्चो निकुम्भस्य	१.१२.३	स एष भगवान्विष्णु	३.८२.३८	स कृत्वा प्रविभागं	३.३५.४६	संक्षेपेणैव तत्सर्वं	३.३६.५२	सगदो लांगली चक्री	३.२६.६
संहर्तव्या महासेना	३.११६.११	स एष रावणो घन्यो	१.५४.३७	स कृष्णं तत्र सहसा	२.२६.६०	संक्षेपेणैव ते वक्ष्ये	१.१६.३६	सगरस्तु सुतो बाहोर्जज्ञे	१.१३.३२
संहृत्य लोकान्तसर्वान्त	३.३३.२२	स एष स महातेजा	३.५.३३	स कृष्णं पुण्डरीकाक्ष	२.३२.१७	स खड्गं शतधा कृत्वा	३.१०.१६	सगरस्यात्मजा वीराः	१.१५.१
संहृष्टरोमा ग्लानाक्षो	२.१२२.७४	स एष सर्वशस्त्राणामव्ययः	२.८५.४०	स कृष्णस्तत्र बलवान्	२.३३.१	सखा च वसुदेवस्य	२.८३.४	सगरः स्वां प्रतिज्ञां	१.१४.१५
संह्लादश्च चतुर्थो	१.३.७३	स कंसस्त्रत्र संभूतस्त्वता	१.५४.६६	स कृष्णस्तत्र बलवान्	२.३७.१	सखाऽऽस गालवो यस्य	१.२०.१३	स गाढविद्धो व्यधितो	२.११६.६४
संह्लादस्य तु दैत्यस्य	१.३.१०४	स कण्ठस्थेन निष्केण	३.६१.१०	सकृष्णस्तत्र सहितो रोहिणे	२.३४.१	सखा स देवराजस्य	२.७३.३१	स गात्रैर्भगवान्योगान्	३.२०.२०
संह्लादीयो महानादो	३.४७.६	स कदाचिद्वने तस्मिन्	२.११.१८	स कृष्णहस्तात्सप्राप्तं	१.३६.४०	सखीगण वृत्ता चैव सा	२.१२७.१६	स गाधिरभवद्राजा	१.२७.१६
स इमां पृथिवीं कृत्स्नां	२.६०.२२	स कदाचिन्नुपश्चक्रे	२.३७.५१	स कृष्णेनायतं कृत्वा	२.३०.७६	सखीजवनवृत्ता देवी	२.१०८.१४	स गाधिरभवद्राजा	१.३२.५२
स उवाच ततो गोपान्	२.१७.२७	स कदाचिन्निशापाये	१.३८.१५	स कृष्णोप्यभ्यनुज्ञां तु	२.६७.४७	सखीदं वै कथं कार्यं	२.११६.६१	सगालवस्य चरितं	१.२०.१४३

श्रीहरिवंशपुराणम् ॥ ६ लोकानुक्रमणो

१४१

स गृहीत्वां कुशं चैव	१.५४.५१	संग्रामेषु प्रहर्तव्यं तेन	२.७०.३५	स च स्वर्गीं ततः	३.८३.३२	स ज्येष्ठः सर्वभूतानां	२.६८.३२	स तत्र भोगी नागन्द्रः	२.५५.६६
स ग्रहस्तकेशश्च कंसो	२.३०.७८	संघट्टनः संकुटनः	२.१०६.७८	स चाग्निविधिवत्तत्र	३.२६.४	सचितानि ज्ञान्यासन्	३.१२२.१६	स तत्र प्रविशन्नेव	१.५०.७
सग्रहं कृष्णं नक्षत्रं	२.४०.४४	सचक्रकूबरह्यं सध्वज	३.६०.४२	स चाग्निवैष्णवैर्लोकै	३.२८.६०	सचिन्तयति मध्यस्थो	३.१०.१६	स तत्र रजनीमेकामुषित्वा	२.८६.४३
सघण्टाधारिभिश्चैव	३.३२.६	स चक्रमुशलो नाम संग्राम	२.३६.७५	स चास्योरसि विस्तीर्णो	१.५२.३	सच्छाद्यमानः शस्त्रोर्ध्वे	३.५४.५६	स तत्र वयसा तुल्यैर्वत्स	२.११.२४
संगतश्चापि लोकानामा	२.२६.७०	स चक्रेण शिरस्तस्य	२.६०.६२	सचित्र भानुरशैलेन्द्रो	२.४२.५८	सच्छाद्यातीव तोयेन	३.१६.२६	स तत्र वासयामास श्वफल्क	१.३४.६
संगतिस्तव तस्यास्तु	३.१०६.१६	स चक्रेणार्कतुल्येन	२.४३.३६	सचित्राष्टास्त्रचरणा	२.२६.२	सच्छिद्य पाशान्सर्वास्ता	२.६३.५६	स तत्र सहसा क्षिप्तस्ति	२.३७.५२
संगरे निहतो देव	३.१३१.५	स च धोरः पिशाचोऽपि	३.८१.११	स चिन्तयित्वा धनुषो	२.२८.१	संजीवयामास मृतं पुत्रं	२.१०२.२७	स तत्र स्थापयित्वा	२.७५.४६
संगृह्य तमलंकार ताश्च	२.४१.३५	स च तं शोधयामास	२.३८.१५	स चिन्तयित्वा संरब्धो	२.१८.२७	संज्ञप्तमश्व तत्रास्य	३.५.१२	स तत्राम्बुप्रतिप्रख्यं	१.५०.४
संगृह्य ते कलत्राणि	२.५६.१६	स च तेनैव नाम्ना तु	२.७.३६	स चिन्तयित्वा सर्वो	२.५०.८१	संज्ञा तु पार्थिवी तात	१.६.२१	स तत्रैकेन पादेन शकटं	२.६.६
संगृह्य वचनं तस्य	२.५८.७४	स च दूतवचश्श्रुत्वा	२.२४.६	स चेतनां पुनः प्राप्य	२.१०६.६	संज्ञां पुनः समालम्ब्य	३.६७.६	स तथेति तदा देवमुक्त्वा	२.७५.२१
संगेषु भावमोहाभ्यां	३.२७.३४	स च दृष्ट्वा महोत्पातान्	३.४६.२६	स चोपेन्द्रो वृषं हत्वा	२.२१.२४	सङ्घिण्डिः सभेरीकैः	३.३२.१०	स तथेति ब्रुवन्नेव	१.२८.१७
संग्रामकाले कालज्ञः	३.२२.११	स चन्द्रविषयं राजन्	३.२८.४८	स चोरगपतिः क्रुद्धो	२.१२.५	स ततः पौण्ड्रको	३.१००.२६	स तथेति हरिविष्णुयंयो	३.१३१.११
संग्रामः पुष्करेऽस्माकं	३.११६.१४	स च पापान्महाघोरान्	३.११०.६	सच्छत्रासादिनश्चैव	२.३५.८०	स ततः दूषयन्विष्णुं	३.८०.२७	स तथैव यथापूर्वं	३.१०.२६
संग्रामं गच्छतां घोरमेतयो	३.१०५.१७	स च पुत्रो मम ज्याया	२.५.८	सच्छत्रोत्सेधिनस्सर्वे	२.४३.३०	स ततः पीड्यमानं च कंसे	२.२६.६	स तदन्तः पुरं सर्वं ददर्श	२.३७.७२
संग्राममर्षी घोरः	३.५८.६८	स च प्रासादमुख्योऽथ	२.६८.४५	स च्छिन्नधन्वविरथः	२.६०.२३	स ततः सहिनो देव्या	२.६८.३०	स तद्विवेश हृष्टात्मा	१.५०.२
संग्रामयुक्तस्तेजस्वी दैत्य	२.४१.३८	स च बाणासहस्रैश्च	२.७५.६	स जरां प्रतिजग्राह	१.३०.३४	स तत्कारणमाचख्यो	१.२४.७	स तनुत्राणनिस्त्रिशास्सायुधैः	२.४३.२६
संग्रामश्च महान्कृष्ण	२.३६.७२	स च विप्रसुतो राजन्	३.१०४.१६	स जलाम्भोदसहस्रं विद्युत्	१.४८.४	स तत्प्राप्य महद्राज्यं	१.२५.२३	स तनुत्रास्सनिस्त्रिशाः	२.३५.७६
संग्रामः सुमहानासीदित्युक्तं	३.१०३.७	स च विष्णुं हृषीकेशं	३.१०५.२५	स जहाराय वेगेन रोहिणेयं	२.१४.२६	स तत्र गास्तु प्रसभं	२.२१.११	स त पिता चक्रधरो	२.१०५.७७
संग्रामान् सुवहून् कृत्वा	१.३३.१३	स च समरपरिश्रमं	२.१०७.३२	स जातः सर्वकुहेवो भ्राता	२.७१.२४	स तत्र त्वरितं द्वारि	२.४.३०	स तं कृच्छ्रगत	३.७२.५६
संग्रामे युद्धशौण्डेन	३.५६.२४	स च सर्वास्त्रविन्नित्यं	३.१२८.११	स ज्यगाण्डीवमेवाथ	१.८५.३१	स तत्र दानवः क्रीडन्वर्ष	१.५४.२५	स तं जग्राह धर्मात्मा	२.६६.४०

श्रीहरिवंशपुराणम् :: अष्टोत्तरशतनामम्

१४२

स तं ददर्श समुचितं	३.२६.१५	स तान्बाणानगणयन्वैनं	२.७३.८५	स तु देशस्सदा स्निग्धो	२.१३.५	स तेन विद्वो बाणेन	३.१२५.८	सत्त्वतात्सत्त्वसंपन्नः	१.३७.१
स तं ददर्श राजेन्द्रो	२.३७.५६	स यान्स्वधामतेनाशु	३.३१.१६	स तु द्वादश वर्षाणि	१.१३.१३	स तेन वीरो महता धनुषा	२.७३.६४	सत्त्ववान् गुणसंपन्नो	१.४१.१५३
स तं बाहुमशक्तो वै	२.२४.३७	स ताम्यः सहसैवाथ	१.२५.८	स तु द्वापरपर्यन्ते ज्ञात्वा	१.५०.३७	स तेन शुशुभे दैत्यो	३.४६.४७	सत्त्वस्थो नित्यमाशीस्त्वं	२.१२७.७३
स तं व्यादिश्य तनयं	१.११.४३	स ताम्यां मुमुदे राजा	२.३४.७	स तु पञ्जनं हत्वा	२.३३.१७	स तेनाभिहतो वीरो	२.६७.६	सत्ये हि स्थिताः सर्वे	१.५१.२८
स तथा चाभिलषितश्चवा	२.५६.१७	स ताम्यां मुमुदे राजा	३.१०४.४	स तु प्रध्मापयच्छंखं	२.१२७.६३	स तेनैवानुबन्धेन	१.२४.३६	सत्य एव परोविद्ये	३.२७.४८
स तथा ताडितो	३.६७.८	सतां गतिरियं नान्या	१.५१.३१	स तु मां व्रीडित दृष्ट्वा	२.११२.२०	स ते बन्धुस्सहायश्च	२.१६.८१	सत्यकर्णस्य दायदः	३.१.६
स तथा निद्रयाच्छत	१.५०.३५	स तां पुरीं धनवतीं	२.३८.१७	स तु योगमयाज्जाना	३.१६.३०	स ते विन्ध्ये नगश्रेष्ठे	२.२.४६	सत्यकर्मसुतश्चापि सूत	१.३१.५८
स तथा प्लावितं हृष्ट्वा	१.३२.४५	सतामक्रोधजो धर्मः शुभां	१.५४.२६	स तु राजकुमारोऽसौ	३.१.११	स तेषां ता गिरः श्रुत्वा	१.४२.३०	सत्यकाद्विस्तरं श्रुत्वा	२.७५.५३
स तथा मालया वीरशुशुभे	२.११.६	स तामाह प्रसज्जन्तीक्षितः	२.२८.६८	स तुवंमुच द्रुह्युं	१.३०.३०	स तेषां वचनं श्रुत्वा	२.५२.३३	सत्यकेतुसुतश्चापि विभुर्नाम	१.२६.८०
स तस्थो पर्वतश्रेष्ठे	२.७३.६४	स तामु जनयामास पुत्रि	१.३१.१६	स तु लोकस्थ्या कृष्ण	२.१६.३५	म तेषामनुपस्थानात्	१.४८.२	सत्यजित्सेनजिच्चैव	२.१०३.१२
स तस्मै धूम्रवर्णो वै	२.३७.६६	स तामु नागकन्यासु	२.३८.१	स तु शक्रवचः श्रुत्वा	१.२८.२१	स तेषामभवद्राजा	१.२०.३४	सत्यधर्मभृतां श्रेष्ठा	१.२३.८
स तस्य देहो विमुखो	१.४८.५०	सती चैयं शुभा साध्वी	२.१०८.२४	स तु सत्यव्रतस्तात	१.१२.१८	स तैः परिवृतः श्रीमान्पुरीं	२.६३.२	सत्यभामोत्तमा स्त्रीणां	२.६६.२७
स तस्य धनुषः	३.५७.३३	सतीत्वं धर्मचरणं	२.७८.४	स तून्मुखैज्याशार्मि	२.१२२.२	स तैः परिवृतो राजा	२.५७.२१	सत्यभामा पु तद्वत्	१.३६.७
स तस्य पुरुषेन्द्रस्य	१.३३.४०	स तु केलिकिलो विप्रो	२.१.३०	स तूयस्तादृशः स्यां वै	२.६१.३२	स तोत्रैरिव मातंगो	३.५५.७	सत्यभामा पुनर्वेश्म	२.६८.४३
स तस्य प्रमुखे पादं	२.२६.३४	स तु केशी भृगं श्रान्तः	२.२४.४४	स ते देशं तदा पुत्रैः	१.१४.२३	स तोयमेघप्रतिमोगीनः	३.३८.३५	सत्यभामोत्तमा स्त्रीणां	१.३८.४७
स तस्यां पितृकन्यायां	१.१८.५२	स तु गृह्य मधे दोर्म्या	१.५२.३७	स ते द्वे विप्रे जे पुयौ	२.३८.२३	स तो रथस्थावानीनौ	२.२६.६२	सत्यं च यत्पुरा वायु	२.६४.३३
स तोड्यमानोऽतिबलै	१.४८.३१	स तु चिह्नद्रान्तरप्रेप्सुः	२.१४.१६	स तेन रथमुख्येन सागरा	१.२५.१५	सत्कृतोऽहं त्वया कृष्ण	२.४०.४६	सत्यं ब्रह्म च दिव्यं ज्ञ	२.३.३१
स तोनेपश्यत्खरान्	१.२३.४	स तु जातः सुरेशानः	३.६६.३२	स तेन रथमुख्येन	२.६६.४५	सत्कृत्य परिपृष्टस्तु	१.१.१८	सत्यं ब्रूहि सुतः कस्य	१.२५.४१
स तान्नृपतिशार्दूल	२.३८.६	स तु जन्मनि गर्भस्य	३.१.८	स तेन वज्रकल्पेन स्वेन	२.२६.३५	सत्कृत्य विधिवद्राजन्म	२.५५.११६	सत्यरज्जुमयैः पार्श्वैः कृत	२.४८.१६
स तानभाषत प्रीत्या यथा	२.४६.४	स तु तालवतं घोरं गद्गभ	२.१३.१२	स तेन विचरन्मार्गनिकः	२.११६.१२२	सत्त्वतस्य सुतो राजा भीमो	२.३८.३८	सत्यवादी पुण्यमतिः काम्यः	१.२६.३

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१४३

सत्यव्रतस्तु बाल्याच्च	१.१३.५	स ददर्श गुरुं जले विष्णुं	२.४१.४२	सदा चैव शुचिभूत्वा	३.१७.६१	सद्योजात महादेव	३.१०.५६	सन्तकुमारो धर्मिमा	२.८४.१०
सत्यव्रतस्तु भक्तया च	१.१३.१	स ददर्श गृहे कृष्णं	२.३२.२	स दानवो बलश्लाघी घोरं	१.५४.२७	सद्यो निरतिते कंसे	२.३८.६०	स नैनाद महानाद	३.६०.५२
सत्यव्रतो महाबाहु	१.१२.२३	स ददर्श प्रियां दूरात्क्रोधा	२.६६.६	सः सत्यं तपश्चैव	३.८.४	सद्यो हतानि पद्मानि	२.४६.२५	स नन्दगोपं त्वरितः प्रोवाच	२.५.२
सत्यशूरा रणे शूरा	३.४०.११	स ददर्श मलेष्वाज्यैरिज्य	१.४६.१४	स दिशः प्रदिशश्चैव	१.४८.३७	सद्वृत्तमाश्रिताः सर्वे	३.१०.२८	स नन्दगोपस्य गृहं	२.२५.१५
सत्यसंव महाभाग	२.१२१.११२	स ददर्श विपर्यस्तं	२.६.१३	स दुष्टो होषितपटुः केसरी	१.५४.७१	स घनुर्वन्वितां श्रेष्ठो	३.६०.१५	स नन्दगोपस्य गृहं	२.२६.१
सत्यसंघस्य तच्छ्रुत्वा	२.१६.१००	स ददर्श शुभे देशे	२.५.१७	स द्रुतः कथयामास	२.१.३	स घनुर्बद्धसन्नाहः	३.६४.११	सनातनः पुण्यविधिरिति	२.७८.२
सत्या ददौ तथैवाथ पुरो	२.८१.४२	स ददर्श सुपर्णस्थं	१.४८.३	स दृशं पुण्डरीकस्य गन्धेन	२.११.६	स घन्वी कवची	१.२.२३	स नादं सुमहान्कृत्वा	२.८५.२५
सत्यार्जवरतो यत्तः	३.१३२.१८	स ददर्श सुरांसर्वान्	१.५०.४४	स दृष्ट्वा तूर्णमायान्तं रामं	२.४६.५७	स घमं विजयी राजा	१.१४.२१	स नारदोऽथ ब्रह्मर्षि	१.५४.१२
सत्ये धर्मं च निरतान्	१.५१.४	स ददर्शोच्छ्रितान्युषा	१.४६.१६	स दृष्ट्वा भूषितं	२.२८.१०	स घन्वी कवची जातः	१.५.२३	स निर्जलाम्बुदाकारं मत्तं	२.१६.२
सत्येनैव शपाम्यद्य	३.११२.५	स ददर्शोपविष्टं वै गोवर्द्धनं	२.१६.३	स दृष्ट्वा मानुषं विष्णु	२.४१.४३	सधूमाः पन्नगेन्द्रस्य	२.१२.१०	स निवेदित सर्वस्वो	३.११५.१
सत्राजिच्च प्रसेनश्च	२.३५.११०	स ददर्शोऽमूर्वस्य दीप्यमानं	१.४५.५४	स दृष्ट्वा सर्वनिर्मुक्तं	२.२८.६	सध्वजं सपताकं	३.१२०.४	स निष्क्रान्तस्ततो	३.२८.११
सत्राजितं ततो हत्वा	१.३६.३	सदसच्च स विज्ञेयः	३.३३.४०	सदेवदानवा मर्त्या	२.११०.६३	सध्वजः सायुधः	३.५५.२२	स निष्पतितमस्तिष्को	२.३०.५४
सत्राजितो दश त्वासन्	१.३८.४५	सदसच्चात्मनि श्रेष्ठः	३.३६.५	स देवदेवं भगवान्	२.८६.४२	स नक्षत्रपयं गत्वा दिव्यं	१.४७.५२	स नीतो यमुनातीरमुत्तमं	२.३२.५६
सत्रावसाने च मुनः	२.६६.१	सदसद्भावयुक्ताय पुराण	२.५१.५६	स देवं प्रष्टुमायाति	३.१०.२४	सन्तकुमार इति यः श्रुतो	१.१७.१३	स नृपस्तमुपानाय्य	२.५७.१३
सत्रिणां सत्रफलदः पवित्रं	१.४६.२४	सदस्यस्तत्र भगवान्	१.२५.२५	स देवान्भुञ्जाय विविकते	१.५५.४६	सन्तकुमारं साध्यांश्च	१.५३.६८	सन्ततासारनिर्यत्नः	२.१०.१५
सत्रेषु दीक्षिवः सौम्याः	२.६१.१७	सदस्यानां च विप्राणां	१.५३.१०	स दैत्यान् प्रमुखे हत्वा	१.४५.१३	सन्तकुमारमृक्षं च तथैव	२.८४.२६	सन्तप्ते मायया सैन्ये	१.४५.२२
सत्रे समाप्तं च तदा	२.८५.७०	सदस्यांसोऽभ्यनूज्ञाय	३.५.५	सद्यः फलन्ति कर्माणि	१.१८.३७	सन्तकुमारश्च विभुस्तत्र	३.३६.१३	सन्तानकलजो मालां	२.६५.२८
स त्वसौ येन तेन	३.६१.२८	सदस्यैस्यत्सदो व्यक्त	३.२३.२४	सद्यश्च योवनं प्राप्तं	२.६६.२१	सन्तकुमारश्च महानुभावो	१.४१.२३	सन्तापितास्ते नरसिंह-	३.४४.२७
सदक्षिणं ब्राह्मणाय परं	२.८०.४२	स दह्यमानश्शैलेन्द्रो मुमोच	२.४२.५७	स द्यां किरीटेन लिखन्	१.४८.३६	सन्तकुमारश्च महानुभावो	३.४३.१६	सन्ति ते बहवः पुत्रा	१.३०.२६
सदक्षिणस्व यज्ञस्य	१.४६.२८	स दह्यमानो दैत्येन	३.६१.२	सद्यो गर्भात्प्रमुच्यते	३.७२.१००	सन्तकुमारस्य वपुः	२.१२२.८	संददर्श जले गुप्तान्	२.२.२५

श्रीहरिवंशपुराणम्: इत्येकानुक्रमणी

१४४

संदर्भकामृकं चैव	२.१२५.३	सन्नाहभेरी कृष्णस्य	२.१२१.१६	स पर्वतगुहां कांचिप्रविश्य	२.५७.४७	सप्तमं च ततो वायुमष्टमं	३.१४.४६	स प्रविष्टस्तु वेगेन तं ब्रजं	२.४६.३
संदर्भे चापमादाय शरं	२.१०६.४	सन्निकृष्टानियान्यास	२.८.१२	स पर्वतनिभाकारो	३.५१.१५	सप्तमस्तारणो धीमानस्त्र	३.११८.३८	स प्रहस्य ततो बाक्यं	२.१२७.६६
संदर्भे चापमानस्य	२.१०७.२४	सन्निकृष्टे ततो नागे	२.२६.२७	सपर्वतांस्तरुमूलमल्लता	३.६.११	सप्तमो देवकीगर्भो	२.२.३१	सफलं कर्म कुर्वाणं	३.२६.३६
संदष्टोष्ठपुटः क्रोधाद्वराह	३.४६.३६	सन्निकृष्टे वने ते तु	२.२२.६२	स पारिजातपुष्पस्य	२.६६.१५	सप्तरात्रेण ते भीरु	२.११८.६०	सफेनं ब्रह्मजं चैव ववर्ष	२.२४.२७
संदष्टोष्ठपुटाः केचित	२.१२१.६८	सन्निपाते तु ती मल्ली	२.३०.४६	स पारिजातं यदि न	२.६८.३६	सप्तरात्रे तु निवृत्ते	२.१८.६३	स फेनो वारिणाविश्य	३.२८.१२
संदष्टोष्ठपुटाः केचित	३.१२२.२५	सन्निविष्टं विमानस्थं	१.१७.८	स पारि जातं यदि न	२.७०.६	सप्तर्षयो महाभागा	२.१२७.१२५	स ब्रह्मगदनिर्व्यूहाश्चि	२.२०.२१
संदष्ट स शरो दैत्यं	३.१२३.२१	सन्निवृत्त्याथ दष्टोष्ठः	२.८५.१५	स पाटितो भुजेनाजी	२.२४.४५	सप्तविंशतिः क्षाणि	२.१२०.१३	स बभौ तं गदां	३.५६.६०
संदष्टो बलिपुत्रेण	३.५१.३६	स पक्षबलविक्षपेर्विधुन	२.१२२.६	स पार्षदस्तवनाचारस्तव	१.२६.४०	सप्तविंशतिमिन्दोस्तु	१.२५.२२	स वभौ मूर्तिलिगस्यः	२.६३.६
संदष्टममरश्रेष्ठं भगवन्त	१.१८.२	स पक्षबलविक्षपेर्विमाद्रि	२.६४.४५	स पितृव्यं गदवीरं	२.६४.४४	सप्तविंशति याः प्रोक्ता	१.३.६३	सबलास्ते महीपाला	२.३५.२५
संख्याकालं तु संप्राप्ते	२.८१.२२	स पक्षवातसंक्षुब्धं	२.१००.३	स पीठे कांचने शुभ्रे	२.११०.३०	सप्त व्याधा दशाणेषु	१.२४.२०	सबलास्ते महीपाला	२.४२.१२
संख्यारागो जपावर्णो	२.११२.४	सपक्षिगणमातंङ्ग समृगव्या	२.६४.४०	स पुण्यमत्तिसौभाग्यं	२.६८.५	सप्त सप्त च सप्ताथ	२.८१.२८	सबलेषु नरेन्द्रेषु शान्त	१.५३.५५
सन्धि च विग्रहं चैव	२.३६.७	स पञ्चकन्या मध्यस्थो	२.३७.७१	सपुत्रं भोजयित्वा	२.११३.३२	सप्तस्वरगता यस्य	३.६२.१४	सबालयुवतीवृद्धस्य च	२.१२.१६
सन्नति विनयं शीलं	२.६४.३१	सपताकष्वजोदग्र सादित्य	१.४३.६	स पूज्यमानस्त्रिदशः	२.६४.७१	सप्ताचिषः समाप्ति च	३.८४.२५	स बाला मोहिता राजन्	२.११७.३१
सन्नद्ध एव चोवाच ब्रह्म	२.८४.६६	सपत्नस्ते गुणोपेते	२.६५.३७	सपुत्रं भोजयित्वा	२.११३.३२	सप्ताशीतिसहस्राणि	३.१२२.२१	स बालो ब्रह्मदत्तस्य	१.२०.६४
सन्नद्धं तत्र युध्यन्तं	३.५७.२०	सपत्नीनामधि नियं भवेयं	२.७६.१२	सपुत्रं भोजयित्वा	२.११३.३२	सप्ताहे जातमात्रे तु	२.१०४.५८	स बाहुशतमुद्यम्य सर्वा	१.४८.२६
सन्नद्धा कुशलाः सर्वे	३.१३३.३६	सपत्नीरधितिष्ठेयं पश्येयं	२.८१.३३	सपुत्रं भोजयित्वा	२.११३.३२	सप्तेमादे वकीगर्भा	२.२.१०	स बृहस्पतिना साद्धं मन्त्र	२.६१.१६
समेद्धा नियंयुहृष्टाः	२.१०४.४३	स पद्मे पद्मनाभस्य नाभि	१.५२.२८	सपुत्रं भोजयित्वा	२.११३.३२	सप्तैत यजतां श्रेष्ठं	१.१८.४	स भवान् कथयत्वेतां	१.१६.१७
सन्नद्धाः समदृश्यन्त	३.५४.३६	स पपात नरेन्द्राणा	२.११०.१६	सपुत्रं भोजयित्वा	२.११३.३२	सप्तैते जनयन्ति स्म प्रजा	१.१.३६	सभाक्षो भङ्गकारिस्तु	१.३८.४८
संनष्टतां बलं सर्वं	३.१२०.३	स पपात महाबाहुवंसुधा	२.६०.२५	सपुत्रं भोजयित्वा	२.११३.३२	सं प्रदेशस्तु भगवान्	२.१२७.५	सभागतान्सोमरविप्रकाशा	२.५२.२
सन्नादयन्दिशस्सर्वा सर्वा	२.४२.८	स परीत्य ततो वीरो	२.८४.२६	सपुत्रं भोजयित्वा	२.११३.३२	स प्रविष्टः पुनः	३.१०.२५		

स भाण्डीरवटप्रख्यं	२.१४.२५	सं मण्डलानि चित्राणि	२.६०.४०	समरे बल संपन्नाः	३.१३३.४७	स मातामहदोषेण वेनः	१.५.३	समाश्लिष्टावयान्योन्यं	३.५५.११
सभानरस्य पुत्रस्तु	१.३१.१६	समतीतेषु राजेन्द्र	१.८.२०	समरे भिन्न गात्रास्ते	३.६१.३३	समादिश्य सवर्णां तां	१.६.१५	समाश्वास्य च ताः सर्वा	२.३७.७३
सभादाय देवाश्च प्रययु	२.५१.७०	स मत्तहस्ती दुष्टात्मा	२.२६.२४	समरे स महातेजा नृपार्क	२.५३.३३	समाधत्त शरं चैकं	२.६३.५२	समाः सहस्रं मथितं	३.३०.२७
सभायां भज्यमानायां	३.४४.५	स मत्तो बलिनां श्रेष्ठो	२.४६.२६	समर्थः पुत्रजनने स्वमे वां	१.२७.१५	समाधायात्मनात्मान	३.३०.१८	समासीनेषु सर्वेषु	२.१०.१.२२
स भारमसहंस्तस्य	२.१४.२४	समनह्यत तेजस्वी	३.५०.१४	समर्थास्ते महात्मानः शत्रु	२.६०.१६	समाधायेतिकर्तव्यं वासवो	२.६३.४३	समाहृतस्ततो वारुणैः	२.११६.१५३
सभावतरणं चैव कलशैरा-	२.५५.६८	समनह्यन्महात्मानो	३.१३३.३७	समवायत्वमापन्ना	३.१८.१७	समाधियोगात्सङ्गाद्वा	३.२८.४४	समाहितमना ब्रह्मन्	३.१७.४४
स भिन्नगात्रो रुद्रेण	३.५८.६०	समनह्यन्महादेवो	३.१३३.३४	समवायीकृतास्सर्वे यमुना	२.३५.२८	समाधौ योजयामास	३.७८.२४	समाह्वयस्य गोविन्द	२.१२१.६४
स भिन्नशृङ्गो भगनास्यो	२.२१.२२	स मनोरंहसा वीर	२.६७.६	समवायीकृतास्सर्वे गिरि	२.४२.१४	समाप्तमायो मायाज्ञो	२.१०८.१	समोहमिति सर्वेषां भूताना	२.७०.१७
स भिन्न हृच्च सस्ताङ्गो	२.१०५.७०	समन्त तश्चाप्यसुराश्च	३.५१.८७	समविन्वतो व्याधिशतै	३.५२.३४	समाप्य तत्तथः सर्वमेवमेव	३.८४.२७	समिद्धिः सोमकलशैः	३.२३.१८
स भीतः प्राञ्जलिर्भूत्वा	१.५.१८	समन्ताद्योजनं साग्रं देवै	२.११.४७	समस्तयुद्धकुशला	३.६४.५	समां च कुरु सर्वत्र	१.६.१०	समियाय दशाहोऽथ द्वारकां	२.६०.६६
स भीमवेगश्च महाबलश्च	३.४६.४१	समन्त्रयित्वैतदर्थं	२.६६.१४	समाकान्तं देवगणैः	३.१३१.७१	स मां परिभवन्नेव स्वां	१.५३.२०	समीक्ष्य तुमुलं	२.६०.१४
स भूमावन्तरिक्षे	३.३६.८	समप्रचार च गवां सम	२.५.१६	समागतास्तु तच्छ्रुत्वा	२.६६.११	स मां ब्रह्मवि रण्याह	१.५२.४६	समीपं तृपतेर्गत्वा	२.२७.५१
सभूता गतसत्त्वैश्च	३.५५.७७	समप्रभो विकुम्भाण्डो	३.४६.१०	समागतेषु सर्वेषु	२.४७.३	स मामुवाच धर्मात्मा	१.१६.३३	समीपं मानवेन्द्राणां	२.११०.१२
सभूयो विस्मयाविष्टं	३.१०.३२	समभ्ययाज्जरासंघं शरै	२.३५.८३	समागम्य तदा वैन्ध्यमभ्य	१.५.२८	स मामुवाच धर्मात्मा	१.१७.२	समुक्तामणिविद्योत	१.५२.२
स भैमप्रवरो वीरस्तेः	२.६३.५३	समं समभिरोहन्ति	३.४६.१३	समाङ्गुलि समनखः	३.८३.१७	स मामुवाच धर्मात्मा	१.१७.१०	स मुक्त्वा फाल्गुनं	२.६०.६३
सं दृश्यते सुभ्रु तडिद्-	२.६५.३	स मयास्त्रप्रतापेन	१.२०.७१	समाङ्गुलिः समनखो	२.१२१.१३७	स मामुवाचाऽम्बुचरः कूर्मो	२.११०.३७	समुच्छितः सितै पोतैः	२.८८.६३
समकम्पन्त भीतानि	३.५५.११६	स मयेनासुरेन्द्रेण	१.४६.६१	समाजग्मुस्ततो भेरीः	१.४७.३४	समारूढः स भगवान्	१.४४.७	समुत्पत्य जलं तत्र पतितं	२.६६.२५
समकूलजलोपेताः	२.६८.७१	समरस्य परः पारः	१.२०.२५	समाजमिव तं दृष्ट्वा	३.५५.१४	स मार्गमाणः कामानामन्तं	१.३०.३५	समुत्पन्नेन कौरव्य	१.५.२५
समक्षं नरदेवानां यथावृत्तं	२.४८.४०	समरे तत्र शूशराणामन्यो	३.५६.४	समाजवाटे क्रीडित्वा	२.३०.८४	समाविप्रास्तु ता सर्वाः	१.२६.३५	समुत्पेतुर्बल दृष्ट्वा	३.५८.३२
स मणिः स्यन्दते	१.३८.२५	समरेऽप्रतिरूपी तो विष्णु-	२.४३.१८	समाजवाटो निर्मलस्त्वो	२.३०.५६	समाश्रित्य जरासन्धं	२.१०१.२७	समुत्सृजन्ती वसन्तं	२.६५.५१

समुत्सृज्य शतघ्नीश्च	२.८४.३६	समुद्राः क्षुभितास्सर्वे	२.५५.६०	स मे सुविदितः कृष्ण	२.४४.१८	संभारा यज्ञसिद्ध्यर्थं	३.११३.६	सरस्वत्या समायुक्तां	३.२८.६७
समुद्धतुं प्रधावन्तः	३.३०.१६	समुद्रे च श्रुतोऽस्माभिस्ति	२.४६.१२	संपुज्य तपसा देवाः	३.२६.१	संमाजिततला भूमियो वन	२.१०.५	सरस्वत्याः समुद्धूतं	२.२७.२७
समुद्यतमहाशस्त्राः	२.३५.१००	समुद्रेऽहं पुरा पूर्वं वेला	१.५३.१५	संपूज्यमानो ह्युतिमान्	२.७५.४५	संमुष्णन् दानवं तेजः	१.४८.४६	स राजानमथान्विच्छन्स	१.२४.१६
समुद्यतायुधं दृष्ट्वा	३.३८.२०	समुद्रोद्धूतजनिता लोलाः	२.१०.३८	संपूजयित्वा विधिवद	२.७६.२	सम्यगाह महाबाहुदन्तवक्रो	२.४६.५८	स राजा परमप्रतिः	१.२४.३०
समुद्रतनयायां तु कुतदारो	१.२.३२	समुद्रो रभसश्चण्डो	३.४६.८	संपूर्णचन्द्रप्रतिभं	२.११७.४२	सम्यग्वर्तितुकामस्य	१.५४.३१	स राजा शोणितपुरे	२.११६.४६
समुद्र दश च द्वे च	२.५८.३६	स मुमोच शिलाश्शैलश्च	२.४२.६६	संपूर्णजलमेघाभः पर्वत	२.२५.२०	स यदा यौवनस्थस्तु	२.१०४.१६	स राजा सहितस्ताम्याम	३.१०४.६
समुद्रः प्रत्युवाचेदं दैत्यः	२.३३.१५	स मुहूर्तात्ततः कृष्णो	२.११३.२७	संप्रदृश्यत सर्वत्र	३.२८.७	स यदुर्माधवे राज्यं विसृज्य	२.३८.३६	स राजा सागराकारः	२.३५.२२
समुद्रः प्राञ्जलिभूत्वा	२.३३.१४	समुलकैर्दाडिममातुलिङ्गं	२.८६.६१	संप्रपद्येत मनसा	३.१७.६३	स यन्नलगुडाश्चैव	३.३१.१४	स राज्ञः पक्षपातेन	२.४७.३१
समुद्रं मेतिरे तं हि	२.१८.१३	समूलपत्र शाखाश्च	३.३०.१४	संप्रवृत्तमहावर्णं	२.१०.३४	स ययौ मध्यरात्रेण	३.६३.११	स रामकरमुक्तेन निहतो	२.६१.५४
समुद्रमथनो नादी	३.४६.१२	स मृत्युना परीतायुर्मायया	२.१०.४५	संप्रवेश्याम्यहं योग	१.५५.१२	स याच्यमानो देवैश्च	१.२५.३१	सरीसृपाणां सर्वेषां	३.३७.११
समुद्रमध्ये दुष्टात्मा	२.११५.६	समृद्धचत्वरवती वेश्मोत्तम	२.५८.४८	संप्रहस्य महातेजा	३.५६.१२	स युद्धकामी वृषतिः	१.३५.१८	सरीसृपेभ्यः कीटेभ्यः	२.५.१२
समुद्रमभिसरम्भानरुथनीमः	३.३०.१२	समृद्धस्तत्र कंसस्य	२.२६.४	संप्रहारस्तथा युद्धे	३.५८.७४	स रथः पौरवाणां तु	१.३०.८	स रुक्मत्सरमुद्यम्य	१.५४.५३
समुद्रमेघः स रराज राज	२.८६.४८	समृद्धो हि यदा राजा	२.५७.१६	संप्रहारभिसंतप्तो निपपात	२.७३.६१	स रथैर्नैमिषोपैश्च गजैश्च	२.४२.७	स रुद्रमभिगम्याथ	२.११६.२५
समुद्रयात्रा कृष्णस्य	३.१३४.२५	स मेघनिचयस्तस्थोगिरि	२.१८.५२	संप्राप्ते तु तदा कृष्णे	२.६८.३	सरसं चन्दनं गृह्य	२.६६.१०	सरेवतीकोऽस्तु बलोऽद्धं	२.८६.३२
समुद्रयात्रार्थमथागतश्च	२.८६.१८	समेतास्तु प्रविष्टास्ते	२.८५.४६	संप्रेक्ष्यमाणी रथिनावुभौ	३.५५.१२३	सरः समीपमागम्य	३.१०६.१०	सरोषं हि तदा रामो	२.४२.७२
समुद्रयोनिर्मधुहा हव्यभुक्	१.४४.३६	समेत्य च यथान्यायं	२.६७.३	संबन्धं च गुरुत्वं च	२.८४.५२	सरसस्तस्य राजेन्द्र	३.१२०.१६	स रोपेण तु चाणूरः	२.३०.१०
समुद्रवसना चोर्वी	३.४८.३	समेत्य भवनं पत्न्या	२.१०८.३६	संबन्धो ह्यस्य वंशे	१.३२.६०	सरसेनायतापाङ्गि कान्तेन	२.६६.३३	सर्जन्तिम्बार्जुनवनं पाटली	२.४०.१४
समुद्रश्चार्धमादाय	१.१४.२६	समेत्य सहितैः सर्वैः	३.३०.२२	संबाधमन्ये संप्राप्ता	३.३८.२७	सरस्वती चन्द्रभागा	२.१०६.२२	सर्ज्जानुनाः कन्दुखाः	३.४१.७०
समुद्रस्त्वैवमुक्तस्तु	२.११०.४७	स मे मनोरथो भग्नस्त्वयि	१.२०.१०८	संबोधय महाबाहुं	२.१०६.४३	सरस्वती च वाल्मीके	२.३.१८	सर्पन्तमिव सर्पेन्द्रं विकृष्या	२.५३.३१
समुद्राः क्षुभितास्सर्वे	२.४८.४५	स मेरुगिरिमासाद्य देव	२.६४.४८	संभग्नोरुकिटिग्रीवो भग्न	२.१३.२०	सरस्वती स्वरैर्व्यक्तैरधीते	३.२८.६०	सर्पाणां दर्शनं तीव्रं	२.२३.२४

श्रीहरिवंशपुराणम् १: श्लोकानुक्रमणी

१४७

सपिषः पयसश्चैवः दध्नो	२.७६.४५	सर्वत्र त्रिपलं स्वर्णं	१.१३२.८१	सर्वभूतेषु राजेन्द्र हितो	३.३२.५६	सर्वलोकेषु विख्याता	२.६४.६२	सर्वाल्योकांस्त्रीनिमान्	३.६२.३५
सपिषा पच्यमानेन	२.५.२८	सर्वत्रा नुगतं तीक्ष्णं	३.२८.३५	सर्वं तच्च विजानामि	१.५५.११	सर्वविद्यानुगं श्रुष्ट	१.२७.४०	सर्वाश्च देवानखिलान्त्स	३.३८.३४
सर्व एते महात्मानः	१.३२.६८	सर्वत्रैवाप्रमेयेण अत्यन्तं	३.२७.४५	सर्वं तद्भ्रमसाद्भूतं	२.१०७.२८	सर्वव्यापी निरालम्बो	३.१६.१४	सर्वास्तान्वास्यामास	३.१२६.१६
सर्व एव सुरश्रेष्ठास्तेजो	१.५३.१३	सर्वथा काल एवायं	३.१०८.१०	सर्वं त्रिभुवनं राजन्	३.४३.१४	सर्वशास्त्रार्थं कुशलं	३.७३.२२	सर्वाभिः स्त्रीभिरारब्धं	२.११७.६३
सर्वकाञ्चनसंयुक्तं	३.५१.४५	सर्वथा कृतकृत्यास्ते	३.१०२.१७	सर्वं दर्शय यत्नेन	३.६६.६	सर्वसंहारमकरोत्स्व	३.६१.२४	सर्वायुधसमोपेतं	३.५१.१०
सर्वकामगुणोपेता यानानि	३.१३२.१४	सर्वथा कृतकृत्योऽहं	३.११४.३७	सर्वं सत्यपरं वाक्यं वर्णा	१.५१.२६	सर्वसंग्राममार्गज्ञो	२.११६.१८६	सर्वश्चाप्सरसो राजन्तृत्य	३.८५.६
सर्वकामफलैर्वृक्षैर्वृत्तं	३.३५.१६	सर्वथा त्वद्विनेता	३.१०८.५	सर्वं मासीज्जगद्गन्तं	१.४१.१४६	सर्वसत्त्वस्तज्ञश्च	१.२२.६	सर्वाश्चमाधिवासां च	२.५५.१०५
सर्वकाममयो ह्येष	३.७१.४	सर्वथा दुष्कृतं कर्म	३.७६.१६	सर्वमेतत्करिष्यामि	२.५८.३२	सर्वसत्त्वस्तज्ञस्तु राजा	१.२३.२२	सर्वाः सगर्भास्ताश्चैव	२.६६.१३
सर्वकामयुतां शुभ्रां	३.४१.४६	सर्वथा देव वक्तव्यं श्रूयतां	२.७१.८	सर्वमेतदहं वीर	१.६.८	सर्वा गुणैरप्सरसां गीत	२.८३.३६	सर्वासु दिक्षु क्षतजोपमाक्ष	३.३५.५०
सर्वकामसमृद्धार्थं षट्पुरं	२.८२.१८	सर्वथा नयनं तत्र परिजात	२.६६.६६	सर्वमेतद्यदुश्रेष्ठ	३.१३०.१२	सर्वं सर्वास्त्रदिद्वंसः	३.५८.८५	सर्वाः सुरतचिह्नांगयः	२.८८.१५
सर्वक्षत्रस्य जेतोऽसौ	१.३२.६८	सर्वथा पुण्यवानस्मि	३.८२.४१	सर्वमेव तु या गात्र	२.८०.४८	सर्वस्तरतु दुर्गाणि	३.१३२.१०१	सर्वास्त्रज्ञा महेष्वासा	१.५३.७५
सर्वज्योतींषि यानीह तपः	३.७१.५४	सर्वथा भगवांस्तावदुपायं	२.६८.३४	सर्वमेव मुखं कान्त	२.८०.२७	सर्वागधारणां कृत्वा	३.२०.२	सर्वास्त्रविद्वान्वीरश्च	३.५६.६२
सर्वज्ञो बलवाञ्छूरः पात्रं	२.७०.४१	सर्वथा संस्तुता तेऽहं	२.११८.६३	सर्वरत्नवरः स्वर्गोपरिजात	२.६६.६२	सर्वाज्ञाह यदाभर्तुः	२.७८.१	सर्वास्त्राणामथ श्रेष्ठं	३.४४.६
सर्वत पाणिपादं	३.१६.६	सर्वदेवाधिदेवस्य	३.६७.१३	सर्वरत्नविचित्रेण	३.५१.१६	सर्वाणि श्रुतिशास्त्राणि	३.६६.४०	सर्वे कनकवर्णाभाः	२.१२२.१२
सर्वतः काञ्चनगुहं	३.३५.२०	सर्वपापविनिर्मुक्ता	२.११८.३७	सर्वरत्नाकरवतीं सर्वकाम	२.५५.१०४	सर्वाण्येतानि कर्माणि	२.१२१.४४	सर्वे काञ्चनवर्णाभा	३.१३३.३५
सर्वतः सारबिर्व्यूहं	२.२८.८	सर्वपुष्पमयं गन्धं	२.८३.३८	सर्वरोग प्रशमनं स्वकीर्ति	२.१०६.१०७	सर्वात्कार्षण्यामास	३.६८.२२	सर्वे कालान्तकप्रख्या	३.५१.३२
सर्वतेजोमयीं दिव्या	३.६६.४४	सर्वभक्षो ह्यसंगुप्तो	३.४.१२	सर्वतु कुसुमाकीर्णाः	२.८८.८१	सर्वात्पारिषदान्तसंख्ये	३.५८.४७	सर्वे काञ्चनशैलाभाः	३.४६.२३
सर्वतो वेष्टिततनुं	२.११६.१८६	सर्वभूतपिशाचानां	३.३७.८	सर्वलोकहितं वाक्यं	३.४१.२४	सर्वाः पुत्रफला नार्यः	२.७६.४२	सर्वे चैव क्षिति घराः	३.३५.४८
सर्वत्रगः सदा चास्मि	३.६२.१७	सर्वभूतानि भूताग्र्य	३.१३३.४६	सर्वलोकहितं वाक्यं श्रुत्वा	१.४१.६२	सर्वा भीषयते सेनां	३.५५.१३८	सर्वे चौरकुले जाताश्चौर	३.३.१६
सर्वत्रगो निराबाधो	३.६२.६	सर्वभूतेश्वरत्वं	३.६३.७	सर्वलोकेश्वरस्यैव	३.६१.३	सर्वाल्लोकान्विचरते	३.१३२.३४	सर्वे ते क्षत्रियास्तात	१.१४.१६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१४८

सर्वे ते देवगन्धर्वा	३.६६.१४	सर्वेषामेव भूतानां	२.३३.२३	स वायुः सर्वभूतायु	१.४४.३१	स वै राजा हरिश्चन्द्रस्त्रै	१.१३.२५	स शरैः सूर्यसंकाशैः	३.६१.४१
सर्वे ते यज्ञनिरताः	३.१०५.२७	सर्वे स्वयंभुक्तेषु	३.३७.३२	स वारितो जयन्तेन प्रवरेण	२.८५.१४	स वै वेगं समुद्रस्य	१.३३.२७	स शिष्ये शयने दिव्ये	१.५०.६
सर्वे ते हृष्टमनसो	३.६६.४५	सर्वे हिरण्यकवचाः	३.५०.१६	स विद्धस्तेन बाणेन	२.१०५.६८	स वैश्रवणसंपृष्टं	२.५८.५८	स शिलाजालविततां गण्ड	१.४६.२२
सर्वे नृपश्रियं प्राप्ता	२.३८.१२	सर्वे देवैर्महाराज विमान	१.३३.१८	स विद्धस्तेन बाणेन	३.३२.२४	स वै स्वायम्भुवस्ता	१.२.४	स शीघ्रयानः संप्राप्त	१.५४.४६
सर्वे ब्रह्म वदिष्यन्ति	३.३.१३	सर्वैः प्रहरणैश्चैव	३.३१.१६	स विद्धस्तेन बाणेन	३.३२.४६	सव्यं तु हंसो राजेन्द्रो	३.१२४.१७	स शुकले वाससी त्रिभ्रछ्वेत	२.२६.१८
सर्वे मायाधरा दैत्याः	३.४६.२२	सर्वैर्ब्रह्मर्षिभिः सार्धं	१.४८.५७	स विप्रनष्टां देवानां	१.२८.१८	सव्ये चास्य रथः पार्श्वे	१.४४.४	स शून्यमाश्रमं रम्यं	१.३३.४१
सर्वे मायाधराः सूर्याः	३.५१.५३	सलज्जाघोमुखी किञ्चित	२.६४.६	स विप्रो वैष्णवं सत्रं	३.१०४.७	सव्येन तां समाकृष्य	३.६६.३६	स शूलशक्त्यृष्टिगदा	३.६३.१५
सर्वे यज्ञा महाबाहो	१.३३.१७	स लब्धतेजा भगवान्	१.२५.१८	स विवाहोऽनिरुद्धस्य	२.१२७.२६	सव्येन सात्त्वतां श्रेष्ठो	२.४३.१२	स शेषास्तत्र तिष्ठन्ति	१.८.२८
सर्वे रजतसंकाशः	३.५१.५४	स लब्ध्वा वरमव्यग्रो	२.२७.२३	स विवेश पुरीं रम्यां	२.८५.७४	सव्येनालम्ब्य महती	१.४४.३६	स श्रीमान्विरजा नाम	२.६८.५६
सर्वे वाणिज्यकाश्चैव	३.३.२१	स लम्बकेसरसटः कृष्णेन	२.२४.३४	स विव्याध चतुःषष्ट्य	२.६०.८	सव्येनालम्ब्य हस्तेन कन्यां	२.६०.१४	स श्रुत्वा भगवान् वाक्यं	१.५२.५३
सर्वे वित्रासिता देवा	३.३८.३२	स लम्बमानः कृष्णस्य	२.१८.५१	स विशेषं च धर्माणां	२.८१.१७	स ब्रजत्यन्धवद्यंस्मादनन्धो	२.८६.११	स संवत्सरदीक्षायां दीक्षितः	२.८३.३
सर्वेषामेव बन्धानां	२.१२०.२७	स लोकपालानुत्साद्य	१.४७.५१	स विशेषं तथा कामः	२.८४.३२	स ब्रजो ब्रजता भाति	२.६.१८	स संसक्तस्तु कृष्णेन	२.२४.३१
सर्वे वेदविदस्तत्र ब्रह्मण्याः	१.३२.४	स लोकपालैकवपुश्चन्द्र	१.४७.५८	सविशेषं सांगारं	१.११.३६	सशक्तिपरिधप्राप्त	३.१२२.११	स संसक्तस्तु कृष्णो वै	२.२१.१८
सर्वे वै बाहुबलिनः	३.१३३.७४	स लोहगन्धो राजर्षिः	१.३०.११	स विस्फुलिगैर्नान्तरै	३.२८.२६	स शंखः केशवाह्वानं	२.५८.५६	स संक्षिप्त जलं सर्वं	१.५०.४३
सर्वेषां चैव देवानां	३.१३३.६६	स वज्री कवची विष्णुः	३.३७.२	स विह्वलितसर्वांगो	३.६०.४६	स शंखः प्राञ्जलिभूत्वा	२.५८.६०	स संक्षेपं सविस्तारं	३.२१.२
सर्वेषां दंष्ट्रिणां शेषं	१.४.१४	सवत्सां धेतुकां श्वेतां	२.३६.२४	स वीचिविषमां कुर्वन्	१.५३.१८	स शङ्खः मुरजैश्चापि	३.३२.११	स सत्यभामया वासं	२.७५.६३
सर्वेषां मनुजेन्द्राणामभयं	२.५०.४०	सवनं हवनं चैव हव्यं	१.४१.५	स वै तत्र निराहारो	१.२३.११	स शङ्खः घोरविस्तारा	३.५६.६०	स सत्यभामामथ केशवं	२.८६.२५
सर्वेषां राजतं पात्रमथवा	१.१८.७२	स वरं कन्यकाश्चैव लब्ध्वा	२.३७.७०	स वै तदा शत्रुबलादितं	३.६३.१३	स शरः सधनुश्चैव	२.१२५.५	स संदिग्धमिवात्मानं	२.१४.३१
सर्वेषामस्त्रवीर्याणां	२.१२६.११	सवर्णाऽऽवृत्त सामुद्री	१.२.३३	स वै बाहुसहस्रेण	१.३३.२५	स शरैर्वह्निःसंकाशैः	३.६१.४३	स सन्निपातस्तुमुलस्त्यक्त्वा	२.३५.१०२
सर्वेषामेव पक्षा	३.४०.१६	स वायुदीपितो बह्निरुत्पपात	२.४२.५५	स वै बद्धा धनुर्ज्याभिः	१.३३.३४	स शरैः सूर्यसंकाशैः	३.६.१३२	स सन्निपातस्तुमुलो बभूव	२.७३.२७

धीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१४६

स संनोदयितव्यस्ते	२.२८.३२	सस्नुषोऽहं सभार्यश्च	२.३२.२८	सहस्ताग्रादिनिष्क्रान्तो	२.२६.३०	सहस्ररश्मिप्रतिमो	३.५७.६	सहस्राभरणश्चान्य	३.५५.१६६
स संप्रहारस्तुमुलः	३.५५.१६६	सस्मितं चैव प्रोवाच	२.१.२२	स हस्तालिगनं कृत्वा	२.५३.२२	सहस्ररश्मियुक्तेन भ्राज	१.४४.२३	सहस्रारं शतारं तदद्भुतं	३.१०१.२२
स समं वर्तमानस्तु	३.५६.४१	सस्मिता संमुखीभूत्वा	२.२७.२७	सहस्रकिरणभेन चक्रेण	२.४८.२५	सहस्रशिखरं चैव	३.३५.४२	सहस्रास्यस्सहस्रांग	२.१४.३६
स समागम्य कृष्णेन जल	२.४१.३६	स स्यन्दनवरो भाति	१.४४.१०	सहस्रकूटं विपुलं	३.३५.३५	सहस्रशिरसं नागं कृत्वा	२.६६.४४	सहाया वयमेवैते	३.११८.३६
स समीपगतस्तस्य दिव्य	२.१६.६	सस्याकरवती स्फीता	१.६.४७	सहस्रगुणमप्यत्र दत्त्वा	३.२७.४४	सहस्रशिरसं देवं सहस्र	२.५१.५३	सहायी द्वौ महादेव	३.१०५.१५
स समुद्रात्समानीय	१.४७.५५	स स्वयं भूरिवाभाति	१.४७.५७	सहस्रचन्द्रायुततारकश्च	२.१२४.५३	सहस्र शिरसं ब्रह्मन्	१.४०.२०	सहायी ब्रह्मदत्तस्य पूर्वं	१.२३.२०
स सर्वलोकाप्रतिचक्रचक्रो	३.३६.२३	सहः गोपैः सह धर्मात्मा	२.१०१.२६	सहस्रचन्द्रायुततारकश्च	३.५१.६०	सहस्रशिरसं विन्ध्यं	३.३५.२५	स हि गोपो वृथा	३.६२.११
स सर्वलोकप्रभवो	३.८६.१८	सहजैर्वाध्यते सर्वः	१.५४.३३	सहस्रजिह्वं भास्वन्तं	१.४१.४	सहस्रशिरसा हन्तुं	३.६६.५	सहितः सर्वयादोभिः	२.१०२.१३
स सर्वलोक प्रभवो	३.११६.१६	स हत्वा दानवं संख्ये	१.५४.५४	सहस्रदस्य दायादास्यः	१.३३.२	सहस्रशीर्षा पुरुषः	३.६४.२७	सौह ते सहजो मृत्यु	२.२२.६१
स सहायो गमिष्यामि	१.२६.२२	स हतैरसुरैः सर्वैर्वर	२.८७.१६	सहस्रदग्भूत पतिः	३.५२.१८	सहस्रशीर्षा पुरुषः	३.८८.३३	स हि दानपतिर्धन्यो यो	२.२३.३७
स साधनेन महता बृहद्रथ	२.३७.७	स हतो देवदेवेन हरेणां	२.६८.२८	सहस्रदृङ् महातेजा	३.६.१४	सहस्रशीर्षा शेषश्च	३.३६.४१	स हि नागान्मनुष्येषु	१.३३.२६
स सामादिभिरेवादा वुयायै	१.२०.६६	सह त्वया गतः कालस्त्व	२.३१.१६	सहस्रधा च राजेन्द्र	३.१७.२६	सहस्रशृङ्ग कैलासः	३.२७.११	स हि युद्धगतः श्रीमान्	१.४६.३०
स साय कमयैर्जालैघरो	३.५५.४	सहदेवस्य धर्मात्मा	१.२६.४	सहस्रवादः सुमुखः	३.४६.७	सहस्रशृङ्ग च गिरि	३.३५.१०	स हि राजा स्थितो	२.३७.४३
स सिद्धः प्रोच्यते	३.१७.५५	सहदेवात्मजः श्रीमानुदायुः	१.३२.६६	सहस्रबाहुं कारव्यै	२.८६.१०	सहस्रशोऽथ शतशो	३.१८.१६	स हि वर्षायुतं तत्त्वा तपः	१.३३.१०
स सिंह इव वेगेन केशवो	२.३०.७२	सहन्यमानो नाराचैः	२.११६.१०१	सहस्रबाहुवार्णश्च	३.४६.२१	सहस्रसंख्यासंयुक्तरूपत	२.३५.१६	स हि वेदमथो यज्ञः	३.१७.५३
ससूतं सहि प्रद्युम्नं	२.१०६.३२	सहयजक्रिया वेदाः	१.४१.१०७	सहस्रं क्षत्रियगणो विक्रान्त	१.१०.३०	सहस्रसंमितान् दिव्याञ्जना	३.५८.२२	स हि वेदमयस्तात	१.२५.११
ससृजे मनसा ब्रह्मा	३.२०.७	स हरिः पुरुषो वीरः	१.३.१३६	सहस्रमायं समरे	३.५५.१४५	सहस्राक्षं पुरस्कृत्य	३.३८.२३	स हि वेदाश्च यज्ञाश्च	१.५०.२४
स सृष्टः पावकस्तेन	३.४५.२८	स हलेन नताग्रेण कूले	२.४६.३४	सहस्रमायो द्युतिमान्	७.५५.१३४	सहस्राक्षं महाभागं	२.१२७.१२४	स हि सप्तसु द्वीपेषु	१.३३.२१
स सृष्टासु प्रजा स्वेहवमापवो	१.२.१	सहसैव तु कार्याणामारम्भो	२.७२.१६	सहस्रमूर्धा रक्ताक्षः	३.६६.४०	सहस्राक्ष सहस्रास्यं	१.४१.३	स हि सर्वास्त्रकुशलः	२.६१.६
ससैन्यं नोदयामास	२.१०५.१२	स हस्ततलविन्यस्तो	२.१८.३८	सहस्रयुगयोरन्ते	३.१८.३५	सहस्राग्येव कृष्णं तु तथा	२.६०.५६	स हि स्वभानुदोहित्रः	१.२८.६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

सहोग्रसेनेन तदा	२.१०१.५२	सागरोदरगभीरा	३.५१.३४	सा तं पुत्रमवाप्स्यैव हृष्टा	२.४.७	सात्यकिस्त्व विक्रान्तो	३.१२५.६	साधुवादाश्च मञ्चेषु	२.३०.३७
सह्यपृष्ठेषु रम्येषु	२.३६.१८	सा गोपी गोपवृद्धश्च	२.७.२७	सा तस्य वदनं दीन मुत्सगे	२.३१.४१	सात्यकेशृणु मद्वाक्य	३.७५.१	साधु वीर महाबाहो	२.१०६.३५
सह्यमर्षानिलोद्भूतो	३.४४.१८	साग्रं वर्षसहस्रं च	३.२८.४३	सा तमध्वानभागम्य	२.११६.५५	सात्राजिति प्रिया नान्या	२.६७.२२	साधु वृत्तं कृतयुगे	३.४.४७
स ह्यसौ प्राकृतः कश्चिद्यः	२.११८.३६	सांकृतिगलिवश्चैव मुद्गल	१.२७.४७	सा तमाहोत्थिता भीता न	२.२८.६४	सा त्वं शासनमास्थाय	१.६.६	साधु साध्विति पुत्रं च	२.८५.२२
सह्यस्य चोपरिष्ठात्	२.३८.८	साङ्कृत्यो गालवो राजन्	१.३२.५६	सा तमिक्ष्वाकुशार्दूलं	२.३७.१६	सा त्वया प्रतिषिद्धेयं	२.१६.१७	साधु साध्विति बाणं	२.१२६.६०
स ह्याविष्टस्तदा तेन	२.१२३.३	सांख्ययोगे च या बुद्धि	३.४७.२१	सा ताम्यामृषभाक्षाम्यां	२.१०१.१०	सा ददर्श तयोर्मध्ये	२.७.२६	साधु साध्विति योगेन	३.५५.६६
सह्योदयश्च मलयो	२.१०६.१६	साङ्गदेनाग्रहस्तेन पङ्कजोद	२.११.३	सा तां कदाचित्प्रच्छ	२.६२.१३	सा ददर्श विपर्यस्तं	२.६.८	साधु साध्विति रामाय	२.४६.५३
स ह्रस्वे यमुनायास्तु	२.२६.४८	सांगोपांगश्चतुर्वेदाः	३.६६.३६	सा तु कन्या यशोदाया	२.२२.५२	सा ददाह तमः सर्व माया	१.४५.१६	साध्यस्य बाणभिहत	३.५६.१४
सा कन्या ववृधे	२.४.४६	सांगोपनिषदा वेदा	३.३३.१७	सा तु दहतु मे पापं	२.१०६.३५	सा दद्यात्काञ्चनं चन्द्रं	२.७६.६७	साध्या रुद्राश्च विश्वे	१.७.३६
सा कन्या ववृधे तत्र	२.१०१.१३	सा च तं वर्द्धयामास	२.१०४.१५	सा तु पुत्रार्थिनी देवी	१.३२.८३	सादिनश्च पदातीश्च	२.५६.२८	साध्या विश्वे च कौरव्य	२.७४.१२
साक्षादिव जगन्नाथं	३.१०४.१६	सा च दृष्ट्वेव भर्तारं	१.६.५७	सा तु प्रद्युम्नगृहिणी	२.१२८.१६	सादितानि महीं जग्मु-	३.५६.८८	साध्वहं श्रोतुमिच्छामि	३.२२.१
सा क्षिप्ता रौक्मिणयेन	२.१०५.६६	सा च मग्नं स्थगुं	२.२७.३६	सा भर्तुश्चित्तां कृत्वा	१.१४.७	सादिता मौर वाः पाशा	२.१०२.१	साध्व्यो जगद्धारयति	२.७८.७
सागरप्रतिमोघेन	३.५६.४८	सा च रात्रिरपक्रान्ता	१.८.३४	सा तु वर्षायुतं तप्त्वा	१.२.३	सा दीप्तशस्त्रप्रवरा	१.४७.१५	सा नदी निखिलां	३.३५.१४
सागरं स प्रविश्याशु	३.१०२.६	सा चित्रलेखया प्रोक्ता	२.११८.६१	सा तेन व्यभिचारेण	१.१८.३१	सा दृष्ट्वा परमस्त्रीणां	२.११६.३२	सानवो भूषितास्तत्र	२.६८.२२
सागराणां नदीनां च	१.४.१३	सा जीवपुत्रा सुभगा भवत्य	२.७६.६३	सात्यकिं चोल्मुकं	२.१२७.१३५	सा दृष्ट्वा संप्रयान्तं	३.१.६	सानिध्यं कपयामास	२.१२०.३६
सागरानिलसवीतं सागरा	२.५६.२६	साञ्जलिप्रग्रहा देवी	२.४१.१६	सात्यकिं वासुदेवस्तु	३.६७.२	सा देवी पूजयामास	२.७५.६४	सान्त्वमेव तु बालेषु	२.२२.६७
सागरानूपविपुलां	२.५५.१०३	सा तच्छ्रुत्वा तु वचन	२.११८.५१	सात्यकिश्च तथा राजन्	३.१२०.६	साधने चापि निर्माणे	३.२६.४७	सान्त्वयित्वा तु तं	२.११२.२८
सागराभां महासेनां	३.५४.४६	सा तत्र रमणीयेषु रुचिरं	२.२८.५६	सात्यकिश्चित्रकश्यामो	२.३५.१०६	साधु यादव वीर्येण	२.६७.११	सान्त्वयित्वा तु वरदो	३.१३३.२३
सागरास्समकम्पन्त	२.४.१५	सा तत्र रमणीयेषु रुचिर	२.२८.६०	सात्यकिस्तं तथेत्युक्त्वा	३.११७.४	साधयामि महाबाहो भवतः	२.४०.४७	सान्त्वितो वासुदेवेन	२.७३.११
सागरेण तथेत्युक्ते	२.११३.१२	सा तथोक्ता तया भ्रात्रा	१.१८.१६	सात्याकिस्तु रथं विदध्वा	३.६६.२५	साधितं देवतानां हि	२.१६.१६	सान्दीपनिसुतश्चैव चिरनष्टो	२.४६.५२

श्रीहरिवंशपुराणम् :: बलोकानुक्रमणी

१५१

सा पति भूपति वृद्धमुग्रसेनं	२.३१.४७	साम्बमाता च गान्धारी	२.६५.४०	सार्वकामिकमन्नाद्यं	२.७६.४	सा सृष्टा पन्नगी माया	२.१०६.३१	सिंहनादं महाघोरं	३.१०१.१७
सा पतिस्निग्धहृदया तं	२.२८.६३	साम्बः समरमध्यस्थान	२.६७.२०	सा लोकान्ब्रह्मलोकादीन्	१.५.४७	सा सृष्टा सिंहमाया	२.१०६.२१	सिंहनादं विमुच्यन्तः	३.१२१.१८
सा श्यन्निहतं पुत्रं निष्प्रभ	२.३१.३६	साम्बाय दीयतां रामा	२.१२८.५	सा वचस्तथ्यमशिवं	२.११८.६५	सास्मि पूर्णैः योगेन	२.४१.२१	सिंहनादेन शूराणां	२.५५.५६
सा पातितनरेन्द्राणां	२.२१.३६	सा यत्र रोहिणी देवी	२.५.३२	सावतसैविषाणैश्च	२.१६.४२	सास्मि वेद्यां समारोप्य	१.५२.४७	सिंहनादो महानासी	३.६४.३०
सा पुरो परमोदारा	१.५४.५७	सा यदा समतिक्रान्ता	२.४६.४३	सावरोद्द्रुमं घोरं कीर्णं	२.११.५३	सा स्वप्नमिव तं दृष्ट्वा	२.४.४	मिहः प्रसेनमन्वधीत्	१.३८.३६
सा पृस्फुरितचार्वोष्ठी	२.६६.२२	सा यथैवार्णवगता तथैव	२.४१.२२	सावर्णा मनवस्तात पञ्च	१.७.४३	साहज्जनी नाम पुरी येन	१.३३.४	सिंहव्याघ्रगजाकीर्णां	१.४६.२३
सा ब्रह्मलोकं संभाष्य	३.१७.२५	सायं प्रातश्च तत्त्वज्ञो	३.१७.६२	सावशेषं तपो यस्य	२.७१.३६	साहं विज्ञापितवती	१.५२.५०	सिंहव्याघ्रवराहाणां	२.२२.५६
सा भीता सहसोत्थाय	२.७.२५	सायाह्ने चामरगणै	३.७६.३०	सावित्री चापि देवानां	२.३.१३	साहं विहीना विक्रान्तं	१.५२.५१	सिंहशार्दूलदर्पणां	३.५६.३७
सा भृगुदंभदेहैश्च तालं	२.१३.२२	सायुधग्रही वीरौ	२.३५.६७	सावित्री व्रतकं कृत्वा	२.८१.२३	साहमद्यावहास्यामि सपत्नी	२.६७.७	सिंहशार्दूलदुष्टानां	२.४७.१०
सामगैश्च जपैश्चापि	३.६४.१२	सा यौवनगुणोपेता	२.३७.१४	सावित्रे नियमे पूर्णं यं	२.४४.६	सा हि तस्याभवज्ज्येष्ठा	२.६०.३६	सिंहगन्विद्रावयामासु	२.१०६.२६
सामदानादिभिः पूर्वमपि	१.२०.६३	सारथि चास्य विद्याध	२.६०.१६	सा विवर्णं तु तद्रूपं	१.६.१०	सा हि मे जननी धन्या	२.११४.६	सिंहान् व्याघ्रान्वराहाश्च	२.१०६.१६
सा मनुप्रभवं दिव्यं प्राप्ते	१.५२.५४	सारथि पञ्चमिर्बाणैर्ध्वज	२.६३.७०	सा विह्वलजलस्त्रोता	२.४६.३५	सा हि सत्यवती पुण्या	१.२७.३७	सिंहासदनमनघ्यास्यं पुरं	२.५०.१५
सामन्तेषु नरेन्द्रेषु	२.३२.२०	सारथि सुमहतेजा	३.५५.१११	सा वै निरी तमोग्रस्ते	२.४.४१	सा ह्युद्दिष्टा पुरा भीष्म	१.२३.७	सिंहानापततो दृष्ट्वा	२.१०६.२५
सा मातुर्दरस्था तु	१.३४.८	सारथेश्च शिरः	३.६६.२७	साश्मशब्दः शिलावर्षैः	१.४६.२५	सिंहद्वयनंदस्तत्र	३.६८.२४	सिंहासनेषु चित्रेषु	२.११०.१५
सामर्थ्यं च न पर्यामि	३.२.२५	सारथेश्च शिरः कायादा-	३.१०१.६	साश्मसंघातविषमा	१.४६.२७	सिंहनादं नदन् क्रुद्धो	२.११६.१३६	सिंहिका चाभवत्कन्या	१.३.७०
सामवेदं च जिह्वाग्रादथ	३.१७.४८	सारमेयं यथा दृष्ट्वा	२.१०५.८२	साश्च हतं प्रसेनं	१.३८.३३	सिंहनादं नदन्ति	३.६०.२४	सिंहिकातनयश्चैव	३.५१.४३
सामादयोम्युपायाश्च	२.५७.२७	सारसेनापि विहितं रम्यं	२.३८.२७	सा सदाऽहनि निर्गत्य	१.२०.८३	सिंहनादं नदिस्वा	३.४४.४	सिंहिकातनयो यस्तु	३.३७.१६
सामान्यास्ताः कुमाराणां	२.८८.६	सारुढैस्तदिभिर्युक्तं प्रेक्षमाणः	२.४२.४	सा समुद्रौघसदृशी दिव्या	१.४७.१६	सिंहनादं प्रकुर्वन्तः	३.६३.२३	सिंहिका सुषुवे राहुं	२.३६.३६
सा मालाममलांगुष्ठ	२.४१.२६	सार्तनादमहत्कृत्वा विदन्तो	२.२६.३६	सा सरोषा पुनर्भूत्वा	२.२८.१०४	सिंहनादं प्रकुर्वन्तः	३.६५.२०	सितद्रुमसमाकीर्णं	३.३५.३६
साम्प्रतं खिद्यमानाह	१.५२.४३	साद्धं कुबेरेण	३.८५.१०	सा सांख्यानां गतिः पार्थ	२.११४.११	सिंहनादं महाघोर	३.६८.१२	सितवर्णाम्बुदोष्णीषं	२.१६.१७

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१५२

सिताभ्रघनसकाशा	३.४१.५०	सुखश्राव्यतया घोर	३.२.३	सुतप्याम्बु नदभक्ति	३.५३.३६	सुनीथस्य तु दायादः	१.२६.७८	सुब्रह्मात्मा सुवर्चस्कः	३.६२.४
सितहंसेक्षणापाङ्गी	२.४६.३६	सुखासनं समास्थाय	३.८०.५८	सुतलं नाम पातालं	३.७२.३६	सुनीथोऽथ महाप्राज्ञो	२.४८.३६	सुभद्रायां रथो पार्थादि	१.३५.८
सिद्धचारणरक्षोभिस्सेवित-	२.४०.१८	सुखे दुःखे च रागे च	३.८०.८१	सुतलेनोच्छ्रितवता	१.४६.५६	सुनेत्रः क्षत्रवृद्धिश्च	१.७.८२	सुमतेरपि धर्मात्मा	१.२०.४२
सिद्ध चारणसंधाना	२.१२१.१४५	सुखेन उषितः कृष्णस्तस्य	२.४७.४६	सुतस्तु तुर्वसोर्वह्निर्वह्ने	१.३२.११७	सुपथः खण्डमुक्तिश्च	३.४६.१५	सुमध्याश्चारुमध्याश्च	३.६६.१६
सिद्धचारण संधाश्च	२.१२४.३७	सुखोपविष्टं विश्रान्तं	२.७२.५	सुताया भीष्मकस्याथ	२.५६.२	सुपर्णवेगैर्विकृतैर्ज्वलद्भिः	३.५५.५१	सुमनाश्चैव कोशल्या सर्वं	२.६२.४७
सिद्धं मे जन्मनः कृत्यं	३.८१.१७	सुखोपविष्टास्ते स्वेषु	२.५०.८२	सुतीर्था स्वादुसलिलां	२.११.३०	सुपर्णा विचरन्ति	२.१०६.३४	सुमनाः सुचिवाकू शुद्धः	१.२१.३६
सिद्धिं प्राप्य क्रमेयुस्ते	३.२७.४१	सुखोपविष्टोऽथ मुनिः	२.२८.४७	सुतो भीतरथस्यासी	१.३२.२३	सुपर्णा शतपत्राश्च	२.१०६.१०१	सुमनास्यो दिधिमुखस्तथा	२.१०६.१६
सिद्धिः सांयात्रिकाणा	२.३.१५	सुगन्धगन्धा च सदा	२.६०.७४	सुदर्शनः सुतस्तस्य	१.१५.३३	सुप्रणाश्चि महात्मानो	२.६६.४	सुमहाञ्ज्रवे शब्दस्तेषा	३.१००.३
सिधुर्वेत्रवती चैव	२.१०६.३०	सुग्रीवराज्यदाता त्वं	२.१२१.१२२	सुदासस्य सुतस्त्वासी	१.१५.२१	सुपानधारं विमलं	३.५४.५०	सुमहावृत्तनयनः स	३.५१.३८
सिषिचुः केशवं पत्न्यो	२.८८.२५	सुग्रीवस्य कृते येन वान	१.४१.१३३	सुद्युम्न इति विख्यात	१.१०.१५	सुपाश्वो गिरिमुख्यस्तु	३.२३.४३	सुमोच हृदये तस्य	२.१०५.४७
सिषिचुर्यानि जलदा	२.१६.२८	सुधातं सुप्रसन्नाग्रैः	३.५४.२८	सुद्युम्नः कारयामास	१.१०.२४	सुपाश्वो गिरिमुख्यस्तु	३.२७.२	सुयामुनं नाम नगं तव	२.२८.५८
सीदमानश्च सलिले	३.१६.२८	सुचारुचामी करपट्टनद्धां	३.५०.७	सुद्युम्नस्य त दायादा	१.१०.१८	सुप्तं मत्तं प्रमत्तं वा	१.२०.१२६	सुरथस्य तु विक्रान्त	१.३२.१०३
सुकाला नाम पितरो	१.१८.५७	सुचारुका धर्मज्ञा	३.२७.२८	सुद्युम्नस्य त दायादा	१.१०.१८	सुप्तस्य शयने दिव्ये	२.४१.३६	सुरभिर्विनता चव ताम्रा	१.३.५५
सुकुमारस्य पुत्रस्तु	१.२६.८१	सुजानुः पीनजघना	३.२२.३	सुद्युम्नस्य त दायादा	१.१०.१८	सुप्त्वा युगसहस्रं स	१.४१.२०	सुरभी कश्यपाद्रुद्रानेका	१.३.४६
सुकेतोस्तनयश्चापि	१.२६.७६	सुतनुश्च सुतारा च	२.१०३.२५	सुद्युम्नस्य त दायादा	१.१०.१८	सुप्रभाणि च ज्योतीषि	१.४२.३५	सुरभ्यपत्यमित्येतत्पुराणे	३.३६.५१
सुखं कृत्स्नं भूताना	३.८८.३६	सुतनू राष्ट्रपाली च	२.३७.३२	सुद्युम्नस्य त दायादा	१.१०.१८	सुप्रहाराहतं दृष्ट्वा	२.७४.७	सुरविप्रतिमः श्रीमान्भूभुवो	३.६६.३५
सुखं दुःखं च भूतानां	३.३२.३१	सुतः पञ्चजनस्यासी	१.१५.१३	सुद्युम्नस्य त दायादा	१.१०.१८	सुप्रियं बत पश्यामश्चिरं	२.६४.३५	सुरसायाः सहस्रं तु	१.३.११०
सुखं यत्र मुदो यत्र	३.१३.१७	सुतपाश्चैव वासिष्ठः	१.७.८०	सुद्युम्नस्य त दायादा	१.१०.१८	सुबन्धुरेण दीप्तेन	२.४४.५	सुराणामपि सुक्षेत्रा	२.५८.५०
सुखं स्वपिति निःशंकः	२.१२१.२२	सुतप्रसूतिमिच्छन्वै सुतं	१.३६.६	सुद्युम्नस्य त दायादा	१.१०.१८	सुबाहु काञ्चवाहुश्च	३.४६.१४	सुराणामरयो मध्ये	३.१३३.५६
सुखमेघन्ति बहवो	१.६.२	सुतपुतजाम्बूनदतुल्य	३.४६.३६	सुद्युम्नस्य त दायादा	१.१०.१८	सुबाहुर्मोघनादश्च	३.४६.३०	सुराणामसुराणां च	२.११०.१६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

१५३

सुराणामुत्तमाङ्गानि	३.५७.१२	सुवर्णबिन्दु विख्यातं	२.१०६.३८	सुसूक्ष्मानपारिव्यक्ता	१.१८.३३	सूर्यसोममंत्र तात कृत्स्नं	२.३२.४२	सेनां प्रभग्नामालोक्य	२.५३.४१
सुराणामेककार्याणां	१.५३.११	सुवर्णमालाकुलभूषिताङ्गा	३.४४.२३	सुस्रोता नर्मदा चैव	३.४६.४५	सूर्यस्य रश्मितुल्याभं	१.४८.४०	सेन्द्राशनिरिवाम्भोदो	२.२१.१३
सुराधिपस्तुभगवानाज्ञा	३.५२.२	सुवर्णवर्णान्वृक्षाग्रानद्य	२.१२६.४१	सुस्वधा नाम पितर	१.१८.६४	सूर्याय सूर्यपुत्राय	३.६०.२१	सेयं निरामयं कृत्वा	१.५१.२३
सुरापिशितपूर्णभ्यां	२.२२.५४	सुवर्णं विकृतान् चित्रान्	३.५५.६२	सुस्विन्नशूल्यान्महिषाश्चं	२.८६.५८	सूर्याचिभिः पीयमाना	३.२८.५२	सेयं भारपरिश्रान्ता	१.५१.१८
सुरारणिर्गर्भमधत्त दिव्यं	१.४०.२५	सुवर्णं विकृतान्बाणान्	३.५५.१८	सुहोत्रं च सुहोतारं	१.३२.१६	सूर्येन्दुसदृशाल्लोकांस्त	२.५१.५	सेयमस्मानपाहाय	१.६.२६
सुराष्ट्रश्च सुब्राह्मीकाः	३.४६.५५	सुवर्णं विकृतैश्चापि	३.५५.८०	सुहोत्रस्य बृहत्पुत्रो	१.३२.४१	सुवर्णसूत्रं विप्राय कौमुद्यां	२.७६.५२	सेवकं द्वारदेशे तु तिष्ठे	२.६६.५
सुरासुरगणाः सर्वे	३.३०.२३	सुवर्णशृङ्गो हि	३.७१.५	सूचयन्तः पुनः सर्वे	२.११७.६०	सृजतो बाहुवीर्येण कः	२.५२.२३	सेवतोऽपि तथा राजन्न	१.६.६२
सुरासुरगणा सर्वे	३.३०.२६	सुवर्णस्य च निष्कस्य	३.६१.१६	सूतं दशभिराहत्य रथं	३.६८.३	मृजस्ययो रश्मिभिर्जा	३.६२.३७	सेवन्ते यंयताहारा	३.६६.३६
सुरासुरगुरुर्ब्रह्मा पातु	२.१०६.६	सुवर्णाञ्जिनचूर्णाभावान्यो	२.१४.५	सूतं संचोदयामास	२.१०५.११	सृजन्तः सर्पपतयस्तीव्र	१.४४.३३	सेवितं चाप्सरः संचैः	३.१३२.३६
सुरासुरद्विजभुजगाप्सरो	३.३३.४७	सुवर्णेन च संयुक्तं	३.१३२.७३	सूतमागधकल्पैश्च	२.११७.५	सृजेदपि परं लोकं	३.१६.४४	सेव्यमानं च सौभाग्यं	२.६५.२३
सुरासुरमनुष्येषु	२.१०२.३५	सुवातयां निवासं तं	२.६८.८४	सूतमागधबन्दीनामेकैक	२.५५.५१	सृज्यमानाः प्रजा नैव	१.१.४२	सेव्यमानो नवैर्वर्तिद्रुम	२.११.१७
सुरासुरेन्द्रयोर्दृष्ट्वा	३.६४.१७	सुवासिता वपुष्मन्त	२.२८.११	सूतमागधसंस्ताव	३.११८.२१	सृञ्जयस्याभवत्पुत्रो वीरो	१.३१.२०	सेव्यमानो मुनिगणैर्नित्यं	३.२६.४८
सुरासुरैष्यजितं	३.५६.७१	सृविभक्तवस्त्रं च	२.१०५.१५	सूतमाह मुहूर्तं तु तिष्ठस्व	२.२८.८७	सृमरांश्चमरान्यंकृन्मात	२.२८.७५	सेव्यमानो वरस्त्रीणां	३.१३२.३६
सुरूपो बहुरूपांस्तां	३.२६.२७	सुव्यक्तं सन्निकृष्टः	२.४१.५०	सूतांश्चिच्छेद खड्गेन	३.५६.३७	सेत्स्यते सर्वकार्यार्थी	२.१६.२०	सेव्यां देवैः सर्षिणः	२.१२०.१०
सुरेणुरिति विख्याता	१.६.२	सुव्यक्तीकृतशब्दस्तु	१.३८.३७	सूतैर्मागधपुत्रैश्च	३.१२०.११	सेनस्कन्धोऽतिसेनश्च	२.१०४.४५	सैन्यपक्ष हतास्तस्य	३.५६.३८
सुरेशस्य च यत्तेजस्त-	२.१२६.१०२	सुव्यक्तेनोभिधानेन	३.१३३.३१	सूत्रहस्तास्ततो मानं	२.५८.१२	सेनातिबलमालोक्य	२.४६.१२	सैन्यं तत्र संप्राप्तं	३.१२१.२६
सुरेशस्य च शक्रस्य	३.७१.२	सुश्लिष्टरथ्यां सश्रीकां	२.१२७.१०६	सूर्यप्रभस्तु प्रासादः	२.६८.५०	सेनानीः कैशिकश्चैव कृष्णं	२.३५.८५	सैवमुक्ता मनुं देवं	१.१०.१०
सुवर्णजालनिर्मुक्तं	३.५१.६	सुषुवेऽष्टौ महाभागा	३.३६.४४	सूर्यं भित्वा महोल्का	२.११६.६१	सेनानोस्तात मा मैवं	२.१२१.५०	सैषा गङ्गा फलं लेभे	३.२८.५६
सुवर्णेनेमिपर्यन्तं वज्र	१.४८.४१	सुषेणं चारुगुप्तं च	२.६०.३८	सूर्यश्च यातुमे चक्षुः	३.८०.७०	सेनापतिरनाधृष्टिरिदं	२.१२१.४०	सैषा छाया शशोभूता	३.२८.५०
सुवर्णपुंखाः पूष्णस्ते	३.५५.१०४	सुसाधु दिक्षु सर्वासु	३.६५.२	सूर्यः सप्ताश्वयुक्तेन	१.४४.२१	सैनापतिरनाधृष्टिर्ममृषे	२.८४.२४	सैषा दुर्विषहा माया	१.४५.७४

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१५४

सैषा नारायणमुखे दृष्टा	१.५०.३३	सोऽथ संपूजितः पूज्य	२.१०१.२३	सोऽभिपत्य महाबाहुर्दीर्घं	२.६४.७२	सोमो विषयमाक्षिप्य	३.२८.६	सोऽहं कदाचिद्देवानां	२.२८.४८
सोऽग्निं देवमुखे दृष्ट्वा	१.४७.५४	सोऽनलः पवनायस्तः	२.४२.५६	सोऽभिभूय रणे बाण	२.११६.१५१	सोमो हि भगवान् देवो	१.२४.३८	सोऽहं कुतूहलाविष्टो	२.११०.३६
सोऽग्निं प्राक्सवने दृष्ट्वा	१.४६.१३	सोऽनिलोद्धूतवसनस्तस्थौ	१.४७.४२	सोऽभिषस्तस्तदा राजन्नगरे	२.५७.६	सोऽयमग्निस्तदा	३.८८.११	सोऽहं कृष्णेन वै रात्रौ	२.२५.३८
सोऽग्निं दीप्य विभज्यांशू	३.२८.७६	सोऽनिलोऽनलसंयुक्तः	१.४६.३५	सोऽभिषिक्तो महातेजा	१.५.२६	साऽयमेतेः शतगुणैः	२.११८.४१	सोऽहं तत्र सितोष्णीषान्	२.१.१४
सोऽग्निर्धूमागतस्तत्रं	३.२८.७७	सोऽनुज्ञातो हि सत्कृत्य	२.१००.२	सोऽभिसृत्य गदा घोरा	२.६०.३३	सोऽर्चितो वामुदेवेन	२.६५.१४	सोऽहं तं पाणिना स्पृष्ट्वा	२.११०.३५
सोऽग्निर्मनः समुद्धूतः	६.२८.७३	सोऽनुभूय भुजंगानां त्रं	२.२६.६१	सोऽभिषिको महाराज	१.२५.२१	सोऽर्जुनो नाम मे पुत्रः	२.१६.८७	सोऽहं पितामहं देवं	२.११०.६०
सोऽङ्गणान्निस्सृतः कृष्णः	२.७.१६	सोऽनुमान्य सुरान्सर्वान्	२.५८.७५	सोमदत्तस्य दायादः	१.३२.७८	सोऽवर्द्धत महातेजा	२.३७.४५	सोऽहं प्रजानिमित्तं त्वां	१.६.४
सोऽचिन्तयदर्थकान्ते	३.१०.३३	सोऽन्तरिक्षगतो भूत्वा	२.१०८.३	सोमपः सुमहातेजा	३.६२.८	सोऽवगाहत निश्शंक	२.१४.१४	सोऽहं प्रजापतिं गत्वा	२.११०.५६
सोऽचिरेणैव कालेन	३.४१.४०	सोऽन्तरिक्षात्समुत्पत्य	३.५७.६७	सोम पुत्राच्छ्रुत्वा द्राजन्	१.१०.१७	सोऽवगाह्य नरेन्द्राणां	२.११०.२१	सोऽहं युगस्य पर्यन्ते	१.१७.४
सोऽच्छ्रयन् प्रथमं पादं	१.४६.६०	सोऽन्तरिक्षान्निपतितः	२.१०८.४	सोममण्डलपर्यन्ता	३.१६.२६	सोऽवतीर्य गजात्तूणं	२.६३.२६	सोऽहं वाक्यसमाप्त्यर्थं	२.११०.६१
सोऽज्ञापयत संक्रुद्धः पुरुषा	२.३०.६५	सोऽपकृष्यत वेगेन जले	२.३७.५३	सोमन्ये जहुः केचिन्ते	३.३२.१७	सो वाच ममविद्यास्ति	२.६४.३६	सोऽहं विष्णोर्गतिं	२.११०.८१
सोऽज्ञापयत संरब्धः	२.२.१	सोपविश्यासने शुभ्रं	२.१२१.७५	सोऽमर्षाद्रथजालानि	३.५५.१५१	सोवाच सुभगा येन भवेयं	२.६७.५६	सोऽहं स्वयं भूवचनाद्	२.११०.६६
सोऽतिकायस्तु संमूढो	२.२६.३१	सोऽपश्यत् सुतं ज्येष्ठं	२.१०८.२१	सोमश्चाप्यथ रोहिण्या	२.६७.६६	सोऽसि ब्रह्मविदां	३.१११.३४	सौकुमार्यो तथा रूपे	३.३.२२
सोऽतिविद्धो बलवता	३.५६.१६	सोऽपश्यद् वृक्षखंडांश्च	२.६८.१०	सोमः श्वेतहयैर्भाति स्यन्दने	१.४४.२४	सोऽसि चमं च जग्राह	२.७३.७०	सौते सुमहदाख्यानं	१.१.५
सोऽतिविद्धो महाबाहु	२.११६.१५४	सोपसृत्य नदीतीरं	२.१२.१	सोमस्य भगवान्वन्धर्वा	१.३.४०	सोऽसुरान्सुमहातेजाः	२.८७.२	सौनन्दं च ततश्श्रीमान्	२.३५.६३
सोऽतिविद्धो महेष्वासः	३.५७.६३	सोपानभूतं स्वर्गस्य गगना	२.३६.६६	सोमस्य भरतश्चेष्ठ	१.११.५२	सोऽस्त्रजालैर्वहुविधैर्धनुभिः	१.४७.४१	सौवर्णवेदिकास्तम्भं	२.११६.२३
सोऽन्मागारयुक्ताभिः	२.२८.७	सोऽपि कंसस्तथायस्त	२.३०.७५	सोमस्याप्यायनं कृत्वा	१.१८.७३	सोऽस्त्रप्रहाराभिहतः	२.४४.२७	सौभ्रमाथं च हलायुधत्वं	२.८६.१३
सोऽत्थिता पृष्ठतो	२.६६.१७	सोऽब्रवीत्सहसा देवीं	२.१०८.२२	सोमस्येति महात्मानं	१.२५.४४	सोऽस्त्रं तदभिदीप्यन्त	२.७३.४६	सौभाग्यं परमाप्नोति	२.८०.३२
सोऽत्पन्नस्त्वग्ने	३.१४.१०	सोऽभवद्गालवो नाम	१.१२.२४	सोमात्सोमः समुत्पन्नो	३.१७.२३	सोऽस्त्राणां पारतत्त्वज्ञः	२.१६.७८	सौभाग्यं करथो जैत्रस्तव	२.६५.४१
सोदरे तु विशेषं तु पिता	२.७०.२८	सोऽभिद्रुतः प्रजाभिस्तु	१.५.४५	सोमेन सह संयुक्तो	३.३२.२८	सोऽहंकदाचिद्देवानां	२.१.१३	सौमवंशोद्धवो राजा	२.५७.६०

श्रीहरिवंशपुराणम् ॥ श्लोकानुक्रमणो

१५५

सौवर्णाः पानकुम्भाश्च	२.२६.११	स्तूयमानश्च यज्ञान्ते	३.२५.४	स्थाणुभ्यो हिमवान्	२.१६.२५	स्थितं तु कश्यपं	२.७५.२२	स्निग्धशीतानिलवनं सर्वं	२.८.२४
सौरच्छदैः सध्वजकि	३.५२.४०	स्तूयमान स्तवैर्विद्ये	२.१२१.१४०	स्थाणुर्भगश्च भगवान्	३.६६.२५	स्थितं धरण्यां मेघाभं	२.११.१६	स्निग्धांजनचयप्रसूय	२.१२२.६८
सोहोत्रिखन्निदग्गा कुद्धो	१.२७.६	स्तूयमानश्च विबुधैः	३.२६.४६	स्थानं तस्या नगो विद्ये	२.२२.५८	स्थितश्शक्रमहस्तात	२.१७.११	स्निग्धैश्च शास्त्र	१.२०.५८
सोहोत्रिभवज्जुहः	१.२७.४	स्तोतव्यो यदि तावत्	२.६७.११	स्थानभागं च नृपते	२.५५.४५	स्थिता धर्मपरा विप्रा	३.८.३	स्निग्धैस्त्वत्परशुत्सृष्टै	२.३६.३३
स्कन्धवन्तः सुशाखाश्च	३.४१.६७	स्तोतुमिच्छसि मां देव	२.१२१.१२६	स्थानीकेन महता	३.५१.२८	स्थितिरेषा हि भैमानां	२.८८.१०	स्तुषां चोत्थाप्य तां	२.१०८.३५
स्तनाविच्छति या नारी	२.८०.३०	स्त्रिग्वगम्भीरनिर्घोष	३.६८.२	स्थाने त्वां वारिवाहिन्यः	२.११०.४६	स्थिते त्वयि महाबाहो	३.७५.२७	स्नेहपूर्णं मनसा स्थितां	२.५२.१०
स्तनो कक्षो च वेदाश्च	३.७१.५५	स्त्रियाः कामयमानायाः	२.११६.४२	स्थानेनेह न नः कार्यं	२.६.२	स्थिते देवगुरौ तच्च	३.७८.५	स्पर्शः प्राणश्च चेष्टा	३.६.८
स्तम्भयन्तौ च बलिनी	३.५४.७५	स्त्रियोऽपि यस्यां	२.६८.२६	स्थाने भारपरिश्रान्ता	२.३५.१२	स्थिते भीष्म जरासंधे	३.११३.६	स्पन्दिताः पाशजालैश्च	१.४५.१०
स्तम्भयित्वानयद्वीरं गुहां	२.८४.२७	स्त्रियो हिरण्य या नानि	२.३२.२४	स्थाने भारपरिश्रान्ता	२.४१.६१	स्थितो ब्रह्मासने	३.१६.४	स्पृहणीयो हि लोकस्य	२.२५.३५
स्तम्भैर्मणिमयैर्विद्यैः	३.४१.५३	स्त्रियो ह्या वाहयेत्	२.७६.२	स्थापयामास भागेषु	२.३८.१६	स्थितो भूमिगतेनैव यो	२.३०.१४	स्पृहाप्रेरितकर्माणाः	३.१११.२६
स्तवं देवाधिदेवस्य	३.७२.६०	स्त्रीणां चारित्रलुब्धानां	२.३१.१४	स्थापयित्वा द्वारवत्यामाहुकं	२.८३.५४	स्थितोऽस्थिमैदामिष	३.५२.३३	स्फटिकैर्मणिवर्णा	३.१८.८
स्तवेनानेन गच्छन्ति	३.७२.१०१	स्त्रीनिमित्तमितो	२.६६.५०	स्थापयित्वा द्विबाहुत्वे	१.१२७.१४०	स्थितौ धनुर्गृहे सौम्यौ	२.२७.५४	स्फाटिकस्तम्भविवृतो	२.६६.४
स्तुतं त्रिदशगन्धर्वैरप्सरो	२.४०.२०	स्त्रीभूताश्च ततः	३.१६.३८	स्थापयित्वा विलद्वारि	१.३८.३८	स्थित्वा तस्मिन्	३.१४.१	स्फीतक्रोडावलम्बेन	१.४४.४४
स्तुतयो विष्णुसंयुक्ताः	३.२६.२४	स्त्रीरत्नमणि रत्नानि	२.८६.५६	स्थापयित्वा द्विबाहुत्वे	३.१०७.२६	स्थिरप्रसादाश्च सदा	१.१८.७७	स्फीतान् जलपदान्	१.५१.७
स्तुत्या स्तुतं हरि	३.१००.१२	स्त्रीवक्रचन्द्रैः सकलेन्दुकल्पै	२.८६.४७	स्थापितं सत्सुमाहात्म्यं	२.३२.१६	स्थूणाकार्णेन वागेन	२.१२२.३८	स्फुरते नयनं चास्य	२.१०५.२५
स्तुवन्तं केशिहन्तारं	२.१२७.१३७	स्त्रीवश्यता रव्याप्यमानां	२.६६.५४	स्थाप्यन्तां सुनिखाताश्च	२.२८.१३	स्नातस्त्वलंकृतस्तत्र	२.१२७.३०	स्फुरत्केयूररत्नाचिः	३.११४.३४
स्तुवन्ति देवाः सततं	३.८८.६५	स्त्रीसहस्रोपचर्येण वपुषा	२.२५.२४	स्थावर जंगमं चैव	३.१३२.६	स्नातो तु जाह्नवीनोये	२.७५.३०	स्फुरत्पद्ममहाबाहु	३.११४.२४
स्तुवन्ति मुनयश्चैव	२.५०.६५	स्त्रीहन्ता पशुहन्ता च	३.६५.३५	स्थावरा जङ्गमाश्चैव	३.२२.१७	स्नात्वाथ वाससी	२.७६.१६	स्फुरन्तश्च तथा	३.१२२.५
स्तुवन्ति यान्तं	३.५२.२२	स्थ लजाः पक्षिणोऽञ्जाश्च	१.३.११७	स्थावराणां च भूतानां	२.३२.३५	स्नात्वा स्त्री प्रातरुत्थाय	२.७८.१६	स्मयमानश्च शनकैर्जग्राहा	२.२८.६२
स्तूयते पुण्डरीकाक्षो	२.१२७.११३	स्थलीप्रायासु रथ्यासु	२.८.२१	स्थितमंगिरसं दृष्ट्वा	२.१२२.३५	स्निग्धगम्भीरनिर्घोषं	२.११६.४७	स्मरणं वैनतेयस्य	२.१२१.६१

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

१५६

स्मरणादेव सर्वेषामंहसां	२.१.११	स्रवन्ति तत्र वाष्ण्ये	२.६८.२२	स्वधर्मसंप्रयुक्तेषु	३.६५.७	स्वयंप्रभायाः शाण्डिल्या	३.६२.२	स्वयोनिस्ते महातेजस्तोयं	३.६२.३६
स्मरतश्च हरे रूपं	३.११४.१४	स्रष्टा च योऽसी	३.८०.४१	स्वपङ्कमलिनैस्तीरैः	२.१६.२६	स्वयंभुवः परा वेदा	२.११०.७४	स्वरवर्णंङ्गिताकारैर्निगूढो	२.६७.२६
स्मर त्वं पूर्वकं भावं	२.१०६.४६	स्रष्टा धर्मस्य कश्चान्यः	१.५.१२	स्वापित्येकार्णांवे चैव	३.१०.१२	स्वयंभुवा शक्रपुराः	३.३७.३३	स्वरूपैश्चाप्यरूपैश्च	३.३२.७
स्मर नारायणात्मानं	२.१४.३६	स्रष्टारं सर्वभूतानां व्यक्ता	२.४८.३२	स्वप्नरूपेण तेषां वै	२.२.२६	स्वयंभुवे च विश्वाय	२.५१.५७	स्वर्गच्छन्देषु चान्येषु	२.८८.६७
स्मरन्ती पतिभावं	२.११७.३०	स्रस्त रश्मिप्रतोदी ती	१.२४.२३	स्वप्नायमानो जलदैः	२.१८.४७	स्वयंभुवोपीह परं	२.११०.७१	स्वर्गप्रकाशं कृत्वा च	३.२८.१८
स्मरं तं विद्धि देवेश	३.८८.१४	स्वकर्मद्रव्ययुक्ताभिः	२.२६.५	स्वप्नेनापि न दृष्ट्वाहं	२.६७.१३	स्वयः परितोषाच्च	३.६४.२४	स्वर्गं गताश्चाप्सरसां	२.८६.८८
स्मरन्ति ह्यात्मनो दोषं	१.१६.१७	स्वकर्मनिरताः सर्वे	१.२१.१६	स्वप्ने निदर्शयामास	१.२६.४७	स्वयंभूरिति विज्ञेयः	३.३३.३६	स्वर्गमारोग्यमेवाथ	१.१८.७५
स्मर स्वप्रकृतिं पूर्वाम-	२.१२७.७२	स्वकायगतमूर्धा वै	२.४३.५६	स्वप्ने क्षीयते ह्येषा	१.५०.३१	स्वयंवरकृतं दोषं विदित्वा	२.५२.३	स्वर्गस्था पितरो ये च	१.१६.३
स्मरामि भामिनि वचो	२.११८.२३	स्वक्ष रथवरोदग्रं	१.४३.४	स्वबलविद्रुतं दृष्ट्वा	२.१०५.३५	स्वयंवरकृतेनासौ विष्णु	२.४८.३७	स्वर्गस्यापि हि तत्स्वर्गं	१.८६.६३
स्मारितस्स पुरावृत्तममृत	२.४१.६	स्वक्षी भवेयमिति	२.८०.१८	स्वभावाज्जायतो सर्व	३.१६.१३	स्वयंवरां च सा कन्या	२.६१.४३	स्वर्गादूर्ध्वं ब्रह्मलोको	२.१६.२६
स्मृतास्ते प्राच्यसामान्	१.२०.४४	स्वगतैकमहाशृंग दुरारोहं	२.३६.६५	स्वभावात्क्षयमायाति	३.१६.३५	स्वयंवरे च नयस्ता त्वं	३.६२.१७	स्वर्गान्तीति पारिजातो	२.७७.३
स्मृतिः प्रत्यवमशश्च	१.२१.१८	स्वगृहे सर्वलोके वा	१.४८.७६	स्वभावेनाभवन्त्यस्या	१.६.१३	स्वयं विज्ञापितो गत्वा	२.६८.१५	स्वर्गास्पदादानयित्वा	२.६७.३२
स्यन्दनैः काञ्चनापीडं	२.५६.१८	स्वच्छन्देन प्रवेशश्च न	२.६१.८	स्वभावोन्नत भावत्वाद्	२.५५.५८	स्वयं विष्णुर्भवान्ति	३.८८.४	स्वर्गीयानि च रत्नानि	२.६६.४५
स्यमन्तकं च नापश्यद्वत्वा	१.३६.२०	स्वच्छं चैव पुरं तत्र	२.३७.५७	स्व राज्य दातुकामौ तु	२.५०.६	स्वयं शक्रेण देवेन	२.६७.३०	स्वर्गे तपोभूतां वासः फलं	२.३२.१०
स्रग्दामलम्बाभरणः	२.१४.२८	स्वजातिं चैव भावं	२.१२४.६	स्वं स्वं निवेशनं सर्वे	२.३८.१३	स्वयं स्वयंभुवा सृष्टं	१.४८.४३	स्वर्गे शक्रानुयानेषु	१.४४.८
स्रग्दाममालाभरणः	३.६१.७	स्वतन्त्रश्च विहङ्गोऽसी	१.२१.४३	स्वयं च दक्षसंप्राप्तो	३.२३.७	स्वयं स्वयंभूर्भगवान् बुद्ध	२.१६.२४	स्वयं यशस्यमायुष्य	१.४.३३
स्रग्विणो वाग्मिनः	३.४२.१४	स्वतन्त्रस्त्वणुहाज्जज्ञे	१.२३.१८	स्वयं नष्टः परान्मूर्खं	३.१०८.४	स्वयं ही दर्शनं तेषां	२.८२.२४	स्वयंरत्नविलोपेनघर्षणा	२.६६.५६
स्रजः पद्मपलाशानामा	३.५६.३५	स्वतेजस्तेजसा चैव	२.१६.३८	स्वयंपालाः स्वयं चोरा	३.४.२८	स्वयमागत्य देवेन्द्रो	२.५०.६७	स्वर्णशृङ्गी च कपिलां	३.१३५.८
स्रजं तदाबध्यति	३.५१.७८	स्वदेशेभ्यः परिभ्रष्टा	३.४.२६	स्वभं प्रक्षालनं चापि	२.७८.२५	स्वयमात्मकृतं कर्म शुभं	२.३२.३६	स्वभानुना हते सूर्ये	१.३१.१३
स्रवत्यसितपत्राक्षि किमर्थं	२.६६.२७	स्वदोषेणैव दग्धस्य	२.३२.४४	स्वयं प्रक्षालयाना स्त्री	२.७६.६१	स्वयमेव हि यत्कर्म	३.३२.५०	स्वभानुर्वक्रयोधी तु	१.४३.२२

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

१५७

स्वर्भानुवृषपर्वा च	१.३.८५	स्वान्यायुधानि संगृह्य	१.४१.६८	हंसश्च डिम्भकश्चैव	३.१०५.२६	हताः केचिन्महाराज	३.१२२.१३	हर्तृर्दानवमुख्यैश्च	३.५८.६५
स्वर्भानोस्तु प्रभा	१.३.६१	स्वामिनः कुत्रः वसतिः	३.७६.८	हंससारसपूर्णेषु तदीनां	२.१६.५२	हता नो बहवो गोपा	२.२४.५६	हर्तृर्विरिर्गजैरश्चैव	३.६०.७
स्वल्पमर्थं पुरस्कृत्य	२.७५.२५	स्वायंभुवेन योगेन यश्चायं	२.१६.१५	हंसस्य करदो विष्णु	३.११४.१७	हतान्सर्वान्समालोक्य	३.६६.५	हर्तृर्वेषा यदा कन्या	२.४.३४
स्ववीर्योदघेस्तुल्यः	३.५०.१६	स्वायंभुवो मनुः स्तात	१.७.४	हंसस्य डिम्भकस्याथ	३.१२१.१०	हता ब्रह्माद्विषः सर्वे	२.१००.७	हतो मधुवने वीरो	१.४१.१४०
स्ववेश्मनि सुखासीनं	२.७२.२	स्वारोचिषस्य पुत्रास्ते	१.७.१५	हंसं हंसगतिं वीरं	३.१२४.७	हतायां सर्पमायायां	२.१०६.३६	हतोऽयमिति विज्ञाय	२.११६.१५६
स्वस्तिकायतनं दृष्ट्वा	२.२६.४५	स्वाहाकारस्य विषये	२.१२२.३१	हंसा गच्छामि वां हन्तुं	३.११६.१५	हतायामथ शक्त्यां	३.५४.४६	हतोऽयमिति विज्ञाय	२.१२४.४२
स्वस्ति तेऽस्त्विति चोक्तो	१.३१.१४	स्वाहापतिर्न सामग्रीनः	३.६२.६	हसाः परमहंसाश्च	३.१०७.१७	हताश्च तु रथं त्यक्त्वा	२.५६.६१	हतो हंसो हतो हंस	३.१२८.१२
स्वास्ति वाच्यं द्विजानादौ	३.१३२.५५	स्वाहि पुत्रोऽभवद्राजा	१.३६.३	हसा परिचितां चक्रुस्तां	२.६२.१२	हताश्चोऽपि रणे वीरो	२.६३.११७	हतो च तव पुत्रत्व	१.५२.३६
स्वस्ति वोऽस्तु गमिष्यामि	२.५१.४६	स्वेन नाम्ना परिज्ञात	१.५०.३	हंसी तथेति चोवाच	३.६३.४४	हतास्तु माया दैत्यानां	३.६३.२	हत्वा कंसं महावीर्यं देवं	२.५०.१
स्वस्त्यस्तु देवेभ्य इति	१.४४.५२	स्वेषु स्थानेषु	३.४०.१८	हंसेन डिम्भकेनाथ	३.१२७.७	हतास्ते यमदण्डेन	२.१२१.१३०	हत्वा गजं घोरमुदग्ररूपं	३.८२.३३
स्वस्त्यस्तु भवते	३.११२.१२	स्वेषु स्वेषु जगन्नाथ	३.८८.२६	हंसैः प्रहसितानीव	२.१६.१८	हते च त्रिपुरे देवैर्वाधो	३.१३३.८२	हत्वा गोपालकान्सर्वान्	३.११६.७
स्वस्त्यस्तु भवतो लोके	२.२४.६६	स्वैः प्रभावैश्च विधिना	३.२६.१६	हंसैर्गत्वा तदाख्यातं	२.६६.१५	हते त्वं शम्बरे वीरे	२.१०६.५३	हत्वा जरासन्धबलं	२.३१.२६
स्वागतं च खेचरश्रेष्ठ	२.५५.६४	हंस एव प्रियो मह्य	३.११४.४	हंसो हि यत्र पतितस्तत्रासौ	३.१२६.३	हते त्वयि ममास्त्रेण	२.१०५.७५	हत्वा दैत्यगणान्सर्वान्कंसं	२.५५.६२
स्वहस्तमुवर्तः परिधैः	१.४५.७	हंसकारण्डवोदघुष्टां	२.११.३१	हतदर्पं तु विज्ञाय	३.५६.१००	हते पितरि दुःखार्ता	१.३६.६	हत्वा निवेशयामास	१.२६.३४
स्वागतं ते महाबाहो यदूनां	२.४६.७	हंसकुक्कुठवक्त्राश्च	३.४५.३	हतपुत्रास्मि भगवन्देवैर्धं	२.८६.६	हते प्रमदंते दैत्ये	२.१०५.८१	हत्वा निशुम्भं नरकं	३.८२.३७
स्वागतं ते सुरश्रेष्ठ पद्म	१.४६.२५	हंसकूटस्य यच्छङ्गमिन्द्र	२.६८.५६	हतः प्रसेनः सिंहेन	१.३६.१०	हते भौमे निमुन्दे च	२.६४.६	हत्वा पञ्चनदं नाम	२.६३.८६
स्वाहान्यायं सुगन्धीनि	२.१३.८	हंसकेतुमथोवाच प्रद्युम्न	२.६६.४२	हतं लक्षं महाराज	३.१२२.२२	हते शस्त्रे महाराज	२.१२६.६६	हत्वापि मां न शक्तस्त्वं	१.५.५४
स्वानि स्वानि बलाग्राणि	२.५६.१६	हंसप्रभाय हंसाय चक्ररूपाय	२.५१.५८	हतशिष्टास्ततो दैत्याः	३.१२३.२२	हतेऽश्मवर्षे तुमुले	३.४५.२६	हत्वा मां ब्रूहि राजेन्द्र	३.१००.४३
स्वान्यनीकानि शुक्लान्तैः	३.५६.६५	हंसवायुमनोभिश्च	२.६७.२	हतस्त्वरिष्टो बलवान्निः	२.२२.३१	हतेष्वथ नृपेष्वेवं	३.७३.१७	हत्वा मृगान्वराहांश्च	१.१३.२
		हंसश्च डिम्भकश्चैव	३.१०५.१	हतस्सोऽयं मया कंस	२.३२.१४	हर्तृर्दानवमुख्यैस्तु	३.५८.६२	हत्वा मृगान्सुबहुशो	३.१०६.८

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१५८

हत्वा रिपुगणांस्तुष्टिर	३.५६.५६	हयग्रीवं च दितिजं तथा	२.६३.५८	हरितालाद्रंपीतेन स	२.२०.२०	हृत्तरिः पररत्नानां	३.४.१६	हविर्घनात् षडाग्रेयी	१.२.२६
हत्वाष्टौ तत्र योधानां	३.५५.८६	हयग्रीवं निशुम्भं च	३.१०२.२१	हरितोऽपि समुद्रस्य द्वीपं	२.३८.२६	हर्म्यपृष्ठे वद्धमाना	२.६६.२३	हविष्मान् काश्यपश्चापि	१.७.७०
हनने भोजने चैष	३.८१.८	हयग्रीवश्च सुमहान्	२.१२१.४३	हरितोऽयं महाबाहुस्सागरे	२.३८.१०	हर्म्येषु चान्ये शशि	२.६५.८	हवींष्यन्ते पिबन्त्येव	३.३२.१५
हनिष्यत्येव वां युद्धे	३.११८.४४	हयग्रीवस्तु दितिज	३.५३.१०	हरितो रोहितस्याथ	१.१३.२८	हर्म्ये स्त्रीगणामव्यस्यं	२.११६.५४	हव्यकव्यवहः श्रीमान्	३.४८.७
हन्त गृह्ण प्रतीच्छेति	२.७३.४४	हयग्रीवस्तु दितिजः	३.५५.८८	हरिनेत्रो हरिश्मश्रु	३.५२.१०	हर्यगस्य तु दायादो	१.३१.५१	हसते जल्पते वैरी	१.२०.१३२
हन्त तस्मै प्रदास्यामि	३.६७.२६	हयग्रीवस्तु बलवान्	३.५०.८	हरिः पुराणः पुरुषोत्तमः	३.८०.४८	हर्यश्वरथसंयुक्ते सुपर्ण	१.४२.२६	हसन्तमेनमद्राक्षं करदं	३.११८.१४
हन्त ते कथयिष्यामि	१.४.३१	हयादस्मान्महेन्द्रोऽपि	२.२४.६३	हरिः प्रभुर्नेत्रसप्तचित्रो	३.५२.२१	हर्यश्वश्च महातेजा	२.३७.३८	हसन्नुवाच भगवान्	१.२६.६५
हन्त ते कथयिष्यामि	१.१६.६	हयानां च सहस्राणि	२.१२१.३६	हरियुङ् मातलिमुनो	२.६६.६०	हर्यश्वेनाशुगतिना सक्तेन	२.४४.४	हस्तप्रमुक्तजल यन्त्रकैश्च	२.८६.५०
हन्त ते कीर्तयिष्यामि	१.३१.४	हयानां चाष्टसाहस्रं	२.१०५.२०	हरिरेको हरिश्मश्रुर्नाना	३.६४.१०	हर्यश्वेष्वथ नष्टेषु	१.३.२०	हस्ताभरणपूरांन	१.१६.२०
हन्त ते कथयिष्यामि	१.४१.१७	हयानां हेषमाणानां	३.५४.३०	हरिर्जग्राह कुपितो	२.१२४.२६	हर्षजं वारि नेत्राम्बां	२.३०.५८	हस्ताविच्छति या नारी	२.८०.३२
हन्त ते कथयिष्यामि	२.२८.५७	हयाश्च चतुरो हत्वा	३.६६.२६	हरिवंशसमाप्तौ तु सहस्रं	३.१३२.७१	हर्षपूर्णं वक्त्रेण साश्रु-	२.२५.१६	हस्तिनां कलहे घोरे	२.२२.६८
हन्त ते वर्तयिष्यामि	२.६१.४	हयेभ्यो यवसं दत्त्वा	२.२६.४१	हरिवंशेऽत्र वृत्तान्ताः	३.१३४.१	हर्षं लेभे ततो देवी	१.६.४६	हस्तिभद्रः पितरकः	२.१०६.१८
हन्त यत्ते प्रवक्ष्यामि	३.१३२.५	हयो हयं गजो नागं	३.५७.३०	हरिवंशे पुराणे तु	३.१३५.१	हर्षयन्स तु सर्वेषां	२.१२१.६२	हस्तेन जिह्वामाकृष्य	३.१२६.१२
हन्ता सख्युर्महावीर्यो	३.६५.३६	हयग्वीनं क्षीराणि	३.१३०.११	हरिवंशे पुराणे तु	३.१३५.२	हर्षविप्लुतनेत्रायाः	२.११६.६६	हस्तैः पादैश्च	३.५७.३२
हन्तुकामो रणश्लाघी	३.६४.२१	हरं च हरिरूपेण	२.१२५.२६	हरिश्चन्द्रश्च राजर्षिः	३.२.१८	हलं संवर्तकं नाम सौनन्दं	२.३५.६०	हस्तोच्छ्रितमुखा वन्या	२.१०.२०
हन्तु मैच्छज्जगन्ताथं	३.६३.१७	हरश्च बहुरूपश्च	१.३.५१	हरिश्चन्द्रस्य पुत्रो	१.१३.२६	हलं संवर्तकं नाम सौनन्दं	२.४३.६	हस्त्यश्वरथयानादि	३.१३२.५१
हन्तुमैच्छतदा दैत्यमादाय	३.१२३.२०	हरसि प्राणिनो देव	३.८८.४५	हरिश्मश्रुर्गुह्यन्तो	२.१०६.८२	हलं सिंहमुखं कस्य	२.१२१.१००	हस्त्यश्वरथवृन्दांश्च चकार	२.८४.६५
हन्यमाना हता राजन्	३.७८.२०	हराय भीतिरूपाय	३.८७.२६	हरिः सर्वत्रगो विष्णुर्द्विप	३.६२.२१	हलमुद्यम्य रामस्तु सपेन्द्र	२.३५.६६	हस्त्यश्वरथसंपूर्णं पदातिगण	२.३२.२२
हन्यमानोऽसुरगणैः	३.१३३.६१	हरालयं सुराः सर्वे	३.१३३.३०	हरिस्तु रथमारुह्य	३.१२०.८	हलमुद्यम्य रामस्तु सपेन्द्र	२.४३.१६	हा गतिं कां गमिष्यामि	२.६७.१७
हम्भारवैश्चवत्सानां	२.१७.१७	हरिणाक्रीडनं नाम	२.१४.१८	हरे हर्यश्वचापेन त्रिवर्णेन	२.१०.३०	हविर्घः सुकृति ज्योति	१.७.१४	हारशोभितसर्वाङ्गी मुकुटो	२.४.३८

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१५६

हाराहोण च पीनते	२.२५.२३	हिमवन्तं च मेरुं च	३.१२.५	हिरण्यगर्भो भगवान्	३.३६.५	हृतायाः स्म शोच्या	२.१२१.८	हृष्टाः संपरिमोदध्वं	३.५६.५६
हाराश्च मणयश्चैव चन्दना	२.६६.७१	हिमवन्तं च शैलेन्द्रं	३.३५.४६	हिरण्यगर्भो रूपजो	२.१२१.१२८	हृतराज्यस्तदा राजा	१.१४.५	हृष्टेवसुरसंघेषु नदस्सु	३.६५.८
हासितं कूटजैर्वृक्षैः	२.१०.६	हिमवांश्च महाशैलः	३.२७.८	हिरण्यरूप्यमिभ्र स	२.७६.७	हृतराज्याश्च दैतेया	३.३१.१३	हृष्टो जगाम राजाडथ	१.२६.३८
हासं कुर्वत्सुतेष्वेवं	३.११६.१	हिमवान् हिमसंपाते	३.२८.४१	हिरण्यरेतः सुमुख	३.६२.२६	हृतानि च महीपानां सर्वं	१.४१.१६०	हृष्टो ह्यामिषभोज्यानामभि	२.६६.५३
हास्य मेतद्यदृष्टेष्टा	३.११५.३३	हिमवान् हेमकूटश्च	२.१०६.१५	हिरण्यरेतास्त्रिशिखस्ततो	३.३३.१५	हृताहं क्रमता भूयस्तदा	१.५२.४२	हृष्यते वै महादेवी	१.२६.३६
हा हतास्म महाबाहो	२.३१.३	हिमांशुकुन्दप्रतिमं	३.५१.६०	हिरण्यरोम वेदशिराः	३.६६.७	हृतेन शम्भरो बाल्ये येन	२.६२.२५	हेतवश्च मया तस्य	२.७०.४
हाहाकारो महाशब्दो	३.५६.१०	हिरण्यकवचाः सर्वे	३.४६.२४	हिरण्यरोमा पर्जन्य	१.७.२६	हृतो यदैव प्रद्युम्नः	२.११०.१	हेतुः स नास्ति स्यात्तेन	२.६२.३७
हाहाभूतं जगत्सर्वं तत्काल	२.६०.४६	हिरण्यकशिपुर्दैत्यो	३.४५.१२	हिरण्यरोमेत्याहुयं दाक्षिणा	२.५६.१३	हृत्वा स पृथिवीं कृत्स्नां	१.४१.१०२	हेमकक्षैर्महाघण्टैर्वाणिर्वारि	२.४२.३
हाहाभूतेषु सर्वेषु	२.१२६.१०	हिरण्यकशिपुर्दृष्ट्वा	१.४५.६६	हिरण्यवर्णमभवत्तदण्ड	१.१.२६	हृदयं शंवरस्याथ	२.१०७.२७	हेमकाञ्चनवृक्षाद्यं	३.३५.२१
हाहेति कुर्वतस्तस्य	२.२०.३३	हिरण्यकशिपुर्योऽसौ	१.३४.२६	हिरण्यवर्णाया देव्या	१.२५.१६	हृदयादसृजद्गावो	३.२०.१४	हेमाताली महादण्डः	३.५१.३५
हिसया विहरिष्यन्तो	१.१६.५	हिरण्यकशिपुश्चैव दानवो	१.४५.२५	हिरण्यस्य सुवर्णस्य	२.३२.६२	हृदयाद्देवदेवस्य	३.३६.६	हेमातली महादण्डः	३.५१.३५
हिसायोगैरयोगात्मा	३.१७.४२	हिरण्यकशिपुश्चैव महाबल	२.४८.१५	हिरण्याभसुताः पञ्च	१.३.७६	हृदये ताडितस्तेन	२.१०६.५	हेमपत्रैरूपचितं धातु	२.४७.३४
हिडिम्बं ताडयामास	३.१२६.३६	हिरण्यकशिपुश्चैव रात	१.३.८८	हिरण्याक्षे हते दैत्ये	३.३६.२२	हृदये निहितं वैद्याश्चन्दनं	२.११७.५५	हेमपुष्करसंछन्नं	३.४६.७०
हिडिम्बस्त्वथ दुष्टात्मा	३.१२६.३४	हिरण्यकशिपुश्चैव व्याजहार	३.३१.१०	हीनप्रतिज्ञाः काल्लोकान्	२.८५.४	हृषीकाणीन्द्रियाण्या	३.८८.४७	हेमशृङ्गो महाशैलस्तथा	३.४६.६८
हिडिम्बो राक्षसैर्द्रस्तु	३.१२६.४	हिरण्यकशिपुस्त्रत	३.४२.८	हुंकारेणैव निर्भत्स्य	३.३६.१६	हृषीकेशोऽपि भगवान्	२.८८.३३	हेमसूत्रा महाकक्षाश्चाप-	२.६४.१२
हितकेशोर्ध्ववक्त्रश्च	३.४६.४	हिरण्यकशिपोः पुत्रः	३.४३.५	हुताशनं ज्वलिनशिखो	३.११.१७	हृष्कुक्कुटसंनादं वनं	२.२२.५५	हेषमाणैश्च तुरागैः क्ष्वेड	२.३५.३१
हितानुबन्धसहितं कार्यं	२.७१.१०	हिरण्यकशिपोः पुत्रा	१.३.७२	हुताशनाकर्णधुनडिद्धनामै	१.४१.१३२	हृष्टपुष्ट स्वरस्तत्र	३.६६.२५	हैहयस्य तु दायाद्यं	१.२६.७०
हिताय जगतोऽद्यापि लोके	२.७१.३६	हिरण्यकशिपोः पुत्राः	३.३६.३३	हुनाशमिक दीप्यन्त राज्ञ्य	३.६६.१०	हृष्टसैन्यो महाबाहुः	३.५८.२६	हैहयस्याभवत्पुत्रो धर्म	१.३३.३
हितार्थं सुरमर्त्यानां	१.४१.१४	हिरण्यकशिपोः पुत्राः	३.४८.१४	हुत्वाऽग्निं विधिवत्सा तु	१.३२.८४	हृष्टा प्रमुदिता सर्वापुरी	२.४५.६	हैहयान्निजघानाशु	१.१४.११
हित्वा गर्भतनुं सा तु सहसा	२.४.३७	हिरण्यगर्भो भगवानुषित्वा	१.१.३०	हुत्वाग्निं विधिवद्वाजा	२.५४.६	द्रष्टाः प्रमुदितास्सर्वे	२.४७.४२		

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१६०

हेहयास्तालजङ्घाश्च	१.१३.३१	होताऽस्य भगवान्	१.२५.२४	ह्रस्वान्यति प्रमाणानि	[१.४१.८	ह्रियेऽहं कृष्ण दैत्येन	२.१४.३२	ह्रीः श्रीलक्ष्मीः स्वधा	२.१०६.१४
होता चैवात्र नमुचिवृत्रः	३.५४.५	होत्राग्निदीप्त शिरसं	३.५.६	ह्रियमाणः प्रलम्बेन स	२.१४.३०	ह्रीः श्री घृतिस्तथा	२.७७.१६		
होता चैवाभवद्राजन्	३.२३.२१	ह्रदश्चैव तु विक्रान्तः	३.३६.३४	ह्रियाभिभूतो राजेन्द्र	१२.५१.१७	ह्रीं श्रीं गंगां च यंघवीं	२.१२०.१४		



इति श्रीहरिवंशपुराणम्, समाप्तम्,



